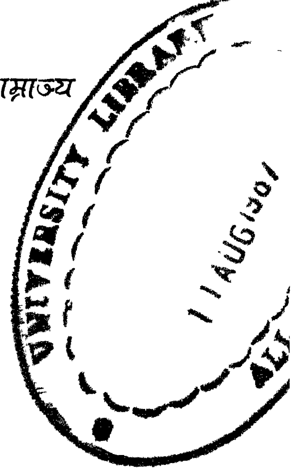
ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का संक्षिप्त इतिहास

[A SHORT HISTORY OF BRITISH COMMONWEALTH]

प्रथम खण्ड

ब्रिटिश द्वीप समूह तथा प्रथम साम्राज्य

(१७६३ ई० तक)



रैम्जे म्यूर

अनुवादक

हरिदत्त वेदालंकार

भू० पू० अध्यक्ष, इतिहास विभाग,

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

निदेशक, प्रकाशन विभाग,

गोविन्दवल्लभ पन्त कृषि विश्वविद्यालय, पन्तनगर



मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का संक्षिप्त इतिहास

A Short History of British Commonwealth

BY

Ramsay Muir

प्रकाशक
मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
भोपाल

प्रथम संस्करण
१९७३

मूल्य
पुस्तकालय संस्करण : ३५ रुपये
~~साधारण संस्करण : ३२ रुपये~~

मुद्रक
धारा प्रेस, ६०९ कटरा, इलाहाबाद–२

H B—1100, P B—1100/73

प्राक्कथन

यह पुस्तक सुप्रसिद्ध ब्रिटिश ऐतिहासिक श्री रैम्जे म्यूर की एक प्रख्यात कृति A Short History of British Commonwealth का अनुवाद है। अँग्रेजी में इस पुस्तक की गणना ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास पर लिखे गये सर्वोत्तम ग्रन्थों में की जाती है। अपनी सरल एवं सरस शैली, गम्भीर ऐतिहासिक विवेचन एवं विभिन्न घटनाओं की सूक्ष्म मार्मिक मीमांसा करने तथा ब्रिटिश साम्राज्य के विकास पर विस्तृत प्रकाश डालने के कारण यह ग्रन्थ बड़ा लोकप्रिय सिद्ध हुआ है। अँग्रेजी में इसके आठ संस्करण हो चुके हैं। प्राय: सभी विश्व-विद्यालयों की उच्च कक्षाओं में ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास का प्रामाणिक एवं विशद ज्ञान प्राप्त करने के लिए इस ग्रन्थ का अध्ययन आवश्यक समझा जाता है।

१९४७ से पहले ब्रिटिश साम्राज्य का अंग होने के कारण भारत के विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास को विशेष महत्त्व दिया जाता था। किन्तु हमारी मातृभूमि के स्वतन्त्र हो जाने के बाद भी कई कारणों से हमारे लिए ब्रिटिश इतिहास का अनुशीलन विशेष महत्त्व रखता है। पहला कारण यह है कि यद्यपि अँग्रेज भारत से चले गये हैं, तथापि वे भारत को अपनी राजनीतिक संस्थाएँ प्रदान कर गये हैं। १९५० ई० में लागू किये गये स्वतन्त्र भारत के संविधान पर इसकी बड़ी गहरी और स्पष्ट छाप है। हमने अपने संविधान में ब्रिटेन की मन्त्रिमण्डलीय शासनपद्धति का अनुसरण किया है और उसकी व्यवस्थाओं को बहुत बड़े पैमाने पर स्वीकार किया है। इन सब व्यवस्थाओं का आदिस्रोत ग्रेट ब्रिटेन है, अतः भारत के वर्तमान संविधान को अच्छी तरह से समझने के लिए ग्रेट ब्रिटेन के इतिहास का अनुशीलन करना बड़ा आवश्यक और उपयोगी है। दूसरा कारण यह है कि भारतीय संविधान में लोकतन्त्र की प्रणाली को अपनाया गया है। पश्चिमी देशों में इसका विकास सर्वप्रथम ग्रेट ब्रिटेन में हुआ, इसीलिए इंग्लैण्ड की पार्लियामेण्ट को विश्व की सभी पार्लियामेण्टों की जननी कहा जाता है। सब देशों ने संसदीय शासन प्रणाली के मौलिक सिद्धान्त बहुत अंशों में इग्लैण्ड से लिये हैं। भारत में भी यही स्थिति है। इस दृष्टि से इग्लैण्ड में पार्लियामेण्ट के विकास के इतिहास का अनुशीलन हमारे लिए असाधारण महत्त्व रखता है।

तीसरा कारण ग्रेट ब्रिटेन द्वारा विश्वव्यापी विलक्षण साम्राज्य का निर्माण करना है। इससे पहले सम्भवतः किसी देश ने भूमण्डल के सभी भागों में विस्तीर्ण इस प्रकार के विशाल साम्राज्य को कभी नहीं बनाया था। हम भारतवासी किसी समय इस साम्राज्य का अंग रह चुके हैं। इस समय भी हम ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के सदस्य हैं। इस साम्राज्य का हमारे

द्वितीय पुस्तक

चार राष्ट्रों के संघर्ष और इंग्लैण्ड में स्वशासन का विकास (१२२५-१४८५ ई०)

तृतीय पुस्तक

आधुनिक युग का आरम्भ : धर्म-सुधार आन्दोलन तथा समुद्र-पार के देशों के साथ सम्पर्क का श्रीगणेश (१४८५-१६०३ ई०)

चतुर्थ पुस्तक

राष्ट्रीय स्वशासन के लिए संघर्ष और समुद्र पार के देशों में इंग्लिश लोगों के विस्तार का आरम्भ (१६०३-१६६० ई०)

पाँचवीं पुस्तक

संवैधानिक व्यवस्था और साम्राज्य का विकास (१६६०-१७१४ ई०)

छठी पुस्तक

ह्विग अल्पतन्त्र : सामुद्रिक तथा औपनिवेशिक प्रभुता की स्थापना (१७१४-१७६३ ई०)

प्रस्तावना

हम केवल एक महान देश के ही नागरिक नहीं है, बल्कि हमारा घनिष्ट सम्बन्ध विभिन्न जातियों की उस विलक्षण साझीदारी और भाईचारे से भी है जो सामान्यतया ब्रिटिश साम्राज्य के नाम से प्रसिद्ध है तथा जिसका और भी अधिक उपयुक्त नाम ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल माना जाता है। इसमें विश्व का एक चौथाई क्षेत्रफल एवं एक चौथाई जनसंख्या सम्मिलित है। इसके प्रदेश प्रत्येक महाद्वीप में स्थित हैं और प्रत्येक महासागर उनके किनारे छूता है। मानव इतिहास में ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल से मिलता-जुलता कोई दूसरा राजनीतिक संगठन नहीं हुआ है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह उन साम्राज्यों की भाँति नहीं है जिनका इतिहास में उत्थान और पतन हुआ है। इसका आधार विजेता जाति की सैनिक शक्ति नहीं है, बल्कि इसका प्रत्येक सदस्य अपने विशिष्ट स्वरूप को बनाये रखता है और अपने निजी मामलों की व्यवस्था करने में पूर्णतया स्वतन्त्र है। यदि कोई सदस्य इसके लिए तैयार न हो तो उसका शासन केवल शासक जाति के हितों की दृष्टि से नहीं, बल्कि उस सदस्य की जनता के हितों को दृष्टि में रख कर किया जाता है। वे समस्त असंख्य राष्ट्र और जातियाँ जो ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल में शामिल हैं, अपने रीति-रिवाजों एवं जीवन यापन के ढंगों को बनाये रखते हुए एक-दूसरे के साथ शन्तिपूर्वक मिलकर रहने, एक-दूसरे की सहायता करने तथा एक-दूसरे को सुदृढ़ बनाने में समर्थ हैं। केवल सैनिक शक्ति के बल पर बनाये गये महानतम साम्राज्यों के निर्माण की अपेक्षा यह कहीं अधिक सराहनीय कार्य है। इस विश्व-विस्तृत राष्ट्र-मण्डल के सदस्य होने के नाते हमारा यह उत्तरदायित्व है कि हम उन परम्पराओं को, जिनसे यह राष्ट्रमण्डल महान की संज्ञा प्राप्त कर सका है, बनाये रखने में योगदान दें। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि इसके स्वरूप को समझें और इसके इतिहास का अध्ययन करें। इस पुस्तक का उद्देश्य यह बताना है कि इन परम्पराओं का जन्म कैसे हुआ और किस प्रकार राष्ट्र-मण्डल ने यह आश्चर्यजनक विस्तृत स्वरूप प्राप्त किया।

इसका विकास दो द्वीपों—ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्ड से हुआ जो यूरोप के उत्तर पश्चिमी तट से कुछ दूरी पर स्थित हैं। इन्होंने यूरोप की सामान्य संस्कृति में भाग लिया है, किन्तु द्वीप होने के कारण ये सुरक्षित रूप में अपनी विशिष्ट संस्थाओं का विकास करने में भी समर्थ रहे हैं और राजनीतिक स्वतन्त्रता की आधारभूत इन्हीं संस्थाओं ने समूचे राष्ट्र-मण्डल का स्वरूप एवं इसके इतिहास का मार्ग निर्धारित किया है। इसके अतिरिक्त दोनों द्वीपों में कई शताब्दियों से चार विशिष्ट राष्ट्र विद्यमान हैं। इन्होंने शनैः शनैः तथा आयरलैण्डवालों ने अपूर्ण रूप से इस कठिन पाठ को सीखा है कि किस प्रकार अपने व्यक्तिगत स्वरूप का परित्याग

किये बिना एक विशाल राज्य का सदस्य बनकर शान्तिपूर्ण रीति से रहा जा सकता है। ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का आदर्श (यद्यपि उसे पूर्णतया क्रियान्वित नहीं किया जा सका) रहा है स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखते हुए और मतभेदों को शक्ति द्वारा नष्ट किये बिना एकता बनाये रखना। इसका एक कारण यह था कि उन द्वीपवासियों ने किसी सीमा तक मतभेदों को सहन करना और पारस्परिक सम्मान की भावना से एक साथ रहना सीख लिया था। अत: इनमें से जो व्यक्ति नयी और पुरानी दुनिया के विभिन्न हिस्सों में गये वे शनैः शनैः उस विश्व-विस्तृत स्वतन्त्र राष्ट्रों की साझीदारी का विकास करने में समर्थ हुए जिसे आज ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल कहते हैं।

अतः, हमारी कहानी ब्रिटिश द्वीपसमूह के निवासियों से प्रारम्भ होनी चाहिए और प्रारम्भ में स्थूल रूप से उन चार राष्ट्रों के विकास का वर्णन होना चाहिए, जो इन द्वीपों को अपना घर बनाने वाली अत्यधिक मिश्रित जातियों में से विकसित हुए।

1

आदिवासी और उनका संस्कृति से प्रथम सम्पर्क

१. ब्रिटिश द्वीपसमूह और इसके सबसे पहले निवासी

इतिहास के उषाकाल से बहुत समय पूर्व ब्रिटिश द्वीपसमूह यूरोप की मुख्य भूमि से मिला हुआ था तथा टेम्स और ट्रेन्ट राइन की सहायक नदियाँ थीं। ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल के इतिहास की प्रथम प्रमुख घटना उसका क्रमिक भौगोलिक परिवर्तन है। भूगर्भ-शास्त्रियों का कहना है कि ध्रुवीय हिम की विशाल टोपी पहले कभी समस्त उत्तरी यूरोप के ऊपर फैली हुई थी, इसके पिघलने के कारण समुद्र बढ़ गये और उन्होंने निचले मैदानों को, जहाँ आजकल इंग्लिश चैनल और उत्तरी समुद्र है, अपने अन्दर ले लिया। इस परिवर्तन ने यह निर्धारित किया कि ब्रिटिश भूमि यूरोप का भाग होते हुए भी उससे कुछ पृथक रूप में स्थित रहेगी तथा उसकी जातियों की—जिनको ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल की मातृ-जातियाँ बनना था—जीवन यात्रा कुछ पृथक चलेगी। वे लोग यूरोपियन संस्कृति के प्रभाव से भले ही पूर्णतया पृथक न हों, किन्तु फिर भी उन्हें अपने पड़ोसियों के सतत सम्पर्क तथा संघर्ष से पृथक रहना होगा ताकि वे अपनी संस्थाओं एवं जीवनयापन के तरीकों का अपने ही ढंग से विकास करने में समर्थ हो सकें।

इस प्रकार, यह द्वीपसमूह यूरोप के महाद्वीप से पृथक उत्तर-पश्चिमी किनारे पर स्थित था जहाँ सिवाय विस्तृत तूफानी सागर के और कुछ भी न था। प्राचीन लोग इसे गोल-चपटी भूमि का छोर मानते थे। प्राचीन नक्शों में[१] महान ओशेनस नदी इस द्वीप-

---

१. देखिये—म्यूर कृत स्टूडेन्ट्स एटलस ऑफ मॉडर्न हिस्ट्री की प्लेट ४२ में दिये नक्शे।

समूह की सीमा बनाती हुई दिखायी जाती है। इस नदी के बारे में यह कल्पना की गयी थी कि वह भूमि की परिक्रमा करती है और इस नदी से परे केवल शून्य ही शून्य है। चार सौ वर्ष पहले तक, जब भूमध्य सागर पश्चिमी सभ्यता का केन्द्र माना जाता था, ब्रिटिश-द्वीप-समूह भूमण्डल के बाहरी हिस्से में ही स्थित था। मुख्य घटनाओं के केन्द्र से दूर रहने के कारण यूरोप के जीवन में यह नगण्य ही बना रहा। पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी के महान भौगोलिक अन्वेषणों के बाद ही यह धारणा बदली कि यह द्वीप-समूह सभ्य जगत से बहुत दूर है तथा यह समझा जाने लगा कि ये द्वीप दुनिया से सम्बद्ध मुख्य पथ पर अवस्थित हैं। इस समय से इनके इतिहास का वह महान युग प्रारम्भ होता है जिसके लिए बीते युग केवल एक लम्बी तैयारी मात्र थे।

यह द्वीप-समूह यूरेशियन महाद्वीप के सबसे बाहर वाले सिरे पर स्थित है, इस तथ्य का इसके इतिहास पर एक दूसरा अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। यहाँ समुद्र उथले और तंग होने के कारण आसानी से पार किये जा सकते थे और इसका परिणाम यह हुआ कि पूर्व से पश्चिम की ओर जातियों के सतत आवागमन में पश्चिमी यूरोप में आने वाली जातियों की सभी शाखाएँ तंग समुद्रों पर से गुजरीं और उन्होंने इन द्वीप-समूहों की आबादी में अपना योगदान किया; क्योंकि वहाँ आगे और भूमि नहीं थी जहाँ पर नयी आयी हुई जातियाँ अपने से पहले आयी जातियों को खदेड़ सकतीं, अतः इन सब जातियों को बाध्य हो कर मिलजुलकर रहना पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ कि इस द्वीप-समूह में जो लोग बसे उनमें इतनी अधिक जातियों के लोग थे जितनी यूरोप के किसी अन्य स्थान में नहीं बस पायी थीं। इस द्वीप में बाद में आने वाली जाति ने अपने से पूर्ववर्ती जातियों को जीता और इनमें से कुछ को उत्तर और पश्चिम के कम उपजाऊ प्रदेशों में धकेल दिया, शेष जातियों को दास बना लिया और तब शनैः शनैः अन्तर्जातीय विवाहों द्वारा यह जाति पहली जातियों में घुलमिल गयी।

आदिवासी विजेताओं के समूहों में से आरम्भिक जातियों ने अपने पीछे कोई लिखित अवशेष नहीं छोड़े, इसलिए हम उनके पारस्परिक अन्तर को तथा उनके द्वीप-समूह में प्रविष्ट होने के काल को ठीक-ठीक नहीं बता सकते। उनके जीवन और स्वरूप का भी केवल अति सामान्य रूप में ही वर्णन किया जा सकता है। किन्तु उन्होंने अपने अवशेष भूमि में विभिन्न रूपों में छोड़े हैं, जैसे, पहाड़ियों के ऊपर खाइयाँ खोद-खोदकर बनाये गये कैम्प, नाना आकारों वाले मकबरे, गुफाओं और नदियों के किनारे की उपजाऊ भूमि में उनके औजारों और हथियारों के भग्नावशेष। इनसे बढ़कर उन की खोपड़ियाँ और कंकाल हैं। इन अवशेषों के आधार पर विद्वान हमारे सुदूरवर्ती पूर्वजों के सम्बन्ध में कुछ विचार प्रकट करते हैं।

इनमें से प्राचीनतम अवशेष उस युग के हैं जिसे पुरापाषाण युग (Old Stone Age) कहा जाता है। सम्भवतः इस युग के मानव पूर्ण रूप से नष्ट हो गये और उन्होंने मिश्रित ब्रिटिश जातियों के निर्माण में कोई योगदान नहीं किया।

नवपाषाण युग (New Stone Age) के लोग उस प्रथम जाति के हैं जिसे हम विश्वास-पूर्वक अपने पूर्वजों में गिन सकते हैं। इस युग में एक से अधिक जातियाँ रही होंगी। लेकिन उनमें से एक जाति ऐसी थी जिसका कद छोटा, वर्ण श्याम एवं खोपड़ी लम्बे आकार की थी। इस जाति को विद्वान लोग भूमध्यसागरी जाति (Mediterranean race) कहते थे क्योंकि इस प्रकार की जातियाँ भूमध्य सागर के आसपास के सभी प्रदेशों की जनसंख्या का आधार हैं। उनके बाद अधिक लम्बे कद की जाति के लोग आये। इनके सिर गोल थे, उन्हें काँसे के औजारों का उपयोग करना ज्ञात था और सम्भवत: इसी कारण वे अन्य जातियों से उत्कृष्ट थे। वे स्पष्टत: कुछ सभ्य थे क्योंकि वे अनाज बोते थे, कपड़ा बुनना जानते थे और मिट्टी के बर्तन बना सकते थे। सम्भवत: यही वे लोग थे जिन्होंने बड़ी संख्या में खड़े पत्थरों की वृत्ताकार रचनाएँ बनायीं। इनमें से स्टोन हेन्ज (Stone henge) विशेष रूप से उल्लेखनीय है। चूंकि बड़े-बड़े एकाश्मों (Monoliths) से इन रचनाओं का निर्माण हुआ है तथा कुछ अवस्थाओं में ये पाषाण बहुत दूर से लाये गये हैं, अत: इनके निर्माताओं को इंजीनियरिंग का अच्छा ज्ञान रहा होगा। उन्होंने अपने से पहले आने वालों को जीता और फिर उनके साथ मिल गये और ये मिश्रित जातियाँ सारे द्वीप-समूह में फैल गयीं। किसी हद तक हम सब उन्हीं के वंशज हैं। बाद में आने वाली विजेता जातियों ने उन्हें पश्चिम और उत्तर की ओर खदेड़ दिया। अत: वे उन्हीं भागों में ज्यादा संख्या में रहने लगे। छोटे कद और श्याम वर्ण के आयरिश, वेल्स तथा स्काटलैण्ड के हाईलैण्डर इनके प्रतिनिधियों के रूप में विद्यमान हैं।

इसके बाद आने वाली जाति के लोग विजयी हुए क्योंकि वे लोहे का प्रयोग सीख चुके थे। ये लोग कैल्ट (Celt) जाति के थे। बड़ी हड्डियों वाले तथा भूरे बालों वाले कैल्ट उस महान आर्यवंश की पहली लहर थे जिससे यूरोप की सभी प्रमुख जातियाँ तथा भारत और ईरान की शासक जातियाँ निकली हैं। बाद में ब्रिटेन को जीतने वाली सभी जातियाँ इसी आर्यवंश की थी। ईसा से ५ या ६ सौ वर्ष पूर्व कैल्टिक जाति ने आल्प्स पर्वत के उत्तर में यूरोप के अधिकांश भाग पर अधिकार कर लिया और वे दक्षिण में इटली की ओर बढ़ने लगे तथा उदीयमान नगर रोम को भी उन्होंने खतरे में डाल दिया। उनकी एक शाखा लघु एशिया (वर्तमान टर्की) में बस गयी। यह सेण्ट पाल के द्वारा वर्णित गेलेशियन (Galatians) जाति की पूर्वज बनी। किन्तु समय के साथ-साथ ट्यूटन नामक आर्यों की अगली लहर ने उस जाति को राइन नदी के पश्चिम में धकेल दिया जिसका परिणाम यह हुआ कि यूरोप के देशों में केवल फ्रांस, बेल्जियम, उत्तरी इटली और स्पेन ही ऐसे देश हैं जहाँ इस जाति का महत्त्व बना रह सका। उनकी भाषा इस समय केवल ब्रिटिश द्वीप-समूह तथा ब्रिटेनी में ही बची हुई है। उन्होंने कोमल काव्य की और प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति प्रेम की भावना का विकास किया। यह उनकी बहुमूल्य विरासत है और इसके लिए ब्रिटिश द्वीपवासी उनके ऋणी हैं।

कैल्ट जाति ब्रिटेन में दो या तीन पृथक टुकड़ियों में आयी। इनके आने के बीच में

पर्याप्त समय का अन्तर था। पहले गेल (Gael) लोग आये। उनकी कैल्टिक भाषा का रूप अभी तक आयरलैण्ड में और स्काटलैण्ड के हाइलैण्ड प्रदेश में मिलता है। सम्भवतः दो शताब्दियों के बाद उनका अनुसरण करती हुई दूसरी टुकड़ी ब्रिटन (Briton) लोगों की आयी। उनकी भाषा अभी तक वेल्ज और ब्रिटेनी में बोली जाती है। कुछ समय पहले वह कार्नवाल में भी बोली जाती थी। गेल लोगों ने अपने से पहले बसे हुए लोगों को जीत कर या तो दास बना लिया अथवा उन्हें उत्तर या पश्चिम की ओर खदेड़ दिया। जब ब्रिटन लोगों की बारी आयी, तो उन्होंने भी गेल जाति वालों के साथ वही व्यवहार किया। दोनों ने समान रूप से ही अपनी प्रजा पर पूरी तरह ऐसा प्रभुत्व स्थापित किया कि पहले बसे लोगों की भाषाएँ पूर्णतया विलुप्त हो गयीं तथा मिश्रित जाति अपने आप को कैल्टिक समझने लगी। किन्तु इसका यह अभिप्राय रंचमात्र भी नहीं है कि पूर्ववर्ती जातियाँ पूर्णतया नष्ट हो गयीं। आदिवासी लोग प्रायः अपनी भाषाएँ सुगमता से बदल लेते हैं। ईसा से पहले चौथी शताब्दी में जब महान सिकन्दर पश्चिमी एशिया पर विजय प्राप्त कर रहा था, उस समय फोर्थ के दक्षिण में समूचा ब्रिटेन ब्रिटिश बन चुका था, शेष ब्रिटेन तथा समूचा आयरलैण्ड गेल (Gael) था, किन्तु दोनों प्रदेशों की जाति पहले से ही बहुत अधिक मात्रा में मिश्रित हो चुकी थी।

हम इन विजयों की वास्तविक घटनाओं के सम्बन्ध में कुछ नहीं जानते। वस्तुतः हमें ईसवी सन के आरम्भ होने तक ब्रिटेन के निवासियों के इतिहास का कुछ भी ज्ञान नहीं है। इन सब शताब्दियों में पश्चिमी सभ्यता के वास्तविक केन्द्र भूमध्य सागर के तटवर्ती प्रदेश थे। यहाँ यहूदी पैगम्बर एक उच्च धर्म के सिद्धान्तों का उपदेश दे रहे थे। फिनीशियन नाविक व्यापार क्षेत्र का विस्तार कर रहे थे और हरक्यूलीस के स्तम्भों (जिब्राल्टर जलडमरूमध्य) में से हो कर यूरोप के अटलाण्टिक महासागर के तटों तक अफ्रीका महाद्वीप की परिधि के चारों ओर आगे बढ़ रहे थे। छोटे यूनानी नगरराज्य राजनीतिक स्वतन्त्रता की आधारशिला रख रहे थे, पाश्चात्य कला, दर्शन तथा साहित्य का निर्माण कर रहे थे। रोमन लोग कानून एवं अनुशासन की शक्ति सिद्ध कर रहे थे तथा शनैः शनैः समस्त भूमध्य सागर के तटवर्ती लोगों को अपने सुदृढ़ एवं संगठित शासन में ला रहे थे।

इस आश्चर्यजनक गति-विधि तथा पाश्चात्य सभ्यता का निर्माण करने वाली इस विस्मयजनक क्रियाशीलता का प्रभाव ब्रिटेन पर लगभग शून्य के बराबर था। इस अभिनव सभ्यता का ब्रिटिश द्वीपसमूह से सम्पर्क आरम्भ में और चिरकाल तक बहुत कम था एवं विशुद्ध रूप से बाहरी हिस्सों तक ही सीमित था। आरम्भ में, फिनीशियन नाविक (कार्नवाल के निकट) सिली-द्वीपसमूह (Scilly Islands) में टीन खरीदने के लिए आये। यूनानी व्यापारी मार्सेल्ज से गाल की उन जातियों के माध्यम से, जिनका ब्रिटिश लोगों से सम्बन्ध था, स्थलीय व्यापार करते थे। दक्षिणी ब्रिटेन में अधिक समय से बसी हुई जातियाँ छोटा-मोटा व्यापार किया करती थीं। इनका परिचय यूनानी सिक्कों से हुआ और इन्होंने इसी तरह के अपने सिक्के बनाने का प्रयत्न किया। एक साहसी यूनानी अन्वेषक पीथियस

(Pytheas) सिकन्दर महान के समय के लगभग, जिब्राल्टर जलडमरूमध्य से होता हुआ शैटलैण्ड के उत्तर तक आया और उसने अपनी यात्राओं का एक वर्णन लिखा। यह लगभग वैसा ही है, जैसा रानी एलिजाबेथ (प्रथम) के समय में अन्वेषण करने वाले यात्री अज्ञात समुद्रों और नयी दुनिया की जंगली जातियों में की गयी अपनी साहसिक यात्राओं का वर्णन किया करते थे। समग्र दृष्टि से यह प्रतीत होता है कि ब्रिटिश द्वीप-समूह इतिहास की मुख्य धारा से उसी प्रकार अछूता रहा, जैसे महान अन्वेषण से पूर्व अमेरिका की जातियाँ थीं।

हमारा यह विचार बहुत गलत न होगा कि केल्टिक युग (Celtic Period) के पहले भाग में गेल और ब्रिटन (Briton) लोगों की सभ्यता उसी स्थिति में थी, जिस स्थिति में रेड इण्डियन १७वीं शताब्दी से पहले थे। ये वंशानुगत सरदारों के नेतृत्व में कबीलों (Clans) के रूप में संगठित थे। ये महान योद्धा थे तथा निरन्तर एक-दूसरे के साथ युद्ध करते रहते थे। उनके योद्धा रेड इण्डियन्स की ही तरह अपने शरीर को चित्रित करना व गुदवाना पसन्द करते थे। सम्भवत: "ब्रिटन" (Briton) शब्द का मूल अर्थ "चित्रित" है। उत्तर के जंगली कबीलों में यह रिवाज सबसे अधिक देर तक रहा। वे ईसा के बाद अनेक शताब्दियों तक "पिक्ट" (Picts) या "चित्रित" लोगों के नाम से ही प्रसिद्ध रहे। ये लोग प्रकृति की शक्तियो का प्रतिनिधित्व करने वाले नाना देवताओं की पूजा किया करते थे और इन पर नरबलि भी चढ़ाते थे। उनके पुरोहित ड्रुइडों (Druids) के विलक्षण धार्मिक संघ का उन पर इतना अधिक प्रभुत्व था कि उनकी तुलना रेड इण्डियनों के मैडिसनमैन से की जा सकती है। नि:सन्देह, ईसा से ५५ वर्ष पूर्व जब सीज़र यहाँ आया, तब द्वीप-समूह के दक्षिण भाग की सभ्यता काफी विकसित हो चुकी थी, किन्तु उसने इन सब रिवाजों को उस समय भी प्रचलित पाया।

२. रोमन शासन

ब्रिटन लोगों को अत्यन्त विकसित सभ्यता के सम्पर्क में लाने वाला रोमन विजयों का बढ़ता हुआ ज्वार इन लोगों के लिए एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बात थी। महान रोमन राजनीतिज्ञ और सेनानी जूलियस सीज़र को समूचे गाल पर विजय प्राप्त करने के बाद ५५ और ५४ ई० पूर्व में ग्रेट ब्रिटेन के दक्षिण-पूर्वी छोर पर दो बार जाना पड़ा। दुर्भाग्यवश, इसी बीच किसी अधिक आवश्यक कार्य के लिए उसे इटली जाना पड़ा। इस कारण वह इस प्रदेश को जीत न सका। कुछ वर्षों बाद, समूचे रोमन साम्राज्य पर उसका वैयक्तिक अधिकार हो गया। एक शताब्दी बाद रोमन सरकार ने ग्रेट ब्रिटेन की विजय आरम्भ की। ४३ और ६१ ई० के बीच यह द्वीप जीत लिया गया और उत्तर में हम्बर नदी तक इस पर राजनीतिक शासन स्थापित किया गया। कुछ वर्ष बाद महान सेनानी एग्रीकोला इस द्वीप की विजय को पूरा करने के लिए चल पड़ा और उसने स्काटलैण्ड के पहाड़ों के सुदूर उत्तर में मौन्स ग्रोपियस की लड़ाई लड़ी (८४ ई०)। किन्तु रोम का तेज पहले ही क्षीण होने लगा था। उन्हें ये बंजर मरुस्थल विजय करने योग्य प्रतीत न हुए और यह कार्य कभी पूरा न

हुआ। थोड़े समय के लिए स्काटलैण्ड के निम्न प्रदेशों पर अवश्य अधिकार किया गया। टाइन और फोर्थ के बीच सड़कें और शिविर बनाये गये। खूँखार पहाड़ी लोगों से बचने के लिए फोर्थ से क्लाइड तक एक दीवार बनायी गयी। किन्तु स्काटलैण्ड के इस हिस्से को कभी भी गम्भीर रूप से रोमन प्रान्त के रूप में राजनीतिक दृष्टि से संगठित नही किया गया। प्रत्यक्ष रूप से रोमनों ने आयरलैण्ड का स्पर्श नहीं किया था, यद्यपि इसके साथ इनके व्यापारिक सम्बन्ध थे। अधिकांश समय तक इन्होंने अपने आप को टाइन और सौल्वे के दक्षिणी प्रदेशों तक ही सीमित रखा। इनके चारों ओर उन्होंने एक आश्चर्यजनक विशाल प्रस्तर प्राचीर बनायी जिसके बीच-बीच में बड़े-बड़े बुर्ज थे और जिसके शानदार ध्वंसावशेषों की शृंखला दलदल भूमि में अब तक देखी जा सकती है।

इस प्राचीर के दक्षिण का भाग—लगभग समस्त इंगलैण्ड और वेल्ज-पूर्णतया एक रोमन प्रान्त के रूप में संगठित था एवं साढ़े तीन सौ वर्ष से अधिक समय तक यह सभ्य संसार के सामान्य जीवन में भाग लेता रहा। रोमनों ने अपनी सुप्रसिद्ध सेना के तीन लीजन (Legion)[१] इसमें रखे। उन्होने यहाँ कस्बों का निर्माण किया। इनके ध्वंसावशेष चिरकाल तक इनके बाद आने वाली जंगली जातियों की घृणा और उपेक्षा के कारण मलबे के नीचे दबे रहे। ये अवशेष अब भी बाथ, चैस्टर, सिलचैस्टर, राक्सटर तथा अन्य स्थानों में देखे जा सकते हैं। उन्होंने अपने ही कानून तथा भाषाएँ चलायी। सम्भवतः बहुत उच्च श्रेणी के ब्रिटन लोग लैटिनभाषाभाषी हो गये। यह लगभग वैसा ही था जैसे आधुनिक भारत के उच्चवर्ग के लोग अंग्रेजी बोलने वाले हैं। किन्तु जिस तरह अपना रोमन प्रभाव उन्होंने गाल और स्पेन के लोगों पर डाला, वैसा प्रभाव उन्होंने अपने राज्य में भूदासों का काम करने वाले साधारण लोगों पर कभी नहीं डाला। अधिकांश ब्रिटन अपनी कैल्टिक बोलियाँ बोलते थे। रोमनों को यह द्वीप छोड़े अधिक समय नहीं हुआ था जब उनकी भाषा व्यवहार में आनी बन्द हो गयी। केवल विद्वान लोग ही इस भाषा को व्यवहार में लाते थे।

रोमनों के बाद ब्रिटेन में ईसाई मत आया। पहले इस पर अत्याचार होते रहे, बाद में इसे धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया गया। इस ईसाई धर्म के कई ब्रिटिश बिशप हुए और इसके लिए अनेक व्यक्तियों का बलिदान भी हुआ। किन्तु प्रत्यक्ष रूप से यहाँ बहुत कम चर्च थे और ऐसा प्रतीत होता है कि अधिक संख्या में लोग सम्भवतः देवपूजक (Pagan) बने रहे। फिर भी नया धर्म सुप्रतिष्ठित हो गया। इस धर्म में इतनी क्षमता थी कि वह अपनी शक्ति द्वारा ही पनपने लगा। रोमनों के इस द्वीप को छोड़ने से पूर्व ही यह धर्म स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड के उन जंगली कैल्टिक लोगों में भी फैलना शुरू हो गया जिन्हें रोमन लोगों ने कभी नहीं जीता था।

ईसाई धर्म के प्रभाव के अतिरिक्त रोमन शासन का साधारण लोगों पर बहुत कम

---

१. प्राचीन रोम में ३००० से ६००० तक पैदल सैनिकों का समूह (Legion) कहलाता था, इसमें इनके अतिरिक्त कुछ घुड़सवार सैनिक भी होते थे।

स्थायी प्रभाव पड़ा। केवल कैल्ट जाति के उच्च वर्ग ने ही कुछ हद तक पूर्ण रूप से अपने स्वामियों की संस्कृति को अपनाया। किन्तु रोमन लोगों के कार्य का एक पहलू ऐसा था जिसने ग्रेट ब्रिटेन की उन्नति में स्थायी देन का कार्य किया। उन्होंने सड़कों की आश्चर्यजनक पद्धति का निर्माण किया। ये सीधी और ठोस बनी थीं और पहाड़ियों, घाटियों, चौड़े-चौड़े जंगलों और दलदलों के बीच से होती हुई जाती थीं।[१] इन सड़कों ने सर्वप्रथम ग्रेट ब्रिटेन के एक भाग से दूसरे भाग तक के यातायात को सुगम बनाया। इन्होंने इस देश के छोटे एवं पृथक जिलों की शृंखला के स्थान पर आपेक्षिक दृष्टि से इसे एकीकृत देश के रूप में परिणत कर दिया। ग्रेट ब्रिटेन में अगली कई शताब्दियों तक ये बड़ी सड़कें देश के एकीकरण की प्रधान शक्ति बनी रहीं। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक ये बड़ी-बड़ी सड़कें विभक्त देश में यातायात का एकमात्र मुख्य साधन बनी रहीं।[२]

ईसवी सन् की प्रथम चार शताब्दियों तक रोमन साम्राज्य ने समस्त पाश्चात्य जगत को ऐसे शान्त एवं व्यवस्थित शासन का समय प्रदान किया, जैसा न तो इस से पूर्व था और न ही उसके बाद हुआ। इसके संरक्षण में यूनानी कला एवं ज्ञान पश्चिम की सामान्य विरासत बन गया। रोमन लोगों की सुरक्षित सड़कों से ईसाई धर्म के प्रचारक आये और गये। उनके अनुयायियों की संख्या शनैः शनैः बढ़ती गयी। पहले-पहल वे प्रच्छन्न रूप से आये और पुनः अत्याचार सहते हुए तथा अन्त में शासकों के संरक्षण में वे तब तक आते रहे, जब तक कि कुछ देहाती देवपूजकों (Pagans) को छोड़ समस्त पाश्चात्य जगत ईसाई मतावलम्बी न हो गया। शान्ति और कानून के इस युग में ही इस शासन ने राज्य तथा एक-दूसरे के प्रति व्यक्ति के कर्त्तव्यों के उन विचारों को जन्म दिया, जिन्होंने यूरोपियन या पश्चिमी सभ्यता की सुदृढ़ नींव रखी। कोई भी जाति तब तक इस सभ्यता के इतिहास में कोई बड़ा भाग नहीं ले सकी, जब तक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वह रोम की विरासत का भागीदार होने में समर्थ नहीं हुई। यह सब इसलिए सम्भव हुआ कि रोमन साम्राज्य की सेनाएँ इसके लम्बे सीमान्तों की वैसे ही रक्षा कर रही थीं, जैसे ब्रिटिश काल में भारत की सीमाओं की रक्षा ब्रिटिश सेनाएँ कर रही थीं और इस प्रकार ये सेनाएँ साम्राज्य से बाहर की बर्बर जातियों के आक्रमणों को रोकने में समर्थ थीं।

इन बर्बर जातियों में सब से भयंकर जाति ट्यूटानिक जाति थी। यह जाति जर्मनी के जंगलों और दलदलों में घूमती व लड़ा करती थी। साम्राज्य की सीमा पर रहने वाली कुछ जातियों ने इसकी भव्य व्यवस्था और सभ्यता का आदर करना सीख लिया था और इनमें से कुछ जातियाँ चौथी शताब्दी के अन्त तक ईसाई भी बन चुकी थीं। किन्तु इस धर्म के प्रति इनके आदर-भाव के साथ-साथ लालच भी मिला हुआ था और वे इसकी

---

१. उपर्युक्त एटलस की भूमिका में सड़क का नक्शा देखिये, पृ० २६
यह नक्शा प्रदर्शित करता है कि सड़कों का किस प्रकार निरन्तर उपयोग होता रहा।

२. एटलस में रोमन साम्राज्य का नक्शा देखिये, पृष्ठ ४

घनी और उपजाऊ भूमि को अपने लिए लेना चाहती थीं। जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन को इस भावना को क्रियान्वित करने का अवसर भी अधिक प्रतीत होने लगा। रोमन साम्राज्य धीरे-धीरे, किन्तु निश्चित रूप से क्षीण हो रहा था। यह अब केवल अपने ही नागरिकों की सेना भी संगठित नहीं कर सकता था। उसे जर्मन जातियों में से भी बड़ी संख्या में रंगरूट भर्ती करने पड़े। तीसरी शताब्दी के मध्य में ये बर्बर जातियाँ रोमन साम्राज्य की सुरक्षित सीमाओं को भेदने में समर्थ हुईं और उन्होंने शान्त प्रान्तों को अत्यधिक क्षति पहुँचायी। यद्यपि उन्हें खदेड़ कर बाहर कर दिया गया तथा साम्राज्य का पुनः संगठन हो गया, फिर भी वर्तमान हंगरी और रूमानिया का समूचा घना प्रान्त गाथ लोगों के लिए छोड़ना पड़ा।

आखिर चौथी शताब्दी के अन्त में एक महान विपत्ति आयी। पूर्व दिशा से भीषण एवं बर्बर हूण आक्रान्ताओं की एक नयी लहर यूरोप में बलपूर्वक प्रवेश करने लगी। उनकी प्रगति ने समस्त जर्मन जातियों को त्रस्त कर दिया। हूणों से बचने के लिए वे राइन और डेन्यूब नदियों को पार करके आगे बढ़ीं। अगली पीढ़ी में ये बर्बर आक्रान्ता यूरोप के आधे पश्चिमी किन्तु सबसे अधिक धनी प्रान्त के स्वामी बन गये।[१] विसिगाथ (Visigoth) जाति स्पेन में, आस्ट्रोग्राथ (Ostrogoth) जाति इटली में और वण्डाल (Vandals) जाति उत्तरी फ्रांस में आ गयी। ब्रिटेन को भी काफी देर तक इनसे खतरा बना रहा। उत्तर पश्चिमी जर्मनी के समुद्री डाकू देवपूजक फ्रैंक (Frank) सेक्सन, जो कभी रोम के सम्पर्क में नहीं आये थे तथा जो ट्यूटन लोगों में सबसे अधिक खूँख्वार तथा पिछड़े हुए थे, ब्रिटेन के पूर्वी तट पर बहुत देर से लूट-पाट मचाते चले आ रहे थे। इन्हें शान्त करने के लिए उस प्रान्त के रोमन शासकों को बाध्य हो कर एक विशेष अधिकारी नियुक्त करना पड़ा, इसे सेक्सन शोर का काउण्ट (Count of Saxon Shore) कहते थे। उसी समय महान प्राचीर के उत्तर में जंगली पिक्ट लोग अधिक-से-अधिक भयंकर होते जा रहे थे।

जिस समय रोमन साम्राज्य का भीतरी भाग उपर्युक्त जातियों से त्रस्त था, उस समय उसके बाहरी भाग में स्थित एवं पिछड़े हुए प्रान्त—ब्रिटेन का अपना कुछ महत्त्व नहीं था। ४१० ईस्वी में रोमन सेनाओं को ब्रिटेन से वापस बुलाना पड़ा और इस घटना के साथ ब्रिटिश लोगों के इतिहास का एक नया अध्याय आरम्भ हुआ है। अब ट्यूटानिक या जर्मन आक्रान्ता ब्रिटिश द्वीप-समूह की आबादी में अपना योगदान करने लगे।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

For the general history of the period, **Oman,** England before the Norman Conquest; for prehistoric Britain, **Boyd Dawkins,** Early Man in Britain; for Celtic Britain, **Rhys,** Celtic Britain; for Roman

---

१. रोमन साम्राज्य में बर्बर जातियों के बसने की विभिन्न अवस्थाओं के लिए देखिये एटलस, प्लेट ६ तथा ७

Britain, **Haverfield**. The Romanisation of Roman Britain; **Codrington, Roman Reads**; **Collingwood,** Roman Britain; **Haverfield and Macdonald,** Roman Occuption of Britain; Roman London (Historical Monuments Commission). English students will find it interesting to read the chapter on Roman Britain in the **Victoria County History** of their own county.

• •

२

ट्यूटानिक आक्रान्ता

(४१० से ८२५ ई०)

१. बर्बर विजेता एवं उनके द्वारा उत्पन्न अव्यवस्था

रोमन लोगों के ग्रेट ब्रिटेन छोड़ने के बाद की शताब्दी में जो ट्यूटानिक जनजातियाँ वहाँ आकर बसीं, वे मुख्य रूप से राइन और बाल्टिक सागर की नीची तथा दलदल वाली भूमि से आयी थीं।[1] उनके नये घरों की तलाश करने से पूर्व के उनके इतिहास अथवा उनके रीति-रिवाजों और सभ्यता के विषय में हम बहुत ही कम जानते है, सिवाय इसके कि वे भी उन अन्य ट्यूटानिक जनजातियों के समान थीं, जिनका सामान्य वर्णन रोमन इतिहासज्ञों—सीज़र तथा टैसिटस ने किया है।

सीज़र तथा टैसिटस के वर्णन के अनुसार, इन जनजातियों का राजनीतिक संगठन अत्यन्त शिथिल था। प्रत्येक जनजाति सरदारों के शासन के अधीन जिलों में विभक्त थी, किन्तु समग्र रूप से इन जनजातियों की कोई सामान्य सरकार न थी, सिवाय इसके कि सब सरदार मिलकर परामर्श करते थे और स्वतन्त्र व्यक्तियों का समस्त समुदाय कुछ महान प्रश्नों—जैसे पड़ोसी कबीलों से युद्ध आदि—के सम्बन्ध में सलाह करता था। न्याय जिला अदालतों में किया जाता था जिनकी अध्यक्षता सम्भवत: सरदार (Chieftains) करते थे। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि स्वतन्त्र व्यक्तियों को वहाँ उपस्थित होने का अधिकार था और वे व्यक्ति इस बात की घोषणा करते थे कि जन-साधारण का रीति-

---

१. एटलस की प्लेट १० देखिये।

रिवाज क्या है, जिसके द्वारा किसी प्रश्न का निर्णय किया जाय। किन्तु वहाँ कानून की कोई विकसित पद्धति न थी, न तो साक्षियाँ सुनी जाती थीं, न साक्षियों की कोई परीक्षा होती थी। वास्तविक निर्णय कड़ी सौगन्ध खाने, दैवी साक्षियों तथा द्वन्द्व युद्धों द्वारा ही किया जाता था। समुदाय के प्रति दुष्कर्म करना अपराध है—यह विचार इन लोगों में उत्पन्न नहीं हुआ था। केवल कायरता को अथवा युद्ध में किये गये राजद्रोह को ही अपराध समझा जाता था। यहाँ तक कि हत्या का अपराध मृत्यु-दण्ड द्वारा दण्डनीय न था, बल्कि उसकी क्षतिपूर्ति मृत व्यक्ति के सम्बन्धियों को निश्चित दर से रुपया दे देने पर हो जाती थी। इन जन-जातियों में उच्च-कुलोत्पन्न सरदारों, सामान्य स्वतन्त्र व्यक्तियों तथा कबीले में भूदासों के रूप में भूमि की जुताई में लगाये जाने वाले दासों के बीच में बड़ा कठोर जाति-भेद था और किसी भी व्यक्ति के लिए अपनी जन्मजात जाति से ऊपर उठना असम्भव न होते हुए भी अत्यन्त कठिन था। यह जाति-भेद आर्य जातियों में, जिनमें ट्यूटन्स और कैल्टस भी सम्मिलित हैं, सामान्य रूप से प्रचलित था। इससे छुटकारा पाने में शताब्दियाँ लग गयीं। भारत में तो समय के साथ-साथ यह जाति-भेद निर्बल होने के स्थान पर और दृढ़ एवं विस्तृत होता गया तथा अब भी भारतीय जीवन का यह एक प्रमुख अंग है।

सामान्य ट्यूटन जनजातियों में बन्धुत्व एक प्रबलतम बन्धन था। प्रत्येक गाँव सैद्धान्तिक रूप से सम्बन्धियों का समुदाय होता था। समूचा समुदाय अपने प्रत्येक सदस्य के आचरण के लिए उत्तरदायी था। युद्ध में स्वतन्त्र व्यक्तियों की व्यूहरचना सम्बन्धी-समूहों में की जाती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि सम्बन्धी-समूह प्रायः भूमि का काम साझे-दारी पर करते थे। चूँकि उनके कृषि सम्बन्धी तरीके अनुन्नत थे तथा वे लोग प्रति वर्ष अपनी भूमि के विविध हिस्सों पर खेती करते थे और इसका अधिकांश भाग अपने पशुओं की चरागाह के लिए बेकार छोड़ देते थे, अतः प्रत्येक समुदाय के लिए भूमि का बहुत बड़ा क्षेत्र आवश्यक होता था। इन सब बातों में इन जनजातियों के तथा रोमन आक्रमण से पूर्व की कैल्ट जातियों के रिवाजों में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

किन्तु इन ट्यूटन जनजातियों की एक ऐसी विशिष्ट संस्था थी जिसके कारण उनकी युद्ध-क्षमता बढ़ी तथा सम्भवतः वही संस्था उनकी विजयों का कारण भी रही। प्रत्येक सरदार को इस बात पर गर्व था कि उसके पास युवक योद्धाओं का एक समुदाय मौजूद है। वह उनके पालन-पोषण और निवास की व्यवस्था करता था। इन योद्धा-समूहों के सदस्यों को मृत्युपर्यन्त पूर्ण राजभक्ति की शपथ लेनी होती थी और उच्चतम कुल में जन्म लेने वाले युवक भी इसमें सम्मिलित होने में शर्म नही समझते थे। युवक-योद्धाओं के ये समूह, जो अपना जीवन पूर्णतया शिकार खेलने, लड़ने व लड़ाई की तैयारी में बिता देते थे, युद्धकाल में बहुत उपयोगी होते थे। ये खेती से बुलाये जाने वाले सामान्य स्वतन्त्र व्यक्तियों के समूहों से कही अधिक उपयोगी थे। इनके भरण-पोषण के लिए अधिक संख्या में कृषिदासों को परिश्रम करना पड़ता था तथा स्वतन्त्र व्यक्तियों को भारी कर देने पड़ते होंगे। इनके अस्तित्व के लिए सतत युद्ध भी आवश्यक था। योद्धा समूह को युद्ध के अभ्यास में लगाये रखना आवश्यक था अन्यथा यह असन्तुष्ट हो जाता था। इसके सदस्य

अपनी-अपनी सेवाओं के लिए पुरस्कार की भी आशा रखते थे। साथियों (Comites) के ये समूह अथवा (Gesiths) ट्यूटानिक पद्धति के प्रमुखतम अंग थे। निश्चय ही इन्होंने ब्रिटेन की विजय करने में मुख्य भाग लिया होगा। ट्यूटन लोगों में सरदारों और साथियों के बीच के बन्धनों में राजभक्ति की शपथ का बन्धन सबसे अधिक दृढ़ बन्धन था। दूसरी ओर भिन्न-भिन्न सरदारों तथा उनके योद्धा साथियों की पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता इनके द्वारा किये जाने वाले सामान्य कार्यों की पूर्ति के सम्पादन को कठिन बना देती थी।

रोमन लोगों के ग्रेट ब्रिटेन छोड़कर चले जाने के डेढ़ शताब्दी बाद तक इन भयंकर बर्बर लोगों के साहसिक अभियानों के बारे में हमें बहुत थोड़ी जानकारी है, क्योंकि जिन कैल्ट लोगों ने रोमन संस्कृति को ग्रहण कर लिया था उन्होंने उस एकाध अस्पष्ट और संक्षिप्त विलाप को छोड़कर, जो उन्होंने ब्रिटेन के पापों और उनके कारण उसे सहने पड़े दण्डों के बारे में किया था, हमारी जानकारी के लिए कुछ नहीं छोड़ा। ट्यूटन जनजाति के लोग लिख नहीं सकते थे एवं उनकी विजयों के बारे में जो बिखरे हुए तथा परस्पर विरोधी विवरण हमें मिलते हैं, वे भी जिन घटनाओं का निर्देश करते हैं, उन घटनाओं के होने की कई शताब्दियों बाद वे लिखे गये थे।

कुछ भी हो, एक बात तो स्पष्ट है कि उन्होंने ग्रेट ब्रिटेन को जीतना आसान कार्य नहीं पाया। रोमन साम्राज्य के अन्य प्रान्तों को तो ये बर्बर आक्रान्ता असाधारण तीव्रता और सुगमता के साथ जीतते गये, किन्तु ग्रेट ब्रिटेन को कदम-कदम पर एक लम्बे व कठोर संघर्ष से जीतना पड़ा। ग्रेट ब्रिटेन का अधिकांश भाग तथा समूचा आयरलैण्ड तो ये विजेता कभी भी न जीत सके। यद्यपि ट्यूटन्स समुद्र तटों पर निःसन्देह आक्रमण करते रहे, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि रोमन लोगों द्वारा अपनी सेनाएँ वापस बुलाये जाने के ४० वर्ष बाद तक इन्होंने किसी बस्ती को बसाने का साहस नहीं किया। उनकी पहली बस्ती की परम्परागत तिथि ४४६ ई० है, जब हेंगिस्ट और होर्सा के नेतृत्व में जूट जाति के एक दल ने कैण्ट में अपनी बस्ती बसायी। ट्यूटन लोगों को इंग्लैण्ड के बीच आधी दूर तक पहुँचने में सौ से भी अधिक वर्ष लगे तथा ब्रिस्टिल चैनल (डिओर्हम का युद्ध ५७७ ई०) तथा आयरिशसागर (चैस्टर का युद्ध ६१३ ई०) तक बलपूर्वक प्रवेश पाने में एक अन्य लम्बा युग बीत गया। इस प्रकार, कैल्टिक राज्य तीन खण्डों में विभक्त हो गये।[१] तब तक भी कार्नवाल, वेल्स और कैंब्रिया, दक्षिण पश्चिमी स्काटलैण्ड, समस्त हाइलैण्ड तथा आयरलैण्ड अविजित ही बने रहे। इसका अभिप्राय यह है कि रोमनों द्वारा त्याग दिये जाने पर भी कैल्ट लोगों ने अत्यन्त उग्र विरोध किया। उनका प्रतिरोध उस विरोध से कहीं अधिक प्रबल था जिसका सामना ट्यूटन विजेताओं को पश्चिमी यूरोप के अन्य भागों में करना पड़ा। प्रारम्भिक अवस्थाओं में इस विरोध का नेता रोमन संस्कृति को ग्रहण करने वाला एक ब्रिटन (Briton) था जिसका यश किंग आर्थर और उसकी गोलमेज के योद्धाओं की रोमांचक दन्त-

---

१. एटलस प्लेट ११ (अ) नक्शा देखिये जिसमें ट्यूटानिक विजय की अवस्थाएं दिखायी गयी हैं।

कथाओं में सुरक्षित है। किन्तु ये दन्तकथाएँ इतनी अधिक मात्रा में विकृत हो चुकी हैं कि उनसे कोई ऐतिहासिक तथ्य निकालना असम्भव है।

संघर्ष के लम्बे होने का एक मुख्य कारण निस्सन्देह यह था कि ब्रिटेन के विजेता एक नेता के अधीन संगठित सेना के रूप में उस तरह नहीं आये, जैसे इटली में थियेडोरिक के नेतृत्व में ओस्ट्रोगाथ अथवा गाल में क्लेविस के नेतृत्व में फ्रैन्क्स आये थे। ब्रिटेन के ये विजेता विभिन्न जनजातीय समूहों में आये, इनका नेतृत्व अपने-अपने योद्धा समूहों के साथ एक-दूसरे के साथ प्रतिद्वन्द्विता करने वाले अनेक सरदार कर रहे थे और प्रत्येक सरदार अपने लिए एक छोटा राज्य स्थापित करने का प्रयास कर रहा था। इन विजेताओं में चार भिन्न जातियों को हम पहचान सकते हैं। जूट जाति या तो राइन नदी की घाटी से अथवा उत्तरी डेन्मार्क के जूटलैण्ड से दो विशिष्ट जन समूहों में आयी, एक समूह तो कैल्ट की ओर गया, दूसरा आइल आफ वाइट और हैम्पशायर की ओर गया। ऐसा प्रतीत होता है कि एल्ब और वेसर की घाटियों से आये सैक्सन लोगों ने आरम्भ में अपने को विशाल सैन्य समूह में संगठित किया और इसने टेम्ज़ की घाटी में ऊपर बढ़ने का प्रयत्न किया, किन्तु इन्हें माउन्टबेडोन (५१६) के युद्ध में पीछे खदेड़ दिया गया और तब वे कई विशिष्ट समूहों में पूर्व, मध्य, दक्षिण और पश्चिम के सैक्सनों में बँट गये तथा प्रत्येक समूह अपने लिए संघर्ष करने लगा। उत्तरी डच समुद्रतट से आने वाले फ्रिजियन लोगों ने आक्रमणों में निश्चित रूप से भाग लिया, किन्तु हम ठीक तरह से यह नहीं कह सकते कि वे कहाँ बसे। ऐसा लगता है कि होल्स्टाइन से आने वाले एंगल ही इनमें एकमात्र ऐसी जाति थे जो पूर्णतया सामूहिक रूप से अपने बीबी, बच्चों, जानवरों तथा दासों के साथ अपने पुराने घरों को छोड़ नये घरों में आ बसे थे। इन जनजातियों में इनकी संख्या भी सबसे अधिक थी तथा अन्त में दक्षिण ब्रिटेन की समस्त मिश्रित आबादी को उन्होंने अपना नाम दे दिया, क्योंकि इंगलैण्ड का सामान्य अर्थ एंगललैण्ड ही है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि एंगल लोगों ने भी पूर्वी एंगलिया, लिंकन-शायर, ट्रेण्ट की घाटी, यार्कशायर, नौर्थम्बरलैण्ड तथा लोथियन्स में कई विशिष्ट तथा एक दूसरे से सम्बन्ध न रखने वाले आक्रमण किये। विद्वानों ने इनकी बस्तियों के बारे में विस्तारपूर्वक पता लगाने का प्रयत्न किया है, किन्तु इन सबके परिणाम अनिश्चित ही हैं। हम निश्चयपूर्वक इतना ही कह सकते हैं कि रोमन लोगों के ग्रेट ब्रिटेन छोड़ देने के बाद की शताब्दी में ट्यूटानिक राज्यों की स्थापना दक्षिण ब्रिटेन के आधे पूर्वी हिस्से में तथा फोर्थ से सोलैण्ट तक हो चुकी थी और ये छोटे राज्य इंगलैण्ड को विभक्त करने वाली दलदलों, जंगलों और बंजर भूमि की चौड़ी पट्टियों से एक-दूसरे को पृथक् किये हुए थे। इन छोटे राज्यों में से कई राज्यों का प्रतिनिधित्व वर्तमान इंग्लिश काउन्टीज़ करती हैं, जैसे ससैक्स तथा एसैक्स (दक्षिण तथा पूर्वी सैक्सन्स) नौरफोक और साफोक (पूर्वी एंगलों के उत्तरी तथा दक्षिणी लोग)।

इस प्रकार के दीर्घ तथा कटु संघर्ष भयंकर मारकाट को सूचित करते हैं। निस्सन्देह, गाल के विजित प्रान्तवासियों की अपेक्षा ब्रिटन लोगों की जानें कहीं अधिक गयी हैं। किन्तु हमें यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि विजित लोगों का कोई कत्लेआम हुआ था। सम्भवतः

अपनी-अपनी सेवाओं के लिए पुरस्कार की भी आशा रखते थे। साथियों (Comites) के ये समूह अथवा (Gesiths) ट्यूटानिक पद्धति के प्रमुखतम अंग थे। निश्चय ही इन्होंने ब्रिटेन की विजय करने में मुख्य भाग लिया होगा। ट्यूटन लोगों में सरदारों और साथियों के बीच के बन्धनों में राजभक्ति की शपथ का बन्धन सबसे अधिक दृढ़ बन्धन था। दूसरी ओर भिन्न-भिन्न सरदारों तथा उनके योद्धा साथियों की पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता इनके द्वारा किये जाने वाले सामान्य कार्यों की पूर्ति के सम्पादन को कठिन बना देती थी।

रोमन लोगों के ग्रेट ब्रिटेन छोड़कर चले जाने के डेढ़ शताब्दी बाद तक इन भयंकर बर्बर लोगों के साहसिक अभियानों के बारे में हमें बहुत थोड़ी जानकारी है, क्योंकि जिन कैल्ट लोगों ने रोमन संस्कृति को ग्रहण कर लिया था उन्होंने उस एकाध अस्पष्ट और संक्षिप्त विलाप को छोड़कर, जो उन्होंने ब्रिटेन के पापों और उनके कारण उसे सहने पड़े दण्डों के बारे में किया था, हमारी जानकारी के लिए कुछ नहीं छोड़ा। ट्यूटन जनजाति के लोग लिख नहीं सकते थे एवं उनकी विजयों के बारे में जो बिखरे हुए तथा परस्पर विरोधी विवरण हमें मिलते हैं, वे भी जिन घटनाओं का निर्देश करते हैं, उन घटनाओं के होने की कई शताब्दियों बाद वे लिखे गये थे।

कुछ भी हो, एक बात तो स्पष्ट है कि उन्होंने ग्रेट ब्रिटेन को जीतना आसान कार्य नहीं पाया। रोमन साम्राज्य के अन्य प्रान्तों को तो ये बर्बर आक्रान्ता असाधारण तीव्रता और सुगमता के साथ जीतते गये, किन्तु ग्रेट ब्रिटेन को कदम-कदम पर एक लम्बे व कठोर संघर्ष से जीतना पड़ा। ग्रेट ब्रिटेन का अधिकांश भाग तथा समूचा आयरलैण्ड तो ये विजेता कभी भी न जीत सके। यद्यपि ट्यूटन्स समुद्र तटों पर निःसन्देह आक्रमण करते रहे, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि रोमन लोगों द्वारा अपनी सेनाएँ वापस बुलाये जाने के ४० वर्ष बाद तक इन्होंने किसी बस्ती को बसाने का साहस नहीं किया। उनकी पहली बस्ती की परम्परागत तिथि ४४९ ई० है, जब हेंगिस्ट और होर्सा के नेतृत्व में जूट जाति के एक दल ने कैण्ट में अपनी बस्ती बसायी। ट्यूटन लोगों को इंग्लैण्ड के बीच आधी दूर तक पहुँचने में सौ से भी अधिक वर्ष लगे तथा ब्रिस्टिल चैनल (डिओर्हम का युद्ध ५७७ ई०) तथा आयरिशसागर (चैस्टर का युद्ध ६१३ ई०) तक बलपूर्वक प्रवेश पाने में एक अन्य लम्बा युग बीत गया। इस प्रकार, कैल्टिक राज्य तीन खण्डों में विभक्त हो गये।[1] तब तक भी कार्नवाल, वेल्स और कैम्ब्रिया, दक्षिण पश्चिमी स्काटलैण्ड, समस्त हाइलैण्ड तथा आयरलैण्ड अविजित ही बने रहे। इसका अभिप्राय यह है कि रोमनों द्वारा त्याग दिये जाने पर भी कैल्ट लोगों ने अत्यन्त उग्र विरोध किया। उनका प्रतिरोध उस विरोध से कहीं अधिक प्रबल था जिसका सामना ट्यूटन विजेताओं को पश्चिमी यूरोप के अन्य भागों में करना पड़ा। प्रारम्भिक अवस्थाओं में इस विरोध का नेता रोमन संस्कृति को ग्रहण करने वाला एक ब्रिटन (Briton) था जिसका यश किंग आर्थर और उसकी गोलमेज के योद्धाओं की रोमांचक दन्त-

१. एटलस प्लेट ११ (अ) नक्शा देखिये जिसमें ट्यूटानिक विजय की अवस्थाएं दिखायी गयी हैं।

कथाओं में सुरक्षित है। किन्तु ये दन्तकथाएँ इतनी अधिक मात्रा में विकृत हो चुकी हैं कि उनसे कोई ऐतिहासिक तथ्य निकालना असम्भव है।

संघर्ष के लम्बे होने का एक मुख्य कारण निस्सन्देह यह था कि ब्रिटेन के विजेता एक नेता के अधीन संगठित सेना के रूप में उस तरह नहीं आये, जैसे इटली में थियेडोरिक के नेतृत्व में ओस्ट्रोगाथ अथवा गाल में क्लेविस के नेतृत्व में फ्रैन्क्स आये थे। ब्रिटेन के ये विजेता विभिन्न जनजातीय समूहों में आये, इनका नेतृत्व अपने-अपने योद्धा समूहों के साथ एक-दूसरे के साथ प्रतिद्वन्द्विता करने वाले अनेक सरदार कर रहे थे और प्रत्येक सरदार अपने लिए एक छोटा राज्य स्थापित करने का प्रयास कर रहा था। इन विजेताओं में चार भिन्न जातियों को हम पहचान सकते हैं। जूट जाति या तो राइन नदी की घाटी से अथवा उत्तरी डेन्मार्क के जूटलैण्ड से दो विशिष्ट जन समूहों में आयी, एक समूह तो कैल्ट की ओर गया, दूसरा आइल आफ वाइट और हैम्पशायर की ओर गया। ऐसा प्रतीत होता है कि एल्ब और वेसर की घाटियों से आये सैक्सन लोगों ने आरम्भ में अपने को विशाल सैन्य समूह में संगठित किया और इसने टेम्ज़ की घाटी में ऊपर बढ़ने का प्रयत्न किया, किन्तु इन्हें माउन्टबेडोन (५१६) के युद्ध में पीछे खदेड़ दिया गया और तब वे कई विशिष्ट समूहों में पूर्व, मध्य, दक्षिण और पश्चिम के सैक्सनों में बँट गये तथा प्रत्येक समूह अपने लिए संघर्ष करने लगा। उत्तरी डच समुद्रतट से आने वाले फ्रिजियन लोगों ने आक्रमणों में निश्चित रूप से भाग लिया, किन्तु हम ठीक तरह से यह नहीं कह सकते कि वे कहाँ बसे। ऐसा लगता है कि होल्स्टाइन से आने वाले एंगल ही इनमें एकमात्र ऐसी जाति थे जो पूर्णतया सामूहिक रूप से अपने बीबी, बच्चों, जानवरों तथा दासों के साथ अपने पुराने घरों को छोड़ नये घरों में आ बसे थे। इन जनजातियों में इनकी संख्या भी सबसे अधिक थी तथा अन्त में दक्षिण ब्रिटेन की समस्त मिश्रित आबादी को उन्होंने अपना नाम दे दिया, क्योंकि इंगलैण्ड का सामान्य अर्थ एंगललैण्ड ही है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि एंगल लोगों ने भी पूर्वी एंगलिया, लिंकन-शायर, ट्रेण्ट की घाटी, यार्कशायर, नौर्थम्बरलैण्ड तथा लोथियन्स में कई विशिष्ट तथा एक दूसरे से सम्बन्ध न रखने वाले आक्रमण किये। विद्वानों ने इनकी बस्तियों के बारे में विस्तारपूर्वक पता लगाने का प्रयत्न किया है, किन्तु इन सबके परिणाम अनिश्चित ही हैं। हम निश्चयपूर्वक इतना ही कह सकते हैं कि रोमन लोगों के ग्रेट ब्रिटेन छोड़ देने के बाद की शताब्दी में ट्यूटानिक राज्यों की स्थापना दक्षिण ब्रिटेन के आधे पूर्वी हिस्से में तथा फोर्थ से सोलैण्ट तक हो चुकी थी और ये छोटे राज्य इंगलैण्ड को विभक्त करने वाली दलदलों, जंगलों और बंजर भूमि की चौड़ी पट्टियों से एक-दूसरे को पृथक् किये हुए थे। इन छोटे राज्यों में से कई राज्यों का प्रतिनिधित्व वर्तमान इंग्लिश काउन्टीज़ करती हैं, जैसे ससैक्स तथा एसैक्स (दक्षिण तथा पूर्वी सैक्सन्स) नौरफोक और साफोक (पूर्वी एंगलों के उत्तरी तथा दक्षिणी लोग)।

इस प्रकार के दीर्घ तथा कटु संघर्ष भयंकर मारकाट को सूचित करते हैं। निस्सन्देह, गाल के विजित प्रान्तवासियों की अपेक्षा ब्रिटन लोगों की जानें कहीं अधिक गयी हैं। किन्तु हमें यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि विजित लोगों का कोई कत्लेआम हुआ था। सम्भवतः

ऐसा केवल कुछ चहारदीवारी से घिरे उन नगरों में ही हुआ, जिन्होंने अपने प्रतिरोध से आक्रान्ताओं को क्रुद्ध कर दिया था। ट्यूटन लोगों को नगरों से घृणा थी, उन्होंने ब्रिटेन में रोमन लोगों द्वारा बनाये गये नगरों को ध्वस्त होने के लिए छोड़ दिया। प्रथम विजयों में—जिनमें सब स्वतन्त्र लोगों के समूहों ने भाग लिया था—अवश्यमेव बड़ी मात्रा में मारकाट मची होगी। किन्तु इस अवस्था में भी सम्भवतया कैल्टिक भूदासों को जीवित रहने दिया गया होगा, क्योंकि उन्हें मारना हानिप्रद था और हम यह जानते हैं कि ट्यूटन अपने देश में भी भूदासों से काम लेते थे। किन्तु योद्धासमूहों द्वारा प्रधान रूप से की जाने वाली बाद की विजयों के बारे में यह विश्वास करना असम्भव है कि इनमें भूदासों का विध्वंस किया गया होगा, क्योंकि इन योद्धा समूहों को अपने जीते हुए प्रदेशों की भूमियों को जोतने के लिए भूदासों के श्रम की आवश्यकता थी। विजेताओं के आगे बढ़ने पर जो कैल्ट अपने मित्रों के पास शरण ग्रहण कर सके थे, उन्होंने ऐसा ही किया, इनमें इनके सभी शिक्षित वर्ग भी सम्मिलित थे। इनमें से अधिकांश ब्रिटेनी की ओर भाग गये। किन्तु बड़ी संख्या में क्षुद्र मजदूर देश में ही बने रहे और उन्होंने अपने स्वामियों की भाषा बोलना सीख लिया। कत्लेआम के समर्थन में एकमात्र प्रबल युक्ति यह दी जाती है कि विजेताओं द्वारा कब्जे में किये गये प्रदेशों में ईसाई धर्म लुप्त हो गया। किन्तु हम देख चुके हैं कि ग्रामीण जनता पर इस धर्म का कोई पक्का प्रभाव नही पड़ा था। अतः हमें यह कल्पना नहीं करनी चाहिए कि इन आक्रमणों के फलस्वरूप इंग्लैण्ड की सारी आबादी विशुद्ध रूप से ट्यूटन हो गयी थी। सम्भवतया ये दोनों सर्वत्र मिली-जुली थीं। किन्तु ज्यों-ज्यों ट्यूटन सत्ता का विस्तार हुआ, त्यों-त्यों कैल्टिक अंश पश्चिम में अधिकाधिक सुदृढ़ होता गया। उदाहरण के लिए, वैसेक्स के कुछ भागों में (जैसे बर्कशायर, हैम्पशायर, डोरसेण्ट में) कैल्टिक जनता के अस्तित्व को आ[illegible] स्वीकार किया गया है। डैवनशायर में लगभग विशुद्ध रूप से कैल्टिक वंश की जनता थी।

इस प्रकार ट्यूटन आक्रमणों का पहला परिणाम यह हुआ कि देश में एकता नही रही। देश कई कैल्टिक राज्यों तथा कई भिन्न-भिन्न इंगलिश राज्यों में विभक्त हो गया। प्रारम्भ से ही इन छोटे-छोटे राज्यों में सतत संघर्ष चलता रहा, क्योंकि प्रत्येक सरदार अपने पड़ोसी सरदारों पर प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न करता था और इसके परिणाम-स्वरूप ७ या ८ ठोस इंग्लिश राज्यों का प्रादुर्भाव हुआ। इनमें से जो बड़े राज्य थे, उनमें अनेक छोटे-छोटे राज्य सम्मिलित थे जो अब शायर या काउन्टी बन गये, किन्तु अभी तक इनमें आनुवंशिक सरदार होता था। इस समय देश में छोटे राजा और उनकी विशिष्ट लोक सभाएँ (Folkmoots) अथवा स्वतन्त्र व्यक्तियों की परिषदें हुआ करती थीं। सातवीं और आठवीं शताब्दियों में इनमें से तीन राज्य विशेष रूप से मुख्य बन गये तथा वे शेष राज्यों पर प्रभुता का दावा करने का प्रयत्न करने में पर्याप्त सबल प्रतीत हुए। ये राज्य थे—नौर्थम्ब्रिया—यह हम्बर से फोर्थ तक फैला हुआ एक लम्बा पतला राज्य था; मर्सिया—मिडलैण्ड्स में वर्गाकार रूप में फैला हुआ था, इसके अन्तर्गत कई छोटे-छोटे राज्य थे, तीसरा

वैसेक्स था जिसके अन्तर्गत टेम्ज़ के दक्षिणी प्रदेश थे, और वह डेवनशायर से ससेक्स तक फैला हुआ था।

जिस समय इंग्लैण्ड में बसने वालों में अव्यवस्था का साम्राज्य था, उस समय स्वतन्त्र कैल्ट लोगों की हालत भी इससे कुछ बेहतर न थी। इस लम्बे युग के उनके इतिहास के बारे में तो हमें बहुत कम ज्ञान है, किन्तु इतना हम जानते हैं कि उनमें अनेक भेद थे। हमें दक्षिणी ब्रिटेन में केवल तीन समूहों का पता लगता है—पश्चिमी वेल्स—जिसमें डेवनशायर और कार्नवाल भी सम्मिलित थे; विशिष्ट वेल्स और स्ट्रेथक्लाइड तथा कैम्ब्रिया जो मर्सी से क्लाइड तक फैला हुआ था। किन्तु इन समूहों में भी अनेक अवान्तर भेद थे। उदाहरणार्थ, स्काटलैण्ड के दक्षिण पश्चिम में गैलोवे व्यावहारिक रूप से स्वतन्त्र राज्य था। वहाँ के बाशिन्दे गेल या पिक्ट थे, जबकि स्ट्रैथक्लाइड के शेष भाग पर ब्रिटन लोगों का कब्जा था। स्काटलैण्ड के उत्तर में भी कई विशिष्ट राज्य थे। इस काल में यह गड़बड़ पश्चिमी हाईलैण्ड्स में उन स्काटों के प्रव्रजन से और अधिक बढ़ गयी जो स्काट आयरलैण्ड के उत्तर से आने वाली एक विजेता कैल्टिक जाति थीं और जिन्होंने आगे चलकर समूचे राज्य को अपना नाम प्रदान किया।[१]

इस अशान्ति के बीच सभ्यता का ह्रास हुआ हो तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। छठी तथा सातवीं शताब्दी में इन द्वीपसमूहों की जो अवस्था थी, उस पर विचार करने पर यह विश्वास नहीं होता कि समय आने पर इतनी अव्यवस्था के बीच से एक संयुक्त राष्ट्र का विकास हुआ होगा।

जब ब्रिटेन इस अव्यवस्था की अवस्था में था, तब पश्चिमी यूरोप भी गहनतम बर्बरता में पड़ा हुआ था, क्योंकि बर्बर आक्रान्ताओं ने इसके प्रत्येक भाग पर आधिपत्य जमाया हुआ था, जैसे—फ्रांस में फ्रैंक और वर्गण्डियन, स्पेन में विसिगाथ, इटली में औस्ट्रोगोथ तथा बाद में लोम्बर्ड। इसी युग में पूर्व में एक महान परिवर्तन हो रहा था। पैगम्बर मुहम्मद की शिक्षाओं से अनुप्राणित अरबों ने सातवीं शताब्दी में रोमन साम्राज्य की विजय से शेष बचे हुए पूर्वी भाग के अधिकांश प्रदेश तथा ईरान पर आक्रमण किया और उन्हें जीत लिया। सीरिया और मिस्र उनके हाथ में थे ही। वे अफ्रीका के उत्तरी समुद्र तट के साथ फैल रहे थे और आठवीं शताब्दी (७११ ई०) के आरम्भ में उन्होंने जिब्राल्टर जलडमरूमध्य को पार किया और स्पेन का बड़ा भाग जीत लिया।

किन्तु जब सर्वत्र अव्यवस्था का साम्राज्य था, उस समय आयरलैण्ड में एक आश्चर्यजनक विकास हो रहा था। आयरलैण्ड ट्यूटानिक आक्रान्ताओं से उसी प्रकार मुक्त रहा, जैसे वह रोमनों के आक्रमणों से मुक्त रहा था। रोमन लोगों के ब्रिटेन छोड़ जाने के बाद के वर्षों में गाल में प्रशिक्षित सेण्ट-पैट्रिक ने आयरलैण्ड के गेल (Gael) लोगों को ईसाई बनाने का कार्य शुरू किया और इस समय से होने वाली धर्म और विद्या की आश्चर्यजनक पुनर्जागृति ने आयरलैण्ड को दो-तीन शताब्दियों तक यूरोप का पवित्र स्थान तथा सन्तों और

---

१. एटलस, प्लेट नं० १९ में स्काटलैण्ड का मानचित्र देखिये।

धर्म-प्रचारकों का घर बना दिया। यह देश उस समय आठ जनजातीय राज्यों में विभक्त था, ये सदैव एक-दूसरे से लड़ते रहते थे। किन्तु यह कोई महत्त्वपूर्ण बात नहीं थी। धार्मिक व्यक्ति अपनी पृथक् बस्तियों में रहते थे, जहाँ सैकड़ों शिष्य उनके चारों ओर एकत्र होते थे। वे अपनी टट्टरवाली झोपड़ियों को बनाते थे और अपना भोजन स्वयं पैदा करते थे। किन्तु वे अपना अधिकांश समय धर्म के अध्यापन में व्यतीत करते थे।[1] इन मठों से वे पश्चिम के सभी गैर ईसाई प्रदेशों में बाइबिल का प्रचार करने के लिए प्रशंसनीय उत्साह के साथ जाया करते थे। वे आयरलैण्ड तक दूरवर्ती प्रदेशों में गये। उन्होंने समूचे पश्चिम जर्मनी में राइन नदी के मुहाने से स्विटजरलैण्ड तक पर्यटन किया और इस प्रदेश के अनेक गैर-ईसाइयों को ईसाई बनाया। किन्तु हमारे लिए उनकी सब बस्तियों में सबसे अधिक रोचक सेंट कोलम्बा द्वारा बसायी गयी बस्ती है। यह सेंट आयरलैण्ड के उत्तर में एक बड़े मठ के विद्यालय का विद्यार्थी था तथा आर्जेलशायर (Argyllshire) में हाल में अपनी सत्ता स्थापित करने वाले स्काट जाति के राजा का रिश्ते में भाई था। ५६५ के लगभग अपने चचेरे भाई के निमन्त्रण पर कोलम्बा अपने १२ साथियों के साथ आयोना (Iona) के छोटे-से टापू में बस गया। यह स्काटलैण्ड के उजाड़ पश्चिमी तट से कुछ दूरी पर था और इसके बाद आयोना ब्रिटेन का एक पवित्र स्थान बन गया। कोलम्बा के शिष्य उत्तरी स्काटलैण्ड में पर्यटन करते रहे और उन्होंने गैर-ईसाई पिक्ट लोगों को ईसाई बनाया और शीघ्र ही उन्होंने एंग्लोसैक्सन विजेताओं को ईसाई बनाने का एक और भी कठिन कार्य प्रारम्भ किया।

२. सभ्यता का पुरुनज्जीवन

इंग्लिश लोगों को ईसाई बनाने का पहला प्रयत्न कैल्टिक मिशनरियों द्वारा नहीं, किन्तु सेण्ट अगस्टाइन की अध्यक्षता में ईसाई भिक्षुओं के एक समूह द्वारा किया गया। ये भिक्षु महान् पोप ग्रेगोरी द्वारा भेजे गये थे और ५९७ ई० में कैण्ट के समुद्र तट पर उतरे थे। उनके पहले चर्च का स्थान—कैण्टरबरी—उसी समय से इंग्लिश चर्च का केन्द्र बना हुआ है। यद्यपि अगस्टाइन तथा उसके अनुयायियों ने कैण्ट वालों को ईसाई बनाया, नार्थम्ब्रिया तथा एस्सेक्स के राजाओं को नया धर्म स्वीकार करने की प्रेरणा दी, किन्तु देव पूजकों की प्रतिक्रिया का नेतृत्व करने वाले मर्सिया के राजा ने उनका कार्य लगभग नष्ट कर दिया। इंग्लिश लोगों का वास्तविक रूप से ईसाई बनना ६३५ ई० से पहले उस समय तक नहीं हुआ, जब तक कि नार्थम्ब्रिया का राजा ओसवाल्ड महान कैल्टिक धर्मप्रचारक सेण्ट एडन (Aidan) को आयोना (Iona) से नहीं लाया। एडन द्वारा लिंडिसफार्न (Lindisfarne) के टापू में स्थापित मठ से मिशनरी सारे इग्लैण्ड में गये और एक पीढ़ी में समूचे देश ने नया धर्म स्वीकार कर लिया। इस प्रकार अंग्रेजों के ईसाई बनने का श्रेय मुख्य रूप से उनके कैल्टिक पड़ोसियों को है।

दुर्भाग्यवश जिस लम्बी अवधि में कैल्टिक ईसाई यूरोपीय महाद्वीप के ईसाइयों के मुख्य समूह से इंगलिश प्रकृति पूजकों द्वारा पृथक् किये गये, उस अवधि में कैल्टिक ईसाइयों

१. एटलस की प्लेट नं० दो में आरम्भिक आयरलैण्ड का मानचित्र देखिये।

में कई बड़े भेद उत्पन्न हो गये। इनमें से कुछ भेद तो ईस्टर की तिथि आदि छोटे-छोटे विषयों के सम्बन्ध में थे और कुछ चर्च को संगठित करने के तरीके आदि महान प्रश्नों के विषय में थे। ६६४ ई० में ह्विटबी (Whitby) में इंग्लिश बिशपों की एक परिषद इसका निर्णय करने को बुलायी गयी कि रोमन पद्धति का अनुसरण होना चाहिए या कैल्टिक पद्धति का। सब इंग्लिश राजाओं द्वारा समान रूप से की जाने वाली यह पहली कार्यवाही थी। परिषद ने रोमन विधियों को स्वीकार करने का निर्णय किया और इस प्रकार नये ईसाई चर्च का शेष पश्चिमी जगत से सम्पर्क प्रारम्भ हुआ। पोप ने यूरोपीय महाद्वीप के एक बिशप टार्सस केथियोडोर को नवीन इंग्लिश चर्च में संगठन कार्य करने के लिए भेजा। उसने सारे देश को बिशपक्षेत्रों (Bishoprics) में बाँटा, ये छोटे राज्यों के प्रदेश से लगभग मिलते थे[१] और इन बिशपों द्वारा समय-समय पर बुलायी जाने वाली परिषदों ने सर्व प्रथम इंगलिश प्रदेशों की एकता को स्वीकार किया। दुर्भाग्यवश, आरम्भ में ६६४ ई० में हुए निर्णय का परिणाम यह हुआ कि इन टापुओं के कैल्टिक और ट्यूटानिक क्षेत्रों में ठीक उस समय एक नया मतभेद शुरू हो गया, जब कि यह आशा थी कि नये धर्म को स्वीकार करने से उनमें एकता हो जायेगी। किन्तु यह स्थिति बहुत देर तक नहीं रही। अधिकांश कैल्टिक प्रदेशों ने शनैः शनैः रोमन व्यवस्था स्वीकार कर ली और इस प्रकार इन टापुओं की समूची जनता की कुछ वस्तु सामान्य हो गयीं। शेष यूरोपियन जातियों की भाँति उनके लिए भी एक सामान्य धर्म ने उन्हें परस्पर बाँधने वाली शक्ति प्रदान की। यह केवल शनैः शनैः कार्य कर सकती थी और अपने आप में ऐसी न थी कि उन्हें एक राष्ट्र के रूप में संगठित कर सके, किन्तु इसके बिना एकता कभी नहीं आ सकती थी।

ईसाई मत को स्वीकार करने से ये टापू न केवल एक बार पुनः यूरोप की अन्य जातियों के सम्पर्क में आये, अपितु इससे वे उस पश्चिमी सभ्यता की महान विरासत के प्रभाव में भी आये, जिसका एकमात्र संरक्षक, उन अन्धकारपूर्ण शताब्दियों में, चर्च था। उन्होंने न केवल ईसाई नैतिक नियमों और ईसाई विचारधारा के प्रभाव का अनुभव किया, किन्तु चर्च के माध्यम से उन्होंने पुराने रोम की परम्पराओं का भी अनुभव किया, यद्यपि यह बहुत ही मन्द और दूरवर्ती रूप में था। कोई भी बर्बर जाति उस समय तक किसी प्रकार का महत्त्वपूर्ण कार्य करने में सफल नहीं हो सकी, जब तक ऐसा नहीं हुआ। शिक्षित पुरोहितों और भिक्षुओं से प्रेरणा पाकर बौद्धिक जीवन का जन्म हुआ और कुछ समय तक उत्तरी इंगलैण्ड कम-से-कम पश्चिमी यूरोप के उन देशों से सम्भवतः अधिक सभ्य था, जिन देशों में बर्बर जातियाँ बस गयी थीं। टाइन पर बसे जारो (Jarrow on tyne) के मठ से चर्च सम्बन्धी इतिहास (Ecclesiastical History) लिखने वाले तथा ७३५ ई० में दिवंगत होने वाले पूज्य बीड (Venerable Bede) अपने युग के एकमात्र बड़े लेखक थे। आठवीं शताब्दी में जब विजेता फ्रैन्क राजाओं ने जर्मनी

---

१. एंग्लो-सैक्सन चर्च के विभागों के नक्शे के लिए देखिये एटलस की प्लेट नं० ४४ (ए)

की बर्बरता पर काबू पाना तथा परोक्ष रूप से उसे रोम के प्रभाव में लाना शुरू किया, तो उन्होंने इंग्लैण्ड से ही धर्म प्रचारक मँगाकर उस कार्य को पूरा करना चाहा जिसे आइरिश उपदेशकों ने आरम्भ किया था। जर्मनी में भी ईसाई चर्च के संगठन का श्रेय एक इंग्लिश व्यक्ति सेण्ट-बोनीफेस को है। जब सबसे बड़े फ्रैंक राजा शार्लमेगन (Charlemagne) ने अपने को समूचे पश्चिमी यूरोप का स्वामी बनाया, रोमन साम्राज्य को पुन: स्थापित करने का प्रयत्न किया और अपने दरबार को विद्या के पुनरुज्जीवन का केन्द्र बनाया, तब उसका मुख्य परामर्शदाता और सहायक इंग्लिश विद्वान आलकुइन (Alcuin) था। आयरलैण्ड में तथा थोड़ी मात्रा में स्काटलैण्ड में भी विद्या और धर्म ने इस युग में प्रगति की। अत: समूचे रूप में ब्रिटिश द्वीपसमूह अपने अन्धकार-युग से बाहर निकलने लगा और सम्भवत: कुछ समय तक वह यूरोप का सबसे अधिक सुशिक्षित प्रदेश रहा।

किन्तु इंग्लिश राज्यों तथा उनके कैल्टिक पड़ोसियों के बीच में, इसी प्रकार स्वयं इंग्लिश राज्यों के मध्य जो पुराना संघर्ष चला आ रहा था वह अब भी जारी था, यद्यपि इसमें अब भीषणता कम हो गयी थी। सातवीं तथा आठवीं शताब्दियों की मुख्य विशेषता यह थी कि उस समय नार्थम्ब्रिया, मर्सिया और वैसेक्स के तीन इंग्लिश राज्यों में प्रभुता के लिए लम्बा संघर्ष चल रहा था। आरम्भ में नार्थम्ब्रिया सबसे आगे था, किन्तु इसके उत्तरी तथा दक्षिणी अर्धभागों में आपसी मतभेदों के कारण तथा अपने कैल्टिक पड़ोसियों के साथ संघर्ष के कारण वह निर्बल हो गया। ६८५ ई० में नेक्टनस्मेर (Nectansmere) में स्काटलैण्ड के पिक्ट लोगों की जो प्रबल विजय हुई उसके साथ ही इसकी महत्ता समाप्त हो गयी, ऐसा कहा जा सकता है। इसके बाद मर्सिया नेता बना। इसके सबसे बड़े राजा ओफा (७५८-७९६) ने न केवल मिडलैण्ड्स के छोटे राज्यों पर स्वामित्व स्थापित किया, बल्कि वेल्स लोगों को भी पीछे हटाकर उस बाँध (Dyke) के पीछे कर दिया, जिसके साथ उसका नाम आज तक जुड़ा हुआ है। किन्तु मर्सिया एकीकृत राज्य नहीं था। यह छोटे वशवर्ती राज्यों का समूह था और केवल उसी समय दुर्जेय होता था जब वह एक महान नेता के शासन में होता था। अन्त में दक्षिण के राज्य वैसेक्स ने सब इंग्लिश राज्यों पर एगबर्ट के नेतृत्व में प्रभुता प्राप्त की। एगबर्ट ८०२ ई० में वैस्ट सैक्सन की राजगद्दी पर बैठा था। उसने उस समय तक कैल्टिक प्रभाव वाले डेवन को जीता। उसने एलाडून (Elladun) में मर्सिया वालों को हराया (८२५ ई०), उसने कैण्ट और ससैक्स से अपना आधिपत्य स्वीकार कराया और अगले कुछ वर्षों में इंग्लैण्ड के सभी छोटे राजाओं ने उसे अपनी वश्यता और राजभक्ति प्रदान की। यहाँ पहली बार इंग्लैण्ड एक राज्य-जैसी कुछ वस्तु बनी, यद्यपि वस्तुत: छोटे राज्यों की अपनी पृथक् सत्ता अब तक बनी हुई थी और वास्तविक एकता अभी बहुत दूर की बात थी।

यह एक विचित्र संयोग है कि ठीक उस समय जबकि इंग्लिश जातियाँ कुछ एकता प्राप्त कर रही थीं, पश्चिमी यूरोप में एक महान संयुक्त राज्य का संगठन हुआ। आठवीं शताब्दी में केरोलिजियन वंश के फ्रैंक राजाओं ने शीघ्र ही अपने को पश्चिमी सभ्यता की आशा का केन्द्र बना लिया। उन्होंने ७३२ ई० की पोइटियर्स की लड़ाई में मुसलमानों

(Saracens) को उस समय हराकर पीछे हटा दिया, जब यह प्रतीत हो रहा था कि वे फ्रांस जीत लेंगे, क्योंकि वे स्पेन को पहले ही जीत चुके थे। उन्होंने अपने शासन में समूचे फ्रांस और पश्चिमी जर्मनी का एकीकरण किया। उन्होंने चर्च तथा पोप के शासन को अपने संरक्षण में ले लिया और इटली में खूंखार लम्बार्ड लोगों को सभ्य बनाया। उन्होंने केन्द्रीय तथा उत्तरी जर्मनी की अब तक न जीती गयी जनजातियों को सभ्यता के प्रभावों में लाना आरम्भ किया और इन प्रदेशों में प्रचार करने वाले ईसाई मिशनरियों को संरक्षण और सहायता प्रदान की। उन्होंने एल्ब नदी के पूर्व में बसी हुई स्लाव जनजातियों को भी जीतना शुरू किया और अवार (Avar) जाति के विरुद्ध भी सफलतापूर्वक युद्ध किया। मंगोल वंश की आक्रमण करने वाली यह जाति हंगरी में जमी हुई थी। ऐसा प्रतीत होता है कि यूरोप में रोमन साम्राज्य की पुरानी व्यवस्था से अस्पष्ट सादृश्य रखने वाली किसी नयी व्यवस्था का प्रादुर्भाव हो रहा था। ८०० ई० में एगबर्ट के वैस्टसैक्सन की राजगद्दी पर बैठने से ठीक दो वर्ष पहले सब अच्छे यूरोपियों तथा सभ्यता के प्रेमियों को यह अनुभव हुआ कि शान्ति और कानून के दिन लौट कर आ रहे हैं। उनके इस अनुभव को तब अभिव्यक्ति मिली, जब पोप ने फ्रैंकों के सबसे बड़े राजा शार्लमेगन के सिर पर शाही ताज रखा और उसका स्वागत पुराने रोम का पुनरुज्जीवन करने वाले तथा विश्व को शान्ति प्रदान करने वाले रोमन सम्राटों की सुदीर्घवंश परम्परा के उत्तराधिकारी सम्राट् के रूप में किया।

किन्तु एगबर्ट के संयुक्त इंग्लैण्ड की भाँति शार्लमेगन का साम्राज्य भी बहुत निर्बल था और वह किसी बड़े दबाव को सहन नहीं कर सकता था। दोनों राज्यों पर नौवीं शताब्दी में कई भीषण मुसीबतें आयीं और उन्होंने कुछ समय के लिए उस समय तक हो चुका सारा कार्य नष्ट कर दिया और न केवल ब्रिटिश द्वीपसमूह को, अपितु समूचे पश्चिमी यूरोप को बर्बरता और अराजकता के एक लम्बे और नये युग में डाल दिया। शार्लमेगन का साम्राज्य उसके वंशजों में बँट गया और उनके आपसी झगड़ों से टुकड़े-टुकड़े हो गया। इस समय उनके सामन्तों ने अपनी सत्ता स्थापित की और उस पद्धति का जन्म हुआ जिसे सामन्त पद्धति कहा जाता है। इसी समय विशाल साम्राज्य पर चारों ओर से आक्रमण हुए। ये हमले इटली और दक्षिण में सार्सन लोगों द्वारा हुए, हंगरी और दक्षिण पूर्व से मंगोलियन आक्रान्ताओं की एक नयी धारा में आने वाले मगयारों द्वारा हुए, पूर्व में ये आक्रमण उन स्लाव जनजातियों द्वारा किये गये जिन्हें शार्लमेगन ने नियन्त्रण में रखा था और सबसे बढ़कर उत्तर के स्कैण्डिनेवियन प्रदेशों से खूंखार नार्स और डेनिश आक्रान्ताओं ने हमले किये। इन आक्रमणों से तथा आन्तरिक निर्बलता के कारण शार्लमेगन का साम्राज्य बड़ी जल्दी नष्ट हो गया।

इंग्लैण्ड तथा अन्य टापुओं पर केवल नार्स और डेनिश आक्रान्ताओं के ही आक्रमण हुए। किन्तु यह तूफान पूरी शक्ति के साथ फ्रांस की अपेक्षा उन पर अधिक कठोरता से गिरा। वस्तुतः यह आक्रमण एगबर्ट के समय से पहले ही शुरू हो गये थे और उसकी मृत्यु से पूर्व ही अधिक गम्भीर होने लगे थे। उसकी हाल में बनायी गयी और शिथिल रूप से

संगठित शक्ति ऐसी मजबूत नहीं थी कि वह इसका मुकाबला कर सकती । उसकी मृत्यु के बाद की पीढ़ी में विजेता नार्थमैन उन प्रदेशों में बड़ी संख्या में बस गये जिन प्रदेशों में उसकी प्रभुता को स्वीकार किया गया था और इस द्वीपसमूह की मिश्रित जनता में एक नये तथा बहुत महत्त्वपूर्ण अंश की वृद्धि हुई ।

३. ८०० ई० में इंग्लैण्ड

फिर भी समूचे इंग्लैण्ड के प्रथम राजा का आविर्भाव एक नये युग को सूचित करता है । नार्थमैन लोगों के आक्रमणों और बस्तियों पर विचार करने से पहले संक्षेप में यह देख लेना उपयोगी होगा कि ट्यूटानिक जाति के प्रथम आक्रमण के चार शताब्दी बाद एगबर्ट के समय में इंग्लैण्ड की दशा क्या थी । यह देखना विशेष रूप से इसलिए उपयोगी है कि इस काल की कुछ विशेषताएँ बाद में बनी रहीं और इंग्लिश संस्थाओं पर इनका स्थायी प्रभाव पड़ा ।

इस युग के इंग्लिश लोगों की जीवन-पद्धति के विषय में हम केवल अस्पष्ट विचार ही बना सकते हैं क्योंकि नार्मन विजय के समय तक हमारे पास इस प्रकार की कोई विस्तृत सामग्री नहीं है तथा इस द्वीपसमूह के अन्य भागों के जीवन के बारे में हमारा ज्ञान इससे भी अधिक अस्पष्ट है । किन्तु फिर भी हमें यह कल्पना करनी चाहिए कि इंग्लिश लोगों की बड़ी संख्या सम्भवतः गाँवों में समुदायों के रूप में रहती थी और खेतों पर परिश्रम करके अपनी आजीविका प्राप्त करती थी । अनेक ग्रामवासी स्वतन्त्र व्यक्ति थे, उनके पास बड़ी-बड़ी जमीनें, प्राय एक सौ बीस-बीस एकड़, थीं, उन्हें सेना में सेवा करनी पड़ती थी और न्यायालयों में हाजिरी देनी पड़ती थी । अन्य अनेक ग्रामवासी भूदास थे, उन पर ये बाध्यताएँ नहीं थीं, किन्तु दूसरी ओर उन्हें अपनी भूमि को छोड़कर जाने की स्वतन्त्रता नहीं थी । इन्हें अपने स्वामियों को अनेक ऐसे कर देने पड़ते थे और सेवाएँ करनी पड़ती थीं जिनसे वे तंग आ जाते थे । इन्हें अपने मालिकों की तथा अपनी जमीन को जोतना पड़ता था । ये गाँव-समुदाय भले ही ये स्वतन्त्र हों या परतन्त्र) व्यावहारिक रूप से आत्मनिर्भर थे; अपना अन्न स्वयं उत्पन्न करते थे, अपने कपड़े और बर्तन स्वयं तैयार करते थे, उन्हें अपने हलों के फाल के लिए लोहे तथा (कुछ गाँवों में) नमक को छोड़कर शायद ही बाहर की किसी चीज की आवश्यकता होती थी । अतः गाँव वाले गाँव की सीमाओं से परे होने वाली घटनाओं के बारे में बहुत कम जानते थे और इनकी परवाह भी बहुत कम करते थे । डेनिश हमलों ने यह प्रदर्शित किया कि उन्हें एक सामान्य शत्रु का सामना करने के लिए प्रेरित करना बहुत कठिन था और यह लगभग असम्भव था कि इनमें समूचे इंग्लैण्ड के लिए देशभक्ति की भावना उत्पन्न की जा सके । समष्टि रूप में इंग्लैण्ड उनके लिए कोई अर्थ नहीं रखता था ।

ऐसा प्रतीत होता है कि स्वतन्त्र व्यक्तियों ने पुराने सैनिक कर्त्तव्यों का पालन करना इस समय बन्द कर दिया था, क्योंकि राज्यों के छोटे युद्धों में आरम्भ से ही लड़ाई राजा के साथियों (Comrades), विशेष योद्धाओं, के द्वारा लड़ी जाती थी । परिणामतः यह श्रेणी

बहुत महत्त्वपूर्ण हो गयी थी। इन्हें थेग्न (Thegn) या राजकीय सेवक कहा जाता था और इन्होंने पुराने समूचे आनुवंशिक कुलीन वर्ग को समाप्त कर दिया था। वे राजा तक पहुँच रखते थे। इनके मुखिया राजा की परिषद् के सदस्य होते थे। इन्हें अपनी सेवाओं का पुरस्कार भूमि के रूप में दिया जाता था, इसमें भूदास रखने वाले समूचे गाँव भी सम्मिलित होते थे। संक्षेप में उनकी प्रवृत्ति सामन्ती कुलीन श्रेणी का रूप धारण करने की थी, यद्यपि उन्हें अभी तक स्वतन्त्र व्यक्तियों पर विधिपूर्वक कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं हुए थे।

इन सबके ऊपर राजा था। बड़े राज्यों में इसकी स्थिति अब पहले के विजेता समूहों के सरदारों से अधिक ऊँची थी। उसके गौरव में न केवल उसके राज्य के अधिक विस्तार ने, अपितु ईसाई राज्याभिषेक की गम्भीरता ने भी वृद्धि की और अब राज्य के सभी प्रमुख व्यक्ति उसके थेग्न (Thegn) या सेवक थे। वह अपने तथा सरकार के व्यय को मुख्य रूप से अपनी वैयक्तिक जागीरों के मुनाफे तथा कानूनी न्यायालयों की आमदनी से पूरा करता था और उसके दरबार को निरन्तर दौरे पर रहना पड़ता था ताकि वह बारी-बारी से अपनी प्रत्येक जागीर की उपज का उपभोग कर सके। अपने राज्य का शासन करने में वह बुद्धिमान व्यक्तियों की एक परिषद् या विटेन (Witan) से सहायता लेता था, इसमें सामान्य रूप से जिलों (Shires) के प्रशासनात्मक अध्यक्ष (Ealdormen), विशप तथा प्रमुख थेग्न (Thegn) सम्मिलित होते थे। यह समूचे राज्य की शासन करने वाली एकमात्र सामान्य संस्था थी और राजा इसकी सलाह से नये कानून बनाने का तथा अन्य राजाओं पर हमले करने एवं उनके हमलों से बचाव के उपाय करता था। राजा के पास सचिवों का आवश्यक कार्य करने वाले कुछ पादरियों (Chaplains) के सिवाय सरकारी कर्मचारी नहीं थे। शासन को नियमित रूप से चलाने वाली कोई संस्था नहीं थी और इस कारण यह असम्भव था कि मर्सिया-जैसे विस्तृत प्रदेश के समूचे भाग पर प्रभावशाली नियन्त्रण स्थापित किया जा सके, समूचे इंग्लैण्ड के लिए तो यह कार्य और भी कठिन था।

ब्रिटिश द्वीपसमूह में उस समय शिक्षा और सभ्यता के क्षेत्र में अधिकतम प्रभाव सम्भवतः चर्च का था। चर्च के माध्यम से ही मनुष्य यह अनुभव करते थे कि वे अपने ग्राम-समुदाय या जिला-राज्य से अधिक विस्तृत और बड़े समुदाय के सदस्य हैं। किन्तु चर्च का संगठन अभी तक पूर्ण नही था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि बहुत से गाँवों के अपने चर्च थे और कुछ गाँवों में पादरी बसे हुए थे और इनका भरण-पोषण गाँव की उपज के दसवें हिस्से की अदायगी से होता था। किन्तु यह पद्धति अभी सार्वभौम नहीं हुई थी। आध्यात्मिक और बौद्धिक जीवन के मुख्य केन्द्र मठ थे। इनमें धार्मिक जीवन का व्रत लेने वाले मनुष्यों के समूह रहा करते थे। विद्यालय और शिक्षा के केन्द्र केवल मात्र यही मठ थे। इनमें से कुछ ने बहुत अच्छा काम किया, किन्तु आठवीं शताब्दी में सामान्य रूप से इनमें कुछ क्षीणता आ गयी थी और नये धर्म का पहला उत्साह मन्द पड़ने लगा था। सच तो यह है कि वास्तविक एकता या वास्तविक सभ्यता प्राप्त करने से पहले इंग्लैण्ड को अभी गवेषणात्मक अनुभवों के दौर में से गुजरना था।

यह उल्लेखनीय तथ्य है कि इंग्लैण्ड में बसने वाले ट्यूटानिक लोगों ने समुद्री डाकुओं और जलदस्युओं (Searovers) के रूप में अपना कार्य आरम्भ किया, किन्तु बस जाने के बाद इन्होंने समुद्र को लगभग छोड़ दिया। ८०० ई० के इंग्लिश लोग समुद्र-यात्रा करने वाले नहीं थे। जब इन पर विश्व के समुद्रों में अब तक देखे जाने वाले सबसे साहसी समुद्री नाविकों (Mariners) ने हमला किया, तो ये समुद्र में इनका सामना करने में सर्वथा असमर्थ सिद्ध हुए।

•

सन्दर्भ-ग्रन्थ

As before, **Oman,** England before the Norman Conquest provides a good account. **Stenton,** Anglo-Saxon England; **Chambers,** England before the Conquest; **Chadwick,** Origins of the British Nation; **Levison,** England and the Continent in the Eighth Century. For the contemporary history of Europe, **Church,** Beginning of the Middle Ages, and **Fletcher**, Making of Western Europe. See also the first volume of **Hume Brown,** History of Scotland, and **Bury,** St. Patrick. **Freeman,** Old English History deals with this period; also **Green,** Making of England, vivid but rather unreliable. For the early settlements, **Leeds,** Archaeology of the Anglo-Saxon Settlements. There is a good description of early English society in **Miss B. A. Less,** Alfred the Great, and a lively and picturesque one in the first volume of **Fletcher,** Introductory History of England.

३

नार्थमैन लोगों के आक्रमण

(८२५-१०६६ ई०)

१. वाइकिंग तथा उनके विध्वंसात्मक कार्य

आक्रान्ताओं की अगली लहर नार्थमैन या वाइकिंग लोगों की थी, जो नार्वे और डेनमार्क से आये थे। नार्वे ऐसे सूखे पहाड़ों का देश था, जिनमें समुद्र की लम्बी, तंग और गहरी खाड़ियाँ बहुत अन्दर तक चली गयी थीं। डेनमार्क बालू के ऐसे चपटे मैदानों का प्रदेश था जिसे अनेक टेढ़ी-मेढ़ी समुद्री प्रणालियाँ काटती थीं।[१] अतः ये दोनों देश स्वाभाविक रूप से नाविकों के जन्मदाता थे। ये नार्थमैन ट्यूटानिक वंश के थे, किन्तु ये जर्मन लोगों से उतने भिन्न थे जितने ब्रिटिश कैल्ट गैलिक कैल्टों से भिन्न थे। इन्होंने रोमन साम्राज्य के आरम्भिक आक्रमणों में कोई भाग नहीं लिया था और हम इनके आरम्भिक इतिहास के बारे में कुछ नहीं जानते। यद्यपि बाद में उन्होंने शानदार साहित्य का विकास किया, किन्तु यह उस समय तक नहीं हुआ, जब तक कि उन्होंने ईसाई जगत् से तथा विशेषतया आयरलैण्ड के कैल्टों से यह कला सीख नहीं ली।

आठवीं शताब्दी के अन्त में वे अपने मूल निवास स्थानों से चारों दिशाओं में अचानक तेजी से आगे बढ़ने लगे। एक शताब्दी से अधिक समय तक समूचे पश्चिमी यूरोप में वे विध्वंसक और साहसिक कार्य करते रहे। इसके बाद वे बड़े समूहों में ब्रिटिश द्वीप-समूह तथा फ्रांस में बस गये। इनमें से जो लोग अपने मूल देश में रह गये, उन्होंने सभ्य ईसाई राज्यों का संगठन किया। यूरोप में समुद्री डाकुओं की भाँति उनके हमले एकदम उसी

---

१. एटलस की प्लेटस् १० का नक्शा देखिये।

प्रकार समाप्त हो गये, जैसे वे आरम्भ हुए थे; और अब हमले करने के स्थान पर उनका असाधारण समुद्री साहस ग्रीनलैण्ड तथा उत्तरी अमेरिका के समुद्री तटों की खोज करने के रूप में प्रकट हुआ। इस पिछले समय में उन्होंने सागा (Saga) नामक साहित्य भी रचा जो अब तक लिखे गये युद्ध और साहस का सर्वोत्तम काव्य माना जाता है।

वाइकिंग युग में वाइकिंग लोगों ने जिस शक्ति और साहस का परिचय दिया, उसके सम्बन्ध में अतिशयोक्ति करने की सम्भावना नहीं हो सकती। वाइकिंग युग का आरम्भ ७८९ ई० से होता है, जब इंगलैण्ड पर उनके हमले का पहला उल्लेख मिलता है, और इस युग की समाप्ति ८१३ ई० में नार्मण्डी में उनके बस जाने के साथ होती है। वाइकिंग लोगों ने स्वीडन से रूस पर हमला किया और वहाँ रूसी राज्य की नींव डाली। कुछ वाइकिंग रूसी नदियों से नीचे की ओर चलते हुए कृष्णसागर में पहुँच गये और कुस्तुन्तुनिया में पूर्वी रोमन सम्राट् की सेवा करने लगे। इनके मुख्य समूहों ने पश्चिमी यूरोप को इतने आतंक की दशा में रखा कि अनेक पश्चिमी चर्चों की प्रार्थना (Litany) में एक विशेष निवेदन यह भी सम्मिलित किया गया कि 'हमें भीषण नार्मनों के त्रास से मुक्त करो' (Afurose Normannorun libesanos)। उनकी लम्बी खुली नौकाओं के ऊँचे अगले और पिछले भागों में अजगरों या साँपों की आकृतियाँ खुदी होती थीं, इन नौकाओं में प्रत्येक पर ६० व्यक्ति सवार होते थे और इनके डैक के ऊपरी भागों (Balworks) पर इनकी रंगी हुई ढालें लटकती रहती थीं। नक्शे तथा दिक्दर्शक यन्त्र के बिना चप्पू और पाल से चलने वाली तथा जहाज की दाहिनी ओर के पार्श्व में लम्बी लग्गी से मोड़ी जाने वाली ये खुली किश्तियाँ अधिक-से-अधिक तूफानी समुद्रों में जाने का साहस करती थीं, जर्मनी और फ्रांस की सब नदियों का चक्कर काटती थीं तथा स्पेन, इटली एवं उत्तरी अफ्रीका के सुदूरवर्ती समुद्र-तटों को आतंकित करती थीं। वाइकिंग किसी वस्तु से भयभीत नहीं होते थे और कोई भी व्यक्ति इनका प्रतिरोध करने में समर्थ नहीं प्रतीत होता था। वे आरम्भ में एकाएक लूट-पाट के लिए टूट पड़ते थे और इसमें वे अत्यधिक भीषणता प्रदर्शित करते थे। ईसाई धर्म के पुरोहितों के प्रति विशेष कठोरता दिखायी जाती थी क्योंकि वे कट्टर देव-पूजक (Pagans) थे। उनके आक्रमण की अगली अवस्था यह थी कि वे किसी सुविधा-जनक टापू या अन्तरीप को आधार बना लेते थे और यहाँ से वे मुख्य भूमि की लूट-पाट करते थे। उन्होंने यह कार्य उत्तर-पश्चिमी यूरोप के समूचे तटों पर किया। उनकी अन्तिम अवस्था एक विशाल प्रदेश को क्रमबद्ध रीति से विजय करना और इसमें बस जाना था और जब वे इस दशा में पहुँच जाते थे (जैसा फ्रांस और इंग्लैण्ड में हुआ), तो जिस जाति के लोगों में वे बसते थे, उसकी सभ्यता को आत्मसात् और उन्नत करने में उल्लेखनीय सामर्थ्य प्रदर्शित करते थे।

यह जनता अपनी भीषणता और विश्वासघातपूर्णता के बावजूद जिस भूमि पर वसती थी, उसे आश्चर्यजनक रूप से समृद्ध कर देती थी। हम इस बात पर प्रसन्न हो सकते हैं कि उन्होंने मुख्य रूप से अपना ध्यान ब्रिटिश द्वीप-समूह पर केन्द्रित किया। इंग्लैण्ड में उनका पहला उल्लिखित आक्रमण ७८९ ई० में हुआ और वे अन्य स्थानों की

अपेक्षा इंग्लैण्ड, आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड में अधिक बसे। पहले के ट्यूटानिक समूहों के विपरीत वे इस द्वीप-समूह के लगभग प्रत्येक भाग में प्रविष्ट हुए।

ऐसा प्रतीत होता है कि पहले उन्होंने अपना अधिक ध्यान आयरलैण्ड की ओर दिया। नवीं शताब्दी के पहले बीस वर्षों में उन्होंने निरन्तर उस पर हमले किये और पश्चिम के शेष प्रदेशों में शान्ति बनी रही। ऐसा कहा जाता है कि नवीं शताब्दी के मध्य तक आधा देश उनके अधीन हो गया था और ८५३ ई० में एक नार्थमैन सारे इंग्लैण्ड का राजा था। किन्तु वे बहुत बड़ी संख्या में नहीं बसे थे। उन्होंने मुख्य रूप से तीन बन्दरगाहों—डबलिन, वाटरफोर्ड तथा वैक्सफोर्ड में अपनी बस्तियाँ बसायीं। उन्होंने इन बन्दरगाहों को स्थापित किया तथा इन्हें व्यापार के समृद्ध केन्द्रों में परिणत किया।[1] १०वीं शताब्दी के आरम्भ में आयरलैण्ड के कैल्टों ने इन आक्रान्ताओं में से अधिकांश को निकाल दिया, किन्तु उन्होंने इस बीच में बहुत कुछ सीख लिया था और इन्हें काव्यकला का पहला प्रशिक्षण स्पष्टतः आयरलैण्ड के कवियों से मिला था। दुर्भाग्यवश इनके द्वारा किये गये विध्वंसात्मक कार्यों से आयरलैण्ड के साहित्य और धर्म का स्वर्ण-युग समाप्त हो गया।

वे बार-बार तथा बड़ी संख्या में स्काटलैण्ड के तटों पर आते रहे, यद्यपि हमारे पास इन आक्रमणों का उल्लेख बहुत कम है। उन्होंने ओर्कनी (Orkney) तथा सैटलैण्ड द्वीपों को तथा कैथनैस (Caithness) के जिले को जीता तथा आबाद किया। मोरे फर्थ (Moray Firth) के समुद्र-तटों पर और दक्षिण में समुद्र-तट के साथ-साथ फोर्थ (Forth) तक वे बड़ी संख्या में बसे। वे हेब्राइडीज़ तथा आइल ऑफ मैन (Isle of man) टापुओं के अधिकांश भाग के स्वामी बने। हेब्राइडीज़ टापू को वे सुडेरीज़ (Sudereys) या दक्षिणी द्वीप कहते थे। यही कारण है कि सोडोर (Sodor) तथा मैन (Man) का एक बिशप होता है। पश्चिमी मार्ग से आने वाले यही समूह अब तक मुख्य रूप से कैल्टिक जाति वाले कम्बरलैण्ड में तथा मर्सी (Mersey) एवं डी (Dee) तक इंग्लैण्ड के उत्तर पश्चिमी सागर-तट के साथ-साथ बस गये। अधिकांश हमलों का इसके सिवाय कोई ऐतिहासिक उल्लेख नहीं मिलता है कि वे जहाँ बसे, वहाँ के स्थानों के नामों में उनका निर्देश है, क्योंकि जहाँ आप कहीं किसी स्थान के नाम के अन्त में बाई (By) या थ्वेट (Thwaite) का पद देखते हैं, वहाँ आप यह समझ जाते हैं कि यह वाइकिंग लोगों की बस्ती थी।

किन्तु इंग्लैण्ड पर मुख्य आक्रमण पूर्वी तट के आकर्षक और सुगम प्रदेश पर किये गये थे और अन्त में, इसी प्रदेश में वाइकिंग लोगों के बिखरे समूहों ने अपने को विशाल समूहों में एकत्र किया और वे आयोजित रूप से सारे देश को अपने अधीन बनाने के काम में लग गये।

इंग्लैण्ड पर पहले बड़े आक्रमण एगबर्ट के शासन-काल के पिछले वर्षों में किये गये थे और समूचे तौर पर वैसेक्स के सभी आक्रमणों में राजा का पलड़ा भारी रहा। किन्तु ये हमले उसके पुत्र, पोतों के शासन काल में अधिक संख्या में और अधिक गम्भीरता

१. आयरलैण्ड का नक्शा, एटलस प्लेट सं० २० में देखिये।

से होने लगे। इस समय यूरोपीय महाद्वीप के (इंग्लैण्ड के) सामने के समुद्री-तटों पर भी इसी प्रकार के आक्रमण हो रहे थे। अन्त में नवीं शताब्दी के मध्य में उन लोगों ने जीतने और बसने के लिए व्यवस्थित प्रयास किये। ८५४ ई० में वे पहली वार थानेट (Thanet) के टापू में ब्रिटिश भूमि पर सर्दियों में रहे। ८६७ ई० में इनके एक वड़े झुण्ड ने यार्कशायर पर हमला किया और वे यहाँ से कभी नहीं हटाये जा सके और यहाँ इन्होंने एक छोटा राज्य बनाया। ८६९ या ८७० में एक दूसरे समूह ने ईस्ट एंग्लिया जीता और इस प्रकार इंग्लैण्ड में एक दूसरा डेनिश राज्य स्थापित किया।[१]

इन आक्रमणों की सबसे बड़ी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वैसेक्स के अतिरिक्त इनके विरुद्ध कहीं प्रभावशाली विरोध संगठित नहीं किया गया। प्रत्येक जिला या कबीले का पुराना राज्य (Tribal Kingdom) ऐसा सोचता प्रतीत होता था कि पड़ोसियों की सहायता करना उसका कार्य नहीं है और जब उसकी बारी आती थी, तो वह अपने को हमले का प्रतिरोध करने में सर्वथा असमर्थ पाता था। केवल वैसेक्स (Wessex) में इंग्लिश लोगों ने आक्रान्ताओं का मुकाबला किया और ये निरन्तर पीछे हटाये जाते रहे और अन्त में ८७१ में डेन लोगों ने वैसेक्स पर अपने आक्रमण को केन्द्रित करने का निश्चय किया। यदि वैसेक्स हार जाता तो सारा इंग्लण्ड डेनिश राज्य बन जाता।

२. अल्फ्रेड महान तथा सम्राट-राजा

डेन लोगों के विरुद्ध वैसेक्स के उग्र संघर्ष से इंग्लैण्ड का पहला महान राष्ट्रीय वीर पुरुष प्रकाश में आया। यह इंग्लैण्ड के राजाओं में सबसे उदात्त अल्फ्रेड महान था।[२] वैस्ट सैक्सन राज्य की गद्दी पर क्रमशः बैठने वाले एगबर्ट के चार पोतों में अल्फ्रेड सबसे छोटा था। अपने यौवन के आरम्भ काल से ही उसने असाधारण पौरुष और बुद्धिमत्ता प्रदर्शित की थी। उसे रोम की उस तीर्थ यात्रा ने प्रेरणा प्रदान की जो उसने बचपन में राजगद्दी पर बैठने वाले अपने पिता के साथ की थी। १७ वर्ष की आयु से उसने अपने भाई एथैलेड के नेतृत्व में डेनों के साथ सतत संघर्ष में प्रमुख भाग लिया और उसकी वीरता तथा सूझ-बूझ वैस्ट-सैक्सन लोगों की सफलता के प्रमुख कारण थे। ८७१ में जब महान आक्रमण हुआ, तो तेईस वर्षीय युवा अल्फ्रेड वैस्ट सैक्सन पक्ष का प्रधान नेता था। इस वर्ष अनेक उग्र घमासान लड़ाइयाँ हुईं। उनमें से ऐशडौन (Ashdown) की लड़ाई में अल्फ्रेड के सेनापतित्व में शानदार विजय प्राप्त हुई। किन्तु डेन एक लड़ाई में हारने वाले नहीं थे। बाद की लड़ाई में उन्होंने राजा एथेलैड को मार डाला और अब अल्फ्रेड राजा बना तथा उसने विजेताओं के विरुद्ध लड़ने तथा ईसाई मत की और सभ्यता की रक्षा

१. एटलस की प्लेट सं० ११ (सी) देखिये।

२. अल्फ्रेड महान का सर्वोत्तम आधुनिक जीवन चरित्र मिस बी० ए० लीस ने राष्ट्रों के वीर पुरुष (Heroes of the Nations) नामक पुस्तकमाला में लिखा है।

३. यह विभाजन एटलस की प्लेट सं० ११ (सी) में दिखाया गया है।

करने का सारा भार अपने ऊपर ले लिया। उसे इस सतत युद्ध में आठ वर्ष लगे। इन वर्षों के अन्तिम भाग में उसकी शक्ति बहुत कम हो गयी। उसे सोमरसैट में एथेलनी (Athelney) की दलदल में उस समय शरण लेनी पड़ी, जब विजयी डेनों ने उसके चिम्पेनहम के राजकीय सामन्तभूमि या मेनर (Manor) में उसके लिए तैयार किये गये क्रिसमस के भोज का आनन्द लिया। किन्तु उसने पीछे हटने के स्थान से निकल कर डेनों को अन्तिम बार निर्णयात्मक रूप से हराया। वे वैसक्स से बाहर खदेड़ दिये गये। चिप्पेनहम की सन्धि (८७८) से वे अपनी हार मानने और ईसाइयत स्वीकार करने के लिए बाधित किये गये और आठ वर्ष बाद सीमाओं का निर्धारण होने पर अल्फ्रेड का नियन्त्रण न केवल वैसेक्स पर, अपितु लन्दन से चैस्टर तक खीची जाने वाली रेखा के दक्षिण-पश्चिम में मर्सिया (Mercia) के आधे भाग पर भी स्थापित हो गया।

इस विस्तृत राज्य में अल्फ्रेड ने प्रतिरोध की शक्तियों को संगठित करने का कार्य आरम्भ किया। उसने किले-बन्दी वाले कस्बों को बनाया ताकि वे प्रतिरक्षा के केन्द्र हो सकें। उसने स्वतन्त्र व्यक्तियों की राष्ट्रीय सेना फर्ड (Fyrd) का पुनः संगठन किया। यह बहुत समय से लगभग निरर्थक थी, क्योंकि लड़ाई का अधिकांश कार्य अब थेग्न (Thegn) नामक लड़ने वालों की पेशेवर श्रेणी द्वारा किया जाता था। उसने लड़ने वाले छोटे बेड़े का भी संगठन किया। इस कार्य के लिए फ्रिजियन नाविकों की सेवाएँ उधार ली गयीं, क्योंकि इंग्लिश लोग अब समुद्र-यात्रा करने वाली जाति नहीं रहे थे। इसका यह परिणाम हुआ कि ८८५-८६ ई० में जब उस पर डेनिश हमले का नया तूफान आया, तो उसे निश्चित रूप से शत्रुओं पर सफलता मिली और उसने अपने राज्य की स्थिति को बहुत अधिक सुदृढ़ बना लिया।

अल्फ्रेड के राज्यकाल में इंग्लैण्ड का आधे से अधिक भाग डेनिश शासन में तथा अराजक दशा में था। किन्तु जो प्रदेश उसके नियन्त्रण में था, उसमें पहले के किसी समय की अपेक्षा अधिक शक्ति और क्षमता थी तथा वैसेक्स विश्वासपूर्वक भविष्य में शेष इंग्लैण्ड की पुनर्विजय को देख सकता था, जिसे अल्फ्रेड के उत्तराधिकारियों ने पूरा किया। इसके साथ ही अल्फ्रेड ने पड़ोसी कैल्टिक राज्यों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये थे। ये राज्य इस बात को स्वीकार करते थे कि किसी समान संकट के विरुद्ध अल्फ्रेड की शक्ति ही उनका मुख्य बचाव करने वाली शक्ति है। सम्भवतः अल्फ्रेड के समय से पहले ही कार्नवाल व्यावहारिक रूप से वैसेक्स का भाग बन चुका था। उत्तरी और दक्षिणी वेल्ज़ के राजकुमार अल्फ्रेड के प्रति राजभक्ति रखने लगे थे। अल्फ्रेड अपने दरबार में आयरलैण्ड के विद्वान ईसाई भिक्षुओं का स्वागत करता था।

किन्तु अल्फ्रेड एक महान सैनिक और विजेता होने के साथ-साथ इससे भी बहुत कुछ अधिक था। उसने अपने देशवासियों को न केवल सुदृढ़ वीरता की उच्च परम्परा प्रदान की, अपितु उसने सभ्यता की वास्तविक उन्नति करने के लिए भी बड़ा काम किया। उसने डेनिश आक्रान्ताओं का उग्र रूप से विध्वंस किया। वे सर्वत्र अराजकता और अव्यवस्था लाये थे, उन्होंने शिक्षा के प्रधान केन्द्र—अनेक मठों का विनाश किया था। संक्षेप

में, वे सभ्यता को शोचनीय रूप में पीछे ले जाने वाले थे। अल्फ्रेड ने कानूनों का संशोधन, सुधार तथा संहिताकरण किया। उसने सार्वजनिक व्यवस्था पुन: स्थापित की और निर्धनों के 'संरक्षक' की उपाधि अर्जित की। सबसे बढ़ कर उसने पाशविक शक्ति के उस युग में वास्तविक महापुरुषों की भाँति यह अनुभव किया कि किसी देश की शक्ति की कसौटी यह है कि वह अपने नागरिकों की उच्चतम शक्तियों का सर्वोत्तम उपयोग करने के लिए उन्हें कितना अवसर प्रदान करती है। अत: उसने साहित्य एवं ज्ञान को पुनरुज्जीवित करने के लिए प्रयास किया। उसने मठों की व्यवस्था पुन: स्थापित की। उसने अपने दरबार के सरदारों के पुत्रों के लिए एक विद्यालय आरम्भ किया। उसने अपने हाथ से ऐसी पुस्तकों का अनुवाद करके वास्तविक इंग्लिश साहित्य का श्रीगणेश किया, जिन पुस्तकों के बारे में वह यह समझता था कि वे उसकी जनता को बुद्धिमत्तापूर्वक सोचने में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होंगी। राष्ट्र की आत्मा का निर्माण करने वाली भूतकाल की परम्पराओं को जीवित रखने के लिए उसने अपने ईसाई भिक्षुओं को एंग्लो-सैक्सन इतिहास (Anglo-Saxon Chronicle) के सम्पादन के कार्य पर लगाया। यह इतिहास उसके बाद बहुत समय तक इंग्लिश जाति के सम्बन्ध में हमारे ज्ञान का प्रधान स्रोत बना रहा। हम अल्फ्रेड के विभिन्न क्षेत्रों के काम को इतना कम जानते हैं कि हम विस्तार से इनका वर्णन करने में असमर्थ हैं। किन्तु हम इतना अवश्य जानते हैं कि हम यह कह सकें कि इतिहास में कभी उससे अधिक उदात्त तथा अपने कार्य के प्रति गहरी लगन रखने वाला राजा नहीं हुआ।

अल्फ्रेड की मृत्यु के बाद के ७५ वर्षों में उसके उत्तराधिकारियों ने अल्फ्रेड द्वारा बनायी नींवों पर निर्माण-कार्य करते हुए पुन: संगठित वैसेक्स राज्य की सर्वोच्च सत्ता ग्रेट-ब्रिटेन के अन्य सभी (इंग्लिश, डेन अथवा कैल्टिक) राज्यों पर स्थापित की और पहली बार समूचे द्वीप को राजनीतिक एकता का वाह्य आवरण प्रदान किया। अल्फ्रेड के बेटे बड़े एडवर्ड (Edward the elder) ने (८६६-६२४ ई०) अपनी योद्धा बहिन एथेलफ्लेडा की सहायता से शनै: शनै: डेनिश, मर्सिया और ईस्टएंगलिया की पुनर्विजय की और धीरे-धीरे अपनी विजयों को दुर्गों का (Burh) निर्माण करके सुदृढ़ किया। इनमें से कुछ किले उसके उन नये जिलों के प्रशासनात्मक केन्द्र बने, जिन जिलों में उसने या उसके उत्तराधिकारियों ने इंग्लैण्ड के इस भाग को विभक्त किया था। दक्षिणी जिलों (Shire) के सर्वथा विपरीत मध्य-प्रदेश के जिले (Midland Shire) लगभग एक जैसे आकार के हैं और उनका नामकरण उनके मुख्य नगरों के आधार पर है। वे कृत्रिम रचनाएँ हैं और उनका निर्माण यह प्रदर्शित करता है कि डेनिश विजय के दबाव से अन्तत: इस जिले के पुराने विभागों से छुटकारा मिल सका। जब मध्यदेश को पुन: जीता और संगठित किया गया, तो यार्कशायर के डेनिश राजा ने वश्यता स्वीकार करना बुद्धिमत्तापूर्ण समझा। यद्यपि कुछ समय तक यह प्रदेश एक विशिष्ट वशवर्ती राज्य के रूप में बना रहा। डेनिश विजय से बचे रहने वाले टायन और फोर्थ के अधिक उत्तर के छोटे इंग्लिश प्रदेश ने भी पश्चिमी सैक्सन राजा के आधिपत्य को स्वीकार किया। अल्फ्रेड के प्रति राजभक्ति रखने वाले वेल्स के राजकुमार अस्पष्ट रूप में उसके उत्तराधिकारी की उच्च सत्ता को स्वीकार करते रहे।

अब पहली बार स्काटलैण्ड भी इंग्लैण्ड के साथ राजनैतिक सम्बन्धों में बँधा। हम देख चुके हैं कि स्काटलैण्ड को वाइकिंग लोगों के भीषण आक्रमण का शिकार होना पड़ा था। उन्होंने स्काट एवं पिक्ट लोगों के अधिकांश किलों को लूटा था और आयोना तथा अन्य मठों की बस्तियों का विनाश किया था। निस्सन्देह आंशिक रूप से वाइकिंग लोगों के दबाव के कारण स्काटलैण्ड के दो राज्यों—पश्चिम में स्काट लोगों के राज्य का तथा पूर्व में एल्बन (Alban) या कैलिडोनिया के पिक्ट राज्य का सम्मिलन हुआ और इस रूप में यह सदैव स्काटलैण्ड का संयुक्त राज्य बना रहा। किन्तु अभी तक यह बहुत छोटा और निर्धन राज्य था। केथनेस (Caithness), सदरलैण्ड और पश्चिमी टापू नार्थमैन लोगों के अधिकार में थे। स्ट्रेथक्लाइड का ब्रिटिश राज्य अभी तक दक्षिण-पश्चिम में बचा हुआ था यद्यपि यह बहुत निर्बल था और स्काटलैण्ड के राजा के नियन्त्रण में जाने वाला था। ९१८ ई० में स्काटलैण्ड तथा स्ट्रेथक्लाइड के दोनों देशों के राजाओं ने इंग्लिश राजा के आधिपत्य को स्वीकार किया। क्रॉनिकल के शब्दों में, उन्होंने इंग्लिश राजा को "अपना पिता और स्वामी" समझा। बाद में, इंग्लिश राजाओं ने अपने सामन्ती आधिपत्य के दावे के लिए इसी को आधार बनाया। इसका आशय ऐसी कोई निश्चित वस्तु नहीं था, किन्तु इसका यह अभिप्राय अवश्य था कि वैसेक्स का राजा, जो इसके बाद इंग्लैण्ड का राजा कहलाया जाने लगा, समूचे ब्रिटेन में इस टापू का सबसे शक्तिशाली राजा स्वीकार किया गया और वह नार्थमैन लोगों के आक्रमण के विरुद्ध रक्षा का सर्वोत्तम स्रोत समझा गया।

किन्तु इस अस्पष्ट उच्च सत्ता का महत्व कुछ भी नही था और एडवर्ड के अतीव योग्य उत्तराधिकारी एथलस्टेन (८२४-९४०) को इसे बनाये रखने के लिए बड़ी कठोर लड़ाई लड़नी पड़ी। उसने यार्कशायर के डेन राज्य को कुचला और वह इसे अपने प्रत्यक्ष शासन में ले आया और शीघ्र ही हम उसे स्काट लोगों के राजा के साथ लड़ते हुए और उत्तर में एबर्डीन तक उसके प्रदेश पर हमला करते हुए पाते हैं (९३३ ई०) और इसी समय उसका बेड़ा मोरेफर्थ तक जा पहुँचता है। स्काट लोगों का राजा स्पष्ट रूप से इस बात का प्रयत्न कर रहा था कि उसकी शक्ति का विस्तार स्ट्रेथक्लाइड तथा फोर्थ और ट्वीड या टाइन के मध्यवर्ती नार्थम्ब्रिया के अंग्रेजी प्रदेश पर नियन्त्रण स्थापित करके हो। ये दोनों जिले अन्ततोगत्वा स्काटलैण्ड के राज्य का भाग बने। राजा कान्स्टेनटाइन ने ८३३ की अपनी उस पराजय को नहीं स्वीकार किया जिसे स्काटलैण्ड और इंग्लैण्ड के बीच स्वतन्त्रता के सुदीर्घ युद्ध को आरम्भ करने का चिह्न समझा जाता है। ८३७ ई० में उसने इंग्लिश राजा के विरुद्ध एक संघ बनाया जिसमें न केवल स्ट्रेथक्लाइड, किन्तु कम्बरलैण्ड तथा आयरलैण्ड तक के नार्थमैन सम्मिलित थे। ब्रूननबर्ह (Brunanburh) में एक बड़ी लड़ाई लड़ी गयी। यह स्थान सम्भवतः साल्वेफर्थ के निकट कहीं पर था, यद्यपि अन्य अनेक स्थान इसका दावा करते हैं कि वे इस लड़ाई का केन्द्र रहे हैं। यह सम्भवतः आरम्भिक इंग्लिश इतिहास का सबसे अधिक प्रसिद्ध युद्ध है क्योंकि इसके सम्बन्ध में एक लम्बी तथा जोशीली कविता इंग्लिश क्रॉनिकल में सुरक्षित है। इसमें हत्याकाण्ड बहुत अधिक हुआ और एक लम्बे दिन के युद्ध की समाप्ति पर तीन राजा रणभूमि में मारे गये। एथलस्टेन

में, वे सभ्यता को शोचनीय रूप में पीछे ले जाने वाले थे। अल्फ्रेड ने कानूनों का संशोधन, सुधार तथा संहिताकरण किया। उसने सार्वजनिक व्यवस्था पुनः स्थापित की और निर्धनों के 'संरक्षक' की उपाधि अर्जित की। सबसे बढ़ कर उसने पाशविक शक्ति के उस युग में वास्तविक महापुरुषों की भाँति यह अनुभव किया कि किसी देश की शक्ति की कसौटी यह है कि वह अपने नागरिकों की उच्चतम शक्तियों का सर्वोत्तम उपयोग करने के लिए उन्हें कितना अवसर प्रदान करती है। अतः उसने साहित्य एवं ज्ञान को पुनरुज्जीवित करने के लिए प्रयास किया। उसने मठों की व्यवस्था पुनः स्थापित्र की। उसने अपने दरबार के सरदारों के पुत्रों के लिए एक विद्यालय आरम्भ किया। उसने अपने हाथ से ऐसी पुस्तकों का अनुवाद करके वास्तविक इंग्लिश साहित्य का श्रीगणेश किया, जिन पुस्तकों के बारे में वह यह समझता था कि वे उसकी जनता को बुद्धिमत्तापूर्वक सोचने में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होंगी। राष्ट्र की आत्मा का निर्माण करने वाली भूतकाल की परम्पराओं को जीवित रखने के लिए उसने अपने ईसाई भिक्षुओं को एंग्लो-सैक्सन इतिहास (Anglo-Saxon Chronicle) के सम्पादन के कार्य पर लगाया। यह इतिहास उसके बाद बहुत समय तक इंग्लिश जाति के सम्बन्ध में हमारे ज्ञान का प्रधान स्रोत बना रहा। हम अल्फ्रेड के विभिन्न क्षेत्रों के काम को इतना कम जानते हैं कि हम विस्तार से इनका वर्णन करने में असमर्थ हैं। किन्तु हम इतना अवश्य जानते हैं कि हम यह कह सकें कि इतिहास में कभी उससे अधिक उदात्त तथा अपने कार्य के प्रति गहरी लगन रखने वाला राजा नहीं हुआ।

अल्फ्रेड की मृत्यु के बाद के ७५ वर्षों में उसके उत्तराधिकारियों ने अल्फ्रेड द्वारा बनायी नींवों पर निर्माण-कार्य करते हुए पुनः संगठित वैसेक्स राज्य की सर्वोच्च सत्ता ग्रेट-ब्रिटेन के अन्य सभी (इंग्लिश, डेन अथवा कैल्टिक) राज्यों पर स्थापित की और पहली बार समूचे द्वीप को राजनीतिक एकता का वाह्य आवरण प्रदान किया। अल्फ्रेड के बेटे बड़े एडवर्ड (Edward the elder) ने (८९९-९२४ ई०) अपनी योद्धा बहिन एथेलफ्लेडा की सहायता से शनैः शनैः डेनिश, मर्सिया और ईस्टएंगलिया की पुनर्विजय की और धीरे-धीरे अपनी विजयों को दुर्गों का (Burh) निर्माण करके सुदृढ़ किया। इनमें से कुछ किले उसके उन नये जिलों के प्रशासनात्मक केन्द्र बने, जिन जिलों में उसने या उसके उत्तराधिकारियों ने इंग्लैण्ड के इस भाग को विभक्त किया था। दक्षिणी जिलों (Shire) के सर्वथा विपरीत मध्य-प्रदेश के जिले (Midland Shire) लगभग एक जैसे आकार के हैं और उनका नामकरण उनके मुख्य नगरों के आधार पर है। वे कृत्रिम रचनाएँ हैं और उनका निर्माण यह प्रदर्शित करता है कि डेनिश विजय के दबाव से अन्ततः इस जिले के पुराने विभागों से छुटकारा मिल सका। जब मध्यदेश को पुनः जीता और संगठित किया गया, तो यार्कनगर के डेनिश राजा ने वश्यता स्वीकार करना बुद्धिमत्तापूर्ण समझा। यद्यपि कुछ समय तक यह प्रदेश एक विशिष्ट वशवर्ती राज्य के रूप में बना रहा। डेनिश विजय से बचे रहने वाले टायन और फोर्थ के अधिक उत्तर के छोटे इंग्लिश प्रदेश ने भी पश्चिमी सैक्सन राजा के आधिपत्य को स्वीकार किया। अल्फ्रेड के प्रति राजभक्ति रखने वाले वेल्स के राजकुमार अस्पष्ट रूप में उसके उत्तराधिकारी की उच्च सत्ता को स्वीकार करते रहे।

अब पहली बार स्काटलैण्ड भी इंग्लैण्ड के साथ राजनैतिक सम्बन्धों में बँधा। हम देख चुके हैं कि स्काटलैण्ड को वाइकिंग लोगों के भीषण आक्रमण का शिकार होना पड़ा था। उन्होंने स्काट एवं पिक्ट लोगों के अधिकांश किलों को लूटा था और आयोना तथा अन्य मठों की बस्तियों का विनाश किया था। निस्सन्देह आंशिक रूप से वाइकिंग लोगों के दबाव के कारण स्काटलैण्ड के दो राज्यों—पश्चिम में स्काट लोगों के राज्य का तथा पूर्व में एल्बन (Alban) या कैलिडोनिया के पिक्ट राज्य का सम्मिलन हुआ और इस रूप में यह सदैव स्काटलैण्ड का संयुक्त राज्य बना रहा। किन्तु अभी तक यह बहुत छोटा और निर्धन राज्य था। केथनेस (Caithness), सदरलैण्ड और पश्चिमी टापू नार्थमैन लोगों के अधिकार में थे। स्ट्रेथक्लाइड का ब्रिटिश राज्य अभी तक दक्षिण-पश्चिम में बचा हुआ था यद्यपि यह बहुत निर्बल था और स्काटलैण्ड के राजा के नियन्त्रण में जाने वाला था। ९१८ ई० में स्काटलैण्ड तथा स्ट्रेथक्लाइड के दोनों देशों के राजाओं ने इंग्लिश राजा के आधिपत्य को स्वीकार किया। क्रॉनिकल के शब्दों में, उन्होंने इंग्लिश राजा को "अपना पिता और स्वामी" समझा। बाद में, इंग्लिश राजाओं ने अपने सामन्ती आधिपत्य के दावे के लिए इसी को आधार बनाया। इसका आशय ऐसी कोई निश्चित वस्तु नहीं था, किन्तु इसका यह अभिप्राय अवश्य था कि वैसेक्स का राजा, जो इसके बाद इंग्लैण्ड का राजा कहलाया जाने लगा, समूचे ब्रिटेन में इस टापू का सबसे शक्तिशाली राजा स्वीकार किया गया और वह नार्थमैन लोगों के आक्रमण के विरुद्ध रक्षा का सर्वोत्तम स्रोत समझा गया।

किन्तु इस अस्पष्ट उच्च सत्ता का महत्व कुछ भी नहीं था और एडवर्ड के अतीव योग्य उत्तराधिकारी एथलस्टेन (८२४-९४०) को इसे बनाये रखने के लिए बड़ी कठोर लड़ाई लड़नी पड़ी। उसने यार्कशायर के डेन राज्य को कुचला और वह इसे अपने प्रत्यक्ष शासन में ले आया और शीघ्र ही हम उसे स्काट लोगों के राजा के साथ लड़ते हुए और उत्तर में एबर्डीन तक उसके प्रदेश पर हमला करते हुए पाते हैं (९३३ ई०) और इसी समय उसका बेड़ा मोरेफर्थ तक जा पहुँचता है। स्काट लोगों का राजा स्पष्ट रूप से इस बात का प्रयत्न कर रहा था कि उसकी शक्ति का विस्तार स्ट्रेथक्लाइड तथा फोर्थ और ट्वीड या टाइन के मध्यवर्ती नार्थम्ब्रिया के अंग्रेजी प्रदेश पर नियन्त्रण स्थापित करके हो। ये दोनों जिले अन्ततोगत्वा स्काटलैण्ड के राज्य का भाग बने। राजा कान्स्टेनटाइन ने ८३३ की अपनी उस पराजय को नहीं स्वीकार किया जिसे स्काटलैण्ड और इंग्लैण्ड के बीच स्वतन्त्रता के सुदीर्घ युद्ध को आरम्भ करने का चिह्न समझा जाता है। ८३७ ई० में उसने इंग्लिश राजा के विरुद्ध एक संघ बनाया जिसमें न केवल [illegible], किन्तु कम्बरलैण्ड तथा आयरलैण्ड तक के नार्थमैन सम्मिलित थे। ब्रूननबर्ह (Brunanburh) में एक बड़ी लड़ाई लड़ी गयी। यह स्थान सम्भवतः साल्वेफर्थ के निकट कहीं पर था, यद्यपि अन्य अनेक स्थान इसका दावा करते हैं कि वे इस लड़ाई का केन्द्र रहे हैं। यह सम्भवतः आरम्भिक इंग्लिश इतिहास का सबसे अधिक प्रसिद्ध युद्ध है क्योंकि इसके सम्बन्ध में एक लम्बी तथा जोशीली कविता इंग्लिश क्रॉनिकल में सुरक्षित है। इसमें हत्याकाण्ड बहुत अधिक हुआ और एक लम्बे दिन के युद्ध की समाप्ति पर तीन राजा रणभूमि में मारे गये। एथलस्टेन

की पूर्ण विजय हुई और इसके बाद, इस द्वीप पर उसने निर्विवाद सर्वोच्च सत्ता का उपभोग किया।

हमें इस सामान्य शासन की वास्तविकता को अतिरंजित नहीं करना चाहिए। एथलस्टेन के उत्तराधिकारियों को बार-बार अपने विद्रोही सरदारों से लड़ने का काम पड़ा और हम्बर के उत्तर के प्रदेश में और कम से कम टाइन के उत्तर में तो उनकी शासन सत्ता कभी भी नाममात्र से अधिक नहीं थी। किन्तु ऐसा होते हुए भी वे महान एवं बड़े शक्तिशाली राजा थे। उन्होंने Rex totius Britanniae जैसे गौरवपूर्ण पद धारण करने शुरू किये और रोमन सम्राटों द्वारा प्रयोग में लायी जाने वाली उपाधियों को भी धारण करना शुरू किया। यूरोपियन महाद्वीप पर शासन करने वाले राजा भी उनकी मैत्री चाहने लगे। इस युग में इंगलैण्ड की भाँति यूरोप भी पहले समय की अव्यवस्था से निकलने लगा था और शार्लमेगन के साम्राज्य के अवशेषों से जर्मनी और फ्रांस के राज्यों का प्रादुर्भाव आरम्भ हुआ। आरम्भ में काफी लम्बे समय तक, जर्मनी यूरोप में सबसे अधिक शक्तिशाली था। इसके शासक महान ओटो ने रोमन सम्राट की उपाधि को पुनरुज्जीवित किया तथा यह उपाधि १९वीं शती के आरम्भ तक जर्मन राजाओं के साथ जोड़ी जाती रही। बहुत लम्बे समय तक फ्रांस बहुत कम शक्तिशाली रहा था। ९८७ ई० में गद्दी पर बैठने वाले कापेशियन (Capatian) वंश पर इसके बड़े सामन्त लगभग दो शताब्दियों तक हावी रहे और इसका शासन पेरिस के चारों ओर की भूमि के छोटे टापू (Isle da France) पर ही था। फिर भी अब फ्रांस का तथा जर्मनी का एक राज्य था और इन दोनों राज्यों के साथ-साथ तथा फ्रांस के कुछ अन्य बड़े सामन्ती राज्यों के साथ एथलस्टेन द्वारा शासित शक्तिशाली इंग्लिश राज्य ने सम्बन्ध स्थापित करने शुरू किये। जर्मनी के ओटो ने एथलस्टेन की एक बहिन के साथ शादी की और एथलस्टेन की अन्य चार बहिनों का विवाह यूरोप के प्रमुख राजाओं से हुआ। अन्धयुग की अव्यवस्था से बाहर निकलने वाले महान राज्यों में इंग्लैण्ड का राजा भी अपना स्थान ग्रहण करने लगा था।

एक अपवाद को छोड़कर एथलस्टेन के अगले उत्तराधिकारी बड़े शक्तिशाली थे और उनमें यह सामर्थ्य था कि वे अपने राज्य की उच्च स्थिति बनाये रख सकें। किन्तु उसके चौथे उत्तराधिकारी एडगर (९५९ से ९७५ ई०) के शासन-काल में इस नये साम्राज्य की महत्ता उच्चतम बिन्दु पर पहुँची। समूचे साम्राज्य पर बाहर से कोई आक्रमण नहीं हुआ और इसके भीतर भी अव्यवस्था नहीं थी। इसके बाद आने वाले उपद्रवपूर्ण समयों में इस काल को एक प्रकार के स्वर्ण युग के रूप मे देखा जाता रहा। वशवर्ती राज्य अधीन बने रहे और क्रॉनिकल्स में इसका उल्लेख बड़े गर्व से है कि किस प्रकार ९७३ ई० में चैस्टर पहुँचने पर एडगर का स्वागत उसके आठ वशवर्ती राजाओं ने किया। उन्होंने उसके प्रति स्वामिभक्ति की शपथ ली और वे डी नदी में सेंट जॉन के चर्च तक उसकी नौका को खेकर ले गये। ये आठों राजा स्काटलैण्ड, वेल्स और आइल ऑफ मैन के थे। किन्तु इतने अधिक शासकों द्वारा राजा की उपाधि धारण करने का तथ्य यह प्रदर्शित करता है कि प्रधान राजा का शासन अपने विस्तृत प्रदेश पर कितना अधिक असुरक्षित था।

एथलस्टेन से एडगर तक के राजा कई बार सम्राट-राजा (Emperor-kings) कहे जाते हैं। उन्होंने अपने राज्य के संगठन को सुधारने और सुदृढ़ बनाने का पूरा प्रयत्न किया। उन्होंने विटेन (Witan) की सहायता से अनेक नये कानून बनाये। विशेष रूप से एडगर ने न्यायिक पद्धति को सुदृढ़ बनाने के लिए हन्ड्रेड (Hundred) या जिला न्यायालयों की एक श्रृंखला का पुनर्निर्माण या पुनः संगठन किया। अपने महान् आर्कबिशप और परामर्शदाता डंस्टन (Dunstun) के पथ-प्रदर्शन में उसने चर्च को पुनः शक्तिशाली बनाने के भी प्रयत्न किये। उसने मठों पर विशेष रूप से अधिक कठोर कानून लागू किये। किन्तु शासन की एक योग्य मशीनरी के विकास के बिना स्थायी रूप से सारे देश पर प्रभावशाली नियन्त्रण रखना असम्भव था। एथलस्टेन और एडगर को भी बड़े एल्डरमैन (Ealdorman) लोगों को तथा डेनिश जिलों में अर्ल लोगों को काफी मात्रा में स्वतन्त्रता देनी पड़ी थी क्योंकि ये राजा की ओर से निरन्तर प्रबल शक्ति द्वारा ही वश में रखे जा सकते थे। संयुक्त राज्य की शक्ति सम्पूर्ण रूप से राजा के चरित्र और योग्यता पर निर्भर थी और जब गद्दी पर कोई निर्बल राजा बैठता था, तो राज्य शीघ्र ही छिन्न-भिन्न हो जाता था।

३. द्वितीय डेनिश विजय तथा नार्मन लोगों का आना

९७८ ई० में राजा होने वाला और १०१६ ई० तक शासन करने वाला एथेलरैड दी रेडलेस (Ethelred the Redless) एक निर्बल शासक था। उसका शासन इंग्लैण्ड में सम्भवतः सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण था। उसके शासन काल में डेनिश आक्रमणों की सहसा और भीषण पुनरावृत्ति हुई, क्योंकि इस समय डेनमार्क और नार्वे में नये सुदृढ़ राज्यों का जन्म हो रहा था और उनसे बचने के लिए अधिक साहसी व्यक्तियों ने समुद्री डकैती के पुराने ढंगों को अपना लिया था। किन्तु उन्होंने जिस बृहत्तर इंग्लैण्ड पर हमला किया, वह इनका प्रतिरोध करने में उस समय पहले आक्रमणों के समय की अपेक्षा अधिक समर्थ था और एथलस्टेन-जैसे राजा के अधीन उसने निस्सन्देह ऐसा किया होता। एथेलरैड आवश्यक पौरुष और नेतृत्व प्रदर्शित करने में बिलकुल असमर्थ था। स्थानीय एल्डरमैन (Ealdorman) या अर्ल लोगों ने आक्रान्ताओं का मुकाबला करने का पूरा प्रयास किया। उदाहरणार्थ, ९९१ ई० में मैल्डोन (Maldon) की लड़ाई में ऐसैक्स की स्थानीय सेनाओं (Levies) ने एक डेनिश सेना से बड़ी वीरतापूर्वक लड़ाई लड़ी। किन्तु उन्हें दूरवर्ती राजा से कोई सहायता नहीं मिली। राजा के पास शत्रु के साथ मुकाबला करने की एक ही, लेकिन घातक, विधि पैसा देकर उसे खरीद लेने की थी। बार-बार भूमि पर भारी टैक्स लगाकर विशाल राशियाँ इकट्ठी की गयीं ताकि डेनिश आक्रान्ताओं को लौटाने के लिए डेनगेल्ड के रूप में ये उन्हें दी जा सकें। यह तो मक्खियों को शहद के प्याले दे कर भगाने की कोशिश करने जैसा था।

१००२ ई० में इससे भी अधिक घातक विधि का उपयोग किया गया। इस समय एथेलरैड ने डेनों के सामूहिक हत्याकाण्ड का संगठन किया। इनमें से बहुत से डेन इंग्लैण्ड में अभी हाल में आ कर बसे थे। इनके हत्याकाण्ड से बहुत बड़ी संख्या में डेनों ने इंग्लैण्ड

पर हमला किया। इनका नेता स्वेन (Sweyn) था। यह पहले तो समुद्री डाकुओं का नेता था और इसके बाद डेनमार्क की गद्दी पर बैठा और उसने जानबूझ कर समूचे इंग्लैण्ड को वशवर्ती बनाने का कार्य आरम्भ किया। आक्रमणों की एक अविच्छिन्न शृंखला ने समूचे देश को लूटा और विध्वस्त किया गया। अत्यधिक निराशा के एक क्षण में लगभग समूचे देश ने संघर्ष करना छोड़ दिया और स्वेन की प्रभुता स्वीकार कर ली। किन्तु १०१४ ई० में स्वेन की प्रभुता के बाद इंग्लिश देशभक्ति पुनरुज्जीवित हुई और नार्मण्डी में शरण लेने वाला अभागा एथेलरैड एक बार पुन: अपने प्रजाजनों का विनाश करने के लिए स्वदेश वापस लौट गया। १०१६ ई० में उसकी मृत्यु हो गयी, परन्तु यह इतनी देर में हुई कि देश को मुक्त करना सम्भव नहीं हुआ। स्वेन का पुत्र कैन्यूट पहले ही देश के बड़े भाग का स्वामी बन चुका था और यद्यपि निकम्मे एथेलरैड के वीर पुत्र और अल्फ्रेड के घराने के अन्तिम वीर पुरुष एडमण्ड आयरनसाइड ने १०१६ ई० में महान संघर्ष किया, किन्तु इसकी अकाल मृत्यु ने अधिक प्रतिरोध को निराशापूर्ण बना दिया और अल्फ्रेड के वंश का स्थान डेन राजा केन्यूट (१०१६ से १०३५ ई०) ने ले लिया।

डेनिश युद्ध की अव्यवस्था से उत्तर में एक बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन का अवसर उत्पन्न हुआ। १०१८ ई० में स्काट लोगों के राजा ने ट्वीड और फोर्थ के बीच में लोथियन के इंग्लिश जिले पर आक्रमण किया और (ट्वीड नदी पर स्थित) कारहम की लड़ाई में विजयी हो कर वह इस प्रदेश को अपने राज्य में सम्मिलित करने में समर्थ हो सका। १०१८ ई० से लोथियन स्काटलैण्ड के राज्य का हिस्सा रहा था और इसका मुख्य नगर एडिनबरा शीघ्र ही राज्य की राजधानी बन गया। इंग्लैण्ड का पहला डेन राजा कैन्यूट बहुत ही शक्तिशाली नरेश था। वह अपने समय के यूरोप के सबसे बड़े राजाओं में से एक था क्योंकि वह न केवल इंग्लैण्ड का राजा था—वेल्स और स्काटलैण्ड पर भी वह प्रभुता का अस्पष्ट और आयरलैण्ड पर इससे भी अस्पष्ट दावा करता था—बल्कि वह डेन-मार्क और नार्वे का भी राजा था।[१] किन्तु वह इस सारे विशाल साम्राज्य का इंग्लैण्ड से शासन करता था और यद्यपि उसने अपने आरम्भिक दिनों में अपने को पाशविक और विश्वासघाती के रूप में प्रदर्शित किया था, फिर भी उसने इंग्लिश प्रजाजनों की कृपा प्राप्त करने के लिए पूरा प्रयत्न किया, अपने दरबार को इंग्लिश लोगों से भरा और इंग्लिश कानूनों और रिवाजों को पुनरुज्जीवित किया तथा सुदृढ़ बनाया। यह सब कुछ होने पर भी कैन्यूट अपने समूचे राज्य पर प्रभावशाली नियन्त्रण स्थापित करने में केवल इस कारण असमर्थ रहा कि उस समय विभिन्न जिलों की देखभाल के लिए किसी नियमित शासनतन्त्र की व्यवस्था नहीं थी। उसे इंगलैण्ड को कई बड़े अर्लप्रदेशों (अर्लडम) में बाँटना पड़ा। इनके शासकों को शक्तिशाली राजा के अधीन रहते हुए भी बहुत कुछ अपने आप करने का अधिकार था और निर्बल राजा के समय तो ये लगभग स्वतन्त्र राजा बन जाते थे। यह कैन्यूट की मृत्यु के बाद उस समय बहुत स्पष्ट हो गया जब उसके दो पुत्रों हैरल्ड और

---

१. एटलस में प्लेट संख्या १७ में कैन्यूट के साम्राज्य का चित्र देखिये।

हार्डी कैन्यूट में झगड़े चल पड़े। हार्डी कैन्यूट की मृत्यु (१०४२ ई०) के बाद इंग्लैण्ड के डेनिश राजाओं का छोटा-सा वंशक्रम समाप्त हो गया और एथेलरैड (Ethelred the Redless) का निर्वासित बेटा नार्मण्डी से, जहाँ उसने शरण ली हुई थी, एडवर्ड के रूप में (Edward the confessor) मुकुट पाने के लिए लौट आया। एडवर्ड के लम्बे और निर्बल शासन-काल (१०४२ से १०६६ ई०) में इंग्लैण्ड के वास्तविक शासक महान अर्ल थे, विशेष रूप से वैसेक्स का अर्ल गाडविन तथा उसके बेटे और मर्सिया का अर्ल लियोफ्रिक और उसके बेटे।[1] जो इंग्लैण्ड इतने कष्ट से संयुक्त हुआ था वह अब पुनः विघटित होता हुआ प्रतीत हुआ और वह फ्रांस के सामन्ती राज्यों की भाँति अनेक बड़े सामन्त राज्यों में बँट गया।

एडवर्ड एक बड़ा मिलनसार (Amiable) और धर्मात्मा राजकुमार था। वह अपने राज्य की बढ़ती हुई निर्बलता का प्रतिकार करने में सर्वथा असमर्थ था। वस्तुतः उसे इंग्लैण्ड में बहुत कम दिलचस्पी थी। उसका पालन-पोषण उस नार्मण्डी में हुआ था, जहाँ ९१३ ई० के बाद के पिछले सौ वर्षों में वाइकिंग विजेता पूर्ण रूप से बस चुके थे, फ्रांस की सभ्यता के सर्वोत्तम अंशों को ग्रहण कर चुके थे और उसमें सुधार कर रहे थे। विशेष रूप से उन्होंने बंक-जैसे कई गौरवपूर्ण और पांण्डित्यपूर्ण मठों की स्थापना की थी जहाँ का प्रसिद्ध मठाधीश लानफ्रांक (Lanfrance) अपने व्याख्यानों को सुनाने के लिए यूरोप के सभी भागों से विद्यार्थियों को आकृष्ट कर रहा था। कोमल एवं धार्मिक प्रकृति के एडवर्ड को सुदीर्घ डेन आक्रमणों के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाली इंग्लैण्ड की अव्यवस्था और पिछड़ी हुई दशा तथा विशेष रूप से चर्च की भ्रष्टाचारपूर्ण और क्षमताहीन दशा उसके अपने नार्मन मित्रों की सुव्यवस्था और सभ्यता की तुलना में बहुत बुरी प्रतीत होती थी। उसने अपने दरबार को नार्मन कृपापात्रों से भरा जो इंग्लिश लोगों के लिए बड़ी नाराजगी की बात थी। उसने नार्मन बिशपों को नियुक्त किया। ये उद्दण्ड इंग्लिश पादरियों में बड़े अप्रिय थे। इन सबसे बढ़कर उसने अपना समय एक नये शानदार चर्च को ऐसे स्तर पर बनाने में लगाया, जैसा इससे पहले कभी इंग्लैण्ड में नहीं हुआ था। उसने इसे नार्मन लोगों द्वारा विकसित वास्तु-कला की नवीन उदात्त शैली में बनवाया। एडवर्ड को याद किये जाने का मुख्य कारण यही है कि वह वेस्टमिस्टर एबे का संस्थापक था। यह वह भव्य मन्दिर है जो अब ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल का हृदय बन गया है, यद्यपि हम यह जानते हैं कि इसका वास्तविक निर्माण काफी समय बाद का है।

जब एडवर्ड की मृत्यु हुई (१०६६ ई०), तब उसके बाद उत्तराधिकारी बनने के लिए राजवंश का कोई युवा व्यक्ति उपलब्ध नहीं था, इसलिए राज्य के सरदारों ने अपने सब से अधिक शक्तिशाली अर्ल वैसेक्स के अर्ल हैरल्ड को राजा चुना। हैरल्ड पुराने इंग्लिश राजाओं में अन्तिम सिद्ध हुआ। आरम्भ से ही उसकी स्थिति बहुत असुरक्षित थी। मर्सिया और नार्थम्ब्रिया के अर्ल एडविन और मोरकर उस समय उसके सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी थे एवं उसके गद्दी पर बैठने के कारण उससे ईर्ष्या रखते थे तथा अपने प्रान्तों में स्वतन्त्र

---

१. प्लेट सं० ११ (डी) तथा १७ में अर्ल राज्यों का नक्शा देखिये।

शासक थे। इसके अतिरिक्त, इंग्लैण्ड पर इस समय एक साथ दो शक्तिशाली विदेशी शासकों के आक्रमण का भय था। उनमें से एक नार्वे का राजा तथा दूसरा नार्मण्डी का शक्तिशाली ड्यूक था जो एडवर्ड का चचेरा भाई था और इंग्लैण्ड की राजगद्दी पर अपना दावा कर रहा था। हैरल्ड ने आक्रान्ताओं का वीरतापूर्वक सामना किया। उसने स्टैम्फोर्ड के पुल पर नार्थमैन लोगों पर हमला किया और उन पर विजय प्राप्त की, किन्तु जब वह अभी उत्तर में ही था, तो यह समाचार आया कि नार्मण्डी का ड्यूक विलियम ससेक्स के समुद्र तट पर आ उतरा है। हैरल्ड उसका प्रतिरोध करने के लिए जल्दी ही दक्षिण की ओर लपका, किन्तु उसे वैसेक्स के अपने अर्ल-राज्य के अतिरिक्त इंग्लैण्ड के किसी भाग से कोई सहायता नहीं मिली। फिर भी हेस्टिंग्स की लड़ाई में उसने बड़ी वीरता पूर्वक युद्ध किया। यह लड़ाई दिन भर चलती रही। इंग्लिश लोग पैदल ही कन्धे से कन्धा मिलाकर सैनिक समूहों के रूप में नार्मन तीरों के बादलों के तथा कवच पहने नार्मन योद्धाओं के भीषण आक्रमण के विरुद्ध लड़ते रहे। नार्मन लोग तभी इन पर विजयी हुए, जब इंग्लिश लोगों को एक कपटपूर्ण प्रत्यावर्तन (Feigned retreat) द्वारा यह प्रेरणा दी गयी कि वे अपनी ढालों की ठोस दीवारों को भंग करें। उस समय भी हैरल्ड और उसके वैयक्तिक सहायक तब तक जान की बाजी लगाकर लड़ते रहे, जब तक कि वे सब मार नहीं डाले गये।

नार्मन लोगों ने विजय प्राप्त की। इंग्लैण्ड की अन्तिम विजय आरम्भ हो गयी। इंग्लैण्ड का अब तक जो अधूरा संयुक्त राज्य बना था, वह उन कठोर शासकों के शासन में चला गया, जो यह जानते थे कि किसी कठोर धातु को कोई शक्ल देने के लिए किस प्रकार हथौड़े मारे जाते हैं।

४. नार्मन विजय की आवश्यकता

पुराना इंग्लिश राज्य अल्फ्रेड के उत्तराधिकारियों के समय में ऊपर से शानदार प्रतीत होने वाली सफलताओं के बावजूद वास्तव में असफल सिद्ध हुआ जिसका कारण यह था कि इसके शासकों को कभी ऐसे साधन उपलब्ध नहीं हुए थे जिनसे वे विभिन्न नस्लों से बने हुए अपने प्रजाजनों को एकता के सूत्र में पिरो सकते और विभिन्न जिलों के पृथक होने तथा लगभग पृथक राज्य बनाने की प्रवृत्ति को रोक सकते। हेस्टिंग्स की लड़ाई से पहले की अन्तिम पीढ़ी में यह विफलता पूर्ण रूप से स्पष्ट हो गयी थी। नार्मन विजय को सम्भव बनाने का कारण इंग्लैण्ड में एकता का अभाव था, किन्तु एकता के इस अभाव को दूर करने के लिए नार्मन विजय राष्ट्र के विकास की एक आवश्यक किन्तु दुःखपूर्ण मंजिल थी।

डेनिश विजयों ने छोटे इंग्लिश राज्यों के पुराने भेदभावों को समाप्त कर दिया, किन्तु उन्होंने इसके स्थान पर नये भेदभाव पैदा कर दिये। इंग्लिश लोगों में तीन पृथक प्रकार के कानून या रिवाजों के समूह प्रचलित थे। राजा कैन्यूट ने जब इनका संहिताकरण (Codification) करना चाहा, तो उसका ध्यान इन भेदों की तरफ गया। वैसेक्स के कानून, मर्सिया के कानून तथा डेन कानून—इन तीनों कानून-पद्धतियों को किसी प्रकार एक किया

जाना था। भाषा या बोली के भी अनेक विस्तृत भेद थे और सबसे बढ़कर उन बड़े अर्लों की स्वतन्त्रता ने नये राजनीतिक भेद उत्पन्न कर दिये थे जो अब बड़ी तेजी से बड़े-बड़े अर्ध स्वतन्त्र प्रान्तों में आनुवंशिक शासक बन रहे थे। इनसे निचले दर्जे की कुलीन श्रेणी भी अपने असामियों और पड़ोसियों पर नियन्त्रण प्राप्त कर रही थी। यह लगभग वैसा ही नियन्त्रण था जो बाद में सामन्ती उच्चता (Feudal superiority) के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इंग्लैण्ड में अब भी हजारों ऐसे स्वतन्त्र जमींदार थे, जो राजा और उसकी अदालत को छोड़ कर अन्य किसी व्यक्ति को अपने से ऊँचा स्वीकार नहीं करते थे। ये विशेष रूप से डेनिश प्रदेशों में पाये जाते थे। किन्तु इंग्लैण्ड में अब भी हजारों ऐसे स्वतन्त्र जमींदार थे, जिन्होंने अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता छोड़ दी थी और जो समर्पण (Commendation) नामक प्रक्रिया से पड़ोसी थेग्नों (Thegn) के 'मनुष्य' या वशवर्ती सेवक (Vassal) इसलिए बन गये थे कि वे उस समय की निरन्तर चलती रहने वाली अव्यवस्था में उनका संरक्षण प्राप्त करने में समर्थ हो सकें। शायर (Shire) की हन्ड्रेड (Hundred) की अदालतें अब भी कार्य कर रही थीं और यह समझा जाता था कि स्वतन्त्र व्यक्ति उनमें उपस्थित होते हैं, किन्तु राजा को धीरे-धीरे इन अदालतों पर नियन्त्रण स्थापित करना तथा अपने स्वतन्त्र प्रजाजनों के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करना अधिकाधिक कठिन मालूम होने लगा था क्योंकि उसके पास ऐसा करने के लिए कोई योग्य शासन-तंत्र नहीं था। राजा को अपनी अदालतों को अधिकाधिक महान अर्लो तथा थेग्नों के शासन-प्रबन्ध में छोड़कर सन्तोष करना पड़ रहा था। संक्षेप में, इस समय इंग्लैण्ड में न तो व्यवस्था थी, न कोई पद्धति थी और न ही कोई स्पष्ट रूप से समझा जाने वाला कानून था। संगठन की प्रतिभा रखने वाले किसी शासक के हाथों में ही इस अव्यवस्था को दूर करने का कार्य सौंपा जा सकता था।

अन्त में, ब्रिटिश टापुओं के सब देशों के बारे में यह बात निर्विवाद है कि सभ्यता एवं कलाओं को पिछली दो शताब्दियों के सुदीर्घ उपद्रव से बहुत क्षति उठानी पड़ी थी। इसे रोकने के लिए न तो अल्फ्रेड, एडगर और डनस्टन का कार्य तथा न ही एथेलस्टेन और कैन्यूट के उत्तम आशय रखने वाले सभी कानून पर्याप्त थे। मध्ययुग में सभ्यता विशेष रूप से चर्च पर अवलम्बित थी, किन्तु इंग्लैण्ड, वेल्स, स्काटलैण्ड तथा आयरलैण्ड के चर्चों में भ्रष्टाचार आ गया था तथा पुरोहित अज्ञानी और अनुशासनहीन थे।

यूरोप के महाद्वीप मे इस समय चर्च में एक बड़ा सुधार आन्दोलन चल रहा था। बर्गण्डी में क्लनी के मठ में १०वी शताब्दी में यह आन्दोलन शुरू हुआ था और यह आन्दोलन मठों में ही अधिक शक्तिशाली था क्योंकि इनमें रहने वाले भिक्षु राजाओं और सामन्तों की महत्वाकांक्षाओं के कारण भ्रष्ट होने वाले प्रभाव से सांसारिक अथवा लौकिक (Secular) पादरियों की अपेक्षा अधिक मुक्त थे। बहुत से मठों में विद्या और अध्ययन की वास्तविक पुनर्जागृति आरम्भ हुई। पहले वर्णित नार्मण्डी में बैक (Bec) का गिरजाघर (Abbey) इसी प्रकार के मठों में से एक था। शनैः शनैः मुख्य रूप से, भिक्षुओं के प्रभाव से यह विचार विकसित हुआ कि धर्म और सभ्यता भी पुनरुज्जीवित हो सकते हैं तथा

मनुष्यों के कष्ट तभी कम हो सकते हैं, जब शक्ति के मुकाबले में न्याय का समर्थन करने वाले चर्च को स्वतन्त्र बनाया जाय, तथा पोप को नामज़द करने का दावा करने वाले सम्राट के नियन्त्रण से, बिशपों को नियत करने का दावा करने वाले राजाओं के नियन्त्रण से, एवं चर्च के पदों को ऊँची बोली बोलने वाले को बेचकर धार्मिक पदों की बिक्री या साइमनी (Simony) का महापाप करने वाले सामन्तों के नियन्त्रण से चर्च को स्वतन्त्र किया जाय। चर्च अवश्यमेव स्वतन्त्र होना चाहिए। इसे दुनिया से तथा इसके प्रभावों से अपने को पृथक रखना चाहिए। इसीलिए पादरियों में ब्रह्मचर्य का नियम लागू करने की माँग होने लगी क्योंकि इस समय यद्यपि ब्रह्मचर्य का नियम स्वीकार तो किया जाता था किन्तु विशेष रूप से इंग्लण्ड में इसकी व्यापक रूप से अवहेलना होती थी। इन नये आदर्शों का व्यापक प्रभाव पड़ा और इन्होंने समूचे पश्चिमी यूरोप में एक नये आध्यात्मिक और बौद्धिक जीवन की जागृति में बहुत कार्य किया। जब इंग्लैण्ड में नार्मन विजय हुई, तब इन आदर्शों की भी महान विजय हो रही थी और नार्मन इस सुधार आन्दोलन के सबसे अधिक उत्साही शिष्य और समर्थक थे। इस समय महान पोप ग्रेगोरी (Gregory) सप्तम को मुख्य सहायता इटली के नार्मन लोगों से मिली। ग्रेगोरी उस समय राजाओं के नियन्त्रण से चर्च को पूर्ण रूप से मुक्त करने के लिए जर्मनी के सम्राट हेनरी चतुर्थ के साथ साथ एक घोर संघर्ष में लगा हुआ था। फ्रांस के नार्मन तथा उनके महान ड्यूक विलियम का भी यही पक्ष था और जब विलियम ने इंग्लैण्ड पर आक्रमण किया, तो वह पोप द्वारा आशीर्वाद प्राप्त झण्डे के साथ आया और उसे यह कार्य सौंपा गया था कि वह शिथिल और अनुशासनहीन इंग्लिश चर्च का सुधार करे।

पिछले पैराग्राफ में हमने जिस धार्मिक पुनर्जागृति का बिलकुल अपर्याप्त उल्लेख किया है, उसने यूरोप के सभी प्रमुख देशों में चर्च और राज्य के बीच एक विवाद उत्पन्न किया। यह विवाद किसी-न-किसी रूप में समूचे मध्ययुग में बना रहा। इंग्लैण्ड के नार्मन राजा यद्यपि चर्च का सुधार करना चाहते थे, किन्तु वे इस पर अपने वास्तविक अधिकार को नहीं छोड़ना चाहते थे। अगले दो अध्यायों में इनके संघर्षों का कुछ वर्णन होगा। किन्तु यह इस आन्दोलन का एकमात्र या सबसे महत्वपूर्ण पहलू नहीं था। इसने सर्वत्र आध्यात्मिक और बौद्धिक जीवन को पुनरुज्जीवित किया। मठों के नये सम्प्रदायों की स्थापना हुई। मध्ययुग की पाशविकता शौर्य के उन विचारों से परिष्कृत होने लगी जो विचार चर्च की शिक्षाओं का ही वास्तविक परिणाम था। इन सब में इंग्लैण्ड और ब्रिटिश-द्वीप-समूह के अन्य राज्यों ने अब तक कोई भाग नहीं लिया था। किन्तु नार्मन विजय ने अब इन राज्यों को विचारों के इस महान आन्दोलन के प्रभाव क्षेत्र में लाना शुरू किया।

इस प्रकार हेस्टिंग्स की लड़ाई को यद्यपि स्वामिभक्त इंग्लिश व्यक्तियों ने बहुत बुरा समझा, किन्तु यह कोरी मुसीबत ही नहीं थी। इससे ब्रिटेन को दो बड़े लाभ हुए हैं। पहला तो इसने एक अधिक सुदृढ़ शासन की तथा राज्य के अधिक उत्तम संगठन की स्थापना की और दूसरा लाभ यह था कि यह इंग्लैण्ड में उस धार्मिक और बौद्धिक पुनरुज्जीवन आन्दोलन के लाभकारी प्रभाव को लायी जो आन्दोलन इस समय यूरोप में चल रहा था

और इस प्रकार, यह युद्ध ब्रिटिश जनता के विकास में एक अतीव महत्त्वपूर्ण अवस्था को सूचित करता है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Oman, England before the Norman Conquest; **J. R. Green,** Conquest of England; **Freeman,** Norman Conquest; **Haskins,** The Normans in European History; **C. F. Keary,** Viking Age; **Stenton,** Anglo-Saxon England; **Kendrick,** The Vikings; **Haskins,** Norman Institutions; **Vinagradoff,** English Society in the Eleventh Century; **Hodgkin,** History of the Anglo-Saxons. A good little book on a small scale is **Mawer,** The Vikings (Cambridge People's Books). For a selection of original materials, **Wallis,** The Welding of the Race. For contemporary Europe, **Church,** Beginning of the Middle Ages; **Fletcher,** Making of Western Europe; **Tout,** The Empire and the Papacy; and **Milman,** History of Latin Christianity.



नार्मन राजाओं का कार्य

(१०६६-११५४ ई०)

विलियम प्रथम १०६६, विलियम द्वितीय १०८७,
हेनरी प्रथम ११००, स्टीफेन ११३५ ई०

१. नार्मन विजय तथा सामन्ती व्यवस्था की स्थापना

इंग्लैण्ड के नार्मन विजेता उन वाईकिंग समूहों के वंशज थे, जो दसवीं शताब्दी (९१३ ई०) के आरम्भ में फ्रांस के प्रदेश में बसे थे और जिन्होंने इसे नार्मण्डी का नाम प्रदान किया था। यहाँ बसने के डेढ़ सौ वर्ष के भीतर वे न केवल ईसाई बन गये, बल्कि चर्च के बहुत कट्टर अनुयायी भी बने। उन्होंने फ्रेंच भाषा को और फ्रांस की सभ्यता को स्वीकार किया। उहोंने कवच पहन कर तथा घोड़े की पीठ पर चढ़ कर लड़ने के नये तरीकों को जल्दी सीख लिया तथा यूरोप में उनकी प्रसिद्धि सर्वोत्तम योद्धा के रूप में हो गयी। उन्होंने विशाल दुर्ग बनाना सीखा तथा नये धर्म की भक्ति में उन्होंने चर्च की वास्तुकला की एक विशिष्ट और बड़ी सुन्दर पद्धति का विकास किया। पौरुषपूर्ण, चंचल और साहसी होने के कारण उन्होंने यूरोप के बहुत बड़े भाग में अपने कार्यों का विस्तार किया। ११वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड की विजय से भी पहले उनके समूह दक्षिणी इटली में और सिसली[1] में एक नये राज्य का निर्माण कर रहे थे और वे शीघ्र ही पेलेस्टाइन के पवित्र स्थानों की प्राप्ति के लिए (१०९५-९) क्रूसेड के महान् साहसिक कार्यों में भाग लेने वाले थे। योद्धा और विजेता की

१. ११०० ई० के यूरोप के नक्शे को देखिये, जहाँ नार्मन साम्राज्य विशेष रूप से दिखाये गये हैं; एटलस, प्लेट सं० २१

अपेक्षा वे शासक और संगठनकर्ता के रूप में अधिक उल्लेखनीय थे। फ्रांस के सभी बड़े सामन्ती राज्यों में वे सब से अधिक शक्तिशाली और सुशासित थे। इटली में उनके राज्य को अगली सदी में सारे यूरोप में उत्तम शासन के आदर्श के रूप में प्रसिद्ध होना था। (ग्रेट ब्रिटेन के) द्वीपों के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि इस महान जाति ने इन द्वीपों की विभक्त जनता को सुदृढ़ रूप से संगठित राज्यों में परिणत करने का कार्य आरम्भ किया, भले ही यह कार्य केवल लालच से किया गया था। यह भी सौभाग्य की बात थी कि उनका नेता विजेता विलियम[१] सम्भवतः नार्मन जाति में उत्पन्न व्यक्तियों में सब से अधिक योग्य और शक्तिशाली था। लौह इच्छा वाला पुरुष होने के कारण वह विरोध का दमन करने में निष्ठुर था। यह बात न केवल अंग्रेजों को, अपितु उसके अपने नार्मन अनुयायियों को तथा उन विभिन्न साहसिक व्यक्तियों को भी ज्ञात हो गयी, जो लूट की आशा से उसके झण्डे के नीचे एकत्र हुए थे। वह अपने राज्य में पूरा स्वामी बनना चाहता था। उसकी इच्छा इसे एक समृद्ध और सुशासित शासन बनाने की थी।

इंगलैण्ड[२] की विजय हेस्टिंग्स की अकेली लड़ाई से पूरी नहीं हुई। इसने नार्मन ड्यूक को केवल दक्षिण-पूर्वी इंग्लैण्ड पर ही प्रत्यक्ष नियन्त्रण प्रदान किया। विटेन (Witan) ने वस्तुतः उसे राजा के रूप में स्वीकार किया और लन्दन में उसका राज्याभिषेक किया गया। किन्तु उत्तर के तथा मध्यदेश (Midlands) के महान अर्ल शासकों को यह कल्पना थी कि उन्हें लगभग पूर्ण स्वतन्त्रता का उपभोग करने दिया जायगा, परन्तु वे अपने नये स्वामी को नहीं जानते थे। पाँच वर्ष (१०६६-१०७१) की कड़ी लड़ाई के बाद विलियम ने देश के एक हिस्से के बाद दूसरे को पूर्ण रूप से वश में कर लिया। यार्कशायर में विरोध सब से अधिक परेशान करने वाला था, यहाँ पूरे देहात को विध्वस्त एवं जन-शून्य बना दिया गया था। जो विजयें प्राप्त की गयी थीं, किलों के निर्माण द्वारा उनको सुरक्षित बनाया गया। पहले ये किले बहुत सादे, खाइयों से घिरे टीले होते थे, परन्तु शनै. शनैः इनके स्थान पर विशाल (Massive) तथा चुनौती देने वाले दुर्ग बनने लगे। इनमें एक या दो (इनमें सब से प्रसिद्ध लन्दन का टावर भी है) किले विलियम के शासन में बने तथा अन्य किले उसके उत्तराधिकारियों के शासन काल में बने। लम्बे घेरे के अतिरिक्त इनको किसी प्रकार जीता नहीं जा सकता था। इन किलों के कारण इंग्लिश लोगों द्वारा विरोध या विद्रोह करना असम्भव हो गया। अंग्रेज केवल एक ही स्थान—इली (Ely) को दलदल में हेयरवर्ड दी वेक (Hereward the Wake) के नेतृत्व में देर तक प्रतिरोध करते रहे।

विलियम प्रत्येक प्रदेश जीतने पर वहाँ उसके विरुद्ध लड़ने वाले सब इंग्लिश सरदारों की जमीन जब्त कर लेता था और इसे अपने अनुयायियों में इस शर्त पर बाँट देता था कि इस प्रकार भूमि प्राप्त करने वाला प्रत्येक सरदार उसे निश्चित संख्या में पूर्ण

---

१. ई० पी० फ्रीमैन द्वारा लिखित विजेता विलियम की जीवनी Twelve English Statesmen Series में छपी है। नवीन ज्ञान का समावेश Heroes of the Nations series में स्टेनटन के William the conqueror में है।

२. डूम्सडे सर्वे के अनुसार इंग्लैण्ड का नक्शा देखिये, एटलस प्लेट सं० १८

रूप से शस्त्रों तथा कवच से सुसज्जित योद्धा प्रदान करेगा। कुछ थोड़े से इंग्लिश सरदारों को अपनी जमीन रखने की अनुमति थी, किन्तु इन्हें भी पहले अपनी भूमि का समर्पण करना पड़ा और फिर योद्धा प्रदान करने की शर्त पर उन्हें यह भूमि वापस मिली। इस प्रकार इंग्लैण्ड की सारी भूमि अब पूर्ण रूप से सामन्ती भूधारण पद्धति (Feudal-tenure) के अधीन हो गयी थी। अब राजा के अतिरिक्त शायद ही किसी अन्य व्यक्ति का भूमि पर स्वामित्व रहा हो। प्रत्येक व्यक्ति निश्चित सेवा प्रदान करने की शर्त पर भूमि रखता था। राजा के सभी काश्तकारों (Tenants) का यह कर्त्तव्य था कि बुलाये जाने पर वे उसके दरबार में हाजिर हों। राजा के निकटवर्ती भूमिधारक बैरन (Barons) कहलाते थे। इन्होंने जल्दी ही ऐसी शर्तों पर अपनी ज़मीनों के कुछ हिस्से दूसरे व्यक्तियों को देने शुरू किये। इस प्रकार जिस बैरन को पाँच योद्धा (Knights) या पूर्ण रूप से सुसज्जित घुड़सवार सैनिक राजा को देने होते थे, उसके लिए यह सुविधाजनक था कि वह इनको स्वयं अपने खर्चे से रखने के स्थान पर प्रत्येक योद्धा को इस शर्त पर निश्चित भूमि का हिस्सा प्रदान कर दे कि वह आवश्यकता पड़ने पर अपने आप उपस्थित हो। ऐसे अनुदान योद्धाओं की फीस (Knights fees) कहलाते थे। इस पद्धति में यह खतरा था कि ये योद्धा यह सोच सकते थे कि उनका कर्त्तव्य अपने समीपतम स्वामियों (Immediate Lords) के प्रति ही आज्ञापालन करना है। फ्रांस में ऐसी पद्धति थी। विलियम ने इस खतरे से बचने के लिए सबको बाध्य किया कि वे उसके प्रति निष्ठा की प्रत्यक्ष शपथ ग्रहण करें (साल्ज़बरी की शपथ १०८६)।

भूमि से सम्बन्ध रखने वाले सामान्य कृषकों—छोटे स्वतन्त्र व्यक्तियों (Free men) तथा कृषि-दासों (Serf) के बारे में यह स्थिति थी कि अधिकांश रूप में उन्हें ज्यादा नहीं छेड़ा गया। किन्तु नार्मन वकीलों की यह कल्पना रही कि वे सब किसी-न-किसी स्वामी (Lord) के दास या वशवर्ती हैं और जहाँ तक उनके खेतों (Holdings) का सम्बन्ध है वे अपने स्वामी के क्षेत्राधिकार का विषय है और इस प्रकार सामन्ती विचार को तर्क-संगत रूप में उच्च तथा निम्न दोनों क्षेत्रों में लागू किया गया। प्रत्येक व्यक्ति स्वामी का दास है और स्वामी उसके (कार्यों के) लिए उत्तरदायी है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भूमि के बदले अपने स्वामी को किसी प्रकार की सेवा देनी पड़ती थी, कृषि-दास इसे अपने कार्य के रूप में, चर्च का व्यक्ति प्रार्थना के रूप में, योद्धा लड़ाई के रूप में तथा स्वतन्त्र व्यक्ति दरबार में उपस्थिति के रूप में अपनी सेवा प्रदान करता था। प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वामी के दरबार में जाने के लिए बाध्य था। कृषि-दास को जागीरदार के दरबार में तथा राजा से सीधी भूमि लेने वाले और उसे सैनिक सेवा देने वाले को राजा के दरबार में तथा राजपरिषद् (Curia Regis) में उपस्थित होना पड़ता था। इस प्रकार राजा के दरबार ने पुराने विटेन (Witan) का स्थान ले लिया। राजा इसका उपयोग न केवल न्याय सम्बन्धी कार्यों के लिए करता था, अपितु वह इसमें सामान्य रूप से उपस्थित होने वाले बड़े बैरन सरदारों से परामर्श भी लेता था। इस रूप में इसे प्रायः मैग्नम कंसिलियम (Magnum Concilium) या बैरनों की उच्च परिषद् कहा जाता था। किन्तु वस्तुतः

यह सामन्ती दरबारों की श्रेणी में सब से ऊँची थी। यह पुराने जिलों (Shire) तथा हंड्रेड (Hundred) नामक प्रदेशों में विद्यमान न्यायालयों पर कुछ निरीक्षण रखती थी। यह एक व्यवस्थित पद्धति थी और (नार्मन) विजय से पहले विद्यमान गड़बड़ की अपेक्षा अधिक अच्छी थी।

२. राष्ट्रीय पद्धति के शासन का आरम्भ

किन्तु विजेता (विलियम) को फ्रांस में अपने अनुभव से यह ज्ञात हुआ था कि बड़े सरदारों या बैरनों (Barons) को ही अपने वशवर्ती भूमिधारकों पर नियन्त्रण रखने के कार्य में खुली छूट दे देना बड़ा खतरनाक होता है और यदि राजा को अपने राज्य में वास्तविक स्वामी बनना है तो इस खतरे से बचने के लिए उसे कुछ प्रतिकार ढूंढना चाहिए। यह विलियम को पुरानी इंग्लिश पद्धति के अवशेषों में मिला। यह पद्धति बहुत विघटित हो चुकी थी, किन्तु उसने इसे पुनरुज्जीवित किया और सुदृढ़ बनाया।

पुरानी इंग्लिश पद्धति में राजा प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति को सैनिक सेवा के लिए बुला सकता था। ऐसी व्यवस्था सामन्ती पद्धति के साथ असंगत प्रतीत होती थी, किन्तु विलियम ने इसके मूल्य को समझा तथा इसे जीवित रखा। उसने तथा उसके उत्तराधिकारियों ने बैरन लोगों का विद्रोह होने पर बार-बार इंग्लिश फिर्ड (Fyrd) को अथवा स्वतन्त्र व्यक्तियों की राष्ट्रीय सेना को बुलाया और अंग्रेजों ने सदैव राजा की सहायता की, क्योंकि वे यह समझते थे कि अपने अजेय दुर्ग में कवच धारण करने वाला सरदार या बैरन उन पर सब से बुरा अत्याचार करने वाला होता है।

पुरानी इंग्लिश पद्धति में स्वतन्त्र व्यक्तियों के झगड़ों का निर्णय करने के लिए शायर (Shire) न्यायालय तथा हंड्रेड (Hundred) न्यायालय थे। इनमें स्वतन्त्र व्यक्तियो से आशा की जाती थी कि वे स्वयं उपस्थित हो कर जाँच किये जाने वाले किसी मामले में लागू किये जाने वाले रिवाजों की घोषणा करें। इन न्यायालयों का उपयोग जनता को ऐसे समूहों में संगठित करने के लिए किया जाता था, जिनमें अपराधियों को उपस्थित करने के लिए पारस्परिक रूप से वे उत्तरदायी होते थे। इस पद्धति को नार्मन लोगों ने फ्रैंकप्लेज (Frankpledge) के नाम से विकसित किया था। एक पुराने रिवाज (कोई व्यक्ति ठीक तरह से नहीं जानता था कि यह कितना पुराना है) के अनुसार हत्या, डकैती, आग लगाने जैसे कुछ बड़े गम्भीर अपराध राजा के मुकदमे (King's pleas) समझे जाते थे। इनकी जाँच केवल राजा के कर्मचारियों द्वारा तथा उसके न्यायालयों में हो सकती थी और शायर (Shire) के न्यायालयों का उपयोग ऐसे मामलों की जाँच के लिए किया जाता था। विलियम तथा उसके उत्तराधिकारियों—विशेषत: हेनरी प्रथम ने इन न्यायालयों का महत्व समझा। यद्यपि विजय से पहले इन न्यायालयों का ह्रास हो गया था, किन्तु इन्होंने इन्हें पुनरुज्जीवित और संगठित किया। बैरनों ने यह अनुभव किया कि उन्हें अपने न्यायालयों में अपने असामियों के केवल उन्हीं मामलों को सुनने का अधिकार है जिनका सम्बन्ध सिर्फ भूमि से है। वस्तुतः गम्भीर मामले शायर न्यायालयों के लिए सुरक्षित रखे जाते थे। विलि-

रूप से शस्त्रों तथा कवच से सुसज्जित योद्धा प्रदान करेगा। कुछ थोड़े से इंग्लिश सरदारों को अपनी जमीन रखने की अनुमति थी, किन्तु इन्हें भी पहले अपनी भूमि का समर्पण करना पड़ा और फिर योद्धा प्रदान करने की शर्त पर उन्हें यह भूमि वापस मिली। इस प्रकार इंग्लैण्ड की सारी भूमि अब पूर्ण रूप से सामन्ती भूधारण पद्धति (Feudal-tenure) के अधीन हो गयी थी। अब राजा के अतिरिक्त शायद ही किसी अन्य व्यक्ति का भूमि पर स्वामित्व रहा हो। प्रत्येक व्यक्ति निश्चित सेवा प्रदान करने की शर्त पर भूमि रखता था। राजा के सभी काश्तकारों (Tenants) का यह कर्त्तव्य था कि बुलाये जाने पर वे उसके दरबार में हाजिर हों। राजा के निकटवर्ती भूमिधारक बैरन (Barons) कहलाते थे। इन्होंने जल्दी ही ऐसी शर्तों पर अपनी ज़मीनों के कुछ हिस्से दूसरे व्यक्तियों को देने शुरू किये। इस प्रकार जिस बैरन को पाँच योद्धा (Knights) या पूर्ण रूप से सुसज्जित घुड़सवार सैनिक राजा को देने होते थे, उसके लिए यह सुविधाजनक था कि वह इनको स्वयं अपने खर्चे से रखने के स्थान पर प्रत्येक योद्धा को इस शर्त पर निश्चित भूमि का हिस्सा प्रदान कर दे कि वह आवश्यकता पड़ने पर अपने आप उपस्थित हो। ऐसे अनुदान योद्धाओं की फीस (Knights fees) कहलाते थे। इस पद्धति में यह खतरा था कि ये योद्धा यह सोच सकते थे कि उनका कर्त्तव्य अपने समीपतम स्वामियों (Immediate Lords) के प्रति ही आज्ञापालन करना है। फ्रांस में ऐसी पद्धति थी। विलियम ने इस खतरे से बचने के लिए सबको बाध्य किया कि वे उसके प्रति निष्ठा की प्रत्यक्ष शपथ ग्रहण करें (साल्ज़बरी की शपथ १०८६)।

भूमि से सम्बन्ध रखने वाले सामान्य कृषकों—छोटे स्वतन्त्र व्यक्तियों (Free men) तथा कृषि-दासों (Serf) के बारे में यह स्थिति थी कि अधिकांश रूप में उन्हें ज्यादा नहीं छेड़ा गया। किन्तु नार्मन वकीलों की यह कल्पना रही कि वे सब किसी-न-किसी स्वामी (Lord) के दास या वशवर्ती हैं और जहाँ तक उनके खेतों (Holdings) का सम्बन्ध है वे अपने स्वामी के क्षेत्राधिकार का विषय है और इस प्रकार सामन्ती विचार को तर्क-संगत रूप में उच्च तथा निम्न दोनों क्षेत्रों में लागू किया गया। प्रत्येक व्यक्ति स्वामी का दास है और स्वामी उसके (कार्यों के) लिए उत्तरदायी है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी भूमि के बदले अपने स्वामी को किसी प्रकार की सेवा देनी पड़ती थी, कृषि-दास इसे अपने कार्य के रूप में, चर्च का व्यक्ति प्रार्थना के रूप में, योद्धा लड़ाई के रूप में तथा स्वतन्त्र व्यक्ति दरबार में उपस्थिति के रूप में अपनी सेवा प्रदान करता था। प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वामी के दरबार में जाने के लिए बाध्य था। कृषि-दास को जागीरदार के दरबार में तथा राजा से सीधी भूमि लेने वाले और उसे सैनिक सेवा देने वाले को राजा के दरबार में तथा राजपरिषद् (Curia Regis) में उपस्थित होना पड़ता था। इस प्रकार राजा के दरबार ने पुराने विटेन (Witan) का स्थान ले लिया। राजा इसका उपयोग न केवल न्याय सम्बन्धी कार्यों के लिए करता था, अपितु वह इसमें सामान्य रूप से उपस्थित होने वाले बड़े बैरन सरदारों से परामर्श भी लेता था। इस रूप में इसे प्रायः मैग्नम कंसिलियम (Magnum Concilium) या बैरनों की उच्च परिषद् कहा जाता था। किन्तु वस्तुतः

यह सामन्ती दरबारों की श्रेणी में सब से ऊँची थी। यह पुराने जिलों (Shire) तथा हंड्रेड (Hundred) नामक प्रदेशों में विद्यमान न्यायालयों पर कुछ निरीक्षण रखती थी। यह एक व्यवस्थित पद्धति थी और (नार्मन) विजय से पहले विद्यमान गड़बड़ की अपेक्षा अधिक अच्छी थी।

२. राष्ट्रीय पद्धति के शासन का आरम्भ

किन्तु विजेता (विलियम) को फ्रांस में अपने अनुभव से यह ज्ञात हुआ था कि बड़े सरदारों या बैरनों (Barons) को ही अपने वशवर्ती भूमिधारकों पर नियन्त्रण रखने के कार्य में खुली छूट दे देना बड़ा खतरनाक होता है और यदि राजा को अपने राज्य में वास्तविक स्वामी बनना है तो इस खतरे से बचने के लिए उसे कुछ प्रतिकार ढूंढना चाहिए। यह विलियम को पुरानी इंग्लिश पद्धति के अवशेषों में मिला। यह पद्धति बहुत विघटित हो चुकी थी, किन्तु उसने इसे पुनरुज्जीवित किया और सुदृढ़ बनाया।

पुरानी इंग्लिश पद्धति में राजा प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति को सैनिक सेवा के लिए बुला सकता था। ऐसी व्यवस्था सामन्ती पद्धति के साथ असंगत प्रतीत होती थी, किन्तु विलियम ने इसके मूल्य को समझा तथा इसे जीवित रखा। उसने तथा उसके उत्तराधिकारियों ने बैरन लोगों का विद्रोह होने पर बार-बार इंग्लिश फिर्ड (Fyrd) को अथवा स्वतन्त्र व्यक्तियों की राष्ट्रीय सेना को बुलाया और अंग्रेजों ने सदैव राजा की सहायता की, क्योंकि वे यह समझते थे कि अपने अजेय दुर्ग में कवच धारण करने वाला सरदार या बैरन उन पर सब से बुरा अत्याचार करने वाला होता है।

पुरानी इंग्लिश पद्धति में स्वतन्त्र व्यक्तियों के झगड़ों का निर्णय करने के लिए शायर (Shire) न्यायालय तथा हंड्रेड (Hundred) न्यायालय थे। इनमें स्वतन्त्र व्यक्तियों से आशा की जाती थी कि वे स्वयं उपस्थित हो कर जाँच किये जाने वाले किसी मामले में लागू किये जाने वाले रिवाजों की घोषणा करें। इन न्यायालयों का उपयोग जनता को ऐसे समूहों में संगठित करने के लिए किया जाता था, जिनमें अपराधियों को उपस्थित करने के लिए पारस्परिक रूप से वे उत्तरदायी होते थे। इस पद्धति को नार्मन लोगों ने फ्रैंकप्लेज (Frankpledge) के नाम से विकसित किया था। एक पुराने रिवाज (कोई व्यक्ति ठीक तरह से नहीं जानता था कि यह कितना पुराना है) के अनुसार हत्या, डकैती, आग लगाने जैसे कुछ बड़े गम्भीर अपराध राजा के मुकदमे (King's pleas) समझे जाते थे। इनकी जाँच केवल राजा के कर्मचारियों द्वारा तथा उसके न्यायालयों में हो सकती थी और शायर (Shire) के न्यायालयों का उपयोग ऐसे मामलों की जाँच के लिए किया जाता था। विलियम तथा उसके उत्तराधिकारियों—विशेषत: हेनरी प्रथम ने इन न्यायालयों का महत्व समझा। यद्यपि विजय से पहले इन न्यायालयों का ह्रास हो गया था, किन्तु इन्होंने इन्हें पुनरुज्जीवित और संगठित किया। बैरनों ने यह अनुभव किया कि उन्हें अपने न्यायालयों में अपने असामियों के केवल उन्हीं मामलों को सुनने का अधिकार है जिनका सम्बन्ध सिर्फ भूमि से है। वस्तुतः गम्भीर मामले शायर न्यायालयों के लिए सुरक्षित रखे जाते थे। विलि-

यम बहुत कम मामलों में अपने बैरनों को फ्रैंकप्लेज के अधिकारों अर्थात् पुलिस के प्रयोजनों के लिए अपने असामियों को संगठित करने तथा नियन्त्रण करने के अधिकारों का उपयोग करने की अनुमति देता था। राजा के अभिकर्ताओं (Agents) को बैरनों की जागीरों में तथा न्यायालयों में प्रवेश करके इस पुलिस पद्धति को लागू करने का अधिकार था।

इन अभिकर्ताओं में प्रमुख शेरिफ या शायररीव्स (Shire-reeves) होते थे। प्रत्येक शायर में एक शेरिफ होता था। शेरिफ नार्मन सरकार के समय में सभी प्रकार का कार्य करने वाले व्यक्ति होते थे और इनकी सहायता से राजा बैरनों के पास शक्ति होने पर भी, अपने प्रजाजनों पर नियन्त्रण रखता था। नार्मन युग का शेरिफ अत्यन्त क्रियाशील और व्यस्त व्यक्ति था। वह अपने शायर में राजा की जमीनों का लगान तथा वशवर्तियों (Vassals) द्वारा देयराशि को एकत्र करता था, न्यायालयों की देखभाल करता था, इनमें एकत्र होने वाली फीस और जुर्माने का हिसाब देता था। वह व्यवस्था बनाये रखने के लिए तथा अपराधियों की गिरफ्तारी के लिए उत्तरदायी था, आवश्यकता पड़ने पर वह राष्ट्रीय सेना को बुलाता था, उसका नेतृत्व करता था और इसको उचित रूप से सुसज्जित करने की देखभाल करता था। यदि ये न्यायालय और इनके शेरिफ पूर्ण रूप से सक्षम (Efficient) बनाकर रखे जा सकें तो राजा को सब से शक्तिशाली बैरन से भी डरने का कारण बहुत कम रह जाता था।

किन्तु एक खतरा यह था कि शेरिफ स्वयमेव स्वतन्त्र न हो जायँ क्योंकि उन्हें विशेष रूप से महत्वपूर्ण व्यक्ति बनना होता था और वे प्रायः बैरन होते थे और उस जिले में सम्पत्ति रखते थे, जहाँ इनका शासन होता था। इनको नियन्त्रण में कैसे रखा जाय? इस प्रयोजन के लिए शासनयन्त्र का विकास शनैः शनैः विशेष रूप से विजेता के पुत्र और उसके उत्तराधिकारियों के पाशविक और हिंसक किन्तु प्रबल शासक-विलियम रूफ़ुस (१०८७ से ११०० ई०) तथा शान्त और चालाक हेनरी प्रथम (११०० से ११३५ ई०) के शासन काल में हुआ। राजपरिषदों में अथवा Curia Regis में स्थायी एवं दक्ष अधिकारियों के ऐसे समूह का विकास हुआ जो राजा के साथ यात्रा करता था और जब राजा नार्मण्डी में होता था तो उसकी ओर से राज्य के प्रबन्ध का कार्य करता था। इनमें अधिकांश चर्च के व्यक्ति-बिशप अथवा साधारण पादरी (Clerici) होते थे। इस छोटे समूह में कई बड़े आफिसर न्यायाधीश (Justiciar), कोषाध्यक्ष, चान्सलर होते थे, यह समूह राजा के हितों को प्रभावित करने वाले मामलों तथा राजकीय आदेश (Writ) या आज्ञा से इनके समक्ष विशेष रूप से लाये जाने वाले की जाँच किया करते थे। किन्तु ये अधिकारी शेरिफों पर भी निगरानी रखते थे। साल में दो बार माइकेलमस (Mickaclmus) तथा ईस्टर के त्यौहारों के अवसर पर सब सैनिकों को इनके सामने उपस्थित होकर अपने शासन का पूरा हिसाब, विशेषतः अपने शायरों के राजस्व का ब्यौरा देना पड़ता था, राज्य के लेखकों (Clerks) द्वारा इनके आश्चर्यजनक रूप से विस्तृत लेखे (Records) रखे जाते थे। इनमें से कुछ अब तक पाये जाते हैं। हेनरी प्रथम के शासन में इन क्रियाशील और योग्य अधिकारियों ने कभी-कभी स्वयमेव शायरों में जाना और कई बार इनके न्यायालयों की कार्यवाहियों

में भाग लेना शुरू किया। इस प्रकार देश का सारा शासन राजा के दरबार के नियन्त्रण में लाया गया। यह उसकी प्रजा के लिए बड़ा लाभकर था। इसे इस प्रकार नियन्त्रण में लाना पुराने इंग्लिश काल में कभी सम्भव नहीं था।

विजय से पूर्व के राजाओं की एक अन्य पद्धति विलियम प्रथम को अनुकरणीय प्रतीत हुई। डेनों को धन देकर अपने देश पर आक्रमण से रोकने के लिए एथेलरैड (Ethelred The Redeless) ने सभी जमींदारों से डेनगैल्ड (Danegeld) नामक एक भारी टैक्स वसूल किया था, यह हाइड (Hide) अर्थात् लगभग १२० एकड़ भूमि के हिसाब से लगाया जाता था। विजेता को इसमें कोई कारण नही प्रतीत हुआ कि यदि देश डेनों को धन दे सकता था तो वह उसे क्यो न दे? अत: उसने यह आम व्यवस्था बनाये रखी, उसने तथा उसके उत्तराधिकारियों ने डेनगैल्ड टैक्स बहुधा लगाया। किन्तु इस बात का निश्चय करने के लिए कि पूरी राशि अदा की गयी है, उसने देश की सारी भूमि का सूक्ष्म तथा विस्तृत सर्वेक्षण कराया; इसमें यह बताया गया था कि इसका स्वामी कौन है, इसका मूल्य क्या है, इसमें क्या पूँजी है, इसमें विभिन्न प्रकार के कौन से असामी कार्य करते हैं। यह विलक्षण सर्वेक्षण अब तक पाया जाता है और इसे डूम्सडे बुक (Domesday Book) कहा जाता है। यह १०८६ ई० में पूरा हुआ। यह हमें इस काल के इंग्लैण्ड की स्थिति के बारे में जैसी विस्तृत सूचना देता है, वैसी सूचना किसी दूसरे देश के बारे में उपलब्ध नहीं होती[1] और इससे अनेक उपयोगी प्रयोजन सिद्ध हुए। यह अधिकारियों के लिए शैरिफों के तथा उनके हिसाबों की जाँच करने में अवश्यमेव बहुत अधिक सहायक रहा होगा। इस आश्चर्यजनक लेखे के अतिरिक्त हमें किसी अन्य वस्तु से उस व्यावसायिक और व्यवस्थित पद्धति का अधिक स्पष्ट ज्ञान नहीं होता जिस पद्धति से इन नार्मन राजाओं ने देश का शासन किया था।

यह कल्पना की जा सकती है कि नार्मन राजाओं द्वारा इस प्रकार किया जाने वाला ऐसा योग्य एवं प्रभावशाली नियन्त्रण उनके सामन्तों में लोकप्रिय नहीं हुआ होगा। विलियम तथा उसके बेटों को प्राय: विद्रोहों का सामना करना पड़ा। इनमें से कुछ बड़े प्रबल विद्रोह थे। इन सबको कठोरतापूर्वक प्राय: स्वतन्त्र व्यक्तियों की सेना की सहायता से दबा दिया गया।

इन विद्रोही सामन्तों के साथ एक बड़ी कठिनाई यह थी कि इनमें अधिकांश की जमीनें नार्मण्डी और इंग्लैण्ड दोनों स्थानों पर थी और जब वे एक देश में हरा दिये जाते थे तो वे दूसरे देश में शरण ले लेते थे। विलियम द्वितीय के तथा हेनरी प्रथम के राज्य-काल में इंग्लैण्ड और नार्मण्डी के सम्बन्धों में घनिष्ठता कम हो गयी। इन दोनों राजाओं ने एक प्रकार से राजगद्दी पर अन्यायपूर्ण ढंग से अधिकार प्राप्त किया था। इन्होंने नार्मण्डी के राज्य (Duchy) पर अधिकार रखने वाले अपने बड़े भाई राबर्ट को इंग्लैण्ड की गद्दी से हटा कर इंग्लिश राजमुकुट पर अधिकार कर लिया; इस प्रकार एक बड़े संकटपूर्ण समय में इंग्लैण्ड का राज्य और नार्मण्डी का राज्य या डची लगभग २० वर्ष

---

१. एटलस की प्लेट सं० १८ में देखिये।

उस समय तक पृथक् रहे जब तक कि हेनरी प्रथम ने नार्मण्डी पर आक्रमण कर के और उसे जीत कर (११०६ ई०) अपने बड़े भाई के प्रति किये गये अन्याय के कार्य को पूर्ण नहीं कर दिया। राबर्ट को गद्दी से हटाने के कारण सामन्तों को विलियम और हेनरी—दोनों के विरुद्ध विद्रोह करने का बहाना मिल गया। किन्तु इन दोनों चतुर राजाओं ने इस अवसर का उपयोग विद्रोहियों की इंग्लिश जागीरों को जब्त करने के रूप में किया और ये जागीरें ऐसे नये स्वामियों को दी गयीं जिनके पास नार्मण्डी में जमीनें नहीं थीं। हेनरी प्रथम ने नार्मण्डी की पुनर्विजय के बाद भी इस नीति को जारी रखा।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि राबर्ट के साथ यह व्यवहार अन्यायपूर्ण था, किन्तु यह इंग्लैण्ड के लिए बड़ा लाभदायक था। राबर्ट एक प्रथम श्रेणी का योद्धा और साहसिक कार्यों का प्रेमी था। किन्तु उसमें अपने पिता और भाइयों जैसी शासन करने की प्रतिभा नहीं थी। वह प्रथम तथा सबसे बड़े धर्मयुद्ध या क्रूसेड (१०९५ से १०९९) का एक प्रमुख नेता था। इसमें धार्मिक उत्साह से अनुप्राणित हो कर यूरोप के अत्यधिक वीर योद्धाओं के विशाल समूह बाल्कान प्रायद्वीप, लघु एशिया और सीरिया के तट के प्रदेशों में से होते हुए जेरूसलम को मुसलमानों की प्रभुता से मुक्त करने के लिए गये थे। इस वीरतापूर्ण साहसिक कार्य में फ्रांस और इटली के नार्मन लोगों ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। यह कार्य इतना सफल हुआ कि कुछ समय तक इसने पैलेस्टाइन में एक ईसाई राज्य तथा सीरिया के तट के साथ सामन्ती राज्यों की श्रृंखला स्थापित कर दी। किन्तु विलियम द्वितीय इतना अधिक चतुर था कि वह धार्मिक यात्राओं में फिरते रहने के लिए तैयार न था और वह इससे बहुत सन्तुष्ट था कि उसका खतरनाक भाई पूर्व की ओर चला जाय और अपने साथ अधिक-से-अधिक अपने उपद्रवी नार्मन और इंग्लैण्ड के अनुयायी सामन्तों को ले जाय। निस्सन्देह इंग्लैण्ड ने पश्चिमी यूरोप के अन्य बड़े राज्यों की अपेक्षा पहले क्रूसेड में कम महत्वपूर्ण भाग लिया और सम्भवतः इंग्लैण्ड के लिए इसका मुख्य महत्व यही था कि इसे सामन्तों के उपद्रव से कुछ सीमा तक मुक्ति मिली और इसे शासन की नयी नार्मन पद्धति को अच्छी तरह आरम्भ करने का अवसर मिला।

इन घटनाओं का एक अति महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि (नार्मन) विजय के बाद की दूसरी पीढ़ी में इंग्लिश सामन्तों का सम्बन्ध यूरोपीय महाद्वीपों से बहुत कम हो गया और इससे उनके लिए यह सुगम हो गया कि वे शनैः शनैः अपने को इंग्लिश व्यक्ति के रूप में सोचने लगें। यह प्रक्रिया जिस तेजी के साथ हुई उसका एक विचित्र उदाहरण है। विजय के बाद के आरम्भिक वर्षों में इंग्लिश व्यक्तियों द्वारा शान्त स्थानों में पकड़े गये इक्के-दुक्के नार्मन लोग प्रायः लुप्त हो जाते थे। इसे रोकने के लिए विजेता विलियम ने यह कानून बनाया कि जब कोई मृत शरीर पाया जावे और यह सिद्ध न किया जा सके कि यह किसी इंग्लिश व्यक्ति का शरीर है तो समूचे जिले (Hundred) को मुरड्रम (Murdrum) नामक अर्थदण्ड देना पड़ेगा। एक शताब्दी बाद यह अर्थदण्ड किसी भी ऐसे मृत शरीर के लिए लिया जाने लगा जिसके हत्यारे का पता न लग सके और इसका यह कारण बताया गया कि अब यह सम्भव नहीं है कि इंग्लिश-मैन और नार्मन में कोई भेद किया जा सके।

इससे हमें उस पद्धति का स्पष्ट ज्ञान होता है जिससे नार्मन लोगों के सुदृढ़, कठोर और क्षमतापूर्ण शासन ने असंगठित इंगलैण्ड का एक राष्ट्र के रूप में निर्माण किया।

नार्मन राजाओं ने इंग्लैण्ड की एक अन्य बड़ी सेवा की; उन्होंने चर्च का पुन: संगठन किया और ऐसा करने से उन्होंने इंग्लैण्ड को उस समय सारे यूरोप का रूपान्तर करने वाली, महान् बौद्धिक और आध्यात्मिक पुनरुज्जीवन करने वाली धारा में सम्मिलित किया। इस कार्य में मुख्य भाग नार्मण्डी से इस प्रयोजन के लिए लाये गये विद्वान् आर्कबिशप लानफ्रांक (Lanfranc) ने लिया। योग्य नार्मन बिशप नियुक्त किये गये और अनुशासनहीन अज्ञानी पादरियों को अधिक अच्छी व्यवस्था में लाया गया। नये शानदार चर्चों और गिरजा-घरों का निर्माण किया गया, मठों की स्थापना की गयी, उन्हें खूब दान दिया गया और इन मठों द्वारा खोले गये विद्यालयों में इंग्लैण्ड के युवक पश्चिम की सर्वोत्तम शिक्षा पाने लगे।

इस सुधार की एक मुख्य विशेषता चर्च को संसार से सर्वथा पृथक करने का प्रयास था, चूँकि विजेता विलियम एक सुधारक था, उसने पादरियों के अपराधों तथा साधारण जनता के आध्यात्मिक अपराधों को सुनने के लिए विशेष न्यायालय स्थापित किये। इस युग में चर्च के बड़े व्यक्तियों का यह लक्ष्य था कि चर्च को सांसारिक नियन्त्रण से सर्वथा स्वतन्त्र बना दिया जाय। किन्तु नार्मन राजा सुधार के लिए उत्साही होने पर भी इस बात की अनुमति देने को उद्यत नहीं थे, क्योंकि वे अपने प्रधान अधिकारियों को बिशपों और पादरियों में से ही नियुक्त किया करते थे। जब तक विजेता विलियम जीवित रहा उसने पादरियों पर बड़ा कठोर नियन्त्रण रखा। उसने उन्हें अपनी सहमति के बिना परिषदें करने या रोम को कोई अपीलें भेजने की अनुमति नही दी। किन्तु उसकी मृत्यु के बाद बर्बर विलियम द्वितीय और उसके भद्र एवं विद्वान् आर्कबिशप एन्सेल्म में एक विवाद उत्पन्न हो गया[१]। एन्सेल्म को शरण लेने के लिए फ्रांस भागना पड़ा और जब वह वहाँ था तो उसने वहाँ प्रचलित इन विचारों को ग्रहण किया कि सांसारिक व्यक्तियों द्वारा चर्च के पदों पर नियुक्तियाँ करने में (Investitures) क्या बुराइयाँ हैं। जब उसे हेनरी प्रथम ने वापस बुलाया तो इस प्रश्न पर एक नया विवाद उत्पन्न हुआ जो Investiture के प्रश्न के नाम से प्रसिद्ध है। यह वही प्रश्न था जिस पर ३० वर्ष से पोप और सम्राट् के बीच में एक तीव्र विवाद चल रहा था। इनके कारण सम्राट् पोपों को पदच्युत करने लगे और पोप सम्राटों को उनके पद से हटाने लगे और सारा यूरोप छिन्न-भिन्न हो गया। किन्तु तुल-नात्मक दृष्टि से इंग्लैण्ड में इससे बहुत कम झगड़ा उत्पन्न हुआ। ११०७ ई० में हेनरी प्रथम और एन्सेल्म एक तर्कसंगत समझौता करने में सफल हुए और यह लगभग उन्हीं आधारों पर था जिन पर १५ वर्ष बाद यूरोपियन विवाद का निर्णय किया गया और चर्च के व्यक्ति शासन की व्यवस्थित पद्धति के विकास में राजा के दायें हाथ बने रहे।

---

१. डीन चर्च ने Life of saint Anselm नाम की एक बहुत उत्तम और मनोरंजक जीवनी लिखी है, इसमें मध्यकालीन चर्च और इसकी समस्याओं का बहुत स्पष्ट वर्णन है।

इस प्रकार नार्मन राजाओं ने अनेक रीतियों से इंग्लिश राज्य को सुदृढ़ बनाने का गौरवपूर्ण कार्य किया, भले ही यह प्रायः बड़ा क्रूर और कठोर कार्य था। दुर्भाग्यवश उनका कार्य अभी तक इस प्रकार सुदृढ़ता से स्थापित नहीं किया गया था कि यह एक निर्बल शासक के समय भी अच्छी तरह कार्य कर सके। जब हेनरी प्रथम की मृत्यु ११३५ ई० में हुई तो राजगद्दी के उत्तराधिकार के लिए उसकी लड़की माटेल्डा और उसके भतीजे स्टीफेन में एक विवाद उत्पन्न हुआ और लगभग २० वर्ष तक इंग्लैण्ड में अव्यवस्था बनी रही। स्टीफेन चर्च के बड़े अधिकारियों के साथ लड़ता रहा और शासन-यन्त्र बिलकुल भंग हो गया। सामन्तों ने राजकीय नियन्त्रण को हटाने के लिए इस अवसर का लाभ उठाया, उन्होंने असंख्य ऐसे किले बनाये, जिनमें रहते हुए वे उसकी समूची सत्ता की अवहेलना करते थे। उन्होंने दुःखी किसानों पर प्रत्येक प्रकार का अत्याचार और उत्पीड़न किया। इस काल में यही बात उल्लेखनीय है कि इससे इंग्लिश लोगों को यह ज्ञान हुआ कि नार्मन राजाओं के सुदृढ़ शासन से उनको क्या लाभ हुआ है और उन्हें अब पहले की अपेक्षा इस चीज की अधिक स्पष्ट रूप से अनुमति हुई है कि सब मनुष्यों पर कानून को सुदृढ़ शासन द्वारा समान रूप से लागू करने का और इसे पालन करवाने का क्या महत्व है। पूर्ण अराजकता से सुरक्षा के रूप में निरंकुश शासन आवश्यक था और कोई भी इंग्लिश-मैन ऐसा नहीं था जिसने ११५४ ई० में स्टीफेन की मृत्यु पर ऐसे शासन की पुनः स्थापना का स्वागत न किया हो।

३. वेल्स तथा स्काटलैण्ड में नार्मन प्रभाव

नार्मन लोगों ने अपने संगठन की प्रतिभा से इंग्लैण्ड में ऐसा कार्य किया जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है; अब यह देखना शेष है कि ब्रिटेन के अन्य भागों में उनके प्रभाव का विस्तार किस प्रकार हुआ। उन्होंने आयरलैण्ड को बिलकुल स्पर्श नहीं किया, यह अगले युग के लिए बचा रहा, किन्तु इंग्लिश लोगों द्वारा कभी न जीते गये और विशुद्ध कैल्टिक रीति-रिवाज बनाये रखने वाले वेल्स में नार्मन राजाओं ने अपने अधिक साहसी सरदारों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे लड़ने के अपने उत्साह को वहाँ कार्यान्वित करें।

शनैः शनैः दक्षिणी और पूर्वी वेल्स जीते गये और उन्हें ऐसे अनेक किलों के निर्माण से सुरक्षित बनाया गया जिनमें से अनेक किले अब बचे हुए हैं।[1] इन मार्चर लार्डों (Marcher Lords) अर्थात् सीमान्त प्रदेशों (Marches) के स्वामियों को यह अनुमति दी गयी कि वे इंग्लैण्ड के अन्य सामन्तों की अपेक्षा अधिक मात्रा में स्वतन्त्रता का उपभोग करें और वे २०० वर्ष तक बड़े योद्धा और उपद्रवी व्यक्ति बने रहे।

स्काटलैण्ड में नार्मन प्रभाव इससे अधिक अप्रत्यक्ष रूप में पड़ा। १०१८ ई० में स्काट लोगों ने लोथियन को जीत लिया और इसे स्काटलैण्ड में सम्मिलित कर लिया। इस सम्मिलित प्रदेश में राज्य की नयी राजधानी एडिनबरा निश्चित की गयी और नार्मन तथा

१. ब्रिटिश द्वीप-समूह के किसी अन्य भाग की अपेक्षा दक्षिणी वेल्स में ये किले अधिक संख्या में हैं। एटलस की प्लेट सं० ३५ (ए) में वेल्स का मानचित्र देखिये।

इंग्लिश व्यक्ति अब इस राज्य में आने-जाने लगे और इसके जीवन में भाग ले कर उसे अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने लगे। उन्होंने दक्षिणी प्रदेश की कुछ संस्थाओं को यहाँ शुरू किया और विशेष रूप से स्काटलैण्ड के कैल्टिक चर्च का पुनः संगठन अधिक कठोर रीति से रोमन आधार पर करना प्रारम्भ किया। यह परिवर्तन डेविड प्रथम (११२४ से ११५३ ई०) के शासन काल में अधिक तीव्रता से होने लगा। यह परिवर्तन हेनरी प्रथम के शासन-काल के पिछले हिस्से और स्टीफेन के शासन-काल तक चलता रहा। डेविड की शिक्षा इंग्लैण्ड में हुई थी। उसने एक इंग्लिश कन्या से शादी की थी और उसके द्वारा इंग्लिश अर्ल के पद को विरासत में प्राप्त किया था। वह स्काटलैण्ड में लौटकर चर्च तथा राज्य को संगठित करने की नार्मन पद्धतियों का बड़ा प्रशंसक था। वह अपने साथ नार्मन सरदारों का एक विशाल समूह लाया और इन सरदारों को उसने स्काटलैण्ड की जागीरें प्रदान कीं। उसे स्काटलैण्ड का निर्माता कहा जाता है क्योंकि उसने नार्मन आधार पर अपने देश का क्षमतापूर्वक संगठन करना आरम्भ किया। कम-से-कम निचली भूमि वाले प्रदेशों में भूमिधारण की कैल्टिक पद्धतियों को सामन्ती पद्धतियों में बदल दिया गया। जन जातियों के सरदार अर्ल बन गये। नार्मन सरदार देश के विभिन्न भागों में बस गये। इंग्लैण्ड के नार्मन राजाओं की क्यूरिया रीजिस (Curia Regis) की भाँति स्काटलैण्ड में भी एक राजपरिषद् थी, राजा के नाम से शैरिफ लोग कानून की व्यवस्था करते थे और सामन्तों से उसकी सत्ता को बनाये रखने का प्रयत्न करते थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि चर्च का सुधार किया गया, उसमें पुनरुज्जीवन का संचार किया गया और बहुत से मठ बनाये गये। होली रूड (Holly rood) में लरोज तथा अन्य स्थानों पर इनके सुन्दर अवशेष अब भी स्काटलैण्ड में विद्यमान सबसे अधिक गौरवशाली चर्च की इमारतें हैं। हाईलैण्ड के अधिकांश जंगली प्रदेश पर इन परिवर्तनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, किन्तु नीची भूमि वाले प्रदेशों का शीघ्र ही रूपान्तर हो गया और यह सम्भव है कि १२वीं सदी के मध्य तक इंग्लिश भाषा फोर्थ के दक्षिण में स्काटलैण्ड के अधिकांश भागों में बोली जाती थी, यद्यपि लोथियन के अतिरिक्त अन्य स्थानों की जनता नस्ल की दृष्टि से लगभग विशुद्ध कैल्टिक बनी रही। इस प्रकार इंग्लैण्ड में अपना प्रधान कार्य करने वाली नार्मन लोगों की शक्ति ने ग्रेट ब्रिटेन के दूसरे भागों में भी एकीकरण उत्पन्न करने की प्रक्रिया आरम्भ की।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The best general accounts of the period will be found in **H. W. C. Davis,** England under the Normans and Angevins, and **G. B. Adams,** England from the Norman Conquest to the death of John. See also **Haskins,** The Normans in European History; and, for constitutional developments, **Stubbs,** Constitutional History and Select Charters. **Pollock and Maitland,** History of English Law, Vol. VI; **Stenton,**

इस प्रकार नार्मन राजाओं ने अनेक रीतियों से इंग्लिश राज्य को सुदृढ़ बनाने का गौरवपूर्ण कार्य किया, भले ही यह प्रायः बड़ा क्रूर और कठोर कार्य था। दुर्भाग्यवश उनका कार्य अभी तक इस प्रकार सुदृढ़ता से स्थापित नहीं किया गया था कि यह एक निर्बल शासक के समय भी अच्छी तरह कार्य कर सके। जब हेनरी प्रथम की मृत्यु ११३५ ई० में हुई तो राजगद्दी के उत्तराधिकार के लिए उसकी लड़की माटेल्डा और उसके भतीजे स्टीफेन में एक विवाद उत्पन्न हुआ और लगभग २० वर्ष तक इंग्लैण्ड में अव्यवस्था बनी रही। स्टीफेन चर्च के बड़े अधिकारियों के साथ लड़ता रहा और शासन-यन्त्र बिलकुल भंग हो गया। सामन्तों ने राजकीय नियन्त्रण को हटाने के लिए इस अवसर का लाभ उठाया, उन्होंने असंख्य ऐसे किले बनाये, जिनमें रहते हुए वे उसकी समूची सत्ता की अवहेलना करते थे। उन्होंने दुःखी किसानों पर प्रत्येक प्रकार का अत्याचार और उत्पीड़न किया। इस काल में यही बात उल्लेखनीय है कि इससे इंग्लिश लोगों को यह ज्ञान हुआ कि नार्मन राजाओं के सुदृढ़ शासन से उनको क्या लाभ हुआ है और उन्हें अब पहले की अपेक्षा इस चीज की अधिक स्पष्ट रूप से अनुमति हुई है कि सब मनुष्यों पर कानून को सुदृढ़ शासन द्वारा समान रूप से लागू करने का और इसे पालन करवाने का क्या महत्व है। पूर्ण अराजकता से सुरक्षा के रूप में निरंकुश शासन आवश्यक था और कोई भी इंग्लिश-मैन ऐसा नहीं था जिसने ११५४ ई० में स्टीफेन की मृत्यु पर ऐसे शासन की पुनः स्थापना का स्वागत न किया हो।

३. वेल्स तथा स्काटलैण्ड में नार्मन प्रभाव

नार्मन लोगों ने अपने संगठन की प्रतिभा से इंग्लैण्ड में ऐसा कार्य किया जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है; अब यह देखना शेष है कि ब्रिटेन के अन्य भागों में उनके प्रभाव का विस्तार किस प्रकार हुआ। उन्होंने आयरलैण्ड को बिलकुल स्पर्श नहीं किया, यह अगले युग के लिए बचा रहा, किन्तु इंग्लिश लोगों द्वारा कभी न जीते गये और विशुद्ध कैल्टिक रीति-रिवाज बनाये रखने वाले वेल्स में नार्मन राजाओं ने अपने अधिक साहसी सरदारों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे लड़ने के अपने उत्साह को वहाँ कार्यान्वित करें।

शनैः शनैः दक्षिणी और पूर्वी वेल्स जीते गये और उन्हें ऐसे अनेक किलों के निर्माण से सुरक्षित बनाया गया जिनमें से अनेक किले अब बचे हुए हैं।[1] इन मार्चर लार्डों (Marcher Lords) अर्थात् सीमान्त प्रदेशों (Marches) के स्वामियों को यह अनुमति दी गयी कि वे इंग्लैण्ड के अन्य सामन्तों की अपेक्षा अधिक मात्रा में स्वतन्त्रता का उपभोग करें और वे २०० वर्ष तक बड़े योद्धा और उपद्रवी व्यक्ति बने रहे।

स्काटलैण्ड में नार्मन प्रभाव इससे अधिक अप्रत्यक्ष रूप में पड़ा। १०१८ ई० में स्काट लोगों ने लोथियन को जीत लिया और इसे स्काटलैण्ड में सम्मिलित कर लिया। इस सम्मिलित प्रदेश में राज्य की नयी राजधानी एडिनबरा निश्चित की गयी और नार्मन तथा

---

१. ब्रिटिश द्वीप-समूह के किसी अन्य भाग की अपेक्षा दक्षिणी वेल्स में ये किले अधिक संख्या में हैं। एटलस की प्लेट सं० ३५ (ए) में वेल्स का मानचित्र देखिये।

इंग्लिश व्यक्ति अब इस राज्य में आने-जाने लगे और इसके जीवन में भाग ले कर उसे अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने लगे। उन्होंने दक्षिणी प्रदेश की कुछ संस्थाओं को यहाँ शुरू किया और विशेष रूप से स्काटलैण्ड के कैल्टिक चर्च का पुनः संगठन अधिक कठोर रीति से रोमन आधार पर करना प्रारम्भ किया। यह परिवर्तन डेविड प्रथम (११२४ से ११५३ ई०) के शासन काल में अधिक तीव्रता से होने लगा। यह परिवर्तन हेनरी प्रथम के शासन-काल के पिछले हिस्से और स्टीफेन के शासन-काल तक चलता रहा। डेविड की शिक्षा इंग्लैण्ड में हुई थी। उसने एक इंग्लिश कन्या से शादी की थी और उसके द्वारा इंग्लिश अर्ल के पद को विरासत में प्राप्त किया था। वह स्काटलैण्ड में लौटकर चर्च तथा राज्य को संगठित करने की नार्मन पद्धतियों का बड़ा प्रशंसक था। वह अपने साथ नार्मन सरदारों का एक विशाल समूह लाया और इन सरदारों को उसने स्काटलैण्ड की जागीरें प्रदान कीं। उसे स्काटलैण्ड का निर्माता कहा जाता है क्योंकि उसने नार्मन आधार पर अपने देश का क्षमतापूर्वक संगठन करना आरम्भ किया। कम-से-कम निचली भूमि वाले प्रदेशों में भूमिधारण की कैल्टिक पद्धतियों को सामन्ती पद्धतियों में बदल दिया गया। जन जातियों के सरदार अर्ल बन गये। नार्मन सरदार देश के विभिन्न भागों में बस गये। इंग्लैण्ड के नार्मन राजाओं की क्यूरिया रीजिस (Curia Regis) की भाँति स्काटलैण्ड में भी एक राजपरिषद् थी, राजा के नाम से शैरिफ लोग कानून की व्यवस्था करते थे और सामन्तों से उसकी सत्ता को बनाये रखने का प्रयत्न करते थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि चर्च का सुधार किया गया, उसमें पुनरुज्जीवन का संचार किया गया और बहुत से मठ बनाये गये। होली रूड (Holly rood) में लरोज तथा अन्य स्थानों पर इनके सुन्दर अवशेष अब भी स्काटलैण्ड में विद्यमान सबसे अधिक गौरवशाली चर्च की इमारतें हैं। हाईलैण्ड के अधिकांश जंगली प्रदेश पर इन परिवर्तनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, किन्तु नीची भूमि वाले प्रदेशों का शीघ्र ही रूपान्तर हो गया और यह सम्भव है कि १२वीं सदी के मध्य तक इंग्लिश भाषा फोर्थ के दक्षिण में स्काटलैण्ड के अधिकांश भागों में बोली जाती थी, यद्यपि लोथियन के अतिरिक्त अन्य स्थानों की जनता नस्ल की दृष्टि से लगभग विशुद्ध कैल्टिक बनी रही। इस प्रकार इंग्लैण्ड में अपना प्रधान कार्य करने वाली नार्मन लोगों की शक्ति ने ग्रेट ब्रिटेन के दूसरे भागों में भी एकीकरण उत्पन्न करने की प्रक्रिया आरम्भ की।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The best general accounts of the period will be found in **H. W. C. Davis,** England under the Normans and Angevins, and **G. B. Adams,** England from the Norman Conquest to the death of John. See also **Haskins,** The Normans in European History; and, for constitutional developments, **Stubbs,** Constitutional History and Select Charters. **Pollock and Maitland,** History of English Law, Vol. VI; **Stenton,**

First Century of English Feudalism; **Knowles,** Monastic Order in England; **Brooke,** English Church and the Papacy; **White,** Making of the English Constitution. A selection of contemporary history of Europe. **Fletcher,** The Making of Western Europe, 1000-1190 A. D.; **Tout,** The Empire and the Papacy; for the Crusades, **Archer and Kingsford,** Crusades in the Story of the Nations Series, and the article 'Crusades' in the Encyclopadia Britannica.

• •

५

कानून के शासन की स्थापना

(११५४ से १२१६ ई०)

हेनरी द्वितीय ११५४ ; रिचर्ड प्रथम ११८६ ; जॉन ११९९

१. आन्जेविन साम्राज्य और १२वीं शताब्दी का यूरोप

यदि स्टीफन की अव्यवस्था जारी रहती तो नार्मन लोगों का सारा कार्य मलियामेट हो जाता। सौभाग्यवश ११५४ ई० में इंग्लिश राजगद्दी पर एक ऐसा राजा बैठा जिसमें सभी नार्मन लोगों की या उनसे भी अधिक शासन शक्ति थी। समूचे इंग्लिश इतिहास में कोई राजा ऐसा नहीं है जिसके लिए इंग्लिश जनता हेनरी द्वितीय की अपेक्षा अधिक ऋणी हो।[१] वह हेनरी प्रथम की लड़की माटिल्डा का बेटा तथा स्टीफन का प्रतिद्वन्द्वी था। चूंकि हेनरी प्रथम ने एक इंग्लिश राजकुमारी से शादी की थी, अतः हेनरी द्वितीय की धमनियों में अल्फ्रेड का रक्त था। हेनरी का पिता माटिल्डा का द्वितीय पति था और आंजौ का शक्तिशाली योद्धा काउन्ट था, अतः उसने जिस वंश की स्थापना की वह आन्जेविन (Anjevin) वंश के नाम से प्रसिद्ध है। इस वंश को प्लैण्टेजेनेट (Plantagenet) का भी नाम दिया जाता है। हेनरी का पिता अपने राजचिह्न के रूप में पीले फूलों वाली और रेतीले तटों पर उगने वाली एक झाड़ी (Broom-sprig) या प्लेंटेजिनिस्टा (Planta-

---

१. श्रीमती जे० आर० ग्रीन द्वारा लिखित हेनरी द्वितीय की जीवनी १२ इंग्लिश राजनीतिज्ञों की पुस्तक माला में छपी है। एक अधिक आधुनिक पुस्तक "साल्जमैन का हेनरी द्वितीय" है।

बड़े-से-बड़े राजाओं को भी बाधित करे कि वे उस नैतिक नियम का सम्मान करें जिससे सब मनुष्य बँधे हुए हैं।

किन्तु चर्च का प्रभाव प्रधान रूप से पोप की सत्ता पर अवलम्बित नहीं था, यद्यपि उस समय की स्थिति में पोप की सत्ता के समर्थन के बिना सब देशों में चर्च के व्यक्तियों को वह स्वतन्त्रता और प्रभाव न प्राप्त होता जो उन्हें प्राप्त था। इस समय चर्च ने अनेक महान और पवित्र व्यक्ति पैदा किये थे और इसके सेवक उस युग में विकसित होने वाली विद्या के भण्डार और उसके प्रसारक थे। ये तथ्य चर्च के लाभकारी उत्कर्ष का प्रधान स्रोत थे। इस युग के आरम्भिक भाग में महान मठ सम्भवतः अपने सर्वोत्तम रूप में थे। हेनरी द्वितीय के गद्दी पर बैठने से पहली पीढ़ी में सिस्टर्शियन नामक भिक्षु सम्प्रदाय का एक मठाधीश-क्लेअरबॉक्स का सेन्ट बरनार्ड[1] अपनी वाग्मिता और सच्चाई के बल से यूरोप का नैतिक अधिनायक बन गया और उसने फ्रांस और जर्मनी के योद्धाओं को द्वितीय क्रूसेड में इसलिए भेजा कि वे प्रथम युद्ध में जीते गये पवित्र स्थानों की रक्षा करें क्योंकि इस समय इन पर तुर्कों का खतरा बढ़ रहा था। द्वितीय क्रूसेड में प्रत्यक्ष रूप से इंग्लैण्ड ने कोई भाग नहीं लिया था क्योंकि स्टीफन की अभागी लड़ाइयों के कारण इंग्लैण्ड के टुकड़े-टुकड़े हो चुके थे। किन्तु अन्य प्रदेशों की भाँति इंग्लैण्ड ईसाई भिक्षुओं के उत्साह और जोश से परिचित था।[2] सेंट बरनार्ड के सम्प्रदाय के सिस्टर्शियन भिक्षु विशेष रूप से अनेक मठों को देश के अधिक जंगली हिस्सों में बना रहे थे और वे यार्कशायर के उजाड़ ऊँचे प्रदेशों को उन भेड़ों की ऊन के लिए प्रसिद्ध बना रहे थे जिन भेड़ों को वह पाला करते थे। आजकल हम भी जिन सुन्दर गिरजाघरों के अवशेषों की प्रशंसा करते हैं वे इस युग में आरम्भ हुए, क्योंकि यह युग उस शैली की महान वास्तुकला का युग है जिस शैली को आरम्भिक इंग्लिश शैली (Early English) का नाम दिया जाता है और जो अतीव सुन्दर है।

चर्च के उत्कर्ष के समय में इसकी एक सबसे बड़ी सेवा विश्वविद्यालयों की स्थापना को प्रोत्साहन देना था। इनके लगभग सभी अध्यापक और विद्यार्थी चर्च के व्यक्ति थे। पेरिस में पहले से ही कुछ विद्यालय कार्य कर रहे थे। ये शीघ्र ही पश्चिमी यूरोप के मातृ-विश्वविद्यालय के रूप में विकसित होने वाले थे और यहाँ प्रसिद्ध गुरुओं से अध्ययन करने के लिए इंग्लैण्ड तथा अन्य देशों से विद्यार्थी बड़े समूहों में आ रहे थे। इंग्लैण्ड में भी इस समय विश्वविद्यालय आरम्भ हो रहे थे। ऑक्सफोर्ड में हेनरी प्रथम के समय से कुछ शिक्षण कार्य चल रहा था। फ्रांस के राजा के साथ हेनरी द्वितीय की लड़ाइयों के कारण पेरिस से बहुत से इंग्लिश विद्यार्थी स्वदेश वापस लौट आये; इससे इंग्लैण्ड में विश्वविद्यालय आरम्भ होने का

---

१. काटर मारिसन ने लाइफ ऑफ सैन्ट बरनार्ड में न केवल इस महापुरुष का उत्तम वर्णन किया है, अपितु इस युग का भी प्रशंसनीय चित्र खींचा है।

२. कार्लाइल के Past and Present का प्रथम भाग एक बड़े बैनेडिक्टाइन एबे में इस युग के एक मठाधीश के जीवन और कार्यों का मनोरंजक विवरण प्रस्तुत करता है।

कार्य सुदृढ़ हुआ। वह युग निश्चित रूप से कोई निष्फल युग नहीं था जिसने विद्या को बनाये रखने और विस्तार करने के लिए बनाये जाने वाले निगमों (Corporations) के रूप में विश्वविद्यालयों का आविष्कार किया।

इसके साथ ही इन विश्वविद्यालयों में तथा बोलाग्ना (Bolagna) के महान इटैलियन विश्वविद्यालय में मनुष्य न केवल धार्मिक विषयों का, अपितु कानून के शास्त्र का भी अध्ययन करने लगे थे। वे बड़ी उत्सुकता से रोमन सम्राट् जस्टीनियन के कानूनों की उस संहिता (Code) का अध्ययन कर रहे थे जो पुराने रोम के दीवानी कानून के नाम से प्रसिद्ध, तर्कपूर्ण और सुस्पष्ट कानूनों का उत्कृष्टतम प्रतिपादन था। वे चर्च के धर्मनियम (Canon law) की पद्धति का भी अधिक स्पष्ट रूप में प्रतिपादन करने लगे थे, और इन सब गुरुओं का प्रभाव पश्चिमी यूरोप के प्रमुख राज्यों में कानून की व्यवस्थित और न्यायपूर्ण पद्धतियों के निर्माण में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुआ।

बौद्धिक जीवन केवल विश्वविद्यालयों में ही क्रियाशील नहीं था, योद्धावर्ग भी कविता और संगीत का आनन्द लेने लगा था एवं प्रेम और वीरता का नवीन साहित्य गायकों की मातृ-भाषाओं में विकसित होने लगा था। यह विशेष रूप से फ्रांस में हुआ जहाँ यह चारणों (Troubadours) का युग था और जर्मनी में भी इस समय गायक (Minnesingers) अपने कार्य में बहुत व्यस्त थे। हेनरी द्वितीय का योद्धा बेटा रिचर्ड स्वयमेव चारणों तथा कवियों और भाटों (Minstrels) का मित्र था। इसी समय कवियों की प्रतियोगिता की पद्धति शुरू हुई। इसका प्रतिपादन १३वीं शताब्दी की जर्मन दन्तकथाओं में प्रसिद्ध चारण टैनहौजर (Tannhauser) की रचना में है और महान सम्राट् फ्रेडरिक बार्बरोसा स्वयमेव कवियों से घिरा रहता था।

अन्त में, यह काल उल्लेखनीय व्यापारिक पुनरुज्जीवन का युग था। प्रथम क्रूसेड द्वारा यूरोप पूर्वी देशों (East) की विलास वस्तुओं के सम्पर्क में आया था और इटली के व्यापारी समूचे यूरोप में पूर्वी देशों की वस्तुओं को फैलाने और अपने नगरों को समृद्ध करने में लग गये। उत्तर में ल्यूबैक और कोलोन के जर्मन व्यापारी भी इस कार्य में समान रूप से व्यस्त थे; फ्लैन्डर्स के कारीगर उन महान उद्योगों का निर्माण कर रहे थे जिन्होंने घैन्ट, याइपर्स और ब्रूझ के नगरों को धनी और विख्यात बना दिया था। इन सब बातों में इंग्लैण्ड ने बहुत कम हिस्सा लिया था, उसका व्यापार मुख्य रूप से विदेशियों के हाथ में था। किन्तु विदेशी व्यापारी अब उसकी ऊन खरीदने लगे थे और विनचैस्टर और स्टूरब्रिज जैसे प्रमुख मेलों में सामान लाने लगे थे।

इंग्लैण्ड के लिए यूरोप के नवीन जीवन के साथ घनिष्ठ संपर्क में आ जाना एक बड़ी बात थी। यह इस समय हेनरी द्वितीय के विस्तृत साम्राज्य के साथ, दूर तक फैले हुए स्वार्थों के साथ संबद्ध हो जाने से हो रही थी। इंग्लिश व्यापार इस समय छोटे पैमाने पर था, किन्तु हेनरी के विस्तृत प्रदेशों में एक इंग्लिश व्यापारी स्वतन्त्रतापूर्वक जा सकता था। वह यह देख सकता था कि यूरोप के अधिक समृद्ध व्यापारी अपना संगठन किस प्रकार बनाते हैं और चूँकि यह वह समय था जब कि व्यापारी और नगरनिवासी सर्वत्र अपने लिए विभिन्न प्रकार

की स्वतन्त्रताएँ प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे थे, अतः इस क्षेत्र में बहुत कुछ सीखा जा सकता था।

हेनरी द्वितीय के समय में यूरोप की क्या राजनीति थी और उसने इसमें क्या भाग लिया, इसका यहाँ वर्णन करना हमारे लिए सम्भव नहीं है। वस्तुतः यूरोप में उस समय चार सांसारिक (Secular) शक्तियाँ थीं और इनके साथ बड़ी संख्या में अर्ध-स्वतन्त्र सामन्ती राजा थे। उनमें महानतम साम्राज्य फ्रेडरिक बार्बरोसा का था, यह हेनरी (११५२-११९० ई०) का समकालीन था। वह जर्मनी, बर्गण्डी (दक्षिण-पूर्वी फ्रांस) और उत्तरी इटली का राजा था, यद्यपि अन्तिम दो राज्यों में उसकी आज्ञा का कभी अच्छी तरह पालन नहीं किया गया। सम्राट् के रूप में सिद्धान्ततः वह रोमन सम्राटों का वंशज था और उसका यह स्वप्न था कि वह उस शक्ति व प्रभुता को पुनः प्राप्त करे (इस स्वप्न को रोमन कानून के विद्यार्थियों ने प्रोत्साहित किया था), किन्तु वह ऐसा करने में कभी समर्थ न हो सका, क्योंकि उसके अपने ही राज्य में उसे पोप तथा इटैलियन नगरों से—जो उसके लिए अत्यन्त शक्तिशाली थे, संघर्ष करना पड़ा। किन्तु फिर भी वह आश्चर्यजनक शक्तिशाली राजा था तथा वीरता का आदर्श था।

पश्चिमी यूरोप की दूसरी महान शक्ति हेनरी द्वितीय का साम्राज्य था। तीसरी शक्ति दक्षिण इटली (नेपल्स) और सिसली का रोमन साम्राज्य था, यह एक छोटा राज्य होते हुए भी अत्यन्त सम्पन्न तथा शक्तिशाली था एवं यूरोप में एक सबसे अच्छी तरह संगठित तथा अनुशासित प्रदेश के रूप में प्रसिद्ध था। यह असम्भव नहीं कि हेनरी द्वितीय ने शासन के कुछ तरीके नार्मन शासन से ही सीखे हों। इस शताब्दी के अन्त में नार्मन राज्य विवाह द्वारा फ्रेडरिक बार्बरोसा के पुत्र हेनरी षष्ठ के हाथ में आ गया। यह वही सम्राट् था, जिसने रिचर्ड प्रथम को पकड़ कर जेल में डाल दिया था। सम्राटों के शक्तिशाली बन जाने के तथ्य ने पोप को बुरी तरह चौंका दिया। यदि हेनरी षष्ठ की कम उम्र में मृत्यु न हो जाती तो वह और उसके वंशज यूरोप पर छा जाते तथा उनका विश्व-साम्राज्य का स्वप्न सत्य हो जाता। उसकी असामयिक मृत्यु के बाद पोप और साम्राज्य के बीच अन्तिम तथा अत्यन्त निराशा-जनक संघर्ष हुआ जिसका अन्त साम्राज्य के तथा जर्मन राज्य के विनाश में हुआ।

पश्चिम की चौथी तथा अधिक महत्वपूर्ण शक्ति फ्रांस थी। आधा से अधिक फ्रांस हेनरी द्वितीय के आधिपत्य में था। हेनरी इतना अधिक शक्तिशाली सामन्त (Vassal) था कि वह स्वप्न में भी अपने नाममात्र के प्रभु के अधीन होने की कल्पना नहीं कर सकता था। वर्तमान स्विटजरलैण्ड का समस्त पश्चिमी भाग तथा वर्तमान फ्रांस का दक्षिण-पूर्वी भाग—रोन (Rhone) नदी का प्रदेश बर्गण्डी राज्य में सम्मिलित थे तथा फ्रेडरिक बार्बरोसा के अधीन थे। फ्रांस के शेष भाग में वहाँ के सामन्त (Feudatories) इतने स्वतन्त्र थे कि फ्रांस के सम्राट् का वास्तविक अधिकार प्रत्यक्ष रूप में पेरिस के उत्तर-दक्षिण के संकीर्ण क्षेत्र ईल द फ्रांस (Ile de France) तक सीमित रह गया। यदि इस युग में फ्रांस वस्तुतः यूरोप का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग बना हुआ था, तो इसका कारण उसके राजाओं की प्रभुता नहीं थी, अपितु इसका कारण उसका इस युग के महानतम आन्दोलन का स्रोत बनना था। एक ओर फ्रेडरिक

बार्बरोसा का साम्राज्य था, दूसरी ओर हेनरी द्वितीय का साम्राज्य; चक्की के इन दोनों—ऊपर तथा नीचे के पाटों के बीच में फ्रांस कुचला जायगा, ऐसा प्रतीत होता था। फिर भी फ्रेंच राजाओं की शक्ति शीघ्र ही बढ़ चली। फ्रांस की राजनीति का प्रथम निर्माता सम्राट् फिलिप आगस्टस हेनरी द्वितीय के समय में सिंहासन पर बैठा। वह रिचर्ड प्रथम तथा जॉन का शाश्वत प्रतिद्वन्द्वी तथा शत्रु था। क्योंकि फ्रांस की महत्ता इंग्लैण्ड के राजाओं से फ्रेंच प्रदेशों को छीनने से हो सकती थी, अतः फ्रांस तथा इंग्लैण्ड के बीच संघर्ष अवश्यम्भावी था। ऐंग्लो-फ्रेंच युद्धों की लम्बी शृंखला जिससे मध्यकाल का शेष इतिहास भरा पड़ा है तथा यह दुर्भाग्यपूर्ण परम्परा कि इंग्लैण्ड और फ्रांस शाश्वत और स्वाभाविक शत्रु हैं, हेनरी द्वितीय के साम्राज्य के कारण ही बहुत कुछ उत्पन्न हुई।

वह विस्तृत प्रदेश भी जो ११५४ ई० में हेनरी द्वितीय के अधिकार में था उसकी महत्वाकांक्षाओं को सन्तुष्ट नहीं कर सका। नार्थ वेल्स के पहाड़ों में उसने एक सेना का नेतृत्व किया और यहाँ के राजाओं को कर (Homage) देने के लिए बाध्य किया। उसकी सेना में वेल्स के धनुर्धारी निरन्तर युद्ध करते थे। ११७४ ई० में उसने स्काटलैण्ड के सिंह (The Lion of Scotland) कहलाने वाले विलियम को बाध्य किया कि वह उसे अपना सामन्ती स्वामी (Feudal Superior) अत्यन्त स्पष्ट रूप से स्वीकार करे। इस स्वामित्व को उसने ऐसा रूप दिया, जैसा इससे पूर्व कभी नहीं दिया गया था। हेनरी के राज्यकाल में ही यह हुआ कि इंग्लिश लोग प्रथम बार आयर्लैण्ड की विजय कर पाये। ११६९ ई० में दक्षिण वेल्स के आधे नार्मन और आधे वैल्श सरदार (Barons) आयरिश जनजातियों के राज्यों के साथ रक्तपातपूर्ण युद्धों में भाग लेने के लिए लाये गये। अगले वर्ष एक महान विजेता पेमब्रोक के अर्ल स्ट्रांगबो के नाम से प्रसिद्ध महान दक्ष एवं साहसी नेता रिचर्ड ने राजा की आज्ञा से अपने लिए एक प्रदेश जीतने के लिये चैनल को पार किया। ११७१ ई० में हेनरी स्वयं सेना लेकर डबलिन गया जहाँ उसने आयरिश सरदारों तथा नार्मन साहसिकों से राज्य-कर लिया। उसने अपने नाम से शासन करने के लिए एक जस्टीशियर नियुक्त किया तथा आयर्लैण्ड के लार्ड की उपाधि धारण की। उस उपाधि को उसके वंशज हेनरी अष्टम तक धारण करते रहे। इसके बाद उसने इस उपाधि को आयर्लैण्ड के लार्ड (Lord of Ireland) के स्थान पर आयर्लैण्ड के राजा (King of Ireland) के रूप में परिवर्तित कर दिया। वास्तव में आयर्लैण्ड की विजय प्रभावशाली नहीं थी। नार्मन बैरन निश्चित रूप से आयर्लैण्ड के कई देहाती भागों में बस गये थे, उन्होंने कई सामन्ती राज्य स्थापित किये। ये राज्य कैल्टिक जाति के लोगों के साथ युद्ध करते रहे। इन बैरनों ने इंग्लिश राजा की आज्ञा का अधिक पालन नहीं किया। यह एक दुखद बात थी कि एक बार प्रारम्भ की गयी विजय इतनी अच्छी तरह पूर्ण न हो पायी, जैसी नार्मन लोगों ने इंग्लैण्ड की पूर्ण विजय की थी। इसने आयर्लैण्ड को कई भावी कष्टों से बचा लिया होता। परन्तु इस अपूर्ण विजय के परिणामस्वरूप इस देश में भेदभावों की वृद्धि हुई, धार्मिक शत्रुता के बीज बो दिये गये, इनका परिणाम बहुत ही दुखदायी रहा। फिर भी हेनरी द्वितीय ने आयर्लैण्ड पर अपने पूर्वजों की अपेक्षा भिन्न रूप में अधिकार जमाये रखा। उसे पहला ही ऐसा राजा कहा जा सकता है जिसने समस्त द्वीप समूह पर शासन

किया। इस प्रकार उसने द्वीपसमूहों की एकता के दावे और परम्परा की स्थापना की और इसका प्रभाव चिरस्थायी बना रहा।

२. हेनरी द्वितीय का संगठन कार्य

किन्तु हेनरी द्वितीय का सब से बड़ा कार्य विजय करने में नहीं, अपितु इंग्लैण्ड के शासन को सुदृढ़ बनाने में है। फ्रांस में विद्यमान उसके प्रदेशों ने उसे उसकी इंग्लिश भूमि की अपेक्षा अधिक कष्ट दिये। उसे अपने शासन का अधिक समय विदेश में ही देना पड़ा। उसने अपने शासन काल का थोड़ा भाग ही इंग्लैण्ड में बिताया, किन्तु इन थोड़े वर्षों में वह प्रशंसनीय परिणामों को प्राप्त करने में समर्थ हो सका। इसका कारण यह था कि वह भयंकर, प्रचण्ड तथा अथक शक्ति के साथ कार्य करता था। उसका क्रियाशील मस्तिष्क अपनी सत्ता को सुदृढ़ बनाने के लिए नये-नये उपाय सर्वदा खोजता रहता था। निस्सन्देह, पहले वह इंग्लैण्ड को मुख्य रूप से ऐसा स्रोत समझता था, जहाँ से धन खींचकर यूरोपीय महाद्वीप में अपनी शक्ति का विस्तार किया जा सकता था। उसने देखा कि राज्य को लाभप्रद बनाने का उत्तम मार्ग उसे व्यवस्थित तथा समृद्धशाली बनाना है। उसने इसके लिए जितना अधिक कार्य किया, इसे उतना ही अधिक कठिन तथा आकर्षक पाया। उसकी प्रमुख भावना सुशासन करने की थी और इस भावना का मूल कारण सुशासन की इच्छा ही नहीं, अपितु सुशासन के कारण उसे प्राप्त होने वाले अधिक धन और शक्ति की लालसा भी थी। शनैः शनैः अथक परिवर्तनों तथा परीक्षणों के बाद वह एक ऐसी पद्धति व्यवहार में लाया, जिसने इंग्लैण्ड को यूरोप का सर्वाधिक न्यायपूर्ण, व्यवस्थित एवं सुशासित देश बना दिया। वह पद्धति इतनी अच्छी थी कि वह अपने निर्माता के सुदृढ़ शासन के हट जाने पर भी स्वयमेव कार्य करने में समर्थ थी।

उसने अपने कार्य का श्रीगणेश जो स्टीफन के राज्य में जोर पकड़ने वाले सामन्ती उपद्रवों को दबाने से किया, उसने अत्याचार का केन्द्र बने हुए असंख्य दुर्गों के उन्मूलन का कार्य आरम्भ किया। हेनरी प्रथम के शासन-यन्त्र को उसने पुनः स्थापित किया; इसकी क्षमता बहुत अधिक बढ़ायी। उसने कुछ व्यक्तियों को चुन कर तथा उन्हें प्रशिक्षण देकर इस प्रकार के योग्य प्रशासकों का समूह तैयार किया कि शासन-चक्र देश से स्वामी की लम्बी अनुपस्थितियों में भी निर्विघ्न रीति से चलता रहा। अपने पूर्ववर्तियों की भाँति उसे अपने उन सरदारों के कभी-कभी किये जाने वाले विद्रोहों का सामना करना पड़ता था जो सरदार व्यवस्था में रखा जाना पसन्द नहीं करते थे। किन्तु उसने इन सब को उस समय तक कुचले रखा जब तक कि उसके शासन काल की समाप्ति पर उसके अपने पुत्र विद्रोह में सम्मिलित न हो गये तथा महान राजा का हृदय क्रोध और दुख से विक्षुब्ध न हो उठा (११८९)।

नार्मन राजाओं की भाँति हेनरी द्वितीय ने यह अनुभव किया कि राजा को सामन्ती स्वतन्त्रता के संकट से मुक्त करने का प्रधान उपाय शायर-कोर्ट (Shire court) तथा फर्ड (Fyrd) या राष्ट्रीय सेना की पुरानी इंग्लिश संस्था में है, किन्तु उसने इन संस्थाओं को इतना

बार्बरोसा का साम्राज्य था, दूसरी ओर हेनरी द्वितीय का साम्राज्य; चक्की के इन दोनों—ऊपर तथा नीचे के पाटों के बीच में फ्रांस कुचला जायगा, ऐसा प्रतीत होता था। फिर भी फ्रेंच राजाओं की शक्ति शीघ्र ही बढ़ चली। फ्रांस की राजनीति का प्रथम निर्माता सम्राट् फिलिप आगस्टस हेनरी द्वितीय के समय में सिंहासन पर बैठा। वह रिचर्ड प्रथम तथा जॉन का शाश्वत प्रतिद्वन्द्वी तथा शत्रु था। क्योंकि फ्रांस की महत्ता इंग्लैण्ड के राजाओं से फ्रेंच प्रदेशों को छीनने से हो सकती थी, अतः फ्रांस तथा इंग्लैण्ड के बीच संघर्ष अवश्यम्भावी था। ऐंग्लो-फ्रेंच युद्धों की लम्बी शृंखला जिससे मध्यकाल का शेष इतिहास भरा पड़ा है तथा यह दुर्भाग्यपूर्ण परम्परा कि इंग्लैण्ड और फ्रांस शाश्वत और स्वाभाविक शत्रु हैं, हेनरी द्वितीय के साम्राज्य के कारण ही बहुत कुछ उत्पन्न हुई।

वह विस्तृत प्रदेश भी जो ११५४ ई० में हेनरी द्वितीय के अधिकार में था उसकी [illegible] को सन्तुष्ट नहीं कर सका। नार्थ वेल्स के पहाड़ों में उसने एक सेना का नेतृत्व किया और यहाँ के राजाओं को कर (Homage) देने के लिए बाध्य किया। उसकी सेना में वेल्स के धनुर्धारी निरन्तर युद्ध करते थे। ११७४ ई० में उसने स्काटलैण्ड के सिंह (The Lion of Scotland) कहलाने वाले विलियम को बाध्य किया कि वह उसे अपना सामन्ती स्वामी (Feudal Superior) अत्यन्त स्पष्ट रूप से स्वीकार करे। इस स्वामित्व को उसने ऐसा रूप दिया, जैसा इससे पूर्व कभी नहीं दिया गया था। हेनरी के राज्यकाल में ही यह हुआ कि इंग्लिश लोग प्रथम बार आयर्लैण्ड की विजय कर पाये। ११६९ ई० में दक्षिण वेल्स के आधे नार्मन और आधे वैल्श सरदार (Barons) आयरिश जनजातियों के राज्यों के साथ रक्तपातपूर्ण युद्धों में भाग लेने के लिए लाये गये। अगले वर्ष एक महान विजेता पेमब्रोक के अर्ल स्ट्रांगबो के नाम से प्रसिद्ध महान दक्ष एवं साहसी नेता रिचर्ड ने राजा की आज्ञा से अपने लिए एक प्रदेश जीतने के लिये चैनल को पार किया। ११७१ ई० में हेनरी स्वयं सेना लेकर डबलिन गया जहाँ उसने आयरिश सरदारों तथा नार्मन साहसिकों से राज्य-कर लिया। उसने अपने नाम से शासन करने के लिए एक जस्टीशियर नियुक्त किया तथा आयर्लैण्ड के लार्ड की उपाधि धारण की। उस उपाधि को उसके वंशज हेनरी अष्टम तक धारण करते रहे। इसके बाद उसने इस उपाधि को आयर्लैण्ड के लार्ड (Lord of Ireland) के स्थान पर आयर्लैण्ड के राजा (King of Ireland) के रूप में परिवर्तित कर दिया। वास्तव में आयर्लैण्ड की विजय प्रभावशाली नहीं थी। नार्मन बैरन निश्चित रूप से आयर्लैण्ड के कई देहाती भागों में बस गये थे, उन्होंने कई सामन्ती राज्य स्थापित किये। ये राज्य कैल्टिक जाति के लोगों के साथ युद्ध करते रहे। इन बैरनों ने इंग्लिश राजा की आज्ञा का अधिक पालन नहीं किया। यह एक दुखद बात थी कि एक बार प्रारम्भ की गयी विजय इतनी अच्छी तरह पूर्ण न हो पायी, जैसी नार्मन लोगों ने इंग्लैण्ड की पूर्ण विजय की थी। इसने आयर्लैण्ड को कई भावी कष्टों से बचा लिया होता। परन्तु इस अपूर्ण विजय के परिणामस्वरूप इस देश में भेदभावों की वृद्धि हुई, धार्मिक शत्रुता के बीज बो दिये गये, इनका परिणाम बहुत ही दुखदायी रहा। फिर भी हेनरी द्वितीय ने आयर्लैण्ड पर अपने पूर्वजों की अपेक्षा भिन्न रूप में अधिकार जमाये रखा। उसे पहला ही ऐसा राजा कहा जा सकता है जिसने समस्त द्वीप समूह पर शासन

किया। इस प्रकार उसने द्वीपसमूहों की एकता के दावे और परम्परा की स्थापना की और इसका प्रभाव चिरस्थायी बना रहा।

२. हेनरी द्वितीय का संगठन कार्य

किन्तु हेनरी द्वितीय का सब से बड़ा कार्य विजय करने में नहीं, अपितु इंग्लैण्ड के शासन को सुदृढ़ बनाने में है। फ्रांस में विद्यमान उसके प्रदेशों ने उसे उसकी इंग्लिश भूमि की अपेक्षा अधिक कष्ट दिये। उसे अपने शासन का अधिक समय विदेश में ही देना पड़ा। उसने अपने शासन काल का थोड़ा भाग ही इंग्लैण्ड में बिताया, किन्तु इन थोड़े वर्षों में वह प्रशंसनीय परिणामों को प्राप्त करने में समर्थ हो सका। इसका कारण यह था कि वह भयंकर, प्रचण्ड तथा अथक शक्ति के साथ कार्य करता था। उसका क्रियाशील मस्तिष्क अपनी सत्ता को सुदृढ़ बनाने के लिए नये-नये उपाय सर्वदा खोजता रहता था। निस्सन्देह, पहले वह इंग्लैण्ड को मुख्य रूप से ऐसा स्रोत समझता था, जहाँ से धन खींचकर यूरोपीय महाद्वीप में अपनी शक्ति का विस्तार किया जा सकता था। उसने देखा कि राज्य को लाभप्रद बनाने का उत्तम मार्ग उसे व्यवस्थित तथा समृद्धशाली बनाना है। उसने इसके लिए जितना अधिक कार्य किया, इसे उतना ही अधिक कठिन तथा आकर्षक पाया। उसकी प्रमुख भावना सुशासन करने की थी और इस भावना का मूल कारण सुशासन की इच्छा ही नहीं, अपितु सुशासन के कारण उसे प्राप्त होने वाले अधिक धन और शक्ति की लालसा भी थी। शनैः शनैः अथक परिवर्तनों तथा परीक्षणों के बाद वह एक ऐसी पद्धति व्यवहार में लाया, जिसने इंग्लैण्ड को यूरोप का सर्वाधिक न्यायपूर्ण, व्यवस्थित एवं सुशासित देश बना दिया। वह पद्धति इतनी अच्छी थी कि वह अपने निर्माता के सुदृढ़ शासन के हट जाने पर भी स्वयमेव कार्य करने में समर्थ थी।

उसने अपने कार्य का श्रीगणेश जो स्टीफन के राज्य में जोर पकड़ने वाले सामन्ती उपद्रवों को दबाने से किया, उसने अत्याचार का केन्द्र बने हुए असंख्य दुर्गों के उन्मूलन का कार्य आरम्भ किया। हेनरी प्रथम के शासन-यन्त्र को उसने पुनः स्थापित किया; इसकी क्षमता बहुत अधिक बढ़ायी। उसने कुछ व्यक्तियों को चुन कर तथा उन्हें प्रशिक्षण देकर इस प्रकार के योग्य प्रशासकों का समूह तैयार किया कि शासन-चक्र देश से स्वामी की लम्बी अनुपस्थितियों में भी निर्विघ्न रीति से चलता रहा। अपने पूर्ववर्तियों की भाँति उसे अपने उन सरदारों के कभी-कभी किये जाने वाले विद्रोहों का सामना करना पड़ता था जो सरदार व्यवस्था में रखा जाना पसन्द नहीं करते थे। किन्तु उसने इन सब को उस समय तक कुचले रखा जब तक कि उसके शासन काल की समाप्ति पर उसके अपने पुत्र विद्रोह में सम्मिलित न हो गये तथा महान राजा का हृदय क्रोध और दुख से विक्षुब्ध न हो उठा (११८९)।

नार्मन राजाओं की भाँति हेनरी द्वितीय ने यह अनुभव किया कि राजा को सामन्ती स्वतन्त्रता के संकट से मुक्त करने का प्रधान उपाय शायर-कोर्ट (Shire court) तथा फर्ड (Fyrd) या राष्ट्रीय सेना की पुरानी इंग्लिश संस्था में है, किन्तु उसने इन संस्थाओं को इतना

अधिक सुदृढ़ और विकसित किया कि ये लगभग नयी वस्तुएँ हो गयीं। शैरिफ लोगों पर सन्देह करते हुए एक बार उसने उनके दुष्कर्मों की लम्बी जाँच करने के बाद उनमें से प्रत्येक को पदच्चुत कर दिया। उसने अपने दरबार के विश्वासपात्र अधिकारियों को नियमित रूप से दौरे पर देश के सभी शायर न्यायालयों में भेजने की पद्धति आरम्भ की। यहाँ ये अधिकारी न केवल शैरिफों का निरीक्षण करते थे, अपितु महत्वपूर्ण मामलों की जाँच अपने हाथों में ले लेते थे। इस प्रकार क्लेरेन्डन (११६६ ई०) और नार्थम्पटन (११७६ ई०) में दीवानी तथा फौजदारी मामलों पर विचार के लिए दौरा जजों द्वारा न्यायालय लगाने की व्यवस्था या ऐसाइज़िज (Assizes) की स्थापना से उसने उस पद्धति का संगठन किया जो अब तक प्रचलित है, और जिससे राज्य के न्यायाधीश प्रत्येक व्यक्ति तक राजा का न्याय पहुँचाने के लिए नियमित रूप से दौरे पर जाते रहते हैं।

इस पद्धति का एक परिणाम उल्लेखनीय है। इस समय तक शायर न्यायालयों में लागू किये जाने वाले कानून मुख्य रूप से स्थानीय रीति-रिवाज थे। ये कानून एक जिले से दूसरे जिले में काफी बदलते रहते थे। अब प्रशिक्षित वकीलों द्वारा लागू किये जाने से इनमें एकरूपता आने लगी और इंग्लैण्ड का साधारण कानून (Common Law) उत्पन्न हुआ। यह कानूनों का लिखित संग्रह न था। यह प्राचीन रिवाजों पर आधारित था, किन्तु इसका विकास और स्वरूप उन प्रशिक्षित न्यायाधीशों के निर्णयों पर प्रधान रूप से आश्रित था, जिन्होंने अपना कार्य हेनरी द्वितीय के शासन काल में आरम्भ किया था।

राजा ने न्यायालयों की पद्धति में भी अनेक उल्लेखनीय सुधार किये। इनमें सब से बड़ा सुधार जूरी पद्धति (Jury System) का उपयोग था। इसे उसने नार्मन लोगों से ग्रहण किया था। उसने इसका इतनी अधिक मात्रा तक विकास किया और इतने अधिक विभिन्न आयोजनों के लिए इसका प्रयोग किया कि उसे लगभग इसका आविष्कारक कहा जा सकता है। इसका एक उल्लेखनीय उपयोग इस प्रकार हुआ कि स्टीफन के शासन-काल में समृद्ध होने वाले अनुशासनहीन व्यक्तियों से मुक्ति पाने की इच्छा से हेनरी ने ११६६ ई० में प्रत्येक जिले के संदिग्ध व्यक्तियों की सूची तैयार करने का निश्चय किया। विजेता विलियम ने अपने डूम्सडे (Doomsday) की जाँच स्वतन्त्र व्यक्तियों के समूहों को इकट्ठा बुला कर और जागीरों के बारे में तथा पड़ोसी स्थानों के रिवाजों के बारे में प्रश्न पूछ कर की थी। हेनरी ने यह निश्चय किया कि वह नयी समस्या में इस पद्धति का उपयोग करेगा। उसने शेरिफों को यह आदेश दिया कि वे गाँवों में, जिले के उप-विभागों में (Hundred)[1] और शायरों में सच बोलने की शपथ खाने वाले व्यक्तियों को एकत्र करे और उन्हें अपने जिले के ऐसी सभी व्यक्तियों की सूची तैयार करने का आदेश दे जो उनके जिले में प्रसिद्ध डाकू और हत्यारे हों। इस प्रकार सूची में लिखे जाने वाले व्यक्तियों की उस समय के रिवाजों के अनुसार दैवी पद्धति

१. जिले के उप-विभाग को Hundred इसलिए कहा जाता था कि सम्भवत: आरम्भ में यह १०० हाइड (Hides) जितना विस्तृत प्रदेश होता था। हाइड लगभग १२० एकड़ का क्षेत्र होता है।

से जाँच होती थी । इसका यह आशय था कि उन्हें अपनी बाँह खौलते पानी में डालनी पड़ती थी, या लाल गर्म लोहे को पकड़ना पड़ता था और यदि उनका घाव एक निश्चित समय तक ठीक हो जाता था तो वे निर्दोष समझे जाते थे, अथवा उन्हें बाँधकर ठण्डे पानी के गढ़ों में फेंक दिया जाता था; यदि वे ऊपर नहीं आ पाते थे तो वे निर्दोष समझे जाते थे अन्यथा वे दोषी होते थे और उन्हें उचित रीति से दण्ड दिया जाता था। किन्तु हेनरी ने यह अनुभव किया कि यह बहुत संतोषजनक पद्धति नहीं है । उसने यह व्यवस्था की कि दैवी परीक्षा द्वारा मुक्त किये जाने पर भी उन सभी कुख्यात अपराधियों को देश निर्वासन का दंड दिया जाना चाहिए जिनके नाम जूरियों द्वारा भेजे गये हों । वस्तुतः इसका आशय यह था कि स्वरूपतः नहीं तो वस्तुतः उन पर अभियोग चलाया गया था और अपने पड़ोसियों के निर्णय से उन्हें दंडित किया गया था । फौजदारी के मामलों में यह जूरी पद्धति का वास्तविक श्रीगणेश था, यद्यपि इस पद्धति को वर्तमान समय तक पहुँचने में विकास की लम्बी प्रक्रिया में हो कर गुजरना था ।

इस परीक्षण से जूरी पद्धति का महत्व सिद्ध करने के बाद हेनरी ने इसका उपयोग अन्य अनेक प्रयोजनों के लिए शुरू किया । उदाहरणार्थ, भूमि के स्वामित्व अथवा अधिकारों से सम्बन्ध रखने वाले मामलों पर अब तक लार्डों के न्यायालयों में विचार होता था । इनका समाधान न होने पर अन्त में इसका निर्णय लड़ाई से किया जाता था और इसे लड़ाई की दैवी परीक्षा (Ordeal by battle) का नाम दिया जाता था । स्पष्टतः यह पद्धति असन्तोषजनक थी । ग्रैन्ड और पैटी ऐसाइज़िज (Grand and Petty Assizes) के नाम से प्रसिद्ध पद्धति द्वारा हेनरी ने तथ्यों से परिचित पड़ोसियों की जूरी द्वारा ऐसे प्रश्नों के निर्णय करने की अनेक पद्धतियों का विकास किया । प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति को बाधित रूप से अपने धन के अनुरूप हथियारों के साथ फर्ड (Fyrd) या सेना में लड़ने के लिए सन्नद्ध रहना पड़ता था । हथियारों के एसाइज (Assize of Arms) में हेनरी ने बड़ी सावधानी से प्रत्येक वर्ग के लिए आवश्यक हथियारों का नियन्त्रण किया । किन्तु इस बात का निर्णय कौन करता कि कौन-सा व्यक्ति किस वर्ग में सम्मिलित किया जायेगा ? यदि इसका निर्णय शैरिफ पर छोड़ा जाता तो उसे घूंस दी जा सकती थी । अतः पुनः जूरी का प्रयोग किया गया, तथा 'पड़ोसियों' को यह बताना होता था कि प्रत्येक व्यक्ति अपने को किस प्रकार के हथियारों से सुसज्जित करेगा ।

जूरी पद्धति के इन विकासों से न्याय का अत्यधिक संरक्षण हुआ और यह पुरानी पद्धति में बहुत बड़ा सुधार था, किन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि इन सुधारों का यह आशय था कि राजा योद्धाओं और सादे स्वतन्त्र व्यक्तियों आदि साधारण जनता की सहायता इस कार्य के लिए पाना चाहता था कि न्याय हो तथा राज्य का प्रबन्ध उत्तम रीति से हो । प्रायः यह कहा जाता है कि सब इंग्लिश रिवाजों में अत्यधिक विशेषता रखने वाली स्वशासन की पद्धति का जन्म पुरानी इंग्लिश जन-सभाओं (Folkmoot) और जिलासभाओं (Shiremoots) में हुआ, जिनमें स्वतन्त्र व्यक्ति रिवाजों की घोषणा किया करते थे । किन्तु वस्तुतः बहुत बड़े समय से इसका महत्व समाप्त हो गया था । सम्भवतः यह पद्धति इंग्लैण्ड में उसी तरह समाप्त हो जाती, जैसे यह यूरोप महाद्वीप के जर्मन लोगों में बिल्कुल नष्ट हो

अधिक सुदृढ़ और विकसित किया कि ये लगभग नयी वस्तुएँ हो गयीं। शैरिफ लोगों पर सन्देह करते हुए एक बार उसने उनके दुष्कर्मों की लम्बी जाँच करने के बाद उनमें से प्रत्येक को पदच्युत कर दिया। उसने अपने दरबार के विश्वासपात्र अधिकारियों को नियमित रूप से दौरे पर देश के सभी शायर न्यायालयों में भेजने की पद्धति आरम्भ की। यहाँ ये अधिकारी न केवल शैरिफों का निरीक्षण करते थे, अपितु महत्वपूर्ण मामलों की जाँच अपने हाथों में ले लेते थे। इस प्रकार क्लेरेन्डन (११६६ ई०) और नार्थम्पटन (११७६ ई०) में दीवानी तथा फौजदारी मामलों पर विचार के लिए दौरा जजों द्वारा न्यायालय लगाने की व्यवस्था या ऐसाइज़िज (Assizes) की स्थापना से उसने उस पद्धति का संगठन किया जो अब तक प्रचलित है, और जिससे राज्य के न्यायाधीश प्रत्येक व्यक्ति तक राजा का न्याय पहुँचाने के लिए नियमित रूप से दौरे पर जाते रहते हैं।

इस पद्धति का एक परिणाम उल्लेखनीय है। इस समय तक शायर न्यायालयों में लागू किये जाने वाले कानून मुख्य रूप से स्थानीय रीति-रिवाज थे। ये कानून एक जिले से दूसरे जिले में काफी बदलते रहते थे। अब प्रशिक्षित वकीलों द्वारा लागू किये जाने से इनमें एकरूपता आने लगी और इंग्लैण्ड का साधारण कानून (Common Law) उत्पन्न हुआ। यह कानूनों का लिखित संग्रह न था। यह प्राचीन रिवाजों पर आधारित था, किन्तु इसका विकास और स्वरूप उन प्रशिक्षित न्यायाधीशों के निर्णयों पर प्रधान रूप से आश्रित था, जिन्होंने अपना कार्य हेनरी द्वितीय के शासन काल में आरम्भ किया था।

राजा ने न्यायालयों की पद्धति में भी अनेक उल्लेखनीय सुधार किये। इनमें सब से बड़ा सुधार ज़्यूरी पद्धति (Jury System) का उपयोग था। इसे उसने नार्मन लोगों से ग्रहण किया था। उसने इसका इतनी अधिक मात्रा तक विकास किया और इतने अधिक विभिन्न आयोजनों के लिए इसका प्रयोग किया कि उसे लगभग इसका आविष्कारक कहा जा सकता है। इसका एक उल्लेखनीय उपयोग इस प्रकार हुआ कि स्टीफन के शासन-काल में समृद्ध होने वाले अनुशासनहीन व्यक्तियों से मुक्ति पाने की इच्छा से हेनरी ने ११६६ ई० में प्रत्येक जिले के संदिग्ध व्यक्तियों की सूची तैयार करने का निश्चय किया। विजेता विलियम ने अपने डूम्सडे (Doomsday) की जाँच स्वतन्त्र व्यक्तियों के समूहों को इकट्ठा बुला कर और जागीरों के बारे में तथा पड़ोसी स्थानों के रिवाजों के बारे में प्रश्न पूछ कर की थी। हेनरी ने यह निश्चय किया कि वह नयी समस्या में इस पद्धति का उपयोग करेगा। उसने शेरिफों को यह आदेश दिया कि वे गाँवों में, जिले के उप-विभागों में (Hundred)[1] और शायरों में सच बोलने की शपथ खाने वाले व्यक्तियों को एकत्र करे और उन्हें अपने जिले के ऐसी सभी व्यक्तियों की सूची तैयार करने का आदेश दे जो उनके जिले में प्रसिद्ध डाकू और हत्यारे हों। इस प्रकार सूची में लिखे जाने वाले व्यक्तियों की उस समय के रिवाजों के अनुसार दैवी पद्धति

१. जिले के उप-विभाग को Hundred इसलिए कहा जाता था कि सम्भवत: आरम्भ में यह १०० हाइड (Hides) जितना विस्तृत प्रदेश होता था। हाइड लगभग १२० एकड़ का क्षेत्र होता है।

[जाँच होती थी। इसका यह आशय था कि उन्हें अपनी बाँह खौलते पानी में डालनी पड़ती [ी, या लाल गर्म लोहे को पकड़ना पड़ता था और यदि उनका घाव एक निश्चित समय तक [ठी]क हो जाता था तो वे निर्दोष समझे जाते थे, अथवा उन्हें बाँधकर ठण्डे पानी के गढ़ों में [फें]क दिया जाता था; यदि वे ऊपर नहीं आ पाते थे तो वे निर्दोष समझे जाते थे अन्यथा वे [द]ोषी होते थे और उन्हें उचित रीति से दण्ड दिया जाता था। किन्तु हेनरी ने यह अनुभव [कि]या कि यह बहुत संतोषजनक पद्धति नहीं है। उसने यह व्यवस्था की कि दैवी परीक्षा द्वारा [मु]क्त किये जाने पर भी उन सभी कुख्यात अपराधियों को देश निर्वासन का दंड दिया जाना [चा]हिए जिनके नाम जूरियों द्वारा भेजे गये हों। वस्तुतः इसका आशय यह था कि स्वरूपतः नहीं तो वस्तुतः उन पर अभियोग चलाया गया था और अपने पड़ोसियों के निर्णय से उन्हें दंडित किया गया था। फौजदारी के मामलों में यह जूरी पद्धति का वास्तविक श्रीगणेश था, यद्यपि इस पद्धति को वर्तमान समय तक पहुँचने में विकास की लम्बी प्रक्रिया में हो कर गुजरना था।

इस परीक्षण से जूरी पद्धति का महत्व सिद्ध करने के बाद हेनरी ने इसका उपयोग अन्य अनेक प्रयोजनों के लिए शुरू किया। उदाहरणार्थ, भूमि के स्वामित्व अथवा अधिकारों से सम्बन्ध रखने वाले मामलों पर अब तक लार्डों के न्यायालयों में विचार होता था। इनका समाधान न होने पर अन्त में इसका निर्णय लड़ाई से किया जाता था और इसे लड़ाई की दैवी परीक्षा (Ordeal by battle) का नाम दिया जाता था। स्पष्टतः यह पद्धति असन्तोषजनक थी। ग्रैन्ड और पैटी ऐसाइज़िज (Grand and Petty Assizes) के नाम से प्रसिद्ध पद्धति द्वारा हेनरी ने तथ्यों से परिचित पड़ोसियों की जूरी द्वारा ऐसे प्रश्नों के निर्णय करने की अनेक पद्धतियों का विकास किया। प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति को बाधित रूप से अपने धन के अनुरूप हथियारों के साथ फर्ड (Fyrd) या सेना में लड़ने के लिए सन्नद्ध रहना पड़ता था। हथियारों के एसाइज (Assize of Arms) में हेनरी ने बड़ी सावधानी से प्रत्येक वर्ग के लिए आवश्यक हथियारों का नियन्त्रण किया। किन्तु इस बात का निर्णय कौन करता कि कौन-सा व्यक्ति किस वर्ग में सम्मिलित किया जायेगा? यदि इसका निर्णय शैरिफ पर छोड़ा जाता तो उसे घूंस दी जा सकती थी। अतः पुनः जूरी का प्रयोग किया गया, तथा 'पड़ोसियों' को यह बताना होता था कि प्रत्येक व्यक्ति अपने को किस प्रकार के हथियारों से सुसज्जित करेगा।

जूरी पद्धति के इन विकासों से न्याय का अत्यधिक संरक्षण हुआ और यह पुरानी पद्धति में बहुत बड़ा सुधार था, किन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि इन सुधारों का यह आशय था कि राजा योद्धाओं और सादे स्वतन्त्र व्यक्तियों आदि साधारण जनता की सहायता इस कार्य के लिए पाना चाहता था कि न्याय हो तथा राज्य का प्रबन्ध उत्तम रीति से हो। प्रायः यह कहा जाता है कि सब इंग्लिश रिवाजों में अत्यधिक विशेषता रखने वाली स्वशासन की पद्धति का जन्म पुरानी इंग्लिश जन-सभाओं (Folkmoot) और जिलासभाओं (Shiremoots) में हुआ, जिनमें स्वतन्त्र व्यक्ति रिवाजों की घोषणा किया करते थे। किन्तु वस्तुतः बहुत बड़े समय से इसका महत्व समाप्त हो गया था। सम्भवतः यह पद्धति इंग्लैण्ड में उसी तरह समाप्त हो जाती, जैसे यह यूरोप महाद्वीप के जर्मन लोगों में बिल्कुल नष्ट हो

गयी थी। यह कहना अत्यधिक सत्य है कि न्याय प्राप्त करने में सामान्य व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करने वाली जूरी पद्धति का प्रयोग अंग्रेजों में स्वशासन का वास्तविक श्रीगणेश था।

हेनरी के कार्य के एक अन्य पहलू का भी वर्णन किया जाना चाहिए, क्योंकि इसके कारण उसके शासन का सबसे प्रसिद्धतम संघर्ष शुरू हुआ। यह चर्च के साथ विवाद था और इसका प्रतिनिधित्व आर्कबिशप थामस बैकेट ने किया। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, चर्च यह दावा करता था कि इसके पादरियों पर उसका बिल्कुल स्वतन्त्र क्षेत्राधिकार है और वह राज्य के नियन्त्रण से सर्वथा मुक्त है। इससे प्रायः अनेक गम्भीर बुराइयाँ उत्पन्न होती थीं, क्योंकि चर्च के न्यायालय किसी पादरी को उसके धर्माधिकार से वंचित करने की अपेक्षा अधिक गम्भीर दण्ड नहीं दे सकते थे। इस प्रकार एक हत्यारा भी दण्ड से बच सकता था बशर्ते कि वह यह दावा करे कि वह किसी ईसाई धार्मिक सम्प्रदाय में दीक्षित हो चुका है। यह हेनरी की न्याय की भावना को ठेस पहुँचाने वाला था। विजेता विलियम ने चर्च को स्वयं पृथक् न्यायालय स्थापित करने की अनुमति दी थी; किन्तु यह केवल पादरियों द्वारा चर्च सम्बन्धी अपराधों के लिए ही थी, गम्भीर अपराधों के लिए नहीं। हेनरी ने इस विषय में बिशपों और सरदारों की यह सम्मति ली थी कि इंग्लिश रिवाज के अनुसार पादरियों पर गम्भीर अपराधों के लिए राजा के न्यायालयों में अभियोग चलाया जा सकता है। अतः हेनरी ने यह आदेश दिया कि पादरियों द्वारा किये जाने वाले सब अपराधों का दण्ड राजा के न्यायालयों द्वारा उस समय दिया जाये, जब अपराधी के मामले पर चर्च के न्यायालय जाँच कर लें और उसे धार्मिक अधिकारों से वंचित (Unfrocked) कर दें। इसे राजा का पहले विश्वासपात्र मित्र और परामर्शदाता बना रहने वाला बैकेट यह समझता था कि यह चर्च के विशेषाधिकारों पर आक्रमण है और इस विषय पर एक तीव्र वादविवाद उत्पन्न हो गया। दुर्भाग्यवश बैकेट की हत्या उसके अपने ही कैन्टरबरी के गिरजाघर में कर दी गयी। इसे करने वाला योद्धाओं का समूह यह समझता था कि इससे उन्होंने राजा की सेवा की है। शायद उन्होंने राजा की इससे बड़ी कोई हानि नहीं की थी। बैकेट सन्त बन गया। हेनरी अत्यन्त निकृष्ट कोटि का अपराधी समझा गया और उसे हत्या किये गये आर्कबिशप की समाधि के सम्मुख प्रायश्चित्त करना पड़ा, उपर्युक्त बहुमूल्य विशेषाधिकार चर्च को समर्पित करना पड़ा और पादरियों (Clerks) अर्थात् लैटिन पढ़ सकने वाले व्यक्तियों को यह अधिकार मिल गया कि वे एक हत्या ऐसी कर सकते हैं जिसका कोई दण्ड उन्हें नहीं मिलेगा। इस विशेषाधिकार को पादरी होने का लाभ (Benefit of Clergy) कहा जाता था। वास्तव में यह अत्यन्त परिष्कृत रूप में १९वीं शताब्दी तक बचा रहा। इसका दावा करने का सरल उपाय यह था कि लैटिन भाषा में लिखे गये किसी गीत के एक पद्य को सुनाया जाय। इस पद्य को 'कण्ठपद्य' (Neckverse) कहा जाता था क्योंकि यह एक व्यक्ति के कण्ठ को फाँसी के फन्दे से बचाने में समर्थ था।

हेनरी द्वितीय निरंकुश शासक था, इसका यह आशय था कि उसके समूचे राज्य में उसकी एकमात्र इच्छा ही कानून थी। वह अपनी इच्छा से अपने न्यायाधीशों और मन्त्रियों

को नियुक्त तथा पदच्युत कर सकता था; वह जिन करों को चाहे लगा सकता था, जैसे कि ११८६ ई० में उसने यह माँग की कि प्रत्येक व्यक्ति उसके प्रस्तावित धर्मयुद्ध का व्यय अदा करने के लिए अपनी सम्पत्ति का दशांश प्रदान करे। वह जो कानून चाहता था, उन्हें बना सकता था और इसकी कोई साक्षी नहीं है कि उसे इस विषय में अत्यधिक औपचारिक रीति के अतिरिक्त अपने सदस्यों की महासभा से कोई परामर्श लेना पड़ता था, यद्यपि वह निश्चित रूप से यह पसन्द करता था कि महान परिवर्तनों को क्रिया रूप में परिणत करने से पहले वह इनके विषय में अपने सरदारों के साथ विचार विमर्श करे। वह इंग्लैण्ड का निरंकुश स्वामी था, उस पर एकमात्र अंकुश विद्रोह का भय था। किन्तु वह ऐसा निरंकुश शासक था जो व्यवस्था पसन्द करता था और जिसने न्याय को प्राप्त करना अधिक आसान बना दिया था। उसकी निरंकुश सत्ता का प्रयोग ऐसे निरंकुश नियमानुसार होता था जिन्हें मनुष्य समझ सकते थे। उसके नौकर बड़े योग्य और सुशिक्षित व्यक्ति थे और उन्हें अपना कार्य इन नियमों के अनुसार करना पड़ता था। उनके द्वारा कानून (Law) की ऐसी परम्परा स्थापित की गयी जो बहुमूल्य वरदान थी। किसी एक अन्य व्यक्ति की अपेक्षा निरंकुश होते हुए भी हेनरी द्वितीय इंग्लैण्ड में कानून के राज्य (Reign of Law) का स्रष्टा था; कानून या शासन एकमात्र ऐसी सम्भव नींव थी जिस पर राजनीतिक स्वतन्त्रता सुरक्षित रूप से खड़ी हो सकती थी। जब तक मनुष्य स्वाभाविक रूप से कानूनों का पालन करना और जानना नहीं सीख लेते तब तक वे कानूनों को बनाने और नियन्त्रण करने में सहयोग देने के कार्य को उपयोगी रूप से आरम्भ नहीं कर सकते। अतः हेनरी द्वितीय का निरंकुश शासन इससे पूर्ववर्ती नार्मन लोगों के निरंकुश शासन की भाँति इंग्लिश लोगों को स्वशासन की शिक्षा देने की एक आवश्यक और महत्वपूर्ण अवस्था थी।

३. रिचर्ड प्रथम और जॉन—मैग्नाकार्टा प्राप्त करना

हेनरी द्वितीय का पुत्र और उत्तराधिकारी रिचर्ड प्रथम (११८९ से ११९९) अपने परिवार की भाँति बहुत योग्य पुरुष था। वह एक कवि और गायक था, किन्तु वह अपने पिता की भाँति राजनीति में कुशल नहीं था। अधिक से अधिक वह एक उत्कृष्ट योद्धा था, वह अपने युग का सब से अधिक शक्तिशाली, अन्याय को दूर करने वाला, अपनी शूरता को प्रदर्शित करने वाले कामों की खोज करने वाला साहसी योद्धा (Knight-errant) तथा युद्ध में उत्तम नेता था। उसे युद्ध में अतिशय आनन्द आता था; यही उसे पेलेस्टाइन खींच कर ले गया, जहाँ उसने ईसामसीह की पवित्र समाधि के लिए अरबों के साथ संघर्ष में शौर्य के वे आश्चर्यजनक कार्य किये, जिन्हें तृतीय धर्मयुद्ध (Third crusade) कहा जाता है। इस अभियान का व्यय पूरा करने के लिए उसने अपने पिता से विरासत में पायी महान शक्ति का प्रयोग करते हुए इंग्लैण्ड का सारा धन निचोड़ लिया। इसका एक महत्वपूर्ण परिणाम यह था कि उसने स्काटलैण्ड के राजा को सामन्ती प्रभुता से मुक्ति का अधिकार बेच दिया। यह प्रभुता हेनरी द्वितीय ने स्काटलैण्ड के राजा पर स्थापित की थी। घर वापस लौटते हुए रिचर्ड को जर्मनी के सम्राट् हेनरी षष्ठ ने पकड़कर बन्दी बना दिया और इस बहुत खर्चीले राजा को मुक्त कराने के लिए अंग्रेजों को बहुत बड़ा मोचनधन (Ransom) देना पड़ा। अतः इसमें उनसे

अत्यधिक धनराशि वसूल की गयी। अन्त में जब वह स्वदेश लौटा तो उसे अपने अन्तिम वर्ष फ्रेंच राजा के साथ कठोर एवं चातुर्यपूर्ण लड़ाई में बिताने पड़े। रिचर्ड के रोमांचक साहसिक कृत्य अत्यधिक मनोरम होने पर भी इंग्लिश जनता के इतिहास का कोई भाग नहीं बनाते हैं।[1]

किन्तु तीन प्रकार से रिचर्ड का अल्पकालीन और बहुव्ययी राज्यकाल इंग्लिश जनता के विकास में उपयोगी सिद्ध हुआ। पहला तो यह कि उनके राजा के धर्मयुद्ध ने उन्हें उन दूरदेशों का कुछ ज्ञान प्रदान किया जिनके साथ सुदूर भविष्य में उनका घनिष्ठ सम्बन्ध होना था, यद्यपि इस धर्मयुद्ध में थोड़े से व्यक्तियों ने ही भाग लिया था। दूसरा यह कि राजा की दीर्घकालीन अनुपस्थितियों ने यह प्रदर्शित किया कि हेनरी द्वितीय का कार्य कितनी अच्छी और ठोस रीति से हुआ था, क्योंकि शासन कार्य बहुत अच्छी तरह से चलता रहा था। इसमें कुछ सुधार भी किये गये। राजा के भाई जॉन द्वारा नेतृत्व किये जाने वाले विद्रोहों को भी सुगमता से दबा दिया गया और राजा की मुक्ति के लिए आवश्यक विशाल धनराशि को आश्चर्यजनक सुगमता के साथ एकत्र कर लिया गया। कोई अन्य वस्तु इससे अधिक स्पष्टता से यह प्रदर्शित नहीं कर सकती थी कि शासन किस प्रकार पूर्ण रीति से देश को नियन्त्रित कर रहा है। अन्तिम बात यह है कि राजा की अनुपस्थिति में तथा इसी कारण से बैरनों (Barons) की महासभा शासन के मामलों पर विचार में और शासन की आलोचना करने में अधिकाधिक भाग लेने लगी। उस समय तक उनका यह भाग अधिक नहीं था। किन्तु कम से कम यह बात अवश्य कुछ महत्व रखती थी कि कुछ प्रमुख पुरुषों की सुव्यवस्थित और मान्यता प्राप्त संस्था इस बात का दावा करने लगी थी कि वह हेनरी द्वितीय द्वारा स्थापित की गयी शासन की शक्तिशाली पद्धति की आलोचना करे। इस बात को अगले शासन-काल में बहुत अधिक महत्ता मिली।

अगला राजा जॉन (११९९ से १२१६ ई०) सब आन्जेविन राजाओं की भाँति बुद्धिमान् था, किन्तु वह अत्यन्त धोखेबाज था जिसके वचन पर कभी भरोसा नहीं किया जा सकता था। वह नीच, क्रूर, कायर और अत्याचारी शासक था। इंग्लिश राजगद्दी पर बैठने वाले व्यक्तियों में वह निकृष्टतम था। इंग्लैण्ड के लिए यह आश्चर्यजनक तथा सौभाग्य की बात है, क्योंकि यदि जॉन वस्तुतः योग्य और सम्माननीय पुरुष होता तो यह सम्भव है कि हेनरी द्वितीय द्वारा विकसित सुयोग्य, परन्तु निरंकुश शासन का अपने ऊपर प्रतिबन्ध लगाना स्वीकार न करता।

नवीन शासन के आरम्भिक वर्ष दो बड़े विवादों में व्यतीत हुए। इनमें से एक लम्बा संघर्ष (१२०५ से १२१३ ई०) महान एवं शक्तिशाली पोप इन्नोसेंट (Innocent) तृतीय के साथ उसके द्वारा दावा किये जाने वाले इस अधिकार के विषय में था कि उसे कैन्टर-

१. स्काट के उपन्यास टैलिस्मैन में रिचर्ड के धर्मयुद्ध का वर्णन है और उसके 'आइवन हो' में इंग्लैण्ड की तत्कालीन अवस्था का एक सजीव वर्णन है, यद्यपि यह बहुत यथार्थ नहीं है।

बरी के आर्कबिशप के पद पर अपना व्यक्ति नियत करने का अधिकार है। जॉन ने इस दावे का उसी तरह विरोध किया जैसे उसका पिता या विजेता विलियम इसका विरोध करता। इसका परिणाम यह हुआ कि उसकी जनता को दोष न होने पर भी चर्च के धार्मिक अधिकारों से बहिष्कार (Interdict) के भयंकर दण्ड का भागी बनना पड़ा। इसके अनुसार ७ वर्ष तक जनता चर्च द्वारा कराये जाने वाले धर्मकार्यों (Ministration) से सर्वथा वंचित रही। किन्तु अन्त में उसे झुकना पड़ा। यह कार्य उसका पिता कभी न करता। वह इतना अधिक झुका कि उसने अन्त में पोप को अपना सामन्ती अधिपति स्वीकार कर लिया और इंग्लैण्ड के राज्य के लिए उसने कर देना भी मान लिया। इंग्लिश लोगों द्वारा इसे बहुत बुरा समझा गया। फिर भी पोप द्वारा जान की हार इंग्लैण्ड के लिए उत्तम वस्तु सिद्ध हुई क्योंकि आर्कबिशप के पद पर पोप ने एक निर्भीक और देशभक्त अँग्रेज स्टीफन लैंगटन को नियुक्त किया। इसने बाद में मैग्नाकार्टा (Magna Carta) को तैयार करने में प्रमुख भाग लिया।

जॉन का दूसरा विवाद पोप के साथ उसके झगड़े से पहले ही आरम्भ हो गया था और यह उसके अधिपति फ्रान्स के राजा फिलिप आगस्टस के साथ था। फ्रांस के राजा के न्यायालय में उसे एक आज्ञा उल्लंघन करने वाले वशवर्ती के रूप में दोषी ठहराया गया था। रिचर्ड प्रथम के फ्रेन्च प्रदेशों को विरासत में पाने का अधिकार रखने वाले अपने भतीजे आर्थर की हत्या करके बाद में उसने अपने मामले को खराब कर लिया था। १२०२ ई०में फिलिप आगस्टस ने चढ़ाई की और बड़ी तेजी से नार्मण्डी को तथा हेनरी द्वितीय के सभी फ्रेंच प्रदेशों को जीत लिया। जॉन ने कायर होने के कारण कोई विरोध नहीं किया। यह उल्लेखनीय बात है कि यद्यपि यह प्रदेश इतने लम्बे समय से इंग्लिश राजगद्दी के साथ सम्बद्ध थे, तथापि इन्होंने अपने स्वामियों के परिवर्तन को अत्यधिक तत्परता के साथ स्वीकार कर लिया। इंग्लिश सरदारों ने इस क्षति पर कोई दुख नहीं प्रकट किया। विजेता विलियम के सब फ्रेन्च प्रदेशों में से केवल चैनल के टापू इंग्लिश मुकुट के वशवर्ती बने रहे। नार्मण्डी की क्षति को जॉन से अधिक शक्तिशाली या लोकप्रिय राजा अवश्य रोक देता, किन्तु अब यह इंग्लैण्ड के लिए अत्यधिक सौभाग्य की बात थी। इसने उसे अपनी संस्थाओं तथा जीवन की पद्धतियों का अपने ढंग से विकास करने की अधिक स्वतन्त्रता प्रदान की। यद्यपि हेनरी द्वितीय को अपनी पत्नी से प्राप्त होने वाले एक्वीटेन (Aquitaine) के दक्षिणी फ्रांस के प्रदेश अगली दो शताब्दियों से भी अधिक समय तक इंग्लिश राजाओं के अधिकार में बने रहे, किन्तु वे प्रदेश इतनी अधिक दूरी पर थे कि वे इंग्लैण्ड पर नार्मण्डी जैसा प्रभाव नहीं डाल सकते थे।

यह आश्चर्यजनक बात है कि इंग्लैण्ड पर जॉन का निरंकुश नियन्त्रण न तो पोप के साथ झगड़े से और न ही नार्मण्डी के छिन जाने से शिथिल हुआ। हेनरी द्वितीय की शासन पद्धति इतनी अधिक मजबूत थी कि वह ऐसे भारी प्रहारों से भी निर्बल नहीं हुई। जॉन अब भी इंग्लैण्ड का निरंकुश स्वामी था और वह अपनी शक्ति का प्रयोग अत्यधिक और अत्याचार-पूर्ण करों द्वारा देश का निर्दयतापूर्वक शोषण करने में कर रहा था। जनता और सरदार बुड़बुड़ा रहे थे, किन्तु वे इसका प्रतिरोध बहुत कम करते थे। राजा ने लूटपाट करने वाले भाड़े

के सिपाहियों के समूहों को रख कर अपनी सत्ता को सुदृढ़ कर लिया। १२१४ ई० तक यही स्थिति बनी रही।

जॉन इन सब वर्षों में फ्रेन्च राजा से बदला लेने और नार्मण्डी के पुनर्विजय की योजनाएँ बनाता रहा। अन्त में वह फ्रांस के विरुद्ध एक गुट बनाने में सफल हुआ। इस गुट में इंग्लिश दरबार में पालन पोषण पाने वाला उसका भतीजा सम्राट ओटो चतुर्थ तथा फ्लैण्डर्स का शक्तिशाली काउन्ट सम्मिलित थे। किन्तु फ्रांस के विरुद्ध मित्रराष्ट्रों का प्रधान आक्रमण १२१४ ई० में बौवाइन (Bouvines) की लड़ाई में पूर्णरूप से विफल हुआ। यह यूरोपियन इतिहास की लड़ाइयों में एक बड़ा महत्वपूर्ण युद्ध है। यदि फ्रांस न जीतता तो जर्मनी सम्भवतः उस गड़बड़ और विघटन से बच जाता, जिसका वह इस समय तेजी से शिकार हो रहा था। फ्रांस स्वयमेव इस समय आरम्भिक मध्ययुग की निर्बलता से निकल रहा था और वह सम्भवतः इससे फिर पीछे धकेल दिया जाता। किन्तु हमारे लिए इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि जॉन और उसके मित्र जीत जाते तो इंग्लैण्ड निश्चित रूप से ऐसी बढ़ी हुई शक्ति और प्रतिष्ठा के साथ लौटता कि वह सारे विरोध की उपेक्षा करने में समर्थ होता और मैग्नाकार्टा कभी उस पर न थोपा जा सकता। यद्यपि फ्रांस का राजा यह न जानता था, फिर भी बौवाइन में उसने इंग्लिश स्वतन्त्रता और फ्रांस की एकता के लिए लड़ाई लड़ी।

इस युग में युद्धों के कारण जॉन की अनुपस्थिति में इंग्लैण्ड में असन्तोष की शक्तियाँ भड़क उठीं। असन्तुष्ट सरदारों, विशेषतः उत्तर के सरदारों ने सभाएँ की और निर्णय किया कि दुष्ट राजा के अत्याचारों का अन्त किया जाना चाहिए तथा उसकी शक्ति पर निश्चित प्रतिबन्ध लगाने चाहिए। आर्कबिशप लैंगटन ने यह सुझाव दिया कि उन्हें हेनरी द्वारा प्रदत्त स्वतन्त्रताओं के पुराने अधिकार-पत्र को अपने दावों का आधार बनाना चाहिए। इस आधार पर राजा के सम्मुख महान अधिकार पत्र का प्रारूप प्रस्तुत किया गया। राजा ने व्यर्थ में ही संघर्ष किया और सरदारों के साथ हुए चर्च के इस गठबन्धन को तोड़ने का प्रयत्न किया। अन्त में उसे समर्पण करना पड़ा और विंडसर के निकट टेम्स नदी के किनारे रनीमीड (Runnymede) की चरागाह में मैग्नाकार्टा स्वीकार करना पड़ा (१२१५ ई०)।

यह प्रसिद्ध अधिकार-पत्र न्यायसंगत रीति से इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता की नींव समझा जाता है। किन्तु इसे पढ़ने वाला विद्यार्थी इस बात से आश्चर्य चकित हो जायेगा कि इसकी ६२ धाराओं में से अधिकांश सामन्तों या सरदारों (Barons) के अधिकारों का प्रतिपादन करती हैं, न कि समग्र रूप में जनता के अधिकारों का तथा इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि इस समय सामन्त अपनी स्थिति को सुरक्षित करने के लिए मुख्य रूप से चिन्तित थे। वे अपनी जागीरों का उत्तराधिकारी बनने पर अदा किये जाने वाली अत्यधिक धनराशियों (Relief) को देने के विरुद्ध, नाबालिग उत्तराधिकारियों के संरक्षक के विषय में राजा के दुरुपयोगों के विरुद्ध तथा सेवा या धन आदि की अत्यधिक मांगों के विरुद्ध संरक्षण प्राप्त करना चाहते थे। फिर भी इन रियायतों का एक महत्व था। इनका यह अर्थ था कि अब

राजा अपने राज्य का स्वेच्छाचारी स्वामी नहीं रहा, किन्तु कम से कम कुछ मामलों में उसके अधिकार पर कुछ निश्चित और सर्वमान्य प्रतिबन्ध लग गये।

किन्तु इस अधिकार-पत्र की एक बड़ी विशेषता यह थी कि इसमें कानून की प्रभुसत्ता स्वीकार की गयी थी और यह माँग की गयी थी कि राजा को भी यह अधिकार न होगा कि वह कानून को भंग करे अथवा उससे बचने की कोशिश करे। हेनरी द्वितीय द्वारा स्थापित पद्धति को अधिकांश रूप में अधिकार-पत्र द्वारा मौन रूप से स्वीकार कर लिया गया था। इसमें जिला न्यायालयों (Shirecourts), जूरियों, शेरिफों तथा दौरा करने वाले न्यायाधीशों के सम्बन्ध में बहुत कम कहा गया था; वे पूर्ववत् कार्य करते रहे। किन्तु उनका कार्य कानून को लागू करना था, न कि राजा की मनमानी इच्छा को। इस विचार की महान अभिव्यक्ति धारा ३९ और ४० में निम्नलिखित रूप में पायी जाती है।

"३९वीं धारा— किसी भी स्वतन्त्र व्यक्ति को तब तक नहीं पकड़ा जायगा, न ही सम्पत्ति से वंचित किया जायगा, न कानून की परिधि से बहिष्कृत किया जायगा, न निर्वासित किया जायगा और न ही किसी भी प्रकार उसका नाश किया जायगा, न ही हम उसके विरुद्ध जायेंगे और न किसी को उसके विरुद्ध भेजेंगे जब तक कि उसके साथियों के कानूनी निर्णय द्वारा अथवा देश के कानून द्वारा ऐसा करना आवश्यक न हो।"

"४०वीं धारा—हम किसी व्यक्ति को अधिकार अथवा न्याय नहीं बेचेंगे और न ही किसी व्यक्ति को इससे वंचित करेंगे और न ही इसे प्रदान करने में विलम्ब करेंगे।"

पहली दृष्टि में इन धाराओं में जितनी अधिक बात दिखायी देती है, वास्तव में इनका आशय उतना अधिक नहीं है। इन धाराओं में केवल स्वतन्त्र व्यक्तियों का निर्देश है और इस समय इंग्लिश लोगों का अधिकांश भाग स्वतन्त्र न होकर कृषि-दास (Serfs) था। मनुष्य के साथियों (Peers) के कानूनी निर्णय का अभिप्राय आवश्यक रूप से जूरी द्वारा जाँच नहीं थी, यद्यपि बाद में इसकी व्याख्या दूसरी रीति से होने लगी। वस्तुतः इसका आशय सामन्ती अधिक्रम (Hierarchy) में अपनी ही श्रेणी के व्यक्तियों द्वारा जाँच की और देश के कानून का जिले के रिवाज से अधिक कोई अर्थ नहीं था। फिर भी इन महान धाराओं ने कानून की प्रभुसत्ता के सिद्धान्त की उद्घोषणा की; इन्होंने यह घोषणा की कि किसी भी स्वतन्त्र इंग्लिश व्यक्ति को किसी भी प्रकार किसी व्यक्ति द्वारा, भले ही वह कितना ही अधिक शक्तिशाली और महत्वपूर्ण क्यों न हो, तब तक हानि नहीं पहुँचायी जा सकती, जब तक कि न्याय के सुप्रतिष्ठित न्यायालय द्वारा उस पर पहले अभियोग चलाकर उसे अपराधी न पाया गया हो। निस्सन्देह इन धाराओं का पूर्ण रूप से पालन नहीं हुआ। आगे आने वाले अव्यवस्थापूर्ण समयों में प्रायः मनुष्यों के जीवन, स्वतन्त्रताएँ और सम्पत्ति शक्तिशाली की अनुकम्पा पर थी, किन्तु जब ऐसा होता था तो यह न केवल न्याय का अनादर था, अपितु इंग्लैण्ड के सुप्रतिष्ठित कानून का भंग भी था। यदि न्यायालय और उनके अधिकारी शक्तिशाली हों तो उसके लिए दण्ड भी दिया जा सकता था। वस्तुतः इसके बाद ऐसा अत्याचार अन्य देशों की अपेक्षा इंग्लैण्ड में बहुत कम हुआ। इन धाराओं के परिणामस्वरूप शनैः शनैः यह पद्धति विकसित हुई कि जब

कोई व्यक्ति बिना जाँच के बन्दी बना लिया जाता था तो वह या उसके मित्र ऐसे लिखित आदेश के लिए (Writ) आवेदन दे सकते थे जिसमें शैरिफ अथवा अन्य अधिकारी को यह आज्ञा दी गयी हो कि वह बन्दी को न्यायालय में उपस्थित करें और यह कारण बतायें कि उसे बन्धन में क्यों रखा गया है। यही 'बन्दी उपस्थापन' (Habeas Corpus) का आदेश था और यह सदैव इंग्लिश स्वतन्त्रता का एक महान् स्तम्भ समझा जाता रहा है।

मैग्नाकार्टा ने स्वशासन की पद्धति को स्थापित नहीं किया। वस्तुतः इसने यह व्यवस्था की कि बैरनों (Barons) को प्रभावित करने वाले एड्स (Aids) नामक कुछ निश्चित टैक्स सामन्तों की महापरिषद् (Great Council of Barons) की अनुमति बिना नहीं लगाये जा सकते। इसने अपने प्रजाजनों की बहुसंख्या से धन वसूल करने की राजा की शक्ति पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाये, और सामन्ती करों के बारे में यह मामूली व्यवस्था भी १२१६ ई० में इस अधिकार-पत्र को पुनः प्रकाशित करते हुए छोड़ दी गयी। इस अधिकार-पत्र ने किसी भी प्रकार यह व्यवस्था नहीं की कि इंग्लैण्ड की जनता से उन कानूनों के सम्बन्ध में परामर्श अवश्य लिया जाना चाहिए जिनसे उनका शासन किया जाना है। यह सब बाद में अन्य उपायों से प्राप्त किया गया। किन्तु इसने यह व्यवस्था अवश्य की कि अब कानून सर्वोच्च रहेगा तथा इसने मनुष्यों को यह अनुभव कराया कि कानून केवल उनके स्वामी की इच्छा नहीं हैं फिर भी उनका पालन केवल इसलिए होना चाहिए कि इनका पालन अवश्य करना है, क्योंकि वे सब लोगों के अधिकारों का संरक्षण करने वाले हैं अतः उनका सब उत्तम व्यक्तियों द्वारा न केवल पालन होना चाहिए अपितु इनका समर्थन और संरक्षण होना चाहिए। इस प्रकार मैग्ना-कार्टा ने हेनरी द्वितीय के कार्य को पूरा किया, क्योंकि इसने कानून के शासन के सिद्धान्त को स्थापित किया था।

अपने वचन का पालन करना जॉन की प्रकृति में नहीं था। ज्यों ही उसने चार्टर को स्वीकार किया, उसी समय उसने पोप से इसे पालन करने के लिए की गयी शपथ से मुक्ति प्राप्त की और उसने अपनी सेनाएँ एकत्र कर अपने अत्याचारी शासन को पुनः स्थापित करना आरम्भ किया। वह अब भी इतना शक्तिशाली था कि प्रतिरोध करने वाले सामन्तों को यह आवश्यक जान पड़ा कि वे फ्रेन्च सहायता प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड की गद्दी फ्रांस के राजा को भेंट करें। सौभाग्यवश दुष्ट राजा अधिक शरारत करने से पहले ही मर गया। हेनरी द्वितीय के नाम से उसके बाद गद्दी पर बैठने वाला उसका बेटा एक निर्दोष बालक था। उसके संरक्षकों ने उसके नाम से बुद्धिमतापूर्वक तुरन्त ही घोषित किया कि कुछ संशोधनों के साथ वे महान अधिकार-पत्र को स्वीकार करते हैं। इसके बाद फ्रेन्च राजकुमार के लिए संघर्ष जारी रखना निरर्थक था, और स्थल पर तथा समुद्र में दो बार हारने के बाद वह इंग्लैण्ड से वापस लौट गया। ब्रिटिश द्वीप समूह अपने इतिहास के नये युग में प्रविष्ट हुआ।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The books by **H. W. C. Davis and G. B. Adams** referred to for the last chapter cover this chapter also. Stubbs. Early Plantagenets (Epochs of Modern History) is an excellent short book on this period For constitutional developments **Stubbs,** Constitutional History (with Petit-Dutaillis notes) and Select Charters; **M. Kechnie,** Magna Carta **Stubbs,** Historical Introduction to the Rolls Series, and Norgate, England under the Angevin Kings; Toyne. The Angevins and the Charter gives a short selection of contemporary materials. For contemporary European history, Tout, The Empire and the Papacy; Fletcher, Making of Western Europe, 1000-1190; Milman, Latin Christianity. For the Crusades, Archer and Kingsford, Crusades (Story of the Nations), the article 'Crusades' in the Encyclopadia Britannica, Barker, Crusades; and Powicke, Loss of Normandy.

६

१२१५ में इंग्लैण्ड की दशा

हम अब अपनी कथा की पहली मंजिल के अन्त पर पहुँच गये हैं। ब्रिटिश द्वीपसमूह में विद्यमान चार राष्ट्रों का निर्माण करने में सहयोग देने वाली सब जातियाँ १२१५ तक इन टापुओं में अपने अपने घर बना कर बस चुकी थीं। प्रस्तर-युग के व्यक्ति तथा कांस्य युग के व्यक्ति गैल (Gael) तथा ब्रिटन (Briton), एंगल, सैक्सन, फ्रिजियन तथा जूट, नॉर्समैन, डेन और नार्मन जातियों के लोग इन द्वीपों के विविध भागों में विभिन्न अनुपातों में सम्मिलित हो चुके थे; इनके सम्मिश्रण से स्पष्ट रूप से इंग्लिश, स्काट, आयरिश और वैल्श नामक उन चार राष्ट्रों का प्रादुर्भाव हो चुका था, जिन्हें विश्व-व्यापी ब्रिटिश राष्ट्र-मंडल के निर्माण में सहयोग देना था। अभी तक इन चारों में से केवल एक 'इंग्लिश' जाति के लोग पूर्ण रूप से एक राष्ट्र में संगठित हो चुके थे और यह नार्मन तथा आंजेविन राजाओं का कार्य था। स्काट राष्ट्र अपनी स्थायी राष्ट्रीय सीमाओं में पहुँच चुका था, किन्तु उसने अभी तक पूर्ण एकता को प्राप्त नहीं किया था, आयरिश तथा वेल्स राष्ट्र अब भी अपने सामन्ती सरदारों और जनजातीय नेताओं में निरन्तर चलते रहने वाले युद्धों से विघटित थे, किन्तु इनकी प्रमुख रूप-रेखाएँ स्पष्ट रूप से खींची जा चुकी थीं।

अब हम इस समय जनता द्वारा प्राप्त की गयी जीवन पद्धति के निरीक्षण की ओर अभिमुख होते हैं। हम विशेष रूप से इंग्लिश राष्ट्र का प्रतिपादन करेंगे, क्योंकि केवल इसका स्वरूप और संगठन निश्चित रूप से निर्धारित

हो चुका था । अन्य राष्ट्रों के बारे में हम अधिक उस समय कहेंगे, जब वे ऐसी ही परिपक्वता की दशा में पहुँच जायेंगे।

१. समुदायों का देश

इंग्लिश जनता का अधिकांश भाग अपनी जीविका भूमि को जोत कर प्राप्त करता था और इस प्रयोजन के लिए भूमि आजकल की भाँति बड़े फार्मों में नहीं बँटी हुई थी, किन्तु यह विस्तृत रूप से संगठित समुदायों में विभक्त थी[१], जिन्हें Vill या Manor कहते थे । इनके निवासियों में विभिन्न श्रेणियों के अनेक व्यक्ति सम्मिलित थे और ये मिलकर सहयोगपूर्वक भूमि पर कृषिकार्य किया करते थे । विल (Vill) अथवा मेनर (Manor) की समूची भूमि अधिकांश रूप में और अनेक प्रयोजनों के लिए एक अकेली इकाई होती थी और इस भूमि के खेती किये जाने वाले भाग को सामान्यत: दो, तीन या अधिक बड़े खेतों में बाँट दिया जाता था । इनका प्रयोग या तो विभिन्न फसलों को पैदा करने के लिए किया जाता था, या उन्हें सस्य-चक्र (Rotation) के निश्चित क्रम के अनुसार परती छोड़ दिया जाता था। मेनर के स्वामी से लेकर निम्नतम भूदास तक प्रत्येक बड़ा या छोटा जमीदार प्राय: इन सब खेतों में फैली हुई पट्टियाँ विभिन्न संख्या में रखता था, यद्यपि मेनर के स्वामी के पास एक पृथक् खण्ड में अपनी निजी भूमि या सीर (Demesne) होती थी । गाँव का समूचा काम करने वाला समुदाय खेतों की जुताई और कटाई में सहयोग देता था और अपनी पट्टियों की पैदावार लेता था । इसी प्रकार चरागाह (Meadowland) वाली भूमि पर जहाँ पर चारा उगाया जाता था और सीमावर्ती चारणभूमि (Pasturage) अथवा बेकार भूमि पर भी संयुक्त रूप से कार्य किया जाता था । प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार था कि वह अपनी भूमि के अनुपात में सूखी घास और चरागाह का हिस्सा ग्रहण करे ।[२]

इस प्रकार की पद्धति में बड़े विस्तृत नियमों की आवश्यकता थी और वैयक्तिक ग्रामीणों के अधिकारों और कर्त्तव्यों के सम्बन्ध में बहुत विवाद का अवसर बना रहता था । यह भी आवश्यक था कि गाँव के कुछ अधिकारी हों; जैसे मुखिया (Reeve या Foreman), समूचे समुदाय की भेड़ों को पालने वाला गडरिया अथवा बड़े खेतों के चारों ओर बाढ़ों को देखने वाला व्यक्ति (Hay-ward) । ये सब अधिकारी चुने जाते थे । नियम बनाने, विवाद निबटाने और अधिकारी चुनने का सामान्य कार्य मेनर के न्यायालय में होता था । इसका अध्यक्ष जमींदार (Lord) का कारिन्दा (Bailiff) होता था और सब ग्रामवासियों को इसमें भाग लेना पड़ता था । इस न्यायालय द्वारा मेनर का अधिपति यह देखता था कि उसके अधिकारों का पालन हो । भूदास (Villeins) उसकी भूमि पर निश्चित दिनों की संख्या में काम करते

---

१. विल (Vill) एक छोटा कस्बा (Township) तथा मेनर (Manor) एक पृथक् रूप से संगठित जागीर (Estate) है। दोनों प्राय: एक ही क्षेत्र में हुआ करते थे; किन्तु सदैव ऐसा नहीं होता था ।

२. एटलस की प्लेट सं० ३५ (सी) में एक सामान्य ग्रामीण समुदाय की योजना देखिये ।

रहे; वे अपने अनाज को पिसाई के लिए उसकी चक्की में भेजते रहे। यद्यपि मेनर या विल अपने अधिपति या जमींदार (Lord) के नियन्त्रण में रहते थे, तो भी वास्तविक अर्थ में। यह उनका एक अपना समुदाय (Community) था। न केवल स्वतन्त्र ग्रामीण, अपितु भूमि से बँधे हुए और एक निश्चित अर्थ में मेनर के अधिपति की सम्पति माने जाने वाले भूदास भी इस समुदाय में एक हिस्सा रखते थे, यद्यपि वे अन्यायी (Unscrupulous) अथवा अत्याचारी जमींदार से अपनी कोई रक्षा नहीं कर सकते थे।

ग्रामीण समुदाय लगभग पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर था। यह अपना अन्न पैदा करता था; इसका मोटा कपड़ा यहाँ की भेड़ों की ऊन से स्त्रियों द्वारा तैयार किया जाता था तथा इसके उपकरण बेकार भूमि पर उगने वाली लकड़ी से बनाये जाते थे। अत: व्यापार द्वारा इसका बाह्य जगत से बहुत कम सम्बन्ध था। फिर भी कुछ ऐसी वस्तुएँ थीं, जो अवश्य बाहर से लानी पड़ती थीं। अधिकांश गाँवों में नमक और लोहे का तथा (उपवास के दिनों के लिए आवश्यक) मछली का आयात करना पड़ता था तथा गाँव में अधिक महत्व रखने वाले स्वतन्त्र व्यक्तियों के लिए अथवा मेनर के अधिपति के लिए छोटी-मोटी विलासवस्तुओं का आयात किया जाता था। कई बार ग्रामीणों के पास बेचने के लिए कुछ पशु या फालतू अनाज होता था। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनेक छोटे कस्बे विकसित हुए। इनमें से अधिकांश बड़े गाँव मात्र थे। ये सप्ताह के छ: दिन खेती में लगे रहते थे और केवल साप्ताहिक पैंठ के दिन ही व्यापार करते थे। यहाँ वार्षिक मेला लगता था, जब कि व्यापारी (Chapmen) इन मेलों में बहुत दूर से आया करते थे और हरे-भरे मैदान पर दुकानें (Booths) खुल जाया करती थीं।

उस समय इनसे अधिक बड़े बहुत ही थोड़े कस्बे थे और ये प्राय: बन्दरगाह होते थे। इनमें सर्वोच्च स्थान लन्दन का था। यह रोमन लोगों के काल से और उससे भी पहले से सदैव एक महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र था। इसकी महत्ता इसकी स्थिति के कारण थी। यूरोप के महाद्वीप से डोवर के जल-डमरूमध्य के मार्ग से जो यातायात आता था, उसे देश के शेष भाग में पहुँचाने से पूर्व टेम्स नदी को पार करना पड़ता था। लंदन एक ऐसा निम्नतम स्थल था जहाँ पर टेम्स पर पुल बनाया जा सकता था। उस समय इस नदी के किनारे बहुत दलदल थी और इस दलदली भूमि में लन्दन ही ऊँची सतह वाला एक टापू था। इन कारणों से रोमन सड़कें, जो अब तक यातायात का प्रधान साधन थीं, लन्दन से ही निकलती थीं। इनके अतिरिक्त नदी जहाजों के लिए सुरक्षित बन्दरगाह का स्थान प्रदान करती थी और लन्दन समुद्र से इतनी काफी दूरी पर था कि वह समुद्री डाकुओं के आक्रमण से भी सुरक्षित था। डेनिश आक्रमणों के समय से कोई विरोधी बेड़ा लन्दन नहीं पहुँचा था। अन्त में, यह इंग्लैण्ड में नौचालन के योग्य सबसे बड़ी नदी थी और टेम्स देश के सबसे अधिक समृद्ध भाग तक पहुँचने का मार्ग प्रदान करती थी। अत: यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि लन्दन इंग्लैण्ड में सदैव सबसे बड़ा व्यापारिक केन्द्र रहा हो और विजेता विलियम को भी यह उपयोगी जान पड़ा हो कि वह टावर (Tower) के नाम से अपने सबसे बड़े विख्यात दुर्ग का निर्माण जनता पर प्रभाव डालने के लिए लन्दन में ही करे; राजा का दरबार तथा शासन इसी स्थान पर केन्द्रित होने की प्रवृत्ति रखे, क्योंकि

किसी अन्य स्थान की अपेक्षा लन्दन से इंग्लैण्ड के किसी भी भाग तक सड़क, नदी अथवा समुद्र के मार्ग से अधिक सुगमता से पहुँचा जा सकता था। अन्य कस्बों के व्यक्तियों की अपेक्षा लन्दन में रहने वाले व्यक्ति इतनी अधिक संख्या में थे एवं इतने धनी थे कि वे एक महत्वपूर्ण राजनीतिक तत्व बनाने और राजनैतिक संतुलन को पलटने में प्राय: समर्थ थे। उन्होंने अपने लिए कई बड़े विशेषाधिकार प्राप्त कर लिये थे। इनमें मिडलसैक्स[१] (Middlesex) में सम्राट् के मुख्य अधिकारियों या शेरिफों (Sheriffs) को भी चुनने का अधिकार था; इस प्रकार वे राजकीय अधिकारियों के निरन्तर हस्तक्षेप से मुक्त हो चुके थे और वे इतने अधिक महत्वपूर्ण थे कि एक समुदाय के रूप में उनका दर्जा सामन्तों और बिशपों के बराबर था और उन्हें बृहद् अधिकार पत्र (Magna Carta) में भी स्थान मिला था। इस काल में लन्दन जैसा शहर केवल लन्दन ही था। इस युग में ब्रिस्टल, नार्विच और साउथम्पटन जैसे बहुत थोड़े स्थान ऐसे थे, जिन्हें हम कस्बा (Town) कह सकते हैं। अधिकांश कस्बे पूर्ववर्णित "मण्डी वाले गाँवों" की तरह ही थे।

एक जमींदार या लार्ड के लिए यह लाभदायक था कि वह अपने एक गाँव को बहुत छोटे भागों में परिणत करे, क्योंकि इससे उसे मण्डी में जाने वालों पर लगाये जाने वाले कर मिलते थे और वह यहाँ माल बेचने या खरीदने के लिए आने वाले व्यक्तियों से चुंगी वसूल कर सकता था। अत: व्यापार करने वाले निवासियों को आकर्षित करने के लिए विशेष अधिकार प्रदान करना बड़ा उपयोगी था और चूँकि राजा के अतिरिक्त अन्य कोई व्यक्ति इस प्रकार के बहुमूल्य विशेष अधिकार प्रदान नहीं कर सकता था, अत: अधिकांश कस्बे राजा की भूमि पर विकसित हुए। ग्रामीण समुदाय को कस्बे के रूप में परिणत करने वाले विशेषाधिकार प्राय: एक ही प्रकार के होते थे। पहला अधिकार गाँव या विल को स्वतन्त्र नगर (Free borough) में परिणत करने का था। इसका यह आशय था कि ग्रामवासी एक निश्चित धनराशि का लगान देने के अतिरिक्त सब प्रकार के करों और सेवाओं को अदा करने से मुक्त किये जाते थे। अत: एक बरो (Borough) सदैव स्वतन्त्र स्थान होता था और यह रिवाज था कि कभी कोई भूदास किसी नगर (Borough) में एक साल और एक दिन रह लेता था, तो इस कारण वह और उसके बाद उसके बच्चे कृषि-दासता के बन्धन से स्वतन्त्र हो जाते थे। अगला विशेषाधिकार मण्डी की चुंगियों को अदा करने से मुक्ति थी और कुछ अवस्थाओं में यह समूचे देश की मण्डियों के करों से और कई बार राजा के समूचे प्रदेशों में लिये जाने वाले करों से मुक्ति थी। जब इस प्रकार के विशेषाधिकारों को प्रदान करके व्यापारियों के एक समूह को एक नगर में बसने की प्रेरणा दी जाती थी, तो वे सामान्य रूप से व्यापार में सहयोग करने के लिए अपने को एक श्रेणी (Gild) या संघ में संगठित करना आरम्भ करते थे। उनके विकास में अगली दशा तब आती थी, जब वे प्राय: भारी धन-राशि अदा करके राजा से अपनी श्रेणी की औपचारिक मान्यता तथा मण्डी से प्रतिस्पर्धियों को हटाने का अधि-

---

१. यह इंग्लैण्ड का वह जिला (County) है, जिसमें लन्दन का उत्तर पश्चिमी भाग सम्मिलित है।

कार प्राप्त करते थे अथवा प्रतिस्पर्धियों को वहाँ प्रवेश के लिए धनराशि देने के लिए विवश करते थे। जब यह विशेषाधिकार प्राप्त कर लिया जाता था तो वह श्रेणी जिसमें सामान्य रूप से सब नगरवासी सम्मिलित होते थे, शक्तिशाली स्वशासन करने वाली संस्था बन जाती थी और वह कस्बे के मामलों का प्रबन्ध करना आरम्भ कर देती थी। शीघ्र ही यह अगला कदम उठाने को तैयार होती थी। यह कदम राजा के साथ यह सौदा करना होता था कि वह श्रेणी उसे प्रतिवर्ष उस कस्बे से प्राप्त होने वाले भिन्न-भिन्न करों के बदले में एक मुश्त एक बड़ी धन राशि अदा किया करेगी। जब ऐसा हो जाता था तो यह श्रेणी (Gild) लगानों को, मण्डी के टैक्सों को और न्यायालय की फीस और जुर्मानों को भी इकट्ठा करती थी। अतः राजा को अब कस्बे में अपने अधिकारी रखने में कोई अभिरुचि नहीं रहती थी और यह एक आश्चर्यजनक रीति से, एक स्वतन्त्र और स्वशासन करने वाली संस्था बन जाती थी। किन्तु यदि इस पर राजकीय दुर्ग का प्रभाव होता था तो इस दुर्ग का संरक्षक (Constable) इसके लिए कई बार कष्टदायक भी हो सकता था। एक कैथेड्रल वाले कस्बे का बिशप अथवा एक बड़े मठ का मठाधीश अथवा कस्बे की कुछ भूमि को प्राप्त करने वाला सामन्त कई बार इस कस्बे के मामलों में परेशान करने वाला हस्तक्षेप कर सकते थे। किन्तु किसी भी दशा में यह स्पष्ट था कि एक श्रेणी वाला स्वतन्त्र नगर, विशेष रूप से यदि इसे राजा से या किसी अन्य लार्ड से अधिकारों का पट्टा मिला है तो यह एक अत्यधिक स्वतन्त्र और वास्तविक समुदाय होता था। नार्मन विजय के बाद के युग में इंग्लैण्ड में इस प्रकार के अनेक नये नगरों का अभ्युदय हो रहा था। हेनरी ने तथा उसके पुत्रों ने विशेष रूप से विशिष्ट कस्बों को बड़ी संख्या में ऐसे अधिकार पत्र प्रदान किये थे जिनमें ऊपर बताये गये सभी अथवा अधिकांश विशेषाधिकार सम्मिलित थे।

मेनर (Manor) और कस्बे (Town) ही इस समय इंग्लैण्ड में संगठित समुदाय नहीं थे, क्योंकि शायर (Shire) या जिला भी शीघ्र ही एक वास्तविक समुदाय बन रहा था। यह नार्मन और आंजेविन राजाओं द्वारा इसे सौंप दिये जाने वाले अधिकाधिक कार्यों का परिणाम था। शायर के समुदाय की अभिव्यक्ति शायर के न्यायालय में होती थी और इसका अध्यक्ष जिले में राजा का मुख्य प्रतिनिधि या शैरिफ होता था। यह समझा जाता था कि एक शायर के न्यायालय में वहाँ सभी सामन्त, छोटे सामन्त, योद्धा (Knight) और स्वतन्त्र व्यक्ति, विल (Vill) के पाँच प्रतिनिधि और प्रत्येक बरो (Borough) के १२ प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे। किन्तु बड़े सामन्त इनमें बहुत कम उपस्थित होते थे और वे अपने स्थान पर अपने प्रतिनिधियों (Steward) को भेज देते थे। सामान्य स्वतन्त्र व्यक्ति भी उन मौकों को छोड़ कर बहुत कम उपस्थित होते थे जब कि न्यायालय में उनका मामला पेश हो; उदाहरणार्थ आप किसी स्वतन्त्र व्यक्ति के लिए यह कल्पना नहीं कर सकते थे कि वह यार्क में प्रतिमास होने वाले शायर न्यायालय में उपस्थित होने के लिए यार्कशायर के सुदूरवर्ती कोने से दलदलों को पार करते हुए वहाँ पहुँचेगा। मुख्यतः सैनिक सेवा करने वाले योद्धा (Knights) और छोटे सामन्त (Lesser baron), जिन्हें आजकल हम देहात का भद्र व्यक्ति कहेंगे, ही शैरिफ की अध्यक्षता में शायर के न्यायालय का कार्य करते थे। वे उपयुक्त सज्जा सामग्री का प्रबन्ध

करते थेऔर जब आवश्यकता होती थी तो युद्ध के लिए शायर की सेना का आह्वान करते थे। वे उन अनेक जाँचों को करते थे जो हेनरी द्वितीय की पद्धति में जूरी द्वारा करना आवश्यक थीं। वे अधिकाधिक रूप में अपने को एक समुदाय के रूप में अनुभव करने लगे थे। यद्यपि शैरिफ सर्वोच्च उत्तरदायी अधिकारी होता था तब भी शायर के योद्धा (Knight) उसके कार्य में अधिक भाग लेने लगे थे, और उनके ऐसा करने से राजा प्रसन्न था क्योंकि इससे शैरिफ पर नियन्त्रण होता था। रिचर्ड प्रथम के शासन काल में पहले ही उन्हें 'राजा के आरोपों' (Pleas of the Crown) में आरम्भिक जाँच करने का कार्य सौंप दिया गया था और अब यह कार्य उन्हें अधिकाधिक सौंपा जाना था। शायर के योद्धाओं ने शीघ्र ही यह भी माँग करनी शुरू की कि उन्हें शैरिफों को चुनने की अनुमति दी जानी चाहिए, यद्यपि यह माँग उससे कहीं अधिक थी जहाँ तक राजा उन्हें कार्य करने की अनुमति देने को तैयार था।

इस प्रकार नार्मन और आंजेविन पद्धतियों के प्रोत्साहन से इंग्लैण्ड समुदायों के देश के रूप में विकसित हो रहा था। मेनर के समुदाय, बरो (Borough) के समुदाय और शायर के समुदाय सब कम या अधिक रूप में अपने सामान्य कार्य की चिन्ता करते थे और राजा इस विकास को प्रोत्साहित कर रहा था; क्योंकि उसके लिए व्यक्तियों के विशाल समूह की अपेक्षा तुलनात्मक रीति से छोटी संख्या वाले समुदायों के साथ व्यवहार करना अधिक आसान था। जॉन के शासन काल के अन्त में, पहले ही राजा को और उसके विरोधियों, दोनों को यह विचार सूझा था कि यह उपयोगी होगा कि सब शायर-समुदायों को यह आज्ञा दी जाय कि वे अपने में से दो ऐसे व्यक्तियों को भेजें जो उनकी ओर से बोलने में समर्थ हों तथा इस प्रकार यह दर्शायें कि विवादास्पद प्रश्नों पर सारे देश का क्या निर्णय है। जॉन के शासन काल में इस विचार का कुछ परिणाम नहीं निकला। यह संदिग्ध है कि क्या कभी वास्तव में इन प्रतिनिधियों के सम्मेलन हुए, किन्तु यह विचार अगले युग में अत्यधिक विकसित हुआ और इसी से लोकसभा या 'हाउस ऑफ कामन्स' का आरम्भ हुआ। इस शब्द का अर्थ साधारण जनता का सदन (House of Common People) नहीं है, किन्तु समुदायों का सदन (House of communes or communities) है।

२. चर्च और उसकी सभ्यता के प्रति सेवाएँ

चर्च एक ऐसा महान् समुदाय था, जो मेनर, बरो और शायर के सभी समुदायों से भिन्न था। किन्तु चर्च में एक वास्तविक अर्थ में ये सब समुदाय सम्मिलित हो जाते थे। चर्च के विभिन्न विभागों (Dioceses) पर बिशपों तथा आर्कडीकनों का, और पैरिशों (Parish) पर पैरिशवासी पुरोहितों का शासन था। चर्च का यह संगठन सारे देश में फैला हुआ था और इसके उप-समुदाय कैथेड्रल चैपटर्स[१] (Cathedral Chapters) और मठों में थे। राष्ट्र में सभ्यता

१. यूनानी भाषा में बिशप की गद्दी या आसन को कैथेड्रा (Cathedra) कहा जाता था अतः जिस भव्य चर्च में ऐसी गद्दी होती थी, उसे कैथेड्रल (Cathedral) कहते थे।*

के जो भी उच्चतम तत्व थे, उनके लिए वह चर्च का ऋणी था। उस समय चर्च केवल साहित्य और विद्या की उन्नति में लगा हुआ था और इनकी इच्छा रखने वालों को इसकी शिक्षा दिया करता था। एक मात्र चर्च ने ही अतीत की स्मृति को उन इतिहासों (Chronicles) द्वारा जीवित रखा था, जिनका संकलन इसके परिश्रमी लेखकों ने किया था और जिनसे हमें घटनाओं के घटित होने का अधिकांश ज्ञान प्राप्त होता है। चर्च के प्रशिक्षित और सुशिक्षित व्यक्तियों की सहायता के बिना नार्मन और आंजेविन राजाओं के लिए यह सम्भव न था कि वे कानून और शासन की प्रभावशाली पद्धति का विकास कर सकते। चर्च के कारण ही इंग्लैंड और यूरोप में वास्तुकला का वह अद्भुत विकास हुआ, जो इस युग का गौरव है, यद्यपि यह विकास अगले युग के इससे अधिक सुन्दर कार्य से पराभूत हुआ। अन्त में, चर्च युद्ध करने वाले योद्धाओं की पाशविकता पर इसे ऊँचा उठाने या परिष्कृत करने वाला प्रभाव डालने में भी अद्भुत रीति से सफल हुआ। युवा योद्धा की दीक्षा को धार्मिक रूप दे कर इसने उस पर यह अंकित किया कि वह एक उच्च कार्य में संलग्न है और उसे न्याय की और निर्बल की रक्षा करने के लिए दीक्षा दी गयी है। शौर्य (Chivalry) का यही अभिप्राय था; यद्यपि इसकी प्रतिज्ञा लेने वाले बहुत कम व्यक्ति इसका पालन किया करते थे, किन्तु उनका प्रभाव वास्तविक था और इससे आरम्भिक युगों की क्रूर बर्बरता कम होने लगी।

एक संकुचित अर्थ में चर्च के महान् समुदाय में केवल पुरोहित वर्ग (Ecclesiastics) ही सम्मिलित थे। पादरियों के लिए ऐसा विचार स्वाभाविक था। वे बेकेट (Becket) की भाँति अपने विशेष अधिकारों और प्रतिबन्धों से छूट (Exemption) पर आग्रह करते थे, यह

---

*यहाँ प्राय: अनेक ईसाई पादरी और भिक्षु रहा करते थे। लैटिन भाषा में दस भिक्षुओं के अध्यक्ष को डीन (Dean) कहा जाता है। Chapter शब्द का मूल अर्थ पुस्तक का अध्याय है। ईसाई भिक्षुओं के नियमों का प्रतिपादन करने वाली पुस्तक का एक अध्याय भिक्षुओं की जिस सभा में पढ़ा जाता था उसे बाद में चैप्टर कहा जाने लगा। इसी से आगे चल कर चैप्टर का तीसरा अर्थ डीन की अध्यक्षता में इस प्रकार पाठ करने वाले ईसाई पादरियों और भिक्षुओं का समूह हो गया। यहाँ चैप्टर का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है। एक बिशप की देख-रेख में रहने वाला चर्च का क्षेत्र डायोसीज़ (Diocese) कहलाता था। यह अनेक छोटे उपविभागों में बंटा होता था। ये उपविभाग पेरिश (Parish) कहलाते थे, इनका क्षेत्र छोटे छोटे गाँवों तक ही सीमित होता था। इनमें कार्य करने वाले पल्ली पुरोहित या [illegible] थे। डीकन (Deacon) बिशप के क्षेत्र में बिशप तथा पुरोहित (Priest) के बाद तीसरा स्थान रखने वाला एक धार्मिक अधिकारी होता था, यह पुरोहित को विभिन्न कार्य करने में सहायता देता था। आर्कडीकन (Archdeacon) बिशप के नीचे स्थान रखने वाला एक धार्मिक अधिकारी था। यह गाँवों में दस भिक्षुओं के समूहों के अध्यक्षों या डीनों (Deacons) के कार्य की देखभाल करता था तथा धार्मिक न्यायालय लगाया करता था।

शेष राष्ट्र के लिए अन्यायपूर्ण था। किन्तु एक व्यापक अर्थ में चर्च सारा राष्ट्र सम्मिलित था। एक विशेष रूप में यह राष्ट्र ही था और एक व्यापक अर्थ में भी राष्ट्र ने चर्च के द्वारा अपने आपको इससे बड़े समुदाय में सम्मिलित हुआ पाया। यह समुदाय पश्चिमी ईसाइयत का समग्र-विश्व अर्थात एक महान् ईसाई राज्य (Respublica Christiana) अथवा ईसाई राष्ट्रमंडल था। इसका आध्यात्मिक अध्यक्ष पोप था। पश्चिमी ईसाइयत (जो इस समय पश्चिमी सभ्यता से अभिन्न थी) की एकता इस युग में वास्तविक वस्तु थी और प्रत्येक व्यक्ति एक वास्तविकता के रूप में इसका अनुभव करता था। समूचे पश्चिमी यूरोप में जहाँ कहीं कोई मनुष्य जाता था, तो वह प्रत्येक गाँव के चर्च में एक ही भाषा में पवित्र कार्यों को किये जाते सुन सकता था। इंग्लिश पुरोहित या भिक्षु उस समय बड़ी सुगमता से प्रत्येक दूसरे देश में घर का-सा अनुभव करता था क्योंकि इस समय तक बोली जाने वाली लैटिन विद्वानों की विश्वव्यापी भाषा थी। इसके अतिरिक्त चर्च वास्तव में एक लोकतन्त्रीय समुदाय था। इसकी सेवा करने वाला निम्नतम लड़का भी उच्चतम पदों तक पहुँच सकता था। स्टीफन और हेनरी द्वितीय के शासनकालों में मामूली दर्जे का एक इंग्लिश व्यक्ति निकोलस ब्रेक्स्पीयर एड्रियन चतुर्थ के नाम से पोप की गद्दी पर बैठा और उसने सम्राट को अपनी रकाब पकड़ते हुए और राजाओं को उसकी आज्ञाओं का सम्मान करते हुए देखा। इससे कुछ पहले ही एक दूसरा इंग्लिश व्यक्ति स्टीफन हार्डिंग फ्रांस में सीतो (Citeaux) के मठ का महन्त बना और वह इस युग में सब से अधिक प्रसिद्ध और शक्तिशाली धार्मिक संगठन भिक्षुओं के सिस्टर्शियन सम्प्रदाय का वास्तविक संस्थापक था।

फ्रांस तथा अन्य स्थानों की भाँति इंग्लैंड में मठों का जीवन और कार्य इस युग में-जिसका यहाँ वर्णन किया जा रहा है—सर्वोत्तम था। मठ विभिन्न प्रकार के थे, ये विभिन्न सम्प्रदायों (Orders) से सम्बन्ध रखते थे और विभिन्न नियमों का पालन करते थे। वे आकार और धन की दृष्टि से भी एक दूसरे से बहुत भिन्न थे; किन्तु व्यापक विशेषताओं की दृष्टि से इन सब में विशेष समानता थी। ये सब ऐसे स्त्री-पुरुषों के समुदाय थे जिन्होंने दुनिया से अपना नाता तोड़ लिया था। उन्होंने अपनी वैयक्तिक सम्पत्ति और अपने नाम तक का परित्याग कर दिया था ताकि वे शुभ अनुशासन और प्रार्थना का धार्मिक जीवन बिता सकें। वे जिन घरों में रहते थे, वे घर-एक ही प्रकार के थे। ये चतुष्कोण में बनायी गयी इमारतों की शृंखला होती थी।[1] उत्तर की ओर सामान्य रूप से एक गिर्जा (Chapel) होता था। यह बहुत बड़ी और सुन्दर इमारत होती थी, जिस पर भिक्षु अपने धन को खब लगाते थे क्योंकि वे अपने समय का अधिकांश भाग गिर्जे में ही बिताते थे। दिन में प्रति कुछ घण्टों के बाद प्रार्थनाओं (Services) का क्रम चलता रहता था। इस चतुष्कोण के ठीक दूसरी ओर यथासम्भव गिर्जे से अधिकतम दूरी पर ऐसी इमारतें होती थीं, जिसमें भिक्षुओं की भौतिक

१. एटलस की प्लेट सं० ३५ (एच) में एक सामान्य मठ की योजना देखिये। चर्च द्वारा लिखित Life of St. Anselm और मौरिसन के Life of St. Bernard में मठ के जीवन के उत्तम वर्णन हैं।

आवश्यकताएँ पूरी की जाती थीं, जैसे भोजनशाला (Refectory) जहाँ भिक्षु अपना सादा भोजन एक साथ मिल कर करते थे और रसोइयाँ; सभागृह (Chapter house), यह सदैव चतुष्कोण के पूर्व में हुआ करता था। यहाँ अनुशासन के लिए और मठ के कार्यों को चलाने के लिए दैनिक सभाएँ हुआ करती थी। सांसारिक व्यक्तियों (Lay brothers) के निवास स्थान पश्चिमी पार्श्व में होते थे तथा पुस्तकालय, शयनशाला (Dormitory) और अतिथि गृह आदि अन्य इमारतें अधिकतम सुविधाजनक स्थान पर बनायी जाती थीं। किन्तु मठ के जीवन का प्रमुख केन्द्र छायापथ (Cloister) होता था। यह एक ढँका हुआ और पक्के फर्शवाला ऐसा रास्ता था जो चतुष्कोण के अन्दर की ओर चारों ओर घूमता था और एक घासवाले शांत वर्गाकार क्षेत्र पर बगैर पालिश की हुई गॉथिक वास्तुशैली की खिड़कियों की जाली से बाहर की ओर झाँकता था। प्रायः यहाँ मठ का स्कूल लगा करता था और यहीं लेखक अपने इतिहास लिखते थे अथवा पवित्र ग्रन्थों या यूनान और रोम के प्राचीन प्रसिद्ध ग्रन्थों की प्रतिलिपि किया करते थे।

किन्तु मठों का कार्य पूर्ण रूप से धार्मिक या बौद्धिक ही न था। वे अपनी आय का अधिकांश गरीबों को खाना खिलाने में लगाते थे। उनके द्वार यात्रियों के लिए सदैव खुले रहते थे और अधिकांश मठों में वहाँ आने वाले यत्रियों के विनोद के लिए एक बड़ा अतिथिगृह होता था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे आंशिक रूप से इन्हीं यात्रियों से उन तथ्यों का ज्ञान प्राप्त करते थे, जिन तथ्यों को उन्होंने अपने इतिहास में लिपिबद्ध किया है। अन्त में, अधिकांश सम्प्रदायों में और विशेष रूप से सिर्स्टशियन (Cistercian) सम्प्रदाय में, भिक्षु अपने समय का अधिकांश भाग खेतों में वास्तविक शारीरिक श्रम करते हुए व्यतीत करते थे और इस प्रकार उन्होंने कृषि के विकास में वास्तविक सेवाएँ प्रदान कीं। सिर्स्टशियन सम्प्रदाय के भिक्षु दूरवर्ती एकान्त स्थानों में अपने मठ स्थापित करना पसन्द करते थे। वे विशेष रूप से भेड़ों को पालने में लगे रहते थे और प्रधान रूप से उन्हीं के कारण इंग्लिश ऊन को इस युग में बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त हुई। ऊन मध्ययुग में कपड़ा बुनने के बड़े प्रसिद्ध स्थान-फ्लेन्डर्स के साथ खूब व्यापार करने का आधार बनी।

मठों और कैथेड्रल स्कूलों के शिक्षा सम्बन्धी कार्य का परोक्ष परिणाम यह हुआ कि विश्वविद्यालयों का जन्म हुआ। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज के पुराने इंग्लिश विश्वविद्यालय मैग्नाकार्टा की तिथि से पहले ही कार्य कर रहे थे। स्टीफन के राज्य-काल के समय से ही ऑक्सफोर्ड में कुछ आवश्यक पढ़ाई का कार्य चल रहा था, किन्तु हेनरी द्वितीय के शासन-काल में पेरिस के प्रसिद्ध स्कूलों से विद्यार्थियों के महान् आगमन के परिणामस्वरूप यह वास्तव में विद्या का क्रियाशील केन्द्र बना। कैम्ब्रिज के बारे में कहा जाता है कि वह १२०९ में ऑक्स-फोर्ड से इसी प्रकार विद्यार्थियों के आने पर स्थापित हुआ।

३. यूरोप के साथ सम्पर्क

चर्च को इस बात का श्रेय है कि इसके कारण इंग्लैण्ड और महाद्वीप के बीच बहुत कुछ आवागमन होता था तथा नये विचारों तथा बौद्धिक आन्दोलनों को ऐसी रीति से

ब्रिटिश द्वीपसमूह पर प्रभाव डालने का अवसर मिलता था जैसा नार्मन विजय से पूर्व असम्भव था। यह सम्पर्क विदेशी व्यापार की वृद्धि से और भी अधिक विकसित हुआ।[१] वस्तुतः यह बहुत ही छोटे पैमाने पर था, क्योंकि जैसा हम देख चुके हैं इंग्लैण्ड को बहुत कम वस्तुओं की आवश्यकता थी और विनिमय में देने के लिए भी उसके पास बहुत कम वस्तुएँ थी। किन्तु सामन्तों (Barons), नाइटों (Knights), बिशपों और मठों को शराब की आवश्यकता थी, जिसका अधिकांश भाग फ्रांस से आता था। धनी लोगों में निम्नलिखित वस्तुओं के लिए मांग थी—रेशम, बुने हुए बढ़िया कपड़े, जवाहरात, सोने चाँदी के आभूषण, तलवारें, कवच, विभिन्न प्रकार की बढ़िया धातु के काम की वस्तुएँ, मसाले तथा दुर्लभ भोज्य पदार्थ। ये वस्तुएँ कुछ तो फ्लैन्डर्स के उन नगरों से आती थीं जो अब बहुत व्यस्त और समृद्ध हो रहे थे, कुछ इटली से आतीं थीं और थोड़ी मात्रा में फ्रांस से भी आती थीं। किन्तु अधिकांश वस्तुएँ सुदूरपूर्व के भारत और चीन से लम्बे और टेढ़े-मेढ़े रास्तों से आती थीं जो इन्हें बहुत महंगा बना देती थी। ऊँटों के काफिलों पर लदा हुआ भारतीय रेशम, मसाले और मणियाँ खैबर दर्रे से और मध्य एशिया से होते हुए काकेशस पर्वत माला के उत्तर या दक्षिण में गुजरते हुए कृष्ण सागर के तट तक आती थीं, जब कि अन्य व्यापारिक मार्ग सीरिया के समुद्र तट तक या रक्त सागर में ऊपर जाकर मिस्र तक पहुँचते थे।[२] इन सब स्थानों से ये सब वस्तुएँ इटली के व्यापारियों द्वारा उठा लीं जाती थी और वही यूरोप में इनका वितरण किया करते थे। यही कारण है कि अब तक भी गरम मसाले बेचने वाले दुकानों के मालिक अपने आप को इटेलियन व्यापारी (Italian Merchants) कहते हैं। पूर्व की कुछ वस्तुएँ कृष्ण सागर से रूस की नदियों में ऊपर जाते हुए बाल्टिक सागर तक पहुँचती थीं और यहाँ इन्हें लाने वाले और इनका वितरण करने वाले ल्यूनेक और विस्बी तथा अन्य बाल्टिक तीरवर्ती नगरों के जर्मन व्यापारी थे। बाद में इनका विकास हैंसियेटिक लीग (Hanseatic League) के रूप में हुआ।

किन्तु इंग्लिश खरीददार को उस समय तक उन दूरवर्ती प्रदेशों का कुछ भी ज्ञान नहीं था, जहाँ से ये समृद्धिशाली वस्तुएँ आ रही थीं। यद्यपि ऐसा समय आगे आने वाला था, जब उन प्रदेशों का शासन उसके वंशजों द्वारा किया जाना था। इंग्लिश व्यापारी इटेलियन व्यापारियों तक के सम्पर्क में बहुत कम आता था। व्यापार की धारा का जो भाग इंग्लैण्ड पहुँचता था, वह वस्तुतः मुख्य रूप से कोलोन (Cologne) और ब्रूग्स (Bruges) से आने वाले जर्मन और फ्लेमिश (Flemish) व्यापारियों के हाथ में था। इन्होंने लन्दन में एक सहयोगी कोठी (Cooperative Factory) या व्यापारिक केन्द्र का संगठन किया था। यह स्टीलयार्ड (Steel Yard) के नाम से प्रसिद्ध था और हमारे इस युग की समाप्ति तक इन्होंने इंग्लैण्ड के विदेशी व्यापार पर लगभग पूर्ण एकाधिकार प्राप्त कर लिया था। यह

१. एटलस की प्लेट संख्या ३२ में यूरोप में मध्ययुगीन व्यापार का मानचित्र देखिये।

२. एटलस की प्लेट सं० ३०-३१ में मध्य युग में व्यापारिक मार्गों को पश्चिमी एशिया में प्रदर्शित करने वाला मानचित्र देखिये।

इतना अधिक था कि इन्होंने हमारी भाषा को अपने एकाधिकार की स्मृति में एक शब्द प्रदान किया है। जब हम स्टर्लिंग मुद्रा (Sterling Money) शब्द का प्रयोग करते हैं, तब इसका आशय पूरा भार रखने वाली मुद्रा से होता है और इसमें हम ईस्टरलिंग (Easterling) शब्द के विकृत रूप का प्रयोग कर रहे होते हैं। स्टर्लिंग मुद्रा का आशय पूरा भार रखने वाली ऐसी मुद्रा से है, जो ईस्टरलिंग (Easterling) अर्थात् पूर्व से आने वाले व्यक्तियों द्वारा स्वीकार की जायगी। अभी तक इंग्लिश लोग महान व्यापारी और समुद्रों की यात्रा करने वाली जनता नहीं बने थे।

फ्लेमिश और जर्मन व्यापारी जो शराब, बढ़िया कपड़े और गर्म मसाले बेचा करते थे उनके बदले में वे इंग्लैण्ड में जो मुख्य वस्तुएँ खरीदते थे, वे थीं भेड़ की ऊन, भेड़ की खाल और चमड़ा। इंग्लैण्ड के महत्वपूर्ण निर्यात पदार्थ केवल यही थे। किन्तु इस युग के महान निर्माता घेन्ट और वाइप्रस के जुलाहों द्वारा इंग्लिश ऊन को बहुत अधिक महत्व दिया जाने लगा था, उस युग में इंगलैण्ड आजकल के आस्ट्रेलिया की भाँति अधिक मात्रा में ऊन पैदा करने वाला देश था। इंगलैण्ड के विदेशी व्यापार का आरम्भ इस छोटे से रूप में हुआ था और यह पूर्ण रूप से विदेशी नियन्त्रण में था। [illegible] रूप से इंगलिश राजा यह प्रयत्न करते थे कि वे इस व्यापार से लाभ उठायें और उन्हें इसका दुख नहीं था कि यह व्यापार विदेशियों के हाथों में केन्द्रित हो, क्योंकि इस दशा में उन्हें कर लगाना आसान था। वे निर्यात की जाने वाली ऊन और आयात की जाने वाली विलास की वस्तुओं पर चुगी लगाते थे। उनकी राजकीय आय का एक महत्वपूर्ण भाग इन स्रोतों से प्राप्त होता था। कोई भी व्यक्ति इन करों की मात्रा का नियन्त्रण नहीं करता था। यह केवल राज्य और विदेशी व्यापारियों के बीच सौदेबाजी का विषय था। किन्तु ये कर अधिक या कम मात्रा में रिवाज (Custom) द्वारा निर्धारित होने लगे थे और इसी तथ्य के कारण उनका नाम 'रिवाज के कर' (Customs duties) पड़ गया।

४. वेल्स, स्काटलैण्ड और आयर्लैण्ड का पिछड़ापन

यह आवश्यक नहीं है कि जितना इंग्लैण्ड के बारे में विस्तार से हमने वर्णन किया है उतना ही द्वीप समूह के अन्य तीन राष्ट्रों के बारे में भी वर्णन किया जाय। इसका कुछ कारण तो यह है कि हम इस युग में उनके सम्बन्ध में बहुत कुछ नहीं जानते हैं, किन्तु मुख्य रूप से इसका कारण यह है कि ये तीनों इंग्लैण्ड की अपेक्षा बहुत अधिक पिछड़ी दशा में थे। हम देख चुके हैं कि इंग्लैण्ड एक सामन्ती आधार पर संगठित किया गया था, किन्तु सामन्ती व्यवस्था के साथ ही तथा इसे गम्भीर रूप से परिवर्तित करने वाली संगठित समुदायों की वह उल्लेखनीय श्रृंखला भी थी जिनमें जनता सामान्य मामलों के शासन प्रबन्ध में सहयोग देने के लिए प्रशिक्षित की जा रही थी। इस सबके ऊपर राजा की शक्ति इतनी सुदृढ़ थी कि वह सामान्यत: पर्याप्त अच्छी व्यवस्था बनाये रखने में और जनता को न्याय प्रदान करने में समर्थ थी। वेल्स, स्काटलैण्ड और आयर्लैण्ड के अधिकांश भागों में जनजीवन की प्रमुख विशेषता यह थी कि वहाँ जन जातीय पद्धति का ऐसा पुनरुज्जीवन था, जिसमें शक्ति सदैव एक-दूसरे से

लड़ने वाले आनुवंशिक सरदारों में रहती थी। यह सत्य है कि इन तीनों देशों में आने वाले नार्मन लोगों ने सामन्ती पद्धति के कुछ आरम्भिक तत्वों को शुरू किया, किन्तु इन तीनों छोटे राष्ट्रों के सामन्ती सरदारों को इंग्लैण्ड की भाँति एक राष्ट्रीय पद्धति में व्यवस्थितनहीं किया गया था। सब दोषों के होते हुए भी सामन्ती पद्धति जनजातीय (Tribal) पद्धति से अधिक अच्छी है क्योंकि यह इसके सभी वर्गों के सदस्यों को यह स्मरण कराती है कि उनका पूर्ण रूप में राज्य के प्रति एक कर्तव्य है और वह इन कर्तव्यों का पालन कराने के लिए किसी प्रकार के साधन की व्यवस्था करता है। वेल्स, स्काटलैण्ड और आयर्लैण्ड में सामन्ती सरदार अभी तक उपद्रव और गड़बड़ी पैदा करने वाले अतिरिक्त तत्वों से अधिक कुछ भी न थे। इन तीनों में कोई ऐसी केन्द्रीय शक्ति न थी, जो सुदृढ़ हाथों से शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने में समर्थ हो। वेल्स और आयर्लैण्ड में इंगलिश राजा के नाम-मात्र के आधिपत्य के अतिरिक्त कोई केन्द्रीय शक्ति न थी; इसीलिए इनमें से किसी भी देश में कोई ऐसी चीज नहीं थी जिसे कानून और न्याय की राष्ट्रीय पद्धति कहा जा सके। कानून और न्याय जनजातीय मामले थे, राष्ट्रीय मामले नहीं। स्काटलैण्ड अपने राष्ट्रीय राजतन्त्र में राष्ट्रीय पद्धति के लिए संघर्ष कर रहा था; किन्तु उसकी संस्थाएँ अब भी बड़ी आरम्भिक दशा में थी और उसका इतिहास कभी न समाप्त होने वाले विक्षोभ की कथा है। यह स्थिति न केवल १३वीं शताब्दी में थी, किन्तु इसके बाद भी बहुत समय तक बनी रही। १२१५ ई० में चारों जातियों में से केवल इंग्लिश लोगों के सम्बन्ध में ही यह कहा जा सकता था कि वे राष्ट्र के रूप में संगठित थे, राष्ट्र के रूप में उन्होंने कार्य करना आरम्भ कर दिया था, अगले युग में वे अपनी राष्ट्रीयता का अनुभव तीव्रता से करने लगे थे। अन्य तीन जातियों के बारे में यही कहा जा सकता था कि उनमें राष्ट्र बनने की सम्भावना है, उन्होंने अगले युग में इंग्लैण्ड के विरुद्ध संघर्षों की शृंखला में अधिक पूर्णता के साथ अपनी राष्ट्रीयता को अनुभव करना शुरू किया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Bateson, Medieval England; **Lipson,** English Economic History (Vol i.); **Gross,** Gild Merchant; **Milman,** Latin Christianity; **Gasquet,** English Monastic Life; **Haskins,** Renaissance of the Twelfth Century; **Tait,** Medieval Boroughs; **Chambers,** Continuity of English Prose; **Bond,** Gothic Architecture in England; **Salzman,** English Life in the Middle Ages.

द्वितीय पुस्तक

चार राष्ट्रों के संघर्ष और इंगलैण्ड में स्वशासन का विकास

(१२१५ से १४८५ ई०)

द्वितीय पुस्तक

चार राष्ट्रों के संघर्ष और इंग्लैण्ड में स्वशासन का विकास

(१२१५ से १४८५ ई०)

प्रस्तावना

हमारी पहली पुस्तक में, ब्रिटिश द्वीपसमूह में चार राष्ट्रों के निर्माण का उल्लेख किया जा चुका है। ये राष्ट्र उन अनेक प्रजातियों से बने थे, जिन्होंने इनकी आबादी के बनाने में योगदान दिया है। इनमें मुख्य रूप से इंग्लिश राष्ट्र का प्रतिपादन किया गया है, क्योंकि चारों में यही सबसे अधिक विकसित था। यह इंग्लिश राष्ट्र भविष्य में अन्य तीन राष्ट्रों का स्वामी या आदर्श बनने वाला था। हम देख चुके हैं कि इंग्लैण्ड में किस प्रकार राष्ट्र की एकता का निर्माण नार्मन और आन्जेविन राजाओं के सुदृढ़ शासन से सम्पन्न हुआ, किस प्रकार इन राजाओं ने अपने प्रजाजनों में कानून का राज्य (Reign of Law) स्थापित किया और अन्त में किस प्रकार राजा जॉन को अपने पूर्ववर्तियों द्वारा निर्मित असीम अधिकार पर निश्चित प्रतिबन्ध स्वीकार करने को बाधित होना पड़ा।

हमारी द्वितीय पुस्तक में वर्णन किये जाने वाले १२१५ से १४८५ के युग में, ये शुरूआतें महान विकास को प्राप्त हुईं। यह ब्रिटिश द्वीपसमूह ऐसी स्थिति में पहुँचा दिया गया, जिसमें उसे ब्रिटिश गौरव के उस युग में प्रवेश करना था, जो हमारी कथा का मुख्य विषय है। इस युग का प्रारम्भ १५वी शताब्दी के अन्त में हुए महान अन्वेषणों के साथ होता है। स्पष्ट रूप से यह समझ लेना बहुत आवश्यक है कि आधुनिक युग के आरम्भ में ब्रिटिश द्वीपसमूह के चार राष्ट्र किस अवस्था तक पहुँचाये जा चुके थे। अतः हम इस द्वितीय युग का पहले युग की अपेक्षा अधिक सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करेंगे।

इंग्लैण्ड में सम्भवतः इस युग की प्रमुख विशेषताएँ पार्लियामेण्ट का निर्माण और विकास थीं, पार्लियामेण्ट ने देश के शासन पर पर्याप्त मात्रा में अधिकार प्राप्त कर लिया था। इसके साथ-साथ जनता के सबसे अधिक महत्वपूर्ण वर्गों में इस प्रवृत्ति का विकास हो रहा था कि वे अपने स्थानीय मामलों का उस मात्रा तक स्वयमेव प्रबन्ध करें, जो उस समय यूरोप के अन्य किसी देश में अज्ञात था। इस काल में ही इंग्लिश कृषक वर्गों ने शनैः शनैः भूदास होना छोड़ दिया और वे स्वतन्त्र व्यक्ति वन गये। यह परिवर्तन यूरोप के अन्य किसी देश की अपेक्षा इंग्लैण्ड में पहले घटित हुआ। इन महान परिवर्तनों के साथ इस युग में इंग्लिश लोगों में राष्ट्रीय एकता और देशभक्ति की अत्यधिक प्रबल भावना उत्पन्न हुई। इसने अन्त में प्रजाति या नस्ल के पुराने भेदों की स्मृति को मिटा दिया और यह बात राज्य को एक बनाने का प्रधान संयोजक बन गयी। अब इंग्लिश राज्य की वास्तविक शक्ति का निर्माण करने वाला तत्व भूमि के प्रधान अधिपति के रूप में राजा के प्रति सामन्ती स्वामिभक्ति का बन्धन नहीं था, किन्तु वह राष्ट्र के अध्यक्ष के रूप में राजा के प्रति निष्ठा की भावना थी।

राष्ट्रीय देशभक्ति और राष्ट्रीय अभिमान की इस भावना ने इंग्लिश लोगों को प्रेरित किया कि वे अपने पड़ोसियों पर अपना शासन स्थापित करने का प्रयत्न करें। उन्होंने वेल्स जीत लिया। स्काटलैण्ड को जीतने का उन्होंने व्यर्थ ही प्रयास किया; किन्तु वे इस प्रकार स्काट लोगों की राष्ट्रीय भावना को अधिक शक्ति प्रदान करने में सफल हुए। अन्त में उन्होंने फ्रांस की फूट का लाभ उठाते हुए उसे जीतने का प्रयत्न किया। किन्तु कुछ उज्ज्वल घटनाओं वाले लम्बे और विध्वंसक युद्धों के बाद, अन्त में इंग्लिश आक्रमण ने फ्रेंच लोगों के अन्दर भी देशभक्ति की अग्नि को उद्दीप्त किया और इंग्लिश राजाओं के पुराने फ्रेंच प्रदेशों के अन्तिम अवशेष भी समाप्त हो गये। इस प्रकार इंग्लिश राष्ट्रीय भावना को अपनी शक्ति के लिए निकास का नवीन क्षेत्र ढूँढ़ना पड़ा। इसी कारण यह राष्ट्रीय भावना १५वीं शताब्दी के महान् आविष्कारों का लाभ उठाने के लिए तैयार हो गयी।

इस युग में वेल्स में देशभक्ति की भावना का महान् पुनरुज्जीवन हुआ और इसे इंग्लिश विजय भी न दबा सकी। फिर भी वेल्स को इंग्लिश शासन पद्धति में लाये जाने से बहुत लाभ हुए।

स्काटलैण्ड में इंग्लिश आक्रमणों के विरुद्ध सामान्य प्रतिरोध ने इसकी विभिन्न जातियों को एक राष्ट्र में संगठित कर दिया, यह संगठन इंग्लिश राष्ट्र से अनेक अंशों मे विभिन्न प्रकार का था। किन्तु यह इतना अधिक भिन्न नहीं था कि इनका भावी सहयोग असम्भव बन जाता।

केवल अभागे आयरलैण्ड में ही कोई सुधार न हुआ तथा वह पिछड़ गया। आयरलैण्ड न तो वेल्स की भाँति निश्चित रूप से जीता गया, न स्काटलैण्ड की भाँति अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने में निश्चित रूप से समर्थ हुआ। आधुनिक युग में इस कारण अनेक दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम उत्पन्न हुए।

●●

१

मध्य युग और इसका ब्रिटिश द्वीपसमूह पर प्रभाव

यूरोप की घटनाओं के क्रम के कुछ ज्ञान के बिना यह सम्भव नहीं है कि हम ब्रिटिश द्वीपसमूह के अथवा इससे विकसित होने वाले विश्वव्यापी राष्ट्रमण्डल के इतिहास का अध्ययन लाभदायक रीति से कर सकें; क्योंकि ब्रिटिश द्वीप-समूह और ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल पश्चिमी सभ्यता के महान् समुदाय के अंश मात्र हैं। इन्होंने जो चिन्तन एवं कार्य किया है वह यूरोप के, और विशेष रूप से फ्रांस के चिन्तन और कार्य से सदैव गम्भीर रीति से प्रभावित हुआ है।

१. यूरोप की राजनीतिक पद्धतियों और विचारों में परिवर्तन

मध्ययुग में, मनुष्य पश्चिमी सभ्यता अथवा पश्चिमी ईसाइयत (जो तत्वतः एक ही वस्तु थी) की एकता की महत्ता और मूल्य का गम्भीरता से अनुभव करते थे। किसी भी समय में यह एकता इससे अधिक वास्तविक वस्तु नहीं थी, जैसी यह उस समय थी, जब १३वीं शताब्दी के आरम्भ में महान् पोप इन्नोसेण्ट तृतीय रोम से यूरोप पर लगभग शासन कर रहा था, उसने राजा जॉन को उसकी आज्ञा का पालन करने तथा उसके वशवर्ती सामन्त (Vassal) बन जाने के लिए बाधित किया था। पश्चिमी ईसाइयत के सभी शासक, समान रूप से पोप को भगवान् की इच्छा को अभिव्यक्त करने वाला स्वीकार करते थे। प्रत्येक देश में न्याय का समर्थन और विद्या का पोषण करने वाला चर्च सर्वत्र मनुष्यों को यह तथ्य बताता था कि उनका कर्त्तव्य है कि वे अपने राष्ट्र के प्रति और अपने राजा के प्रति स्वामिभक्ति रखने के साथ-साथ

ईसाइयत के समाज (Respublica Christiana) के प्रति तथा सभ्यता के समुदाय के प्रति भी निष्ठा रखें।

मध्ययुगीन सिद्धान्त के अनुसार पश्चिमी ईसाइयत की एकता के प्रतिनिधि न केवल चर्च और पोपतन्त्र (Papacy) थे, किन्तु इसका प्रतिनिधि सम्राट् (Emperor) भी था। यह सम्राट् सांसारिक मामलों में भगवान् की ओर से वैसा ही शासन करने वाला (Vicegerent) समझा जाता था, जैसा धार्मिक मामलों में पोप को समझा जाता था। किन्तु वास्तविक तथ्य यह था कि सम्राट् की शक्ति शार्लमेगन के समय से जर्मनी, इटली और बर्गण्डी के तीन राज्यों से आगे कभी विस्तीर्ण नहीं हुई थी और इसने ब्रिटिश द्वीप समूह के मामलों पर कभी प्रभाव नहीं डाला था। १३वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में एक अतीव तेजस्वी सम्राट् फ्रेडरिक द्वितीय हुआ, जो "विश्व का विस्मय" के नाम से विख्यात था। यह इटली में अपनी शक्ति को प्रभावशाली बनाने का प्रयत्न कर रहा था। इस प्रयत्न के कारण उसे एक के बाद एक, अनेक पोपों से भीषण संघर्ष करना पड़ा। विश्व के दो सर्वोच्च शासकों के बीच इस भयंकर संघर्ष को इंग्लैण्ड में तीव्रतम अभिरुचि के साथ देखा गया। इस युग के महान् इंग्लिश इतिहासकार मैथ्यू पेरिस को इस संघर्ष में उतनी ही गहरी रुचि थी, जितनी इंग्लिश मामलों में। फ्रेडरिक द्वितीय जब तक जीवित रहा, वह अपनी स्थिति बनाये रहा, यद्यपि उसकी सत्ता जर्मनी तथा बर्गण्डी में बहुत कम हो गयी थी। बर्गण्डी के सामन्ती सरदार शीघ्र ही स्वतन्त्र शासक बन गये। उसकी शक्ति विरासत में पाये जाने वाले नेपल्स और सिसली के नार्मन राज्य पर ही लगभग पूर्ण रूप से आधारित थी। उसकी मृत्यु (१२५०) के बाद साम्राज्य की शक्ति लगभग पूर्ण रूप से समाप्त हो गई। इसके बाद यूरोप के इतिहास में कभी इसका महत्व नहीं रहा। फिर भी वास्तविक नियामकशक्ति के रूप में इसकी पुन: स्थापना का स्वप्न बचा रहा, और इसने महाकवि दांते जैसे महान् विचारकों को प्रभावित किया। दांते की कृति De Monarchia में साम्राज्य की पुन: स्थापना को पृथ्वी पर शान्ति और न्याय की स्थापना की युक्ति रूप में प्रतिपादित किया गया है। मनुष्य आजकल की भाँति उस समय भी यह अनुभव करते थे कि विश्व में शान्ति और न्याय को सुरक्षित बनाये रखने के लिए किसी सामान्य सत्ता की आवश्यकता है। पवित्र रोमन साम्राज्य का आदर्श एक तरह से राष्ट्र संघ के आदर्श का पूर्वज था। किन्तु साम्राज्य की पुन: स्थापना का प्रत्येक प्रयत्न विफल हुआ और इस प्रकार ईसाइयत की एकता के दो महान् प्रतीकों में से एक प्रतीक उन तीन शताब्दियों के काल में जिनका इस पुस्तक में वर्णन है—अधिकाधिक मात्रा में स्पष्ट अवास्तविकता बनती चली गयी।

फ्रेडरिक द्वितीय के उत्तराधिकारियों के विरुद्ध अन्तिम संघर्ष में इंग्लैण्ड को विचित्र रूप से सम्मिलित होना पड़ा। चूँकि इंग्लिश राज्य के लिए राजा जॉन ने पोप के साथ विशेष वश्यता का सम्बन्ध स्थापित किया था, अत: पोप इस बात का प्रयत्न करते थे कि वे अपने शत्रुओं के विरुद्ध उसकी शक्ति का उपयोग करें। इसीलिए राजा हेनरी तृतीय के भाई कार्नवाल के रिचर्ड को जर्मनी में शाही गद्दी के लिए खड़ा किया गया और उसने वहाँ समर्थन प्राप्त

करने के वृथा प्रयास में अपनी शक्ति नष्ट की। इसी समय राजा के दूसरे बेटे लैंकास्टर के एडमण्ड को सिसली की गद्दी के उम्मीदवार के रूप में लाया गया। हम देखेंगे कि इन घटनाओं का इंग्लैण्ड के घटनाक्रम पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इन घटनाओं ने इंग्लैण्ड में पोप के विरुद्ध बढ़ती हुई प्रतिक्रिया को उत्पन्न करने में सहायता दी। अब पोप को इन भारी व्यय वाले तथा बेकार साहसिक कार्यों के आर्थिक भार और बरबादी के लिए दोष दिया जा रहा था।

साम्राज्य के पतन का एक कारण यह भी था कि १०वीं शताब्दी से यूरोपियन राज्यों में सबसे शक्तिशाली रहने वाला जर्मनी, अब अव्यवस्था की ऐसी दशा में पड़ गया, जिससे उद्धार पाने में उसे १९वीं शताब्दी तक कभी सफलता नहीं मिली। यह ऐसे छोटे, लड़ने वाले राज्यों की खिचड़ी-सा बन गया, जिसमें सब अपने पड़ोसियों को हानि पहुँचाकर अपने प्रदेश का विस्तार करने का प्रयत्न किया करते थे। इस गड़बड़ में चार उल्लेखनीय बातें घटित हुईं। [1] हैब्सबर्ग (Habsburg) के महत्वाकांक्षी परिवार ने अपने को आस्ट्रिया के उस जिले में स्थापित किया, जो दक्षिण पूर्वी जर्मनी के सीमान्त जिलों में से एक था। १३वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में विभक्त जर्मनी के प्रमुख शासक घराने में स्थान ग्रहण करने वाले इस परिवार ने अगले छः सौ वर्ष तक यूरोप के इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण भाग ग्रहण किया। इसी समय आरण्यक जिलों (Forest Cantons) के स्विस पर्वतवासियों ने प्रधान रूप से हैब्सबर्ग वंश वालों के विरुद्ध संघर्ष करते हुए अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की।[2] स्विस स्वतन्त्रता का योद्धा विलियम टेल १३वीं शताब्दी के अन्त में तथा १४वीं शताब्दी के शुरू में हुआ। अगली दो शताब्दियों में स्विस लोग शनैः शनैः पड़ोसी जिलों को अपने संघ में सम्मिलित कर रहे थे। इस समय चारों ओर फैली हुई अव्यवस्था से रक्षा करने के लिए जर्मनी के व्यापार करने वाले नगर अपने को संघों में संगठित करने लगे। इन नगरों ने अपने को लगभग स्वतन्त्र राज्य बना लिया। उत्तरी जर्मनी के नगरों ने सुप्रसिद्ध हैन्सियाटिक संघ (Hanseatic League) का निर्माण किया। इसका केन्द्र ल्यूबेक था और काफी लम्बे समय तक, विशेषतः १६वीं शताब्दी में उत्तरी यूरोप के व्यापार पर, यह संघ पूरी तौर से हावी था।[3] लन्दन में इनका एक बड़ा केन्द्र था और इंग्लिश व्यापार का अधिकांश भाग इनके हाथ में था। अपने राजनीतिक विभागों के बावजूद जर्मनी १७वीं शताब्दी के धार्मिक युद्धों के समय तक एक समृद्ध देश था। इन युद्धों से उसका विनाश हुआ। उसके द्वारा प्राप्त की गयी शक्ति उस पौरुष से प्रदर्शित होती है, जिससे वह पूर्व की ओर के स्लाव जातियों के प्रदेशों को जर्मन बना रहा था। इस युग में उसके इतिहास की चौथी महत्वपूर्ण विशेषता उसका पूर्वाभिमुख प्रसार है। उसके समूचे पूर्वी सीमान्तों के साथ-साथ यह दबाव पड़ रहा था, किन्तु यह बाल्टिक सागर

---

१. देखिये एटलस की प्लेट संख्या २४, २५

२. देखिये एटलस की प्लेट संख्या ३८ (बी)

३. देखिये एटलस की प्लेट संख्या ३३।

के उन तटों पर अधिक क्रियाशील था,[१] जहाँ १३वीं और १४वीं शताब्दियों में ट्यूटानिक योद्धा प्रशिया की गैर ईसाई स्लेवोनिक जातियों को जीत रहे थे और उन पर ईसाइयत थोप रहे थे। अधिक उत्तर में खड्गधारी योद्धा (Knights of the Sword) का नाम धारण करने वाले कुछ व्यक्ति अपना शासन उस स्थान पर स्थापित कर रहे थे, जो बाद में बाल्टिक प्रान्तों-कुर्लैण्ड, लिवोनिया और इस्थोनिया के नाम से प्रसिद्ध हुआ। साहसिक धर्मयुद्ध के वीरतापूर्ण ये कार्य सारे यूरोप के योद्धाओं को आकृष्ट करने लगे। चासर (Chaucer) की कैन्टरबरी टेल्स (Canterbury Tales) में योद्धा अपना कुछ समय प्रशिया में लड़ते हुए व्यतीत करता है। यद्यपि ऐसा नहीं प्रतीत होता कि इन घटनाओं ने ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास पर कोई अधिक स्पष्ट प्रभाव डाला हो; फिर भी सुदूर भविष्य में इसके परिणाम बहुत महत्व-पूर्ण हुए।

जब जर्मनी में इस प्रकार अव्यवस्था थी, समय इटली विभिन्न प्रकार के साह-सिक कार्यों में संलग्न होते हुए भी, अपना स्वतन्त्र विकास कर रहा था। साम्राज्य के खण्ड-हरों पर नगर-गणराज्यों की या प्रादेशिक नरेशों की एक बड़ी संख्या उत्पन्न हो गयी थी। इनमें पोप प्रादेशिक प्रभुता रखने वाला एक शासक था। १३वीं और १४वीं शताब्दियों में इन छोटे राज्यों ने, विशेषतः फ्लोरेन्स और वेनिस ने शासन के सम्बन्ध में अनेक मनोरंजक परी-क्षण किये थे। इन परीक्षणों पर विचार करना यहाँ अप्रासंगिक है। इन राज्यों के स्वतन्त्र वातावरण की छत्रच्छाया में साहित्य, विद्या एवं ललित कलाओं का एक उज्जवल विकास पहले से ही शुरू हो चुका था। १३वीं शताब्दी के अन्त में इटली का सबसे बड़ा फ्लोरेन्स-वासी कवि दाँते अपना महाकाव्य 'डिवाइन कॉमेडी' (The Divine Comedy) लिख रहा था और अगली शताब्दी में उसका यशस्वी उत्तराधिकारी पैट्रार्क हुआ। इटली की चित्रकला का गौरव शीघ्र ही प्रदर्शित होने वाला था। इसी समय में इटली के महान बन्दरगाह वेनिस, जिनेवा और पीसा के साहसी समुद्रयात्री पूर्वी देशों के साथ विलास-वस्तुओं के अपने उस व्यापार को अत्यधिक रूप में विकसित कर रहे थे जिस व्यापार का श्रीगणेश धर्मयुद्ध ने किया था। इन नाविकों में से कई महान अन्वेषक हुए। इनमें १४वीं शताब्दी के मार्कोपोलो का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ये १५वीं शताब्दी के उन आश्चर्यजनक अन्वेषकों के अग्रगामी थे, जिनमें से अनेक पहले इटालियन थे। इस सारे समय में इटली के नगर-राज्य और छोटे निरंकुश सामन्ती राज्य एक ऐसी सभ्यता के केन्द्र थे, जो यूरोप के अन्य किसी भी स्थान की सभ्यता से अधिक उज्जवल थी। इन राज्यों की सम्पत्ति और कीर्ति इनकी अपेक्षा अधिक बर्बर दशा वाले उत्तरी यूरोप के महानतम राज्यों से बहुत अधिक थी।

१३वीं शताब्दी में यूरोप में जो प्रमुख स्थिति अब तक जर्मनी को प्राप्त थी, अब वह निश्चित रूप से फ्रांस को मिल गयी। १२०८ ई० में नार्मण्डी की विजय के समय से फ्रांस के राजा बड़ी तेजी से अपनी शक्ति का विस्तार करते रहे।[२] अब तक इनके आदेशों की

---

१. देखिये एटलस की प्लेट संख्या ३३।

२. एटलस की प्लेट सं० २४-५ और २५ (ए) देखिये।

अवहेलना करने में समर्थ महान् सामन्ती जागीरदारों को वे अपने अधीन कर रहे थे। १३वीं शताब्दी में फ्रेंच राजाओं में सबसे उदात्त लुई नवम हुआ, जो सन्त लुई के नाम से भी प्रसिद्ध है।[1] वह मध्ययुगीन नृपत्व का पूरा आदर्श था; वह एक वीर धर्मयोद्धा तथा निर्भय और निष्कलंक क्षत्रिय योद्धा (Knight), एक भक्त एवं प्रसन्न ईसाई, एक सुदृढ़ शासक और पूर्ण रूप से अपने वचन का पालन करने वाला था। उसने सारे यूरोप का सम्मान प्राप्त किया था। प्रायः उसे मध्यस्थ बनाया जाता था, जैसे १२६४ ई० में इंग्लिश राजा जॉन और बैरन लोगों ने आमियन्स के माइस (Mise of Amiens) नामक अपने विवाद में इसे निर्णायक बनाया था। इसके बाद फ्रांस की गद्दी पर सुन्दर फिलिप बैठा, यह महान राजा कानून का ज्ञाता था। यह इंग्लिश राजा एडवर्ड प्रथम का समकालीन था तथा यह उससे कई बातों में मिलता था। निरंकुश फ्रेंच राजतन्त्र के कानूनी संगठन को इसी समय सुधारा गया। किन्तु फ्रांस अब तक राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत होकर एक नहीं बना था और इसलिए उसके राजाओं की प्रबल शक्ति के बावजूद उसकी एकता खतरे में पड़ी हुई थी। आन्तरिक झगड़ों और सामन्ती आकांक्षाओं के बोझ से उस एकता के भंग होने का भय था। इन सामन्ती महत्वाकांक्षाओं ने इंग्लिश राजाओं को इस बात का अवसर प्रदान किया कि वे फ्रांस को नयी सिरे से विजय करें, भले ही यह क्षणिक हो। फ्रांस अपनी महत्ता के पूर्ण शिखर पर उस समय तक नहीं पहुँचा, जब तक की जोन ऑफ आर्क (Joan of Arc) में केन्द्रित उसकी राष्ट्रीय देशभक्ति के सहसा उद्वेग ने अंग्रेजों को फ्रांस से बाहर नहीं खदेड़ दिया।

इस काल की एक प्रधान विशेषता यह है कि इस समय में विशाल और एकीकृत (Unified) राज्यों में राष्ट्रीय भावना का क्रमिक विकास हुआ। वस्तुतः विश्व के इतिहास में अपने नागरिकों की देशभक्ति से संगठित और एक बना रहने वाला राष्ट्रीय राज्य एक नई वस्तु थी। इसका अस्तित्व इस समय से पहले कभी नहीं हुआ था। इसका प्रादुर्भाव शनैः शनैः और अज्ञात रूप में हुआ। राष्ट्रीय राज्यों में इंग्लैण्ड पहला देश था, जिसे अपनी राष्ट्रीयता की पूर्ण रूप से अनुभूति हुई। अगले अध्याय में हम यह देखेंगे कि इस दिशा में इंग्लैण्ड कौन-कौन से बड़े कदम उठा रहा था। फ्रांस इसी मार्ग पर शनैः शनैः उसका अनुसरण कर रहा था। इसी युग में स्पेन के छोटे-छोटे ईसाई राज्य कैस्टाइल, अरागोन और पुर्तगाल मूरों की अपेक्षा अधिक प्रबल हो रहे थे[2] और इस संघर्ष में देशभक्ति की एक प्रबल भावना को ग्रहण कर रहे थे। इस देशभक्ति की भावना ने उन्हें यूरोप के परवर्ती इतिहास में एक बड़ा भाग लेने में समर्थ बनाया। १३वीं शताब्दी की समाप्ति से पहले मूरों को धुर दक्षिण में एक तंगपट्टी में बन्द कर दिया गया था और ईसाई राज्य अब लगभग समूचे प्रायद्वीप के स्वामी बनकर यूरोप के जीवन में महत्वपूर्ण भाग लेने के लिए समर्थ हो गये।

यूरोप के बाहर बड़ी महत्वपूर्ण घटनाएँ हो रही थीं। अद्भुत मंगोल विजेता चंगेजखाँ

---

१. जोइनविले की सैण्टलुई मनोहारिणी जीवनी का एक इंग्लिश अनुवाद भी है।

२. एटलस की प्लेट संख्या २८ (सी) तथा (डी) देखिये।

१३वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में अपने को चीन तथा हिमालय के उत्तर में सम्पूर्ण एशिया का स्वामी बनाने में सफल हुआ।[1] उसकी सेनाएँ यूरोप में आगे बढ़ती गयीं। इन्होंने रूस की असंगठित और पिछड़ी जनता को दो सौ वर्ष तक पराधीन बनाये रखा। पश्चिमी यूरोप की जनता में इससे महान भय उत्पन्न हो गया। यद्यपि यह खतरा प्रधान रूप से पोल लोगों की वीरता से टल गया, किन्तु इसके कारण पहली बार यूरोप में, एशिया तथा इसके मामलों के प्रति गहरी दिलचस्पी पैदा हो गयी। दो साहसी ईसाई साधु चंगेजखाँ के दरबार में पहुँचने के लिए भेजे गये। इनमें से एक का नाम रूब्रूक्विस था और इसे फ्रांस के राजा सन्त लुई ने भेजा था। दूसरे का नाम कारपीनी था। इसे पोप ने भेजा था। इन लोगों ने वापस आकर यूरोप को जो सूचनाएँ दीं, वे पूर्व के बारे में यूरोप को पहले-पहल ही मिली थीं। १४वीं शताब्दी में इनसे भी बड़े यात्री मार्कोपोलो ने एशिया के आर-पार होते हुए, चीन में से तथा वापस लौटते हुए भारत से यूरोप तक के अन्वेषण की महान यात्रा की।[2] धर्मयुद्धों की यात्राओं ने भी यूरोप के पार्थक्य को भंग करना शुरू किया था; इन यात्राओं ने इस प्रक्रिया को बहुत आगे बढ़ा दिया। जब मध्य एशिया के मंगोल अपने शिथिल और कम संगठित साम्राज्य को बना रहे थे, उसी समय इनके वंश की एक दूसरी शाखा उस्मानिया तुर्क (Ottoman Turks)[3] पहले लघु एशिया (Asia Minor) में और १४वीं शताब्दी में बाल्कान प्रायद्वीप में अपनी प्रभुता स्थापित कर रही थी। हम इनके कार्यों के बारे में अधिक वर्णन आगे करेंगे। इसी बीच इनकी आक्रमणात्मक क्रियाशीलता इस बात को निश्चित बना रही थी कि यूरोप को धर्मयुद्ध अथवा क्रूसेड के दिनों की भाँति पुनः पूर्व की ओर ध्यान देना पड़ेगा। पूर्व और पश्चिम के, ईसाइयत और इस्लाम के संघर्षों में नया पहलू आगे आने वाला था।

१४वीं शताब्दी की सबसे अधिक आश्चर्यजनक विशेषता यह है कि यूरोप ने इस समय तुर्कों की आक्रमणात्मक क्रियाशीलता की ओर अत्यधिक कम ध्यान दिया और इसका प्रतिरोध करने के लिए भी कम प्रयत्न किया। इसका प्रमुख हेतु यह था कि राष्ट्रीय भावना के विकास होने के साथ-साथ तथा इटली और जर्मनी के नगर राज्यों में पायी जाने वाली उग्र स्थानीय देशभक्ति के कारण, एकता की वह अनुभूति शनैः शनैः निर्बल होने लगी थी, जो अनुभूति ईसाइयत के तथा इसके सर्वसामान्य हितों के कारण उत्पन्न हुई थी। हम पहले देख चुके हैं कि इस एकता का एक प्रतीक माना जाने वाला साम्राज्य इस समय स्पष्ट रूप से अशक्त हो गया था। इसकी अवनति के बाद इसके महान् प्रतिस्पर्धी और साथी पोपतन्त्र (Papacy) का भी पतन होने लगा था। यद्यपि पोप के पास आध्यात्मिक नेतृत्व बना रहा, किन्तु यूरोप में उसका राजनैतिक प्रभाव अधिकाधिक मात्रा में घटता चला गया। १३वीं

---

१. एटलस की प्लेट संख्या ३०-३१ देखिये।

२. इसका मार्ग एटलस की प्लेट संख्या ३०-३१ में दिखाया गया है।

३ अंग्रेजी में प्रयुक्त होने वाला ओटोमन शब्द वस्तुतः अरबी के उस्मान का विकृत रूपान्तर है, अतः यहाँ उस्मानिया शब्द का ही प्रयोग किया गया है।

शताब्दी में पोपों को साम्राज्य के विरुद्ध संघर्ष चलाने के लिए जो टैक्स वसूल करने पड़े, उनसे सब देशों में चर्च के विरुद्ध महान् असन्तोष उत्पन्न हो गया। हम अगले अध्याय में यह देखेंगे कि इंग्लैण्ड में यह असन्तोष कितना प्रबल था। १४वीं शताब्दी के आरम्भ में पोप फ्रेंच राजतन्त्र के प्रभाव के वशीभूत हो गये और उन्होंने अपने शासन का स्थान रोम से हटाकर फ्रेंच राजा के प्रदेश की सीमा पर अविन्योन (Avignon) में बना लिया। पोप वहाँ ७० वर्ष तक रहे और यह काल 'बैबीलोनियन बन्धन' (Babylonish Captivity) के नाम से प्रसिद्ध है। इस सारे समय में पोप फ्रेंच व्यक्ति होते थे, अतः उन्होंने फ्रांस से अत्यधिक प्रभावित होने वाली नीति का अनुसरण किया था। इसका यह परिणाम हुआ कि पोप के दावों के विरुद्ध प्रबल प्रतिक्रिया हुई। यह विशेष रूप से इंग्लैण्ड में हुई, जो इस समय फ्रांस के साथ एक लम्बे युद्ध में लगा हुआ था। यह प्रतिक्रिया अन्य देशों में भी हुई। न केवल पोप की सत्ता के विरुद्ध प्रतिवाद किया गया, किन्तु कैथोलिक चर्च के कुछ सिद्धान्तों और आचरणों के विरुद्ध भी एक उल्लेखनीय विद्रोह हुआ। यह विद्रोह इंग्लैण्ड में तथा बोहीमिया में चरम शिखर पर पहुँच गया। हम आगे यह देखेंगे कि यह विद्रोह उस समय बढ़ गया जब कि बैबीलोनियन बन्धन के बाद पोपों में फूट पड़ गयी और प्रतिस्पर्धी पोप एक दूसरे को शाप देने लगे। १४वीं और १५वीं शताब्दी में सर्वत्र विचारों की स्वतन्त्रता का विकास हो रहा था। मध्य युग के मान्यता प्राप्त सिद्धान्तों को धर्म एवं राजनीति के क्षेत्रों में चुनौती दी जा रही थी। इसका यह अभिप्राय था कि पहले ज़माने में महत्वपूर्ण समझी जाने वाली ईसाइयत की एकता की प्रबल भावना अब निरन्तर क्षीण होती जा रही थी।

२. सभ्यता की समृद्धि : ईसाई, भिक्षु (Friars) और विश्वविद्यालय

यद्यपि चर्च का राजनीतिक प्रभाव क्षीण हो रहा था तथापि चर्च ने जिस सभ्यता का पोषण किया था, उसका कार्य अब पहले की अपेक्षा अधिक वेग के साथ चल रहा था। सभ्यता का संरक्षण अभी भी प्रधान रूप से उन संस्थाओं द्वारा हो रहा था, जिन्हें चर्च ने उत्पन्न किया था। किन्तु समय बीतने के साथ-साथ ये संस्थाएँ अधिकाधिक स्वतन्त्र और राष्ट्रीय होती चली जा रही थीं। इनके साथ ऐसी संस्थाओं और आन्दोलनों का विकास हो रहा था, जिनके साथ चर्च का कोई सम्बन्ध नहीं था।

सम्भवतः १३वीं शताब्दी का सबसे अधिक उल्लेखनीय कार्य भिक्षुक ईसाई भिक्षुओं (Mendicant Friars) के दो महान सम्प्रदायों—फ्रांसिस्कन तथा डोमीनिकन सम्प्रदायों द्वारा किया गया था। इन सम्प्रदायों का रूप अर्धमठीय (Semi-monastic) था। आरम्भ में इन्होंने चर्च की कट्टर पद्धति के विरुद्ध विद्रोह के कुछ चिन्ह प्रदर्शित किये। किन्तु पोपतन्त्र इतना बुद्धिमान था कि उसने इन्हें मान्यता प्रदान की तथा इनके उत्साह का उपयोग उठाया। यह स्थान असीसी (Assisi) के उस सन्त फ्रांसिस (St. Francis) की कहानी कहने का नहीं है[1] जो मानव द्वारा किसी भी समय में उत्पन्न किये गये अधिकतम प्रेम किये जाने वाले और

१—सावासिये (Sabastier) द्वारा लिखित इसके सर्वोत्तम जीवन-चरित्र का अंग्रेजी में अनुवाद हो चुका है।

सुन्दर व्यक्तियों में से एक था। यहाँ कठोर एवं तपस्वी स्पेनदेशीय सन्त डोमिनिक का भी वर्णन नहीं किया जा सकता। किन्तु इन दोनों नेताओं ने अत्यधिक महत्वपूर्ण और शक्ति रखने वाले आन्दोलन का आरम्भ किया।

ईसाई भिक्षुओं के पुराने सम्प्रदाय संसार से अलग रहते हुए अपनी आत्मा की उन्नति में लगे रहते थे। यद्यपि वे अपने साथी मनुष्यों की अनेक प्रकार की सेवा करते थे, तथापि उनका प्रधान उद्देश्य उनकी सेवा करना नही था। किन्तु सन्त फ्रांसिस ने और सन्त डोमिनिक ने अपने अनुयायियों को इस बात का निमन्त्रण दिया कि वे "दरिद्रता को वधू" के रूप में स्वीकार करें, अपनी सारी सम्पत्ति का परित्याग करें और भिक्षावृत्ति से रहें, ताकि वे अपने को गरीब और जरूरतमन्द व्यक्तियों की सेवा में और सत्य के प्रचार में लगा सकें। हज़ारों भक्त मनुष्यों ने उनकी पुकार को सुना और थोड़े-से वर्षों में ही उनके अनेक अनुयायी सारे यूरोप में फैल गये और धर्मोपदेश देने का, पढ़ाने का, गरीबों और बीमारों की सेवा का कार्य करने लगे। वे सबसे पहले १२२१ और १२२४ ई० के बीच में इंग्लैण्ड आये, जहाँ उनका बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया गया। यह स्वागत विशेष रूप से उन गन्दे अस्वास्थ्यकर छोटे कस्बों में हुआ, जिनकी भिक्षुओं ने सामान्य रूप से उपेक्षा की थी तथा जिनमें सामान्य ईसाई पुरोहितों की सेवाएँ भी उपलब्ध नहीं थीं। अपने सर्वोत्तम दिनों में ईसाई साधु अत्यधिक लोकतन्त्री समुदाय (Democratic communities) थे। आरम्भ में उनका विद्या से या सुन्दर इमारतों से कोई सम्बन्ध नहीं था, किन्तु उन्होंने शीघ्र ही अनुभव किया कि यदि वे मनुष्यों के मनों को प्रभावित करना चाहते हैं तो उन्हें इन चीजों की ओर भी ध्यान देना चाहिए, विशेष रूप से उन दरिद्र विद्यार्थियों के समूहों पर प्रभाव डालना चाहिए, जो इस समय यूरोप के विश्वविद्यालयों का चक्कर काट रहे थे और विचारों में सामान्य हलचल उत्पन्न कर रहे थे। अतः उन्होंने विश्वविद्यालयों के नगरों में अपने गृह बनाना और शिक्षा देना आरम्भ किया। इस युग के तथा अगले युग के अधिकांश महान् विद्वान् इन सम्प्रदायों के व्यक्ति थे। इस क्षेत्र में अनेक साधुओं ने अच्छा काम करना जारी रखा। किन्तु अधिकांश साधुओं में उनका आरम्भिक जोश शीघ्र ही समाप्त हो गया। भिक्षावृत्ति करने वाला साधु मुसीबत बन गया और उसकी सुस्ती और लालच के कारण १४वीं शताब्दी में और उसके बाद चर्च के विरुद्ध प्रतिक्रिया उत्पन्न होने लगी। उच्चतम आन्दोलन उस समय अपनी उपयोगिता खो बैठते हैं, जबकि उनका उत्साह कट्टर रूढ़िवाद में बदल जाता है। एक आदर्श एक संस्था को जन्म देता है और आगे चलकर यह संस्था आदर्श का गला घोट देती है। किन्तु कोई भी वस्तु उस उत्साह को नष्ट नहीं कर सकी, जो ईसाई भिक्षुओं ने दरिद्र एवं उपेक्षित व्यक्तियों के विचारों और आशाओं को प्रदान किया था।

हमने ऊपर विश्वविद्यालयों का निर्देश किया है। इस सारे समय में उनकी क्रियाशीलता पश्चिमी सभ्यता के विचार और जीवन का निर्माण करने वाली एक प्रबल शक्ति थी। यद्यपि ये विश्वविद्यालय चर्च से उत्पन्न हुए और ये लगभग पूर्ण रूप से धार्मिक संस्थाएँ बने रहे; तथापि वे विचार के क्षेत्र में जिस हलचल को उत्पन्न कर रहे थे, वह उस नवीन व्यवस्था को प्रादुर्भूत करने वाली एक महाशक्ति थी, जिसमें चर्च की प्रभुता बहुत ही कम होने वाली थी।

१४वीं और १५वीं शताब्दी में नये विचारों के महान प्रचारक—विक्लिफ, हस (Huss), पडुआ का मार्सिलियस और पेरिस का गरसोन—ये सभी विश्वविद्यालयों से आये थे। विश्वविद्यालयों का आरम्भ १२वीं शताब्दी में हुआ, किन्तु १३वी शताब्दी में ज्ञान की उस शक्ति का प्रभाव अनुभव किया जाने लगा, जिस शक्ति का ये विश्वविद्यालय प्रतिनिधित्व करते थे। महान् आचार्यो की प्रसिद्धि प्रत्येक देश से विद्यार्थियों के समूह को आकर्षित करने लगी। विश्वविद्यालयों के शहर इस समय निरन्तर बढ़ते जा रहे थे और इनकी ओर जाने वाली प्रत्येक सड़क पर परिभ्रमण करने वाले विद्यार्थी, जिनमें अधिकांश निर्धन होते थे, प्राय: दिखायी पड़ते थे। वे आपस में झगड़ने वाले तथा धमाचौकड़ी मचाने वाले, प्राय: शराब पिये और अव्यवस्थित होते थे। उन्हें व्यवस्था में रखना बड़ा कठिन था। वे भिक्षुक ईसाई साधुओं की भाँति उस समय के सड़क के जीवन की एक प्रमुख विशेषता बन गये थे। अब भी हम आधी मज़ाक वाले और आधे शोकपूर्ण उन गातों को सुरक्षित रखते है और गाते हैं, जिन गीतों को वे नगरवासियों के साथ बड़े युद्धों के बाद सरायों में अथवा सड़क के किनारे बाड़े की झाड़ियों की पंक्ति के नीचे गाया करते थे। इन गीतों में Gaudeamus igitur juvenes dum Sumus जैसे गीत बहुत प्रसिद्ध थे, किन्तु उनमें से अधिकांश व्यक्ति लापरवाह तथा आवारा होने पर भी विद्या से प्रेम रखते थे और विद्या प्रदान करने वाले किसी भी गुरु के पास जाकर अत्यन्त उत्कण्ठा से विद्याभ्यास किया करते थे।

यूरोपियन विश्वविद्यालयों में सबसे प्रसिद्ध पेरिस का विश्वविद्यालय था। यह धर्मशास्त्र और दर्शन का महान् केन्द्र था। इसके विद्वानों की प्रामाणिकता पोप से कुछ ही कम थी। दूसरा प्रसिद्ध विश्वविद्यालय बोलोग्ना (Bologna) का था, जहाँ कानून की सर्वोत्तम शिक्षा दी जाती थी। यहाँ से प्राप्त प्रेरणा और पथ-प्रदर्शन ने इस युग में कानून निर्माण की विलक्षण क्रियाशीलता को उत्पन्न किया था। किन्तु ऑक्सफोर्ड इस प्रसिद्ध जोड़े के बाद तीसरा प्रसिद्ध विश्वविद्यालय था। १३वीं शताब्दी में कुछ महान अँग्रेज ऑक्सफोर्ड में अध्यापन कार्य कर रहे थे, जैसे सुप्रसिद्ध साधुस्वभाव वाला एडमन्ड रिच, जो बाद में कैण्टरबरी का आर्कबिशप बना, अथवा राबर्ट ग्रोसेटेस्टे (Robert Grosseteste) जो बाद में लिंकन नामक प्रदेश का बुद्धिमान बिशप बना अथवा इन सबसे बढ़कर रोजर बेकन (१२१४-१२९५), यह सम्भवत: मध्य युग का गम्भीरतम विचारक था। बेकन ने अपना जीवन ऑक्सफोर्ड में तथा इसका अधिकांश भाग फ्रांसिस्कन सम्प्रदाय के भिक्षु (Franciscan Friar) के रूप में व्यतीत किया। उसके बारे में यह कहा जाता है कि उसने बारूद का, दूरवीक्षण यन्त्र का और अग्नि उत्पन्न करने वाले शीशे का आविष्कार किया। ये दावे सच्चे हों या न हों, तो भी उसकी पुस्तकें ज्ञान के महत्व की गम्भीरतम भावना को प्रगट करती हैं और उसके साथ ही ज्ञान को विस्तीर्ण करने के सर्वोत्तम उपायों को, अगली अनेक शताब्दियों में होने वाले किसी भी अन्य विचारक की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह प्रगट करती हैं। वह महानतम अंग्रेजों में से एक था और उसे अधिक अच्छी तरह याद किया जाना चाहिए।

इस युग का एक अन्य महान अँग्रेज इतिहासकार मैथ्यू पैरिस था। यह तेरहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में सैन्ट एलबैन्स के मठ में अत्यधिक सजीव, बहुपक्षीय तथा निष्पक्ष ऐतिहासिक वर्णन

लिखने में लगा हुआ था। ऐसा वर्णन अभी तक यूरोप में नहीं लिखा गया था। सम्भवतः उसकी रचना की सबसे उल्लेखनीय विशेषता इसमें ओत-प्रोत इंग्लिश देशभक्ति की प्रबल भावना है। इससे पहले के मठवासी ऐतिहासिकों ने चर्च के भक्त व्यक्तियों के रूप में अपना विवरण लिखा था, इनके लिए चर्च के हित अन्य किसी भी वस्तु की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण थे। यदि उन्होंने इंग्लिश व्यक्तियों के रूप में इतिहास लिखा तो यह उनके लिए गौण बात थी। किन्तु जब मैथ्यू पैरिस ने यह सोचा कि पोप गलती पर है अथवा अनुचित रूप से उत्पीड़न करने वाले कर एकत्र कर रहा है, तो उसने ऐसा कहने में किसी संकोच का अनुभव नही किया। यद्यपि वह राजा हेनरी तृतीय का मित्र था, फिर भी वह उसकी आलोचना उस समय सर्वथा निर्भीक भाव से करता रहा, जब उसने यह समझा कि हेनरी बुरे ढंग से शासन कर रहा है और इंग्लिश लोगों की स्वतन्त्रताओं पर हमला कर रहा है। यह राष्ट्रीय भावना नयी और विलक्षण वस्तु थी। यह राष्ट्रीय भावना उस नये स्वभाव का उल्लेखनीय उदाहरण है, जिस स्वभाव के क्रियात्मक रूप को हम आगे चलकर इंग्लैण्ड में देखेंगे।

तेरहवीं शताब्दी में भी ऐसी बौद्धिक [illegible] का कुछ आरम्भ हो गया था, जो इंग्लैण्ड में चर्च और विश्वविद्यालय से स्वतन्त्र थी। यद्यपि यह उस पैमाने पर नहीं थी जिस पैमाने पर इटली में थी। चौदहवीं शताब्दी में यह स्वतन्त्र जीवन चासर के समय में आरम्भ होने वाले लोकभाषाओं के साहित्य के पहले महान विकास के साथ-साथ पूर्ण रूप से सजीव हो गया। यह अपने आप में उस राष्ट्रीय भावना के आन्दोलन का प्रभाव था, जो इस युग की एक प्रमुख विशेषता है। हम आगे इसका अधिक विस्तार से वर्णन करेंगे। राष्ट्रीय विचार और उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार शनैः शनैः अपने को चर्च के नियन्त्रण से युक्त कर रही थी।

इसी प्रकार का एक आन्दोलन वास्तुकला के क्षेत्र में हुआ, यद्यपि यह बहुत स्पष्ट नहीं था। १३वीं शताब्दी की सभी सर्वोत्तम रचनाएँ चर्च से अनुप्राणित हुईं और यह समय गाथिक वास्तुकला का महानतम युग था। १२वीं शताब्दी में बहुत सुन्दर चर्च और मठ बनाये गये थे, किन्तु १३वीं शताब्दी का कार्य फ्रांस में, इंग्लैण्ड में और अन्य स्थानों में अधिक आश्चर्यजनक था। समाधियों तथा मूर्तियों का लक्षण यहाँ तक कि टोंटियों तक का निर्माण अब तक बनायी गयी प्रत्येक वस्तु से बढ़कर था। फ्रांस और इंग्लैण्ड के सबसे शानदार चर्च इसी प्रकार के हैं। विशेष तौर से वेस्ट मिनिस्टर एबे का अधिकांश भाग पापस्वीकर्ता एडवर्ड द्वारा बनाये गये पुराने चर्च के स्थान पर राजा हेनरी तृतीय द्वारा पुनः बनवाया गया था। अगली शताब्दी में वास्तुकला का कार्य अधिक आडम्बरपूर्ण किन्तु कम उत्कृष्ट हो गया। यह बात उल्लेखनीय है कि इस समय का कुछ सर्वोत्तम कार्य धार्मिक भवनों से भिन्न भवनों के लिए भी किया गया।

इस पुस्तक में द्रुत समीक्षा (Rapid Review) के रूप में वर्णन की जाने वाली शताब्दियाँ संघर्ष से परिपूर्ण थीं। उन घटनाओं का सामान्य वर्णन अधिकांश देशों की कहानी की भाँति सतत विप्लव, युद्ध और धोखाधड़ी का प्रलेख मात्र प्रतीत होता है। यह अच्छी

तरह स्मरण रखना चाहिए कि राजाओं और सरदारों के उपद्रवों और षडयन्त्रों के साथ-साथ फ्रांसिस्क सम्प्रदाय के भिक्षु कस्बों की गन्दी बस्तियों में पुरुषार्थ कर रहे थे, रोजर-बेकन ऑक्सफोर्ड में अध्ययन और अध्यापन कर रहा था, सैकड़ों विद्वान् विद्या की खोज में सड़कें नाप रहे थे और भवन निर्माता तथा मूर्तिकार समूचे पश्चिमी यूरोप में अपना आश्चर्य-जनक कार्य कर रहे थे।

राजाओं तथा सरदारों के झगड़े भी महान परिणाम को पैदा कर रहे थे। इनके विवादों से पश्चिम के सभी देशों में राष्ट्रीय प्रतिनिधि सभाओं के मूल रूप उत्पन्न हो रहे थे। सामन्ती राजाओं के जिन दरबारों में उनके प्रमुख आसामियों को बाधित रूप से उपस्थित होना पड़ता था, उनका उपयोग इस समय इस बात को सुरक्षित बनाने के साधनों के रूप में हो रहा था कि सामन्ती समझौतों की शर्तों की व्याख्या उन आसामियों को हानि पहुँचाने वाली रीति से न की जाय, यद्यपि यह कोई नयी वस्तु नहीं थी, फिर भी अब यह बात अधिक महत्वपूर्ण हो रही थी कि राजा अपनी शक्ति को अधिक प्रभावशाली बनाये। छोटे सामन्ती आसामियों ने अब तक इन दरबारों में उपस्थित होने का कष्ट नही किया था, अब वे भी अपने प्रतिनिधियों के द्वारा इन विवादों में भाग लेने लगे। इन विशुद्ध सामन्ती तत्वों के अतिरिक्त मध्यकालीन राज्य में दो तत्व—चर्च और नगरों के अर्धस्वतन्त्र व्यापारी—कुछ हद तक असामन्ती थे। वे भी अनेक शताब्दियों से इस पद्धति का अंग बन रहे थे और इन्हें राष्ट्रीय मामलों के अधिक महत्वपूर्ण विचार-विमर्शों में भाग लेने के लिए निमन्त्रित किया जाता था। इस प्रकार उस समय राज्य के जन-वर्गों की (Estates of the Realm) सभाओं का निर्माण हो रहा था। ये वे महान वर्ग या सामाजिक श्रेणियाँ थीं, जिनमें प्रत्येक पश्चिमी जनता बँटी हुई थी। यह विकास लगभग एक ही समय में, किन्तु विभिन्न प्रकार से यूरोप के प्रत्येक देश में हो रहा था। इसका महत्व यह था कि इसने शनैः-शनैः शासन के कुछ कार्यों में राष्ट्रीय सहयोग की पद्धति के क्रमिक विकास को सम्भव बनाया।

विभिन्न सामाजिक श्रेणियों या वर्गों के प्रतिनिधित्व की पद्धति का आविर्भाव इंग्लैण्ड की ही विशेषता नहीं थी, जिससे संसदीय प्रणाली का विकास हुआ। इस फलपूर्ण और क्रिया-शील युग में यूरोप के सभी भागों के जीवन की यह एक सामान्य विशेषता थी, किन्तु यह बात महत्वपूर्ण है कि स्काटलैण्ड तथा यूरोपीय महाद्वीप में सामान्य रूप से प्रयुक्त किये जाने वाले 'एस्टेटस्' (Estates) इस शब्द का व्यवहार इंग्लैण्ड में कभी नहीं किया गया। शब्दावली की यह विभिन्नता वस्तुतः एक वास्तविक भेद का प्रतिनिधित्व करती है। आरम्भ से ही इंग्लैण्ड में राजा परामर्श के लिए जिन सभाओं को बुला रहा था, वे विशुद्ध रूप से वर्ग (Estate) या स्पष्ट रूप से परिलक्षित सामाजिक वर्ग नही थे। अतः इस भेद के महत्वपूर्ण परिणाम हुए। अन्त में इंगलैण्ड ही ऐसा राष्ट्र था, जहाँ इन आरम्भिक बातों से ऐसी वास्तविक संसदीय-पद्धति (Parliamentary System) का जन्म हुआ, जो केवल विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों का प्रतिनिधित्व न करते हुए समूचे समुदाय का प्रतिनिधित्व करती थी। इस विशिष्ट इंग्लिश विकास के कारण केवल तभी समझे जा सकते हैं, जबकि हम

इसे उत्पन्न करने वाली घटनाओं के क्रम को समझें। अतः अब आगे हम राजाओं और सरदारों के संघर्षों की जिस कथा की ओर मुड़ेंगे, उसमें उदात्तता का एक तत्व है, क्योंकि इन झगड़ों से ही कुछ ऐसी वस्तु का प्रादुर्भाव हुआ, जो गिरजाघरों के निर्माताओं के कार्य के समान ही उदात्त एवं स्थायी थी। यह संसदीय शासन की वह पद्धति थी, जो सभ्यता की सामान्य पूँजी में इंग्लिश जनता की सबसे बड़ी देन है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

For European history during this period see **Tout,** The Empire and the Papacy; and **Lodge,** The later Middle ages; **Bryce,** Holy Roman Empire; **Milman,** Latin Christianity; **Jessopp,** The Coming of the Friars; **Haskins,** Renaissance of the Twelfth Century; Cambridge Medival History; on the universities the standard book is **Rashdall,** The Universities in the Middle Ages.

२

इंग्लिश राष्ट्र का संगठन

(१२१६ से १३०७ ई०)

हेनरी तृतीय १२१६; एडवर्ड प्रथम १२७२ ई०

१. राष्ट्रीय भावना का अभ्युत्थान

यद्यपि मैग्नाकार्टा (Magna carta) में यह व्यवस्था की गयी थी कि राजा को कानून के अनुसार शासन करना चाहिए, किन्तु इसने १२१६ तथा १२१७ ई० में संशोधित रूप के अनुसार बैरनों की महापरिषद् (Great council of the barons) को और समग्र रूप से जनता को कोई निश्चित शक्ति नहीं प्रदान की थी। राजा अब भी राज्य का स्वामी था। किन्तु सौभाग्यवश जॉन का पुत्र राजा हेनरी तृतीय जब राजगद्दी का उत्तराधिकारी बना, तब वह नाबालिग था। इसलिए उसकी नाबालिगी के वर्षों में सामन्तों की महापरिषद् से प्रायः परामर्श लेना पड़ता था। इस कारण महापरिषद् द्वारा सार्वजनिक मामलों के प्रबन्ध में महत्वपूर्ण भाग लेने की आदत का विकास हुआ। सामन्तों ने राजकीय शक्ति का प्रयोग करने वाले संरक्षक (Regent) को अथवा प्रधान जस्टिशियर (Justiciar) या [illegible] को नियुक्त किया। उन्होंने उसके साथ एक छोटी परिषद् की भी स्थापना की। इसकी सलाह पर उसे विचार करना पड़ता था। प्रिवी-कौंसिल का उद्गम इसी प्रकार हुआ। इस समय से सदैव यह माना जाने लगा कि राजा को अपनी परिषद के सदस्यों की सलाह का अनुसरण करना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि जब राजा बालिग होता था तो वह अपनी परिषद् के सदस्यों (Councillors) को स्वयमेव चुनता था, फिर भी सामन्तों ने यह सोचने की प्रवृत्ति प्रदर्शित की कि इनके चुनाव में उनसे परामर्श लिया जाना चाहिए।

इस प्रथम युग में देश के वास्तविक शासक क्रमशः दो देशभक्त अंग्रेज सरदार, पैम्ब्रोक के अर्ल विलियम मार्शल तथा कैण्ट के अर्ल ह्यूबर्ट डी बर्ग थे। इन्हें बुद्धिमान आर्क बिशप स्टीफन लैंगटन से बहुत सहायता मिल रही थी। ये दोनों शक्तिशाली व्यक्ति थे। डी बर्ग ने उन विदेशी वेतनभोगी सैनिकदलों के दमन में महान पौरुष प्रदर्शित किया, जिन्हें जॉन ने भाड़े पर रखा था और जो उसकी मृत्यु के बाद अत्यधिक अनियन्त्रित हो गये थे। किन्तु जस्टिशियर (Justiciar) और सरदार ही केवल नियन्त्रित करने वाली शक्तियाँ नहीं थीं। चूंकि राजा जॉन पोप का वशवर्ती (Vassal) बन गया था, अतः पोप इंग्लैण्ड के शासन के निरीक्षण का दावा करता था, कुछ वर्षों तक पोप के प्रतिनिधियों (Legates)—ग्वालो तथा पैण्डुल्फ ने ब्रिटिश सरकार के शासन में बड़ा भाग लिया। समग्र रूप से उन्होंने अपने प्रभाव का उपयोग बुद्धिमता से किया। किन्तु अंग्रेजों की विकासशील राष्ट्रीय भावना उनकी उपस्थिति से रुष्ट थी। वह इस बात से और भी अधिक असन्तुष्ट थी कि अब कर प्रदान करने वाले राज्य के रूप में, इंग्लैण्ड से पोप ने बड़ी मात्रा में धन की माँग करनी शुरू कर दी थी।

१२३२ ई० में राजा हेनरी तृतीय ने ह्यूबर्ट डी बर्ग को पदच्युत किया और जेल में डाल दिया तथा वह स्वयमेव शासन करने लगा। कुछ वर्षों तक कोई भी जस्टिशियर (Justiciar) या न्यायाधिकारी नहीं नियुक्त किया गया। इस समय समुचित रीति से संगठित कोई राजकीय परिषद् नहीं थी। हेनरी तृतीय बुरा आदमी नहीं था, किन्तु वह ओछा, निर्बल संकल्प वाला और अयोग्य व्यक्ति था। इसलिए शासन में जल्दी ही गड़बड़ी मचने लगी। सरदारों में तथा साधारण जनता में तीन बातों ने विशेष रूप से बहुत असन्तोषपैदा किया।

पहली बात यह थी कि हेनरी ने अपनी पत्नी और माता से सम्बन्ध रखने वाले कुलीन विदेशियों की बहुत बड़ी संख्या का अपने दरबार में स्वागत किया। इन विदेशियों को बड़ी-बड़ी जागीरें तथा चर्च और राज्य के उच्चतम पद प्रदान किये गये; कैण्टरबरी के आर्क बिशप का पद एक उद्दण्ड तरुण कुलीन सेवाय के बोनीफेस को दिया गया। यह अपने पूर्ववर्ती, सन्तस्वभाव वाले एडमण्ड रिच की तुलना में बहुत ही घटिया व्यक्ति था। इन विदेशियों के प्रति प्रदर्शित की जाने वाली कृपाओं ने इंग्लैण्ड की विकासशील राष्ट्रीय भावना को उग्र बनाया।

दूसरी बात यह थी कि हेनरी उन प्रदेशों को पुनः प्राप्त करने के लिए बड़ा उत्सुक था, जिनको उसका पिता फ्रांस में गँवा चुका था। वह कम से कम एक्वीटेन के उन दक्षिणी प्रदेशों पर अपना शासन सुदृढ़ करना चाहता था, जो जॉन के पास थे; किन्तु जिन्हें शनैः-शनैः फ्रेंच राजाओं ने छीन लिया था। यदि वह इन महत्त्वाकांक्षाओं में सफल होता तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि उससे बहुत कम शिकायत होती। यद्यपि उस समय इंग्लिश लोग यह सोचने लगे थे कि इसका कोई कारण नहीं है कि उनके जीवन और धन को राजा के फ्रेंच प्रदेशों के लिए बरबाद किया जाये। किन्तु हेनरी ने ये प्रयत्न बुरी तरह से किये थे और इनसे उसे केवल अपमानित होना पड़ा। राजा ने १२४२-४३ ई० में पोइटो का समूचा प्रदेश गँवा दिया और शीघ्र ही उसके फ्रेंच प्रदेश गैस्कनी और इसके आस-पास के जिलों तक

सीमित हो गये।[1] इन प्रदेशों में भी बड़ी अव्यवस्था थी; ये प्रदेश १२४८ से १२५३ तक गैस्कनी के राज्यपाल, ली सैस्टर के अर्ल तथा राजा के साले साइमन-डी-मॉण्टफोर्ट की शक्ति और पौरुष से ही सुरक्षित रह सके। किन्तु मॉण्टफोर्ट इस बात की बड़ी कटु शिकायत करता था कि उसको कोई सहयोग नहीं मिल रहा और राजा उसके प्रभाव को कम करने की कोशिश कर रहा है। इन सब बातों से तथा विदेशियों पर लुटाये जाने वाले धन से बड़ा खर्च हो रहा था और बोझ डालने वाले टैक्स बढ़ रहे थे।

अन्तिम बात यह थी कि पोप के साथ राजा के सम्बन्धों के कारण गम्भीरतम असन्तोष उत्पन्न हो रहा था। पोप और राजा की घनिष्ठ मैत्री थी, इससे पोप राजा को पूर्ण समर्थन दे रहा था। इसके बदले में राजा ने उसे यह अनुमति दे रखी थी कि वह इंग्लिश चर्च पर अत्यधिक टैक्स लगाये और इंग्लिश चर्च के उच्च पदों पर विदेशी पादरियों को नियुक्त करे। इसके विरुद्ध अत्यधिक तीव्र असन्तोष था, अतः इंग्लिश योद्धाओं (Knights) के एक समूह ने एक गुप्त समाज का इस उद्देश्य से निर्माण किया कि वह देश की इस लूट का शक्तिपूर्वक विरोध करे और पोप के मनोनीत व्यक्तियों (Nominees) और अभिकर्त्ताओं को दिये जाने वाले दशांश तथा अन्य टैक्सों की वसूली को रोके। यह स्थिति उस समय पराकाष्ठा पर पहुँच गयी जबकि पोप ने हेनरी को निरर्थक और धन बरबाद करने वाले विदेशी कार्यों में लगाने की प्रेरणा की। पोप होहैंस्टौफन घराने की शक्ति के अन्तिम अवशेषों को नष्ट करने का प्रयत्न कर रहा था। सम्राट् फ्रेडरिक द्वितीय इसी वंश से सम्बद्ध था और इसने जर्मनी एवं दक्षिणी इटली पर शासन किया था। पोप की प्रेरणा से हेनरी तृतीय का भाई, कार्नवाल का अर्ल, रिचर्ड जर्मनी का सम्राट चुना गया था। वह उस विभक्त देश में कभी भी वास्तविक स्वामी नहीं बन सकता था, क्योंकि वहाँ उसके अपने कोई प्रदेश नहीं थे। उसकी इस पद के लिए उम्मीदवारी का मतलब केवल इतना ही था कि रिचर्ड के भूधारकों या आसामियो (Tenants) से छीना हुआ इंग्लैण्ड का रुपया विश्वासहीन जर्मन सरदारों का समर्थन खरीदने के प्रयत्न में बरबाद किया जाये। इससे भी बुरी बात यह थी कि १२५४ ई० में हेनरी ने अपने दूसरे बेटे एडमण्ड की ओर से सिसली की गद्दी पर पोप द्वारा की जाने वाली नामज़दगी को स्वीकार कर लिया, यद्यपि सिसली पूर्ण रूप से पोप के शत्रुओं के अधिकार में था। राजा इस बात के लिए तैयार हो गया कि वह युद्ध के लिए सारे व्यय को वहन करेगा; फौरन एक सेना भेजेगा और वार्षिक कर प्रदान किया करेगा। चूँकि राजा पहले ही लगभग दिवालिया हो चुका था, अतः यह कार्य कभी भी पूरा नहीं किया जा सका और एडमण्ड ने सिसली में कभी शासन नहीं किया। किन्तु पोप के प्रतिनिधियों का एक झुण्ड इंग्लिश चर्च से अधिक रुपया वसूल करने के लिए इंग्लैण्ड आ गया और चर्च के व्यक्ति भी शीघ्र ही सरदारों तथा अत्यधिक पीड़ित करदाताओं की भाँति विद्रोह करने के लिए तैयार हो गये। इस सबके अतिरिक्त उत्तरी वेल्स का राजकुमार राजा की कमजोरी के इस अवसर का उपयोग अपनी शक्ति को बढ़ाने के लिए कर रहा था और वह

---

१. एटलस की प्लेट संख्या २२ तथा २४-२५ देखिये।

सीमावर्ती प्रदेशों की रक्षा करने वाले 'मार्चर' (Marcher) सरदारों के इलाकों पर हमले कर रहा था और उन्हें जीत रहा था।

२. मॉण्टफोर्ट तथा संसदीय शासन का प्रथम प्रयास

इस अवसर पर १२३२ से १२५८ ई० तक के हेनरी तृतीय के वैयक्तिक शासन का यह परिणाम हुआ था कि समूचा राष्ट्र इस बात के लिए उत्सुक हुआ कि विदेशियों की लूट का तथा विदेशों में किये जाने वाले अविचारपूर्ण साहसिक अभियानों का और पोप की वसूलियों का अन्त हो। बैरनों (Barons) ने यह संकल्प कर लिया था कि राजा को अवश्यमेव नियन्त्रण में लाना चाहिए। उन्हें साइमन डी मॉण्टफोर्ट[1] के रूप में एक नेता मिल गया। यह गैस्कनी नामक प्रदेश में किये जाने वाले शासन से पूर्ण रूप से असन्तुष्ट होकर इंग्लैण्ड लौटा था। साइमन स्वयमेव विदेशी था। वह इसी नाम के एक उग्र फ्रेंच अमीर का बेटा था, जिसने दक्षिण फ्रांस में अलबिजन्सियन विधर्मियों (Albigensian heretics) के विरुद्ध एक निर्मम धर्मयुद्ध किया था। जब साइमन पहली बार अपनी माता के अधिकार के आधार पर लीसैस्टर का अर्ल होने का दावा करने आया और उसने राजा की बहिन से शादी की तो उसे भी यही समझा गया था कि वह इंग्लैण्ड का धन हड़पने वाली एक अन्य विदेशी टिड्डी है। किन्तु जब वह देशभक्त दल के नेता के रूप में प्रगट हुआ तो यह निश्चय करना बड़ा कठिन हो गया है कि क्या वह वास्तव में सुधारक था अथवा वैयक्तिक शक्ति का लोलुप एक योग्य व्यक्ति था। जन-साधारण की सम्मति ने उसके पक्ष में निर्णय दिया। मृत्यु के बाद आजादी के शहीद के रूप में उसकी पूजा की गयी और सदैव उसे इंग्लिश संविधान का एक महान निर्माता माना जाता है। किन्तु जनता की सम्मति सदैव ठीक नहीं होती और हम यह देखेंगे कि इसमें सन्देह करने का कुछ कारण है।

बैरनों (Barons) के विरोध ने सरदारों की एक परिषद् के रूप में एक मूर्त आकार धारण किया। राजा को १२५८ ई० में बाधित होकर इस परिषद् को ऑक्सफोर्ड में बुलाना पड़ा। यह परिषद् पागल पार्लियामेण्ट (Mad Parliament) के नाम से प्रसिद्ध है। किन्तु यह केवल सरदारों और चर्च के बड़े व्यक्तियों की ही सभा थी और इसमें जनता का कोई तत्व सम्मिलित नहीं था। पार्लियामेन्ट शब्द का अर्थ केवल बातचीत करना या सम्मेलन है और यह कुछ समय से ऐसी सभाओं के लिए प्रयोग किया जा रहा था। इस वार्ता में लगभग सभी सरदार कवचों से सुसज्जित तथा अनुयायियों के समूह के साथ आये थे और राजा के सामने इसके सिवाय कोई विकल्प न रह गया था कि वह उनकी माँगों को स्वीकार करे। यह स्वीकृति **ऑक्सफोर्ड की व्यवस्थाओं** (Provisions of Oxford) के नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने २४ व्यक्तियों की एक समिति समूचे शासन और इसकी नीति का संशोधन करने के लिए स्थापित की, परन्तु व्यावहारिक रूप से उस समय राजा की शक्ति को छीन लेना ही इसकी स्थापना का उद्देश्य था। उन्होंने यह भी निश्चय किया कि राजा को १५ व्यक्तियों

---

१ G W. Prothero द्वारा लिखित साइमन डी मॉण्टफोर्ट की एक जीवनी है।

की एक स्थायी परिषद् रखनी चाहिए और वह इसके परामर्श का अनुसरण करने के लिए बाधित होना चाहिए, साल में तीन बार १२ से १५ बैरनों (Barons) को बुलाकर एक पार्लियामेण्ट या सम्मेलन होना चाहिए।

वस्तुतः इस योजना का यह अभिप्राय था कि राजा की सत्ता को समाप्त कर दिया जाये और उसका स्थान सरदारों का एक समूह ग्रहण करे। यह विशुद्ध रूप से अल्पतन्त्रीय (Oligarchical) योजना थी। इसमें जिलों में रहने वाले समुदायों अथवा नगरों में रहने वाले समुदायों (Communities) का कोई हिस्सा नही था। नयी सरकार ने अधिक सुधार करने का वचन दिया, किन्तु इन्हें देने में इतना अधिक विलम्ब किया कि इससे बड़ा असन्तोष उत्पन्न हुआ। योद्धा या नाइट (Knights) विशेष रूप से प्रतिवाद करने लगे और राजा का बड़ा बेटा प्रिंस एडवर्ड इनका नेता बना। ये लोग अधिक सुधारों की माँग करने लगे। जब सरदारों ने सुधार की अगली योजना प्रकाशित की तो इसमें उनके अपने सामन्ती अधिकारों के अतिक्रमणों को रोकने की व्यवस्थाओं के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। इस बीच में उन्होंने फ्रांस से सन्धि की (१२५९ ई०), इस सन्धि से नार्मन्डी पर सब दावों को छोड़ दिया गया। उन्होंने वेल्स साथ भी सन्धि की और विजेता राजकुमार लुएलिन (Llywelyn) की शक्तियों को स्वीकार किया और उन्होंने सिसली की उन्मत्त योजना को छोड़ दिया। किन्तु शीघ्र ही उनमें लड़ाई शुरू हो गयी। ऐसा प्रतीत होता है कि मॉण्टफोर्ट ने या तो सुधारों के लिए अत्यधिक उत्सुक होने के कारण अथवा अपना प्रभुत्व जमाने वाले स्वभाव के कारण दूसरे सरदारों को अपना विरोधी बना लिया। अधिकाधिक सरदार राजाओं के दल में मिलने लग गये। अन्त में राजा ने ऑक्सफोर्ड की व्यवस्था को स्वीकार करने की शपथ के पालन करने की आवश्यकता से पोप से मुक्ति प्राप्त की तथा यह निश्चय किया कि अपनी सत्ता की पुनः स्थापना के लिए युद्ध किया जाये। इस मामले में पंच-निर्णय के लिए फ्रांस के राजा को कहा गया और उसने अपना निर्णय पूर्ण रूप से राजा के पक्ष में देते हुए (१२६४ ई०) ऑक्सफोर्ड की व्यवस्थाओं को अवैध घोषित किया। किन्तु सरदारों ने इस निर्णय को स्वीकार न किया और खुला युद्ध शुरू हो गया। लैविस की लड़ाई में राजा को हराया गया और बन्दी बना लिया गया। इस विजय से इंग्लैण्ड मॉण्टफोर्ट के हाथों में चला गया।

१२६४-६५ के वर्षों में मॉण्टफोर्ट को शासन के सम्बन्ध में अपने विचार प्रदर्शित करने का अवसर मिला, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि उसकी नीति ने उसके विचारों को बहुत स्पष्ट किया। १२६४ ई० में उसने पार्लियामेण्ट बुलायी। यह सम्भव प्रतीत होता है कि उस पार्लियामेण्ट में शायर अदालतों (Shire courts) द्वारा निर्वाचित नाइट (Knights) बुलाये गये थे। किन्तु अब भी कुछ विरोधी तत्व थे। मॉण्टफोर्ट की पकड़ से बचकर भागे हुए कुछ शत्रु फ्रांस में सेनाएँ एकत्र कर रहे थे। वेल्स प्रदेश के सीमान्तों पर कुछ बड़े सरदार खुले तौर से उसके विरुद्ध शस्त्र उठा रहे थे। उन्होंने अपने पिता के लिए शरीर बन्धक (Hostage) के रूप में बन्दी बनाये हुए राजकुमार एडवर्ड को छुड़ाने के लिए प्रयत्न किया। अधिकांश सरदार मॉण्टफोर्ट के तानाशाही शासन से असन्तुष्ट थे। ऐसा प्रतीत होता है कि उसका समर्थन प्रधान रूप से चर्च से, योद्धाओं के वर्ग से तथा नगरवासियों से हो रहा था। बढ़ते हुए विरोध

के विरुद्ध अपने को मजबूत बनाने के लिए १२६५ ई० में उसने नवीन पार्लियामेण्ट बुलायी। यह एक नये प्रकार की संसद थी जिसमें उसने सरदारों में से तो केवल तेईस को निमन्त्रित किया किन्तु अधिकांश, उच्च पादरी वर्ग को तथा प्रत्येक ज़िला अदालत से दो योद्धाओं (Knight) को बुलाया। इसके अतिरिक्त उसने अपने उद्देश्य से अनुकूलता रखने वाले कुछ नगरों को भी यह कहा कि उनमें से प्रत्येक दो प्रतिनिधि भेजे। यह पहला अवसर था, जब किसी इंग्लिश पार्लियामेण्ट में नगरों के प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। यह सभा राष्ट्र का पूरा प्रतिनिधित्व नहीं करती थी। यह तो मॉण्टफोर्ट के समर्थकों का सम्मेलन था। फिर भी इंग्लिश संस्थाओं के इतिहास में यह एक महत्वपूर्ण युग को सूचित करता है। एडवर्ड जेल से इसकी कार्यवाहियों को देख रहा था। यद्यपि वह स्वाभाविक रूप से इस बात का विरोधी था कि मॉण्टफोर्ट मनमाने ढंग से राजसत्ता का अपहरण करे, किन्तु वह यह जनता था कि सुधार आवश्यक है। वह मॉण्टफोर्ट की नवीन बातों के महत्व से प्रभावित था। शीघ्र ही वह समय आने वाला था जब एडवर्ड ने उसे बन्दी बनाने वालों के विचारों का अनुसरण किया और इनमें सुधार किया।

मॉण्टफोर्ट की शक्ति इतनी देर तक नहीं बनी रही, जिससे यह पता लगता कि वह इंगलैण्ड के शासन का संगठन किस प्रकार करता अथवा यह पता लगता कि उसके द्वारा बनायी जाने वाली पद्धति क्षीण हो रही उसकी शासन-सत्ता का समर्थन करने वाला साधन से अधिक कुछ भी नहीं था। १२६५ ई० में राजकुमार एडवर्ड जेल से भाग निकला। वह विरोधी दल का नेता बना और एवेशम (Evesham) की लड़ाई में उसने महान नेता को हराया और उसका वध किया। चिरकाल तक मॉण्टफोर्ट को इंग्लिश स्वतन्त्रता के संस्थापक के रूप में पूजा जाता रहा है। एक इतिहासकार ने लिखा है कि "वह इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रताओं के दुर्भेद्य शिखर की भाँति खड़ा रहा और इस प्रकार शोकजनक रीति से समूचे शौर्य के सर्वोत्तम अंश का पतन हुआ और वह दूसरों के लिए दृढ़ता का उदाहरण छोड़ गया।" एक बुरा व्यक्ति अपने पीछे प्रसिद्धि को नहीं छोड़ता। चाहे मॉण्टफोर्ट इंग्लैण्ड से विशुद्ध निःस्वार्थ प्रेम करने वाला था या नहीं था, फिर भी उसका कुछ कार्य चिरस्थायी था। उसने अंग्रेजों में न केवल देश-भक्ति की भावना तथा विदेशी प्रभुता के विरुद्ध प्रबल असन्तोष को उत्पन्न करने में सहायता प्रदान की, अपितु उसकी यह देखने की भी इच्छा थी कि राष्ट्र का शासन राष्ट्र की इच्छानुसार किया जाये। उस समय के अनेक लेखकों, इतिहासकारों और गीतकारों ने समान रूप से इस विचार को अभिव्यक्त किया है। इसे इन दीर्घ विवादों में उत्पन्न हुई राजनैतिक कविताओं में से एक कविता ने अत्यधिक विलक्षण रूप से प्रकट किया है। यह साहसी कवि कहता है "यदि केवल राजा चुनता है तो वह सुगमता से ठगा जायेगा। अतः समुदाय को परामर्श देना चाहिए और उसे यह ज्ञात होना चाहिए कि सामान्य जनता क्या सोचती है। चूँकि उनके अपने मामले ही खतरे में पड़े होते हैं, अतः वे अधिक सावधानी बरतेंगे और अपनी शान्ति को दृष्टि में रखते हुए कार्य करेंगे.........। हम समुदाय को प्रथम स्थान देते हैं; हम यह भी कहते हैं कि कानून राजा की प्रतिष्ठा से प्रबल है, क्योंकि कानून वह प्रकाश है जिसके बिना शासन करने वाला ठीक रास्ते से भटक जायेगा।"

जब सामान्य व्यक्ति इस रूप में बात कर रहे थे तो हम सचमुच यह कह सकते हैं कि इस समय इंग्लैण्ड में स्वशासन का विचार सजीव हो गया था। नार्मन और आन्जेविन राजाओं के निरंकुश शासन से एकता के सूत्र में पिरोये गये राष्ट्र ने अपने मामलों के नियन्त्रित और संचालित करने के लम्बे और कठिन कार्य को सीखना शुरू कर दिया था। इस युग में इंग्लैण्ड के इतिहास में यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण विशेषता है।

३. एडवर्ड प्रथम और पार्लियामेण्ट की स्थापना

किन्तु हेनरी तृतीय के राज्यकाल का कार्य केवल परीक्षणों और शुरूआतों का था। एडवर्ड प्रथम[1] के राज्यकाल ने ही नयी विशुद्ध राष्ट्रीय नीति का और नवीन राष्ट्रीय संस्थाओं का स्वरूप सुस्पष्ट किया। एडवर्ड प्रथम को "नार्मन विजय के बाद से पहला इंग्लिश राजा" कहा जाता है। उसने एल्फ्रेड के [illegible] का विशुद्ध इंग्लिश नाम धारण किया। विजेता विलियम से हेनरी तृतीय तक सब राजा अंग्रेज होने की अपेक्षा फ्रेंच अधिक थे और वे अपने फ्रेंच प्रदेशों की उतनी ही चिन्ता करते थे, जितनी इग्लिश प्रदेशों की। एडवर्ड प्रथम ने केवल इंगलैण्ड की चिन्ता की और अपने राज्य काल के आरम्भ से ही उसने हेनरी द्वितीय के खोये हुए फ्रेंच प्रदेशों को पुनः प्राप्त करने का प्रयास करने का इरादा छोड़ दिया। यद्यपि वह अपने अधिकार में विद्यमान फ्रेंच प्रदेशों को बनाये रखने के लिए लड़ने को तैयार था।

इन सब बातों से तथा कुछ अंशों में एडवर्ड के पूर्ण रूप से अंग्रेज होने के कारण ही तथा हद तक वह अपने प्रजाजनों की प्रशंसा और प्रेम का ऐसा भाजन बना, जैसा उसका कोई भी पूर्ववर्ती राजा नहीं बना था। उसके बहुत कम उत्तराधिकारियों को ऐसी प्रशंसा और प्रेम मिला। किन्तु इसका कारण यह भी था कि वह एक शानदार व्यक्ति तथा प्रशंसनीय शासक था। लम्बा कद, गहरी छाती और लम्बे अंग होने के कारण उसने प्रत्येक प्रकार के व्यायाम से अपने को सुदृढ़ बनाया था और रणभूमि में वह किसी भी योद्धा का सामना कर सकता था। वह एक चतुर सेनानी और बहुत ठण्डे दिमाग वाला तथा क्रियात्मक संगठन करने वाला व्यक्ति था। वह साहसी, हठी और प्रभुत्व जमाने वाला था; क्रुद्ध होने पर वह बहुत निष्ठुर हो सकता था। इस बात का लिखित प्रमाण यह है कि एक पुरोहित राजा के क्रोध को देखकर डर से गिरकर मर गया। किन्तु भावावेश के क्षणों को छोड़कर वह सामान्य रूप से दयालु था। उसने अपने जीवन की सन्ध्या में यह गर्वपूर्ण बात कही थी कि "मुझसे किसी भी व्यक्ति ने कभी दया की निष्फल प्रार्थना नहीं की।" वह अपने वचन का पूरा पालन करता था और "वचन का पालन करो" (Pactum serva) के अपने इस आदर्श वाक्य के अनुसार जीवन बिताता था। किन्तु वह अपने दायित्वों की व्याख्या कानून से किया करता था और शाइलॉक की भाँति कठोरता से अपने अनुबन्धपत्र की शर्तों के पालन पर आग्रह करता था। वस्तुतः टूर्ना-

१. एडवर्ड प्रथम की एक अच्छी संक्षिप्त जीवनी टी. एफ. टौट ने १२ इंग्लिश राज-नीतिज्ञों की ग्रन्थमाला में लिखी है।

मेण्टों वाले उसके वीर शरीर में एक वकील का मन था और यह उस समय सुखद संयोग था जब कि इंग्लैण्ड को न केवल इस बात की आवश्यकता थी कि उसके कानून का स्पष्टीकरण और संगठन हो, किन्तु उसे यह भी आवश्यकता थी कि उसका शासन एक प्रबल व्यक्ति द्वारा हो। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि ऐसे राजा को उस राष्ट्र की प्रेमपूर्ण राजभक्ति प्राप्त हो सकी, जिसमें अपनी राष्ट्रीयता की प्रबल भावना हाल ही में जागृत होने लगी थी।

इंग्लैण्ड को एडवर्ड की महानतम देन पार्लिवामेण्ट का निश्चित संगठन था। उसका वास्तविक शासन १२७४ ई० से ही शुरू हुआ, क्योंकि अपने पिता की मृत्यु के समय वह धर्म-युद्ध के लिए बाहर गया हुआ था। किन्तु १२७५ ई० में उसकी पहली पार्लियामेण्ट राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक तत्व की पूर्ण प्रतिनिधि थी। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। इसमें पुरानी महापरिषद् की भाँति सामन्त, बिशप और महन्त तो थे ही तथा हेनरी तृतीय के राज्यकाल की कई पार्लियामेंण्टों की भाँति प्रत्येक जिले (Shire) से दो दो नाइट भी आये थे। किन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह था कि इसमें डी मॉण्टफोर्ट की पार्लियामेण्ट की भाँति कुछ चुने हुए कस्बों से ही नहीं, किन्तु प्रत्येक नगर और बरो (Borough) से दो प्रतिनिधि आये थे। ये शेरिफों (Sheriffs) के सामान्य आदेश द्वारा बुलाये गये थे और इस प्रकार पहली बार भावी कामन्स सभा (House of Commons) के तत्व एकत्र हुए थे। अन्त में, चर्च का मी पूर्ण प्रतिनिधित्व था। इस प्रकार राज्य के सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्वों का एक राष्ट्रीय संस्था में प्रतिनिधित्व हुआ था।

यह पूरी पार्लियामेण्ट और समूचे राष्ट्र का औपचारिक सम्मेलन बार-बार नहीं होता था; लेकिन केवल गम्भीर अवसरों पर ही होता था। १२७५ ई० के बाद इसका अगला अवसर १२९५ ई० में आया, जबकि एक ही समय में फ्रांस के आक्रमण के खतरे ने और स्काटलैण्ड के साथ युद्ध ने एक राष्ट्रीय संकट उत्पन्न किया। उस समय एक बार फिर पूरी पार्लियामेण्ट बुलाई गयी और कुछ पहलुओं में, यह १२७५ ई० की पार्लियामेण्ट से अधिक पूर्ण थी। इसे बुलाये जाने वाले एक आदेश में एडवर्ड ने अपने प्रजाजनों की देशभक्ति की भावना के प्रति उल्लेखनीय रूप से अपील करते हुए उन्हें यह कहा था कि फ्रांस का राजा इंग्लिश भाषा का उन्मूलन करना चाहता है। अतः समूचे राष्ट्र को सामान्य संकट के विरुद्ध संगठित हो जाना चाहिए। एक उल्लेखनीय वाक्य में उसने यह घोषणा की थी कि 'जो वस्तु सबसे सम्बन्ध रखती है उसकी स्वीकृति सब लोगों द्वारा होनी चाहिए'।

किन्तु ऐसा होते हुए भी एडवर्ड प्रायः ऐसी पार्लियामेण्ट बुलाने में सन्तुष्ट था, जिसमें केवल सामन्त अथवा जिलों के सामन्त और वीर योद्धा सम्मिलित हों। कई बार उसने ऐसे विशेष समुदायों अथवा देश के एक हिस्से के प्रतिनिधियों को ही उन प्रश्नों पर विचार के लिए बुलाया, जिन्हें वह विशेष रूप से उनके साथ सम्बन्ध रखने वाला समझता था। राजा ही इस बात का निर्णय करता था कि वह कब और किन प्रश्नों पर राष्ट्र के प्रतिनिधियों से परामर्श करेगा। उसने उन्हें बड़े अधिकार नहीं दिये; वह इस कार्य के लिए राजा के विशेष अधिकार के बारे में बड़ी ऊँची दृष्टि रखता था। पार्लियामेण्ट कानून नही बनाती थी। उस समय तथ्यों को शुद्ध रूप से प्रकट करने वाले एक निश्चित वाक्य के अनुसार 'कानून राजा द्वारा अपनी

परिषद् के परामर्श से और पार्लियामेण्ट की सहमति से बनाये जाते थे।' एडवर्ड के कानूनों की समूची लम्बी सूची वस्तुत. राजा का ही कार्य था। यह कार्य उसने अपने चुने हुए मन्त्रियों की और विशेष रूप से अपने चांसलर रावर्ट बर्नेल की सहायता से किया था। ये कानून पार्लियामेण्ट द्वारा केवल स्वीकार किये गये थे और उसने इन पर कभी कोई आपत्ति नहीं उठायी।

एडवर्ड की दृष्टि में पार्लियामेण्ट का प्रधान कार्य करों को पास करना था। वस्तुत: व्यावहारिक रूप से यही एक कार्य था, जिसमें योद्धा और नगरवासी (Burgesses) वास्तव में कोई भाग लेते थे। किन्तु यह भाग भी बहुत थोड़ा था। सामान्यत: राजा राजकीय आय के स्रोतों पर निर्भर रहता हुआ अपना जीवन बिता सकता था। ये स्रोत राजकीय जागीरों के लगान, सामन्ती देय, अदालतों के मुनाफे और राजा की इच्छा से नगरों पर लगाये जाने वाले विशेष कर (Tallages) थे। पार्लियामेण्ट का इनसे कोई सम्बन्ध नहीं था। पार्लियामेण्ट से विशेष अनुदानों पर तभी वोट देने के लिए कहा जाता था जब युद्ध की अवस्थाओं के कारण अतिरिक्त धनराशियों की माँग की जाती थी, यहाँ तक कि व्यापार की वस्तुओं पर लगी हुई चुंगियों (Custom duties) पर भी पार्लियामेण्ट का कोई नियन्त्रण नही था। यह सत्य है कि १२७५ ई० की पार्लियामेण्ट ने इंग्लैण्ड के प्रधान निर्यात—ऊन तथा चमड़े पर ली जाने वाली चुंगी निश्चित की थी। किन्तु यह राजा को पार्लियामेण्ट द्वारा नहीं दी गयी थी। राजा सदैव इन करों को लिया करता था और अब उसने अपने व्यवस्थित तरीके में इस कर की मात्रा को नियन्त्रित और स्पष्ट करने वाला कानून बनाया। किन्तु उसने यह कल्पना नही की कि वह पार्लियामेन्ट की सहमति के बिना इन करों को वसूल करने या इन्हें बढ़ाने के अधिकार को छोड़ रहा है। १२९४-९७ ई० के महान संकट में एडवर्ड ने ऊन पर कर पार्लियामेण्ट से परामर्श किये बिना इस हद तक बढ़ा दिया, जैसा पहले कभी नहीं सुना गया था। बड़ी कठिनाई से ही १२९७ ई० में उसे ऐसी एक धारा के लिए सहमत किया गया जिससे उसने यह प्रतिज्ञा की कि भविष्य में वह इस प्रकार के कोई अत्यधिक कर नहीं लगायेगा। आयात की जाने वाली वस्तुओं पर लगाये जाने वाले करों (जो बाद में टर्नेज और पौण्डेज के नाम से प्रसिद्ध हुए) के बारे में भी उसका यह मत था कि ये विशुद्ध रूप से राजा का क्षेत्र है। उसने विदेशी व्यापारियों के साथ समझौते द्वारा पार्लियामेण्ट से सलाह किये बिना ही उन करों की दरों को निश्चित किया, जिनके अनुसार ये कर दिये जाते थे। अत: एडवर्ड प्रथम ने जिस पार्लियामेण्ट का निर्माण किया, वह शासन का नियन्त्रण करने वाली संस्था से बहुत भिन्न थी। नियन्त्रण करने की यह स्थिति अब भी निश्चित रूप से राजा के पास ही थी। किन्तु कम से कम यह एक बड़ी बात थी कि एक ऐसी संस्था का जन्म हो गया था, जो समूचे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती थी और जिसके द्वारा राजा राष्ट्र की नब्ज को टटोल सकता था।

४. राष्ट्रीय नेता के रूप में विधिवेत्ता राजा

एडवर्ड प्रथम एक महान विधि-निर्माता था और उसके कानून राष्ट्रीय जीवन के सभी अंगों से सम्बन्ध रखते थे। ये अंग निम्नलिखित थे—व्यवस्था का बनाये रखना, राष्ट्रीय

प्रतिरक्षा की पद्धति, व्यापार का नियन्त्रण, कानूनी न्यायालयों का संगठन, चर्च की स्थिति, और सबसे बढ़कर भूमि के धारण से सम्बन्ध रखने वाले नियम। अत्यधिक ब्यौरे में जाये बिना इसके स्वरूप का स्पष्ट ज्ञान कराना सम्भव नहीं है, किन्तु इसके लिए हमारे पास स्थान नहीं है। सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि इनका उद्देश्य यह था कि वे नागरिकों के प्रत्येक वर्ग के अधिकारों और कर्त्तव्यों को अधिक स्पष्ट और अधिक निश्चित बनायें। उसके कानूनों से स्पष्ट होने वाली तीन बातों का यहाँ संक्षिप्त उल्लेख किया जा सकता है।

पहली बात यह है कि यह स्पष्ट है कि यद्यपि उस युग में यूरोप में इंग्लैण्ड सम्भवत: सर्वोत्तम रूप से शासित देश था तथापि उसमें उपद्रव और हिंसा की बड़ी मात्रा विद्यमान थी। बैरनों (Barons) में वैयक्तिक युद्ध असाधारण नहीं था और बटमारी का बोलबाला था। यह बात महत्वपूर्ण है कि एडवर्ड को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह यह नियम बनाये कि सार्वजनिक मार्गों के दोनों ओर २०० गज तक सभी जंगल काट लिये जायें ताकि डाकुओं द्वारा यात्रियों को घात लगाकर न मारा जा सके। जब कभी राजा देश से बाहर होता था तो अव्यवस्था मच जाती थी। यह तथ्य इस बात को प्रदर्शित करने के लिए काफी था कि केन्द्र में एक शक्तिशाली स्वामी की आवश्यकता थी और संसदीय सर्वोच्च सत्ता-जैसी किसी भी वस्तु के सम्भव होने में अभी बहुत देर थी। अव्यवस्था को हटाने के प्रयत्न में एडवर्ड ने एक बड़ी महत्वपूर्ण पद्धति को ग्रहण किया। उसने यह व्यवस्था की थी कि प्रत्येक जिला न्यायालय (Shise Court) शान्ति को सुरक्षित रखने का कार्य करने के लिए दो नाइटों (Knights) का निर्वाचन करेगा और इस प्रकार उसने स्थानीय स्वशासन की देखभाल का कार्य देहात के छोटे दर्जे के भद्र पुरुषों को सौंपने की नीति का श्रीगणेश किया तथा भविष्य में इस नीति के बड़े महत्वपूर्ण परिणाम हुए।

दूसरी बात यह थी कि एडवर्ड को सामन्ती जमींदारों द्वारा दावा किये जाने वाले अधिकारों के बारे में बड़ी कठिनाई अनुभव हुई। ये अधिकार शक्तिशाली राष्ट्रीय सरकार के सम्बन्ध में उसके विचारों के विरोधी थे। जब उसने इस बात की कोशिश की कि वह इन अधिकारों को रखने वाले व्यक्तियों की जाँच (Quo Warranto Inquiries) करा के सामन्ती विशेषाधिकारों का नियन्त्रण करे तो इससे उसने विरोध के एक तूफान को उत्पन्न कर दिया और उसे काफी हद तक झुकना पड़ा। बड़े सामन्त या बैरन अपने परिवारों के निधन के साथ-साथ संख्या में निरन्तर कम हो रहे थे। आंशिक रूप से इस कारण नाइट (Knights) या देहात के भद्र व्यक्तियों की संख्या, धन और प्रभाव की दृष्टि से बढ़ने लगी, और एडवर्ड ने इस प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के लिए भरसक प्रयास किया। किन्तु बैरनों या सामन्तों की संख्या में कमी का यह भी अर्थ था कि अब जो सामन्त बचे थे वे बहुत-सी दशाओं में अधिक धनी और अधिक शक्तिशाली थे। उन्होंने सामन्ती पदों की उत्तराधि-कारिणियों से विवाह करके अपनी सामन्ती जागीरों में वृद्धि की थी। इसी कारण अगली दो शताब्दियों में इससे बड़े झगड़े उत्पन्न हुए। राजा (Crown) ने यह प्रयत्न किया कि वह इस खतरे को कम करने के लिए राजपरिवार के सदस्यों के साथ ही अधिकतम ऐसे विवाह कराये। इन साधनों से एडवर्ड का भाई लैंकास्टर का अर्ल एडमण्ड बहुत अधिक शक्तिशाली

व्यक्ति हो गया। वह लैंकास्टर के उस घराने का संस्थापक था, जो अगली एक शताब्दी तक सम्पत्ति और प्रभाव में राजा की प्रतिस्पर्धा करता रहा था; और यद्यपि एडमण्ड का अपने भाई से अच्छा सम्बन्ध बना रहा, किन्तु उसके उत्तराधिकारी सदैव ऐसे नहीं रहे।

अतः सामन्तों के साथ झगड़े समाप्त नहीं हुए, यद्यपि वे एक नया रूप ग्रहण कर रहे थे; किन्तु अब सामन्तों ने उस समय तक राजा का विरोध करना कठिन समझा जब तक कि वे जनता के असन्तोष के साथ अपने को सम्बद्ध न कर लें। उनको सबसे बड़ा अवसर १२९४ ई० से ९७ के संकट में प्राप्त हुआ, जबकि स्काटलैण्ड और फ्रांस के युद्धों का व्यय पूरा करने के लिए एडवर्ड द्वारा की गयी भारी टैक्सों की वसूली से जनता में असन्तोष उत्पन्न हुआ। अभिमानी राजा को उस समय की जाने वाली उसकी अवज्ञा को सहन करना कठिन प्रतीत हुआ और उसे बाधित होकर अधिकार-पत्रों की पुष्टि (Confirmation of the charters) में रिआयतें देने के लिए विवश होना पड़ा। इस अवसर पर सामन्तों का विरोध राष्ट्र के लिए उपयोगी हुआ; क्योंकि इसने राजकीय शक्ति के वास्तविक दुरुपयोगों को समाप्त कर दिया। किन्तु इस घटना ने यह प्रदर्शित कर दिया कि सामन्त अब भी खतरनाक हैं।

अन्तिम बात यह थी कि सच्चे राष्ट्रीय राजा के रूप में शासन करने के प्रयत्न में एडवर्ड ने बार-बार अपने को चर्च के साथ संघर्ष में पाया। चर्च एक खतरनाक प्रकार की स्वतन्त्रता के विशेषाधिकारों का दावा करता था। चूँकि सामन्तों या बैरनों की जागीरों की भाँति, चर्च की भूमि पर उत्तराधिकारियों का कभी स्वत्व समाप्त नहीं होता था और चूँकि चर्च को दिये जाने वाले धार्मिक दान (Benefactions) निरन्तर इसकी सम्पत्ति को बढ़ा रहे थे, अतः देश की अधिकाधिक भूमि चर्च के नियन्त्रण में आ रही थी। इसे रोकने के लिए एडवर्ड ने अदेय सम्पत्ति (Mortmain) का कानून बनाया। इस कानून ने चर्च को भूमि का दान करने का निषेध किया। स्वाभाविक रूप से इससे चर्च के व्यक्तियों में बड़ा रोष उत्पन्न हुआ। किन्तु सबसे बड़ा संघर्ष १२९६ ई० में आरम्भ होने वाला वित्तीय संघर्ष था। पोप बोनीफेस अष्टम ने एक आदेश निकाला था। इसके अनुसार पादरियों को उसकी सहमति के बिना राजाओं को कोई भी धनराशि देने से मना किया गया था और आर्क बिशप विंचैलसी ने इसका प्रयोग करते हुए इसके आधार पर फ्रांस के साथ लड़ाई का खर्च पूरा करने के लिए धार्मिक अनुदानों को देने से इन्कार कर दिया। किन्तु इसका तो यह अभिप्राय था कि चर्च राष्ट्र का हिस्सा नहीं है और वह राष्ट्रीय बोझों में हिस्सा बँटाने के लिए इन्कार कर सकता था। एडवर्ड ने इस स्थिति का प्रबल और प्रभावशाली उत्तर दिया। उसने समूचे पादरी वर्ग के कानून से बाहर (Outlaw) होने की घोषणा की। इसका यह अर्थ था कि उन्हें कानूनी न्यायालयों द्वारा कोई संरक्षण नहीं प्रदान किया जायेगा, क्योंकि यदि वे राष्ट्रीय सरकार के बोझों में कोई हिस्सा नहीं लेना चाहते तो उन्हें इसके लाभों को भी नहीं लेना चाहिए। चर्च के व्यक्ति इस मामले में झुक गये। बाद में पोप ने एडवर्ड को स्काटलैण्ड पर आक्रमण करने से रोकने का आदेश इस आधार पर दिया कि स्काटलैण्ड का पोप के साथ सम्बन्ध है। एडवर्ड ने इसका उत्तर पार्लियामेण्ट पर छोड़ दिया और उसने सारे देश की ओर से बोलते हुए यह

घोषणा की कि अगर राजा भी इस दावे को छोड़ना चाहे तो भी राष्ट्र उसे इस बात की अनुमति नहीं दे सकता।

इस प्रकार सभी रीतियों से एडवर्ड प्रथम ने अपने को राष्ट्रीय राजा सिद्ध किया। उसने इसे सबसे अधिक इस बात से सिद्ध किया कि फ्रेंच करद सामन्त (Feudatory) के रूप मेंउसने अपने अधिकारों के प्रति तुलनात्मक उपेक्षा दिखायी तथा वेल्स और स्काटलैण्ड की विजय से समूचे ब्रिटेन पर इंग्लिश शक्ति का विस्तार करने के प्रयत्न में उसने अपनी कर्मठ क्रियाशीलता दिखायी। जब फ्रेंच राजा फिलिप चतुर्थ ने बिलकुल अविवेकपूर्ण बहानों के आधार पर गैस्कनी पर हमला किया तो एडवर्ड ने शान्ति स्थापित करने का पूरा प्रयत्न किया। यद्यपि उसे अपने प्रदेशों की रक्षा के लिए लड़ना पड़ा और समग्र रूप से उसने यह लड़ाई सफलतापूर्वक लड़ी, फिर भी उसने गैस्कनी के मोर्चे को स्काटलैण्ड के स्वामित्व के लिए किये जाने वाले संघर्ष में बाधक नहीं बनने दिया। इसमें वह अपने प्रजाजनों की भावनाओं का पूरा प्रतिनिधित्व कर रहा था। सामन्त फ्रांस में लड़ाई पर जाने के लिए कठिनाइयाँ पैदा करते थे, किन्तु उन्होंने वेल्स या स्काटलैण्ड में लड़ाई के लिए कोई कठिनाई पैदा नहीं की; क्योंकि वे फ्रांस के प्रदेशों को राजा का वैयक्तिक मामला समझते थे। परन्तु समूचे ब्रिटेन की विजय उसकी एक राष्ट्रीय महत्वाकांक्षा थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The best modern summaries of the period are by **T. F. Tout,** History of England, 1216-1377, and **H.W.C. Davis,** England under the Normans and Angevins. For the Constitutional History **Stubbs,** Constitutional History, Vol. II, is invaluable; the first section of Maitland, English Constitutional History gives an admirably clear account of English institutions at the death of Edward I. See also **Prothero,** Simon de Montfort and **Bateson,** Mediaeval **England;** Cambridge Medieval History; Powicke, **Steaphen** Langton and Henry III. and the Lord Edward; **Mc Kechnie,** Magna Carta; **Treharne,** Baronial Plan of Reform; **Bemont** (ed Jacob), Simon de Montfort; **Powicke,** Medieval England (Home University Library) There is a good selection of extracts from the Chronicles, etc., edited by **Miss Hilda Johnston,** and a shorter selection is provided by **Robieson,** Growth of Parliament and War with Scotland.

● ●

३

वेल्स की विजय

लूएलिन महान ११६४-१२४५ लूएलिन एप ग्रुफिड १२४६-१२८३ ।

अब इंग्लिश लोग राष्ट्रीय अभिमान से परिपूर्ण एक संयुक्त राष्ट्र बन गये थे। इसका यह परिणाम हुआ कि वे अपने राष्ट्रीय राजाओं के नेतृत्व में अपने विभक्त पड़ोसियों—वेल्स, स्काट और फ्रेंच लोगों—के प्रदेशों की विजय करने का प्रयत्न करने लगे। अब हमें डेढ़ शताब्दी से अधिक समय तक बड़ी उग्रता से लड़े जाने वाले राष्ट्रीय युद्धों के युग का वर्णन करना है। इन युद्धों ने ब्रिटिश द्वीपसमूह के इतिहास पर बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव डाला।

वेल्स के निवासी वैल्श लोगों ने नार्मन विजय से पूर्व की लम्बी शताब्दियों में अपने विषम (ऊबड़खाबड़) और सुन्दर पर्वतों में अंग्रेजों को रोके रखा। यद्यपि उनके राजा कई बार इंग्लिश राजाओं की वश्यता स्वीकार करते रहे थे और यद्यपि इंग्लिश सेनाएँ कई बार इस देश में दूर तक हमले करती थीं, तो भी वेल्स कभी जीता नहीं गया। इसके विपरीत ८वीं शताब्दी में मर्शिया के राजा ओफा को यह आवश्यक जान पड़ा कि वह वैल्श लोगों के हमलों से मिडलैण्ड्स की रक्षा के लिए एक लम्बी खाई (Dyke) बनाये और ओफा की खाई देर तक दो विभिन्न राष्ट्रीय जातियों में सीमा का कार्य करती रही। इस खाई के पीछे वेल्स लोगों ने अपनी भाषा को, अपने कानूनों को और अपने रिवाजों को मूल रूप में बनाये रखा।

वैल्श लोग कुछ बातों में बड़े असभ्य और पिछड़े हुए थे। एंजेंल्सी, पैम्ब्रोकशायर तथा ग्लेमोर्गन की निम्न भूमियों के अतिरिक्त अन्यत्र हल चलाने का भी ज्ञान बहुत कम था। जनता अपने पशुओं और भेड़ों की पैदावार पर जीवन बिताती

थी, वह रोटी बहुत कम खाती थी; किन्तु जूलियस सीजर के समय में जर्मन लोगों की भाँति दूध, पनीर और मांस का भक्षण करती थीं। उनकी भद्दी लकड़ी की बनी झोपड़ियाँ बहुत कम मूल्य रखती थीं। वे अत्यन्त सादे कपड़े पहनते थे। धनियों के अतिरिक्त अन्य जनता मे जूतों का प्रयोग लगभग नहीं था। विषम पहाड़ों की उच्च भूमियों में निरन्तर खुली हवा से सुदृढ़ बने हुए ये लोग बड़े साहसी तथा लड़ाकू थे और धनुष के प्रयोग में विशेष रूप से निपुण थे। जब उन पर हमला किया जाता था तो उनके लिए यह आसान था कि वे पहाड़ों की गुफाओं में अपने पशुओं को ऊपर की ओर हाँक कर ले जायें। वे अपनी झोपड़ियों को शत्रुओं द्वारा जलाये जाने के लिए छोड़ सकते थे क्योंकि वे यह जानते थे कि जंगलों की लकड़ी से वे शीघ्र ही उनका पुर्ननिर्माण कर सकते हैं। अत: वेल्स को विजय करना बड़ी कठिन बात थी।

राजनीतिक रूप से वे लोग बहुत अधिक भागों में बॅटे हुए थे। तीन मुख्य प्रान्त ग्वीनैड या उत्तरी वेल्स, पोविस या पूर्व-केन्द्रीय वेल्स और देहयूवर्थ या दक्षिणी वेल्स थे। इनमें ग्वीनैड को एक प्रकार का मान्यताप्राप्त नेतृत्व मिला हुआ था; इसमें एंजलसी का उपजाऊ और पवित्र टापू तथा स्नोडन के दुर्भेद्य दुर्ग सम्मिलित थे। किन्तु इन तीनो राज्यों के बीच निरन्तर युद्ध चलता रहता था और बहुत कम ऐसा होता था कि समूचे वेल्स में एक राजा की सर्वोच्च सत्ता स्वीकार की जाये। इन राज्यों के भीतर अनेक जनजातीय भेद थे, और इन जातियों में उसी प्रकार निरन्तर युद्ध चलते रहते थे, जैसे स्काटलैण्ट की उच्च-भूमियों में परवर्ती काल तक चलते रहे। इंग्लिश आक्रमणों के होने पर भी ये लड़ाइयाँ बहुत कम बन्द होती थीं। विजेता विलियम के समय के बाद से वेल्स सरदार नार्मन अथवा इंग्लिश विजेताओं के साथ मिल जाते थे। अत: अन्त में वेल्स के लिए इंग्लिश लोगों द्वारा विजय एक अच्छी बात थी, क्योंकि यह शान्तिपूर्ण व्यवस्था और नियमित सरकार को अपने साथ लायी। किन्तु इससे उस प्रशंसा में कोई कमी नहीं होनी चाहिए, जो हम वेल्स लोगों के दीर्घकालीन प्रतिरोध में प्रदर्शित की गयी वीरता के लिए अवश्य अनुभव करते है।

यद्यपि वेल्स लोग सभ्यता के भौतिक पहलुओं में पिछड़े हुए थे, तथापि वे कम से कम एक महत्वपूर्ण मामले में इंग्लिश पड़ोसियों से आगे बढ़े हुए थे। वेल्स कवियों और गायकों का देश था और उनमें चारणों या भाटों से अधिक प्रतिष्ठा किसी की नही थी। सरदारों के भद्दे किन्तु आतिथ्यपूर्ण बड़े कमरों में भाटों का सदैव स्वागत होता था और वे प्राकृतिक सौन्दर्य के आनन्द को तथा अतीत के वीरतापूर्ण कृत्यों को सजीव बनाये रखते थे। ट्यूटानिक आक्रान्ताओं के विरुद्ध लम्बी लड़ाई की कहानियों को वे विशेष रूप से अनुश्रुति द्वारा अगली पीढ़ियों को दे रहे थे। राजा आर्थर और उसकी गोलमेज के वीर योद्धाओं की दन्तकथाओं ने—वेल्स भाटो के निरन्तर विकासशील गीतों में मूर्त रूप ग्रहण किया। ये दन्त कथाएँ बाद में समूचे यूरोप को आनन्दित करती रहीं। वैल्श कविता का महान युग १२वीं और १३वी शताब्दियों में आया, जब वैल्श लोगों की राष्ट्रीय भावना इस युग में स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष में महान राजाओं द्वारा प्राप्त की गयी सफलताओं से अत्यधिक प्रोत्साहित हुई।

वेल्स की विजय इंग्लैण्ड में नार्मन लोगों के आगमन के साथ आरम्भ हुई। विजेता विलियम और उसके उत्तराधिकारियों ने जंगली पर्वतीयों को अपना वशंवद बनाने के लिए अपनी वैल्श सीमाओं (Marches) पर स्थापित किये गये बड़े सामन्तों को उससे कहीं अधिक मात्रा में स्वतन्त्रता प्रदान की थी, जिस मात्रा में उनके साथियों को अन्यत्र स्वतन्त्रता दी गयी थी। इन सामन्तों को वेल्स को जीतने का बीड़ा उठाने को प्रोत्साहित किया गया। समूचे मध्ययुग में मार्चर लार्ड (Marcher Lords) कहलाने वाले ये बैरन सभी सामन्तों में सबसे अधिक लड़ाकू और चपल थे। १०६६ ई० से बाद की पीढ़ी में ऐसा प्रतीत होता था कि इस नीति के परिणाम-स्वरूप वेल्स की पूर्ण विजय हो जायगी। उत्तर में चैस्टर के शक्तिशाली अर्लों ने फिलण्ट के वर्तमान जिले पर हमले किये और उन्होंने प्राय: अपनी शक्ति का विस्तार पश्चिम में कॉनवे नदी तक किया। किन्तु वे स्नोडन के जंगली देहात को जीतने में कभी समर्थ नहीं हो सके। यद्यपि उन्होंने अपनी विजयों को सुरक्षित बनाने के लिए अनेक किले बनवाये; किन्तु ग्वीनैड के अविजित विशाल समूह निरन्तर उन पर हमले करते थे और उन्हें पीछे हटा देते थे। केन्द्रीय भाग में श्यूबरी (Shrewsbury) के [illegible] के प्रदेश में आगे बढ़ रहे थे। इसका बहुत-सा भाग अधिकांश रूप में इंग्लिश बन गया। वैल्श जिलों में से एक का नाम अब भी माण्टगुमरी है और यह तथ्य उनके कार्य को सूचित करने वाला चिन्ह है। इन प्रदेशों के पूर्वी भागों में इन्होंने तथा सीमान्तों के अन्य सामन्तों ने अनेक किले बनाये। किन्तु ग्वीनैड की भाँति पोविस (Powys) इंग्लिश अथवा नार्मन प्रभाव से निरन्तर रूप से इतना मुक्त नहीं रहा। दक्षिण में नार्मन सामन्तों की एक पूरी शृंखला ने यहाँ अपने लिए जागीरें बना ली थीं। ब्रिटिश द्वीपसमूह में कोई अन्य भाग ऐसा नहीं है, जहाँ मोनमाउथ, ग्लेमोर्गन, रेडनोर और दक्षिणी वेल्स के समुद्र तट की भाँति इतनी अधिक संख्या में दुर्ग हों। १२वीं शताब्दी के आरम्भ में पैम्ब्रोकशायर के समृद्ध प्रदेश क्लेयर के घराने के सामन्तों द्वारा इतनी पूर्ण रीति से जीते गये और यहाँ इंग्लिश और फ्लेमिश लोग इतने बसाये गये कि इनका वैल्श स्वरूप पूर्ण रूप से नष्ट हो गया और ये "वेल्स के परे का छोटा इंग्लैण्ड" बन गये।

किन्तु १०६६ ई० के बाद की पीढ़ी में नार्मन लोगों की शीघ्र होने वाली सफलताओं ने वैल्श लोगों की देशभक्ति के उत्साह को उद्दीप्त किया और दक्षिण के प्रदेश को छोड़कर अन्यत्र एंग्लो-नार्मन विजय के ज्वार को १२वीं शताब्दी में पीछे हटना पड़ा। विलियम द्वितीय और हेनरी प्रथम ने वेल्स में व्यर्थ ही सेनाएँ भेजी, वे कभी भी यहाँ स्थायी प्रभुत्व स्थापित करने में समर्थ नहीं हो सके। हेनरी द्वितीय भी अदम्य पर्वतों की विजय नहीं कर सका और अपने शासन के अन्त में (ऑक्सफोर्ड की परिषद् ११७७ ई०) उसे प्रमुख वैल्श सरदारों की औपचारिक वश्यता स्वीकार करके ही सन्तोष करना पड़ा। उसने उनके रिवाजों और जीवन-पद्धतियों को अछूता छोड़ दिया। वैल्श राष्ट्रीय देश भक्ति की भावना विजेताओं के प्रतिरोध से सुदृढ़ हुई। जब हेनरी द्वितीय ने ११६३ ई० में वेल्स में एक शक्तिशाली सेना का नेतृत्व किया तो इस बात का उल्लेख मिलता है कि उसने एक बुद्धिमान वृद्ध वेल्स सरदार से यह पूछा कि उसकी सम्मति में इसका क्या परिणाम होगा। उसका उत्तर था कि "मुझे सन्देह नहीं है

कि पुराने समय की भाँति अब भी मेरी जाति हार जाय और इंग्लिश हथियारों की शक्ति से बहुत कुछ टूट जाय, फिर भी यदि भगवान का प्रकोप हम पर न हो तो मनुष्य का क्रोध इस जाति को कभी भी पूर्ण रूप से नष्ट नही कर सकेगा क्योंकि मुझे यह प्रेरणा दी गयी है कि चाहे कुछ भी क्यों न हो, कयामत के महान दिवस पर पृथ्वी के इस छोटे कोने के लिए वेल्स की जाति के अतिरिक्त अन्य कोई जाति या बोली उत्तरदायी नहीं होगी।" उस वृद्ध व्यक्ति ने ठीक ही भविष्यवाणी की थी, क्योंकि वेल्स अपने अधिक बड़े पड़ोसियों के साथ समान शासन में लाये जाने पर भी अभी तक एक पृथक् छोटा राष्ट्र बना हुआ है।

रिचर्ड प्रथम की अनुपस्थिति में जॉन के शासन की अराजकता ने तथा हेनरी तृतीय के शासनकाल में होने वाले निरन्तर उपद्रवों ने वेल्स की देशभक्ति को अभिव्यक्त होने का अवसर प्रदान किया। इस युग का मुख्य नायक ग्वीनैड या उत्तरी वेल्स का राजकुमार लूएलिन एप यओर्वर्थ था, जिसे कई बार लूएलिन महान (११६४-१२४५ ई०) भी कहा जाता है। उसने सब वैल्श सरदारों को उसके प्रति वश्यता प्रगट करने के लिए बाधित किया और इस प्रकार उसने अपने को वैल्श राष्ट्र का अध्यक्ष बना लिया। उसने पोविस को अपने राज्य का अंग बनाया, मार्चर लार्डों की शक्ति को बहुत कम किया और पैम्ब्रोकशायर के इंग्लिश भाषाभाषी जिले को भी उसने वश्यता स्वीकार करने के लिए बाधित किया। यद्यपि वह कई बार इंग्लैण्ड के राजा को वश्यता की स्वीकृति देता रहा, किन्तु वह इंग्लिश सेनाओं का सामना करने में समर्थ था और अपने सुदीर्घ शासन-काल में क्रियात्मक स्वतन्त्रता का उपभोग करता रहा। उसकी विजय से प्रेरणा पाकर समूचे वेल्स के चारण उसकी स्तुति के गीत गाते रहे और इस समय वेल्स में कविता का एक महान पुनरुज्जीवन हुआ। वह मनुष्यों में बाज (Eagle) तथा इंग्लैण्ड का विध्वंसक था। चारणों के गीतों में कहा गया था कि "उसके आने की आवाज समुद्र के तट की ओर से तेजी से आती हुई लहर के गर्जन के समान है।" आर्थर के दरबार के चारण मर्लिन की पुरानी भविष्यवाणियों को याद करके कहा जाता था कि वे उसका निर्देश करती हैं।

लूएलिन महान की मृत्यु के बाद कुछ समय तक अव्यवस्था बनी रही, किन्तु शीघ्र ही उसका स्थान एक अन्य शक्तिशाली राजकुमार उसके पोते लूएलिन एपग्रुफिड (१२४६-१२८३ ई०) ने ले लिया। हेनरी तृतीय तथा सामन्तों के मध्य संघर्ष का लाभ उठाते हुए दूसरा लूएलिन अपने पूर्ववर्ती की अपेक्षा, अपनी शक्ति को अधिक उच्च शिखर तक पहुँचाने में समर्थ हुआ। उसने मार्चर लार्डों की भूमियों का बड़ा भाग जीत लिया। उसने साइमन डी मॉण्टफोर्ट के साथ अपनी सभी विजयों की मान्यता के आधार पर समान शर्तों पर सन्धि की (१२६५ ई०)। जब मॉण्टफोर्ट का दल हार गया, तब १२६७ ई० में वह एक ऐसी सन्धि करने में समर्थ हुआ, जिससे उसे 'वेल्स का राजकुमार' स्वीकार किया गया। यह उपाधि इंग्लिश राजाओं द्वारा इससे पहले किसी वेल्स राजकुमार को नहीं दी गयी थी। उसे इस शर्त पर सभी वेल्स सरदारों में सबसे बड़ा सामन्त स्वीकार किया गया कि वह इंग्लैण्ड के

राजा की वश्यता स्वीकार करेगा और उसे थोड़ा कर देता रहेगा। दस वर्ष तक उसकी शक्ति, उसके भाई डेविड के विश्वासघातपूर्ण षडयन्त्रों के सिवाय लगभग अक्षुण्ण बनी रही।

किन्तु एडवर्ड प्रथम के राज्यारोहण के बाद एक परिवर्तन हुआ। लूएलिन इस नये राजा से डरता था और उस पर अविश्वास करता था क्योंकि उसने हेनरी तृतीय के शासन-काल में वेल्स की स्वाधीनता के विकास को स्वीकार करने में बड़ी अनिच्छा प्रदर्शित की थी। वश्यता की विधि हर साल टाली जाती रही, कर भी प्रदान नहीं किया गया। अत: अन्त में १२७६ ई० में इंग्लैण्ड में शासन की बागडोर सम्भालने के दो वर्ष बाद एडवर्ड ने निश्चय किया कि वह वेल्स के राजकुमार के अन्तिम पराभव के लिए अभियान का संगठन करे। सभी मार्चर सामन्त इस बात से प्रसन्न थे कि उन्हें लूएलिन की शक्ति को नष्ट करने का मौका मिला है। राजकुमार का अपना भाई डेविड भी इंग्लिश राजा के साथ मिल गया। स्थल तथा समुद्र के मार्ग से दक्षिण की ओर से, केन्द्र की ओर से एवं उत्तर की ओर से एक साथ चढ़ाई के लिए संगठन बनाया गया और नवम्बर १२७७ ई० में लूएलिन को बाधित हो कर कॉनवे की शान्ति सन्धि करनी पड़ी। इस सन्धि से उसे अपनी सब विजयों से हाथ धोना पड़ा और उसका शासन कॉनवे नदा के पश्चिम के प्रदेश तक सीमित हो गया। इस प्रदेश में एंजल्सी, कार्नर्वोन मोरियोनेथ के आधुनिक जिले सम्मिलित थे।

यह संघर्ष की समाप्ति नहीं थी। १२८२ ई० में अकस्मात् उन जिलों में विद्रोह का विस्फोट हुआ, जो लूएलिन से लिये गये थे। यह विद्रोह मध्य एवं दक्षिणी वेल्स में तेजी से फैल गया। लूएलिन विद्रोहियों का साथ देने के लोभ का संवरण न कर सका और इसलिए वेल्स को जीतने का दूसरा प्रयास किया गया। सब ओर से घेरने वाली इंग्लिश फौजों के विरुद्ध उग्रतम प्रतिरोध भी निष्फल था। लूएलिन स्वयमेव दक्षिण की एक छोटी लड़ाई में मारा गया और उसकी मृत्यु से सफलता की सारी आशा जाती रही। लूएलिन का कोई पुत्र न था। पिछला विद्रोह आरम्भ करने वाला उसका विश्वासघाती भाई डेविड भी पकड़ा गया और देशद्रोही के रूप में उसका वध किया गया। भाटों ने जब वेल्स को विजेता के चरणों में पड़ा देखा, तो उनके विजय के गीत शोक में परिणत हो गये। उनमें से एक भाट ने विलाप-पूर्ण क्रन्दन करते हुए कहा, 'हे भगवन्! समुद्र इस भूमि को अपने में समेट ले। हमें इस चिरकालीन क्लान्ति में क्यों छोड़ दिया गया है?'

कुछ हद तक एडवर्ड प्रथम ने वेल्स की इंग्लैण्ड से विशिष्टता को स्वीकार किया। उसने इंग्लिश पार्लियामेण्ट में वेल्स के प्रतिनिधियों को सम्मिलित करने का कोई प्रयत्न नहीं किया। उसने भूमि के उत्तराधिकार-जैसे वैल्स के कानूनों में कोई परिवर्तन नहीं किया। अप्रैल १२८४ ई० में जब कार्नर्वोन में उसका पुत्र उत्पन्न हुआ, तब उसने एक भी अंग्रेजी शब्द न बोल सकने वाले इस शिशु राजकुमार को जनता को समर्पित किया। १३०१ ई० में वेल्स की राष्ट्रीय भावना का आदर करते हुए इस लड़के को प्रिंस ऑफ़ वेल्स (Prince of Wales) घोषित किया। उस समय से राजगद्दी का प्रत्येक उत्तराधिकारी इस उपाधि को धारण करता

है। किन्तु एडवर्ड ने यह भी निश्चय किया कि वेल्स फिर कभी स्वतन्त्र नहीं होगा। उसने विजित प्रदेशों पर अपना अधिकार कॉनवे, कार्नर्वोन, बोमेरिस, क्रिक्सिएथ और हार्लेक के महान् किलों की शृंखला बनाकर सुदृढ़ किया। उसने लगभग आधे देश में शैरिफ, बैलिफ और जिला न्यायालय के साथ इंग्लिश जिला पद्धति का श्रीगणेश किया और अपने प्रत्यक्ष नियन्त्रण में आने वाले समूचे प्रदेश को इंग्लिश नमूने वाले जिलों में विभक्त किया[1]। शेष आधा हिस्सा मार्चेर लार्डों के सामन्ती क्षेत्राधिकार में बना रहा।

वेल्स की विजय की गयी, किन्तु उसे इंग्लिश नहीं बनाया गया। यह अपना पृथक् जीवन बिताने वाला राष्ट्र बना रहा। पुराने, निरन्तर चलने वाले जनजातीय युद्धों के समाप्त हो जाने के कारण अब यह समृद्ध होने लगा। राष्ट्रीय भावना अब भी प्रबल बनी रही। यह राष्ट्रीय भावना उस असाधारण उत्साह से प्रदर्शित होती है, जिसके साथ १४०१-१४०६ ई० के वर्षों में ओविन ग्लेण्डोवर के विद्रोह का समर्थन किया गया था, १४८५ ई० में, इंग्लिश राजसिंहासन पर वैल्श राजाओं के एक वंश द्वारा शासन किये जाने के बाद, वेल्स राजनीतिक रूप में इंग्लैण्ड में सम्मिलित हुआ। वर्तमान समय तक यह अपनी परम्पराओं, भाषा और रिवाजों को बनाये रखने वाला एक विशिष्ट छोटा राष्ट्र है। उसकी इन परम्पराओं को किसी ने कभी नष्ट करने का प्रयत्न नहीं किया और वह अपने बड़े पड़ोसियों के साथ मित्रतापूर्ण साझीदारी में रह रहा है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

J. E. Lloyd, History of Wales (2 Vols.) में एडवर्ड प्रथम के राज्यकाल तक का प्रारम्भिक इतिहास है। **O. M. Edwards,** Wales (Story of the Nations), Little, Mediaeval Wales; **Morris,** Welsh Wars, of Edward III.

• •

---

१. एटलस की प्लेट ३५ सं (ए) को देखिये जहाँ इन व्यवस्थाओं को प्रदर्शित किया गया है।

२. नीचे अध्याय सात देखिये।

४

स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता

डेविड प्रथम ११२४ ई० : मालकम ११५३ ई० : विलियम ११६५ ई० : अलैक्जेण्डर द्वितीय १२१४ ई० : अलैक्जेण्डर तृतीय, १२४९ ई० : मार्गरेट १२८६ ई० : जॉन बैलियोल १२९२ ई० : राबर्ट प्रथम १३०६ ई०: डेविड द्वितीय १३२९ ई० ।

१. स्काटलैण्ड में राजतन्त्र का विकास

वेल्स की विजय के बाद इंग्लैण्ड की राष्ट्रीय भावना ने अपने को स्काटलैण्ड को वशवर्ती बनाने के प्रयास में प्रकट किया। इसका परिणाम यह हुआ कि इसने अब तक बहुत अधिक विभक्त स्काट जनता में राष्ट्रीय अभिमान की एक चुभने वाली भावना उत्पन्न की और युद्धों की एक ऐसी लम्बी शृंखला का श्रीगणेश किया, जो ३०० से अधिक वर्षों तक चलती रही। यह युद्ध-शृंखला तभी समाप्त हुई, जब १६०३ ई० में इंग्लैण्ड की राजगद्दी पर एक स्काट राजा बैठा।

स्काटलैण्ड एक छोटा, बंजर और कम आबादी वाला देश था। फिर भी यूरोप में नस्ल और भाषा की दृष्टि से इससे अधिक विभक्त कोई दूसरा देश नहीं था। फोर्थ और ट्वीड के बीच का दक्षिण-पूर्वी भाग पहले नार्थम्ब्रिया के इंग्लिश राज्य का हिस्सा रह चुका था, यह नस्ल की दृष्टि से प्रधान रूप से तथा भाषा की दृष्टि से पूर्ण रूप से इंग्लिश था। १०१८ ई० से ही यह स्काटिश राज्य का हिस्सा बना था। क्लाइड और सोल्वे के बीच का दक्षिण-पश्चिमी भाग नस्ल की दृष्टि से लगभग विशुद्ध कैल्टिक था, यद्यपि यह हाल ही में इंग्लिश भाषा-भाषी बना था। ११वीं शताब्दी तक यह एक पृथक् राज्य था। धुर दक्षिण-

पश्चिम में गैलोवे, गैलिक जाति और भाषा का प्रदेश था। फोर्थ और क्लाइड के उत्तर में जनता मुख्य रूप से कैल्टिक रक्त की थी, किन्तु फाइफ से एल्गिन तक उत्तर-पूर्वी समुद्रतट के साथ-साथ अनेक इंग्लिश, डेन और नार्मन व्यक्ति बसे हुए थे और ये प्रदेश इंग्लिश भाषा-भाषी बनने शुरू हो गये थे, जब कि पश्चिमी और केन्द्रीय उच्च प्रदेश (Highlands) अब भी विशुद्ध रूप से गैलिक भाषा-भाषी थे। धुर उत्तर में कैथनैस, आर्कनीज तथा शैटलैण्डस् में जनता मुख्यतः नॉर्स थी और पश्चिम के टापुओं पर चिरकाल से नॉर्स व्यक्तियों का शासन था। इन विरोधी तत्वों से एक संगठित राष्ट्र किस प्रकार बनाया जा सकता था ?

इस दिशा में पहला पग डेविड प्रथम (११२४-११५९) के राज्यकाल में उठाया गया। वह स्काटलैण्ड में बहुत से नार्मन कुलीन सरदार लाया. इनकी सहायता से उसने देश के बड़े भाग में सामन्ती पद्धति का संगठन आरम्भ किया और चर्च को सुदृढ़ एवं समृद्ध किया। अनेक स्वतन्त्र बसे नगरों की स्थापना की। उसने स्काटलैण्ड में राजकीय शेरिफों द्वारा देहाती शासन की इंग्लिश पद्धति को आरम्भ किया और पुराने रक्तपातपूर्ण संघर्ष एवं लड़ाई द्वारा निर्णय की पद्धति के स्थान पर जूरी द्वारा जाँच की व्यवस्था को स्थापित किया। कभी न समाप्त होने वाले, जनजातीय झगड़ों को उसने कम करने का प्रयत्न किया। डेविड के समय के बाद से नार्मन सामन्त देश के प्रमुख नेता थे। अधिक शक्तिशाली जनजातीय सरदारों की प्रवृत्ति इनके शासन करने के ढंगों का अनुकरण करने की थी। किन्तु ये नार्मन सामन्त अधिकांशतः इंग्लैण्ड में भी भूमि पर अधिकार रखने वाले थे और इसलिए वे स्कॉटिश देशभक्ति की प्रबल भावना का अनुभव नहीं कर सकते थे। इसके अतिरिक्त इंग्लिश राजा स्काटलैण्ड पर सामन्ती प्रभुता का दावा करते थे। यह निश्चित है कि बड़े एडवर्ड (Edward Elder) के समय से अधिकांश स्कॉटिश राजा इंग्लैण्ड के राजा की कुछ वश्यता स्वीकार करते थे, किन्तु उनकी वश्यता सामान्यतः उन भूमियों के लिए थी, जिन्हें वे इंग्लैण्ड में रखते थे, या स्कॉटलैण्ड के उन हिस्सों के लिए भी जो पहले इंग्लिश शासन में थे। इंग्लिश राजा का निश्चित रूप से केवल एक ही मामले में स्काटलैण्ड के समूचे राज्य का सामन्ती प्रभुत्व निश्चित रूप से स्वीकार किया गया था। यह हेनरी द्वितीय द्वारा सिंह की उपाधि वाले विलियम (William the Lion) को बन्दी बनाने के समय हुआ (११७४ ई०)। किन्तु उसने ११८९ ई० में रिचर्ड प्रथम से मूल्य चुका कर अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी। इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के सामन्ती सम्बन्ध का प्रश्न अत्यधिक जटिल था और इंग्लिश राजाओं ने कभी भी अपने दावों का पूर्ण रूप से परित्याग नहीं किया था, किन्तु यह बड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं था। वास्तव में महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि क्या विभक्त स्काटलैण्ड में राष्ट्रीय एकता की भावना उत्पन्न होगी ? क्योंकि यदि ऐसा होता और जिस समय ऐसा हुआ, उसी समय सामन्ती कानून की पेचीदगियाँ स्काटलैण्ड के भाग्य का निर्णय करना अवश्यमेव असम्भव बना देतीं।

डेविड के पुत्रों—मालकम (११५३-११६५) और सिंहोपाधिक विलियम (११६५-१२१४) के राज्यकालों में कुछ प्रगति हुई। नॉर्स लोगों से दक्षिणी हेब्राइडीज़ जीत लिया गया

न्याय की पद्धति में सुधार हुआ। अलैक्जैन्डर द्वितीय (१२१४-१२४९) का राज्यकाल स्काटलैण्ड के इतिहास में शान्ति के राज्यकाल के रूप में सम्मानित रूप से प्रसिद्ध है। उसके उत्तराधिकारी अलैक्जैन्डर तृतीय (१२४९-१२८६) ने इंग्लैण्ड के एडवर्ड प्रथम की बहिन से शादी की। उसने लर्ग्स में नार्स लोगों पर शानदार विजय प्राप्त की (१२६३ ई०)। अन्त में उसने उन्हें हेब्राइडीज़ से बाहर भगा दिया और इन टापुओं के सरदार तथा विशेष रूप से महान मैक्डॉनल्ड लार्ड देर तक बहुत स्वतन्त्र बने रहे। फिर भी वे इसके बाद स्काटलैण्ड राज्य के ही प्रजाजन थे। अतः यह राज्य क्रियात्मक रूप से अपने पूर्ण विस्तार को पा चुका था यद्यपि ओर्कनीज़ तथा शैट्लैण्डस १४६९ ई० तक प्राप्त नहीं किये जा सके थे।

२. एडवर्ड प्रथम का स्काटलैण्ड को वशवर्ती बनाने का प्रयास

१२८५ ई० में स्काटलैण्ड एक शताब्दी से भी अधिक समय तक पर्याप्त शान्ति का उपभोग कर चुका था। उसकी शासन व्यवस्था निरन्तर सुधर रही थी। उसकी अत्यधिक भेद रखने वाली जातियाँ इकट्ठा रहना सीख रही थी। किन्तु अब भी उनकी एकता उनके राजा के पौरुष पर ही मुख्य रूप से निर्भर थी। दुर्भाग्यवश एलैक्जेन्डर तृतीय १२८६ ई० में अपने घोड़े के साथ एक चट्टान से गिर जाने के कारण मर गया। उसने अपने पीछे कोई पुत्र नही छोड़ा। उसकी लड़की एडवर्ड प्रथम की भांजी थी। उसने नार्वे के राजा से शादी की थी, किन्तु वह अपनी लड़की मार्गरेट की प्रसूति के समय मर चुकी थी। नार्वे की कन्या (Maid of Norway) के नाम से प्रसिद्ध यह दो वर्ष की शिशु, स्काटिश गद्दी की उत्तराधिकारिणी थी और इसे स्काटिश सामन्तों की एक पवित्र सभा में, विधिपूर्वक स्काटलैण्ड की रानी स्वीकार किया गया था। यदि वह जीवित रहती तो सम्भवतः इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड का एकीकरण शान्तिपूर्ण रीति से हो जाता, क्योंकि एडवर्ड प्रथम का यह विचार था कि उसका विवाह शिशु प्रिन्स आफ वेल्स से कर दिया जावे। किन्तु नार्वे से स्काटलैण्ड की समुद्री यात्रा में उसकी मृत्यु हो गयी (१२९० ई०) और स्काटलैण्ड में स्काटिश गद्दी के विभिन्न दावेदारों के अनुयायियों में गृहयुद्ध एकदम छिड़ गया।

गद्दी के प्रमुख दावेदार-जान बेलियोल तथा राबर्ट ब्रूस दोनों नार्मन सामन्त थे, उनके भू-प्रदेश और स्वार्थ इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के दोनों देशों में थे। दोनों सिंहोपाधिक विलियम (William the Lion) की लड़कियों के वंशज थे। दोनों के मित्रों ने अपने दावों के के समर्थन के लिए एडवर्ड प्रथम से अपील की। एडवर्ड ने यह अनुभव किया कि इस स्थिति से उसे स्कालैटण्ड पर इंग्लिश ताज की सामन्ती प्रभुता स्थापित करने का अवसर मिल रहा है। वह १२९१ में ट्वीड् में एक सेना लेकर जा धमका और उसने अपने सर्वोच्च प्रभु (Lord Paramount) होने की घोषणा कर दी। प्रमुख स्काटिश सामन्तों में अनेक उपयुक्त दावेदार की भाँति आधे इंग्लिश थे और इन्होंने एडवर्ड की सर्वोच्च सत्ता स्वीकार की। कहा जाता है कि स्काटलैण्ड के समुदाय ने इसका निष्फल विरोध किया। एडवर्ड ने गद्दी के दावों को

सुना और १२९२ ई० में उसने अपना निर्णय जान बेलियोल के पक्ष में दिया, वस्तुतः उसका दावा सर्वोच्च था।

नये राजा को वश्यता स्वीकार करने (Homage) की विधि करने के लिए बाधित किया गया, किन्तु एडवर्ड अपनी सर्वोच्च सत्ता को औपचारिक विधि मात्र तक सीमित न रख कर इससे अधिक बनाना चाहता था। उसने स्काटिश न्यायालयों की अपीलें सुनने के अपने अधिकार का दावा किया। वह स्काटिश राजा का इंग्लिश पार्लियमेन्टों में उपस्थित होना भी आवश्यक समझता था। उसने यहाँ तक आग्रह किया कि स्काटिश सेनाएँ फ्रांस में अंग्रेजों की ओर से लड़ने के लिए भेजी जानी चाहिये। बेलियोल अपने प्रजाजनों के बढ़ते हुए क्रोध का विरोध नहीं कर सका। उसने फ्रांस के साथ सन्धि की (१२९५ ई०)। यह ३०० वर्ष तक बनी रही और बेलियोल ने इंग्लिश राजा की खुल्लमखुल्ला अवज्ञा की। किन्तु उसे जल्दी ही हरा दिया गया, और गद्दी से उतार दिया गया। अब एडवर्ड ने यह दावा किया कि स्काटलैण्ड के राजा के राजद्रोह के कारण अब इस पर उसका अधिकार हो गया है और वह देश के प्रत्यक्ष शासन को अपने हाथ में लेने के लिए आगे बढ़ा। उसने स्कोन से स्काटिश राजाओं के राज्याभिषेक के पवित्र प्रस्तर को हटा दिया, जिसके बारे में यह विश्वास किया जाता था कि यह वही पत्थर है जिस पर तकिया लगाकर वयोवृद्ध मुखिया जेकब उस रात सोया था, जब उसने देवदूतों की सीढ़ी को सपने में देखा था। वैस्टमिंस्टिर एबे के राजसिंहासन में इस पत्थर को जड़ दिया गया। इस सिंहासन पर तब से प्रत्येक इंग्लिश शासक का राज्याभिषेक होता रहा है। सब स्काटिश कुलीनों ने राजभक्ति की शपथ ली। सब किलों पर इंग्लिश लोगों का अधिकार हो गया और इनमें इंग्लिश सेना रखी गयी और इंग्लिश अमीरों को राज्य के प्रमुख पदों पर नियुक्त किया गया। १२९६ ई० तक ऐसा प्रतीत हुआ कि मानों स्काटलैण्ड निश्चित रूप से वशवर्ती बना लिया गया है।

३. वालेस और ब्रूस के नेतृत्व में स्काटिश प्रतिरोध

यद्यपि प्रमुख अमीरों ने इस स्थिति को स्वीकार कर लिया, तथापि सामान्य जनता और निम्न दर्जे का भद्रवर्ग इंग्लिश सर्वोच्च सत्ता का तीव्र विरोधी था। उन्हें रैन्फ्र्यूशायर (Renfrewshire) के एक छोटे जमींदार के छोटे बेटे सर विलियम वालेस के रूप में आश्चर्यजनक नेता मिल गया। वालेस को इंग्लिश लोगों के विरुद्ध हमलों में बड़ी प्रसिद्धि मिली। हम उसके आरम्भिक साहसपूर्ण कार्यों के बारे में बहुत कम जानते हैं, किन्तु यह जानते हैं कि १२९७ ई० के ग्रीष्मकाल तक उसने देश के अधिकांश भाग को खुले विद्रोह के लिए उभाड़ दिया और इंग्लिश शक्ति के विध्वंस के लिए उत्सुक व्यक्ति उसके झण्डे के नीचे एकत्र होने लगे। सितम्बर १२९७ ई० में उसने स्टर्लिंगपुल पर, इंग्लिश राज्यपाल वारेन्ने पर शानदार विजय प्राप्त की। अगले कुछ महीनों में देश का अधिकांश भाग विजेताओं से मुक्त हो गया तथा वालेस और उसके साथी नार्थम्बरलैण्ड पर बड़ी उग्रता से हमले कर रहे थे। १२९८ ई० में वालेस ने निर्वासित और सिंहासनच्युत बैलियोल की ओर से अपने को राज्य का संरक्षक घोषित किया। किन्तु स्काटिश अमीरों को यह गुस्ताखी

प्रतीत हुई, क्योंकि वालेस केवल नीचे दर्जे का एक नाइट या योद्धा था। इनमें से अधिकांश अमीर और विशेष रूप से अपने लिये राजमुकुट की आशा रखने वाला राबर्ट ब्रूस इंग्लिश पक्ष के साथ मिल गया। एडवर्ड ऐसा व्यक्ति नहीं था, जो अपनी विजय को हाथ से निकल जाने देता। उसने बड़ी सेना के साथ स्काटलैण्ड पर चढ़ाई की और जुलाई १२९८ ई० में फाल्कर्क में वालेस की भालाधारी सेना को प्रधान रूप से इंग्लिश धनुर्धरों के भीषण अग्नि-वर्षण से विनष्ट किया। अब लड़ाई में पहली बार इंग्लिश धनुर्धरों की धाक जम गयी।

किन्तु स्काट विद्रोह एक राष्ट्रीय विद्रोह था और यह एक लड़ाई से नहीं कुचला जा सकता था। एडवर्ड अपनी सफलता को बनाये रखने में समर्थ नहीं था, क्योंकि इसी समय उसका फ्रांस के साथ युद्ध और पार्लियामेन्ट के साथ झगड़ा चल रहा था। ५ वर्ष तक कुछ प्रमुख स्काटिश सरदारों द्वारा बनायी गयी संरक्षण-परिषद (Council of Regency) ने देश का शासन करने का दावा किया और वालेस एक सामान्य योद्धा होने के कारण पृष्ठभूमि में पड़ गया। किन्तु १३०३ ई० में एडवर्ड एक अन्य बड़ी सेना के साथ अत्यधिक विध्वस्त देश को वशवर्ती बनाने के लिए पुन: स्काटलैण्ड लौटने में समर्थ हुआ। एक बार पुन. सरदारों ने राष्ट्रीय हित को छोड़ दिया और शान्ति सन्धि कर ली। एडवर्ड ने समझौते के लिए उत्सुक होने के कारण एक व्यक्ति के सिवाय सब को क्षमा दान की घोषणा की। यह मैसायर-विलियम-ली-वेलिस (Messire William le Waleys) था, जो अब भी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के संघर्ष को जीवित रखने का प्रयत्न कर रहा था। वालेस को इनाम के लालच में धोखा देकर सर जान मौन्टेथ ने बन्दी बनवाया और लन्दन में १३०५ ई० में उसे फाँसी दे दी गयी। उसके मृत शरीर को घसीटा गया और चार टुकड़ों में काट डाला गया। उसकी उग्र वीरता निष्फल हुई, किन्तु इसने एक राष्ट्र को जगा दिया। जिन स्काट लोगों ने वालेस के साथ खून बहाया था, उनके अब विजेता के आगे आत्मसमर्पण करने की सम्भावना नहीं थी। "पहाड़ी कौओं ने अभी उसकी (वालेस की) हड्डियों का मांस भी पूरी तरह से नोचा नहीं था कि स्काट स्वतन्त्रता के लिए पुन: संघर्ष करने लगे।"

उनका नया नेता राबर्ट ब्रूस था। यह १२९१ ई० में गद्दी का दावा करने वाले का पोता था। इस नार्मन सामन्त की इंग्लैण्ड में तथा दक्षिण-पश्चिमी स्काटलैण्ड में बड़ी जागीरें थीं। उसने बारी-बारी से एडवर्ड का समर्थन और विरोध किया। ऐसा प्रतीत होता था कि वह वैयक्तिक महत्वाकांक्षा से प्रेरित हो कर ही ऐसा कर रहा था। अब उसने अपने लिए राजमुकुट पाने के लिए स्काटों में धीमे-धीमे सुलग रहे क्रोध के उपयोग करने का अवसर देखा। १३०६ ई० के शुरू में उसने अपने षड्यन्त्र में उत्तर के एक शक्तिशाली सामन्त और गद्दी के प्रतिस्पर्धी दावेदार रैड कोमिन को सम्मिलित करने का प्रयत्न किया। यह १२९८ ई० से १३०४ ई० तक स्काटिश प्रतिरोध के नेताओं में से एक था। बाद में इसने इंग्लिश राजा के साथ सन्धि कर ली थी। १३ फरवरी १३०६ ई० में डम्फ्रीज में ग्रेफायर्स चर्च में ब्रूस और कोमिन की भेंट हुई। कोई व्यक्ति नहीं जानता कि भेंट में क्या हुआ। किन्तु इसकी समाप्ति ऐसी हुई कि ब्रूस ने उच्च वेदी के सम्मुख कोमिन की हत्या कर दी। ऐसे दुष्कर्म के लिए क्षमा की आशा नहीं की जा सकती थी, ब्रूस जानता था कि उसे या तो

राष्ट्रीय विद्रोह को विजय में परिणत करना होगा अथवा वह वालेस की भाँति नष्ट हो जायेगा।

यह बुरी शुरूआत थी; यद्यपि पोप द्वारा प्रसारित धर्मबहिष्कार के आदेश (Papal Excommunication) के बावजूद कुछ सरदार और बिशप ब्रूस से मिल गये, तथापि कोमिन के बहुसंख्यक और शक्तिशाली मित्रों ने उसके विरुद्ध हथियार उठा लिये। इस समय एडवर्ड ने नयी चढ़ाई की तैयारी की। ब्रूस का जल्दी से स्कोन में राज्याभिषेक किया गया। किन्तु उसके पास बहुत थोड़ी सेना थी, इसे एक इंग्लिश सेना ने पर्थ के निकट शीघ्र ही हरा दिया। उसकी रानी पकड़ी गयी। उसके एक भाई का वध कर दिया गया उसे स्वयमेव पश्चिम के जंगली प्रदेश में भाग जाना पड़ा। यहाँ उसने चारों ओर से शत्रुओं द्वारा पहाड़ों में पीछा किये जाते हुए एक निराशापूर्ण शीतकाल व्यतीत किया।

ब्रूस के जीवन का आरम्भिक भाग निन्दनीय था। किन्तु परीक्षा की इस घड़ी में उसने अपने को ऐसा प्रदर्शित किया कि वह एक महापुरुष, एक महान नेता, विपत्ति में निर्भीक, प्रत्युत्पन्नमति, साहसी और चतुर सेनानायक है और अपने अनुयायियों को उत्साह-पूर्ण भक्ति से प्रेरित कर सकता है। उसके चारों ओर एकत्रित होने वाले कुछ सेनापति एडवर्ड ब्रूस, ब्लैक डगलस, मोरे का अर्ल थामस रेन्डौल्फ विशुद्ध रोमांचकारी वीर थे। हम यहाँ उसके स्पन्दनशील साहसिक कृत्यों का अनुसरण नहीं कर सकते। स्काट की Tales of a Grand Father में सजीव रूप से इनका वर्णन है। १३०७ ई० में ब्रूस अयरशायर में अपने देश की भूमि पर पुनः उतरा और उसने वहाँ तथा गैलोवे में एक गतिशील छोटी सेना के साथ लड़ाई की। इसी समय इंग्लैण्ड का महान एडवर्ड उसको विध्वंस करने के दृढ़ निश्चय के साथ और इस निश्चय को पुष्ट करने वाली विशाल सेना के साथ उसकी तरफ बढ़ रहा था। किन्तु सीमा पार करने से पहले बर्घ आन सैन्ड्स में कार्लिस्ले के निकट एडवर्ड की मृत्यु हो गयी। उसके निर्बल बेटे एडवर्ड द्वितीय ने स्काटलैण्ड में एक निरर्थक प्रयाण के बाद इस अभियान को छोड़ दिया और १३११ ई० में एक दूसरी चढ़ाई भी इसी प्रकार निष्फल हुई।

४. बैनकबर्न और स्वतन्त्रता की स्थापना

वस्तुतः एडवर्ड द्वितीय अपने समूचे राज्यकाल में अपने सामन्तों के साथ निरन्तर चलने वाले झगड़ों में उलझा रहा। इनके सम्बन्ध में कुछ बातें अन्यत्र बतायी जायेंगी। इसका परिणाम यह हुआ कि सात वर्ष तक ब्रूस को अपने स्काटिश शत्रुओं को जीतने की खुली छुट्टी रही और उसने देश को नियन्त्रण में रखने वाली इंग्लिश सेनाओं से युक्त किलों को एक-एक करके जीता।[1] इस उत्साहजनक कहानी का वर्णन करने का यह स्थान नहीं है, किन्तु १३१४ ई० तक स्टर्लिङ्ग के एक किले को छोड़ कर बाकी प्रत्येक किला जीत लिया गया, क्योंकि हाइलैण्डस से लोलैण्डस का मार्ग नियन्त्रण करने के कारण स्टर्लिङ्ग का

१. एटलस की प्लेट संख्या १९ तथा ३५ (बी) के नक्शे देखिये।

दुर्ग स्काटलैण्ड की कुञ्जी समझा जाता था। इस किले को बचाने के लिए और स्काटलैण्ड को वशवर्ती बनाने के अन्तिम अवसर की सुरक्षा रखने के लिए एक विशाल इंग्लिश सेना लोलैण्डस में से आगे बढ़ी, इसमें आयरलैण्ड और वेल्स की सेनाएँ तथा एक्वीटेन के वीर सैनिक भी सम्मिलित थे। अपनी अल्पसंख्यक सेना के साथ ब्रूस ने स्टार्लिङ्ग के दक्षिण-पूर्व में बैनकबर्न (Bannockburn) के रणक्षेत्र में २४ जून १३१४ ई० को इस सेना के साथ मुठभेड़ की और बड़ी गौरवपूर्ण विजय प्राप्त की। इससे स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता सुरक्षित हो गयी। आठ वर्ष पूर्व स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता के बारे में यह प्रतीत होता था कि इसके प्राप्त होने की कोई आशा नही है। किन्तु ब्रूस और उसके साथियों की वीरता ने, अब संयुक्त जनता के संकल्प का समर्थन और एडवर्ड द्वितीय की अयोग्यता की सहायता पाकर इस असम्भव कार्य को सम्भव बना दिया। स्काट अदम्य राष्ट्र बन गये। बैनकबर्न ने इसे स्पष्ट कर दिया था कि यदि इन द्वीपों की जनताएँ कभी एक होंगी, तो यह विजय से नहीं, किन्तु समान साझीदारी से एक होंगी।

वस्तुत: बैनकबर्न की लड़ाई के साथ युद्ध की समाप्ति नहीं हुई, क्योंकि इस महान लड़ाई के परिणामों को, १४ वर्ष बाद ही सन्धि द्वारा स्वीकार किया गया। अगले वर्षों में इंग्लैण्ड पर निर्मम स्काटिश हमले होते रहे और सीमान्त प्रदेश वैसा ही उजाड़ हो गया, जैसा प्राय: अगली तीन शताब्दियों मे होता रहा। स्काट लोगों की सफलता से प्रोत्साहन पाकर वेल्स लोगों ने भी विद्रोह किया और इस विद्रोह का दमन करने के लिए कठोर युद्ध करना पड़ा। आयरिश लोगों ने भी बगावत की और ब्रूस के भाई एडवर्ड को राजमुकुट देने का प्रस्ताव किया। यह लड़ाई में मारा जाने से पहले तक १३१५ ई० से १३१८ ई० के वर्षों में इस देश को उजाड़ता रहा। इस अभियान का एकमात्र परिणाम यह था कि इसने आयरलैण्ड में इंग्लिश शक्ति को स्थायी रूप से निर्बल बना दिया और इस अभागे देश को स्थायी अराजकता में डाल दिया। एडवर्ड द्वितीय के पतन के बाद स्काटिश लोगों ने उत्तरी इंग्लैण्ड पर भीषण आक्रमण किया। इससे दोनों पक्षों में भारी लड़ाई का दौर शुरू हो गया और इसमें स्काट लोगों का पलड़ा भारी रहा। मार्च १३२८ ई० में अन्त में सन्धि हो गयी और इंग्लिश राजा ने स्काटिश राजगद्दी पर अपने सभी दावों को निश्चित रूप से छोड़ दिया और ब्रूस को राजा स्वीकार किया। अगले वर्ष (१३२९ ई० में) राबर्ट ब्रूस की मृत्यु हो गयी और उसने अपने शिशुपुत्र डेविड द्वितीय के लिए उस संयुक्त स्काटिश राष्ट्र की गद्दी छोड़ी, जिसके निर्माण के लिए उसने इतना प्रयास किया था।

किन्तु स्काटलैण्ड के कष्टों का अभी अन्त नहीं हुआ था। एक समूची पीढ़ी के अविरत युद्धों से विभक्त यह अभागा देश निर्धन और अधिकांश रूप में वीरान कर दिया गया था। इसके अमीरों और भद्र जनता को लड़ने की आदत पड़ गयी थी। इस कारण उन्हें नियन्त्रण में रखना बहुत कठिन था। एक शिशु राजा इन बुराइयों का इलाज नहीं कर सकता था और उसका संरक्षक बनने की इच्छा रखने वाले अमीरों के झगड़ों ने इन बुराइयों को बदतर बना दिया। इसके अतिरिक्त ब्रूस का विरोध करने वाले बहुत से सामन्तों

की जागीरें जब्त कर ली गयीं थीं और उन्हें इंग्लैण्ड में निर्वासित कर दिया गया था। ये लोग अनिवार्य रूप से बदला लेने के लिए षड्यन्त्र रच रहे थे। १३१८ ई० की सन्धि के बावजूद अब महत्वाकांक्षी और लड़ाकू इंग्लिश राजा एडवर्ड तृतीय इन्हें अपना समर्थन देने के लिए तैयार था।

१३३२ ई० में बेलियोल और कोमिन के दलों के कुछ निर्वासित अमीरों के साथ, जान बेलियोल के बेटे एडवर्ड ने उत्तरी स्काटलैण्ड पर इंग्लिश जहाजों द्वारा अकस्मात् आक्रमण किया। वे टे (Tay) के समुद्र तट पर उतरे, डप्पलिन मूर में उन्होंने राजा के संरक्षक को हराया और पर्थ पर अधिकार कर लिया। एडवर्ड बेलियोल ने स्कोन में अपना राज्याभिषेक कराया और इंगलिश लोगों का समर्थन पाने के लिए उसने एडवर्ड तृतीय को अपना स्वामी (Liege Lord) स्वीकार किया। देशभक्त दल ने पुनः उसे शीघ्र ही स्काटलैण्ड से बाहर खदेड़ दिया। किन्तु अगले वर्ष १३३३ ई० में एक इंग्लिश सेना उसकी सहायता करने आयी और उसने बेरविक के निकट हैलिडोन पहाड़ी पर स्काट लोगों को बुरी तरह हराया। इससे कुछ समय तक इंग्लिश दल का पलड़ा भारी रहा। युवक राजा डेविड को सुरक्षा के लिए फ्रांस भेजना पड़ा और एडवर्ड बेलियोल ने एडिनबरा से बेरविक तक के सभी दक्षिण-पूर्वी जिले वस्तुतः इंग्लिश राजा को सौंप दिये। किन्तु इस पैशाचिक आत्मसमर्पण ने इस बात की सभी सम्भावनाएँ समाप्त कर दीं कि स्काट लोग उसे राजा स्वीकार करें। अगले कुछ वर्षों में निराशापूर्ण उग्र संघर्ष चलता रहा और कई बार ऐसा प्रतीत होता था कि वालेस और ब्रूस के सम्पूर्ण प्रयासों के बावजूद स्काटलैण्ड इंग्लिश सेनाओं द्वारा वशवर्ती बना लिया जायेगा। इस स्थिति की रक्षा फ्रांस और इंग्लैण्ड में लड़ाई छिड़ जाने से हुई। इस युद्ध ने एडवर्ड तृतीय के लिए यह असम्भव बना दिया कि वह स्काटलैण्ड की विजय में अपनी शक्ति लगा सके। १३४१ ई० में राजा डेविड को फ्रांस से लौटना सुरक्षित जान पड़ा। यह कहा जा सकता है कि इस तिथि के बाद स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता कभी भी खतरे में नहीं पड़ी।

दुर्भाग्यवश डेविड द्वितीय एक मूर्ख और अविवेकी शासक था। अपने फ्रेंच मित्रों की सहायता करने की आशा में उसने क्रैसी की लड़ाई वाले साल में इंग्लैण्ड पर हमला किया और उसे डरहम के निकट नेविल क्रास में हराया गया और बन्दी बना लिया गया (१३४६)। १३५७ ई० तक वह बन्दी बना रहा और उसके दरिद्र देश को उसकी मुक्ति के लिए विशाल धनराशि देनी पड़ी। उसकी अनुपस्थिति में सरदारों के निराशापूर्ण उग्र संघर्षों ने अभागे स्काटलैण्ड के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। उसके आने के बाद इसमें कोई बड़ा सुधार नहीं हुआ। १३७१ ई० में उसके मरने पर राबर्ट ब्रूस की सीधी वंश परम्परा समाप्त हो गयी। उसका उत्तराधिकारी राबर्ट द्वितीय ब्रूस का धेवता था और स्टीवर्ट के अभागे घराने का पहला राजा था। इस ऐतिहासिक राजवंश के आविर्भाव के साथ-साथ हम कुछ समय के लिए स्काटलैण्ड में निरन्तर चलने वाले युद्धों की कथा समाप्त करते हैं। अब भी स्काटिश सरदारों में लड़ाइयाँ और षड्यन्त्र चलते रहे। अब भी इंग्लिश लोगों के साथ सीमान्त

संघर्ष निरन्तर जारी रहे और अगली दो शताब्दियों में सीमान्त रेखाओं पर कोई शान्ति नहीं रही। यहाँ प्रत्येक घर की किलेबन्दी करनी पड़ी और प्रत्येक मनुष्य को शस्त्रों द्वारा अपनी रक्षा करने के लिए तैयार रहना पड़ता था, किन्तु सीमान्त संघर्ष ने स्थिति में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं किया, यद्यपि इस संघर्ष की कथा १३८८ ई० में ओटर्वर्न में लड़ी गयी लड़ाई जैसी रोमांचक प्रसंगों से परिपूर्ण है। इस लड़ाई ने चेविचेज के महान चारणगीत (Ballad) को जन्म दिया। वस्तुतः इस सारे जंगली कार्य का सबसे अधिक मूल्यवान परिणाम आश्चर्यजनक चारणगीतों के साहित्य का विकास था। इसका अध्ययन पर्सी के Reliques में तथा स्काट के गीतों के संग्रह में किया जा सकता है।

सत्य तो यह है कि स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता सुदृढ़ रूप से प्रतिष्ठित हो चुकी थी। सीमान्त पर लड़ने वाली जनजातियों-स्काटों और केरों, इलियटों और आर्मस्ट्रांगों के पर्दे के पीछे स्काटलैण्ड अपना असभ्य एवं उपद्रवी जीवन बिता रहा था। वह अनेक संघर्षों से अपने उद्यमी, दृढ़ और वीरतापूर्ण राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण कर रहा था। स्काटलैण्ड निर्धन, कम आबादी वाला और अव्यवस्थित देश था। किन्तु युद्ध की अग्नि में संयुक्त बनाये गये इस राष्ट्र में महान गुण थे। ऊपरी तौर से यह प्रतीत हो सकता है कि एडवर्ड प्रथम के शासन काल में मिलने वाले पूर्ण एकता के अवसर को ग्रेट ब्रिटेन के लिए खो देना एक बड़ा दुर्भाग्य था, फिर भी स्काट लोगों में स्वतन्त्रता के लिए लम्बे संघर्ष से विकसित विशेष गुणों ने ब्रिटिश द्वीपसमूह के सामान्य जीवन में, भविष्य में बड़ी देन बनना था। यह एक अच्छी बात थी कि स्काट लोगों को अपने ढंग से विकास के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया गया। ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल का विकास जिन जातियों से होना था, वे कोई एक संयुक्त राष्ट्र नहीं थी; किन्तु स्वतन्त्र और विभिन्न राष्ट्रों का एक भाईचारा या साझीदारी थी। उन्हे शान्तिपूर्वक और एक दूसरे का सम्मान करते हुए इकट्ठा जीवन बिताने की बात सीखने में काफी लम्बा समय लगा। किन्तु यह पाठ सीखने योग्य था और इसके परिणाम महान हुए।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Rait, Parliament of Scotland; **Maxwell,** Robert the Bruce; **Hume Brown,** or **Andrew Lang,** History of Scotland (Vol. I); **Scott,** Tales of a Grandfather are still eminently worth reading. The story of the battle of Bannockburn has been resconstructed in **Mackenzie** Bannockburn.

• •

५

फ्रांस की विजय का प्रथम प्रयास

१. प्रयास के उद्देश्य

इंग्लिश राजाओं के एक महान राजा एडवर्ड प्रथम का यह सपना था कि वह एकशासन की छत्रछाया में ब्रिटिश-द्वीप-समूह की सब जातियों का एकीकरण करे और वह इसमें लगभग सफलता तक पहुँच गया था। यद्यपि वह आयरलैण्ड नहीं गया था, तथापि बहुत से दस्तावेज यह प्रदर्शित करते हैं कि वह आयरलैण्ड की भी उपेक्षा नहीं करता था। इस सारे देश में इंग्लिश राजमुकुट की सर्वोच्च सत्ता स्वीकार की जाती थी। मध्य युग मे कोई ऐसा अन्य काल नहीं है, जब कि कैल्टिक सभ्यता पर इंग्लिश लोगों की अन्तिम विजय इतनी सन्निकट प्रतीत होती थी। किन्तु एडवर्ड द्वितीय (१३०७-२७) के निर्जीव शासन में इंग्लिश राजमुकुट की सत्ता आयरलैण्ड में बड़ी तेजी से घटने लगी और शीघ्र ही यह पेल (Pale) के नाम से प्रसिद्ध डबलिन के पास के छोटे जिले तक सीमित रह गयी। एडवर्ड प्रथम के समय से मध्ययुग की समाप्ति तक यद्यपि बहुत बार आयरलैण्ड में सेनाएँ भेजी गयी, तथापि आयरलैण्ड पर इंग्लिश सरकार का नियन्त्रण लगभग नगण्य सा रहा। हम देख चुके हैं कि एडवर्ड प्रथम ने वेल्स की विजय की थी। यद्यपि उसने वेल्स की विशिष्ट राष्ट्रीयता का विध्वंस नहीं किया था, परन्तु मध्ययुग के समूचे शेष भाग में उसके उत्तराधिकारियों ने दोनों देशों के सम्बन्धों को घनिष्ठ बनाने के लिए कुछ भी नहीं किया। अन्त में एडवर्ड प्रथम ने स्काटलैण्ड को दो बार जीता। यदि वह दस वर्ष अधिक जिया होता, तो वह पूर्ण रूप से इसे अपना वशवर्ती बना लेता। किन्तु एडवर्ड द्वितीय के ओछेपन और अयोग्यता ने ब्रूस को स्काटिश स्वतन्त्रता को स्था-

पित करने का अवसर दिया। यद्यपि लड़ाका एडवर्ड तृतीय अपने दादा की महत्वाकांक्षाओं को प्राप्त करने में लगभग सफल हुआ, तथापि उसने इस कार्य के पूर्ण होने से पहले ही दूसरे कामों में हाथ डाल दिया। १३वीं शताब्दी के अन्त में ब्रिटिश द्वीपसमूह की एकता जो लगभग पूर्ण होती दिखायी दे रही थी, १४वीं शताब्दी के अन्त में वह बिलकुल असम्भव प्रतीत होने लगी।

इस असफलता का पहला कारण एडवर्ड द्वितीय की निर्बलता और मूर्खता थी, किन्तु उसका उत्तराधिकारी एडवर्ड तृतीय पुनः इस विचार को ले कर सफल बना सकता था। इसके स्थान पर वह फ्रांस की विजय के निष्फल कार्यों में लगने की ओर आकृष्ट हुआ। इन कार्यों से १०० वर्ष के विदेशी युद्ध शुरू हुए। आगे चल कर हम देखेंगे कि इन से ब्रिटिश इतिहास में बड़े परिवर्तन हुए।

कुछ अंशों में एडवर्ड तृतीय के चरित्र ने ही उसे इन साहसिक कार्यों के लिए प्रेरित किया, किन्तु इससे भी बड़ा कारण उस युग की भावना थी। १४वीं शताब्दी में समूचे यूरोप का शासक वर्ग एक कृत्रिम शौर्य (Spurious chivalry) की ऐसी भावना से प्रभावित था, जो भावना युद्ध को सर्वोत्तम वीरता का कार्य समझती हुई इसमें आनन्द लेती थी और किसी भी उद्देश्य से लड़ाई में विजय और गौरव को प्राप्त करना ही वह अधिक सम्मान की बात समझती थी, वह श्रम करने वाले मनुष्यों और स्त्रियों की बहुसंख्या को आनन्द प्रदान करने अथवा न्याय प्रदान करने की अपेक्षा इस कार्य को अधिक महत्वपूर्ण समझती थी। फ्रोइसार्ट की पुस्तक "फ्रांस में इंग्लिश युद्धों के इतिहास" (Chronicles of the English Wars in France)[1] में इस भीषण शौर्य की भावना का बड़ा सुन्दर चित्रण किया गया है। इस रोचक पुस्तक को पढ़ने वाला पहले तो वीरतापूर्ण कार्यों की और वीरता पूर्ण शिष्टाचारों की चमक-दमक से आकृष्ट होता है, किन्तु शीघ्र ही वह इस बात से बड़ा उद्विग्न होता है कि ये रंगीले और वीर योद्धा उस कष्ट और दुख के प्रति बिलकुल लापरवाह थे, जिससे ये गरीबों को पीड़ित करते थे। उनकी दृष्टि में किसान या नागरिक एक हीन कोटि की आत्मा थे। इन लोगों की ओर कोई ध्यान देने की आवश्यकता नहीं थी। इन की सत्ता केवल इसलिए थी कि वीरता के साहसिक कृत्यों के गौरव को सम्भव बनाया जावे। साल्जबरी की सुन्दर काउन्टैस के सम्मान में नाइट ऑफ़ गार्टर (Knights of Garter) के उच्चतम वर्ग को स्थापित करने वाले एडवर्ड तृतीय ने इस बात को तनिक भी बुरा नहीं समझा कि वह पार्लियामेन्ट के प्रतिनिधियों को दिये गये पवित्र वचन को भंग करे। बड़ी कठिनता से अपनी रानी की प्रार्थनाओं पर वह कैले (Calais) के उन व्यापारियों को जीवन देने के लिए तैयार हुआ, जो इस घिरे हुए नगर से उसकी दया की भीख माँगने के लिए उसके पास आये थे। उसका बेटा कृष्ण राजकुमार (Black Prince) अपने युग का सब से अधिक शूरवीर योद्धा था। पोइटियर्स की लड़ाई के बाद फ्रांस के बन्दी राजा का वह विनम्र सेवक बना रहा। वह इस कार्य को भी उतना ही वीरतापूर्ण समझता

१. ग्लोब लाइब्रेरी में इसका एक संक्षिप्त संस्करण प्रकाशित किया गया है।

था, जितना कि कैस्टाइल के क्रूर विश्वासघाती अत्याचारी शासक पेड्रो को अन्यायपूर्ण रीति से प्राप्त होने वाली गद्दी को पुनः पाने के लिए इंग्लिश लोगों के जन एवं धन को बर्बाद करना। उसने इस आदेश के देने में भी कोई असम्मानपूर्ण बात नहीं देखी कि लिमोजीस नगर के तीन हजार स्त्री पुरुषों और बच्चों की निर्मम हत्या की जाय, क्योंकि उन्होंने नगर की रक्षा करके उसे क्रुद्ध किया था। ऐसी भावना से किये जाने वाले युद्ध विजेताओं तक को कोई स्थायी लाभ नहीं पहुँचा सकते थे और इन युद्धों को करने वाले व्यक्ति साहसी और शानदार योद्धा होने पर भी कोई स्थायी परिणाम नहीं प्राप्त कर सकते थे। ये प्रायः ऐसी विजयें प्राप्त कर सकते थे, जिनकी चमक से आँखें चौधियाँ जाती थीं। ये विजयें इन से उत्पन्न होने वाले भीषण दुःख और दरिद्रता की पृष्ठभूमि में निष्फल और ओछी प्रतीत होती थीं, फिर भी क्योंकि इन युद्धों ने ब्रिटिश द्वीपसमूह के भावी, अच्छे और बुरे दोनों रूपों को गहरे रूप से प्रभावित किया, अतः इनका कुछ वर्णन करना आवश्यक है।

१३वीं शताब्दी के आरम्भ में, फ्रेन्च राजतन्त्र पर इसके महान सामन्त और विशेषरूप से फ्रांस के राज्य के आधे से अधिक भाग पर अधिकार रखने वाले इंग्लैण्ड के आंजेविन शासक हावी हो गये। किन्तु १३वीं शताब्दी में जब इंग्लिश लोग राष्ट्रीय एकता प्राप्त कर रहे थे और जर्मनी के कभी शक्तिशाली रहने वाले राज्य में अव्यवस्था मच रही थी, उस समय फ्रांस के कुछ महान राजाओं—फिलिप आगस्टस, लुई नवम और सुन्दर या फेअर पदवीधारी फिलिप (Philip the Fair) ने फ्रेंच राजतन्त्र की शक्ति का निर्माण इतनी तेजी और सफलता के साथ किया कि १३६० ई० तक यह यूरोप की सब से बड़ी शक्ति बन गया, तथा इसका कोई प्रतिस्पर्धी नही रहा। इन राजाओं ने हेनरी द्वितीय के समूचे फ्रेन्च प्रदेश को पुनः जीत लिया। उन्होंने फ्रांस के अधिकांश बड़े सामन्तों को अपने आधीन किया और यहाँ तक कि उन्होंने पोपतन्त्र को भी अपना वशवर्ती बना लिया। उस समय यह प्रतीत होता था कि फ्रेन्च राजाओं की यूरोप में सर्वोच्च स्थिति बनाये रखने के लिए सब बातें सहयोग दे रही हैं। फिर भी उनकी स्थिति किसी भी प्रकार इतनी सुदृढ़ न थी, जैसी ऊपर से प्रतीत होती थी। उनकी शक्ति इतनी तेजी से विकसित हुई कि इसकी जड़ें बहुत गहरी नहीं जा सकी। उनके विजित जागीरदार अधीर एवं विद्रोह के लिए तैयार थे और चिरकाल से विभक्त फ्रेन्च जनता में अभी तक राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय अभिमान की भावना मुश्किल से ही विकसित हो पायी थी। स्काट लोगों की भाँति उनको भी एक संयुक्त राष्ट्र के रूप में संगठित होने के लिए अग्नि-परीक्षा में से गुजरना आवश्यक था। दोनों देशों में इंग्लिश लोगों द्वारा अपना प्रभुत्व थोपने के प्रयास से ही राष्ट्रीय भावना उत्पन्न हुई।

यह अनिवार्य था कि एक महत्वाकांक्षी इंग्लिश राजा यह स्मरण रखता कि उसके अनतिदूरवर्ती पूर्वजों ने आधे से अधिक फ्रांस का शासन किया था। यह भी अनिवार्य था कि शक्तिशाली फ्रेंच राजा बोर्दो और बायों से पीछे के दक्षिण-पश्चिम के उस छोटे प्रान्त पर हसरत भरी निगाहें लगाये रहता, जो अब भी इंग्लिश लोगों के अधिकार में था।

नार्मन विजय के बाद से दोनों देशों के राजतन्त्रों में इतनी अधिक बार लड़ाई हुई थी कि यह घटनाओं का एक स्वाभाविक क्रम प्रतीत होता था। यहाँ तक कि अपने फ्रेंच प्रदेशों के लिए बहुत कम परवाह करने वाले एडवर्ड प्रथम को सुन्दर फिलिप के आक्रमणों के कारण अपनी इच्छा के विरुद्ध लड़ाई में पड़ना पड़ा। संघर्ष का एक अन्य कारण यह था कि फ्रांस विद्रोह करने वाले स्काट लोगों को निरन्तर सहायता प्रदान करता रहा था। जॉन बेलियोल ने १२९५ ई० में फ्रांस के साथ सन्धि की और १३३४ ई० से युवा राजा डेविड ने फ्रांस में ही शरण ली थी। फ्रेन्च राजा फ्लैण्डर्स प्रदेश को भी वशवर्ती बनाने का प्रयास कर रहे थे। यह नाम मात्र से फ्रांस का हिस्सा होने पर भी चिरकाल से लगभग स्वतन्त्र था और फ्लैण्डर्स के बड़े औद्योगिक नगरों वाइप्रस, घैण्ट और ब्रूभ का इंग्लैण्ड के साथ घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध था, क्योंकि ये नगर प्रति वर्ष इंग्लैण्ड की ऊन की फसल का दो तिहाई भाग खरीद लिया करते थे। जब इन फ्लेमिश नगरों ने फ्रांस से अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए एडवर्ड तृतीय की सहायता माँगी (१३४७ ई०) तो इसे देना बुद्धिमत्तापूर्ण नीति प्रतीत हुई। पुनः, दो फ्रेंच जागीरों के निर्वासित दावेदार इंग्लिश राजा के दरबार में एडवर्ड की सहायता माँगने आये। यह ऐसी माँग थी जो इस युग के झूठे शौर्य की भावना को अपील करने वाली थी। अन्ततः, फ्रेन्च राजमुकुट के पुरुष-उत्तराधिकारियों की सीधी वंश-परम्परा इस समय तक समाप्त हो चुकी थी और एडवर्ड तृतीय इस उत्तराधिकार के लिए अपना प्रत्यक्षतः युक्तिसंगत प्रतीत होने वाला दावा रख सकता था, क्योंकि उसकी माता सीधी वंश-परम्परा में पिछले राजा की बहन थी। वस्तुतः गद्दी के लिए यह दावा युद्ध का वास्तविक कारण न था। एडवर्ड तृतीय ने १३२८ ई० में उस समय शासन करने वाले राजा वेलोयिस के फिलिप (फिलिप षष्ठ) का उत्तराधिकार स्वीकार किया था। उसने गुइन्ने में अपनी जागीरों के लिए उसके प्रति वश्यता स्वीकार भी की थी। परन्तु गद्दी के लिए दावा उस समय लड़ाई का बहाना बनाया जा सकता था, जब कि यह साहसिक कार्य कुछ अन्य कारणों से आरम्भ किया गया था।

२. युद्ध तथा इसके परिणाम

१३३७ ई० में एडवर्ड ने फ्रांस की विजय के प्रयास का निश्चय किया। यह वह समय था जब स्काटलैण्ड की गद्दी पर एडवर्ड बैलियोल को बैठाने का संघर्ष चल रहा था और स्काटिश देशभक्तों को फ्रेंच लोग सहायता दे रहे थे। निश्चित रूप से इस नये साहसिक कृत्य का यह एक प्रधान कारण था। एडवर्ड का पहला विचार यह था कि वह उत्तरी जर्मनी तथा बेल्जियम के जागीरदारों का एक महासंघ बनाये, जो ठोस आर्थिक सहायताओं के बदले में फ्रांस पर हमले के लिए सेनाएँ प्रदान करे। उन्होंने आर्थिक सहायता तो स्वीकार कर ली, जिससे इंग्लैण्ड में भारी टैक्स लगाने की आवश्यकता उत्पन्न हो गयी; किन्तु उन्होंने सेनाएँ नहीं भेजी। एडवर्ड स्वयमेव एक सेना ले कर फ्लैण्डर्स गया, किन्तु वह फ्रेंच लोगों को लड़ाई के मोर्चे पर न ला सका। इस लड़ाई के पहले हिस्से की एक मात्र महत्वपूर्ण घटना स्लूइस की समुद्री लड़ाई थी (१३४० ई०)। इसमें एक इंग्लिश बेड़े

ने फ्रेंच जहाजों की एक विशाल संख्या को पूर्ण रूप से नष्ट कर दिया। इसे इंग्लैण्ड की पहली बड़ी नौसैनिक विजय कहा जा सकता है। यद्यपि इसमें भाग लेने वाले जहाज मुख्य रूप से व्यापारिक पोत थे, तथापि इसने इंग्लैण्ड को इंग्लिश चैनल या आइरिश समुद्रों (Narrow Seas) का स्वामित्व प्रदान किया। परन्तु इसका कोई और परिणाम नही हुआ। अपना सारा धन खर्च करके भी कुछ न पाने वाले एडवर्ड को विरामसन्धि करने और स्वदेश वापस लौटने में प्रसन्नता हुई। १३४२ ई० में अपनी डची के एक दावेदार के समर्थन में उसने ब्रिटेनी पर हमला करने का प्रयत्न किया, किन्तु पुनः उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ और एक बार फिर उसे विरामसन्धि करनी पड़ी।

अन्त में १३४६ ई० में युद्ध छिड़ने के नौ वर्ष बाद उसे वास्तविक सफलता प्राप्त हुई। फ्रेन्च लोगों ने गुइन्ने के इंग्लिश प्रान्त पर एक हमला किया और इसका राज्यपाल डर्बी का अर्ल वहाँ बुरी तरह घिर गया। इसकी सहायता के लिए एडवर्ड ने ३०,००० व्यक्तियों की एक सेना द्वारा हमला किया। यूरोपियन युद्ध में अब तक इस प्रकार की कोई सेना नही देखी गयी थी, क्योंकि इसमें कवचधारी योद्धाओं की एक बड़ी संख्या सम्मिलित थी और इसकी मुख्य शक्ति इसके पदाति सैनिक थे तथा सबसे बढ़ कर वे धनुर्धर थे, जिनका महत्व स्काटिश युद्धों में प्रदर्शित हो चुका था। इस सेना को गुइन्ने ले जाने के स्थान पर एडवर्ड इसे लेकर नार्मन्डी में ला होग के समुद्रतट पर उतरा। उसका विचार फ्लैंडर्स की ओर प्रयाण करने का था[1]। किन्तु उसे सीन नदी पर सब पुल टूटे हुए मिले और उसे लगभग पेरिस के पास तक पहुँच कर ही पोइस्सी में पुल मिला। इस बीच में फ्रेन्च लोगों ने एक विशाल सेना एकत्र की। इसमें प्रधान रूप से भारी शस्त्रों से सुसज्जित सामन्ती घुड़सवार सेना तथा जिनोआवासी गोफन (Crossbow) चलाने वाले तथा अन्य सहायक सैनिकवर्ग थे। इस विशाल सेना द्वारा पीछा किये जाने पर एडवर्ड ने अपने को सोम नदी से अवरुद्ध पाया। इस नदी को इसके मुहाने के निकट एक दांते से उसने ऐन मौके पर पार किया। उत्तर की ओर क्रैसी के निकट ऊँची भूमि पर उसने लड़ने के लिए मोर्चा बनाया। यहाँ पहली बार २६ अगस्त १३४६ ई० के दिन प्रसिद्ध लड़ाइयो की शृंखला का पहला युद्ध लड़ा गया, इस युद्ध ने यह सिद्ध किया कि पुराने ढंग की सामन्ती घुड़सवार सेना की अत्यधिक विशाल संख्या की अपेक्षा अत्यधिक प्रशिक्षित सिपाहियों की छोटी संख्या अधिक श्रेष्ठ होती है। एक भयंकर युद्ध में युवा प्रिन्स आफ वेल्स के नेतृत्व मे इग्लिश सेना के अग्रणी भाग ने आक्रमण की प्रचण्डता को सहन किया। इसमें मारे गये फ्रेन्च लोगों की संख्या इंग्लिश सेना की कुल संख्या से अधिक थी। मृत व्यक्तियों में अपने मित्र फ्रांस के राजा के लिए लड़ने आने वाला, रोमांचक साहसिक योद्धा, बोहेमिया का अन्धा राजा जान भी था। युवा प्रिन्स ऑफ वेल्स ने इस गौरवपूर्ण दिन की स्मृति मे शुतुर्मुर्ग के तीन पंखों के साथ जर्मन आदर्श वाक्य Ich dien (मैं सेवा करता हूँ) की ध्वजा ग्रहण की। इस उपाधि को धारण करने वाला प्रत्येक व्यक्ति इसी ध्वजा को धारण करता रहा है।

---

१. यह मार्ग एटलस की प्लेट संख्या २२ (बी) में दिखाया गया है।

क्रैसी के युद्ध ने एक बार में ही इंग्लिश लोगों के सैनिक गौरव को उच्चतम शिखर तक पहुँचा दिया और इसी समय नेविलक्रास की विजय ने इस गौरव को और भी बढ़ा दिया, क्योंकि इसमें स्काटलैण्ड का राजा डेविड बन्दी बना लिया गया था। सुदूर दक्षिण में गुइन्ने पर दबाव एकदम कम हो गया और डर्बी का अर्ल फ्रेन्च प्रदेश पर हमला करने और लूटपाट आरम्भ करने में समर्थ हो गया। एडवर्ड को स्वयमेव कैले (Calais) तक पीछे हटना पड़ा और इसे इसने घेर लिया। १३४७ ई० में इस नगर की विजय से इंग्लिश लोगों का अधिकार डोवर के जलडमरूमध्य पर सुदृढ़ हो गया। डोवर सदैव फ्रांस पर नये हमले करने के लिए खुला मार्ग तथा इंग्लिश लोगों के नियन्त्रण में इंग्लिश माल की विक्री के लिए यूरोपीय माल की मण्डी था। इसी कारण इसका बहुत महत्व था। अत: अगले २०० वर्षों में इसकी प्रबल रक्षा की गई। एक स्थायी दुर्ग-रक्षक सेना रखी गयी। उन सब नगरवासियों को निकाल दिया गया, जो देशभक्त इंग्लिश प्रजाजन होने की शपथ नहीं लेना चाहते थे और इनका स्थान लेने के लिए इंग्लिश बस्ती बसाने वालों को लाया गया।

यह आशा की जाती थी कि ऐसी शानदार विजयों के बाद एडवर्ड अपनी लड़ाई को जोश के साथ चलाता। किन्तु आठ वर्ष तक कोई गम्भीर लड़ाई नहीं हुई। वस्तुतः राजा के पास साधनों की कमी थी और इस बीच में इंग्लैण्ड और फ्रांस के दोनों देश काली मौत या ब्लेक डेथ (Black Death) के नाम से प्रसिद्ध भयंकर प्लेग की महामारी से बुरी तरह पीड़ित हो रहे थे। यह महामारी १३४८-४९ ई० में इंग्लैण्ड पहुँची। इसने कम से कम एक तिहाई आबादी का सफाया कर दिया और देश की आर्थिक दशा पर गहरे प्रभाव डाले।

फिर भी १३५५ ई० में युद्ध पुनः आरम्भ हुआ। इसकी योजना यह थी कि एडवर्ड स्वयमेव कैले से और उसका बेटा कृष्ण राजकुमार (Black Prince) बोर्दो से सेनाओं का नेतृत्व करेंगे। कैले पर सैनिक आक्रमण नहीं हो सका, क्योंकि उसे स्काट लोगों के हमले का मुकाबला करने के लिए जल्दी स्वदेश लौटना पड़ा। अन्य समयों की भाँति इस समय भी स्काट लोगों ने अपने मित्र फ्रेंन्च लोगों की सहायता की। किन्तु कृष्ण राजकुमार ने छोटी सेना के साथ दक्षिणी फ्रांस में दूर तक बड़ा घातक हमला करते हुए सब दिशाओं में अग्निकाण्ड और लूटपाट मचा दी तथा सात सप्ताह में ५०० से अधिक गाँवों और कस्बों को नष्ट कर दिया। अगले वर्ष राजकुमार ने अपने इस कारनामे को उत्तर की ओर दुहराने का प्रयत्न किया। किन्तु इस समय उसे फ्रांस के राजा जान द्वारा स्वयं नेतृत्व की जा रही अत्यधिक विशाल सेना ने रोक दिया। इस समय पराजय इतनी निश्चित प्रतीत हो रही थी कि राजकुमार किन्ही भी युक्तियुक्त शर्तों को स्वीकार कर लेता। किन्तु जान बिना शर्त आत्मसमर्पण की माँग पर अड़ा हुआ था। इन परिस्थितियों में पोइटियर्स की लड़ाई लड़ी गयी (१३५६ ई०)। इसके परिणाम स्वरूप इंग्लिश लोगों को क्रैसी की लड़ाई की अपेक्षा कही अधिक गौरवपूर्ण विजय प्राप्त हुई। इसमें फ्रेन्च राजा

को बन्दी बना कर इंग्लैण्ड ले जाया गया। वहां वह उस समय तक स्काटलैण्ड के राजा डेविड के साथ बन्दी बना रहा, जब तक अभागे फ्रांस से उसकी मुक्ति के लिए एक विशाल धनराशि जबर्दस्ती वसूल नहीं कर ली गयी।

विजयों ने असम्भव विषम परिस्थितियों पर सफलता पायी। दो राजा बन्दी बना लिये गये और लूटपाट किये गये, और विध्वस्त किये गये दो राष्ट्रों को अपने निकम्मे राजाओं को पुनः प्राप्त करने के लिए विशाल धनराशियाँ एकत्र करनी पड़ी। १४वीं शताब्दी की शौर्य भावना की दृष्टि से ये विजयें गौरव के चरम उत्कर्ष का प्रतिनिधित्व करने वाली प्रतीत हो रही थीं और निःसन्देह इंग्लैण्ड में इनका बड़े उत्साह के साथ स्वागत हुआ। यदि इन युद्धों में भारी व्यय हुआ था और इनके कारण बोझ डालने वाले कर लगाये गये थे तो इस बात से सन्तोष भी था कि इंग्लिश सैनिक फ्रांस के विध्वस्त नगरों से भी लूट का माल अपने देश में लाये हैं। किन्तु इन शानदार विजयों का क्या उपयोग किया जाय ? न तो एडवर्ड तृतीय ने और न ही उसके वीर पुत्र ने कोई ऐसी इच्छा प्रदर्शित की कि वे इन विजयों का उपयोग राजनीतिज्ञतापूर्ण प्रयोजनों के लिएं करेंगे। यह दुःखदायी युद्ध फ्रांस में चलता रहा। विराम सन्धि के अल्पकाल में भी इंग्लिश सिपाहियों ने विध्वंस और लूटपाट कभी बन्द नहीं की क्योंकि अब वे फ्री कम्पनियों के नाम से प्रसिद्ध पेशेवर डाकुओं के दलों में संगठित हो गये थे और वे मनमाने ढंग से लूटपाट और विध्वंस करते हुए देश में विचरण कर रहे थे।[१] फ्रेंन्च किसानों ने अवर्णनीय कष्टों के कारण भीषण विद्रोह किये। इन्हें जेक्वेरी के विद्रोह कहा जाता है। पेरिस की भीड़ ने कानून अपने हाथ में ले लिया। ऐसा प्रतीत होता था कि फ्रांस पूरी तरह से नष्ट और विध्वस्त हो चुका है। फिर भी उसके नेताओं ने अपनी भूमि का कोई भी भाग इंग्लिश लोगों को समर्पित करना दृढ़तापूर्वक अस्वीकार किया। १३६० ई० में एडवर्ड ने स्वयमेव फ्रांस के उत्तर में एक विशाल हमले का नेतृत्व किया और रीम्स नगर पर इस दृष्टि से अधिकार करना चाहा कि वह वहाँ अपना राज्याभिषेक करा सके। किन्तु उसे वहाँ से वापस लौटना पड़ा क्योंकि उसकी अपनी सेना के विध्वंस कार्यों के कारण उसके लिए यह असम्भव हो गया कि वह अपनी सेना का भरणपोषण कर सके। अन्त में मई १३६० ई० में उसने ब्रेटिगनी की सन्धि स्वीकार की। इससे उसने फ्रेंच राजमुकुट पर अपने दावे का परित्याग किया। किन्तु उसे अपने फ्रेंच प्रदेशों के लिए फ्रांस के राजा के प्रति वश्यता स्वीकार करने के दावे से मुक्त कर दिया गया। उत्तर में कैले और पोनथियु के प्रदेश के समर्पण से तथा दक्षिण में उसके प्रदेश के महान विस्तार से उसके फ्रेंच प्रदेशों में वृद्धि हुई।[२]

परन्तु ब्रेटिगनी की सन्धि ने युद्ध को समाप्त नहीं किया, जैसा कि इसका उद्देश्य था। एडवर्ड के नियन्त्रण से सर्वथा मुक्त पेशेवर डाकुओं के भीषणदल (Free Companies) लूटपाट करके देश को उजाड़ते रहे और उनकी क्रियाशीलता प्रतिदिन

१. सर ए० कानन डायल की रोमांचक कहानी 'दी ह्वाइट कम्पनी' में युद्ध के इस पहलू का अच्छा परिचय दिया गया है।

२. एटलस की प्लेट संख्या ३७ (बी) नक्शे में देखिये।

अंग्रेजों के प्रति फ्रेन्च लोगों की घृणा को उग्र बनाती रही। इंग्लैण्ड को सौंपे गये प्रदेशों के सरदार और वीर योद्धा इंग्लिश शासन के प्रति अपने समर्पण को अस्वीकार करते रहे और उन्होंने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजों के विरुद्ध राष्ट्रीय प्रतिरोध का नेतृत्व करने के लिए एक राष्ट्रीय वीर ड्यू गुएस्क्लिन का आविर्भाव हुआ। जब कृष्ण राजकुमार ने कैस्टाइल की राजगद्दी क्रूर तथा अन्यायी पैड्रो को पुनः दिलाने का साहसिक कार्य आरम्भ किया, तो फ्रेंच लोग दूसरे पक्ष में मिल गये। पुराने शत्रुओं की एक बार पुनः मुठभेड़ स्पेन की भूमि पर नवारेटे की भीषण लड़ाई में हुई (१३६७ ई०)। अविजेय वीर के लिए यह एक अन्य गौरवपूर्ण विजय थी। किन्तु इसके सिवाय इसका कोई परिणाम न हुआ कि अभियान का व्यय पूरा करने के लिए गुइन्ने पर भारी टैक्स लगाना पड़ा और इससे वह अधिकाधिक असन्तुष्ट होता चला गया, यहाँ तक कि इसकी जनता ने फ्रांस के राजा से अपनी रक्षा करने लिए के प्रार्थना की।

इससे युद्ध की नई अग्नि भड़क उठी। फ्रेंच लोगों ने इंग्लिश लोगों के दक्षिणी फ्रांस के प्रदेशों पर बड़ी उग्रता से आक्रमण किया। किन्तु अब परिस्थितियाँ बदल गयीं थी। इंग्लैण्ड युद्ध से थका हुआ था, किन्तु फ्रेंच लोग नई देश भक्ति की भावना से उद्दीप्त थे। एडवर्ड तृतीय समय से पहले बूढ़ा हो गया था और अपने घर में, भोगविलास में रमा हुआ था। कृष्ण राजकुमार कमजोर और बीमार था, फिर भी उसने अपनी पर्याप्त शक्ति एकत्र करके विद्रोह करने वाले लिमोजीस शहर पर (१३७० ई०) एक भीषण आक्रमण किया। इस आक्रमण में समूची जनता को तलवार के घाट उतार दिया गया। केवल कुछ नाइट लोगों को ही अछूता छोड़ा गया, जिनके बारे में 'शौर्य'' की मांग यह थी कि वह उनके साथ उदारता का व्यवहार करे। अगले वर्ष भग्न हृदय और मृतप्राय रूप में वह इंग्लैण्ड वापस लौटा। उसके इंग्लैण्ड लौटने से पहले ही, इंग्लिश लोगों की हालत बिगड़ रही थी। वे तेजी से अपने प्रदेश गँवा रहे थे और १३७८ ई० तक इंग्लैण्ड ने कैले, बोर्दो, बायों के तथा पिछले शहरों के निकटवर्ती छोटे जिले के अतिरिक्त फ्रांस में अपने सब प्रदेश खो दिये। जले पर नमक छिड़कने के लिए क्रूर पैड्रो को दी जाने वाली इंग्लिश सहायता के कारण शत्रु बने केस्टाइल के स्पेनिश लोगों ने १३७२ ई० में ला रोशेल के निकट इंग्लिश बेड़े पर हमला किया, और इसका पूर्ण रूप से विनाश किया। इतनी अधिक हानि हो जाने पर भी लड़ाई लम्बी खिंचती गयी। प्रतिवर्ष फ्रांस में सेनाएँ भेजी जाती रही, किन्तु उन्हें कोई ठोस सफलता नहीं मिली। आधी पीढ़ी की अवधि तक इंग्लिश चैनल इंग्लिश जहाजों के लिए असुरक्षित था और फ्रांस के आक्रमणकारी दल प्रायः इंग्लैण्ड के समुद्रतटों पर हमले करते रहते थे। अन्त में जब एंग्लो-फ्रेंच युद्धों के पहले दौर की समाप्ति को सूचित करने वाली सन्धि रिचर्ड द्वितीय ने की, तो इंग्लैण्ड के पास फ्रांस में कैले, बोर्दो और बायों के सिवाय कोई प्रदेश नहीं बचे।

५७ वर्ष के युद्ध के बाद, एवं भीषण रक्त पात और धन का विशाल व्यय करने के बाद भी फ्रांस में इंग्लैण्ड के प्रदेश युद्ध शुरू होने के समय की अपेक्षा कम रह गये। कीर्ति पाने के लिए लड़े गये युद्ध ने ऐसे परिणाम पैदा किये।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Tout, History of England, 1216-1377; **Vickers,** England in the Later Middle Ages; **Warburton,** Age of Edward III (Epochs of Modern History); **Longman** or **Mackinnon,** Edward III; **Oman,** Art of war in the Middle Ages; **Kitchen,** History of France; **Lodge,** the Later Middle Ages; **Lloyd** and **Powicke,** Edward III; **Mollat,** Les Papes d' Avignon.

• •

६

परिवर्तनशील सामाजिक अवस्थाएँ

१. सामन्ती बैरन पद्धति के स्वरूप में परिवर्तन

१३वी और १४वी शताब्दियो में, विशेषतया १४वी शताब्दी मे, पश्चिमी यूरोप के अधिकांश देशों मे जीवन की अवस्थाएं तेजी से बदल रही थी। समाज का सामन्ती संगठन भंग हो रहा था, अथवा अपने रूप बदल रहा था; भोगविलास बढ़ रहा था, साहित्य और कलाओं का इटली में विशेष रूप से पुनरुज्जीवन हो रहा था। व्यापार में अधिक क्रियाशीलता आ रही थी और इसे करने वाले वर्गों का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा था। हर जगह धन की शक्ति अधिक महत्वपूर्ण बन रही थी फ्लेन्डर्स, जर्मनी और इटली के वे समृद्धिशाली नगर अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रता को स्थापित करने में भी समर्थ हुए, जिन नगरों ने व्यापार और उद्योग को अपना प्रधान केन्द्र बनाया। किन्तु इस समय अन्य कोई देश ऐसा न था, जिसमें इस युग में इंग्लैण्ड की अपेक्षा अधिक तेजी से सामाजिक परिवर्तन हुआ हो। इस द्वीप-समूह की (स्काट, वेल्स आदि) अन्य जनताओं में यह परिवर्तन अधिक मन्द और कम शक्तिशाली था। इन परिवर्तनों के घटित होने की ठीक-ठीक तिथियाँ बताना मम्भव नही है, क्योंकि वे अधिकांशतः एक क्रमिक और पता न लगने वाली अलक्ष्य प्रक्रिया का परिणाम थे। किन्तु वे इंग्लिश जनता के स्वरूप और जीवन को इतना अधिक बदल रहे थे और उन्होंने उनके भविष्य के इतिहास और संस्थाओं पर इतना गहरा प्रभाव डाला कि यह आवश्यक है कि हम उनका यथासम्भव स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करे।

सम्भवतः हम इसका आरम्भ इस बात से कर सकते हैं कि इंगलैण्ड की राजनीतिक और सामाजिक राजधानी लन्दन बन

रही थी। १३वीं शताब्दी तक, हम लगभग यह कह सकते हैं कि इंग्लैण्ड की कोई राजधानी या शासन का कोई निश्चित केन्द्र नहीं था; शासन का केन्द्र वहीं होता था, जहाँ राजा रहता था और राजा अपना समय देश के परिभ्रमण में व्यतीत करता था। किन्तु अब लन्दन अथवा वैस्टमिंस्टर उसके सबसे अधिक निवास का स्थान बन गया। उसकी अनुपस्थिति में भी यह उसके ख़जाने तथा अन्य प्रशासनात्मक कार्यालयों का स्थान था। वैस्टमिंस्टर में अब प्रमुख राष्ट्रीय कानूनी न्यायालय अपनी बैठकें करते थे। इसके निकट टैम्पल (Temple)[१] नामक स्थान था, यह टैम्पल के नाइटों के सम्प्रदाय (Order of Knights of the Temple) के नाम से प्रसिद्ध एक संस्था का मुख्य स्थान था। १३०८ ई० में इस सम्प्रदाय का दमन होने तक यह ऐसा बना रहा। इसे प्रशिक्षित वकीलों के नवीन तथा अतीव महत्वपूर्ण पेशों ने अपना निवासस्थान बनाया और इन पेशों ने यहाँ अपने प्रशिक्षण विद्यालय स्थापित किये। लन्दन एक ऐसा स्थान हो गया, जहाँ देश के सब भागों के व्यक्ति अपने सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यों के लिए आने लगे। लन्दन में ही १४वीं शताब्दी की अधिकांश पार्लियामेन्टें हुई। इनमें भाग लेने के लिए देश के सभी हिस्सों से बैरन, नाइट और नगरवासी यहाँ एकत्र हुए। लन्दन ने ही प्राय: दरबार के आडम्बरपूर्ण ठाठबाठ को, राजदूतों के आगमनों को तथा महान विजयों के महोत्सवों को देखा। कुछ बड़े सरदारों को अब यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वे लन्दन में अपने स्थायी गृह बनायें, जैसे गौन्ट के जोन ने सेवॉय का महल बनवाया था और इनकी सम्पत्ति के आडम्बरपूर्ण प्रदर्शन ने राजधानी के रंगीलेपन को बढ़ाया और इसे सारे देश का सामाजिक तथा राजनीतिक केन्द्र बनाया।

सरदार लन्दन मुख्य रूप से इसलिए आते थे कि वे यहाँ राष्ट्र के शासन में अपना भाग ले सकें। यहीं हमें इस युग की उल्लेखनीय विशेषता दीख पड़ती है। बड़े सरदार सदा की भाँति सदा से उपद्रवी थे और उन्हें व्यवस्था में रखना कठिन था, किन्तु उन्होंने अपने लक्ष्य बदल लिए थे। वे पहले युग के सामन्ती बैरनों की भाँति स्थानीय स्वतन्त्रता स्थापित करने तथा अपने असामियों पर अनियन्त्रित क्षेत्राधिकार प्राप्त करने का अब प्रयत्न नहीं करते थे, क्योंकि राजकीय न्यायालयों और राजकीय अभिकर्त्ताओं की शक्ति के विकास ने, वेल्स की मार्चर लार्ड भूमियों के अतिरिक्त अन्य सब स्थानों पर सामन्ती समाज के निम्न वर्ग के

---

१. १२वी शताब्दी के आरम्भ में नौ फ्रेन्च योद्धाओं ने जेरूसलेम की पवित्र भूमि की यात्रा करने वाले व्यक्तियों की रक्षा करने के लिए एक संगठन बनाया। यह संगठन शीघ्र ही टैम्पलर (Templar) के नाम से प्रसिद्ध हुआ, क्योंकि इसके योद्धा अपने अस्त्र-शस्त्र जेरूसलेम नगर में सोलोमन के सुप्रसिद्ध मन्दिर (Temple) में रक्खा करते थे। अत: यह सम्प्रदाय Order of the Knights of the Temple के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ, सब ईसाई देशों में इसकी शाखायें और मठ थे। इंग्लैण्ड में इसका प्रधान स्थान फ्लीट स्ट्रीट और टेम्ज नदी के मध्यवर्ती भाग में था और यह स्थान टैम्पल (Temple) के नाम से विख्यात हो गया। यह सम्प्रदाय बाद में बडा शक्तिशाली और भ्रष्टाचार का केन्द्र बन गया, इसीलिए एडवर्ड द्वितीय ने १३०८ में इसका दमन किया। इसके बाद यह स्थान वकालत का अध्ययन करने वालों का सुप्रसिद्ध निवास स्थान और केन्द्र बना।

व्यक्तियों पर उनका प्रभाव बहुत क्षीण कर दिया था। अब उनका लक्ष्य राष्ट्रीय सरकार का नियन्त्रण करना अथवा उसे प्रभावित करना था। इस समूचे युग में राजा की परिषद् में बुलाये जाने का आनुवंशिक अधिकार रखने वाले बड़े सरदारों, अर्लों और बैरनों की संख्या निरन्तर कम हो रही थी। किन्तु दूसरी ओर एक ही परिवार में अनेक उत्तराधिकारों के सम्मिलन से इन सरदारों की, विशेषतः इनमें बड़े सरदारों की सम्पत्ति निरन्तर बढ़ रही थी। राजमुकट (Crown) की एक सुविचारित नीति के कारण महान सामन्ती जागीरों की एक बड़ी संख्या राजपरिवार के सदस्यों या सम्बन्धियों द्वारा प्राप्त की जा रही थी। यह या तो उत्तराधिकारीहीन जागीरों को उन्हें प्रदान करके अथवा जागीरों की उत्तराधिकारिणी स्त्रियों से उनकी शादी करके प्राप्त हो रही थी; अतएव इस समय इंग्लिश बैरन पद्धति का निर्माण आपेक्षिक दृष्टि से बड़े धनी और शक्तिशाली सरदारों की छोटी संख्या से होने लगा था। इसके प्रदेश अनेक अवस्थाओं में समूचे राज्य में बिखरे हुए थे। वे राजपरिवार के साथ और एक दूसरे के साथ घनिष्ठ रीति से सम्बद्ध थे और राष्ट्रीय सरकार में तीव्र रुचि ले रहे थे। अब उनका प्रभाव मुख्य रूप से इस बात पर आधारित नहीं था कि सामन्ती वशवर्तियों की बड़ी संख्या उनके अधिकार में थी, क्योंकि अब उनके आज्ञापालन का विश्वास नही रहा था। किन्तु वे अपनी सम्पत्ति का एक बड़ा भाग खर्च करके वेतन-भोगी अनुयायियों के बड़े सैनिक दल रखने लगे थे। ये दल अपनी ध्वजाओं और वर्दियों को धारण करते थे। यह प्रथा फ्रेन्च युद्धों के कारण बहुत बढ़ी, क्योंकि इनके लिए उन्हें उनके झण्डों के तले सेवा करने वाले सैनिकों की कम्पनियाँ बनाने की प्रेरणा दी गयी; अतः शान्ति के समय भी इनमें अनेक अनुयायी ऐसे अनुभवी योद्धा थे, जिन्होंने फ्रांस में लड़ना तथा कानून और व्यवस्था का तिरस्कार करना सीखा था। इन शक्तिशाली दलों के समर्थन से बड़े सरदार वैयक्तिक युद्ध लड़ सकते थे। प्रायः उन्हें इस बात का प्रलोभन होता था कि वे देश के कानूनों की तथा न्यायालयों के निर्णयों की अवहेलना करें। यह महत्वपूर्ण विकास शनैः शनैः १४वीं शताब्दी में युद्धों के कारण हो रहा था। यह अगली शताब्दी में गुलाबों के युद्धों (Wars of the Roses) का प्रत्यक्ष कारण था। ये युद्ध राजमुकुट से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध सरदारों के समूहों में दलबन्दी की लडाइयाँ मात्र थे, जिनमें सशस्त्र अनुयायियों के दलों का समर्थन पाने वाले सरदार राष्ट्रीय सरकार पर अपने अधिकार को स्थापित करने के लिए उत्सुक थे। परन्तु कम से कम यह एक अच्छी बात थी कि वे अब देश को अनेक अर्ध-स्वतन्त्र राज्यों में विभक्त करने का प्रयत्न नही कर रहे थे। नयी सामन्त-पद्धति पुरानी प्रणालियों के समान ही अव्यवस्थापूर्ण थी। किन्तु यह राष्ट्रीय एकता को स्वीकार करती थी और इस प्रकार देशभक्ति की भावना से परिपूर्ण थी।

भूमिधारी भद्रवर्ग की निम्न श्रेणियाँ इस समय संख्या, धन और महत्व में तेजी से बढ़ रही थी। इंग्लिश सामन्ती कानून की एक विलक्षण और अधिकतम सौभाग्यशाली विशेषता के कारण वे बड़े सरदारों से बहुत स्पष्ट भेद नहीं रखते थे। अन्य पश्चिमी देशों में एक काउन्ट के सब बेटे काउन्ट होते थे और एक बैरन (Baron) के सब बेटे बैरन।

इसका अभिप्राय यह था कि वहाँ बैरन-पद्धति एक आनुवंशिक जाति थी। किन्तु इंग्लिश प्रथा के अनुसार बैरन के सब से बड़े बेटे को ही बैरन का दर्जा दिया जाता था और यह उसे अपने पिता का उत्तराधिकारी बनने पर ही मिलता था। उसके सभी छोटे भाइयों को नाइट (Knight) का हीन दर्जा मिलता था। इस प्रकार नाइट लोगों की श्रेणियों में उच्च सरदारों से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध व्यक्तियों की एक बड़ी संख्या सदैव सम्मिलित रहती थी। इसमें जातियों का भेद नहीं था। जमींदारों का वर्ग भी आपस में अनेक श्रेणियों में विभक्त नहीं था। कड़े सामन्ती नियम के अनुसार, इसमें तीन पृथक श्रेणियाँ सम्मिलित थीं। पहली श्रेणी उनकी थी, जिन्हें भूमि पर अधिकार सीधा राजा से मिला हुआ था और जिन्हें मैग्नाकार्टा में छोटे बैरन (Minor barons) कहा गया था, दूसरी श्रेणी में सैनिक सेवा की शर्त पर अन्य बैरनों से भूमि का अधिकार पाने वाले असली नाइट लोग थे और तीसरी श्रेणी उन लोगों की थी, जो भूमि पर स्वतन्त्र अधिकार रखने वाले (Free holders) थे। तेरहवीं शताब्दी तक ये भेद बने रहे, किन्तु चौदहवी शताब्दी में ये भेद लुप्त हो गये। इसका विशेष कारण यह था कि एडवर्ड प्रथम ने यह नियम बनाया था कि बीस पाउन्ड के वार्षिक मूल्य वाली भूमि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को नाइट बनने का दायित्व अवश्य स्वीकार करना होगा। इस प्रकार देहात में भद्रवर्ग की श्रेणी बहुत विशाल हो गयी और यह अत्यधिक महत्वपूर्ण श्रेणी थी। युद्धों से इसका प्रभाव बहुत बढ़ गया, क्योंकि राजा सामन्तों की सेवाओं पर विश्वास करने की अपेक्षा यह अधिक पसन्द करता था कि सरदारों या नाइटों को सैनिकों की कम्पनियाँ (दल) बनाने का अधिकार प्रदान करे। इनका वेतन तो राजा देता था, किन्तु नेतृत्व सरदार करते थे। इससे अधिक क्षमता वाली सेना का निर्माण हुआ। किन्तु इसका एक परिणाम यह भी था कि एक बिलकुल नीचे दर्जे का और निर्धन नाइट युद्ध में महान सेनानायक (Captain) बन सकता था। वस्तुतः सर वाल्टर मैन्नी और सर जान चैण्डोस जैसे एडवर्ड तृतीय के अत्यधिक विश्वासपात्र सेनापति मामूली नाइट थे।

नाइट लोगों की श्रेणी (Knightly class) फ्रांस की लूट से बहुत समृद्ध हुई। इसके धन में इससे भी अधिक वृद्धि इंग्लिश व्यापार की समृद्धि से हुई, क्योंकि इस व्यापार का मेरुदण्ड वह ऊन थी जो नाइट लोगों की जमीनों पर पाली जाने वाली भेड़ों से उत्पन्न होती थी। इसका यह सुपरिणाम हुआ कि जमींदार, भद्रवर्ग एवं व्यापारियों के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ और इससे दोनों के लिए इकट्ठा मिल कर काम करना आसान हो गया, जैसा हम आगे चल कर उन्हें कामन्स सभा में कार्य करता हुआ देखेंगे। आरम्भिक इंग्लिश इतिहास में ऊन के महत्व की स्मृति इस तथ्य के रूप में सुरक्षित है कि लार्ड सभा का अध्यक्ष ऊन की गद्दी (Woolsack) पर बैठता है। ऊन की गद्दी कामन्स सभा में भी अधिक उपयुक्तता से रखी जा सकती थी, जहाँ नाइट और नगरवासी व्यापारी (Burgesses) ऊनी व्यापार के कारण आपसी बन्धनों से मिले रहते थे। जमींदार भद्रवर्ग की संख्या में तथा इस वर्ग के धन और महत्व में वृद्धि इस युग की एक बड़ी महत्वपूर्ण विशेषता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वे किस कारण पार्लियामेन्ट के तथा स्थानीय स्वशासन के दोनों क्षेत्रों में वह महत्वपूर्ण भाग लेने में समर्थ हुए, जिसे हम आगे देखेंगे।

२. किसान और उनके जमींदार : काली मौत

किन्तु इन विकासों की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण यह तथ्य था कि इस युग में इंग्लिश किसानों का समुदाय जो आबादी का बहुत बड़ा हिस्सा था, भूदासता से स्वतन्त्रता की ओर अग्रसर हो रहा था। यह बड़ी क्रमिक प्रक्रिया थी और यह १६वीं शताब्दी के अन्त तक भी पूरी नहीं हुई थी। किन्तु यह १३वीं और १४वीं शताब्दियों में चल रही थी और इस युग के पिछले भाग में इसमें बड़ी तेजी आ गयी थी। १२१५ ई० में मैग्नाकार्टा के समय सम्भवतः इंग्लिश जनता की बहुसंख्या भूदास थी। इसका यह अभिप्राय है कि वे ज़मीन के साथ बंधे हुए थे और आजीवन वे रिवाज द्वारा निश्चित की गयी कुछ सेवाएँ अपने स्वामियों को देने के लिए बाध्य थे। १३९९ ई० में इंग्लिश जनता की बहुसंख्या में ऐसे स्वतन्त्र लोग थे जो जहाँ चाहें, वहाँ जा सकते थे और अपने काम बदल सकते थे; शेष लोग स्वतन्त्रता के पथ पर अग्रसर हो रहे थे।

यह महत्वपूर्ण परिवर्तन सरकार के किसी कानून या कार्य के कारण नहीं हुआ, किन्तु आर्थिक कारणों के मौन रीति से कार्य करने का परिणाम था। कुछ अंशों में युद्ध से इसे सहायता मिली। फ्रांस में सैनिक सेवा के लिए नाम लिखाकर भर्ती होने वाले हजारों बलिष्ठ तरुण किसान भूदासता की अवस्था में कभी वापस नहीं लौटे। किन्तु इससे भी महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि छोटे बड़े जमींदार अधिकाधिक धन चाहने लगे थे। उन्हें विकासशील व्यापार द्वारा लायी जाने वाली विलास सामग्री के खरीदने के लिए, नये शानदार भवनों को बनाने के लिए, दरबार में अपना खर्चा चलाने के लिए, फ्रांस में सेवा के लिए आवश्यक सैनिक सामग्री खरीदने के लिए और अपने अनुयायियों के दलों का खर्च पूरा करने के लिए धन की आवश्यकता थी। भूमि-व्यवस्था की पुरानी पद्धति में धन का स्थान बड़ा गौण था। एक जमींदार की जागीर या मेनर प्रायः दो हिस्सों में बंटी होती थी। पहला हिस्सा उसकी सीर (Demesne) पर अपना घरेलू खेत होता था और दूसरा हिस्सा उन कृषिदासों (Villeins) अथवा काटरों (Cottars) के खेतों का होता था, जो अपनी भूमि का भुगतान कुछ तो जमींदार की सीर के घरेलू खेत पर सप्ताह में निश्चित दिन एवं फसल के समय कुछ अतिरिक्त दिन कार्य करके किया करते थे। वे इसका कुछ भुगतान द्रव्य के रूप में, निश्चित मौसमों पर चूजे, अण्डे आदि विभिन्न वस्तुएं दे कर किया करते थे। अतः जमींदार और उसके भूमिधर असामी के बीच धन का व्यवहार बहुत कम होता था और जमींदार अपनी जागीरों की उपज पर निर्भर रहते हुए सादगी से अपना जीवन बिताता था। जब तक यह व्यवस्था प्रचलित थी, तब तक यह आवश्यक था कि खेतिहर नियन्त्रण में रखे जायें, क्योंकि उनके बिना जागीर का काम नहीं चलाया जा सकता था; अतः जमीदार उनको या उनके बच्चों को स्वतन्त्र नहीं होने देना चाहता था। किन्तु अब कहीं भी व्यय किया जा सकने वाला धन उस उपज से अधिक महत्वपूर्ण हो गया, जिस उपज को उसी स्थान पर खर्च करना पड़ता था या मण्डी में भेजना पड़ता था। इससे पुरानी व्यवस्था भंग होने लगी। कई बार जमींदार अपने कुछ असामियों के साथ यह समझौता कर लेता था कि वे

उसे सेवाओं के बदले में धन राशि दें। उनकी देय धन राशि का हिसाब भृति (Wages) की सामान्य दर के अनुसार उनसे ली जाने वाली सेवा की राशि के आधार पर हिसाब द्वारा निश्चित किया जाता था। यदि इस प्रकार की व्यवस्था को स्थायी बना दिया जाता था तो असामी कापीहोल्डर (Copyholder) या पट्टेदार बन जाता था। इसका आशय यह था कि वह मेनर के पुराने रिकार्डों द्वारा निश्चित की गयी राशि वाला एक ऐसा रिवाजी लगान देता था, जिसकी राशि में परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। जब तक वह अपने देय लगान को अदा करता रहता था, तब तक उसे बेदखल नहीं किया जा सकता था और व्यावहारिक रूप से वह एक स्वतन्त्र भूस्वामी बन जाता था। कई बार एक जमींदार अपनी सीर या घरेलू खेत किसी किसान को निश्चित लगान पर दे देता था और उसे इस बात की अनुमति देता था कि वह अपनी इच्छानुसार मजदूर भृति पर लगा सके। इस अवस्था में असामियों से ली जाने वाली रिवाजी सेवाएँ जमींदार के लिए उपयोगी नही रहती थी और वह इनके बदले में धनराशि ले लेता था। इसके अतिरिक्त अब उसके लिए यह बात महत्वपूर्ण नही रही थी कि उसके असामी और उनके बच्चे उसकी जमीन पर रहते हैं या नहीं। यह कल्पना नहीं करनी चाहिये कि ऐसी व्यवस्था सर्वत्र प्रचलित थी या यह सदैव स्थायी थी। कई बार एक जमींदार असामी द्वारा प्रति सप्ताह दी जाने वाली सेवाओं के बदले धन राशि लेने की छूट दे देता था, किन्तु फसलों की कटाई के समय विशेष सेवाएँ लेने का अधिकार बनाये रखता था। कई बार यह व्यवस्था अस्थायी होती थी और जमींदार इच्छानुसार पुरानी व्यवस्था को पुनः अपनाने का अधिकार सुरक्षित रखता था, बशर्ते कि वह ऐसा करना उचित समझे। किन्तु इस समूचे युग में इंग्लिश किसानों की निरन्तर बढ़ रही संख्या या तो कापीहोल्डर बन रही थी, जो अपने छोटे खेतों का स्वतन्त्रतापूर्वक नियन्त्रण कर रहे थे अथवा वे स्वतन्त्र मजदूर बन रहे थे, जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा सकते थे तथा वे उन्हें प्राप्त होने वाली किन्हीं भी मजदूरियों को अस्वीकार कर सकते थे। १६वी शताब्दी के मध्य तक कृषकवर्ग का लगभग एक चौथाई भाग इस प्रकार शनैः शनैः मुक्ति पा चुका था।

१३४८-४९ ई० में एक ऐसी घटना हुई, जिसने इस प्रक्रिया की गति को बहुत तीव्र बना दिया। इसी समय इसने मजदूरों और किसानों में एक महान संघर्ष उत्पन्न किया। काली मौत (Black Death) के नाम से प्रसिद्ध भीषण प्लेग ने इंग्लैण्ड पर हमला किया और एकदम आबादी के एक तिहाई से आधे हिस्से तक का सफाया कर दिया। इससे मजदूरों की भारी कमी हो गयी। जमीन जोतने के लिए पर्याप्त व्यक्ति नहीं रहे। स्वतन्त्र मजदूरों ने अपने को सुख-चैन में पाया। वे अब लगभग मनमानी मजदूरी पा सकते थे। दूसरी ओर जिन असामियों ने अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं की थी, वे यह अनुभव करने लगे कि यह उनके साथ एक बड़ा अन्याय है कि उन्हें पुरानी सेवाएँ देने को बाधित किया जाय और इसके बदले में उन्हें कोई भी लाभ न प्राप्त हो। उनमें से बहुत असामी अब प्राप्त हो सकने वाली ऊँची मजदूरियों को पाने के लिए अपनी जमीन के टुकड़ों को छोड़ कर भाग खड़े हुए। दूसरी ओर जमींदारो को भी इससे बड़ी हानि उठानी पड़ी। उन्होंने इस बात पर पछतावा करना शुरू किया कि

धन पाने के लिए उन्होंने अपने इतने अधिक असामियों को सेवाओं से मुक्ति क्यों दी । वे यथासम्भव इसका प्रयत्न करने लगे कि पुरानी पद्धति को पुनः अपनाया जाय । वे स्वतन्त्र मजदूरों को अथवा अन्य जागीरों से भागे हुए असामियो को दी जाने वाली मजदूरी की ऊँची दर से तीव्र रूप से असन्तुष्ट थे । क्योंकि वे पार्लियामेंट को पूर्ण रूप से नियन्त्रित करते थे, अतः उन्होने कृषक वर्ग को उसकी पुरानी परतन्त्र दशा में कानून द्वारा जबर्दस्ती लौटाने के लिए प्रयत्न किया । १३४९ ई० के मजदूरों के अध्यादेश (Ordinance of Labourers) को इस शताब्दी के उत्तरार्ध में प्रायः कई बार बनाया गया और सुदृढ़ किया गया । इस अध्यादेश द्वारा जमींदारों ने अर्द्धस्वतन्त्र किसानो को अपनी पुरानी सेवाएँ करने के लिए बाधित किया । उन्होंने इस बात का भी प्रयत्न किया कि वे स्वतन्त्र मजदूरों के लिए मजदूरियों की अधिकतम दर जबरन लागू करें और एक निश्चित दर से अधिक मजदूरी स्वीकार करने वाले मजदूर पर तथा ऐसी मजदूरी देने वाले किसान पर दण्ड व्यवस्था लागू करें । उन्होने यह आदेश दिया कि मजदूरों को इन दरों पर काम करने के लिए बाधित किया जाना चाहिये ।

इस कानून का कुछ प्रभाव पड़ा । इसका पालन करना प्रत्येक जिले में उन नाइट लोगों के हाथों में दिया गया, जिनका स्वार्थ इस मामले में था । किन्तु इस आन्दोलन को रोकना शक्ति से बाहर था, यद्यपि इस प्रयत्न से बड़ी कटुता और वर्ग विद्वेष उत्पन्न हुआ । अन्ततोगत्वा फैसला किसानों के हाथ में था क्योंकि उनका श्रम अनिवार्य था । अपने खेतों को जुतवाने के लिए जमीदारों को अपने ही कानून तोड़ने पड़े । इसके अतिरिक्त ऊनी उद्योग के विकास ने अनेक मजदूरों को दूसरा काम प्रदान किया, क्योंकि प्लेग की महामारी के भीषण विनाश के कारण इसमें भी आदमियों की कमी थी । एक पीढ़ी से अधिक समय तक जमींदारों और किसानों में कटु संघर्ष चलता रहा और यह १३८१ ई० के कृषक विद्रोह का प्रधान कारण था । इसमें इंग्लैण्ड के इतिहास में पहली बार मजदूरों ने अपने काम की अवस्थाओं के सम्बन्ध में बलपूर्वक निर्देश देने के लिए अपने स्वामियो के अधिकार का साहस के साथ मुकाबला किया और यह मांग की कि भूदासता और बेगार को इंग्लैण्ड में बिलकुल समाप्त कर देना चाहिये । इस विद्रोह में किसानों को क्षणिक विजय मिली, किन्तु उन्हें दी गयी रियायतें लगभग तुरन्त ही वापस ले ली गयीं ।

फिर भी अन्त में कृषकों की ही विजय हुई । यद्यपि कुछ मामलों में जमीदार पुरानी व्यवस्था को पुनः वापस लाने में समर्थ हुए, किन्तु समग्र रूप से इस काल के उपद्रवों ने उन्हें पहले की अपेक्षा इसके लिए अधिक तैयार कर दिया कि वे अपनी सीर की भूमियों की खेती कराने का प्रयत्न छोड़ दें और सेवाओं के स्थान पर धन राशि में भुगतान स्वीकार करें । काली मौत के बाद की आधी शताब्दी में कृषि भूदासों की तुलना में स्वतन्त्र किसानों का अनुपात लगभग तिगुना बढ़ गया और यह प्रक्रिया अगली शताब्दी में भी निरन्तर चलती रही । यूरोप के अन्य देशों की अपेक्षा इंग्लिश जनता का अधिकांश समुदाय भूदासता से मुक्ति पाकर स्वतन्त्र होने लगा । यह प्रक्रिया १५वी शताब्दी के अन्त में इंग्लिश इतिहास के महान युग के आरम्भ होने से पहले ही लगभग पूरी हो चुकी थी ।

३. व्यापार और उद्योग का विकास तथा संगठन

ग्रामीण वर्गों की अवस्था में जो परिवर्तन हुआ उसी के समान महत्व रखने वाली घटना इस युग में होने वाला इंग्लिश व्यापार और उद्योग का विकास था। देश का विदेशी व्यापार तेजी से बढ़ रहा था। इसका कारण यह था कि [illegible] की बहुत बड़ी माँग थी और इंग्लिश निर्यात की वस्तुओं में सबसे अधिक लाभदायक और महत्वपूर्ण वस्तु-ऊन इस समय बड़ी अधिक मात्रा में उत्पन्न की जा रही थी। इंग्लिश ऊन का निर्यात मुख्य रूप से फ्लैण्डर्स के बड़े औद्योगिक नगरों-घेन्ट और वाइप्रेस को किया जाता था। वस्तुत: ये नगर इंग्लिश ऊन की पूर्ति पर प्रधान रूप से निर्भर थे और इंग्लिश सरकार तथा इन नगरों के बीच बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध बने रहने का यह प्रधान कारण था। इंग्लिश ऊन को सर्वत्र बहुमूल्य समझा जाता था। इसके निर्यात पर दी जाने वाली चुंगी राजा के राजस्व की बड़ी महत्वपूर्ण मद (Item) थी, इसलिए राजा सदैव इस पर कठोर नियन्त्रण बनाये रखने के लिए उत्सुक रहता था। कुछ अंशों में इसी कारण सरकार की इस बात पर आग्रह करने की नीति थी कि सभी ऊन निश्चित स्थानों पर बेची जाय, जहाँ राजा के अभिकर्ता यह देख सकें कि इन पर उचित चुंगी दी जा चुकी है। ये स्थान प्रधान अथवा स्टेपल (Staple) नगरों के नाम से प्रसिद्ध थे। कई बार ये स्थान इंग्लैण्ड में और कई बार विदेशों में निश्चित किये जाते थे। यूरोपीय महाद्वीप के विभिन्न नगरों में इस बात की बड़ी होड़ रहती थी कि उनमें से ही किसी शहर को इंग्लिश ऊन के लिए स्टेपल निश्चित किया जाय। अन्त में इस प्रयोजन के लिए कैले चुना गया। विदेशी विक्रेताओं के लिए सुविधाजनक होने के साथ-साथ यह इंग्लिश नियन्त्रण में था। इंग्लिश व्यापारी उत्पादकों से ऊन खरीद कर तथा स्टेपल में इसे बेच कर बड़ा मुनाफा कमाते थे।

इंग्लैण्ड के विदेशी व्यापार का बड़ा भाग अब भी लन्दन में अपना मुख्य कार्यालय रखने वाले विदेशी व्यापारियों के हाथ में था। १४वीं शताब्दी में हैन्सियाटिक लीग के जर्मन व्यापारी अपनी समृद्धि और शक्ति के चरम शिखर पर थे और वे मिल कर लन्दन में स्टील-यार्ड के नाम से एक सम्मिलित कोठी या गोदाम रखा करते थे। यह सम्भवत: इंग्लैण्ड में सबसे महत्वपूर्ण व्यापारी केन्द्र था। यदि पाठक कभी नार्वे में बर्जन नामक स्थान पर जायें, तो उसे वहाँ संग्रहालय के रूप में सुरक्षित एक पुरानी हैंसियाटिक कोठी मिलेगी। वह कोठी इस बात का स्पष्ट ज्ञान देगी कि अपनी समृद्धि के दिनों में स्टीलयार्ड बड़े पैमाने पर कैसा स्थान रहा होगा। जर्मन व्यापारियों के अतिरिक्त लन्दन में कुछ इटालियन व्यापारी भी थे, जो प्रति वर्ष वेनिस के जहाजों के बेड़ों से लाये जाने वाले मसालों का तथा पूर्व की अन्य विलास वस्तुओं का बड़ा व्यापार करते थे। वे बैंक वालों (Bankers) का अथवा महाजनों (Moneylenders) का भी काम करते थे। लन्दन के वित्तीय केन्द्र का नाम अब तक लम्बार्ड स्ट्रीट है और यह उस समय लम्बार्ड (Lombard) तथा अन्य इटालियन व्यापारियों के वित्तीय उत्कर्ष का स्मरण करता है। वे प्राय: बड़े पैमाने पर, राजा को उसके उपयोग के लिए करों की अदायगी से पहले ही अगाऊ धन राशि दिया करते थे और कई बार इसकी पुन: अदायगी सुरक्षित करने के लिए राजमुकुट के जवाहरातों को गिरवी रखा करते थे। इन इटा-

लियन धनपतियों की सहायता के बिना युद्ध के समय में शासन चलाना असम्भव था। किन्तु लन्दन मे विदेशी व्यापारी, विशेषतः इटालियन अत्यधिक अलोकप्रिय थे। कई बार वे भीषण आक्रमणों का शिकार होते थे, क्योंकि अनेक इंग्लिश व्यक्ति यह समझते थे कि उन पर अनुचित कृपा की जा रही है और उन्हें इंग्लिश व्यापारियों की अपेक्षा अनुचित लाभ मिल रहा है।

फिर भी, पहले किसी समय की अपेक्षा, इस युग में इंग्लिश व्यापारी अपने को अधिक साहसी प्रदर्शित कर रहे थे। इंग्लिश लोग अब एक व्यापारी और समुद्र यात्रा करने वाली जनता बनने लगे थे। लन्दन, केन्ट और ससैक्स के समुद्र तट पर, सिंक पोर्ट (Cinque Ports)[1] या पंच पत्तन, साउथम्पटन, किंग्सलिन, हल तथा अन्य स्थान व्यस्त बन्दरगाह बन रहे थे। इन स्थानों में इतने जहाजों की संख्या मौजूद थी, जो आवश्यकता पड़ने पर राजा की सेनाओं का परिवहन कर सकें या उसे ऐसा बेड़ा दे सकें, जैसे बेड़े ने स्लुइस की लड़ाई में सफलता प्राप्त की थी। व्यापार के और युद्ध के पोतों में इस समय कोई भेद नहीं था और न ही ऐसा भेद हो सकता था, क्योंकि उन दिनों समुद्र पर कोई कानून या शान्ति नहीं थी और व्यापार करने वाले हर जहाज को अपनी रक्षा के लिए भी तैयार रहना पड़ता था। १४वी शताब्दी में इंग्लैण्ड एक बड़ा सामुद्रिक और व्यापारिक देश बनने लगा और इस व्यापार को करने वाले व्यापारियों को न केवल इसके खतरे झेलने पड़ते थे, अपितु हैसियाटिक लीग से कड़ी प्रतिद्वन्द्विता भी करनी पड़ती थी। इसलिए यह आवश्यक था कि ये व्यापारी बड़े दृढ़ संकल्प वाले और साहसी हों। अपनी पारस्परिक रक्षा और सहायता के लिए उन्होंने एक प्रकार की शिथिल रूप से संगठित कम्पनी या समाज का निर्माण किया, जो साहसी व्यापारी (Merchant Adventures) के नाम से प्रसिद्ध था। यह विदेशों में इंग्लिश लोगों के जोखिम के कामों पर सामान्य नियन्त्रण रखता था और राजा की ओर से दिये जाने वाले अधिकार पत्रों (Charters) से प्रोत्साहन प्राप्त करता था। "साहसी व्यापारी" स्पेन से बाल्टिक सागर तक विस्तीर्ण व्यापक क्षेत्र में व्यापार करते थे। इस प्रकार ऐसे धनी इंग्लिश व्यापारियों का छोटा, किन्तु महत्वपूर्ण वर्ग उत्पन्न हो रहा था, जो अब तक इंग्लिश मण्डियों का नियन्त्रण करने वाले विदेशी प्रतिस्पर्धियों का अपने आप मुकाबला करने में अधिकाधिक समर्थ हो रहा था।

अन्त में इसी युग में इंग्लैण्ड ने उद्योगों के निर्माण का कार्य गम्भीरतापूर्वक करना शुरू किया और विशेष रूप से अनेक उद्योगों का विकास आरम्भ किया। एडवर्ड तृतीय का एक प्रशंसनीय कार्य यह है कि उसने इस विकास को प्रोत्साहित करने का अधिकतम प्रयास किया। यह कुछ तो संरक्षण के उपायों से किया गया और कुछ फ्लैन्डर्स निवासी (Flemings) कारीगरों को इंग्लैण्ड में बसाने और इंग्लिश लोगों को इस उद्योग के रहस्यों की शिक्षा देने के लिए निमन्त्रित करके किया गया। इंग्लिश ऊनी उद्योग फ्लैन्डर्स के उस

१. एटलस की प्लेट संख्या ३४ देखिये, यहाँ पाँच बन्दरगाहों को विशेष रूप से अंकित किया गया है।

उद्योग की तुलना में इस समय तक बिलकुल नगण्य था, जो चिरकाल से इंग्लैण्ड की ऊन की फसल के अधिकांश भाग का उपयोग कर रहा था। किन्तु इंग्लिश कपड़ों की और ऊनी वस्त्र तथा ऊनी तागों (Worsteds) की इस समय अच्छी ख्याति होने लगी थी और इसका व्यापार नारफौक जैसे कुछ जिलों में बहुत धन ला रहा था। नारफौक में अब तक विद्यमान गाँवों के सुन्दर चर्चों की आश्चर्यजनक संख्या प्रधान रूप से इस युग के समृद्ध वस्त्र-व्यवसायियों की एक नयी श्रेणी की उदारता का परिणाम है। इस प्रकार इंग्लैण्ड काफी बड़े पैमाने पर एक औद्योगिक और व्यापारी देश बनने लगा और इस समय से व्यापारी और वस्त्रव्यवसायी राष्ट्र के जीवन में सदैव महत्वपूर्ण समझे जाने लगे।

१३वीं और १४वी शताब्दी की एक अत्यधिक रोचक विशेषता शिल्पियों की श्रेणियों (Craft Gilds) का अथवा विभिन्न व्यापारों और उद्योगों में लगे हुए व्यक्तियों के संघों का उत्थान था। १४वी शताब्दी में ये शिल्पी श्रेणियाँ इंग्लिश समाज की एक अधिकतम महत्व-पूर्ण विशेषता बन गयी थी और सभी बड़े-बड़े शहरों में ऐसी अनेक श्रेणियाँ थीं। उनका उद्देश्य अपने सदस्यों के तथा अपने व्यापार के सामान्य हितों का संरक्षण था। कई बार इनकी तुलना आधुनिक श्रमिक संघों से की जाती है, परन्तु इन दोनों में कोई वास्तविक सादृश्य नहीं है क्योंकि श्रमिक संघ एक उद्योग में काम करने वाले मजदूरों के संघ हैं। प्राय: समूचे देश के लिए एक सामान्य संघ होता है, किन्तु शिल्पी श्रेणियाँ उस्ताद कारी-गरों के सघ होते थे। प्रत्येक नगर में श्रेणियों का अपना पृथक समूह होता था। यह ठीक है कि वे कुछ ऐसे कार्य भी करती थी, जो आजकल के श्रमिक संघ करते हैं। ये श्रेणियाँ कष्टग्रस्त होने की दशा में अपने सदस्यों को सहायता पहुँचाती थी और जहाँ तक सम्भव हो अत्याचार से उनकी रक्षा करती थी। उनका यह भी लक्ष्य था कि वे नगर में उनका व्यवसाय करने वाले ऐसे सभी व्यक्तियों को वहाँ से निष्कासित कर दें, जो उनकी श्रेणियों के सदस्य नहीं हैं और इस प्रकार अनुचित होड़ को रोकें। वे इस बात को निश्चित करती थीं कि विभिन्न प्रकार का माल किस कीमत पर बेचा जाना चाहिये तथा वे इस बात का भी प्रयत्न करती थीं कि वस्तुओं के निर्माण में उत्तम कारीगरी हो और गुण एवं आकार की दृष्टि से उनमें एकरूपता हो। वे अपने व्यवसाय में लाये जाने वाले शागिर्दों की शर्तों के सम्बन्ध में, प्रत्येक कारीगर द्वारा लिये जाने वाले शागिर्दों की संख्या के बारे में, तथा फेरी लगाने वाले कारीगरों अथवा मजदूरी पर काम करने वालों की भृतियों के बारे में नियम बनाती थीं। स्थूलरूप से कहें, तो उनका उद्देश्य यह था कि उनका व्यवसाय करने वाले सभी व्यक्तियों को पर्याप्त जीविका उपलब्ध हो सके और उसके बदले में वे ईमानदारी से काम करें। समग्ररूप में, वे असफल नहीं थीं यद्यपि वे प्राय: संकीर्णदृष्टि वाले क्षुद्र हृदय और अपनी श्रेणी का सदस्य न होने वाले व्यक्तियों के लिए अन्यायपूर्ण थीं। शिल्पी श्रेणियों को प्राय: उन पुरानी व्यापारिक श्रेणियों के साथ उग्र संघर्ष करना पड़ता था, जिन श्रेणियो ने अधिकांश नगरों में शहर के शासन पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया था, और ये नगर के व्या-पार के किसी भी हिस्से के नियन्त्रण को अपने हाथों से बाहर नही जाने देती थीं। किन्तु

अधिकांश नगरों में शिल्पी श्रेणियाँ अपने को सुप्रतिष्ठित करने में सफल हुईं और वे इंग्लिश जीवन में एक बहुमूल्य और महत्वपूर्ण तत्व बन गयीं। वे पूर्ण उत्साह के साथ देर तक कार्य करती रहीं। उनके अत्यधिक संकीर्ण बनने तथा उद्योग की प्रगति को संकट में डालने से पहले तक उन्होंने स्वतन्त्रता, सहयोग और स्वशासन के विषय में इंग्लिश लोगों को प्रशिक्षण दिया, यह उनकी एक महत्वपूर्ण देन थी।

४. बौद्धिक हलचल : विक्लिफ और चर्च

श्रेणियों की एक मनोरंजक क्रियाशीलता यह थी कि कुछ नगरों में वे भव्य समारोहों अथवा चमत्कारपूर्ण झाँकियों और सरल छोटे नैतिक नाटकों का प्रदर्शन आयोजित किया करती थी। वे इन तमाशों तथा नाटकों को कुछ समय के अन्तर से महान अवसरों पर किया करती थीं। इस प्रयोजन के लिए लिखे गये कुछ नैतिक नाटक (Moralities) अब तक भी मिलते हैं और वे बड़े अजीब और मनोरंजक हैं। यह प्रथा अगली दो शताब्दियों में अधिक प्रचलित हुई और शेक्सपियर ने अपने नाटक (Midsummer Night's Dream) में बाटम और उसके मित्रों की रंगरलियों के वर्णन में इसका मजाक उड़ाया है। यह प्रथा विशेष रूप से इसलिए रोचक है कि यह इस बात को प्रदर्शित करती है कि अब लोगों के बौद्धिक विषय चर्च तक ही सीमित नही थे, किन्तु वे बहुत व्यापक हो रहे थे। १४वी शताब्दी में इंग्लिश इतिहास में पहली बार यह कहना सत्य है कि—अत्यधिक रोचक और महत्वपूर्ण रचनाएँ चर्च के व्यक्तियों द्वारा नहीं, किन्तु चर्चेतर लौकिक व्यक्तियों (Laymen) द्वारा लिखी गयी थी। इस युग में मुख्य रूप से लौकिक व्यक्तियों ने ही इंग्लिश को साहित्यिक भाषा में परिणत किया। १४वी शताब्दी के उतरार्ध में इंग्लिश समाज का सजीव एवं रोचक कविता में चित्र खीचने वाला और महान इंग्लिश कवियों की परम्परा में पहला कवि चासर एक चर्चेतर लौकिक व्यक्ति था। यद्यपि Piers Plowman का लेखक लैंगलैण्ड एक पुरोहित प्रतीत होता है, फिर भी इस ग्रन्थ में निर्धन लोगों के कष्टों का बड़ा सादा और सही चित्रण है। इस युग में प्रसारित एवं तुकबन्दी वाली कविताओं में लिखे जाने वाली अधिकांश राजनीतिक व्यंग्योक्तियों के लेखक सम्भवतः लौकिक व्यक्ति ही थे।

इस सब का यह अर्थ है कि इस समय इंग्लैण्ड में बलवती होने वाली राष्ट्रीय भावना अपने को भाषा और साहित्य में तथा राजनीति और युद्ध में अभिव्यक्त कर रही थी। इस युग की एक रोचक विशेषता यह है कि इस समय लैटिन या फ्रेन्च के स्थान पर इंग्लिश शनैः शनैः समाज की तथा कानूनी न्यायालयों की और सरकार की भाषा बन रही थी। लैटिन को चर्च के सम्पूर्ण प्रभाव का समर्थन प्राप्त था और वह अब तक विद्या की भाषा समझी जाती थी। फ्रेन्च, नार्मन बैरन लोगों की सामान्य भाषा थी और इसलिए वह सरकारी भाषा थी। १३६२ ई० में पहली बार लोक सभा (House of Commons) के विवादों मे इंग्लिश का प्रयोग किया गया और इसी वर्ष यह नियम बनाया गया कि कानूनी न्यायालयो में इंग्लिश का प्रयोग किया जाना चाहिए। पार्लियामेन्ट के कानून और तालिकाएँ रिचर्ड

वाला जो साधु, पहले इतने उदात्त रूप में आत्म-बलिदान करने वाला था, वह अब एक निरी मुसीबत बन गया। बिशप प्रायः केवल दरबारी और राजनीतिज्ञ होते थे। पैरिश या गाँव के अनेक पादरी (पल्ली पुरोहित) चर्च के दशांश की तथा अन्य देय राशियों की वसूली के अतिरिक्त अपने सभी कर्त्तव्यों की उपेक्षा करते थे। चर्च के व्यक्तियों की सम्पत्ति की और भोग-विलास की अधिक कटु आलोचना इसलिए की जाती थी कि जमींदारों के विरुद्ध किसानों के संघर्ष तथा फ्रेन्च युद्धों के कारण लगाये गये भारी करों के कारण मनुष्य यह अनुभव करने लगे थे कि मजदूरों को ही यह सारा बोझ उठाना पड़ रहा है।

ऑक्सफोर्ड के बैलियोल कालेज के मास्टर और बाद में लीसेस्टर शायर में लटरवर्थ के रैक्टर बनने वाले और १३६० ई० के लगभग प्रसिद्ध होने वाले जान विक्लिफ ने चर्च की स्थिति से असन्तोष को एक बड़े प्रबल रूप में अभिव्यक्त किया। उसने पहले भिक्षुओं और साधुओं को उनकी सम्पत्ति और सुस्ती के लिए फटकारा। वह इस बात पर बल देता रहा कि चर्च तब तक कभी भी स्वस्थ नहीं हो सकता, जब तक वह सांसारिकता का और अपनी सम्पत्ति का परित्याग नहीं करता और अपने को सच्चे आध्यात्मिक कार्यों में नहीं लगाता। धर्म को पुनः वास्तविक रूप देने के लिए विक्लिफ ने इंग्लिश में पहली बार बाइबिल का अनुवाद किया। अपने विचारों को क्रियात्मक रूप देने के लिए उसने निर्धन पुरोहितों के सम्प्रदाय की स्थापना की। चर्च ने इन पुरोहितों को कभी भी सरकारी तौर से स्वीकृत नहीं किया, किन्तु वे प्रचार और अध्यापन का कार्य करते हुए शीघ्र ही सारे इंग्लैण्ड में फैल गये और उन्होंने जिन सिद्धान्तों का प्रचार किया, उनसे सामान्य राजनीतिक और सामाजिक असन्तोष में वृद्धि हुई। कई बार यह कहा जाता है कि उन्होंने १३८१ ई० के विद्रोह को उत्पन्न करने में सहायता प्रदान की। यह सत्य नहीं है, क्योंकि विक्लिफ के दरिद्र पुरोहितों ने विद्रोह की तिथि के आस-पास ही अपना कार्य आरम्भ किया था। किन्तु विक्लिफ के अनुयायियों के अतिरिक्त कुछ अन्य आन्दोलनकारी भी थे। १३८१ ई० में जॉन बाल नामक एक समाजवादी पुरोहित उनका एक नेता था। किन्तु वह अपने ढंग का अकेला काम करने वाला आदमी नहीं था। अपने [illegible] स्वार्थों के कारण, उस समय के सबसे शक्तिशाली इंग्लिश सरदार लैंकास्टर के ड्यूक, गौन्ट के जॉन ने उस समय तक विक्लिफ को तथा उसकी अध्यक्षता में चलने वाले आन्दोलन को अपना संरक्षण प्रदान किया। कुछ तो इस शक्तिशाली परिवर्तन के कारण, कुछ चर्च के भ्रष्टाचार से सामान्य असन्तोष के कारण यह आन्दोलन बहुत तेजी से सफल होने लगा। गौन्ट के जॉन द्वारा अपना संरक्षण हटा लिये जाने के काफी समय बाद यह अन्दाज लगा लिया गया था कि इंग्लैण्ड की आबादी का एक तिहाई भाग लोलार्डों के प्रभाव में था, विक्लिफ के अनुयायियों को लोलार्ड (Lollard) कहा जाता था। यह आन्दोलन पूर्ण रूप से नहीं दबाया जा सका। अत्याचार के बावजूद यह आन्दोलन अन्दर ही अन्दर उस समय तक बना रहा, जब तक कि १६वीं शताब्दी के सुधार आन्दोलन में यह सम्मिलित नहीं हो गया।

इस प्रकार सब ओर तथा सभी श्रेणियों में इस युग के इंग्लिश समाज में बड़ा द्रुत

परिवर्तन हो रहा था। सर्वत्र राष्ट्रीय भावना प्रबल रूप से उद्‌बुद्ध हो चुकी थी। सर्वत्र नये विचारों का खमीर कार्य कर रहा था। बड़े सरदारों ने अब स्थानीय रूप से स्वतन्त्र होने का विचार छोड़ दिया था और वे प्रतिद्वन्द्वी दलों में राष्ट्रीय सरकार का नियन्त्रण करने के लिए प्रयत्न करने लगे थे। देहात का भद्रवर्ग अधिक धनी और महत्वपूर्ण हो रहा था और राष्ट्रीय मामलों में अपने अधिक हिस्सा लेने की माँग करने के लिए तैयार थे। इंग्लैण्ड अत्यधिक धनी और समृद्ध देश था और उसके व्यापारी अपने विदेशी प्रति-द्वन्द्वियों के साथ समान शर्तों पर प्रतिस्पर्धा करने लगे थे। समाज की निम्न श्रेणियों में भी पहली बार नवजीवन का संचार हो रहा था। सभी उद्योगों के कारीगर अपने सामान्य हितों की रक्षा करने के लिए तथा शहरों की शासक श्रेणियों के विरुद्ध लड़ने के लिए अपने संगठन बना रहे थे। कृषक वर्ग बड़े संघर्ष के बाद भूदासता से निकल कर स्वतन्त्र हो रहा था। सब जगह हलचल, आन्दोलन और परिवर्तन हो रहा था। सब जगह यह हलचल लोकप्रिय साहित्य के आविर्भाव से प्रोत्साहित हो रही थी। हर स्थान पर उपद्रव और अव्यवस्था फ्रांस के अराजक युद्धों से लौटने वाले सैनिकों के प्रभाव से बहुत बढ़ रही थी।

पुरानी व्यवस्था के सामान्य रूप से भंग होने का कुछ ज्ञान पाने के पश्चात् तथा इसमें उत्पन्न होने वाले सामाजिक श्रेणियों के सम्बन्धों के परिवर्तन को जान लेने के बाद ही हम इस युग के राजनीतिक इतिहास के महत्व को समझ सकते हैं। अब आगे हमें इस ओर ही अपना ध्यान देना है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Lipson, English Economic History; **Cunningham,** Growth of English Industry and Commerce; **Thorold,** Rogers, Six Centuries of Work and Wages; **Hasbach,** The English Agricultural Labourer; **Trevelyan,** England in the Age of Wycliffe; **Poole,** Wycliffe (Epochs of Church History); **Ward,** Chaucer (English Men of Letters); **Jusserand,** English Wayfaring Life in the Fourteenth Century; Conway Davies, Baronial Movement under Edward II; **Unwin** (ed.), Finance and Commerce under Edward III; **Powicke,** Medieval England.

• •

७

इंग्लैण्ड में स्वशासनपद्धति का विकास

(१३०७-१४२२ ई०)

एडवर्ड द्वितीय, १३०७ : एडवर्ड तृतीय, १३२७ : रिचर्ड द्वितीय, १३७७ : हेनरी चतुर्थ, १३९९ : हेनरी पंचम, १४१३.

ब्रिटिश शासन पद्धति के विकास में १४वीं शताब्दी सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण युग था। इस शताब्दी में पार्लियामेण्ट का स्वरूप निश्चित हुआ। इसके अधिकारों को विस्तृत और सुस्पष्ट किया जाने लगा। इसी शताब्दी में स्थानीय स्वशासन की इंग्लिश पद्धति का अधिक विकास हुआ और यह स्वशासन का ही यन्त्र है जो सभ्यता की प्रगति में इंग्लैण्ड की सबसे बड़ी देन है और जो भूमण्डल पर ब्रिटिश उपनिवेश बसाने में इंग्लिश लोगों की सफलता का प्रमुख कारण है। अतः हम ब्रिटिश इतिहास के महान युग के अध्ययन के लिए तब तक पूरी तरह से तैयार नहीं हो सकते, जब तक हम इन घटनाओं को भलीभाँति न समझ लें।

हम पहले देख चुके हैं कि एडवर्ड प्रथम इंग्लिश पार्लियामेण्ट का वास्तविक संगठनकर्ता था। किन्तु उसने जिस पार्लियामेण्ट का संगठन किया वह उस पार्लियामेण्ट से बिलकुल भिन्न है, जिस पार्लियामेण्ट से हम परिचित हैं। यह चार विशिष्ट समूहों की सभा थी। ये चार समूह इस प्रकार थे—कुलीन वर्ग, पादरी वर्ग, नाइट लोगों द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाने वाला जिले (Shire) का समुदाय तथा नगरवासियों (Burgesses) द्वारा प्रतिनिधित्व किये जाने वाला राजकीय अधिकार प्राप्त नगरों या बरो (Boroughs) का समुदाय। अन्य देशों में विद्यमान स्पष्ट रूप

से भेद रखने वाले सामाजिक वर्गों (Estates) के समान, इंग्लैण्ड में विकास की सम्भावना रखने वाले ये चारों समूह आरम्भ में राजा द्वारा शासन के व्यय के लिए माँगे जाने वाले अनुदानों (Garants) पर अपने वोट पृथक् रूप से दिया करते थे। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वे प्राय: एक ही सभा में एक साथ बैठा करते थे और यह राजा की पुरानी परिषद् का ही विस्तार मात्र था और इनके अधिकारों की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं थी। असाधारण करों के बारे में उनसे परामर्श लिया जाता था। किन्तु राजा सदैव पूरी पार्लियामेण्ट को बुलाना आवश्यक नहीं समझता था। वह निश्चित रूप से इसे सदैव आवश्यक नहीं समझता था कि वह कानून बनाने अथवा राष्ट्रीय नीति के विषय में नाइट लोगों और पुर-प्रतिनिधियों (Burgesses) से परामर्श करे। १४वीं शताब्दी में, स्पष्ट रूप से पृथक् सामाजिक वर्गों (Estates) में विकसित होने के स्थान पर यह परिषद् लार्ड्स तथा कामन्स के दो सदनों की वास्तविक पार्लियामेण्ट बन गयी। इस पार्लियामेण्ट ने यह अधिकार प्राप्त कर लिया कि उससे सब कानूनों के बारे में परामर्श किया जाय। वह लगभग सारे करों का नियन्त्रण करे और शासन की सामान्य देख-भाल का कार्य करे। इस सारी शताब्दी में पार्लियामेण्ट का विकास बड़ी तेजी से हुआ। वस्तुत: यह अत्यधिक द्रुतगति से हुआ, क्योंकि राष्ट्र अभी तक पर्याप्त रूप से कानूनों का इतना पालन करने वाला नहीं बना था कि वह उस स्वशासन के लिए तैयार होता, जिसके लिए एक लम्बे और कष्टप्रद प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। इस युग के युद्धों और सामाजिक परिवर्तनों द्वारा किये जाने वाले इस अत्यधिक द्रुत विकास का यह परिणाम हुआ कि इससे अगले युग में अराजकता और अव्यवस्था बनी रही।

१. एडवर्ड द्वितीय तथा लैंकास्टर का थामस

एडवर्ड द्वितीय का नीरस राज्यकाल मुख्य रूप से इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इसने यह प्रदर्शित किया कि इंग्लैण्ड अब तक स्वशासन के लिए तैयार नहीं है, शान्ति तथा व्यवस्था बनाये रखने के लिए उसे एक शक्तिशाली एवं प्रबल राजा की आवश्यकता है। एडवर्ड द्वितीय सक्रिय रूप से दुर्गुणी नहीं था, किन्तु उसमें शक्ति या स्थिरता का अभाव था। वह ओछा और कई बार बच्चों-जैसा जिद्दी हो जाता था और आसानी से दूसरों के प्रभाव में आ जाता था। कुछ तो सुस्ती के कारण और कुछ बैरनों के नियन्त्रण से स्वतन्त्र होने की इच्छा से वह अपने कृपापात्रों की ओर झुका रहता था। इससे उन बड़े बैरनों को आलोचना का अच्छा आधार मिल जाता था, जिन्होंने एडवर्ड प्रथम की शक्ति के प्रति प्राय: नापसन्दगी प्रदर्शित की थी। वे बैरन एक बार पुन: उसी नीति का अनुसरण करना चाहते थे, जिसका अनुसरण उनके पूर्ववर्तियों ने हेनरी तृतीय के राज्यकाल में किया था। किन्तु उनमें से कोई व्यक्ति साइमन-डी-मॉण्ट-जैसा नहीं था। उनका प्रमुख नेता राजा का चचेरा भाई और राज्य का सबसे धनी सरदार लैंकास्टर का अर्ल थामस था। यद्यपि लैंकास्टर की मृत्यु के बाद साधारण जनता ने स्वतन्त्रता के शहीद के रूप में उसकी पूजा की, किन्तु

उसकी इस ख्याति का इस तथ्य के सिवाय अन्य कोई आधार नही प्रतीत होता कि वह सरकार का विरोधी था। वस्तुतः वह घोर स्वार्थी और राजा जैसा ही नालायक था।

लैंकास्टर और उसके मित्रों ने पहले यह माँग की कि राजा के कृपापात्र, गैस्कनी के एक उद्धत, हाजिरजवाब और अनुत्तरदायी नाइट-पियर्स गैवस्टन (Piers Gaveston) को देश से निर्वासित किया जाये, क्योंकि गैवस्टन एक विदेशी था और उसके प्रभाव वाले समय में देश का शासन निश्चित रूप से बुरे रूप में हो रहा था। अतः उनकी माँग को जनता का बहुत समर्थन मिला। गैवस्टन तीन बार देश से निकाला गया और तीनों बार वह वापस लौटा। अन्त में लैंकास्टर के प्रबल समर्थक-वारविक के अर्ल ने पाशविक रीति से उसकी हत्या करा दी (१३१२ ई०)। इस बीच में (१३१०) वैरन लोगों ने हेनरी तृतीय के राज्य काल के अपने पूर्ववर्ती लोगों का अनुसरण करते हुए २१ व्यक्तियों की एक समिति नियुक्ति की। ये लार्डव्यवस्थाकार (Lord ordainers) के नाम से प्रसिद्ध हैं। १२५८ ई० की समिति की भाँति इन्हें एक सुधार-योजना बनाने तथा इस बीच में देश की सरकार को चलाने का अधिकार दिया गया। १३११ ई० में इस समिति द्वारा बनाये गये अध्यादेशों की समीक्षा करने के लिए हमें यहाँ रुकने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वस्तुतः ये अध्यादेश कभी कार्य रूप में नहीं लाये गये। इनकी मुख्य व्यवस्थाएँ ये थीं कि पार्लियामेण्ट की बैठक प्रतिवर्ष कम-से-कम एक बार होनी चाहिए और इसे राज्य के बड़े अधिकारियों की नियुक्ति को स्वीकृत करने तथा उन्हें पदच्युत करने का अधिकार होना चाहिए। उनके मन में जिस पार्लियामेन्ट का विचार था, वह विशुद्ध रूप से अथवा कम-से-कम प्रधान रूप से बैरन (Baron) लोगों की संस्था थी। अतः इस योजना का अभिप्राय इससे अधिक कुछ भी नही था कि एक अल्पतन्त्रीय समूह (Oligarchical group) द्वारा राजा की सत्ता को अभिभूत किया जाय। इस योजना से इसमें कोई सुधार होने की सम्भावना नहीं थी।

गैवस्टन के तथा अध्यादेशों के बारे में लम्बे विवादों के कारण स्काटिश मामलों में कोई प्रभावशाली हस्तक्षेप न हो सका। इससे राबर्ट ब्रूस को समूचा स्काटलैण्ड जीतने का अवसर मिल गया। अन्त में जब एडवर्ड द्वितीय ने बेनकबर्न के युद्ध में खोये हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया तो लैंकास्टर और उसके प्रमुख अनुयायी इससे बिलकुल अलग रहे। इस बात पर सन्देह किया जाता था कि स्काट लोगों के साथ उनके देशद्रोहपूर्ण सम्बन्ध हैं। आगे चलकर निश्चित रूप से उन्होंने इस प्रकार के देशद्रोहपूर्ण सम्बन्ध रखे। अध्यादेशों के विवाद के बाद के छः वर्ष सम्भवतः इस अभागे राज्य-काल का सबसे अधिक बुरा समय था। इस समय न तो राजा और न ही लैंकास्टर का दल इतना शक्तिशाली था कि वह प्रभावशाली प्रभुत्व को स्थापित कर सके। इन दोनों में से किसी ने भी राजनीतिक होने की योग्यता का प्रदर्शन नहीं किया। १३१८ ई० में, अन्त में एडवर्ड द्वितीय को अध्यादेश स्वीकार करने को बाध्य होना पड़ा। किन्तु उसका पक्ष शीघ्र ही प्रबल होने लगा। डिसपैन्सर्स (Despensers) में, बाप और बेटे के रूप में उसे ऐसे दो नये कृपापात्र या मंन्त्री

से भेद रखने वाले सामाजिक वर्गों (Estates) के समान, इंग्लैण्ड में विकास की सम्भावना रखने वाले ये चारों समूह आरम्भ में राजा द्वारा शासन के व्यय के लिए माँगे जाने वाले अनुदानों (Garants) पर अपने वोट पृथक् रूप से दिया करते थे। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि वे प्रायः एक ही सभा में एक साथ बैठा करते थे और यह राजा की पुरानी परिषद् का ही विस्तार मात्र था और इनके अधिकारों की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं थी। असाधारण करों के बारे में उनसे परामर्श लिया जाता था। किन्तु राजा सदैव पूरी पार्लियामेण्ट को बुलाना आवश्यक नहीं समझता था। वह निश्चित रूप से इसे सदैव आवश्यक नहीं समझता था कि वह कानून बनाने अथवा राष्ट्रीय नीति के विषय में नाइट लोगों और पुर-प्रतिनिधियों (Burgesses) से परामर्श करे। १४वीं शताब्दी में, स्पष्ट रूप से पृथक् सामाजिक वर्गों (Estates) में विकसित होने के स्थान पर यह परिषद् लार्ड्स तथा कामन्स के दो सदनों की वास्तविक पार्लियामेण्ट बन गयी। इस पार्लियामेण्ट ने यह अधिकार प्राप्त कर लिया कि उससे सब कानूनों के बारे में परामर्श किया जाय। वह लगभग सारे करों का नियन्त्रण करे और शासन की सामान्य देख-भाल का कार्य करे। इस सारी शताब्दी में पार्लियामेण्ट का विकास बड़ी तेजी से हुआ। वस्तुतः यह अत्यधिक द्रुतगति से हुआ, क्योंकि राष्ट्र अभी तक पर्याप्त रूप से कानूनों का इतना पालन करने वाला नहीं बना था कि वह उस स्वशासन के लिए तैयार होता, जिसके लिए एक लम्बे और कष्टप्रद प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। इस युग के युद्धों और सामाजिक परिवर्तनों द्वारा किये जाने वाले इस अत्यधिक द्रुत विकास का यह परिणाम हुआ कि इससे अगले युग में अराजकता और अव्यवस्था बनी रही।

१. एडवर्ड द्वितीय तथा लैंकास्टर का थामस

एडवर्ड द्वितीय का नीरस राज्यकाल मुख्य रूप से इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि इसने यह प्रदर्शित किया कि इंग्लैण्ड अब तक स्वशासन के लिए तैयार नहीं है, शान्ति तथा व्यवस्था बनाये रखने के लिए उसे एक शक्तिशाली एवं प्रबल राजा की आवश्यकता है। एडवर्ड द्वितीय सक्रिय रूप से दुर्गुणी नहीं था, किन्तु उसमें शक्ति या स्थिरता का अभाव था। वह ओछा और कई बार बच्चों-जैसा जिद्दी हो जाता था और आसानी से दूसरों के प्रभाव में आ जाता था। कुछ तो सुस्ती के कारण और कुछ बैरनों के नियन्त्रण से स्वतन्त्र होने की इच्छा से वह अपने कृपापात्रों की ओर झुका रहता था। इससे उन बड़े बैरनों को आलोचना का अच्छा आधार मिल जाता था, जिन्होंने एडवर्ड प्रथम की शक्ति के प्रति प्रायः नापसन्दगी प्रदर्शित की थी। वे बैरन एक बार पुनः उसी नीति का अनुसरण करना चाहते थे, जिसका अनुसरण उनके पूर्ववर्तियों ने हेनरी तृतीय के राज्यकाल में किया था। किन्तु उनमें से कोई व्यक्ति साइमन-डी-मॉण्ट-जैसा नहीं था। उनका प्रमुख नेता राजा का चचेरा भाई और राज्य का सबसे धनी सरदार लैंकास्टर का अर्ल थामस था। यद्यपि लैंकास्टर की मृत्यु के बाद साधारण जनता ने स्वतन्त्रता के शहीद के रूप में उसकी पूजा की, किन्तु

उसकी इस ख्याति का इस तथ्य के सिवाय अन्य कोई आधार नहीं प्रतीत होता कि वह सरकार का विरोधी था। वस्तुतः वह घोर स्वार्थी और राजा जैसा ही नालायक था।

लैंकास्टर और उसके मित्रों ने पहले यह माँग की कि राजा के कृपापात्र, गैस्कनी के एक उद्धत, हाजिरजवाब और अनुत्तरदायी नाइट-पियर्स गैवस्टन (Piers Gaveston) को देश से निर्वासित किया जाये, क्योंकि गैवस्टन एक विदेशी था और उसके प्रभाव वाले समय में देश का शासन निश्चित रूप से बुरे रूप में हो रहा था। अतः उनकी माँग को जनता का बहुत समर्थन मिला। गैवस्टन तीन बार देश से निकाला गया और तीनों बार वह वापस लौटा। अन्त में लैंकास्टर के प्रबल समर्थक-वारविक के अर्ल ने पाशविक रीति से उसकी हत्या करा दी (१३१२ ई०)। इस बीच में (१३१०) बैरन लोगों ने हेनरी तृतीय के राज्य काल के अपने पूर्ववर्ती लोगों का अनुसरण करते हुए २१ व्यक्तियों की एक समिति नियुक्ति की। ये लार्डव्यवस्थाकार (Lord ordainers) के नाम से प्रसिद्ध हैं। १२५८ ई० की समिति की भाँति इन्हें एक सुधार-योजना बनाने तथा इस बीच में देश की सरकार को चलाने का अधिकार दिया गया। १३११ ई० में इस समिति द्वारा बनाये गये अध्यादेशों की समीक्षा करने के लिए हमें यहाँ रुकने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वस्तुतः ये अध्यादेश कभी कार्य रूप में नहीं लाये गये। इनकी मुख्य व्यवस्थाएँ ये थीं कि पार्लियामेण्ट की बैठक प्रतिवर्ष कम-से-कम एक बार होनी चाहिए और इसे राज्य के बड़े अधिकारियों की नियुक्ति को स्वीकृत करने तथा उन्हें पदच्युत करने का अधिकार होना चाहिए। उनके मन में जिस पार्लियामेन्ट का विचार था, वह विशुद्ध रूप से अथवा कम-से-कम प्रधान रूप से बैरन (Baron) लोगों की संस्था थी। अतः इस योजना का अभिप्राय इससे अधिक कुछ भी नहीं था कि एक अल्पतन्त्रीय समूह (Oligarchical group) द्वारा राजा की सत्ता को अभिभूत किया जाय। इस योजना से इसमें कोई सुधार होने की सम्भावना नहीं थी।

गैवस्टन के तथा अध्यादेशों के बारे में लम्बे विवादों के कारण स्काटिश मामलों में कोई प्रभावशाली हस्तक्षेप न हो सका। इससे राबर्ट ब्रूस को समूचा स्काटलैण्ड जीतने का अवसर मिल गया। अन्त में जब एडवर्ड द्वितीय ने बेनकबर्न के युद्ध में खोये हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया तो लैंकास्टर और उसके प्रमुख अनुयायी इससे बिलकुल अलग रहे। इस बात पर सन्देह किया जाता था कि स्काट लोगों के साथ उनके देशद्रोहपूर्ण सम्बन्ध हैं। आगे चलकर निश्चित रूप से उन्होंने इस प्रकार के देशद्रोहपूर्ण सम्बन्ध रखे। अध्यादेशों के विवाद के बाद के छः वर्ष सम्भवतः इस अभागे राज्य-काल का सबसे अधिक बुरा समय था। इस समय न तो राजा और न ही लैंकास्टर का दल इतना शक्तिशाली था कि वह प्रभावशाली प्रभुत्व को स्थापित कर सके। इन दोनों में से किसी ने भी राजनीतिक होने की योग्यता का प्रदर्शन नहीं किया। १३१८ ई० में, अन्त में एडवर्ड द्वितीय को अध्यादेश स्वीकार करने को बाध्य होना पड़ा। किन्तु उसका पक्ष शीघ्र ही प्रबल होने लगा। डिसपैन्सर्स (Despensers) में, बाप और बेटे के रूप में उसे ऐसे दो नये कृपापात्र या मंन्त्री

मिले, जो वास्तविक योग्यता रखने वाले तथा इंग्लिश बैरन भी थे। १३२२ ई० में लैंकास्टर को बरोब्रिज में हरा दिया गया और बन्दी बना लिया गया तथा देशद्रोही के रूप में उसको मरवा दिया गया।

बरोब्रिज के बाद एडवर्ड का पहला कार्य यार्क में होने वाली पार्लियामेण्ट में अध्यादेशों को रद्द करवाना था। उन्हें इस महत्वपूर्ण आधार पर अवैध घोषित किया गया कि वे नाइट लोगों तथा पुरप्रतिनिधियों से सलाह लिये बिना केवल बैरन लोगों द्वारा बनाये गये हैं और एक अतीव महत्त्वपूर्ण कानून में यह व्यवस्था की गयी कि राजा की जागीर अथवा राज्य के विषय से सम्बन्ध रखने वाले कोई भी कानून तब तक वैध नहीं होंगे, जब तक कि वे उच्च धर्माधिकारियों या प्रिलेट (Prelate) और बैरनों द्वारा तथा राज्य के सामान्य वर्ग (Commonalty of the realm) से स्वीकार न कर लिये जायें। इस प्रकार पहली बार यह घोषणा की गयी कि कानून के निर्माण में समग्र रूप से पार्लियामेण्ट की सहमति आवश्यक है।

लैंकास्टर की पराजय के बाद भी एडवर्ड द्वितीय का शासन पहले की अपेक्षा बहुत थोड़ी मात्रा में क्षमतापूर्ण हुआ। उसके दुःखपूर्ण राज्य-काल का अन्त एक षडयन्त्र से हुआ, जिसका नेतृत्व उसकी रानी ने तथा उसके कृपापात्र रोजर मॉर्टिमर ने किया। उसने राजा को हराने और बन्दी बनाने के बाद पार्लियामेण्ट द्वारा विधिपूर्वक उसको पदच्युत कराया और उसके युवा पुत्र एडवर्ड तृतीय का उसके स्थान पर राज्याभिषेक कराया। इंग्लिश पार्लियामेण्ट इस विषय में अधिक शक्तिशाली धड़े के साधन के रूप में काम कर रही थी। इसकी शक्ति में उस समय यह विलक्षण वृद्धि थी, जबकि उसे इस बात के लिए बुलाया गया कि वह एक राजा को कुशासन के आधार पर वस्तुतः पदच्युत करे। इस प्रकार एडवर्ड द्वितीय के अभागे शासन ने दो रूपों [illegible] के अधिकार को बहुत बढ़ाया और स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता की क्रियात्मक स्थापना के साथ-साथ यह इस काल की प्रधान विशेषता है।

२. एडवर्ड तृतीय तथा पार्लियामेण्ट की शक्ति का विकास

एडवर्ड तृतीय के शासन-काल के प्रथम पाँच वर्षों में शक्ति, इसाबेला तथा मॉर्टिमर के हाथों में रही और यह काल पहले राज्यकाल की भाँति उपद्रवपूर्ण रहा। किन्तु १३३२ ई० में जब युवा राजा ने मॉर्टिमर को हटा दिया और शासन का संचालन अपने हाथों में ले लिया, तो एक बड़े महत्त्वपूर्ण नवयुग का आरम्भ हुआ। यह केवल अथवा मुख्य रूप से इसलिए महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इस समय में स्काटलैण्ड और फ्रांस के साथ लड़ाइयाँ हुईं, किन्तु यह इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि इस समय में पार्लियामेण्ट का बड़ी द्रुत गति से विकास हुआ।

लगभग इस युग के आरम्भ में ही पार्लियामेण्ट ऐसे रूप में प्रकट हुई, जो अगले सारे इतिहास में बनी रही। अब पार्लियामेण्ट लार्ड्स और कामंस के दो सदनों में विभक्त हो गयी और १३३२ ई० में तथा उसके बाद दो पृथक् भवनों में ही लार्ड्स और कामंस

सभा के सदस्य बैठक के लिए एकत्र होते रहे। पादरियों का इस समय जो एक अलग वर्ग बन सकता था, वह चुपचाप समाप्त हो गया। पादरियों का अपना पृथक् धार्मिक सम्मेलन (Convocation) था और वे राष्ट्रीय पार्लियामेण्ट में सम्मिलित होने के स्थान में उसी सम्मेलन में अपने लिए आवश्यक माँगों की पूर्तियों पर वोट देना अधिक पसन्द करते थे। यद्यपि चिरकाल तक उन्हें अपने प्रतिनिधि भेजने के लिए विधिवत् निमन्त्रण दिया जाता रहा, फिर भी उन्होंने अपने प्रतिनिधि कभी नहीं भेजे और शनैः शनैः उनका वोट केवल एक औपचारिकता मात्र ही रह गया और पार्लियामेण्ट के वोट के बाद यह औपचारिकता स्वयमेव पूरी हुई समझी जाती थी। इस प्रकार वे पृथक् दल के रूप में अपनी स्थिति को स्थापित करने में विफल हुए। यह इस बात से भी स्पष्ट है कि आज तक भी इंग्लैण्ड के चर्च का कोई पादरी कामंस सभा का सदस्य नही चुना जा सकता है।

जो जनसमुदाय कुलीनों का वर्ग (Estate of the Nobles) बन सकता था, वह अब निश्चित रूप से लार्ड सभा (House of Lords) बन गया। इसके सदस्यों में वे लोग थे, जिन्हें राजा की परिषद् में निमन्त्रण का लिखित पत्र पाने का आनुवंशिक या सरकारी अधिकार था। किन्तु इसमें वे बिशप तथा बड़े मठाधीश भी सम्मिलित थे, जो वर्गों की कठोर पद्धति के अनुसार पादरियों के वर्ग में सम्मिलित हुए होते। पहले राजा को इस बात में काफी स्वतन्त्रता थी कि वह जिसे चाहे, विशेषतः कम महत्त्व रखने वाले बैरनों को, अपनी इच्छानुसार पार्लियामेण्ट में बुला सके और अपनी भूमि को खो देने वाला बैरन राजा से पार्लियामेण्ट के लिए निमन्त्रण का ऐसा लिखित आदेश प्राप्त करने का अधिकारी नहीं रहता था। अब यह अधिकार अधिक कठोर रीति से आनुवंशिक हो गया। यदि राजा किसी नये बैरन को बुलाता था तो रिवाज़ यह आदेश देता था कि वह उसके उत्तराधिकारियों को भी बुलाता रहेगा। अतः हाउस ऑफ़ लार्ड्स की सदस्यता की सुस्पष्ट परिभाषा होने लगी। यह केवल राजा द्वारा नये आनुवंशिक अधिकार रखने वाले लार्डों को बनाने से ही बढ़ सकती थी, यह एक कुलीन वंश की समाप्ति से ही घट सकती थी।

अन्ततः नाइट (Knight) और पुरप्रतिनिधि (Burgesses) अब निश्चित रूप से हाउस ऑफ़ कामंस के रूप में संगठित हुए। उनका दो पृथक् सामाजिक वर्गों में तथा दो विभिन्न सदनों में बैठने वाले पृथक् वर्गों के रूप में विकास आसानी से हो सकता था, लगभग कुछ ऐसा विकास भी हुआ, जैसा कुछ अन्य देशों में हुआ था। किन्तु यह बड़े सौभाग्य की बात थी कि वे दोनों सम्मिलित बने रहे, क्योंकि इससे हाउस ऑफ़ कामंस की शक्ति और प्रभाव सुरक्षित रहा। नाइट तथा पुरप्रतिनिधियों के एक ही सदन में साथ-साथ इकट्ठे बैठने का पहला मुख्य कारण यह था कि उन्हें जिले की अदालत में एक साथ मिलकर काम करने की आदत पड़ चुकी थी। दूसरा कारण यह था कि ऊन के व्यापार में और उस पर लगायी जाने वाली भारी चुंगी के मामले में अपने सामान्य स्वार्थ के कारण वे घनिष्ठ रूप से संयुक्त हो चुके थे। नाइट लोग न केवल जमीन्दार भद्र वर्ग का, अपितु जिले के समूचे समुदायों का प्रतिनिधित्व करते थे तथा पुरवासी अनेक छोटे व्यापारिक नगरों का प्रतिनि-

अन्त तक ही (१३९५ ई०) हाउस ऑफ़ कामंस को कर लगाने में अधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेने वाला स्वीकार किया गया। किन्तु कम-से-कम यह तो स्पष्ट है कि समग्र रूप में पार्लियामेण्ट सब सामान्य करों पर वास्तविक नियन्त्रण प्राप्त कर रही थी। यद्यपि राजा की नियमित आमदनी अब भी इतनी अधिक थी कि यदि मितव्यय से उसका प्रबन्ध किया जाता तो शान्ति के समय बिना टैक्स लगाये शासन का कार्य चल सकता था। पार्लियामेण्ट भी इस युग में यह दावा करने लगी थी कि वह जिस धन के व्यय के लिए वोट देती है, उस पर उसे कुछ देखभाल का अधिकार है। पार्लियामेण्ट बार-बार यह बात जानने का आग्रह करती थी कि यह रुपया किस कार्य के लिए चाहिए। १३४१ई०—जैसे अनेक अवसरों पर इसने यह माँग की कि हिसाब-किताब का लेखा निरीक्षण इस बात का निश्चय करने के लिए किया जाये कि धन का व्यय उन्हीं प्रयोजनों के लिए किया गया है जिनके लिए इन्हें दिया गया था।

कानून-निर्माण के सम्बन्ध में पार्लियामेण्ट की शक्ति अभी तक पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुई थी। १३२२ ई० के परिनियम (Statute) के अनुसार कोई भी कानून पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों की स्वीकृति के बिना नहीं बनाये जा सकते थे। किन्तु अब तक राजा और उसके अधिकारी ही वास्तव में इन कानूनों की रूपरेखा बनाया करते थे। हाउस ऑफ़ कामंस अधिक-से-अधिक यही कर सकता था कि वह किसी विषय पर कानून बनाने के लिए राजा को आवेदन पत्र दे और राजा की धन की माँगों के साथ यह शर्त लगा दे कि वैसा कानून बनाने पर ही यह माँग स्वीकार की जायेगी। राजा ऐसा वचन देता था और अभीष्ट कानून पार्लियामेण्ट के सत्र की समाप्ति पर राजा के अधिकारियों द्वारा तैयार किये गये एक परिनियम में सम्मिलित कर दिया जाता था। यह बात बिलकुल सन्तोषजनक नहीं थी। राजा का कानून पार्लियामेण्ट के इरादे के साथ सदैव संगति नहीं खाता था। फिर भी समूचे तौर से न केवल पार्लियामेण्ट का, अपितु हाउस ऑफ़ कामन्स का भी प्रभाव इस युग के कानून निर्माण पर बहुत अधिक था। पुर-प्रतिनिधियों के प्रभाव के कारण प्रधान रूप से एडवर्ड तृतीय ने इंग्लिश व्यापार तथा उद्योग के संरक्षण और प्रोत्साहन के कानून बनाने में बड़ी क्रियाशीलता दिखायी और यह उसके राज्यकाल की सबसे अधिक प्रशंसनीय विशेषता है। नाइट लोगों का प्रभाव—मजदूरों के आनुक्रमिक कानूनों में देखा जा सकता है, जिनसे इस बात का प्रयत्न किया गया था कि किसानों को उनकी उस पुरानी वश्यता की स्थिति में पुनः वापस लाया जाय, जिससे वे निकलकर भाग रहे थे। यह स्मरण रखना चाहिए कि हाउस ऑफ़ कामन्स एक कुलीन-तन्त्रीय संस्था थी और इसमें देहात के भद्रवर्ग और व्यापारियों के शक्तिशाली मध्यम वर्गों के स्वार्थों का प्राधान्य था।

सम्भवतः इन वर्षों में पार्लियामेण्ट का सबसे महत्वपूर्ण कार्य और विशेषता यह थी कि वह पोप के दावों का और उन वसूलियों का निरन्तर विरोध कर रही थी, जो समूचे इंग्लैण्ड में बड़ा असन्तोष उत्पन्न कर रही थीं। वस्तुतः पोपतन्त्र इस समय उस

धित्व करते थे। ये दोनों मिलकर वास्तविक अर्थ में समूचे इंग्लिश राष्ट्र के लिए बोल सकते थे। इंग्लैण्ड के लिए यह असाधारण सौभाग्य की बात थी कि इसके हाउस ऑफ़ कामन्स ने यह रूप धारण किया। फ्रांस जैसे कुछ स्थानों में, छोटे कुलीन सरदार बड़े सरदारों के साथ मिले और एरागोन—जैसे कुछ स्थानों में पृथक् सामाजिक वर्ग बने रहे। केवल इंग्लैण्ड में ही समग्र रूप से राष्ट्र के लिए एक सभा का विकास हुआ।

एडवर्ड तृतीय के राज्यकाल (१३३२ से १३७० ई०) के पहले युग में, जब वह फ्रेंच युद्धों में महान कीर्ति प्राप्त कर रहा था, उस समय पार्लियामेण्ट के लार्ड्स एवं कामन्स सभा के दोनों सदनों के अधिकार निरन्तर बढ़ रहे थे और अधिक स्पष्टता से इनकी परिभाषा की जा रही थी। इसका कारण यह था कि युद्ध के समय राजा के लिए यह असम्भव था कि वह अपनी ही जागीर की आय से अपना निर्वाह करे, जैसाकि मध्यकालीन राजाओं से आशा की जाती थी और राजा को विशेष अनुदान माँगने पड़ते थे। पार्लियमेण्ट इस अवसर का लाभ उठाते हुए अपने अनुदानों के साथ शर्तें लगा देती थी। इस प्रकार वह अपनी शक्ति को बढ़ाती जाती थी। पार्लियामेण्ट के अनुदान प्राय: एक सादे आय-कर के रूप में होते थे। इसमें नगरवासियों से आय का १०वाँ भाग और ग्रामीण जमींदारों से आय का १५वाँ भाग लिया जाता था। अनुदान दिये जाने पर हर समय प्रत्येक व्यक्ति की आमदनी का नया अन्दाज लगाना सम्भव नहीं था। अत: शुरू में ही १०वें और १५वें भाग को ३९ हजार पौण्ड की निर्धारित राशि पर निश्चित कर दिया गया और प्रत्येक जिला तथा नगर सदैव वही राशि दिया करता था। कई बार पार्लियामेण्ट ऊन अथवा अन्य वस्तुओं पर रिवाज़ के अनुसार लगने वाली दर से अतिरिक्त कर का भी अनुदान स्वीकार किया करती थी। किन्तु इस क्षेत्र में राजा ऊन को निर्यात करने वाले व्यापारियों के साथ निजी सौदे तय क के पार्लियामेण्ट की व्यवस्था में परिवर्तन करने का एक उपाय बरत सकता था। १३६२ ई० में इसे एक कानून द्वारा रोक दिया गया। इसमें यह व्यवस्था की गयी थी कि पार्लियामेण्ट के अतिरिक्त न तो व्यापारियों को और न ही किसी अन्य व्यक्ति को ऐसे टैक्स लगाने का कोई अधिकार है। इसके बाद से पार्लियामेण्ट सीमाशुल्कों तथा प्रत्यक्ष करों को प्रभावशाली रीति से नियन्त्रित करती रही। कई बार राजा सामन्ती भूस्वामी (Feudal landowner) द्वारा निजी सेवा के बदले में दिये जाने वाले धन (Scutage)—जैसे विशेष सामन्ती करों (Feudal dues) को वसूल किया करता था। कई बार वह नगरों और राजकीय भूमियों पर लगाये जाने वाले टैलेज (Tallage)— जैसे पुरानी [illegible] को भी वसूल किया करता था जिनके बारे में पुराने राजा हमेशा यह दावा करते थे कि उनको नगरों से यह कर वसूल करने का अधिकार है। किन्तु १३४० ई० में जब राजा को कुछ अनुदानों की अत्यधिक आवश्यकता थी, उस समय इन अनुदानों को प्राप्त करने की शर्त के रूप में एक दूसरे कानून द्वारा यह व्यवस्था की गयी थी कि पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों की सामान्य सहमति के बिना राष्ट्र पर कोई टैक्स नहीं लगाया जाना चाहिए।

दोनों सदनों ने इन अनुदानों के निर्माण में समान भाग लिया। इस शताब्दी के

अन्त तक ही (१३९५ ई०) हाउस ऑफ़ कामंस को कर लगाने में अधिक महत्त्वपूर्ण भाग लेने वाला स्वीकार किया गया। किन्तु कम-से-कम यह तो स्पष्ट है कि समग्र रूप में पार्लियामेण्ट सब सामान्य करों पर वास्तविक नियन्त्रण प्राप्त कर रही थी। यद्यपि राजा की नियमित आमदनी अब भी इतनी अधिक थी कि यदि मितव्यय से उसका प्रबन्ध किया जाता तो शान्ति के समय बिना टैक्स लगाये शासन का कार्य चल सकता था। पार्लियामेण्ट भी इस युग में यह दावा करने लगी थी कि वह जिस धन के व्यय के लिए वोट देती है, उस पर उसे कुछ देखभाल का अधिकार है। पार्लियामेण्ट बार-बार यह बात जानने का आग्रह करती थी कि यह रुपया किस कार्य के लिए चाहिए। १३४१ई०—जैसे अनेक अवसरों पर इसने यह माँग की कि हिसाब-किताब का लेखा निरीक्षण इस बात का निश्चय करने के लिए किया जाये कि धन का व्यय उन्हीं प्रयोजनों के लिए किया गया है जिनके लिए इन्हें दिया गया था।

कानून-निर्माण के सम्बन्ध में पार्लियामेण्ट की शक्ति अभी तक पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुई थी। १३२२ ई० के परिनियम (Statute) के अनुसार कोई भी कानून पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों की स्वीकृति के बिना नही बनाये जा सकते थे। किन्तु अब तक राजा और उसके अधिकारी ही वास्तव में इन कानूनों की रूपरेखा बनाया करते थे। हाउस ऑफ़ कामंस अधिक-से-अधिक यही कर सकता था कि वह किसी विषय पर कानून बनाने के लिए राजा को आवेदन पत्र दे और राजा की धन की माँगों के साथ यह शर्त लगा दे कि वैसा कानून बनाने पर ही यह माँग स्वीकार की जायेगी। राजा ऐसा वचन देता था और अभीष्ट कानून पार्लियामेण्ट के सत्र की समाप्ति पर राजा के अधिकारियों द्वारा तैयार किये गये एक परिनियम में सम्मिलित कर दिया जाता था। यह बात बिलकुल सन्तोषजनक नहीं थी। राजा का कानून पार्लियामेण्ट के इरादे के साथ सदैव संगति नहीं खाता था। फिर भी समूचे तौर से न केवल पार्लियामेण्ट का, अपितु हाउस ऑफ़ कामन्स का भी प्रभाव इस युग के कानून निर्माण पर बहुत अधिक था। पुर-प्रतिनिधियों के प्रभाव के कारण प्रधान रूप से एडवर्ड तृतीय ने इंग्लिश व्यापार तथा उद्योग के संरक्षण और प्रोत्साहन के कानून बनाने में बड़ी क्रियाशीलता दिखायी और यह उसके राज्यकाल की सबसे अधिक प्रशंसनीय विशेषता है। नाइट लोगों का प्रभाव—मजदूरों के आनुक्रमिक कानूनों में देखा जा सकता है, जिनसे इस बात का प्रयत्न किया गया था कि किसानों को उनकी उस पुरानी वश्यता की स्थिति में पुनः वापस लाया जाय, जिससे वे निकलकर भाग रहे थे। यह स्मरण रखना चाहिए कि हाउस ऑफ़ कामन्स एक कुलीन-तन्त्रीय संस्था थी और इसमें देहात के भद्रवर्ग और व्यापारियों के शक्तिशाली मध्यम वर्गो के स्वार्थों का प्राधान्य था।

सम्भवतः इन वर्षों में पार्लियामेण्ट का सबसे महत्वपूर्ण कार्य और विशेषता यह थी कि वह पोप के दावों का और उन वसूलियों का निरन्तर विरोध कर रही थी, जो समूचे इंग्लैण्ड में बड़ा असन्तोष उत्पन्न कर रही थीं। वस्तुतः पोपतन्त्र इस समय उस

समय से कहीं अधिक दु:खदायी वित्तीय दावे कर रहा था, जो इसने उस समय किये थे जबकि इसका अध्यात्मिक प्रभाव उच्चतम शिखर पर पहुँचा हुआ था। किन्तु राजा और पार्लियामेण्ट की पोपविरोधी नीति का मुख्य कारण इंग्लिश लोगों की विकासशील राष्ट्रीय भावना में निहित था। इंग्लिश लोगों को यह समझ में नहीं आता था कि भले ही पोप की इच्छा हो, फिर भी इंग्लैण्ड का धन देश से बाहर क्यों भेजा जाय। १३६६ ई० में पार्लियामेण्ट ने उस कर को देने से साफ इनकार कर दिया, जो उस समय से निरन्तर माँगा जाता था, जब राजा जॉन पोप का वशवर्ती (Vassal) बना था। १३५१ ई० में पार्लियामेण्ट के अनेक प्रार्थना पत्रों से पोप को इंग्लिश चर्च के विभिन्न पद विदेशी पादरियों को देने से रोकने का पहला कानून (Statute of Provisors) बना। १३५३ ई० में उन्होंने एक दूसरा कानून (Statute of Praemunire) बनवाया। इसका उद्देश्य रोम को भेजी जाने वाली अपीलों को तथा इंग्लैण्ड में पोप के आदेशों के प्रवेश को मर्यादित करना था। यह सब यह प्रदर्शित करता है कि राष्ट्रीय पार्लियामेण्ट विदेशी हस्तक्षेपों से राष्ट्र को मुक्त कराने के लिए बड़ी प्रयत्नशील थी। वह चर्च की दशा के उस सामान्य असन्तोष को को ठीक समझती थी, जो सर्वत्र व्यापक रूप से स्वागत किये जाने वाले विक्लिफ़ आन्दोलन से उत्पन्न हुआ था।

३. महाभियोग (Impeachment) का आविष्कार : नगरशासक या जस्टिस ऑफ़ पीस (Justice of Peace)

एडवर्ड तृतीय के अन्तिम १० या १२ वर्ष निराशा के तथा बढ़ते हुए असन्तोष के वर्ष थे। युद्ध में हार हो रही थी। १३७० ई० के बाद से फ्रेंच लोग इंग्लिश लोगों द्वारा प्राप्त किये गये प्रदेशों को तेजी से पुन: जीत रहे थे। करों का भार पहले के समान बहुत अधिक था और यह विजय होने पर भी कम नहीं किया गया था। १३८१ ई० के विद्रोह में भड़क उठाने वाला किसानों का गम्भीर असन्तोष प्रतिदिन बढ़ रहा था। राजा अपने समय से पहले बूढ़ा हो गया था और वह क्षुद्र आनन्दों में पूर्ण रूप से निमग्न हो गया था। उसका सबसे बड़ा बेटा कृष्ण राजकुमार (Black Prince) सख्त बीमार था और १३७६ ई० में मर गया तथा शासन की बागडोर राजा के चौथे बेटे लैंकास्टर के ड्यूक गौण्ट के जॉन ने बलपूर्वक अपने हाथ में ले ली। वह इंग्लैण्ड का सबसे धनी अभिजात व्यक्ति था और उसने विवाह द्वारा लैंकास्टार घराने की सब ज़मीनों को प्राप्त कर लिया था। राज्य के बड़े पदों पर आसीन व्यक्ति उसके वशवर्ती थे और वे इन पदों का दुरुपयोग कर रहे थे। यद्यपि गौण्ट के जॉन ने चर्च पर आक्रमण करके और विक्लिफ को संरक्षण देकर जनता से समर्थन पाने का प्रयास किया, किन्तु वह अत्यन्त अप्रिय था। व्यापक रूप से यह विश्वास किया जाता था कि उसका लक्ष्य गद्दी पाना था। यदि कृष्ण राजकुमार और उसका युवा बेटा मर जाते तो भी राजा के तीसरे पुत्र का वंशज-मार्च का अर्ल उसकी अपेक्षा राजगद्दी का अधिक निकटवर्ती उत्तराधिकारी था।

इन परिस्थितियों में हाउस ऑफ़ कामंस ने एक ऐसा साहसपूर्ण कार्य आरम्भ किया,

जैसा पहले कभी नही किया गया था। १३७६ ई० में हाउस ऑफ़ कामंस के अध्यक्ष सर पीटर डी-ला मेयर के नेतृत्व में "अच्छी पार्लियामेण्ट (Good Parliament)" ने शासन की बुराइयों की चुनौती दी और गौण्ट के जॉन के अनुयायी दो अधिकारियों के विरुद्ध राज्य के सर्वोच्च कानूनी न्यायालय के रूप में हाउस ऑफ़ लार्ड्स के सम्मुख नियमित रूप से दोषारोपण किया। महाभियोग (Impeachment) की प्रक्रिया का यह प्रथम उपयोग था। इस प्रक्रिया का उद्देश्य राष्ट्र के संरक्षक के रूप में कार्य करने वाले हाउस ऑफ़ कामन्स द्वारा हाउस ऑफ़ लार्ड्स के समक्ष खतरनाक अधिकारियों पर मुकदमे चलाना है। जब हाउस ऑफ़ लार्ड्स ने इन आरोपों की जाँच की और दोनों मन्त्रियों को दण्ड दिया तो 'महाभियोग' के उस महान अस्त्र का निश्चित रूप से निर्माण हो गया और वह हाउस ऑफ़ कामंस के शस्त्रागार में रख लिया गया। यह व्यवस्था सरकार पर नियन्त्रण प्राप्त करने का बड़ा महत्त्वपूर्ण साधन बन गयी। "अच्छी पार्लियामेण्ट" ने सुधारों की एक विस्तृत योजना तैयार की, जिससे गौण्ट का जॉन बड़ा प्रकुपित हुआ। ऐसा कहा जाता है कि इस योजना को सुनकर वह चिल्ला पड़ा कि "ये नीच और अधम नाइट लोग किस बात की कोशिश कर रहे हैं ? क्या वे यह समझते हैं कि वे इस देश के राजा या राजकुमार हैं।"

अच्छी पार्लियामेण्ट का वास्तविक कार्य चिरस्थायी नही रहा। अगले वर्ष १३७७ ई० में एक दूसरी पार्लियामेण्ट ने इसके सब निर्णयों को पलट दिया। ऐसा प्रतीत होता था कि गौण्ट के जॉन की शक्ति पहले की भाँति सुदृढ़ हो गयी है। पार्लियामेण्ट के रुख मे यह आकस्मिक परिवर्तन प्रथम दृष्टि में समझ में न आने वाला प्रतीत होता है। यह हमे तभी बुद्धिगम्य होता है, जब हमें यह पता लगता है कि १३७७ ई० में हाउस ऑफ़ कामंस का सभापति वास्तव में गौण्ट के जान का गुमाश्ता था और अच्छी पार्लियामेण्ट का सभापति सर पीटर-डी-ला-मेयर मार्च के अर्ल का गुमाश्ता था। इससे यह भी पता लगता है कि महान सरदारों के प्रतिस्पर्द्धी, दरबारी गुट पार्लियामेण्ट की बढ़ती हुई शक्ति का उपयोग किस प्रकार कर रहे थे। इन गुटों ने यह जान लिया था कि चुनावों को किस प्रकार प्रभावित किया जा सकता है। नाइट और पुर-प्रतिनिधि या बर्जेस यद्यपि अपने स्वार्थों को समझते थे, तथापि उनको न तो इतना ज्ञान था और न ही ऐसा आवश्यक साहस था जिससे वे महान सरदारों के गुटों का सामना करने के लिए अपने पैरों पर खड़े हो सकें। चूँकि बड़े सरदार यह समझ चुके थे कि वे पार्लियामेण्ट पर नियन्त्रण प्राप्त कर सकते है और इसका उपयोग अपने प्रयोजनों की पूर्ति के लिए कर सकते हैं, अतः उन्हें हाउस ऑफ़ कामन्स की शक्ति की वृद्धि से वैसी डाह नहीं थी, जिसकी आशा की जा सकती थी। इसी कारण से ही पार्लियामेण्ट की नाममात्र की सर्वोच्च सत्ता के द्रुत विकास ने उस अव्यवस्था को तनिक भी दूर नही किया, जो इस समय इंग्लैण्ड के लिए खतरा बनी हुई थी, अपितु इसके विपरीत उसने इस खतरे को बढ़ाया। एडवर्ड तृतीय के राज्यकाल में यह पहले ही स्पष्ट हो चुका था। रिचर्ड द्वितीय तथा लैंकास्टर घराने के राजाओं के समय में यह और भी अधिक स्पष्ट हो गया। इस समय पार्लियामेण्ट की, और विशेषतः हाउस ऑफ़ कामन्स की शक्तियाँ इतनी तेजी से विकसित हो रही थीं कि इसके सदस्य उसका पूरा

उपयोग करने की योग्यता नहीं रखते थे, अतः इसका परिणाम अराजकता का प्रसार था। फिर भी पार्लियामेण्ट के स्वरूप और अधिकारों का निर्धारण किया जाना भविष्य के लिए एक बहुत बड़ी देन थी और इस युग की एक विशेषता थी। आगे वह समय आने वाला था, जब इन अधिकारों का प्रयोग उचित रीति से किया जाने वाला था।

यद्यपि नाइट अथवा देहात के भद्र-व्यक्ति अभी तक पार्लियामेन्ट के सदस्यों के रूप में अपनी शक्तियों का प्रयोग बुद्धिमत्ता से करने में अभी तक समर्थ नही थे, तो भी एक ऐसा क्षेत्र था, जिसमें वे देर से कार्य कर रहे थे तथा उन्होंने अच्छा कार्य करना सीख लिया था। यह स्थानीय स्वशासन का क्षेत्र था। हेनरी द्वितीय के समय से राजा नाइट लोगों को जिला अदालतों के कार्य में अधिकाधिक लगा रहा था। एडवर्ड प्रथम ने यह आवश्यक बना दिया था कि जिला अदालतें शान्ति के संरक्षक का कार्य करने वाले नाइटों का चुनाव करें। १३२७ ई० के बाद से बड़े पैमाने पर "कान्स्टेबल कहलाने वाले ये लोग" राजा द्वारा मनोनीत किये जाते थे और प्रत्येक जिले के लिए उनका एक समूह नामज़द किया जाता था। उन्हें जल्दी ही छोटे-छोटे न्याय-सम्बन्धी कार्य सौपे गये। १३६० ई० में पार्लियामेण्ट के एक कानून ने यह व्यवस्था की कि अब से प्रत्येक जिले में एक लार्ड और तीन या चार अन्य योग्य व्यक्ति होने चाहिए। ये शान्तिकाल के न्यायाधीश हों, इन्हें शान्ति भंग करने वालों को पकड़ने, उनकी जाँच करने और उन्हें दण्ड देने का अथवा उन्हें राजा के दौरा करने वाले न्यायधीशों के समक्ष जाँच के लिए जेल में भिजवाने का अधिकार होगा। देश के प्रमुख भद्र लोगों में से राजा द्वारा मनोनीत किये गये शान्ति के न्यायाधीशों के समूहों ने अधिकांश प्रयोजनों के लिए इसके बाद से शेरिफ का और उसके जिला-न्यायालय का स्थान ले लिया। शनैः शनैः उन पर इतने नये कार्य डाले जाते रहे कि अन्त में वे अपने जिलों में राष्ट्रीय सरकार के प्रमुख प्रतिनिधि बन गये। उन्हें कोई वेतन नहीं दिया जाता था। यद्यपि वे राजा द्वारा मनोनीत राजकीय अभिकर्त्ता थे, तथापि आस-पास का प्रमुख भद्रवर्ग होने के कारण उन जिलों की आवश्यकताओं और सम्मतियों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखते थे, जिन पर उन्हें शासन करना होता था। इस कारण उनका शासन सच्चे अर्थों में प्रत्येक जिले के स्वाभाविक नेताओं द्वारा स्वशासन था। अगली छः शताब्दियों में ये न्यायाधीश एक सबसे अधिक विशिष्ट और बहुमूल्य इंग्लिश संस्था बने रहे। फ्रांस-जैसे अन्य देशों में इंग्लिश न्यायाधीशों द्वारा किये जाने वाला कार्य राजकीय सरकार द्वारा प्रान्तों में भेजे गये वेतनभोगी विशेषज्ञों द्वारा किया जाता था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसे विशेषज्ञ प्रायः अधिक योग्य होते थे, किन्तु वे राजा पर भी अधिक निर्भर होते थे। वे अधिक आसानी से निरंकुश शासन के साधनों के रूप में परिवर्तित किये जा सकते थे। इसके बाद से इंग्लिश राजाओं को वेतन न लेने वाले स्वतन्त्र तथा स्थानीय भद्र लोगों से काम लेना पड़ता था, न कि वेतनभोगी पेशेवर प्रशासकों से। इसने उनके लिए यह बहुत कठिन बना दिया कि वे वास्तव में निरंकुश शक्ति की स्थापना कर सके। फिर भी इस पद्धति की स्थापना का यह अभिप्राय था कि पार्लियामेण्ट के सदस्य जिन लोगों में से चुने जाते थे, उनकी बड़ी संख्या को वास्तविक प्रशासनात्मक कार्य का एक व्यापक और विभिन्न प्रकार का अनुभव था।

इसने इंग्लिश पार्लियामेन्टों को क्रियात्मक और काम करने वाली ऐसी संस्थाएँ बना दिया जो यह जानती थी कि वे क्या बात कर रही हैं। इस प्रकार शान्ति के न्यायाधीशों की स्थापना इंग्लिश सरकार की पद्धति के विकास में एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण घटना सिद्ध हुई, यद्यपि यह बड़ी मौन रीति से और लगभग अलक्षित रूप से हुई।

४. पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता और कृषकों का विद्रोह

यदि एडवर्ड तृतीय के बाद एक शक्तिशाली राजकुमार अपनी युवावस्था में राजगद्दी पर बैठता तो सम्भव था कि एडवर्ड के राज्यकाल में पार्लियामेण्ट द्वारा प्राप्त किये गये विलक्षण अधिकारों को सफलतापूर्वक चुनौती दी जाती। किन्तु नया राजा १० वर्ष का लड़का था। उसके राज्याभिषेक के कारण गौण्ट के जॉन का पतन हो गया और राज्य के कार्यों का प्रवन्ध एक संरक्षक परिषद् (Council of Regency) द्वारा किया जाने लगा। यह परिषद् पार्लियामेण्ट की उपेक्षा नहीं कर सकती थी। इसका एक बड़ा कारण यह था कि इस समय फ्रांस के साथ युद्ध इंग्लैण्ड को बड़ी हानि पहुँचा रहा था और विरोधी फ्रेंच वेड़े इंग्लिश चैनल का नियन्त्रण कर रहे थे और ससेक्स तथा आइल ऑफ़ वाइट पर भी हमले कर रहे थे। ये विफलताएँ सरकार को बदनाम कर रहीं थी और वह धन की बड़ी राशियाँ पार्लियामेण्ट से माँगने के लिए बाधित की जा रही थी, अतः उन्हें उस समय झुकना पड़ा, जब पार्लियामेण्ट ने इस परिषद् के पुनर्निर्माण की माँग की और यहाँ तक दावा किया कि भविष्य में चांसलर, कोषाध्यक्ष और राज्य के अन्य बड़े अधिकारी पार्लियामेण्ट द्वारा नियुक्त किये जायें। कुछ समय बाद पार्लियामेण्ट ने समूची परिषदों को तथा राज्य के सभी अफ़सरों को वास्तव में पदच्युत कर दिया। शासन करने वाली सरकार पर प्रत्यक्ष नियन्त्रण का यह कार्य पार्लियामेण्ट की शक्ति के विकास में उच्चतम विन्दु को सूचित करता है। यह अवस्था स्थायी रूप से नहीं बनायी रखी जा सकी। यद्यपि भविष्य के लिए इसने पूर्वोदाहरणों को प्रस्तुत किया, तथापि इसके परिणाम सन्तोषजनक नहीं थे।

पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता युद्ध मे सफलता नहीं लायी; युद्ध कई वर्षो तक विफलताओं की शृंखला मात्र बना रहा। पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता के इसी युग मे १३८१ ई० में किसानों का भीषण विद्रोह भड़क उठा। वस्तुतः इसका तात्कालिक कारण युद्ध के व्यय को पूरा करने के लिए इन वर्षो की सर्वशक्तिशाली पार्लियामेण्ट द्वारा आविष्कृत कर लगाने की नयी पद्धति थी। यह नया कर प्रति व्यक्ति से लिया जाने वाला एक मुण्ड कर (Poll-tax) था। यह १५ वर्ष से अधिक आयु के प्रत्येक नर नारी द्वारा दिया जाना था। १३७७ ई० में यह प्रथम बार वसूल किया गया और १३८० ई० में अधिक कठोर रीति से यह पुनः लिया गया। यह ऐसे आधार पर लिया जा रहा था, जिससे गरीब लोगों पर कर का भार धनी लोगों पर पड़ने वाले भार से अनुपात में कहीं अधिक था।

यद्यपि विद्रोह का तात्कालिक कारण यह अन्यायपूर्ण कर और इसके लागू करने मे की जाने वाली कठोरता थी, तथापि इस विद्रोह के पीछे कुछ अन्य शिकायतें भी थी। मजदूरों के कानूनों के विरुद्ध किसानों को शिकायतें थीं। पार्लियामेण्ट इन कानूनों को निरन्तर

कड़ा बना रही थी। किसानों ने कृषिदासप्रथा (Villeinage) के पूर्ण उन्मूलन कीं माँग की थी। शहरों की निम्न श्रेणियों को भी शिकायतें थीं। इन लोगों को अधिकांश मामलों में बड़े व्यापारियों के अल्पतन्त्रों ने समान अधिकारों से वंचित कर रखा था और ये व्यापारी अधिकांश इंग्लिश नगरों या बरों (Boroughs) के शासन पर एकाधिकार स्थापित करने लगे थे। सम्भवतः इन सबके अतिरिक्त एक बड़ा कारण यह था कि उस उसय शासक श्रेणियों, बड़े सरदारों और बड़े पादरियों द्वारा की जाने वाली बरबादी, भोगविलास, अभिमान और अन्याय के विरुद्ध व्यापक रोष था। इस भावना ने अपने को अत्यधिक लोकतन्त्रीय विचार की उल्लेखनीय धारा के रूप में प्रकट किया, जो कुछ हद तक विक्लिफ की शिक्षा से पोषित हुई थी। किन्तु ये इससे भी अधिक उग्र रूप से कैण्ट के पागल पुरोहित जान बाल की आवेशपूर्ण निन्दा में अभिव्यक्त हुई। यह विक्लिफ का आन्दोलन महत्त्वपूर्ण होने से बहुत पहले से ही अपना कार्य कर रहा था। पागल पुरोहित ने घोषणा की कि "इंग्लैण्ड की स्थिति तब तक कभी अच्छी नहीं हो सकती जब तक कि सम्पत्ति पर सबका समान अधिकार न होगा और जब तक भूदास और जमीन्दार बने रहेंगे। हम जिन्हें जमीन्दार या लार्ड कहते हैं, वे हमारी अपेक्षा किस अधिकार से अधिक बड़े हैं। यदि सब लोग एक ही पिता-माता-आदम और हव्वा से उत्पन्न हुए हैं तो धनी यह कैसे सिद्ध कर सकते हैं कि वे हमसे अधिक अच्छे हैं। वे मखमल के कपड़े पहनते हैं और समूर से अपने को गर्म रखते हैं, जबकि हम चिथड़ों से अपना तन ढँकते हैं। उनके पास शराब, मसाले और बढ़िया रोटी है, और हमारे पास जई की रोटियाँ और पीने के लिए पानी है। हमारी मेहनत से ही उनको यह स्थिति प्राप्त है।" वर्तमान सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देने की यह समूची भावना संक्षिप्त रूप से उस प्रसिद्ध द्विपदी में निहित है, जिसका प्रयोग जानबाल ने ब्लैकहीथ में विद्रोह करने वालों को उपदेश देते हुए किया, 'जब आदम जमीन खोद रहा था और हव्वा सूत कात रही थी, उस समय भद्रपुरुष कौन था ?'

यह अधिकार से वंचित व्यक्तियों का और उन व्यक्तियों का विद्रोह था, जो अब तक सदैव नम्रतापूर्वक वशवर्ती बने हुए थे, जबकि राजा और बड़े सरदार उनके आधार पर लड़ रहे थे। राज्य में इनका कार्य परिश्रम करना और कुशासन के अन्तिम भार को बर्दाश्त करना और सहना था। पार्लियामेण्ट की बढ़ती हुई शक्ति में उन्हें कोई हिस्सा नही मिला था और यदि उन्हें यह हिस्सा मिल जाता तो उन्हें यह ज्ञान न होता कि वे इसका किस प्रकार प्रयोग करें। किन्तु वे शनैः शनै. स्वतन्त्र हो रहे थे, अतः वे कम आज्ञापालक होते जा रहे थे। यद्यपि इस प्रकार का भीषण उपद्रव कभी भी अच्छे परिणाम नहीं उत्पन्न करता, तथापि यह एक अच्छी बात थी कि इंग्लिश जनता में नवजीवन का संचार हो और वह अधिक स्वतन्त्र एवं उच्चतर जीवन के साधनों की माँग करे।

विद्रोह कैण्ट और एसैक्स में आरम्भ हुआ और इन जिलों के मनुष्यों ने ही एक भूतपूर्व सिपाही वाट-टाइलर (Wat Tyler) के तथा उत्साही पुरोहित जान बाल के नेतृत्व में लन्दन की ओर प्रयाण किया। उस समय समूचा देश क्रान्ति के लिए तैयार था, अतः विद्रोह आग की तरह उत्तर की ओर स्कारबरो तक और पश्चिम में विंचेस्टर तक

फैल गया। विद्रोही सर्वत्र जमींदारों के घर जलाने लगे, भूदासों की सेवाओं के लिखित प्रमाण नष्ट करने लगे और छोटे शहरों के कुछ महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को डराने लगे। वाट टाइलर के नेतृत्व में केण्ट के लोगों ने बड़ी विलक्षण चतुराई के साथ अपना संगठन किया और अपने को लन्दन का स्वामी बना लिया। जब राजा और उसके मन्त्रियों ने किले में शरण ली, उस समय उन लोगों ने लेम्बिथ में आर्क बिशप के महल को गौण्ट के जॉन के सेवाय के महाप्रासाद को और उस टेम्पल (Temple) नामक मुहल्ले को जला डाला, जहाँ घृणित वकील रहा करते थे और अनेक विदेशी व्यापारियों के घर थे। शुरू में सरकार उसी तरह हक्की-बक्की रह गयी, जैसे अपने रेवड़ के आकस्मिक विद्रोह पर गड़रिया भौचक्का रह जाता है। फिर भी प्रशंसनीय साहस के साथ युवा राजा माइल एण्ड नामक स्थान पर विद्रोहियों के झुण्ड से मिला और उसने उनके द्वारा चाही गयी प्रत्येक वस्तु के लिए वायदा करते हुए उनमें से अधिक अच्छे लोगों को तितर बितर हो जाने की प्रेरणा की, तो भी, उनमें से अधिक विवेकशून्य लोगों की एक बड़ी संख्या का लन्दन पर नियन्त्रण बना रहा। वे लूटपाट और हत्याकाण्ड मचाते रहे तथा बालक राजा के एक अन्य भाग्यशाली साहसिक कृत्य से ये लोग छिन्न-भिन्न कर दिये गये। इसी बीच में प्रतिरोध करने वाली सेनाएँ इकट्ठी कर ली गयीं और विद्रोह का दमन आरम्भ हुआ। कुछ जिलों में लड़ाई चली और इसके बाद अनेक व्यक्तियों को प्राणदण्ड दिये गये। वर्ष की समाप्ति से पहले ही विद्रोह को पूरी तरह से दबा दिया गया। समग्र रूप से, यदि हम इस विद्रोह से उत्पन्न किये जाने वाले आतंक पर विचार करें, तो विद्रोहियों के साथ उस युग के मानदण्ड के अनुसार बहुत अधिक कठोरता का व्यवहार नहीं किया गया तथा दिसम्बर में इस विद्रोह में भाग लेने वाले सभी व्यक्तियों को आम माफी (Amnesty) दी गयी।

विद्रोहियों के समूह की राजा की जिन प्रतिज्ञाओं से छिन्न-भिन्न किया गया था, वे कभी पूरी नहीं की गयीं। सम्भवतः वे युद्ध की चालबाज़ी से (Ruse de gurre) से अधिक कुछ भी नहीं थी। यद्यपि सरकार ने पार्लियामेण्ट को यह सुझाव दिया कि भूदास प्रथा को समाप्त कर दिया जाये, तथापि अमीरों और नाइट लोगों ने इस सुझाव पर विचार करने से कतई इनकार कर दिया। उनका कहना था कि भूदास उनकी अपनी सम्पत्ति हैं, किसी को भी यह अधिकार नहीं है कि वह उन्हें उनसे छीन सके। महान विद्रोह पूर्ण रूप से विफल हुआ प्रतीत होता है। वस्तुतः इसने किसानों की मुक्ति की प्रक्रिया को तीव्र बनाने के लिए इसके अतिरिक्त कुछ नहीं किया कि इसने कुछ जमींदारों को यह प्रेरणा दी कि वे झगड़ालू भूदासों के साथ व्यवहार के कष्टदायक कार्य से मुक्ति पाने के अनुकूल अवसरों का लाभ उठायें। फिर भी मुक्ति का यह आन्दोलन निरन्तर बढ़ता चला गया। यह अगली शताब्दी के अन्त तक लगभग पूरा हो गया।

५. प्रतिक्रिया और क्रान्ति

महान विद्रोह के बाद के वर्षों में अपने को साहसी सिद्ध करने के बाद युवा राजा ने शासन में अधिक क्रियाशील भाग लेना शुरू किया। अब वह पन्द्रह वर्ष का था और

उसका विवाह हो चुका था। उसने पार्लियामेण्ट के नियन्त्रण से अपने को मुक्त करने का प्रयत्न किया। पार्लियामेण्ट द्वारा नियुक्त किये गये मन्त्रियों को पदच्युत किया; जिन्हें उसका कृपापात्र कहा जाता था, ऐसे अपनी पसन्द के अन्य व्यक्तियों को मन्त्री बनाया। इनमें एक व्यक्ति हल नगर के व्यापारी का एक बेटा माइकेल-डी-लापोल था। उसने युद्ध में एवं शासन में एडवर्ड तृतीय की चिरकाल तक सेवा की थी और अब वह उन्नति करते हुए सफोक के अर्ल के पद तक पहुँच गया था। यह इस बात का एक मनोरंजक उदाहरण था कि उस समय बैरन लोग किस प्रकार निम्न वर्ग के लोगों में से बनाये जा रहे थे। राजा की नीति राजकीय सत्ता की पुन: स्थापना करने की थी, क्योंकि व्यवस्था पुन: स्थापित करने का एक मात्र साधन यही था। वह यह भी चाहता था कि फ्रांस के साथ घोर तथा अलाभकर युद्ध को समाप्त कर दिया जाय। उसके साथ अत्यधिक प्राचीन नार्मन वंश के एक युवा कुलीन ऑक्सफोर्ड के अर्ल वेरे का सम्बन्ध था। इस नये राजकीय दल को अपने प्रयोजनों को पूर्ण करना उस समय अधिक सुगम प्रतीत हुआ, जब कि गौण्ट का जॉन अपने लिए कैस्टाइल की गद्दी का दावा करने के असम्भव कार्य की चेष्टा के लिए स्पेन गया।

किन्तु विरोधी दल के नेता के रूप में गौण्ट के जॉन का स्थान उसके छोटे भाई ग्लास्टर के ड्यूक ने ग्रहण किया। बैरनों तथा पार्लियामेण्ट द्वारा समर्थन पाने पर इसने सफोक के विरुद्ध उग्र संघर्ष आरम्भ कर दिया। हाउस ऑफ़ कामन्स ने यह घोषणा की कि जब तक सफोक को पदच्युत नहीं किया जायेगा, तक कोई भी अनुदान स्वीकार नहीं किये जायेंगे। गर्म मिज़ाज वाले युवा राजा ने क्रोधपूर्वक यह उत्तर दिया कि वह उनके आदेश पर अपनी रसोई के क्षुद्रतम बर्तन माँजने वाले नौकर को भी नहीं निकालेगा। फिर भी उसे सफोक को पदच्युत करने के लिए बाधित होना पड़ा (१३२६ ई०), उस पर शीघ्र ही महाअभियोग चलाया गया और उसे जेल में डाल दिया गया। ग्लास्टर ने तब सुधार समिति की नियुक्ति करने की बैरन लोगों की पुरानी विधि का आश्रय लिया। रिचर्ड ने विरोध का दृढ़ निश्चय किया और वेरे को सेनाएँ एकत्र करने का निर्देश दिया। किन्तु आकस्मिक राज्य-परिवर्तन का यह प्रयत्न उस समय सर्वथा निष्फल हो गया, जब टेम्स नदी पर रेडकोट के पुल पर वेरे को हरा दिया गया (१३८७ ई०) और ग्लास्टर का दल विजयी हुआ। लार्ड्स एपेलेण्ट के नाम से प्रसिद्ध इस दल के पाँच व्यक्तियों ने रिचर्ड के प्रमुख परामर्शदाताओं के विरुद्ध राजद्रोह के दोष लगाये और १३८८ ई० में निर्लज्ज रीति से अपने समर्थकों से भरी हुई पार्लियामेण्ट बुलायी गयी। इसे 'निर्दयी पार्लियामेण्ट' इसलिए कहा जाता है कि उसने ऐसी अनेक कानूनी हत्याएँ करवायीं, जिससे ग्लास्टर के सभी प्रधान विरोधी लगभग समाप्त कर दिये गये। क्लर्कों तथा सहायक शैरिफों तक को भी नहीं छोड़ा गया। राजा का पुराना शिक्षक, साहसी पुराना नाइट तथा कृष्ण राजकुमार का युद्ध का साथी, सर साइमन बर्ले तलवार के घाट उतार दिया गया। विजयी गुट ने सरकारी पदों को अपने में बाँटना शुरू किया। यद्यपि उनकी सबसे बड़ी शिकायत सार्वजनिक धन की बरबादी की थी, तथापि उन्होंने वास्तव में आज्ञापालक पार्लियामेण्ट से पाँच लार्ड एपेलेण्टों (Lords Apellents) के लिए २० हजार पौण्ड की राशि स्वीकार करायी।

इस संघर्ष ने एक प्रकार से, पहले से अधिक स्पष्टता के साथ पार्लियामेण्ट की सत्ता की स्थापना की और यह भी स्पष्ट किया कि किस प्रकार पार्लियामेण्ट आसानी से बैरन लोगों की महत्त्वाकांक्षा के उपकरण के रूप में परिणत की जा सकती है। रिचर्ड द्वितीय को कुछ समय के लिए झुकना पड़ा। किन्तु वह अपने उस अपमान को कभी नहीं भूला, जिसका उसे शिकार बनाया गया था। शीघ्र ही उसकी चंचल भावना जाग्रत हुई। अगले ही वर्ष १३८६ ई० में उसने यह घोषणा की कि वह शासन का नियन्त्रण पुन: अपने हाथ में ले लेगा। अपनी रौद्रता तथा लालच से बदनाम हो चुके ग्लास्टर के गुट को इसका विरोध करने का साहस नही हुआ। इसके साथ ही गौण्ट का जॉन इस समय तक लौट आया था। उसमें चाहे कोई भी दोष क्यों न हों, वह ग्लास्टर की अपेक्षा अधिक अच्छा आदमी था।

अगले आठ वर्षों में रिचर्ड ने बड़ी सफलता और विलक्षण मृदुता के साथ शासन किया। उसने अपने शत्रुओं के विरुद्ध कोई कदम नहीं उठाये, किन्तु अपना असन्तोष गुप्त रीति से जारी रखा। अन्त में वह भीषण फ्रेंच युद्ध को १३८६ ई० में एक विराम-सन्धि द्वारा समाप्त करने में सफल हुआ और इसके बाद १३९६ ई० की सन्धि हुई। वह कहा करता था कि वह पार्लियामेण्ट के साथ मिलकर शासन करने को तैयार है, तो भी उसने अपने वचनों के अनुसार आचरण किया। उसने अपने बड़े अधिकारियों को विधिपूर्वक इसलिए त्यागपत्र देने की भी अनुमति दी कि पार्लियामेण्ट उनके आचरण पर विचार कर सके। यद्यपि कामन्स सभा शिकायत करती रही, तब भी कोई उग्र संघर्ष नहीं हुआ। ऐसा प्रतीत होता था कि मर्यादित राजतन्त्र की एक पद्धति स्थापित हो गयी है। किन्तु अब भी एक महान संकट बना हुआ था। अधिक धनी बैरन लोग अब भी वेतनभोगी, वर्दीधारी सैनिकों के विशाल समूह से घिरे हुए थे और ये राज्य की शान्ति के लिए निरन्तर बना रहने वाला खतरा थे। कई बार कामंस सभा ने यह प्रार्थना की कि यह प्रथा कानून द्वारा निषिद्ध कर दी जानी चाहिए, किन्तु सरकार इतनी शक्तिशाली नहीं थी कि वह इस नीति को क्रियारूप में परिणत करती। शस्त्रधारी सैनिक दलों से सुसज्जित बैरन लोगों से आतंकित रहने वाले मर्यादित राजतन्त्र की सत्ता सदैव खतरे में थी।

इन वर्षों की प्रमुख घटना विक्लिफ के आन्दोलन का शक्तिशाली होना तथा पोपतन्त्र की राजनीतिक शक्ति के प्रति राष्ट्र की शत्रुता में वृद्धि होना है। अपने जीवन के आरम्भिक भाग में विक्लिफ चर्च के भोग-विलास की आलोचना से ही सन्तुष्ट था और इसमें उसे राष्ट्र के अधिकांश भाग की सहानुभूति प्राप्त थी। किन्तु १३७६ ई० में या १३८० ई० में वह खुल्लम-खुल्ला एक नास्तिक (Heretic) बन गया था। उसने तत्त्व-परिवर्तन या ट्रांससबस्टैन्शिएशन (Transubstantiation)[1] का सिद्धान्त अस्वीकार किया।

---

१. यह ईसाइयत का एक विशेष सिद्धान्त है। इसके अनुसार यह माना जाता है कि भगवान ईसामसीह द्वारा दिये गये अन्तिम भोज की स्मृति में मनाये जाने वाले एक धार्मिक उत्सव (Eucharist) में यह कहा जाता है कि जिस प्रकार ईसामसीह द्वारा अपने शिष्यों को दिये गये अन्तिम भोज में ईसामसीह ने उनसे यह कहा था कि तुम इस भोज में दिया जाने वाला भोज्य पदार्थ और शराब मेरे शरीर और रक्त के रूप

इसी समय के लगभग उसने बाइबल का अनुवाद इंग्लिश में आरम्भ किया और अपने "निर्धन पुरोहितों" को प्रचार के लिए भेजना शुरू किया। अब राजनीतिज्ञों ने उसको संरक्षण देना बन्द कर दिया। चर्च के कट्टरपन्थियों ने नास्तिकता के दमन के लिए माँग करनी शुरू की। १३८२ ई० में विक्लिफ के सिद्धान्तों को पार्लियामेण्ट ने विधिपूर्वक अवैध घोषित किया। किन्तु अधिक क्रियाशील बिशपों को इस बात से बड़ा दुःख था कि विक्लिफ के अनुयायियों का कोई गम्भीर दमन नहीं किया जा रहा था। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय इन लोगों से भरा हुआ था। अनेक अमीर और प्रभावशाली नाइट इनके उद्देश्य का समर्थन कर रहे थे और दरबार में भी ये प्रबल थे। यहाँ रिचर्ड की अत्यधिक प्रिय रानी बोहीमिया की ऐन स्पष्ट रूप से इनकी मित्र थी। उसके अनुयायियों द्वारा ही विक्लिफ के सिद्धान्त बोहमिया में पहुँचे। इन सिद्धान्तों ने यहाँ हस (Huss) के उपदेशों पर गम्भीर प्रभाव डाला और १५वीं शताब्दी के आरम्भ में बोहीमिया की महान क्रान्ति' को उत्पन्न करने में सहायता दी। लोलार्ड कहलाने वाले विक्लिफ के अनुयायी संख्या में तेजी से बढ़ने लगे और इन्हीं वर्षों में विक्लिफ के "निर्धन पुरोहित" सारे इंग्लैण्ड में फैल रहे थे। पार्लियामेण्ट में विक्लिफवादी नाइट लोगों के एक समूह ने चर्च में तत्काल सुधार करने की माँग की (१३९५ ई०) और प्रायः राज्य की आवश्यकताओं के लिए चर्च की जमीनों को जब्त करने पर बल दिया जाने लगा। पार्लियामेण्ट समग्र रूप से विक्लिफवादी सम्मतियों को स्वीकार करने की स्थिति से बहुत परे थी। किन्तु यह पहले किसी भी समय की अपेक्षा इस समय इस बात पर अधिक दृढ़निश्चयी थी कि सिद्धान्त के अतिरिक्त, अन्य सभी मामलों में इंग्लिश चर्च को पोपतन्त्र के नियन्त्रण से मुक्त किया जाना चाहिए। १३९३ ई० में पार्लियामेण्ट ने Statute of Praemunire को अन्तिम कानूनी रूप दिया। इस कानून ने पोप के किसी आदेश-पत्र (Papal bull) को प्राप्त करने या प्रकाशित करने वाले अथवा रोम से किसी अन्य आदेश को पाने वाले व्यक्ति के लिए कानून के संरक्षण से वंचन अथवा जब्ती (Forfeiture) और कारावास के दण्डों की व्यवस्था की। संक्षेप में, इन वर्षों में ऐसा प्रतीत होता था कि मानों १६वीं शताब्दी का धार्मिक सुधार पहले ही होने की आशा रखता है। स्वभावतः बिशप और पादरी बहुत अधिक भयभीत हो गये और वे शनैः शनैः राजा से भी पराङ्मुख होने लगे, क्योंकि उसने इस भयानक आन्दोलन को कुचलने के लिए कोई शक्तिशाली कदम नहीं उठाये थे।

१३९७ ई० में रिचर्ड द्वितीय ने अन्त में यह निश्चय किया कि यह आन्दोलन उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आया है, जो १३८६-१३८८ ई० में विफल हो चुका था। इस उद्देश्य को उसने अपनी ऊपर से प्रतीत होने वाली मृदुता के बावजूद कभी नहीं छोड़ा था। यह उद्देश्य बैरन लोगों के और पार्लियामेण्ट के नियन्त्रण को हटाना तथा राजमुकुट की सत्ता

में ग्रहण कर रहे हो और इस प्रकार मुझसे अभिन्न हो, उसी प्रकार यूकेरिस्ट के उत्सव में भी इसी प्रकार की प्रार्थना करके अन्न और शराब को ईसामसीह के शरीर और रक्त के रूप में ग्रहण किया जाता है। सामान्य अन्न और शराब का इस प्रकार ईसा मसीह के दिव्य शरीर में बदल जाने का सिद्धान्त ही तत्त्वपरिवर्तन कहलाता है।

को पुनः स्थापित करना था। उसने अपने कुछ पुराने विरोधियों विशेषतः गौण्ट के जॉन के बेटे अपने चचेरे भाई हेनरी के साथ मैत्री कर ली। ग्लास्टर और उसके प्रधान समर्थकों को एकदम पकड़ लिया गया। ग्लास्टर को पहले तो एक पाप स्वीकार करने के लिए प्रेरणा दी गयी और बाद में उसकी हत्या कर दी गयी। उसके अनुयायी उनके ही दस वर्ष पुराने ढंगों की भीषण पुनरावृत्ति करते हुए महाराजद्रोह के अपराधी समझे गये; यद्यपि उन्हें विधिवत् माफी दी गयी, फिर भी उनमें से एक की हत्या कर दी गयी। जिस प्रकार पहले ग्लास्टर ने निर्दय पार्लियामेण्ट को अपने समर्थकों से भर दिया था, उसी तरह अब इस खुशामदी पार्लियामेण्ट को राजा ने अपने समर्थकों से भर दिया। इस पार्लियामेन्ट ने राजा की सभी आज्ञाओं का पूरा पालन किया। राजा के जीवन-काल की अवधि के लिए कई बड़े टैक्सों को वोट देकर पास किया और यह वस्तुतः इस बात पर सहमत हो गयी कि यह अपने सभी अधिकार राजा के मित्रों से चुनी हुई एक समिति को सौंप दे। इस प्रकार न केवल बैरन लोगों के खतरनाक गुट को कुचल दिया गया, अपितु इसके उपकरण के रूप में प्रयुक्त की जाने वाली पार्लियामेण्ट को भी निलम्बित कर दिया गया। डर्बी के हेनरी तथा नारफोक के ड्यूक ही अब लार्ड एपेलेण्ट के समूह के सदस्यों में से बचे हुए थे। इन दोनों के बीच में हुए एक झगड़े ने रिचर्ड को इन दोनों को देश से निर्वासित करने का बहाना दे दिया। जब १३९९ ई० में गौण्ट का जॉन मर गया तो रिचर्ड ने निर्वासित हेनरी को उसकी सब जमीनें विरासत में पाने की अनुमति देने के स्थान पर इन सभी जमीनों को छीन लिया। यदि रिचर्ड ने अपने अकस्मात् पाये प्रभुत्व का उपयोग बुद्धिमत्तापूर्वक किया होता तो यह असम्भव नहीं था कि उसने एक ऐसी स्थायी निरंकुश पद्धति की स्थापना की होती, जो बैरन लोगों की महत्त्वाकांक्षों से सुरक्षा पाने की आवश्यकता के कारण सर्वथा न्यायोचित प्रतीत होती थी। इसे सम्भवतः जनता का काफी समर्थन मिलता, क्योंकि १३८१ ई० की घटनाओं के बाद राष्ट्र के अनेक तत्त्वों को यह प्रतीत होता था कि पार्लियामेण्ट विशिष्ट श्रेणी के स्वार्थों से शासित होने वाले एक विशेष वर्ग की सभा है। युक्तियुक्त रीति से यह सोचा जा सकता था कि ऐसी संस्था के शासन की अपेक्षा निरंकुश राजा के शासन से अधिक न्याय मिलने का अवसर था। इसी कारण के आधार पर शासन में राष्ट्रीय सहयोग की पद्धति की दिशा में की गयी प्रगति का बलिदान किया जा सकता था। किन्तु सम्भवतः सौभाग्यवश रिचर्ड ने अपनी शक्ति का ऐसी रीति से दुरुपयोग किया कि इससे व्यापक असन्तोष उत्पन्न हो गया। वह केवल उन्हीं छोटे सरदारों पर भरोसा रख सकता था, जिन्हें उसने स्वयं ऊँचा उठाया था और धनी बनाया था। सैनिकों के विशाल दलों को रखने वाले, अधिकतम शक्तिशाली, सभी परिवार राजा के विरोधी थे। नाइट लोग पार्लियामेण्ट के व्यावहारिक दमन से भयभीत थे और वे स्थानीय सरकार के शासन-यन्त्र का नियन्त्रण कर रहे थे। चर्च के बड़े व्यक्ति विक्लिफ के अनुयायियों के मत लोलार्डी (Lollardy) के दमन में दिखायी गयी रिचर्ड की नर्मी के कारण उससे पराङ्मुख हो चुके थे।

१३९९ ई० में निर्वासित हेनरी (जो अब लैंकास्टर का ड्यूक था) ने रिचर्ड के आयरलैण्ड जाने पर उसकी इंग्लैण्ड में अनुपस्थिति के अवसर का लाभ उठाया और वह

यार्कशायर के समुद्रतट पर उतरा। शीघ्र ही उसको बड़ी सेनाओं और विशेषतः उत्तरी बैरनों का समर्थन मिला। देश के अधिक बड़े भाग ने आक्रान्ता के सम्मुख तत्परता के साथ समर्पण कर दिया और जब रिचर्ड बड़ी जल्दी में वापस लौटा तो उसने यह पाया कि अब सब प्रकार का विरोध निष्फल था। उसने विजयी चचेरे भाई के आगे समर्पण किया और राजगद्दी छोड़ने को सहमत हो गया। इसी बीच में एक पार्लियामेण्ट बुलायी गयी और व्यावहारिक सर्वसम्मति के साथ इसने रिचर्ड द्वितीय के पदच्युत किये जाने की घोषणा की। यद्यपि गद्दी का निकटतम उत्तराधिकारी मार्च का युवा अर्ल था, किन्तु इसने लैंकास्टर के हेनरी को राजा स्वीकार किया।

सौ वर्ष के भीतर यह दूसरा अवसर था जबकि राजा को पार्लियामेण्ट के अधिकार से पदच्युत किया गया था। किन्तु १३२७ ई० में एक निर्विवाद उत्तराधिकारी विद्यमान था, १३९९ ई० में नया राजा प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी नहीं था और अपने स्वत्व की वैधता के लिए वह पार्लियामेण्ट के कानून का ऋणी था। इस कारण वह और उसके अगले दो उत्तराधिकारी पार्लियामेण्ट पर इतनी अधिक मात्रा में अवलम्बित थे, जैसा अब तक कभी नही हुआ था। १३९८ ई० में यह बिलकुल सम्भव प्रतीत होता था कि पहली शताब्दी में प्राप्त की गयी उच्च स्थिति से पार्लियामेण्ट का पतन हो जायेगा, परन्तु १३९९ ई० में यह पहले की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो गयी। १३९९ ई० की क्रान्ति का यह एक प्रमुख पहलू है, किन्तु इसके कुछ अन्य पहलू भी थे। हेनरी चतुर्थ को वस्तुतः गद्दी पार्लियामेण्ट के आदेश की अपेक्षा राजकीय सेना को पराभूत करने में समर्थक बड़े सरदारों के सैनिक दलों से मिली थी और यह एक असंगलसूचक तथ्य था। वह अपनी सफलता के लिए कुछ अंशों में चर्च के कट्टर बिशपों का ऋणी था, अतः उनकी सेवाओं का कुछ प्रतिफल अवश्य दिया जाना चाहिए था।

६. मर्यादित लोकतन्त्र का लैंकास्टरी परीक्षण

हेनरी चतुर्थ के राज्यकाल का स्वरूप उसके राज्याभिषेक के समय की परिस्थितियों से निश्चित हुआ। चूंकि उसका स्वत्व असुरक्षित था, इसलिए उसे अपने राज्यकाल के पहले नौ वर्षों में विद्रोह और षडयन्त्रों की एक अविच्छिन्न शृंखला का सामना करना पड़ा। इनमें अधिक उल्लेखनीय वेल्स का महान राष्ट्रीय विद्रोह था। इसका नेता ओवन ग्लैण्डोवर नामक एक वैल्श भद्रव्यक्ति था। राज्यकाल के आरम्भ में ही उसने उपद्रव करना आरम्भ कर दिया था। १४०१ ई० से १४०६ ई० तक वह वेल्स का पूरा स्वामी बना रहा, उसके विरुद्ध प्रतिवर्ष लड़ाइयों की एक लम्बी शृंखला संचालित करनी पड़ी। इन युद्धों में बाद में हेनरी पंचम बनने वाले प्रिंस ऑफ़ वेल्स को लड़ाई की शिक्षा मिली। किन्तु ओवन एक कुशल नेता था और वह दृढ़तापूर्वक अपना अधिकार बनाये रहा। उसकी शक्ति वास्तव में १४०९ ई० तक भंग नहीं हुई। इसके बाद भी वह कई वर्ष तक पहाड़ों में कानून के संरक्षण से वंचित व्यक्ति के रूप में मुकाबला करता रहा और १४१५ ई० में अविजित अवस्था में ही उसकादेहान्त हुआ। इससे भी अधिक गम्भीर विद्रोह नार्थम्बरलैण्ड की पर्सीज (Percies) जाति का था। ये

लोग १३९९ ई० में हेनरी चतुर्थ के घनिष्टतम मित्र थे, किन्तु अपने पुरस्कारों से असन्तुष्ट थे। अविवेकी हॉट्सपुर के नेतृत्व में उन्होंने ओवन ग्लैण्डोवर के साथ मिलने का प्रयत्न किया, किन्तु १४०३ ई० में वे श्रूयूसबरी की घमासान लड़ाई में हरा दिये गये। लेकिन हॉट्सपुर का पिता देर तक उपद्रवी बना रहा।

इन लम्बे संघर्षों ने यह प्रदर्शित किया कि अपने शस्त्रधारी सैनिकों के दलों से प्राप्त की जाने वाली बड़े सरदारों की सैनिक शक्ति कितनी खतरनाक थी। किन्तु हेनरी चतुर्थ एक ठोस परिश्रमी और योग्य राजकुमार था और १४०९ ई० तक ऐसा प्रतीत होता था कि उसने प्रत्येक खतरे पर विजय पा ली है और अपने वंश को राजगद्दी पर सुरक्षित रूप से बिठा लिया है।

चर्च के साथ उसकी मैत्री के कारण उसे सहिष्णुता की उस नीति को उलटना पड़ा, जिसका अनुसरण रिचर्ड द्वितीय ने विक्लिफ के मतानुयायियों के सम्बन्ध में किया था। इस समय इंग्लैण्ड के इतिहास में पहली बार धार्मिक अत्याचार का युग आरम्भ हुआ। पादरियों के धर्म-सम्मेलन की माँग पर नास्तिकों के लिए अग्निदाहदण्ड (De haeretico comburendo) का कानून स्वीकार किया गया। इस कानून ने नास्तिकता के लिए आग में जलाकर मारने का मृत्युदण्ड निश्चित किया। पार्लियामेण्ट ने इस पर कोई आपत्ति नही की। किन्तु हेनरी चतुर्थ राजनीतिक उद्देश्यों के कारण अत्याचार करने वाला था, न कि धर्मान्धता के कारण। उसके राज्यकाल में विक्लिफ के बहुत कम अनुयायी लोलार्ड्स जलाये गये। उसके निष्ठुरहृदय बेटे हेनरी पंचम के शासन में ही अत्याचार वस्तुतः भीषण हुआ।

उसके राज्यकाल की प्रमुख विशेषता वह विलक्षण पूर्णता है, जिसके साथ इस समय पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता स्थापित हुई। हेनरी चतुर्थ न केवल अपने राजकुमुट के लिए पार्लियामेण्ट का ऋणी था, अपितु उसे इस बात के लिए बाधित होना पड़ा कि वह अपना समर्थन करने वाले सरदारों को पुरस्कारों के रूप में बहुत-सी राजकीय भूमियाँ प्रदान करे। इससे पार्लियामेण्ट के अतिरिक्त अन्य स्रोतों से होने वाली उसकी आमदनी बहुत कम हो गयी, क्योंकि वह निरन्तर युद्ध में लगा रहा, अतः उसे नियमित अनुदानों के लिए पार्लियामेण्ट पर निर्भर रहना पड़ता था। यद्यपि ये अनुदान बहुत उदारता से दिये जाते थे, किन्तु इनके साथ बड़ी कठोर शर्तें लगा दी जाती थी। कामंस सभा ने इस अत्यधिक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त की स्थापना की कि धनराशि की माँग पूरी करने से पहले शिकायतें दूर होनी चाहिए। उन्होंने धन के समुचित व्यय को देखने के लिए अपने कोषाध्यक्षों की नियुक्ति पर आग्रह किया। उन्होंने राजा का परिजनवर्ग बहुत कम कर दिया और उसके वैयक्तिक व्यय में भी कटौती की। वे प्रायः इस बात पर बल देते थे कि राजा को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चर्च की ज़मीनों को जब्त कर लेना चाहिए। यह ऐसा पग था, जो वह चर्च के अपने समर्थकों को नाराज़ किये बिना नही उठा सकता था। कामन्स सभा के सदस्यों ने व्यय के ब्योरे की जाँच के लिए जाँच-आयोग नियुक्त किये। वे अत्यधिक कठोर स्पष्टता के साथ उसकी नीति की आलोचना करते थे। उन्होंने राजकीय परिषद् पर भी कड़ा नियन्त्रण रखा। यह परिषद् रिचर्ड द्वितीय के आरम्भिक वर्षों की

भाँति हेनरी पंचम के राज्यकाल के अधिकांश भाग में पार्लियामेण्ट पर पूर्ण रूप से आश्रित थी। राजा को अपनी परिषद की स्वीकृति के बिना कोई भी कदम उठाने के लिए स्पष्ट रूप से मना कर दिया गया था। इसका क्रियात्मक अभिप्राय यह था कि राजा अब कार्य-पालिका (Executive) का स्वतन्त्र अध्यक्ष नहीं रहा था और कार्यपालिका की शक्ति अब पार्लियामेण्ट के अधीन रहने वाले एक प्रकार के मन्त्रिमण्डल में चली गयी थी। १४०६ ई० के कानून की '३१ धाराओं' का ऐसा प्रभाव था। इन धाराओं के साथ पार्लियामेण्ट की शक्ति एडवर्ड प्रथम की मृत्यु के बाद एक शताब्दी से भी कम समय में अपने चरम शिखर पर पहुँच गयी। सबसे बड़ी बात यह है कि पार्लियामेण्ट ने अपनी मौलिक निर्बलता को देखते हुए कामंस सभा के चुनावों में शेरिफ़ लोगों द्वारा हस्तक्षेप को निषिद्ध बना दिया, क्योंकि इनके हस्तक्षेप से पहली बहुत-सी पार्लियामेण्टों को विशेष दलों के समर्थकों से भरा जाना सम्भव हुआ था। कामंस सभा ने बार-बार यह माँग की थी कि सरदारों को इतना अधिक खतरनाक बनाने वाली पद्धति अर्थात उनके द्वारा वर्दी तथा वृत्ति देकर रखे जाने वाले सैनिक दलों की व्यवस्था (Livery and maintainance) के विरुद्ध कानून बनाया जाय।

संक्षेप में, ऐसा प्रतीत होता था कि इंग्लैण्ड का शासन निश्चित रूप से एक बहुत मर्यादित राजतन्त्र बन गया है और इसमें अन्तिम सत्ता पार्लियामेण्ट के पास है। घटनाओं का अगला क्रम इस बात का भीषण प्रमाण देने वाला था कि इंग्लैण्ड अभी इस पद्धति के लिए तैयार नहीं है और लैंकास्टरी परीक्षण जैसाकि इसे कहा जाता है, समय से पहले की वस्तु था। राजा को जिस हीन परिस्थिति में डाल दिया गया था, उसे राजा के द्वारा स्वयमेव स्वीकार किये जाने की बहुत कम आशा रखी जा सकती थी। हेनरी चतुर्थ के उत्तराधिकारी हेनरी पंचम ने शीघ्र ही अपनी शक्ति सुदृढ़ करने के लिए उस पद्धति से प्रयास किया, जिससे राजा प्रायः कोशिश किया करते थे। यह पद्धति विदेशी विजयों की कीर्तियों की ओर अपनी जनता का ध्यान बँटाना था।

शेक्सपियर की प्रतिभा ने हेनरी पंचम का चित्रण उदार साहस, औदार्य और देशभक्ति के उच्च आदर्श के रूप में किया है और उसे राष्ट्रीय वीर बना दिया है। इतिहास का हेनरी पंचम इस गौरवपूर्ण चित्र के साथ बहुत कम मेल खाता है। वह एक साहसी आदमी और एक प्रशंसनीय सिपाही था। किन्तु वह निर्दयी रीति से क्रूर हो सकता था जैसाकि वह उस समय हुआ जबकि एगिनकोर्ट (Agincourt) में उसने कैदियों के निष्ठुर हत्याकाण्ड का आदेश दिया अथवा जब उसने विक्लिफ के मतानुयायी शहीद, जॉन ब्रेडबी को आग की लपटों से निकाले जाने का आदेश दिया, क्योंकि उसकी पीड़ा में करा-हने की आवाज ऐसी प्रतीत हुई कि वह अपने सिद्धान्त को छोड़ने को तैयार है। किन्तु जब वह अपने मत पर दृढ़ सिद्ध हुआ तो उसे पुनः आग की लपटों में झोंक दिया गया। हेनरी कुछ धार्मिक मतान्धता वाला था, किन्तु उसकी इन उक्तियों में ढोंग को ढूँढ़ना कठिन नहीं है, जब उसने विशुद्ध विजय के लिए न्याय का रत्ती-भर अंश न होते हुए भी फ्रांस के विरुद्ध युद्ध किया और यह कहा कि वह फ्रेंच लोगों को उनके पापों का दण्ड देने के लिए

भगवान का साधन बना हुआ था। अपनी युवावस्था में लम्पट बने रहने वाले इस व्यक्ति ने हेनरी चतुर्थ के अन्तिम वर्षों में शक्ति के लिए अपनी लालसा के कारण अपने पिता को बहुत कष्ट दिया था। किन्तु अपने राज्याभिषेक के समय से उसने अपनी भावनाओं पर प्रबल नियन्त्रण रखा और सब नियमों का पालन किया। उसके जीवन में किसी उदार कार्य का, अथवा किसी स्वाभाविक भावना का उल्लेख पाना बड़ा कठिन है। वह जिस किसी कार्य को लेता था, उसमें प्रवल सिद्धान्त से न टलने वाला तथा योग्य सिद्ध होता था। अपने विचार के अनुसार, वह धार्मिक था, फिर भी उसका व्यक्तित्व सहानुभूतिशून्य था।

वह प्रत्यक्ष रूप से सुप्रतिष्ठित राजगद्दी का उत्तराधिकारी बना। किन्तु उसके पहले दो वर्षों के उपद्रवों ने लैंकास्ट्रियन वंश की वास्तविक असुरक्षा को प्रकट कर दिया। १४१४ ई० में एक वास्तविक अथवा काल्पनिक, लोलार्ड षडयन्त्र का भण्डाफोड़ हुआ, जो अनेक क्रूर वधों से कुचल दिया गया। ये उपद्रव लैंकास्ट्रियन राजाओं की उस अत्याचारी नीति का परिणाम थे, जिसको हेनरी पंचम ने अपने पिता की अपेक्षा भी अधिक व्यवस्थित रीति से चलाया था। इससे भी अधिक भयावह कैम्ब्रिज और स्कोप का वह षडयन्त्र था, जिसका उस समय पता चला जबकि हेनरी एगिनकोर्ट की लड़ाई के लिए जहाज पर चढ़ने वाला था। कैम्ब्रिज का अर्ल हेनरी का चचेरा भाई और यार्क के ड्यूक का बेटा था। उसने एडवर्ड तृतीय के पूरे आनुवंशिक उत्तराधिकारी मार्च के युवा अर्ल की बहिन से शादी की थी। उसका यह षडयन्त्र था कि वह अपने साले को वेल्स में ले जाय और वहाँ राजगद्दी के दावेदार के रूप में अपना विद्रोह का झण्डा खड़ा करे। इस संकट का निराकरण सुगमता से हो गया और षडयन्त्रकारियों का सिर काट दिया गया। किन्तु इस घटना ने यह प्रदर्शित किया कि दरबारी गुटों के बड़े कुलीन सरदार और उनकी सशस्त्र सेनाएँ अब भी खतरा बने हुए थे।

हेनरी पंचम के राज्य-काल की बड़ी घटना उसका फ्रांस में युद्ध को जानबूझकर पुनः शुरू करना तथा इस युद्ध में प्राप्त की गयी उसकी शानदार सफलता है। युद्ध के पुनः आरम्भ होने से बेचैन रहने वाले बड़े सरदारों को कुछ काम मिला तथा उनके अनुयायियों को भी कुछ काम मिला। यह निस्सन्देह इस युद्ध को शुरू करने का एक उद्देश्य था। युद्ध ने एक अन्य प्रयोजन भी पूरा किया। इसने राजा की प्रतिष्ठा को उच्चतम बिन्दु तक पहुँचा दी, पार्लियामेण्ट ने लगभग उत्साह के साथ आवश्यक धन को अपने वोट द्वारा पास कर दिया और उसने ऐसी सरकार के मामलों में हस्तक्षेप करना बन्द कर दिया, जिसकी योग्यता विजयों की एक परम्परा से प्रमाणित हो चुकी थी। किन्तु १४१५-२२ ई० के बीच के वर्ष घरेलू मामलों की महत्त्वपूर्ण घटनाओं से शून्य थे, इसका यह आशय नहीं था कि कुलीन सरदार अब खतरनाक नहीं रहे थे अथवा पार्लियामेण्ट ने अपनी प्रभुता के दावे को छोड़ दिया था; क्योंकि ज्यों ही सफलताओं की धारा विच्छिन्न होने लगी, त्यों ही राजा के लिए मुसीबत का एक नया युग शीघ्र ही शुरू हो गया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Tout, History of England, 1216-1377; **Oman,** History of England 1377-1485; **Vickers,** England in the Later Middle Ages; **Trevelyan,** England in the Age of Wycliffe; **Stubbs,** Constitutional History (vols, II and III); **Maitland,** Constitutional History; **Tout,** Place of Edward II, in English History; **Mackinnon,** Edward III; **Capes,** English Church in the Fourteenth and Fifttenth Centuries; **Armitage-Smith,** John of Gaunt; **Poole,** Wycliffe and Movements for Reform; **Oman,** Great Revolt of 1381; **Rogers,** Six Centuries of Work and Wages, **Meredith,** Economic History; **Petit-Dutaillis,** Supplement to Stubbs Constitutional History; **Baldwin,** The king's Council; **Pollard,** Evolution of Parliament; **Clarke,** Fourteenth Century Studies; **McIlwain,** The High Court of Parliament and its Supremacy; **Lodge and Thornton,** Constitutional Documents 1307-1485; **Bennett,** Life of the English Manor, 1150-1400; **Unwin,** Gilds and Companies of London, Combridge Medieval History; **Jacob,** Henry V., **Wylieand Waugh,** Reign of Henry V.; **Steel,** Richard II; A selection of contemporary materials is provided by **Locke,** War and Misrule.

● ●

८

फ्रांस को जीतने का दूसरा प्रयत्न

(१४११-१४५३ ई०)

१. फ्रेंच गुट और हेनरी पंचम की विजयें

फ्रांस को जीतने के पहले प्रयत्नों के दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम ये होने चाहिएँ थे कि वे इस निष्फल साहसिक कार्य की पुनरावृत्ति को न होने दें। किन्तु अनेक प्रकार के कारणों से वे इसमें सफल नहीं हुए। लैकास्ट्रियन वंश युद्ध की नीति पर डटा हुआ था और रिचर्ड द्वितीय के समूचे राज्यकाल में वह युद्ध के समर्थक दल का नेता बना हुआ था। हेनरी चतुर्थ और हेनरी पंचम कुछ प्रबल कारणों से बड़े बैरनों और उनके सैनिक दलों का ध्यान बँटाने के लिए इच्छुक थे और यह युद्ध से ही सम्भव था। हेनरी चतुर्थ और इससे भी अधिक हेनरी पंचम बहुत महत्वाकांक्षी थे। वे अपने वंश की प्रतिष्ठा को स्थापित करने के साधनों को ढूंढ़ने के लिए उत्सुक थे। इन सबसे बढ़ कर यह बात थी कि इस समय फ्रांस में ऐसी परिस्थितियाँ विद्यमान थीं, जिनसे यह प्रतीत होता था कि फ्रांस की विजय का कार्य सुगम है।

इंग्लैण्ड की भाँति फ्रांस में भी राजवंश से सम्बद्ध बड़े सरदार शासन के अंगों को अपने हाथ में लेने के लिए आपस में झगड़ रहे थे, किन्तु वहाँ यह अन्तर था कि फ्रांस में बरगण्डी, ऑर-लियंज़ और ब्रिटेनी के ड्यूकों—जैसे बहुत बड़े सरदार अतीव विशाल प्रान्तों के अर्द्ध स्वतन्त्र शासक थे। यह बात विशेष रूप से बरगण्डी के घराने के सम्बन्ध में थी, जो फ्रांस की राजनीति में अधिक बड़े पैमाने पर वैसा ही भाग ले रहा था, जैसा १४वीं शताब्दी में

इंग्लैण्ड में लैंकास्टर के घराने ने लिया था। फ्रेंच राजपरिवार की इस शाखा का बड़प्पन १४वीं शताब्दी के मध्य से ही आरम्भ हुआ था, किन्तु यह इससे पहले भी एक के बाद एक प्रान्त को अपने प्रदेश में मिला रहा था और अगली पीढ़ी में इसे फ्रांस में और निम्न देशों (हालैण्ड तथा बेलजियम) में इतने बड़े क्षेत्र पर नियन्त्रण करना था कि यह फ्रांस और जर्मनी के बीच में नये मध्यवर्ती राज्य को बनाने का स्वप्न ले सकता था। इससे प्राप्त किये प्रदेशों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण फ्लैण्डर्स का जिला (कौण्टी) था जिसमें इंग्लिश ऊन का अधिकांश भाग खरीदने वाले अनेक बड़े नगर सम्मिलित थे। इंग्लिश सरकार की स्वाभाविक मैत्री फ्लैण्डर्स के राजाओं के साथ थी।

१५वीं शताब्दी के आरम्भ में फ्रांस का नाममात्र का राजा चार्ल्स षष्ठ कई बार पागलपन के दौरों का शिकार हो जाता था और उसके नाम से राजसत्ता को चलाने का अधिकार उसके चचेरे भाई बरगण्डी के ड्यूक तथा उसके भाई ऑर्लियंज़ के ड्यूक के बीच में तीव्र प्रतिद्वन्द्विता का विषय बना हुआ था। जब १४०७ ई० में बरगण्डी ने ऑर्लियंज़ की हत्या करवा दी, तब दोनों गुटों की होड़ ने ऐसे गृहयुद्ध का रूप धारण कर लिया, जो अनेक वर्षों तक फ्रांस को उजाड़ता रहा। हेनरी चतुर्थ को यह मौका इतना अच्छा प्रतीत हुआ कि वह इसे खोना नहीं चाहता था। १४११ ई० में उसने बरगण्डी के साथ एक सन्धि कर ली और अपने मित्र के साथ मिलने के लिए फ्रांस में सेना का नेतृत्व करने में केवल उसकी बीमारी ही बाधक हुई। किन्तु इसी वर्ष एक इंग्लिश सैनिक दल ने बरगण्डियन दल द्वारा अधिकृत पेरिस के घिरे हुए शहर को सहायता पहुँचाने में मदद की।

ज्यों ही हेनरी पंचम गद्दी पर बैठा, उसने उस योजना को क्रियान्वित करने की तैयारी की, जिसे उसका पिता अपने मन में रखता था और जिसे वह कभी क्रियात्मक रूप नहीं दे सकता था। उसका यह दावा था कि एडवर्ड तृतीय का प्रतिनिधि होने के नाते फ्रांस का राजमुकुट उसका है। यदि एडवर्ड का दावा गलत था तो हेनरी पंचम का दावा उससे भी अधिक गलत था, क्योंकि वह एडवर्ड का निकटतम उत्तराधिकारी भी नहीं था। उसने कुछ द्रव्य ले कर इस दावे को छोड़ने का प्रस्ताव किया। अब फ्रेंच राजा को अपनी मुट्ठी में रखने वाला ऑर्लियंज़ दल उसके साथ समझौते में काफी दूर तक जाने को तैयार था। परन्तु उसकी माँगें इतनी अधिक थीं कि सम्भवतः कोई भी फ्रेंच व्यक्ति इन्हें स्वीकार नहीं कर सकता था, स्पष्ट रूप से ये माँगें एक बिलकुल खुले आक्रमणात्मक युद्ध का बहाना मात्र थीं, फिर भी इंग्लैण्ड में युद्ध लोकप्रिय था और पार्लियामेण्ट ने इसे अपना समर्थन दिया, इसके लिए बड़ी आर्थिक सहायताओं को अपने वोट द्वारा पास किया। यद्यपि बहुत कम युद्ध इतने कम औचित्य के आधार पर लड़े गये हैं; फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं है कि फ्रांस पर पुनः आक्रमण को इंग्लिश लोगों ने एक राष्ट्रीय साहसिक कार्य

---

१. एटलस की प्लेट संख्या ३६ तथा ३७ (बी) के मानचित्र देखिये।

समझा। जब तक यह बहुत बोझीला कार्य विफल नही हो गया, तब तक समूचे रूप से राष्ट्र ने इसका उत्साहपूर्वक समर्थन किया।

अगस्त, १४१५ ई० में हेनरी बारह हजार व्यक्तियों की सेना के साथ जहाज से रवाना हुआ।[1] उसने सीन नदी के मुहाने पर हारफ्लेउर पर आक्रमण करके इस युद्ध को शुरू किया। उसका इरादा इस बन्दरगाह को आधार बना कर नार्मण्डी के प्रान्त की क्रमबद्ध विजय करना था। उसे इस नगर को लेने में एक महीने से अधिक समय लग गया। अक्टूबर आ गया और लड़ाई का आरम्भ उस समय से लगभग पहले ही समाप्त हो गया, जबकि वह आगे बढ़ने के लिए तैयार था। इस घेरे में हुई क्षतियों ने तथा एक दुर्ग-रक्षक सेना छोड़ने की आवश्यकता ने उसकी सेना को इसकी आरम्भिक संख्या के आधे से भी कम कर दिया, फिर भी उसने उत्तर में कैले की ओर कूच करने का निश्चय किया, यद्यपि ऐसे कूच से कोई उपयोगी सैनिक प्रयोजन नही सिद्ध हो सकता था। सीन नदी पर रास्ता टूटने की कठिनाई के कारण विलम्ब हो जाने से उसने यह देखा कि उसकी खाद्य सामग्री समाप्त हो चुकी है, जबकि उसकी अपनी सेना से कम-से-कम दस गुनी फ्रेंच सेना एकत्र हो रही है। इन परिस्थितियों में एजिनकोर्ट की उज्ज्वलतम लड़ाई लड़ी गयी। इसमें सौ से कुछ ही अधिक आदमियों का नुकसान हुआ तथा इंग्लिश सेना ने अपने शत्रुओं को पूर्ण रूप से हरा दिया, अपनी कुल संख्या से अधिक व्यक्तियों को मारा तथा बहुतों को बन्दी बनाया। एजिनकोर्ट में शस्त्रों की आश्चर्यजनक विजय हुई। यह क्रेसी और पोइटियर्स की विजयों से भी अधिक महत्वपूर्ण थी। इसने अंग्रेजों के क्षतिग्रस्त सैनिक गौरव की एकदम पुन प्रतिष्ठा की और इसे अधिक बढ़ा दिया। इसके कोई अधिक महत्वपूर्ण परिणाम न होते, यदि बरगण्डियन्स और ऑर्लियन्जपक्षपाती लोगों (अथवा आरमैगनेकस लोगों, जैसा कि वे अपने मुख्य नेता आरमैगनैक के काउण्ट के नाम से कहे जाते थे) के बीच का भद्दा गृह-युद्ध न चलता रहता। १४६६ ई० में बरगण्डी के ड्यूक ने हेनरी के साथ वैधानिक सन्धि कर ली। उसके प्रतिस्पर्द्धी उसके साथ लड़ाई में इतने अधिक लगे हुए थे कि वे इंग्लिश आक्रमण को रोकने के लिए अपनी मुख्य शक्ति नहीं लगा सके।

अगले चार वर्षों में हेनरी ने अपने को नार्मण्डी की क्रमबद्ध विजय में लगाये रखा। वह निरन्तर एक के बाद एक किला जीतता चला गया और इस प्रकार उसने अपने को एडवर्ड तृतीय अथवा कृष्ण राजकुमार की अपेक्षा अधिक वड़ा वैज्ञानिक सैनिक सिद्ध किया। १४१६ ई० तक उसने समूचे फ्रांस पर विजय पा ली तथा सब किलों में अपनी सेनाएँ रख दीं और अपनी विजयों के लिए अपना सुदृढ़ आधार बना लिया। फ्रांस के दलों के कभी समाप्त न होने वाले संघर्ष ने ही उसे इतनी अधिक सफलता के लिए समर्थ बनाया। नार्मन नगरों की फ्रेंच सेनाओं को घेरे से मुक्त करने के लिए कोई गम्भीर प्रयत्न नहीं किया गया। फिर भी, हेनरी की प्रगति ने फ्रेंच लोगों को इतना अधिक भयभीत कर दिया कि इससे

---

१. एटलस की प्लेट सं० ३७ (बी) देखिये।

दोनों प्रतिस्पर्द्धी नेताओं के बीच चिरस्थायी समझौता हो गया और उन्होंने इंग्लिश लोगों के विरुद्ध सम्मिलित मोर्चे का प्रस्ताव किया। किन्तु जब बरगण्डी का जॉन युद्ध की योजना बनाने के लिए डॉफिन के शिविर में आया[१] तो एक बार पुनः दल का विद्वेष देश की आवश्यकताओं पर हावी हो गया तथा जॉन की हत्या कर दी गयी (१४१९ ई०)।

बरगण्डी के ड्यूक की हत्या ने सारी स्थिति को बदल दिया और युद्ध का दूसरा दौर आरम्भ हो गया। अब तक बरगण्डियन केवल तटस्थ थे। घोर लज्जा के कारण उन्होंने अपने शत्रुओं से मिलने का साहस नहीं किया। किन्तु अब बरगण्डी का नया ड्यूक, उत्तम विशेषणधारी फिलिप (Philip the Good) बदला लेने के लिए बेचैन था। उसने यह निश्चय किया कि उसके पिता की हत्या करने वाला विश्वासघाती डॉफिन कभी भी फ्रांस की राजगद्दी पर नहीं बैठना चाहिए और उसने हेनरी के साथ एक औपचारिक सन्धि कर ली। १४२० ई० की त्रवा की सन्धि से यह निश्चय किया गया था कि हेनरी इस समय बरगण्डियन दल के कब्जे में विद्यमान पागल फ्रेंच राजा की लड़की के साथ विवाह कर ले, वह उसके संरक्षक का कार्य करेगा और उसे राजमुकुट का उत्तराधिकारी स्वीकार किया जायेगा। बरगण्डियन लोगों ने इससे पहले ही पेरिस सहित उत्तरी प्रान्त के अधिकांश भाग पर नियन्त्रण कर रखा था। आरमैगनेक दल का अधिकार केवल ल्वायर नदी के दक्षिण के प्रदेश पर तथा उत्तर में कुछ चौकियों पर था। दक्षिणी फ्रांस को जीतने के कार्य में अब हेनरी अपनी इंग्लिश सेनाओं के अतिरिक्त फ्रांस के आधे साधनों पर भरोसा रख सकता था। ऐसा प्रतीत होता था कि समूचे फ्रेंच राज्य का स्वामित्व विजेता के हाथ में आने वाला है, अतः इंग्लिश जनता स्वाभाविक रूप से इन आश्चर्यजनक विजयों से उन्मत्त हो उठी।

किन्तु निःसन्देह यह स्वप्न पूर्ण रूप से निरर्थक था। फ्रांस स्थायी रूप से इंग्लिश आधिपत्य के सम्मुख कभी आत्मसमर्पण नहीं कर सकता था। यदि हेनरी समूचे फ्रांस को भी जीतने में सफल हो जाता तो भी वह तथा उसके उत्तराधिकारी फ्रांस की गद्दी पर अपना अधिकार केवल फ्रेंच बनकर ही रख सकते थे और तब इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता का और उसकी पार्लियामेण्ट की स्वतन्त्रताओं का हाल क्या हुआ होता? पूर्ण विजय की सम्भावना इंग्लैंड के लिए भी उतना बड़ा खतरा था, जितना फ्रांस के लिए था। यह दोनों के लिए बड़ी सौभाग्यपूर्ण घटना थी कि जब उत्तर में आरमैगनेक लोगों के अन्तिम किलों को जीतने में दो कठिन वर्ष बीतने के बाद और ऐसे क्षण में जबकि उसकी सफलता निश्चित प्रतीत होती थी, विजेता राजा अपनी विजयों के श्रम से कृश होकर ३१ अगस्त, १४२२ ई० को दिवंगत हुआ। उसे अपने दोहरे राज्य की भावी सरकार की व्यवस्था करने के लिए समय

---

१. फ्रांस के राजा का सबसे बड़ा लड़का या युवराज १३४९ से १८३० तक डॉफिन कहलाता था, यह उपाधि इंगलैण्ड के प्रिन्स ऑफ वेल्स से मिलती थी। यह नाम चौदहवीं शताब्दी में फ्रांस द्वारा प्राप्त किये गये एक प्रान्त डोफीने (Dauphine) के आधार पर रखा गया था।

मिल गया था और उसका अन्त धार्मिक निष्ठा के साथ हुआ। किसी अदृश्य आत्मा के आगे कहे गये उसके अन्तिम शब्द थे—"तुम झूठ बोलते हो ! तुम झूठ बोलते हो ! मेरा हिस्सा भगवान ईसामसीह के साथ है।"

हेनरी पंचम की मृत्यु के दो महीने बाद फ्रांस का दुर्बल राजा चार्ल्स षष्ठ भी मर गया। उसका उत्तराधिकार से वंचित बेटा चार्ल्स सप्तम, फ्रेंच राजगद्दी का सच्चा उत्तराधिकारी होते हुए भी केवल एक बदनाम और विभक्त पार्टी का राजा था और ल्वायर के उत्तर में इसका कोई अधिकार नहीं था। इंग्लैण्ड की राजगद्दी को पहले से ही प्राप्त कर लेने वाले दो वर्ष के शिशु हेनरी षष्ठ को, अब त्रवा की सन्धि (Treaty of Troyes) की शर्तों के अनुसार फ्रांस के राजा का भी पद दे दिया गया। किसी राजा की अल्पवयस्कता के समय में शासन की सत्ता को बनाये रखना इंग्लैण्ड में भी बहुत कठिन था, जैसे कि रिचर्ड द्वितीय के उदाहरण में पहले ही प्रदर्शित किया जा चुका है। किन्तु ऐसा करना और इस समय में उत्तरी फ्रांस में एक विदेशी राजकुमार के शासन को मान्य बनाना मानवीय शक्तियों से परे का कार्य था। यह कार्य हेनरी पंचम के छोटे भाई, बैडफोर्ड के ड्यूक पर डाला गया, यह अपने भतीजे के संरक्षक का कार्य कर रहा था। अपने भाई के समान ही महान सेनानी और उसकी अपेक्षा अधिक उदारचेता बैडफोर्ड इस असम्भव कार्य को पूरा करने में लगभग सफल हुआ। अत्यधिक कठिनाइयों के बावजूद उसने इंग्लैण्ड में होने वाली विभिन्न गुटों की लड़ाइयों को दबाये रखा। बरगण्डियन दल के साथ उसने हार्दिक मैत्री बनाये रखी। उसने फ्रेंच रिवाजों का कठोरता से पालन करते हुए तथा फ्रेंच लोगों को शासन का कार्य सौंप कर, उत्तर के अधिकांश फ्रेंच लोगों की राजभक्ति प्राप्त करने में सफलता पायी। अगले सात वर्षों में, युद्ध में उसने निरन्तर अपना पलड़ा भारी बनाये रखा।

२. जोन ऑफ आर्क तथा फ्रांस में इंग्लिश महत्वाकांक्षाओं की समाप्ति

१४२८ ई० तक फ्रेंच राजतन्त्र की समाप्ति लगभग अनिवार्य प्रतीत होती थी। शक्तिशाली इंग्लिश सेनाएँ ऑर्लियंज़ को घेर रही थीं। यह ऑर्लियंज़ ल्वायर की नदी का नियन्त्रण करता था और दक्षिणी फ्रांस की कुंजी था। चार्ल्स प्रथम लगभग निराश और निर्धन था और उसके पास कोई ऐसे नेता नहीं थे जो उस पौरुष और शक्ति को दे सकते, जिनकी उसमें कमी थी। उसकी अन्तिम सेना नष्ट की जा चुकी थी और उसने ऑर्लियंज़ का घेरा छुड़ाने का कोई गम्भीर प्रयत्न नही किया था। वह चिनोन से उदासीनतापूर्वक सब कुछ देख रहा था, उस समय स्वतन्त्र राज्य के रूप में फ्रांस की सत्ता ही खतरे में पड़ी हुई प्रतीत होती थी।

ऐसे संकटपूर्ण समय में इतिहास का एक चमत्कार हुआ। चिनोन में घोड़े पर सवार और मनुष्यों के से कपड़े पहने हुए सत्रह वर्ष की एक लड़की आयी और उसने राजा से मिलने की माँग की, क्योंकि उसे राजा को स्वर्ग का एक सन्देश देना था। यह जोन ऑफ आर्क

थी।[1] यह उस शैम्पेन प्रदेश के डोमरेमी नामक स्थान के समृद्ध किसान की कन्या थी, जिस प्रदेश में इंग्लिश लोग तथा बरगण्डियन सर्वेसर्वा थे। चार वर्ष तक इस शक्तिशालिनी और स्वस्थ कन्या ने कुछ दृश्य देखे थे तथा कुछ ऐसी आवाजें सुनी थी, जिनमे यह वचन दिया गया था कि फ्रांस इंग्लिश आधिपत्य के जुए से मुक्त किया जाना चाहिए। अन्त में, शीत ऋतु में, उसे दर्शन देने वाले देवदूतों ने उसे यह आज्ञा दी थी कि वह शस्त्र धारण करके रणक्षेत्र में जाये और इंग्लिश लोगों को आॅलियंज़ से बाहर भगाये तथा रीम्ज़ में चार्ल्स सप्तम का राज्याभिषेक करे। राजा उससे मिला। उसके सरल एवं भव्य विश्वास ने उसे उसकी काहिली से ऊपर उठाया। जोन को श्वेत कवच पहनाया गया और सिपाहियों की एक कम्पनी का अध्यक्ष बनाया गया। इन सैनिकों के साथ वह ऑलियंज़ की ओर बढ़ी और उसने एक दूत द्वारा अपने आगे यह सन्देश भिजवाया कि भगवान के हाथ से विनष्ट होने से पहले ही इंग्लिश लोग वहाँ से चले जायँ। फ्रेंच दरबारी उसका मज़ाक उड़ा रहे थे। इंग्लिश सैनिक अब उसे जादूगरनी समझ कर उससे अन्धविश्वासपूर्ण भय रखने लगे। किन्तु फ्रेंच सेना और जनता उसे स्वर्ग का सीधा दूत समझती थी और पूर्ण श्रद्धा और विश्वास के साथ उसके नेतृत्व का अनुसरण करती थी। वह फ्रांस की आत्मा के साक्षात् रूप में जनता को अपने झगड़ों और आलस्य से ऊपर उठाने के लिए प्रकट हुई थी और उसके आगमन के क्षण से ही इंग्लिश लोगों द्वारा फ्रांस की विजय की सब सम्भावना समाप्त हो गयी।

देवी की उपस्थिति के कारण वीरता से अनुप्राणित फ्रेंच लोगों ने घेरा डालने वाले इंग्लिश लोगों को बाधित किया कि वे ऑलियंज़ से अपनी सेना को हटा लें। इसके बाद जोन ऑफ आर्क ने रीम्ज़ की ओर एक सेना का नेतृत्व किया। फ्रेंच राजाओं के प्राचीन राज्याभिषेक के स्थल-इस नगर में चार्ल्स सप्तम को विधिवत् राजमुकुट पहनाया गया और उसका राज्याभिषेक किया गया। देवी का नियत कार्य पूरा हो गया। उसने ऑलियंज़ की रक्षा की और राजा को मुकुट पहनाया। अब वह प्रसन्नतापूर्वक वापस लौट जाना चाहती थी। किन्तु दरबार ने इसे इतना उपयोगी पाया कि वह उसे वापस जाने नही देना चाहता था, उसे ऐसे नये कार्यों में लगाया गया, जिनमें वह किसी ऐसे अलौकिक आश्वासन का अनुभव नहीं करती थी। वह पेरिस को जीतने में विफल रही और अन्त में मार्च, १४३० ई० में बरगण्डियन लोगों ने उसे बन्दी बना लिया। उन्होंने १०,००० स्वर्ण मुद्राओं के बदले में उसे इंग्लिश लोगों को बेच दिया। वह रूआं (Rouen) में ले जायी गयी। उस पर एक ऐसे न्यायालय में जादूगरनी होने के लिए मुकदमा चलाया गया, जिस न्यायालय में बोवेस के फ्रेंच बिशप की अध्यक्षता में पेरिस विश्वविद्यालय के विद्वान् सम्मिलित थे। इस न्यायालय ने ३१ मई, १४३१ ई० को रूआं की मण्डी में इसे जिन्दा जलवा दिया। यह इतिहास का एक अत्यधिक जघन्य अपराध था और इसे किये जाने का दोष बैडफोर्ड के महान ड्यूक पर डाला जाना चाहिए। किन्तु यह उस चार्ल्स सप्तम के लिए और भी अधिक

---

१. एण्ड्र्यू लैंग ने जोन ऑफ आर्क पर एक उत्तम पुस्तक लिखी है।

लज्जा की बात थी, जिसकी राजगद्दी को वीर देवी ने बचाया था। उसने उसे बचाने का प्रयत्न नहीं किया, यद्यपि यह निश्चित है कि फ्रांस में प्रत्येक योद्धा (नाइट) की तलवार उसकी सहायता के लिए अपनी म्यान से अवश्य निकलती। उसने अपने उन इंग्लिश बन्दियों से भी बदला लेने की कोई धमकी नहीं दी, जिनमें कुछ बन्दी बड़े ऊँचे पद वाले थे। ऐसी धमकी जोन ऑफ आर्क का जीवन बचाने के लिए पर्याप्त होती। किन्तु रूआं की लपटों में शहीद हो कर देवी ने फ्रांस के लिए उससे कहीं अधिक सेवा की, जबकि उसने श्वेत कवच में ऑर्लियंज़ के घेरे की दरारों में अपने सिपाहियों का नेतृत्व किया था। उसने सरदारों के स्वार्थी गुटों को लज्जित किया था, उसने फ्रेंच जनता की भावनाओं और देशभक्ति को उद्बुद्ध किया था, वह सदा के लिए राष्ट्रीय आत्मा की प्रतीक बन गयी। उसने फ्रेंच राष्ट्र की अविनाश्य एकता को उत्पन्न किया। उसने फ्रांस की विजय को सदा के लिए असम्भव और अचिन्त्य बना दिया।

बैडफोर्ड और उसके साथियों ने फ्रेंच लोगों की उभड़ती हुई भावना के विरुद्ध वीरतापूर्वक संघर्ष किया। किन्तु अगले पाँच वर्षों में वे शनैः शनैः प्रदेश हारते चले गये और १४३५ ई० तक पेरिस तथा नार्मण्डी के प्रान्त के आगे बहुत ही थोड़ा प्रदेश उनके अधिकार में रहा। इसके अतिरिक्त बैडफोर्ड और बरगण्डी के ड्यूक के उन सम्बन्धों में शनैः शनैः तनाव बढ़ता गया, जिन पर सभी कुछ निर्भर था। इसका कारण कुछ तो संघर्ष के वैयक्तिक कारण थे, जिनके बारे में कहने की आवश्यकता नहीं है और कुछ कारण यह भी था कि बरगण्डी अधिकाधिक यह अनुभव करता था कि इंग्लिश लोगों का उद्देश्य सफल नहीं होगा। १४३५ ई० में आर्रास में समझौता करने का एक प्रयत्न किया गया। यह समझौता करने का प्रयास इसलिए भंग हो गया कि इंग्लिश प्रतिनिधियों ने फ्रांस के राजा की पदवी का त्याग करने से बिल्कुल इनकार कर दिया। इस पदवी को मूर्खतापूर्ण अभिमान के साथ, इंग्लैण्ड के राजा आने वाली लगभग चार शताब्दियों में धारण करते रहे। किन्तु इस बीच में बरगण्डी के ड्यूक ने अपनी ओर से शान्ति-सन्धि कर ली, चार्ल्स सप्तम को राजा स्वीकार किया और इसके बदले में पिकार्डी प्रान्त के सब दुर्गों को अपने लिए प्राप्त कर लिया, इससे वह पहले की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और स्वतन्त्र राजकुमार हो गया। बरगण्डी की खास डची के विस्तृत प्रदेशों के लिए तथा फ्लैण्डर्स के जिले के लिए वह फ्रांस के राजमुकुट के प्रति राजभक्ति रखता था, इसके अतिरिक्त उसके परिवार ने विवाह एवं विजय से नीदरलैण्ड्स (आधुनिक बेलजियम और हालैण्ड का बड़ा भाग) और बरगण्डी की काउण्टी प्राप्त की, इनके लिए जर्मन सम्राट के प्रति राजभक्ति रखी जाती थी, अतः वह एक वशवर्ती सामन्त (Vassal) से अधिक बड़ा था। वह यूरोप में सबसे अधिक शक्तिशाली राजकुमार था।

बरगण्डियन मैत्री के समाप्त हो जाने से, फ्रांस में इंग्लिश लोगों की स्थिति लगभग निराशापूर्ण थी और इस विपत्ति के बाद शीघ्र ही बेडफोर्ड के महान ड्यूक की मृत्यु अन्तिम बड़ी चोट थी। फिर भी, इंग्लिश सेनापति बड़ी वीरता के साथ लड़ते रहे। यद्यपि १४३६

ई० में पेरिस इनके हाथ से निकल गया तो भी अगले १५ वर्ष तक नार्मण्डी की वीरता-पूर्वक रक्षा की जाती रही। धुर दक्षिण में बोरदो से लेकर बायों तक की इंग्लिश प्रदेश की तंग पट्टी, जो १४वीं शती की आपत्तियों के पश्चात् भी बची रही थी—अब भी सब आक्रमणों का मुकाबला करती रही। अन्त में इंग्लिश शक्ति का चरम पतन एकदम हुआ। इसका कारण मुख्य रूप से सफोक और सोमरसेट के ड्यूकों की उस सरकार की अयोग्यता थी, जो इंग्लैण्ड में बड़ी तेजी से अराजकता और गृहयुद्ध उत्पन्न कर रही थी। मई, १४५० ई० में फोर्मिग्नी की लड़ाई ने नार्मण्डी के भाग्य का फैसला कर दिया। अगस्त की समाप्ति से पहले ही उस बड़े प्रान्त में इंग्लिश लोगों का प्रत्येक अधिकृत स्थान अन्तिम रूप से छिन गया, जिस प्रान्त को हेनरी पंचम ने इतने परिश्रम से जीता था और बैडफोर्ड ने और जिसके सेनापतियों ने उसकी इतनी वीरता से रक्षा की थी। १४५१-५३ ई० तक फ्रेंच लोगों ने पुराने इंग्लिश प्रान्त गुएन्ने पर हमले के लिए अपनी सेनाओं को इकट्ठा किया। यह प्रान्त हेनरी द्वितीय के समय से इंग्लिश ताज के प्रति राजभक्त रहा था। जुलाई, १४५३ ई० में कैस्टीलोन की लड़ाई में फ्रांस में विद्यमान अन्तिम बड़ी इंग्लिश सेना नष्ट कर दी गयी। तीन मास पश्चात् बोरदो नगर ने फ्रेंच लोगों के समक्ष आत्म-समर्पण किया तो कैले के एकमात्र नगर को छोड़कर कोई अन्य फ्रेंच प्रदेश इंग्लिश लोगों के अधिकार में नहीं रहा और यह नगर एक शताब्दी तक अंग्रेजों के हाथ में बना रहा।

इस प्रकार एक भीषण और निरर्थक शतवर्षीय युद्ध समाप्त हुआ। इसने उन दोनों महान राष्ट्रों के जीवन और भाग्य पर सबसे अधिक प्रभाव डाला, जिन राष्ट्रों को इस युद्ध ने उलझाया था। दोनों देशों में शत्रुता की परम्परा स्थापित हो गयी तथा थोड़े और दुर्लभ मध्यान्तरों के साथ वे लगभग अगली चार शताब्दियों तक अपने को एक-दूसरे का शत्रु समझते रहे। इससे उनकी और संसार की बड़ी हानि हुई। फ्रांस में लम्बे युद्ध के दबाव ने संसदीय शासन की उस सम्भावना को नष्ट कर दिया, जो १४वीं शताब्दी के आरम्भ में सन्निकट प्रतीत होती थी। वादविवाद द्वारा शासन उस समय व्यावहारिक नहीं प्रतीत होता था, जब शत्रुओं की सेना शिविर डाले पड़ी हो। इसलिए फ्रांस अनिवार्य रूप से निरंकुश राज-तन्त्र के शासन में आ गया और समय बीतने के साथ-साथ यह अधिकाधिक शक्तिशाली होता गया क्योंकि यह राजतन्त्र राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और शक्ति का एक मात्र संरक्षक प्रतीत होता था। दूसरी ओर लम्बे युद्धों ने फ्रांस के विभक्त प्रान्तों में राष्ट्रीय अभिमान तथा देशभक्ति की वास्तविक और गम्भीर भावना को उत्पन्न किया। यह भावना फ्रांस की वीर देवी जोन ऑफ आर्क के जीवन और मरण से पूत एवं गौरवान्वित हुई थी। इंग्लैण्ड में युद्ध शुरू होने से पहले ही राष्ट्रीय भावना शक्तिशाली हो चुकी थी, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि युद्धों में विजयों और मुसीबतों ने इसकी जड़ जमा दी। युद्ध के आर्थिक भार ने इंग्लिश संस्थाओं के विकास तथा निर्माण में भाग लिया और पार्लिया-मेण्ट की सर्वोत्कृष्ट सत्ता को सम्भव बनाया। दूसरी ओर इंग्लिश युद्धों ने इंग्लिश लोगों

में और विशेषत: बड़े सरदारों में एक बड़ी लड़ाकू और उपद्रवी भावना का पोषण किया। यह भावना व्यवस्थित स्वतन्त्रता के विकास के लिए बहुत खतरनाक थी। जब अन्त में सुदीर्घ संघर्ष समाप्त हुआ, तब फ्रांस में इतने वर्षों तक काम में आने वाली चपल भावनाओं वाले व्यक्तियों ने अपने देश में लौटकर अपने युद्ध के प्रेम को सन्तुष्ट करने के लिए उन भीषण गृहयुद्धों को अधिक शरारतपूर्ण साधन पाया, जो गृहयुद्ध फ्रांस में सुदीर्घ संघर्ष समाप्त होते ही आरम्भ हो गये थे। हम आगे चलकर देखेंगे कि इस संघर्ष में व्यवस्थित स्वतन्त्रता की वह समूची पद्धति भयंकर खतरे में पड़ गयी, जिसका निर्माण शनैः शनैः और बड़े कष्ट के साथ हुआ था। कुछ समय के लिए ऐसा प्रतीत होने लगा कि फ्रांस की भाँति इंग्लैण्ड भी एक निरंकुश रूप से शासित देश बन जायेगा।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Oman, History of England, 1377-1485; **Vickers,** England in the Later Middle Ages; **Kingsford,** Henry V; **Jacob,** Henry V; **Neuhall,** English Conquest of Normandy.

• •

९

इंग्लैण्ड में दलों का संघर्ष

(१४२२-१४८५ ई०)

हेनरी षष्ठ, १४२२ : एडवर्ड चतुर्थ, १४६१ : एडवर्ड पंचम १४८३ : रिचर्ड तृतीय १४८३ :

१. इंग्लैण्ड में दल तथा अव्यवस्था

चौदहवीं शताब्दी में कुलीन सरदारों के गुटों के संघर्ष से उत्पन्न होने वाला राष्ट्रीय शान्ति और सुशासन का संकट सदैव विद्यमान था। पन्द्रहवीं शताब्दी में, हेनरी पंचम की मृत्यु के बाद बढ़ने वाली फूट और अव्यवस्था के ३० वर्षों के पश्चात् यह खतरा गुलाबों के भीषण युद्धों (War of Roses) के रूप में उच्च शिखर पर पहुँच गया। इन संघर्षों और युद्धों के घटना-क्रम का विस्तृत अध्ययन उपयोगी नहीं है; किन्तु यह जान लेना अवश्य उपयोगी है कि इनका क्या महत्व था और राष्ट्र के जीवन पर इनका क्या प्रभाव पड़ा।

हेनरी षष्ठ को जब उत्तराधिकार में राजगद्दी मिली तो वह दो वर्ष का शिशु था। जब वह ऐसी अवस्था में पहुँचा कि शासन के कार्य में भाग ले सके, तब वह एक मृदु, डरपोक और सीधा-सादा व्यक्ति पाया गया। उसमें पागलपन का भी कुछ अंश था—जो उसने अपने फ्रेंच नाना से पाया था। इसका यह मतलब था कि राजकीय सत्ता का प्रयोग सदैव किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया जाना था। इसने देश के शासन को अधिक बड़े कुलीन सरदारों के गुटों की दया पर छोड़ दिया।

प्रथम दृष्टि में यह कल्पना की जा सकती थी कि इन परिस्थितियों में पार्लियामेण्ट की शक्ति पहले की अपेक्षा अधिक

पूर्ण हो जायेगी और राज्यकाल के आरम्भिक वर्षों में ऐसा हुआ प्रतीत भी हुआ। पार्लियामेण्ट ने राजा की अल्पवयस्कता के समय में देश के शासन के लिए किये गये हेनरी पंचम के प्रबन्ध को बदल दिया तथा यह व्यवस्था की कि कार्यपालिका का सर्वोच्च नियन्त्रण एक संरक्षक के पास न रह कर, समूचे रूप में राजा की उस परिषद के पास रहे, जिस पर पार्लियामेण्ट बहुत समय से नियन्त्रण करने का दावा कर रही थी। इसके अतिरिक्त इन्ही वर्षों में ही पार्लियामेण्ट ने कानून बनाने पर प्रभावशाली नियन्त्रण प्राप्त किया था। अब तक यह केवल कानून बनाने के लिए प्रार्थना-पत्र दिया करती थी और इनकी रूपरेखा तैयार करने का कार्य राजकीय कर्मचारियों पर छोड़ देती थी। अब इस प्रथा की स्थापना हुई कि प्रार्थनापत्र को कानून के मसविदे या बिल के रूप में रखा जाय और यह मसविदा राजा को उसकी स्वीकृति या अस्वीकृति के लिए भेजा जाय। क्रियात्मक रूप से राजा को संशोधन का अधिकार न रहा। इस सबसे यह सूचित होता था कि पार्लियामेण्ट ही अब उस रिक्त स्थान को भरने का कदम रखने वाली थी, जो स्थान राजा के शैशव और बाद के पागलपन से रिक्त हुआ था।

किन्तु ऐसा नहीं हुआ। दरबार के दलों का नियन्त्रण करने में और नियमित करने में समर्थ होने के स्थान पर पार्लियामेण्ट उत्तरोत्तर इनके प्रभाव में पड़ती गयी। प्रत्येक दल ने बारी-बारी से पार्लियामेण्ट द्वारा परिषद के सदस्यों के नियत और पदच्युत करने के अथवा मन्त्रियों पर महाभियोग चलाने के अधिकारों का उपयोग शत्रुओं के विरुद्ध हथियार के रूप में करना शुरू कर दिया।

पार्लियामेण्ट के चुनाव बड़ी हद तक प्रत्येक जिले में वहाँ के बड़े जमींदारों के प्रभाव में हुआ करते थे। सम्भवतः इन्हें अधिक सुगम बनाने के लिए १४३० ई० का कानून पास किया गया। इस कानून के द्वारा जिले या शायर के नाइट लोगों के चुनाव में वोट देने का अधिकार उन्हीं जमींदारों तक सीमित कर दिया गया, जिनकी स्वतन्त्र पट्टे की भूमि का मूल्य कम-से-कम चालीस शिलिंग वार्षिक होता था। यह वर्तमान मुद्रा में तीस पौण्ड के बराबर है। मताधिकार के लिए यह एक प्रबल बन्धन था, क्योंकि १४३० ई० में जिले के सभी स्वतन्त्र व्यक्तियों को वोट का अधिकार था। अब यह केवल उनके पास ही नहीं रहा जो जमीन नहीं रखते थे, बल्कि जिन लोगों के पास पट्टे पर काफी बड़े फार्म थे, उन्हें भी वोट देने से रोक दिया गया और जमींदारों के वोट के अधिकारों के इस प्रतिबन्ध ने सरदारों द्वारा चुनावों के नियन्त्रण को अधिक आसान बना दिया। पार्लियामेण्ट की बैठकें अपने आप अशान्तिपूर्ण होने लगीं, क्योंकि इसके अधिकांश सदस्य विभिन्न दलों के अनुयायी थे। उदाहरणार्थ, १४२६ ई० की पार्लियामेण्ट 'मोटे दण्डों वाली पार्लियामेण्ट' (Parliament of Bats) के नाम से प्रसिद्ध है; क्योंकि सरकार ने यह आवश्यक समझा था कि सदस्यों के लिए शस्त्रधारण का निषेध किया जाय, इसलिए सदस्य शस्त्रों के स्थान पर मोटे डण्डे लेकर आये। इस शताब्दी के आगे बढ़ने के साथ-साथ पार्लियामेण्ट की बैठकें प्रतिस्पर्द्धी दलों के तथा शक्तिशाली कुलीन सरदारों के नेतृत्व का अनुसरण करने वाले अनुयायियों

का समूह मात्र बन गयीं तथा राजकीय बजट की मांगों पर वोट देने के अतिरिक्त उनकी कार्यवाहियाँ दरबार के एक दल द्वारा दूसरे दल पर किये जाने वाले आक्रमणों तक सीमित हो गयीं।

इन सब बुराइयों की जड़ कुलीन वर्ग के स्वरूप के उस परिवर्तन में निहित थी, जिसे हम पहले बता चुके हैं। बड़े कुलीन सरदारों की संख्या बहुत कम थी। यह इस युग में कम महत्वपूर्ण व्यक्तियों को सम्मिलित करते हुए भी पचास से अधिक नहीं रही। ये इस बात पर अभिमान करते थे कि वे वेतनभोगी तथा शस्त्रधारी अनुयायियों की एक बड़ी संख्या को रखते हैं। फ्रेंच युद्धों ने इनकी संख्या और अधिक बढ़ा दी थी। इन्होंने अपने जिलों के छोटे भद्रवर्ग को यह प्रेरणा दी थी कि वे उनके अनुयायियों में सम्मिलित हों तथा उनके चिह्न और वर्दियाँ धारण करें। यह परिपाटी इसलिए विकसित हुई कि देश की अराजक अवस्था के समय में एक महान कुलीन सरदार की वर्दी पहनना एक महान संरक्षण था। सरकार इसके विकास को रोकने में अशक्त थी। वस्तुतः कभी ऐसा प्रयत्न नहीं किया गया, क्योंकि सरकार स्वयमेव इन्हीं बड़े सरदारों से मिल कर बनी हुई थी। इन सैनिक दलों के विरुद्ध कानून और व्यवस्था लागू नहीं की जा सकती थी। १४३७ ई० में जब लिवरपूल के विलियम पूल ने बेवसी के सर जान बटलर के घर पर हमला किया और बलपूर्वक लेडी बटलर का अपहरण किया, तब सर जान इसका कोई प्रतिकार नहीं प्राप्त कर सका; क्योंकि गुण्डे विलियम पूल को स्टेनली के शक्तिशाली घराने का आश्रय प्राप्त था। बटलर ने प्रतिशोध के लिए पार्लियामेण्ट को आवेदनपत्र दिया। पर पार्लियामेण्ट इस विषय में केवल यह कर सकती थी कि वह मिस्टर पूल को कानून के संरक्षण से वंचित करने का कानून पास कर दे, परन्तु यह इसका कोई इलाज नहीं था। "गुलाबों के युद्धों" से पहले के युग की सबसे बड़ी विशेषता देश में बढ़ती हुई अराजकता थी और इस अराजकता का एक मात्र इलाज यही था कि कुलीन सरदारों और उनके अनुयायियों में संघर्ष होकर अराजकता पैदा करने वाले तत्व क्षीण हो जायँ। जब तक ऐसा न होता, तब तक व्यवस्था एवं सुदृढ़ शासन की स्थापना और कानून का कठोर पालन सम्भव नहीं थे। इस दृष्टि से, भीषण होने पर भी, गुलाबों के युद्धों ने एक उपयोगी प्रयोजन पूरा किया।

बड़े कुलीन सरदारों में वैयक्तिक और पारिवारिक झगड़े खूब चलते थे और इन से प्रायः निजी युद्ध हो जाते थे। किन्तु इसके अतिरिक्त ये कुलीन सरदार राष्ट्रीय सरकार पर नियन्त्रण पाने के लिए, धनी बनने के अवसरों के लिए और अपने प्रतिद्वन्द्वियों के विरुद्ध बदला लेने के लिए निरन्तर संघर्ष करने वाले दो दलों में बँटे रहते थे। दरबार के इन दलों के नेता सदैव शाही रक्त के राजकुमार होते थे, जिनकी दृष्टि सामान्यतः राजगद्दी को विरासत में पाने की सम्भावना पर लगी रहती थी, क्योंकि १४५३ ई० तक हेनरी षष्ठ का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। यदि एक दल सन्धि का समर्थन करता था, तो दूसरा युद्ध के अधिक उत्साहपूर्ण संचालन का। शक्ति न रखने वाला दल संवैधानिक दल होने का दावा करता था; किन्तु ये बातें बहानों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं थीं।

जब तक बैडफोर्ड का ड्यूक जीवित रहा, तब तक आपेक्षिक दृष्टि से व्यवस्था बनी रही। किन्तु इस युग में भी दो दलों में बडा कटुतापूर्ण संघर्ष जारी रहा। एक दल का नेता बाद में कार्डिनल और पोप का दूत बनने वाला विन्चेस्टर का बिशप हेनरी बोफर्ट था और दूसरे दल का नेता बैडफोर्ड का अविवेकी छोटा भाई ग्लास्टर का ड्यूक था। बैडफोर्ड की एक बड़ी कठिनाई इन दोनों दलों में शान्ति स्थापित रखने की थी। कार्डिनल उस शक्तिशाली बोफर्ट वंश का सबसे अधिक क्रियाशील सदस्य था। इस परिवार के सदस्य गौण्ट के जॉन के अवैध पुत्र थे। इन्हें १४०७ ई० के पार्लियामेण्ट के कानून द्वारा वैध बना दिया गया था। किन्तु इस कानून ने इन्हें राजमुकुट पाने के उत्तराधिकार से निश्चित रूप से वंचित कर दिया था। समग्र रूप से, कार्डिनल का पलड़ा राजपरिषद में भारी था। निःसन्देह वह अपने भतीजे ग्लास्टर के ड्यूक की अपेक्षा अधिक नरम और अधिक अच्छा राजनीतिज्ञ था।

१४३५ ई० में बैडफोर्ड की मृत्यु होने के बाद भी बोफर्ट का पलड़ा भारी था। इनके दल.का नेतृत्व कार्डिनल के भतीजे सोमरसेट के ड्यूक, एण्डमन्ड बोफर्ट के तथा उसके मित्र रिचर्ड द्वितीय के अलोकप्रिय मन्त्री के पोते सफोक के ड्यूक के हाथों में चला गया। अब वे अधिक अन्यायी हो गये और पार्लियामेण्ट की उपेक्षा और अवज्ञा करने लगे; अतः ये इस कारण पार्लियामेण्ट में बहुत कम बुलाये जाने लगे। लोगों ने यह सन्देह करना शुरू कर दिया कि १४०७ ई० के कानून के बावजूद बोफर्ट का लक्ष्य हेनरी षष्ठ के उत्तराधिकारी न होने की दशा में मरने पर राजमुकुट को स्वयं प्राप्त करना है। ग्लास्टर अब भी विरोधी दल का नेता था तथा यार्क का ड्यूक उसका समर्थन कर रहा था। यह अपनी माता द्वारा एडवर्ड तृतीय के तीसरे बेटे का वंशज था और राजगद्दी पर इसका आनुवंशिक दावा हेनरी षष्ठ की अपेक्षा अधिक अच्छा था। इंग्लैण्ड में इस समय सबसे अधिक धनी कुलीन सरदारों को रखने वाले नेविल के बड़े घराने ने विरोधी दल का साथ दिया। उस समय विद्यमान पचास सांसारिक लार्डों में से पाँच लार्ड इस घराने के थे, ये अन्य लार्डों से भी सम्बन्ध रखते थे। सफोक और सोमरसेट ने अत्यधिक हिंसा के साथ ग्लास्टर के दल पर हमला किया। १४४४ ई० में उन्होंने हेनरी षष्ठ के विवाह की व्यवस्था एक फ्रेंच राजकुमारी आन्जू की मार्गरेट के साथ की। इस मनस्विनी तथा भावुक लड़की ने आरम्भ से ही दुर्बलचित्त पति पर पूर्ण आधिपत्य स्थापित कर लिया और सोमरसेट की ओर से यह पूरे तौर से गुटों की लड़ाई में पड़ गयी। १४४७ में अपने समर्थकों से भरी हुई (Packed) पार्लियामेण्ट की एक बैठक सशस्त्र व्यक्तियों द्वारा नियन्त्रित नगरबरी सेन्ट एडमन्डस में हुई। इस पार्लियामेण्ट ने ग्लास्टर पर महाराजद्रोह का आरोप लगाया और उसे दण्डित किया गया। वह इसके बाद तत्काल एक रहस्यपूर्ण रीति से मर गया। उसके प्रमुख समर्थक यार्क को लार्ड लेफ्टिनेन्ट के रूप में क्रियात्मक रूप से आयरलैण्ड में निर्वासित कर दिया गया। बोफर्ट का दल विजयी प्रतीत होने लगा। इस दल के नेता समूचे देश में अत्यधिक अप्रिय थे। किन्तु लोकमत के विरोधी होते हुए भी उन्होंने अपनी

शक्ति बनाये रखी। इसके बाद राष्ट्र की वाणी की प्रतिनिधि-पार्लियामेण्ट लगभग नगण्य हो गयी।

किन्तु बोफर्ट एवं सफोक की प्रभुता को फ्रांस की विपत्तियों से बड़ा धक्का लगा। इनका कारण इन लोगों का अयोग्य शासन बताया जाता था और यह बात सर्वथा अनुचित नहीं थी। जब १४५० ई० में नार्मण्डी छिन गया, तब सार्वजनिक असन्तोष ने कैण्ट और ससैक्स में भीषण विद्रोह के रूप में अपने को प्रकट किया। इसका नेता एक पुराना सिपाही जैक केड था, जो कुछ समय के लिए वैसे ही लन्दन का स्वामी बन गया, जैसे १३८१ ई० में वाट टाइलर बना था। किन्तु १३८१ ई० के विद्रोहियों की माँगों के साथ १४५० ई० के विद्रोहियों की माँगों की तुलना बड़ी विलक्षण थी। जैक केड ने भूदासप्रथा के उन्मूलन की तथा सामाजिक सुधारों की माँग नहीं की। भूदासप्रथा लगभग समाप्त हो चुकी थी। उसने राजा के बुरे सेवकों की पदच्युत करने और दण्ड देने की तथा उत्तम शासन, न्याय और व्यवस्था को पुन: स्थापित करने की माँग की। मई में विद्रोह का विस्फोट होने से पहले ही, जनवरी में बैठक करने वाली एक पार्लियामेण्ट ने सफोक पर एक महाभियोग चलाया। राजा ने उसे बचाने के लिए, उसे दण्डित किये जाने से पहले ही निर्वासित कर दिया। किन्तु जब इस घृणित मन्त्री ने यूरोप के महाद्वीप की ओर भागने का प्रयत्न किया तो आधे दर्जन जहाजों द्वारा इसे रोक लिया गया और बिना जाँच के एक नौका के उपरले हिस्से पर इसका सिर काट डाला गया। इस युग के लोकप्रिय गीत इस देशद्रोही की मृत्यु पर व्यक्त की गयी प्रसन्नताओं से परिपूर्ण हैं।

फिर भी, राजा अथवा विशेषत: रानी अब भी अप्रिय दल से चिपटी हुई थी। नार्मण्डी की लज्जाजनक पराजय से लौटने के बाद सोमरसेट के ड्यूक का स्वागत एक विजेता के रूप में किया गया तथा वह इंग्लैण्ड का कांस्टेबल या पुलिस का मुख्य अधिकारी बना दिया गया, जब कि विरोधी दल का नेतृत्व करने के लिए आयरलैण्ड से लौटने वाले यार्क के ड्यूक को सुरक्षित रूप से लन्दन पहुँचने के लिए सेना का संगठन करना पड़ा। १४५१ ई० में एक दूसरी पार्लियामेण्ट ने सोमरसेट के निर्वासन की माँग की। हाउस ऑफ कामन्स को यह निश्चय हो गया कि सोमरसेट गद्दी पाने के लिए प्रयत्न कर रहा है। उसने यह प्रार्थना की कि यार्क के ड्यूक को विधिपूर्वक राजा का उत्तराधिकारी मान लिया जाय। किन्तु सरकार अब भी पार्लियामेण्ट की माँगों की अवहेलना कर रही थी। अब लैंकास्टर और यार्क के प्रतिस्पर्द्धी घराने एक दूसरे के विरुद्ध व्यूहबद्ध हो गये। लैंकास्टर के घराने का प्रतिनिधित्व सोमरसेट कर रहा था। इन दोनों के अनुयायी और सैनिक दो पक्षों में संगठित हो गये और उनकी सेनाएँ रणक्षेत्र में उतर पड़ीं।

इन दोनों में लड़ाई छिड़ने में कुछ विलम्ब इस कारण हुआ कि फ्रेंच लोगों ने गुएन्ने पर बड़ा हमला किया था, यह फ्रांस में कैले के अतिरिक्त इंग्लिश लोगों का अन्तिम प्रदेश था। किन्तु १४५ ई० में गुएन्ने अन्तिम रूप से छिन गया। बोफर्ट का दल अन्तिम रूप से बदनाम हो गया। लगभग इसी समय हेनरी षष्ठ का एक लड़का पैदा हुआ और

अभागा राजा पागल हो गया। इन घटनाओं से सोमरसेट का पतन हो गया। रानी ने भी उसके समर्थन का साहस नही किया। हाउस ऑफ लार्ड्स ने अत्यन्त सावधान मृदुता के साथ व्यवहार करने वाले यार्क को राजा की बीमारी में (१४५४ ई०) राज्य का संरक्षक और प्रतिरक्षा करने वाला घोषित किया। सोमरसेट को लन्दन के किले में डाल दिया गया और यार्क दल के प्रमुख सदस्य शक्तिशाली युवक वार्विक के अर्ल, रिचर्ड नेविल आदि को कौंसिल में स्थान दे दिये गये। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो एक शक्तिपूर्ण क्रान्ति ने बोफर्ट दल के कुशासन को समाप्त कर दिया है। किन्तु इस दल के कुलीन सरदार खुल्लमखुल्ला लड़ाई के लिए तैयार हो रहे थे। वे फ्रांस से लौटने वाले उन सिपाहियों को सेना में भर्ती कर रहे थे, जिनकी अब फ्रांस में आवश्यकता नहीं थी।

दुर्भाग्यवश वर्ष की समाप्ति से पहले ही राजा का पागलपन ठीक हो गया। यार्क का संरक्षण समाप्त हो गया। उसके पक्षपाती परिषद से निकाल दिये गये। सोमरसेट को पुनः शक्ति प्रदान की गयी और उसने तथा रानी ने एक पार्लियामेण्ट की नहीं, अपितु अपने दल के कुलीन सरदारों की परिषद को बुलाने की तैयारी इस उद्देश्य से की कि 'राजा के शत्रुओं से उसके शरीर की रक्षा की जा सके।' इसका अर्थ स्पष्ट था कि इस प्रकार यार्क के दल वालों का विनाश किया जाना था। उनके आगे शस्त्र धारण करने के अतिरिक्त कोई उपाय न था, इसके परिणामस्वरूप गुलाबों के युद्ध शुरू हो गये।

२. गुलाबों के युद्ध (Wars of Roses)

ये भीषण और घातक युद्ध मुख्य रूप से कुलीन सरदारों के गुटों के मध्य में संघर्ष थे। इस युद्ध में यार्क और लैंकास्टर की होड़ कुलीन सरदारों के सब प्रकार के पारिवारिक झगड़ों से बहुत जटिल बन गयी थी और वैयक्तिक विद्वेषों ने इसमे उतना ही बड़ा भाग लिया, जितना सार्वजनिक नीति ने। कुल मिला कर राष्ट्र का इससे बहुत कम सम्बन्ध था। देश के अत्यधिक विकसित हिस्से, व्यापारिक नगर और उन्नतिशील औद्योगिक जिले यार्कदल के उद्देश्य के समर्थक थे, क्योंकि उन्हें व्यवस्था और उत्तम शासन की कोई आशा प्रदान करने वाला दल यही प्रतीत होता था। लैंकास्ट्रियन दल अपनी शक्ति मुख्य रूप से उत्तर के, वेल्स के तथा दक्षिण पश्चिम के अधिक पिछड़े प्रदेशों से प्राप्त कर रहा था। किन्तु सच तो यह है कि जनता के अधिकांश भाग ने—किसानों, व्यापारियों और जुलाहों ने—इस लड़ाई में लगभग कोई भाग नहीं लिया और वे नगर सौभाग्यशाली थे, जो इसके लिए अपने दरवाजे बिलकुल बन्द रखने में समर्थ हुए। लड़ाई राष्ट्रीय सेनाओं द्वारा नही, अपितु कुलीन सरदारों के सशस्त्र सैनिकों द्वारा हुई और अधिकांश मामलों में लड़ने वालों की संख्या बहुत कम थी। किन्तु यह संघर्ष असाधारण रूप से निर्मम रीति से चलाया गया और दोनों पक्षों की ओर से, विशेष रूप से वेकफील्ड की लड़ाई के बाद से विजेताओं के हाथ में पड़ने वाले प्रत्येक नेता की हत्या करना एक नियमित परिपाटी बन गयी। जो लोग भाग जाते थे, उनको अपने समर्थकों से भरी हुई पार्लियामेण्टों में जल्दी से पास कराये गये उत्तराधिकार, सम्पत्ति और नागरिक अधिकारों से वंचित करने वाले व्यापक कानूनों

(Acts of Attainder) द्वारा बिना अभियोग चलाये ही दण्डित किया जाता था। इस परिपाटी का यह परिणाम हुआ कि पुराना कुलीन वर्ग लगभग समाप्त हो गया और राजकीय सत्ता की पुनः स्थापना तथा व्यवस्था और कानून की पुनः स्थापना (Restoration) का मार्ग प्रशस्त हो गया।

इन युद्धों के घटनाक्रम का अत्यन्त संक्षिप्त विवरण पर्याप्त है।[१] पहली लड़ाई (St. Albans, 1455) बहुत छोटी थी। इसमें यार्किस्ट दल ने वार्विक के युवा अर्ल की सैनिक योग्यता के कारण विजय प्राप्त की और सोमरसेट का ड्यूक कत्ल कर दिया गया। इसके बाद चार वर्ष तक बेचैन शान्ति बनी रही, इसमें रानी मार्गरेट अपने दल के पुनः संगठन में और अपने प्रतिस्पर्द्धियों के विनाश की तैयारी में लगी रही। इसके पश्चात् (१४५६ ई०) लड़ाई फिर शुरू हो गयी। यद्यपि यार्किस्ट नेताओं ने ब्लोर हीथ की मुठभेड़ मे विजय प्राप्त की, तथापि उन्हें अपनी स्थिति निराशापूर्ण प्रतीत हुई और यार्क को भाग कर आयरलैण्ड तथा वार्विक को कैले जाना पड़ा। अपने समर्थकों से भरी हुई एक पार्लियामेण्ट, इस समय निर्वाचकों से भी कोई परामर्श लिये बिना, मुख्य रूप से शैरिफों द्वारा मनोनीत की गयी थी। इस पार्लियामेण्ट द्वारा हारे हुए दल के विनाश को पूरा करने का काम लिया गया। इसने यह कार्य उत्तराधिकार, नागरिक अधिकार और सम्पत्ति छीनने वाले कानून (Act of Attainder) के नये हथियार से किया। इस कानून द्वारा, अभियोग के किसी आभास के बिना सरल रीति से अपराधियों के एक समूह को मृत्यु एवं जब्ती का दण्ड दे दिया गया। इसी बीच में यार्क ने अपने को आयरलैण्ड का स्वामी बना लिया और अत्यन्त योग्य तथा साहसी वार्विक कैले तथा समुद्री बेड़े का नियन्त्रण करने लगा।

१४६० ई० में निर्वासित व्यक्तियों में से वार्विक कैन्ट के तथा यार्क लंकाशायर के समुद्र तट पर उतरा। वार्विक ने नार्थम्पटन में लैंकास्ट्रियन दल की मुख्य सेना को हराया तथा साधारण सैनिकों को भाग जाने दिया, किन्तु सभी नाइट लोगों तथा कुलीन सरदारों को कत्ल किया; राजा हेनरी षष्ठ स्वयं उसके हाथों में पड़ गया। रानी मार्गरेट वेल्स भाग गयी। यहाँ एक वेल्स भद्र व्यक्ति ओवेन ट्यूडर लैंकास्ट्रियन दल का समर्थक था। उसने हेनरी पंचम की विधवा से विवाह किया था और उसके दो बेटे थे। इनमें से बड़े बेटे रिचमाण्ड के अर्ल ने बोफर्ट की उत्तराधिकारिणी से विवाह किया था, किन्तु लैंकास्ट्रियन दल पर्सीज वंश में तथा उत्तर के अन्य बड़े घरानों में सबसे अधिक शक्तिशाली था। १४६० ई० के अन्त में इनकी सेनाओं ने वेकफील्ड में यार्क के ड्यूक को हराया और उसकी हत्या की तथा इन्होंने अत्यधिक नृशंसता के साथ न केवल सभी नेताओं का, बल्कि सभी अनुयायियों का भी वध किया। यार्क के ड्यूक के तथा उसके १७ वर्षीय बेटे के कटे हुए सिर यार्क (York) शहर के द्वारों के ऊपर टाँग दिये गये। इसके बाद दक्षिण की ओर बढ़ती हुई रानी की सेना ने सेन्ट अलबन्स के दूसरे युद्ध में (फरवरी, १४६१ ई०) वार्विक को हराया और हेनरी षष्ठ को पुनः पकड़ लिया। किन्तु इस बीच में यार्क के ड्यूक के बड़े

---

१. इन लड़ाइयों के नक्शे के लिए देखिये एटलस की प्लेट सं० ३४

लड़के, मार्च के अर्ल एडवर्ड ने मोर्टीमर क्रास (फर०) में वेल्स के लैंकास्ट्रियन दल पर पूर्ण विजय प्राप्त की और मार्च, १४६१ ई० में प्रमुख लैंकास्ट्रियन सेना यार्कशायर में टौटन नामक स्थान पर पूर्ण रूप से हरा दी गयी। यहाँ का हत्याकाण्ड भयानक था। अधिकांश लैंकास्ट्रियन नेता लड़ाई में मारे गये। शेष नेता इस लड़ाई के बाद मार डाले गये और इंग्लैण्ड यार्किस्ट लोगों के हाथ में आ गया। रानी ने अपने पति और पुत्र के साथ स्काटलैण्ड में शरण ली।

३. यार्क का वंश और राजकीय शक्ति की पुनः स्थापना

टौटन की लड़ाई के साथ यार्क वंश का शासन निश्चित रूप से शुरू हो गया, यद्यपि अभी काफी लड़ाई होनी थी। सबसे बड़ी विजय से पहले ही, मार्च के अर्ल को एडवर्ड चतुर्थ के नाम से एक विशेष रूप से बुलायी गयी पार्लियामेण्ट में राजा घोषित कर दिया गया। लड़ाई के बाद नयी पार्लियामेण्ट ने समूचा उत्तराधिकार, सम्पत्ति और नागरिक अधिकारों से वंचित करने वाला एक कानून (Act of attainder) पास किया, इसमें जीवित और मृत १४ लार्डों को तथा हेनरी षष्ठ के १०० से अधिक अनुयायियों को सम्मिलित कर लिया गया था। उस अभागे जड़मति हेनरी षष्ठ को राजगद्दी के अपहरणकर्त्ता एवं देशद्रोही के रूप में दण्डित किया गया। उसको न केवल राजमुकुट से, अपितु लैंकास्टर घराने की पारिवारिक जागीरों से वंचित कर दिया गया। हारे हुए दल की जब्त की गयी असीम जमीनों से एडवर्ड के अनुयायियों को अत्यधिक समृद्ध किया गया। सबसे बढ़ कर यह हुआ कि वह अपने मुकुट के लिए वार्विक के जिस अर्ल का मुख्य रूप से ऋणी था, वह राज्य में सबसे अधिक शक्तिशाली व्यक्ति और इसका क्रियात्मक अधिनायक बन गया। अपनी समूची योग्यता के बावजूद, विलासी और आलसी नवीन राजा कुछ समय तक अपने शक्तिशाली सहायक के हाथों में शासन का सर्वोच्च नियन्त्रण छोड़ कर ही सन्तुष्ट बना रहा।

उग्र तथा वीर रानी अपनी हार स्वीकार करने को राजी न थी। अदम्य शक्ति के साथ उसने १४६३ ई० में नार्थम्बरलैण्ड पर निष्फल आक्रमण किया। १४६४ ई० में, उत्तर में लैंकास्टर दल की अन्तिम सेनाएँ हैजली मूर तथा हैक्स हेम में हरा दी गयीं। इन विजयों के बाद अत्यधिक रक्तरंजित वधों का सिलसिला शुरू हुआ। गुलाबों के युद्ध के नाटक का पहला अंक समाप्त हो गया। नये राजा की स्थिति उस समय पूर्ण रूप से सुरक्षित बन गयी प्रतीत होती थी, जब कि १४६६ ई० में वेश बदल कर एक घर से दूसरे घर में परिभ्रमण करने वाला हेनरी षष्ठ लंकाशायर में पकड़ा गया और उसे लन्दन के किले में कैद कर दिया गया।

एडवर्ड चतुर्थ के राज्य का पहला काल १४६१ से १४७१ ई० तक था। इसकी दो बड़ी विशेषताएँ थीं। पहली विशेषता यह थी कि पार्लियामेण्ट के प्रभाव में निरन्तर क्षीणता आ रही थी। राजा लैंकास्ट्रियन जागीरों की जब्तियों से समृद्ध होने के कारण तथा विदेशी युद्ध का भार न होने से पार्लियामेण्ट के अनुदानों पर निर्भर नहीं था। यद्यपि पार्लियामेण्ट

की बैठक कई बार हुई, किन्तु इसने कोई कार्य नहीं किया। इसके उत्कर्ष के दिन लद गये थे, अराजकता से परिश्रान्त राष्ट्र इस बात से सन्तुष्ट था कि ऐसा ही होना चाहिये था।

दूसरी विशेषता यह थी कि एडवर्ड चतुर्थ तथा वार्विक के महान अर्ल के सम्बन्धों में निरन्तर तनाव बढ़ता गया। वार्विक शान्ति तथा फ्रांस के साथ सन्धि भी चाहता था। फ्रांस का चालाक राजा लुई एकादश बड़ी तेजी से राजकीय शक्ति की स्थापना कर रहा था और बर्गण्डी के शक्तिशाली घराने के साथ एक बड़े उग्र संघर्ष में लगा हुआ था। दूसरी ओर एडवर्ड बर्गण्डी के साथ परम्परागत मित्रता को जारी रखना अधिक अच्छा समझता था। १४६० ई० में उसने अपनी बहिन का विवाह बर्गण्डी के युवा ड्यूक-साहसी चार्ल्स के साथ कर दिया।

किन्तु लम्बे समय तक उसने वार्विक को फ्रेंच राजा के साथ सन्धि वार्ता करने तथा एक फ्रेंच विवाह के लिए प्रस्ताव करने तक की भी अनुमति दी। इसी बीच में राजा ने अपने लिये एक वधू का वरण किया। यह विधवा थी, उससे पाँच वर्ष बड़ी थी तथा लैंकास्ट्रियन दल के साथ सम्बद्ध एक छोटे कुलीन वर्ग के परिवार की थी। उसने इस तथ्य की सूचना उस क्रुद्ध वार्विक को दी, जिसे उसने फ्रेंच वधू की वार्ता के लिए अनुमति दी हुई थी। वास्तव में, वह पाँच महीने पहले ही उससे विवाह कर चुका था। महान अर्ल के गुस्से को अधिक बढ़ाने वाली बात यह थी कि राजा ने जब्त की हुई लैंकास्ट्रियन जमीनों में से कुछ जागीरें और पद अपनी पत्नी के सम्बन्धियों को देना शुरू किया। यह कोई कृपा नहीं थी। एडवर्ड चतुर्थ बहुत बातों में चार्ल्स द्वितीय से सादृश्य रखता था और वह उसके ही समान अपने उपायों में अतीव चतुर था। वह जानबूझ कर अपने पर आश्रित रहने वाले एक नवीन कुलीन वर्ग को बनाने का प्रयत्न कर रहा था, जो वार्विक की तथा नेविल कुल के अन्य सरदारों की अत्यधिक प्रबल शक्ति का सन्तुलन कर सके।

इसका परिणाम यह हुआ कि वार्विक ने इस बात का संकल्प कर लिया कि वह अपने उस अकृतज्ञ स्वामी को पदच्युत करेगा, जिसे उसने गद्दी पर बिठाया था। एक अव्यवस्थित संघर्ष (१४६९-७०) में पहले तो एडवर्ड वार्विक के हाथों में कैद हो गया और बाद में वार्विक को भगोड़े के रूप में कैले चला जाना पड़ा। इसके बाद एडवर्ड स्वयमेव देश से भागने के लिए बाधित हुआ (१४७०)। राजनिर्माता वार्विक ने निर्बल और बूढ़े राजा हेनरी षष्ठ को लन्दन के किले की कैद से निकाला और उसे गद्दी पर बैठाया। किन्तु अगले ही वर्ष एडवर्ड बरगण्डी के ड्यूक द्वारा मुख्य रूप से दी गयी सेनाओं का नेतृत्व करते हुए इंग्लैण्ड वापस लौटा। बारनेट की लड़ाई में (एप्रिल १४७१ ई०) वार्विक को हराया गया और कत्ल किया गया। ट्यूकैसबरी (मई) की लड़ाई में पश्चिम के लैंकास्ट्रियन पूर्ण रूप से नष्ट कर दिये गये। इस भीषण हत्याकाण्ड में हेनरी षष्ठ का पुत्र एवं उत्तराधिकारी युवा राजकुमार एडवर्ड भी सम्मिलित था। लैंकास्टर का वंश समाप्त हो गया। राजघराने की इस शाखा का एक मात्र सम्भव जीवित प्रतिनिधि रिचमाण्ड का हेनरी था, जो वैल्श भद्रजन ओवन ड्यूडर का पोता और मार्गरेट बोफर्ट का पुत्र था।

१४७१ से १४८३ ई० तक एडवर्ड चतुर्थ की शक्ति सर्वोच्च थी। वह बड़ा विनोदी, दुराचारी, आरामपसन्द, अत्यधिक आलसी और किसी बड़े साहसिक कार्य को करने का कष्ट उठाने को अनिच्छुक राजकुमार था। उसने अपने साले बर्गण्डी के चार्ल्स को नाराज कर दिया, क्योंकि उसने उसे यह वचन दिया था कि वह उसको फ्रांस के विरुद्ध सहायता देगा। किन्तु लुई ११वें ने उसे पेंशन देकर अपने पक्ष में कर लिया (१४७५ ई०)। वह केवल विलासी ही नहीं था, अपितु उस समय वह ऐसी घिनौनी क्रूरता प्रदर्शित कर सकता था, जब कि यह उसकी सुरक्षा के लिए उपयोगी प्रतीत हो। उसने युद्ध में प्रायः ऐसा ही किया। उसने अपने भाई क्लैरेन्स के ड्यूक को नागरिक अधिकारों, सम्पत्ति और उत्तराधिकारों से वंचित करवाने में तथा उसकी हत्या करने में पुनः ऐसा ही प्रदर्शन किया। वह इतना चतुर था कि उसने यह अनुभव कर लिया कि जहाँ तक सम्भव हो, पार्लियामेण्ट के बिना ही काम चलाना वांछनीय है, और उसने इसे बहुत ही कम बुलाया। उसने सुव्यवस्थित रूप से इस बात का प्रयत्न किया कि वह राजमुकुट पर अवलम्बित रहने वाले नवीन कुलीन वर्ग का सृजन करे। जब वह ४० वर्ष से भी कम अवस्था में, एक जर्जर विलासी के रूप में मरा, तब वह इंगलैण्ड को वैध राजतन्त्र से निरंकुश शासन जैसी वस्तु में परिणत करने की दिशा में पहले ही बहुत दूर तक जा चुका था।

एडवर्ड चतुर्थ के सब दोषों के बावजूद, उस समय इंग्लैण्ड की राजगद्दी पर यार्क का घराना सुरक्षित रूप से प्रतिष्ठित हुआ प्रतीत होता था, जब कि उसके बाद उसका युवा बेटा एडवर्ड पंचम गद्दी पर बैठा। दो वर्ष के भीतर ही इस वंश का पतन हो गया। यह इसलिए हुआ कि इसका संचालन एक अपराधी और पूर्ण रूप से न्यायान्यायविचारशून्य व्यक्ति के हाथों में पड़ गया। यह क्रूर पेड्रो की भाँति निर्दय था तथा इसकी धमनियों में उसका रक्त बह रहा था। ग्लास्टर के ड्यूक, एडवर्ड चतुर्थ के भाई रिचर्ड ने प्रशासक और सेनापति के रूप में उत्तम ख्याति प्राप्त की थी। किन्तु कोई नैतिक बुद्धि न होने के कारण वह इस समय अपने लोभ का संवरण नहीं कर सका, जब कि उसने अपने तथा राजगद्दी के बीच में केवल दो लड़कों को पाया। उसने अपना पक्ष लेने के लिए कुछ बड़े कुलीन सरदारों को घूस दी, कुछ को जेल में बन्द किया और ऐसे कुछ व्यक्तियों को बिना अभियोग के मरवा डाला, जिनके बारे में यह निश्चित था कि वे उसका विरोध करेंगे। इनमें राजमाता के कुछ सम्बन्धी, विशेष रूप से सम्मिलित थे। उसने अपने दो भतीजों को लन्दन के किले में कैद करवा दिया और राजमुकुट स्वयमेव धारण किया। उसके राज्याभिषेक के कुछ दिनों बाद दोनों राजकुमारों का वध कर दिया गया। ये काले कारनामे ऐसे भीषण थे कि रक्त और क्रूरता से पूर्ण १५वीं शती का इंग्लैण्ड भी इनको सहन नहीं कर सकता था। यहाँ तक कि रिचर्ड के प्रमुख साथी ड्यूक ऑफ बकिंघम ने भी जब इन जघन्य हत्याओं की बात सुनी तो विद्रोह कर दिया, किन्तु उसका भी वध करवा दिया गया।

इन आतंकपूर्ण कृत्यों ने लैंकास्टर के विनष्ट वंश को एक अवसर प्रदान किया। अगले दो वर्ष में एक सामान्य विद्रोह के लिए इंग्लैण्ड में व्यापक षड्यन्त्र किये जाते रहे।

षड्यन्त्रकारियों की यह योजना थी कि वे निर्वासित रिचमण्ड के अर्ल को वापस लायें। यह पिता की ओर से सादे वैल्श भद्रजन-ओवेन ट्यूडर का पोता था और माता की ओर से गौन्ट के जान के अवैध पुत्र जान बोफर्ट का पोता था। षड्यन्त्रकारी एडवर्ड चतुर्थ की लड़की तथा हत्या किये गये राजकुमारों की बहिन एलिजाबेथ के साथ उसकी शादी करके राजगद्दी के लिए यार्किस्ट और लैंकास्ट्रियन पक्षों के दावों का समन्वय करना चाहते थे। यह कानाफूंसी की गयी कि इस प्रकार की बात से डरते हुए अपराधी राजा ने यह विचार किया कि वह अपनी पत्नी को तलाक दे कर वास्तव में अपनी भान्जी से शादी कर ले। वह उन लड़कों की बहिन थी, जिनकी उसने हत्या करवायी थी। किन्तु अगस्त १४८५ ई० में फ्रांस से दिये गये धन और सैनिकों की सहायता लेकर रिचमण्ड का हेनरी वेलस के समुद्र तट पर उतरा। वहाँ वेल्सवासी होने के नाते उसे समर्थन पाने का पूरा विश्वास था। वह वेल्स में होते हुए, श्र्यूज़बरी (Shrewsbury) की ओर बढ़ा, वहाँ कुछ असन्तुष्ट इंग्लिश व्यक्ति उसके साथ मिल गये। उसके पास उस समय केवल पाँच हजार सैनिक थे, जब कि उसने लीसेस्टर में अपनी फौज एकत्र करते हुए रिचर्ड के विरुद्ध कूच किया था। इसी समय स्टेनली लोगो की लैंकाशायर और चेशायर की जमीनों से एक तीसरी सेना स्वतन्त्र रूप से निकट आ रही थी और यह अभी किसी पक्ष में सम्मिलित नही थी। २१ अगस्त को बाज़्वर्थफील्ड का निर्णायक युद्ध लड़ा गया। रिचर्ड की अपनी सेना के कुछ भाग ने उसे धोखा दिया। स्टेनली लोगों ने जब यह देखा कि वह हारने वाला है तो वे उसके विरोधी पक्ष में सम्मिलित हो गये। यद्यपि अपराधी राजा अन्त तक निराशोन्मत्त वीरता के साथ लड़ता रहा, तथापि वह पूर्ण रूप से हरा दिया गया और रणक्षेत्र में मारा गया। उसका विध्वस्त राजमुकुट हाथार्न की एक झाड़ी में पाया गया और इसे स्टेनली ने रिचमण्ड के सिर पर रखा। सेना ने हेनरी सप्तम के रूप में उसे राजा घोषित किया। इस प्रकार गुलाबों के भीषण युद्ध समाप्त हो गये।

बाज़्वर्थ की लड़ाई ने न केवल १५वी शती की अराजकता का अन्त किया, अपितु इसने इंग्लिश जनता के वर्तमान युग में लिये जाने वाले भाग की लम्बी तैयारी भी समाप्त की। अब मध्ययुग अपनी समाप्ति पर था और विश्व की राजनीति में, विचारों के क्षेत्र में और सम्भवतः सबसे अधिक भौगोलिक अन्वेषण के क्षेत्र में, इस युग के सब चिह्न यह प्रदर्शित कर रहे थे कि एक नवयुग का प्रारम्भ होने वाला है। जहाँ तक इस द्वीपसमूह का सम्बन्ध था, इस नवयुग का उज्ज्वल चिह्न यह तथ्य था कि चारों राष्ट्रों में से सबसे बड़े इंग्लैण्ड ने बाज़्वर्थ के मैदान में एक वैल्श राजा को प्राप्त किया था और इन द्वीपों के एकीकरण की प्रक्रिया एक कदम आगे ले जायी गयी थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Oman, History of England, 1377-1485, is a good account of this dismal period; See also his Warvick the Kingmaker; **Vickers,** England

in the later Middle Ages, **Stubbs,** Constitutional History, Vol. III; **Ramsay,** Lancaster and York; **Paston Letters** (Ed. Gairdner), with long introduction; **Gairdner,** Richard III, **Denton,** England in the fifteenth Century; **Mrs. J.R. Green,** English Town Life in the fifteenth Century; **Kingsford,** Promise and Prejudice in the fifteenth Century; **Schofield,** Life and Reign of Edward IV. A selection of contemporary materials is provided by **Garmon Jones,**, York and Lancaster.

• •

१०

पिछले मध्य युग में वेल्स, स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड की दशा

इस पुस्तक में हमारा ध्यान मुख्य रूप से इंग्लैण्ड के इतिहास पर रहा है, क्योंकि इस युग में इंग्लैण्ड की घटनाओं ने, विशेष रूप से उसकी संस्थाओं के विकास ने और फ्रांस के साथ उसके युद्धों ने इस द्वीप के सभी लोगों के इतिहास पर काफी बड़ा प्रभाव डाला था। दूसरी जातियाँ कम या अधिक रूप में एक पृथक जीवन को बिता रही थी, और अपने विकास में इतनी आगे नहीं बढ़ी हुई थी, अतः हमें यहाँ उनके इतिहास के केवल सामान्य सर्वेक्षण की ही आवश्यकता है।

१. वेल्स (Wales)

एडवर्ड प्रथम की विजय के बाद से वेल्स ने आन्तरिक शान्ति का ऐसी मात्रा में उपभोग किया, जैसा उसने पहले कभी नहीं किया था। इस शान्ति की स्थापना में इंगिलश राजाओं के उन विदेशी युद्धों से सहायता मिली, जिन युद्धों ने वेल्स के अत्यधिक उपद्रवी और लड़ाकू भद्र वर्ग को तथा उनके अनुयायियों को अपनी ओर खींच लिया था। वैल्श लोगों ने फ्रांस के साथ चलने वाले लम्बे युद्धों में एक बड़ा महत्वपूर्ण भाग लिया। शेक्सपियर ने इस भाग के प्रति वीर वैल्श सेनानी फ्लूएलिन (लुएलिन) के पात्र के रूप में अपनी कुछ श्रद्धाञ्जलि भेंट की है। इस शान्ति के कारण, पहली बार वैल्श लोगों में व्यापार और उद्योग की कुछ उन्नति हुई। एडवर्ड प्रथम के बाद के इंगिलश

राजाओं ने वेल्स के नगरों को राजकीय अधिकारपत्र (चार्टर) प्रदान करके इस विकास को प्रोत्सहित किया। ये नगर अब देश के जीवन में महत्वपूर्ण भाग लेने लगे और वेल्स की पहाड़ियों की भेड़ों से पोषित होने वाला ऊन का उद्योग इस छोटे बन्जर पर्वतीय देश में कुछ धन लाने लगा। किन्तु इस समय इंग्लिश प्रभाव के मुख्य केन्द्र-नगरो में और अपना विशुद्ध वेल्स स्वरूप बनाये रखने वाले ग्रामीण जिलों में बड़ी शत्रुता थी। इन ग्रामीण जिलों मे चारणों के गीत अब भी देश की प्राचीन काव्यमय परम्परा को जीवित रखे हुए थे।

देश में विराजमान शान्ति और व्यवस्था के बावजूद, वेल्सवासियों मे राष्ट्रीयता की भावना अब भी प्रबल और सजीव थी। इसका प्रमाण ओवन ग्लेण्डोवर के विद्रोह की असाधारण सफलता में पाया जाता है। इसके बारे में अन्यत्र कुछ कहा जा चुका है।[१] छः वर्ष तक ओवन ग्लेण्डोवर व्यावहारिक रूप से स्वतन्त्र वेल्स का असदिग्ध स्वामी था। उसका लक्ष्य वैल्श राष्ट्रीयता का संगठन था। वह इग्लिश पार्लियामेण्ट के आदर्श पर एक वैल्श पार्लियामेण्ट की स्थापना करना चाहता था। उसने मैकिनलैथ में अब तक ओवन ग्लैण्डोवर के पार्लियामेण्ट भवन के नाम से प्रसिद्ध इमारत में ऐसी संस्था की एक बैठक भी बुलायी, किन्तु आरम्भिक सफलता के बाबजूद, उसके विद्रोह का आरम्भ से ही विफल होना निश्चित था। इसका मुख्य महत्व इस बात में है कि इसने यह प्रदर्शित किया कि अब भी वैल्श राष्ट्रीय भावना कितनी प्रबल है।

गुलाबों के युद्ध में वेल्स ने एक बड़ा महत्वपूर्ण भाग लिया और अब पहली बार वह अपने बड़े साझीदार-इंग्लैण्ड के इतिहास को प्रभावित करने लगा। यार्किस्ट दल ने अपनी बहुत सी शक्ति मार्च के अर्ल के सीमान्त प्रदेशों—मार्टीमर घराने की जागीरों से प्राप्त की थी। किन्तु वास्तविक वेल्स लैंकास्ट्रियन दल का पक्षपाती था। यह मुख्य रूप से एंगलसी (Anglesy) के उस वीर भद्रजन के प्रभाव का परिणाम था, जिसने हेनरी पंचम की फ्रेंच विधवा के साथ इतना आश्चर्यजनक विवाह किया था। उसके बेटे रिचमाण्ड के अर्ल-एडमन्ड और पेम्ब्रोक के अर्ल-जैस्पर लैंकास्ट्रियन पक्ष के सबसे अधिक राजभक्त समर्थक थे।

एडमन्ड ट्यूडर ने गौन्ट के जान की पोती मार्गरेट बोफोर्ट के साथ विवाह किया और इनका बेटा हेनरी ट्यूडर अन्त में राजगद्दी पर दावा करने वाले लैंकास्ट्रियन दल का प्रतिनिधि बन गया। स्वाभाविक रूप से हेनरी ट्यूडर ने वेल्स से ही उन सेनाओं का अधिकांश भाग प्राप्त किया, जिन सेनाओं ने बाज़वर्थ की लड़ाई में विजय पायी थी। इंग्लिश राजगद्दी पर वेल्स का एक ऐसा राजवंश आया, जो इंगलैंण्ड पर शासन करने वाले राजवंशों में सबसे अधिक प्रसिद्ध था। इसके साथ ही दोनों देशों के इतिहास में एक नवयुग का आरम्भ हुआ। ट्यूडर राजाओं का एक कार्य दोनों देशों को अन्तिम रूप से और पूर्ण

---

१. देखिये पीछे, अध्याय ७, पृ० १६६

रूप से एक बनाना था। यद्यपि दोनों राष्ट्र पृथक् बने रहे, तथापि वे अविच्छेद्य रूप से साझीदार हो गये।

२. स्काटलैण्ड

राबर्ट द्वितीय, १३७१ : राबर्ट तृतीय, १३९० : जेम्स प्रथम, १४०६ : जेम्स द्वितीय, १४३७ : जेम्स तृतीय, १४६० : जेम्स चतुर्थ, १४८८ ई० ।

इस समूचे युग के स्काटलैण्ड का इतिहास इंगलैण्ड के साथ छुटपुट-लड़ाइयों का और राजा तथा कुलीन सरदारों के बीच होने वाले आन्तरिक झगड़ों का नीरस प्रलेख-मात्र है। इन संघर्षों में अनेक अनोखी तथा रोमांचक घटनाएँ हुई हैं। इनमें से कुछ घटनाओं का सजीव चित्रण स्काट के Tales of a Grandfather में है, किन्तु इन घटनाओं ने राष्ट्र के विकास पर बहुत कम प्रभाव डाला और हम इन्हें छोड़ देना चाहते है। स्काटलैण्ड के पास वास्तव में एक पार्लियामेण्ट थी, किन्तु इसने राष्ट्र के जीवन में कभी वैसा भाग नही लिया, जैसा इंग्लिश पार्लियामेण्ट ने लिया था। इसका कुछ कारण तो यह था कि स्काटलैण्ड के राजा से न केवल अपनी ही आमदनी से जीवन बिताने की आशा की जाती थी, अपितु वह सामान्य रूप से अपनी ही आय से अपना काम चलाता था। अतः पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता को बनाये रखने के लिए आवश्यक वित्तीय सहायता के हथियार का वहाँ अभाव था। किन्तु स्काटिश पार्लियामेण्ट की निर्बलता मुख्यतः इसके संविधान के कारण थी। इसमें सभी बड़े बैरन, प्रिलेट (विशप और मठाधीश) और राजकीय अधिकारपत्र प्राप्त नगरों के पुरप्रतिनिधि हुआ करते थे। पुरप्रतिनिधि पहली बार १३२६ में राबर्ट ब्रूस द्वारा बुलाये गये थे। किन्तु वे १५वी शताब्दी के मध्य तक पार्लियामेण्ट का आवश्यक भाग नहीं समझे गये प्रतीत होते थे। इसके अतिरिक्त आरम्भ से ही वे नगरवासियों के सम्पूर्ण समुदाय से नहीं, किन्तु नगरपरिषदों द्वारा चुने जाते थे। अतः पुरप्रतिनिधि वास्तविक प्रतिनिधि नहीं थे। स्काटिश पार्लियामेण्ट में जिलों से निर्वाचित होने वाले नाइट लोगों जैसा कोई तत्व नहीं था। जिले से आने वाले नाइट इंग्लैण्ड की कामन सभा के सबसे अधिक प्रभावशाली भाग का निर्माण करने वाले थे। जिले के निर्वाचित नाइट लोगों से सादृश्य रखने वाला कोई तत्व स्काटिश पार्लियामेण्ट में नहीं था। वस्तुतः इंग्लैण्ड में चिरकाल तक कारावास में रहने वाले राजा जेम्स प्रथम ने १४२७ ई० में प्रत्येक शायर के भद्रवर्ग के लिए और स्वतन्त्र पट्टा रखने वालों के लिए दो या अधिक बुद्धिमान व्यक्तियों के निर्वाचन को आवश्यक बना दिया। किन्तु इस उदाहरण की पुनरावृत्ति नहीं की गयी और स्काटिश पार्लियामेण्ट एक ही सदन में बैठने वाले बड़े बैरनों—प्रिलेटों और पुरप्रतिनिधियों की सभा बनी रही। वे तीन सामाजिक वर्गों (Three Estates) का निर्माण करते थे, पार्लियामेण्ट के स्थान पर एस्टेट शब्द का प्रयोग होता था। इसके अतिरिक्त एक ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण परिपाटी विकसित हुई, जिसके अनुसार वर्ग (Estates) अपनी सारी शक्ति एक समिति The Lords of the Articles को दे दिया करते थे, इस समिति को राजा द्वारा अथवा कुलीन सरदारों के एक गुट द्वारा अपने समर्थकों से भरा

जा सकता था और सामान्य रूप से ऐसा होता भी था। इन सब कारणों से स्काटिश पार्लियामेण्ट, कभी भी इंग्लिश पार्लियामेण्ट की तरह राष्ट्रीय दृष्टि से प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों संस्था नहीं बनी।

स्काटलैण्ड में अव्यवस्था का एक मुख्य स्रोत बड़े कुलीन सरदारों के उपद्रवों का दमन करने में राजा की असमर्थता थी। विशेष रूप से अतीव शक्तिशाली और उच्छृंखल डगलस वंश के उपद्रवों को राजा नहीं दबा सका। यह वंश इस युग के अधिकांश भाग में राजा पर लगभग हावी रहा। राजा जब कभी उपद्रवियों पर हमला करने की कोशिश करता था, तब उपद्रवी लोग इंग्लैण्ड के साथ मिल जाते थे और जंगली हाइलैण्डस के अविकसित सरदारों के असन्तोष को भड़का देते थे। ये हाइलैण्डस कभी भी न तो पूरी तरह से जीते गये और न ही नियमित शासन में लाये गये। राजा की यह कमजोरी इस युग के स्टीवर्ट राजाओं के चरित्र से तथा दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं की एक शृंखला से अधिक बढ़ गयी थी। राबर्ट द्वितीय वस्तुतः एक अनाकर्षक व्यक्तित्व वाला (Colourless) राजकुमार था, उसका पुत्र राबर्ट तृतीय एक निर्बल व्यक्ति था। उसने सारी शक्ति अपने भाई एलबेनी के ड्यूक के हाथों में दे दी। एलबेनी ने अपने भतीजे-रोथसे के ड्यूक की हत्या करवा दी (१४०२ ई०)। गद्दी का अगला उत्तराधिकारी रोथसे का छोटा भाई जेम्स फ्रांस जाते हुए दुर्भाग्य से इंग्लिश लोगों द्वारा पकड़ लिया गया और १४२४ ई० तक बन्दी के रूप में रखा गया था। इस समय एलबेनी और उसका बेटा वैरनों के आपसी संघर्ष से विभक्त देश पर राजा के संरक्षक के रूप में शासन करते रहे। जेम्स प्रथम एक योग्य पुरुष और अच्छा कवि था। उसने अपने राज्य काल के १८ वर्ष लन्दन के किले में कैदी के रूप में बिताये थे। उसने बोफर्ट वंश की एक कन्या से विवाह किया था और १४२४ ई० में उसे मुक्त कर दिया गया। वह व्यवस्था स्थापित करने का दृढ़ निश्चय करके वापस लौटा, किन्तु कुलीन सरदारों पर अपने आक्रमणों में वह अत्यधिक उग्र तथा जल्दबाज था। एक बड़े तूफानी राज्यकाल के बाद १४३७ ई० में सरदारों ने उसकी हत्या कर दी। जेम्स द्वितीय गद्दी पर बैठने के समय आठ वर्ष का लड़का था। उसकी अव्यवस्थापूर्ण अल्पवयस्कता ने उसके पिता का सारा कार्य मलियामेट कर दिया। जब वह बालिग हुआ, तब उसने डगलस लोगों पर कुछ सफलता के साथ हमले किये। किन्तु वह ३० वर्ष की आयु में बोफर्टवंशी ममेरे भाइयों की सहायता के लिए इंग्लैण्ड पर किये गये एक हमले में मारा गया। एक बार पुनः लम्बी अल्पवयस्कता शुरू हुई, इसमें युवा राजा जेम्स तृतीय सरदारों के एक गुट के प्रभाव से दूसरे गुट के प्रभाव में जाता रहा। जब वह बड़ा हुआ तो उसने नार्वे की राजकन्या के साथ शादी की (१४६९ ई०)। यह कन्या अपने साथ अपने दहेज के रूप में आर्कनी और शेटलैण्ड के प्रदेश लायी। किन्तु उसका शासनकाल भी पूर्ववर्तियों के शासनकाल की भाँति विक्षुब्ध रहा। विद्रोह और हत्यायें निरन्तर होती रहीं। उसे विशेष रूप से अपने भाइयों के विश्वासघात का शिकार होना पड़ा। उसके भाई इंग्लैण्ड के राजा एडवर्ड चतुर्थ के साथ मिलकर उसके विरुद्ध निरन्तर षडयन्त्र

कर रहे थे। जेम्स तृतीय यदि दुखान्त रीति से न मरता तो वह स्काटलैण्ड का शासन करने वाले स्टूअर्ट वंश का राजा न होता। वह अपने घोड़े से गिर पड़ा और उसे पाप स्वीकार करने के लिए जो पुरोहित आया था, उसने बिस्तर में ही उसकी हत्या कर दी।

यह एक दुखपूर्ण कथा है, फिर भी इस युग में स्काटलैण्ड का इतिहास अराजकता और रक्तपात से ही भरी हुई कथामात्र नहीं है। राजा जेम्स प्रथम ने इंग्लैण्ड में अपनी बन्दी दशा में सम्भवत: The Kings Quhair नामक काव्य लिखा, वह इस युग को विभूषित करने वाले कवियों में से एक था। स्काटलैण्ड के इतिहास को परिपूर्ण करने वाली बदले और अपराध की भयंकर कथाओं ने इस आश्चर्यजनक गीतसाहित्य की सामग्रा प्रदान की। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि स्काटलैण्ड में १४१४ ई० में सैंट ऐण्ड्रयूज़ के तथा १४५१ ई० में ग्लासगो के विश्वविद्यालय बने। भविष्य में स्काटलैण्ड के बड़प्पन को बनाने वाले तथा "जौ के थोड़े भोजन पर सरस्वती की आराधना करने वाले" निर्धन छात्र अब राष्ट्र के जीवन में अपना भाग लेने लगे थे। धार्मिक प्रश्नों में अत्यधिक अनुराग की वह भावना इस युग में आरम्भ हुई कही जा सकती है, जो आधुनिक स्काटलैण्ड की एक प्रधान विशेषता रही है। इंग्लैण्ड से फैलने वाले विक्लिफ के मत (Lollardy) के अनेक अनुयायी यहाँ तथा विशेष रूप से पश्चिमी प्रदेश में हुए। इस धार्मिक आन्दोलन के अंगारे ठण्डे होने से पहले ही 'धार्मिक सुधार' की ज्वाला प्रज्वलित हो उठी।

इस युग में स्काटिश इतिहास की सबसे बड़ी विशेषता स्काट लोगों में तथा इंग्लिश लोगों में अपरिवर्तनशील शत्रुता तथा स्काटलैण्ड और फ्रांस में ऐसी ही सुदृढ़ मित्रता है। यहाँ स्काटिश सेनाओं द्वारा इंग्लैण्ड पर किये जाने वाले अनन्त एवं सामान्यत: निरर्थक हमलों का वर्णन करना व्यर्थ होगा। ये हमले इस सारे युग में निरन्तर चलते रहे और सीमाओं पर युद्ध की सामान्य स्थिति बनी रही। फ्रांस के साथ सन्धि के कारण शतवर्षीय युद्ध के दूसरे दौर में इंग्लिश लोगों के विरुद्ध रणक्षेत्र में विशाल स्काटिश सेनाएँ लायी गयी और पन्द्रहवीं शताब्दी के समूचे शेष भाग में फ्रेंच राजा स्काटिश वेतनभोगी सैनिकों को रखा करते थे।[१]

ऐसा प्रतीत होता था कि मध्य युग की समाप्ति पर स्काट और इंग्लिश लोग अटल रूप से विभक्त थे और इनका अनन्त युद्ध पिछड़ी और उपद्रव पूर्ण दशा का एक प्रधान कारण था। फिर भी, कुछ तत्व दोनों की एकता के कार्य को बढ़ा रहे थे। स्काटलैण्ड के अधिक महत्वपूर्ण भागों में इंग्लिश भाषा बोली जाती थी। स्काटिश कवियों पर इंग्लिश आदर्शों का गहरा प्रभाव था। स्काटिश संस्थाओं को (काफी दूरी से) इंग्लैण्ड की संस्थाओं के नमूने पर ढाला जा सकता था। धार्मिक प्रश्नों पर स्काटिश विचारों का आन्दोलन इंग्लिश विचार धारा का बहुत ऋणी था। विरोधी होने पर भी दोनों राष्ट्र घनिष्ठ

१. स्काट की एक सुन्दरतम कथा Quentin Durward में इस युग में फ्रांस की सेवा करने वाले एवं युवा स्काट के साहसिक कार्यों का वर्णन है।

साझीदार बनने के लिए अनुपयुक्त नही थे। किन्तु स्काटलैण्ड के स्वर्णिम दिन आने वाले थे, ये १६वीं शताब्दी में धार्मिक सुधार के साथ आरम्भ हुए थे।

३. आयरलैण्ड

इस युग में इन द्वीपसमूहो की कथा का सबसे अधिक करुण भाग आयरलैण्ड की कथा है। हेनरी द्वितीय के राज्य काल की पहली नार्मन विजय के बाद से यह एक विभक्त देश था। एडवर्ड प्रथम के शासन काल तक नार्मन बैरनों ने निरन्तर उन्नति की, अपने आयरिश पड़ोसियों को जीता और आयरिश जनजातियों के रिवाजों के स्थान पर सामन्ती कानून को आरम्भ किया। यह एक बड़ी अच्छी बात होती, यदि यह प्रक्रिया आयरलैण्ड में पूरी हो जाती, जैसे कि स्काटलैण्ड के बड़े भाग में यह प्रक्रिया पूरी हुई थी। किन्तु एडवर्ड ब्रूस के आक्रमण के समय (१३१५-१८ ई०) से नार्मन बैरन लोगो की शक्ति आयरलैण्ड के अधिकांश भाग में भग हो गयी और इंग्लिश सरकार की सत्ता निरन्तर क्षीण होने लगी। एडवर्ड तृतीय के राज्यकाल में होने वाले लीसेट ओमोर (Lysaght O'More) जैसे आयरिश सरदारों ने उन सब प्रदेशों को पुनः जीत लिया, जो इंग्लिश शासन में चले गये थे। उन्होंने आयरिश रीति रिवाजों एवं जीवन पद्धति की तथा विशेष रूप से जनजातीय भूधारण (Land tenure) की आयरिश पद्धति तथा भूमि के उत्तराधिकार के आयरिश नियमो की पुनः स्थापना की। कनाट के डीबर्ग या बर्क जैसे कुछ नार्मन बैरन पूर्ण रूप से आयरिश हो गये और उन्होंने भूधारण के आयरिश नियमों को अपनाया। निःसन्देह अपने आप में यह बुरी बात नहीं थी, किन्तु इसका बुरा परिणाम यह हुआ कि दोनों प्रजातियों (Races) में तीव्र अन्तर निरन्तर बढ़ता चला गया और आयरलैण्ड के दूरवर्ती प्रदेश सामन्ती आज्ञापालन के औपचारिक बन्धन से भी ब्रिटिश राजमुकुट से बँधे नहीं रहे। १३६६ ई० में किलकेन्नी के कानून द्वारा इस प्रक्रिया को रोकने का एक प्रयत्न किया गया। इस कानून ने आयरलैण्ड में बसने वाले इंग्लिश लोगों के लिए यह महाराजद्रोह बना दिया कि वे आयरिश वेशभूषा अथवा रीति रिवाजों को तथा भूमि के उत्तराधिकार सम्बन्धी आयरिश नियमों को अपनाएँ अथवा स्थानीय आयरिश स्त्रियों से विवाह करें अथवा आयरिश लोगों के साथ व्यापार करें। यह भयंकर कानून वस्तुतः पराजय को स्वीकार करता था। इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ, किन्तु इसने स्वाभाविक रूप से दोनों प्रजातियों की कटुता को बढ़ा दिया।

वस्तुतः इस समूचे युग में आयरलैण्ड तीन अति विषम क्षेत्रों में बँटा हुआ था[१]। डबलिन के चारों ओर एक ऐसा छोटा सा प्रदेश था जिस पर इंग्लिश सरकार का प्रभावशाली शासन था और जिसमें समग्र रूप से इंग्लिश कानून सन्तोषजनक रीति से लागू किया जाता था। यह प्रदेश पेल (Pale) के नाम से प्रसिद्ध था। इस युग की समाप्ति पर यह प्रदेश उत्तर से दक्षिण तक तीस मील और पूर्व से पश्चिम तक २० मील विस्तृत था। इसके बाद यहाँ

१. मध्यकालीन आयरलैण्ड का मानचित्र एटलस की प्लेट संख्या ४५ (बी) में देखिये।

पेल से बाहर, विशेष रूप से लीनस्टर में और मन्स्टर में कुछ ऐसे प्रदेश थे, जहाँ नार्मन वंशी बड़े बैरन अपनी जागीरों पर लगभग स्वतन्त्र राजकुमारों के रूप में शासन करते थे; किन्तु फिर भी वे इंग्लिश राजा के प्रति अपनी सामन्ती वश्यता (Feudal dependence) स्वीकार करते थे और अपनी अदालतों के माध्यम से भूमिधारण की सामन्ती पद्धतियों (Feudal modes) को अब भी कायम रखे हुए थे। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण ये थे— बटलर के बड़े परिवार, ओर्मण्ड (टिप्पेरेरी) के अर्ल, इनको एडवर्ड तृतीय द्वारा अधिकार प्रदान किया गया था, फिट्ज्जेरल्ड अथवा जेरल्डायन के शक्तिशाली वंश की विभिन्न शाखाएँ, विशेष रूप से कार्क में डैस्मण्ड के अर्ल, जिन्होंने १३२९ ई० में अपना अधिकार प्राप्त किया था और किल्डेयर (१३१६ ई०) के अर्ल। ये बड़े सरदार अपने प्रदेशों पर स्वतन्त्र जागीरदारों की भाँति शासन करते थे और एक दूसरे के साथ तथा अपने आयरिश पड़ोसियों के साथ निरन्तर युद्ध में लगे रहते थे। किन्तु वे इंग्लिश राजा के साथ भी सम्बन्ध बनाये रखते थे और डबलिन की आयरिश पार्लियामेण्ट की कार्यवाहियों में भी भाग लेते थे। आयरलैण्ड का शेष हिस्सा और देश का अधिकांश भाग ऐसे आयरिश जनजातीय सरदारों के शासन में था, जो इंग्लिश प्रजा को औपचारिक और निरर्थक मान्यता देते थे, किन्तु अपना स्वतन्त्र जीवन पृथक् रूप से बिताते थे। स्पष्ट रूप से वे इतनी अधिक संख्या में थे कि यदि वे आपस में मिल जाते तो इंग्लिश उपनिवेश को नष्ट करने के लिए पर्याप्त थे। परन्तु उनमें सहयोग सम्भव नहीं था, क्योंकि परम्परागत इंग्लिश नीति उन्हें एक दूसरे के साथ लड़वाते रहने की थी।

रिचर्ड द्वितीय ने दो बार आयरलैण्ड की यात्राओं में इंग्लैण्ड की सर्वोच्च सत्ता को स्थापित करने का प्रयत्न किया, किन्तु उसकी सफलता केवल क्षणिक थी। हेनरी चतुर्थ अपने आन्तरिक झगड़ों में इतना व्यस्त था कि वह आयरलैण्ड की ओर गम्भीर ध्यान नहीं दे सकता था। हेनरी पंचम के शासन काल में वीर योद्धा सर जान टेलबोट ने कुछ लड़ाई लड़ी और दक्षिण पूर्व में अपने परिवार के लिए जमीनें प्राप्त की। किन्तु प्रभावशाली इंग्लिश नियन्त्रण में रहने वाला क्षेत्र निरन्तर कम होता गया। इंग्लिश उपनिवेशक (Settlers) अधिकाधिक मात्रा में आयरलैण्ड की जीवन पद्धति को ग्रहण करते चले गये। तब ऐसे कानून पास करना निरर्थक हो गया था, जैसे कि वह कानून, जिससे इंग्लिश उपनिवेशकों को मूँछें धारण करने से रोका गया था, ताकि कहीं उनको गलती से आयरिश व्यक्ति न समझ लिया जाय। इस समूचे युग में सबसे अधिक सफल इंग्लिश वायसराय यार्क का ड्यूक रिचर्ड था। इसकी नीति दोनों प्रजातियों के साथ मित्रता रखने की थी। इससे सरकार की क्षमता में कोई सुधार नहीं हुआ और न ही बैरन लोगों की तथा सरदारों की स्थानीय स्वतन्त्रता में कोई कमी हुई। किन्तु इससे यार्किस्ट दल को, लैंकास्ट्रियन दल का पक्ष लेने वाले बटलर वंश के अपवाद के अतिरिक्त अधिकांश आयरलैण्ड से स्वामिभक्त अनुयायी प्राप्त हुए। जब रिचर्ड को १४५९ ई० में इंग्लैण्ड से भागना पड़ा, तब आयरलैण्ड में उसका हार्दिक स्वागत किया गया और आयरिश पार्लियामेण्ट ने व्यावहारिक रूप से

इंग्लैण्ड से पृथक् अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा की। यार्किस्ट दल के प्रधान मित्र किल्डेयर के अर्ल फिटज्जैरल्ड थे। ये इस समय से आयरिश मामलों के संचालन में प्रधान भाग लेने लगे। किन्तु सरदारों और बैरन लोगों का अविरत संघर्ष अब भी जारी रहा। जब यह युग समाप्त हुआ तो पेल (Pale) की सीमाएँ अत्यधिक संकुचित हो गयी थी।

यहां कई बार आयरिश पार्लियामेण्ट की चर्चा हुई है। यह १२९५ ई० में इंग्लिश पार्लियामेण्ट के अनुकरण पर स्थापित की गयी थी और इसमें बैरन नाइट और पुरप्रतिनिधि सम्मिलित होते थे; किन्तु यह केवल इंग्लिश बस्ती का ही प्रतिनिधित्व करती थी, न कि आयरिश जनता का। यह लगभग शक्तिहीन संस्था थी और सामान्यत: इंग्लिश वायसराय के पूर्ण नियन्त्रण में थी, क्योकि इंग्लिश उपनिवेश यह जानता था कि इसकी सत्ता पूर्ण रूप से इंग्लिश सरकार के समर्थन पर निर्भर है।

उस समय चार राष्ट्रों में से आयरलैण्ड ही ऐसा था, जो न केवल अत्यधिक विभक्त था, किन्तु तीव्र प्रजातीय शत्रुता से खण्डित और प्रभावशाली सामान्य सरकार से रहित था। इस अभागे देश को एकता और शान्ति प्रदान करने की समस्या वर्तमान युग के आरम्भ में इस द्वीप की एक अत्यधिक जटिल समस्या थी। इस समस्या को व्यवस्थित रीति से कभी हल करने की कोशिश नही की गयी, क्योंकि इसकी पृथक् भौगोलिक स्थिति के कारण, आयरलैण्ड की अराजकता इग्लैण्ड के लिए कोई हानि पहुँचाने वाली नही प्रतीत हुई। यह समस्या ऐसी नही थी, जिसका हल न किया जा सकता हो। किन्तु आगे हम यह देखेंगे कि इस समस्या को अत्यधिक दुःखपूर्ण रीति से हल किया गया और वर्तमान युग मे ऐसी परिस्थितियाँ रहीं जो इस दुखपूर्ण द्वीप के शासकों को सदैव दारुण उपायों को सुझाने वाली प्रतीत हुईं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

O. M. Edward, Wales (Story of the Nations), **Hume Brown** or **Andrew Lang,** History of Scotland, **Richey,** Short History of the Irish People.

• •

११

आधुनिक युग के आरम्भ होने से पहले के यूरोप तथा ब्रिटिश द्वीप समूह की दशा

१. मध्ययुग का सार्वभौम आदर्श तथा इसकी समाप्ति

ऐतिहासिकों की सामान्य सहमति के अनुसार १५वी शताब्दी के पिछले वर्ष मध्ययुग की समाप्ति को तथा वर्तमान युग के आरम्भ को सूचित करने वाले समझे जाते हैं। इस समय सभी क्षेत्रों में विशाल परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से हो रहे थे। बारूद का सामान्य उपयोग लड़ाई की परिस्थितियों को बदल रहा था और कवचधारी नाइट (Knight) को उसके उस उत्कर्ष से पदच्युत कर रहा था, जिसका वह अब तक उपयोग करता रहा था। विद्या का पुनरुज्जीवन मध्ययुग के अत्यधिक चिरपरीक्षित विचारों को खोखला बना रहा था। छापे-खाने का आविष्कार इस बात को अधिक आसान बना रहो था कि नये विचारों का प्रसार किया जा सके और मनुष्यों के कार्यों का प्रभावित किया जा सके। यूरोप को इस समय उतने भिन्न विश्व का पता लगने लगा। कुछ बड़े यूरोपियन राज्य अपना आधुनिक रूप ग्रहण करने लगे थे। जागीरदारों के छोटे-छोटे राज्यों के स्थान पर पश्चिमी यूरोप में इंग्लैण्ड, फ्रांस, स्पेन के शक्तिशाली और अत्यधिक संघटित राष्ट्रीय राज्यों का समूह पश्चिमी यूरोप में प्रादुर्भूत हो गया था और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के स्वरूप में तेजी से परिवर्तन हो रहा था। सबसे बढ़कर यह बात थी कि मध्ययुग के प्रधान राजनीतिक विचारों ने मनुष्यों को प्रभावित करना बन्द कर दिया था।

मध्ययुग का उच्चतम आदर्श यह था कि समूचे सभ्य जगत् (अथवा रोम के पोप को अपना धर्मगुरु स्वीकार करने वाली समूची लैटिन ईसाईयत, जो उस समय एक ही बात प्रतीत होती थी) का संगठन एक महान् राज्य के रूप में किया जाना चाहिये और इसका

शासन एक नैतिक संहिता (Moral code) के द्वारा होना चाहिये। यह भगवान् की इच्छा समझी जाती थी कि उसके सभी लोगों का संरक्षण दो शासक शक्तियों द्वारा हो। पहली आध्यात्मिक शक्ति पोपतन्त्र (Papacy) की थी, और दूसरी सांसारिक शक्ति प्राचीन रोम की प्रतापी प्रभुसत्ता को विरासत में पाने वाला पवित्र रोमन साम्राज्य था। रोमन सम्राट् की पदवी धारण करने वाले राजा सदैव बने रहे किन्तु कभी ऐसा समय नहीं रहा, जब उनकी प्रत्यक्ष सत्ता समूचे यूरोप में स्वीकार की जाती हो। वस्तुतः ९६२ ई० से यह पद जर्मन राज्य के साथ सम्बद्ध था और सम्राट् की शक्ति जर्मनी और इटली तक सीमित थी। किन्तु जब तक सम्राट् वास्तव में यूरोप का सबसे बड़ा राजा बना रहा, तब तक उसकी सार्वभौम प्रभुसत्ता का आदर्श बिलकुल निरर्थक नहीं प्रतीत होता था। उसकी यह स्थिति १२५० ई० तक रही। १२५० ई० के बाद सम्राट् छोटे राज्यों के अराजक समूह के रूप में विभक्त जर्मनी के नाम मात्र के अध्यक्ष से अधिक कुछ भी नहीं रहा। पश्चिम के सुदृढ़ रूप से संगठित राष्ट्रों के अधिक शक्तिशाली शासक उससे अधिक प्रबल हो गये और सभ्य जगत् की एकता के प्रतिनिधि के रूप में पवित्र रोमन साम्राज्य का पुराना स्वप्न सदा के लिये भंग हो गया। जर्मनी का निर्वाचित राजा १९वीं शताब्दी के आरम्भ तक अपने को सम्राट् कहता रहा और यूरोप के शासकों में नाम-मात्र की प्राथमिकता का उपयोग करता रहा किन्तु वह यूरोपियन राजाओं में से एक था और सबसे अधिक शक्तिशाली भी न था।

पोपतन्त्र (Papacy) ने यूरोपीय एकता के विचार को वास्तविकता में परिणत करने के लिये साम्राज्य की अपेक्षा अधिक कार्य किया। पोप न केवल समूचे पश्चिमी यूरोप के चर्च का निर्विवाद अध्यक्ष था, अपितु वह पश्चिमी जगत के प्रत्येक ईसाई से यह आशा रखता था कि अध्यात्मिक विषयों में वह उसकी आज्ञा का पालन करेगा। पोप ने अनेक अतीव महत्वपूर्ण राजनीतिक कार्य करना शुरू कर दिया था। ११वी शताब्दी के मध्य से १३वी शताब्दी के अन्त तक, रोम के राजनीतिक तथा आध्यात्मिक उत्कर्ष के महान दिनों में ग्रेगोरी सप्तम और इन्नोसेन्ट तृतीय जैसे बड़े पोप समूचे यूरोप के लिये सामान्य नैतिक कानून के संरक्षक थे। वे इस कानून की उपेक्षा करने वाले राजाओं और राज्यों को कानून के संरक्षण से वंचित कर सकते थे। वे राज्यों के बीच के विवादों का पंचनिर्णय कर सकते थे और वे अन्यायी शासकों को पदच्युत कर सकते थे। यद्यपि वे युद्ध को बिलकुल बन्द नहीं कर सके, तो भी वे उन पद्धतियों पर पाबन्दियाँ लगा सकते थे, जिनके कारण ये लड़ाइयाँ की जा सकती थीं। वे ये सब बातें इसलिये कर सकते थे कि लोगों के अन्तःकरणों पर उनका नैतिक प्रभुत्व था। सब देशों में उनके नियन्त्रण में विद्यमान चर्च का शक्तिशाली संगठन ऐसा तत्व था, जिसकी उपेक्षा करने का साहस कोई भी राजा नहीं कर सकता था।

किन्तु चौदहवीं और पन्द्रहवी शताब्दी में पोपों की राजनीतिक सत्ता शनैः-शनैः क्षीण होने लगी। इसके कई कारण थे। एक तरफ तो पोपतन्त्र अब अपने उद्देश्यों में इतना निःस्वार्थ नहीं प्रतीत होता था, जैसे कि वह पहले था; बल्कि ऐसा प्रतीत होता था कि वह अपनी आध्यात्मिक सत्ता का प्रयोग मुख्य रूप से सम्पत्ति बटोरने के लिये कर रहा है। सर्वत्र चर्च में भ्रष्टाचार आ गया था। बिशप षडयन्त्र करने वाले राजनीतिज्ञ बन गये थे। भिक्षु और साधु

लोभी, लम्पट और आलसी हो गये थे। सब देशों में इस स्थिति से व्यापक विरोध और असन्तोष उत्पन्न हुआ। इसके सबसे अधिक उग्र रूप इंग्लैण्ड में विक्लिफ का आन्दोलन और बोहेमिया में हेस का आन्दोलन थे। दूसरी ओर इंग्लैण्ड और फ्रांस जैसे महान् संगठित राज्यों का अभिमान और अधिकार अब देर तक पोप के उस प्रभाव के आगे समर्पण करने को उत्सुक न था, जिसे उसने पहले समय में स्वीकार किया था। हम यह देख चुके हैं कि किस प्रकार इंग्लिश पार्लियामैन्ट ने पोपतन्त्र के दावों पर एक के बाद एक करके अनेक प्रहार किये। सबसे बड़ा प्रहार १३६३ ई० का प्रीम्युनायर की संविधि (Statute of Praemunire) थी, इसके अनुसार इंग्लैण्ड में पोप के आदेशों को लाना दण्डनीय अपराध बना दिया गया था। १४वी एवं १५वीं शताब्दी के पोपतन्त्र के इतिहास की घटनाओं से इसका प्रभाव कम हो गया। ४० वर्ष तक पोपतन्त्र ने रोम के पवित्र नगर को छोड़ रखा था और अपना प्रधान कार्यालय आविन्योन में बनाया हुआ था। यहाँ इसके बारे में यह कल्पना की जाती थी कि यह फ्रेंच राजतन्त्र की कठपुतली बन गया है। इसके बाद महान् मतभेद की (Great Schism) भद्दी घटना शुरू हुई। इसमें ४० वर्ष (१३७८-१४१७) तक सदैव दो पोप एवं कई बार तीन प्रतिद्वन्दी पोप एक दूसरे को शाप दे रहे थे, और विभिन्न यूरोपियन राज्यों की निष्ठा प्राप्त करने के लिये होड़ कर रहे थे। इस युग में यह असम्भव था कि पोप के यूरोपियन राजनीतिक पद्धति का अध्यक्ष होने के तथा यूरोपियन नैतिक नियमों का संरक्षक होने के दावों को गम्भीरता-पूर्वक मान लिया जाय। मतभेद की समाप्ति चर्च की अनेक परिषदों से, विशेष रूप से कान्स्टेन्स (Constance) नामक स्थान में होने वाली परिषद् से (१४१४-१८) और बॉल[1] (Basle) नामक स्थान में होने वाली परिषद की (१४३१-१४४९) से हुई। इन परिषदों ने कुछ समय के लिये पोप की सत्ता ताक पर धर दी और अनेक मनुष्य यह आशा रखते थे कि ये परिषदें चर्च के शीर्षस्थान नीयपोय का तथा इसके सदस्यों का पूर्ण सुधार करने में समर्थ होगी। किन्तु परिषदों का यह आन्दोलन विफल हुआ। पोप ने चर्च पर अपनी असीम प्रभुसत्ता पुन: प्राप्त की और दुर्भाग्यवश इस युग के पोप, पोपों की गद्दी पर किसी भी समय बैठने वाले व्यक्तियों में सबसे अधिक सांसारिक मनुष्य थे। इस प्रकार चर्च की पवित्रता को तथा इसके साथ इसकी एकता को तथा प्रभाव को पुन: स्थापित करने का महान अवसर गँवा दिया गया। सब देशों में चर्च की स्वतन्त्रता नष्ट हो गयी और वह सरकार के नियन्त्रण में आ गया। सब देशों में अधिकांश मनुष्यों की इसमें निष्ठा नहीं रही। ईसाई मत की नैतिक एकता टूटने लगी।

इसके स्थान पर राज्य की सर्वोच्च सत्ता का विचार आया। इस विचार के अनुसार राज्य अपनी शक्ति को बढ़ाने के लिए कुछ भी कार्य करे, अगर उसमें उसे सफलता मिलती है, तब वह न्यायोचित बन जाता है और एक दूसरे के साथ व्यवहार में राज्यों के कार्यो पर कोई नैतिक प्रतिबन्ध नहीं लग सकता। हम पहले देख चुके हैं कि इंग्लैण्ड में १५वीं शती में

---

१. स्विट्जरलैण्ड में स्थित इस नगर के नाम का शुद्ध उच्चारण बॉल अथवा बॉज़ल है।

गुलाबों की लड़ाइयों में नेताओं ने असाधारण उग्रता, विश्वासघात और अनैतिकता के कार्य किये। ये कार्य किसी भी तरह केवल इग्लैण्ड के लिए ही विशेष नहीं थे। इस युग में, समूचे पश्चिमी यूरोप में ऐसी बातें सब जगह हो रही थी और इसका कारण धार्मिक विश्वासों की क्षीणता तथा धार्मिक विश्वासों के साथ पाये जाने वाले नैतिक बन्धनों का भंग होना था।

२. यूरोप की राजनीतिक दशा : राष्ट्रीय राज्यों का अभ्युत्थान

नया यूरोप[१] अनेक ऐसे छोटे-बड़े राज्यों का यूरोप था राज्य ईसाइयत की सामान्य भावनाओं के बन्धन से अब अपने को बँधा हुआ अनुभव नहीं करते थे और वे साम्राज्य और चर्च के माध्यम से अपने को अभिव्यक्त नहीं करते थे, किन्तु वे राज्य अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए सब प्रकार के उपायों का उपयोग करने में अपने को न्यायोचित समझते थे। अधिकांश राज्य इन पर शासन करने वाले राजकुमारों की जागीरों से अधिक कुछ भी नहीं थे। उनकी सीमाएँ बिल्कुल कृत्रिम थीं और इनके प्रजाजन प्रबल प्राकृतिक बन्धनों से बँधे हुए नही थे। इनका एकमात्र बन्धन इनके स्वामियों को दी जाने वाली ऐसी राजभक्ति थी, जिसके वे पात्र थे। किन्तु कुछ सबसे बड़े और शक्तिशाली राज्य राष्ट्रीय राज्य थे; इनके नागरिक भाषा की परम्पराओं की तथा जीवन पद्धतियों की समानता के कारण यह अनुभव करते थे कि वे एक हैं और अपनी सामान्य उपलब्धियों पर अभिमान कर सकते हैं तथा एक सामान्य देश की भावना से अनुप्राणित हो सकते हैं। हमें राष्ट्रों और राज्यों को एक समझने की आदत इतनी अधिक पड़ गयी है कि हम यह अनुभव नहीं करते कि इन राष्ट्रीय राज्यों का प्रादुर्भाव वास्तव में कितनी महत्वपूर्ण बात थी। संसार के इतिहास में इससे पहले इस प्रकार के कोई राज्य नहीं थे।

इन नवीन राष्ट्रीय राज्यों में, इंग्लैण्ड ने सबसे पहले राष्ट्रीय एकता प्राप्त की और इस पर अभिमान करना सीखा। हम उस प्रक्रिया को देख चुके हैं जिसके द्वारा ऐसा हुआ। वेल्स एक छोटा राष्ट्र था, वह इंग्लिश राष्ट्रीय राज्य का अंग बना दिया गया। उसने अपनी राष्ट्रीय भावना बनाये रखी, किन्तु इस स्थिति को स्वीकार किया, क्योंकि उसके विशिष्ट चरित्र और रिवाजों को दबाया नहीं गया अथवा इनमें हस्तक्षेप नहीं किया गया। स्काटलैण्ड यद्यपि कई प्रकार से गम्भीर रूप से विभक्त था, तथापि वह उसे जीतने के इंग्लिश लोगों के प्रयत्न कर विरोध करते हुए राष्ट्र बन गया और वह अपनी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का उग्र रूप से भक्त था। दुर्भाग्यवश, आयरलैण्ड एक राष्ट्र नहीं था। किन्तु कुल मिलाकर, अन्य स्थानों की अपेक्षा ब्रिटिश द्वीप समूह में राष्ट्रीयता का विचार अधिक दृढ़ता से जड़ जमा चुका था और राष्ट्रीय भावना महान परिणाम उत्पन्न कर रही थी।

अन्य राष्ट्रों में, फ्रांस सबसे बड़ा था। यह अनेक मुसीबतों के बाद, शतवर्षीय युद्ध की अग्नि में एक हुआ था। उसकी सरकार, चालाक, योग्य और धर्माधर्मविचार शून्य, सिद्धान्तहीन निरंकुश राजा लुई ११वें के द्वारा संगठित हुई थी। इसने बरगंडी के घराने की

---

१. इस युग के यूरोप के लिए एटलस की प्लेट संख्या २६ और ३६-३७ देखिये।

शक्ति को तोड़ा तथा इसने फ्रांस के उन प्रदेशों को पुनः जीता, जिन पर यह चिरकाल से शासन कर रहा था। इस प्रकार इसने फ्रांस का एकीकरण लगभग पूर्ण कर दिया।[१] इस समय से फ्रांस का संयुक्त राज्य यूरोपियन मामलों में सदैव प्रमुख भागलेता रहा। अपनी एकता का अभिमान होने के कारण, फ्रांस अपने निरंकुश राजाओं के पथ-प्रदर्शन में यूरोप का नेतृत्व प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करने वाला था।

इसके दक्षिण में मध्ययुग में मूरों से शनैः-शनैः-पुनः जीते गये तथा धर्मयुद्ध की भावना से ओत-प्रोत पुर्तगाल के छोटे से राज्य ने अपने पुराने शत्रुओं को उत्तरी अफ्रीका में धकेलना पहले ही शुरू कर दिया था। यह पुर्तगाल राज्य अन्वेषण और विजय के उस आश्चर्यजनक कार्य को करने लगा, जिसका प्रतिपादन एक अगले अध्याय में होगा और जो पुर्तगाल के राष्ट्रीय अभिमान का बड़ा स्रोत बनने वाला था।

उसके बड़े पड़ोसी स्पेन ने १५वी शती के अन्त में राष्ट्रीय एकता को प्राप्त करना शुरू किया था। समूचे मध्य युग में वह अनेक राज्यों में बँटा था। उसका इतिहास मुख्य रूप से मुस्लिम पड़ोसियों के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष का था। उन्होंने आठवीं शती में समूचे स्पेन पर लगभग स्वामित्व पा लिया था। १५वीं शती में उनके पास सुदूर दक्षिण में एक संकुचित एवं समृद्ध छोटा राज्य था। १४६६ ई० में, जब आरागॉन के राजा फर्डीनेन्ड ने बाद में कैस्टा-इल की रानी बनने वाली इज़ाबेला से विवाह किया, तब स्पेन के एकीकरण की दिशा में पहला बड़ा पग उठाया गया। जब इन दोनों राजकुमारों ने १४६२ ई० में मूरों के अन्तिम महत्वपूर्ण गढ़ ग्रनाडा को जीता, तब एक दूसरा बड़ा कदम उठाया गया और यह प्रक्रिया १५१२ ई० में नवारे की विजय से पूरी हुई। स्पेन अब तक वस्तुतः एक संयुक्त राष्ट्र नहीं था। वहाँ पर आरगॉनी तथा कैस्टीलियन लोगों के शासन की पृथक् पद्धतियाँ थीं और वे एक दूसरे से बड़ी ईर्ष्या रखते थे। किन्तु संयुक्त राजतन्त्र ने एक बड़े शक्तिशाली राज्य का निर्माण किया। यह यूरोप के नेतृत्व के लिए फ्रांस के साथ स्पर्धा करने में समर्थ था। यह स्पर्धा १५वीं शताब्दी के अंन्तिम वर्षों में आरम्भ हुई।

ये नये राष्ट्रीय राज्य आधुनिक इतिहास के महान नाटक में प्रधान भूमिकाओं का अभिनय करने वाले थे। सम्भवतः इनमें पूर्वी यूरोप के पोलैण्ड, बोहीमिया और हंगरी के राज्यों को जोड़ सकते हैं।[२] पोलैण्ड एक अति विशाल राज्य था और १५वी शती में यह अपनी शक्ति के उच्चतम शिखर पर पहुँचा हुआ था; किन्तु इसकी शासनपद्धति इतने निर्बल रूप में संगठित थी कि शनैः-शनैः इस राज्य का अराजकता के कारण पतन होना अवश्यभावी था। कई शतियों से बोहीमिया जर्मनी के राज्य का कम या अधिक मात्रा में नाममात्र का हिस्सा था और उसका राजा वास्तव में सम्राट को चुनने वाले सात निर्वाचकों में से एक था। हुस्साइट विद्रोह के समय में बोहीमिया में देशभक्ति का महान उद्रेक हुआ। इसने बोहीमिया

१. एटलस की प्लेट संख्या ३६ देखिये।

२. एटलस की प्लेट संख्या २८ (डी) देखिये।

३. एटलस की प्लेट संख्या ४१ देखिये।

को एक स्वतन्त्र राज्य बना दिया और यह प्रतीत होता था कि बोहीमिया यूरोप के जीवन में एक महत्वपूर्ण भाग लेने वाला था। हंगरी का राज्य चिरकाल से तुर्कों के विरुद्ध अतीव वीरतापूर्ण संघर्ष कर रहा था। हंगरी की शासक नस्ल का निर्माण करने वाले मगयार देश भक्ति की भावना से परिपूर्ण थे और उन्होने इंग्लैण्ड के संसदीय शासन की पद्धति जैसी एक पद्धति को जन्म दिया था। किन्तु हंगरी के भाग्य में यह नहीं बदा था कि वह एक वास्तविक राष्ट्रीय राज्य बने, क्योंकि उसकी अधिकांश जनसंख्या उन पराधीन जातियों की थी, जिनके साथ हीनता का व्यवहार किया जाता था और जिन्हें अपने मगयार प्रभुओं से बिलकुल पृथक् रखा जाता था।[1] वास्तविक राष्ट्रीयता तभी सम्भव है, जब आबादी के विभिन्न भागों में इस प्रकार के वैमनस्य समाप्त हो जाँय। सुदूर उत्तर में स्वीडन, नार्वे और डेनमार्क के तीन राज्य १३९७ ई० से एक राज्य में संयुक्त हो चुके थे। किन्तु उनकी एकता जबर्दस्ती से थोपी गयी थी और वह शीघ्र ही भंग होने वाली थी। फिर भी, स्वीडन और नार्वे के दोनों देश कुछ समय बाद यूरोपियन मामलों में राष्ट्रीय राज्यों के रूप में काफी भाग लेने वाले थे।

इस प्रकार इस युग की एक प्रधान विशेषता यह थी कि पश्चिम, पूर्व और उत्तर में, यूरोप का अधिकांश भाग, कम या अधिक सुगठित राष्ट्रीय राज्यों में बँटा हुआ था। इनकी जनताएँ राष्ट्रीय देशभक्ति की भावना से इकट्ठी बँधी हुई थी; किन्तु यूरोप के मध्य में तथा दक्षिण पूर्व में ऐसे बड़े प्रदेश थे जहाँ राष्ट्रीयता का बन्धन बिलकुल नही था। इन प्रदेशों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण जर्मनी और इटली थे और इतिहास के समूचे वर्तमान युग में इनकी विभक्त दशा अशान्ति और युद्ध का प्रधान स्रोत बनने वाली थी।

१५वीं शती में इटली अपने इतिहास के सर्वोत्तम युग का उपभोग कर रहा था। वह यूरोप के सभी देशों में सबसे अधिक धनी और उच्चतम रीति से सभ्य देश था। उसके बड़े बन्दरगाहों—विशेषत: वेनिस और जिनोआ के नाविक और व्यापारी पूर्व की विलास-वस्तुओं के व्यापार के अधिकांश भाग का नियन्त्रण करते थे और यूरोप के सभी भागों में उनका व्यापार करते थे। उनके व्यापारी यूरोप के प्रमुख वित्तदाता तथा महाजन थे। लम्बार्डी और टस्कनी में विद्यमान उनके कारखाने दुनिया को बढ़िया कपड़े, सुन्दर एवं सुदृढ़ हथियार और सब प्रकार की कलात्मक वस्तुयें दे रहे थे। उसके महान व्यापारियों की सम्पत्ति यूरोप के बड़े से बड़े राजाओं की सम्पत्ति से अधिक थी और सर्वत्र इटली के कवियों की प्रशंसा होती थी और उनका अनुकरण होता था। सबसे बढ़कर यह बात थी कि इस युग में उसने अत्यधिक आश्चर्य जनक, ऐसे महान चित्रकार, मूर्तिकार और वास्तुकार उत्पन्न किये, जैसे कलाकार दुनिया में बहुत कम हुए थे। आजकल यूरोप की प्रमुख कलात्मक चित्रशालाएँ (Art gallaries) सबसे अधिक अभिमान इस युग के इटालियनों द्वारा चित्रित किये गये चित्रों के संग्रहों पर करती हैं। किन्तु इटली की सम्पत्ति, समृद्धि और उज्ज्वल सभ्यता को उसकी राजनीतिक फूट से बहुत बड़ा खतरा था। इसके कारण शीघ्र ही उसका विनाश होने वाला था। इंग्लैण्ड और फ्रांस की भाँति एक राष्ट्रीय राज्य के रूप में संगठित होने के स्थान पर, इटली अनेक छोटे राज्यों में बँटा हुआ था

१. प्रजातियों का नक्शा एटलस की प्लेट संख्या ९४. ९५ में देखिये।

और अधिकांश राज्यों में निरंकुश राजाओं का शासन था।[1] इनमें से पाँच राज्य अन्य राज्यों से बड़े थे। दक्षिण में नेपल्स और सिसली का निरंकुश राज्य था। मध्य मे पोप की भूमियाँ अथवा चर्च के राज्य थे, इनमें पोप अपने कार्डिनल्स के संघ (College of Cordinal) के परामर्श से निरंकुश रूप से शासन करता था। इनके उत्तर में फ्लोरेन्स का गणराज्य था। यह सभी प्रकार की उच्चतम कलात्मक क्रियाशीलता का केन्द्र था। इसने अपने गणतन्त्रीय रूपों को पूरी तरह से नही छोड़ा था, किन्तु यह मेदीची (Medici) नामक महान् महाजनों (Bankers) के निरंकुश शासन में नहीं छोड़ा क्रियात्मक रूप से आ गया था। इनके चिह्न-तीन सुनहरी गेंदों को आज भी इंग्लैण्ड में प्रत्येक गिरवी रखने वाले की दुकान पर देखा जा सकता है। उत्तर-पूर्व में, वेनिस के महान व्यापारिक नगर ने मुख्य भूमि पर कई बड़े प्रदेशों को तथा भूमध्य सागर के समुद्र तटों के साथ अनेक वशवर्ती राजाओं को और इसके टापुओं को जीत लिया था। उस पर बड़े व्यापारियों के एक अल्पतन्त्र (Oligarchy) का शासन था और संसार को उसकी सम्पत्ति से ईर्ष्या थी। अन्त में, लम्बार्डी के केन्द्रीय मैदान पर एक शक्तिशाली निरंकुश राजा—मिलान के ड्यूक का नियन्त्रण था। यदि ये पाँचों राज्य इकट्ठे मिले रहते, तो वे यूरोप के राजाओं के लोभ को चुनौती दे सकते थे, किन्तु वे ऐसा नही कर सके, और उनकी फूट के कारण अगली सदी में इटली का विनाश हुआ।

जर्मनी की स्थिति, कुछ बातों में इटली की स्थिति की अपेक्षा बदतर थी। नाम की दृष्टि से तो जर्मनी एक राज्य था, उसका एक निर्वाचित होने वाला राजा पवित्र रोमन साम्राज्य के सम्राट् (Emperor of Holy Roman Empire) का पद धारण करता था और उसकी एक विधान-सभा या डायट (Diet) थीं, जिसमें सात निर्वाचक, विभिन्न शासन करने वाले राजा और स्वशासन करने वाले राजा तथा नगरों के प्रतिनिधि होते थे। वस्तुतः न तो सम्राट के पास और न ही डायट के पास कोई प्रभावशाली अधिकार था। छोटे और बड़े राजा तथा स्वतन्त्र नगर अपने प्रदेशों के भीतर सर्वोच्च प्रभु थे। वे अपनी इच्छा से युद्ध कर सकते थे, विदेशी राज्यों को मित्र बना सकते थे, अपने कानून बना सकते थे, अपनी अदालतें लगा सकते थे और अपने सिक्के ढाल सकते थे। इन स्वतन्त्र राजाओं में से अनेक बिशप और महन्त थे और जर्मनी के व्यक्तियों द्वारा शासित इन धार्मिक राज्यों (Ecclesiastical States) पास देश के समूचे क्षेत्रफल का लगभग एक तिहाई भाग था। इन अवस्थाओं में जर्मनी का मानचित्र अत्यन्त अस्पष्ट था। केवल कुछ बड़े राज्यों का क्षेत्रफल एक इंग्लिश जिले के क्षेत्र फल की अपेक्षा अधिक बड़ा था और बहुत से राज्य तो बहुत ही छोटे थे।

प्रमुख धर्मेतर राज्य (lay) सैक्सनी, ब्रेन्डनवर्ग का निर्वाचक (इलैक्टर), बवेरिया का ड्यूक और आस्ट्रिया का आर्कड्यूक था। अन्तिम डयूक हैप्सबर्ग वंश का था। इस वंश का महत्व निरन्तर बढ़ रहा था और समूचे वर्तमान युग में यह यूरोपियन राजनीति का एक अत्यधिक महत्वपूर्ण तत्व बनने वाला था। १५वीं शती में इस वंश के दो राजाओं ने लगातार सम्राट का पद धारण किया; इसके बाद यह पद इस परिवार में लगभग आनुवंशिक हो गया। किन्तु

---

१. देखिये एटलस की प्लेट संख्या ३९ (१)

यद्यपि हैप्सबर्ग जर्मन राजाओं में सबसे अधिक शक्तिशाली थे, तथापि उनके प्रदेश अब तक छोटे थे और वे अब तक पश्चिम के राष्ट्रीय राज्यों के विरुद्ध अपने पैरों पर टिकने में बिल्कुल असमर्थ थे।[1] किन्तु हैप्सबर्ग वंश वालों में विशाल भूप्रदेशों की उत्तराधिकारिणी स्त्रियों के साथ विवाह करने की विलक्षण दक्षता थी और उन्होंने इसे इस युग की अपेक्षा किसी अन्य युग में अधिक सफलता से प्रदर्शित नहीं किया। बाद में सम्राट बनने वाले मैक्सीमिलियन ने बरगंडी के ड्यूक-साहसी चार्ल्स की उत्तराधिकारिणी के साथ विवाह किया और इस विवाह ने अन्त में हैप्सबर्ग वंश को नीदरलैण्डस के वे सभी प्रान्त प्रदान किये, जो बरगंडी के ड्यूकों ने शनैः शनैः प्राप्त किये थे। इसके बाद मैक्सीमिलियन के बेटे फिलिप ने स्पेन के फर्डिनेण्ड तथा इजाबेला की उत्तराधिकारिणी से विवाह किया और इस प्रकार १५०० ईस्वी में उत्पन्न होने वाला उसका बेटा चार्ल्स आस्ट्रिया के प्रदेशों का, बरगंडी के प्रदेशों का, और स्पेन के संयुक्त राज्य का उत्तराधिकारी बना।[2]

एक ही परिवार के अधिकार में विभिन्न प्रदेशों के असाधारण एकीकरण की चर्चा में हम अपने समय से कुछ आगे देख रहे हैं, किन्तु १५वीं शती के अन्त में इस बात का अस्पष्ट आभास होने लगा था और इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हैप्सबर्ग वंश यूरोप के लिए खतरनाक बनने की स्थिति में किस द्रुतगति से पहुँच गया था।

३. तुर्कों का खतरा

यूरोपियन राजनीति के एक अन्य पहलू का वर्णन करना शेष है। समूचे आधुनिक युग में यूरोपियन राजनीति की एक जटिलतम समस्या और युद्ध का एक बड़ा कारण दक्षिण-पूर्व में विदेशी और असभ्य तुर्क साम्राज्य की उपस्थिति रही है।[3] जिस युग का हम वर्णन कर रहे हैं, इस युग में ही इस अहितकर और विध्वंसक शक्ति ने सर्वप्रथम अपने को यूरोप में सुप्रतिष्ठित किया। मध्य एशिया से आने वाले तुर्क मंगोलियन वंश की जनता थे। वे इस्लाम में दीक्षित हो चुके थे, किन्तु उन्होंने उच्च सभ्यता के लिए वैसी कोई योग्यता नहीं प्रदर्शित की, जैसी अन्य मुस्लिम जनताओं ने, विशेषतः अरबों ने तथा इस्लाम स्वीकार करने वाले भारतीयों ने, इतने विलक्षण ढंग से प्रदर्शित की थी। मुस्लिम जगत् के जीवन और संस्कृति पर तुर्कों का प्रभाव उस समय वस्तुतः बहुत भीषण था, जब कि वे इसके नेता बने। वे इस्लाम ग्रहण करने वाले देशों में विकसित होने वाली उज्ज्वल सभ्यता की शोचनीय क्षीणता के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी थे। वे बड़े उत्तम योद्धा थे, किन्तु उन्होंने अपने समूचे इतिहास में किसी अन्य प्रकार की उत्कृष्टता को नहीं प्रदर्शित किया।

११ वीं और १२ वीं शताब्दियों में तुर्कों ने लघु एशिया (Asia Minor) का बड़ा भाग जीत लिया था। किन्तु उनकी शक्ति शीघ्र ही विशृंखलित हो गयी। फिर भी १३ वीं

---

१. हैप्सबर्ग वंश के प्रदेशों का विकास एटलस की प्लेट संख्या ४० (ए) में दिखाया गया है।

२. चार्ल्स पंचम के साम्राज्य के लिए एटलस की प्लेट संख्या ४१ देखिये।

३. तुर्क साम्राज्य का विकास एटलस की प्लेट संख्या ४० (बी) में दिखाया गया है।

शताब्दी में लघु एशिया के उत्तर-पश्चिमी कोने में, तुर्कों के एक नेता-उस्मान के नाम से प्रसिद्ध होने वाले उनके एक समूह-उस्मानिया तुर्कों ने अपने पड़ोसियों को जीतना शुरू किया और १४ वीं शताब्दी के आरम्भ में उन्होंने योरोप में अवस्थित गैलीपोली नामक प्रायद्वीप पर अपने पैर जमाने के लिए पहला स्थान प्राप्त किया। उस समय कान्स्टैन्टाइन के नगर में एक हजार वर्ष तक अपनी राजधानी रखने वाला पूर्वी रोमन साम्राज्य अपनी अन्तिम जीर्ण दशा में था। बाल्कान प्रायद्वीप के उत्तरी भाग में बसने वाली स्लैवोनिक जातियाँ, सर्बियन तथा बल्गेरियन लोगों ने कुस्तुन्तुनिया के यूनानियों की गुलामी के जुए को उतार फेंका था। १४ वीं शताब्दी के मध्य में यह प्रतीत होता था कि अपने महान राजा स्टीफन दुशेन के नेतृत्व में सर्बियन लोग समूचा प्रायद्वीप जीतने वाले हैं। दुर्भाग्यवश १३५५ ई॰ मे उसकी मृत्यु हो गयी, और उसकी मृत्यु के बाद तुर्कों के हमले की ज्वार उसकी जनता को जीतने लगी। सर्बियन लोगों ने बड़ी वीरता के साथ प्रतिरोध किया, किन्तु १३८९ ई० में वे कोस्सोवो के भीषण युद्ध में परास्त हुए और इस पराजय ने बाल्कान के भाग्य का निर्णय कर दिया। अगली आधी शताब्दी में लगभग समूचे प्रायद्वीप को तुर्कों ने वशवर्ती बना लिया और ग्रीक, सर्बियन, बल्गेरियन और रूमानियन लोग तुर्क शासन के उस कठोर जुए में लाये गये, जिससे वे अगले पाँच सौ वर्ष तक नहीं निकल सके। तुर्कों ने कुस्तुनतुनिया में विद्यमान जीर्ण (पूर्वी रोमन) साम्राज्य को बड़ी घृणा पूर्वक अन्त तक अछूता छोड़े रखा, किन्तु १४५३ ई० में इस प्राचीन और गौरवपूर्ण नगर पर भी आक्रमण किया गया और यह तुर्क साम्राज्य की राजधानी बन गया। यूरोप ने इन घटनाओं की ओर बहुत कम ध्यान दिया। वस्तुतः वेनेशियन व्यापारी भयभीत थे और उन्होंने कुछ विरोध किया, किन्तु उन्होंने अनुकूल व्यापारिक शर्तों के दिये जाने पर जल्दी ही सन्धि कर ली। पश्चिमी यूरोप उस समय कुछ उत्तेजित हुआ, जब उससे अन्तिम पूर्वी सम्राटों ने कुस्तुनतुनिया को बचाने के लिए सहायता माँगी, उस समय धर्मयुद्ध की चर्चा चली। किन्तु धर्मयुद्धों के दिन लद चुके थे। यूरोपियन राज्य अपने ही मामलों में बहुत अधिक उलझे हुए थे और तुर्कों को डैन्यूब नदी के दक्षिण में सभी प्रदेशों पर अपनी एक विध्वंसकारी प्रभुता स्थापित करने की अनुमति दे दी गयी। यह ईसाइयत की एकता के अवसान का अत्यधिक दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम था।

४. इंग्लैण्ड और यूरोप की राजनीतिक तुलना

यह उस नये यूरोप की अति संक्षिप्त रूपरेखा थी, जिसके साथ वर्तमान युग आरम्भ हुआ और जिसके जटिल मामलों में ब्रिटिश द्वीपसमूह के लोगों ने अधिकाधिक महत्वपूर्ण भाग लेना था। यह ऐसा यूरोप था, जिसमें कुछ शक्तिशाली और सुसंगठित राष्ट्रीय राज्य थे। पोलैण्ड जैसे कुछ अब तक असंगठित, किन्तु सम्भावित राष्ट्रीय राज्य थे और छोटी रियासतों की एक बड़ी संख्या थी। छोटे और बड़े, ये सभी राज्य अपने से सम्बन्ध रखने वाले मामलों में अपने को सर्वोच्च प्रभु समझते थे। इन सबने अपने से उच्च पद पर अधिष्ठित एक ऐसी सर्वोच्च सत्ता की वांछनीयता में विश्वास करना छोड़ दिया था, जो उन पर एक ही नैतिक नियम लागू करे। कम या अधिक मात्रा में, सभी शासकों ने यह मान लिया

था कि राज्यों के आपसी सम्बन्धो मे नैतिक विचारों का कोई महत्व नही है । इसके अतिरिक्त लगभग इन सभी राज्यों पर निरंकुश राज्यों का शासन था । वेनिस जैसे कुछ नाममात्र के गणतन्त्रों पर प्रमुख पुरुषों के संकुचित अल्पतन्त्रों का नियन्त्रण था । पवित्र रोमन साम्राज्य में तथा पोलैण्ड में राजा निर्वाचित होता था, किन्तु इन राज्यों के राजतन्त्र का निर्वाचनात्मक स्वरूप इनकी निर्बलता का एक बड़ा कारण समझा जाता था । अधिकांश देशों में, पुराने मध्ययुगीन वे सामाजिक वर्ग (Estates) जो इंग्लैण्ड की संसदीय संस्थाओं का स्रोत थे, अब तक भी विद्यमान थे । फ्रांस में, अरागोन और कैस्टाइल में, हंगरी में और जर्मन रियासतों में ऐसा ही था । किन्तु ये सामाजिक वर्ग (Estates) शक्ति के स्थान पर निर्बलता का स्रोत समझे जाते थे, क्योंकि वे राजा की शक्ति और क्षमता पर एक नियन्त्रण के रूप में थे । वे यथासम्भव बहुत कम बुलाये जाते थे और इंग्लैण्ड के सिवाय सर्वत्र थोड़ा बहुत अवास्तविक रूप धारण कर रहे थे । सर्वत्र पिछली दो शतियों की अराजकता और उपद्रवों ने इस विचार को जन्म दिया था कि राज्य के भीतर व्यवस्था और शान्ति स्थापित करने का, इसे वाह्य आक्रमण से सुरक्षित रखने का तथा इसकी शक्ति बढ़ाने में इसे समर्थ बनाने का एक मात्र प्रभावशाली साधन शक्तिशाली राजतन्त्र का शासन था और समूचे वर्तमान युग में १९ वीं शताब्दी तक लगभग सभी देशों में यह स्थिति बनी रही ।

केवल इंग्लैण्ड में राजकीय सत्ता की मर्यादा और नियन्त्रण के लिए एक संगठित पद्धति विद्यमान थी । पिछली शती के दुःखपूर्ण अनुभवों के बाद इंग्लैण्ड का राष्ट्र एक समर्थ और योग्य राजा को बड़ी मात्रा में स्वतन्त्र शक्ति की अनुमति इस लिये देने में प्रसन्न था कि वह शान्ति को बनाये रखे । किन्तु इसका यह आशय नहीं था कि इंग्लैण्ड शासन की एक विशुद्ध निरंकुश पद्धति को स्वीकार करने को तैयार था । संसद अब भी विद्यमान थी और इसकी सब शक्तियाँ अक्षत रूप में बनी हुई थी, भले ही वे प्रसुप्त हों । यद्यपि संसद राजा द्वारा शासन के कार्य को विस्तृत रूप में नियन्त्रित करने की इच्छा अब नही रखती थी और न ही इसका प्रयत्न करती थी, तथापि करों को स्वीकार करने का एकमात्र अधिकार अब भी संसद को ही था और सब कानूनों के लिए इसकी स्वीकृति आवश्यक थी । यह एक योग्य राजा के करों को बड़ी जल्दी स्वीकार कर सकती थी, बशर्ते कि उन करों का बोझ बहुत अधिक न हो । यह राजा द्वारा चाहे गये कानूनों को अपनी स्वीकृति बहुत जल्दी दे सकती थी, किन्तु वे युक्तियुक्त कानून होने चाहिए थे । कभी किसी इंगलिश राजा ने इस बात का साहस नहीं किया कि वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली इस संस्था के इन अधिकारों की पूर्ण अवहेलना करे । इंग्लैण्ड की तथा अन्य सभी यूरोपियन देशों की परिस्थिति में यह एक बड़ा गम्भीर भेद था और यह उस युग में भी था जब कि इंग्लैण्ड में राजा की शक्ति अधिकतम थी । इससे भी अधिक स्पष्ट यह भेद था कि फ्रांस के राजा के सर्वथा विपरीत, इंग्लैण्ड के राजा के पास अपनी इच्छा को लागू करने के लिए अथवा लोगों की भावना का तिरस्कार करने में समर्थ बनने के लिए कोई स्थायी सेना (Standing army) नहीं थी । किन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि इंग्लैण्ड में राजा की इच्छा का पालन कराना जिन व्यक्तियों को सौंपा जाता था, वे यद्यपि राजा द्वारा नियुक्त किये जाते थे, तथापि वे अपनी आजीविका के लिए

उसकी कृपा पर निर्भर रहने वाले पेशेवर प्रशासक (Professional administrators) नही थे, वे वेतन न पाने वाले देहातवासी भद्रजन (Country gentlemen) तथा जस्टिस आफ पीस (Justice of Peace) अथवा शान्ति के संरक्षक पुरशासक थे। ये अपने पड़ोसियों की अनुभूतियों और इच्छाओं के साथ पूरा सम्पर्क रखते थे, और उन्हें कोई ऐसी चीज करने के लिए बाधित नहीं किया जा सकता था जो सार्वजनिक भावना को ठेस पहुँचाने वाली हो। अतः राजा की वैयक्तिक शक्ति कितनी ही बड़ी क्यों न हो जाय, यह केवल मनमानी और निरंकुश शक्ति कभी नही बन सकती थी। इंग्लैण्ड की सरकार वास्तविक अर्थ में एक स्वतन्त्र सरकार थी और सदैव ऐसी बनी रही तथा राष्ट्रीय भावना का इस पर गहरा प्रभाव पड़ता रहा।

यदि हम अपने आपसे यह पूछें कि ब्रिटिश द्वीपसमूह के चारों राष्ट्रों पर उस प्रशिक्षण के लम्बे युग का क्या प्रभाव पड़ा, जो प्रशिक्षण उन्हें प्राप्त हुआ था, तो हमें इस तथ्य पर चकित रह जाना पड़ता है कि चार में से एक राष्ट्र ने अन्य तीन राष्ट्रों की अपेक्षा विकास की एक अधिक अग्रगामी स्थिति प्राप्त की थी। शेष तीनों को अपने बड़े तथा अधिक सौभाग्यशाली पड़ोसी से बहुत कुछ सीखना था। इंग्लैण्ड में ही विकसित हुई जीवन की ऐसी आदतें और ऐसे संगठन की पद्धतियाँ विश्वव्यापी ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के भावी विकास और स्वरूप को निश्चित करने वाली बनी। ये आदतें और पद्धतियाँ अभी तक न तो वेल्स में, न स्काटलैण्ड में और न आयर्लैण्ड में विकसित हुई थीं।

इंग्लैण्ड में आबादी की विशाल संख्या ने सरदारों और सामन्ती स्वामियों के प्रभुत्व से अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी और वह अधिकांश बातों में देश के कानूनों के ही आधीन थी। ऐसा ब्रिटिश द्वीपसमूह के किसी अन्य भाग में तथा यूरोप के किसी अन्य देश में नहीं हुआ था। कानून क्रूर अथवा अन्यायपूर्ण हो सकते थे, किन्तु वे देश के कानून थे, न कि व्यक्तियों की मनमानी इच्छा।

फिर इंग्लैण्ड में कानून का शासन उस मात्रा तक विद्यमान था, जिस मात्रा तक यह अन्य किसी भी जगह नहीं था। इसका यह अर्थ है कि केवल कानून की प्रक्रिया से किसी स्वतन्त्र व्यक्ति को कानूनी तौर से किसी विशेष कार्य के लिये बाधित किया जा सकता था, अथवा उसके जीवन अथवा किसी अंग अथवा किसी सम्पत्ति को हानि पहुँचाई जा सकती थी। निःसन्देह, पहले युग की अव्यवस्थाओं में कानून की सर्वोच्च सत्ता की प्रायः उग्र रूप से अवहेलना हुई थी, किन्तु इस सिद्धान्त को स्थापित कर दिया गया था। अब केवल ऐसी सुदृढ़ और शक्तिशाली सरकार की आवश्यकता थी, जो इसे पूर्ण रूप से क्रियात्मक रूप प्रदान करे। यह राजनीतिक स्वतन्त्रता की नींव है। १५वीं शती की अराजकता में भी एक महान वकील सर जॉन फोर्टेस्क्यू अपनी पुस्तक—'इंग्लैण्ड का शासन' (Governance of England) में कानून की इस सर्वोच्च सत्ता को अपने देश का एक बड़ा गौरव मानने की डीग हाँक सकता था।

इंग्लैण्ड में समाज के सब वर्गों के सामान्य व्यक्तियों को कानून को बनाये रखने और इसको परिस्थितियों के अनुसार समुचित बनाने के कार्य में सहयोग देने के लिए कहा जाता था। पुलिस के कार्य चुने हुए कांस्टेबिल (Constable) द्वारा तथा ग्राम के अन्य अधिकारियों द्वारा किये जाते थे। सब गम्भीर अपराधों के लिए प्रत्येक स्वतन्त्र व्यक्ति को यह अधिकार था कि वह अपने मामले का फैसला अपने साथियों के निर्णय से कराये।

इसके अतिरिक्त, इंग्लैण्ड में सामान्य मामलों के प्रबन्ध में स्वतन्त्र व्यक्ति व्यापक रूप से भाग लेते थे। इसका सबसे अधिक प्रसिद्ध उदाहरण शान्ति रक्षक पुरवासी (Justice of Peace) के रूप में कार्य करने वाले देश के भद्रवर्ग के अनेक कार्यों में पाया जाता है। किन्तु यह अन्यत्र भी पाया जाता था, उदाहरणार्थ यह उन मेनर (Manor) न्यायालयों के सहयोगपूर्ण कार्यों में मिलता था, जिन न्यायालयों द्वारा ग्रामीण समुदायों के कृषि कार्यों का संचालन किया जाता था। इन न्यायालयों में अब केवल संरक्षणहीन भूदास ही नही, किन्तु अधिकांश रूप में स्वतन्त्र व्यक्ति उपस्थित होते थे। यह पेरिशों अथवा गाँवों की सभाओं (Vestries) के एक काम में भी पाया जाता था, जहाँ पेरिश के सभी व्यक्तियों को एकत्र होने का तथा ऐसे विभिन्न विषयों पर निर्णय करने का अधिकार था, जैसे चर्च की मरम्मत, छोटे-२ दानों का प्रबन्ध और कई बार स्थानीय सड़कों की दशा पर भी विचार किया जाता था। ये बातें इंग्लैण्ड के लिए ही विशेष नहीं थी, किन्तु यह निश्चित रूप से सत्य है कि यहाँ राष्ट्र के पुरुषों का एक अधिक बड़ा भाग किसी अन्य देश की अपेक्षा सामान्य मामलों के सहयोगपूर्ण संचालन में अधिक भाग लेता था।

अन्त में, इंग्लैण्ड में सम्भवतः यह बात किसी भी अन्य वस्तु के समान महत्वपूर्ण थी कि यहाँ जात-पाँत की कोई पद्धति नहीं थी; समाज के विभिन्न श्रेणियों के अधिक्रम (Hierarchy) में किसी भी बिन्दु पर ऐसी पार न की जा सकने वाली कोई खाई नहीं थी, जैसी लगभग प्रत्येक अन्य देश में विद्यमान थी। स्वतन्त्र कृषक मितव्यय से एक अच्छे बड़े समृद्ध भूमिधर (Yeoman) के रूप में विकसित हो सकता था और पर्याप्त धनी होने पर इस भूमिधर का दर्जा नाइट लोगों अथवा देहात के भद्रजनों के दर्जे के समान हो सकता था। देहात के भद्रजनों को वहाँ के बड़े कुलीन सरदारों से पृथक करने वाली कोई अनुल्लंघनीय खाई नहीं थी। सरदारों के छोटे लड़के अन्य देशों की भाँति, अपने कुल की पदवी धारण करने के स्थान पर सामान्य भद्रजनों की श्रेणी के भिन्न स्तर में आ जाते थे। मितव्ययी कुशल कारीगर एक बड़ा व्यापारी बन सकता था। व्यापारी वर्ग में नाइट कुलों के अनेक व्यक्ति सम्मिलित होते थे। व्यापारी अथवा उसका बेटा यदि पर्याप्त भूमि खरीद लेता था, अथवा राज्य की सेवा में अपने को यशस्वी बनाता था, तो वह राज्य में एक लार्ड बन सकता था। श्रेणियों के भेद विद्यमान थे और प्रायः इस पर अधिक बल दिया जाता था। किन्तु कानून द्वारा स्वीकृत किये जाने वाला कोई भी भेद इन श्रेणियों में नही था। आधुनिक युग के आरम्भ में इंग्लिश समाज ही यूरोप में एक मात्र ऐसा समाज था, जिसके बारे में यह बात कही जा सकती है।

इंग्लिश जनता की ये सबसे अधिक विशिष्ट विशेषताएँ थीं। समय बीतने के साथ-साथ ब्रिटिश द्वीपसमूह से अन्य राष्ट्रों में भी इन विशेषताओं का विस्तार हुआ। किसी अन्य वस्तु की अपेक्षा, इन विशेषताओं ने अधिक मात्रा में कार्य के उस स्वरूप को निश्चित करना था, जो कार्य अब आरम्भ होने वाले महान् नवयुग में ब्रिटिश लोगों द्वारा पूरा किया जाना था।

तृतीय पुस्तक

आधुनिक युग का आरम्भ : धर्मसुधार आन्दोलन तथा समुद्र पार के देशों के साथ सम्पर्क का श्रीगणेश

(१४८५ से १६०३ ई०)

प्रस्तावना

सोलहवी शताब्दी ब्रिटिश द्वीपसमूह के इतिहास में बड़े क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने वाली थी, इस शताब्दी की घटनाओं ने उसके भावी इतिहास के सम्पूर्ण क्रम को अत्यधिक मात्रा में निश्चित किया। यह बड़े सौभाग्य की वात थी कि ऐसे नाजुक जमाने मे इंग्लिश मामलो का संचालन इंग्लिश राजगद्दी पर बैठने वाले योग्यतम राजाओं के हाथो में निरन्तर वना रहा। सभी ट्यूडर राजा महान गुणी थे। हेनरी अष्टम और एलिजाबेथ में वस्तुत: अतीव उच्च कोटि के गुण-साहस, संकल्प, कल्पना, सूक्ष्मता और दिलेरी थे। वे विशुद्ध रूप से इंग्लिश और वास्तविक रूप से देशभक्त थे। उन्हें अपने प्रजाजनों की भावनाओं के सम्वन्ध में सहज समझ थी और इन कारणों से उन्हें ऐसी भक्तिपूर्ण स्वामिभक्ति प्राप्त हुई, जो उनकी स्पष्ट कमियों से भी खण्डित नही हुई। उन्हें इतनी अधिक मात्रा में स्वतन्त्र शक्ति सौंपी गयी, जिसका उपभोग एडवर्ड प्रथम के समय से किसी इंगलिश शासक ने नहीं किया था, आगे भी उसका इतना उपभोग करने वाला कोई राजा नही हुआ, अत: उनके शासन को ट्यूडर स्वेच्छाचारी शासन (Tudor despotism) के नाम से पुकारा जाता है। किन्तु हम देखेंगे कि यह वाक्यांश भ्रामक है। ट्यूडर लोगों ने स्वशासन की उस पद्धति को कभी भी नष्टभ्रष्ट करने का प्रयत्न नही किया, जो इंग्लैण्ड में उत्पन्न हो चुकी थी। उन्होंने पार्लियामैण्ट द्वारा तथा शान्ति स्थापित करने के लिए नियुक्त किये पुरशासकों (Justices of Peace) द्वारा शासन किया। वे अपनी बातें चलवाने में समर्थ हुए, क्योंकि उन पर विश्वास किया जाता था। कुल मिला कर उनकी पद्धति, ऐसी पद्धति थी, जिसका राष्ट्र अनुसरण करना चाहता था। अत: चार राष्ट्रों में सबसे अधिक शक्तिशाली इंग्लैण्ड ने, एक संयुक्त राष्ट्र के रूप में, राष्ट्रीय एकता की अतीव प्रबल भावना से अनुप्राणित होकर, अधिकाधिक शक्तिशाली नेतृत्व में, नवयुग के अनेक गम्भीर संकटों का सामना किया।

इस युग का अध्ययन करते हुए विद्यार्थी को अपना ध्यान चार प्रमुख विशेषताओं पर केन्द्रित करना चाहिए।

पहली विशेषता, चारों राष्ट्रों के एकीकरण की प्रवृत्ति का सुदृढ़ होना है। इंग्लैण्ड के साथ वेल्स का पूर्ण संवैधानिक सम्मिलन हेनरी अष्टम के समय में हो गया था। यह उन अनेक सम्मिलनों (Unions) में से था, जो ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास के युगान्तकारी सीमाचिन्हों का निर्माण करते हैं। आयर्लैण्ड की वास्तविक विजय हेनरी अष्टम द्वारा शुरू

की गयी और एलिज़ाबेथ द्वारा क्रियात्मक रूप से पूर्ण की गयी; यद्यपि यह विजय ऐसी दुर्भाग्य पूर्ण रीति से की गयी थी कि इसने भावी कष्टों की एक विरासत छोड़ी। इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड का युद्ध इस युग के पूर्वार्द्ध में यद्यपि लगातार चलता रहा, तथापि दोनों देश शनैः-शनैः एक दूसरे के निकट आ रहे थे। धर्म सुधार आन्दोलन ने उन्हें एक सामान्य खतरे में साझीदार बना दिया और सबसे अधिक सौभाग्यशाली राजकीय विवाहों ने दोनों राजमुकटों के उस सम्मिलन के लिए मार्ग प्रशस्त किया, जो एकीकरण १६०३ में घटित हुआ। १४८५ में चार राष्ट्रों की एकता की सम्भावना अतीव दूरवर्ती प्रतीत होती थी। १६०३ में यह क्रियात्मक रूप से ऐसे ढंग से पूरी हुई, जिसके बारे में हम यह आशा रख सकते थे कि यह कभी भंग नहीं होगी।

इस युग की दूसरी विशेषता धर्मसुधार आन्दोलन (Reformation) के नाम से प्रसिद्ध उस विशाल हलचल का इस द्वीपसमूह के लोगों के जीवन और संस्थाओं पर प्रभाव है। इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड और आयर्लैण्ड में इसके प्रभाव, व्यापक रूप से विभिन्न प्रकार के थे। इनका कुछ कारण तो राष्ट्रीय चरित्र का अन्तर था, किन्तु मुख्य कारण प्रत्येक देश में इसके आरम्भ होने की एक दूसरे से तीव्र भेद रखने वाली परिस्थितियाँ थीं। इंग्लैण्ड में इस आन्दोलन का संचालन और नियन्त्रण राजतन्त्र ने पार्लियामैण्ट के माध्यम से कार्य करते हुए किया। इसका स्वरूप प्रधान रूप से राजनीतिक था और इसे अधिकांश शक्ति राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की भावना से मिली थी। इसकी समाप्ति एक इंगलिश समझौते से हुई, और इसने चर्च को राज्य के एक प्रकार के विभाग के रूप में परिणत कर दिया। स्काटलैण्ड में यह आन्दोलन राजकीय विरोध के होते हुए भी नीचे से किया गया और यद्यपि इस पर राजनीतिक तत्वों का गहरा प्रभाव था, तथापि यह इंग्लैण्ड की अपेक्षा जनता के उत्साह पर अधिक आश्रित था। इस कारण इसने एक अत्यधिक लोकतन्त्रीय रूप धारण किया। स्काट लोग धर्मशास्त्र की जटिल समस्याओं में अत्यधिक निष्णात और बौद्धिक दृष्टि से कुशाग्र राष्ट्र बन गये। उन्होंने चर्च के शासन के प्रेसबिटेरियन (Presbyterian)[1] रूप में स्वशासन का ऐसा प्रशिक्षण प्राप्त किया, जो उनकी राजनीतिक संस्थाओं ने कभी नहीं प्रदान किया था। संक्षेप में, धर्म सुधार आन्दोलन ने स्काटिश जनता को इंगलिश जनता की अपेक्षा अधिक गम्भीरता से प्रभावित किया। इसने उनके राष्ट्रीय चरित्र का पुनर्निर्माण किया और उनके भाग्य-क्रम को परिवर्तित किया। आयर्लैण्ड में धार्मिक सुधार-आन्दोलन एक ऐसे परिवर्तन के रूप में आया, जो जनता पर

---

१. प्रेसबिटेरियन शब्द, पुरोहित का अर्थ देने वाले प्रेसबिटर (Presbyter) से बना है। यह विशेष रूप से स्काटलैण्ड के चर्च की उस व्यवस्था को सूचित करता है, जिसमें चर्च के समूचे कार्य प्रेसबिटर कहलाने वाले पुरोहितों द्वारा किये जाते हैं। ये सभी पुरोहित समान दर्जे के होते हैं और उनमें इंग्लैण्ड चर्च की भाँति आर्क बिशप, बिशप और पुरोहितों जैसा कोई श्रेणीभेद नहीं होता है। ये ब्रिटिश पुरोहितों की भाँति राजा द्वारा नियुक्त न होकर, जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं और सभी धार्मिक प्रश्नों का निर्णय प्रेसबिटरों की परिषद् (Presbyterey) करती है (अनुवादक)।

बाहर से एक अतीव क्रूर विजेता द्वारा थोपा गया था, अतः इसने कोई विजय नहीं प्राप्त की, परन्तु उसने देश की वर्तमान मुसीबतों में वृद्धि की।

इस युग की तीसरी विशेषता इस द्वीप समूह के लोगो, विशेपत: इंगलिश लोगों द्वारा यूरोप के सामान्य जीवन में लिया जाने वाला भाग है। इस युग से ही यूरोप का इतिहास नेतृत्व अथवा प्रभुत्व के लिए होड़ करने वाले सुसंगठित राष्ट्रीय राज्यों की प्रतिस्पर्धा की कहानी बनने लगा तथा उस समय से यह ऐसा बना हुआ है। अब इंग्लैण्ड की नीति उन सिद्धातों से निश्चित होने लगी, जिनका अनुसरण यह उस समय से कर रहा है। यह नीति यूरोप के महाद्वीप पर आधिपत्य प्राप्त करने के किसी भी प्रयत्न से बचे रहने की थी, क्योंकि शतवर्षीय युद्ध ने ऐसे किसी भी साहसिक कार्य की निरर्थकता को प्रदर्शित कर दिया था। किन्तु इसी समय से यह नीति किसी भी व्यक्ति को अत्यधिक सर्वोच्च सत्ता की अथवा दूसरों पर हावी होने वाली प्रभुसत्ता की स्थिति प्राप्त करने से रोकने की थी। यह नीति शक्ति-संतुलन (Balance of Power) की नीति है, इसने इंग्लैण्ड को और बाद में ब्रिटेन तथा समूचे ब्रिटिश राष्ट्र को किसी भी शक्ति द्वारा विश्व की प्रभुता प्राप्त करने के प्रत्येक प्रयत्न का अधिकतम विरोध करने की प्रेरणा की है। आधुनिक इतिहास में चार[१] ऐसे प्रयत्न हुए हैं और ब्रिटिश द्वीपसमूह ने प्रत्येक प्रयत्न का विरोध करने में प्रमुख भाग लिया है। इनमें से पहला प्रयत्न स्पेन का है और वह इस युग में प्रबल हुआ था। इसका चरम बिन्दु (Culmination) इंग्लैण्ड को जीतने के लिए १५८८ ई० में स्पेन के राजा फिलिप द्वितीय द्वारा भेजे गये विशाल आर्मेडा (Armada) की पराजय थी।

इस युग की चौथी विशेषता समुद्रों का उद्घाटन और ब्रिटिश द्वीपवासियों द्वारा समुद्र पार के देशों में उन साहसिक कार्यो का आरम्भ करना था, जिन्होंने अन्त में विश्व-व्यापी ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल का निर्माण किया। ये घटनाएँ हमारे समूचे इतिहास के लिए बड़ी महत्वपूर्ण हैं। १५वीं शताब्दी के पिछले वर्षों की तथा १६वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध की पहली अवस्था की विशेषता वे महान अन्वेषण हैं, जो मुख्य रूप से स्पेन और पुर्तगाल ने किये और इन्होंने पूर्व तथा पश्चिम के विशाल प्रदेशों का ज्ञान यूरोप को कराया। किन्तु इन अन्वेषणों से प्राप्त इन सब अक्षय स्रोतों पर इन्हें मुख्य रूप से खोजने वाली उपर्युक्त दोनों शक्तियों का एकाधिकार स्थापित हो गया और वे इनका उपयोग करने लगी। १६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में होने वाली दूसरी अवस्था की विशेषता यह थी कि इंगलिश व्यक्तियों के बढ़ते हुए साहस ने इस एकाधिकार को पहले तो समुद्री डाकुओं के हमलों से अथवा नये समुद्री मार्ग ढूँढने के प्रयत्नों से और अन्त में खुले युद्ध से चुनौती दी थी। यहां भी, इस कहानी का चरम उत्कर्ष बिन्दु स्पेनिश आरमेडा (Armada) की हार में पाया जायगा। विश्व के इतिहास में क्रान्ति करने वाले इस महत्वपूर्ण संघर्ष ने स्पेन का एकाधिकार भंग कर दिया। इसने संसार के

---

१. पांचवाँ प्रयत्न हिटलर के नेतृत्व में नाजी जर्मनी द्वारा द्वितीय विश्वयुद्ध (१९३९-४५) में किया गया था (अनुवादक)।

समुद्रों को इंगलिश नाविकों और व्यापारियों के लिए ही नहीं, अपितु सब देशों के नाविकों और व्यापारियों के लिए खोल दिया। इसने पहली बार समुद्रों की स्वतन्त्रता को स्थापित किया और ब्रिटिश द्वीपवासियों द्वारा समुद्र पार की बस्तियों को बसाना सम्भव कर दिया। न्यूफाउन्डलैण्ड के अत्यधिक संदिग्ध अपवाद के अतिरिक्त समुद्र पार की कोई भी बस्ती उस समय तक नहीं बसी थी, जबकि यह युग १६०३ ई० में समाप्त हुआ। फिर भी, विश्वव्यापी ब्रिटिश राष्ट्रमंडल की भूमिगत नींवें रखी जा चुकीं थीं, और इन नींवों पर अगले युग में बड़ी तेजी से राष्ट्रमण्डल के भव्य भवन का निर्माण होना था।

१

उत्तम सरकार की पुनः स्थापना

(१४८५ से १५२९ ई०)

इंग्लैण्ड, वेल्स, आयरलैण्ड—हेनरी सप्तम, १४८५ : हेनरी अष्टम, १५०९।
स्काटलैण्ड—जेम्स चतुर्थ, १४८८ : जेम्स पंचम, १५१३।

१. प्रिवी कौंसिल तथा व्यवस्था की पुनः स्थापना

बाज़बर्थ की लड़ाई के बाद हेनरी सप्तम[1] के सम्मुख पिछली शताब्दी की अराजकता के बाद व्यवस्था और उत्तम शासन की पुन. स्थापना करने का नीरस, किन्तु अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य था। यह कार्य आसान नहीं था, क्योंकि उपद्रव करने की आदत की जड़ गहरी जमी हुई थी। सभी दर्जो के व्यक्ति शस्त्र धारण करते थे। सरकार में परिवर्तन के लिए उत्सुक यार्किस्ट दल के चंचल उत्तरीय भद्रजन, जर्मन अथवा इटालियन विदेशियों को प्रदर्शित की गयी कृपाओं के कारण रुष्ट लंदन के मजदूर अथवा शार्गिद (Apprentices), स्काटिश सीमा के युद्धों के लिए लगाये गये निरर्थक करों के भार से पीड़ित कार्निश खनिक और कृषक—ये सभी अपनी शिकायतों का इलाज शक्ति के द्वारा बलपूर्वक करने के लिए बड़े उतावले थे। एक वेनिसवासी प्रेक्षक ने कहा था, "सारी दुनिया में कोई ऐसा देश नहीं है जहाँ इंग्लैण्ड जैसे इतने अधिक चोर और डाकू हों। इनकी संख्या इतनी अधिक है कि बहुत कम व्यक्ति दिन के मध्य-भाग के अतिरिक्त अन्य समय में अकेले जाने का साहस करते हैं और इनसे भी कम व्यक्ति नगरों में रात में अकेले जाने का साहस करते हैं और लन्दन में तो सबसे कम व्यक्ति ऐसा करते हैं।" यह

१. 'बारह इंग्लिश राजनीतिज्ञों की पुस्तकमाला' में जेम्स गार्डनर द्वारा लिखित हेनरी सप्तम की एक अच्छी जीवनी है।

एक शताब्दी की अव्यवस्था का परिणाम था। कानून के शासन (Reign of Law) को स्वीकार करने की और शिकायतों को दूर करने के लिए कानून पर भरोसा रखने की आदत भीषण रूप से खोखली हो चुकी थी। इंग्लैण्ड द्वारा अपनी अवरुद्ध प्रगति को पुनः शुरू करने से पहले कानून के शासन की पुनः स्थापना आवश्यक थी और यह सुदृढ़ सरकार द्वारा ही पुनः स्थापित हो सकती थी।

हेनरी सप्तम का कार्य इस तथ्य से अधिक आसान हो गया कि उन बड़े कुलीन सरदारों ने लगभग एक दूसरे का विध्वंस कर दिया था, जिन सरदारों की अराजकता और जिनके सशस्त्र सैनिक दल अव्यवस्था का प्रधान स्रोत थे। हेनरी सप्तम की पहली पार्लियामेण्ट में लार्ड सभा (House of Lords) में सम्मिलित होने के लिए केवल २७ सांसारिक लार्ड (Lay) बुलाये गये थे।[१] इन परिस्थितियों में यह सम्भव था कि 'वर्दी और निर्वाह' की उस पाबन्दी का प्रभावशाली रूप से पालन किया जा सके, जिसके लिए पार्लियामेन्ट ने इतनी अधिक बार और इतने निरर्थक रूप में प्रार्थना की थी। दूसरी ओर, यद्यपि नाइट वर्ग के अनेक व्यक्ति अब भी उच्छृंखल थे, तथापि राष्ट्र का बड़ा भाग-कॉमन्स सभा को भरने वाले देहात के भद्रजन और व्यापारी तथा शहरों और देहात में रहने वाले कारीगर और कृषक उत्तम शासन से अधिक कुछ नहीं चाहते थे और वे इसे बनाये रखने के साधन के रूप में राजा की सत्ता को सुदृढ़ बनाने के लिए बहुत अधिक तैयार थे।

व्यावहारिक रूप से, लैंकास्ट्रियन लोगों के साथ रिचर्ड तृतीय के अन्यायों से विक्षुब्ध अनेक यार्किस्ट लोगों के सम्मिलन से ही हेनरी सप्तम को राजगद्दी पर बिठाया गया था। एडवर्ड चतुर्थ की कन्या तथा उत्तराधिकारिणी एलिजाबेथ के साथ उसकी शादी इस व्यवस्था का एक अंग थी। यह आशा रखी जाती थी कि यह विवाह लम्बे राजवंशीय संघर्ष का अन्त कर देगा। किन्तु जब एक बार कानून को पालन करने की आदत भंग हो जाती है तो एक उपद्रवी देश में शान्ति स्थापित होने में लम्बा समय लग जाता है, अतः इस राज्य के पहले बारह वर्ष षड्यन्त्रों, दंगों और लड़ाई से परिपूर्ण थे। हेनरी ने यार्किस्ट वंश के एक मात्र प्रत्यक्ष पुरुष-प्रतिनिधि, वार्विक के युवा अर्ल को लन्दन के टावर में बन्दी बनाने की सावधानी बरती थी। यह अभागा युवक १४ वर्ष पर्यन्त, तब तक कारावास में रहा, जब तक १४९९ ई० में यार्किस्ट षडयन्त्रों की समाप्ति के एकमात्र उपाय के रूप में झूठा दोष लगाकर इसका वध नहीं कर दिया गया। किन्तु उसके कारावास ने हारे हुए दल को अपने प्रयत्नों से विरत नही किया। उन्होंने राजगद्दी के लिए झूठा दावा करने वाले कई व्यक्तियों को आगे बढ़ाया, जैसे ऑक्सफोर्ड के एक व्यापारी का लड़का लैम्बर्ट सिमनेल (१४८६-७), यह वार्विक का अर्ल होने का दावा करता था; फ्लेमिश नाविक का बेटा परकिन वॉरबैक (१४९२-८२७), यह उस रिचर्ड के होने का दावा करता था, जो यार्क का ड्यूक था और रिचर्ड तृतीय द्वारा लन्दन के किले में मरवाये गये राजकुमारों में से छोटा राजकुमार था। इन दोनों ने हेनरी को बहुत

१. इनमें से बीसवीं शताब्दी के लार्डों में छः से अधिक लार्डों का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व नहीं है।

कष्ट दिया, किन्तु जहाँ एक ओर सिमनेल को इंग्लैण्ड के अभी तक जीवित यार्किस्ट दल के कुलीन सरदारों से सहायता मिली और वह स्टोक में (१४८७) ऐसी लड़ाई लड़ने में समर्थ हुआ, जिसने क्रियात्मक रूप से यार्किस्ट दल का विनाश कर दिया, वहाँ दूसरी ओर वार्विक के बहुत ही थोड़े इंग्लिश अनुयायी थे और जब उसने एक बार समुद्र तट पर उतरने की कोशिश की तो वह आसानी से हरा दिया गया और पकड़ लिया गया। वह आयर्लैण्ड के महान यार्किस्टों की सहायता पर, बर्गण्डी की विधवा डचेस, एडवर्ड चतुर्थ की बहन की सहायता पर और स्काटलैण्ड की सहायता पर पूर्ण रूप से निर्भर था। उसने अपने दुर्भाग्य और निन्दा के सभी वर्ष एक दरबार से दूसरे दरबार का चक्कर काटने में बिताये। कुछ अन्य षडयन्त्र-कारी भी थे, किन्तु यहाँ उनके वर्णन की आवश्यकता नहीं है। १४८७ के बाद से हेनरी की राजगद्दी बिल्कुल सुरक्षित हो गयी। यद्यपि बीच-बीच में अनेक षड्यन्त्र (इनमें वारबैक का षड्यन्त्र सबसे भयंकर था) उसे परेशान करते रहे और उसकी विशेष नीति को विशिष्ट रूप से प्रभावित करते रहे।

वस्तुतः इस राजा का मुख्य कार्य क्षमतापूर्ण शासन की पुनः स्थापना थी। इस कार्य में उसका मुख्य साधन उसकी प्रिवी कौंसिल थी। इसे वह अपने पूर्ववर्तियों की भाँति, बड़े कुलीन सरदारों से नहीं, अपितु कठोर परिश्रमी क्रियात्मक प्रशासकों से, चर्च के व्यक्तियों से, नाइट लोगों से तथा वकीलों से भरता था। इसके बाद से यह अधिक अध्यवसायी तथा परि-श्रमी संस्था इंग्लैण्ड की सरकार का वास्तविक केन्द्र और हृदय बनी। इसके अत्यधिक इच्छुक स्थानीय कार्यकर्ता शान्ति की व्यवस्था स्थापित करने वाले वे पुरशासी (Justice of Peace) थे, जो वेतन न पाने वाले देहात के भद्रजन थे तथा उत्तम शासन पुनः स्थापित करने में और अव्यवस्था के दमन में राजा के सहायक होने में गर्व करते थे। यह ट्यूडर पद्धति का निचोड़ था। प्रिवी कौंसिल पुरवासियों के माध्यम से कार्य करती थी और सभी राजा के वास्तविक नियन्त्रण में थे। चिरकाल तक यह पद्धति प्रशंसनीय रीति से कार्य करती रही, इंग्लिश चर्च की प्रार्थना में (यह ट्यूडर युग से हमारे पास अब तक चली आ रही है) केवल 'कौंसिल के लार्ड' और मजिस्ट्रेट अर्थात् पुरशासी ही ऐसे शासन करने वाली सत्तायें हैं, जिनके लिए विशेष निवेदन प्रस्तुत किये गये हैं। पार्लियामेण्ट का उल्लेख बहुत महत्वपूर्ण रीति से छोड़ दिया गया है।

इसका कारण यह था कि पार्लियामेण्ट ने अब शासन की सामान्य पद्धति का वैसा नियन्त्रण नहीं किया, जैसा उसने रिचर्ड द्वितीय तथा हेनरी चतुर्थ के समय में किया था। इसका मुख्य कारण यह था कि वह अब स्वयमेव बड़े कुलीन सरदारों के प्रभाव में नही रही थी, जैसा कि वह उन दिनों में थी। अतः अब इसका प्रयोग शक्तिहीन दल द्वारा शासनारूढ़ दल पर आक्रमण करने के साधन के रूप में नहीं किया जा सकता था। अब यह इसी में बहुत सन्तुष्ट थी कि वह राजा और उसके चुने हुए कौंसिल के सदस्यों के हाथों में पूरी शक्ति और उत्तरदायित्व को छोड़ दे, तथा अपने को, इसका विशेष समझे जाने वाले कार्य अर्थात् कानूनों के निर्माण और करो को वोट द्वारा पास करने तक सीमित कर ले। इन क्षेत्रों में भी वह इस राजा की इच्छाओं को पूरा करने के लिए बहुत दूर तक जाने को तैयार थी, जिस राजा

पर वह विश्वास रखती थी। हेनरी सप्तम और उसके उत्तराधिकारियों के लिए संसद ने आजीवन बहुत अधिक धनराशियों को वोट दे कर पास किया और विशेष आवश्यकताओं के लिए जब इससे विशेष अनुदान माँगे गये तो उसने इन्हें उदारता पूर्वक प्रदान किया। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं था कि पार्लियामेण्ट ने अपनी शक्ति का परित्याग कर दिया था। इसके विपरीत हेनरी सप्तम और उसके उत्तराधिकारी यह जानते थे कि यदि उन्होंने अपने को राष्ट्र की भावनाओं के सम्पर्क से बाहर निकल जाने दिया, तो उन पर मुसीबत आयेगी। उनके चतुर और लोकप्रिय शासक होने से तथा उनकी नीति का सामान्य रूप से समर्थन होने के कारण ही उन्होंने अपनी इतनी अधिक बातें चलवाईं। उन्होंने पार्लियामेण्ट को इतनी अधिक बार नहीं बुलाया, जितनी बार वह लैंकास्ट्रियन युग में बुलायी गयी थी। हेनरी सप्तम ने उसे अपने शासन के अन्तिम दस वर्षों में केवल तीन बार बुलाया और हेनरी अष्टम ने उसे आठ वर्ष तक (१५१५-१५२३ ई०) नहीं बुलाया, किन्तु इस पर तब तक किसी व्यक्ति ने आपत्ति नहीं की, जब तक सरकार सक्षम और सफल बनी रही। वस्तुतः पार्लियामेण्ट में उपस्थित होना एक ऐसा खर्चीला बोझ था, जिससे बचने में मनुष्य प्रसन्न हुआ करते थे। ट्यूडर राजा इतने बुद्धिमान थे कि उन्होंने कर लगाने अथवा कानून बनाने के सम्बन्ध में पार्लियामेण्ट के कानूनी विशेषाधिकारों के उल्लंघन करने का प्रयत्न नहीं किया। इस प्रकार, यद्यपि इस युग में, पार्लियामेण्ट का महत्व कम हो गया, तथापि यह उसकी सहमति से हुआ और इस कारण हुआ कि यह राजा और उसकी परिषद पर विश्वास रखती थी। किन्तु इसके सभी कानूनी अधिकार पहले की तरह से बने रहे और उसके सदस्य जिन विषयों के सम्बन्ध में अपना बोलने का अधिकार समझते थे, जैसे चर्च की दशा अथवा व्यापार की आवश्यकताएँ अथवा कृषि और श्रम की समस्याएँ अथवा सबसे बढ़ कर करों का बोझ, इन सब विषयों पर पार्लियामेण्ट ने बार-बार यह प्रदर्शित किया कि वह इनके बारे में बड़ी जागरूक है और उसकी अवहेलना सुगमतापूर्वक नहीं हो सकती।

इस दशा में इस समूचे युग में, यह राजा और उसकी परिषद ही थी, जिसने इंग्लैण्ड के शासन के वास्तविक केन्द्र का निर्माण किया, न कि पार्लियामेण्ट ने; परिषद का मुख्य कार्य अव्यवस्था करने वाली शक्तियों को नियन्त्रण में लाना था। इस प्रयोजन के लिए, उन्होंने बड़े से बड़े कुलीन सरदारों द्वारा भी सशस्त्र सेनाओं के रखे जाने का अत्यन्त कड़ाई से निषेध किया। चूंकि सामान्य कानूनी न्यायालय बड़े व्यक्तियों पर और उनके अनुयायियों पर पर्याप्त नियन्त्रण रखने में निर्बल सिद्ध हुए थे; अतः परिषद ने १४८७ में ऐसे मामलों पर विचार करने तथा कानून के सामान्य क्रम में अनुचित हस्तक्षेप के सभी मामलों पर विचार करने के लिए पार्लियामेण्ट से विशेष अधिकार प्राप्त किया था। १४८७ के कानून ने व्यावहारिक रूप से एक नये न्यायालय की स्थापना की थी। यह प्रिवी कौंसिल से घनिष्ट रूप से सम्बद्ध था और कई बार लगभग इससे तादात्म्य रखता था। यह स्टार चेम्बर (Star Chamber)[1] के न्यायालय

---

१. यह दीवानी तथा फौजदारी मामले सुनने वाला एक ब्रिटिश न्यायालय था, इसे १६४१ में समाप्त कर दिया गया था क्योंकि यह अपनी मनमानी कार्य विधियों के*

के नाम से प्रसिद्ध था। इसके अधिकारों की परिभाषा कड़ाई से नहीं की गयी थी और इसकी प्रक्रिया भी पाण्डित्यपूर्ण परिपाटी से नही बँधी हुई थी, इसने कानून के शासन (Reign of Law) की पुनः स्थापना का महत्वपूर्ण प्रयोजन पूरा किया। यह उस लोकप्रियता का पूर्ण रूप से अधिकारी था, जिसे यह उस समय तक उपभोग करता रहा, जब तक स्टीवर्ट राजाओं के शासन में इसके क्षेत्राधिकार की आवश्यकता नही रही और यह अत्याचारपूर्ण प्रतीत होने लगा।

हेनरी सप्तम का एक प्रधान उद्देश्य इतनी पुष्कल आय को पा लेना था, जिससे उसे उसके पूर्ववर्ती राजाओं को निर्बल बनाने वाली पार्लियामेण्ट का अवलम्बन लेने की आवश्यकता न रहे। यह बात पूर्ण रूप से पार्लियामेण्ट की इच्छाओं के अनुकूल भी थी। वह टैक्सों के लिए वोट देना नापसन्द करती थी और अब भी इस पुराने विचार से चिपटी हुई थी कि जहाँ तक सम्भव हो, "राजा को अपने ही आर्थिक साधनों से जीवन बिताना चाहिए।" गुलाबों के युद्ध (Wars of the Roses) के परिणामस्वरूप होने वाली बड़ी जागीरों की जब्ती ने राजा को अत्यधिक समृद्ध बना दिया था। हेनरी की पहली पार्लियामेण्ट द्वारा १४५४ से राजकीय भूमियों के सभी इन्तकालों (Alienations) को रद्द करने वाले एक कानून ने यह निश्चित कर दिया था कि हेनरी सब जब्तियों का पूरा लाभ उठा सके। इन साधनों से तथा राजा की आय के अन्य परम्परागत स्रोतों के कारण वह मितव्ययतापूर्ण प्रबन्ध के द्वारा इस बात में आसानी से समर्थ हो गया कि वह विशेष करों को लगाये बिना सरकार के सामान्य खर्चों को पूरा कर ले। राज्यकाल के अन्तिम वर्षों में, जब उसकी धनलिप्सा प्रबल हो गयी, तब उसने अपने नाम से अत्यन्त अन्यायपूर्ण और गैरकानूनी वसूलियों की भी अनुमति दे दी। यह कार्य विशेष रूप से प्रिवी कौंसिल के दो कठोर परिश्रमी और न्यायविचारशून्य, कुख्यात सदस्यों-एम्पसन और डडली ने किया। जब हेनरी सप्तम की मृत्यु हुई, तब तक उसने न केवल व्यवस्था की पुनः स्थापना कर ली थी, अपितु एक विशाल कोष का भी संग्रह कर लिया था। कहा जाता है कि यह कोष ४५ लाख पौंड का था। यह उस युग के लिए एक बहुत बड़ी राशि थी।

२. हेनरी अष्टम का वैभव तथा वूल्ज़े (Wolsey)

इस प्रकार उसके तेजस्वी उत्तराधिकारी हेनरी अष्टम[1] ने यूरोप में सबसे धनी राजा के रूप में अपना शासन शुरू किया। वह अपने मन की इच्छा के अनुसार राजनीति में एक शानदार भाग लेने में समर्थ हुआ। सम्भवतः हेनरी अष्टम इंग्लिश राजाओं की समूची लम्बी

---

*लिए बहुत बदनाम हो गया था। इसका प्रधान कार्य ऐसे अपराधों के लिए दण्ड देना था, जिनकी उस समय की कानूनी पद्धति में कोई व्यवस्था नहीं थी। इसे यह नाम देने का यह कारण था कि इसकी छत पर सुनहले तारे अंकित थे अथवा इसमें यहूदियों के साथ किये जाने वाले लेन-देन के दस्तावेज (Starrs) सुरक्षित रखे जाते थे।

१. ए० एफ० पोलर्ड [illegible] एक उत्तम सचित्र जीवन चरित्र है।

वंशावली में सबसे अधिक आकर्षक व्यक्तित्व रखता था। वेनिस के राजदूत के शब्दों में "वह इतना सुन्दर था, जितना प्रकृति उसे बना सकती थी।" वह शक्ति से तथा ओजस्विनी भावनाओं से परिपूर्ण था। वह इतना कुशल तीरन्दाज था, जैसा उसके रक्षकों में से कोई भी व्यक्ति हो सकता था। वह एक चतुर पहलवान, शानदार घुड़सवार तथा मैदान में खेले जाने वाले सभी खेलों का प्रेमी था। खरी बात कहने वाला, मुँहफट तथा अहम्मन्य होने के साथ-साथ उसका स्वभाव बहुत अच्छा था और उसके पास आसानी से पहुँचा जा सकता था। ऐसे व्यक्ति को सार्वभौम लोकप्रियता मिलना निश्चित था और अपने राज्य की कृष्णतम घटनाओं के समय में भी वह झाँसेबाज राजा (Bluff King Hal) अपने प्रजाजनों से प्रगाढ़ प्रेम पाता रहा। वह एक अत्यधिक सुसंस्कृत व्यक्ति था, किसी भी बाजे को बजा सकता था और प्रसन्नतापूर्ण गीतों की तानों की तथा धार्मिक संगीत की रचना कर सकता था। वह कई भाषायें बोल सकता था और बहुत पढ़ा लिखा था, विशेष रूप से धर्मशास्त्र में प्रवीण था। संक्षेप में, वह बौद्धिक एवं शारीरिक गुणों से समान रूप से विभूषित था और विद्वान एवं संगीतज्ञ तथा खिलाड़ी और सैनिक समान रूप से उसका आदर करते थे। अपनी विनोदवृत्ति के साथ उसने अपनी राजकीय प्रतिष्ठा को कभी नही भुलाया। किसी भी व्यक्ति ने उसके साथ कभी धृष्टता करने का साहस नहीं किया। उसमें अतीव अभिमानपूर्ण उच्च भावना तथा असीम आत्म-विश्वास था। उसके अत्यधिक विश्वासपात्र मन्त्री, यहाँ तक कि वूल्जे (Wolsey) अथवा क्रामवेल सदैव यह जानते थे कि राजा उनका स्वामी है, वह भले ही उन्हें कितनी स्वतन्त्रता देता रहे, किन्तु उसे कोई ऐसा कार्य करने के लिये न तो बहकाया जा सकता था और न ही आतंकित किया जा सकता था, जिस कार्य को वह पसन्द न करता था। सबसे बढ़ कर यह बात थी कि हेनरी एक पूर्ण इंग्लिश पुरुष था। उसे अपने देशवासियों के विचारों और इच्छाओं का एक सहज ज्ञान था। इसमें क्या आश्चर्य हो सकता है कि ऐसे शानदार और अहम्मन्य तथा साथ ही साथ ऐसे धनी राजा को अपने प्रजाजनों की पूर्ण स्वामिभक्ति प्राप्त हो और उसे अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने की तथा उन्हें विचित्र मार्गों पर ले जाने की अनुमति हो। इंग्लैण्ड इस यशस्वी और अहम्मन्य राजा के शासन में निरंकुश राजतन्त्र के जितना अधिक समीप तक पहुँचा, वैसा कभी नहीं हुआ। फिर भी, हेनरी अष्टम ने पार्लियामेण्ट की अवज्ञा या अवहेलना करने का सपना कभी नहीं लिया। उसे ऐसा करने की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि पार्लियामेण्ट प्रसन्नतापूर्वक उसकी इच्छा पर चलने को तैयार थी। उसने हेनरी के अत्यधिक अत्याचारपूर्ण कार्यों तक को भी अपनी सहमति प्रदान की। इस प्रकार हेनरी अष्टम के राज्य ने हेनरी सप्तम के काम को पूरा किया। यह दो प्रकार से हुआ--सारे इंग्लैण्ड को इसकी सरकार की प्रसन्नतापूर्ण वशवर्तिता में लाकर और इस सरकार को कुलीन सरदारों की अथवा अन्यथा असन्तुष्ट तत्वों की समूची प्रतिद्वन्द्विता से ऊँचा उठाकर।

युवा, धनी, सुन्दर और जीवन के आनन्द से परिपूर्ण होने के कारण हेनरी अष्टम इस पर तुला हुआ था कि वह स्वयमेव आनन्द का उपभोग करे और यूरोपियन राजनीति के उत्तेजनापूर्ण नाटक में शानदार भूमिका अदा करे। अपने राज्य के पहले २० वर्षों में उसने शासन का विस्तृत कार्य अपने सेवकों के हाथों में छोड़ दिया। विशेष रूप से यह कार्य महान

कार्डिनल वूल्जे के हाथों में था। वूल्जे इप्सविच के एक चरवाहे का लड़का था, उसकी असीम योग्यताओं ने उसे एक के बाद एक पदोन्नति दी, यहाँ तक कि १५१५ से १५२९ तक उसने स्वदेश और विदेश में अपने देश के समूचे कार्य पर लगभग पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर लिया। वूल्जे के यार्क का आर्क बिशप, इंग्लैण्ड का चांसलर (Chancellor), कार्डिनल[1] और पोप का राजदूत (Legate) होने के कारण ऐसा प्रतीत होता था कि वूल्जे जिस समय एक ही साथ राज्य और चर्च का नियन्त्रण कर रहा था, उस समय राजा घुड़सवार नाइटों के द्वारा लड़े जाने वाले भालायुद्धों से, नृत्य से, आखेट एवं जलूसों से और विदेशी युद्धों की उत्तेजनाओं से अपना मनोविनोद कर रहा था। १५१९ में वेनिस के राजदूत ने लिखा था कि "कार्डिनल वूल्जे लगभग ४६ वर्ष का है; वह अति सुन्दर विद्वान, अत्यधिक वाग्मी, विशाल योग्यता वाला और अनथक कार्य करने वाला व्यक्ति है। वह अकेला ही वह सारा कार्य करता है जिसे वेनिस के सब मैजिस्ट्रेट, दफ्तर और परिषदें मिलकर करती हैं। वह विचारवान् है, उसके बारे में यह ख्याति है कि वह अतीव न्यायी है। वह जनता का, विशेषतः दरिद्र लोगों का अत्यधिक समर्थक है। वह उनके मुकदमे सुनता है और उनका तुरन्त निपटारा करने की इच्छा रखता है।" उसने अपनी शक्ति की महत्ता के समान ही जीवन के वैभव को भी बनाए रखा। उसके घर में पाँच सौ व्यक्ति रहा करते थे। ये कुलीन तथा नाइट लोग, लाल मखमल की वर्दियाँ पहने हुए बलिष्ठ समृद्ध कृषक तथा सईस, टहलुए या किंकर एवं भाट और गाने वाले लड़कों की मण्डलियाँ थीं।

कार्डिनल वूल्जे के अभिमानपूर्ण और शानदार व्यक्तित्व पर कुछ विचार करना उपयोगी है। वह इंग्लिश इतिहास में चर्च से सम्बन्ध रखने वाला अन्तिम बड़ा मन्त्री था, क्योंकि उसके बाद भारी परिवर्तन की बाढ़ आयी और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वीर राजा के तथा उसके उत्तम मन्त्री के प्रभावोत्पादक ठाठ-बाठ ने इंग्लिश लोगों की कल्पना को प्रभावित किया। इसने उनके मनों पर राष्ट्रीय उत्कर्ष को स्थापित करने में तथा उनके राष्ट्रीय अभिमान की भावना को ऊँचा उठाने में बहुत काम किया। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि ऐसे राजा और मन्त्री को राष्ट्रीय मामलों के संचालन में पूरी स्वतन्त्रता दे दी गयी, विशेष रूप से उस अवस्था में जब कुल मिलाकर उन्होंने अपना काम बहुत अच्छी तरह से किया। किन्तु हेनरी अष्टम तथा वूल्जे को भी उन मर्यादाओं को सीखना पड़ा, जिन्हें ट्यूडर पार्लियामेण्टों की 'चापलूसी' कहा जाता है। हम यह देखेंगे कि इनकी मुख्य दिलचस्पी विदेश नीति में थी, कुल मिलाकर पार्लियामेण्ट ने इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया। फिर भी, १५२३ की पार्लियामेण्ट में जब फ्रांस के विरुद्ध लड़ाई के लिए बहुत बड़े परिमाण में सरकार के व्यय के लिए धन का अनुदान माँगा गया, तब स्वतन्त्रता का विलक्षण प्रदर्शन हुआ। बाद में थामस क्रामवैल के नाम से प्रसिद्ध होने वाले एक सदस्य ने यह साहस किया कि वह समूची युद्धनीति

१. इंग्लैण्ड में चान्सलर या लार्ड हाइ चान्सलर (Lord High Chancellor) का अर्थ लार्डसभा का अध्यक्ष, राज्य का सर्वोच्च अधिकारी तथा प्रधान न्यायाधीश था। कार्डिनल (Cardinal) पोप का निर्वाचन करने वाले सत्तर व्यक्तियों की महापरिषद का सदस्य होता था।

केविरुद्ध एक प्रबल भाषण करे। १७ दिन तक वाद-विवाद चलता रहा। पार्लियामेण्ट ने उससे कहीं कम मात्रा में उनका अनुदान स्वीकार किया, जितनी मात्रा में इसकी मांग की गयी थी। जब कार्डिनल अपनी चमकीली वर्दी वाले अनुयायियों के साथ उन्हें घुड़की देकर वशवर्ती बनाने के लिए आया, तब उसे शिष्टतापूर्ण हठ का सामना करना पड़ा। वहाँ कुछ चर्चा यहाँ तक भी हुई कि उसे पार्लियामेण्ट में प्रवेश का निषेध कर दिया जाय। जब उसने सदस्यों से उनके व्यवहार की व्याख्या करने की माँग की, तब सब चुप रहे। अन्त में सभापति सर थामस-मूर ने यह व्याख्या की कि यह बात कामन्स सभा के विशेषाधिकारों के अनुकूल नहीं है कि वे अपने निर्णयों के बारे में अजनबियों के साथ वाद-विवाद करें। पार्लियामेण्ट घुड़कियों में आने वाली नहीं थी अथवा वह अपने अधिकारों को रत्ती भर भी छोड़ने वाली नहीं थी और वूल्जे को विफल होकर ही वापिस लौटना पड़ा। यह इस बात का निश्चित प्रमाण है कि पार्लियामेण्ट की चुप्पी की कुछ सीमाएँ थीं और इन सीमाओं को स्वीकार करके ही लोकप्रिय ट्यूडर राजा बिना प्रतिबन्ध के अपनी शक्ति का प्रयोग करने में समर्थ हुए।

३. राष्ट्रीय शक्ति का विकास

१४८५ से १५२९ के लम्बे युग में, इंग्लैण्ड के घरेलू इतिहास में ऐसी बड़ी महत्वपूर्ण घटनाएँ बहुत कम हैं, जिनका उल्लेख किया जा सके। जैसा कि हम कह चुके हैं कि यह शान्ति और तैयारी का युग था, किन्तु कई प्रकार से इस युग की घटनाओं का भविष्य पर बड़ा महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा।

पहली बात यह थी कि कुछ अग्निकाण्डों ने यह प्रदर्शित किया कि लोल्लार्डी या विक्लिफ का मत और चर्च की स्थिति के प्रति असन्तोष अब भी विद्यमान है। यद्यपि ये अब इतने व्यापक नहीं थे, जैसे ये पहले रह चुके थे। कुछ घटनाओं ने यह प्रदर्शित किया कि चर्च के विरुद्ध सन्देह और वैमनस्य को बड़ी सुगमता के साथ उभाड़ा जा सकता है।

इस युग की दूसरी उल्लेखनीय विशेषता कृषि में हो रहे परिवर्तनों के कारण बढ़ते हुए असन्तोष की अभिव्यक्ति थी। ऊन के व्यापार से प्राप्त होने वाली सम्पत्ति के कारण जमीन के मालिक चिरकाल से खेती के स्थान पर भेड़ पालन का कार्य कर रहे थे और इससे कुछ जिलों में सामुदायिक खेती की पुरानी पद्धति भंग होने लगी थी। यह खेतों को अधिक ठोस एवं परिवेष्टित खण्डों के रूप में परिणत करने से हुआ। इसने बड़े जमींदारों को भी प्रलोभित किया कि वे उस सामान्य अथवा बंजरभूमि के खेतों को घेर लें, जिसका उपयोग अब तक मेनर के सभी किसान किया करते थे। चूँकि भेड़ पालने में खेती की अपेक्षा कम श्रम की अपेक्षा थी, अतः इस प्रक्रिया ने अनेक व्यक्तियों को बेकार बना दिया और आवारागर्दी में वृद्धि की। अभी तक यह प्रक्रिया बहुत दूर तक नहीं गयी थी। इस शताब्दी के मध्य तक, मठों के दमन के बाद यह प्रक्रिया अपने चरम शिखर पर नहीं पहुँची और उस समय तक भी देश का अधिकांश भाग इससे अप्रभावित था। किन्तु यह स्थिति पहले से ही ध्यान आकृष्ट कर रही थी और हेनरी सप्तम के राज्य काल के समय से ही इसके लिए कानून-निर्माण के प्रयत्न हो रहे थे। इस

बढ़ता हुआ व्यापारिक समुद्री बेड़ा अपने को पुरानी व्यापारिक शक्तियों का प्रबल प्रतिस्पर्धी प्रदर्शित कर रहा था। उसके युद्धपोतों का बेड़ा (Warfleet) अपने समुद्र तटों के साथ लगने वाले समुद्रों का स्वामी था।

४. इंग्लैण्ड और साथी राज्य

इंग्लैण्ड और उसके साथी राज्यों के सम्बन्धों के बारे में यह युग शुरुआतों का था, किन्तु अभी विशेष उपलब्धियाँ नहीं मिली थीं।

आयरलैण्ड में कुलीन वर्ग द्वारा प्रत्येक यार्किस्ट दावेदार को बारी-बारी से दिये गये समर्थन से यह स्पष्ट हो गया था कि राजकीय सत्ता को पुन. स्थापित करने के लिए कुछ किया जाना चाहिए। किन्तु वस्तुतः आयरलैण्ड ऐसी अराजक स्थिति में था कि उसकी एक पूर्ण विजय आवश्यक थी। १५१६ में एक पक्षपातपूर्ण इंग्लिश प्रेक्षक ने कहा था कि "राजा के आयरिश शत्रुओं से बसे हुए ६० जिले हैं, इनमें ६० से अधिक ऐसे प्रमुख सेनापति राज्य करते हैं, जो केवल तलवार से जीवन-यापन करते हैं और अपने अतिरिक्त किसी अन्य सांसारिक व्यक्ति की आज्ञा का पालन नहीं करते। वहाँ तीस इंग्लिश कुलीन सरदार हैं, जो इसी व्यवस्था का अनुसरण करते हैं और ऐसा ही शासन बनाये रखते हैं।" पेल की संकीर्ण सीमाओं में भी बहुत कम व्यवस्था थी और सामान्य रूप से इनके मामले का नियन्त्रण किलडेयर का शक्तिशाली अर्ल किया करता था। इसकी अपनी जमीनें कुछ तो पेल की सीमा मे थी और कुछ पेल की सीमा से बाहर थीं। आयरलैण्ड में व्यवस्था तथा शासनसत्ता को पुनः स्थापित करने के लिए एक बड़ी सेना की तथा धन के भारी व्यय की आवश्यकता थी। मितव्ययी हेनरी सप्तम इस धन का व्यय करने को तैयार नही था। किन्तु वह आयरलैण्ड में शासकीय शासन-सत्ता को अब भी यार्किस्ट दल के नेताओं के हाथ में नही छोड़ सकता था, जैसी कि उस समय की स्थिति थी। अतः १४९२ में उसने किलडेयर को सहायक (डिप्टीशिप) के पद से पृथक किया और किलडेयर फिट्जेरल्डस् लोगों के नियन्त्रण में रखने के लिए आरमन्ड के बटलर लोगों के प्रतिद्वन्दी परिवार का उपयोग उठाने का प्रयत्न किया। इसका एक मात्र परिणाम गृह-युद्ध था। अब इसका कोई लाभ नहीं था कि आयरलैण्ड के विभिन्न दलों को समर्थन देने की नीति में कोई परिवर्तन किया जाय।

१४९४ में प्रिवी कौंसिल के एक उपयोगी और परिश्रमी सदस्य सर एडवर्ड पायनिंग्स को सहायक बना कर एक हजार व्यक्तियों की सेना के साथ तथा इंग्लिश अफसरों के एक समूह के साथ यहाँ भेजा गया। किन्तु पायनिंग्स ने अपने अधिकार में विद्यमान साधनों के साथ, पेल से बाहर कहीं भी शासकीय सत्ता को स्थापित करना असम्भव पाया। वह जो कुछ कर सका, वह यही था कि वह पेल के चार जिलों में शासन का पुनः संगठन करे और इसे सुदृढ़ बनाये। यह कार्य उसने बड़ी कठिनाइयों के साथ किया। ड्रोगेडा में बुलाई गयी आयरिश पार्लियामेन्ट ने निजी युद्ध के दमन के लिए, इंग्लिश बस्ती की रक्षा के लिए और इंग्लैण्ड के साथ घनिष्ठ सम्बन्धों की स्थापना के लिए अनेक विस्तृत कानून स्वीकार किये। बाद में 'पायनिंग्स कानूनों' के नाम से प्रसिद्ध दो कानूनों का उद्देश्य यह था कि किलडेयर जैसे बड़े

एंग्लो-आयरिश कुलीन सरदारों के झगड़ों के अथवा स्थानीय महत्वाकांक्षाओं के साधन के रूप में आयरिश पार्लियामेण्ट का उपयोग न हो सके। इन कानूनों ने यह व्यवस्था की कि पार्लियामेण्ट की कोई भी बैठक तब तक नही होनी चाहिए जब तक कि राजा का सहायक और आयरिश प्रिवी कौंसिल कानून के रूप में प्रस्तुत की जाने वाली संविधियों का विशेष रूप से निर्देश न कर दे तथा ताज (Crown) और उसकी इंग्लिश परिषद उनको स्वीकार न कर ले। यह भी व्यवस्था की गयी कि पुराने सभी इंग्लिश कानून आयरलैण्ड मे लागू होंगे। इस प्रकार आयरिश पार्लियामेण्ट पूर्ण रूप से इंग्लिश शासन पर अवलम्बित बना दी गयी। फिर भी, केवल इससे सम्बन्ध रखने वाले इंग्लिश उपनिवेशकों ने इस पर आपत्ति नही की। वे इन कानूनों को किलडेयर और उस जैसे सरदारों से अपने संरक्षण का साधन समझते थे, क्योंकि आयरिश पार्लियामेण्ट उस समय भी विकास की ऐसी आरम्भिक दशा में थी कि उसे या तो राजा पर अथवा कुलीन सरदारों पर निर्भर रहना पड़ता था और इन दोनो विकल्पों मे राजा पर निर्भर रहना अधिक अच्छा था। ड्रोगेडा की पार्लियामेण्ट ने अपना कार्य किलडेयर को दोषी ठहरा कर दण्डित करते हुए पूरा करके किया, वह इंग्लैण्ड मे भेज दिया गया और यहाँ कुछ महीनों के लिए उसे बन्दी बना कर रखा गया।

किन्तु हेनरी सप्तम पार्यानिग्स की योजना के साथ चलने को तैयार नही था। इसमें अत्यधिक व्यय था, आयरलैण्ड की राजकीय आमदनी एक दुर्गरक्षक सेना के व्यय को भी पूरा करने के लिए अपर्याप्त थी। अतः हेनरी ने पुरानी नीति को अपनाया और किलडेयर को एक पाठ पढ़ाने के बाद (जैसा कि उसने आशा की थी) उसने उसे एक बार पुनः सहायक के रूप में आयरलैण्ड का शासन करने के लिए वापिस भेज दिया। १५२० तक वह अपने पद पर बना रहा और पुरानी अराजकता चलती रही। १५२० में एक बार पुनः एक इंग्लिश सहायक-सर्रे के अर्ल को भेजा गया। किन्तु सर्रे ने यह रिपोर्ट दी कि सुव्यवस्थित विजय से कम कोई वस्तु नहीं की जा सकती थी। इस विजय के लिए साठ हजार व्यक्तियों की सेना तथा इंग्लिश उपनिवेश की एक सुव्यवस्थित नीति आवश्यक थी। यूरोप के महान युद्धों में संलग्न हेनरी अष्टम इस कार्यक्रम के लिए तैयार नही था। पाँच वर्ष के निष्फल युद्ध के बाद सर्रे वापिस बुला लिया गया और आयरलैंण्ड एक बार पुनः अराजकतापूर्ण स्थिति में छोड़ दिया गया। उसे न तो वशवर्ती बनाया गया और न ही ऐसा स्वतन्त्र छोड़ा गया कि वह अपने लिए शासन की पद्धति का विकास कर सके। आयरिश समस्या का आरम्भ कर दिया गया था, किन्तु इसके समाधान के लिए कुछ भी नहीं किया गया।

स्काटलैण्ड के साथ भी हेनरी सप्तम तथा हेनरी अष्टम की गृह एवं विदेश नीति ने उसके सम्बन्ध बहुत कठिन बना दिये। इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की परम्परागत शत्रुता तथा स्काटलैण्ड तथा फ्रांस की परम्परागत मित्रता इस समय पहले की भाँति प्रबल थी। इसका यह मतलब था कि स्काटलैण्ड इंग्लिश राजमुकुट का दावा करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का स्वाभाविक मित्र था और इंग्लैण्ड तथा फ्रांस में युद्ध छिड़ने से सदैव इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के बीच में भी युद्ध छिड़ जाता था। १४८८ से १५१३ तक स्काटलैण्ड का शासन एक ऐसे राजा ने किया जो अपने पूर्ववर्तियों की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और सफल था। किन्तु

अपने पूर्ववर्तियों के समान जेम्स चतुर्थ को प्राय: इंग्लैण्ड से भड़काये जाने वाले बैरन लोगों के षड्यन्त्रों के विरुद्ध तथा हाइलैंड के तथा द्वीपवासी सरदारों के विद्रोह के विरुद्ध लड़ना पड़ता था। स्काटलैण्ड का राजा जिसका इंग्लैण्ड के शत्रुओं के साथ सदैव सम्बन्ध बना रहता था, हेनरी सप्तम की चिन्ता का कारण बना रहा। हेनरी ने स्काटलैण्ड के कुछ देशद्रोही कुलीन सरदारों के साथ सम्बन्ध बना कर उन्हें अपने पक्ष में बनाये रखा। उदाहरणार्थ, १४९१ में हेनरी ने इनमें से एक सरदार के साथ २२७ पौण्ड १३ शिलिंग ४ पेनी देने के बदले में यह व्यवस्था की थी कि वह जेम्स का और उसके भाई का अपहरण करके उन्हें इंग्लैण्ड में ले आयेगा।

हेनरी ने उस समय स्काटिक समस्या का हल करने का एक अधिक अच्छा उपाय ढूँढा जबकि १५०२ में उसने अपनी कन्या मार्गरेट का विवाह जेम्स चतुर्थ के साथ किया। ठीक १०० वर्ष बाद उनके प्रपौत्र ने दोनों राजमुकुटों को एक करना था। किन्तु इस विवाह से तात्कालिक मैत्री नहीं हुई और अगले वर्षों में निरन्तर संघर्ष और सीमान्त युद्ध चलता रहा। १५११ में जब हेनरी अष्टम पवित्र संघ (Holy League) के नाम से प्रसिद्ध फ्रांस के विरुद्ध महान महाद्वीपीय मैत्री सन्धि में सम्मिलित हुआ, उस समय जेम्स चतुर्थ ने इंग्लैण्ड पर आक्रमण करके अपने पुराने मित्र की सहायता करने में अपने को बँधा हुआ अनुभव किया। उसके पास लड़ाई का एक अन्य कारण भी था कि जिस समुद्री बेड़े का वह बड़ी उत्कण्ठा से निर्माण करा रहा था, उस पर इंग्लिश बेड़े ने हमला करके उसे लगभग नष्ट कर दिया था (१५११)। १५१३ में उसने अपने राज्य की समूची सेना के साथ नार्थम्बरलैण्ड पर हमला किया और मूर्खतापूर्ण सेनापतित्व के कारण फ्लोड्डन (Flodden) की लड़ाई में उसे पूरी तरह से हरा दिया गया। यह लड़ाई स्काटलैण्ड के समूचे [illegible] इतिहास में अधिकतम विपत्तिजनक थी। राजा, तेरह अर्ल, एक आर्क विशप और दो विशप तथा नाइट लोगों की तथा शस्त्रधारियों की अनगिनत संख्या युद्ध भूमि में मारी गयी। स्काटलैण्ड के पिछले इतिहास में फ्लोड्डन की कटु स्मृति गूँजती रही और स्काटलैण्ड के निम्न प्रदेश (लोलैण्ड) में कोई ऐसा उच्च कुल मुश्किल से बचा होगा, जिसका पूर्वज इस भीषण हत्याकाण्ड में न मारा गया हो। इसने दोनों देशों के बीच की खाई को बहुत अधिक चौड़ा कर दिया। सब से बुरी बात यह थी कि इससे स्काटलैण्ड में पुन: एक अल्प संख्या के लिए मुसीबतें आने लगीं और कुलीन सरदारों के दावों के अनन्त झगड़े निर्बाध रीति से उस समय चलते रहे, जब एक बालक राजा शासन कर रहा था। जेम्स पंचम का संरक्षण उस समय समाप्ति पर ही था, जब हमारा यह युग समाप्त होता है (१५२९)। इससे पहले वर्ष में, लूथर के नास्तिक मत के अनुसरण के लिए पैट्रिक हैमिल्टन के जलाये जाने से स्काटिश धर्म सुधार आन्दोलन के आरम्भ को सूचित किया और दोनों राष्ट्रों के सम्बन्धों में एक नवयुग का आरम्भ हुआ।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

H. A. L. Fisher, History of England from the Accession of Henry VII, to the death of Henry VIII. is a good account of this period;

see also **Brewer, Henry,** and **Pollard,** Factors in Modern History, for Scotland, see **Hume Brown** of Andrew lang, History of Scotland, for Scotland, for economic history see **Meredith,** ecomomic History of England, and **Cunningham,** Growth cf English Indusry and Commerce. **Chrime,** Constitutional ideas of the Fifteeth Century; **Taswell Langmead** (Ed. Plucknett), Constitutional History; **Maitand,** English Law and the Renaissance; **Gray,** Influence of the Commons in Early Legislation; **Leadam,** Select pleas of the Court of the star Chamber; **Pickthorn,** early tudor Government, There are two excellent lectures on the period in Stubles, lectwre on modern history.

● ●

२

पुनर्जागृति (RENASCENCE)

१. पुनर्जागृति का अर्थ

१५वीं शताब्दी में जब ब्रिटिश द्वीपसमूह अराजकता और अव्यवस्था में निमग्न था, उस समय पहले इटली में और कुछ कम मात्रा में पश्चिमी यूरोप के कुछ अन्य हिस्सों में साहित्यिक और कलात्मक क्रियाशीलता का प्रस्फुटन हुआ, इसे पुनर्जागृति अथवा पुनर्जन्म (Renascence or rebirth) कहा जाता है। यह नाम ही इस आश्चर्यजनक उद्रेक के बारे में सदैव अनुभव की जाने वाली भावना को प्रकट करता है। यह नाम मानवीय इतिहास में एक क्रान्तिकारी मोड़ को सूचित करता है। इंग्लैण्ड में शान्ति और व्यवस्था की पुनः स्थापना का और कुछ कम मात्रा में स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड में भी शान्ति की स्थापना का एक बड़ा परिणाम यह था कि इसने पुनर्जागृति के विचारों को ब्रिटिश-द्वीपसमूह में स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य आरम्भ करने का अवसर प्रदान किया।

पुनर्जागृति का नाम एक प्रकार से ठीक नहीं है, क्योंकि यह इस बात को सूचित करता है कि मध्य युग में बौद्धिक जड़ता अथवा निष्प्राणता थी। यह बात वस्तुतः सचाई से बहुत दूर है। यह कल्पना करना भी ठीक नहीं है कि मनुष्यों के विचार में, संसार के विषय में उनके दृष्टिकोण में सहसा महान् परिवर्तन हुआ। पहले यह फैशन था कि पुनर्जागृति के आरम्भ के लिये १४५३ ई० की तिथि बतायी जाय, क्योंकि इस वर्ष तुर्क सेना द्वारा कुस्तन्तुनिया के जीतने पर वहाँ से भगाये गये अनेक यूनानी विद्वानों ने इटली में शरण ली और यूनानी साहित्य के श्रेष्ठ ग्रन्थों के अध्ययन को प्रोत्साहित किया। किन्तु एक विशाल आन्दोलन को समझने का यह बहुत ही उथला तरीका है। यह सच है कि नवीन विचारों के जन्म के सम्बन्ध में प्राचीन यूनानी विद्या के पुनरुज्जीवन (Revival) ने बड़ा भाग

लिया । किन्तु यूनानी भाषा के श्रेष्ठ ग्रन्थों का अध्ययन १४५३ से बहुत पहले से ही किया जा रहा था और यूनानी भाषा के पुनरुज्जीवित अध्ययन के अतिरिक्त, पुनर्जागृति के अन्य अनेक कारण थे । सच तो यह है कि पुनर्जागृति की शुरुआतों को मध्य युग में बहुत पीछे तक देखा जा सकता है । १४वीं शताब्दी में यह पहले से ही बहुत क्रियाशील हो रही थी, और मनुष्यों की दृष्टि में पहले से ही एक बड़ा परिवर्तन हो रहा था । यूनानी ग्रन्थों के अध्ययन के लिये १५वीं शताब्दी के उत्साह ने केवल इस आन्दोलन को विशेष दिशा प्रदान की और इसके इतने बड़े परिणाम को उत्पन्न करने का हेतु यह था कि पूर्ववर्ती विकासों के कारण मनुष्यों को उस बात के रसास्वादन के लिये तैयार कर दिया गया था, जो यूनान के श्रेष्ठ ग्रन्थ उन्हें सिखाना चाहते थे ।

पुनर्जागृति की सबसे अधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि उस समय संसार को तथा जीवन को देखने की एक नवीन पद्धति का व्यापक विस्तार हो रहा थ । यह मध्य युग के सर्वोत्तम व्यक्तियों को प्रभावित करने वाले विचारों के विरुद्ध एक प्रबल प्रतिक्रिया थी । यह प्रतिक्रिया किसी भी अवस्था में अवश्य होती क्योंकि देर से इसकी तैयारी हो रही थी । यूनानी विद्या की पुनर्जागृति ने प्राचीन युग और मध्य युग के दृष्टिकोण के अन्तर की तीव्रता पर बल देकर इसे चरम शिखर तक पहुँचा दिया । मध्य युग के विद्वान यूनान के श्रेष्ठ ग्रन्थो का अध्ययन करते थे, किन्तु वे उनकी व्याख्या अपने विचारों के अनुसार किया करते थे । १५वीं शताब्दी के विद्वानों ने इस बात को समझने का प्रयत्न किया कि प्राचीन व्यक्ति जीवन और संसार के बारे में, वास्तव में क्या अनुभव करते थे और क्या सोचते थे । उन्होंने सब वस्तुओं को सोफोक्लीज और प्लेटो की दृष्टि से देखने का प्रयत्न किया । ऐसा करने में वे जितना सफल हुए, उतना ही वे अनुभव करने लगे कि प्राचीन जगत् की भाषा और उच्च सभ्यता मे मनुष्यों के प्रधान विचार मध्य युग के विचारों से बहुत भिन्न हैं । १५वीं शताब्दी के इटालियन लोगों को जीवन के यूनानी दृष्टिकोण ने (जैसा कि वे समझते थे) इतने पूर्ण रूप से आकृष्ट और मुग्ध किया कि इसने उस दृष्टिकोण में परिवर्तन को तीव्र कर दिया जो पहले से ही शुरू हो गया था और इसने उसे विशेष रूप प्रदान किया । ऐसा प्रतीत होता था कि यूनानी अध्ययन विश्व में नवीन दृष्टिकोण की कुंजी है और कुछ समय तक कोई भी अन्य वस्तु ध्यान देने योग्य प्रतीत नहीं हुयी । सारा इटली यूनानी ग्रन्थों के अध्ययन के पीछे पागल हो गया । राजकुमार यूनानी ग्रन्थों की पाण्डुलिपि को खरीदने के लिये अपने कोष लुटा रहे थे । यूनानी भाषा का ज्ञान प्रतिष्ठा का तथा ऊँचे पदों तक पहुँचने का भी सुरक्षिततम साधन था । जब हम यह विचार करते हैं कि प्राचीन यूनान की सभ्यता कितनी आश्चर्यजनक और मनोरम थी, तब यह बात आश्चर्यजनक नहीं प्रतीत होती कि इसके पूर्ण प्रकटीकरण ने मनुष्यों की आंखों को चौंधिया दिया था ।

मध्ययुग के तथा प्राचीन यूनान के विचारों में प्रधान अन्तर किस बात में था, जिसने विचारशील व्यक्तियों पर इतना उत्तेजक प्रभाव डाला ? मध्ययुग के सर्वोत्तम व्यक्ति संसार को परलोक की तैयारी के लिए संघर्ष और अनुशासन का एक स्थल समझते थे । यूनानी इस दुनियां को आश्चर्य और सौन्दर्य का ऐसा स्थान समझते थे, जिसकी खोज होनी चाहिए और

जिसके आनन्द का उपभोग होना चाहिए। वे दूसरी दुनिया के विचार के बारे में बहुत कम तथा अस्पष्ट रूप से सोचते थे। मध्य युग के प्रचारक भौतिक जगत् के सौन्दर्य को आत्मा को संसार में फँसाने का जाल समझते थे और मनुष्य के शरीर को ऐसी बुराइयों और प्रलोभनों का स्रोत मानते थे। ये प्रलोभन शरीर को नियन्त्रण में न रखने पर उसे विनाश की ओर ले जा सकते थे। यूनानी मानवीय शरीर को एक उच्च एवं ऐसी मनोरम वस्तु समझते थे, जिसका ऐसा विकास होना चाहिए कि यह मनुष्य के अधिक आश्चर्यजनक मन के अधिष्ठान के लिए उत्तम मन्दिर बन सके। वे सौन्दर्य के उपभोग के लिए मनुष्य की योग्यता को ऐसी वस्तु समझते थे, जिसका प्रशिक्षण होना चाहिए एवं अधिकतम उपयोग किया जाना चाहिए। मध्ययुगीन मन वास्तव में महत्व रखने वाले एक मात्र सत्य को ऐसी वस्तु समझता था, जो भगवान चर्च के माध्यम से मनुष्यों को प्रदान करता है। वे मनुष्य की बुद्धि को एक ऐसा अत्यधिक अपूर्ण साधन मानते थे, जिसका उस समय अवश्य अविश्वास एवं निन्दा की जानी चाहिए, जब कभी यह इलहाम से प्राप्त की गयी उस सच्चाई में सन्देह करे अथवा उस सच्चाई को चुनौती दे या उसमें सन्देह प्रकट करे, जिस सच्चाई का संरक्षक चर्च है। यूनानी सच्चाई को ऐसी वस्तु समझते थे, जो मनुष्य की बुद्धि के स्वतन्त्र और निर्भीक विचार से प्राप्त हो सकती थी। बुद्धि मनुष्य के आश्चर्यजनक गुणों में उच्चतम और सबसे अधिक दैवी गुण था। मध्य युग के सर्वोत्तम मस्तिष्कों के लिए मनुष्य का उच्चतम कर्त्तव्य अपनी वासनाओं पर विजय पाना और भगवान के चर्च द्वारा निश्चित किये गये नियमों का पालन करते हुए अपनी अहंकारपूर्ण इच्छा को भगवान की इच्छा का वशवर्ती बनाना था। यूनानियों के लिए मनुष्य का उच्चतम कर्त्तव्य शक्तियों का अधिकतम उपयोग करना तथा अधिकतम सामंजस्यपूर्ण रीति से मन और शरीर की सब शक्तियों का ऐसा विकास करना था कि वह इस संसार के सौन्दर्य का उपभोग कर सके और सत्य का अन्वेषण करने में सफल हो सके। एक ही वाक्यांश में इस अन्तर को प्रकट करने के लिए यह कहा जा सकता है कि मध्ययुग का उच्चतम आदर्श आत्मदमन का था और प्राचीन युग का आदर्श आत्माभिव्यक्ति का था। वस्तुतः जीवन के दोनों दृष्टिकोणों में अन्तर इतना अधिक उग्र नही था, जैसा इन वाक्यांशों से प्रतीत होता है। मध्ययुग के अनेक महापुरुष, भगवान की अभिव्यक्ति के रूप में सौन्दर्य की पूजा करते थे और सभी सर्वोत्तम यूनानी आत्मा के अनुशासन तथा आत्मनियन्त्रण के कर्त्तव्य पर उससे कहीं अधिक जोर से बल देते थे, जैसा कि पुनर्जागृति के व्यक्ति सामान्य रूप से समझते थे। किन्तु यह तुलना वास्तविक थी। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि जीवन के प्रति यूनानियों का दृष्टिकोण अतीव आकर्षक था और यह दृष्टिकोण चिरकाल से स्वीकृत किये जाने वाले दृष्टिकोण से भिन्न था। अब इस दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति ने मनुष्यों के मनों पर अत्यधिक मादक प्रभाव डाला और इसके कारण मनुष्य की बुद्धि के सर्वोच्च मूल्य और महत्व पर और संसार के मोहक सौन्दर्य पर अत्यधिक बल दिया जाने लगा।

मनुष्य की प्रतिष्ठा और महत्व पर बल देने वाली इस प्रवृत्ति को मानवीयता (Humanism) का नाम दिया गया है। भद्दा होने पर भी यह उपयोगी शब्द है। इसका महत्व हम तब अच्छी तरह से अनुभव कर सकते हैं, जब हम इसे उस बात के विरुद्ध

मुख्य रूप से एक प्रतिवाद समझें, जिसे हम मध्ययुग का दैवीवाद या Divinism (यह और भी भद्दा शब्द है) कह सकते हैं। दोनों दृष्टिकोणों में सच्चाई है जैसा कि सर्वोत्तम यूनानी अच्छी तरह से जानते थे और जैसा पुनर्जागृति युग के अनेक मानवतावादी इरेस्मस और सर थामस मोर जैसे व्यक्ति समान रूप से अच्छी प्रकार जानते थे। किन्तु एक नये सत्य के प्रकटीकरण की सनसनी में अधिकांश व्यक्तियों के लिए यह सम्भव था कि वे अपना सन्तुलन खो बैठें।

नयी भावना ने मनुष्यों को आश्चर्यजनक कार्यों के लिए प्रोत्साहित किया और इसने विशेष रूप से पहले इटली में और बाद में अधिक अस्पष्टता से पश्चिम के अन्य देशों में कलात्मक सृजन के आश्चर्यजनक उद्रेक (Outburst) को जन्म दिया। यह स्थान १५वीं और १६वीं शताब्दियों में इटली के चित्रकारों, मूर्तिकारों और वास्तुकारों के उस विस्मयावह कार्य को वर्णन करने का नहीं है जो उस युग की एक विशेषता-सौन्दर्य की भावनापूर्ण उपासना का परिणाम था; न ही हम यहाँ साहित्य के उन नये आन्दोलनों का, राजनीति और दर्शन की नवीन विचारधारा का और भौतिक विज्ञान में नये विचारों का वर्णन करने के लिए रुक सकते है, जिन्हें मनुष्य की बुद्धि की शक्ति में अभिमानपूर्ण विश्वास ने उत्पन्न किया था। प्रत्येक क्षेत्र में प्रोत्साहन को अनुभव किया जा रहा था। धर्म के क्षेत्र में सुधार आन्दोलन पुनर्जागृति का एक परिणाम था। एक अगले अध्याय में बताये जाने वाले महान् अन्वेषण इसका दूसरा परिणाम था। सर्वत्र विचारों में हलचल मच रही थी और एक सुखद संयोग से यान्त्रिक आविष्कारों में से एक सबसे अधिक युगान्तरकारी आविष्कार ठीक इसी घड़ी में, नये विचारों का व्यापक प्रसार प्रोत्साहित करने के लिए हुआ। गुटनबर्ग और फस्ट ने १५वीं शताब्दी के मध्य में छापने की कला का आविष्कार किया और शीघ्र ही यूनान तथा रोम के उत्कृष्ट साहित्यिक ग्रन्थ सब पाठकों के लिए सुलभ हो गये और सर्वत्र पुनर्जागृति के सारगर्भित, नये विचारों का दूर तक प्रसार होने लगा।

२. इंग्लैण्ड में पुनर्जागृति

ब्रिटिश द्वीपसमूह में नयी विचारधारा को अपना प्रभाव डालने का समय मिलने से पहले ही मुद्रणकला इंग्लैण्ड पहुँच गयी। लंदन का एक व्यापारी विलियम कैक्सटन १४७६ में नीदरलैण्ड से एक प्रेस लाया और उसने इसे वेस्टमिंस्टर में स्थापित किया। इंग्लिश चिन्तन के प्रति उसकी सेवाएँ वास्तविक महत्व रखने वाली थीं। कैक्सटन कोरा कारीगर नहीं था; वह एक साहित्यिक व्यक्ति होने के साथ-साथ एक व्यावहारिक व्यापारी भी था। उसने एडवर्ड चतुर्थ, रिचर्ड तृतीय तथा हेनरी अष्टम के राज्यकालों में विकसित होने वाले इंग्लैण्ड के बौद्धिक जीवन का केन्द्र अपने को बना लिया। सम्भवतः उसकी सबसे बड़ी सेवा यह थी कि वह लैटिन के पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थों के मुद्रण से ही सन्तुष्ट नहीं रहा, किन्तु उसने प्रसिद्ध लैटिन ग्रन्थों के इंग्लिश भाषा में अनुवादों की एक लम्बी पुस्तकमाला प्रकाशित की और ऐसा करते हुए उसने समृद्ध एवं लचकीली इंग्लिश बोली का मापदण्ड निश्चित करने के लिए तथा आगे आने वाले महान् युग का मार्ग प्रशस्त करने के लिए बड़ा काम किया। उसे उस समय के सब

से अधिक प्रबुद्ध कुलीन सरदारों का संरक्षण प्राप्त था। इनमें से एक व्यक्ति वुस्टर के अर्ल टिपटाफ्ट ने इटली में अध्ययन किया था और वह अपने युग के सर्वोत्तम ज्ञान का आचार्य था। टिपटाफ्ट उच्च बौद्धिक अभिरुचियों के साथ असाधारण पाशविकता के उस विचित्र सम्मिश्रण का एक उदाहरण था, जो पुनर्जागृति के युग की एक विशेषता थी। हम आगे चल कर देखेंगे कि गुलाबों के युद्धों (Wars of the Roses) की बर्बरताओं में भी उसने 'कसाई' की पदवी का उपार्जन किया था।

किन्तु पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में ही, यूनानी ग्रन्थों के अध्ययनों का तथा इटालियन पुनर्जागृति का प्रभाव इंग्लैण्ड पहुँचा। स्काटलैण्ड अथवा आयरलैण्ड में यह और भी देर से पहुँचा। १४८८ में थामस लिनाकर इटली से यूनानियों की विद्या के प्रति उत्साह से अनुप्राणित होकर लौटा और यूनानी विद्या के आधार पर इंग्लैण्ड में वैद्यक का वैज्ञानिक अध्ययन आरम्भ हुआ। तीन वर्ष बाद उसका मित्र, आक्सफोर्ड का एक विद्वान् विलियम ग्रोकिन इटली में अध्ययन के लिए गया और वापिस लौटने पर वह आक्सफोर्ड में यूनानी ग्रन्थों के अध्ययन का केन्द्र बन गया। कुछ समय बाद एक ईमानदार और वाक्पटु पुरोहित जॉन कोलेट ने उसके पदचिह्नों का अनुसरण किया, उसने भी आक्सफोर्ड में ही यूनानी के अध्ययन का प्रयोग न्यू टैस्टामैन्ट की व्याख्या में किया। पाण्डित्यपूर्ण मध्ययुगीन व्याख्याओं के जालों को तोड़ते हुए उसने इस बात का प्रयत्न किया कि वह सैन्ट पॉल के वास्तविक आशय को समझ सके। ऑक्सफोर्ड के इस विद्वत्समुदाय ने इंग्लैण्ड में उस युग के सबसे बड़े विद्वान, नवयुवक डच इरेस्मस को अपनी ओर आकृष्ट किया। इसने इंग्लैण्ड में अनेक वर्ष बिताये और अनेक मित्र बनाये, कोलेट की भाँति इरेस्मस ने भी इस बात की सबसे अधिक चिन्ता की कि वह अपने ज्ञान का उपयोग धर्म के सम्बन्ध में मनुष्यों के विचारों को पवित्र बनाने के और चर्च में पुनर्जागृति का प्रोत्साहन करने के साधन के रूप में करे और लंदन में इस सारे समुदाय को एक युवा वकील थामस मोर[1] के रूप में एक मित्र प्राप्त हुआ। यह इनमें उच्चतम था और अन्य मित्रों के समान इसको भी इस बात की चिन्ता थी कि वह अपने ज्ञान का उपयोग चर्च और राज्य में सुधार उत्पन्न कराने में लगाये।

हमने इंग्लिश पुनर्जागृति के वास्तविक जन्मदाताओं के छोटे समूह के सम्बन्ध में जो बात कही है, वह उन दोनों रूपों के उस बड़े अन्तर को स्पष्ट करती है जो रूप इंग्लैण्ड में आरम्भ में पुनर्जागृति ने धारण किया था और जो रूप इसने इटली में धारण किया था। इंग्लिश पुनर्जागृति अपनी कलात्मक अवाप्ति में बहुत कम शानदार थी। इन वर्षों में इंग्लैण्ड में काम करने वाला एक मात्रा महान चितेरा जर्मनजातीय होलबाइन था और इंग्लिश पुनर्जागृति का सर्वोत्तम एवं आश्चर्यजनक साहित्यिक विकास या प्रपुष्पण एलिजाबेथ के समय तक नहीं हुआ था। किन्तु इंग्लैण्ड में इस आन्दोलन के अग्रणी नेता व्यावहारिक और नैतिक

१. मोर के दामाद डब्लू० रोपर ने उसकी एक सुन्दर छोटी जीवनी लिखी है। यह अवश्य पढ़ी जानी चाहिए।

प्रश्नों के बारे में गम्भीर रूप से चिन्तन करते थे। ऐसा चिन्तन इटली में बहुत कम महत्वपूर्ण समझा जाता था।

शिष्ट एवं कुलीन मोर की अपेक्षा यह बात किसी अन्य व्यक्ति में अधिक स्पष्टता-पूर्वक नही प्रदर्शित हुई। उसकी सबसे बड़ी पुस्तक (१५१६) इंग्लैण्ड की पुनर्जागृति की प्रथम अवस्था की सबसे सुन्दर उपज है। यह सामाजिक और राजनीतिक बुराइयों की ईमानदार आलोचना तथा ऐसे काल्पनिक जगत् का सजीव चित्र है, जिससे सब बुराइयाँ लुप्त हो जायँगी। यूटोपिया[1] (जिसका अर्थ है 'कही नही') अमरीका के एक नये खोजे राज्य के वर्णन के प्रतीक से, एक साथ वर्तमान की आलोचना और भविष्य का स्वप्न है और यह इतना मृदुल और इतना बुद्धिमत्तापूर्ण है कि यह अब भी प्रेरणा दे सकता है। यह इस प्रकार के चिन्तन का प्रयास था कि राज्य किस प्रकार अपने नागरिकों को आनन्द की अधिकतम मात्रा प्रदान कर सकता है और तीन बातों में यह अपने युग से, वास्तव में बहुत आगे था। मोर की उदार और कोमल आत्मा को इस बात का बहुत दुःख था कि निर्धन सदैव धनियों की दया पर निर्भर रहते हैं और वे उनके अत्याचार से दुःख पाते हैं। उसने अपने को ऐसे राज्य की कल्पना से सान्त्वना दी, जिसमें सब मनुष्यों के पास पर्याप्त धन हो और सम्पत्ति की लालसा मनुष्यों को मुख्य रूप से प्रेरित करने वाला उद्देश्य न हो। वह धार्मिक कटुता और अत्याचार से घृणा करता था, क्योंकि (स्वयमेव गम्भीर रूप से धार्मिक मनुष्य होने के कारण) वह यह अनुभव करता था कि धर्म का काम दया और प्रेम का पाठ पढ़ाना होना चाहिये। अतः उसने एक ऐसे समाज की कल्पना की, जिसमें धार्मिक मतभेदों के प्रति पूर्ण सहिष्णुता थी। वह यह जानता था कि जीवन की समृद्धि ज्ञान में होती है और वह उस अज्ञान पर दुःखी था, जिसमें उस समय के अधिकांश व्यक्ति अब भी जीवन बिता रहे थे। उसकी यूटोपिया में सब बच्चे सार्वजनिक द्रव्य से बुद्धिमत्तापूर्वक शिक्षित किये गये थे।

मोर हेनरी अष्टम का वैयक्तिक मित्र था। वह उसकी वाक्पटुता से, उसकी उच्च भावना से और उसके व्यापक ज्ञान से प्रसन्न था, उससे आनन्द लेता था क्योंकि हेनरी स्वयमेव वस्तुतः पुनर्जागृति का व्यक्ति था तथा अपने युग की संस्कृति का स्वामी था। दुर्भाग्यवश मोर की तथा उनके समुदाय की भावना वीर्यवान् स्वच्छन्द राजा की समझ से परे की बात थी; फिर भी हेनरी तथा उसका महामन्त्री कार्डिनल अधिक ज्ञान की माँग के साथ सहानुभूति रखते थे। उनके समय में नवीन ज्ञान के आदर्शों से अनुप्राणित होकर अनेक स्कूल स्थापित होने लगे। वूल्जे ने स्वयमेव आक्सफोर्ड में एक बड़े कालेज (क्राइस्ट चर्च) की और अपने जन्मस्थान इप्सविच में एक स्कूल की स्थापना की। अगली पीढ़ी में बनने वाले नवीन ज्ञान के शिक्षणालय एलिजाबेथ के महान युग के कवियों, नाविकों और विचारकों के लिए तथा बाद के जमाने के राजनीतिक सुधारकों के लिए प्रशिक्षण स्थल बनने वाले थे। सम्भवतः इन स्कूलों मे सबसे अधिक प्रसिद्ध प्रशिक्षणालय कोलेट द्वारा सैन्ट पॉल के चर्च के साथ में उस समय स्थापित किया गया था, जब कि वह इसका अध्यक्ष (डीन) नियत हुआ था।

---

१. यूटोपिया (Utopia) लैटिन में लिखी गयी थी, किन्तु इसके इंग्लिश अनुवाद भी हैं।

३. पुनर्जागृति के नैतिक और राजनीतिक पहलू

यह कल्पना करना एक बड़ी भूल होगी कि मोर की तथा उसके मित्रों की ईमानदारी और उच्च भावना इंग्लैण्ड में अथवा अन्यत्र पुनर्जागृति आन्दोलन की विशेषता थी, क्योंकि इस युग की उज्ज्वल अवाप्तियों के साथ उनकी काली परछाइयाँ भी थीं। इनमें सबसे अधिक काली छाया नैतिक मानदण्डों में भीषण शिथिलता, एक प्रकार की नैतिक अराजकता थी। यह पुराने बन्धनों को तथा आचार के पुराने आदर्शों को सहसा छोड़ देने का, मानवीय व्यक्तित्व की पूजा का, तथा इस दावे का स्वाभाविक परिणाम था कि प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह अपने व्यक्तित्व का स्वतन्त्र रूप से विकास करे। बेनवेनुटो सेल्लिनी जैसे पुनर्जागृति के एक सामान्य कलाकार और स्वाभाविक रूप से ईमानदार और उदार चेता की आत्मप्रकाश-कारिणी आत्मकथा (Autobiography of Benvenuto Cellini) जैसे ग्रन्थ को यदि आप पढ़ें तो आप यह देखेंगे कि सौन्दर्य और शक्ति की उपासना किन पापों को ढांपने वाली हो सकती है। सेल्लिनी यह अनुभव करता है कि उसे उन बुराइयों के लिए क्षमा प्रार्थना की कोई आवश्यकता नहीं है, जिन बुराइयों की ओर उसका स्वभाव उसे खींच ले गया है अथवा उसे उन अपराधों के लिए भी क्षमा माँगना आवश्यक नहीं है, जो उसने अपनी इच्छा से प्रेरित होकर किये हैं। इस युग के इटालियन लोगों में सदगुण (Virtu) के लक्षण में उन बातों का कोई स्थान नही था, जिन्हें हम उच्चतर नैतिक गुण कहते हैं। सदगुणों वाला पुरुष वह है, जो अपनी चालाकी और साहस से अपनी इच्छा को कड़ी मिट्टी या काँसे पर अथवा उससे भी अधिक कड़ी उस मानवीय सामग्री पर थोप सके, जो उसके पड़ोसियों या प्रजाजनों के रूप में मिलती है। जॉन कोलेट और थामस मोर की अपेक्षा वस्तुत. हेनरी अष्टम और थामस क्रामवैल सामान्य पुनर्जागृति के अधिक परिचायक पुरुष थे।

पुनर्जागृति की भावना के इस पहलू ने, नैतिक बन्धनों की इस अवहेलना ने, इस भावुक अहंकार ने राजनीति के क्षेत्र में अपनी सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण अभिव्यक्ति प्राप्त की। इस युग में इटली के छोटे राजाओं के प्रलेख शक्ति-प्राप्ति के लिए शानदार, निर्मम, अनैतिक, चालाकी और क्रूरता के अविश्वसनीय उदाहरणों से परिपूर्ण हैं। राजाओं ने अपने को सब नैतिक बन्धनों से मुक्त समझ लिया और ऐसा प्रतीत होता था कि आदर्श राजा एक प्रकार का ऐसा व्याघ्र-पुरुष है जो बलवान निर्दय, और चालाक है। वह किसी धार्मिक विचार या सन्देह के बिना प्रत्येक प्रकार के बल और छल के उपाय का प्रयोग अपने प्रजाजनों और प्रति-स्पर्धियों पर अपनी इच्छा थोपने के लिए करता है। राजनीति का यह दृष्टिकोण असाधारण चातुर्य के साथ इस युग के एक उत्कृष्ट ग्रन्थ मेकियावेली के 'प्रिन्स' में प्रतिपादित किया गया है। इस समूचे ग्रन्थ की आधारभूत कल्पना यह है कि व्यावहारिक रूप से राजनीति का नैतिकता से कोई सम्बन्ध नहीं है। वस्तुत: मेकियाविली का मत उस युग के आचार को सिद्धान्त के रूप में परिणत करने वाला है। न केवल इटालियन राजा अपितु आरागोन के फर्डिनेण्ड तथा फ्रांस के फ्रांसिस प्रथम जैसे राजा भी अपने को नैतिक बन्धनों से मुक्त समझते थे और इस कल्पना के आधार पर कार्य करते थे कि राज्यों के एक दूसरे के साथ सम्बन्धों में

अथवा राजाओं के अपने प्रजाजनों के साथ सम्बन्धों में नैतिक नियमों का कोई स्थान नहीं है, किन्तु अन्ततोगत्वा बल और छल ही एक मात्र निर्णायक तत्व हैं। वस्तुतः यह पुनर्जागृति का और उस युग का राजनीतिक सिद्धान्त था, जब सर्वत्र निरंकुश राजतन्त्र स्थापित हो रहा था और जब राजा उनके कार्यों का नियन्त्रण करने वाली अथवा इनकी आलोचना करने वाली किसी शक्ति के अधिकार को मानना अस्वीकार कर रहे थे। यह ऐसा सिद्धान्त है, जिसके समर्थक उस समय से इस समय तक रहे हैं, जब कि प्रथममहायुद्ध से पहले की पीढ़ी में जर्मनी के मन पर ट्रीट्स्के की शिक्षाएँ हावी हो गयी थी। जब हम हेनरी अष्टम के थामस् क्रामवैल (Cromwell) अथवा एलिजाबेथ के किसी कार्य का निर्णय करते है तो हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि यह दृष्टिकोण उस समय लगभग सार्वभौम रूप से स्वीकार किया जाता था।

अन्य क्षेत्रों की भाँति राजनीति में, पुनर्जागृति मध्य युग के विचारों के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया थी। मध्ययुग सिद्धान्त रूप में (यद्यपि इस सिद्धान्त का प्रायः व्यवहार से खण्डन किया जाता था) यह मानता था कि संसार में कोई ऐसी शक्ति होनी चाहिये जिसका कर्तव्य भगवान के नैतिक कानून को सब राजाओं पर लागू करना हो। उन्होंने इस शक्ति को सम्राटों की सैद्धान्तिक स्थिति में तथा पोपों की वास्तविक सत्ता में पाया था। पुनर्जागृति के युग की सरकारों ने—रोमन कैथोलिक मत मानने वाली सरकारों ने भी—अपने कार्य पर पाबन्दी लगाने वाले अथवा नियन्त्रण करने वाले प्रत्येक दावे का खण्डन किया और वास्तव में उन्होंने अपने लिये नैतिक कानून की वैधता का भी प्रत्याख्यान किया। किन्तु यह प्रवृत्ति थोड़े ही समय तक प्रबल रही। सोलहवीं शताब्दी में भी, मनुष्य के नैतिक प्राणी होने से तथा निरंकुश राजाओं के भी मनुष्य होने से शालीनता की सहज प्रवृत्तियों ने निकृष्टतम अतियों को रोका। शीघ्र ही सब सरकारों की सत्ता से ऊपर रहने वाले नैतिक कानून का पुराना आदर्श पुनरुज्जीवित होने लगा। हम इसे १७वीं शताब्दी के आरम्भ में अन्तर्राष्ट्रीय कानून की एक पद्धति के रूप में आविर्भूत होते हुए देखेंगे। एक पीढ़ी के बाद दूसरी पीढ़ी में यह शक्तिशाली होता गया और इस पुस्तक के पिछले हिस्सों में हमारा यह कार्य होगा कि हम इसके विकास को देखें और उस भूमिका को भी देखें जो ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल ने चेतन या अचेतन रूप से इसकी प्रगति में ली है।

इसी बीच में यह भी स्मरण रखना चाहिए कि हम यहाँ भलाई और बुराई से मिश्रित पुनर्जागृति की जिस भावना का प्रतिपादन कर रहे हैं, वह शीघ्रता से बदल रहे जगत में खमीर की भाँति काम कर रही थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Burkhadrt, The Renaissance; Symonds, Short History of the Renaissance in Italy; **Seebohm,** The Oxford Reformers; **Hutton,** Life of More; **Machiavelli,** (ed. Burd), Prince; **Macaulay,** Essays; **Acton,** Lectures on Modern History; **Allen** Age of Erasmus; **Trenchard Cox,** Renaissance in Europe 1400-1600; **J. D. Mackie,** Early Tudors

३

विदेशी राजनीति में नवयुग

(१४८५-१५२९ ई०)

१. राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धाओं का आरम्भ : इटली के युद्ध

आधुनिक युग की एक बड़ी विशेषता यह रही है कि यह यूरोप में प्रभाव और नेतृत्व पाने के लिए महान् संगठित राज्यों की प्रतिस्पर्धाओं से परिपूर्ण रहा है। इस सुदीर्घ संघर्ष में, छोटा या बड़ा-प्रत्येक राज्य कम या अधिक रूप में सम्मिलित रहा है। यूरोप के किसी कोने में होने वाला प्रत्येक विवाद सब सरकारों को चिन्ता का विषय प्रतीत हुआ है, क्योंकि इससे शक्ति के संतुलन (Balance of Powers) पर प्रभाव पड़ सकता था। लगभग सदैव कई महाशक्तियों को प्रभावित करने वाले युद्धों की लम्बी शृंखला चलती रही है, और शान्ति के मध्यान्तर कूटनीति से परिपूर्ण रहे हैं। इस अन्तःराज्य प्रतिस्पर्धा के आरम्भ की सामान्य रूप से स्वीकार की जाने वाली तिथि १४९४ ई० का वर्ष है, जब फ्रांस के राजा चार्ल्स अष्टम ने इटली पर सहसा आक्रमण किया और शीघ्र ही अपने को स्पेन के उस समय के संयुक्त राज्य के नेतृत्व में अन्य शक्तियों के गुट के मुकाबिले में पाया।

इस लम्बी स्पर्धा में इंग्लैण्ड, और कुछ कम मात्रा में स्काट-लैण्ड आवश्यक रूप से सम्मिलित थे, यद्यपि अपने द्वीप की पृथक् भौगोलिक स्थिति के कारण वे महाद्वीपीय शक्तियों की भाँति इतनी गम्भीरता से इसमें सम्मिलित नहीं हुए। किन्तु ब्रिटिश द्वीप-समूह के इतिहास पर इस अविरत यूरोपियन संघर्ष का गहरा प्रभाव पड़ा है, इस द्वीपसमूह द्वारा लड़ाई में भाग लेने पर अनेक उद्देश्यों ने प्रभाव डाला है। प्रायः यह उद्देश्य इंग्लैण्ड और फ्रांस की प्राचीन शत्रुता थी। कभी-कभी यह इंग्लैण्ड के समुद्र के पार दीखने वाले नीदरलैण्ड के

भाग्य के बारे में और उत्तरी सागर के व्यापार पर कुछ नियन्त्रण करने के सम्बन्ध में चिन्ता थी। कई बार यह महाद्वीप में लड़े जाने वाले उद्देश्यो के साथ सहानुभूति भी रहा है, जैसे सोलहवीं सत्रहवी शताब्दियों में प्रोटैस्टैन्ट धर्म का उद्देश्य; उन्नीसवी शताब्दी मे राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और लोकप्रिय सरकार के उद्देश्य। फ्रांस को विजय करने की पुरानी मध्ययुगीन महत्वाकांक्षा को एक बार छोड़ने के बाद इंग्लैण्ड ने (महाद्वीपीय शक्तियों के सदा प्रतिकूल) यह कभी नहीं चाहा कि वह यूरोप की मुख्य भूमि पर प्रादेशिक विजयें करे। किन्तु इस लम्बे संघर्ष की अतीव आरम्भिक दशा से, सदैव ब्रिटिश नीति का यह प्रधान उद्देश्य रहा है कि वह यूरोप में किसी एक राज्य को पूर्ण प्रभुत्व न प्राप्त करने दें, और कुछ अवसरों पर जब कि ऐसा प्रभुत्व खतरनाक प्रतीत होता था, उस समय यूरोपियन मामलों में ब्रिटिश द्वीपसमूह के लोगो के हस्तक्षेप सबसे अधिक शक्तिशाली और प्रभावशाली रहे है। इस अर्थ में और केवल इस अर्थ में, पहले इंग्लैण्ड और फिर संयुक्त ब्रिटेन, और फिर ब्रिटिश साम्राज्य, सदैव शक्ति के सन्तुलन के सिद्धान्त का समर्थन करते रहे हैं। जिस युग में अब हम प्रवेश कर रहे हैं, उसका महत्व यह है कि इस समय फ्रेंच प्रदेश की विजय के पुराने सपनों को निश्चित रूप से छोड़ दिया गया और इंग्लैण्ड ने शक्ति के सन्तुलन (Balance of Power) की विशिष्ट ब्रिटिश नीति के युग में प्रवेश किया।

अन्य परिवर्तनों के समान यह परिवर्तन शनैः-शनैः हुआ। हेनरी सप्तम ने फ्रांस के साथ एक निरुद्देश्य और अधूरे दिलवाला युद्ध किया (१४८८-१४९२)। यह युद्ध पुरानी मध्ययुगीन नीति का स्मरण कराता है। इसका उद्देश्य फ्रांस में अन्तिम बड़े सामन्ती राज्य ब्रिटेनी की स्वतन्त्रता को सुरक्षित करना था; किन्तु उसने ईटेपल्स की सन्धि द्वारा इच्छापूर्वक अपने को इस विषय में पैसे से बिक जाने दिया। इस प्रकार उसने यह प्रदर्शित किया कि वह अपनी फ्रेन्च महत्वाकांक्षाओं को गम्भीरता पूर्वक नही लेता था और इस युद्ध में उसका स्वयमेव स्पेन के साथ तथा सम्राट मैक्सिमिलियन के साथ मित्रता करने का तथ्य यह प्रदर्शित करता है कि युद्ध का उद्देश्य फ्रेंच प्रदेश प्राप्त करने के स्थान पर फ्रांस की शक्ति के भयावह विकास को रोकना था।

वस्तुतः प्रत्यक्ष रूप से फ्रांस यूरोप में सबसे बड़ी शक्ति था और उसकी एकता ब्रिटेनी की उत्तराधिकारिणी के चार्ल्स अष्टम के साथ विवाह से पूरी हुई थी। अब चार्ल्स ने विजयों की परम्परा आरम्भ की, नेपल्स के राज्य के लिए दावा किया तथा इस पर उसने आक्रमण किया और आश्चर्यजनक सुगमता के साथ १४९४ ई० में इसे जीत लिया। किन्तु उसकी सफलता के कारण उसके विरुद्ध पोप, वेनिस, मिलान, पवित्र रोमन सम्राट् तथा स्पेन का शक्तिशाली गुट बन गया और फ्रेंच लोगों को दक्षिणी इटली में अपनी विजयों से शीघ्र ही हाथ धोना पड़ा। दक्षिणी इटली दो शताब्दियों तक स्पेन के प्रभुत्व में रहा। हेनरी सप्तम फ्रांसविरोधी संघ में सम्मिलित हुआ, किन्तु उसने लड़ाई में कोई भाग नहीं लिया। एक बार पुनः इंग्लैण्ड और स्पेन फ्रांस के विरुद्ध एक हुए, और उनकी मैत्री स्पेन के राजा की लड़की-आरागोन की कैथेराइन तथा हेनरी सप्तम के सबसे बड़े बेटे आर्थर के विवाह की सन्धि से पुष्ट हुई। यह

सन्धि १४९७ में हुई, किन्तु विवाह १५०१ तक सम्पन्न नहीं हुआ। अगले दस वर्षों की विदेशी राजनीति में राजकीय विवाहों ने बड़ा भाग लिया और इस विवाह के भी महत्वपूर्ण परिणाम होने वाले थे। स्पेन के साथ मैत्री को इतना अधिक महत्व दिया जाता था कि जब १५०२ में आर्थर की मृत्यु हुई, तब उसके भाई हेनरी को युवा विधवा से विवाह करने की अनुमति देने के लिए पोप से एक आज्ञापत्र प्राप्त किया गया।

किन्तु नेपल्स पर फ्रेंच आक्रमण की पराजय ने इटली में फ्रेंच महत्वाकांक्षाओं को समाप्त नहीं किया। १४९९ में चार्ल्स अष्टम के उत्तराधिकारी लुई द्वादश ने आल्पस पर्वत माला पर से एक फ्रेंच सेना का नेतृत्व किया और मिलान की डची पर अधिकार कर लिया। वह उत्तराधिकार द्वारा इस पर दावा कर रहा था। कुछ वर्षों तक उसने अपने विजित प्रदेश पर अधिकार बनाये रखा और १५०९-१० में वह पोप, स्पेन तथा सम्राट् के साथ मिलकर वेनिस के गण राज्य पर किये गये एक अन्यायपूर्ण आक्रमण में सम्मिलित हुआ। फ्रेंच लोगों की बढ़ती हुई यह शक्ति भयावह थी और १५११ में पोप जूलियस द्वितीय ने वेनिस के साथ शान्ति सन्धि कर ली। वह इटली से फ्रेंच लोगों को भगाने के लिए एक महान पवित्र संघ बनाने के काम में लग गया। इस संघ में स्पेन और सम्राट् तथा प्रमुख इटालियन राज्य सम्मिलित हुए। अब इंग्लैण्ड में महत्वाकांक्षी हेनरी अष्टम राज्य कर रहा था। वह विश्व की घटनाओं में बड़ा भाग लेने को उत्कण्ठित था, अतः वह बड़े उत्साह के साथ पवित्र संघ में सम्मिलित हुआ और उसने उत्तरी तथा दक्षिणी फ्रांस में इंग्लिश सेनाएँ भेजने की तैयारी की। दक्षिणी मोर्चे के युद्ध में भीषण विफलता हुई (१५१२ ई०)। वूल्जे ने उत्तरी मोर्चे के युद्ध (१५१३ ई०) का उत्तम रीति से गठन किया और उसने इस प्रकार राजा की कृपा प्राप्त की। इस युद्ध में कुछ सफलता प्राप्त हुई, तथा हेनरी अष्टम फ्रांस को जीतने और उसका बँटवारा करने के सपने लेने लगा। किन्तु ज्योंही इटली में फ्रेंच लोगों की शक्ति भंग हुई, उसी समय फ्रांस विरोधी संघ शीघ्र ही टूट गया। हेनरी को इस बात का विश्वास हो गया कि उसके श्वशुर, स्पेन के राजा ने उसके साथ चालाकी की है। अत उसने १५१४ में फ्रांस के साथ एक लाभदायक शान्ति सन्धि और मैत्री कर ली, इसे लुई द्वादश के साथ हेनरी की बहिन मेरी के विवाह से पक्का किया गया। यद्यपि यह सन्धि बहुत थोड़े समय तक रही, फिर भी यह इंग्लैण्ड और फ्रांस के बीच में वास्तविक मैत्री का पहला उदाहरण था और यह कहा जा सकता है कि यह सन्धि फ्रांस की विजय के लिए इंग्लिश महत्वाकांक्षाओं के अन्तिम परित्याग को सूचित करती है।

२. चार्ल्स पंचम, फ्रांसिस प्रथम और सुल्तान सुलेमान

इसके बाद के वर्षों में यूरोपियन स्थिति बड़ी तेजी से बदलने लगी। १५१५ ई० में फ्रांसिस प्रथम फ्रेंच राजगद्दी पर बैठा। वह नौजवान, शानदार, महत्वाकांक्षी, कलाप्रेमी, ओछा, दिखावटी और सब प्रकार के धर्माधर्म के विचार से शून्य था। हेनरी अष्टम उसके प्रति प्रबल वैयक्तिक ईर्ष्या रखता था, इसने उसकी नीति को प्रभावित किया। फ्रांसिस ने राजगद्दी पर बैठते ही इटली पर हमला किया, मेरिगननो की शानदार लड़ाई के बाद उसने मिलान की डची को दुबारा जीता। इससे हेनरी को तीव्र उद्विग्नता हुई और उसने इसका

बदला देने के लिए फ्रांस पर हमले की बात सोची। किन्तु परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थी क्योंकि अगले वर्ष चालाक, पुरानी लोमड़ी कहलाने वाला स्पेन का राजा फर्डिनेण्ड मर गया और उसके बाद उसका पोता चार्ल्स राजगद्दी पर बैठा। वह पहले ही नीदरलैण्ड का स्वामी तथा अपने नाना सम्राट् मैक्सिमिलियन का उत्तराधिकारी था।

चार्ल्स सोलह वर्ष का गम्भीर और शर्मीला लड़का था, उसे बेवकूफ समझा जाता था। अपने चौंधिया देने वाले प्रतिस्पर्धियों— हेनरी और फ्रांसिस की तुलना में वह हीन प्रतीत होता था। मुसीबतों से भरे एक लम्बे राजकाल में, उसने यह प्रदर्शित किया था कि उसमें ऐसा धैर्य, साहस और कूटनीतिक कुशलता थी जो उसको इनमें से किसी से भी अधिक बड़ा बना रही थी। इन तीनों तरुण राजाओं के सम्बन्ध एक पीढ़ी तक यूरोपियन राजनीति का अधिकतम महत्वपूर्ण प्रश्न बने रहे। उनकी प्रतिस्पर्धा को शीघ्र ही एक विचित्र ढंग से प्रदर्शित करने का अवसर मिला। १५१८ ई० में सम्राट मैक्सिमिलियन की मृत्यु हो गयी। उसकी पारिवारिक जागीरें हैन्सबर्ग वंश के आस्ट्रियन प्रदेश निःसंदेह उसके पोते चार्ल्स को मिले। किन्तु उसका शाही पद जर्मन निर्वाचकों के वोट से ही उसे प्रदान किया जा सकता था। इस पद के लिए सबसे बड़े पार्थिव उच्चपदधारी चार्ल्स, फ्रांसिस और हेनरी उम्मीदवार बने। चार्ल्स निर्वाचित हुआ, यह लगभग अनिवार्य था।

अब सम्राट चार्ल्स पंचम यूरोप में किसी भी समय होने वाले सबसे अधिक असाधारण साम्राज्य का शासक बना[1]। बर्गण्डी के घराने का उत्तराधिकारी होने के नाते वह नीदरलैण्ड का और इसके धनी तथा समृद्ध नगरों का और फ्रांस की पूर्वी सीमा पर स्थित Franche Comte का स्वामी था। अपने स्पेनिश दादा-दादी का उत्तराधिकारी होने से वह स्पेन के संयुक्त राज्य पर, इटली के दक्षिणी भाग पर और नयी दुनिया के उस विशाल साम्राज्य पर शासन कर रहा था, जिसे स्पेन के लिए कोलम्बस ने खोजा था। यद्यपि इसने अभी तक सम्पत्ति की उस धारा को बहाना नहीं शुरू किया था, जिसने बाद में इसे इतना महत्वपूर्ण बना दिया था। हैब्सबर्ग वंश का उत्तराधिकारी होने से वह आस्ट्रिया का तथा दक्षिण पूर्वी जर्मनी के अन्य प्रदेशों का स्वामी था। पवित्र रोमन सम्राट् के रूप में उसे अन्य जर्मन राजाओं से आज्ञा पालन करवाने का सैद्धान्तिक अधिकार था। ऐसा प्रतीत होता था कि इन विशाल स्रोतों के साथ उसे शाही पदवी को अन्त में वास्तविक अर्थ प्रदान करने में समर्थ होना चाहिए और अपने आपको जर्मनी का और समूचे यूरोप तक का स्वामी बनाना चाहिए। उसके मार्ग में उस समय प्रतीत होने वाली बाधायें केवल फ्रांस और इंग्लैण्ड के राजवंश थे। उसके अपने प्रदेश लगभग फ्रांस से मिले हुए थे। इंग्लैण्ड नीदरलैण्ड के स्वामी के साथ परम्परागत मैत्री में बँधा हुआ था और इंग्लैण्ड की रानी सम्राट् की बुआ थी।

किन्तु चार्ल्स पंचम की शक्ति वास्तविक होने की अपेक्षा ऊपर से अधिक प्रतीत हो रही थी। उसके विस्तृत रूप से फैले हुए राज्यों की अपनी पृथक सरकारें थीं और ये एक

१. एटलस के पंचम संस्करण की प्लेट संख्या ८ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४१ देखिये।

दूसरे से ईर्ष्या रखती थीं। इनमें यातायात के सम्बन्ध स्थल पर फ्रांस द्वारा अवरुद्ध थे और समुद्रों में इंग्लिश लोगों पर निर्भर थे। राज्यकाल के आरम्भिक वर्षों में स्पेन बगावत के लिए लगभग तैयार था, समृद्ध फ्लेमिश नगर भी अधिक उच्छृंखल थे। जर्मन राजाओं को आज्ञा-पालन की आदत बिलकुल नहीं थी, किन्तु ये सब बातें किसी भी प्रकार से चार्ल्स की सबसे बुरी मुसीबतें नहीं थी। १५१७ ई० में धार्मिक सुधार आन्दोलन जर्मनी में शुरू हो गया और जब १५२१ ई० में चार्ल्स उस देश में शाही सत्ता को अधिक दृढ़ आधार पर स्थापित करने का प्रयत्न करने के लिए गया। उस समय सारे देश में पहले ही से हंगामा मचा हुआ था। वार्म्स की डायट (Diet of Worms) में जब युवा राजा उस देश के सब बड़े लोगों से मिला, उस समय उसका मुकाबला एक उपद्रवी भिक्षु मार्टिन लूथर से हुआ। यह इन सब उपद्रवों का मूल कारण था। चार्ल्स ने चर्च की सत्ता को पुनः स्थापित करने का अथवा धार्मिक विराम-सन्धि स्थापित करने का निष्फल परिश्रम किया। नये और पुराने धर्मों के संघर्ष ने उसके जर्मनी का स्वामी होने के सब अवसर नष्ट कर दिये और अन्ततोगत्वा (१५५२) यह उसके पतन का कारण बना।

अन्त में, इन्हीं वर्षों में सबसे अधिक प्रसिद्ध सुल्तान भव्य सुलेमान के शासन में तुर्क साम्राज्य पहले किसी भी समय की अपेक्षा अब अधिक खतरनाक हो रहा था।[1] १५२१ में सुलेमान ने डैन्यूब नदी के रक्षक दुर्ग-बैलग्रेड पर अधिकार कर लिया। १५२६ में, मोहकाज़ के भीषण रणक्षेत्र में उसने हंगरी के राज्य की सैनिक शक्ति नष्ट कर दी तथा इसके राजा का वध किया। इसके बाद ढाई सौ वर्ष तक हंगरी का दो तिहाई भाग तुर्क शासन में बना रहा। आस्ट्रियन प्रदेशों की राजधानी वियना पर तुर्कों का खतरा बढ़ रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि वे शायद समूचे यूरोप को जीत लेंगे। तुर्कों से प्रतिरक्षा का मुख्य भार चार्ल्स पर पड़ा। उसने अपना काम हल्का करने के लिए अपने आस्ट्रियन प्रदेश अपने भाई फर्डिनेण्ड को हस्तान्तरित कर दिये (१५२१)।

इन कठिनाइयों के कारण, चार्ल्स पंचम तथा फ्रांस की प्रतिस्पर्धा में दोनों देशों की शक्ति में उतना अधिक वैषम्य नहीं रहा जितना नक्शे से प्रतीत होता है। फ्रांसिस ने इन कठिनाइयों का लाभ उठाने में कोई संकोच नहीं किया। उसने जर्मनी के प्रोटेस्टेन्ट राजाओं के साथ षड्यन्त्र किया और इसी समय इटली में चार्ल्स की शक्ति से भय रखने वाले पोप के साथ भी उसने षड्यन्त्र किया। उसने ईसाई मत को बदनाम करते हुए तुर्कों के साथ भी खुली सन्धि की और ईसाई दासों से भरे हुए तुर्की के नीचे तथा चौड़े डैक वाले (Galleys) जहाजों का तूलोन के बन्दरगाह में स्वागत किया। चार्ल्स के समूचे राज्यकाल में उसकी सबसे बड़ी मुसीबत फ्रांस की सतत शत्रुता थी। यह असम्भव है कि हम यहाँ आपत्तिग्रस्त सम्राट के साथ सहानुभूति न रखें। किन्तु यह भी असम्भव है कि हम इस बात को न स्वीकार करें कि फ्रांस के विरोध ने यूरोप को उस सार्वभौम राजतन्त्र के भय से बचा लिया, जो चिरकाल तक

---

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ८ और २५ (बी) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४० (बी) तथा ४१ के नक्शे देखिए।

नहीं रह सकता था, किन्तु जिसने बहुत अधिक हानि पहुँचाई होती। इस विरोध ने धार्मिक सुधार के आन्दोलन को भी इस बात का समय दे दिया कि वह जर्मनी मे तथा अन्य देशों में अपनी जड़ अच्छी तरह जमा सके।

३. शक्ति का सन्तुलन

इंग्लैण्ड के प्राचीन शत्रु-फ्रांस में तथा सब दिशाओं से उसे खतरे में डालती हुई प्रतीत होने वालीं विशाल, किन्तु शिथिल रूप से संगठित शक्ति के मध्य में होने वाले इस तीव्र संघर्ष में इंग्लैण्ड का रुख क्या हो? यह वह मुख्य समस्या थी, जो १५१६ से १५२६ ई० तक हेनरी अष्टम को तथा वूल्ज़े को परेशान करती रही थी। संघर्ष करने वाले दोनों दल इंग्लैण्ड का सहयोग पाने के लिये उत्कण्ठित थे। किन्तु नीदरलैण्ड्स के शासक के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध से इंग्लिश व्यापार को होने वाले लाभ के कारण, फ्रांस के साथ शत्रुता की प्राचीन परम्परा से और स्पेन के साथ अभी हाल की मित्रता के कारण, चार्ल्स पंचम के साथ मैत्री करना अधिक स्वाभाविक प्रतीत होता था। विशेषतः आरम्भिक दिवसों में, चार्ल्स की शक्ति के पूर्ण रूप से प्रकट होने से पहले ऐसा ही प्रतीत होता था। १५३० ई० में फ्रेंच और इंग्लिश राजाओ की भेंट क्लाथ ऑफ गोल्ड के फील्ड में हुई। उस समय उन्होंने तथा उनके अनुचरवृन्द ने अपव्यय-पूर्ण भव्यता में एक दूसरे से आगे बढ़ने का प्रयत्न किया और इस भेंट से फ्रांसिस को यह विश्वास हो गया कि वह किसी भी अवस्था में इंग्लिश तटस्थता पर भरोसा रख सकता है। किन्तु हेनरी और वूल्ज़े पहले ही गुप्त रूप से दूसरे पक्ष में सम्मिलित होने के लिये सहमत हो चुके थे, उनकी इस नीति को चार्ल्स पंचम के इस वचन से सहायता मिली थी कि वह पोप के अगले चुनाव में वूल्ज़े की उम्मीदवारी का समर्थन करेगा।

जब १५२२ ई० में दोनों महाशक्तियों में लड़ाई छिड़ी, उस समय इंग्लिश सेना पुनः एक बार फ्रांस में उतरी और एक बार पुनः एक अनिवार्य परिणाम के रूप में स्काट लोगों ने अपने फ्रेंच मित्रों की सहायता करने के लिए इंग्लैण्ड पर एक अप्रभावशाली हमला किया। किन्तु इंग्लिश पक्ष की ओर से इस लड़ाई में उत्साह से भाग नहीं लिया गया, क्योंकि फ्रांस के एक विद्रोही प्रजाजन बोर्बोन के कांस्टेबल की सहायता से चार्ल्स पंचम ने ऐसी प्रबल सफलताएँ प्राप्त कीं कि इससे उसके मित्र डर गये। पेविया के युद्ध में (१५२५) उसने न केवल इटली में फ्रेंच सेना को नष्ट किया, किन्तु अन्तिम रूप से फ्रांस से मिलान की डची छीन ली। उसने फ्रांस के राजा तक को बन्दी बना लिया। इस विजय के बाद कुछ समय के लिए ऐसा प्रतीत होता था कि यूरोप चार्ल्स पंचम के पाँवों तले पड़ा हुआ है और सार्वभौम साम्राज्य का पुराना स्वप्न पुनरुज्जीवित होगा। इसे रोकने के लिए फ्रांस की स्वतन्त्रता को तथा यूरोप की शक्ति के सन्तुलन को सुरक्षित बनाये रखने के लिए वूल्ज़े ने तथा उसके स्वामी ने सहसा इंग्लिश नीति को पूर्ण रूप से उलट दिया और फ्रांस के साथ घनिष्ठ मैत्री कर ली, क्योंकि ऊपर नीचे जाने वाले झूले का एक ओर का तख्ता खेल में एक पक्ष की ओर उग्र रूप से नीचे झुक गया था, अतः उन्होंने अपना भार दूसरे पक्ष में डाल दिया। निःसन्देह उन्होंने फ्रांस के उस पुनरुज्जीवन में सहायता की जो शीघ्र ही सम्पन्न हुआ।

इस युग की इंग्लिश विदेश नीति के सम्बन्ध में यह बात उचित रीति से कही जा सकती है कि कुल मिला कर यह नीति लाभदायक होने की अपेक्षा प्रदर्शनात्मक अधिक थी। हेनरी अष्टम कितना ही प्रयत्न क्यों न करता वह कभी भी यूरोपियन मामलों में प्रमुख भाग लेने में समर्थ नहीं हो सकता था; वह अधिक से अधिक केवल एक पासंग या धडा मात्र था। प्राय: यह भी कहा जाता है कि वूल्ज़े मुख्य रूप से वैयक्तिक उद्देश्यों से प्रभावित हुआ, उसने पहले तो स्वयं पोप चुने जाने के लिए चार्ल्स पंचम की सहायता की, किन्तु १५२५ ई० में उसका साथ छोड़ दिया, क्योंकि उसके स्थान पर क्लीमेण्ट सप्तम पोप चुन लिया गया था। यह सम्भव है कि इसने उसकी नीति को प्रभावित किया हो, किन्तु इस युग का सबसे बड़ा तथ्य यह है कि वूल्ज़े के पथ प्रदर्शन में इंग्लैण्ड ने विदेश नीति के मध्ययुगीन विचारों को छोड़ दिया। अब इंग्लिश नीति फ्रांस की विजय जैसी सादी और कभी पूरी न हो सकने वाली महत्वाकांक्षाओं से शासित नहीं हो रही थी; किन्तु अब यह अधिकाधिक रूप में समूचे तौर पर यूरोप में स्थिति के विचार से शासित होने लगी थी। यह इस परिणाम पर पहुँची थी कि यदि किसी एक शक्ति को समूचे यूरोप पर शासन का आदेश देने की अनुमति दी जाये तो इंग्लैण्ड के हितों को हानि पहुँचेगी। शक्ति के सन्तुलन के सिद्धान्त का आविर्भाव हो चुका था और इसके आविर्भाव के साथ वैदेशिक सम्बन्धों का आधुनिक युग शुरू हो गया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Fisher's book, already referred to under Chapter I; **Creighton**, Wolsey (Twelve English Statesmen); **Johnson.** Europe in the Sixteenth Century; **Abbott**, Expansion of Europe; **Armstrong**, Charles V; **Pollard**, Wolsey and Henry VIII; **Brewer**, Reign of Henry VIII; **Mackie**, Early Tudors.

• •

४

बाह्य जगत् का उद्घाटन

१. पहले महान् अन्वेषण

जिस समय इतिहास की पुस्तकों के पन्नों को भरने वाले, यूरोपियन राज्यों के निष्फल और अव्यवस्थित युद्ध अपने भीषण मार्ग पर घिसटे चले जा रहे थे, उस समय ऐसी घटनाओं की एक अन्य शृंखला घटित हो रही थी, जिसका ब्रिटिश द्वीपसमूह के लोगों के भाग्यों पर असीम रूप से अधिक महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ने वाला था। उस समय नवीन प्रदेशों की खोज करने की क्रियाशीलता का सबसे अधिक असाधारण उद्रेक विश्व की दृष्टि को परिवर्तित कर रहा था। १४६० ई० से १५२३ ई० की अवधि के बीच में नयी दुनिया के दोनों महाद्वीप खोजे गये। अफ्रीका के समुद्र तट की रेखा का अन्वेषण हुआ। हिन्दमहासागर के और चीन के समुद्रों के जलों में पहली बार यूरोपियन जहाज चले। अन्ध महासागर (Atlantic Ocean) के और प्रशान्त महासागर के नक्शे बनाये गये और जहाज द्वारा गोल दुनिया की पूरी परिक्रमा की गयी। इस अवधि में होने वाला विश्व की दृष्टि का परिवर्तन पहले कभी नहीं हुआ था। यूरोपियन लोगों के उत्कट साहसिक कार्यों के लिए खुला हुआ क्षेत्र अब सौ गुना अधिक बढ़ गया। अब तक यूरोप तक सीमित पश्चिमी सभ्यता ने, विश्व के उस क्रमिक विकास को आरम्भ किया, जिसने पिछली चार शताब्दियों के इतिहास को परिपूर्ण किया है। यूरोपियन राष्ट्रों के संकीर्ण संघर्षों को हम अभी देख रहे थे, अब इनकी स्पर्धा का एक नया और कहीं अधिक लाभदायक क्षेत्र खुल गया। सबसे बढ़ कर यह बात थी कि सभ्य जगत् में सन्तुलन का केन्द्र परिवर्तित होने लगा; और अब तक ज्ञात जगत् के बाहरी किनारे पर अवस्थित ब्रिटिश द्वीपसमूह शीघ्र ही अपने को विश्व के व्यापार और साहसिक कार्यों की महान धाराओं के केन्द्र में पाने वाला था। स्पष्ट रूप से यह

अत्यधिक महत्वपूर्ण बात है कि हमें उस महान आन्दोलन के स्वरूप को समझ लेना चाहिए, जिसका ब्रिटिश द्वीपसमूह के लोगों के इतिहास पर इतना गहरा प्रभाव पड़ने वाला था।

यद्यपि मध्यकालीन यूरोप ने सदैव पूर्व से तथा भारत से आने वाली ... का उपयोग किया था, तथापि यह उन देशों के सम्बन्ध में क्रियात्मक रूप से कुछ भी नही जानता था, जिन स्थानों से यह विलास सामग्री आती थी। किन्तु यह इस बात से सन्तुष्ट था कि ये वस्तुएँ वह भूमध्य सागर के अथवा कृष्ण सागर के समुद्र तटों पर इन्हें वहाँ लाने वाले पूर्वी देशों के काफिलों से प्राप्त किया करे। कार्पिनी, रूबक्विस और महान् मार्कोपोलो[1] जैसे कुछ साहसी यात्री मंगोलिया, कैथे (Cathay) तथा भारत के गर्व देशों से आश्चर्यजनक कहानियाँ अपने साथ लाये थे। भारत को प्रत्येक व्यक्ति मणियो का और मसालो का देश समझता था; किन्तु पुरानी दुनियाँ की आकृति के सम्बन्ध में विद्वान् लोगों के भी वास्तविक अज्ञान को उस युग के किसी नक्शे पर एक दृष्टिपात द्वारा झटपट देखा जा सकता है।[2]

पन्द्रहवी शताब्दी में अनेक प्रकार की परिस्थितियों ने मिलकर अन्वेषण के लिए इस आकस्मिक उत्साह को उत्पन्न किया। समुद्रगामी मल्लाह के दिग्दर्शक-यन्त्र की खोज ने अज्ञात तथा अपरिचित तारों के नीचे भी दूरवर्ती समुद्रों की यात्राओं को सम्भव बना दिया। पुनर्जागृति की उत्कण्ठापूर्ण और खोज करने वाली भावना को भौगोलिक अन्वेषण में स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्राप्त हुई। यूनान के उत्कृष्ट ग्रन्थों के अध्ययनों के पुनरुज्जीवन ने मनुष्यों को यह स्मरण कराया कि अरस्तू ने यह कहा था कि पृथ्वी गोल है और यह बात कोपर्निकस की ज्योतिषविषयक खोजों से पुष्ट हुई थी, अतः मानचित्रनिर्माता पृथ्वी के स्थल-समूहों की आकृति के विचारों के सम्बन्ध में भूमण्डल के गोल होने के सिद्धान्त को लागू करने लगे। हिरोडोटस की पुस्तकों के अध्ययन ने यह तथ्य प्रकट किया कि पुराने फिनीशियन लोगों ने रक्तसागर से आरम्भ करके और जिब्राल्टर जलडमरुमध्य से लौट कर अफ्रीका का जहाज से पूरा चक्कर काटा था। यूरोप की बढ़ती हुई समृद्धि की माँग यह थी कि उसे पूर्वी देशों से आने वाली विलास-वस्तुओं की पूर्ति पहले की अपेक्षा अधिक प्रचुरता से हो; और इसी बीच में विजयों से उत्पन्न विक्षोभों ने पहले ही काफिलों द्वारा आने वाली वस्तुओं के अपर्याप्त परिणाम में बाधा डाली, यद्यपि इन विजयों ने इस व्यापार को बन्द नहीं किया।

अन्त में, मूरों से अपने देश को पूर्ण रूप से मुक्त कराने के बाद पुर्तगालियों को यह प्रलोभन हुआ कि वे इन सांसारिक शत्रुओं का पीछा उत्तरी अफ्रीका तक करें। यह इसलिए भी अधिक अच्छा था, क्योंकि स्पेन की शक्ति के कारण स्वदेश में उनके विस्तार के लिए कोई स्थान नहीं था। आरम्भ में, इस साहसिक कार्य के उद्देश्य मुख्य रूप से धार्मिक थे, और वे कुछ दन्त कथाओं से सुदृढ़ हुए। यह विश्वास किया जाता था कि पूर्वी अफ्रीका में किसी स्थान पर सुप्रसिद्ध प्रेस्टर जान नामक ईसाई सम्राट का अब भी शासन था और पुर्तगालियो ने यह

१. दूसरी पुस्तक का प्रथम अध्याय देखिये।

२. एटलस के पंचम संस्करण की प्लेट संख्या ४६ और (डी) तथा छठे संस्करण की ४२ (सी) और (डी) में दिये गये मध्यकालीन नक्शे देखिये।

कल्पना की कि वे किसी प्रकार उसके साथ मिलकर मुस्लिम जगत् पर पार्श्व की ओर से हमला करके ईसाइयत के लिए महान विजय प्राप्त करेंगे। ये उन्मत्त और अव्यावहारिक सपने थे। किन्तु उस समय सारा जगत् साहसी व्यक्तियों के लिए खुला हुआ प्रतीत होता था और उस युग के मनुष्यों के लिए कोई भी सपना अत्यधिक उन्मत्ततापूर्ण नही था और कोई भी साहसिक कार्य ऐसा नहीं था, जिसके लिए प्रयास न किया जाय।

पन्द्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में, अपने राजघराने के एक राजकुमार नौचालक (Navigator) हेनरी से अनुप्राणित हो कर पुर्तगालियों ने ऐसे जहाज बनाना सीखा, जो खुले समुद्रों के कठोर उपयोग को सहन कर सकें। उन्होने शनैः शनैः पश्चिमी अफ्रीका के समुद्र तट के साथ-साथ दक्षिण की ओर बढ़ना शुरू किया।[1] सहारा मरुस्थल के बियाबान समुद्र तटों ने उन्हें चिरकाल तक रोके रखा, किन्तु १४६० में राजा हेनरी की मृत्यु से पहले वे केपवडे का चक्कर काट चुके थे और इसके बाद शीघ्र ही वे सियर्रा लियोन पहुँच चुके थे जहाँ समुद्रतट आशाजनकरीति से पूर्व की ओर मुड़ने लगा था। यहाँ उन्हें स्वर्णधूलि और नीग्रोदास प्राप्त होने लगे और अन्वेषण के भौतिक पुरस्कार मिलने लगे। किन्तु इसके बाद समुद्र तट दक्षिण की ओर अनन्त रूप से लम्बा होने लगा और लगभग एक पीढ़ी बीतने से पहले ही १४८७ ई० में बार्थोलोम्यू डियाज ने अन्त में एक ऐसा स्थान प्राप्त किया, जिस पर तट का झुकाव निश्चित रूप से पूर्व की ओर हो गया था। उसने इसे तूफानों का अन्तरीप कहा था; किन्तु जब वह लौटा, तब उसके स्वामी राजा जान द्वितीय ने यह अनुभव किया कि अब भारत की ओर जाने वाला रास्ता खुल गया है, उसने इसको उत्तम आशा अन्तरीप (Cape of Good Hope) का दूसरा नाम दिया और इस बढ़िया अवसर का लाभ उठाने के लिए बड़ी तैयारियाँ आरम्भ कर दी।

नये रास्ते का वास्तविक प्रयोग करने से पहले दस वर्ष बीत गये। इसी मध्यान्तर में, एक इससे भी बड़ा साहसिक कार्य आरम्भ हो गया। पुर्तगालियों की सेवा करने वाले जिनोआ के नाविक क्रिस्टोफर कोलम्बस को यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि पुर्तगालियों के धीमे और परिश्रमपूर्ण मार्ग का अनुसरण करने की अपेक्षा अन्ध महासागर में ठीक पश्चिम की ओर समुद्र-यात्रा करने से भारत अधिक शीघ्रता से पहुँचा जा सकता है। पुर्तगाली सफलताओं से कुछ अधिक ईर्ष्या रखने वाली कैस्टाइल की रानी इजाबेला ने उसके सिद्धान्त की परीक्षा के लिए तीन छोटे जहाजों को खतरे में डालना अच्छा समझा। केवल दो महीने तक व्यापारिक पवनों की सहायता से समुद्री यात्रा करते हुए, कोलम्बस ने १२ अक्टूबर १४९२ ई० को बहामा-द्वीप समूह के एक टापू पर भूमि का स्पर्श किया। बिना जाने ही उसने एक नई दुनिया पा ली। यद्यपि उसने दो अन्य समुद्र यात्राएँ की, और तीसरी यात्रा में वह दक्षिणी अमेरिका की मुख्य भूमि पर और शक्तिशाली नदी ओरीनोको के मुहाने पर पहुँचा, तथापि उसने यह कभी नहीं जाना कि उसने क्या किया था। वह इसी विश्वास के साथ मरा कि वह जिस भूमि पर पहुँचा है,

१. इस अध्याय में संक्षिप्त रूप से बताये गये अन्वेषणों के मार्ग एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४७ में तथा ६ठे संस्करण की प्लेट संख्या ४३ देखिये।

वह एशिया का भाग है। उसने स्पेन के लिए एक नये साम्राज्य की नींव रखी। आरम्भ में यह हिस्पेनियोला (हेटी) के द्वीप तक सीमित था। यद्यपि इस टापू के तथा वैस्ट इण्डीज के अन्य टापुओं के मृदु मूल निवासियों को समुद्र पार से आये अपने रहस्यमय स्वामियों के लिए बाधित रूप से श्रम करना पड़ता था, तथापि चिरकाल तक उन्होंने बहुत कम सम्पत्ति उत्पन्न की। ऐसी कोई चीज़ नहीं पैदा की, जिसकी तुलना पुर्तगालियों के पूर्वी व्यापार के भारी मुनाफे के साथ की जाय। पोप ने १४९३ ई० के एक निर्णय द्वारा नवीन खोजे गये प्रदेशों को अन्ध-महासागर में उत्तर से दक्षिण की ओर खींची जाने वाली एक काल्पनिक रेखा द्वारा स्पेन और पुर्तगाल में बाँट दिया, किन्तु अभी तक और अगली एक पीढ़ी तक पुर्तगालियों का हिस्सा बहुत अधिक मूल्यवान् प्रतीत होता था।

२. पूर्व में पुर्तगाली शक्ति

पुर्तगाली जनता ने अपने समूचे साधन और शक्ति इस महान साहसिक कार्य में लगा दी। यह कार्य उस समय शुरू हुआ, जब १३ महीने की समुद्र यात्रा के बाद वह महान् नाविक वास्कोडिगामा अगस्त १४९८ ई० में भारत के समुद्र तट पर कालीकट बन्दरगाह पर उतरा। यह साहसिक कार्य कोलम्बस की दो महीने की समुद्र यात्रा से बहुत अधिक कठिन और खतरनाक था और तत्काल ही इसके अधिक बड़े भास्वर परिणाम उत्पन्न हुए। भारत के समुद्र तट पर पुर्तगालियों ने अनेक छोटे राजाओं को पाया। इन राजाओं पर सुगमता से आधिपत्य स्थापित कर लिया गया। पुर्तगालियों के लिए अरब व्यापारियों के सिवाय कोई व्यापारिक प्रतिस्पर्धी नहीं थे। ये अरब व्यापारी अब तक भारत की वस्तुएँ ईरान की खाड़ी तथा रक्त सागर के बन्दरगाहों तक ले जाया करते थे। पुर्तगालियों ने शीघ्र ही प्रमुख भारतीय बन्दरगाहों का नियन्त्रण किया। ये यहाँ अपने राजा के नाम पर भारत के माल को खरीदते थे और इसे जहाजों पर लाद कर लिस्बन भेज देते थे। यहाँ अब पूर्व के बढ़िया कपड़े, मणियाँ और मसाले पहले की अपेक्षा अधिक प्रचुर मात्रा में मिल सकते थे। लिस्बन संसार की व्यापारिक राजधानी बन गया, उसने वेनिस का स्थान ले लिया, और सब राष्ट्रों के जहाज इसके व्यस्त और समृद्ध घाटों पर आने लगे।

सोलहवीं शताब्दी के पहले बीस वर्षों में जब यूरोप के राजा इटली के लिए खून और पैसे की बरबादी कर रहे थे, उस समय पुर्तगाली पूर्व में एक असाधारण व्यापारिक साम्राज्य का संगठन कर रहे थे। इनकी शक्ति का वास्तविक संगठनकर्ता अफ्फोन्सो डी अलबूकर्क था। यह १५०९ से १५१५ तक पुर्तगाली भारत का गवर्नर या राज्यपाल था। उसने भारत के पश्चिमी तट पर गोआ के बहुमूल्य द्वीप को जीत लिया। यह बहुत अच्छी तरह से रक्षा की जाने वाली स्थिति में बड़ा उत्तम बन्दरगाह था। इसे उसने पुर्तगाली साम्राज्य की राजधानी में परिणत किया। केवल यहीं पुर्तगाली प्रवासियों की बड़ी संख्या बसी। उन्होंने मूल देश-वासियों पर अपने धर्म को जबरदस्ती लादा और अन्तर्विवाह से संकर वर्ण वाली काफी बड़ी आबादी को उत्पन्न किया। पुर्तगालियों की दूसरी कोठियाँ अथवा व्यापारिक बस्तियाँ भारत और श्रीलंका के समुद्र तटों पर अनेक स्थानों में थीं। अफ्रीका के पूर्वी तट के साथ-साथ कुछ-

कुछ दूरियों पर रक्षक सेनाओं से युक्त बन्दरगाह और अड्डे थे तथा रक्तसागर और ईरान की खाड़ी के मुहाने पर प्रबल चौकियाँ थीं। अधिक पूर्व में, मलक्का में एक बस्ती मलाया द्वीप-समूह के मार्ग का नियन्त्रण करती थी। यहाँ संसार में सबसे अधिक लाभप्रद व्यापार का केन्द्र, मसाले के धनी द्वीप पुर्तगाल के नियन्त्रण में चले गये। पूर्व में, पुर्तगालियों ने चीन के साथ व्यापार आरम्भ किया। यहाँ उन्होंने मकाओ के टापू में एक किलेबन्द अड्डा प्राप्त किया। वे जापान के साम्राज्य के साथ भी व्यापार करते थे। पूर्व का और यूरोप का समूचा व्यापार उनके हाथों में था और यह लिस्बन में सम्पत्ति की अविश्वसनीय धारा को लाया।

पूर्व में पुर्तगाल साम्राज्य, किसी भी समय में व्यापारिक एकाधिकार से अधिक नहीं था। यह पूर्ण रूप से नौसैनिक शक्ति को बनाये रखने पर निर्भर था। गोआ के अतिरिक्त कहीं भी बस्तियाँ नहीं थीं और कोई बड़ी प्रादेशिक विजयें नहीं की गयी। इसके अतिरिक्त, आरम्भ से ही यह विशाल व्यापार राजा के एकाधिकार में था। यह व्यापार देश में सम्पत्ति को लाया, किन्तु इसने पुर्तगालियों में साहसिक कार्यों का और उपक्रम का विकास करने में कोई भाग नहीं लिया। एक राष्ट्र के लिए यह आश्चर्यजनक साहसिक कार्य था। किन्तु इसने राष्ट्र की शक्ति को पूरी तरह निचोड़ लिया और ह्रास की प्रक्रिया बहुत जल्दी शुरू हो गयी।

पश्चिम में, एक सुखद घटना से पुर्तगालियों ने इसी समय में एक बहुमूल्य प्रदेश का स्वामित्व प्राप्त किया। १५०० ई० में भारत की समुद्र यात्रा से स्वदेश लौटते समय उनका एक कप्तान कैब्राल रास्ता भटक गया और ब्राजील के समुद्र तट पर जा लगा। यहाँ कुछ समय बाद एक वास्तविक बस्ती स्थापित की गयी। ब्राजील के समुद्र तट की रेखा को कुछ छोटे राज्यों में बाँटा गया, ये राज्य पुर्तगाल के बड़े कुलीन सरदारों को दिये गये, उन्हें स्थानीय जनता पर पूर्ण अधिकार दिया गया। यहाँ के निवासी जनता शनैः शनैः कम होने लगी। वे पुर्तगाली प्रवासियों को बड़ी संख्या में यहाँ लाये, किन्तु स्वामी जाति (Master-race) के सदस्य उष्ण कटिबन्ध की गर्मी में भारी परिश्रम नहीं करना चाहते थे, अतः पुर्तगालियों ने पश्चिमी अफ्रीका के अपने व्यापारिक अड्डों से नीग्रो लोगों को जहाजों में भर कर ब्राजील के बागान में लाना शुरू किया। अमेरिका में यह नीग्रो लोगों की दास प्रथा की शुरुआत थी।

३. अमेरिका में स्पेनिश साम्राज्य

इसी बीच में पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह (वैस्ट इण्डीज) में स्पेनिश साम्राज्य की मामूली सी शुरुआत का आश्चर्यजनक विस्तार हुआ। सभी बड़े टापुओं को खोजा गया और इन पर अधिकार किया गया। मैक्सिको की खाड़ी के समुद्र तटों को नक्शों पर अंकित किया गया। दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी तट पर स्पेनिश मेन (Spanish Main) अथवा कैरिबियन समुद्र के निकट के अमेरिकन प्रदेश की सुदृढ़ भूमि (Terra Firma) पर टिकने की एक जगह प्राप्त की गयी। वास्को नूनेज डी बल्बोआ ने पानामा के स्थलडमरूमध्य को पार किया और उस विशाल समुद्र की खोज की, जो नयी दुनिया को एशिया से पृथक् करता था (१५१३)। सब अन्वेषकों में सबसे अधिक निर्भीक तथा स्पेन की सेवा करने वाले एक पुर्तगाली मैगेलेन ने एशिया के

लिए मार्ग ढूँढते हुए दक्षिण अमेरिका के समूचे समुद्र तट के साथ-साथ नीचे तक यात्रा की। उसने उस वक्र और भयानक जलडमरुमध्य को खोजा, जो अब तक उसके नाम से सुप्रसिद्ध है (१५२०)। बिना किसी नक्शे या चार्ट के, पश्चिम में निरन्तर आगे बढ़ते हुए उसने महान् प्रशान्त सागर को पार किया और वह फिलिपाइन द्वीपसमूह में तथा मलाया द्वीपसमूह में पहुँचा। और उसके बचे हुए साहसी साथी, अपने कप्तान की मृत्यु के बाद अन्वेषण के समूचे इतिहास में सबसे अधिक साहसपूर्ण समुद्रयात्रा करने के बाद उत्तमाशा अन्तरीप (Cape of Good-Hope) का चक्कर काट कर सुपरिचित पुर्तगाली मार्ग से स्वदेश पहुँचे। इस बात का उल्लेख मिलता है कि जब चीथड़े पहने ये मुट्ठी भर लोग स्पेन के एक बन्दरगाह में पहुँचे तो उनका पहला कार्य यह था कि वे प्रायश्चित करने के लिए नंगे पांव चर्च में गये, क्योंकि संसार की परिक्रमा करते हुए उनका एक दिन कम हो गया था और उन्होंने चर्च के सब व्रत और उपवास गलत दिनों में किये थे। किन्तु इन आश्चर्यजनक समुद्र यात्राओं का मुख्य परिणाम यह हुआ कि भूमण्डल की सतह पर जल-स्थल के बँटवारे की मुख्य बातें पता लग गयी और स्पेनवासियों ने यह समझ लिया कि नयी दुनिया उनकी पकड़ में आ गयी है।[1]

पहले तो इस बात से बड़ी निराशा हुई, क्योंकि स्पेनवासियों को आशा थी कि वे दन्तकथाओं में प्रसिद्ध पूर्वी देशों के ऐश्वर्य का उपभोग करेंगे, किन्तु कैरिबियन समुद्र के नगे मूल निवासियों से बहुत कम सम्पत्ति प्राप्त की जा सकती थी। इनमें से कुछ तो इतने डरपोक और मृदु थे कि वे बेगार के दबाव में आकर मर गये। कुछ अन्य मूल निवासी भयकर और अप्रशिक्षणीय थे, अत: जल्दी ही यह आवश्यक हो गया कि पुर्तगालियों की योजना के अनुसार उनका स्थान लेने के लिए अफ्रीका से नीग्रो लोग लाये जाँय। यद्यपि नयी दुनिया की प्रथम प्राप्तियों से बहुत कम धन मिला और सोने की दृष्टि से इनमें बड़ी निराशा उठानी पड़ी, तथापि इन्होंने कम से कम ऐसे साहसिक कार्यो का क्षेत्र प्रस्तुत किया जो कार्य उग्र एवं साहसी स्पेनिश भद्रजनों के हृदयों को प्रफुल्लित कर रहे थे। कानक्विस्टेडोर (Conquistadores) के नाम से प्रसिद्ध दक्षिण अमेरिका के स्पेनी विजेता तथा रोमाञ्चक साहसी वीरों के कार-नामों की कहानी विश्वास और कल्पना को मात देने वाली है। वे अविश्वासनीय रूप से साहसी पाशविक और लालची थे और वे सदैव धर्म के दावों से अपनी निकृष्टतम नृशंसताओं को न्यायोचित ठहराया करते थे। वे काफिरों के विरुद्ध ईसाई धर्म की लडाई लड़ रहे थे। यह बात उनकी वीरता की ख्याति को बढ़ाने वाली है कि उन्हें यह विश्वास था कि उनके चारों ओर की हवा भूत-प्रेतों से भरी हुई है और वे उनके विरुद्ध ऐसे दुर्गम जंगलों में, अज्ञात समुद्रों में और जंगली पहाड़ों में युद्ध करते रहे, जिनमें से होकर उन्हें जबर्दस्ती रास्ता बनाना पड़ता था।

शीघ्र ही इन उग्र साहसी वीरों का साहस अक्षय सम्पत्ति के प्रदेशों की खोज से पुरस्कृत हुआ। हरनान्डो कोर्टेज और उसके मुट्ठी भर साथियों ने मैक्सिको के पठार में साहस

---

१. १४९२ ई० के बीहेम के तथा १५२३ ई० के शोनर के दो नक्शों की तुलना कीजिए। ये नक्शे एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४७ (बी तथा सी) में तथा ६ठें संस्करण की प्लेट संख्या ४३ (बी तथा सी) में दिखाये गये हैं।

पूर्वक आगे बढ़ते हुए एजेटिक नामक सभ्य जनता को पाया। इनके पास मूल्यवान् धातुएँ इतनी प्रचुर मात्रा में थी कि वे जीवन के सामान्य उपकरणों के लिये भी प्रयोग में लायी जाती थी। दो वर्ष में (१५१९-२१) इस छोटे से दल ने समूचे साम्राज्य को जीत लिया। रक्तपात द्वारा इसके क्रूर धर्म को नष्ट कर दिया इसकी जनता को दास बनाया तथा पोटोसी की खानों पर अधिकार कर लिया गया। इसके बाद इन खानों से सोने चाँदी की एक धारा प्रतिवर्ष अन्ध महासागर के आरपार बहती हुई स्पेन में जाने लगी। शीघ्र ही इससे भी अधिक समृद्ध पेरु राज्य के वासी इन्का (Incas) लोगों का साम्राज्य १५२५ ई० के बाद के दस वर्षों में, घृणित एवं रक्त-पिपासु अत्याचारी पिजारों के द्वारा खोजा और जीता गया। एक दूसरे तथा अधिक समृद्ध पोटोसी से धन की एक दूसरी धारा प्रशान्त महासागर के बन्दरगाहों मे से होती हुई पानामा के स्थल डमरूमध्य की ओर बहने लगी और यहाँ से यह जहाजों में लाद कर प्रतिवर्ष खजाना ले जाने वाले समुद्री बेड़े में नोम्ब्रे डी डिओस से कैडिज के बन्दरगाह की ओर ले जायी जाने लगी।

नई दुनिया में स्पेनिश साम्राज्य की मुख्य शक्ति अपनी खानों के साथ मेक्सिको तथा पेरू के प्रदेश[1] थे। यहाँ स्पेनिश सिपाहियों के अजटक तथा पेरुवियन स्त्रियों के साथ विवाह से एक मिश्रित आबादी उत्पन्न होने लगी। किन्तु स्पेनिश लोगों का साहस और भी आगे बढ़ा। ओरेल्लाना ने पेरु की एण्डीज पर्वतमाला के उपरले हिस्से में शक्तिशाली अमेजन नदी का मूल स्रोत ढूँढा। उसने लगभग दो हजार मील तक किश्तियों में नीचे की ओर इस नदी की ऐसी यात्रा की कि वह अन्ध महासागर तक पहुँच गया। अधिक दक्षिण मे स्पेनिश लोगों ने लाप्लाटा नदी के उपजाऊ मैदानों को और चिली के चट्टानी समुद्र तटों को खोजा। अधिक उत्तर में हरनान्डो डी सोटो ने फ्लोरिडा के जंगलों में आश्चर्यजनक यात्रा की और पश्चिम दिशा में वह एक के बाद दूसरी नदी पर से होता हुआ अन्त मे मिसीसिपी की विशाल नदी पर पहुँच गया।

किन्तु स्पेनिश साम्राज्य का पूर्ण विस्तार उस युग में अभी तक नही हुआ था, जिस युग का हम यहाँ वर्णन कर रहे हैं। मेक्सिको और पेरु की आश्चर्यजनक सम्पत्ति का उद्घाटन अभी आरम्भ ही हुआ था और १५४२ ई० से ही सम्राट् चार्ल्स पचम ने इस विशाल प्रदेश का संगठन अपने हाथ में लिया। उसने इसका निर्माण करने वाले व्यक्तियों के लालच, क्रूरता और विध्वंसकारी झगडों को नियन्त्रण में लाने का प्रयत्न किया। सोलहवी शताब्दी का पूर्वार्ध कानक्विस्टेडोरस् अर्थात दक्षिणी अमेरिका के स्पेनी विजेताओं का युग है। इसका उत्तरार्ध संगठन कर्ताओं का युग है। यहाँ हमारा यह विषय नहीं है कि हम विस्तार से यह बतायें कि भीमकाय स्पेनिश साम्राज्य किस प्रकार संगठित और शासित किया गया था। किन्तु एक प्रधान तथ्य अवश्यमेव उल्लेखनीय है। अमेरिका में बसने वालों को अपने मामलों के नियन्त्रण

१. स्पेनिश दक्षिणी अमेरिका के मानचित्र के लिये देखिये एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट सख्या ५८ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४८ और मध्य अमेरिका तथा पश्चिमी द्वीप समूह (West Indies) के नक्शे के लिये देखिये पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५३ तथा छठे संस्करण की संख्या ५०।

करने का कोई हिस्सा नहीं दिया गया; यहाँ तक कि स्पेन से; भेजे जाने वाले राज्यपालों को भी कार्य करने की बहुत कम स्वतन्त्रता थी। प्रत्येक वस्तु मेड्रिड में बैठी हुई इण्डीज की परिषद के कठोर नियन्त्रण में थी और इसकी नीति नयी दुनिया के सब साधनों पर राजा के पूर्ण प्रभुत्व को सुरक्षित बनाये रखना था। न केवल अन्य राष्ट्रों का इसमें कोई हिस्सा न था और न केवल अन्य जातियों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों की कोई अनुमति नहीं दी जाती थी, अपितु स्पेनिश लोगों को भी राजकीय आज्ञापत्र के और कठोर राजकीय नियन्त्रण के सिवाय इन विशाल साधनों के दोहन की अनुमति नहीं दी जाती थी। इन प्रतिबन्धों का परिणाम यह था कि स्पेनिश लोगों ने पहले जो विलक्षण साहस प्रदर्शित किया था, वह तेजी से समाप्त हो गया और विश्व के कुछ सबसे अधिक समृद्ध प्रदेशों को सम्मिलित करने वाला विशाल साम्राज्य बड़ी तेजी के साथ जड़ता की अवस्था में पड़ गया। वह केवल ऐसे प्रदेश से अधिक कुछ भी नहीं रहा, जिसमें स्पेन के राजा की खानें उसके द्वारा लड़े जाने वाले यूरोपियन युद्धों का व्यय पूरा करने के लिये सोना चाँदी पैदा करती थी।

४ इंग्लैण्ड और फ्रांस के मामूली साहसी कार्य

यह आशा नहीं की जा सकती थी कि अन्य पश्चिमी जातियाँ बाह्य जगत् के निर्विवाद एकाधिकार के उपयोग की अनुमति पुर्तगालियों तथा स्पेनिश लोगों को स्थायी रूप से प्रदान करेंगे। किन्तु वे जातियाँ कोई कार्यवाही करने में बहुत मन्द थी। नि.सन्देह, कोलम्बस ने अपने भाई बार्थोलोम्यू को इंग्लैण्ड भेजा था कि वह उसके महान विचार के लिये हेनरी सप्तम से सहायता मांगे। इंग्लिश राजा भी इसके प्रतिकूल नही था। किन्तु इसी बीच में कैस्टाइल की इजाबेला ने यह योजना अपने हाथ में ले ली। कुछ समय बाद हेनरी सप्तम ने जिनोआ के एक नाविक जॉन कैबोट को अपना संरक्षण और कुछ आर्थिक सहायता प्रदान की। कैबोट ने अपने तीन पुत्रों के साथ ब्रिस्टल से दो समुद्र यात्राएँ कीं और उसने लैब्रेडोर से वर्जीनिया तक के उत्तरी अमेरिका के समुद्रतट की खोज की। वह वस्तुत: नयी दुनिया के महाद्वीप को स्पर्श करने वाला पहला अन्वेषक था। किन्तु इस उज्ज्वल आशावाले आरम्भ का अनुसरण नही किया गया। सच तो यह है कि इंग्लैण्ड के समुद्री साधन इस समय ऐसे महान साहसिक कार्यों को करने के लिये बहुत कम और अपूर्ण रीति से विकसित हुए थे। फ्रांस ने भी इसमें कोई बड़ा हिस्सा नही लिया। १५२३ ई० में फ्रांसिस प्रथम ने एक अन्य इटालियन मल्लाह वेराज्जानो को कुछ जहाज उधार दिये। इसने उत्तरी अमेरिका के समुद्र तट का अन्वेषण किया। १५३४ ई० में एक फ्रेंच व्यक्ति कार्टियर सैन्ट लारेन्स नदी के मुहाने में पहुँच गया और उसने वहाँ पाये गये देश को कनाडा का नाम दिया। उसने अपने से पहले कैबोट की भाँति यह सोचा कि सैन्ट लारेन्स की खाड़ी उत्तर पश्चिमी मार्ग का वैसा ही द्वार हो सकता है, जैसा वह समुद्र तट था, जिसे मैगेलेन ने कुछ वर्ष पहले खोजा था। ऐसे उत्तर पश्चिमी मार्ग की कल्पना आगे चिर-काल तक मनुष्यों के मनों में मंडराती रही, जिस मार्ग से उत्तरी देशों के लोग स्पेनिश और पुर्तगालियों के साथ संघर्ष में आये बिना अपने ही एक रास्ते से पूर्व में पहुँच सके। किन्तु इन शुरुआतों के वाद इनका अनुसरण करने के लिये, इसके सिवाय कुछ नहीं किया गया कि कुछ

इंग्लिश और फ्रेंच मछियारे कई बार न्यूफाउण्डलैण्ड के तटों की काड मछली वाली मछलीगाहो (Cod fisheries) तक पहुँच जाते थे। वस्तुतः दुनियाँ उस समय इस बात से सन्तुष्ट थी कि पहले अन्वेषकों के द्वारा खोजे गये प्रदेश उन्ही के पास रहने चाहिये। यह इसलिये भी ठीक था, क्योंकि अभी तक सार्वभौम रूप से सम्मानित किये जाने वाले पोप के निर्णय ने भी इसका समर्थन किया था। धर्मसुधार आन्दोलन (Reformation) के बाद ही मनुष्य स्पेनिश साम्राज्य को प्रत्यक्ष चुनौती देने की कल्पना करने लगे।

ब्रिटिश लोगों का विस्तार अभी तक शुरू नहीं हुआ था; किन्तु महान अन्वेषणों द्वारा विश्व की दृष्टि में आये परिवर्तन ने इसे सम्भव बना दिया। यद्यपि अन्वेषण के कार्य में ब्रिटिश द्वीपवासियों ने बहुत कम भाग लिया, तथापि यह उनके इतिहास का आवश्यक अध्याय है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

There is an excellent lecture by Lord Acton on the subject of this chapter in his Lectures on Modern History; **E. J. Payne**, European Colonies; **Abbott**, Expansion of Europe, Vol. 1; **Beazley,** Dawn of Modern Geography; **Markham**, Columbus; **Guillemard** Magellan; **Stephens,** Albuquerque; **Danvers**, Portuguese in India; **Beazley**, J. and S. Cabot; **Prescott**, Conquest of Mexico and Conquest of Peru; **Bourne**, Spain in America; **Winsor**, Narrative and Critical History of America, **Williamson**, Maritime Enterprise, 1485-1558 and The occean in English History.

• •

५

यूरोप में तथा इंग्लैण्ड में धर्म सुधार आन्दोलन (REFORMATION)

(१५१७-१५५९ ई०)

हेनरी अष्टम, १५०९ : एडवर्ड षष्ठ, १५४७ : मेरी, १५५३ : एलिजाबेथ, १५५८

हम यह देख चुके हैं कि दो शताब्दियों से भी अधिक समय से इंग्लिश लोगों में उन अधिकारों एवं शक्तियों के बारे में एक गहरा और बढ़ता हुआ असन्तोष था, जिनका दावा पोप इंग्लिश चर्च के बारे में किया करता था और इन अधिकारों का प्रयोग जिस ढंग से किया जाता था, उससे भी असन्तोष था। इस असन्तोष ने पोप की सत्ता पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए अनेक कानूनों की लम्बी शृंखला को उत्पन्न किया था। इसी प्रकार का एक असन्तोष चर्च की अवस्था से तथा अनेक बिशपों, पुरोहितों और भिक्षुओं की सम्पत्ति, अहंकार, भ्रष्टाचार और आलस्य के कारण था। ये बुराइयाँ घटने के स्थान पर निरन्तर बढ़ती ही चली जा रही थी। विक्लिफ और उसके अनुयायियों के समय से ही चर्च के कुछ मौलिक सिद्धान्तों के बारे में सन्देह था और मध्ययुग में इनके व्यवहार में जो अन्धविश्वास आ गये थे, इनका परित्याग करने की उत्सुकता थी। चौदहवीं शताब्दी के अन्त में लगभग ऐसा प्रतीत होता था कि प्रोटेस्टैण्ट धर्म सुधार आन्दोलन (Protestant Reformation) इंग्लैण्ड में डेढ़ शताब्दी पहले ही हो जायेगा। भीषण दमन लोल्लार्ड आन्दोलन को कुचलने में विफल हुआ था और लोल्लार्ड लोग अब भी हेनरी सप्तम के राज्यकाल में और

हेनरी अष्टम के राज्यकाल के आरम्भिक वर्षों में थोड़े-थोड़े समय के बाद जलाये अथवा कैद किये जा रहे थे। किन्तु लोल्लार्ड लोगों के क्रान्तिकारी सिद्धान्त इंग्लैण्ड मे व्यापक रूप से स्वीकार नही किये जाते थे। अब तक चर्च के सिद्धान्तों ने अथवा इसकी पूजा-पद्धति ने कोई व्यापक असन्तोप उत्पन्न नही किया था। किन्तु इसे उत्पन्न करने वाले तत्व पोप की सर्वोच्च प्रभुता के ऊँचे दावे थे, ये दावे इंग्लैण्ड की गर्वीली राष्ट्रीय भावना के साथ बेमेल प्रतीत होते थे। चर्च के लोगों की अत्यधिक नैतिक शिथिलता और अज्ञानता तथा इनकी विशाल और प्राय: बुरे कामों में लगायी जानी वाली सम्पत्ति मनुष्यों के मनों को चर्च से विमुख कर रही थी।

१. यूरोप में धार्मिक सुधार आन्दोलन

यह असन्तोष, किसी भी प्रकार से इंग्लैण्ड तक ही सीमित नही था; किन्तु यह समूचे यूरोप में लगभग सार्वभौम था। बोहीमिया में पन्द्रहवीं शताब्दी में इसने हस्साइट (Hussite)[१] आन्दोलन नामक एक प्रबल विद्रोह को उत्पन्न किया। यह आन्दोलन कई बातों में प्रोटेस्टैण्ट क्रान्ति का अग्रगामी था। इटली में और स्पेन में यह आन्दोलन अन्य स्थानों की भाँति प्रबल नहीं था। स्पेन में मूरों के विरुद्ध सुदीर्घ संघर्ष के कारण धर्मयुद्धों (Crusades) की भावना का कुछ अंश अब तक विद्यमान था। इटली में पोप तन्त्र (Popacy) को एक प्रकार की राष्ट्रीय और अत्यधिक लाभदायक संस्था समझा जाता था। उस समय सर्वोत्तम इटालियन मस्तिष्क कलात्मक कार्यों में संलग्न थे और उन्होने धार्मिक प्रश्नों को अधिकांश रूप में एक तरफ रख दिया था। फिर भी इटली में चर्च की दशा के विरुद्ध ईसाइयत के अन्त:करण का विद्रोह सावोनोरोला के आग उगलने वाले उपदेशों में अभिव्यक्त हुआ था। किन्तु फ्रांस, स्काटलैण्ड और स्कैण्डेवियन देशों में असन्तोष गम्भीर था और बढ़ रहा था तथा जर्मनी में यह सबसे अधिक गहरा था, क्योंकि जर्मनी एक कमजोर और विभक्त देश था। उसकी कोई ऐसी शक्तिशाली सरकार नहीं थी, जो निकृष्टतम बुराइयों से इसकी रक्षा कर सके, जैसे फ्रांस के राजा और इंग्लैण्ड के राजा और पार्लियामेण्ट कुछ हद तक इन बुराइयों से इनकी रक्षा करती थी। पन्द्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में सामान्य परिषदों (General Councils) की एक शृंखला द्वारा महान सुधार करने का एक गम्भीर प्रयत्न किया गया। किन्तु यह विफल हुआ और इस विफलता ने सार्वभौम असन्तोष को उग्र बना दिया। इसी समय इस असन्तोष को अगली पीढ़ियों के कुछ पोपों के चरित्र ने और भी उग्र बना दिया। जूलियस द्वितीय अथवा लियो दशम अथवा सबसे निकम्मे और बदनाम अलेक्जेण्डर षष्ठ जैसे पोपों को संसार की आध्यात्मिक आवश्यकताओं की रत्ती भर परवाह नहीं थी। वे इटालियन राजाओं की भाँति राजनीतिक षड्यन्त्रों में अथवा प्रादेशिक महत्वाकांक्षाओं में निमग्न रहते थे। वे जिन सांसारिक (Lay) राजाओं

---

१. हस्साइट (Hussite) बोहीमियानिवासी जान हस्स (१३७३-१४१५ ई०) के अनुयायियों को कहते थे। यह मध्यकाल का एक प्रसिद्ध धर्मसुधारक था।

के साथ व्यवहार रखते थे, उन्हीं के समान इन षड्यन्त्रों की तथा महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति में धर्माधर्म के विचार से शून्य और अनैतिक थे। इस बढ़ते हुए असन्तोष के बीच में, पुनर्जागृति का आन्दोलन अपनी स्वतन्त्र अन्वेषण की भावना को लेकर आया; यह पुराने रूपों और नियमों के साथ बँधे होने की प्रवृत्ति को स्वीकार नहीं करता था। इसके अतिरिक्त इस आन्दोलन में साहसपूर्ण दिलेरी की भावना विद्यमान थी।

यद्यपि इटली में पुनर्जागृति के समय रोम के विद्वानों ने धार्मिक प्रश्नों पर बहुत कम विचार किया, तथापि जर्मनी और इंग्लैण्ड में अन्वेषण (Inquiry) की इस नवीन भावना की मुख्य अभिव्यक्ति धार्मिक क्षेत्र में ही हुई। पुराने और नये टैस्टामेण्ट के इबरानी (Hebrew) और यूनानी पाठों को संशोधित किया गया और इनका आलोचनात्मक अध्ययन किया गया। मध्यकालीन स्कालेस्टिक (Scholastic) दार्शनिकों की अतिवादी मान्यताओं पर आक्रमण किया गया। जर्मनी, नीदरलैण्ड और इंग्लैण्ड के मानवतावादी रोइखलीन (Reuchlin), इरेस्मस और सर थामस मोर जैसे व्यक्ति धार्मिक प्रश्नों का चिन्तन अन्य प्रश्नों की अपेक्षा अधिक करते थे और वे चर्च में शुद्धता लाने के लिए परिश्रम कर रहे थे। विद्वानों के इस आलोचनात्मक रुख ने चर्च के प्रति साधारण व्यक्तियों के विरोध को सुदृढ़ किया।

चर्च के प्रमुख लोगों ने इसकी बुराइयों को दूर करने के लिए कुछ भी नहीं किया। ऐसा प्रतीत होता था कि वे उन बुराइयों को दूर करने के लिए कुछ भी नहीं करेंगे, जिन के बारे में सब व्यक्ति शिकायत कर रहे थे। अतः यह अनिवार्य हो गया कि उस समय प्रबल होने वाला असन्तोष अपनी अभिव्यक्ति के लिए कुछ साधन प्राप्त करे। यह या तो नीचे से सुधार का अथवा विध्वंसक शक्ति का विस्फोट होना चाहिये था, अथवा सर्वत्र अपने प्रजाजनों के जान और माल पर निरंकुश अधिकार स्थापित करने वाले सांसारिक राजाओं को यह प्रलोभन हो सकता था कि वे इस विचारधारा का उपयोग करते हुए पोप के स्थान पर अपनी सत्ता को स्थापित करके अपने प्रजाजनों के अन्तःकरण पर नियन्त्रण प्राप्त करें और चर्च की विशाल सम्पत्ति को हथिया कर अपने को समृद्ध बनायें। सर्वत्र प्रोटस्टेण्ट धर्म सुधार आन्दोलन के नाम से प्रसिद्ध इस महान हलचल में ये दोनों तत्व—जनता का असन्तोष तथा राजाओं की लोलुपता मिली हुई थी।

किन्तु चर्च में सुधार करने की इच्छा में तथा इसके टुकड़ों में बँट जाने का समर्थन करने की इच्छा में अथवा तेजमिज़ाज पक्षपातियों की हिंसा के साथ सहानुभूति करने में एक बड़ा अन्तर था। चिरकाल से चर्च की एकता ईसाइयत की और सभ्यता की एकता की एकमात्र अभिव्यक्ति थी। अनेक दुरुपयोग होने पर भी पोप की आध्यात्मिक सर्वोच्च सत्ता एक-दूसरे के साथ व्यवहार में सब राज्यों पर नैतिक कानून लागू करने का एक मात्र साधन था। इस कारण इरेस्मस जैसे सुधार की आवश्यकता मानने वाले अनेक प्रबलतम विचारकों को सुधारकों द्वारा अपनाये गये हिंसापूर्ण उपायों से कोई सहानुभूति नहीं थी तथा अपने युग का उच्चतम इंग्लिश व्यक्ति तथा यूटोपिया की कल्पना करने वाली स्वतन्त्र आत्मा सर थामस मोर फांसी के तख्ते पर मरने को तैयार था, किन्तु वह चर्च के ''सीवनरहित वस्त्र'' को फाड़ने में अर्थात् चर्च की एकता भंग करने में कोई सहायता देने को तैयार नहीं था।

धर्मसुधार का आन्दोलन जर्मनी, नीदरलैण्ड और फ्रांस मे स्वतन्त्र रूप से और लगभग एक ही समय में आरम्भ हुआ; किन्तु केवल जर्मनी में ही इसे शीघ्रतम और विलक्षण सफलताएँ प्राप्त हुई। इसका कुछ कारण तो यह था कि चर्च के विरुद्ध जर्मन जनता की शिकायतें अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक थीं और कुछ कारण यह था कि देश की विभाजित स्थिति ने इसे कार्य करने का अधिक खुला क्षेत्र प्रदान किया था। इंग्लैण्ड, फ्रांस अथवा स्पेन जैसे संयुक्त देशों में ऐसा आन्दोलन या तो सरकार की शक्ति द्वारा कुचल दिया जाता अथवा इसके संरक्षण अथवा नियन्त्रण में ले लिया जाता। किन्तु समूचे जर्मनी के नाममात्र के शासक-सम्राट् का ध्यान फ्रांस के साथ तथा तुर्कों के साथ उग्र युद्धों में बँटा हुआ था। इसलिए जर्मनी के बहुसंख्यक स्वतन्त्र राजा और नगर उन्हें सर्वोत्तम प्रतीत होने वाले मार्ग का अनुसरण करने में समर्थ हुए। इनमें से कुछ तो वास्तविक विश्वास से प्रभावित हुए और कुछ केवल इस कारण कि इससे उन्हें चर्च पर आक्रमण से प्राप्त होने वाली शक्ति और लूट को पाने का अवसर मिलेगा। सम्भवत: बहुमत दोनों उद्देश्यों के सम्मिश्रण से प्रभावित हुआ।

१५१७ ई० में विट्टनबर्ग के सैक्सन विश्वविद्यालय में धर्मशास्त्र के प्रोफेसर, साहसी भिक्षु मार्टिन लूथर को इस बात के लिए जोश आया कि वह रोम में सैण्ट पीटर के चर्च के निर्माण के लिए धन एकत्र करने के साधन के रूप में मुक्तिपत्रों (Indulgences) अथवा प्रायश्चित्त करने से मुक्ति देने वाले पत्रों की खुली बिक्री के विरुद्ध प्रतिवाद करे। इसलिये लूथर ने विट्टनबर्ग में चर्च के दरवाजे पर मुक्तिपत्रों के सम्बन्ध में अपनी ऐसी मान्यताओं की एक लम्बी सूची चिपका दी, जो मुक्तिपत्रों को जारी करने के पोप के अधिकार को अस्वीकार करती थी और यह दावा करती थी कि पापों के लिए क्षमा पैसा देकर अथवा प्रायश्चित से अथवा पुरोहितों के हस्तक्षेप से नहीं, किन्तु केवल विश्वास (Faith) से प्राप्त हो सकती है। विट्टनबर्ग के ये सिद्धान्त (Theses of Wittenberg) छापेखाने की सहायता से शीघ्र ही सारे जर्मनी में फैल गये और सर्वत्र उत्साह के साथ इनका स्वागत हुआ। उन्होंने ऐसा सजीव विवाद उत्पन्न कर दिया, जिसे सारा यूरोप अतीव अनुराग के साथ देखने लगा। उसमें लूथर ने धीरे-धीरे अपने को बाधित रूप से ऐसी स्थिति में पाया कि अन्त में उसने पोप की सत्ता के पूर्ण रीति से साहसपूर्ण खण्डन करने की तथा चर्च के अन्य मौलिक सिद्धान्तों के प्रत्याख्यान की स्थिति को स्वीकार किया। इस विवाद में अपने धर्मशास्त्रीय ज्ञान का अभिमान करने वाले हेनरी अष्टम ने बड़ी उत्कण्ठा से भाग लिया और १५२१ ई० में लूथर के नास्तिक मतों के विरुद्ध उसने एक पुस्तक प्रकाशित की। पोप ने उसे इसका पुरस्कार "धर्म के रक्षक" (Defender of the Faith) की पदवी प्रदान करके दिया। यह पदवी अब तक प्रत्येक ब्रिटिश राजा द्वारा धारण की जाती है और प्रत्येक ब्रिटिश मुद्रा (Birtish sovereign) पर Fid. Def. अथवा F. D. के रूप में अंकित होती है। पोप ने स्वयमेव लूथर को चर्च से बहिष्कृत कर दिया (१५२०)। लूथर ने इसका उत्तर आधे जर्मनी को आनन्दित करते हुए उसके बहिष्कारविषयक पोप के आदेश-पत्र की होली करके दिया और इस प्रकार पोप की सत्ता को स्पष्ट रूप से चुनौती दी। सम्राट् ने वार्म्स नामक

नगर में बुलायी गयी डायट या जर्मन राजाओं की परिषद (१५२१ ई०) के द्वारा जारी किये गये एक राजकीय आदेश द्वारा इस भयावह आन्दोलन को रोकने का प्रयत्न किया। लूथर ने पवित्र रोमन सम्राट् की भी अवज्ञा की। वह इस प्रकार का साहस पूर्ण कार्य करने में केवल इसी लिए सफल हुआ कि उसे अपने स्वामी-सैक्सनी के निर्वाचक (Elector) राजा का संरक्षण प्राप्त था और इस राजा को जर्मनी के अन्य अनेक सांसारिक राजाओं (Lay princes) का समर्थन प्राप्त था। ये राजा अपने को इसमें अधिक गहराई से न डालते हुए भी यह देख रहे थे कि उन्हें इस महान हलचल से लाभ की बहुत सम्भावनाएँ हैं। सैक्सनी के निर्वाचक राजा ने लूथर को थुरिन्जिया के वनाच्छादित पर्वतों मे अवस्थित वार्टबुर्क नामक दुर्ग के एक सुरक्षित स्थान में पहुँचा दिया। यहाँ से लूथर सामान्य व्यक्तियों के लिए जर्मन भाषा में बाइबल के अनुवाद के साथ-साथ अनेक पुस्तिकाएँ लिख कर प्रकाशित करवाता रहा।

लूथर के एकान्तवास के समय में यह आन्दोलन उसके हाथ से निकलने लगा। उत्तेजित भीड़ों ने मूर्तियों को विध्वंस करना, चर्चों को लूटना और अलोकप्रिय पादरियों को मारना पीटना शुरू कर दिया। उस समय सर्वत्र सार्वभौम सामाजिक असन्तोष था। विशेष रूप से, पीड़ित किसान नयी बाइबल में अपने लिए आशा का सन्देश देख रहे थे और उन्होंने विद्रोह कर दिया। धार्मिक विद्रोह और सामाजिक क्रान्ति इस समय वैसे ही घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध थे, जैसे वे इंग्लैण्ड में विक्लिफ के और कृषक विद्रोह के समय में सम्बद्ध थे। जर्मनी के राजा भयभीत हो गये और लूथर को यह डर लगा कि उसका समूचा उद्देश्य जिन लोगों के संरक्षण पर टिका हुआ है, वह उनके संरक्षण से वंचित हो जायेगा। अतः उसने बड़ी उग्रता से किसानों की तथा अनेक जिलों में हावी होने वाले प्रोटेस्टेण्ट उग्र पन्थियों या अतिवादियों की घोर निन्दा की और उसने उन पाशविक और भीषण उपायों का पूर्ण समर्थन किया, जिनसे राजाओं ने इस विद्रोह का दमन किया। इसके बाद से लूथरवाद एक राजकीय धर्म बन गया। इसकी प्रवृत्ति अधिकांश व्यक्तियों के मनों तथा शरीरो को उनके शासकों की कृपा पर रख देने की थी। १५२५ ई० के कृषक विद्रोह से पहले भी लूथर के सामने यह प्रश्न आया था कि यदि पोप की सर्वोच्च सत्ता समाप्त हो जाय, तो अन्तिम अध्यात्मिक सत्ता कहाँ रहेगी? लूथर ने इस प्रश्न का क्रियात्मक रूप से यह उत्तर दिया था कि यह उत्तरदायित्व सांसारिक राजाओं का है, जो केवल ईश्वर के प्रति अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं। निःसन्देह, इस प्रकार के सिद्धान्त ने नये आन्दोलन को महत्वाकांक्षी राजाओं के लिए अतीव आकर्षक बना दिया। इसने जर्मनी तथा अन्य स्थानों के राजाओं की एक बढ़ती हुई संख्या को यह प्रेरणा दी कि वे इसको अपना समर्थन प्रदान करें। यह समर्थन इसलिए भी अधिक मात्रा में दिया जा रहा था कि इससे अब राजाओं को चर्च की विशाल सम्पत्ति को अपने उपभोग के लिए जब्त करने की स्वतन्त्रता मिल गयी थी। किन्तु अन्त में यह बात नवीन धर्म के आध्यात्मिक उत्साह के लिए घातक सिद्ध हुई। बहुत वर्ष बीतने से पहले ही, प्रोटस्टेण्ट धर्म के लूथरवादी रूप का स्थान एक अन्य

रूप कैल्विनवाद[1] (Calvinism) ने उन सभी देशों में लेना शुरू किया, जहाँ नये विचारों को अपनी सत्ता के लिए छोटे राज्यों और शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष करना पडा।

इसी बीच में सुधारवादी मार्टिन लूथर के राजाओं के सम्मुख समर्पण से जर्मनी में उसके सिद्धान्तों की स्थिति सुरक्षित हो गयी। १५२६ ई० मे चार्ल्स पंचम ने पादिया मे फ्रांसिस प्रथम पर विजय (१५२५ ई०) पाने के बाद कुछ समय के लिए अपनी कठिनाइयों से मुक्त हो जाने पर धार्मिक क्रान्ति के साथ पुनः जूझने का प्रयत्न किया। उस समय उसने यह पाया कि जर्मनी के सबसे अधिक [illegible] राजाओं की एक बड़ी संख्या इस आन्दोलन की समर्थक बन चुकी है। यद्यपि स्पेयर नामक स्थान में होने वाली जर्मन राजाओं की परिषद (Diet of Speyer) में वह अपने प्रभाव से नास्तिकों के विरुद्ध एक नया राजकीय आदेश पास कराने में सफल हुआ, तो भी वहाँ राजाओं की एक महत्वपूर्ण अल्प-संख्या इस आदेश के क्रियान्वित किये जाने के विरुद्ध प्रतिवाद के लिए तैयार थी। इनके औपचारिक प्रतिवाद ने ही इनके दल को प्रोटेस्टैण्ट (Protestant) अर्थात प्रतिवाद का विरोध करने वाले दल का नाम दिया। किन्तु फ्रांस के साथ नवीन युद्धो ने तथा तुर्कों के भीषण दबाव ने चार्ल्स पंचम को अपने आदेश का पालन करवाने के प्रयत्न से भी रोक दिया और वह क्षण बीत गया, जब जर्मन प्रोटेस्टैण्ट मत का उन्मूलन किया जाना सम्भव था।

अगले बीस वर्षों में चार्ल्स पंचम लगभग कभी न समाप्त होने वाले युद्धों में लगा रहा। उसे प्रायः पोप को भी अपने शत्रुओं में गिनना पड़ता था। इसलिए वह बहुत देर बाद ही चर्च की एक सामान्य परिषद का अधिवेशन बुलाने में समर्थ हो सका। उसे यह आशा थी कि इसके माध्यम से सारे विवाद का समाधान किया जा सकता है और ईसाइयत की एकता की पुनः स्थापना की जा सकती है।

अन्त में जब वह १५४६ ई० में अपनी मुसीबतों से मुक्त हुआ तो उसने ट्रैण्ट नगर मे होने वाली प्रसिद्ध परिषद को बुलाया। उसने जर्मनी में अपनी सत्ता की पुनः स्थापना का प्रयत्न किया और वह इसमें लगभग सफल हुआ। किन्तु अब बहुत देर हो चुकी थी, क्योंकि इन वर्षो में लूथर का मत न केवल जर्मनी में जड़ जमा चुका था, अपितु सभी पडोसी देशों में फैल चुका था। कठोर एवं तार्किक कैल्विन ने जिनेवा में प्रोटस्टैण्ट मत और अनुशासन के एक नये एवं अधिक उच्च रूप का विकास किया था। चार्ल्स के अपने ही प्रदेश नीदरलैण्ड में नये सिद्धान्त फैल रहे थे। इंग्लैण्ड, डेनमार्क, नार्वे तथा स्वीडन में शक्तिशाली राजाओं ने चर्च पर हमले से प्राप्त होने वाले लाभ को देख लिया था और वे किसी न किसी रूप में अपनी जनता को इस महान विद्रोह मे अपने साथ ले कर चले।

निःसन्देह धर्म-सुधार जैसी मानवीय भावना के विशाल आन्दोलन के मूल कारणों को पूर्ण रूप से, राजनीतिक कारण बनाना मूर्खतापूर्ण होगा। यदि मनुष्यों के मन इसके लिए

---

१. कैल्विनवाद एक फ्रेंच धर्म सुधारक जॉन कैल्विन (१५०९-६४) द्वारा प्रवर्तित धर्म-सुधार आन्दोलन का नाम है। यह स्काटलैण्ड मे विशेष रूप से अधिक प्रचलित है।

तैयार न होते, यदि इस आन्दोलन में उनके अन्तःकरणों को प्रभावित करने अथवा अपील करने की कुछ शक्ति न होती तो कोई भी राजनीतिक तत्व इसकी विजय को सुनिश्चित बनाने में समर्थ न होते। परन्तु राजनीतिक तत्वों ने इसकी शीघ्र होने वाली विजयों को असंदिग्ध रूप से सफल बनाया तथा राजनीतिक तत्वों की प्रधानता ने इसे अधिकांश रूप में कलुषित भी किया और इसे इसके विशुद्ध धार्मिक आन्दोलन के रूप से वंचित कर दिया। यह बात इंग्लैण्ड की अपेक्षा किसी अन्य देश में इतनी अधिक स्पष्ट नही थी।

२. राजा का तलाक और रोम के पोप के साथ सम्बन्ध-विच्छेद

रोम से इंग्लैण्ड का सम्बन्ध विच्छिन्न होने का कारण लूथरवादी विचारों का प्रभाव अथवा शनैः शनैः मत परिवर्तन होने की प्रक्रिया नहीं थी, किन्तु उसके अहम्मन्य राजा का एक अन्यायपूर्ण कार्य था। 'धर्म का रक्षक' राजा अपनी कट्टरता पर गर्व करता था और अपनी मृत्यु के समय तक वह ऐसा करता रहा। लूथरवादी नास्तिक मत से वह कोई सम्बन्ध रखने को तैयार नहीं था और उसने उसके नास्तिक विचारों के प्रसार को रोकने का पूरा प्रयत्न किया। इंग्लिश धर्म-सुधार आन्दोलन की पहली दशा का निर्माण करने वाला, रोम से उसका सम्बन्ध-विच्छेद विशुद्ध रूप से एक राजनीतिक कार्य था। इस सम्बन्ध-विच्छेद का कारण सभी हालतों में अपनी इच्छा चलाने वाले हठी राजा का संकल्प मात्र था। यह कार्य तुलनात्मक रीति से बहुत जल्दी और आश्चर्यजनक रूप से बहुत कम झंझट के साथ पूर्ण किया गया, क्योंकि हेनरी अष्टम न केवल अहम्मन्य (Wilful) था, अपितु असाधारण रूप से चतुर, दृढ़ संकल्प वाला और निर्भीक भी था। वह अच्छी तरह से जानता था कि राष्ट्र की अधिकांश जनता (जिसकी भावनाओं को वह पूरी तरह जानता था) में पोप की सर्वोच्च सत्ता के प्रति कोई कोमल भाव नही था, यद्यपि उसे राजा की भाँति अपने विश्वासों में परिवर्तन करने की बहुत कम चिन्ता थी।

इस सारे मामले की जड़ हेनरी की अपनी रानी से तलाक पाने की इच्छा थी। अरगोन की कैथेराइन अठारह वर्ष से उसकी रानी थी। उसकी एक लड़की 'मेरी' पैदा हुई थी, किन्तु कोई लड़का नहीं हुआ था। पुरुष उत्तराधिकारी का अभाव ट्यूडर राजवंश को असुरक्षित बनाने वाला प्रतीत हो रहा था। इसके साथ ही, हेनरी दरबार की एक चुलबुली और कामुक महिला एन बुलिन (Anne Boleyn) के प्रेम में पड़ गया। इन परिस्थितियों में राजा का कोमल अन्तःकरण उद्बुद्ध हुआ। अब उसे याद आया कि कैथेराइन की शादी पहले उसके बड़े भाई आर्थर से हुई थी। क्या इसने निश्चित रूप से उसके विवाह को अवैध बना दिया था? यह सत्य था कि इस विषय में पोप का एक व्यवस्थापत्र प्राप्त किया गया था। किन्तु क्या पोप ने इस मामले को पूरी तरह समझा था और क्या किसी भी दशा में पोप लेविटिकस (Leviticus) की पुस्तक में प्रतिपादित किये गये दैवी कानून (Divine Law) से किसी को मुक्ति देने का अधिकार रखता है? राजा के अन्तःकरण का सन्तोष होना चाहिए था और १५२६ ई० में कार्डिनल वूल्जे को यह आदेश दिया गया कि वह पोप से तलाक का आदेश प्राप्त करे।

वूल्जे ने अपना पूरा प्रयत्न किया, वह दो वर्ष तक इस विषय की बातचीत चलाता रहा। किन्तु दुर्भाग्यवश पोप क्लेमेण्ट सप्तम इस समय सम्राट् की दया पर जीवित था और सम्राट् हानि उठाने वाली रानी का भान्जा था। अतः पोप ने उस बात को करने का साहस नहीं किया, जो हेनरी चाहता था, विशेषतः इसलिए भी उसने इसे नहीं किया कि वह इसे अन्याय पूर्ण समझता था। वूल्जे अधिक से अधिक यही बात पोप से प्राप्त कर सका कि इस मामले पर विचार करने के लिए एक दूसरे कार्डिनल कैंपेग्गियो के साथ एक आयोग बनाया जाय, किन्तु इसके द्वारा की जाने वाली जाँच में कैंपेग्गियो ने जान बूझ कर देर लगायी और अन्त में इसे बिना किसी निर्णय के स्थगित कर दिया गया। इस पर हेनरी के क्रोध की सीमा नहीं रही, उसकी वास्तविक क्रूर प्रकृति हावी हो गयी। वूल्जे की सेवा के लम्बे समय का विचार किये बिना उसने उसको सब पदों से च्युत कर दिया तथा उसकी लगभग समूची सम्पत्ति से उसे वंचित कर दिया। उसके विरुद्ध इंग्लैण्ड में पोप के अधिकार क्षेत्र का दावा करने को अवैध बनाने वाले अधिनियम (Act of Praemunire) को तोड़ने के लिए कार्यवाही आरम्भ की, क्योंकि उसने पोप के प्रतिनिधि के रूप में कार्य किया था, यद्यपि उसने ऐसा कार्य हेनरी की पूर्ण सहमति से किया था। १५२६ ई० में वूल्जे की विशाल शक्ति सहसा समाप्त हो गयी। अगले वर्ष उसकी मृत्यु ने उसे और भी अधिक पूर्ण विनाश से बचा दिया।

वूल्जे के पतन ने हेनरी को यह प्रसन्नतापूर्ण अनुभूति करायी थी कि उसकी शक्ति अदम्य है। इसके बाद उसने विशुद्ध अत्याचारी राजा की भूमिका अदा की। किन्तु सदैव वह ऐसा अत्याचारी शासक बना रहा, जो यह जानता था कि वह क्या कर रहा है और वह कहाँ तक सुरक्षित रूप से उस रास्ते पर जा सकता है। चान्सलर के रूप में वूल्जे का स्थान अतीव पूर्ण रूप से सभ्य व्यक्ति, हाजिर जवाब और शिष्ट विद्वान सर थामस मोर को दिया गया। उससे राजा प्रीति रखता था। किन्तु मोर स्पष्ट रूप से ऐसा आदमी नहीं था, जो राजा के मन में इस समय रूप धारण कर रही नयी योजना को क्रियान्वित कर सके। यह योजना चर्च पर आक्रमण करने के लिए पार्लियामेण्ट को खुली छूट देकर पोप को भयभीत करके उसे वशवर्ती बनाने की थी। यह योजना चार वर्ष तक अधिकतम चातुर्य के साथ चलायी जाती रही, किन्तु पूर्ण रूप से निष्फल रही। पोप ने अपने को जितना ज़िद्दी प्रदर्शित किया, राजा उससे भी अधिक ज़िद्दी हो गया। यहाँ तक कि अन्त में उसने इंग्लैण्ड में पोप की समूची सत्ता को समाप्त कर दिया और इसे राजमुकुट का अंग बना लिया। तब अन्त मे "अपना सूअर भूनने के लिए एक पवित्र घर को जला देने के बाद" वह विजयपूर्ण रीति से अपने विवाह को रद्द करने में तथा एन बुलिन को वधस्थल पर भेजने से पहले वैभव की एक संक्षिप्त घड़ी का आनन्द देने में समर्थ हुआ। इस प्रकार अपनी शक्ति को स्थापित करने के बाद और उसे अप्रतिरोध्य सिद्ध करने के बाद उसे यह बहुत आसान प्रतीत हुआ कि वह अपनी अत्याचारपूर्ण भावनाओं से वशीभूत होकर अन्य भयंकर कार्य भी कर सकता है।

राजा इस प्रबल क्रान्ति को कराने वाला इंजीनियर था, किन्तु उसे औज़ारों की जरूरत थी। उसका मुख्य औज़ार पार्लियामेण्ट थी। यह परम्परा से चर्च पर हमला करने

के लिए तैयार थी और अपने राजा के प्रति वास्तव में भक्ति रखती थी। सात वर्ष की लम्बी अवधि में (१५२९-३६ ई०), "धर्म सुधार आन्दोलन की लम्बी पार्लियामेण्ट" ने सब बातों में राजा की इच्छा पूरी की। कानून में महत्वपूर्ण परिवर्तन स्वीकार किया तथा तनिक भी विरोध न करते हुए राजा के क्रोध की बलि बनने वाले व्यक्तियों को दण्डित करने वाले पार्लियामेण्ट के अधिनियमों (Acts of Attainder) के द्वारा प्राणदण्ड की सजा दी, किन्तु हेनरी अष्टम को पार्लियामेण्टों को भी सँभालने की जरूरत पड़ती थी और इस कार्य के लिए तथा इन वर्षों के सभी गन्दे कामों के लिए हेनरी को अधःपतित पुराने कार्डिनल वूल्जे के भूतपूर्व सेवक थामस क्रामवैल के रूप में एक बढ़िया साधन प्राप्त हुआ।

क्रामवैल पुनर्जागृति के युग के व्यक्ति के लिए रोमांचक उतार-चढ़ावों का एक असाधारण उदाहरण था। वह पुटनी में रहने वाले एक लोहार का बेटा था। वह फ्लैण्डर्स और इटली की यात्रा कर चुका था, किन्तु इटली भी उसे पुनर्जागृति के युग में राजकार्य की धर्माधर्म के विचार से शून्य कलाओं में कुछ शिक्षा दे सकता था। वह बारी-बारी से एक सिपाही, एक वकील, एक व्यापारी और एक महाजन बना। फिर एकदम वह एक महान राज्य का "लोगों से भय एवं घृणा किया जाने वाला स्वामी और प्राचीन संस्थाओं का विध्वंसक" बना। उसने अपने स्वामी को निरंकुश शासन के ऐसे ऊँचे शिखर तक पहुँचा दिया, जिस तक उससे पहले का अथवा उसके बाद का कोई अँग्रेज राजा नहीं पहुँचा था। किन्तु क्रामवैल किसी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा इस बात को अधिक अच्छी तरह जानता था कि वह अपने स्वामी की कठपुतली मात्र है। जब वह अपना काम पूरा कर चुका तो उसे भी पुराने जूते की तरह एक ओर वैसे ही फेंक दिया गया था, जैसे उसके संरक्षक कार्डिनल को उससे पहले फेंक दिया गया था। वह उसी वध्यमंच पर मरा, जहाँ उसने इतने अधिक अच्छे आदमियों को मरवाया था। वह साहसी, चतुर, अथक रूप से परिश्रमी, प्रत्येक छोटी बात की ओर ध्यान देने वाला, भावनाशून्य, दयाहीन, [illegible] तथा पश्चात्तापहीन था। संक्षेप में, वह निरंकुश सत्ता का आदर्श संगठनकर्ता और बुरे कामों के लिए आदर्श औजार था।

१५२९ से १५३६ ई० तक की महान क्रान्ति का घटनाचक्र आसानी से देखा जा सकता है। पहले १५२९ ई० में, पार्लियामेण्ट को उत्साहित किया गया कि वह चर्च को लाभ पहुँचाने वाली कुछ बुराइयों पर आक्रमण करे। ये बुराइयाँ चर्च द्वारा प्रमाणित किये जाने वाले इच्छापत्रों के शुल्क, मरणविषयक शुल्क तथा एक पादरी द्वारा अनेक पद ग्रहण करने की ऐसी पद्धति थी, जिसके लिए पोप प्रायः अनुमति-पत्र दे देते थे। किन्तु इन घटनाओं की रिपोर्ट देने के लिए रोम भेजे गये एक दूतमण्डल को उसी समय यह भी रिपोर्ट देनी थी कि धर्म का रक्षक राजा बड़ी कट्टरता से लूथर की पुस्तिकाओं पर पाबन्दी लगा रहा है और उसने इंग्लिश भाषा में टिण्डेल द्वारा किये बाइबिल के अनुवाद को सार्वजनिक रीति से जलाने की आज्ञा दे दी है। फिर भी इस दूत-मण्डल ने पोप को तलाक की अनुमति देने के मामले में बहुत ही अधिक कठोर पाया।

अतः राजा और क्रामवैल ने इसके बाद (१५३० ई०) में इंग्लिश चर्च पर एक सीधा आक्रमण चर्च को यह बताने के लिए किया कि यहाँ किसी प्रतिरोध की आशा नही रखी जा सकती। इंग्लैण्ड के समूचे पादरी वर्ग के विरुद्ध यह अभियोग चलाया गया कि उसने बूल्जे को पोप का प्रतिनिधि स्वीकार करके Act of Praemunire को भंग करने का अपराध किया है। उन्होंने ऐसा राजा के आदेशों से किया था, किन्तु इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता था, क्योंकि उन्होंने कानून तो तोड़ा ही था और इसका दण्ड उनकी सारी सम्पत्ति को जब्त कर लेना था। किन्तु पादरियों के सम्मेलन को यह कहा गया कि उनको क्षमा किया जा सकता है बशर्ते कि वह एक बड़ी आर्थिक सहायता देने की बात को अपने वोट से पास करें और राजा को "इंग्लैण्ड के चर्च और पादरियों का एक मात्र संरक्षक और सर्वोच्च अध्यक्ष" विधिवत स्वीकार करें। उन्हें बड़े दुःख से झुकना पड़ा और उन्होंने इसमें केवल इस कातर वाक्यांश की ही वृद्धि की कि "जहाँ तक ईसामसीह का कानून अनुमति देता है।" अत्याचारी राजा अब यह समझ रहा था कि उसके लिए अपनी बात मनवाना कितना आसान था, किन्तु पोप अब भी नहीं झुका।

अब पार्लियामेण्ट से दुबारा काम लिया गया; चर्च द्वारा संचालित न्यायालयों की खराबियों के विरुद्ध और पादरियों के "धर्म सम्मेलन" द्वारा (Convocation) प्रयुक्त की जाने वाली कानून निर्माण की शक्तियों के विरुद्ध पार्लियामेण्ट द्वारा आवेदन पत्र दिया गया। भयभीत दशा में और अन्तिम घड़ी में धर्म सम्मेलन ने सुधार की एक योजना तैयार की। यह बेकार थी। धर्म सम्मेलन से यह कहा गया कि इसे पहले तो यह बात मानने के लिए तैयार होना चाहिए कि वह भविष्य में राजा की अनुज्ञा के बिना कोई कानून नहीं बनायेगा और इसको दूसरी यह बात माननी चाहिए कि वह राजा द्वारा मनोनीत की जाने वाली एक कमेटी द्वारा चर्च के कानून के समूचे वर्तमान स्वरूप का संशोधन स्वीकार करेगा। इसका अर्थ चर्च को राजा की इच्छा की कठपुतली मात्र बनाना था। किन्तु इसका विरोध करना निष्फल था। धर्म सम्मेलन को झुकना पड़ा और 'पादरियों का आत्म-समर्पण'—जैसा कि इस कानून को कहा जाता है, राजकीय सर्वोच्च सत्ता के विकास में क्रान्तिकारी परिवर्तन सूचित करने वाला बिन्दु माना जा सकता है।

इसके बाद १५३२ ई० में ही पार्लियामेण्ट को एन्नेटस् एक्ट (Annates act)[१] पास करना पड़ा। इससे नये चुने नये विशपों द्वारा रिवाज के तौर पर पोप को भारी राशियों का दिया जाना अवैध घोषित किया गया। किन्तु पोप को एक अन्तिम मौका देने के लिए, इस कानून ने राजा को इस विषय में सौदा तय करने का अधिकार दिया। रोम में उसके एजेन्टों को यह निर्देश भेजा गया कि वे ऐसा प्रदर्शित करें कि राजा अपनी जनता द्वारा विरोध को अधिकतम कठिनाई के साथ रोक रहा है; फिर भी पोप ने झुकना स्वीकार नही किया।

---

१. रोमन कैथोलिक चर्च में एन्नेट (Annate) शब्द का प्रयोग बिशप आदि के किसी धर्मक्षेत्र (See) से प्राप्त होने वाली पहले वर्ष की आमदनी है, यह पुराने जमाने में पोप को उपहार के रूप में दी जाती थी।

अतः १५३३ ई० में पोप से सम्बन्ध भंग करना निश्चित हो गया। जनवरी में हेनरी ने एन बुलिन से विवाह किया, किन्तु कुछ महीनों तक पोप को एक दूसरा मौका देने के लिए विवाह का समाचार गुप्त रखा गया। पार्लियामेण्ट ने अपीलों का अधिनियम (Act of Appeals) पास किया, इसके अनुसार (चर्च विषयक विवादों की) सब अपीलें रोम भेजने का निषेध कर दिया गया। हेनरी के आदेशों से नव-नियुक्त आर्कबिशप, डरपोक तथा आधे प्रोटेस्टेण्ट क्रेनमर ने तलाक के महान् प्रश्न पर विचार करने और फैसला करने के पोप के विशेष अधिकार को स्वयं ले लिया और यह घोषणा की कि कैथेराइन की शादी आरम्भ से ही अवैध थी। इसका यह अर्थ था कि राजा अब भी कुंवारा था और राजकुमारी मेरी नाजायज सन्तान थी। एन बुलिन के साथ हेनरी के विवाह की सार्वजनिक रूप से घोषणा की गयी। नयी रानी का वेस्टमिन्स्टर के बड़े गिरजाघर में राज्याभिषेक किया गया और शरदकाल में उसने एक कन्या-राजकुमारी एलिज़ाबेथ को जन्म दिया। एलिज़ाबेथ अभी एक वर्ष की भी न हुई थी कि इस विवाह को भी इस आधार पर अवैध घोषित करते हुए उसकी माता को भी मार डाला गया कि विवाह से पहले ही एन गर्भ धारण कर चुकी थी। इस प्रकार सब कट्टर कैथोलिकों की दृष्टि में एलिजाबेथ अवैध सन्तान थी। वह अपने पिता की आज्ञा से भी तथा पार्लियामेण्ट के उस कानून से भी अवैध थी, जिसके अनुसार उसकी माता को दण्ड दिया गया था। जिस गौरवमयी राजकुमारी ने इंग्लैण्ड का उसके इतिहास के सबसे अधिक विकट और विजयी वर्षों में उसका नेतृत्व करना था, उस राजकुमारी के जीवन का आरम्भ ऐसा दुर्भाग्यपूर्ण था।

बुलिन के विवाह की खुली चुनौती के बाद रोम के साथ सम्बन्ध भंग करना अनिवार्य था, अब केवल इसे वैध और पूर्ण बनाना शेष था। यह कार्य १५३४ ई० में पास किये गये पार्लियामेण्ट के कानूनों की अन्तिम महत्वपूर्ण श्रृंखला द्वारा पूरा किया गया। इनमें से एक कानून ने रोम को किसी भी प्रकार की धन राशि देने का निषेध करते हुए यह व्यवस्था की कि इसके बाद से इंग्लिश चर्च के बिशप अपने कैथेड्रेलों की धर्मसभाओं द्वारा चुने जायेंगे और इन धर्मसभाओं को बारह दिन के भीतर उस व्यक्ति को चुन लेना चाहिये, जिसे राजा ने मनोनीत किया हो; यदि ऐसा नहीं होगा तो राजा द्वारा मनोनीत व्यक्ति का बिशप के पद पर अभिषेक कर दिया जायगा। अब तक इंग्लिश चर्च की यही परिपाटी चल रही है। एक दूसरे अधिनियम ने पार्लियामेण्ट के कानून में धर्म सम्मेलन के अधिकारों की उस मर्यादा को सम्मिलित किया, जो पादरियों द्वारा पहले ही स्वीकार की जा चुकी थी। एक तीसरे कानून द्वारा राजगद्दी का उत्तराधिकार हेनरी तथा एन बुलिन के उत्तराधिकारियों में निहित किया गया और राजा के पहले विवाह की वैधता के विरुद्ध सब युक्तियों को विस्तार का प्रतिपादन करते हुए सब प्रजाजनों से यह अपेक्षा रखी गयी कि वे इस समूचे कानून को स्वीकार करने की शपथ लेंगे। इसको अस्वीकार करना महाराजद्रोह बना दिया गया। निःसन्देह यह ऐसी शपथ थी, जिसे कोई भी ईमानदार कैथोलिक नहीं ले सकता था, भले ही वह पूर्ण हो चुके तथ्य को स्वीकार करने के लिए तैयार क्यों न हो। इस प्रकार यह कानून राजा के विचार से तनिक भी मतभेद रखने वालों की गर्दनों के लिए तलवार बन गया।

अन्त में इस शृंखला का सबसे महत्वपूर्ण कानून एकरूपता के अधिनियमों (Acts of uniformity) की सुदीर्घ पंक्ति का पहला कानून था, इसने घोषणा की कि "राजा इंग्लैण्ड के चर्च का सर्वोच्च अध्यक्ष न्यायपूर्ण और उचित रीति से है और उसे ऐसा होना चाहिये।"

३. मठों का विघटन और निरंकुश सत्ता का संगठन

अगले छः वर्ष एक घोर एवं विशुद्ध अत्याचार के युग का निर्माण करते हैं। इस समय राजा की ओर से चर्च के विकार जनरल (Vicar Genral) अर्थात् धार्मिक मामलों में राजा के प्रतिनिधि होने की पदवी धारण करने वाले घृणित क्रामवेल ने पहले ऐसी भयंकर हत्याओं अथवा कानूनी वधों का संचालन किया, जिसने यूरोप में भीषण भय को उत्पन्न किया और इंग्लैण्ड में एक प्रकार का आतंक का राज्य स्थापित कर दिया। अपनी भक्ति के लिए प्रसिद्ध, चार कार्थूसियन[1] (Carthusian) भिक्षुओं को शपथ लेने से इन्कार करने के लिए फाँसी पर लटका दिया गया, उनके शवों को घसीटा गया और चार टुकड़ों में काट डाला गया। इसी कारण सन्त एवं विद्वान्, राचेस्टर का बिशप फिशर तथा उस समय जीवित इंग्लिश लोगों में उदात्ततम तथा किसी समय राजा के परम मित्र सर थामस मोर फांसी के तख्ते पर ले जाये गये (१५३५ ई०)। यद्यपि ये दोनों नयी रानी को स्वीकार करने को तैयार थे। इंग्लैण्ड में रोमन कैथोलिक धर्म के ये पहले शहीद थे और ये ऐसे शान्त और वीरतापूर्ण गौरव के साथ मरे कि इसने इनके उस उद्देश्य को ऊँचा उठा दिया, जिसके लिए उन्होंने कष्ट सहन किया था। कुछ महीनों के भीतर (१५३६ ई०) एन बुलिन ने राजा के सन्देहों को उभारा और उसकी भी गर्दन काट दी गयी। उसके उस विवाह को भी आरम्भ से ही अवैध घोषित कर दिया गया, जिस विवाह की वैधता के लिए इतना खून बहाया गया था। हेनरी एक बार फिर अविवाहित बन गया और उसने एक पुराने और तेजी से उन्नति करने वाले इंग्लिश परिवार की कन्या जेन सीमोर से विवाह करके अपने को सान्त्वना प्रदान की। यह हेनरी की रानियों में सबसे सुखी थी। उसका पहला कारण यह था कि उसने उसे चिरकाल से चाहा जाने वाला एक पुत्र दिया, जो बाद में एडवर्ड षष्ठ बना और जिसकी वैधता के बारे में कोई सन्देह नही हो सकता था, क्योंकि अरागोन की कैथेराइन कुछ समय पहले ही मर चुकी थी। दूसरा कारण यह था कि जेन अपने निर्मम पति के उससे उकता जाने से पहले ही मर गयी। अब तक यद्यपि रोम से सब सम्बन्ध भंग हो चुके थे, तथापि इंग्लैण्ड के चर्च के सिद्धान्तों में अथवा व्यवहार में कोई भी परिवर्तन नहीं किया गया था। किन्तु क्रामवेल के बारे में यह प्रसिद्ध था कि उसका कुछ झुकाव नये सिद्धान्तों की ओर था और अपने भीषण स्वामी से प्रभावित होते हुए भी, सौम्य आर्क बिशप क्रेनमर के सुधार आन्दोलन के साथ उसकी सहानुभूति थी और हाल में ही नियुक्त अनेक बिशप भी ऐसी सहानुभूति रखते थे।

---

१. १०८६ ई० में फ्रांस के दौफिने (Dauphine) नामक प्रदेश में सन्त ब्रूनो द्वारा यह धार्मिक सम्प्रदाय स्थापित किया गया था। यह अपने कठोर नियमों के लिए प्रसिद्ध था।

मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुसार यह आशा अथवा आशंका रखते थे कि पोप की सर्वोच्च सत्ता को प्रत्याख्यान कर देने के बाद अब सिद्धान्तों में भी परिवर्तन होगा। लूथर मतानुयायी प्रचारकों को कुछ स्वतन्त्रता दी गयी। १५३६ ई० में राजा ने विश्वासों का एक वक्तव्य जारी किया गया, वह अपने प्रजाजनों से यह अपेक्षा रखता था कि वे उसके दस मन्तव्यों (Ten Articles) को स्वीकार करें, यद्यपि इनमें रोमन कैथोलिक चर्च के मौलिक सिद्धान्तों, विशेषतः तत्त्वपरिवर्तन (Transubstantiation) के सिद्धान्त से कोई अन्तर नहीं था। किन्तु सुधारकों को कुछ रियायतें दी गयीं थी, विशेष रूप से पापमोचन के स्थान (Purgatory) के सिद्धान्त का परित्याग किया गया था और इन मन्तव्यों के बाद पादरियों को जारी किये गये आदेशों की एक शृंखला से उन्हें यह आज्ञा दी गयी थी कि वे रोम के बिशप द्वारा अन्यायपूर्ण रीति से छीनी गयी शक्ति के विरुद्ध प्रचार करें, मूर्तियों और पवित्र अवशेषों की प्रशंसा करना बन्द करें और प्रत्येक व्यक्ति के पढ़ने के लिए लैटिन और इंग्लिश की एक बाइबिल प्रत्येक चर्च की गायक मण्डली के स्थान (Choir) में रखें।

किन्तु इन वर्षों का मुख्य कार्य मठों का दमन था। १५३६ ई० में पाशविकता से की गयी एक अतीव दिखावटी जांच के बाद मठों की अवस्था पर एक भीषण रिपोर्ट प्रकाशित की गयी। इसमें भिक्षुओं के विरुद्ध लगाये पाप के भीषण आरोपों का कुछ भाग सत्य हो सकता है; किन्तु जिस पद्धति से यह रिपोर्ट बनायी गयी थी, उसके कारण यह वास्तविक प्रामाणिकता से वंचित हो गयी। फिर भी, पार्लियामेण्ट ने दो सौ पौंड से कम वार्षिक आमदनी वाले ३७६ मठों का विघटन करने का और उनकी समूची सम्पत्ति जब्त करके राजा को देने का आदेश दे दिया। १५२९ से ३६ ई० की उस "लम्बी पार्लियामेण्ट" का यह अन्तिम महत्वपूर्ण कानून था, जो ऐसे क्रान्तिकारी परिवर्तनों का साधन बनी हुई थी। इसने अब भी अधिक बड़े मठों को अछूता छोड़ दिया। किन्तु अगले तीन वर्षों में एक के बाद एक मठ अपने विशेषाधिकारों का तथा सम्पत्ति का समर्पण करने के लिए प्रलोभन देकर अथवा बलपूर्वक बाधित किया गया। वे विरोध करने का जितना साहस कर सकते थे, उतना उन्होंने किया। कालचेस्टर और रीडिंग के मठाधीशों की कानूनी तौर से हत्या करनी पड़ी और इसके बाद ही विरोध शान्त हुआ। अन्त में, १५३९ ई० में एक नयी पार्लियामेण्ट ने पहले किये गये और आगे किये जाने वाले मठों की सम्पत्ति के सभी समर्पणों को कानूनी रूप दिया और मठों द्वारा समर्पित की गयी सारी सम्पत्ति को राजा की सम्पत्ति बना दिया। इस कानून से इंग्लैण्ड में अन्तिम मठ लुप्त हो गये।[1]

इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनेक मठों में भ्रष्टाचार था और वे बुरी तरह संचालित किये जा रहे थे। मठीय पद्धति की अधिकतम उपयोगिता समाप्त हो चुकी थी। इस बात के अच्छे कारण थे कि उनके साधनों को उन प्रयोजनों के लिए हस्तान्तरित किया जाय,

---

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट सं० ३७ तथा छठे संस्करण की प्लेट सं० ४४ देखिये, इनमें मठों की संख्या एवं वितरण को प्रदर्शित किया गया है।

जिन प्रयोजनों को मठ कभी पूरा किया करते थे किन्तु जो प्रयोजन अब अन्य साधनों से पूरे किये जाते थे। वूल्जे ने अपने कालेजों को चलाने के लिए आवश्यक सम्पत्ति देने के लिए मठो का दमन करने में सकोच नही किया था और चर्च के अनेक समझदार व्यक्ति इस बात के लिए बिलकुल तैयार थे कि यह नीति बड़े पैमाने पर क्रियान्वित की जाय। अब भी ऐसे महत्वपूर्ण कार्य थे, जिन्हें मठ कर रहे थे। वे दान की राशि का उदारतापूर्ण प्रबन्ध कर रहे थे. वे गृहहीन लोगों को उस समय शरण दे रहे थे, जब आर्थिक परिवर्तन से अनेक व्यक्ति अपनी जीविका से वंचित हो रहे थे। दरिद्रों की सहायता की सुव्यवस्थित पद्धति की आवश्यकता पहले की अपेक्षा अधिक थी। यदि मठों की सम्पत्ति निर्धनता के निवारण के लिए बनायी गयी सुव्यवस्थित योजनाओं में, शिक्षा के प्रोत्साहन और धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था में लगायी जाती तो इनका दमन न्यायोचित होता। इस विचार के लिए कारण मौजूद है कि पार्लियामेण्ट ने यह आशा की थी कि मठों की अधिकतम सम्पत्ति का उपयोग इस प्रकार से किया जायेगा।

किन्तु इसका कोई उपयोग इस अपवाद के सिवाय नही किया गया कि चार नये बिशप-क्षेत्रों को मठो की जमीनें दे दी गयीं। इंग्लैण्ड के प्रत्येक भाग में बिखरी हुई, मठों की अधिकांश जागीरें कुलीन व्यक्तियों, दरबारियों, सरकारी कर्मचारियों, देहात के भद्रजनों, कृषकों और इससे भी निम्न कुल वाले व्यक्तियों को प्रदान की गयी अथवा कम कीमतो पर बेच दी गयीं। इस महान लूट में लगभग एक हजार व्यक्तियों ने भाग लिया। उनको यह नयी सम्पत्ति राजा की ओर से धार्मिक क्रान्ति की कृपा से मिली थी और इसलिए वे इन दोनों का प्रबल समर्थक होने के लिए अवश्यमेव बाध्य थे। चर्च की लूट से एक नयी कुलीन श्रेणी का जन्म हुआ। यह उस पुरानी कुलीन श्रेणी की अपेक्षा राजा के कहीं अधिक वश में थी, जो श्रेणी गुलाबो के युद्ध (Wars of the Roses) में नष्ट हो चुकी थी। इस प्रकार परवर्ती इंग्लिश इतिहास में मुख्य भाग लेने वाले अनेक बड़े वंश इस समय पहली बार धनी और यशस्वी बने। उनकी महानता के प्रतीक एवं केन्द्र बनने वाले कई शानदार देहाती भवन अब भी मठों एवं मन्दिरों के पुराने नामों से प्रसिद्ध हैं।

अपने असामियों के साथ कोई भी परम्परागत सम्बन्ध न रखने वाले नवीन स्वामियों को विशाल जागीरों के समूचे तथा आकस्मिक हस्तान्तरण ने उन आर्थिक परिवर्तनों को अधिक तीव्र बनाया, जो परिवर्तन पहले से ही हो रहे थे। मठ सदैव उत्तम जमीदार नही थे। सामान्य रूप से वे दकियानूसी जमीदार थे तथा बड़े परिवर्तनों को करने में मन्दगामी थे। सम्पत्ति को झटपट कमाने की प्रबल आकांक्षा रखने वाले नये जमीदारों को इस प्रकार की कोई झिझक नहीं थी और समूचे तौर से वे मठों की जमीनों को भेड पालने के लिए घेरने लगे। इससे उनकी अपनी सम्पत्ति बढ़ी और सम्भवतः इससे देश की समूची सम्पत्ति भी बढ़ी। निःसन्देह इससे उस ऊनी उद्योग के विकास को भी प्रोत्साहन मिला, जो इंग्लिश लोगों की महत्ता के विकास में अधिक भाग लेने वाला था। किन्तु इससे अनेक किसानो की बेदखली और विनाश भी हुआ और इससे भूमिहीन, इधर-उधर मँडराने वाले ऐसे व्यक्तियों की वृद्धि हुई,

जिनकी आवारागर्दी राजनीतिज्ञों को इस शताब्दी के शेष भाग में परेशान करती रही। इसी समय अब तक मठों के दान से प्रदान की जाने वाली दरिद्रों की सहायता भी बन्द हो गयी। कष्ट तथा असन्तोष बहुत बढ़ गये। इस प्रकार यह ऐसा परिवर्तन था, जिसको यदि बुद्धिमत्तापूर्वक क्रियान्वित किया जाता तो इससे महान राष्ट्रीय लाभ हो सकते थे। किन्तु इस परिवर्तन ने ऐसे परिणाम उत्पन्न किये, जो पूर्ण रूप से बुरे थे, क्योंकि यह परिवर्तन एक अत्याचारी शासक द्वारा अपनी शक्ति और मुनाफे को ही एकमात्र दृष्टि में रखते हुए किया गया था।

यह मुख्य रूप से छोटे मठों के दमन से उत्पन्न होने वाला असन्तोष था, जिसने १५३६ ई० में यार्कशायर और लिंकनशायर में दो विद्रोहों को जन्म दिया। ये वे जिले थे, जहाँ मठ बहुत अधिक संख्या में थे। केवल यहीं ऐसे विद्रोह हुए, जिन्होंने कभी हेनरी अष्टम को परेशान किया। राष्ट्र की अपने राजा के प्रति स्वामिभक्ति का यह आश्चर्यजनक उदाहरण है कि विद्रोही लोग राजा के प्रति अत्यधिक भक्तिभावपूर्ण प्रेम, ईमानदारी प्रकट करते थे और केवल यह प्रार्थना करते थे कि राजा के बुरे परामर्शदाता (उनका अभिप्राय क्रामवेल से था) पदच्युत किये जाने चाहिएं। लिंकनशायर का विद्रोह आसानी से दबा दिया गया। यार्कशायर के विद्रोहों को Pilgrimage of Grace कहा जाता था। इसमें अनेक कुलीन सरदार और भद्रजन सम्मिलित हुए और इसका संचालन अतीव प्रशंसनीय रीति से और मृदुता से राबर्ट एस्के नामक बैरिस्टर ने किया। वस्तुतः यह विद्रोह यह वचन देने से ही समाप्त हुआ कि नयी पार्लियामेण्ट की बैठक होनी चाहिए और इस विद्रोह में भाग लेने वाले सभी व्यक्तियों को माफी दी जाय। हेनरी के आत्मसम्मान को ऐसा प्रतिबन्ध सहन करना बड़ा कठिन प्रतीत हुआ, अतः उसने एक नये और बिलकुल अनुत्तरदायी ऐसे विस्फोट का लाभ उठाया, जिसके लिये ये नेता बिलकुल दोषी नहीं थे, उसने इस विस्फोट की आड़ लेकर सब नेताओं की हत्या करवायी तथा अपराध करने वाले जिलों के लिए भीषण दण्ड का आदेश दिया और इस प्रकार अपना पूरा बदला लिया। उसने अपने एजेन्टों को लिखा कि "प्रत्येक नगर, गाँव और पल्ली (Parish) निवासियों की एक काफी बड़ी संख्या का ऐसा भीषण वध करो तथा उनकी लाशों को पेड़ों पर लटकाओ या उनके चार टुकड़े करो और अनेक सिरों को तथा चार टुकड़ों को प्रत्येक छोटे-बड़े शहर में इस प्रकार स्थापित करो कि वे दूसरों के लिए ऐसा भीषण दृश्य हों कि लोग इसके बाद ऐसी कोई हरकत न करें।" विरोध का कोई चिह्न दीखने पर यह जन्मजात अत्याचारी शासक खून-ही-खून देखता था।

उच्छृंखल उत्तरी प्रदेश को सुव्यवस्था में लाने के लिए प्रिवी कौंसिल की शाखा के रूप में उत्तर-परिषद की (Council of North) नामक एक ऐसी संस्था स्थापित की गयी, जो अगली एक शताब्दी तक कार्यपालिका और न्यायपालिका की विशाल शक्तियों का प्रयोग करती रही। वेल्स के उदाहरणों में पहले ही इस विधि को अपनाया गया था और इसके अच्छे परिणाम हुए थे। १५३४ ई० से वेल्स तथा मार्चेस की परिषद ने बहुत अच्छा काम किया था और उसने इस पिछड़े इलाके को इंग्लैण्ड के साथ सम्मिलित करने का मार्ग प्रशस्त

किया था। ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास में एकीकरणों (Unions) की लम्बी शृंखला का पहला एकीकरण-इंग्लैण्ड और वेल्स का पूर्ण सम्मिलन इसी युग में हुआ। यह १५३६ ई० के कानून द्वारा किया गया और १५४३ ई०में पूरा किया गया। मार्चर लार्डस् का विशेष अधिकारक्षेत्र लुप्त हो गया और इंग्लिश जिला पद्धति को इस देश के प्रत्येक भाग में विस्तीर्ण किया गया और वेल्स के जिलों तथा नगरो को इंग्लिश पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया। किन्तु वेल्स अब भी पिछड़ा हुआ था और उसके अराजक होने की सम्भावना थी। अतः उत्तर के पिछड़े और अराजक जिलों की भाँति यहाँ भी परिषद का विशेष क्षेत्राधिकार रखा गया। चूँकि ये परिषदें पूर्ण रूप से राजा की इच्छा पर अवलम्बित थी, अतः इससे राजकीय शक्ति में और अधिक विस्तार हुआ। किन्तु अन्य उदाहरणों के समान इस उदाहरण में भी इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि राजकीय शक्ति में वृद्धि होने से सार्वजनिक शान्ति और व्यवस्था में वृद्धि हुई।

४. हेनरी अष्टम की शक्ति का चरमोत्कर्ष

निरंकुश राजसत्ता के संगठनकर्ता थामस क्रामवेल ने अभी एक और सेवा करनी थी। १५३९ ई० में उसे एक नयी पार्लियामेण्ट को अपने समर्थकों से भरने और व्यवस्थित करने के लिए कहा गया। यह इंग्लैण्ड में अब तक एकत्र होने वाली पार्लियामेण्टों में सबसे अधिक कमीनी और जीहुजूर थी। इसी पार्लियामेण्ट ने मठों के विध्वंस को पूर्ण किया। इसी ने धर्मशास्त्रवेत्ता राजा के आदेश से छः मन्तव्यों[1] को स्वीकार करके कट्टरता का अधिक कठोर प्रदर्शन किया। ये मन्तव्य (Articles) कैथोलिक तथा प्रोटेस्टेन्ट मतानुयायियों के बीच में विवाद के सभी मुख्य सैद्धान्तिक मुद्दों पर निश्चित रूप से कैथोलिक राजा के पक्ष में निर्णय करने वाले थे। जब पार्लियामेण्ट की बैठक हो रही थी, उस समय एक व्यक्ति को लन्दन में शुक्रवार के दिन मांस खाने के अपराध में फाँसी पर लटका दिया गया। इससे स्पष्ट था कि 'धर्म का रक्षक' (Defender of the Faith) इस मामले में कितना कठोर था और उसकी चापलूस पार्लियामेण्ट ने छः मन्तव्यों को एक ऐसे भीषणतम विधान के साथ सम्पुष्ट किया, जिसके अनुसार राजा से सम्मति में तनिक भी भिन्न मत रखने वाले के लिए मृत्यु दण्ड की व्यवस्था की गयी थी। किन्तु इस पार्लियामेण्ट की सबसे अधिक उल्लेखनीय

---

१ ये छः धार्मिक मन्तव्य (Six Articles) ये थे—(१) यूकेरिस्ट अर्थात् अन्तिम भोज में ईसामसीह की वास्तविक उपस्थिति। (२) ईसामसीह के अन्तिम भोज के स्मरणोत्सव में अंशग्रहण (Communion) को पर्याप्त समझना। (३) पुरोहितों के ब्रह्मचारी रहने का सिद्धान्त। (४) ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञाओं (Vows of Chastity) का आवश्यक रूप से पालन करना। (५) निजी रूप से यूकेरिस्ट पर्व मनाने की उपयोगिता स्वीकार करना (६) पुरोहित के कान में निजी रूप से किये जाने वाले पापस्वीकार (Auricular Confession) को आवश्यक रूप से मानना तथा तत्वपरिवर्तन (Transubstantiation) का सिद्धान्त न माननेवालों को प्राण दण्ड देने की व्यवस्था करना। इन छः धार्मिक सिद्धान्तों को मानने वाला कानून पार्लियामेण्ट ने १५३९ ई० में पास किया था। इसे खूनी कानून भी कहा जाता था। यह १५४७ ई० में रद्द कर दिया गया था।

उपलब्धि यह थी कि इसने 'घोषणाओं के अधिनियम' से सब राजकीय घोषणाओं को कानून की शक्ति प्रदान की; इस प्रकार राजा के हाथों में कानून बनाने की अनियन्त्रित शक्ति सौंप दी। यह हेनरी अष्टम की निरंकुश राजसत्ता के चरम उत्कर्ष सूचित करती है।

वस्तुतः अब निरंकुश राजसत्ता का ढाँचा पूर्ण हो चुका था और इसके शिल्पी क्रामवेल ने अपना काम पूरा कर लिया था। अब उसका एक ही उपयोग बाकी था कि वह हाल की घटनाओं से उभड़ने वाली लोक-निन्दा के लिए फाँसी के तख्ते पर बलि के बकरे के रूप में चढ़ा दिया जाय। उसके पतन का तात्कालिक अवसर यह था कि उसने राजा को यह प्रेरणा की थी कि वह अपनी चौथी पत्नी के रूप में नीदरलैण्डवासिनी एक स्थूलकाय और अनाकर्षक स्त्री क्लीव्ज की एन को स्वीकार करे। यह इस विचार के साथ किया गया था कि इंग्लैण्ड और जर्मनी के प्रोटस्टैण्ट राजाओं के बीच में सम्बन्ध की एक कड़ी स्थापित की जा सके। किन्तु हेनरी इस रानी को 'फ्लैण्डर्स की घोड़ी' (Flanders Mare) कहा करता था, उसका इस पर एक ही दृष्टि डालना पर्याप्त था। इस रानी को शीघ्र ही तलाक और पेन्शन दे दी गयी और समूचे राष्ट्र द्वारा घृणा किया जाने वाले क्रामवेल का उस राजा ने भी परित्याग कर दिया, जिसके लिए उसने इतने अपराध किये थे। क्रामवेल को अपने कार्यों का पुरस्कार (१५४० ई०) उस प्रसन्नता में मिला, जिसके साथ उसके वध का सब ओर से स्वागत किया गया। झाँसेबाज राजा हेनरी अष्टम (Bluff King Hal) पहले की भाँति लोकप्रिय हो गया।

हेनरी के राज्यकाल के अन्तिम सात वर्ष तुलनात्मक दृष्टि से शान्त थे और इनमें वूल्जे या क्रामवेल जैसे किसी एक मन्त्री के व्यक्तित्व का प्रभुत्व नहीं था। राजा अपना मन्त्री स्वयं था, वह क्रामवेल द्वारा उसके लिए चर्च तथा राज्य पर स्थापित की गयी सम्पूर्ण निरंकुश सत्ता का प्रयोग कर रहा था। इस युग की मुख्य घटना फ्रांस के साथ (१५४३-४६ ई०) और स्काटलैण्ड के साथ (१५४२-४७ ई०) युद्ध था, इसमें हेनरी एक बार पुनः चार्ल्स पंचम के पक्ष में था। यह युद्ध बहुत उत्साह के साथ संचालित किया गया था। समुद्रों में वह बेड़ा निरन्तर सफल हो रहा था, जिस पर हेनरी ने पैसे के या विचारों के व्यय में कोई कृपणता नहीं की थी। स्थल पर बुलोन के उपयोगी बन्दरगाह पर अधिकार कर लिया गया। स्काटलैण्ड में जेम्स पंचम की मृत्यु के बाद, उसकी एकमात्र उत्तराधिकारिणी एक शिशु बालिका-स्काटस् की मेरी क्वीन थी। ऐसा प्रतीत होता था कि इस लड़की के साथ प्रिन्स ऑफ वेल्स की शादी करके दोनों राज्यों के एकीकरण के उस अवसर का नवीकरण किया जायगा, जिसने लगभग तीन शताब्दी पहले एडवर्ड प्रथम का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया था। स्काटलैण्ड में धर्म सुधार आन्दोलन की प्रगति के कारण ऐसे बहुत से स्काट लोग थे, जो ऐसी व्यवस्था को पसन्द करते थे, किन्तु स्काटलैण्ड में एक सेना का भेजना और एडिनबरा को जलाना समर्थन प्राप्त करने को सर्वोत्तम उपाय नहीं था। हेनरी के अत्याचारी ढंगों ने शान्तिपूर्ण एकीकरण के सम्भावित अवसर को नष्ट कर दिया था।

स्वदेश में, हेनरी अपने अन्तिम वर्षों में पहले की भाँति अत्याचारी और सुदृढ़ रूप से कट्टर बना रहा। एक उच्च कुल की महिला-एन एस्क्यू को नास्तिक सम्मतियों के लिए

जलाये जाने ने यह प्रदर्शित किया कि राजा अब भी निर्मम रूप से कट्टर है। उसकी पांचवीं पत्नी कैथेराइन हावर्ड के विवाह (१५४० ई०) और वध (१५४२ ई०) ने यह प्रदर्शित किया कि वह अब भी कामवासना की विकृति से पीड़ित है। सबसे बड़े इंग्लिश कुलीन सरदार नॉरफोक के ड्यूक और उसके बेटे सर्रे के कवि अर्ल (जिसने राजवंश से अपने समीपवर्ती होने की मूर्खतापूर्ण बात की थी) के पार्लियामेण्ट के कानून द्वारा दण्डित किये जाने ने यह प्रदर्शित किया कि निरंकुश राजा के आतंकों से देश में सबसे अधिक शक्तिशाली व्यक्ति भी मुक्त नहीं हैं। सर्रे को अपना सिर गँवाना पड़ा; नॉरफोक का सिर केवल इसलिए बच गया कि उसका वध किये जाने से पहले ही निरंकुश राजा की आकस्मिक मृत्यु हो गयी (जनवरी १५४७ ई०)।

अपने राज्याभिषेक के समय सब लोगों के दिलों को जीतने वाला गौरवपूर्ण तथा वीर राजा अपने राज्यकाल के उत्तरार्द्ध में निर्दयी, धोखेबाज और ढोंगी अत्याचारी शासक बन गया। फिर भी यह समझना कठिन नहीं है कि वह अपने अधिकांश प्रजाजनों के राजभक्तिपूर्ण प्रेम को अपने प्रति बनाये रखने में अन्त तक क्यों समर्थ हुआ। ये प्रजाजन उसके कार्यों के उस कमीनेपन को और भौंडेपन को नहीं जानते थे, जो अब हमें स्पष्ट है। सब प्रकार के आतंकों में वह एक अहम्मन्य और ऐसी राजोचित मूर्ति बना रहा, जो खतरनाक समुद्रों में सुदृढ़ हाथ के साथ राज्य के जहाज को चला रही थी। उसने जिन महत्वपूर्ण परिवर्तनों को किया, कुल मिलाकर वे परिवर्तन उसकी जनता को बुरे नही प्रतीत हुए, और प्रजाजनों ने उसकी स्पष्ट रूप से गलत बातों का दोष उन मन्त्रियों पर डाल दिया, जो राजकीय विश्वास का दुरुपयोग करते हुए प्रतीत होते थे। रक्तपात को वह पीढ़ी बहुत मामूली समझती थी, जिसके पिता "गुलाबों के युद्धों" के बीच में रहे थे। धार्मिक असहिष्णुता उस पीढ़ी के लिए तथा बाद की अनेक पीढ़ियों के लिए अपराध की अपेक्षा गुण समझा जाता था। यदि हेनरी एक निरंकुश शासक था तो कम-से-कम उसके निरंकुश शासन ने व्यवस्था बनाये रखी, और बड़े एवं महत्वपूर्ण लोगों के साथ भी उसकी सब क्रूरताओं के बीच में कानून का सामान्य क्रम मार्गच्युत हुए बिना चलता रहा। उसने साधारण जनता के झगड़ों में जैसा उत्तम न्याय प्रदान किया, वैसा सम्भवतः इससे पहले इंग्लैण्ड में कभी भी नहीं किया गया था। देश समृद्ध था, यद्यपि इसमें अनेक सामाजिक उपद्रव हो रहे थे। यह देश स्थल पर तथा जल में सब खतरों का सामना करने के लिए समर्थ था। सब राष्ट्रों में इसका सम्मान किया जाता था और इससे डरा जाता था। दूसरे देशों के सर्वथा प्रतिकूल इस देश ने कभी भी विदेशी आक्रमण के ज्वार को अथवा पूर्व वर्णित पिलग्रिमेज़ आफ ग्रेस (Pilgrimage of Grace) के विद्रोह के सिवाय गृहयुद्ध के भीषण कष्टों को नहीं देखा था। दूसरे देशों में महान् धार्मिक परिवर्तन ने अत्यधिक दुःख और कष्ट उत्पन्न किया था; किन्तु इस महान् धार्मिक परिवर्तन के सब खतरों और कष्टों में इंग्लैण्ड का पथ-प्रदर्शन सुरक्षित रूप से किया जाता रहा। ये सब कार्य करने वाला व्यक्ति घृणित होने पर भी महापुरुष था और इंग्लिश नौसेना के संस्थापक एवं राष्ट्रीय-धर्म के संगठनकर्ता हेनरी अष्टम के भीषण और दुष्ट व्यक्तित्व की गणना इंग्लिश शक्ति के निर्माताओं में बहुत ऊँचे स्थान में की जानी चाहिए।

५. एडवर्ड षष्ठ और विजयी प्रोटस्टेन्ट मत, १५४७-५३ ई०

जब उसका पिता मरा तो एडवर्ड नौ वर्ष का था और इसीलिए वह उस विशाल वैयक्तिक शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता था, जिसका प्रयोग उसके पिता ने किया था। पार्लियामेण्ट को इतनी अच्छी शिक्षा दी जा चुकी थी कि वह अपनी पुरानी सत्ता को पुन: प्राप्त करने की कल्पना भी नहीं कर सकती थी। प्रिवी कौंसिल उत्तरदायित्व से डरने वाले, परिश्रमी टहलुओं से भरी हुई थी, अत: अनिवार्य रूप से देश ऐसा अधिनायकतन्त्र बना, जिसके आगे समर्पण करना देश सीख चुका था। यह उस व्यक्ति को प्राप्त हो सकता था, जो उसे अपने अधिकार में लाने में समर्थ हो। स्वाभाविक रूप से यह पहले तो राजा के चाचा, हर्टफोर्ड से अर्ल को और बाद में सोमरसेट के ड्यूक को प्राप्त हुआ। इसको हेनरी अष्टम ने अपनी वसीयत में युवा राजा का संरक्षक बनाया था।

सोमरसेट सच्चे आदर्शों से अनुप्राणित तथा उदार भावनाओं का व्यक्ति था और धार्मिक विवाद में उसका प्रबल झुकाव प्रोटस्टेण्ट पक्ष की ओर था। उसे स्वतन्त्रता के महत्व में स्फूर्तिदायक विश्वास था और उसने निश्चय किया था कि वह हेनरी अष्टम और क्रामवेल द्वारा बनाये गये निरंकुश शासन के भीषण शासन-यन्त्र को समाप्त कर देगा। उसके पथ प्रदर्शन में एडवर्ड षष्ठ की पहली पार्लियामेण्ट ने उस कानून को रद्द कर दिया, जिसने राजकीय घोषणाओं को कानून की शक्ति प्रदान की थी। इस प्रकार उसने पुन: कानून निर्माण की शक्तियों को प्राप्त कर लिया। इसने पिछले शासन में की जाने वाली राजद्रोह की परिभाषा के भीषण विस्तारों को समाप्त कर दिया। इसने छ: मन्तव्यों (Six Articles) के भीषण अत्याचार करने वाले कानून को तथा नास्तिकों को जलाने का दण्ड देने वाले एक पुराने कानून (De haeretico Comburendo) को भी रद्द कर दिया। इंग्लैण्ड में धार्मिक अत्याचार बन्द हो गया। इसका तात्कालिक परिणाम विदेशी तथा देश से निर्वासित इंग्लिश लोगों तथा प्रोटस्टेण्ट प्रचारकों का आगमन था। इनमें से अनेक अपने पूर्ववर्तियों की अपेक्षा अधिक उग्र और निश्चित विचारों के साथ आये, क्योंकि इसी बीच में किसी भी समझौते को और राजाओं के साथ मोल-तोल को सहन न करने वाले प्रोटस्टेण्ट धर्म के लड़ाकू सिद्धान्त का प्रतिपादन जिनेवा के स्वतन्त्र नगर में कैल्विन ने किया, उसका १५४० ई० से इस नगर पर प्रभुत्व बना हुआ था। इंग्लैण्ड में ऐसे प्रचण्ड और उग्र विवाद सुने जाने लगे, जैसे विक्लिफ के समय से कभी नही सुने गये थे और इसके परिणामस्वरूप अव्यवस्था फैलने लगी। समूचे तौर से, इसने इंग्लैण्ड के सुदृढ़ मन पर बहुत प्रभाव नहीं डाला, किन्तु इसने लन्दन में और दक्षिणपूर्व में ऐसे उत्साही प्रोटस्टेण्टों की संख्या को बढ़ा दिया, जो क्रान्तिकारी परिवर्तन चाहते थे। अब तक इनकी संख्या नगण्य थी।

सोमरसेट की संरक्षकता में ही आर्कबिशप क्रेनमर ने पहले इस बात का साहस किया कि वह अपनी वास्तविक सहानुभूतियों को स्पष्ट रूप से पता लगने दे। वस्तुत: सर्वप्रथम देश की धार्मिक नीति का निर्धारण मुख्य रूप से इन दो व्यक्तियों द्वारा किया गया। पहली वार उन्होंने इंग्लैण्ड में धर्मसुधार आन्दोलन को राजनीतिक साधन से कुछ अधिक बनाया। पूर्ण

वाद-विवाद के वाद, १५४६ ई० में इंग्लिश चर्च की "सामान्य प्रार्थना की पुस्तक" के प्रथम संस्करण द्वारा इंग्लिश भाषा में उपासना करने का पूर्ण आदेश मिला। यह लगभग पूर्ण रूप से क्रेनमर का काम था और इस प्रार्थना पुस्तक का अत्यधिक गम्भीर सौन्दर्य इस सौम्य और निर्बल व्यक्ति की महत्ता का वास्तविक प्रमाण है। उसने अपने देशवासियों को कुछ ऐसी वस्तु प्रदान की, जिसे वे अपना हिस्सा बना सकते थे; कुछ ऐसी वस्तु प्रदान की, जो इसके जन्म काल से ही इसे परिवेष्टित करने वाले सिद्धान्त पर होने वाले झगड़ों से ऊपर उठी हुई थी, और जो न केवल मनुष्यों की बुद्धियों की, अपितु उनके दिलों की भी निष्ठा प्राप्त कर सकती थीं। १५४६ ई० के "एकरूपता के कानून" के द्वारा सब इंग्लिश चर्चों के लिए सामान्य प्रार्थना की पुस्तक के प्रथम अनुवाद को लागू किया गया। यह योजना बनाई गई थी कि धार्मिक विवाद के कानून को मृदु किया जाय। इसमें प्रतिपादित सिद्धान्त पुराने विश्वासों से उग्र रूप में भेद नहीं रखते थे। किन्तु प्रचारकों को दी जाने वाली स्वतन्त्रता के साथ मिल कर इसने डेवन और कार्नवाल में विद्रोह उत्पन्न किया, इन स्थानों में पुराने विश्वास के प्रति निष्ठा अब भी प्रवल थी।

सोमरसेट ने केवल धर्म के क्षेत्र में ही नवीन पथों का परीक्षण नही किया; वह खेतों के आवेष्टित करने के आन्दोलन के विरुद्ध किसानों की शिकायतों के साथ बहुत सहानुभूति रखता था और उसने इस सहानुभूति को स्पष्ट रूप से पता लगने दिया। अतः जब एक धनी चमड़ा रंगने वाले राबर्ट केट के नेतृत्व में नार्फोक में एक विद्रोह आरम्भ हुआ और जिसका उद्देश्य खेतों के बन्द करने पर प्रतिबन्ध लगाना था, उस समय सोमर-सेट में दो विरोधी दिशाओं में खींचने वाली सहानुभूतियों का द्वन्द्व आरम्भ हो गया। एक ओर उसकी सहानुभूति विद्रोहियों के साथ थी; दूसरी ओर वह व्यवस्था करने की आव-श्यकता की भावना से प्रेरित हो रहा था। उसने उपद्रव को भीषण रूप प्राप्त होने दिया और यह केवल परिषद में उसके प्रबल प्रतिद्वन्दी वारविक के अर्ल के शक्तिशाली कार्य का ही परिणाम था कि इसका अन्तिम रूप से दमन किया गया। इससे वह उस नयी कुलीन श्रेणी और देहात के भद्र वर्ग की सहानुभूति खो बैठा, जिसके समर्थन पर मुख्य रूप से ट्यूडर राजतन्त्र टिका हुआ था और जो मुख्य रूप से खेत घेरे जाने के लिए उत्तरदायी थे और इससे लाभ उठा रहे थे। इस प्रकार घरेलू मामलों की व्यवस्था में सोमरसेट के उत्तम इरादों के परिणाम दुर्भाग्य पूर्ण हुए। तीव्र परिवर्तन और अशान्ति के इस युग में अब भी सुदृढ़ शासन की आवश्यकता थी और हेनरी अष्टम के कठोर एवं क्षमतापूर्ण अत्याचारी शासन ने अधिकांश व्यक्तियों की दृष्टि में, उसके बहनोई के मृदु तथा आलसी शासन की अपेक्षा अधिक अच्छे परिणाम पैदा किये थे।

सोमरसेट की वैदेशिक मामलों की व्यवस्था भी अधिक सुखद नहीं थी। स्काटलैण्ड में उसने हेनरी अष्टम की नीति को जारी रखने का प्रयत्न किया था। उसने सीमा पर एक सेना का नेतृत्व इसलिये किया कि वह स्काट लोगों को बाधित कर सके कि वे युवा इंग्लिश राजा को विवाह में अपनी युवती रानी प्रदान करे। पिंकी में उसकी विजय हुई

(१५४७ ई०), किन्तु बल निर्बल युक्ति है और इस विजय का परिणाम यह हुआ कि स्काट लोग पुन: फ्रांस की शरण में चले गये और उन्होंने अपनी युवती मेरी फ्रेंच राजा को पत्नी के रूप में समर्पित कर दी। यह ऐसी घटना थी जिसके परिणाम आगे चल कर प्रकट हुए। पुन: वह फ्रांस के साथ एक लड़ाई में पड़ गया (१५४९ ई०)। इस युद्ध का संचालन बुरी तरह से हुआ, क्योंकि अपनी लूटों और प्रगतियों के कारण हेनरी अष्टम ने खजाना लगभग खाली छोड़ा था और इसका मुख्य परिणाम बुलोन पर हेनरी द्वारा प्राप्त की गयी विजय से हाथ धोना था। ऐसा प्रतीत होता था कि स्वदेश में और विदेश में अयोग्यता और अव्यवस्था का शासन है, मनुष्यों ने यह अनुभव किया कि हेनरी अष्टम की अहम्मन्य योग्यता कितनी मूल्यवान् थी।

इस बढ़ते हुए असन्तोष ने सोमरसेट के प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी वार्विक के अर्ल (बाद में नार्थम्बरलैण्ड के ड्यूक) को इस बात में समर्थ बनाया कि वह उसका स्थान ले ले (१५४९ई०)। यद्यपि सोमरसेट जनवरी १५५२ ई० तक जीवित रहा, जब कि उसे हेनरी अष्टम के समय सुपरिचित बनायी गयी विधि से कानूनी रूप से मरवा डाला गया, तथापि एडवर्ड के राज्यकाल के अन्तिम चार वर्षों में इंग्लैण्ड का वास्तविक शासक नार्थम्बरलैण्ड था।

नये तानाशाह में सोमरसेट की कोई उदार भावना नहीं थी। उसकी शक्ति वस्तुत: शिशु राजा पर डाले जाने वाले उसके विलक्षण वैयक्तिक प्रभाव पर तथा कुलीन सरदारों और सरकारी अधिकारियों के एक दल के पैसे से खरीदे हुए समर्थन पर अवलम्बित थी। अपनी लोलुपता को सन्तुष्ट करने के लिए, अपने समर्थकों को अच्छी भावना में रखने के लिए कोष को इतना लुटा दिया गया कि न तो समुद्री बेड़े को, न ही सेनाओं को क्षमतापूर्ण रीति से रखा जा सकता था और देश की सुरक्षा और व्यवस्था खतरे में पड़ गयी। इन्हीं प्रयोजनों से चर्च की सम्पत्ति की लूट पहले की अपेक्षा अधिक खुल्लमखुल्लारीति से चलती रही। १५४७ ई० में चेण्टरी (Chantry) के नाम से प्रसिद्ध अतीव बहुसंख्यक और छोटे-छोटे धार्मिक दानों वाले भजन मन्दिरों[1] का दमन किया गया। ये सामान्य रूप से पैरिश अथवा पल्ली चर्चों के साथ सम्बद्ध थे और उस पुरोहित के लिए निर्वाह व्यय को प्रस्तुत करते थे जिसका कर्त्तव्य इसके संस्थापक और उसके परिवार की आत्माओं के लिए प्रार्थना करना और साथ ही निर्धन बच्चों के लिए पाठशाला चलाना होता था। चेण्ट्रियों या भजन-मन्दिरों की आमदनी मुख्य रूप से शिक्षा के लिए व्यय की जाती थी और एडवर्ड षष्ठ का नाम धारण करने वाले ग्रामरस्कूल इसी स्रोत की आमदनी से चलते थे। किन्तु नार्थम्बरलैण्ड ने इनकी निधियों के बड़े भाग पर कब्जा कर लिया था और इसका उपयोग अपने उद्देश्यों के लिए किया। उसने बिशपों की बहुत सी ज़मीनें जब्त कर लीं और उन्हें बेच दिया तथा चर्चों के रत्नों को तथा भिक्षापात्रों को भी जब्त कर लिया। उसने बड़ी मात्रा

१. कई व्यक्ति मृत्यु के बाद अपनी आत्मा की शान्ति के लिए धार्मिक भजन गाने के लिए पादरियों को सम्पत्ति का दान किया करते थे, इस प्रकार की सम्पत्ति वाले भजन-मन्दिर चेण्टरी (Chantry) कहलाते थे।

में आतंक के उस राज्य को स्थापित किया, जिसे सोमरसेट ने छोड़ दिया था और उसने राजद्रोह के नवीन कानून बनाये। कृषि के लिए पंचायती भूमि को निजी भूमि के रूप मे आवेष्टित (Enclosures) करने के प्रश्न पर जनता की शिकायतों के बारे में सब प्रकार की रियायतें देने से इन्कार किया और उसने आवेष्टनों को पूरी कानूनी स्वीकृति प्रदान की, क्योंकि वह इनके निर्माताओं का समर्थन चाहता था।

धार्मिक प्रश्न के विषय में वह यह जानता था कि वह कैथोलिकों से समर्थन की आशा नही रख सकता था, अतः उसने जानबूझ कर उग्र प्रोटस्टेण्ट नीति को स्वीकार किया। यह और भी अधिक तत्परता से इसलिए किया गया क्योकि अकालप्रौढ़ युवा राजा अपने सुधारवादी विचारों पर गर्व करता था। १५४६ ई० की प्रार्थना पुस्तक की कैथोलिक व्याख्या भी हो सकती थी, अब उसे प्रोटस्टेण्ट अर्थ देने की दृष्टि से पूर्ण रूप से संशोधित किया गया (१५५२ ई०)। क्रैनमर को प्रेरित किया गया कि ४२ मन्तव्यों के धार्मिक विश्वास का एक विवरण तैयार करे। यह निश्चित रूप से प्रोटस्टेण्ट स्वरूप वाला था। विशेष रूप से इस बात में कि इसमें ट्रांसब्स्टन्शिएशन (Transubstantiation) के सिद्धान्त को पूर्ण रूप से रद्द कर दिया गया था और इसे 'एकरूपता के नये कानून' से लागू किया गया। अपने वैयक्तिक स्वार्थो के लिए और बिना किसी सच्चे धार्मिक विश्वासों के साथ, नार्थम्बरलैण्ड इंग्लैण्ड को जबरदस्ती उग्र प्रोटम्टेण्ट मत का अनुयायी बना रहा था। अनेक शताब्दियों से सब मनुष्यों के जीवन का हिस्सा बनी हुई यूकेरिस्ट की पवित्र प्रार्थना (Mass) के रहस्य को सरकार के केवल एक आदेश द्वारा प्रत्येक पैरिश चर्च से एकदम समाप्त कर दिया गया। यद्यपि उग्र प्रोटस्टेण्ट दल विशेष रूप से लन्दन में प्रबल और शक्तिशाली था, तथापि देहात का मन्द गति से चलने वाला मन किसी भी प्रकार ऐसे क्रान्तिकारी परिवर्तनों के लिए तैयार नहीं था।

पार्लियामेण्ट की बेचैनी अपशकुनों की सूचना दे रही थी। नार्थम्बरलैण्ड को यह साहस नहीं हुआ कि वह इससे पैसे माँगे। पार्लियामेण्ट ने अपना साहस यहाँ तक बटोरा कि सरकारी बिलों के एक पूरे समूह को रद्द कर दिया गया। ट्यूडर पार्लियामेण्ट केवल उसी समय तक वशवर्ती बनी रहती थी, जब तक वह यह विश्वास करती थी कि देश का शासन उचित एवं योग्य रीति से हो रहा है। सारे देश में इससे भी अधिक स्पष्ट रूप से असन्तोष की अभिव्यक्तियाँ हुई। नार्थम्बरलैण्ड के शासन के सभी वर्षो में लगभग प्रत्येक जिले में छुटपुट विद्रोह हुये थे। इन्हें नियन्त्रण में रखने के लिए नार्थम्बरलैण्ड को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह कुछ बड़े कुलीन सरदारों को इस बात की अनुमति दे कि वे सार्वजनिक व्यय से घुड़सवार सेनाओं को तैयार करें, और प्रत्येक जिले में सार्वजनिक व्यवस्था रखने के लिए लार्ड लेफ्टिनेण्ट नियुक्त किये गये। यह एक स्थायी संस्था बन गयी और अब तक भी प्रचलित है। यद्यपि आज के लार्ड लेफ्टिनेण्ट लोगों के कर्त्तव्य औपचारिक हैं तथा समारोहों से सम्बन्ध रखने वाले हैं। अन्तिम बात यह है कि यद्यपि नार्थम्बरलैण्ड ने प्रिवी कौन्सिल पूरी शुद्धि करते हुए इसे अपने समर्थकों से भरा था, तथापि इसके सदस्यों

में परस्पर फूट और अविश्वास की भावना विद्यमान थी, क्योंकि कौन्सिल के लार्ड बहुत डरते हुए यह अनुभव कर रहे थे कि तानाशाह एक गम्भीर और खतरनाक खेल खेल रहा था। यह ऐसा खेल था कि यदि वे इसका समर्थन करते तो वे इसी कारण महाराजद्रोह (High treason) के अपराधी बन जाते, यदि वे इसका विरोध करते और फिर भी इसमें सफलता प्राप्त करते तो भी उन्हें निश्चित रूप से महान् राजद्रोह का दण्डभागी होने का भय होता।

प्रोटस्टेण्ट अतिवादियों के लघु समूह के अतिरिक्त अन्य सभी व्यक्तियों द्वारा सार्वभौम रीति से घृणा किये जाने वाले नार्थम्बरलैण्ड को यह ज्ञात था कि उसकी स्थिति केवल उसी समय तक सुरक्षित है, जब तक वह राजा की शक्ति का प्रयोग कर रहा था। किन्तु युवा राजा बीमार था और यह स्पष्ट था कि वह देर तक जीवित नही रह सकता था। यदि उसकी बहिन कैथोलिक राजकुमारी, मेरी उसके बाद गद्दी पर बैठती तो नार्थम्बरलैण्ड का विनाश निश्चित था। उसके बचाव की एक मात्र आशा राजगद्दी पर ऐसे व्यक्ति को बिठाने की थी, जिस पर उसका नियन्त्रण हो। यदि मेरी और एलिजाबेथ को अवैध सन्तान समझ कर छोड़ दिया जाय और यदि हेनरी अष्टम की बड़ी बहिन की पोती, स्काटलैण्ड की मेरी को विदेशी होने के नाते छोड़ दिया जाये तो अगला उत्तराधिकारी सफोक के ड्यूक से शादी करने वाली हेनरी अष्टम की छोटी बहिन का प्रतिनिधि होता। उसकी पोती सौम्य और सुसंस्कृत लेडी जेन ग्रे थी। नार्थम्बरलैण्ड ने इस महिला के साथ अपने बेटे गिलफोर्ड डडली की शादी करने का तथा युवा राजा द्वारा वसीयत से अपनी राजगद्दी जेन ग्रे को दिलवाने का संकल्प किया। यह बड़ी साहसपूर्ण योजना थी। देश में सब ओर से निन्दित होने के कारण यह कभी सफल नहीं हो सकती थी। नार्थम्बरलैण्ड की योजनाएँ परिपक्व होने से पहले ही एडवर्ड षष्ठ की मृत्यु १५५३ ई० में हो गयी। २१ जुलाई तक क्रूरतापूर्ण व्यवहार की पात्र बनी हुई अरागोन की कैथेराइन की लड़की रानी मेरी ने राजगद्दी प्राप्त कर ली और नार्थम्बरलैण्ड को लन्दन के किले में बन्द कर दिया गया। उसकी शक्ति के चार वर्ष एक बुरे स्वप्न की भाँति थे और राष्ट्र ने इस बात पर हर्ष प्रकट किया कि यह दुःस्वप्न अब समाप्त हो गया है। किन्तु इससे भी बुरा एवं भीषण दुःस्वप्न शुरू होने वाला था।

६. मेरी और केथोलिक प्रतिक्रिया (१५५३-१५८८ ई०)

नई रानी अड़तीस वर्ष की थी। अपनी आयु के चौदहवें वर्ष से ही वह अपनी अभिमानी स्पेनिश माता के साथ किये जाने वाले क्रूर अन्याय की छाया में पली थी और उसके साथ ही उसने कन्या से युवती बनने के अपने वर्ष व्यतीत किये थे। उसे अन्यायपूर्ण रीति से अवैध घोषित किया गया था। वह एक राजकन्या की स्वाभाविक परिस्थितियों से बहिष्कृत की गयी थी तथा वह शत्रुता और षड्यन्त्र के वातावरण से आवृत रही थी। उसका एकमात्र सन्तोष अपनी माता के उद्देश्य में उसका उत्कट विश्वास था और पवित्र रोमन सम्राट्

एवं स्पेन के राजा के नजदीकी रिश्तेदार होने का उसमें अभिमान था तथा सबसे बढ़कर उसकी यह भावना थी कि अपनी माता की भाँति उसे धर्म के लिए एक शहीद की भाँति कष्ट उठाना पड़ा था। कई खतरों के बाद अब वह मानो भगवान के ही आदेश से राजगद्दी पर लायी गयी थी। उसने अपने नये कार्य को इस अतीव गम्भीर भावना के साथ किया कि उसका यह लक्ष्य है कि वह इंग्लैण्ड में प्राचीन चर्च की पुनः स्थापना करे और इस कार्य मे उसका स्वाभाविक मित्र स्पेन का वह राजघराना था, जिसमें उसकी माता उत्पन्न हुई थी। सभी ट्यूडर शासकों में वह सबसे अधिक सच्ची और निःस्वार्थ थी। किन्तु क्योंकि उसका मन केवल एक उद्देश्य पर केन्द्रित था, अत उसमें राष्ट्रीय भावनाओं को समझने की वह स्वाभाविक बुद्धि नही थी, जो उसके पिता और उनकी बहिन को शक्तिशाली बनाने वाली थी। उसके जीवन ने उसे उस युग की भावनाओं और आवश्यकताओं के सम्पर्क से पृथक् कर दिया था, अतः उसे बड़ी ही दुःखपूर्ण रीति से विफलता मिली और वह जानती थी कि वह असफल हो चुकी है, फिर भी वह अन्त तक ट्यूडर लोगों के साहस और जिद्द के साथ अपने उद्देश्य का अनुसरण करती रही।

आरम्भ में उसने मृदुता से कार्य किया। नार्थम्बरलैण्ड को अपनी प्रोटस्टेण्ट सम्मतियों के नीचतापूर्ण परित्याग के बाद फाँसी के तख्ते पर झूलना पड़ा। वह इसका पात्र था, किन्तु राज्य के पहले छः महीनों में किन्हीं अन्य व्यक्तियों को यह दण्ड नहीं दिया गया। कैथोलिक पद्धति की पूर्ण पुनःस्थापना तब तक नहीं की जा सकती थी, जब तक कि पार्लियामेण्ट एडवर्ड षष्ठ के राज्यकाल के प्रोटस्टेण्ट कानूनों को रद्द न कर दे। हेनरी अष्टम के रोम के साथ सम्बन्ध विच्छेद को समाप्त करने के लिए अब भी अधिक सावधानी के साथ चलने की आवश्यकता थी। इस बीच में क्रेनमर को तथा सुधारवादी अन्य बिशपों को पदच्युत करने के लिए तथा यूकेरिस्ट के पर्व (Mass) को पुनः स्थापित करने के लिए मेरी को राजकीय सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग करना पड़ा (यद्यपि वह इसे अधर्म समझती थी)। रानी ने यह अनुभव किया कि पार्लियामेण्ट को सँभालना बड़ा कठिन है। उसने अपने राज्य के पहले अठारह महीनों में इस आशय से चुनाव करवाये कि उसे अपना कहना मानने वाला सदन प्राप्त हो जायगा। यद्यपि उसकी इच्छा पूरी हो गयी, तथापि उसे बड़ी सावधानी से चलना पड़ा। इंग्लैण्ड में संसदीय पद्धति की जड़ गहरी जमी हुई थी, इस बात को अन्य कोई भी वस्तु इस तथ्य की अपेक्षा अधिक स्पष्टता से प्रकट कर सकती थी कि स्पेन की शक्ति का समर्थन पाने पर भी ट्यूडर वंश का एक राजा यह साहस नहीं कर सकता था कि वह इसे समाप्त कर दे अथवा इसकी अवहेलना करे।

मेरी के प्रथम वर्ष की मुख्य घटना उसकी यह घोषणा थी कि रानी का इरादा अपने चचेरे भाई फिलिप के साथ शादी करने का है। फिलिप चार्ल्स पंचम का पुत्र और उत्तराधिकारी था और उसने १५५५ ई० में चार्ल्स के राजगद्दी छोड़ने पर स्पेन, इटली और नीदरलैण्ड में उसके प्रदेशों को विरासत में प्राप्त किया था। यद्यपि इंग्लैण्ड और स्पेन के तथा इससे भी अधिक मात्रा में इंग्लैण्ड और नीदरलैण्ड के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण थे, तथापि इस घोषणा

का स्वागत भय के साथ किया गया; क्योंकि इससे यह प्रतीत होता था कि इंग्लैण्ड विशाल स्पेनिश राजतन्त्र में उसी प्रकार विलीन हो जायगा, जैसे स्काटलैण्ड फ्रेंच गद्दी के उत्तराधिकारी राजकुमार के साथ अपनी युवा रानी के विवाह से, व्यावहारिक रूप से फ्रांस का अंग बन गया था। इस बात की सम्भावना ने इंग्लैण्ड की प्रबल राष्ट्रीय भावना को गहरी ठेस पहुँचायी। उसी समय से इंग्लिश लोगों में स्पेन के प्रति भय और घृणा के भाव विकसित होने लगे। ये निरन्तर प्रबल होते चले गये और आरमेडा की लड़ाई में चरमशिखर पर पहुँच गये। इसने इंग्लिश नीति की दिशा को बदल दिया और प्रोटस्टेण्ट मत को राष्ट्रीय मत बनाने में किसी अन्य वस्तु की अपेक्षा अधिक कार्य किया। किन्तु मेरी का दिल विवाह पर तुला हुआ था। उसने बिशप गार्डिनर और कार्डिनल पोल जैसे अपने अत्यधिक स्वामिभक्त मित्रों की सलाह की उपेक्षा की। वह पार्लियामेण्ट के स्पष्ट असन्तोष से भी नहीं रुकी। कैण्ट के भद्र एवं कृषक वर्ग में, विशेष रूप से इस विवाह के विरुद्ध प्रतिवाद के रूप में सर थामस वियट द्वारा संगठित भीषण विद्रोह (जनवरी फरवरी १५५४ ई०) भी उसे नहीं रोक सका। यद्यपि वियट ने अपने को लन्दन का स्वामी बना लिया और सोलहवीं शताब्दी में किसी भी समय की अपेक्षा उस समय उसने सरकार को अधिक गम्भीर खतरे में डाल दिया, तो भी रानी अपना जिद् पर अड़ी रही। वियट के विद्रोह का एकमात्र परिणाम यह हुआ कि नार्थम्बरलैण्ड के साथियों अथवा उपकरण बनने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध लिया जाने वाला चिरकाल से विलम्बित प्रतिशोध अब ले लिया गया। इसका शिकार होने वालों में सोलह वर्ष से कुछ अधिक आयु की बड़ी सुन्दरी और सुसंस्कृता लेडी जेन ग्रे भी थी। उसने अपनी मृत्यु का सामना ऐसे धैर्य के साथ किया कि इसने इसे ट्यूडर इतिहास का एक अतीव प्रभावशाली दृश्य बना दिया। उसकी मृत्यु सर थामस मोर की मृत्यु जैसा ही घोर अन्याय थी और उसने प्रोटस्टेण्ट मत के उद्देश्य को उतना ही पवित्र बना दिया, जितना सर थामस मोर की मृत्यु ने कैथोलिक धर्म के उद्देश्य को पवित्र बनाया था।

१५५४ और ५५ ई० में ही हेनरी अष्टम की धार्मिक क्रान्ति को उलट दिया गया। पार्लियामेण्ट को सुगमतापूर्वक यह प्रेरणा की गयी कि वह हेनरी के पोपविरोधी कानूनों को रद्द करे तथा रोमन चर्च में पुनः प्रवेश के लिए प्रार्थना पत्र दे। प्राचीन धर्म के प्रति अपनी निष्ठा के कारण हेनरी द्वारा निर्वासित और दण्डित किये गये कुलीन परिवार के एक इंग्लिश व्यक्ति कार्डिनल पोल को अपराध से मुक्त करके क्रेनमर के स्थान पर कैण्टरबरी का आर्कबिशप नियुक्त किया गया और उसने रानी की धार्मिक नीति का संचालन अपने हाथ में ले लिया। सोमरसेट द्वारा समाप्त किये गये नास्तिकताविषयक पुराने भीषण कानूनों को पुनः पास किया गया और इस प्रकार पार्लियामेण्ट ने बिशपों तथा सरकार को अत्याचारपूर्ण शासन को आरम्भ करने के लिए अधिकार दिया। किन्तु पार्लियामेण्ट ने एक बात पर झुकने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। वह मठों की जब्त की हुई सम्पत्ति को लौटाने के लिए सहमत नहीं हुई। राजा के अधिकार में विद्यमान चर्च की लूट का केवल थोड़ा ही हिस्सा वापिस किया गया। भद्रवर्ग में यह भावना उत्पन्न हो गयी कि उनकी ज़मीनें खतरे में हैं और इसने धार्मिक प्रतिक्रिया में उनके समर्थन को बहुत कम कर दिया।

अब कोरी शक्ति से प्रोटेस्टेण्ट मत के उन्मूलन के लिए उग्र धर्म युद्ध आरम्भ हुआ। यह फरवरी १५५५ ई० में शुरू हुआ और राज्य-काल के समूचे शेष भाग में (पार्लियामेण्ट के अधिवेशनों के समय के महत्वपूर्ण विरामों के अतिरिक्त) निरन्तर चलता रहा। मनुष्य और स्त्रियाँ, एक-एक करके अथवा समूहों में, सार्वजनिक रूप से जलाये जाते रहे और वे अधिकांश अवस्थाओं में आश्चर्यजनक वीरता के साथ अत्यधिक उत्पीड़नों को सहन करते रहे। मरे हुए नास्तिकों को भी उनकी कब्रों से निकाल कर जलाया जाता रहा। प्रोटेस्टेण्ट शहीदों में सबसे उल्लेखनीय चार प्रोटेस्टेण्ट शहीद, क्रेनमर, रिडली, लेटिमर और हूपर थे। हूपर एडवर्ड के समय के बिशपों में सबसे अधिक उग्र था और वह सबसे पहले अपने बिशप की गद्दी वाले नगर ग्लास्टर में शहीद हुआ। रिडली और लेटिमर इसके बाद एक साथ आक्सफोर्ड में दिवंगत हुए। ऐंग्लिकन धर्मसुधार आन्दोलन का प्रबल समर्थक और प्रार्थना पुस्तक का मुख्य लेखक क्रेनमर सबसे अन्त में शहीद हुआ। उसकी मृत्यु में देरी का कारण पोप द्वारा उसके दण्ड की घोषणा करना था। अपनी मृत्यु से पहले सात बार उसने अपने पूर्व मत को अस्वीकार किया, यह पूर्णरूप से कायरता से नहीं किया गया था। यद्यपि स्वाभाविक रूप से वह एक डरपोक आदमी था, किन्तु इसका कुछ कारण यह था कि वह राजकीय इच्छा के प्रति समर्पण की आवश्यकता में गम्भीर रूप से विश्वास करता था। मृत्यु से पहले उसका साहस वापस लौट आया, उसने शान्त भाव से ज्वालाओं में सबसे पहले अपने उस निकम्मे हाथ को जलाया जिसने उसके पूर्व मतपरिवर्तन के पत्र पर हस्ताक्षर किये थे और अपनी मृत्यु के कार्य से उसने अपनी उस उच्च एवं सुन्दर पुस्तक को नवीन पवित्रता प्रदान की, जो इंग्लिश जनता को उसकी सबसे बड़ी देन थी। अपने सब दोषों के बावजूद, वह एक अच्छा आदमी था। उसे दुर्भाग्य ने उस युग में रहने का दण्ड दिया था जो उसके सौम्य स्वभाव के लिए अतीव निष्ठुर था।

स्मिथफील्ड की ज्वालाओं का उद्देश्य इंग्लैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट मत का विध्वंस करना था, किन्तु इसका उल्टा प्रभाव हुआ। "शहीदों का खून चर्च का बीज है" और इन ज्वालाओं ने मुख्य रूप से इंग्लिश धर्म सुधार आन्दोलन को प्रधान रूप से उन ओछे सम्बन्धों से मुक्त कर दिया, जिनके कारण यह अब तक नीचे दबा हुआ था। इन शहादतों की स्मृति इंग्लिश जनता के मन में दृढ़ बना दी गयी और इसने इस पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ा। इन शहादतों ने रोम और उसके सभी कार्यों के प्रति ऐसी उग्र, कटु, तर्कशून्य घृणा को जन्म दिया, जो उस समय के इंग्लिश जीवन में एक महत्वपूर्ण तत्व बन गयी। फिर भी दूसरे देशों में जो हो रहा था, उसकी तुलना मे मेरी के समय के अत्याचार आसाधारण रूप से हल्के थे, अन्यत्र रोमन अथवा प्रोटेस्टेण्ट मत की कट्टरता के शिकार बने व्यक्तियों की संख्या हजारों में थी। इंग्लैण्ड में अत्याचार के तीन वर्षो में तीन सौ से भी अधिक व्यक्तियों ने अपने प्राण नही गँवाये और ये सब व्यक्ति लगभग एक ही जिले-लन्दन के और दक्षिण पूर्व के जिलों के थे। चेस्टर के एक उदाहरण के अतिरिक्त, ट्रेन्ट के उत्तर में इंग्लैण्ड में कोई वध नही किया गया और एक्जीटर के एक मामले को छोड़कर दक्षिण-पश्चिम में कोई अत्याचार नहीं

हुआ। किन्तु इस युग में और आगे आने वाले लम्बे समय तक लन्दन एवं दक्षिण-पूर्व का भाग इंग्लैण्ड का सबसे प्रभावशाली हिस्सा बना रहा। यह ऐसा क्षेत्र था जहाँ सम्पत्ति सबसे अधिक थी, शिक्षा सबसे अधिक मात्रा में थी और आबादी अधिकतम घनी थी। अतः मेरी के राज्यकाल के मुख्य परिणाम ये थे—पहले किसी भी समय की अपेक्षा सुधारकों के विचारों के प्रति एक व्यापक सहानुभूति, रोम के प्रति एक घोर घृणा का भाव और स्पेन के प्रति बढ़ता हुआ भय।

ये भावनाएँ मेरी की पार्लियामेण्टों में पहले से ही अपने को प्रकट कर रही थीं। ये भावनाएँ अभी तक सरकार का नियन्त्रण करने अथवा इसको बदलने का सपना नहीं लेने लगी थीं, किन्तु इन्होंने इसके कार्य का अधिकाधिक विरोध किया। यह विरोध उस समय उग्र हो गया जब इंग्लैण्ड ने स्पेन का अनुसरण करते हुए अपने को फ्रांस के विरुद्ध ऐसे युद्ध में पाया, जिसमें राजा फिलिप ने अपने को इंग्लिश हितों की पूर्णरूप से उपेक्षा करने वाला प्रदर्शित किया। जब वह अपने लिए विजय प्राप्त कर रहा था, उस समय उसने कैले की महत्वपूर्ण ब्रिटिश बस्ती को फ्रेंच आक्रमण का शिकार होने दिया (१५५८ ई०)। एक कटु और दुःख पूर्ण राज्य में यह सबसे बड़ा अपमानजनक कार्य था। मेरी को इस समय उसका वह पति छोड़ चुका था और धोखा दे चुका था, जिसके लिए उसने इतना बलिदान किया था। वह अपना उत्तराधिकारी प्राप्त करने की आशा में भी निराश हो चुकी थी और उसने यह भी देखा कि वह सर्वोच्च लक्ष्य में विफल हो चुकी है। इन सब परिस्थितियों में मेरी ने बहुत देर में यह अनुभव किया कि एक इंग्लिश महिला और टयूडर होने के नाते वह इंग्लैण्ड के लिए दुःख और अपमान के अतिरिक्त कुछ भी नहीं लायी। वह कैले के पतन के वर्ष में अपने मित्र और सहायक कार्डिनल पोल के साथ लगभग एक ही समय में दिवंगत हुई। उस विषादपूर्ण नवम्बर की रात्रि में "लन्दन में सब चर्चों की घण्टियाँ बज उठीं। मनुष्यों ने प्रसन्नतापूर्वक होली जलायी। सड़कों पर मेजें बिछाकर खाया-पिया और नई रानी के लिए खुशियाँ मनायीं।"

७. एलिज़ाबेथीय समझौता

अब धार्मिक प्रश्न के लिए समाधान ढूँढ़ना पहले की अपेक्षा अधिक कठिन था, क्योंकि इस समय तुलनात्मक दृष्टि से ऐसे व्यक्ति बहुत थोड़े रह गये थे जिनके लिए यह केवल राजनीतिक प्रश्न था, जैसा कि यह हेनरी अष्टम के समय में अधिकांश व्यक्तियों के लिए था। पिछले दो राज्यकालों की घटनाओं ने भावनाओं को बड़ी उग्र सीमा तक उभाड़ दिया था। प्रोटेस्टेण्टों की संख्या तथा पोप की सर्वोच्च सत्ता को धार्मिक विश्वास का एक मन्तव्य समझने वालों की संख्या बढ़ गयी थी और दोनों की संख्या में यह वृद्धि उस मध्यम-मार्गी समूह के आधार पर हुई थी जिसे राष्ट्रीय कैथोलिक कहा जा सकता था। इसके अतिरिक्त महाद्वीप में भी यही बात हो रही थी। प्रति-धर्मसुधार आन्दोलन (Counter Reformation) के नाम से प्रसिद्ध महान् आन्दोलन ने रोम के पोप की आज्ञा का पालन

करने वाले व्यक्तियों को धार्मिक विश्वास के लिए नया जोश प्रदान किया। यह आन्दोलन इस समय पूरे जोर पर था। प्रोटेस्टेण्ट मत में, इस समय कैल्विनवाद के प्रबल और अटल सिद्धान्त उत्कर्ष पर थे और पिछले दो राज्यकालों के समय में देश से भागकर विदेशों में जाने वाले दोनों दलों के निर्वासित व्यक्ति लौट कर आने पर उससे कहीं अधिक उग्र रूप से अपने दलों के पक्षपाती बन गये थे, जितना वे देश से बाहर जाने के समय में थे। यह सम्भव है कि इंग्लैण्ड के दक्षिणी और पूर्वी भाग में प्रोटेस्टेण्टों का बहुमत था। किन्तु उत्तर में और पश्चिम में निश्चित रूप से कैथोलिकों का बहुमत था। फिर भी, इंग्लैण्ड की सुरक्षा के लिए यह आवश्यक था कि उसकी राष्ट्रीय सत्ता को बनाये रखा जाय। राष्ट्रीय एकता बड़ी सुगमता से किसी उग्र राजनीतिक विवाद से विध्वस्त हो सकती थी। एलिज़ाबेथ के राज्यकाल के आरम्भ में राजनीतिक स्थिति अत्यधिक गम्भीर थी। इंग्लैण्ड को एक ओर से तो फ्रांस का खतरा था और दूसरी ओर से स्पेन का, ऐसा प्रतीत होता था कि वह "दो कुत्तों के बीच में एक ही हड्डी की तरह से है।"

नयी रानी ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए असाधारण रूप से उपयुक्त थी। यद्यपि वह केवल २५ वर्ष की थी, तथापि उसने पहले ही प्रत्येक प्रकार के संकट में से अपनी नैया को खेया था। वह चतुर, प्रत्युत्पन्नमति, रहस्यमयी, प्रयुक्त किये जाने वाले साधनों के सम्बन्ध में धर्माधर्म के विचार से शून्य थी तथा बिना अपने को किसी बात के लिए बाँधे हुए दूसरों पर यह प्रभाव डालने में चतुर थी कि वह इस बात से बँधी हुई है। वह अपने विशुद्ध इंग्लिश और वैल्श रक्त पर अभिमान रखती थी। नार्मन विजय के बाद से इंग्लैण्ड पर शासन करने वाला कोई राजा ऐसा नहीं था, जिसमें विदेशी रक्त का इतना कम अंश हो और अपने इंग्लैण्ड को विशुद्ध इंग्लिश बनाये रखना उसकी नीति का अथ और इति था। उसके उन सभी भटकाने वाले मार्गो तथा दिक्परिवर्तनों का उद्देश्य यही था, जिनके साथ उसने अपने को चारों ओर से घेरने वाले खतरों में से अपने (राज्य की) नौका के पथ को प्रशस्त किया था। सम्भवतः उसकी कोई सच्ची धार्मिक सम्मतियाँ नहीं थीं। उसने अपने राज्याभिषेक के समय लन्दन में घोड़े पर जाते हुए उसे भेंट की गयी बाइबिल का प्रभावोत्पादक जोश के साथ चुम्बन किया, किन्तु वह अपने निजी चर्च में ईसा की मूर्ति वाले क्रास को भी रखती थी। वह ये दोनों विरोधी बातें राजनीतिक कारणों से करती थी। यह सम्भव है कि वह स्वभावतः एक सन्देहवादी, और धार्मिक भावनाओं से शून्य थी। किन्तु इसका यह अर्थ था कि उसे दलों के झगड़े सह्य नहीं थे। इसका यह भी अर्थ था कि वह यूकेरिस्ट के पवित्र पर्व (Mass) के दुर्विज्ञेय रहस्य में कोई विश्वास नहीं रख सकती थी।

बहुत से लोगों को यह आशा थी कि मेरी की नीति को पूर्ण एवं आकस्मिक रीति से उलट दिया जायगा। उन्हें इस बात से निराशा हुई कि ऐसा नहीं हुआ। किन्तु मेरी के कानून अब भी कानून थे, कैथोलिक प्रार्थनापद्धतियों में तब तक कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता था, जब तक पार्लियामेण्ट इन्हें गैरकानूनी न बना दे। किसी भी बिशप को यहाँ तक कि लन्दन में अत्याचार करने वाले बोन्नर तक को भी स्वेच्छा पूर्वक दिये गये अपने त्याग पत्र के

अतिरिक्त किसी भी प्रकार पदच्युत नहीं किया गया। धार्मिक समस्या का समाधान पार्लियामेण्ट द्वारा किया जाना था। यह ऐसी पार्लियामेण्ट द्वारा किया जाना था, जो प्रत्यक्षतः बिल्कुल स्वतन्त्र रीति से चुनी गयी हो। मेरी के समय के बिशपों को भी लार्ड सभा के सदस्यों के रूप में वाद-विवाद में स्वतन्त्र रूप से भाग लेने की अनुमति दी गयी। निर्णय किये जाने से पहले लम्बे वाद-विवाद हुए, और दोनों सदनों में लगभग एक खुला मतभेद हो गया। सरकार द्वारा पेश किये जाने वाले कानूनों में प्रस्तावित किये जाने वाले बार-बार के परिवर्तनों के सम्बन्ध में कटु शिकायतें की जाने लगी। अन्त में दो कानून पास किये गये। पहला "सर्वोच्च सत्ता का अधिनियम" (Act of Supremacy) था, इसने चर्च पर राजा के नियन्त्रण को पुनरुज्जीवित किया, किन्तु एलिजाबेथ ने चर्च के सर्वोच्च अध्यक्ष के उस पदवी को स्वीकार करने से इन्कार किया, जिस पर इतना अधिक तीव्र विवाद हो चुका था। उसने गवर्नर या राज्यपाल के निष्प्रभ पद को अधिक तरजीह दी। दूसरा कानून "एकरूपता का अधिनियम" (Act of Uniformity) था, इसने एडवर्ड षष्ठ की दूसरी प्रार्थना पुस्तक की प्रामाणिकता की पुनः स्थापना की। किन्तु इस पुस्तक में कुछ चातुर्यपूर्ण परिवर्तन कर दिये गये। उनका यह प्रभाव हुआ कि यह रोमन कैथोलिकों के लिए इतनी आपत्ति-रहित हो गयी कि एक प्रसिद्ध स्पेनवासी ने यह दावा किया कि इसमें एक भी ऐसा शब्द-नहीं है, जो कैथोलिक मत के प्रतिकूल हो।

एलिजाबेथ चर्च पर अपनी शक्ति का प्रयोग करने में भी उतनी ही सावधान रही, जितनी वह इस शक्ति का स्वरूप निर्धारित करने में रही थी। उसने चर्च के मामलों का वास्तविक संचालन मुख्य रूप से बिशपों पर छोड़ दिया, यद्यपि वह उन पर निरीक्षण रखती थी। उसने हेनरी की भाँति राजकीय सर्वोच्च सत्ता पर बल नही दिया। वह यथा-सम्भव सिद्धान्तों की अति कठोर परिभाषाओं से बचती थी, और एंग्लिकन चर्च का अन्तिम विश्वासपत्र १५६३ ई० में प्रचारित किया गया था। इसके ३९ मन्तव्य, अधिकांश रूप में बड़ी सावधानी से वैसे ही अस्पष्ट रखे गये थे, जैसी अस्पष्ट उसकी संशोधित प्रार्थना-पुस्तक थी। धार्मिक समस्या के उसके समाधान को कैथोलिक, लूथरवादी, ज़्विगलीवादी और कैल्विनवादी कहा जाता है। वह इस अनिश्चितता में आनन्द लेती थी और इसके साथ बड़ी क्रीड़ा करती थी। उसने कहा था कि उसका यह काम नही है कि वह "अपने प्रजाजनों के हृदयों की खिड़कियाँ खोले", और जब तक वे खुले तौर पर सरकार द्वारा स्थापित किये गये नियमों का खुले रूप में प्रत्याख्यान नही करते थे, तब तक वह उन्हें नही छेड़ती थी। उसके राज्यकाल के पहले १७ वर्षों में धार्मिक कारण के आधार पर एक भी व्यक्ति को नहीं मारा गया। यह उस ज़माने में उसकी सरकार के लिए असाधारण प्रशंसा की बात है, जब कि दोनों पक्षों की ओर से उस समय धर्मान्धतापूर्ण अत्याचार पूरे जोर से हो रहे थे।

१५५९ ई० जैसा प्रत्यक्ष समझौता कोई जोश नहीं पैदा कर सकता था; किन्तु इसने शान्ति और एकता को बनाये रखा और इंग्लैण्ड को एक महान् संकट में से अक्षत

एवं विजयी रूप से निकलने में समर्थ बनाया। ज्यों-ज्यों यह संकट विकसित होता गया, इंग्लिश लोगों की उत्कट राष्ट्रीय भावना को एक के बाद दूसरी सफलता मिलती गयी, त्यों-त्यों राष्ट्रीय धर्म ने (जो आरम्भ में धार्मिक की अपेक्षा राष्ट्रीय अधिक था) अपने लिए विश्वास की वास्तविक निष्ठा और जोश को प्राप्त कर लिया। जब स्पेन का आर्मेडा (Armada) इंग्लिश समुद्र तटों के पास पहुँच रहा था और जब इंग्लिश लोगों की चिन्ता इस समाचार से दूर हुई कि यह बेड़ा विघटित और छिन्न-भिन्न किया जा चुका है, उस समय के भीषण भय के दिनों में मनुष्यों ने प्रार्थना के जिन सुन्दर रूपों का प्रयोग किया था, वे रूप इसके बाद से लोगों की ऐसी भक्ति का पात्र बन गये, जो न तो अधूरे दिल वाली थी और न ही बलपूर्वक थोपी गयी थी। इससे ऐंग्लिकन धर्मसुधार आन्दोलन पूर्ण हो हो गया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Fisher, England from the Accession of Henry VII. to the death of Henry VIII. and **Pollard,** England from the Death of Henry VIII. to the Death of Elizabeth supply a good survey. The best modern account is in the Oxford History of England; **Mackie,** Early Tudors and **Black,** Reign of Elizabeth. See also **Lindsay,** History of the Reformation; **Pollard,** Henry VIII. and The Protector Somerset; **Froude.** History of England (Brilliantly written, partial and one-sided, but more vivid than any other book on the period); **R. W. Dixon.** History of the Church of England; **Gairdner,** Lollardy and the Reformation; **Merriman,** Life and Letters of Thomas Crowell; **Gasquet,** Eve of the Reformation, Henry VIII and the Monasteries, and Edward VI. and the prayer book; **Pollard,** Factors in Modern History; **Cunningham,** Growth of English Industry and Commerce; **Smith,** Pre-Reformation England; **Constant,** The Reformation in England; **Powicke,** Reformation in England; **Tawney,** Religion and the Rise of Capitalism; **Chambers,** Thomas More; **Reid.** The King's Council in the North **Dodds**, Pilgrimage of Grace.

• •

६

स्काटलैण्ड का धर्मसुधार आन्दोलन

(REFORMATION)

(१५२८-१५६१ ई०)

जेम्स पंचम, १५१३ : मेरी, १५४२

१. सोलहवीं शताब्दी का स्काटलैण्ड

धर्मसुधार आन्दोलन ने इससे प्रभावित होने वाले सभी देशों में महान् परिवर्तन किये, किन्तु स्काटलैण्ड को अपेक्षा किसी अन्य देश में इसने इतना अधिक शक्तिशाली प्रभाव नहीं डाला। इसने स्काटिश इतिहास के मार्ग को ही बदल दिया। इसने स्काटलैण्ड और इंग्लैण्डके बीच में होने वाले सुदीर्घ संघर्ष को समाप्त कर दिया और कुछ थोड़े समय के लिए इस छोटे और निर्धन देश के घरेलू मामलों को यूरोप के सब बड़े राज्यों के लिए सबसे अधिक महत्व का विषय बना दिया। यदि स्काटिश धर्मसुधार आन्दोलन को १५६० ई० में विजय न प्राप्त होती तो यह सम्भव है कि ब्रिटिश द्वीप समूह का तथा यूरोप का समूचा इतिहास बहुत भिन्न होता।

सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में स्काटलैण्ड की वही दशा थी, जो सैकड़ों वर्षों से चली आ रही थी। यह देश सामन्ती कुलीन सरदारों के, सीमान्त पर हमले करने वाले सरदारों के और हाईलैण्ड के कबीलों के अविरत संघर्ष से विभक्त था। इसके इतिहास का निर्माण उग्र, पारिवारिक, प्रतिशोधपूर्ण लड़ाइयों और निर्दय निजी युद्धों की भीषण कहानियों से भरा हुआ था। इसके योग्यतम राजा भी शान्ति बनाये रखने अथवा सुदृढ़ शासन

स्थापित करनें में कभी समर्थ नहीं हुए थे। इनमें से अधिकांश राजा युवावस्था में ही भीषण मृत्यु का शिकार हो गये थे। वे अपने शिशु उत्तराधिकारियों को छोड़ कर मरते थे और इनके बारे में राज्य के बड़े व्यक्तियों में झगड़े होते रहते थे। अपने अनुयायी सैनिकों की भक्ति का भरोसा रखने वाले बहुसंख्यक कुलीन सरदार प्रायः राजकीय न्याय को चुनौती देने में समर्थ होते थे। स्काटलैण्ड की नाममात्र की पार्लियामेण्ट वस्तुतः कुलीन सरदारों की सभा से अधिक कुछ भी नहीं थी। यद्यपि नगर इस पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजते थे, किन्तु उनका प्रभाव बहुत कम था अथवा बिलकुल नहीं था तथा ज़मीदार भद्रवर्ग की मध्यम श्रेणी ने चिरकाल से इन बैठकों में भाग लेना बन्द कर दिया था। यद्यपि देश किसी भी तरह इतना अभागा नहीं था, जैसा कि उपर्युक्त दृश्य सूचित करते हैं, तथापि यह अत्यधिक निर्धन था और इसके व्यापार तथा उद्योग नगण्य थे। भविष्य के लिए केवल एक ही बात से आशा होती थी, क्योंकि स्काट पहले से ही अच्छे शिक्षित लोग थे। सम्भवतः वे यूरोप की किसी अन्य जनता की अपेक्षा सामान्य रूप से अधिक शिक्षित थे। विद्या के लिए उनका उत्साह नौजवान स्काट लोगों की उस विशाल संख्या से प्रदर्शित होता था, जो विद्या की खोज में जार्ज बुकानन (१५०६-१५८२ ई०) जैसे प्रसिद्ध विद्वान् की भाँति विदेशों में पेरिस में तथा अन्य स्थानों में पर्यटन करती थी। बुकानन की ख्याति यह थी कि वह अपने युग में लैटिन भाषा का सबसे बड़ा विद्वान् था। यह इस तथ्य से भी प्रदर्शित होता था कि स्काटलैण्ड में पहले ही पन्द्रहवीं शताब्दी में स्थापित किये गये तीन विश्वविद्यालय थे। ये विश्वविद्यालय निर्धन थे, इनके साथ बड़ी सम्पत्ति नहीं लगी हुई थी, और इनका दर्जा पेरिस या ऑक्सफोर्ड जैसे विद्या के महान् केन्द्रों से बहुत घटिया था। किन्तु दस लाख से भी कम आबादी के लिए तीन विश्वविद्यालयों का होना बड़ी महत्वपूर्ण बात थी।

इस छोटे उजाड़ देश की विभक्त और कलहों से पीड़ित स्थिति में केवल एक ही वस्तु वास्तविक एकता को बनाये हुई थी। यह वस्तु स्काट लोगों की राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के प्रति उग्र भक्ति थी। इसकी रक्षा के लिए उन्होंने इंग्लैण्ड के साथ लगभग निरन्तर युद्ध किये तथा फ्रांस के साथ स्वामिभक्तिपूर्ण मित्रता की; तीन शताब्दियों में बहुत अधिक खून बहाया था। इंग्लैण्ड के प्रति यह शत्रुता और फ्रांस के साथ यह मैत्री स्काटिश परम्परा की सबसे प्रबल वस्तुएँ थीं। फिर भी, इनसे देश पर बड़ी मुसीबतें आई थीं और सम्भवतः सबसे बड़ी मुसीबत फ्लाडनफील्ड (१५१३ई०) की भयावह विपत्ति थी। इसका मुख्य कारण जेम्स चतुर्थ की यह वीरतापूर्ण इच्छा थी कि वह इंग्लैण्ड द्वारा हमला किये जाने पर फ्रांस की सहायता करे।

अपने मामा हेनरी अष्टम के राज्यकाल के अधिकांश भाग के साथ समकालीन, जेम्स पंचम के (१५१३-४२ ई०) शासन काल में स्काटिश इतिहास की परम्परागत विशेषताएँ बनीं रहीं। जेम्स की नाबालिगी के वर्ष उसके उपद्रवी कुलीन सरदारों की लड़ाई से परिपूर्ण थे। उसके क्रियाशील राज्यकाल के वर्ष उन्हें वशवर्ती बनाने के लिए किये गये उग्र संघर्ष से भरे हुए थे और इस तथ्य के बावजूद कि उसकी माता इंग्लिश राजा की बहिन थी, जेम्स पंचम ने दृढ़तापूर्वक फ्रांस के साथ मित्रता और इंग्लैण्ड के साथ शत्रुता की

परम्परागत स्काटिश नीति का अनुसरण किया। उसकी पहली और दूसरी पत्नियाँ फ्रेंच राजकुमारियाँ थीं, दूसरी राजकुमारी गुईसे की मेरी उस परिवार की सदस्य थी, जिसने फ्रेंच और यूरोपियन इतिहास में महत्वपूर्ण भाग लिया था और जैसा कि पहले बहुत बार हो चुका था, इंग्लैण्ड और फ्रांस के बीच में युद्ध की घोषणा सदैव इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के बीच लड़ाई का संकेत होता था। जब हेनरी अष्टम ने १५२३ ई० में फ्रांस पर हमला किया, तब एक इंग्लिश सेना ने स्काटिश निम्न प्रदेशों का विध्वंस किया और वूल्जे की रिपोर्ट के अनुसार एक विशाल क्षेत्र में "कोई घर, किला, गाँव, पेड़, पशु, अनाज या मनुष्य को सहारा देने वाली कोई वस्तु" शेष नही छोड़ी गयी। १५४२ ई० में जब इंग्लैण्ड ने एक बार पुनः युद्ध छेड़ा, उस समय एक इंग्लिश सेना ने पुनः स्काटलैण्ड के पूर्वी सीमान्त प्रदेशों का विध्वंस किया। उस समय एक स्काटिश सेना का संगठन इंग्लैण्ड की पश्चिमी सीमा के प्रदेशों पर हमला करने के लिए किया गया। किन्तु साल्वे मौस में स्काट लोगों की ऐसी भीषण और अपमानजनक हार हुई कि इसकी घोर लज्जा और पीड़ा ने ही उस अभागे नौजवान राजा को मार दिया, जो अभी ३१ वर्ष का भी नहीं हुआ था। यह बहुत स्पष्ट था कि यह परम्परागत नीति स्काटलैण्ड पर केवल मुसीबतें ही ला रहीं थी।

इस राज्यकाल में, वास्तव में, पहली बार स्काटलैण्ड में एक ऐसे बड़े दल का विकास होने लगा, जो इंग्लैण्ड के साथ मैत्री करने का पक्षपाती था। यह दल अपनी शक्ति कुछ तो उन विद्रोही कुलीन सरदारों से प्राप्त कर रहा था, जो उन्हें वशवर्ती बनाने के जेम्स पंचम के प्रयत्नों के कारण नाराज़ थे, किन्तु उस समय ऐसे भी अनेक स्काट थे, जो सच्चाई के साथ यह अनुभव करते थे कि यह शाश्वत शत्रुता घातक है और इसका अन्त किया जाना चाहिए और यदि हेनरी अष्टम कम अन्यायी, कम अविश्वसनीय, और अपने भाँन्जे के साथ सम्बन्ध में अधिक समझौता करने वाला होता तो दोनों देशों की राष्ट्रीय मित्रता इन्हीं वर्षों में पक्की हो जाती। किन्तु जेम्स पंचम सदैव यह अनुभव करता था कि उसका मामा उसके सरदारों के साथ मिलकर उसके विरुद्ध षड़यन्त्र करता रहता है; क्योंकि इन सरदारों को उसने अपना विरोधी बना दिया था, अतः उसे विवश हो कर चर्च का समर्थन प्राप्त करना पड़ा। उसका प्रमुख परामर्शदाता चतुर, योग्य और अनैतिक आर्कबिशप बेटन था। किन्तु अन्य सभी चर्च के व्यक्तियों के समान बेटन की दृष्टि में नास्तिक हेनरी ऐसा शत्रु था जिसका विरोध अन्तिम दम तक किया जाना चाहिए था, यह इसलिए भी अधिक आवश्यक था क्योंकि नास्तिकता स्काटलैण्ड में खतरनाक जड़ पकड़ने लगी थी। इस प्रकार अभागे जेम्स को चर्च के साथ मित्रता के कारण इंग्लिश तथा प्रोटेस्टेण्ट मत दोनों के साथ शत्रुता करनी पड़ी और इस प्रकार आरम्भ से ही अधिकांश स्काट लोगों की दृष्टि में प्रोटेस्टेण्ट मत का उद्देश्य इंग्लैण्ड के प्रति मित्रता की नीति के साथ सम्बद्ध था। धार्मिक सुधार आन्दोलन का विकास ही इतनी शताब्दियों के संघर्ष के बाद दोनों देशों को ऐसी साझेदारी में लाया, जो कभी न भंग होने वाली थी।

कोई भी अन्य देश स्काटलैण्ड की अपेक्षा धार्मिक क्रान्ति के लिए अधिक तैयार नहीं था, क्योंकि किसी भी अन्य देश में चर्च की इससे अधिक बुरी हालत नहीं थी। इसके पास

छोटे से राज्य की सम्पत्ति का लगभग आधा भाग था। किन्तु इसके विशप अधिकांश रूप में कुलीन परिवारों के सदस्य थे। वे अपने मित्र सरदारों जैसे ही उग्र और उच्छृंखल थे और इसके झगड़ों में झटपट शामिल हो जाते थे। इसके पुरोहित, भिक्षु और साधु अपने अज्ञान और भ्रष्टाचार के लिए प्रसिद्ध थे। इस युग का वह स्काटिश साहित्य जो इंग्लैण्ड के समकालीन साहित्य की अपेक्षा कहीं अधिक सजीव और शक्तिशाली था, इनके विरुद्ध तीव्र व्यंग्योक्तियों से पूर्ण है। इंग्लैण्ड से आने वाले विक्लिफ के मत (Lollardy) का, एक शताब्दी पहले यहाँ खूब स्वागत हुआ था और इस मत का यहाँ कभी अन्त नहीं हुआ था। विक्लिफ का यह मत पश्चिमी प्रदेश की निम्नभूमियों (Western Lowlands) के जिले में प्रबलतम रूप में था। यहीं बाद में नाक्स को अपना सुदृढ़ समर्थन मिला। यह प्रदेश आगे चल कर पवित्र संघवादियों (Covenanters)[1] का गढ़ बन गया। अब लूथरवाद के प्रचारक और लूथरी पुस्तकों के प्रचारक देश में प्रगट होने लगे। १५२५ ई० में स्काटिश पार्लियामेण्ट ने यह आवश्यक समझा कि वह स्वतन्त्र रूप से आयात किये जाने वाले नास्तिक साहित्य के विरुद्ध एक कानून पास करे। इंग्लैण्ड में धर्मसुधार आन्दोलन वाली पार्लियामेण्ट की बैठक से एक साल पहले १५२८ई० में स्काटलैण्ड का पहला प्रोटेस्टेण्ट शहीद पैट्रिक हैमिल्टन चिता पर जलाया गया। नॉक्स इस घटना की तिथि से ही स्काटिश धर्म सुधार आन्दोलन का आरम्भ मानता था। किन्तु इसके कारण नवीन विचारों का प्रसार बन्द नहीं हो गया। यहाँ बहुत से व्यक्तियों को नहीं जलाया गया, किन्तु इसका कारण सम्भवतः मुख्य रूप से यह था कि प्रचारकों का संरक्षण शक्तिशाली कुलीन सरदार कर रहे थे। यह निश्चित है कि जब हेनरी अष्टम रोम से इंग्लिश चर्च का सम्बन्ध विच्छेद कर रहा था, उन्हीं वर्षों में स्काटलैण्ड में भी विचारों के क्षेत्र में हलचल हो रही थी और स्वाभाविक रूप से जो व्यक्ति नये विचारों के साथ सहानुभूति रखते थे, उनकी प्रवृत्ति इस ओर भी थी कि वे इंग्लैण्ड के साथ मैत्री करने के विचार का समर्थन करें।

७. स्काटलैण्ड, इंग्लैण्ड और फ्रांस

जब जेम्स पंचम मरा तो उसकी गद्दी एक शिशु-कन्या को मिली। यह कन्या उसकी मृत्यु से कुछ ही दिन पहले पैदा हुई थी। स्काट लोगों की इस रानी मेरी ने अपना अभागा जीवन इस प्रकार अधिकतम दुःखपूर्ण परिस्थितियों में आरम्भ किया। इसका यह अर्थ था कि अभागे स्काटलैण्ड को एक बार पुनः लम्बी अल्पवयस्कता के सब दुःखों को

---

१. यह शब्द इंग्लैण्ड के गृहयुद्ध में स्काटलैण्ड के उन प्रेसबिटेरियन लोगों के लिए प्रयुक्त होता था, जिन्होंने १६४३ ई० में चार्ल्स प्रथम द्वारा धार्मिक स्वतन्त्रता पर किये जाने वाले आक्रमणों से रक्षा करने के लिए अपना एक पवित्र संघ (Solemn League) बनाया था और अपनी धार्मिक स्वतन्त्रता की रक्षा करने का एक समझौता (Covenant) किया था। चार्ल्स द्वितीय ने १६५१ ई० में तो इस समझौते को मान लिया था, किन्तु बाद में गद्दी पर बैठने पर उसने इसे अस्वीकार कर दिया।

भोगने का दण्ड मिला और इसके साथ ही कुलीन सरदारों के गुटों के बीच में कभी न समाप्त होने वाला संघर्ष भी चलता रहा। किन्तु कुछ बातों में, अब यह संघर्ष भी पहले की अपेक्षा अधिक कटु था। यहाँ प्रायः स्काटलैण्ड को चिरकाल से विभक्त करने वाले दो बड़े वंशों आरान के अर्ल के नेतृत्व में हेमिल्टन लोगों के, तथा एन्गुश के अर्ल के नेतृत्व में डगलस लोगों के वंशों में कभी न विश्राम लेने वाली सामान्य लड़ाई चलती रहती थी। इसके साथ ही अन्य अनेक पारिवारिक झगड़े चल रहे थे। किन्तु इंग्लिश लोगों के समर्थक दल में तथा फ्रेंच लोगों के समर्थक दल में भी संघर्ष था और प्रोटेस्टेण्ट दल तथा चर्च के दल के मध्य में संघर्ष बढ़ रहा था।

हेनरी अष्टम को एक शिशु राजकुमारी का गद्दी पर बैठना एक सुनहला अवसर प्रतीत हुआ। उसने यह योजना बनायी कि मेरी का विवाह उसके पुत्र एडवर्ड के साथ कर दिया जाय। इस समय [illegible] शत्रुता के भीषण परिणामों के प्रति भावना इतनी प्रबल थी कि रानी के संरक्षक तथा प्रोटेस्टेण्ट मत के प्रति झुकाव रखने वाले आरान को प्रेरणा की गयी कि वह एक ऐसी सन्धि के लिए सहमत हो जाय जिसके अनुसार दस वर्ष की अवस्था होने पर युवती रानी का विवाह प्रिन्स ऑफ वेल्स से हो जाय। किन्तु स्काटलैण्ड अभी तक अपनी परम्परागत नीति को इस तरह पूर्ण रूप से उलटने को तैयार नहीं था, देशभक्त स्काट लोग यह अनुभव करते थे कि ऐसे विवाह के बाद स्काटलैण्ड इंग्लैण्ड के एक प्रान्त जैसा बन जायगा। विशेष रूप से चर्च के व्यक्ति इंग्लिश नास्तिकता के प्रभाव के विस्तार की कल्पना से भयभीत थे। कार्डिनल बेटन ने फ्रेंच दल का नेतृत्व ग्रहण किया। एक अतीव दुर्बल व्यक्ति, रानी के संरक्षक आरान को प्रेरित किया गया कि वह इंग्लिश-सन्धि को रद्द कर दे और वह क्रियात्मक रूप से बेटन के नियन्त्रण में आ जाये। अगले चार वर्षों तक (१५४२-४६ ई०), यद्यपि आरान संरक्षक बना रहा, तथापि बेटन स्काटलैण्ड का वास्तविक शासक और इंग्लैण्ड के विरुद्ध उग्र प्रतिरोध का राष्ट्रीय नेता था।

यदि हेनरी ने धैर्य और सहिष्णुता प्रदर्शित की होती तो उसने वहाँ इंग्लिश दल के हाथों को मजबूत किया होता और यदि विवाह न भी होता तो भी वह दोनों देशों में स्थायी मैत्री के बन्धन को शायद स्थापित कर पाता। किन्तु उसका [illegible] विरोध को सहन नहीं कर सकता था। उसने स्काट लोगों को पाठ पढ़ाने का निश्चय किया। उसने पाशविक शक्ति से परिपूर्ण युक्ति का आश्रय लिया, यह सदैव स्वाभिमानी जनता के लिए निकृष्टतम युक्ति होती है। हेनरी के राज्य के शेष भाग में उसकी सेनाएँ स्काटलैण्ड पर उसके द्वारा अब तक सही गयी मुसीबतों की अपेक्षा अधिक बुरी मुसीबतें लाती रहीं। १५८४ ई० में एक इंग्लिश बेड़ा इंग्लिश सेना को लीथ में लाया और एडिनबरा को आग लगा दी गयी। १५४५ ई० में यद्यपि स्काट लोगों को एन्क्रम में सफलता मिली, तथापि एक नये इंग्लिश आक्रमण द्वारा और भी अधिक भीषण मुसीबतें स्काटलैण्ड पर लायी गयीं। मिलरोज़ को तथा अन्य मठों को विध्वंस किया गया, मण्डी वाले ५ शहरों और २४३ गाँवों को जला दिया गया और समूचे जिलों की फसलें मारी गयी। हेनरी इस ढंग से यह दिखाना चाहता

था कि इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की मित्रता वांछनीय वस्तु है। जैसा कि आशा रखी जा सकती थी, इसका एकमात्र परिणाम यह हुआ कि स्काट लोगों ने अपने झगड़ों को समाप्त कर दिया और इसने क्रियात्मक रूप से उस पार्टी को नष्ट कर दिया, जो इंग्लैण्ड के साथ मित्रता का समर्थन करती थी।

हेनरी अष्टम की मृत्यु के बाद १५४४-४५ ई० में अभियान करने वाली सेनाओं का नेतृत्व करने वाला संरक्षक सोमरसेट भी शक्ति की नीति का अनुसरण करता रहा और ऐसा प्रतीत होता था कि अब उसकी सफलता का अधिक अच्छा अवसर है, क्योंकि १५४६ ई० में स्काटिश राष्ट्रीय प्रतिरोध के नेता कार्डिनल बेटन की हत्या कर दी गयी। सोमरसेट स्काटलैण्ड में एक विशाल सेना लेकर इसलिए गया कि वह स्काट लोगों को इस बात के लिए बाधित करे कि वे अपनी युवती रानी को एडवर्ड षष्ठ की वधू के रूप में प्रदान करें और उसने पिंकी में (१५४७ ई०) प्रबल विजय प्राप्त की। किन्तु स्काट लोगों को प्रसन्न करने की इस पद्धति ने उन लोगों के न झुकने के संकल्प को ही पक्का किया। इसने उन्हें बाधित किया कि वे स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता को बचाने के एकमात्र उपाय के रूप में फ्रांस का संरक्षण पाने का प्रयत्न करें। १५४८ ई० में स्काटलैण्ड पर अधिकार करने वाली एक फ्रेंच सेना आयी, किन्तु फ्रांस का राजा अपने संरक्षण का मूल्य चाहता था, अतः एक ऐसी सन्धि पर हस्ताक्षर किये गये जिसके अनुसार छोटी आयु की रानी को सुरक्षा के लिए फ्रांस भेजा जाना था और वहाँ फ्रेंच राजगद्दी के उत्तराधिकारी से उसका विवाह किया जाना था। कुछ स्काटिश सरदारों को इस व्यवस्था से उत्पन्न होने वाले स्काटिश स्वतन्त्रता के संकट का ज्ञान था। किन्तु उस समय कोई दूसरा विकल्प नहीं प्रतीत होता था और स्काटलैण्ड की पार्लियामेण्ट (इस्टेटस्) ने इस सन्धि को सर्वसम्मति के साथ स्वीकार किया। जब छः वर्षीय छोटी रानी अगस्त १५४८ ई० में फ्रांस पहुँची तो फ्रेंच राजा ने कहा 'अब फ्रांस और स्काटलैण्ड एक राज्य हैं' और उस समय ऐसा ही प्रतीत होता था। अगले १२ वर्ष तक स्काटलैण्ड क्रियात्मक रूप से फ्रांस का प्रान्त था, उसकी युवती रानी, जो फ्रेंच माता की कन्या थी, को अपने जीवन के सबसे अधिक प्रभाव ग्रहण करने वाले वर्ष विलासी फ्रेंच दरबार के षड्यन्त्रों के बीच में बिताने पड़े। उसका विवाह एक ऐसे बीमार राजकुमार के साथ कर दिया गया, जिसके साथ वह घृणा करने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं कर सकती थी और वह पूर्ण रूप से उन घटनाओं के सम्पर्क से पृथक थी, जो घटनाएँ उसके अपने देश के जीवन और चरित्र को परिवर्तित कर रही थीं। मेरी के दुःखान्त नाटक का यह दूसरा अंग था।

३. जॉन नाक्स और धार्मिक क्रान्ति

इस बीच में यद्यपि हेनरी अष्टम की अत्याचारपूर्ण नीति ने दोनों देशों के बीच में मैत्री के मौके को कुछ समय के लिए नष्ट कर दिया था और स्काटलैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट उद्देश्य को अदेशभक्तिपूर्ण प्रतीत होने वाला बना दिया था, तथापि प्रोटेस्टेण्ट मत अब भी शक्तिशाली था। जिन वर्षों में हेनरी इस देश का विध्वस कर रहा था, उन्हीं दिनों, १५३८ ई० में यहाँ से भगाया जाने वाला और अब यूरोप में प्रोटेस्टेण्ट मत के केन्द्रों की यात्रा

करने के बाद स्वदेश लौटने वाला एक जोशीला विद्वान, वाग्मी, तथा महान् प्रचारक जार्ज विशर्ट अग्नि की ज्वालाओं के आतंक का सामना करने की हिम्मत रखते हुए कुछ कुलीन सरदारों के संरक्षण में नवीन सिद्धान्तों का प्रचार कर रहा था। १५४६ ई० में वह हैडिंगटन में आया। यहाँ उसके श्रोताओं में एक सच्चा और साहसी, तथा ४० वर्षीय पुरोहित जॉन नाक्स[1] था। यह ऐसा दृढ़ और कभी न झुकने वाले साहस को रखने वाला व्यक्ति था कि जब एक बार वह किसी मत को स्वीकार कर लेता था तो कोई भी आतंक उसे उससे विचलित नही कर सकते थे। किन्तु हैडिंगटन की बस्ती कार्डिनल बेटन के बिशप-क्षेत्र में (Diocese) था और उसके आदेशों से विशर्ट को पकड़ लिया गया और सेन्ट एन्ड्रयूज में कार्डिनल के अपने किले के सामने जला दिया गया। तीन महीने बाद धार्मिक और राजनीतिक उद्देश्यों के साथ वैयक्तिक विद्वेष के सम्मिश्रण की भावना से एकत्र हुए निराशोन्मत्त मनुष्यों का एक समूह जबर्दस्ती किले में घुस गया। उसने कार्डिनल की हत्या की और उसके मृत शरीर को किले की दीवार पर नागरिकों की दृष्टि के सम्मुख टांग दिया। इसके बाद उन्होंने अपने को प्रतिरोध के लिए तैयार किया। रानी के अभिभावक ने उन पर घेरा डाला। क्योंकि उनके कार्य की सामान्य रूप से निन्दा की गयी थी, अतः उन्हें सहायता पाने का कोई आशा नही थी। किन्तु एक वर्ष से भी अधिक समय तक वे मुकाबला करते रहे। इस अवधि में सेन्ट एन्ड्रयूज का किला सब प्रकार के झगड़ों के लिए शरणस्थल बन गया और इसमें नास्तिक के रूप में एक स्थान से दूसरे स्थान तक पीछा किया जाने वाला जॉन नाक्स भी इनके साथ सम्मिलित हो गया। वह उन्हें ऐसे उपदेश देता था जो उन्हें रुला देते थे। यह किला तब तक नहीं जीता जा सका, जब तक कि इसके विरुद्ध भारी तोपों के साथ एक फ्रेंच बेड़े को नहीं लाया गया। इस किले में पकड़े गये अधिकांश निवासियों को फ्रांस ले जाया गया और वहाँ उन्हें फ्रेंच जहाजों में जंजीरों से जकड़े दासों के रूप में काम करने का दण्ड दिया गया। इन जहाजी दासों में जॉन नाक्स भी था। वह उन्नीस महीने तक चप्पू के साथ जंजीरों से बँधा रहा था। इसके बाद वह भाग निकला और उसने इंग्लैण्ड में शरण ली, यहाँ वह एडवर्ड षष्ठ के शासन के समय में एक सबसे अधिक पुरुषार्थी सुधारवादी प्रचारक बन गया। उसे बिशप का पद देने का प्रस्ताव किया गया, किन्तु उसने इसे स्वीकार नही किया। शीघ्र ही उसे रानी मेरी के अत्याचार से बचने के लिए दुबारा भागना पड़ा। अब उसने जेनेवा में शरण ली। यहाँ उसने महान् कैल्विन से धर्मशास्त्र की उस पद्धति को सीखा, जिसे उसे स्काटलैण्ड में शुरू करना था। उस कठोर, निर्भीक, शक्तिशाली आत्मा वाले नाक्स का प्रशिक्षण इस प्रकार का था, इसने स्काटिश जनता के चरित्र के पुनर्निर्माण में तथा साथी देशों की हिस्सेदारी को उत्पन्न करने में प्रमुख भाग लिया था।

जब नाक्स चप्पू चलाने का कठोर परिश्रम कर रहा था अथवा इंग्लैण्ड में प्रचार-कार्य कर रहा था, उस समय स्काटलैण्ड फ्रांस का एक प्रान्त बनाया जा रहा था। फ्रेंच

१. एफ० मेकन ने जॉन नाक्स की एक संक्षिप्त जीवनी लिखी है।

सेनाओं ने स्काटलैण्ड की भूमि को इंग्लिश आक्रान्ताओं से साफ कर दिया, किन्तु उन्होंने स्वयमेव अपने को इस देश का वास्तविक स्वामी बना लिया। फ्रेंच प्रभुता के उत्कर्ष का यह परिणाम हुआ कि १५५४ ई० में फ्रेंच राजमाता गुईसे की मेरी आरान के स्थान पर स्काटलैण्ड की रानी की संरक्षिका बन गयी और आरान को क्षतिपूर्ति के लिए एक फ्रेंच डची प्रदान की गयी। गुईसे की मेरी एक अत्यधिक योग्य स्त्री थी और उसकी नीति स्काटलैण्ड को फ्रांस का अंग बनाने की थी। राज्य के सबसे अधिक महत्वपूर्ण पद फ्रेंच लोगों के हाथ में थे। एडिनबरा के दुर्ग के अतिरिक्त सब प्रमुख किलों में फ्रेंच सेनाएँ थी। यह स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता पर उससे कहीं अधिक गहरा हमला था, जो किसी भी समय एडवर्ड प्रथम के समय से इस पर हुआ था। बहुत थोड़े समय में फ्रांस का भय उतना ही प्रबल हो गया, जितना कभी इंग्लैण्ड का भय था। विरोधी दल ने अपने को संगठित करना शुरू किया और चूँकि गुईसे की मेरी चर्च के साथ घनिष्ठ मैत्री रखने के कारण कट्टर कैथोलिक थी, अतः विरोधी दल का झुकाव स्वाभाविक रूप से प्रोटेस्टेण्ट मत की ओर हुआ। जब हेनरी अष्टम स्काटलैण्ड के निम्न प्रदेशों का विध्वंस कर रहा था, उस समय प्रोटेस्टेण्ट मत देशभक्तिपूर्ण प्रतीत नहीं होता था। किन्तु अब यह देशभक्तिपूर्ण मत बन गया और इससे इसकी प्रगति कहीं अधिक आसान हो गयी। किन्तु दुर्भाग्यवश अब इंग्लैण्ड से सहायता की बहुत आशा नहीं थी, क्योंकि यहाँ उस समय मेरी ट्यूडर का दमन चक्र पूरे जोर से चल रहा था। नये मत के प्रति सामान्य निष्ठा द्वारा इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड को सम्बद्ध करने की कल्पना करने वाले निर्वासित नाक्स को इस समय का दृश्य वस्तुतः बहुत अन्धकारपूर्ण प्रतीत हुआ होगा और ज्यों-ज्यों उसने गुईसे की मेरी द्वारा तथा इंग्लैण्ड में मेरी ट्यूडर द्वारा थोपी जाने वाली मुसीबत पर विचार किया, त्यों-त्यों उसे यह निश्चय हो गया कि इसका एक बड़ा कारण स्त्रियों का शासन है। उसने अपनी पुस्तक "स्त्रियों के पैशाचिक शासन के विरुद्ध प्रथम शंख ध्वनि" (First Blast of the Trumpet against the Monstrous Regiment (Government) of Women) प्रकाशित की। यह एक भीषण गालीगलौज से भरी हुई पुस्तक थी, इसके कारण वह उस एलिज़ाबेथ का और स्काट्स की मेरी रानी का प्रिय नहीं बन सका जिनके साथ उसे बाद में काम करना था।

१५५५ ई० में जॉन नाक्स वापस लौटा और दस महीने के भीतर ही उसने न केवल असाधारण शक्ति और सफलता के साथ नये मत का प्रचार किया, किन्तु उसने एक प्रोटेस्टेण्ट और राष्ट्रीय दल के रूप में संरक्षिका के विरुद्ध विरोधी दल को संगठित करने का एक बड़ा काम किया। संरक्षिका ने उस पर आक्रमण करने का साहस नहीं किया, क्योंकि वह अपनी बढ़ती हुई अप्रियता को जानती थी और नाक्स को कुलीन सरदारों के एवं शक्तिशाली और विकासशील समुदाय का समर्थन प्राप्त था। इनमें प्रमुख लार्ड जेम्स स्टीवर्ट था, यह बाद में मोरे का अर्ल बना। यह युवा रानी का अवैध बड़ा भाई था। यह एक सुदृढ़, स्वामिभक्त और सम्माननीय नौजवान था। वह पक्का प्रोटेस्टेण्ट हो गया और उसे प्रोटेस्टेण्ट उद्देश्य का प्रधान समर्थक बनना था। १५५७ ई० में इन प्रोटेस्टेण्ट कुलीन

सरदारों ने, जो बाद में धर्मसंगति के लार्डों (Lords of the Congregation) के नाम से प्रसिद्ध हुए, अपने को एक गम्भीर समझौते (Covenant) में आबद्ध किया कि वे तब तक चैन नहीं लेंगे, जब तक वे स्काटलैण्ड के राष्ट्रीय धर्म के रूप में सुधार किये गये धर्म की स्थापना नहीं कर लेंगे। यह समुदाय ऐसा केन्द्र बना जिसके चारों ओर प्रोटेस्टेण्ट मत के लिए उत्साह रखने वाले सभी व्यक्ति तथा फ्रेंच आधिपत्य से असन्तुष्ट सभी देशभक्त एकत्र हुए। राष्ट्रीय भावना इनका अधिकाधिक समर्थन कर रही थी और वे प्रोटेस्टेण्ट उद्देश्य के साथ अधिकाधिक मिलते चले जा रहे थे। संरक्षिका ने इस आन्दोलन का दमन करने का प्रयास करने की हिम्मत नहीं की। वस्तुतः उसने १५५८ ई० में एक नास्तिक को जलवाया, किन्तु इस पर इतना अधिक शोर मचा कि वह अधिक दूर तक जाने की हिम्मत न कर सकी। अतः प्रोटेस्टेण्ट प्रचारक पहले की अपेक्षा अधिक साहसी हो गये, वे एडिनबरा में, डण्डी में, तथा अन्य केन्द्रों में सार्वजनिक एवं खुले रूप में प्रचार करने लगे।

४. संकट के वर्ष तथा एंग्लो-स्काटिश मैत्री

ऐसी स्थिति में नवम्बर १५५८ ई० में मेरी ट्यूडर की मृत्यु हुई और उसकी उत्तराधिकारिणी ने इंग्लैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट मत की पुनः स्थापना की। इसने इंग्लैण्ड को स्काटिश राष्ट्रवादी और प्रोटेस्टेण्ट दल का स्वाभाविक मित्र बना दिया। ऐसा प्रतीत होता था कि स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रता इंग्लैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट मत की सफलता पर निर्भर है। न केवल इतना ही, अपितु इंग्लैण्ड की सुरक्षा भी स्काटलैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट दल की सफलता पर अवलम्बित प्रतीत होती थी, क्योंकि हेनरी सप्तम की परपोती स्काट लोगों की रानी मेरी अब सब कैथोलिकों की दृष्टि में इंग्लैण्ड की वैध रानी थी। फ्रांस को अब समूचे ग्रेटब्रिटेन पर प्रभुता पाने का अत्युज्ज्वल दृश्य दिखायी देने लगा। यदि इंग्लैण्ड पर उत्तर की ओर से स्काटलैण्ड से तथा दक्षिण की ओर से फ्रांस से हमला किया जाय और यदि आक्रान्ताओं को बहुसंख्यक इंग्लिश कैथोलिकों के विद्रोह से सहायता मिले तो यह निश्चित प्रतीत होता था कि एलिज़ाबेथ के राजसिंहासन का पतन हो जायगा, उस समय फ्रांस, स्काटलैण्ड और इंग्लैण्ड एक राजमुकुट के नीचे संयुक्त हो जायेंगे। उस समय ब्रिटिश द्वीप समूह में नास्तिकता को भी कुचल दिया जायगा। उस अवस्था में एलिज़ाबेथ को यह प्रतीत होता था कि उसे स्पेन से ही संरक्षण पाने की एकमात्र आशा रखने का अधिकार है। उसका राजा फ्रांस के राज्य का इतना अधिक विस्तार नहीं देखना चाहता था। किन्तु स्पेन के राजा फिलिप के आगे उसके राजनीतिक स्वार्थों में तथा कैथोलिक मत को विजयी होता हुआ देखने की उसकी इच्छा में तीव्र द्वन्द्व था। यह निश्चित था कि वह इंग्लैण्ड को जीतने में फ्रांस की सहायता नहीं करेगा। किन्तु वह तटस्थ रह सकता था। यह उस स्थिति की एक भयावह विशेषता थी कि १५५९ ई० में उसने कैटो-कैम्ब्रेसिस में फ्रांस के साथ सन्धि कर ली थी। उस समय यह सामान्य विश्वास था कि दोनों महान् कैथोलिक राजाओं ने सदा के लिए नास्तिकता का उन्मूलन करने के लिए परस्पर मिलने का समझौता कर लिया है। यदि इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड को दबा दिया जाय तो यूरोप में अन्य कोई

प्रोटेस्टेण्ट शक्ति कैथोलिक मत की ताकतों का मुकाबला करने में किसी देश में समर्थ नही हो सकती।

इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता था कि हर बात स्काटलैण्ड में राष्ट्रवादी और प्रोटेस्टेण्ट विरोधी दल की सफलता पर अवलम्बित है। यदि स्काटलैण्ड को विजय प्राप्त करने में समर्थ बनाया जाय तो वह फ्रेंच नियन्त्रण से मुक्त हो जायगा, इंग्लैण्ड स्पेन की सहायता की आवश्यकता के बिना ही फ्रेंच विजय के संकट से मुक्ति पा जायगा, ऐसा न केवल इन दोनों देशों में होगा, अपितु सारे यूरोप में यही होगा। अतः सारी दुनिया की आँखें स्काटलैण्ड पर लगी हुई थीं। १५५९ ई० में अन्त में इस महान् प्रश्न की परीक्षा हुई। स्काटलैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट विद्रोह की ज्वाला भड़क उठी। निर्वासित देवदूत जॉन नाक्स इसका नेतृत्व ग्रहण करने के लिए स्वदेश वापस लौट आया (मई १५५९ ई०)। उसके आग उगलने वाले और जोशीले भाषणों ने उसके श्रोताओं को उन्मत्त बना दिया और इनसे एक के बाद दूसरे शहर में विध्वंसकारी हिंसा के विस्फोट होने लगे। गुईसे की मेरी ने यह अनुभव किया कि उसे अपनी सत्ता के पूर्ण रूप से भंग होने से पहले डटकर मुकाबला करना चाहिए। उसने सब उपदेशकों को अपने सामने हाजिर होने का आदेश दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रोटेस्टेण्ट भद्र वर्ग के हजारों व्यक्ति अपनी प्रतिरक्षा के लिए सैनिक दलों में एकत्र होने लगे। इसी समय धर्म-सम्मेलन के लार्डों ने राष्ट्रीय विद्रोह का नेतृत्व किया और इन सब का वास्तविक नेता और प्रेरणा देने वाला कठोर एवं निर्भीक प्रचारक था। इंग्लिश सहायता आवश्यक थी। नाक्स इसके लिए राजदूत चुना गया और पहले सहायता देने की प्रेरणा करने के लिए एलिज़ाबेथ के पास भेजा गया। किन्तु एलिज़ाबेथ ने संकोच किया। वह सदैव अपने को कार्य की किसी निश्चित पद्धति के साथ सम्बद्ध करने से घृणा करती थीं। एक साल के अधिकांश भाग तक स्काटिश प्रोटेस्टेण्टों को फ्रांस की अनुशासित सेनाओं के विरुद्ध अपने ही बूते पर लड़ाई लड़नी पड़ी। फिर भी, १५५९ ई० के अन्त तक वे संरक्षिका की मुख्य सेना को लीथ में आवेष्टित करने में समर्थ हो गये। वे उस समय लीथ का घेरा डाले हुए थे, किन्तु इस समय वे बड़ी कठिनाई से अपने को सम्भाले हुए थे, देश के शेष भाग पर उनका किसी भी प्रकार का प्रभुत्व नही था। यदि कुमुक, धन और रसद के साथ एक फ्रेंच बेड़ा लीथ तक पहुँचने में सफल हो जाता तो संरक्षिका के और फ्रेंच तथा कैथोलिक प्रभुता के उद्देश्य के विजयी होने की अब भी सम्भावना थी। २३ जनवरी १५६० ई० के दिन अजनबी जहाजों का एक बेडा फोर्थ नदी के मुहाने पर प्रकट हुआ। किन्तु यह आशा किया जाने वाला फ्रेंच बेड़ा नही था। यह एक इंग्लिश बेड़ा था, जो फ्रेंच लोगों का रास्ता काटने के लिए भेजा गया था। अन्त में एलिजाबेथ ने अपना निश्चय कर लिया था, और इंग्लिश बेड़े ने इस महत्वपूर्ण प्रश्न का निर्णय वैसे ही कर दिया, जैसे उसे भविष्य में अन्य अनेक प्रश्नों का निर्णय करना था। स्काटलैण्ड अपनी स्वतन्त्रता और अपने धर्म के लिए बड़ी मात्रा में इंग्लिश नौसेना का ऋणी है।

इस बीच में स्काट लोगों में से चतुरतम व्यक्ति लेथिंगटन के मेटलैण्ड ने इंग्लैण्ड के

साथ वह सन्धि कर ली, जिसे करने में नाक्स विफल हुआ था। एक इंग्लिश सेना स्काट लोगों की सहायता करने के लिए आगे बढ़ी और वह लीथ के उस घेरे में सम्मिलित हुई, जिसे उन्होंने एक मन्दगामी और कठिन कार्य पाया। किन्तु जब वे इस घिरे हुए नगर के आगे पड़े हुए थे, उसी समय संरक्षिका गुईसे की मेरी की मृत्यु हो गयी और इस बहादुर और योग्य स्त्री की मृत्यु के साथ ही प्रतिरक्षा करने वालों का दिल टूट गया। एक महीने बाद यह घेरा एक सन्धि की शर्तों के साथ समाप्त कर दिया गया। इस सन्धि पर इंग्लैण्ड एवं फ्रांस के और स्काटिश नेताओं के हस्ताक्षर थे। स्काट लोगों की रानी मेरी को इंग्लैण्ड की सहायता से मिलने वाले हथियारों का प्रयोग बन्द कर देना था और जब तक रानी फ्रांस में रहे, तब तक सरकार का कार्य बारह कुलीन सरदारों के आयोग के हाथों में दिया जाना था। एडिनबरा की सन्धि (१५६० ई०) ब्रिटिश द्वीप समूह की जनता के इतिहास में एक युग को सूचित करती है। पहली बार इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड ने एक समान स्वार्थ में सहयोग दिया था। उनके युद्धों की लम्बी कहानी समाप्त हो गयी। इसके बाद फिर कभी इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड विरोधी राष्ट्रों के रूप में युद्ध भूमि में एक-दूसरे के विरुद्ध व्यूहबद्ध नहीं हुए। इंग्लिश सेना शान्तिपूर्वक खुशियाँ मनाती हुई देहाती प्रदेश में से वापस लौट गयी और सभी स्काटिश देशभक्त इस बात के लिए इंग्लिश सेना की कृतज्ञ थे, जैसा कि वे उससे पहले किसी इंग्लिश सेना के कृतज्ञ नही रहे थे।

५. स्काटलैण्ड में धार्मिक समस्या का समाधान

अब स्काटिश नेताओं के लिए यह सम्भव था कि वे धार्मिक क्रान्ति को पूर्ण एवं विधिवत् रीति से सफल बनाएँ। एस्टेट्स की एक बैठक ने नाक्स द्वारा तथा अन्य पुरोहितों द्वारा तैयार किया गया "विश्वास का मन्तव्यपत्र" विधिपूर्वक स्वीकार किया। पोप के अधिकारक्षेत्र को समाप्त कर दिया गया और प्रार्थना के पर्व (Mass) के मनाने पर पाबन्दी लगा दी गयी। इसके बाद से कैल्विनवादी प्रोटेस्टेण्ट मत स्काटलैण्ड का राष्ट्रीय धर्म हो गया। यह बात उल्लेखनीय है कि इस निर्णय के बाद कोई अत्याचार नहीं किया गया, कैथोलिकों को नहीं जलाया गया। पुराने चर्च के बिशपों और मठाधीशों के पास अधिकांश रूप में उनकी जमींदारी बनी रही। कानून के बावजूद, देश के कई भागों में पुराने धर्म का पालन होता रहा, हाईलैण्ड्स के पर्वतीय प्रदेशों के कुछ हिस्सों में आज तक इसकी निर्विवाद प्रभुता बनी हुई है। किन्तु इस समाधान को पूरा करने के लिए केवल यही आवश्यक नहीं था कि धर्म की स्पष्ट व्याख्या की जाय, अपितु यह भी आवश्यक था कि नये चर्च के संगठन को निश्चित किया जाय। इस प्रयोजन को पूरा करने के लिए जॉन नाक्स ने 'अनुशासन की पुस्तक' लिखी, यह सम्भवतः उसका सबसे बड़ा कार्य है। इसमें न केवल चर्च के संगठन का, अपितु समूचे राष्ट्र के जीवन का प्रतिपादन है। इसमें राष्ट्रीय शिक्षा की एक अतीव प्रबुद्ध योजना सुझायी गयी है। यह उस समय विश्व में विद्यमान किसी भी अन्य योजना से आगे बढ़ी हुई थी और इसमें निर्धन लोगों की सहायता की एक पद्धति का भी वर्णन है। इस पुस्तक में बाद में विकसित होने वाले चर्च के शासन की पूर्ण प्रेसबिटेरियन पद्धति की

व्यवस्था नहीं है, यह पद्धति अगली पीढ़ी में, मुख्य रूप से एन्ड्रयू मैल्विले का कार्य था। किन्तु इस पुस्तक में यह प्राविधान किया गया था कि प्रत्येक पैरिश का पुरोहित अपनी जनता द्वारा चुना जायगा और अपने चर्च के शासन में उसकी सहायता भिक्षु न बने हुए सांसारिक स्थविरों (Lay elders) द्वारा चुनी गयी एक संस्था चर्च[1] की निम्नतम धर्मसभा कर्कसैशन (Kirk Session) द्वारा की जायगी। कर्कसैशन का कार्य यह था कि वह समुदाय के नैतिक आचरणों की और पारिवारिक जीवन की देख-भाल करे। चर्च की पद्धति के शीर्ष स्थान में एक सामान्य असेम्बली थी, उसमें स्थविर और पुरोहित सम्मिलित होते थे। यह संस्था स्काटलैण्ड में ज्ञात अब तक किसी भी वस्तु की अपेक्षा समूचे राष्ट्र का स्पष्ट रूप से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व करने वाली थी। इस प्रकार नाक्स ने चर्च की शासन पद्धति पर ही विचार नहीं किया, अपितु उसने राष्ट्रीय जीवन के पूर्ण पुनः संगठन पर विचार किया। स्काट लोगों को अब ऐसे सुशिक्षित पुरुषों का राष्ट्र बनना था, जो एक प्रशिक्षित पुरोहित वर्ग से पथ प्रदर्शन पा रहा था और अपने आध्यात्मिक मामलों का नियन्त्रण कर रहा था।

एस्टेट्स (स्काटलैण्ड की पार्लियामेण्ट जैसी संस्था) ने "अनुशासन की पुस्तक" को स्वीकार नहीं किया। इसका मुख्य कारण यह था कि इसको तब तक क्रियात्मक रूप नहीं दिया जा सकता था, जब तक पुराने चर्च की सम्पत्ति का प्रयोग नये चर्च के संगठन के लिए न किया जाय। स्काटिश कुलीन सरदारों का कोई इरादा नहीं था कि इस सम्पत्ति का इस प्रकार से उपयोग करने की अनुमति दी जाय। वस्तुतः इस सम्पत्ति का अधिकांश भाग इसके बाद की पीढ़ी में कुलीन सरदारों ने चुपचाप हथिया लिया था। इस प्रकार नाक्स की कुछ अत्यधिक प्रबुद्ध योजनाएँ त्रियान्वित नहीं की जा सकीं। पादरियों के निर्वाह के लिए केवल अत्यल्प वेतन छोड़ा गया। फिर भी नाक्स की योजना की अधिकांश बातों को क्रियात्मक रूप में परिणत किया गया और अन्त में इस पद्धति का विकास एन्ड्रयू मेल्विले की 'अनुशासन की द्वितीय पुस्तक' में किया गया। इसे १५८१ ई० में स्वीकार किया गया और १५९२ ई० में इसे स्काटिश पार्लियामेण्ट की औपचारिक स्वीकृति प्राप्त हुई। इस पद्धति ने ही आधुनिक स्काटलैण्ड के मानस का निर्माण किया है।

नई पद्धति को पूर्ण बनाने में देरी का एक कारण यह था कि युवती रानी १५६१ ई० के ग्रीष्मकाल में स्काटलैण्ड लौट आयी। उसका निर्बल पति मर चुका था, अतः उसे फ्रांस की गद्दी से उतरना पड़ा था, उसकी माता के गुईसे परिवार का प्रभाव कुछ समय के लिए फ्रांस में समाप्त हो चुका था। अतः वह अभिमानिनी, सुन्दरी, भावुक लड़की उस ऊबड़खाबड़ देश में लौट आयी, जिसके बारे में उसे बहुत कम ज्ञान था, जिसे वह न तो समझ सकती थी और न ही जिसके साथ सहानुभूति रख सकती थी; क्योंकि वह ठीक ऐसे समय पर लौटी, जब इस देश ने एक महान परिवर्तन को स्वीकार किया था। वह फ्रेंच दरबार के लालित्यों से और साम्राज्य की उज्ज्वल आशाओं से एक बियाबान देश की

---

१. स्काटलैण्ड में चर्च को कर्क (Kirk) कहा जाता था।

नैराश्यपूर्ण राजधानी में आयी थी, जहाँ उद्धत स्काटिश कुलीन सरदार उस पर धौंस जमा रहे थे और वह उग्र सुधारक उसे उपदेश दे रहा था, जो किसी से डरता नहीं था, जो दरबार के शिष्टाचार के प्रति सहिष्णुता नहीं रखता था तथा जिसने "स्त्रियों की राक्षसी सेना" के बारे में अपनी सम्मति नहीं बदली थी। अगले वर्षों की रोमांचक और दुःखपूर्ण कथा इंग्लिश और यूरोपियन इतिहास का भी उतना ही विषय है, जितना स्काटिश इतिहास का। अगले अध्याय में इसका वर्णन किया जायगा।

किन्तु मेरी की सूक्ष्म और साहसपूर्ण गतिविधियों ने चर्च की समस्या के समाधान को कुछ काल के लिए स्थगित कर दिया। जब वह इंग्लैण्ड में एलिज़ाबेथ के कैदी के रूप में सुरक्षित रूप से कारावास में बन्दी थी, उस समय भी उसने दलीय संघर्ष की जिस विरासत को छोड़ा था, उसके कारण बहुत से प्रश्नों का अन्तिम निर्णय नहीं हुआ था। यद्यपि सुधारक दल ने अपने उत्कर्ष को बनाये रखा, तथापि वे सुधारक चर्च के शासन तथा चर्च के वित्तसम्बन्धी प्रश्नों का अन्तिम समाधान प्राप्त करने में कभी सफल नहीं हुए। कुलीन राजनीतिज्ञों में कुछ ऐसे थे जिन्हें प्रेसबिटेरियनवाद[1] की लोकतन्त्रीय पद्धति से कोई प्रीति नहीं थी, वे बिशप पद्धति को अधिक तरजीह देना चाहते थे। वे यह युक्ति दे सकते थे कि बिशप पद्धति के कारण इंग्लैण्ड के साथ सम्बन्ध आसान हो जायेंगे। मेरी के पुत्र जेम्स षष्ठ (बाद में इंग्लैण्ड के जेम्स प्रथम) के बालिग होने के बाद ही एक समझौता सम्भव हो सका। फिर भी, उसे स्पष्ट रूप से कभी स्वीकार नहीं किया गया। राजा प्रेसबिटेरियन पद्धति को पसन्द नहीं करता था। वह जितना बूढ़ा होता गया, उतना ही अधिक इसे नापसन्द करने लगा। वह इस पद्धति द्वारा लोगों को दी जाने वाली शक्ति को अच्छा नहीं समझता था। वह सांसारिक नियन्त्रण में पूर्ण स्वतन्त्रता के उस दावे से घृणा करता था जिसे स्काटलैण्ड के चर्च के पुरोहितों ने साहसपूर्वक प्रस्तुत किया था। उसे यह बात बताये जाने में सख्त नाराजगी थी (जिसे एन्ड्रयू मेलविले बताने में संकोच नहीं करता था) कि आध्यात्मिक मामलों में उसे अपने किसी प्रजाजन की अपेक्षा अधिक अधिकार नहीं है, किन्तु वह केवल भगवान का सादा "वशंवद" है। इंग्लिश राजगद्दी पर बैठने से पहले और उसके बाद वह अनथक रूप से ऐसे प्रयत्न करता रहा कि वह स्काटलैण्ड में बिशप पद्धति को शुरू करे। यद्यपि धमका कर और भ्रष्टाचार द्वारा उसे कुछ अस्थायी सफलता मिली, तथापि वह स्काट लोगों की निष्ठा को उस पद्धति से हटाने में कभी सफल नहीं हुआ, जो नाक्स ने उन्हें प्रदान की थी।

---

१. प्रेसबिटरी (Presbyterey) प्रेसबिटरों अथवा स्काटलैण्ड के चर्च के पुरोहितों की परिषद् को कहते हैं। इस शब्द का प्रयोग ऐसे धार्मिक न्यायालय (Ecclesiastical Court) के लिए भी होता है, जिसका निर्माण सब पुरोहितों (Ministers) तथा जिले के प्रत्येक पेरिश से आने वाले एक या दो प्रेस बिटरों द्वारा होता था। सिनड (Synod) सामान्य रूप से चर्च के किसी भी ऐसे धार्मिक सम्मेलन को कहते हैं, जिसमें धर्म-विषयक प्रश्नों पर विवाद एवं निर्णय किये जाँय। स्काटलैण्ड के प्रेसबिटेरियन चर्च में इसका एक विशेष अर्थ प्रेसबिटरी से ऊँची स्थिति रखनेवाला धार्मिक न्यायालय भी है।

नाक्स ने स्काटलैंड के चर्च की सभाओं द्वारा तथा सामान्य असेम्बलियों के द्वारा और बाद में विकसित होने वाली प्रेसविटरियों तथा सिनडों (Synods) द्वारा स्काटिश जनता को परामर्श के लिए आमन्त्रित किया था; नगरवासियों ने, किसानों ने और देहात के भद्र लोगों ने महान् परिवर्तनों में भाग लेने के अधिकार को मूल्यवान समझ लिया था अत: वे अब इस अधिकार को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे। स्काट लोगों ने कई शताब्दियों से राष्ट्रीय स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए जिस चुभने वाली ज़िद् को प्रदर्शित किया था, उसी को अब वे चर्च के शासन की अपनी स्वतन्त्र पद्धति की प्रतिरक्षा के लिए प्रदर्शित करने वाले थे। इसके अतिरिक्त धर्मशास्त्रीय प्रश्नों के लम्बे विवाद के कारण वे कुशाग्र बुद्धि और तर्क करने वाली जनता बन गये थे। उन्हें आसानी से नहीं ठगा जा सकता था। इसके बाद से स्काटलैण्ड का अर्थ उपद्रवी सरदारों का एकमात्र समूह नहीं रहा; अब कुलीन सरदारों का प्रभाव अधिकाधिक रूप में घटने लगता है। इसका यह अर्थ है कि स्काटिश राष्ट्र एक लोकतन्त्रीय और शिक्षित राष्ट्र है, वह निर्धन, अभिमानी, झगड़ालू, जिद्दी, बुद्धिमान और गम्भीर प्रश्नों में गहरी दिलचस्पी रखने वाला है। यह वह राष्ट्र था जिसकी रचना जॉन नाक्स ने की थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Hume Brown or Andrew Lang. History of Scotland; **Lindsay,** History of the Reformation; **Hume Brown,** Life of John Knox; **Lang,** Knox and the Reformation; **Pollard,** Factors in Modern History. There is a masterly Chapter on the Reformation in Scotland by **F. W. Maitland** in the Cambridge Modern History. See also **Rait,** Relations between England and Scotland; **Mackie,** Early Tudors; **Black,** Reign of Elizabeth.

• •

७

एलिज़ाबेथ, स्काटलैण्ड की रानी मेरी, और फिलिप द्वितीय

(१५६१-१५८७ ई०)

१ प्रतिधर्मसुधार आन्दोलन तथा १५५९ ई० में यूरोप की राजनीतिक स्थिति

सोलहवीं शती के मध्य में धर्मसुधार आन्दोलन (Reformation) यूरोप में बहुत कम बाधा के साथ आगे बढ़ता रहा। किन्तु उस समय प्राचीन चर्च के नेताओं ने परिस्थिति के खतरे को अनुभव करना, अपने घर को व्यवस्थित करना और धार्मिक क्रान्ति के विरुद्ध संघर्ष में अपने साधनों को एकत्र करना आरम्भ किया। इस आन्दोलन को प्रतिधर्मसुधार आन्दोलन कहा जाता है। इसके कारण अनेक उग्र और अव्यवस्थित युद्धों की ऐसी परम्परा शुरू हुई, जो एक शताब्दी तक चलती रही। अगली आधी शताब्दी में इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड में होने वाले सभी षड्यन्त्र, विद्रोह और साजिशें इस महान संघर्ष के अंशमात्र थे। स्पेनिश बेड़े या आर्मेडा के रूप में चरम उत्कर्ष प्राप्त करने वाला स्पेन के विरुद्ध इंग्लैण्ड का संघर्ष इसी प्रकार का था, एक नए राष्ट्र के निर्माण को करने वाला मूक विलियम के नेतृत्व में डच लोगों का उग्र संघर्ष भी ऐसा ही था और फ्रांस में धर्म के अव्यवस्थित और रक्तपात पूर्ण युद्ध भी ऐसे ही थे। ये सब आन्दोलन घनिष्ठ रूप से एक दूसरे के साथ सम्बद्ध है। ब्रिटिश-द्वीप-समूह के एक अतीव संकटपूर्ण युग में इन द्वीपों में होने वाली घटनाओं को तब तक पूरा नहीं समझा जा सकता, जब तक समग्र रूप से इस विशाल संघर्ष के घटनाचक्र और स्वरूप का कुछ ज्ञान न हो।

प्रतिधर्मसुधार आन्दोलन के चार मुख्य पहलुओं पर ध्यान दिया जाना चाहिए। पहला तो यह पहलू था कि रोमन कैथोलिक सिद्धान्तों की ऐसी स्पष्ट और इस प्रकार की व्याख्या की गयी कि प्रोटेस्टेण्ट मत के साथ इसका समझौता होना असम्भव हो गया। यह भी असम्भव था कि चर्च की उन विकृतियों को दूर करने के लिये समग्र रूप से एक सफल प्रयास किया जाय, जिन विकृतियों ने मुख्य रूप से प्रोटेस्टेण्ट विद्रोह को उत्पन्न किया था और जिन्हे सब अच्छे कैथोलिक स्वीकार करते थे तथा जिन पर वे दुःख प्रकट करते थे। यह प्रयास मुख्य रूप से ट्रैन्ट की कौसिल का कार्य था। लम्बे मध्यान्तरों के साथ इसकी बैठकें १५४२ से १५६६ ई० तक पच्चीस वर्षों की अवधि में होती रही थी। इसका मुख्य कार्य १५४६, १५६२, तथा १५६६ ई० की बैठकों में किया गया था। आरम्भ में इसका इरादा ईसाइयत की एकता को पुनः स्थापित करना था। इस परिषद् में केवल कट्टर रोमन कैथोलिक सम्मिलित हुए थे। इसका यह परिणाम हुआ कि दोनों धर्मो के बीच का अन्तर निश्चित और अटल बन गया और इससे कैथोलिक दल को इन भेदों का स्पष्ट विचार और लक्ष्य की ठोस एकता प्राप्त हुई। दूसरी बात यह थी कि कैथोलिक देशों में नास्तिकता के अधिक प्रसार को पोप के (इन्क्विजिशन) (Papal Inquisition) के कार्य से रोका गया। यह मुख्य रूप से इटली मे हुआ, किन्तु इसने अन्य देशों पर भी प्रभाव डाला। स्पेन का इन्क्विज़िशन बिलकुल पृथक् था। यह स्पेन के राजा के नियन्त्रण में था। इसने स्पेन के लिये तथा स्पेन के वशवर्ती प्रदेशों के लिये यही कार्य कहीं अधिक उग्रता से किया। सभी कैथोलिक देशों में इस शती के उत्तरार्ध में भीषण दमन चल रहा था और प्रोटेस्टेण्ट देश शीघ्र ही इसका अनुसरण करने लगे। तीसरी बात यह थी कि स्पेनवासी एक व्यक्ति इग्नेशियस लायोला द्वारा जेसुइटों (Jesuits)[1] के एक उल्लेखनीय सम्प्रदाय की स्थापना ने रोमन चर्च को एक अतीव शक्तिशाली साधन प्रदान किया। १५३९ ई० में स्थापित किया गया 'ईसा का समाज' नामक सम्प्रदाय ऐसे व्यक्तियों का समूह होता था जो पूर्ण आज्ञापालन का व्रत लेता था और प्रत्येक सम्भव साधन से कैथोलिक उद्देश्य को आगे बढ़ाने में लगा रहता था। इनकी संख्या बड़ी तेजी से बढ़ी। वे तेजी से सब देशों में फैल गये। शिक्षा की अपनी प्रशंसनीय पद्धति के कारण प्रोटेस्टेण्ट देशों मे भी इन्होने नौजवानों पर महान् प्रभाव प्राप्त कर लिया। शासन करने वाले राजाओं के पाप स्वीकार कराने को साधन होने के कारण वे चर्च के हित की दृष्टि से राजनीति के घटनाक्रम को भी प्रभावित करा सकते थे। धर्म प्रचार में उन्होने

---

१. १६वी शताब्दी में लायोला नामक व्यक्ति ने पुरोहितों के एक नवीन सम्प्रदाय 'ईसा के समाज' (Society of Jesus) की स्थापना की थी। इसके सदस्य जेसुइट (Jesuit) कहलाते थे। इस सम्प्रदाय की स्थापना का उद्देश्य धर्म सुधार आन्दोलन के आक्रमणों से रोमन कैथोलिक धर्म की रक्षा करना तथा गैर ईसाई जातियों और देशो में ईसाइयत का प्रचार करना था। अपने कठोर अनुशासन, संगठन और गुप्त कार्यवाहियों के कारण यह शीघ्र ही बहुत शक्तिशाली संस्था बन गई। रोमन कैथोलिक देशों में इसका बड़ा प्रभाव था और प्रोटेस्टैण्ट धर्म वाले देशों में इससे बड़ा खतरा पैदा हो गया। अतः १५७९ ई० में इंगलैण्ड में तथा १५९४ ई० में फ्रांस में इस पर प्रतिबन्ध लगा दिये गये। प्रोटेस्टैण्ट देशों मे जेसुइट अपनी कार्यवाहियों के लिये इतने अधिक बदनाम हो गये कि जेसुइट का अर्थ धोखेबाज, मक्कार और झूठा समझा जाने लगा।

भारत में और चीन में तथा नयी दुनियाँ की जंगली जातियों में प्राय: अविश्वसनीय वीरता प्रदर्शित की और उनके दूतों ने कैथोलिक धर्म के लोगों के विश्वास को पुष्ट करने के लिये तथा अपने मत के नये अनुयायी बनाने के लिये प्रोटेस्टेण्ट देशों में कभी भी चिता पर जलने में तथा फांसी के तख्ते पर झूलने में संकोच नहीं किया। अन्त में पुराने धर्म के प्रति निष्ठा रखने वाले राजाओं को यह प्रेरणा दी गयी कि वे इसकी विजय के लिये अपनी शक्ति का प्रयोग करें तथा उन्हें नास्तिकता के विरुद्ध महान् युद्ध में एकत्र करने का प्रत्येक प्रयत्न किया गया।

१५५९ ई० में यूरोप के दो सबसे बड़े राजाओं—फ्रांस के हेनरी द्वितीय तथा स्पेन के फिलिप द्वितीय[1] ने कैटो-कैम्ब्रेसिस की सन्धि द्वारा सुदीर्घ फ्रैंको-स्पेनिश युद्धों को जब समाप्त किया तो उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि कैथोलिक धर्म की विजय सन्निकट है, क्योंकि यूरोप में कोई ऐसी शक्ति नहीं थी, जो इन दोनों देशों के संयुक्त हो जाने पर इनका विरोध कर सकती। ये दोनों कट्टर कैथोलिक थे। दोनों देश १५५९ ई० में अपने प्रदेशों में अत्यधिक निर्दयतापूर्ण अत्याचार व आग और तलवार से नास्तिकता का समूलोन्मूलन करने में लगे हुए थे, ऐसे अत्याचार यूरोप ने अभी तक नहीं देखे थे। दूसरी ओर प्रोटेस्टेण्ट निर्बल तथा विभक्त थे। बहुसंख्यक जर्मन राजाओं की सैनिक शक्ति नगण्य थी। इसके अतिरिक्त वे लूथरवाद और कैल्विनवाद के बीच में हो रहे संघर्ष से विभक्त हो रहे थे और बहुमत रखने वाले लूथर मतानुयायी राजा सोचते थे कि वे बिलकुल सुरक्षित हैं तथा वे संकटपूर्ण साहसिक कार्यों में पड़ने के इच्छुक नहीं थे। स्वीडन और डेनमार्क भी इस संघर्ष से पृथक् खड़े थे। १५५९ ई० में इंग्लैण्ड ही एकमात्र ऐसी बड़ी शक्ति थी, जहाँ प्रोटेस्टेण्ट मत को सरकारी तौर से स्थापित किया गया था। किन्तु एलिज़ाबेथ का बिलकुल ताज़ा समझौता खतरनाक स्थिति में था और इंग्लैण्ड की आबादी का बहुमत अब भी कैथोलिक था। स्काटलैण्ड में प्रोटेस्टेण्ट सशस्त्र विद्रोहियों का समूह थे और सरकार कैथोलिक लोगों के हाथ में थी। रानी स्वयमेव कैथोलिक थी। आयर्लैण्ड में अराजकता फैली हुई थी। किन्तु जनसंख्या का अधिकांश भाग अब भी कैथोलिक था और इसे इंग्लैण्ड के लिये कांटा बनाया जा सकता था। नीदरलैण्ड में असन्तोष की गड़गड़ाहट थी; किन्तु धार्मिक न्यायालय विशाल समूहों में नास्तिकों को जलाने में लगे हुए थे। एक पूर्ण कैथोलिक विजय की सम्भावनाएँ अतीव उज्ज्वल प्रतीत हो रही थीं। इन परिस्थितियों में एलिज़ाबेथ का राज्य काल आरम्भ हुआ। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि ऐसे खतरों में वह बड़े सावधान पगों के साथ चली और उसने किसी एक निश्चित कार्यपद्धति के साथ अपने को सम्बद्ध करने में संकोच किया।

किन्तु इन खतरों के विरुद्ध दो संरक्षण (Safeguards) थे। पहला फ्रांस, और स्पेन की प्रतिस्पर्द्धा थी। दोनों ब्रिटेन में प्रभुत्व पाने की आशा रखते थे और इनमें से कोई भी दूसरे को खुली छूट देने का इच्छुक नहीं था। १५५९ ई० में, ऐसा प्रतीत होता था कि फ्रांस के लिये इसका सर्वोत्तम अवसर है, क्योंकि वह स्काटलैण्ड को उसकी रानी के माध्यम से नियन्त्रण

---

१ विदेशी राजनीतिज्ञों की पुस्तक माला में एम० ए० एस० ह्यूम द्वारा लिखित फिलिप द्वितीय की एक संक्षिप्त जीवनी है।

करने की तथा इंग्लिश राजगद्दी के लिये मेरी के दावे के आधार पर इंग्लिश कैथोलिकों की सहायता से, इंग्लैण्ड को विजय करने की आशा कर सकता था। इस सम्भावना ने फिलिप द्वितीय को अतीव भयातुर बना दिया। उसने फ्रेंच शक्ति में ऐसी वृद्धि को देखने के स्थान पर यह अधिक पसन्द किया कि वह अपना संरक्षण एलिज़ाबेथ को प्रदान करे। एलिज़ाबेथ ने उसे इसके लिए यह ढोंग करते हुये प्रोत्साहित किया कि वह शायद एक कैंथोलिक पति से शादी कर ले अथवा पुन. कैथोलिक मत को ग्रहण कर ले। फ्रांस और स्पेन की इस ईर्ष्या पर निर्भर रहते हुए ही एलिज़ाबेथ के लिये तथा स्काटलैण्ड के प्रोटेस्टेण्ट नेताओं के लिये, १५६० ई० की विजय प्राप्त करना तथा परस्पर झगड़ रहे दो शक्तिशाली कुत्तों के जबड़ों के बीच में से स्काटलैण्ड की हड्डी को छीनना सम्भव हुआ। कुछ समय के लिये (किन्तु केवल कुछ समय के लिये ही) दोनों देशों की स्वतन्त्रता इस घटना से सुरक्षित हो गयी।

इस परिस्थिति में दूसरा अनुकूल तत्व यह था कि फ्रांस तथा स्पेन दोनों अपने झगड़ों मे उलझे हुए थे। हेनरी द्वितीय की मृत्यु (१५५९ई०) से फ्रांस में राजदरबार दो प्रतिद्वन्द्वी गुटों-गुइसों (Guises या मेरी स्टीवर्ट के चाचों) और बूर्बो (Bourbons) लोगों में विभक्त हो गया था। प्रोटेस्टेण्ट दल की संख्या देश में अल्पतम थी। फिर भी, यह बहुत प्रभावशाली था, क्योंकि इसमें बूर्बों तथा अन्य कुलीन सरदार सम्मिलित थे और फ्रांस के बड़े व्यापारी नगरों में यह गतिशील था। धार्मिक और राजनीतिक कारणों के आधार पर गृहयुद्ध सन्निकट था। यद्यपि एलिज़ाबेथ विद्रोहियों को पसन्द नही करती थी, तथापि उसने फ्रेंच प्रोटेस्टेण्ट नेताओं के साथ सम्पर्क बनाए रखा। जब वस्तुत: धर्म के युद्ध' (Wars of Religion) १५६२ ई० में आरम्भ हुए तो उसने उनकी सहायता के लिए एक अँग्रेज़ी फौज भेजी। उसने इस बात की परवाह नही की कि वे जीतें या न जीतें। यह पर्याप्त था कि फ्रांस लड़ाई में लगा रहे। एलिज़ाबेथ सबसे अधिक अविश्वसनीय मित्र थी। किन्तु फ्रेंच ह्यूगेनाट उसके लिए अतीव उपयोगी थे। उन्होंने अगले चालीस वर्षों में आठ गृहयुद्ध लड़े और इस प्रकार फ्रांस के खतरे को अत्यधिक मात्रा में कम कर दिया।

स्पेन की मुसीबतें फ्रांस की मुसीबतों जैसी गम्भीर नहीं थीं। किन्तु वे इतनी गम्भीर अवश्य थी कि वे सावधान, मन्दगामी फिलिप द्वितीय को इस बात का अनिच्छुक बना दें कि वह इंग्लैण्ड की विजय जैसे कठिन साहसिक कार्यों को आरम्भ करे। इन्होंने उसे इस बात के लिए भी तैयार कर दिया कि वह एलिज़ाबेथ की चालाकियों और झूठों से स्वयमेव ठगा जावे। उसकी बड़ी मुसीबतें दो प्रकार की थीं। एक ओर उसे भूमध्यसागर में तुर्की की नौसैनिक शक्ति का सामना करना था। दूसरी ओर वह नीदरलैण्ड्स के बढ़ते हुए असन्तोष से परेशान था; यहाँ उसके धार्मिक अत्याचारों की क्रूरता तथा उसके शासन की सामान्य रूप से अत्याचारी पद्धतियाँ अधिकाधिक उग्र विरोध को उत्पन्न कर रही थी। वास्तव में वहाँ कोई सशस्त्र खुला विद्रोह तब तक नहीं हुआ, जब तक कि आलवा के ड्यूक को १५६७ ई० में इन नास्तिकों और आन्दोलनकारियों के असन्तोषों को रक्तपात द्वारा दबाने के लिए नही भेजा गया और जब बगावत हुई तो इसे कुछ समय के लिए बडी निर्दयता से और भीषणता से कुचल दिया गया।

किन्तु समुद्री बेगर्स या भिखमंगों (Beggars of the Sea)[1] के नाम से प्रसिद्ध कुछ डच विद्रोही भाग निकले, उन्होंने इंग्लिश चैनल में समुद्री डकैती शुरू कर दी। इनके साथ वे इंग्लिश और फ्रेंच डाकू भी मिल गये जो स्पेनिश व्यापार को निरन्तर अपना शिकार बनाया करते थे। ये लोग एक बड़ी हद तक इंग्लिश बन्दरगाहों का प्रयोग अपने अड्डों के रूप में किया करते थे। एलिज़ाबेथ ने इसका प्रतिवाद करते हुए कहा कि वह इन कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं है और न ही वह इन्हें रोक सकती है। यह बात निश्चित है कि उसने इसे रोकने की कोशिश नहीं की और इसके साथ ही उसने स्पेनिश व्यापार को क्षति पहुँचाने वाले अधिक दूरवर्ती समुद्री डाकुओं के साहसिक कार्यों को भी गुप्त रूप से प्रोत्साहन दिया, जिस व्यापार के बारे में अगले अध्याय में हम कुछ बातें देखेंगे। निःसन्देह फिलिप इन आश्वासनों से बिल्कुल ठगा नहीं गया। किन्तु इनसे उसे इस बात का अनुभव हो गया, (जैसा कि एलिज़ाबेथ का इरादा था कि इनसे उसे ऐसा अनुभव हो जाना चाहिए) कि स्पेन और नीदरलैण्ड्स के बीच में यातायात के मार्ग पूर्ण रूप से इंग्लैण्ड पर निर्भर हैं; क्योंकि दोनों देशों में सम्बन्ध का एक मात्र साधन समुद्री मार्ग था। उसने यह देख लिया कि इंग्लैण्ड के साथ युद्ध नीदरलैण्ड्स को पूर्ण रूप से अपने आधीन बनाने के कार्य को लगभग असम्भव बना देगा और इसलिए फ्रांस द्वारा इंग्लैण्ड की विजय का संकट समाप्त हो जाने के बाद भी उसने मैत्री को बनाये रखना ठीक समझा। इंग्लैण्ड की बारी उस समय तक नहीं आई जब तक कि नीदरलैण्ड्स का अन्तिम फैसला नहीं हो गया। इस प्रकार नीदरलैण्ड्स ने इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की रक्षा की और इंग्लैण्ड ने नीदरलैण्ड्स को बचाया।

इन परिस्थितियों में जब तक कोई अतीव हिंसक कार्य न किया जाता और स्पेन के साथ मैत्री को बना कर रखा जाता, तब तक एलिज़ाबेथ अपने को काफी सुरक्षित अनुभव कर सकती थी। दोनों ब्रिटिश राष्ट्रों को अपनी अनिश्चित स्वतन्त्रता के साथ अपने भाग्य के निर्णय के लिए कार्य करने को छोड़ दिया गया था। किन्तु इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की घटनाओं का क्रम यूरोप के शेष भाग के लिए सबसे अधिक महत्व रखता था। दोनों देशों में होने वाली घटनाओं के क्रम ने प्रोटेस्टेण्ट मत के उद्देश्य को राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के उद्देश्य के साथ एक साथ बना दिया था और यदि ये उद्देश्य विफल हो जाते, जैसा कि यह उस समय भी सम्भव था जब कि ये विदेशी हस्तक्षेप के बिना भी विफल हो सकते थे, तो नीदरलैण्ड्स में तथा यूरोप के अन्य देशों में भी ये उद्देश्य निश्चित रूप से विफल हो जाते। यदि स्काटलैण्ड की मेरी इंग्लिश

---

१. यह नाम १६वीं शताब्दी में स्पेनिश शासन के विरुद्ध विद्रोह करने वाले हालैण्ड के व्यक्तियों ने स्वयमेव ग्रहण किया था, इस नाम को ग्रहण करने का एक मनोरंजक कारण था। कहा जाता है कि १५६५ई० में जब विद्रोहियों ने अपना संगठन बनाया तो हालैण्ड पर शासन करने वाली स्पेनिश परिषद् के एक सदस्य ने इस बारे में उस समय हालैण्ड की संरक्षिका पार्मा की मार्गरेट से चिन्ता प्रकट की। इस पर मार्गरेट ने कहा कि उन्हें इन भिखमंगों (Gueusc) से कोई भी भय नहीं है। उस समय से डच विद्रोहियों ने अपने संगठन के लिए इस नाम को अपनाना सम्मानास्पद समझा। इस शब्द का प्रयोग हालैण्ड के निजी जहाज रखने वाले उन डच विद्रोहियों के लिए होता है, जो इस संघर्ष में स्पेन के जहाजों की लूटपाट किया करते थे।

राजगद्दी को जीत लेती तो न केवल दोनों ब्रिटिश प्रदेशों में एक धार्मिक प्रतिक्रिया होती, किन्तु इनका भार इस महान् संघर्ष में कैथोलिक पक्ष के पलड़े की ओर पड़ जाता और यह बात निर्णायक होती।

इस प्रकार दो विवाह योग्य युवती, चचेरी बहनों तथा दो साथी देशों के ऊपर शासन करने वाली रानियों की नाटकीय प्रतिद्वन्द्विता पर सबसे अधिक दूरगामी महत्व रखने वाले प्रश्न निर्भर हो गये। शायद ही कभी विशुद्ध रूप से वैयक्तिक घटनाओं के नाटक ने विश्व की घटनाओं पर इतना गहरा प्रभाव डाला हो।

२. एलिजाबेथ और मेरी (१५६१-१५७१ ई०)

इन दोनों चचेरी बहनों में बड़े स्पष्ट भेद थे। कुमारी रानी एलिजाबेथ[१] कुछ बातों में नारी के देह में नर थी, यद्यपि उसे पोशाक पहनने में तथा अस्थिर प्रेम प्रदर्शन में और स्थूलतम चाटुकारिता में आनन्द आता था। यह बात संदिग्ध है कि उसने कभी किसी के प्रति गहरे वैयक्तिक प्रेम का अनुभव किया या किसी मनुष्य को अपने ऐसे प्रेम से अनुप्राणित किया हो। ये वस्तुएँ उसके लिए केवल मनोविनोद मात्र थीं। उसका हृदय राजनीति में था और उसके पास सब ट्यूडर शासकों जैसा ठंडा दिमाग और अहम्मन्य संकल्प था। उसके पास उन शासकों जैसी मनुष्यो को पहचानने की शक्ति और उनका सम्मान और राजभक्ति पाने की भी शक्ति थी। उसकी सेवा अत्यधिक ईमानदारी के साथ बहुत योग्य और परिश्रमी मन्त्रियों ने की। इनमें से विलियम सेसिल (लार्ड बर्घली) और फ्रान्सिस वालसिंघम सर्वश्रेष्ठ थे। फिर भी उसे यह अच्छा लगता था कि वह इन विश्वस्त मन्त्रियों के साथ लैस्टर जैसे छोटे आदमियों को लड़वाती रहे। वह किसी व्यक्ति को यह अनुभव नही होने देना चाहती थी कि वह सर्वशक्तिमान है। उसके सब से बड़े दोष छलपूर्ण उपायों के प्रति एक असाध्य तरजीह तथा अटल निश्चय पर पहुँचने की असाध्य अनिच्छा थी। उसे यह अनुभव करना अच्छा लगता था कि उसके आगे अनेक विकल्प खुले हुए हैं। एक निश्चित प्रोटेस्टेण्ट नीति को चाहने वाले दोनों व्यक्ति सेसिल और वालसिंघम प्राय: उसकी प्रत्यक्ष दोलायमानताओ से प्रकुपित हो जाते थे और डर जाते थे। किन्तु वह यह जानती थी कि वह क्या कर रही है और उसके निर्णय यदि सामान्य रूप से अत्यन्त विलम्ब से किये जाते थे, तो भी वे सदैव निश्चित अवधि समाप्त होने से पहले कर लिए जाते थे। यूरोपियन राजनीति की अतीव संकटपूर्ण परिस्थिति में उसकी इस आदत के कुछ लाभ थे। किसी को भी यह निश्चित ज्ञान नहीं था कि वह किस मार्ग का अनुसरण करेगी। उसकी झिझकें किसी भी प्रकार, साहस के अभाव के कारण नहीं थीं। एक संकट में कोई भी उससे अधिक शान्त नही रह सकता था। इसका कारण यह भी नही था कि वह अपने मुख्य उद्देश्य के बारे मे अनिश्चित थी। वह चाहती थी कि इंग्लैण्ड को इंग्लिश बना कर रखा जाए। यह उसके जीवन की प्रधान भावना थी। इसके साथ उसने किसी अन्य वस्तु को संघर्ष में नहीं आने दिया।

---

१. एलिजाबेथ की संक्षिप्त जीवनियाँ 'इंग्लिश राजनीतिज्ञों की ग्रन्थमाला' में ई० एस० बीसली ने तथा स्वर्गीय बिशप क्रेटन ने लिखी हैं।

उसकी चचेरी बहन मेरी[1] में स्त्रियोचित गुण अधिक थे। जब १५६१ ई० में वह स्काटलैण्ड लौटी तो वह १८ वर्ष की युवती विधवा थी। आरम्भ से ही उसके चारों ओर रोमाँचक कल्पना का वातावरण था। उसमें सौन्दर्य, लालित्य, रंगीलापन और हाजिर-जवाबी इतनी अधिक मात्रा में थी कि उसके आकर्षण का प्रतिरोध बहुत कम व्यक्ति कर सकते थे। यह आकर्षण जेल की दीवारों का भेदन कर सकता था। इसने शताब्दियों के कुहरे का ऐसा भेदन किया है कि आज भी विद्वान् व्यक्ति उसके प्रेम की खातिर सच्चाई के साथ खिलवाड़ करते हैं। उसमें एक वीर बालक की भावना और बहादुरी थी। वह साहस की अपेक्षा अन्य किसी गुण की अधिक पूजा नहीं करती थी। वह बाथवेल जैसे पशुतुल्य व्यक्ति में भी साहस के गुण को अच्छा समझती थी। वह कायरता की अपेक्षा किसी भी वस्तु से अधिक घृणा नहीं करती थी। डार्नले (Darnley) का पतन इसी कारण हुआ। वह अत्यधिक चतुर एवं प्रत्युत्पन्नमति थी। वह राजनीति का खेल पुराने कूटनीतिज्ञ की कुशलता के साथ खेल सकती थी, अपने उद्देश्यों को गुप्त रखते हुए धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा कर सकती थी और अपनी निराशाओं को मुस्कराहट के साथ छिपा सकती थी। किन्तु इस सबके साथ, उसकी प्रकृति ऐसी थी जिसे भावनाओं से उद्दीप्त किया जा सकता था। वह एलिजाबेथ के सर्वथा विपरीत घृणा अथवा प्रेम के प्रवाह में पूरी तरह बह जाती थी और जब ऐसा होता था तो दूरदर्शिता को तथा विवेक को तिलांजलि दे देती थी। उसने प्रतिशोध लेने के लिए और एक निकम्मे प्रेमी के लिए राज्यों को पाने के अवसर गँवा दिये।

१५६१ से १५७१ ई० तक के दस वर्षों में मेरी के आकर्षण, भावना और चातुर्य का पूर्ण साम्राज्य रहा। इन वर्षों में एलिज़ाबेथ को फिलिप द्वितीय को मित्र बनाए रखने में बहुत कम कठिनाई हुई। उसके नाविकों ने अभी तक हिंसापूर्ण दारुण कार्य करना शुरू नहीं किया था और नीदरलैण्ड्स में अभी केवल तूफान की तैयारी हो रही थी। फ्रांस अब खतरनाक नहीं रहा था, क्योंकि वहाँ गृह-युद्ध छिड़ गया था। इंग्लैण्ड को और स्काटिश प्रोटेस्टेण्टों को असली खतरा मेरी से था। आरम्भ में वह आडम्बरपूर्ण रीति से मृदु बनी रही। उसने केवल इतना ही कहा कि उसे एलिज़ाबेथ की उत्तराधिकारिणी स्वीकार किया जाय। एलिज़ाबेथ ने इसे यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि इस बात को मान लेना उसके द्वारा अपनी मृत्यु के आदेश-पत्र पर हस्ताक्षर करना होगा। स्काटलैण्ड में मेरी ने प्रोटेस्टेण्ट समझौते में हस्तक्षेप का प्रयत्न नहीं किया। उसने कुछ प्रोटेस्टेण्ट नेताओं से मित्रता की। इनमें उसका सौतेला भाई जेम्स भी था, इसे उसने मोरे का अर्ल बनाया। उसने हाइलैण्ड्स में हन्टली के कैथोलिक अर्ल के विरुद्ध अभियान में लार्ड जेम्स का साथ भी दिया। मोरे को यह विश्वास था कि अच्छे समय में वह एक प्रोटेस्टेन्ट के साथ विवाह कर लेगी और एलिजाबेथ के साथ मित्रता कर लेगी तथा सब ठीक हो जायगा। उसने अनेक अनुयायियों का दिल जीत लिया। वस्तुतः इंग्लिश राजगद्दी पर स्काटिश रानी को बिठाने का विचार अनेक स्काट लोगों को आकर्षक प्रतीत हुआ। उसके आकर्षणों का प्रतिरोध करने वाला एकमात्र पुरुष कठोर वृद्ध

---

१. एफ० मैक्कन्न ने स्काट लोगों की रानी मेरी की संक्षिप्त जीवनी लिखी है।

जॉन नाक्स था, जो उस नन्ही बच्ची पर ऐसा गर्जन करता था कि मानों वह एक अपराधी हो। नाक्स यह जानता था कि मेरी उस उद्देश्य के लिए कभी निष्ठा नही रख सकती, जो उसके जीवन का उद्देश्य था। सम्भवत: वह सच्ची कैथोलिक थी। किसी भी अवस्था में वह इंग्लैण्ड की रानी बनने के लिए उत्सुक थी, और एक वैध कैथोलिक दावेदार के रूप में ही उसके रानी बनने के अवसर सबसे अधिक प्रबल थे।

१५६५ ई० में उसने लैनोक्स के अर्ल के बेटे कैथोलिक लार्ड डार्नली के साथ विवाह करके अपना आवरण उतार फेंका। यह एक चतुर चाल थी। एक विदेशी के साथ विवाह से इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के दोनों देशों की देशभक्ति-पूर्ण भावना भयभीत हो जाती। इस विवाह ने दोनों देशों में उसके दल को सुदृढ़ बनाया, क्योंकि डार्नली दोनों राजगद्दियों के उत्तराधिकारी वंश में था। मोरे भयभीत होकर इंग्लैण्ड भाग गया। किन्तु अन्य व्यक्ति पूर्ण रूप से उसके पक्ष में हो गये। दुर्भाग्यवश सुन्दर युवक होने पर भी डार्नले एक कमीना और दुर्बल चित्त वाला व्यक्ति था, और उसकी उच्च भावनाओं वाली पत्नी शीघ्र ही उससे घृणा करने लगी। दु:खान्त नाटक की तैयारी होने लगी। अपमानित और तिरस्कृत होकर डार्नली रानी के चतुर इटालियन मन्त्री रीचो से ईर्ष्या करने लगा। यह रानी की राजनीतिक योजनाओं का घनिष्ठतम परामर्शदाता था। उसने प्रोटेस्टेण्ट दल के कठोर स्काटिश कुलीन सरदारों के एक समूह की बात सुनी, जो मेरी द्वारा अनुसरण की जाने वाली नीति के लिए रिचियो को दोष दे रहे थे। ९ मार्च १५६६ ई० को वे सरदार होलीरुड के महल में जबर्दस्ती घुस गये और उन्होंने रिचियो को लगभग रानी की आँखों के सामने ही मार डाला। यह वैसा ही अपराध था, जैसा स्काटलैण्ड में प्राय: किया जाता था। किन्तु इसने रानी को शेरनी बना दिया। वह बदले के लिए प्रत्येक वस्तु का बलिदान करने को तैयार थी। यहाँ तक कि उसने अपने पति को अपने उस बेटे के नामकरण संस्कार से भी बहिष्कृत किया, जो बेटा इंग्लिश और स्काटिश राजगद्दियों को संयुक्त करने वाला था। फिर भी, उसने इस बात का प्रयत्न किया कि वह अपने क्रोध और घृणा को छिपाए रखे। एक साल के अधिकांश भाग तक उसने प्रेमान्ध डार्नले का दुलार और लल्लोचप्पो की। जब वह बीमार पड़ा तो वह उसे एडिनबरा के ठीक बाहर एक एकान्त घर में ले आयी। यहाँ ९ फरवरी १५६७ ई० को वह उसके पास एक स्नेहपूर्ण भेंट के लिए आयी। उसके लिए एक कमरा तैयार किया गया था, किन्तु वह वहाँ नहीं रुकी। उस रात को वह घर बारूद से भरे ढोलों से उड़ा दिया गया, जो रानी के वैयक्तिक कमरे में रखे गये थे तथा डार्नली का वध किया गया शरीर बाग में पाया गया। हत्यारा जंगली और साहसी बाथवेल का अर्ल था। नि:सन्देह उसे एडिनबरा से भागना पड़ा। दुनियाँ इससे भयभीत हो गयी कि अविवेकी और कामान्ध रानी भी उसके पीछे भागी और इस हत्या के तीन महीने बाद उसने उससे शादी कर ली। इस बात में सन्देह करने का कोई तर्कसंगत आधार नहीं है कि वह इस अपराध में उसकी एक साथी रही थी।

इस भीषण अपराध ने मेरी के लिए न केवल इंग्लिश राजगद्दी की उत्तराधिकारिणी बनने के, अपितु स्काटलैण्ड में अपनी स्थिति बनाये रखने के भी अवसर नष्ट कर दिये। उसने

अपने साथ सदैव बने रहने वाले अभिमानपूर्ण साहस के साथ अपने राजमुकुट के लिए लड़ाई की तैयारी की। अब भी वह अनेक व्यक्तियों की स्वामिभक्ति प्राप्त कर सकती थी। वह कारबेरी हिल (१५६७ ई०) में हरा दी गयी। उसे अपने शिशु पुत्र के पक्ष में राजगद्दी छोड़ने के लिए बाधित किया गया, वह लाचलेवन (Lochleven) के टापू के किले में बन्दी बना दी गयी। किन्तु मेरी की भावना को भग्न नहीं किया जा सकता था। एक साल बाद वह अपने जेलखाने से भाग निकली, उसने एक नयी सेना एकत्र की और मोर्चा लिया। वह पुनः ग्लासगो के निकट लैंगसाइड में हरा दी गयी (मई १५६७ ई०)। वह दुबारा बन्दी बनने के लिए तैयार नहीं थी। अतः वह अपने कुछ अनुयायियों के साथ भाग गयी और ६० मील की लम्बी घुड़-सवारी के बाद, न जाने किन विचारों से परिपूर्ण होकर उसने इंग्लिश सीमा पार की और अपने को अपनी इंग्लिश चचेरी बहिन के चरणों पर डाल दिया।

यह एक चतुर चाल थी, जो कि उसकी बहिन के चरित्र के गम्भीर ज्ञान पर आधारित थी। एलिजाबेथ में राजा में निवास करने वाली दिव्यता की भावना में विश्वास इतना ऊँचा था कि वह मेरी को स्काटिश कुलीन सरदारों को वापिस नहीं दे सकती थी। उसने अतिथि के रूप में उसका स्वागत किया और कुछ वर्षों तक मेरी उत्तरी इंग्लैण्ड में एक घर से दूसरे घर में जाती रही। जब स्काटिश कुलीन सरदारों ने मेरी के अपराध की निर्णयात्मक साक्षी उपस्थित की, तब भी एलिजाबेथ ने उस पर विचार करने से इन्कार कर दिया। वस्तुतः एलिजाबेथ के दृष्टिकोण से इस स्थिति में कुछ लाभ थे। मेरी निगरानी में थी और उसे शरारत करने से रोका जा सकता था। स्काट लोग अब सुदृढ़ रूप से प्रोटेस्टेण्ट थे और उन्हें सदैव इस धमकी से वश में रखा जा सकता था कि स्काटलैण्ड में अब भी स्वामिभक्त अनुयायी रखने वाली रानी को पुनः राजगद्दी पर बिठा दिया जायगा। दूसरी ओर जादूगरनी (मेरी) बड़ी खतरनाक थी, विशेष रूप से इसलिए कि इंग्लैण्ड का उत्तरी भाग कैथोलिक मत का केन्द्र था। मेरी अपने आगमन के क्षण से ही षडयन्त्रों का केन्द्र बनी हुई थी। इनमें से एक षडयन्त्र का पता १५६९ ई० में लगा। मेरी इंग्लिश कुलीन सरदारों में प्रथम स्थान रखने वाले नारफोक के ड्यूक के साथ शादी करने वाली थी। एक ऐसे विद्रोह की योजना थी जिसकी सहायता नीदरलैण्ड्स के आलवा को करनी थी और मेरी को अपनी चचेरी बहिन की गद्दी पर बिठाया जाना था। अन्त में नारफोक डर गया, किन्तु नार्थम्बरलैण्ड और वेस्टमोरलैण्ड के अर्लों ने, वास्तव में विदेशी सहायता की प्रतीक्षा किये बिना विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह को आसानी से दबा दिया गया। इसके बाद सीमान्त के लार्ड डेक्रे का विद्रोह १५७० ई० में हुआ। इसको भी शीघ्रता से कुचल दिया गया। फिर भी, इससे षड्यन्त्रों का अन्त नहीं हुआ। ठीक इस अवसर पर पोप ने चिरकाल से धमकी दिये जाने वाले, एलिजाबेथ को नास्तिक के रूप में चर्च से बहिष्कृत करने वाले आदेश पत्र को प्रसारित किया। इसके अनुसार उसके सब कैथोलिक प्रजाजनों को रानी की राजभक्ति से मुक्ति मिल गयी। पोप के एक कार्यकर्ता रीडोल्फी ने १५६९ ई० के षड्यन्त्र को एक अधिक विस्तृत पैमाने पर पुनरुज्जीवित किया। इसके अनुसार मेरी को नार्फोक से विवाह करना था और नीदरलैण्ड्स से होने वाले एक आक्रमण की सहायता से कैथोलिक विद्रोह को किया जाना था। मेरी स्वयमेव, नार्फोक, पोप, फिलिप द्वितीय और

आलवा के ड्यूक-ये सभी इस पड्यन्त्र को करने वाले थे; किन्तु कोई स्पष्ट पग उठाये जाने से पहले ही सेसिल की चतुराई से इस षड्यन्त्र का भण्डाफोड़ हो गया (१५७१ ई)। नार्फोक फाँसी पर लटका दिया गया, मेरी को अछूता छोड़ा गया, क्योंकि उसने अपने को एक बड़ा खतरनाक व्यक्ति प्रदर्शित किया था, अत: उसे भविष्य में अधिक कड़े बन्धन में रखा गया।

इन घटनाओं ने संघर्ष के पहले दौर को समाप्त कर दिया। उन्होंने वातावरण को शुद्ध किया और १५७१ ई० से १५८४ ई० तक के अगले युग में महान् संघर्ष के प्रश्न अधिकाधिक स्पष्ट हो गये।

३. बढ़ते हुए तनाव के वर्ष, १५७१-१५८४ ई०

पहली बात यह है कि इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के बीच में सम्बन्ध यद्यपि अब भी प्राय: कठिन थे, परन्तु वे अब अधिक खतरनाक नहीं रहे थे। कुल मिला कर, स्काटिश प्रोटेस्टेण्ट पार्टी ने अपना पलड़ा निरन्तर भारी बनाये रखा। सारे राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाली सामान्य असेम्वली के साथ स्काटलैण्ड का चर्च कुछ अंशों में कुलीन सरदारों की शक्ति का संतुलन बनाये रखने में समर्थ हुआ। १५६७ ई० से १५७८ ई० तक स्काटलैण्ड का शासन शिशु राजा जेम्स षष्ठ की ओर से संरक्षकों की एक शृंखला ने किया। इनमे से पहला मोरे का अर्ल, 'उत्तम लार्ड जेम्स' नवीन धर्म का सबसे अधिक उग्र समर्थक था और जॉन नाक्स के बाद उसने इसको विजयी बनाने में सवसे अधिक हिस्सा लिया था। वह इंग्लिश मित्रता का कट्टर समर्थक था। दुर्भाग्यवश १५७० ई० में उसकी हत्या कर दी गयी। किन्तु उसके उत्तराधिकारियों—लेनोक्स, मार और मार्टन ने दृढ़ता पूर्वक प्रोटेस्टेण्ट मत का तथा इंग्लिश नीति का अनुसरण किया और वे अब भी प्रबल तथा निर्वासित रानी के समर्थक दल के विरुद्ध अपनी स्थिति बनाये रखने में समर्थ हुए। इन्होंने पुरोहितों को अपनी इस विफलता से निराश कर दिया कि वे पुराने चर्च के दावों को नये चर्च को हस्तान्तरित नहीं किया जा सकता। पुराने चर्च की लगभग समूची सम्पत्ति कुलीन सरदारों ने हथिया ली। किन्तु अन्त में उन्होंने प्रोटेस्टेण्ट समझौते को बनाये रखा। १५७९ ई० से १५८२ ई० तक स्थिति पुन: खतरनाक हो गयी, क्योंकि फ्रांस से एक फ्रेन्च स्काट, एस्मे स्टीवर्ट (सी उरद औबिगनी और बाद में लेनौक्स का अर्ल बनने वाला व्यक्ति) इस उद्देश्य के साथ आया कि वह यहाँ फ्रेंच प्रभाव को पुन: स्थापित करेगा। कुछ समय के लिए तेरहवर्षीय शिशु राजा पर पूर्ण आधिपत्य प्राप्त कर लिया गया। उसका लक्ष्य निर्वासित रानी के उद्देश्य को पुनरुज्जीवित करना तथा कैथोलिक पद्धति की पुन: स्थापना करना था। किन्तु कुलीन सरदारों के प्रोटेस्टेण्ट समुदाय ने तथा एण्ड्रयू मेलविले के नेतृत्व में स्काटिश चर्च की जनरल असेम्बली ने उसका कड़ा विरोध किया। वह १५८१ ई० में प्रेसबिटेरियन पद्धति की पूर्ण स्वीकृति को नहीं रोक सका और १५८२ ई० में रुथवैन हमले के नाम से प्रसिद्ध घटना में प्रोटेस्टेण्ट कुलीन सरदारों के एक समूह ने सहसा राजा को पकड़ लिया और द औबिगनी तथा लेनोक्स को देश से भाग जाने के लिए बाधित किया। इसके बाद से यद्यपि राजा जेम्स षष्ठ आयु बढ़ने के साथ-साथ प्रेसबिटेरियन पद्धति का अधिकाधिक विरोधी हो गया, किन्तु वह न तो प्रोटेस्टेण्ट मत का हुआ और न ही इंग्लैण्ड का विरोधी

हुआ। उसे कुछ तो अपने प्रजाजनों के भय से और कुछ इंग्लिश राजगद्दी का उत्तराधिकारी बनने की आशा से चुप रहना पड़ा। इस प्रकार समग्र रूप से इन वर्षों में, यद्यपि साथी राष्ट्रों की मित्रता अभी तक घनिष्ठ नहीं हुई थी; तथापि यह बनी रही, और एलिज़ाबेथ सामान्य रूप से यह अनुभव कर सकती थी कि उसे स्काटलैण्ड की ओर से किसी संकट का भय नहीं है।

इंग्लैण्ड में १५६९ ई० से १५७१ ई० तक के षड्यन्त्रों और विद्रोहों ने अतीव महान प्रभाव उत्पन्न किया। उन्होंने कैथोलिक दल को बहुत अधिक बदनाम कर दिया। यह तथ्य कि कैथोलिक वस्तुतः इंग्लैण्ड में स्पेनिश सेनाएँ लाने के लिए उत्सुक हैं, उन्हें देशभक्त न होने के रूप में प्रकट कर रहा था। प्रोटेस्टेण्ट मत पहले की अपेक्षा अधिक स्पष्टता के साथ देशभक्तों का धर्म बन गया, और देशभक्त कैथोलिक भी बढ़ती हुई संख्या में राष्ट्रीय चर्च की ओर आने लगे, अब भी अनन्त षड्यन्त्र चल रहे थे। किन्तु वे अब मुख्य रूप से यूरोप के महाद्वीप से आने वाले गुप्त दूतों द्वारा भड़काये जा रहे थे और इसमें केवल अतिवादी व्यक्ति ही सम्मिलित हो रहे थे। उनके अब तक जारी रहने के तथा विदेशों से उनके किये जाने के तथ्यों ने अधिकांश इंग्लिश लोगों को अधिक उग्रता के साथ रोम के चर्च का विरोधी बना दिया। प्रतिवर्ष यह अधिक स्पष्ट हो रहा था कि इंग्लैण्ड को अपनी राष्ट्रीय सत्ता बनाये रखने के लिए एक संघर्ष की प्रतीक्षा करनी है, इसमें उसका सबसे बड़ा शत्रु स्पेन होगा और इसमें राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का उद्देश्य आवश्यक रूप से प्रोटेस्टेण्ट मत के उद्देश्य के साथ एक हो जायगा। अब तक रोमन कैथोलिक मत का कोई दमन नहीं हुआ था। किन्तु १५७१ ई० में राजद्रोह के कानून को विस्तृत करते हुए इसमें ऐसे कार्य भी सम्मिलित कर दिये गये थे, जैसे रोम के चर्च में सम्मिलित होना, अथवा दूसरों को इसमें सम्मिलित होने की प्रेरणा करना अथवा पोप के आदेश-पत्र (Bull) का पालन करना। यह १५७० ई० के चर्च से बहिष्कार के पोप के उस आदेश-पत्र का स्वाभाविक परिणाम था, जिससे पोप के प्रति स्वामिभक्त कैथोलिकों को यह आज्ञा दी गई थी कि वह राष्ट्रीय सरकार के प्रति देशद्रोहियों के रूप में हिस्सा लें। अब पहली बार रोमन कैथोलिकों का एक निश्चित दमन आरम्भ हुआ, किन्तु यह उन्हीं व्यक्तियों तक सीमित था, जो सरकार के उलटने का षड्यन्त्र करते थे। शान्त रोमन कैथोलिकों की अधिकांश संख्या ने जब तक राजनीति में हस्तक्षेप नहीं किया, तब तक उन्हें अछूता छोड़ दिया गया। उनको दिया जाने वाला एकमात्र दण्ड यह था कि उन्हें चर्च में हाजिर न होने के लिए जुर्माने देने पड़ते थे। इस समय खतरनाक लोग वे रोमन धर्म प्रचारक थे, जो उन वर्षों में इंग्लैण्ड में आने का साहस करने लगे। इनमें से कुछ उन शिक्षणालयों से आये, जो इस समय विदेशों में दोउए तथा रोम में इंग्लिश पुरोहितों के प्रशिक्षण के लिए स्थापित किये जा रहे थे। इन प्रचारकों का पहला दल १५७४ ई० में इंग्लैण्ड आया। अन्य प्रचारक जेसुइटों के महान सम्प्रदाय के इंग्लिश सदस्य थे। इनमें से सबसे पहले इंग्लैण्ड पहुँचने वाले कैम्पियोन और पारसन्स थे, ये १५८० ई० में आये। यह असम्भव है कि हम इन मिशनरियों द्वारा प्रदर्शित किए गये साहस की प्रशंसा न करें। इनमें से अनेक विशुद्धतम धार्मिक उन्माद से उद्दीप्त थे और शहीदों की भाँति मरने को तैयार थे। किन्तु ऐसा होते हुए भी वे राजनीतिक रूप से खतरनाक थे और सरकार उन्हें सुरक्षापूर्वक खुला नहीं छोड़ सकती थी। इनमें से कुछ बन्दी बना लिये

गये, कुछ को मार डाला गया। किन्तु सदैव इन्हें राजद्रोह के लिए दण्ड दिया जाता था, न कि उनके धार्मिक विश्वासों के लिए। १५७५ ई० में ये वध आरम्भ हुए। इस समय से इस राज्यकाल की समाप्ति तक १८७ व्यक्तियों को प्राणदण्ड दिया गया। यह एक बड़ी संख्या है, किन्तु यह नीदरलैण्ड्स में, फ्रांस में तथा स्पेन में अपने धर्म के लिए कष्ट उठाने वाले व्यक्तियों के विध्वंस की तुलना में कुछ भी नहीं है। उदाहरणार्थ, फ्रांस में एलिज़ाबेथ के अत्याचार शुरू होने के ठीक तीन वर्ष पहले १५७२ ई० में सैन्ट बार्थोलाम्यू के दिवस की एक ही हत्या-काण्ड में दस हजार से अधिक प्रोटेस्टेण्टों को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा था। मेरी के अपेक्षाकृत हलके दमन की तुलना में एलिज़ाबेथ के समय में रोमन कैथोलिकों का दमन मृदु था। प्रति वर्ष मरने वालों की औसत संख्या ७ थी, जब कि मेरी के अत्याचारों के समय प्रतिवर्ष यह संख्या ८० थी।

इंग्लैण्ड में, इन वर्षों की एक अन्य विशेषता यह थी कि क्योंकि दोनो धर्मों में संघर्ष अधिक उग्र हो रहा था तथा अतिवादी प्रोटेस्टेण्ट दल अधिक क्रियाशील हो रहा था, अतः इस प्रकार एलिज़ाबेथ के समय में किये गये समझौते को एक साथ दोनों पक्षों की ओर से खतरा था। आरम्भ से ही अतिवादी व्यक्ति पोपवादिता की उस मात्रा से असन्तुष्ट थे, जो उनकी दृष्टि में राष्ट्रीय चर्च में रहने दी गयी थी। अन्त में "प्यूरिटन" (Puritan) अतिवादियों को भी नास्तिकता के लिये जलाया गया, जब कि अन्य व्यक्तियों को राजा की सर्वोच्च सत्ता अस्वीकार करने के राजद्रोह के लिये फाँसी पर लटकाया गया था। विशुद्धतावाद (Puritanism) के बीज और विचार की वैयक्तिक स्वतन्त्रता की माँग तेजी से उत्पन्न हो रही थी। यह बात महत्वपूर्ण है कि पार्लियामेण्ट में वि[illegible]तावादियों के साथ सहानुभूति सुदृढ़ थी और बढ़ रही थी। ज्यों-ज्यों इंग्लैण्ड के भाग्य का संकट अधिक निकट आ रहा था, त्यों त्यों वह और भी अधिक तीव्रता से प्रोटेस्टेण्ट बन रहा था।

इसी बीच में यूरोप के महाद्वीप पर धर्मों का संघर्ष अधिक उग्र होने लगा। फ्रांस में सैन्ट बार्थोलोम्यू के हत्याकाण्ड के वर्ष – १५७२ ई० में नीदरलैण्ड्स में एक नया विद्रोह भड़क उठा। यह इतना भीषण था कि इसे कभी नहीं दबाया जा सका। यह "समुद्री बेगरों" (Beggars of the Sea) से शुरू किया गया था, जो अब तक मुख्य रूप से इंग्लिश बन्दरगाहों को अपने अड्डे बना कर स्पेनिश व्यापार पर हमला करने में लगे हुए थे। एलिज़ाबेथ ने स्पष्ट रूप से स्पेन के प्रति रियायत करते हुए उन्हें अपने बन्दरगाहों से हट जाने का आदेश दिया। किन्तु यह सम्भव है कि वह जानती थी कि वह क्या कर रही है। वे ब्रिल के डच बन्दरगाह पर टूट पड़े और उन्होंने इस पर कब्जा कर लिया; और इस पर उत्तरी प्रान्तों (वर्तमान हालैण्ड के राज्य) में विद्रोह भड़क उठा और इन प्रान्तों के कुलीन देशभक्तों ने मूक विलियम[1] (William the Silent) का नेतृत्व स्वीकार किया। स्पेन ने इनका दमन करना असम्भव पाया। पाँच वर्ष के भीतर ही विद्रोह दक्षिणी प्रान्तों (आधुनिक बेल्जियम) में फैल गया

१. रूथ पुटनेम ने 'राष्ट्रों के वीर पुरुषों की पुस्तक माला' में मूक विलियम की एक जीवनी लिखी है।

और यह प्रतीत होता था कि मानो फिलिप द्वितीय अपने समूचे उत्तरी प्रदेशों को खोने वाला है। अनेक इंग्लिश व्यक्ति नीदरलैण्ड की सहायता के लिये उत्सुक थे। किन्तु एलिज़ाबेथ इतनी सावधान थी कि वह अभी तक स्पेन के साथ खुले तौर से ऐसे सम्बन्ध बनाने का खतरा मोल नहीं लेना चाहती थी; किन्तु उसने इन्हें अनेक अप्रत्यक्ष ढंगों से गुप्त सहायता और प्रोत्साहन प्रदान किया और उनकी ओर से फ्रांस के हस्तक्षेप का स्वागत किया।

१५७८ ई० से परिस्थिति नीदरलैण्ड्स के प्रतिकूल होने लगी। स्पेन की सेवा में विद्यमान एक अतीव योग्य सेनापति पार्मा का अलेक्जेण्डर शनैः शनैः उन दक्षिणी प्रान्तों को पुनः जीतने लगा, जिनमें रोमन कैथोलिक धर्म अब भी प्रभावशाली था। प्रोटेस्टेण्ट इंग्लिश लोगों ने उसकी सफलताओं को अत्यधिक चिन्ता के साथ देखा और वे चाहते थे कि वे ऐसे उद्देश्य में खुली और प्रत्यक्ष सहायता दें, जो उद्देश्य, जैसा कि उन्हें विश्वास था, उनके उद्देश्य से बिलकुल अभिन्न था। किन्तु एलिज़ाबेथ अब भी अपनी बात पर दृढ़ थी। १५८४ ई० में डच प्रतिरोध की हृदय और आत्मा, ओरेन्ज के कुलीन विलियम की हत्या एक रोमन कैथोलिक हत्यारे द्वारा कर दी गयी। इसके साथ ही ऐसा प्रतीत होने लगा कि नीदरलैण्ड्स के उद्देश्य का तथा उसके साथ प्रोटेस्टेण्ट मत के उद्देश्य का भविष्य निराशापूर्ण है। जब डच लोगों का विरोध भंग हो गया, उस समय सब मनुष्यों का विश्वास था कि अब इंग्लैण्ड की बारी आने वाली है।

फ्रांस में भी इन वर्षों में संघर्ष अधिकाधिक उग्र हो रहा था। एलिज़ाबेथ हर तरह इस बात के लिए उत्सुक थी कि फ्रांस को स्पेन के साथ मिलने से रोका जाय। इन वर्षों में उसका ढंग अब फ्रेंच प्रोटेस्टेण्टों को प्रत्यक्ष सहायता देने का नहीं था, अपितु अब वह ढंग यह सम्भावना आगे रखने का था कि वह एक फ्रेंच राजकुमार से शादी कर लेगी। १५७० और १५७१ ई० में वह फ्रेंच राजा के भाई, आन्जो के ड्यूक हेनरी के साथ अस्थिर प्रणय लीला के प्रदर्शन में व्यस्त रही। इसके बाद १५७२ ई० में सेन्टबार्थोलोम्यू का हत्याकाण्ड हुआ, इसका आदेश फ्रेंच राजा तथा उसकी माता ने दिया था। इस हत्याकाण्ड से सभी प्रोटेस्टेण्ट देशों में निराशा और आतंक की लहर दौड़ गयी। किन्तु जल्दी ही अपने अनेक प्रजाजनों को परेशान और भयभीत करते हुए एलिज़ाबेथ पुनः फ्रेंच विवाह के प्रस्तावों में व्यस्त हो गयी। इस बार उसका यह प्रस्ताव अलेन्सन के ड्यूक के साथ था, जो बाद में अपने भाई आन्जौ के ड्यूक के पद का उत्तराधिकारी बना। दस वर्षों तक यह खोखली प्रणय लीला चलती रही। यह १५८२ ई० तक भी समाप्त नहीं हुई। निस्सन्देह एलिज़ाबेथ का इरादा एक भी क्षण के लिए यह न था कि वह इनमें से किसी भी राजकुमार के साथ विवाह करेगी। किन्तु उसे यह विश्वास था और सम्भवतः यह ठीक था कि वह इस प्रकार इंग्लैण्ड के विरुद्ध फ्रांस और स्पेन की गुटबन्दी को रोकने में सहायता कर रही है। इसी बीच में कुछ मध्यान्तरों में, फ्रेंच धर्मयुद्ध हो रहे थे। १५७२ और १५८४ ई० के बीच में पृथक् रूप से चार स्पष्ट युद्ध हुए थे। किन्तु १५८४ ई० में फ्रेंच गद्दी के अन्तिम प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी की मृत्यु हो गयी और नवार्रे का हेनरी (ह्यूगेनाटों का नेता) युवराज हो गया।[१] फ्रेंच राजगद्दी पर एक प्रोटेस्टेन्ट

१ 'राष्ट्रों के वीरों की पुस्तक माला' में पी० एफ० विलर्ट द्वारा लिखित नवार्रे के हेनरी की एक जीवनी है।

व्यक्ति के बैठने की सम्भावना ने अतिवादी फ्रेंच कैथोलिकों के क्रोध को भड़का दिया। उन्होंने मेरी स्टीवर्ट के चचेरे भाई गुइसे के ड्यूक के नेतृत्व में अपना विरोध करने वाला एक संघ बनाया और उन्होंने फिलिप द्वितीय के साथ औपचारिक मैत्री कर ली। यदि वे जीत जाते (और वे अधिक प्रबल दल थे) तो १५५९ ई० से फ्रांस और स्पेन के जिस सम्मिलन से भय हो रहा था वह भय एक वास्तविकता बन जाता। इस प्रकार प्रत्येक रीति से १५८४ ई० का वर्ष इंग्लैण्ड और प्रोटेस्टेण्ट मत के भाग्य के लिए एक संकट को सूचित करता है।

इसके अतिरिक्त इस समय तक फिलिप द्वितीय ने शनैः शनैः यह संकल्प कर लिया था कि इंग्लैण्ड पर एक सीधा आक्रमण आवश्यक है। उसने व्यर्थ में ही यह आशा रखी थी कि एक कैथोलिक विद्रोह द्वारा प्रोटेस्टेण्ट रानी को राजगद्दी से हटा दिया जायेगा और वह सदैव इसके लिए अपनी सहायता देने को तैयार था, किन्तु प्रत्येक षड्यन्त्र विफल हो गये। उसके निर्णय में इस तथ्य से भी सहायता मिली थी कि १५७० ई० में, इंग्लिश नाविक नयी दुनियाँ में स्पेनिश साम्राज्य के विरुद्ध पहले से कहीं अधिक साहसपूर्ण हमले करने लगे थे। ड्रेक की उज्ज्वलतम उपलब्धियाँ इन्हीं वर्षों की हैं। यद्यपि एलिज़ाबेथ सदा उन्हें अस्वीकार करती रही थी, तथापि वह इन समुद्री डाकुओं को राजकीय जहाज उधार देती थी। हम अगले अध्याय में उनकी उपलब्धियों की कुछ बातें देखेंगे। वे खतरनाक ढंग से स्पेन की प्रतिष्ठा को खोखला बना रहे थे और फिलिप के लिए यह असम्भव था कि वह अधिक देर तक इनकी उपेक्षा करने का बहाना कर सके।

अतः सब प्रकार से १५८४ ई० तक यह स्पष्ट हो गया था कि संकट सन्निकट है। गोलियथ ने यह फैसला कर लिया था कि डेविड का विध्वंस अवश्यमेव किया जाना चाहिए और अपने मन्दगामी ढंग से उसने अगले कुछ वर्ष में एक भीषण प्रहार के लिए तैयारी करने में व्यतीत किये। यूरोप की दृष्टि में यह अनिवार्य प्रतीत होता था कि इंग्लैण्ड को झुक जाना चाहिए; क्योंकि ऊपरी दृष्टि से स्पेन इस समय अपनी शक्ति के चरम शिखर पर था। यूरोप में फिलिप का इटली पर आधिपत्य था, सम्राट् उसका चचेरा भाई था, विभक्त फ्रांस में सबसे अधिक शक्तिशाली दल ने उसका संरक्षण स्वीकार किया था, उस युग के सबसे बड़े सेनापति, पारमा की अध्यक्षता में, उसकी सेनाओं ने पहले ही विद्रोह करने वाले नीदरलैण्ड के आधे हिस्से को वशवर्ती बना लिया था और यह प्रतीत होता था कि उत्तर के डच प्रान्तों में भी वे हावी हो जाएँगे। १५७१ ई० में उसकी नौसेना ने लेपाण्टो में तुर्कों पर एक प्रबल विजय प्राप्त की थी। यूरोप के बाहर, वह उस नयी दुनियाँ की समूची सम्पत्ति का स्वामी था जहाँ से उसके राज्यकोष में विशाल धनराशि वही चली आ रही थी। इससे भी बढ़ कर यह बात थी कि १५८० ई० में उसने पुर्तगाल को अपने राज्य का अंग बना लिया और उसके असीम धनी पूर्वी साम्राज्य को अपने राज्य में मिला लिया। इस समय विश्व भीमकाय मूर्ति (Colossus) की भाँति उसके टाँगों के नीचे था। कौन यह आशा रख सकता था कि वह इंग्लैण्ड उसके विरुद्ध टिक सकेगा जिस इंग्लैण्ड के पास कोई भी प्रशिक्षित सेना नहीथी और जिसकी एक मात्र प्रतिरक्षा उसके साहसी समुद्री डाकू नाविकों के पोत कर रहे थे।

४. स्पेन के साथ खुला संघर्ष और मेरी का वध

१५८१ ई० के बाद से संघर्ष अधिक खुले रूप में होने लगा। अन्त में १५८५ ई० में एलिज़ाबेथ ने नीदरलैण्ड्स को सहायता देने का निश्चय किया। उसने डच प्रान्तों का संरक्षण स्वीकार कर लिया और पाँच हज़ार पैदल सैनिक और एक हज़ार घुड़सवार देने के लिये सहमत हो गयीं। इस सेना की कमान के लिये उसने अपने कृपापात्र लैस्टर को भेजा। यह अतीव दुर्भाग्यपूर्ण चुनाव था। लैस्टर ने कोई सफलता प्राप्त नहीं की; वह अपने डच मित्रों से झगड़ता रहा। उसके अभियान की एक ही सुखद स्मृति सर फिलिप सिडनी की जुटफेन में वीरतापूर्ण मृत्यु है और १५८७ ई० में लैस्टर स्वदेश वापस लौट आया। किन्तु महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि यह हस्तक्षेप युद्ध का एक कार्य था। खुला संघर्ष शुरू हो गया था। १५८५ ई० में फिलिप ने भी स्पेनिश बन्दरगाहों में विद्यमान सब इंग्लिश जहाजों पर प्रतिबन्ध लगा कर युद्ध का एक कार्य किया। एलिज़ाबेथ इसका ऐसा ही बदला लेने से सन्तुष्ट नहीं थी। उसने पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह के स्पेनिश नगरों की लूटपाट के लिए ड्रेक को एक बड़े बेड़े के साथ भेजा।

इस समय स्काट लोगों की रानी मेरी अब भी जेल में तड़प रही थी। उसकी जवानी बीत चुकी थी। उसके मित्रों की सब योजनाएँ विफल हो चुकी थीं। अब उसकी एक मात्र आशा स्पेन के फिलिप पर थी। १५८६ ई० में उसने एक वसीयत करते हुए अपने पुत्र को उत्तराधिकार से वंचित कर दिया और फिलिप को अपना उत्तराधिकारी बनाया। आने वाले संकट में उसे क्या सहायता देनी चाहिये थी? अब इंग्लैण्ड में बड़े पैमाने पर एक कैथोलिक विद्रोह असम्भव था। किन्तु उनके पास अब भी स्वामिभक्त मित्र थे, इनमें डरबीशायर का एक भद्रजन एन्थनी बेबिंगटन था, जो कभी उसका सेवक (Page) भी रहा था। बेबिंगटन के पास एक पुरोहित गया और उसने उसे औरों के साथ एक ऐसे षड्यन्त्र में सम्मिलित होने को कहा जिसका उद्देश्य 'विष से अथवा शस्त्रों' से एलिज़ाबेथ को समाप्त करना तथा उसके ही साथ उसके शक्तिशाली मन्त्री बर्घली, वालसिंघम तथा अन्य मन्त्रियों से मुक्ति पाना था।" मेरी बेबिंगटन को अपने हाथ से यह पत्र लिखने और प्रेरणा देने के लिये सहमत हो गयी कि वह उसकी सेवा के लिये परिश्रमी बने। बड़े दुःख की बात यह थी कि षड्यन्त्रकारियों के सब पत्रों का तथा उसके प्रत्येक कार्य का ज्ञान रानी के सचिव वालसिंघम को हो गया। उसने उनका षड्यन्त्र परिपक्व होने दिया; तब अगस्त १५८६ ई० में उसने सब को गिरफ्तार कर लिया। इनमें चौदह व्यक्तियों का वध किया गया; किन्तु यह तब तक नहीं किया गया था जब तक कि मेरी के साथ पत्रव्यवहार में प्रयुक्त की गयी गुप्त लिपि की व्याख्या बेबिंगटन ने नहीं कर ली।

वालसिंघम चिरकाल से इस बात के लिये उत्सुक था कि अविरत षड्यन्त्र के केन्द्र-मेरी से मुक्ति पायी जाय, किन्तु उसकी स्वामिनी सदैव इस अटल कदम को उठाने से इन्कार करती थी। अब मेरी के मामले पर विचार फोदरिंगे की जेल में एक विशेष आयोग के सम्मुख किया गया और उसे इस षड्यन्त्र में सम्मिलित होने का दोषी पाया गया। पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों ने एक मत होकर रानी से मेरी को प्राणदण्ड देने के लिये प्रार्थना की। उसने उत्तर में उनसे निवेदन किया कि वह इस पर विचार करेगी कि क्या इसके लिये कोई अन्य साधन

नही है, पार्लियामेन्ट ने उत्तर दिया कि ऐसे साधन नही हैं। क्या यह सब कुछ लोगों को दिखाने के लिये था ? स्पष्टतः ऐसा नहीं था। यह एलिज़ाबेथ की इस भावना से उत्पन्न हुआ था कि प्रभुसत्ता की मुहर अमिट है और किसी पार्थिव न्यायालय को यह अधिकार नहीं है कि वह एक अभिषिक्तरानी के मामले पर विचार करे। उसने वारण्ट पर हस्ताक्षर किये, किन्तु इसके पालन का भार अपने सेवकों पर थोपने का प्रयत्न किया। प्रिवी कौंसिल को यह अ॰वश्यक प्रतीत हुआ कि वह उसकी पूर्ण जिम्मेवारी अपने ऊपर ले ले। ८ फरवरी १५८७ ई० को फोदरिंगे के किले के हॉल में मेरी ने एक ऐसे गौरवपूर्ण साहस के साथ फाँसी के तख्ते पर मृत्यु का सामना किया, जो उसके कुकर्मों की स्मृति को लगभग मिटा देता है। सभी कैथोलिकों की दृष्टि में वह अपने धर्म के लिये शहीद हुई। उसकी मृत्यु से सारे यूरोप में आतंक से सबके रोंगटे खड़े हो गये, क्योंकि मनुष्य अब भी भगवान के द्वारा अभिषिक्त राजाओं की पवित्रता को स्वीकार करते थे। फिलिप द्वितीय कैडिज और लिस्बन के बन्दरगाहों में ऊँचे जहाजों के पंक्ति-बद्ध समूह का महान् संग्रह कर रहा था, उसे इस महान् अपराध का निश्चित प्रतिशोध लेने वाला समझा जा रहा था। किन्तु ज्यों ही इस महत्त्वपूर्ण घटना कार्य का समाचार इंग्लैण्ड में फैला तो घण्टे बज उठे और होलियाँ जलने लगीं। पासा फेंका जा चुका था; इंग्लैण्ड को अपनी प्राण-रक्षा के लिये अवश्य लड़ना था और उसने समुद्री व्यक्तियों पर भरोसा रखते हुए निर्भीक रीति से इस संघर्ष का सामना किया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Pollard, England from the Death of Henry VIII. to the Death of Elizabeth is a good Summary of the period **Froude,** History of England is vivid and entertaining narrative, and is less open to challenge on this period than on the reign of Henry VIII. **Lord Acton** deals with the subject of this chapter in one of his Lectures on Modern History, and of the **Macaulay's** essays deals with Burghley. See also **Hay Flen ming,** Mary Queen of Scots; **Black,** Reign of Elizabeth; **Neale,** Queen Elizabeth and Elizabethan House of commons; **Frere,** The Church under Elizabeth and James I; **Thompson,** Supreme Governor; **Hughes,** Rome and the counter-Reformation in England; **Knappen,** Tudor Puritanism. For contemporary European history see **Johnson,** Europe in the Sixteenth Century; **Ranke,** History of the Popes; **Froude,** Council of Trent; **Ward,** Counter Reformation; **Armstrong,** Freneh wars of Religion. **Motley,** Revolt of the Netherlands is an admirable Narrative of great events,

• •

वाली वस्तु तथा समुद्र को अन्त में उनका प्रबल तत्व बनाने वाली वस्तु उन भीषण साहसिक कार्यों की लम्बी शृंखलाएँ थी, जिनका अनुसरण वैयक्तिक इंग्लिश लोगों ने किया।[1] अन्य मामलों की भाँति, समुद्री युद्ध में भी, स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों के वैयक्तिक साहसिक कार्यों ने राज्य की सगठित शक्ति की अपेक्षा इंग्लैण्ड की अधिक रक्षा की और निर्माण किया। अनुभव से शिक्षा पाते हुए सामुद्रिक नाविको ने जहाजों के निर्माण में, उनमें मल्लाहों को रखने में, उनको शस्त्रों से सन्नद्ध करने में और उनसे काम लेने में कई नयी विधियों का प्रयोग किया और ये विधियाँ उनको बलात् इसलिये ग्रहण करनी पड़ीं, क्योंकि उन्हें अपने ही साधनों पर निर्भर रहना पड़ता था। ये मनुष्य जिन साहसिक कार्यों में लगे हुए थे, उनमें कुछ का स्वरूप संदिग्ध और निन्दनीय भी था। निस्सन्देह, उन्होने ही यह सम्भव बनाया कि इंग्लैण्ड स्पेन की प्रभुता से अपने को तथा ब्रिटिश द्वीपसमूह को और सम्भवतः यूरोप को मुक्त कर सके। उन्होंने इंग्लैण्ड की सर्वोच्च समुद्री सत्ता को स्थापित किया, इसी समय उन्होंने संसार के लिये समुद्रों की स्वतन्त्रता को प्राप्त किया, क्योंकि उस समय के बाद स्पेन की भाँति किसी शक्ति ने यह दावा करने का साहस नही किया कि उसे यह अधिकार है कि वह संसार के कुछ सबसे अधिक महत्वपूर्ण समुद्रों से अन्य सब राष्ट्रों को बहिष्कृत करे।

इस युग के अनेक अधिकतम रोचक तथा साहसिक कार्य विशुद्ध रूप से व्यापार के नवीन मार्गों को खोलने के उद्देश्य से किये गये थे, क्योंकि इंग्लिश व्यापारी बड़ी उत्सुकता से ऐसे मौकों को ढूँढ रहे थे जिनसे वे स्पेन और पुर्तगाल के साथ प्रतिस्पर्धा करने में समर्थ हो सकें और विशेष रूप से वे पूर्व के तथा उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशो के उस लाभदायक व्यापार में भाग ले सकें, जिस पर स्पेन और पुर्तगाल ने एकाधिकार कर रखा था। समय-समय पर पश्चिमी अफ्रीका के गिनी समुद्र तट तक कई समुद्री यात्रायें की गयी थी। इनमें सबसे पहली यात्रा १५२८ ई० में प्लिमथ के विलियम हाकिन्स ने की थी। किन्तु पुर्तगाली इन्हें अपने क्षेत्र में अवैध आक्रमण समझते थे और जब तक इंग्लिश लोग १४९३ ई० में दिये गये पोप के निर्णय को साहसपूर्ण रीति से चुनौती देने के लिये और व्यापार के अपने अधिकारों को शक्ति-पूर्वक प्राप्त करने के लिये तैयार नहीं हो गये, तब तक इस दिशा में बहुत कम मौका था। पूर्वी माल पाने के पुराने स्रोतों—कुस्तुन्तुनिया और पूर्वी भूमध्य सागर में अनेक प्रयत्न किये गये, किन्तु तुर्किश प्रदेशों में व्यापार कभी भी आसान नही था और लम्बे समय तक इटालियन लोगों की प्रतिस्पर्धा बहुत प्रबल थी। वस्तुतः एक अगले युग में, इस प्रदेश में व्यापार का काफी बड़ा विस्तार हुआ। १५८० ई० में टर्की के साथ एक सन्धि की गयी। १५८१ ई० में एक लेवेन्ट कम्पनी शुरू की गयी और कुस्तुन्तुनिया में इंग्लिश एजेन्सियाँ भी थीं। १५८२ ई० में राल्फ फिच ने अलेप्पो (Aleppo) से आठ वर्ष तक चलने वाली यात्रा की और इसमें वह ईरान, भारत और सुदूर स्याम में गया। किन्तु ये केवल इसीलिये सम्भव हुए कि अन्य क्षेत्रों में तथा समुद्र पर इंग्लैण्ड की प्रतिष्ठा का आश्चर्यजनक विकास हुआ था।

---

१. इन कार्यों का सजीव वर्णन फ्रूड की "इंग्लिश सीमैन ऑफ दी सिक्सटीन्थ सेन्चुरी" में है।

८

इंग्लैण्ड के समुद्री नाविक और स्पेनिश आर्मेडा की पराजय

१. नये व्यापारिक मार्गों की खोज

अन्त में जब फिलिप द्वितीय ने यह निश्चय किया कि इंग्लैण्ड को कुचल दिया जाना चाहिये, उस समय सारी दुनिया को यह विश्वास हो गया कि इस द्वीप के राज्य का अन्त अवश्यम्भावी है, क्योंकि न केवल स्पेन का राजा तुलनातीत रीति से संसार में सबसे अधिक शक्तिशाली नरेश था, न केवल उसकी सेनाओं के अजेय होने की ख्याति थी, अपितु इंग्लैण्ड की कोई नियमित सेना बिलकुल नही थी और इस द्वीप समूह की प्रधान प्रतिरक्षा का मुख्य साधन समझे जाने वाले समुद्र में भी ऐसा प्रतीत होता था कि स्पेन के राजा की शक्ति का मुकाबिला नही किया जा सकता। १५७१ ई० में उसके बेड़े ने लेपाण्टो में तुर्कों की नौसैनिक शक्ति को हराने में मुख्य भाग लिया था। उसके अधिकार में वे सबसे बड़े जहाज थे, जो अन्ध-महासागर की निरन्तर यात्रा से इस कार्य में अभ्यास प्राप्त कर चुके थे। १५८० ई० में अपने देश के साधनों में, उसने पुर्तगाल की नाविक शक्ति को भी जोड़ लिया था। अधिकतम देशभक्त इंग्लिश व्यक्ति की, तथा अधिकतम साहसी इंग्लिश नाविक की भी दृष्टि में स्पेन के जीतने की सम्भावनाएँ अत्यधिक थीं।

फिर भी, अब हम यह देख सकते है कि स्पेनिश सेनाओं द्वारा समुद्र से इंग्लैण्ड पर आक्रमण की योजना की विफलता आरम्भ से ही निश्चित थी, बशर्ते कि इंग्लिश लोग अपने लाभों का उपयोग करने में पूर्ण रूप से विफल नही रहते। इसकी विफलता इसलिये निश्चित थी कि आर्मेडा से पहले की पीढ़ी में इंग्लिश लोगों ने समुद्री-युद्ध की नयी पद्धति सीख ली थीं, जब कि स्पेनवासी पुरानी पद्धति से ही सन्तुष्ट बने रहे। इंग्लिश लोगों को यह लाभ देने

वाली वस्तु तथा समुद्र को अन्त में उनका प्रबल तत्व बनाने वाली वस्तु उन भीषण साहसिक कार्यों की लम्बी श्रृंखलाएँ थी, जिनका अनुसरण वैयक्तिक इंग्लिश लोगों ने किया।[1] अन्य मामलों की भाँति, समुद्री युद्ध में भी, स्वतन्त्रता-प्रेमी लोगों के वैयक्तिक साहसिक कार्यों ने राज्य की संगठित शक्ति की अपेक्षा इंग्लैण्ड की अधिक रक्षा की और निर्माण किया। अनुभव से शिक्षा पाते हुए सामुद्रिक नाविकों ने जहाजों के निर्माण में, उनमें मल्लाहों को रखने में, उनको शस्त्रों से सन्नद्ध करने मे और उनसे काम लेने में कई नयी विधियों का प्रयोग किया और ये विधियाँ उनको बलात् इसलिये ग्रहण करनी पड़ीं, क्योंकि उन्हें अपने ही साधनों पर निर्भर रहना पड़ता था। ये मनुष्य जिन साहसिक कार्यों में लगे हुए थे, उनमें कुछ का स्वरूप संदिग्ध और निन्दनीय भी था। निस्सन्देह, उन्होने ही यह सम्भव बनाया कि इंग्लैण्ड स्पेन की प्रभुता से अपने को तथा ब्रिटिश द्वीपसमूह को और सम्भवतः यूरोप को मुक्त कर सके। उन्होंने इंग्लैण्ड की सर्वोच्च समुद्री सत्ता को स्थापित किया, इसी समय उन्होने संसार के लिये समुद्रों की स्वतन्त्रता को प्राप्त किया, क्योंकि उस समय के बाद स्पेन की भाँति किसी शक्ति ने यह दावा करने का साहस नही किया कि उसे यह अधिकार है कि वह संसार के कुछ सबसे अधिक महत्वपूर्ण समुद्रों से अन्य सब राष्ट्रों को बहिष्कृत करे।

इस युग के अनेक अधिकतम रोचक तथा साहसिक कार्य विशुद्ध रूप से व्यापार के नवीन मार्गों को खोलने के उद्देश्य से किये गये थे, क्योंकि इंग्लिश व्यापारी बड़ी उत्सुकता से ऐसे मौकों को ढूँढ रहे थे जिनसे वे स्पेन और पुर्तगाल के साथ प्रतिस्पर्धा करने में समर्थ हो सकें और विशेष रूप से वे पूर्व के तथा उष्ण कटिबन्ध के प्रदेशो के उस लाभदायक व्यापार में भाग ले सकें, जिस पर स्पेन और पुर्तगाल ने एकाधिकार कर रखा था। समय-समय पर पश्चिमी अफ्रीका के गिनी समुद्र तट तक कई समुद्री यात्रायें की गयी थीं। इनमें सबसे पहली यात्रा १५२८ ई० में प्लिमथ के विलियम हाकिन्स ने की थी। किन्तु पुर्तगाली इन्हें अपने क्षेत्र में अवैध आक्रमण समझते थे और जब तक इंग्लिश लोग १४९३ ई० में दिये गये पोप के निर्णय को साहसपूर्ण रीति से चुनौती देने के लिये और व्यापार के अपने अधिकारों को शक्ति-पूर्वक प्राप्त करने के लिये तैयार नहीं हो गये, तब तक इस दिशा में बहुत कम मौका था। पूर्वी माल पाने के पुराने स्रोतों—[illegible] और पूर्वी भूमध्य सागर में अनेक प्रयत्न किये गये, किन्तु तुर्किश प्रदेशों में व्यापार कभी भी आसान नही था और लम्बे समय तक इटालियन लोगों की प्रतिस्पर्धा बहुत प्रबल थी। वस्तुतः एक अगले युग में, इस प्रदेश में व्यापार का काफी बड़ा विस्तार हुआ। १५८० ई० में टर्की के साथ एक सन्धि की गयी। १५८१ ई० में एक लेवेन्ट कम्पनी शुरू की गयी और कुस्तुन्तुनिया में इंग्लिश एजेन्सियाँ भी थीं। १५८२ ई० में राल्फ फिच ने अलेप्पो (Aleppo) से आठ वर्ष तक चलने वाली यात्रा की और इसमें वह ईरान, भारत और सुदूर स्याम में गया। किन्तु ये केवल इसीलिये सम्भव हुए कि अन्य क्षेत्रों में तथा समुद्र पर इंग्लैण्ड की प्रतिष्ठा का आश्चर्यजनक विकास हुआ था।

---

१. इन कार्यों का सजीव वर्णन फ्रूड की "इंग्लिश सीमैन ऑफ दी सिक्सटीन्थ सेन्चुरी" में है।

शीघ्र ही मनुष्य इस विचार से आकर्षित होने लगे कि वे पूर्व के लिये एक रास्ता या तो एशिया का उत्तर का चक्कर काटता हुआ या अमेरिका के उत्तर का चक्कर काटता हुआ अर्थात् एक उत्तर-पूर्वी मार्ग या उत्तर-पश्चिमी मार्ग ढूँढें। पहले उत्तर-पूर्वी मार्ग के लिये प्रयत्न किया गया। १५५३ ई० में विलोबी तथा चान्सलर उत्तरी अन्तरीप का चक्कर काटने के लिये निकले। विलोबी विनष्ट हो गया, किन्तु चान्सलर आर्कन्जल तक चला गया और वहाँ से उसने मास्को की स्थल यात्रा की। इस से रूस के साथ व्यापार खुल गया। १५५८ ई० में एन्थनी जेनकिन्सन इस मार्ग से वोल्गा के साथ-साथ नीचे की ओर तथा कैस्पियन सागर के पार बुखारा तक गया। यह आश्चर्य जनक यात्रा थी, किन्तु इतने कष्टप्रद मार्ग से पूर्व तक पहुँचने की आशा बेकार थी। शीघ्र ही यह प्रदर्शित किया गया कि उत्तर पूर्वी मार्ग का अनुसरण लाभदायक रूप से आर्कन्जल से आगे नहीं किया जा सकता। यद्यपि रूस के साथ कुछ व्यापार, इस प्रयोजन के लिये स्थापित एक मस्कोवी कम्पनी द्वारा विकसित किया गया, तथापि मनुष्यों की आशाएँ शीघ्र ही दूसरी दिशाओं की ओर मुड़ने लगीं। रूस का व्यापार भी मुख्य रूप से बाल्टिक सागर के मार्ग से होता था और यहाँ इंग्लिश व्यापारियों को हैन्सियाटिक व्यापारियों के विरोध का सामना करना पड़ता था। उनके जहाज सदैव लड़ने के लिये तैयार रखना आवश्यक था। इस प्रकार उत्तर-पूर्व का मार्ग खोजने के प्रयास का परिणाम बहुत कम हुआ, किन्तु जो मनुष्य और जहाज इन तूफानी समुद्रों का मुकाबला कर सकते थे, वे हर तरह का महान् कार्य करने में समर्थ थे।

काफी समय बाद ही यह सम्भव हुआ कि उत्तर-पश्चिमी मार्ग को खोजने के लिये गम्भीर प्रयत्न किये जांय। यह उस समय हुआ जब कि स्पेन के साथ संघर्ष अतीव तीव्र था और जब ड्रेक ने इससे पहले ही पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह की लूट-पाट आरम्भ कर दी थी। १५७६-७८ ई० में मार्टिन फ्रोबिशर ने एस्किमों जाति के प्रदेशों में तीन साहसिक यात्राएं की; १५८६-८७ ई० में की गयी तीन समुद्र-यात्राओं में जान डेविस ने ग्रीनलैण्ड के समुद्र-तटों का तथा उस जलडमरूमध्य का अन्वेषण किया, जिसका नाम उसके नाम पर है। तूफानी, बर्फीले और अज्ञात सागरों में छोटे जहाजों के साथ इन साहसिक कार्यों की वीरता प्रशंसातीत है[1]। किन्तु इन्होंने केवल यही प्रदर्शित किया कि इस ओर से भी कोई आसान मार्ग नहीं है और एलिज़ाबेथ के जमाने के लोगों के लिये अपने आप ध्रुवीय अन्वेषण का आकर्षण बहुत कम था। स्पष्ट शब्दों में, यदि इंग्लैण्ड उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों के व्यापार में हिस्सा लेना चाहता था, तो यह केवल तभी सम्भव था जब कि स्पेन और पुर्तगाल के एकाधिकार को बलपूर्वक भंग किया जाय, जिस पर १५८० ई० तक केवल स्पेन का ही एकाधिकार हो गया था।

२. इंग्लिश चैनल के (Narrow Seas) समुद्री डाकू

इसी बीच में इंग्लिश समुद्रों की साहसी भावना को एक अन्य क्षेत्र में रास्ता मिल गया। इन्होंने बड़ी संख्या में वह कार्य शुरू कर दिया जिसे इंग्लिश चैनल और बिस्के की

१. ध्रुवीय समुद्रों में एलिज़ाबेथ के समय किये गये अन्वेषणों के लिये देखिये एटलस के पांचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४६ (बी), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५६।

खाड़ी में समुद्री डकैती ही कहा जा सकता था। यहाँ वे जहाजों की उस पंक्ति पर हमला करते थे जो विशेष रूप से स्पेन और उसके नीदरलैण्ड्स मे अधिकृत प्रदेशों के बीच में गुजरा करती थी। समुद्री डकैती सदैव इन समुद्रों में और वस्तुतः सभी समुद्रों में सामान्य बात थी। समुद्र पर कोई कानून और कोई शान्ति नही थी तथा समुद्र किसी शक्ति के नियन्त्रण में नही थे; क्योंकि उस समय अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विचार की कोई सत्ता नहीं थी और समुद्री डाकू के पेशे को बहुत सम्मानित समझा जाता था। एडवर्ड षष्ठ के शासन काल में जब धार्मिक मत-भेदों ने महान् कैथोलिक शक्ति के विरुद्ध इस अनियमित युद्ध को अधिक बल देना शुरू किया, और इंग्लिश भद्र जन डकैती का काम करने लगे, उस समय राजा के अपने चाचा, इंग्लैण्ड के समुद्री सेनापति (Lord High Admiral) सर थामस सेमोर ने सिली के टापुओं को समुद्री डाकुओं का अड्डा बना दिया। किन्तु मेरी के राज्यकाल में ही ऐसा हुआ कि समुद्री डकैती के इन साहसिक कार्यों को व्यापक रूप से देशभक्तिपूर्ण समझा जाने लगा। वे स्पेन के प्रति इंग्लैण्ड की अपमानजनक वश्यता के तथा स्मिथफील्ड की ज्वालाओं के विरुद्ध प्रतिवाद करने के सबसे आसान साधन थे। इस अनियमित युद्ध में उन व्यक्तियों द्वारा भीषणता लायी गयी, जो अपनी शक्ति के सिवाय किसी अन्य सहायता के समर्थन पर निर्भर नहीं रह सकते थे। दक्षिण के समुद्री तट की ओर, विशेषतः डेवन की खाड़ियाँ इन साहसिक कार्यों के लिये प्रशंसाजनक रीति से उत्तम थी। अनेक युवा तथा कुलीन परिवार के डेवनवासी व्यक्ति तथा अनेक धूर्त व्यक्ति भी इस साहसिक और कानूनहीन पेशे मे बड़े उत्साह के साथ सफल हुए। उनका विश्वास था कि वे इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता के लिये और प्रोटेस्टेण्ट धर्म के लिये लड़ रहे हैं, वे स्पेनिश धार्मिक न्यायालय द्वारा पकड़े गये अनेक इंगलिश नाविकों की मृत्युओं और उत्पीड़नों का बदला ले रहे है और प्रायः उन्हें प्राप्त होने वाला समृद्धिपूर्ण लूट का माल उनके उत्साह को बढ़ावा देता था।

किन्तु एलिज़ाबेथ के राज्यकाल के आरम्भ के बाद से ही यह उग्र, अनियमित समुद्री युद्ध सब से अधिक क्रियाशील हो गया, क्योंकि अब यह स्पष्ट था कि इंग्लैण्ड की स्थिति कितनी नाजुक है और उस पर स्पेन के हमले का कितना बड़ा संकट है, बशर्ते कि फिलिप को कभी इस आक्रमण के लिये फ़ुरसत हो। स्पेन के राजदूत इस विषय में कटुता पूर्वक प्रतिवाद करते रहे, किन्तु यह सब व्यर्थ था। एलिज़ाबेथ ने इन समुद्री डाकुओं के लिये अपनी सारी जिम्मेवारी को अस्वीकार किया। किन्तु उसने इन्हें रोकने के लिये कोई भी कार्य नहीं किया। उसे इस बात का दुःख नही था कि स्पेन इस बात को समझ ले कि इंग्लिश लोग लड़ सकते हैं और ये समुद्र खतरनाक हैं।

इन साहसिक कार्यों में केवल इंग्लिश लोग ही नहीं लगे हुए थे। नीदरलैण्ड्स में आलवा के अत्याचार ने देशभक्त डचों को समुद्री युद्ध के लिये बाधित किया था। ये अपने को 'समुद्री बेगर' (Beggars of the Sea) कहते थे और इनकी स्थिति आंशिक रूप में उस जमाने के विचारों के अनुसार ऑरेन्ज के विलियम द्वारा प्रचारित मार्क (Marque) नाम के पत्रों द्वारा निश्चित कर दी गयी थी। १५७२ ई० तक वे अपने अड्डों के रूप में इंग्लिश बन्दरगाहों का प्रयोग

शीघ्र ही मनुष्य इस विचार से आकर्षित होने लगे कि वे पूर्व के लिये एक रास्ता या तो एशिया का उत्तर का चक्कर काटता हुआ या अमेरिका के उत्तर का चक्कर काटता हुआ अर्थात् एक उत्तर-पूर्वी मार्ग या उत्तर-पश्चिमी मार्ग ढूँढें। पहले उत्तर-पूर्वी मार्ग के लिये प्रयत्न किया गया। १५५३ ई० में विलोबी तथा चान्सलर उत्तरी अन्तरीप का चक्कर काटने के लिये निकले। विलोबी विनष्ट हो गया, किन्तु चान्सलर आर्केन्जल तक चला गया और वहाँ से उसने मास्को की स्थल यात्रा की। इस से रूस के साथ व्यापार खुल गया। १५५८ ई० में एन्थनी जेनकिन्सन इस मार्ग से वोल्गा के साथ-साथ नीचे की ओर तथा कैस्पियन सागर के पार बुखारा तक गया। यह आश्चर्य जनक यात्रा थी, किन्तु इतने कष्टप्रद मार्ग से पूर्व तक पहुँचने की आशा बेकार थी। शीघ्र ही यह प्रदर्शित किया गया कि उत्तर पूर्वी मार्ग का अनुसरण लाभदायक रूप से आर्केन्जल से आगे नहीं किया जा सकता। यद्यपि रूस के साथ कुछ व्यापार, इस प्रयोजन के लिये स्थापित एक मस्कोवी कम्पनी द्वारा विकसित किया गया, तथापि मनुष्यों की आशाएँ शीघ्र ही दूसरी दिशाओं की ओर मुड़ने लगीं। रूस का व्यापार भी मुख्य रूप से बाल्टिक सागर के मार्ग से होता था और यहाँ इंग्लिश व्यापारियों को हैन्सियाटिक व्यापारियों के विरोध का सामना करना पड़ता था। उनके जहाज सदैव लड़ने के लिये तैयार रखना आवश्यक था। इस प्रकार उत्तर-पूर्व का मार्ग खोजने के प्रयास का परिणाम बहुत कम हुआ, किन्तु जो मनुष्य और जहाज इन तूफानी समुद्रों का मुकाबला कर सकते थे, वे हर तरह का महान् कार्य करने में समर्थ थे।

काफी समय बाद ही यह सम्भव हुआ कि उत्तर-पश्चिमी मार्ग को खोजने के लिये गम्भीर प्रयत्न किये जांय। यह उस समय हुआ जब कि स्पेन के साथ संघर्ष अतीव तीव्र था और जब ड्रेक ने इससे पहले ही पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह की लूट-पाट आरम्भ कर दी थी। १५७६-७८ ई० में मार्टिन फ्रोविशर ने एस्किमों जाति के प्रदेशों में तीन साहसिक यात्राएं की; १५८६-८७ ई० में की गयी तीन समुद्र-यात्राओं में जान डेविस ने ग्रीनलैण्ड के समुद्र-तटों का तथा उस जलडमरूमध्य का अन्वेषण किया, जिसका नाम उसके नाम पर है। तूफानी, बर्फीले और अज्ञात सागरों में छोटे जहाजों के साथ इन साहसिक कार्यों की वीरता प्रशंसातीत है[१]। किन्तु इन्होंने केवल यही प्रदर्शित किया कि इस ओर से भी कोई आसान मार्ग नहीं है और एलिज़ाबेथ के जमाने के लोगों के लिये अपने आप ध्रुवीय अन्वेषण का आकर्षण बहुत कम था। स्पष्ट शब्दों में, यदि इंग्लैण्ड उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों के व्यापार में हिस्सा लेना चाहता था, तो यह केवल तभी सम्भव था जब कि स्पेन और पुर्तगाल के एकाधिकार को बलपूर्वक भंग किया जाय, जिस पर १५८० ई० तक केवल स्पेन का ही एकाधिकार हो गया था।

२. इंग्लिश चैनल के (Narrow Seas) समुद्री डाकू

इसी बीच में इंग्लिश समुद्रों की साहसी भावना को एक अन्य क्षेत्र में रास्ता मिल गया। इन्होंने बड़ी संख्या में वह कार्य शुरू कर दिया जिसे इंग्लिश चैनल और बिस्के की

१. ध्रुवीय समुद्रों में एलिज़ाबेथ के समय किये गये अन्वेषणों के लिये देखिये एटलस के पांचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४९ (बी), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५९।

खाड़ी में समुद्री डकैती ही कहा जा सकता था। यहाँ वे जहाजों की उस पंक्ति पर हमला करते थे जो विशेष रूप से स्पेन और उसके नीदरलैण्ड्स में अधिकृत प्रदेशों के बीच में गुजरा करती थी। समुद्री डकैती सदैव इन समुद्रों में और वस्तुतः सभी समुद्रों में सामान्य बात थी। समुद्र पर कोई कानून और कोई शान्ति नहीं थी तथा समुद्र किसी शक्ति के नियन्त्रण में नहीं थे; क्योंकि उस समय अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विचार की कोई सत्ता नहीं थी और समुद्री डाकू के पेशे को बहुत सम्मानित समझा जाता था। एडवर्ड षष्ठ के शासन काल में जब धार्मिक मत-भेदों ने महान् कैथोलिक शक्ति के विरुद्ध इस अनियमित युद्ध को अधिक बल देना शुरू किया, और इंग्लिश भद्र जन डकैती का काम करने लगे, उस समय राजा के अपने चाचा, इंग्लैण्ड के समुद्री सेनापति (Lord High Admiral) सर थामस सेमोर ने सिली के टापुओं को समुद्री डाकुओं का अड्डा बना दिया। किन्तु मेरी के राज्यकाल में ही ऐसा हुआ कि समुद्री डकैती के इन साहसिक कार्यों को व्यापक रूप से देशभक्तिपूर्ण समझा जाने लगा। वे स्पेन के प्रति इंग्लैण्ड की अपमानजनक वश्यता के तथा स्मिथफील्ड की ज्वालाओं के विरुद्ध प्रतिवाद करने के सबसे आसान साधन थे। इस अनियमित युद्ध में उन व्यक्तियों द्वारा भीषणता लायी गयी, जो अपनी शक्ति के सिवाय किसी अन्य सहायता के समर्थन पर निर्भर नहीं रह सकते थे। दक्षिण के समुद्री तट की ओर, विशेषतः डेवन की खाड़ियाँ इन साहसिक कार्यों के लिये प्रशंसाजनक रीति से उत्तम थीं। अनेक युवा तथा कुलीन परिवार के डेवनवासी व्यक्ति तथा अनेक धूर्त व्यक्ति भी इस साहसिक और कानूनहीन पेशे में बड़े उत्साह के साथ सफल हुए। उनका विश्वास था कि वे इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता के लिये और प्रोटेस्टेण्ट धर्म के लिये लड़ रहे हैं, वे स्पेनिश धार्मिक न्यायालय द्वारा पकड़े गये अनेक इंगलिश नाविकों की मृत्युओं और उत्पीड़नों का बदला ले रहे हैं और प्रायः उन्हें प्राप्त होने वाला समृद्धिपूर्ण लूट का माल उनके उत्साह को बढ़ावा देता था।

किन्तु एलिज़ाबेथ के राज्यकाल के आरम्भ के बाद से ही यह उग्र, अनियमित समुद्री युद्ध सब से अधिक क्रियाशील हो गया, क्योंकि अब यह स्पष्ट था कि इंग्लैण्ड की स्थिति कितनी नाज़ुक है और उस पर स्पेन के हमले का कितना बड़ा संकट है, बशर्ते कि फिलिप को कभी इस आक्रमण के लिये फ़ुरसत हो। स्पेन के राजदूत इस विषय में कटुता पूर्वक प्रतिवाद करते रहे, किन्तु यह सब व्यर्थ था। एलिज़ाबेथ ने इन समुद्री डाकुओं के लिये अपनी सारी जिम्मेवारी को अस्वीकार किया। किन्तु उसने इन्हें रोकने के लिये कोई भी कार्य नहीं किया। उसे इस बात का दुःख नहीं था कि स्पेन इस बात को समझ ले कि इंग्लिश लोग लड़ सकते हैं और ये समुद्र खतरनाक हैं।

इन साहसिक कार्यों में केवल इंग्लिश लोग ही नहीं लगे हुए थे। नीदरलैण्ड्स में आलवा के अत्याचार ने देशभक्त डचों को समुद्री युद्ध के लिये बाधित किया था। ये अपने को 'समुद्री बेगर' (Beggars of the Sea) कहते थे और इनकी स्थिति आंशिक रूप में उस जमाने के विचारों के अनुसार ऑरेन्ज के विलियम द्वारा प्रचारित मार्क (Marque) नाम के पत्रों द्वारा निश्चित कर दी गयी थी। १५७२ ई० तक वे अपने अड्डों के रूप में इंग्लिश बन्दरगाहों का प्रयोग

स्वतन्त्रतापूर्वक करते रहे और वे अपने देशवासियों को कुचलने के लिये स्पेन से भेजी जाने वाली कुमुक का मार्ग काटने में लगे रहे। फ्रांस के ह्यूगनाट नाविक भी इस भीषण खेल में सम्मिलित हो गये। कोंडे के राजा द्वारा दिये गये मार्क के पत्र भी इनके पास थे। इनका मुख्य अड्डा ला रोशेल था। वे प्राय: इंग्लिश बन्दरगाहों का भी उपयोग करते थे। इस प्रकार इंग्लिश, फ्रेंच और डच लोग अपने सामान्य शत्रु के विरुद्ध एक साझेदारी में सम्मिलित हो गये और उन सब ने मिल कर इंग्लिश चैनल के मार्ग को स्पेनिश जहाजों के लिये विशेषरूप से अत्यधिक असुरक्षित बना दिया। हमें बताया जाता है कि १५६२ ई० में इंग्लिश चैनल में ४०० इंग्लिश और फ्रेंच लुटेरे थे और उन्होंने ७०० जहाज अपने अधिकार में ले लिये थे। एलिज़ाबेथ प्रसन्न होती थी कि ऐसा होना चाहिये और गुप्त रीति से सहायता भी करती थी, यद्यपि वह खुली स्वीकृति देने का साहस नहीं करती थी। १५६८ ई० में जब स्काट लोगों की मेरी को स्पेन की मदद से इंग्लिश राजगद्दी पर बिठाने का उत्तरी अर्लों का षड्यन्त्र परिपक्व हो रहा था, उस समय ह्यूगनाट लुटेरों ने साउथम्पटन में एक स्पेनिश बेड़े का पीछा किया। यह जिनेवा के महाजनों से उधार लिये गये कोष से लदा हुआ था, इसका गन्तव्य स्थान नीदरलैण्ड्स था। सम्भवतः यह इंगलैण्ड पर हमला करने वाली एक सेना के लिये था। एलिज़ा-बेथ ने अधिक सुरक्षा के लिये इसके कोष पर अधिकार कर लिया और बाद में इस बात की की व्यवस्था की कि वह जिनेवा के लोगों से अपने निजी प्रयोजनों के लिये धन उधार ले।

वस्तुतः इंग्लिश चैनल के समुद्री डाकू एक ऐसी अत्यधिक बलशाली शक्ति के विरुद्ध निजी और अनियमित युद्ध में लगे हुए थे, जिसको उस समय तक चुनौती देने का साहस उनका देश भी नहीं कर सकता था। उनकी अत्यधिक अनुचित कार्यवाहियाँ कई बार भीषण क्रूरता से भी कलंकित होती थीं। निस्सन्देह, ये स्पेन के राजा को रोकने वाली और नीदरलैण्ड्स के विद्रोह को दबाने के कार्य से रोकने में सहायता करने वाली थी और इन्होंने इंग्लैण्ड पर अनिवार्य आक्रमण को उस समय तक विलम्बित किया, जब तक कि वह उसका प्रतिरोध करने के लिए तैयार नहीं हो गया। किन्तु सबसे बढ़ कर इन्होंने एक अत्यन्त साहसी और योग्य नाविकों की श्रेणी को प्रशिक्षित किया, जिसने अपने स्पेनिश शत्रुओं से घृणा करना तथा निर्भीक भाव से भीषणतम साहसिक कार्यों का सामना करना सीख लिया था।

इन अवैध और अनियमित साहसिक कार्यों से समुद्री युद्ध की ऐसी नयी विधियाँ उत्पन्न हुईं, जिन्होंने दक्षिणी समुद्रों में तथा आर्मेडा की लड़ाइयों में अपनी प्रभावशालिता सिद्ध करनी थी। स्पेनवाले अपने पुराने विचारों से चिपटे हुए थे। उनके समुद्री युद्ध का विचार यह था कि यह यथासम्भव स्थल-युद्ध की भाँति होना चाहिये, वे अपने जहाज रणक्षेत्र के लिए शस्त्रबद्ध सैनिकों से भरते थे, प्रायः तूफानों वाली ऋतु में उन्हें समुद्री बीमारी हो जाती थी और वे हीन समझे जाने वाले नाविकों को केवल यही कर्त्तव्य सौंपते थे कि वे उनके जहाज शत्रु के पास तक ले जाएँ ताकि सैनिक शत्रु के जहाज पर चढ़ जाएँ और भाले, बन्दूक और तलवार से लड़ें। उनके जहाज की रचनाएँ बड़ी भद्दी होती थीं तथा उनको आसानी से काम में नहीं लाया जा सकता था। दक्षिण के अधिक शान्त समुद्रों ने लड़ने में उन्हें यह सिखाया था कि वे कुछ अंशों में चप्पू

चलाने वाले दासों से चलाये जाने वाले और गेलियास नामक रणपोतों पर अधिक रूप में भरोसा रखें, क्योंकि उनकी लड़ाई का विचार बहुत निकट से लड़ने का होता था, अतः उन्होंने तोपखाने पर कोई ध्यान नही दिया और प्रायः इन पर केवल थोड़ी सी बन्दूकें पिछले एवं अगले हिस्से में बहुत ऊँचाई पर लगी होती थी। ये तोपें शोर कर सकती थीं, किन्तु अपनी ऊँचाई के कारण उन पर जहाज की पूरी गति का प्रभाव पड़ता था। इससे उनका लक्ष्य बिगड़ जाता था और वे तोपों के गोलों की एक बौछार नही छोड़ सकते थे। समुद्री डाकुओं को बिल्कुल दूसरे ढंगों का आविष्कार करना पड़ा। उन्हें ऐसे तेज और हलके पोतों की आवश्यकता थी, जो हवा के बिल्कुल साथ पाल की सहायता से चल सके, जिनको चतुराई से स्थिति परि-वर्तन करने आदि में आसानी हो और जो उत्कृष्ट शक्ति के सामने से फुर्ती से हट सकें। इन्होंने अपने जहाजों के लिये रस्सी, बल्ली आदि सुसज्जित करने के ऐसे ढँगों का विकास किया, जो मुख्य रूप से छोटे पोतों के लिए उपयोगी होने पर भी, उन्हें स्पेन के तैरते किलों की चालों को आसानी से मात देने के योग्य बनाते थे। उनके छोटे पोतों के नाविकों को लड़ने के लिए और जहाज पर काम करने के लिए तैयार रहना पड़ता था और उनकी लड़ाई के ढंग स्थलयुद्ध की लड़ाई के समान नही थे। उनका लक्ष्य सदैव इनसे बचे रहने का होता था, अतः वे तोपखाने की ओर बहुत ध्यान देते थे। छोटे होने पर भी वे स्पेनिश लोगों की अपेक्षा अधिक संख्या में और ज्यादा भारी तोपों को सामान्य रूप से जहाजों पर ले जाते थे। वे तोप के गोलों की एक बौछार भी छोड़ सकते थे, क्योंकि उनकी तोपें पानी के नजदीक से छोड़ी जाती थी, अतः वे बहुत ऊँचे स्पेनिश जहाजों का बहुत अधिक नुकसान कर सकते थे। समुद्री डाकुओं के जहाज बहुत छोटे होते थे। कुछ तो इसका कारण यह था कि वैयक्तिक साहसी व्यक्तियों के पास बड़े जहाजों के लिए पैसा नहीं था। किन्तु बड़ा कारण यह था कि छोटे जहाज ही आगे और पीछे रस्सी और बल्ली आदि से सुसज्जित करने लिए अधिक उपयुक्त थे। किन्तु स्पेन के अभिमानी विशाल पोतों की तुलना में इनमें से बहुत से पोत मच्छर जैसे प्रतीत होते थे, तथापि वे इतनी फुर्ती से चलते थे कि उनका मुकाबला करना सम्भव नहीं था। समुद्री डकैती के युग में शनैः शनैः विकसित होने वाले समुद्री युद्ध के इन नये तरीकों ने आर्मेडा की हार को अन्त में निश्चित कर दिया। इसी बीच में उन्होंने स्पेनिश समुद्र के उन साहसिक और मादक कृत्यों को सम्भव बनाया, जिनके लिए वे एक तैयारी मात्र थे।

३. ड्रेक तथा स्पेनिश समुद्र के साहसिक कार्य

उष्ण कटिबन्ध से निष्कासन की क्षति पूर्ति कर सकने वाले, पूर्व के अथवा पूर्वी व्यापार के मार्गों को ढूँढ़ने के प्रयत्नों की विफलता ने इसे स्पष्ट कर दिया था कि आवश्यकता पड़ने पर शक्ति द्वारा समर्थित होने वाली, स्पेनिश और पुर्तगाली एकाधिकार को दी जाने वाली सीधी चुनौती से ही इंग्लैण्ड के व्यापार को नवजीवन दिया जा सकता है। इस समय तक इंग्लैण्ड प्रोटेस्टेण्ट था, इसलिए अब १४९३ ई० के पोप के उस निर्णय के पालन के लिए कोई धार्मिक बाध्यता भी नहीं थी, जिसके कारण यह एकाधिकार बना हुआ था। इंग्लिश सरकार की अभी यह हिम्मत नहीं थी कि वह खुली चुनौती दे, किन्तु इंग्लिश नाविक इसे अपनी ओर से चुनौती

देने को बहुत तैयार थे और एलिज़ाबेथ इस बात के लिए अतीव उत्सुक थी कि इन्हें ऐसा अवश्य करना चाहिए। वह इन साहसिक कार्यों के लिए उन्हें राजकीय जहाज भी उधार देने की इच्छुक थी, बशर्ते कि स्पेन के विरुद्ध खुला युद्ध न हो और उसे मुनाफे का पूरा हिस्सा मिले। इस चुनौती में दो अवस्थाओं को पहचाना जा सकता था। पहली अवस्था सच्चे व्यापार की है, यह इसे रोकने वाले स्पेन के अधिकार की अस्वीकृति पर आश्रित थी। जब प्रवेश का अधिकार अस्वीकार किया जाता था तो शक्ति के प्रयोग का समर्थन किया जाता था। इसका स्वाभाविक और अनिवार्य परिणाम उस समय पूरे किन्तु अनियमित युद्ध की दूसरी दशा थी, जब स्पेनिश लोग अपनी बहिष्कार की नीति को छोड़ने से इन्कार करते थे। यद्यपि बहुत से व्यक्ति इन साहसिक कार्यों में हिस्सा ले रहे थे और उन्होंने अनेक रोमाञ्चक कार्य किये थे, तथापि ये दो अवस्थाएँ दो चचेरे भाईयों के कार्य में संक्षिप्त रूप से प्रतिपादित हैं और इससे ही इनका प्रतिनिधित्व किया जाता है। ये दोनों भाई डेवनवासी जॉन हाकिन्स और फ्रांसिस ड्रेक थे।[1] इनमें से ड्रेक को इस क्षेत्र में अपने को एक सच्चा रोमाञ्चक वीर पुरुष और एलिज़ाबेथ के समय के अनुभवी समुद्री नाविकों (Seadogs) की बहादुरी और साहस का सर्वोच्च प्रतिनिधि सिद्ध करने का अवसर मिला।

हाकिन्स उस विलियम हाकिन्स का लड़का था जिसने १५२८ ई० में गिनी प्रदेश की यात्रा करने का साहस किया था और उसका मन स्वाभाविक रूप से गिनी और स्पेनिश अमेरिका के बीच के व्यापार की ओर मुड़ा। इस व्यापार की प्रधान वस्तु वे नीग्रो दास थे, जिनका आयात तेजी से कम हो रहे मूल निवासियों का स्थान लेने के लिए अमेरिका में इस समय हो रहा था। इस युग के किसी व्यक्ति को अपने आप इस भीषण व्यापार पर आपत्ति करने की कल्पना भी नहीं थी। इसका समर्थन एक अतीव ईमानदार स्पेनिश धर्माधिकारी एवं स्पेनिश अमेरिका के धर्मप्रचारक लास कैसास ने मानवीय आधारों पर की थी। किन्तु न तो स्पेन और न ही पुर्तगाल यह देखना चाहता था कि बाहर के व्यक्ति इसमें हस्तक्षेप करें। दूसरी ओर स्पेनिश उपनिवेशक जितने नीग्रो प्राप्त कर सकते थे, वे उससे अधिक संख्या में नीग्रो चाहते थे और उनके लिए ऊँचे दाम देने को तैयार थे। हाकिन्स ने पुर्तगाल के इस अधिकार को अस्वीकार किया कि वह उसे नीग्रो प्राप्त करने से रोक सकता है। उसने इस बात को भी नामंजूर किया कि स्पेन उसे इनको बेचने से मना कर सकता है। १५६२ और ६४ ई० में उसने दो अत्यधिक सफल और लाभदायक समुद्री यात्राएँ की। दूसरी यात्रा में रानी एलिज़ाबेथ भी एक हिस्सेदार थी। जब स्पेनिश अधिकारियों ने उसे अपना व्यापार करने से रोकने का प्रयत्न किया तो उसने शक्ति के प्रयोग में संकोच नहीं किया। कई बार शक्ति का प्रदर्शन मात्र ही आवश्यक होता था, क्योंकि स्पेनिश लोग दास खरीदने के लिए उत्सुक थे। किन्तु उसने जिस आसानी से उस समय प्रस्तुत किये जाने वाले गम्भीर विरोध पर विजय प्राप्त की, उससे यह प्रदर्शित होता था कि पर्याप्त साहस के साथ आसानी से स्पेनिश साम्राज्य पर

---

१. सर जूलियन कारवेट ने इंग्लिश मैन आफ एक्शन सीरीज में ड्रेक का एक गौरवपूर्ण लघु जीवन चरित्र लिखा है।

भी आक्रमण किया जा सकता है। हाकिन्स सदैव इस बात पर अभिमान करता था कि वह व्यापार के समय हमेशा ईमानदारी से सौदा करता है। वह शक्ति का प्रयोग केवल अपनी मण्डियों को खोलने के लिए ही करता है। १५६७-६८ ई० में उसने अपना तीसरा और सबसे बड़ा साहसिक कार्य किया। इस बार रानी ने उसे दो जहाज उधार दिये, और फ्रांसिस ड्रेक उसके छोटे जहाजों में से एक जहाज की कमान करते हुए उसके साथ गया। इस समृद्धिपूर्ण समुद्र-यात्रा के बाद उसे मैक्सिको के तट पर, मरम्मत के लिए सेण्ट जुआन डी उल्लुआ में बाधित होकर रुकना पड़ा। स्पेनिश कोष ले जाने वाला बेड़ा उस समय वहाँ था, किन्तु अपनी शान्त व्यापारी की भूमिका के प्रति सच्चे रहते हुए हाकिन्स ने इसे नहीं छुआ। स्पेन का एक लड़ाकू बेड़ा बन्दरगाह में आया; हाकिन्स निश्चित रूप से इसका मार्ग रोक सकता था, किन्तु उसने यह सौदा करना अधिक पसन्द किया कि उसे अपनी मरम्मत खत्म करने और घर लौटने की अनुमति दी जाय। स्पेन के समुद्री सेनापति ने अकस्मात् अपना वचन तोड़ते हुए बन्दरगाह के उस बन्द समुद्र में बिना तैयारी वाले इंग्लिश लोगों पर हमला कर दिया, जहाँ वे अपनी परम्परागत चालों का प्रयोग नहीं कर सकते थे। रानी के एक जहाज को तथा यात्रा के सभी मुनाफे को छोड़ना पड़ा, हाकिन्स और ड्रेक केवल जर्जर दशा वाले दो छोटे जहाजों के साथ इंग्लैण्ड पहुँचे।

इसके साथ ही स्पेनिश अमेरिका में शान्तिपूर्ण व्यापार के प्रयास का अन्त हो गया। इस प्रकार का अन्त अवश्य होना ही था। इंग्लैण्ड में यह समाचार क्रोध के साथ सुना गया। इसने एलिज़ाबेथ को साउथम्पटन में स्पेनिश ख़ज़ाने से लदे जहाजों को पकड़ने का एक बहाना दे दिया। किन्तु सबसे बड़ी बात यह थी कि इसके कारण फ्रांसिस ड्रेक ने यह संकल्प किया कि वह अमेरिका में स्पेनिश प्रभुता के विरुद्ध अपनी ओर से, बिना किसी आवरण और संकोच के युद्ध जारी रखेगा। गठीले, नाटे बदन वाले तथा फौलाद के समान नीली आँखों वाले इस नौ-जवान ने अपने को भीषण शत्रु सिद्ध किया। वह अपने बचपन से ही समुद्री यात्रा कर रहा था। उसने नीदरलैण्ड्स के साथ व्यापार किया था और वहाँ उसे स्पेन की पद्धतियों से घृणा हो गयी थी। वह स्पेन भी गया था और उसने धार्मिक न्यायालय द्वारा दण्डित इंग्लिश व्यक्तियों को भी देखा था। इसके बाद उसके जीवन में स्पेन के साथ युद्ध के अतिरिक्त कोई लक्ष्य नहीं रहा। १५९६ ई० में उस समय तक उसने निर्ममता पूर्वक स्पेन के साथ युद्ध किया, जब तक कि वह पोर्टोबेल्लो के पास उन समुद्रों के निकट नहीं गाड़ दिया गया, जहाँ उसका नाम इतने लम्बे समय से एक आतंक बना हुआ था। स्पेनिश भाषा में अल्ड्रेक का अर्थ 'महा सर्प' होता है, वस्तुतः वह स्पेन के लिए बीस से अधिक वर्षों तक एक महासर्प था। उसकी मृत्यु के बाद कई पीढ़ियों तक स्पेन की मातायें अपने बच्चों को अल्ड्रेक की धमकियों से डरा कर सुलाया करती थीं।

हम यहाँ उसके अविश्वसनीय कारनामों की पूरी कहानी नहीं कह सकते। उसके लिए कोई भी साहसिक कार्य असम्भव नहीं था। वह मुट्ठी भर, कोलतार से काले बने हुए नाविकों के साथ एक किले पर हमला कर देता था अथवा अपने जहाज के आकार से दुगने आकार

वाले बड़े जहाज को किले की तोपों के नीचे ही काट डालता था अथवा अज्ञात तथा शत्रुओं से परिपूर्ण एक पोत की छोटी उथली नौका में ही उतरने का साहस करता था। फिर भी उसके पागलपन में सदैव एक पद्धति थी। जिन उपायों को वह अपनाता था, उनमें एक प्रकार की उन्मत्त विनोदपूर्ण चतुराई थी। उसने अपने लिए एक नियम बना रखा था। यह उसे उसके समकालीन अधिकांश भीषण व्यक्तियों से पृथक करता था। वह न लड़ने वालों के प्राण कभी नहीं लेता था।

उसकी अनेक यात्राओं और साहसिक कार्यों में से केवल तीन का ही उल्लेख किया जा सकता है। उसकी पहली दो समुद्र-यात्राओं के बारे में हम बहुत कम जानते हैं। इनके बाद १५७२ ई० में उसने दो जहाजों के साथ स्पेनिश साम्राज्य के मर्मस्थल पर हमला करने के लिये प्रस्थान किया। इनमें से एक जहाज ७० टन का था और दूसरा २५ टन का। सब मिलाकर इसमें ३३ व्यक्तियों का नाविक दल था। कुछ समय के लिये उसने नाम्ब्रे डी डिओस[1] के नगर पर अधिकार और कब्जा कर लिया। यहाँ पानामा के स्थलडमरुमध्य से होकर आने वाले स्पेनिश खजानों को यूरोप के लिये जहाजों पर लादा जाता था, किन्तु उसे वहाँ जो चाँदी की छड़ों के अम्बर मिले, उन्हें अधिकार में लाने से पहले ही उसे लौट आना पड़ा था। उसने कार्टाजिना के किलेबन्द बन्दरगाह पर हमला किया और वहाँ से एक बड़े जहाज को विजय में प्राप्त करके उसे समुद्र में ले गया, इस जहाज का घाट पर लदान हो रहा था। वह बिल्कुल अज्ञात रूप से पानामा के स्थलडमरुमध्य की भूमि पर उतरा और मित्र बनाये हुए अपने कुछ जंगली वर्णसंकरों की सहायता से उसने पेरू की खानों की वार्षिक पैदावार को नाम्ब्रे डी डिओस ले जाने वाली खच्चरों की महान् पंक्तिमाला को रोका, और इसका सर्वोत्तम अंश उसने अपने जहाजों पर लाद दिया। उसने कैरिबियन सागर में २०० जहाजों को रोका, उनकी तलाशी ली और उनका खजाना उनसे छीन लिया। इस सारे समय में उसने किसी स्त्री अथवा किसी निश्शस्त्र व्यक्ति को कभी चोट नहीं पहुँचायी। तब वह अपने जहाज को लूट के माल से जहाज की ऊपर की मोरियों तक लबालब भर कर घर की ओर मुड़ा। जब वह कोर्टजेना पहुँचा, उस समय उसने खजाना ले जाने वाले सब बड़े जहाजों को सुरक्षा के लिये एक स्थान पर एकत्र पाया। अपने विशिष्ट साहस प्रदर्शन के साथ वह उनके बिल्कुल पास खड़ा रहा और मस्तूल पर सेण्ट जार्ज के झण्डे को तथा अपने सभी झण्डों के फहराते हुए वह उनके पास से होकर गुजरा। वह अगस्त १५७३ ई० में पुनः इंग्लैण्ड पहुँचा।

इस समुद्री यात्रा में उसने पानामा के स्थलडमरूमध्य से प्रशान्त महासागर की उस जलराशि को देखा था जो अब तक स्पेन का एक मात्र सुरक्षित स्थान थी। इन अनतिक्रम्य समुद्रों में जाने का साहस करना उसके गौरवपूर्ण औद्धत्य की अगली योजना थी। यद्यपि उन तक पहुँचने का एक मात्र जलमार्ग मैगलैन के खतरनाक जलडमरुमध्य में से होकर था, और इसमें से गुजरने पर वह किसी सहायता अथवा शरणस्थल का भरोसा नहीं रख सकता

---

१ एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५३, तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५० का मान चित्र देखिये।

था। अल्प समय तक आयरिश समुद्र में सेवा करने के बाद, उसने ऐसी कम्पनी बनाने की व्यवस्था की, जो उसे एक छोटा बेड़ा दे सके। जोशीले स्वयंसेवकों की बड़ी संख्या उसके साथ सम्मिलित होने के लिये उत्सुक थी। इसकी पृष्ठभूमि में रानी थी, जिसके साथ वह गुप्त रूप से भेंट कर चुका था। फिलिप द्वितीय धमकियाँ दे रहा था और रानी उसे परेशान करने के साधन ढूँढने में प्रसन्न थी। दिसम्बर १५७७ ई० में ड्रेक प्लिमथ से रवाना हुआ। उसके पास १०० टन का पेलिकन, ८० टन का एलिजाबेथ और ३० टन का मेरीगोल्ड नामक पोत थे। इन सब पर अच्छी तोपें लगी हुई थीं। इनके साथ ५० टन का खाद्य सामग्री का स्वेन नामक जहाज तथा क्रिस्टोफर नामक एक दो मस्तूल वाली लघु नौकायें थी।

इस शक्ति के साथ भी प्रशान्त महासागर में बल पूर्वक रास्ता बनाना एक साहसिक कार्य था। किन्तु शीघ्र ही इस बेड़े की शक्ति घट कर बहुत कम रह गयी। स्वेन को ईंधन के लिये तोड़ दिया गया और क्रिस्टोफर को जलडमरुमध्य तक पहुँचने से पहले ही छोड़ देना पड़ा। वक्र एवं खतरनाक मार्ग को सुरक्षित रूप से पार करने के बाद, एक भीषण तूफान ने शेष जहाजों को बिखेर दिया। मेरीगोल्ड नामक पोत पानी से भर कर डूब गया। एलिज़ाबेथ नामक जहाज के कप्तान का दिल टूट गया और वह वापिस घर लौट गया। उसके पास एक मात्र पेलिकन पोत शेष रह गया। अब पेलिकन का दूसरा नाम गोल्डन हाइण्ड (स्वर्ण मृग) रखा गया, १०० टन का यह जहाज विश्व के सुदूरपार्श्व में एकाकी था। यदि वह अपने साहस-पूर्ण कार्य को छोड़ देता तो उसे कौन दोषी ठहरा सकता था? इसे छोड़ने के स्थान पर वह चिली के समुद्रतट के साथ ऊपर की ओर साहसपूर्ण रीति से चलता गया। उसने वाल्परेसो पर अधिकार किया। यहाँ अपनी खाद्य सामग्री को पुन: भर लिया और एक उपयोगी नाविक को भी पकड़ लिया। वह कोषों की लड़ी को पकड़ने के लिये एक के बाद दूसरे स्थान पर भूमि पर उतरा। वह कल्लाओ के बन्दरगाह में प्रविष्ट हुआ, जहाँ स्थलडमरमध्य तक ले जाये जाने के लिये पेरू के खजाने को जहाजों पर लादा जाता था। उसे जब यह पता लगा कि एक भारी ख़जाना हाल में ही भेजा गया है तो उसने इसे ले जाने वाले जहाज का पीछा किया। उसे पकड़ लिया और इससे ८० पौण्ड भार वाले सोने के आठ-आठ टुकड़े रखने वाले १३ सन्दूकों को और अगणित रत्नों को छीन लिया। इससे पहले कब्जे में की हुई चाँदी को जहाज का भार सन्तुलित करने के लिये स्थैर्यभार के रूप में प्रयोग करना पड़ा। ऐसे भार के साथ अब घर लौटना उचित था। किन्तु स्पेनिश लोग उसकी प्रतीक्षा उस मार्ग पर कर रहे थे, जिस मार्ग से वह आया था। उसने उत्तर पश्चिम के मार्ग से लौटने का और सदा के लिये इस समस्या के समाधान करने का निश्चय किया। किन्तु वह उत्तर ही उत्तर की ओर तब तक चलता गया जब तक वह वैनकूवर के अक्षांश तक नही पहुँच गया। उसे कोई रास्ता नहीं मिला और इस योजना को छोड़ कर वह सनफ्रांसिस्को के निकट कैलिफोर्निया में (उसने इस भूमि को न्यू अलबिओन का नाम दिया था) उतरा ताकि वह उत्तम आशाअन्तरीप के मार्ग से स्वदेश लोटने के लिये समुद्र यात्रा की तैयारी कर सके। यह अत्यधिक साहसपूर्ण कार्य था। यह मेगलैन की भूमण्डल की पहली परिक्रमा करने वाली यात्रा से केवल कुछ ही कम आश्चर्यजनक था। किन्तु यह कार्य सफलतापूर्वक पूर्ण किया गया, यद्यपि इसमें बड़ी थकान

हुई और बड़ा संकट आया। १५८० ई० की पतझड़ में गोल्डन हाइण्ड अपने अमूल्य माल के साथ प्लिमथ के बन्दरगाह में पहुँचा। महान् स्पेनिश सामाज्य के रहस्य इंग्लैण्ड को ज्ञात हो गये, उसकी शक्ति के सबसे भीतरी भाग पर आक्रमण किया जा चुका था और उसे खोजा जा चुका था। स्पेन इनकी रक्षा के लिये कुछ भी करने में असमर्थ रहा था। ड्रेक की अनुपस्थिति में स्पेन के साथ शान्ति बनाये रखने का पक्ष लेने वाला दल उसका शत्रु था। हम यहाँ उसके भद्रजन स्वयंसेवकों के साथ हुए उसके झगड़ों का वर्णन नहीं कर सके हैं। इन झगड़ों को उसके जहाजों के कारिन्दों ने भड़काया था। किन्तु भरे हुए काफिलों में उसके द्वारा लन्दन भेजे जाने वाले खजाने ने तथा इंग्लिश लोगों में उसके आश्चर्यजनक वीरतापूर्ण कार्यो से उद्‌बुद्ध होने वाली प्रशंसा की भावना ने इन झगड़ों पर विजय पा ली। एलिजाबेथ स्वयमेव गोल्डन हाइण्ड (Golden Hind) नामक पोत के कप्तान के पास गई और उसने अज्ञात (समुद्री) जगत् के सबसे बड़े चोर (Master thief of the unknown world) को नाइट (Knight) की सम्मानास्पद उपाधि प्रदान की।

ड्रेक जैसी उत्तम तलवार को जंग लगने के लिये नही छोड़ा जा सकता था। १५८५ ई० में स्पेन और इंग्लैण्ड के बीच में चिरकाल से सुलगने वाला संघर्ष खुले युद्ध के रूप में भड़क उठा। जब फिलिप ने अपने विशाल समुद्री बेड़े या आर्मेडा की योजना चलानी शुरू की तथा इंग्लिश सेना को विद्रोही नीदरलैण्डवासियों की सहायता के लिये भेजा जा रहा था, उस समय ड्रेक को एक बार पुनः पश्चिमी हिन्द-द्वीप-समूह में जाने के लिये कहा गया। इस बार उसे अब निजी युद्ध नहीं करना था, किन्तु एक राजकीय कार्य को पूरा करना था और एक राष्ट्रीय साहसिक कार्य की कमान सम्भालनी थी। उसे दो बड़े जहाजों, १८ रणपोतों (Cruisers) तथा सहायक जहाजों का एक बेड़ा, २३ सौ सैनिकों और नाविकों की सेना दी गयी। इनके साथ वह पहले स्पेन में विगो की ओर गया, मानो वह अपने इरादों की घृणापूर्ण चुनौती देना चाहता था। इसके बाद वह केपवर्डे के टापुओं में गया। इसके मुख्य नगर सेन्टियागो को लूटा और जलाया गया। फिर वह पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह की ओर चला गया। यह लूटपाट का हमला नही था, किन्तु युद्ध का एक कार्य था। स्पेन के अमेरिकन प्रदेशों की राजधानी सेन डोमिंगो के सुदृढ़ दीवारों से घिरे नगर पर तथा कैरिबियन समुद्र के निकट-वर्ती अमेरिकन प्रदेश (Spainish Main) की राजधानी कार्टेगेना के समृद्ध नगर पर बारी-बारी से हमला किया गया। इन्हें लूटा गया और इनसे मोचन धन माँगा गया। इसी समय इनके बन्दरगाहों में शरण लेने के लिये एकत्र हुए जहाजों को जला दिया गया। अपने नाविकों में बीमारी फैल जाने के कारण ड्रेक अपने साहसिक कार्यों में सबसे बड़ा काम-पानामा पर अधिकार नही कर सका। किन्तु स्वदेश लौटते हुए उसने फ्लोरिडा के तट पर स्पेन की एक बस्ती को नष्ट किया, वरजीनिया में रेले की उजाड़ बस्ती को मुक्त किया और केवल १२ घण्टे की देरी से स्पेन का वार्षिक कोष ले जाने वाला बेड़ा उसके हाथ से निकल गया। स्पेनिश साम्राज्य के प्रबल गढ़ों का विध्वंस संयोगवश नहीं, किन्तु बिल्कुल खुले रूप में समुचित सूचना दिये जाने के बाद ही किया गया था और इससे भीमकाय स्पेन की निर्बलता प्रकट हुई और फिलिप की प्रतिष्ठा को असीम धक्का लगा। नवीन नौसैनिक युद्ध की अनन्त सम्भावनाएँ

प्रकट हुई। एक व्यक्ति को इस बात पर आश्चर्य होता है कि मनुष्यों ने उस समय यह क्यो नहीं देख लिया था कि विशाल आर्मेडा की हार पहले ही हो चुकी है।

एलिज़ाबेथ के समुद्री नाविकों में ड्रेक अकेला ही नहीं था, यद्यपि वह उन सबमें सर्वोच्च स्थान रखता है। उसके साथियों के रोमांचक वीरतापूर्ण कृत्यों का वर्णन यहाँ संक्षिप्त रूप में भी नहीं किया जा सकता। इनका सर्वथा उपयुक्त वर्णन हकलुइत की समुद्री यात्राओं में मिल सकता है। यह इंग्लिश नाविकों का महाकाव्य है।[1] किन्तु अब तक वर्णन न किये गये उनके कार्य के एक पहलू का वर्णन यहाँ उचित प्रतीत होता है। इनमें से कुछ लोग न तो व्यापार पर और न ही स्पेन को रोकने पर तुले हुए थे; किन्तु वे इस बात पर तुले हुए थे कि अन्ध महासागर के पार विशाल प्रदेशों में नये इंग्लैण्ड की स्थापना की जाय। सर हम्फरी गिलबर्ट ने १५७६ ई० में प्रकाशित एक पुस्तक में कहा था कि यहाँ जरूरतमन्द इंग्लिश लोगों के लिये निवास स्थान प्राप्त किया जा सकता है। १५७८ ई० में उसने एक राजकीय आज्ञा पत्र इसलिये प्राप्त किया कि वह किसी ईसाई राजा के वास्तविक स्वामित्व में अविद्यमान सभी दूरवर्ती और नास्तिक प्रदेशों को अपनी इच्छा के अनुसार बसाये और उन पर स्वामित्व प्राप्त करे। १५८३ ई० में गिलबर्ट पाँच जहाजों के साथ न्यू फाउण्डलैण्ड में एक बस्ती बसाने के लिये रवाना हुआ। १४९७ ई० में कैबोट की खोज के बाद से इंग्लिश लोग इस पर अपना दावा बता रहे थे। उसने सेन्ट जोन्स में पहली इंग्लिश बस्ती को बसाना आरम्भ किया। किन्तु वापिस लौटते हुए वह एक तूफान में डूब गया और अपनी शिशु बस्ती को शक्ति सम्पन्न बनाने के लिये उसका पालन पोषण नहीं कर सका। गिलबर्ट का सौतेला भाई सर वाल्टर रेले था। रेले ने उसकी योजनाओं को ले लिया। १५८४ ई० में उसने फ्लोरिडा के उत्तर में उपनिवेश के लिये उपयुक्त स्थान ढूँढने के लिये एक अभियान दल भेजा और अगले वर्ष रोनोक (Roanoke) में एक बस्ती बसाने के लिये सात जहाजों के साथ सर रिचर्ड ग्रेनविले को उस शस्य श्यामल देश में भेजा गया, जिसका नाम कुमारी रानी के सम्मान में वर्जिनिया रखा गया। किन्तु इस बस्ती में कुछ मुसीबतें आयी और बस्ती बसाने वालों को ड्रेक द्वारा वापिस स्वदेश लाना पड़ा (१५८६ ई०)। १५८७ ई० में रेले ने परीक्षण को पुनः करने के लिये डेढ़ सौ व्यक्तियों को वहाँ बसने के लिये भेजा, किन्तु १५९० ई० तक ये सब बिखर चुके थे। ये उपनिवेशीकरण के सर्वप्रथम इंग्लिश प्रयास थे। विदेशों में प्रवास करने वालों की उस विशाल धारा की ये पहली नन्हीं कणिकाएँ थीं, जो धारा ब्रिटिश द्वीप-समूह से इतनी विभिन्न दिशाओं में प्रवाहित होती रही है। एलिज़ाबेथ के युग के व्यक्तियों का विशेषगुण (forte) उपनिवेश बसाना नहीं था। साहसिक कार्यों में तथा युद्ध में ऐसी विलक्षण उपलब्धियाँ प्राप्त

---

१. क्लेरेण्डेन प्रेस ने हकलुइत (१५५२-१६१६ ई०) नामक पादरी द्वारा इंग्लिश अन्वेषणों के संकलित और प्रकाशित विवरण का एक उत्तम संकलन प्रकाशित किया है। उसके सम्पादक ई० जे० पेन हैं और इसका नाम "एलिज़ाबेथ के युग के" समुद्री नाविकों की समुद्र यात्राएँ (वायेजेस आफ एलिज़ाबेथन सीमेन) है। सी० आर० बीज़ली ने इसी प्रकार का एक अन्य संकलन किया है। किंग्ज़ली (Kingsley) की कृति "वैस्टवर्ड हो" (Westward Ho) में इस युग की भावना का कुछ चित्रण है।

करने वाले व्यक्ति ऐसे लोग नहीं थे जो बस्ती बसाने के नीरस तथा परिश्रमपूर्ण कार्यों को कर सकें। उनका कार्य सीमाओं को भग करना और मार्ग को प्रशस्त करना था। वे ब्रिटिश द्वीप-वासियों के तथा सारी दुनिया के लोगों के आने जाने के लिये समुद्री रास्तों को खोजने वाले थे।

४. स्पेनिश आर्मेडा

इस कार्य की समाप्ति से पहले स्पेन की अन्तिम चुनौती का सामना करना आवश्यक था। इसके लिये फिलिप अब बड़े परिश्रम से तैयारी कर रहा था। उसका सर्वोत्तम समुद्री कप्तान सान्ता क्रुज का मार्विवस महान् युद्ध की योजना उस समय तैयार कर रहा था, जब ड्रेक पश्चिम में स्पेन के नगरों को लूट रहा था। उसने यह प्रस्ताव किया कि स्पेन की समूची नौसैनिक शक्ति इंग्लिश चैनल में केन्द्रित की जाय और पाँच सौ पाल वाले जहाजों के बेड़े से पचास हजार से अधिक सेना को सौ तोपों के साथ इग्लैण्ड में उतारा जाय। यद्यपि ये योजनाएँ बाद में बदल दी गयी। बेड़े का आकार बहुत घटा दिया गया और आक्रमण को संघटित करने का कार्य पार्मा के ड्यूक को दिया गया, तथापि मुख्य रूप से महान् अभियान का यह विचार बना रहा कि समूचे विरोध को कुचलने में समर्थ एक बेड़ा इंग्लिश चैनल पर अधिकार रखे और वह इंग्लैण्ड में ऐसी सेना का परिवहन करे, जिसका प्रतिरोध करना इंग्लिश फौजों की शक्ति से परे की बात हो। तैयारियाँ एकदम शुरू हो गयीं। अभियान का समय १५८७ ई० की ग्रीष्म ऋतु निश्चित किया गया। पहले से ही विशाल भण्डार एकत्र किये जा रहे थे और सब जहाजों को यह आदेश दिये गये कि वे सब दिशाओं से लिस्बन और केडिज में आकर एकत्र हों।

१५८७ ई० के समूचे वसन्तकाल में केडिज और लिस्बन की बन्दरगाहों में जहाज एकत्र होते रहे और गोदियों में काम करने वाले मनुष्य व्यस्त रहे। किन्तु उन्हें अपना कार्य शन्तिपूर्वक समाप्त नहीं करने दिया गया। २८ अप्रैल को २६ जहाजों का बेड़ा केडिज बन्दर-गाह के निकट प्रकट हुआ और इसकी कमान करने वाला समुद्री सेनापति भीषण ड्रेक था। बन्दरगाह परिवहन के और भण्डार ले जाने वाले जहाजों से भरी हुई थी और वहाँ दस गेली नामक पोत भी थे और ये गेलियाँ सीमित और शान्त समुद्रों में अप्रतिरोध्य समझी जातीं थीं। किन्तु ड्रेक ने साहसपूर्वक बन्दरगाह में प्रवेश करके अच्छा निशाना मारने वाली गोलाबारियों से इन गेली नामक पोतों को केवल डूबने वाले टुकड़ों का ढेर बना दिया। इसके बाद उसने अन्य जहाजों को लूटना और जलाना शुरू किया। इनमें आधे तैयार हुए १८ बड़े जहाज भी सम्मिलित थे। ऐसा करने के बाद वह वापिस लौट आया। उसके अपने विशेष मुहावरे में उसने बड़ी प्रभावशाली रीति से 'स्पेन के राजा की दाढ़ी को जलाया' था। खुले समुद्रों में उसने २४ जहाजों को पकड़ा और नष्ट किया। इनमें से कई जहाज आर्मेडा के लिये सामान ला रहे थे। वह जून तक पुर्तगाली समुद्र तट के पास मंडराता रहा। किन्तु लिस्बन में मुख्य आर्मेडा का कोई बेड़ा उसके साथ मुकाबिला करने को खुले समुद्र में निकलने के लिये तैयार न था। इंग्लैण्ड लौटने से पहले उसने उस समय के सबसे बड़े पोत 'महान् सेन फेलिप' को सोने और

रत्नों के, रेशम और मसालों के, ऐसे माल के साथ पकड़ा, जिसकी कीमत हमारी मुद्रा में लगभग १० लाख पौण्ड होगी। यह इंग्लैण्ड में अभी तक सबसे अधिक लूट के माल वाला जहाज था। स्पेन के लोगों का अल्ड्रेक से डरना बिलकुल ठीक था और इंग्लिश लोगों को उस संघर्ष में विजय के विश्वास की अनुभूति होने लगी, जिसे इस साहसपूर्वक हमले ने एक साल के लिये स्थगित कर दिया।

विशाल बेड़े ने पुनः तैयार होने से पहले ही अपने योग्य और वीर कप्तान सान्ता क्रूज को खो दिया। ऐसा प्रतीत होता था कि भाग्य की देवियाँ फिलिप को उसके विनाश की ओर आकृष्ट कर रही हैं, इसीलिये उसने यह आग्रह किया कि उसके स्थान की पूर्ति समुद्र से सर्वथा अनभिज्ञ और नेतृत्व के सभी गुणों से शून्य मेडिना सिडोनिया के ड्यूक द्वारा की जाय। उसकी एकमात्र योग्यता यह थी कि वह स्पेन के कुलीन सरदारों में एक सबसे बड़ा सरदार था। पौरुषहीन होने के कारण मेडिना सिडोनिया ने महान् बेड़े के प्रस्थान को फरवरी से मई तक बिलम्बित किया। जब यह बेड़ा रवाना हुआ, उसी समय एक तूफान से यह तितर-बितर हो गया और इसे पुनः तैयार होने के लिये बाधित होकर स्पेनिश बन्दरगाहों में जाना पड़ा और यह १९ जुलाई तक ही इंग्लिश भूमि के समीप पहुँच सका।

इंग्लिश चैनल में आने वाला यह बहुत बड़ा और शानदार बेड़ा था। इस बेड़े मे १३० जहाज थे, इनमें से ७० जहाज लड़ने वाले गैलियन पोत थे, इनमें से सात जहाज एक हजार टन से भी अधिक के थे और औसत रूप में ये ५५० टन से ऊपर के थे। चार अन्य बड़े गैलियास पोत (Galleasses) और चार गेली पोत (Galleys) थे। ये कुछ अंश में चप्पुओं से चलाये जाते थे और खाद्य सामग्री का भण्डार रखने वाले ४५ जहाज और कुछ छोटी नौकाएँ थीं। यह बेड़ा २,४०० तोपें, १८,००० सैनिक और ८,००० नाविक ले जा रहा था। जहाज अपना निश्चित भार ले जाने की सामर्थ्य (Tonnage) से अधिक बड़े प्रतीत हो रहे थे, क्योंकि स्पेनिश लोगों ने अपने जहाजों को पानी से बाहर बहुत ऊँचा रखा था और इनके डैक के नीचे के अगले भाग को तथा पृष्ठ भाग को वास्तविक किले की भाँति बनाया था, किन्तु उसमें गोला बारूद कम लदा हुआ था; क्योंकि वे इस बात पर भरोसा रखते थे कि वे शत्रु के साथ बहुत निकट से लड़ाई लड़ेंगे, अतः उनके बोझ का अधिकांश भाग सैनिक थे। उनका तब तक कोई उपयोग नहीं था, जब तक उन्हें इस प्रकार की लड़ाई में न लगाया जा सके। नीदरलैण्ड्स में उस युग के सबसे बड़े सेनाध्यक्ष पार्मा के ड्यूक की अध्यक्षता में ३०,००० अनुभवी सैनिक प्रतीक्षा कर रहे थे और महान् आर्मेडा का कार्य केवल इतना ही था कि इंग्लिश चैनल को उस समय तक अधिकार में रखे जब तक कि इन सैनिकों को छोटी नौकाओं के एक विशाल बेड़े द्वारा इंग्लिश चैनल के उस पार इंग्लैण्ड में न उतार दिया जाय। यह बेड़ा उनके परिवहन के लिये तैयार था।

इसी बीच में वसन्त ऋतु में इंग्लैण्ड आक्रमण के भय के ज्वर से ग्रस्त होकर तैयारियाँ कर रहा थ। नागरिक सेना के प्रशिक्षित दलों को और स्वयंसेवक दलों की सेनाओं को कवायद करायी जा रही थी, किन्तु पार्मा के पुराने योद्धा यदि एक बार इंग्लैण्ड में उतर जाते

तो इनके विरुद्ध ये सेनाएँ कुछ भी नहीं कर सकती थीं। इंग्लैण्ड की सुरक्षा पूर्णरूप से उसके जहाजों पर अवलम्बित थी। रानी की नौसेना में ३४ पोत थे, इनमें से तीन-चार ही स्पेनिश लोगों के वड़े जहाजों के बराबर टनेज रखते थे, यद्यपि वे कम ऊँचे बने हुए थे। इनमें से कुछ ऐसे नाम रखते थे, जिसे परम्परा के द्वारा नौसेना के प्रत्येक युग ने जारी रखा था। पोतों के ये नाम इस प्रकार थे—विक्टरी, ड्रैडनौट, वैनगार्ड, रिवेन्ज, ट्रायम्फ, स्विफ्टश्योर। ये बेड़े का मेरुदण्ड थे, किन्तु इनकी सहायता व्यापारिक जहाजों की एक बड़ी संख्या और उस प्रकार की नौकाएँ कर रही थीं, जिन्होने इंग्लिश चैनल में तथा पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह मे समुद्री डकैती का कार्य किया था। समूचे बेड़े में १६७ जहाज थे। किन्तु इनमें से अधिकांश बहुत छोटे थे। अनेक जहाजों का लड़ाई की दृष्टि से बहुत कम अथवा कोई मूल्य नहीं था, यहाँ तक कि रानी के औसत जहाज ४०० टन से कम के थे और शेष जहाजों की औसत एक सौ पच्चीस टन के लगभग थी। इनके नाविकों की संख्या स्पेन के २७,००० नाविकों की तुलना में १५,००० ही थी, किन्तु प्रशिक्षित नाविकों का अनुपात बहुत अधिक था। इसके अतिरिक्त इंग्लिश जहाजों पर आनुपातिक दृष्टि से कहीं अधिक संख्या में तोपें लगी हुई थीं और वे अपनी तोपों के प्रयोग की विधि कहीं अधिक अच्छे रूप में जानते थे। वे गोला बारूद के भण्डार को भी अधिक मात्रा में वहन करते थे, यद्यपि यह पर्याप्त नही होता था।

दुनिया की दृष्टि में, उत्कृष्टता पूर्णरूप से स्पेनिश पक्ष में थी, किन्तु नौसैनिक युद्ध की वास्तविक श्रेष्ठता इंग्लिश पक्ष की ओर थी, विशेषत: यह पिछली पीढ़ी के कठोर प्रशिक्षण के बाद प्राप्त हुई थी। आर्मेडा की पराजय कोई चमत्कार नहीं था। यह पहले होने वाली घटनाओं का स्वाभाविक परिणाम था। मैड्रिड में अवस्थित वेनिस के राजदूत ने चतुराई से यह उल्लेख किया था कि "इंग्लिश लोग स्पेनिश लोगों से एक भिन्न गुण रखने वाले हैं। समूचे पश्चिम में उनकी सबसे बढ़कर यह ख्याति है कि वे सब समुद्री मामलों में विशेषज्ञ और साहसी हैं तथा समुद्र पर सबसे बढ़िया लड़ने वाले हैं।" इंग्लिश बेड़े की सर्वोच्च कमान रानी के चचेरे भाई एफिंघम के लार्ड हावर्ड को दी गयी। यद्यपि वह एक ऊँचे कुल का था और इसीलिए चुना गया था, तथापि मेडिना सिडोनिया के सर्वथा प्रतिकूल हावर्ड समुद्र के बारे में कुछ जानता था और उत्तरदायित्व लेने से डरता नही था। उसे उस युग के सबसे अधिक साहसी और अनुभवी समुद्री व्यक्तियों की सहायता प्राप्त थी। ड्रेक को कमान में दूसरा दर्जा मिला था और उसके साथ समुद्री सेनापति की परिषद् में हाकिन्स और फ्रोबिशर बैठते थे।

मई तक इंग्लिश बेड़े का अधिकांश भाग प्लिमथ में एकत्र हो गया। ४० जहाज फ्लैन्डर्स के समुद्र तट की देखभाल करने के लिए डोवर के जलडमरूमध्य में छोड़ दिये गये। ड्रेक स्पेन जाने के लिए और स्पेनवासियों पर उनके ही समुद्रों पर हमला करने के लिए उत्कण्ठित था और हावर्ड उसका समर्थन कर रहा था। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह ठीक मार्ग था, किन्तु सरकार के सन्देहों ने और इससे भी अधिक खाद्य सामग्री की कमी ने (जो एक समय में केवल एक महीने के लिए दी जाती थी) इसे कठिन बना दिया। वस्तुत: वे आठ जुलाई को कोरुन्ना के लिए तेजी से रवाना हुए। यदि वे कुछ दिन पहले चले होते, तो वे उत्तरी

स्पेनिश समुद्रतट की बन्दरगाहों में स्पेनिश बेड़े को पुन: तैयार होते हुए पकड़ लेने। किन्तु हवा का रुख बदल गया और उन्हें प्लिमथ में जल्दी वापस आना पड़ा। यहाँ वे दक्षिणी वायु के कारण बन्दरगाह मे बन्द होकर पड़े रहे। यह हवा स्पेनिश लोगों को बिस्के की खाड़ी के पार ले आयी और १६ जुलाई को आर्मेडा सहसा प्लिमथ के निकट प्रकट हुआ। इससे इंग्लिश लोगों को घाटा था और इनका सेनापति यह नहीं जानता था कि वह इस अवसर का किस प्रकार वैसा प्रयोग करे, जैसा ड्रेक इसका उपयोग करता। इंग्लिश बेड़े को अछूता छोड़ दिया गया, जब कि यह रात के समय रस्सियों से जहाजों को खींचकर बन्दरगाह से बाहर निकाला गया और हवा के विरुद्ध आवद्ध कर दिया गया और शत्रु के मौसम वाले पार्श्व में आ गया। अब (२० जुलाई को) इंग्लिश चैनल में एक लम्बा चलने वाला युद्ध शुरू हुआ। यह एक पूरे सप्ताह भर उस समय तक चलता रहा जब तक कि आर्मेडा ने २६ जुलाई को कैले के निकट लंगर नहीं डाल दिया। इंग्लिश लोगों ने शत्रु को घेरने का साहस नहीं किया, क्योंकि इससे स्पेनिश लोगों को उनका वांछित अवसर मिल जाता। वे केवल उन्हें परेशान कर सकते थे, उनके पंखों को उखाड़ सकते थे और उनकी नसों को ढीला कर सकते थे। काफी बड़ा नुकसान पहुँचाया गया, किन्तु कोई मार्मिक प्रहार नहीं किया गया और शत्रु अपने लक्ष्य स्थान डोवर के जलडमरूमध्य तक पहुँच गया था और शीघ्र ही पार्मा के साथ उसका सम्पर्क होने वाला था।

अब नाजुक लड़ाई वस्तुत: जलडमरूमध्य में आ गयी। इस समय इंग्लिश बेड़ा पूरी शक्ति पर था, डोवर वाला बेड़ा इसके साथ संयुक्त हो चुका था। २८ जुलाई की रात को इंग्लिश लोगों ने हवा और ज्वार के साथ बहने वाले, आग लगाने वाले आठ जहाजों को स्पेनिश बेड़े के बीच में भेजा। स्पेनवासियों को अपने तार काटने पड़े और अव्यवस्था में भागना पड़ा। तब ग्रेवलाइन्स के निकट इस युद्ध की एक बड़ी सामान्य मुठभेड़ हुई। स्पेनिश लोग (अपनी बुरी जहाजरानी के कारण) बड़े घाटे में लड़ रहे थे, उनका बेड़ा अव्यवस्थित था, हवा से यह खतरा था कि वह कहीं उन्हें रेतीले तटों पर न फेंक दे। आठ घण्टे तक सख्त और अव्यवस्थित लड़ाई चलती रही। इंग्लिश पक्ष की ओर से गोले बारूद का व्यय उनके अनुभव से बहुत अधिक हुआ और लड़ाई की समाप्ति से पहले ही रण सामग्री खत्म हो रही थी। इस उग्र युद्ध में आर्मेडा का पूर्ण विध्वंस अभी दूर की बात थी। किन्तु चार जहाज डुबो दिये गये और अन्य जहाज बेकार होकर या तो समुद्र तट पर ले जाये गये अथवा उन्हें वहाँ धकेल दिया गया। अन्त में हवा वाले पक्ष की ओर से इंग्लिश लोगों के दबाव ने मैडीना सिडोनिया को उथले समुद्र तट से बचने के एकमात्र उपाय के रूप में इस बात के लिए बाधित किया कि वह उत्तर की ओर चला जाय। इंग्लिश लोगों को उसकी वापसी का खतरा था और उन्होंने उत्तरी समुद्रों में बहुत दूर तक उसका अनुसरण किया। किन्तु उनकी वापसी असम्भव थी। बड़े जहाज बुरी तरह से कट गये थे, उसमें से कई चू रहे थे, उनके गोला बारूद की रसद लगभग समाप्त हो गयी थी, क्योंकि उन्होंने इस प्रकार की लड़ाई की कभी आशा नहीं की थी और इन सबसे बढ़कर प्रबल झंझावात उत्पन्न हो गये, इनके सामने वे अव्यवस्थित रूप में भागने के सिवाय कुछ नहीं कर सकते थे। उनके लिए एकमात्र सम्भावना

ी कि वे स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड के उत्तर की ओर से चक्कर काटते हुए वापस भाग पेन पहुँचे।

दन्तकथाओं के अनुसार आर्मेडा की पराजय का कारण भगवान् के हस्तक्षेप को माना है (Flavit Deus et dissipati Sunt)। किन्तु झंझावात आने से पहले ही विशाल डा हार चुका था। यह उस उत्कृष्ट जहाजरानी और तोपचालन के कारण हारा था, जो ों ने एक पीढ़ी के साहसिक कृत्यों में सीखी थी और जिसने स्पेनिश लोगों को सदा पास र लड़ने से अथवा १९ हजार सिपाहियों की और छोटी तोपों की उस विशाल संख्या का ग करने से रोका, जो तोपें उन्होंने इस प्रकार की लड़ाई के लिए तैयार की थीं। उत्तरी के तथा अन्ध महासागर के तूफानी जलों ने विध्वंस को पूर्ण कर दिया। उन्नीस जहाज लैण्ड और आयरलैण्ड के निकट विनष्ट हो गये। अन्य ३३ पोत लुप्त हो गये और उनके का कोई कारण ज्ञात नहीं हुआ। इनमें से कुछ बिस्के की खाड़ी में एक तूफान के कारण ग स्वदेश के सामने नष्ट हो गये। इस महान् बेड़े का एक जीर्णशीर्ण अंश ही स्पेन वापस । इंग्लैण्ड का एक भी जहाज नष्ट नही हुआ, और जो प्राणहानि हुई वह मुख्य । बीमारी के कारण थी।

आर्मेडा का दुःखद विध्वंस, और सबसे बढ़कर इसकी उपलब्धियों की लज्जाजनक विफ- का अभिप्राय समुद्रों में स्पेन की प्रतिष्ठा का पतन था। विश्व पर हावी होने वाले महान् ा पतन कई टुकड़ों में हो गया था। स्पेन अब अधिक देर तक उस एकाधिकार को नही रख सकता था जिसकी रक्षा करने के लिए प्रत्यक्षतः वह असमर्थ था। समुद्र के सब ब साहसियों के लिए खुल गये; ये केवल इंग्लिश लोगों के लिए ही नहीं, किन्तु सब के लोगों के लिए खुल गये, नयी दुनिया के गैर आबाद प्रदेश अब उनके बसने के ुक्त हो गये। उष्ण कटिबन्धों का तथा स्वर्णिम पूर्व का समृद्ध व्यापार उनकी बाट लगा।

किन्तु न तो इंग्लैण्ड और न ही विश्व यह जान पाया था कि विजय के परिणाम महान् हैं। इंग्लैण्ड अब भी नीदरलैण्ड्स से होने वाले हमले से डर रहा था। वह अब पने सुशिक्षित सैनिक दलों को कवायद कराता रहा। फिलिप द्वितीय ने भी स्वयमेव आशा छोड़ी थी, किन्तु उसने अपनी टूटी हुई नौ सैनिक शक्ति को पुनः सृजन करने का प्रयत्न और एलिजाबेथ के शासन काल के शेष भाग में वस्तुतः १६०४ ई० तक यह युद्ध खिंचता गया। ड्रेक इस पक्ष में था कि स्पेनिश अमेरिका को जीतने के साहसपूर्ण प्रयास से विजय बनाया जाय। इसके लिए उसने डचों के साथ मिलकर एक विशाल सेना बनाने का किया। किन्तु ये परामर्श उस सरकार के लिए अतीव साहस पूर्ण थे, जो अपने प्रयत्नों राने ढंग के हमला करने वाले विभिन्न साहसिक कार्यों तक सीमित कर रही थी। ये १५८९ ई० के उस निष्प्रभाव अभियान तक ही सीमित थे, जिनका लक्ष्य पुर्तगाल में को भड़काना था। स्पेन के बन्दरगाहों को भी चिरकाल तक शान्तिपूर्ण बना रहने दिया इससे फिलिप नयी लड़ने वाली नौसेना का निर्माण करने में समर्थ हुआ और १५९१ ई०

मे जब हावर्ड एजोर्स के टापू पर चढ़ाई के लिए अभियान सेना ले गया तो उसे उत्कृष्ट सेना के सामने से वापस लौटना पड़ा। यह वह अवसर था, जिस पर भव्य बर्बर' सर रिचर्ड ग्रेनविले ने वापस लौटने से स्पष्ट इन्कार कर दिया और रिवेन्ज (बदला) नामक जहाज में वह १५ स्पेनिश लड़ाकू जहाजों के साथ १५ घण्टे तक लड़ता रहा तथा उसने आत्म-सर्मपण करने से इन्कार किया।[1] रिवेंज ही एकमात्र ऐसा युद्ध पोत था जिसे एलिजाबेथ के राज्यकाल में शत्रु ने अपने अधिकार में ले लिया; किन्तु इसके प्रतिरोध की गौरवपूर्ण भावना का मूल्य एक हजार जहाज थे।

युद्ध के अनेक गौरवपूर्ण कार्य आर्मेडा की लड़ाई के बाद के वर्षों में किये गये, किन्तु उन्होंने इसके परिणाम पर गम्भीर प्रभाव नहीं डाला। १५९५ ई० में ड्रेक की चल गयी और उसने तथा हाकिन्स ने पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह के विरुद्ध एक बड़ी अभियान सेना का नेतृत्व किया। किन्तु कुछ शहरों को लूटने के अतिरिक्त इसका कोई महत्वपूर्ण परिणाम नहीं निकला। यह केवल इसलिए स्मरणीय है कि दोनों पुराने सुप्रसिद्ध समुद्री नाविक इस यात्रा में समुद्री बीमारी से मर गये और उनको उन समुद्रों में जल-समाधि दे दी गयी, जो समुद्र इतने वर्षों से उनके नामों से गूंज रहे थे। इसे देशभक्तिपूर्ण समुद्री डकैती के आश्चर्यजनक युग की समाप्ति समझा जा सकता है। लड़ाई की वह पद्धति अब पुरानी पड़ गयी थी, जो उन दिनों में बहुत महत्वपूर्ण थी, जब कि स्पेन विश्व पर हावी हो रहा था। अब नयी और अधिक नीरस पद्धतियों का—निर्माण की पद्धतियों का, न कि विनाश की पद्धतियों का—समय आ गया था। अब पुराने समुद्री नविकों का कार्य समाप्त हो चुका था।

यद्यपि नाममात्र में ही युद्ध देर तक चलता रहा, तथापि इसकी अन्तिम बड़ी मुठभेड़ १५९६ ई० में एसेक्स के अर्ल के नेतृत्व में कैडिज पर चढ़ाई थी। इसको अच्छे ढंग से नही लड़ा गया था। किन्तु इसके बावजूद नगर पर अधिकार कर लिया गया और उस नगर को बन्दरगाह में विद्यमान अधिकांश जहाजों के साथ जला दिया गया। इस बन्दरगाह में प्रति वर्ष पश्चिमी हिन्दद्वीपसमूह के विशाल वाणिज्य पोत अपने ख़जानों को लाया करते थे। इस प्रकार से स्पेन के सबसे बड़े बन्दरगाह की इस अपकीर्तिपूर्ण दुर्गति ने यह प्रदर्शित किया कि विश्व पर स्पेनिश प्रभुता का दु:स्वप्न समाप्त हो चुका था। १५९८ ई० में फिलिप द्वितीय ने अपनी मृत्यु से पूर्व अपने पुत्र को दिये गये निर्देशों में यह स्वीकार किया कि जल्दी ही या कुछ देर में इंग्लिश लोगों को नयी दुनिया के उस व्यापार में अवश्य अनुमति दी जानी चाहिये, जिसके लिये उन्होंने इतनी भीषण लड़ाई लड़ी है। समुद्रों की स्वतन्त्रता को प्राप्त कर लिया गया था। अब अगली पीढ़ी के लिये उसका प्रयोग करना शेष रहा था।

---

१. टेनीसन के 'दि रिवेंज' नामक भावोद्दीपक गीत में इस घटना का वर्णन किया गया है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Corbett, Drake and the Tudor Navy; **Froude,** English Seamen of the Sixteenth Century; **Hale,** Story of the Great Armada; **Stebbing,** Life of Raleigh; Payne's or **Beazley's** selections from Elizabethan Voyages; Williamson. Age of Drake, Hawkins of Plymouth and the Ocean in English History; **Black,** Reign of Elizabeth; **Read,** Mr. Secretary Walsingham and the Policy of Queen Elizabeth.

• •

९

आयरलैण्ड की विजय

१. आयरलैण्ड की समस्या

सोलहवीं शताब्दी इंग्लैण्ड के लिये गौरवपूर्ण उपलब्धि का युग तथा स्काटलैण्ड के लिये राष्ट्रीय पुनर्जन्म का युग था, किन्तु आयरलैण्ड के लिये यह दुःखद विपत्तियों का युग था। इस युग में ब्रिटिश द्वीप समूह में ऐसी एकता की भावना पैदा हुई जिसने उन्हें नव-युग का विश्वास के साथ सामना करने के लिये योग्य बनाया। जिस समय एक ओर इंग्लैण्ड और वेल्स का सम्मिलन शान्तिपूर्ण रीति से और संवैधानिक उपायों से किया गया और जब इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के मध्य में पुरानी शत्रुता का स्थान मित्रता ने लिया तथा उनको एक बनाने की दिशा में आगे बढ़ाया, उस समय दूसरी ओर इंग्लैण्ड के साथ आयरलैण्ड का सम्मिलन विजय की क्रूरप्रक्रिया द्वारा पूरा किया गया। हम यह देखेंगे कि यह धार्मिक सुधार आन्दोलन से तथा स्पेन के साथ संघर्ष से उत्पन्न कटुता के प्रभाव के कारण था। किन्तु इसने अपने पीछे मनमुटाव की और अन्याय की एक ऐसी भावना को छोड़ा, जो उस समय से दोनों देशों के सम्बन्धों को विषैला बनाती रही है। ब्रिटिश राजनीतिज्ञों के लिये यह निकृष्टतम परेशानी तथा ऐसी समस्या बनी रही है, जिसके समाधान करने में उन्हें लज्जापूर्ण विफलता मिलती रही है।

हम यह देख चुके हैं[1] कि आयरलैण्ड के लिये यह दुर्भाग्य की बात थी कि इस द्वीप में नार्मन-विजय कभी पूरी नहीं हुई थी और पिछले मध्य युग में इंग्लिश राजा की शासन सत्ता यहाँ लगभग पूर्ण रूप से लुप्त हो गयी थी। केवल डबलिन के चारों ओर के पेल (Pale) के नाम से प्रसिद्ध घेरे में इंग्लिश कानून का पालन होता था और केवल

---

१. ऊपर पृष्ठ संख्या ५८, तथा १२६ देखिये।

इसी प्रदेश का प्रतिनिधित्व आयरिश पार्लियामेण्ट में होता था। हम यह भी देख चुके हैं कि हेनरी सप्तम और अपने शासन काल के आरम्भिक भाग में हेनरी अष्टम इस बात में ही सन्तुष्ट थे कि वे पेल के भीतर अपनी सत्ता बनाये रखने का प्रयत्न करें और इसे किल्डेयर के उन शक्तिशाली अर्लों के नियन्त्रण में पड़ने से रोकें, जिनकी ज़मीनें इसके बिल्कुल बाहर लगी हुई थीं।[1]

पेल के भीतर भी बहुत अधिक मुसीबत थी, क्योंकि कानून और व्यवस्था को पूरी तरह नहीं बनाये रखा गया था। जंगली हाइलैण्ड्स के सीमावर्ती स्काटलैण्ड के जिलों की भाँति पेल पर भी बाहर से कबीलों के प्रायः आक्रमण होते रहते थे और बहुत से जमीदार यह आवश्यक समझते थे कि वे विभिन्न सरदारों को "काला लगान" (Black rents) इसलिये देते रहें कि हमला किये जाने से उनकी रक्षा हो सके। पेल के बाहर इसके अतिरिक्त कोई कानून या व्यवस्था बिल्कुल नहीं थी, जिसे वैयक्तिक सरदार अपने कबीलों की सीमाओं के भीतर लागू करने में समर्थ होते थे। आयरलैण्ड का अधिकांश भाग बहुत कुछ उसी दशा में था, जिसमें इस युग में स्काटलैण्ड के हाईलैण्ड्स के प्रदेश थे। यह अनेक जन-जातियों में विभक्त था। ये जन-जातियाँ व्यवहार में अपने सरदारों की सत्ता के अतिरिक्त किसी अन्य सत्ता को नहीं मानती थीं। ये अपने जनजातीय रिवाजों के अतिरिक्त कोई कानून स्वीकार नहीं करती थीं और निरन्तर एक-दूसरे के साथ युद्ध में लगी रहती थी। प्रायः ये युद्ध अत्यधिक रक्तपात-मय और विश्वासघातपूर्ण ढंग के होते थे। किन्तु आयरलैण्ड और स्काटिश हाईलैण्ड्स में यह अन्तर था कि हाईलैण्ड्स के सरदार एक वास्तविक मात्रा में स्काटलैण्ड के राजा के वशवर्ती थे। वे स्काटलैण्ड के राष्ट्रीय जीवन में भाग लेते थे। किन्तु सोलहवी शताब्दी के आरम्भिक भाग में यद्यपि आयरिश जनजातियाँ इंग्लिश राजा का आधिपत्य आयरलैण्ड के स्वामी के रूप में नामत. स्वीकार करती थीं; तथापि वास्तव में वे इससे बिल्कुल अप्रभावित थीं। महान् नार्मन बैरन लोगों में से भी गाल्वे के बर्क (डी बर्घ) जैसे सरदारों ने व्यावहारिक रूप से अराजकता की लम्बी शताब्दियों में अपनी परिस्थितियों के साथ अपना सात्म्यीकरण कर लिया था और यद्यपि मूलतः वे विजेता शासक थे, तथापि अब सब प्रयोजनों के लिये व्यवहारतः वे जनजातीय मुखिया या सरदार थे। यह जंगली जनजातीय आयरलैण्ड यूरोप के महाद्वीप तथा इंग्लैण्ड के साथ कुछ व्यापार करता था, तो भी बाह्य जगत् के साथ इसका सम्पर्क बहुत कम था। वस्तुतः यह पश्चिमी यूरोप के शेष भाग की अपेक्षा सभ्यता की अधिक पिछड़ी दशा में था। इसके अतिरिक्त जिस चर्च का उदात्त कार्य आरम्भिक आयरलैण्ड का गौरव बना था, वह चर्च अब भीषण अव्यवस्था में पड़ चुका था। यह बात सब ओर से कही जाती है। न केवल इंग्लिश लोग ही ऐसा कहते हैं, जिनकी साक्षी में सन्देह किया जा सकता है; किन्तु आर्मेडा से विनष्ट होने वाले अथवा आक्रमणों में भाग लेने के लिये भेजे जाने वाले स्पेन वासी तथा आयरिश लोगों को नास्तिकता के विरुद्ध उभारने के लिये भेजे गये जेसुइट मिशनरी भी यह

---

१. आगे आने वाली सब बातों के लिये देखिये एटलस के पंचम संस्करण की प्लेट संख्या ४५ (ए) और छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४५ (सी)।

बात कहने में एकमत हैं कि इस समय चर्च नष्ट हो रहे थे, कैथेड्रलों को किलों में परिणत किया जा रहा था और बिशप तथा मठाधीश जनजातीय सरदारों की भाँति उपद्रवी थे।

युद्ध करने वाली इन जातियों में राष्ट्रीय भावना का भाव बहुत थोड़ा अथवा बिल्कुल नहीं था। जन-जाति से अधिक व्यापक किसी वस्तु के प्रति उनकी निष्ठा नहीं थी। नार्मन आक्रमणों से पूर्व, पुराने जमाने में समूचे आयरलैण्ड के राजा हुआ करते थे। यद्यपि इनके आदेशों का पालन बहुत कम होता था, तथापि वे किसी समय में व्यवस्था को ला सकते थे। किन्तु नार्मन आक्रमणों ने उन्हें समाप्त कर दिया और इनके स्थान पर इंग्लिश राजा की नाम मात्र की सत्ता स्थापित कर दी। यदि आयरलैण्ड को शान्ति का उपभोग तथा सभ्यता के विकास के अवसर का लाभ उठाना था तो यह केवल जन-जातीय अराजकता के दमन से ही हो सकता था। केवल इसी प्रकार किसी सच्चे अर्थ में आयरलैण्ड राष्ट्र बन सकता था। उस समय जैसी परिस्थितियाँ थीं उनमें सम्भवतः इस कार्य का बीड़ा उठाने का सामर्थ्य रखने वाली एक मात्र शक्ति इंग्लिश राजा था। यदि वह इस कार्य में सफल होना चाहता था तो उसे इस कार्य को सहानुभूतिपूर्ण रीति से करना चाहिये था। इसे उस समय तक उस सीमा तक आयरिश कानूनों और रिवाजों का सम्मान करना चाहिये था, जहाँ तक कि वे हानिकारक न हों। इसे आयरलैण्ड का शासन अपने नहीं, किन्तु आयरलैण्ड के स्वार्थों को दृष्टि में रखकर करना चाहिये था। ट्यूडर राजाओं ने अराजकता को दूर करने और देश को पुनः संगठित करने का कार्य किया। दुर्भाग्यवश उन्होंने जिन परिस्थितियों में इस कार्य को उठाया तथा लगभग आवश्यक रूप से जिन उद्देश्यों से वे इस कार्य में प्रेरित हुए, वे परिस्थितियाँ और उद्देश्य ऐसे थे, जो उन्हें उपर्युक्त शर्तों का पालन करने से रोक रहे थे।

निश्चित व्यवस्था और समृद्धि की अच्छी मात्रा का उपभोग करने वाले इंग्लिश लोगों को आयरलैण्ड के मूल निवासी एक ऐसी कोरी बर्बरता की दशा में प्रतीत होते थे, जो 'रेड-इण्डियन' लोगों की दशा से बहुत भिन्न न थी। इंग्लिश लोग आयरलैण्ड को ऐसा देश समझते थे, जिसमें दयनीय और अविरत झगड़े, हत्याएँ और धोखेबाजियाँ चलती रहती थीं। वह जंगलों का तथा उजाड़ और दलदली प्रदेशों का देश था, जिसमें कहीं-कहीं अत्यन्त आरम्भिक कृषि की अवस्था वाले कुछ टुकड़े थे। यह ऐसा देश था जिसकी निम्न श्रेणियाँ जंगली लोगों की भाँति अर्धनग्न दशा में फिरती रहती थीं और वे इस बात में मुश्किल से इस बात के लिए समर्थ हो पाती थीं कि वे अपने सिर ढकने के लिए छतों की अपने लिये व्यवस्था कर सकें। वस्तुतः निरन्तर अराजकता ने आयरलैण्ड के अधिकांश भागों की ऐसी स्थिति कर दी थी। ऐसा प्रतीत होता था कि आयरलैण्ड का यह चित्रण यथार्थ है। इंग्लिश लोग यह नहीं समझते थे कि इसके बड़े भागों के दुःख के बावजूद यह ऐसा देश है, जिसने सन्तों, कवियों और विद्वानों को उत्पन्न किया था और अब भी उत्पन्न कर रहा है। वे यह भी नहीं समझते थे कि उनकी दुर्दशा के कारण बनी हुई अराजकता से यदि एक बार आयरिश लोग मुक्त हो सकें तो ये लोग यूरोप की किसी भी अन्य जनता की भाँति एक पूर्ण सभ्य जीवन का उपभोग करने में और इसे समृद्ध बनाने में उतने ही समर्थ हैं। इस अभागे देश से सम्बन्ध रखने वाले अधिकांश इंग्लिश लोगों

को यह प्रतीत होता था कि इस देश के मूल निवासी आयरिश लोगों के जीवन तथा रिवाजों में संरक्षण किये जाने योग्य कोई वस्तु नहीं है। उस समय एकमात्र आशा यही प्रतीत होती थी कि इंग्लिश-पद्धति पर आयरिश लोगों को बलपूर्वक सभ्य बनाया जाय। जब उन्होंने यह देखा कि इस प्रक्रिया से असन्तोष उत्पन्न होता है और इसका विरोध किया जाता है तथा आयरिश रीति रिवाजों पर अब भी वहाँ के लोग सुदृढ़ बने हुए हैं, तो अनेक इंग्लिश लोग शनैः शनैः इस घृणित विचार को मानने वाले हो गये कि आयरिश लोग ऐसे जंगली है, जिनका सुधार सम्भव नही है। नयी दुनिया के जंगलियों की तरह इनका सफाया किया जाना चाहिये और इनके स्थान पर इंग्लिश लोगों को लाया जाना चाहिये। वे इस भयंकर सम्मति को अधिक तत्परता से इसलिए मानने लगे, क्योंकि वास्तव में स्पेन के साथ संघर्ष के संकट में आयरलैण्ड इंग्लैण्ड के लिए एक भयंकर खतरा बना हुआ था।

इंग्लिश लोग आयरिश रीति रिवाजों में सबसे कम जिस रिवाज को समझते थे, वह उनकी जन-जातीय पद्धति (Clan system) और इस पर आश्रित भूमिधारण (Land tenure) की पद्धति थी। ये दोनों पद्धतियाँ पूर्ण रूप से ऐसी किसी भी चीज से नहीं मिलती थीं, जिसे इंग्लैण्ड नार्मन विजय से भी बहुत पहले से जानता था। आयरिश परिपाटी के अनुसार जन-जाति की भूमियाँ जनजाति की सम्पत्ति होती थी; सदैव एक ही परिवार से एक अस्पष्ट रीति से चुना जाने वाला मुखिया, जनजाति के अधिकारों का एकमात्र प्रमुख संरक्षक होता था और उसे जनजाति की जमीनों में केवल जीवन पर्यन्त स्वत्व रहता था। इस प्रकार वह अपने वशवर्तियों और असामियों के साथ रहने वाले एक बड़े सामन्ती भूस्वामी से बिल्कुल भिन्न था, यद्यपि इंग्लिश लोग उसके साथ ऐसा व्यवहार करने पर बल देते थे। आयरिश पद्धति को इंग्लिश लोग जहाँ तक समझते थे, वे इसे पूर्णरूप से बुरी ऐसी पद्धति मानते थे, जो भूमि के साधनों का निश्चित और व्यवस्थित विकास कभी नहीं कर सकती थी। उनका यह मत था कि वस्तुओं को अच्छा बनाने के लिए पहला पग यह होना चाहिये कि जन-जातीय पद्धति को समाप्त कर देना चाहिए और इंग्लिश पद्धति के अनुसार मुखिया लोगों को जमींदार बना देना चाहिये। वे इस बात में ठीक थे कि वे राजनीतिक पहलू की दृष्टि से जन-जातीय पद्धति में कुछ खतरनाक बातें देखते थे और यह चाहते थे कि सब जन-जातियों को कानून के राज्य में लाया जाय, किन्तु भूमि के साथ विद्यमान अधिकारों के प्रति जनता के विचारों का उन्मूलन करना एक और बात थी। आयरलैण्ड जैसे विशुद्ध कृषिप्रधान एवं पशु-पालक देश में भूमि के अधिकार सब से अधिक महत्व रखते थे और हेनरी अष्टम के समय से हमारे समय तक एक रूप में या दूसरे रूप में सम्पूर्ण सुदीर्घ कटुता मुख्य रूप से भूमि के प्रश्न पर रही है।

२. आयरिश समस्या के समाधान के पहले प्रयास

हेनरी अष्टम के रोम के साथ सम्बन्ध-विच्छेद ने ही सर्वप्रथम राजा का ध्यान इस ओर गम्भीरतापूर्वक आकृष्ट किया कि आयरलैण्ड को व्यवस्थित राज्य के रूप में परिणत करने की आवश्यकता है; क्योंकि उसे यह ज्ञात हुआ कि चार्ल्स पंचम को यह प्रलोभन था कि वह

आयरिश सरदारों को उपद्रव के लिये भड़काये तथा पोप यह दावा करता था कि आयरलैण्ड पोप के क्षेत्र में है और यह उसके आदेशपत्र से हेनरी द्वितीय को दिया गया था। वह इन दावों को एक नास्तिक राजा के विरुद्ध उपयोग में लाना चाहता था। किन्तु इस समय आयरलैण्ड में पोप के प्रति उत्साह बहुत थोड़ा या बिल्कुल नहीं था। अधिकांश सरदारों ने हेनरी द्वारा पोप की सत्ता के प्रत्याख्यान को बिल्कुल शान्तिपूर्ण रीति से स्वीकार किया। १५४१ ई० में पोप ने आयरलैण्ड में धार्मिक भावना भड़काने के लिए कुछ जेसुइटों (Jesuits) को आयरलैण्ड भेजा, किन्तु उन्हें बिना कुछ किये खिन्न होकर वापिस लौटना पड़ा।

पोप के दावे के उत्तर में १५४१ ई० में हेनरी ने आयरिश पार्लियामेण्ट के एक कानून द्वारा आयर्लैण्ड के राजा की उपाधि धारण की, इससे पहली उपाधि आयर्लैण्ड के स्वामी (Lord of Ireland) की थी। इस तिथि से पहले ही पेल पर चिरकाल से प्रभुत्व रखने वाले किल्डेयर के शक्तिशाली फिट्जजेरल्ड वंश वालों ने विद्रोह कर दिया था। हेनरी ने इस विद्रोह को शक्ति के साथ कुचला और किल्डेयर के अर्ल का तथा उसके पाँच चाचों का वध करवा दिया। फिट्जजेरल्ड वंश की इस शाखा ने इसके बाद बहुत कम कष्ट दिया। तदनन्तर हेनरी ने सर एन्थनी सेण्ट लेगर की अध्यक्षता में एक जाँच कमीशन आयरलैण्ड के लिए अधिक अच्छी शासन के लिए योजना तैयार करने के लिए भेजा। इस योजना में राजनीतिज्ञता से परिपूर्ण कई तत्व थे। पेल के समीपतम रहने वाली जन-जातियों के सरदारों को इस तर्क पर इंग्लिश भूधारण पद्धति पर उनकी (अथवा उनकी जन-जातियों की) जमीन के अनुदान दिये जाने थे कि वे इस बात का पूरा प्रयत्न करेंगे कि वे अपने असामियों से इंग्लिश भाषा बुलवायेंगे, वे भेद छिपाने के लिए घूँस वसूल करना बन्द कर देंगे, अनुयायियों के सशस्त्र सैनिक दल रखना छोड़ देंगे और उन्हें इंग्लिश न्यायालयों को स्वीकार करना चाहिये तथा उनका उपयोग करना चाहिये। इस आधार पर लैन्स्टर नामक प्रान्त के एक बड़े हिस्से को पुन: संगठित किया गया और उसे पेल की भाँति शासन की एक ही पद्धति के नीचे लाया गया। अल्स्टर में महान् ओनील तथा ओडोनल जैसे जन-जातियों के अथवा क्लेयर के ओब्रियेन जाति के मुखियाओं की भाँति दूरवर्ती और शक्तिशाली सरदारों के साथ इस प्रकार प्रत्यक्ष रूप से व्यवहार नहीं हो सकता था, किन्तु उन्हें भी यह प्रेरणा दी गयी कि जब सम्भव हो तब वे राजा से ही अपनी जमीनों का अधिकार प्राप्त करें और पार्लियामेण्ट की बैठकों में उपस्थित हों। इनमें से कुछ सरदार विशेषत: टाइरोन का कान ओनील इन प्रस्तावों को मानने को तैयार था। हेनरी ने नील को तथा कुछ अन्य बड़े सरदारों को अर्ल की उपाधि प्रदान की। इसके अतिरिक्त आयरिश मठों की लूट मुख्य रूप से सरदारों में ही बाँटी गयी। उन्होंने इसे स्वीकार करने में अथवा हेनरी को चर्च के अध्यक्ष के रूप में स्वीकार करने में बहुत कम कठिनाई उत्पन्न की। जन-जातीय पद्धति दुर्बल बनायी जा रही थी। जहाँ तक इसका सम्बन्ध था, हेनरी अष्टम का कार्य सफल था और आयरलैण्ड में राजा की सत्ता पहले किसी भी जमाने की अपेक्षा अधिक ऊँची स्थिति में पहुँच गयी थी।

किन्तु जनजातीय स्वतन्त्रता की तथा उपद्रव करने की आदतें इतनी आसानी से नहीं छुड़ायी जा सकती थीं, न ही जनजातीय व्यक्तियों के भूमि के अधिकारों की तथा मुखिया चुनने

के दावे की उपेक्षा गम्भीर उपद्रव के बिना शान्तिपूर्वक जा सकती थी। एडवर्ड षष्ठ के राज्यकाल के आरम्भ में ओ कोनोर तथा ओ मोर वंश वालों का एक आकस्मिक विद्रोह हुआ। इन्होंने आधुनिक किंग्ज कौण्टी और क्वीन्स कौण्टी वाले प्रदेश पर अधिकार कर लिया। विद्रोह को कठोरतापूर्वक दबा दिया गया। इन जनजातियों के प्रदेश को उजाड़ दिया गया और यह निश्चय किया गया कि जब्त की गयी जमीनों का इंग्लिश पद्धति के अनुसार उन्मुक्त भूम्यधिकार (Free-hold) के तथा पट्टों के आधार पर बिल्कुल नया बन्दोबस्त किया जाय। यह उस बात का पहला प्रयास था, जिसे बस्ती बसाना (Plantation) कहा जाता था, यद्यपि अब तक इंग्लिश और आयरिश भूमिस्वामियों के बारे में कोई भेद नहीं किया जाता था। यह भेद फिलिप और मेरी द्वारा किया गया, इनकी स्मृति किंग्ज कौण्टी और क्वीन्स कौण्टी के नामों में तथा इनकी राजधानियों फिलिप्स टाउन और मेरी बरो के रूप में सुरक्षित है। बस्ती बसाने की इस प्रक्रिया की जड़ जम गयी, किन्तु यह बहुत ही कष्ट के साथ जमी। जमीन पाने वाले यह अनुभव करते थे कि उन्हें जमीनों के पुराने अधिकारियों से अपनी रक्षा करनी है, इस शताब्दी के शेष समूचे भाग में इस क्षेत्र में यह जंगली काम और जीवन की महान् क्षति चलती रही।

अल्स्टर में विद्रोह अधिक भयंकर था। इसका परिणाम यह हुआ कि हेनरी अष्टम ने यह प्रयत्न किया कि वह ओनील जन-जाति के अध्यक्ष को इंग्लिश पद्धति का एक प्रादेशिक महापुरुष बना दे। जन-जाति इससे इन्कार नहीं करती थी कि उनके मुखिया को जन-जाति की जमीनों को पारिवारिक जागीर की भाँति इच्छानुसार व्यवस्था करने का अधिकार है। वे यह भी नहीं मानते थे कि राजा को मुखिया पद के उत्तराधिकार के क्रम को राजकीय अधिकार पत्र या शाही सनद द्वारा निश्चित करने का अधिकार है। इसके साथ ही टाइरोन के पहले अर्ल का सब से बड़ा बेटा शाही सनद में उत्तराधिकारी बनाया गया था, किन्तु वह अवैध था। उसका छोटा किन्तु वैध भाई शेन ओनील उस समय एक लड़का ही था, जब यह शाही सनद दी गयी थी। जब वह जवान हुआ तो उसका दावा ऐसा था कि इसके कारण जन-जाति के सभी व्यक्ति उसके साथ मिल गये; वह न केवल अपने वैयक्तिक अधिकारों के लिये लड़ रहा था, किन्तु जन-जाति के पुराने रीति रिवाजों के लिये और जन-जाति की ज़मीनों पर उनके अधिकारों के लिये लड़ रहा था। हेनरी अष्टम की मृत्यु के बाद ओनीलों में गृहयुद्ध छिड़ गया और असीम शक्तिशाली तथा अधिकतम पाशविक क्रूरता करने में समर्थ शेन ने न केवल अपने को जन-जाति का नेता बनाया, किन्तु वह पहले कभी ओनीलों के अधीन रहने वाली चारों ओर की जन-जातियों पर भी अपनी सत्ता स्थापित करने के लिये प्रवृत्त हुआ। हम उसके युद्धों का और जंगली कथा का अनुसरण नहीं कर सकते, और विशेष रूप से अल्स्टर की एक अन्य महान् जन-जाति डोनेगल के ओडोनेल वंश के साथ तथा हाल में ही एण्ट्रीम में बस्ती बसाने वाले हाईलैण्ड के मैडॉनेल वंश के साथ बारी-बारी से मित्रता और शत्रुता करने की कहानी को भी नहीं बता सकते। जब एलिज़ाबेथ राजगद्दी पर बैठी तो शेन की शक्ति संकटपूर्ण ऊँचाई तक पहुँच चुकी थी और अल्स्टर में विद्रोह की आग भड़क उठी थी। यदि राजा की सत्ता कुछ भी अर्थ रखती तो शेन को अवश्यमेव आज्ञापालन के लिये मजबूर बनाना चाहिये था; विशेष रूप से इसलिये कि यह बात प्रसिद्ध थी कि वह स्पेनिश लोगों के साथ मिल कर षड्यन्त्र कर

रहा है। १५६० से १५६७ तक बीच-बीच में अप्रभावशाली युद्ध चल रहा था। इसमें ओडोनेल वंश द्वारा हराये जाने पर शेन ने एण्ट्रीम में मैडॉनेल वंश के लोगों के पास शरण ग्रहण की और उन लोगों ने एक मदोन्मत्त विवाद में उसे काट कर टुकड़े-टुकड़े कर दिया। इस युद्ध में लगी हुई इंग्लिश सेनाएँ कभी ऐसी प्रबल नहीं थीं कि वे एक स्पष्ट निर्णय कर सकें। इसका बड़ा कारण यह था कि एलिज़ाबेथ के पास अभी तक पर्याप्त सेना को सुसज्जित करने के लिये आवश्यक धन नहीं था। कुछ समय के लिये अल्स्टर शान्त था; ओनील और ओडोनेल थक गये थे और एक बेचैन शान्ति बनी रही, किन्तु आयर्लैण्ड के अधिकतम जंगली और भीषण प्रदेश अल्स्टर को किसी भी प्रकार वशवर्ती नहीं बनाया जा सका था।

इसी बीच में दक्षिण में उससे भी अधिक गम्भीर उपद्रव आरम्भ हो गये। यह आयरलैण्ड में राष्ट्रीय विरोध के आरम्भ होने का चिह्न था। यद्यपि इन दोनों विद्रोहो में आपस में कोई क्रियाशील सहयोग नहीं था, फिर भी नेताओं में पत्रव्यवहार और सम्पर्क था। अल्स्टर का उपद्रव एक ऐसे जन-जातीय विद्रोह से उत्पन्न हुआ जिसकी आशा की जा रही थी। किन्तु मन्स्टर के उपद्रवों में एक नया और अधिक विक्षुब्ध करने वाला धर्म का तत्त्व प्रकट हुआ।

३. धार्मिक संघर्ष और मन्स्टर विद्रोह

हम देख चुके है कि हेनरी अष्टम के समय में पोप की सर्वोच्च सत्ता की अस्वीकृति से कोई गम्भीर कठिनाई नहीं उत्पन्न हुई और १५४१ ई० में विद्रोह का झण्डा खड़ा करने का पोप का प्रथम प्रयास विफल हुआ। किन्तु हेनरी अष्टम के द्वारा किये गये परिवर्तन राजनीतिक थे, सैद्धान्तिक नहीं। उनसे व्यावहारिक रूप में उपासना के क्रम में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। यह उपासना अभी तक लैटिन में की जाती थी। एडवर्ड षष्ठ और एलिज़ाबेथ के समय में किया गया परिवर्तन बिल्कुल दूसरा ही मामला था। नये धर्म के आयरलैण्ड मे स्वीकार किये जाने का अवसर तब हो सकता था जब कि उसे प्रेरणा दे कर और आयरिश लोगों के लिये सुबोध रूप में शुरू किया जाता; क्योंकि सब से अधिक प्रामाण्यवादी धर्म के प्रति सुदीर्घ निष्ठा के बावजूद आयरिश लोग स्वभाव से सत्ता के प्रेमी नहीं हैं और अतीत काल में उन्होंने रोम के लिये कोई बडा उत्साह नहीं प्रदर्शित किया था। इंग्लिश सरकार ने इस बात पर जिद्द करने की अविश्वसनीय भूल की कि न केवल प्रार्थना के नये क्रम को सर्वत्र शुरू किया जाना चाहिये अपितु प्रार्थना इंग्लिश में पढ़ी जानी चाहिये। इंग्लिश भाषा को दस में से नौ आयरिश नही समझ सकते थे। इस प्रकार नये सिद्धान्त निरर्थक मन्त्र मात्र प्रतीत होते थे। ये ऐसी शक्ति द्वारा उन पर बलपूर्वक थोपे जा रहे थे, जो शक्ति पहले ही जन-जाति के प्राचीन काल से चले आने वाले रीति रिवाजों पर तथा भूमि धारण की परम्परागत पद्धतियों पर आक्रमण कर रही थी। प्रोटेस्टेण्ट धर्म का विरोध स्वाभाविक रूप से देश भक्ति से अभिन्न समझा जाने लगा। यह ठीक उस से उल्टा था, जैसा कि इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड में घटित हुआ था।

१५६०ई० में पोप पायस चतुर्थ ने यह अनुभव किया कि एलिज़ाबेथ (भले ही वह कुछ भी दावा करे) वास्तव में एक स्पष्ट नास्तिक थी। इसलिये उसने यह निश्चय किया कि वह इंग्लैण्ड को पुन: प्राप्त करने के लिये आयरलैण्ड का एक साधन के रूप में प्रयोग करेगा। अत:

इंग्लिश लोग आयरिश विरोध को उस समय इंग्लिश स्वतन्त्रता की सत्ता-मात्र तक को खतरे में डालने वाला समझने लगे, जब कि इस स्वतन्त्रता पर चारों ओर से संकट पड़ा हुआ था। आयरिश राजनीति में इन नवीन उद्देश्यों के प्रवेश ने एक ऐसी कटुता उत्पन्न की जो केवल अधिकतम भयंकर परिणाम पैदा कर सकती थी।

इस काम में पोप के एजेण्ट मुख्य रूप से जेसुइट मिशनरी थे। इनकी एक अविरत धारा आयरलैण्ड में एलिज़ाबेथ के समूचे राज्य काल में लूवैं, दोउए तथा सालामांका के प्रशिक्षण-विद्यालयों से प्रवाहित हो रही थी। इनमें पहला व्यक्ति १५६१ ई० में कार्क में उतरने वाला लिमिरिक निवासी डेविड वोल्फ था, उसको दिये गये निर्देश ये थे कि वह न केवल कैथोलिक धर्म के पुनरुज्जीवन के लिये कार्य करे, अपितु इसकी रक्षा के लिये आयरलैण्ड के सरदारों के एक संघ का भी निर्माण करे। पहला काम पहले किया जाना था, क्योंकि अब तक आयरिश सरदारों ने कैथोलिक धर्म के प्रति उल्लेखनीय उपेक्षा प्रदर्शित की थी। किन्तु हाल की घटनाओं ने बीज बोने वालों के लिये धरती तैयार की हुई थी। यह आशा की जा सकती थी कि वोल्फ उस समय खुला विद्रोह करने वाले शेन ओनील के पास सीधा चला जाता। किन्तु वह शेन को एक 'क्रूर और अधार्मिक नास्तिक' समझता था। वह अल्स्टर के पास नहीं गया, किन्तु आरम्भ में वह मन्स्टर से ही कार्य करता रहा। यहाँ उसके तथा उसके साथियों के उपदेशों से एक वास्तविक धार्मिक पुनरुज्जीवन का श्रीगणेश हुआ। यह उत्कट इंग्लिश-विरोधी भावना से ओतप्रोत था और उससे सुदृढ़ हो रहा था। आयरलैण्ड में जेसुइट जितने अधिक आये, यह भावना उतनी ही अधिक विकसित हुई। यह भावना मन्स्टर से शेष आयर-लैण्ड में फैल गयी और इसने पेल तक को भी जीत लिया। इंग्लिश लोगों ने जेसुइट लोगों को पकड़ने का पूरा प्रयत्न किया, किन्तु देश के अधिकांश भागों पर उनका अधिकार इतना कम था कि उन्हें इसमें बहुत कम सफलता मिली।

मन्स्टर में दो सबसे बड़ी शक्तियाँ दो महान् एंग्लो-नार्मन परिवार थे। पहला परिवार ओरमांड (टिपेरेरी से मिलने वाले प्रदेश) के अर्ल बटलर वंश वालों का था और दूसरा डेस्मांड (कार्क जिले का अधिकांश भाग) के अर्ल फिट्जजेरल्ड वंश वाले अथवा जेरल्डाइन लोगों का था। इनमें से बटलर वंश सदैव इंग्लैण्ड के साथ सम्बन्ध के प्रति सबसे अधिक स्थायी रूप से स्वामिभक्त रहे। १५६० ई० से पहले की भाँति इन दोनों वंशों में एक निजी युद्ध चल रहा था। एलिज़ाबेथ ने आग्रह किया कि विवादास्पद प्रश्न का निर्णय सरकार द्वारा किया जाना चाहिए। लार्ड डिप्टी का निर्णय ओरमांड के पक्ष में था और चूँकि डेस्मांड विरोध के चिन्ह प्रदर्शित करता रहा और उसके शेन ओनील के साथ मिले होने का सन्देह था, अतः वह कैद करके (१५६७ ई०) लन्दन भेजा गया। उस पर राजद्रोह का आरोप था। १५६८ ई० में डेस्मांड अपने प्रदेश में रानी का समर्थन करने के लिए तैयार हो गया, निस्सन्देह यह बात उस कल्पना पर आधारित थी कि वह उन प्रदेशों को पुनः प्राप्त कर लेगा और उसे लौटने की अनुमति दे दी जायगी। किन्तु फिर भी वह बन्दी बना रहा और डकैती की सहज बुद्धि रखने वाले डेवन के कुछ साहसी व्यक्तियों ने रानी को यह सुझाव देने शुरू किये कि जमीन उन्हें

दे दी जाय और उन्होंने अपने साधनों से इनको जीतना शुरू कर दिया। उस समय में, लार्ड डिप्टी के पद पर विद्यमान आयरलैण्ड में एलिजाबेथ के योग्यतम प्रतिनिधि सर हेनरी सिडनी का यह आग्रह था कि मन्स्टर के शासन प्रबन्ध के लिए एक राष्ट्रपति की नियुक्ति की जानी चाहिए और इसकी समूची सीमाओं में इंग्लिश कानून को लागू किया जाना चाहिए। निस्सन्देह कानून के लागू किये जाने की आवश्यकता थी. किन्तु इस सुझाव ने इसे बिल्कुल ही दूसरा रंग दे दिया कि यह कार्य भूमि पर बलपूर्वक अधिकार के साथ किया जाय। विशेषत: उस समय यह बात सच थी जब कि प्राचीन स्वत्वों को खरीदने के बाद डेवन के कुछ साहसी व्यक्ति अपने दावों को शक्ति के प्रयोग द्वारा सही बनाने के लिए अपने अनुयायियों के दलों के साथ आयरलैण्ड में प्रकट हुए।

इन परिस्थितियों में १५६९ ई० में मन्स्टर में एक भीषण विद्रोह भड़क उठा। यह केरी से किलकेनी तक फैल गया। इसका नेता जेम्स फिट्जमौरिस था, यह डेस्मांड के अर्ल का चचेरा भाई था और उसकी अनुपस्थिति में जेरल्डाइन लोगों के समूचे प्रभाव का उपयोग करने में समर्थ हुआ। वह वोल्फ का एक बहुत पुराना और सबसे अधिक भक्त अनुयायी था। उसका स्पेन के साथ सम्बन्ध था और उसे स्पेनिश सहायता की आशा थी। वह एक साथ ही धार्मिक उत्साह तथा इंग्लैण्ड के प्रति घृणा से अनुप्राणित था। आयरलैण्ड का शेष आधा भाग बेचैन और विद्रोह के लिए तैयार था। पेल में भी व्यापक असन्तोष था। रानी धन की पर्याप्त मात्रा नहीं दे सकती थी और केवल दो हजार इंग्लिश सैनिको की फौज ही उपलब्ध थी। ऐसा प्रतीत होता था कि यह इंग्लैण्ड के लिए जीवन मरण का संघर्ष है; और इन परिस्थितियों में चार भीषण और निष्फल वर्षों तक चलने वाले इस संघर्ष ने दोनों पक्षों की ओर से ऐसा भयावह और इतना भद्दा रूप धारण किया जितना उस भीषण युग के किसी अन्य युद्ध में नहीं मिलता है। इसमें कोई दया नही दिखायी गयी। यह दोनों वंशों की ओर से समूलोन्मूलन का युद्ध था। देश को उजाड़ दिया गया, इंग्लैण्ड की दुर्ग रक्षक सेनाओं को वेतन न मिलने पर लूट पर ही निर्भर रहना पड़ता था। वे उस काम से घृणा करते थे, जो उन्हें करना पड़ता था। वे उस अभागी जनता से भी घृणा करते थे जिसका उन्हें पीछा करना पड़ता था और बदले में उन्हें बहुत ही तीव्र घृणा मिलती थी। अन्त में (१५७३ ई०) फिट्जमौरिस को माफी देनी पड़ी। डेस्मान्ड को लौटने की अनुमति दी गयी और इंग्लिश कानून को लागू करने का प्रयास छोड़ दिया गया। मन्स्टर के बड़े हिस्सों को उजाड़ दिया गया, किन्तु इसके अतिरिक्त कुछ भी सफलता नही मिली। कैथोलिक तथा इंग्लिश विरोधी आन्दोलन निश्चित रूप से नहीं कुचले गये। इंग्लिश अधिकारियो ने यह रिपोर्ट दी कि विदेशी आक्रमण होने पर अनिवार्य रूप से उसके बाद वहाँ एक सामान्य विद्रोह होगा।

ऐसी परिस्थिति में यह स्पष्ट था कि यदि इंग्लिश सत्ता को बनाये रखना है और आयरलैण्ड को इंग्लिश स्वतन्त्रता को कुचलने का अड्डा नहीं बनाना है तो कुछ अधिक कदम उठाये जाने चाहिए। अन्त में लार्ड डिप्टी सिडनी की बात मान ली गयी और मन्स्टर तथा कनाट का शासन करने के लिए छोटी फौजों के साथ इंग्लिश राष्ट्रपति नियुक्त किये गये। इन नये

अधिकारियों का महत्व १५७७ ई० में उस समय प्रदर्शित हुआ, जब कनाट के बर्क लोगों का एक विद्रोह शीघ्रता और निष्ठुरता के साथ कुचल दिया गया। राष्ट्रपति ने रिपोर्ट दी कि मैंने उनके देश में इस निश्चय के साथ प्रयाण किया कि "मैं उन्हें आग और तलवार से नष्ट कर दूंगा; न तो बूढ़े लोगों को और न जवान लोगों को जिन्दा छोड़ूँगा।" किन्तु इंग्लिश कानून और न्याय को आयरलैण्ड में फैलाने का यह ढंग अच्छा नहीं था। यह एक अमंगल-सूचक बात थी कि अब तक आपेक्षिक दृष्टि से अविक्षुब्ध रहने वाला कनाट प्रदेश भी विद्रोह करे। इसके अतिरिक्त अल्स्टर में स्थिति बहुत खराब थी। ओनीलवंशी तथा ओडोनेल वंशी मित्र बन रहे थे और उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता था। अल्स्टर के राज्यपाल ऐसेन्स के अर्ल ने एण्ट्रिम में इंग्लिश बस्ती बनाने के प्रयत्न से भिड़ों का छत्ता छेड़ दिया था और उसने बड़ी कठिनाई से यहाँ इंग्लिश सत्ता को नाम-मात्र के रूप में बनाये रखा।

१५७६ ई० में विदेशी आक्रमण से उत्पन्न होने वाले खतरे की परीक्षा हुई। जेम्स फिट्ज़मौरिस प्रत्येक स्थान से सहायता प्राप्त करने के लिए १५७५ ई० में विदेश गया था। १५७६ ई० में वह स्पेनिश, इटालियन, पुर्तगाली, आयरिश और इंग्लिश लोगों की एक मिली-जुली फौज का अध्यक्ष बन कर लौटा और उनके साथ केरी में उतरा। इन्हें पोप का आशीर्वाद और फिलिप द्वितीय का गैर सरकारी संरक्षण प्राप्त था। फिलिप ने बाद में कुमुक भेजने का वचन दिया था। शीघ्र ही डेस्मांड के अर्ल ने विद्रोह किया। कनाट और मन्स्टर के राष्ट्रपतियों ने पहले इस विद्रोह को फैलने से रोका और शीत ऋतु में आरमांड की सहायता से विद्रोही जिलों से भीषणतम प्रतिशोध लिया और एक इंग्लिश सेनापति के अनुसार "सब बस्तियों को आग से जलाते हुए और जहाँ कहीं लोग मिलें वहाँ उनका वध करते हुए" यह प्रतिशोध लिया गया। छोटी विदेशी फौज को पकड़ लिया गया और तलवार के घाट उतार दिया गया। अब पेल के आयरिश लोगों में विद्रोह भड़का (१५८० ई०), उस समय डेस्मांड को लगभग जीत लिया गया था। पेल के विद्रोही नेता बाल्टिंग्लैस ने इस विद्रोह में नये लार्ड डिप्टी को बुरी तरह हराने में सफलता प्राप्त की। लगभग इसी समय इंग्लिश चैनल के ब्रिटिश जहाजों की निगाह से बचते हुए एक छोटी स्पेनिश सेना केरो पहुँची और स्मेरविक में अपने लिए खाइयाँ खोद लीं। वे कुछ भी नहीं कर सकते थे, क्योंकि उनके आगे का देश वीरान पड़ा था। किन्तु एक क्षण के लिए यह प्रतीत हुआ कि मानो इंग्लिश शक्ति का अन्त हो जायगा। अब तक हुई लड़ाई की अपेक्षा अधिक निष्ठुर लड़ाई और उग्र कार्यवाही ने इस सन्देह को दूर कर दिया। समुद्र और भूमि से घिर जाने पर, स्पेनिश लोगों को बाधित होकर आत्म-समर्पण करना पड़ा और उन सब को तलवार के घाट उतार दिया गया। विद्रोह के नेता एक-एक करके पकड़े गये और इनका वध किया गया। युद्ध दो वर्ष और चलता रहा। इसमें वास्तविक लड़ाई के स्थान पर अभागे विद्रोहियों का पीछा अधिक किया जाता रहा। १५८५ ई० तक पुनः ऐसी शक्ति स्थापित हो चुकी थी जिसके बारे में कहा जाता था कि उन्होंने सब विद्रोहियों का विध्वंस करके "इस स्थान को मरुस्थल जैसा निर्जन बना दिया और इसे शान्ति का नाम दिया।" १५८६ ई० में यह अन्दाज लगाया गया था कि छः महीनों में मुख्य रूप से भुखमरी से ३० हजार व्यक्ति नष्ट हो गये थे।

इंग्लिश दृष्टिकोण से इस पूर्ण विध्वंस का एक लाभ यह था कि इसने आयरलैण्ड के कुछ अत्यन्त उपजाऊ प्रदेशों में इंग्लिश बस्ती बसाने का क्षेत्र बिल्कुल साफ कर दिया था। भूमि के अनुदान विभिन्न ठेकेदारों को इस शर्त पर दिये गये कि वे विभिन्न वर्गों के इंग्लिश असामियों को वहाँ लायेंगे, उन्हें भूमि पर बसायेंगे और वे अपनी जमीन का हस्तान्तरण आयरिश लोगों को नहीं करेंगे। इस युग के कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध लोगों ने ये अनुदान लिये। इनमें सर वाल्टर रेले और एडमण्ड स्पेंसर थे। किन्तु भद्र वर्ग में से बहुत कम व्यक्तियों ने इस कार्य को गम्भीरतापूर्वक ग्रहण किया। जिन्होंने ऐसा किया, उन्हें भी एक जंगली राष्ट्र में बस जाने से बहुत कम शान्ति मिली। स्पेन्सर ने अपनी पुस्तक आयरलैण्ड की दशा (State of Ireland) में आयरिश लोगों को जंगली राष्ट्र कहा था। शीघ्र ही बेदखल किये गये आयरिश लोग और उनके बच्चे वापस आने लगे और समुचित समय में मन्स्टर पुनः पहले की भाँति आयरिश बन गया, यद्यपि पुरानी भूमिपद्धति और पुराना जन-जातीय शासन समाप्त हो चुका था। इस प्रदेश में किसी भी प्रकार से कम या अधिक मात्रा में व्यवस्था स्थापित की गयी; इसमें विक्षोभ डालने वाले बहुत कम व्यक्ति रह गये।

४. टाइरोन के नेतृत्व में आयरिश राष्ट्रीय विद्रोह

मन्स्टर के द्वितीय विद्रोह के बाद १० वर्ष से अधिक समय तक आयरलैण्ड ने बीच-बीच में भंग होने वाली शान्ति का उपभोग किया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसका कुछ कारण आर्मेडा का विध्वंस था, जिसने उस समय स्पेन से सहायता की समूची आशा को नष्ट कर दिया था। यद्यपि सर जॉन पैरट के युद्ध और कठोर शासन ने भी इसके लिये बड़ा कार्य किया; किन्तु १५८८ ई० में समुद्र में अपनी आशाओं के विध्वंस होने के बाद फिलिप द्वितीय इंग्लैण्ड के विरुद्ध संघर्ष में किसी अन्य तत्व की अपेक्षा आयरलैण्ड पर अधिक भरोसा रखता था। जेसुइट मिशनरियों से सहायता पाने वाले उसके दूत निरन्तर कार्य कर रहे थे। १५९० ई० के बाद के वर्षों में उसे अल्स्टर से आशाएँ होने लगी थीं। यहाँ टाइरोन के ओनीलों को विभक्त करने वाला पुराना झगडा समाप्त किया जा चुका था। इंग्लिश लोग ह्यूज ओनील को यहाँ ले आये थे। यह उस सरदार का पोता और उत्तराधिकारी था, जिसे हेनरी अष्टम ने टाइरोन के अर्ल की उपाधि प्रदान की थी। इंग्लिश लोग आर्मा में टरलफ के मुखिया पद के उत्तराधिकारी शेन ओनील पर एक नियन्त्रण रखने के रूप में इसका समर्थन कर रहे थे। टाइरोन के अर्ल ह्यूज ने अनेक सुदीर्घ वर्षों तक इंग्लैण्ड के स्वामिभक्त मित्र की भूमिका अदा की थी, और उसने वास्तव में मन्स्टर के विद्रोह को दबाने में सहायता की थी। किन्तु उसने अपने प्रतिस्पर्धी सरदार टरलफ से भी मित्रता की। वह उसका टैनिस्ट (Tanist) अथवा निर्वाचित उत्तराधिकारी स्वीकार किया गया। वह १५९३ ई० में समूची ओनील जन-जाति का मुखिया बना। उसने ह्यूजरो ओडोनेल के साथ भी घनिष्ट मैत्री की। यह १५९१ ई० में ओनील की प्राचीन प्रतिनिधि ओडोनेल जन-जाति का मुखिया बन गया था। ह्यूज एक कट्टर कैथोलिक और इंग्लैण्ड का विरोधी था। सम्भवतः यह ह्यूज का ही प्रभाव था, जिसके कारण टाइरोन ने अँग्रेजों के साथ मैत्री भंग करने का निश्चय किया। सम्भवतः इसका कारण यह भय भी था

कि इंग्लिश लोग अल्स्टर में बस्ती बसाने की उस योजना को पुनः आरम्भ करेंगे, जिसे वे मन्स्टर में क्रियान्वित कर चुके थे। यह सन्देह निराधार नहीं था। किसी भी प्रकार उत्तर के दो बड़े सरदारों ने फिलिप द्वितीय के साथ गुप्त सम्बन्ध स्थापित किये और इसी बीच में वे पड़ोसी जन जातियों पर अपना प्रभाव विस्तीर्ण करने में प्रयत्नशील थे। १५९५ ई० में उन्होंने शान्ति भंग की, टाइरोन ने लौथ का विध्वंस किया और उसी समय ओडोनेल ने कनाट पर हमला किया। १५९६ ई० में एक शान्तिसन्धि की गयी, किन्तु १५९७ ई० में एक नया युद्ध भड़क उठा। इसकी समाप्ति एक ऐसी विरामसन्धि द्वारा की गयी, जिसकी अवधि १५९८ ई० में खतम हो गयी।

अगस्त १५९८ ई० में, युद्ध को पुनः शुरू करते हुए, टाइरोन ने इंग्लिश लोगों को येलो फोर्ड में बहुत बुरी तरह पराजित किया। आयरलैण्ड में अब तक इंग्लिश लोगों की यह सबसे बुरी हार थी। इसी समय में कनाट में एक विद्रोह शुरू हुआ, ओमोर तथा ओकोनोर लोगों ने लैन्स्टर में अपनी पुरानी शिकायतों को दूर करने के लिये बगावत की और टाइरोन द्वारा मन्स्टर में नेतृत्व की जाने वाली एक सेना ने नयी बस्ती में बसने वाले इंग्लिश लोगों को नगरों में शरण लेने के लिये भागने को विवश किया। पहली बार इंग्लिश लोगों को लगभग सार्वभौम राष्ट्रीय विद्रोह का सामना करना पड़ा। सब प्रान्तों में जिन मुखिया लोगों ने इंग्लिश पद्धति को स्वीकार किया था, अब उनके स्थान पर उसके प्रतिस्पर्धियों को मुखिया बना दिया गया। इस समय यदि फिलिप द्वितीय ने आयरलैण्ड में एक बड़ी सेना उतार दी होती तो यह देश इंग्लैण्ड के हाथ से निकल जाता। परन्तु इस समय कोई स्पेनिश सेना सहायता के लिये नहीं आयी।

इस गम्भीर खतरे का मुकाबला करने के लिये एलिज़ाबेथ ने अपने उद्धत युवा कृपा-पात्र एसेक्स के अर्ल को, अब तक किसी भी वायसराय को सौंपे गये अधिकतम अधिकारों के साथ और आयरलैण्ड में अब तक भेजी गयी सबसे बड़ी सोलह हजार पैदल तथा १३०० घुड़-सवारों की इंग्लिश सेना का अध्यक्ष बना कर भेजा। एसेक्स सम्भवतः अपने किसी गम्भीर खेल की चाल चल रहा था, अतः उसने कोई भी प्रभावशाली कार्य नहीं किया। उसने टाइरोन को ऐसी अनुकूल शर्तें प्रस्तुत की कि उसने उन्हें सहर्ष स्वीकार कर लिया। ये शर्तें उसके लिये इतनी अधिक अनुकूल थी कि सरकार ने इनको अस्वीकार कर दिया। इससे इस कृपापात्र ने सदा के लिये रानी की मित्रता खो दी (१५९९ ई०)। दो वर्ष बाद उसे इंग्लैण्ड में विद्रोह का झंडा खड़ा करने के प्रयत्न में मरवा दिया गया।

१६०० ई० में युद्ध पुनः शुरू हो गया और देश के सभी भागों में इसकी ज्वालाएँ पुनः भड़क उठीं। किन्तु एसेक्स के उत्तराधिकारी लार्ड मौण्टजाय ने १६०१ ई० तक भीषण युद्ध करके विद्रोह की कमर तोड़ दी। इसी समय यह समाचार आया कि ५ हजार सैनिकों की एक विशाल स्पेनिश सेना घेरा डालने वाली तोपों के साथ किनसेल में ३३ जहाजों के बेड़े द्वारा उतार दी गयी है। चिर प्रतीक्षित स्पेनिश सहायता आ गयी, किन्तु यह बहुत देर में आयी थी। यद्यपि विद्रोह पुनः भड़क उठा और टाइरोन तथा ओडोनेल ने आक्रान्ताओं के साथ अपनी फौजों को मिलाने के लिए मन्स्टर की ओर प्रयाण किया, तथापि अब यह सम्भव नहीं था कि पुरानी

स्थिति को पुनः स्थापित किया जा सके। एक इंग्लिश बेड़े ने स्पेनिश लोगो के समुद्र के मार्ग को बन्द कर दिया और इनकी सहायता के लिए भेजे गये एक स्पेनिश बेड़े को सफलता पूर्वक हरा दिया। स्थल पर मौण्टजाय ने स्पेनिश सेनाओं को घेर लिया। टाइरोन ने इस पर हमला किया, किन्तु इसके परिणाम उसके लिए बहुत ही भीषण हुए। उसके दो हजार व्यक्ति नष्ट हो गये, जब कि इंग्लिश लोगों का एक ही आदमी मरा। जनवरी १६०२ ई० में स्पेनिश लोगों ने आत्मसमर्पण कर दिया, यद्यपि लड़ाई एक साल और चलती रही। किन्तु इसी समय से आयरलैण्ड की इंग्लिश विजय को रोकने वाले अन्तिम और गम्भीरतम प्रयत्न की पूर्ण विफलता निश्चित हो गयी। एलिजाबेथ के देहान्त के बाद टाइरोन ने आत्मसमर्पण कर दिया। इस महान् रानी का शासन एक तटस्थ, उपद्रवी जन-जातीय आयरलैण्ड में जेसुइट मिशनरियों के आगमन के साथ आरम्भ हुआ था। इसकी समाप्ति कैथोलिक किन्तु विजित आयरलैंड के साथ हुई। इसकी जनजातीय पद्धति का अन्त हो चुका था और इसकी भूमि के विशाल क्षेत्र इंग्लिश बस्ती बसाने वालों के हाथ में थे। एलिज़ाबेथ के उत्तराधिकारी के लिए इस समस्या का समाधान करना शेष रह गया।

इस अध्याय में जिस कहानी की रूप रेखा दी गयी है, वह हमारे समूचे सुदीर्घ इतिहास की एक सबसे अधिक वीभत्स और अवसादपूर्ण घटना है। इसने बुराई के बहुत प्रकार के बीजों को छोड़ा। सम्पूर्ण ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल इनसे अब तक पीड़ित है। इसने यह शिक्षा दी अथवा इसे यह शिक्षा देनी चाहिए थी कि कोई पाशविक शक्ति अपने आप में कोई इलाज नहीं है और किसी जनता के चरित्र और संस्थाओं को विध्वंस करने के लिए किये गये प्रयत्न का दण्ड बहुत दिनों के बाद भी भोगना पड़ता है।

फिर भी इस प्रकार सम्मिलित अच्छाई और बुराई के लिए काम करने वाले इन महान् व्यक्तियों के साथ न्याय करते हुए, यह स्मरण रखा जाना चाहिये कि जन-जातीय अराजकता के नियन्त्रण द्वारा आयरलैण्ड में व्यवस्था करना न केवल एक वैध उद्देश्य था, अपितु घटनाओं के क्रम के द्वारा इंग्लिश लोगों पर आरोपित किया गया कर्तव्य था। यह गलत रीति से बिना सहानुभूति और समझ के उस दृढ़ता और शक्ति के बिना किया गया था, जो उस समय आवश्यक होती है, जब कि ऐसा कार्य किया जाना होता है। शक्ति की कमी के लिए मुख्य रूप से दोषी एलिजाबेथ की कृपणता नही, किन्तु निर्धनता थी। उसके शासन काल के आरम्भिक वर्षों में इंग्लैण्ड की स्थिति को ध्यान में रखते हुए वह भारी कर लगाने की हिम्मत नहीं कर सकती थी। आयरलैण्ड को अपने अधीन बनाने का कार्य बहुत व्ययसाध्य था। राज्यकाल के अन्तिम चार वर्षों में आयरलैण्ड में इन वर्षों की सम्पूर्ण राजकीय आमदनी से ३० प्रतिशत अधिक व्यय हुआ। सहानुभूति और समझ के अभाव के लिए दिया जाने वाला दोष अधिक गहरा है। किन्तु जिस बर्बरता के साथ विजय की गयी थी, उसके लिए यह बहाना न होने पर भी उस व्यवहार की व्याख्या का एक अंश है कि उस समय दोनों पक्षों की ओर से धार्मिक मतभेद की पूरी तीव्रता विद्यमान थी। उस युग के युद्धों में बड़ी भीषणता होती थी। मन्स्टर में तथा अल्स्टर में लड़ने वाले इंग्लिश लोग मुट्ठीभर व्यक्ति थे, उनका समर्थन बहुत कम था और नेतृत्व प्रायः दोषपूर्ण था। वे यह अनुभव करते थे कि वे न केवल प्रभुता पाने के लिए

लड़ रहे हैं, अपितु मुख्यरूप से अपने उस देश की सत्ता बनाये रखने के लिए लड़ रहे हैं, जिस पर स्पेन के शक्तिशाली राज्य से आक्रमण के बढ़ते हुए आतंक का खतरा था और जिस देश पर आयरलैण्ड के मार्ग से भी सबसे खतरनाक रीति से हमला किया जा सकता था। सम्भवतः आयरलैण्ड की लड़ाई का अर्थ इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता थी और इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रता विश्व के लिए बड़ा महत्व रखती थी, फिर भी इसने बुरी स्मृतियों और घृणा की सुलगती हुई ज्वालाओं की एक विरासत छोड़ी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Richey, Short History of the Irish People; **Bagwell**, Ireland under the Tudors (3Vols); **Maxwell,** Irish History from contemporary sources; **Roman**, The Reformation in Ireland under Elizabeth; **R Dunlp's** Chapter in the Cambridge Modern History Vol. III.

• •

१०

एलिज़ाबेथ का युग

(१५५८-१६०३)

साहित्यिक क्रियाशीलता

एलिज़ाबेथ के युग का सर्वोच्च गौरव इसका काव्यमय साहित्य है। भावी राष्ट्रमण्डल के निर्माण में इस युग के राज-नीतिज्ञों और नाविकों की सेवाएँ बहुत अधिक हैं, किन्तु कवियों की सेवाएँ भी कम नहीं हैं, क्योंकि उन्होंने कल्पना और विचार के उस कोष का पहला महान् कक्ष बनाया, जो इस द्वीपसमूह के निवासियों की, उनके वंशजों की और इनके साथ राष्ट्रमण्डल की परम्पराओं में हिस्सा लेने वालों की भव्यतम विरासत है। यह इंग्लिश भाषा-भाषी लोगों को एक साथ जोड़ने वाली कड़ियों में कम महत्त्वपूर्ण कड़ी नहीं है कि वे उस भाषा को बोलते हैं, जिसका प्रयोग शेक्सपियर ने किया था। यह भाषा अब कवियों की उपलब्धि के कारण पहले किसी भी समय की अपेक्षा अमित रूप से अधिक समृद्ध और अधिक अभिव्यञ्जनात्मक बन गयी।

दो शताब्दी पूर्व होने वाले चासर के समय से कोई बड़ा इंग्लिश कवि नहीं हुआ था। यद्यपि हेनरी अष्टम के समय के बाद से, इंग्लैण्ड के भावी गौरव का-गुणगान करने वाले कुछ अग्रदूत कभी-कभी आते रहे, तथापि एलिजाबेथ के राज्य काल के मध्य भाग तक ब्रिटेन के पूर्ण गौरव का प्रदर्शन नहीं हुआ। १५७९ ई० के बाद से, यह वैविध्य में समृद्ध होते हुए विकसित होने लगा और सम्भवत: इस राज्य काल की समाप्ति पर यह चरमोत्कर्ष के शिखर तक पहुँच गया। अगले राज्य काल के समूचे भाग में यह बहुत क्षीण चमक के साथ जारी रहा। सहसा इंग्लैण्ड "गाने वाले पक्षियों का घोंसला" बन गया, यदि हम यह प्रश्न करे कि ऐसा विलक्षण प्रपुष्पण इस प्रकार सहसा क्यों हुआ तो केवल यही कहना सम्भव

है कि साहित्य के महायुग प्रायः उसी समय आया करते है, जब महान् प्रश्न मनुष्यों के मनों को चुनौती देते हैं, उनकी कल्पनाएँ अनुभव के नवीन विस्तारों के उद्घाटन से उद्दीप्त होती हैं और उनके हृदय जीवन के अभिमान के कारण तथा उस महान् विश्वास के कारण गाने लगते हैं, जो उन्हें उस बात की योग्यता में होता है, जिसे वे और उनके साथी पूरा करने लगते हैं। पेरीक्लीज के समय, के एथेन्स को छोड़ कर, कोई भी ऐसा युग या देश नहीं था जब साहित्य के सृजन की प्रतिभा को प्रेरणा देने वाले तत्व उससे कही अधिक [illegible] रहे हों, जैसे वे एलिज़ाबेथ के समय के इंग्लैण्ड में थे; क्योंकि उस समय इंग्लैण्ड में धर्मसुधार आन्दोलन हुआ था, उसे एकाएक नयी दुनिया का ज्ञान हुआ था, उसके सपूतों ने वीरतापूर्ण साहसिक कृत्य किये थे तथा इंग्लैण्ड ने एक बड़े शक्तिशाली और अभिमानी शत्रु को दर्पपूर्ण चुनौती दी थी। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि आरमेडा की लडाई के बाद होने वाली पीढ़ी ने विश्व के इतिहास में सबसे बड़े काव्यमय साहित्य का कुछ अंश उत्पन्न किया है।

यह स्थान कवियों की संख्या गिनने का अथवा उनकी कृतियों के विश्लेषण करने का नहीं है। शेक्सपियर, स्पेन्सर, मार्लो, चैपमैन, डेनियल, ड्रेटन, सिडनी, रैले और जानसन का युग उस समय भी आश्चर्यजनक युग होता, यदि इसका सबसे बड़ा नाम कभी प्रसिद्ध न होता। ये सब एलिज़ाबेथ के पहले वर्षों में अथवा इससे कुछ वर्ष पहले उत्पन्न हुए थे। यहाँ हम समग्र रूप से उस साहित्य की कुछ बड़ी विशेषताओं पर उस प्रकाश के कारण ध्यान दे सकते हैं, जो प्रकाश यह साहित्य एक महायुग की भावना पर डालता है।

पहली बात तो यह है कि वह साहित्य एक गौरवपूर्ण और विश्वासपूर्ण राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत था। उसमें उस इंग्लैण्ड के लिए गम्भीर प्रेम और उसकी नियति में यह विश्वास था कि "रजत समुद्र में जड़ी हुई यह मूल्यवान मणि" कभी किसी विजेता के अभिमानपूर्ण चरणों में नहीं पड़ी और न ही यह तब तक पड़ सकती है, जब तक कि यह पहले अपने को आहत न कर ले। देशभक्ति का यह अभिमान अभिव्यक्ति में प्रायः वैसा ही असहिष्णु था, जैसे क्रिया में समुद्री नाविक और आयरिश बस्तियों के मनुष्य असहिष्णु थे। इसमें यौवन की पाशविकता थी। किन्तु जहाँ कहीं भी मार्ग पा कर फूट पड़ने वाले देशभक्ति के जोश के बावजूद, कवियों को राजनीति में और शासन की समस्याओं के बारे में बहुत कम दिलचस्पी थी। शेक्सपियर बृहद् अधिकार-पत्र (मेग्नाकार्टा) का वर्णन किये बिना किंग जान के सम्बन्ध में एक नाटक लिख सका। यह कहा जा सकता है कि यह इस कारण हुआ, क्योंकि राजनीति ऐसा तत्त्व नहीं है, जिससे कविता का निर्माण किया जा सके। किन्तु क्रान्तिकारी युग की, वर्ड्सवर्थ, कोलरिज, शैले और बायरन की कविता यह प्रदर्शित करती है कि इसमें ऐसी कोई बात नहीं है। एलिज़ाबेथ के युग के कवियों को संस्थाओं में दिलचस्पी नही थी। वे इस बात में सन्तुष्ट थे कि शासन का कार्य रानी पर और उसकी परिषद् के सदस्यों पर छोड़ दें और वे इंग्लिश देश भक्ति के केन्द्र और संरक्षक के रूप में राजमुकुट के प्रति एक उत्कट स्वामिभक्ति का अनुभव करते थे। वे भावनाओं में बिलकुल कुलीनतन्त्रीय थे, शेक्सपियर स्वयमेव हीन स्थिति का व्यक्ति था और उसने रंगशाला के प्रेक्षक-समूह के लिए अपने नाटक

लिखे, किन्तु इन नाटकों में राजनीतिक तत्व के रूप मे समझी जाने वाली 'भीड़' और 'जनता' के लिए घृणा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। निस्सन्देह, इस पहलू में कवि अपने युग की सामान्य भावना को प्रतिध्वनित कर रहे थे, जैसा कवि लगभग सदैव किया करते है। यद्यपि जैसा कि हम देखेंगे, कि इंग्लिश जनता में ऐसे तत्त्वों का विकास हो रहा था, जो शासन की समस्याओं के बारे में गहरी दिलचस्पी लेने लगे थे।

कवियों ने इस युग की महान् धार्मिक समस्याओं मे भी अधिक दिलचस्पी नही दिखायी; यद्यपि कई बार वे शुद्धतावादी (प्यूरिटन)[१] लोगों का मजाक उड़ाते थे, जैसा शेक्सपियर ने मालवोलियो का मजाक उड़ाया है। यह निस्सन्देह ऐसे व्यक्तियों के लिए स्वाभाविक पद्धति थी, जो असंयत चरित्र थे और सरायों तथा नाटकघरों का चक्कर काटने वाले तथा स्वतन्त्र जीवन बिताने वाले (Bohemian) थे। कुछ क्षेत्रो में विकसित हो रहे अधिक सच्चे और कटु स्वभाव की अभिव्यक्ति के लिए हमें गद्य-लेखकों और पैम्फलेट-लेखको की ओर ध्यान देना चाहिये। इस भावना की अभिव्यक्ति एलिज़ाबेथ के राज्य काल के उत्तरार्ध में विशेष रूप से मिलती है। कवियों के लिये धार्मिक प्रश्न इंग्लैण्ड के राष्ट्रीय व्यक्तित्त्व के प्रगटीकरण का केवल एक रूप था; किन्तु इसमें कोई सन्देह नही कि साधारण व्यक्तियो की सामान्य वृत्ति भी यही थी।

किन्तु वस्तुतः इस साहित्य का मूल्य और सौन्दर्य इसकी राष्ट्रीय समस्याओं के विवाद में अथवा विचार में निहित नहीं है; किन्तु यह इसकी उस दिलचस्पी में निहित है, जो इसे वैयक्तिक जीवन की आकांक्षाओं और भावनाओं के साथ, प्रेम और घृणा के साथ, प्रीति और प्रतिशोध के साथ, दुखद अन्त और विनोद वृत्ति के साथ है। यदि शेक्सपियर राजाओं और महान् व्यक्तियों को रंगमंच के अग्र भाग में रखता है तो उसकी दिलचस्पी उनके राज्य-संचालन में नहीं है, किन्तु उन व्यक्तियों में तथा नियति के साथ उनके संघर्ष में है। यह बात उसके ऐतिहासिक नाटकों के विषय में भी सत्य है। ये नाटक संकुचित अर्थ में, इतिहास बिलकुल नही हैं, क्योंकि वे लोगों के जीवन में आने वाली घटनाओं का वर्णन नहीं करते। इन कवियों में सबसे बड़े कवि सभी देशो के लोगों को अपनी कृतियों से प्रभावित करने की सामर्थ्य रखते हैं, क्योंकि उन्होने विभिन्न मनुष्यों में सर्वत्र पायी जाने वाली मनोभावनाओं और आकांक्षाओं का चित्रण अपनी रचनाओं में किया है।

---

१. प्यूरिटन (Puritan) शब्द का प्रयोग इंग्लिश प्रोटेस्टेण्टो के उस दल के सदस्यों के लिये होता है, जो एलिज़ाबेथ के समय मे किये गये वे इंग्लिश चर्च के धार्मिक सुधार को अपूर्ण समझते थे, उस समय ब्रिटिश चर्च द्वारा स्वीकार की जाने वाली धार्मिक विधियों और संस्कारों में और भी अधिक शुद्धि (Purification) किये जाने के पक्ष में थे। ये चर्च में मौलिक सुधार चाहते थे और चर्च में प्रचलित सभी मानवीय परम्पराओं को अस्वीकार करते थे। उनका नारा था, कि वे 'बाइबल को और समूची बाइबल को मानते हैं और उसके अतिरिक्त किसी बात को स्वीकार नही करते हैं।' (The Bible, the whole Bible, nothing but the Bible) एण्ड्र्यू फुलर ने इन्हें Non-confirmist का नाम दिया क्योंकि ये इंग्लैण्ड के चर्च*

अधिकांश कवि जिस प्रकार मानवीय व्यक्तित्व की अनेक अभिव्यक्तियों के प्रतिपादन की ओर ध्यान देते थे, वैसे ही एलिज़ाबेथ के युग के व्यक्तियों ने अपने काम में अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति पर कोई प्रतिबन्ध नहीं स्वीकार किया। जब अन्यत्र, विशेषत: फ्रांस में मनुष्य इस बात का प्रयत्न कर रहे थे कि वे ग्रीक और लैटिन भाषा की रचनाओं (Classical composition) के कड़े नियमों का पालन करें, उस समय एलिज़ाबेथ के युग के साहित्यिक सब दिशाओं में स्वतन्त्र परीक्षण कर रहे थे और किन्हीं नियमों से बाँधा जाना अस्वीकार कर रहे थे। इंग्लिश कविता के लिए नियम बनाने वाले सम्प्रदाय का तेजी से मजाक उड़ाकर उसे बहिष्कृत कर दिया गया था। उस दिन के बाद सब साहित्यों में इंग्लिश साहित्य सबसे अधिक वैयक्तिक, सब से अधिक वैविध्यपूर्ण, नियमों के बन्धन से सबसे अधिक स्वतन्त्र और अन्य देशों से प्रभावित होने वाले प्रत्येक प्रभाव के लिए सबसे अधिक खुला रहा है। यहाँ कवियों में हम वही विशेषता देखते हैं, जो पहले हम समुद्री नाविकों में देख चुके हैं, जिसे अन्यत्र भी इसी प्रकार देख सकते हैं। यह वैयक्तिक साहस और वैयक्तिक पहल या उपक्रम की स्वतन्त्रता थी, जो इंग्लैण्ड की महत्ता का निर्माण कर रही थी।

गद्य के क्षेत्र में इस युग की उपलब्धि कविता से कम थी, फिर भी हूकर और बेकन जैसे गद्य लेखकों ने और राजकीय पत्रों के लेखकों ने जिस भाषा को गँवार एवं मोटे धूसर ऊनी कपड़े जैसा पाया था, वे इसे स्वर्णवस्त्र के रूप में परिणत कर रहे थे। सामान्य रूप से पहनने के लिए यह अत्यधिक कड़ा और भड़कीला था, किन्तु करघे की क्षमता का आश्चर्यजनक रीति से विस्तार हुआ और अगली पीढ़ियाँ अपनी आवश्यकता के अनुसार इसकी बनावट को बदल सकती थी। इस युग की एक बहुत बड़ी विलक्षण विशेषता यह थी कि इसने बड़ी मात्रा में ऐतिहासिक कृतियों को जन्म दिया। यह कार्य उस देशभक्तिपूर्ण अभिमान के कारण हुआ, जिस कारण शेक्सपियर के ऐतिहासिक नाटक लिखे गये थे। होलिनशेड, स्टो तथा कैमडन ने महान् परिश्रम और पर्याप्त विद्वत्ता प्रदर्शित की। इंग्लिश लोग अपने अतीत का अध्ययन करने लगे थे। शीघ्र ही उन्हें इसमें अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रताओं के विकास के लिए निर्देशों और पूर्वोदाहरणों का एक विलक्षण कोष उपलब्ध हो गया। सत्रहवी शताब्दी मे, पार्लियामेण्ट के नेताओ को राजनीतिक प्रयोजनो के लिए ऐतिहासिक विद्वत्ता का महान उपयोग करना था। यह प्रवृत्ति एलिज़ाबेथ के युग में उस समय पहले ही प्रकट होने लगी थी, जब कि पार्लियामेण्ट का संघर्ष वास्तव में आरम्भ हुआ था। दो शताब्दी बाद इंग्लिश स्वतन्त्रता के बारे में बोलते हुए बर्क ने कहा था, "हमारे पास एक वंशावली (Pedigree) और कुलसूचक चिह्न (Ensigns armorial) है।" एलिज़ाबेथ के युग में ही देश के अभिमान के लिए मनुष्यो ने वंशावली को बनाना और अपने "प्राचीन उत्तराधिकार में प्राप्त स्वतन्त्रताओ की ढाल' को चमकाना शुरू कर दिया गया था।

---

*में एकरूपता लाने वाले एक्ट आफ यूनिफार्मिटी (Act of Uniformity) को स्वीकार नहीं करते थे।

२. सामाजिक परिस्थितियाँ

देश की वह सामाजिक पद्धति कौन सी थी, जो इसके सपूतों में देशभक्ति के जोश को उद्दीप्त कर सकी ?यह जोश बहुत अधिक वीरतापूर्ण कार्य कर रहा था, बड़ी शानदार कविता का निर्माण रहा था और एक अधिक बड़े रंगमंच पर पूर्ण विश्वास के साथ अपने को एक अधिक बड़ा भाग लेने के लिए अपने को तैयार कर रहा था।

पहली बात यह थी कि यह एक गम्भीररूप से कुलीनतन्त्रीय (Aristocratic) समाज था। कोई भी व्यक्ति इसे अनुभव किये बिना शेक्सपियर की रचनाओं को नहीं पढ़ सकता। इस समाज के शीर्ष स्थान पर विशाल जमीनों के स्वामी महान् रईसों (Magnates) का एक छोटा समुदाय था। इनमें से अनेक मठों की लूट से समृद्ध हुए थे। इनके पास देहात में भव्य भवन थे, इन्हें वे वास्तुकला की एक अतीव आकर्षक नयी शैली के अनुसार पुनः बनवा रहे थे। लन्दन में भी उनके विशाल गृह थे, क्योंकि वे अधिकांश समय दरबार में व्यतीत करते थे। निस्सन्देह, ये रईसों की एकमात्र ऐसी श्रेणी थी, जिसका एक सामान्य केन्द्र था; फिर भी ये देश के सभी भागों से आते थे और इनके लिए बोल सकते थे। किन्तु वे पुराने बैरन लोगों से बहुत भिन्न थे। एलिज़ाबेथ के लगभग सभी लार्ड हेनरी अष्टम द्वारा अथवा उसके उच्च अधिकारियों द्वारा बनाये गये थे। वे अपने अस्तित्व के लिए ताज के ऋणी थे और उन्हें न तो नार्मन बैरन लोगों की भाँति स्थानीय स्वतन्त्रता को अपना उद्देश्य बनाने का प्रलोभन होता था और न ही वे चौदहवी तथा पन्द्रहवी शताब्दियों के बैरन लोगों की भाँति ताज से प्रतिस्पर्धा रखते थे अथवा उसे घुड़काते या धमकाते थे। उन्होंने देश के शासन में बड़ा महत्वपूर्ण भाग लिया, लार्ड-सभा को भरा, उनके पास प्रायः रानी की परिषद् के कुछ प्रमुख पद हुआ करते थे। वे अपने जिलों में रानी के लिए लार्ड-लैफ्टीनेण्ट का कार्य किया करते थे। कुलीनतन्त्रीय भावना सदैव इस बात की माँग करती थी कि किसी भी राष्ट्रीय साहसिक कार्य के लिए वैध नेता उनमें से ही लिये जाँय। इसी प्रकार लैस्टर के अर्ल को नीदरलैण्ड में सेना का नेतृत्व करने के लिए भेजा गया था। इसी कारण एफिघम के लार्ड हावर्ड को ड्रेक, हाकिन्स और फ्रोबिशर के ऊपर नौसेना का नेतृत्व प्रदान किया गया और ऐसेक्स के अर्ल ने आयरलैण्ड की सेना की कमान सँभाली। वे बड़ी तड़क-भड़क और शान-शौकत से रहते थे और आडम्बर को महत्त्व देने वाले उस युग में वे अपनी सम्पत्ति का अधिकांश भाग प्रदर्शन पर व्यय करते थे। उदाहरणार्थ, स्कॉट द्वारा केनिलवर्थ (Kenilworth) में वर्णित लैसेस्टर के शानदार भोज को देखिये। यही लोग उस समय उन अभिनेताओं की ऐसी कम्पनियों को अपने व्यय से बनाये रखते थे, जिन्होंने इस युग में अनगिनत नाटक पैदा किये। यदि इनका संरक्षण न होता तो अभिनेताओं को इस बात का डर था कि उन्हें घुमक्कड़ आवारागर्दों की भाँति अपराधियों के कठघरे में खड़ा होना पड़ता।

उनके बाद पद की गरिमा की दृष्टि से देहात के जमीदार या स्क्वायर (Squire) लोग आते थे। इनकी एक बहुत बड़ी श्रेणी थी, इंग्लैण्ड के हर हिस्से में फैले हुए हजारों मैनर गृहों में यह निवास करती थी। अपने असामियों में रहने वाले जमींदार अपना अधिकांश समय

खेलों में व्यतीत करते थे। इनमें से कुछ खेलों में उनसे हीन स्थिति रखने वाले पड़ोसी असामी भी सम्मिलित हो सकते थे। ट्यूडर इंग्लैण्ड की अर्थ-व्यवस्था में देहात का भद्रवर्ग असीम महत्त्व रखने वाला भाग लेता था। इन्हीं में से ट्यूडर राजतन्त्र के सब काम करने वाले अवैतनिक पुर-शासक (Justices of the Peace) बनते थे। उनका कर्त्तव्य न केवल यह था कि वे सार्वजनिक व्यवस्था को बनाये रखें, छोटे अपराधों के मामलों की जाँच करें, बड़े अपराध जिन व्यक्तियों पर लगाये गये हों, उन्हें गिरफ्तार करें और राजा के दौरा करने वाले न्यायाधीशों द्वारा सुने जाने वाले अभियोगों के लिए इन्हें बन्धन में रखें, अपितु इनका यह भी कर्त्तव्य था कि वे अनेक प्रशासनात्मक कर्त्तव्यों का पालन करें और सामान्य रूप से प्रिवी कौंसिल के स्थानीय अभिकर्त्ताओं का कार्य करें। वे मुख्य मार्गों की देख-भाल करते थे, वे सरायों को लाइसेन्स अथवा आज्ञा-पत्र देते थे। वे धार्मिक विषयों में राजाज्ञा अस्वीकार करने वाले व्यक्तियों को जुर्माना करते थे और वे यह भी देखते थे कि नौजवान लोगों को अन्ते-वासी या शागिर्द के रूप में किसी कार्य की उचित शिक्षा दी जा रही है। एक बड़ी मात्रा तक वे मूल्यों और मजदूरियों को निश्चित करते थे। उन्हें बदमाशों और आवारागर्दों के साथ व्यवहार करना पड़ता था और उन्हें निर्धनों की सहायता के प्रशासन के लिए किये जाने वाले उपायों की भी देख-भाल करनी पड़ती थी। यह ऐसा कार्य था जो रानी के राज्य-काल के पिछले वर्षों में बड़ा महत्त्वपूर्ण हो गया। इनके कार्य के बिना शासन की समूची पद्धति अवश्य-मेव भंग हो जाती। प्रिवी कौंसिल के संचालन में उन्हें ही मुख्यरूप से उस उत्तम व्यवस्था का श्रेय प्राप्त है, जो व्यवस्था समूचे इंग्लैण्ड में इस युग की एक विशेषता का निर्माण करती है। इन विभिन्न कार्यों के लिए अपने को प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से, भूमि रखने वाले भद्रवर्ग के लड़के प्रायः लन्दन जाया करते थे और वहाँ देश के कानूनों का निश्चित समय तक टेम्पल नामक स्थान में प्रशिक्षण प्राप्त करते थे। यह एक ऐसी श्रेणी थी, जिसे प्रशासनात्मक कार्य का व्यापक अनुभव था और फिर भी इस श्रेणी के व्यक्ति इंग्लैण्ड के कानूनों के शास्त्र और कानूनों के व्यवहार से अनभिज्ञ नहीं थे। ऐसे व्यक्ति कामन्स-सभा में अधिक संख्या में हुआ करते थे। उनके छोटे लड़के पादरी, बैरिस्टर, सिपाही या नाविक होते थे और अन्य व्यापार भी किया करते थे, विशेषतः ऊनी व्यापार की ऊँची शाखाओं में भी जाया करते थे। बाद में उन्होंने अपने पिताओं के असामियों में से नयी दुनिया में जाने वाले व्यक्तियों का और आयरिश बस्तियों में प्रवास करने वाले लोगों के दलों का नेतृत्व किया। इस श्रेणी ने ही समुद्री अभियानों और अन्य साहसिक कार्यों के नेताओं को प्रस्तुत किया। यह श्रेणी समुदायों में राजनीतिक दृष्टि से सबसे अधिक क्रियाशील थी और इसी कारण इसने स्वाभाविक रूप से सार्वजनिक मामलों में अगली शताब्दी में नेतृत्व प्राप्त किया।

इनके नीचे योमैन लोग (Yeomanry) अथवा अपनी भूमि जोतने का काम करने वाले कृषक आते थे। अब भी इंग्लैण्ड में यह एक बड़ी बहुसंख्यक श्रेणी थी और इनके साथ ही हम ऐसे व्यक्तियों को जोड़ सकते हैं, जो रईसों अथवा स्क्वायर लोगों से लगान पर लिए खेतों पर काम करते थे। प्रायः इस श्रेणी को इंग्लैण्ड का मेरुदण्ड कहा गया है। यह वर्ग ठोस, संकीर्ण और काफी समृद्ध था। समुदाय के जीवन में इसका अपना समुचित कार्य था।

गाँव के मामलों का प्रबन्ध, स्थानीय सड़कों की देखभाल, निर्धनों की सहायता का विस्तृत प्रशासन सामान्य रूप से इस श्रेणी के मनुष्यों के हाथों में था। समृद्ध-कृषक (Yeoman) वस्तुतः छोटे जमीन्दार वा स्क्वायर से कुछ ही नीचे होता था। इस श्रेणी के अधिक हीन स्थिति वाले सदस्य शनैः-शनैः कृषक वर्ग में चले जाते थे। इस वर्ग के अनेक व्यक्तियों के पास ज़मीन के अपने टुकड़े थे, यद्यपि बहुत से व्यक्ति भूमिहीन थे और वे अपना श्रम किराये पर देकर अपना जीवन बिताते थे।

कृषक-वर्ग में हमने जिन श्रेणियों को गिना है, निस्सन्देह वे आबादी की एक बड़ी बहु-संख्या का निर्माण करती थीं। व्यावहारिक रूप से वे सभी अनपढ़ थीं। समृद्ध-कृषक (Yeoman) लोगों का एक बड़ा हिस्सा भी वस्तुतः सर्वत्र ऐसा ही था, यह स्थिति दक्षिण-पूर्व के अधिक प्रगतिशील जिलों में नहीं थी। इससे यह परिणाम निकलता है कि इन श्रेणियों की बड़ी संख्या राष्ट्रीय मामलों का प्रभावशाली ज्ञान अथवा इसमें अभिरुचि नहीं रख सकती थी। यातायात के साधन मन्दगामी और रद्दी थे। उस समय कोई समाचार-पत्र और सार्वजनिक सभाएँ नहीं थीं। भद्रवर्ग के अतिरिक्त बहुत कम व्यक्ति कभी अपने मूल गाँव को छोड़ कर बाहर जाते थे। जब कोई समाचार भद्रवर्ग से नीचे की ओर अनुस्रवित होता था (और भद्र-वर्ग तक भी बहुत कम बातें पहुँचती थीं), अथवा जब चर्च की विधि से विचारों को प्रसारित किया जाता था तब केवल ऐसे ही समय में राजनीतिक प्रश्नों के सम्बन्ध में अस्पष्टतम विचार जनता की बहुसंख्या तक पहुँच सकते थे। जब लेखक इस युग के तथा अगले युग के बारे में यह कहते हैं कि राष्ट्र इस समय ऐसा सोच रहा था या ऐसा निश्चय कर रहा था, तो हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्र के अधिकांश भाग का सार्वजनिक विषयों का ज्ञान अत्यधिक सीमित था। वस्तुतः एक क्रियाशील राजनीतिक-संस्था के रूप में राष्ट्र का अर्थ भद्रवर्ग, कुछ समृद्ध-कृषक (Yeoman) और नगरों की जन-संख्या का एक अधिक सजीव, किन्तु अभी तक बहुत छोटा भाग था; शेष जनता पर केवल सबसे बड़ी घटनाएँ ही कुछ प्रभाव डालती थीं।

यद्यपि ग्रामीण इंग्लिश समाज की श्रेणियाँ (जो राष्ट्र के कम से कम ५/६ भाग का निर्माण करतीं थीं), इस प्रकार स्पष्ट रूप से पृथक थीं और इनके भेदों को सार्वभौम रूप से स्वीकार किया जाता था और इनका सम्मान किया जाता था, तथापि वे श्रेणियाँ थी, जातियाँ नहीं। इसका यह अर्थ है कि वे कठोर नहीं थीं। मनुष्य जिस श्रेणी में पैदा होते थे, उससे ऊँचा उठ सकते थे अथवा नीचे गिर सकते थे। निरन्तर ऐसा होता रहता था और प्रत्येक श्रेणी अपने पड़ोसियों में अज्ञात रूप से मिलती चली जाती थी। इंग्लैण्ड और अन्य योरोपियन राज्यों के बीच में यह एक महत्वपूर्ण भेद था। कुलीन वर्ग भी एक जाति नहीं था, न केवल प्रायः नये परिवार कुलीन बन जाते थे—वस्तुतः कुलीन वर्ग का अधिकांश भाग बिलकुल हाल में ही बना था—अपितु एक कुलीन के बेटे पिता के कौलीन्य को उत्तराधिकार में नहीं प्राप्त करते थे, किन्तु सामान्य व्यक्ति हो जाते थे। दूसरी ओर इंग्लैण्ड पश्चिम में एक ऐसा देश था, जिसमें भूदासता व्यावहारिक रूप से समाप्त हो चुकी थी। कोई व्यक्ति अपने स्वामी की भूमि पर जीवन पर्यन्त श्रम करने के लिए नहीं बँधा हुआ था। इंग्लिश लोग स्वतन्त्र

व्यक्तियों का राष्ट्र थे; और जैसा कि हम देख चुके है, इनकी एक बड़ी संख्या सामान्य मामलो के प्रबन्ध में हिस्सा लेती थीं, भले ही ये समग्र रूप से, सारे देश के मामले न भी हों, तो भी ये गाँव के और जिले के मामले होते थे। अतः वास्तविक अर्थ में इंग्लैण्ड एक स्वतन्त्र और स्वशासन करने वाला देश था। स्विट्ज़रलैण्ड के अतिरिक्त यही एक मात्र ऐसा देश था।

ग्रामीण समाज के सोपान-तन्त्र से अधिक या कम रूप में पृथक् रहने वाला नगरों का समाज था। यह व्यापार में अथवा उद्योग में लगा हुआ था। इंग्लैण्ड में दो सौ छोटे नगर या बरो थे। इनमें से अधिकांश गाँव से बड़े नहीं थे, किन्तु उनकी शासन की अपनी पद्धति थी। प्रायः ये ऐसे प्रमुख नगरवासियों की नगर परिषद् के आधीन होते थे, जो आजीवन इसके सदस्य होते थे और स्थान रिक्त होने पर वे इसे अपने लोगों में से भर लेते थे। यह लोक-तन्त्रीय पद्धति नहीं थी, किन्तु इसका यह अभिप्राय था कि जनता की एक बड़ी संख्या सामान्य कार्यों के प्रबन्ध में लगी हुई थी। अनेक नगरों में स्वतन्त्र व्यक्तियों के समूचे समुदाय को ठोस अधिकार प्राप्त थे। वे मेयर का और कई बार अन्य अधिकारियों का चुनाव करते थे। अधिकांश छोटे बरो केवल चारों ओर के देहात की आवश्यकताएँ पूरा करने वाली मण्डियाँ मात्र थे और स्वाभाविक रूप से पड़ोसी भद्रवर्ग के प्रभाव में बहुत अधिक रहते थे। किन्तु कुछ ऐसे भी बन्दरगाह थे, जो विदेशी व्यापार के विकास से समृद्ध होने लगे थे। ये देश के अन्दर औद्योगिक क्रियाशीलता के ऐसे केन्द्र थे, जिनमें बड़े समृद्ध व्यापारी भद्रवर्ग से अधिक स्वतन्त्र थे। ऐसे केन्द्र ब्रिस्टल, नार्विच, सौथम्पटन तथा हल थे। किन्तु लन्दन एक मात्र ऐसा विशाल केन्द्र था, जिसका अपना शक्तिशाली स्वतन्त्र जीवन था। यह समूचे महत्त्वपूर्ण व्यापार का केन्द्र था और इसके धनी व्यापारी, इसका निगम (Corporation), इसकी शक्तिशाली और धनी कम्पनियाँ राष्ट्र के जीवन में अत्यधिक महान् महत्त्व रखने वाले तत्त्व का निर्माण करती थीं। कम-से-कम लन्दन में राजनीतिक ज्ञान पर्याप्त था, नौसिखिये भी अपनी राजनैतिक सम्मतियाँ रखते थे।

३. आर्थिक परिवर्तन

१६वीं शताब्दी के विशाल आर्थिक आन्दोलनों के दबाव से इंग्लैण्ड की सामाजिक परि-स्थिति में एक बहुत बड़ा परिवर्तन आ रहा था। इन आन्दोलनों के परिणाम पहले से ही एलि-ज़ाबेथ के राज्यकाल में प्रकट हो गये थे।

पहली बात यह थी कि ग्रामीण समुदायों में भूमि की खेती की मध्यकालीन पद्धति का भंग होना आरम्भ हो गया था—यह केवल आरम्भ मात्र था, क्योंकि यह प्रक्रिया दो शताब्दी से भी अधिक समय में पूरी नहीं हुई थी। इसका मुख्य कारण आवेष्टन आन्दोलन (Enclosure movement) तथा अनाज पैदा करने के स्थान पर भेड़ों की चरागाहों के लिए भूमि के बड़े क्षेत्रों को दिया जाना था। हम पहले ही उस कष्ट के बारे में कुछ बातें देख चुके हैं,[1] जो इससे इस शताब्दी के मध्य में हुआ था। यह भी देख चुके हैं कि यह कष्ट किस

१. ऊपर पृष्ठ संख्या २२६, २६६ तथा २७७ देखिये।

प्रकार मठों के दमन से और कई बार मठों की जमीनों के स्वामियों की अन्यायपूर्ण और सहानुभूतिरहित नीति से बढ़ गया था। इस परिवर्तन ने बहुत से मजदूरों को बेकार कर दिया, एक बड़ा असन्तोष, अव्यवस्था और आवारागर्दी उत्पन्न हो गयी थी। हेनरी अष्टम के समय के बाद से इसने सरकार को ऐसा परेशान किया कि वह यह नहीं जानती थी कि इसका सामना किस प्रकार करें। आरम्भ में केवल कठोरता का परीक्षण किया गया। एडवर्ड षष्ठ के समय में अतीव क्रूर उपायों का अवलम्बन लिया गया, और बगैर काम से घूमने वाले व्यक्ति को क्रियात्मक रूप से दास बना दिया गया। एलिज़ाबेथ के राज्यकाल में भूमि के आवेष्टन (Enclosures) अब भी हो रहे थे, किन्तु समस्या कुछ कम कठिन हो रही थी। इसका कुछ कारण यह था कि अतिरिक्त श्रम की एक बड़ी संख्या को उद्योग के विकास से काम मिल गया। इसका कुछ कारण यह भी था कि अनेक बेकार व्यक्तियों को समुद्र पार के साहसिक कार्यों में काम मिल गया। सर हम्फरी गिलवर्ट तथा अन्य व्यक्तियों ने उपनिवेशों की स्थापना का समर्थन इसलिए किया था कि ये ऐसे मनुष्यों को काम देंगे। वस्तुतः, सम्भवतः यह बात सत्य है कि पुरानी व्यवस्था का भंग होना तथा इंग्लैण्ड में जीवन की पुरानी पद्धतियों से उन्मूलित होने वाले लोगों की एक बड़ी संख्या की सत्ता इस बात का कारण बनी कि इंग्लैण्ड एक महान् उपनिवेश बसाने वाला देश बना। यदि इंग्लैण्ड में प्रत्येक व्यक्ति के पास जमीन और निश्चित जीविका होती तो बहुत कम व्यक्ति नये प्रदेशों में घर बसाना चाहते।

किन्तु उन्मूलित श्रम और आवारागर्दी की समस्या कम होने का एक कारण यह भी था कि एलिज़ाबेथ की सरकार ने शनैः शनैः इन कठिनाइयों का मुकाबला करने का अधिक बुद्धि-मत्तापूर्ण ढंग ढूँढ़ लिया था। इसने धीरे-धीरे यह अनुभव किया कि पहली बात यह है कि मनुष्यों को केवल दरिद्र और बेकार होने के लिए दण्ड देना अन्यायपूर्ण है और दूसरी बात यह है कि निर्धनों के लिए व्यवस्था करना समाज का कर्त्तव्य है। १६०१ ई० के महान दरिद्र कानून (Poor Law) में चरम उत्कर्ष पाने वाली कानूनों की एक लम्बी श्रृंखला में यह व्यवस्था की गयी थी कि दरिद्रता दूर करने के लिए करों को वसूल किया जाय और समर्थ व्यक्तियों को काम दिया जाय। इस नयी पद्धति का उत्तरदायित्व पेरिशों पर डाला गया। यह नयी पद्धति सहानुभूतिशून्य होने पर भी समुदाय के अधिक अभागे सदस्यों के कल्याण के लिए समुदाय की ओर से नये उत्तरदायित्व लेने की स्वीकृति का प्रतिनिधित्व करती है। दरिद्र व्यक्तियों के लिए कर इकट्ठे किये जाते थे और उन्हें पेरिश की ग्राम सभा द्वारा चुने हुए अवैतनिक ओवरसियरों द्वारा विस्तारपूर्वक बाँटा जाता था। इस ग्राम-सभा में उपस्थित होने का अधिकार प्रत्येक करदाता को था। सदैव क्रियाशील पुरशासकों को उन नियमों को बनाने का कार्य दिया जाता था, जिन नियमों के अनुसार यह सहायता दी जाती थी। ये मजदूरी की दरों को भी नियन्त्रित करते थे और यह देखते थे कि समर्थ व्यक्तियों को काम पर लगाया जाय।

यदि खेती और इस पर अवलम्बित ग्रामीण-समाज में परिवर्तन हो रहे थे तो उद्योग और व्यापार में भी ऐसे परिवर्तन हो रहे थे। इंग्लिश उद्योगों में सबसे महत्वपूर्ण और

अद्वितीय ऊन का उद्योग था। यह १४वी शताब्दी में एक महत्त्वपूर्ण उद्योग के रूप में शुरू हुआ था और अब यह पहले की अपेक्षा अधिक समृद्ध था। इसके मुख्य केन्द्र पश्चिमी देश (विल्टशायर और इसके चारों ओर के जिले), नारफोक और यार्कशायर अब इंग्लिश भेड़ों की समूची पैदावार को कात रहे थे और उनका कपड़ा बुन रहे थे। इनकी सफलता में सहायता निश्चित रूप से नीदरलैण्ड्स के उन युद्धों से मिली, जिन्होंने अब तक इंग्लिश ऊन के प्रमुख खरीदार फ्लीमिश नगरों की समृद्धि को नष्ट कर दिया और यूरोप के हजारों सर्वोत्तम कारीगरों को इंग्लैण्ड में शरण लेने को भेज दिया गया। ऊन का व्यापार राष्ट्र के सभी आर्थिक हितों के परस्पर सम्बद्ध होने का एक विलक्षण उदाहरण प्रस्तुत करता है। ऊन की अत्यधिक माँग बढ़ जाने के कारण ही ऐसा हुआ था कि जमींदार जहाँ पहले अनाज पैदा करते थे, वहाँ अब भेड़ों को पालने लगे और यह इस कारण भी हुआ कि इंग्लैण्ड के पास अपने ऊनी कपड़ों के रूप में (ये कपड़े अब संसार में सर्वोत्तम थे) ऐसा माल था, जिसकी विदेशों में बड़ी जल्दी बिक्री होने लगी और इससे उसका विदेशी व्यापार बढ़ने लगा।

यह बात न केवल ऊनी उद्योगों में थी, अपितु अनेक विभिन्न क्षेत्रों में, वस्तुओं के निर्माण में एक नयी शक्ति एवं साहसिक भावना प्रदर्शित हो रही थी। इन परिस्थितियों में उद्योग का मध्ययुगीन संगठन अनिवार्य रूप से उसी प्रकार भंग हो रहा था, जैसे कृषि का मध्यकालीन संगठन टूट रहा था। मध्ययुग में हस्तोद्योग की वस्तुओं का निर्माण मुख्यरूप से ऐसे वास्तविक कारीगरों द्वारा किया जाता था, जो अपने घर में दूसरों के लिए काम करने वाले मिस्त्रियों (Journeymen) और नौसिखियों (Apprentices) के साथ काम करते थे और अपने उद्योग की वस्तुओं को मण्डी में बेचते थे। प्रत्येक शहर में उस्ताद कारीगरों की श्रेणियों अथवा संघों द्वारा अपने आप उन परिस्थितियों का तथा शर्तों का निश्चय किया जाता था, जिनके अनुसार यात्रा करने वाले मिस्त्रियों को और नौसिखियों को काम पर लगाया जा सके। वे इन बातों को भी निश्चित करते थे कि उस्ताद कारीगर कितने नौसिखियों को काम पर लगा सकता है, वह कितने प्रकारों, गुणों, नापों और मूल्यों की वस्तुएँ बना सकता है। सामान्य रूप से उत्पादन का नियन्त्रण करने वाले सभी नियम इनसे निश्चित होते थे। यद्यपि इस पद्धति में कई लाभ थे, तथापि इसमें कई स्पष्ट दोष भी थे। यह वैयक्तिक साहसिक कार्य अथवा उपक्रम पर एक बड़ा प्रतिबन्ध था। नये ढंगों और विचारों वाले आदमियों को यह बड़ा कठिन प्रतीत होता था कि वे अपने साथी कारीगरों को इन ढंगों को ग्रहण करने की प्रेरणा करें, क्योंकि उन्हें यह डर था कि इससे उनका व्यापार चौपट हो जायेगा। यह बड़े पैमाने पर उद्योग के संगठन को भी रोकता था, क्योंकि यह व्यवस्था पुष्कल साधनों वाले व्यक्ति को तथा कारीगरों की एक बड़ी संख्या को, काम में लगाने से रोकती थी।

लम्बे समय से सभी उन्नतिशील देशों में उद्योग का प्रबन्ध मनुष्यों को काम पर लगाने वाले ऐसे नियोजकों की श्रेणी के हाथों में चला आ रहा था, जो सामान्य नियम के तौर पर अपने हाथों से काम नहीं करते थे, किन्तु इसका संगठन करते थे। उद्योग में "पूँजीपति" (Capitalist) नियोजक प्रभावशाली तत्त्व बन रहा था। यह देखना आसान है कि यह कैसे और क्यों हुआ और इसने उद्योग के विकास को किस प्रकार प्रोत्साहित किया। उदाहरणार्थ,

ऊनी उद्योग में एक साहसी और दूरदर्शी आदमी के पास यदि धन की पर्याप्त मात्रा हो तो वह उस्ताद कारीगर की भाँति स्थानीय मण्डी में आने वाली ऊन पर निर्भर रहने के स्थान पर सर्वोत्तम प्रकार का ऊन खरीद सकता था। वह इसे एक व्यापक क्षेत्र में स्त्रियों द्वारा कतवा सकता था और उन्हें उनके काम की मजदूरी दे सकता था। वह यह जान सकता था कि देश और विदेश की सबसे अधिक मुनाफा देने वाली मण्डियों में सबसे जल्दी बिक सकने वाली कौन-सी शैलियाँ और नमूने हैं। वह इन आवश्यकताओं के अनुसार कपड़ा बुनने के लिए जुलाहों को मजदूरी दे सकता था और इन साधनों से वह सामान्य रूप से आवश्यक वस्त्र को उसकी अपेक्षा अधिक अच्छे और सस्ते रूप में उत्पन्न कर सकता था, जैसा कि वह पुरानी पद्धति में उत्पन्न किया जा सकता था। किन्तु वह ऐसा तभी कर सकता था, जब प्रत्येक दशा के लिए उसके पास धन अथवा पूंजी की बहुत बड़ी राशियाँ हों। निःसन्देह पूँजीवादी पद्धति में, मालिक मण्डियों के अध्ययन में तथा अपने हाथों से काम करने के स्थान पर मजदूरों के समूह द्वारा काम संगठित करने में लगा रहता था। इसने इंग्लिश उद्योगों के विकास में तथा सुधार में बड़ा योगदान दिया। किन्तु इससे अपने विस्तृत नियमों और प्रतिबन्धों वाली श्रेणी पद्धति (Gild system) का विघटन हो गया। इसकी प्रवृत्ति यह थी कि इसने काम करने वालों की स्वतन्त्रता को कम कर दिया, इसे अपने मालिक की दया पर कम या अधिक मात्रा में निर्भर रहने वाला तथा मजदूरी कमाने वाला बना दिया और यह उस संरक्षण से वंचित हो गया जो पहले इसे श्रेणियाँ (Gilds) प्रदान कर रही थीं।

श्रेणी पद्धति की आरम्भिक पूँजीवादी पद्धति में परिवर्तन की प्रक्रिया बड़े लम्बे समय से क्रमिक एवं शान्त रीति से हो रही थी। किन्तु यह सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अधिक तीव्र हो गयी। इसका कुछ कारण तो विदेशी व्यापार का विकास था। उसने इसे प्रोत्साहित किया था और सम्भवतः कुछ कारण यह भी था कि खेती में होने वाले परिवर्तनों ने एक ऐसी बेरोजगार श्रेणी को उत्पन्न किया था, जो पूँजीपति द्वारा काम पर लगाये जाने में प्रसन्न थी। यदि यह परिवर्तन किसी नियमन अथवा नियन्त्रण के बिना होता तो इससे भीषण कठिनाइयाँ उत्पन्न होतीं। किन्तु एलिज़ाबेथ की सरकार इतनी बुद्धिमान थी कि उसने ऐसा नहीं होने दिया। उसने अपना पूरा प्रयत्न किया कि नवीन परिस्थितियों में काम करने वालों में जीवन का एक अच्छा मानदण्ड बनाये रखा जा सके और उसने उन्हें उस संरक्षण को नौसिखियेपन, मजदूरी और मूल्यों के बारे में कानून बना कर प्रदान करने का प्रयत्न किया, जिसे पहले श्रेणी प्रदान किया करती थी। कुल मिलाकर ये व्यवस्थाएँ श्रेयस्कर थीं तथा अच्छे इरादे से की गयीं थीं। फिर भी ये पुरानी श्रेणियों के विस्तृत नियमों से बहुत कम थीं और उद्योग में वैयक्तिक साहस को उसकी अपेक्षा कहीं अधिक स्वतन्त्रता उपभोग करने की अनुमति दी गयी, जितनी स्वतन्त्रता मध्ययुग कभी भी इसे देने के लिए सहमत था।

हम पहले ही समुद्रपार के व्यापार के विकास के सम्बन्ध में कुछ कह चुके हैं। किन्तु एलिज़ाबेथ के राज्यकाल के पिछले हिस्से में इसका विकास सबसे अधिक तीव्रता के साथ हुआ। इंग्लिश व्यापारी नीदरलैण्ड्स में, फ्रांस में, बाल्टिक सागर में तथा भूमध्य सागर में

व्यस्त थे। जब एक बार समुद्र पर स्पेन का एकाधिकार भंग हो गया तो वे उष्ण कटिबन्धों के तथा नयी दुनियाँ के व्यापार में हिस्सा लेने के लिए अपने हाथ बढ़ाने के लिए उत्सुक हुए। किन्तु इन क्षेत्रों में मुख्य विकास स्वाभाविक रूप से अगले युग के साथ सम्बद्ध है। अधिक दूरवर्ती समुद्रों में व्यापार के प्रोत्साहन और सफलता के लिए इस युग के मनुष्यों ने, सरकार की सहायता से नयी विधियों का विकास किया। उन्होंने व्यापारिक कम्पनियों का संगठन किया। ये आजकल की कम्पनियों की भाँति सम्मिलित पूँजीवाली कम्पनियाँ नहीं थीं, जो हिस्सेदारों द्वारा प्रदान की गयी एक बड़ी पूँजी के साथ व्यापार करती हैं। एलिज़ाबेथ के युग की मस्कोवी कम्पनी अथवा लेवेण्ट कम्पनी केवल ऐसे लाइसेन्स प्राप्त व्यापारियों का समूह थी, जो व्यापारी विदेशों में स्थायी एजेन्सियाँ बनाये रखने के लिए धनराशि देते थे। किन्तु प्रत्येक व्यापारी अपने वैयक्तिक कार्यों को चलाता रहता था अथवा वे व्यापारी विशिष्ट समुद्री यात्राओं की तैयारी के व्यय को पूरा करने के लिए ऐसी धन राशि देते थे, जिसे वे समुचित समझते थे। एलिज़ाबेथ के राज्यकाल के बिलकुल अन्त में १६०० ई० में इन व्यापारिक कम्पनियों में सबसे बड़ी कम्पनी ईस्ट इण्डिया कम्पनी पूर्व में व्यापार को विकसित करने के लिए राजकीय आज्ञापत्र के साथ स्थापित की गयी। इस प्रकार इंग्लिश व्यापार को यद्यपि सरकार का प्रोत्साहन प्राप्त था, किन्तु यह उस प्रकार के विस्तृत और गला घोंटने वाले सरकारी नियन्त्रण के आधीन नहीं था, जिस प्रकार के नियन्त्रण से स्पेन और पुर्तगाल में दोनों देशों के व्यापार को पीड़ित होना पड़ा था। इसके विकास का श्रेय वैयक्तिक साहस को था। यह सरकार की देखभाल में था, किन्तु सरकार के नियन्त्रण में नहीं था। वैयक्तिक साहस के पौरुष पर भरोसा रख सकने के कारण अधिकतर इसकी उन्नति हुई।

इस युग के इतिहास का अध्ययन करने वाला कोई भी व्यक्ति एलिज़ाबेथ की सरकार की सतर्कता से राष्ट्रीय कल्याण के लिए उत्तरदायित्व अनुभव करने की इसकी उच्च भावना से और नयी परिस्थितियों का सामना करने के लिए परीक्षण करने की इसकी तत्परता से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। यह सरकार अनुभव करती थी कि तीव्र परिवर्तन और विकास के युग में राष्ट्र का पथ-प्रदर्शन करना इसका कार्य है। इसके विकास को भाग्य पर नहीं छोड़ देना चाहिए। कुल मिलाकर इसके हस्तक्षेप उद्योग और व्यापार के क्षेत्रों में काफी सफल थे। इसके नियमों ने वैयक्तिक प्रयत्न को स्वतन्त्रता से कार्य करने का एक बड़ा अवसर दिया। इसी समय में इन नियमों ने देश को उस अव्यवस्था से बचा लिया, जो संगठन की पुरानी विधियों के आकस्मिक और अप्रतिबद्ध विघटन के बाद पैदा हुई थी।

४. धार्मिक परिवर्तन

एलिज़ाबेथ को तथा उसके मन्त्रियों को राष्ट्रीय जीवन के अन्य सभी पहलुओं की अपेक्षा धर्म के क्षेत्र में सरकार का पथ-प्रदर्शन और नियन्त्रण सबसे अधिक आवश्यक प्रतीत होता था, क्योंकि अन्य देशों में धार्मिक परिवर्तन राष्ट्रीय विनाश को उत्पन्न कर रहे थे। एलिज़ाबेथ की कोई इच्छा नहीं थी कि "मनुष्यों की आत्माओं में खिड़कियाँ खोली जायें अर्थात् मनुष्यों के आन्तरिक धार्मिक विश्वासों के बारे में उनसे विस्तृत पूछताछ की जाय" जैसा

कि उसने एक बार कहा था। उसके प्रजाजन उस समय तक जैसा अच्छा लगे, वैसा विचार रख सकते थे, जब तक कि वे राष्ट्र की एकता के प्रतिकूल जाने वाली कोई बात नहीं करते थे। उसके लिए यह कर्तव्य नहीं था कि वह मनुष्यों के शरीरों को इसलिए जलाये कि उनके विचार गलत थे। किन्तु वह बाह्य वस्तुओं में एकता और शालीनता चाहती थी, और वह बाह्य वस्तुओं को प्रतीक मात्र समझने वाले तथा इनके बारे में झगड़ा करने वालों की बात नहीं समझ सकती थी। वह यह भी चाहती थी कि सत्ता को उचित रीति से बनाये रखना चाहिए। राष्ट्रीय चर्च अर्थात् राष्ट्र के धार्मिक पहलू में सर्वोच्च शासक के रूप में सर्वप्रथम उसकी अपनी सत्ता, तथा इसके बाद उसके अभिकर्त्ताओं या एजेण्टों के रूप में उसके बिशपों की सत्ता उचित रीति से बनी रहनी चाहिए। चर्च पर वह अपना नियन्त्रण न केवल बिशपों के द्वारा (मुख्यरूप से केण्टरबरी के बिशप के माध्यम से) लागू करती थी, अपितु एक उच्च आयोग के माध्यम से भी इसे लागू करती थी। यह आयोग मुख्यरूप से बिशपों से बना हुआ था और उसके राज्यकाल के आरम्भ में स्थापित किया गया था। इसके अधिकारों का परिवर्द्धन और व्याख्या अनेक कानूनी अधिकार-पत्रों की शृंखला से हुआ था और इसका चरम-विकास १५८३ ई० के आयोग में हुआ था। यह न केवल पादरियों पर, अपितु समूचे राष्ट्र पर सभी धार्मिक और चर्च विषयक मामलों में न्यायिक और कुछ हद तक कानून-निर्माण के अधिकारों का प्रयोग करता था (क्योंकि सरकार द्वारा विधान-निर्माण और न्याय के दोनों कार्य उस समय स्पष्टरूप से पृथक् नहीं हुए थे)। यह आयोग देश के सामान्य कानून से बँधा हुआ नहीं था, न ही यह सामान्य न्यायालयों की साधारण प्रक्रिया तथा विधि का अनुसरण करता था। उदाहरणार्थ, यह पदाधिकार से शपथ दिलवा सकता था और यह शपथ मनुष्यों को अपने ही विरुद्ध साक्षी देने के लिये बाधित करती थी। यह बात इंग्लिश कानून की परिपाटी के प्रतिकूल थी। यह आयोग जो दण्ड देता था, उन दण्डों में इसे बड़ी व्यापक स्वतन्त्रता थी। चूँकि उसके राज्यकाल के आरम्भ में उसकी जनता का अधिकांश भाग निश्चित रूप से कैथोलिक भावनाओं वाला था, अतः एलिज़ाबेथ की यह इच्छा थी कि राष्ट्रीय चर्च के सिद्धान्तों और प्रार्थना के क्रमों का नवीन रूप इस प्रकार निश्चित किया जाय कि वह लोगों को यथासम्भव कम-से-कम ठेस पहुँचाए। बाहरी बातों में वह लगभग पुरानी पद्धतियों को बनाये रखने के लिये उत्सुक थी। वह यह आशा रखती थी कि इंग्लैण्ड में कैथोलिक मतानुयायी शनैः-शनैः नयी व्यवस्था के अभ्यस्त हो जायेंगे और उसे स्वीकार कर लेंगे। इस बात में उसे निराश नहीं होना पड़ा। इंग्लिश लोगों का बड़ा बहुमत उसके राज्यकाल की समाप्ति से पहले ही राष्ट्रीय चर्च को स्वीकार कर चुका था। इसे उसने और भी अधिक तत्परता से स्वीकार किया था, क्योंकि रोम के प्रति निष्ठा स्पेन के साथ संघर्ष में अदेशभक्तिपूर्ण बन गयी थी। कैथोलिकों पर बहुत कम अथवा कोई अत्याचार नही हुआ, चर्च में अनुपस्थित रहने के लिए ही केवल थोड़े जुर्माने हुआ करते थे। तुलनात्मक दृष्टि से बहुत कम कैथोलिकों को मरवाया गया, इनका वध धार्मिक सम्मतियों के आधार पर नहीं किया गया, अपितु इन्हें देशद्रोही के रूप में पोप की विदेशी-शक्ति के अभिकर्ताओं के रूप में अथवा राज्य के विरुद्ध षड्यन्त्रकारियों के रूप में मरवाया गया।

किन्तु इस नीति के कारण उग्र उत्साही प्रोटेस्टेण्ट लोगों का रानी के साथ तीव्र संघर्ष उत्पन्न हो गया। उसके राज्यकाल के आरम्भ में भी अनेक प्रोटेस्टेण्ट थे। ये विशेष रूप से लन्दन में, अन्य नगरों में तथा समृद्धशाली दक्षिण पूर्व में थे। रानी के शासन के वर्ष बीतने के साथ-साथ न केवल इंग्लैण्ड में, अपितु यूरोप के सभी देशों में रोम के विरुद्ध संघर्ष अधिक उग्र और कटु होने लगा। इस समय प्रोटेस्टेण्टों की संख्या में और उत्साह में वृद्धि हुई और उनकी यह इच्छा भी प्रबल हुई कि वे जिन बातों को पोपलीला के अवशेष समझते थे, उनसे इंग्लैण्ड के चर्च को विशुद्ध बनाया जाये। वे सहिष्णुता को केवल अपने लिए नहीं चाहते थे। वे यह चाहते थे कि वे अपने मतों के अनुसार राष्ट्रीय चर्च का पुनर्निर्माण करें। वे कैल्विन के उस उग्र मत से प्रेरणा प्राप्त कर रहे थे, जो यूरोप में प्रोटेस्टेण्ट मत का लड़ाकू सिद्धान्त था और जिसने नॉक्स के पथ-प्रदर्शन में स्काटिश चर्च के धर्म और शासन-पद्धति का निर्माणा किया था। यद्यपि ये लोग स्पेन के साथ संघर्ष में उसके प्रति स्वामिभक्त रहे थे, तथापि एलिज़ाबेथ के दृष्टिकोण से इन व्यक्तियों के साथ कोई समझौता नहीं हो सकता था, क्योंकि वे राष्ट्रीय चर्च के समूचे संगठन को तथा सरकार को चुनौती दे रहे थे। रानी का ऐसा विश्वास था कि यदि उनकी बात चल जाती तो वे इंग्लैण्ड की सबसे बड़ी उपलब्धि—उस देश की एकता को खण्डित कर देते। उस समय इंग्लैण्ड में अथवा अन्य किसी देश में कोई भी व्यक्ति इस विचार को नहीं मानता था कि एक ही राज्य में एक से अधिक चर्च हो सकते है। यह बात अधिकांश प्यूरिटनों (Puritans) को वैसी ही असम्भव प्रतीत होती थी, जैसी स्वयमेव एलिज़ाबेथ को।

राज्यकाल के वर्ष बीतने के साथ-साथ एक ओर एलिज़ाबेथ और बिशपों के बीच में और दूसरी ओर शुद्धतावादियों (Puritans) के साथ संघर्ष गहरा और विस्तृत होता चला गया। यह संघर्ष पादरियों के आधिकारिक पूजनपरिच्छदों (Vestaments) के विचार से आरम्भ हुआ। एलिज़ाबेथ की इच्छा थी कि जहाँ तक सम्भव हो, परम्परागत पुरोहितीय वस्त्रों का प्रयोग किया जाना चाहिए और व्यवहार में एकरूपता होनी चाहिए। प्यूरिटन लोगों को पुरोहितीय वस्त्रों पर, यहाँ तक कि पुरोहित द्वारा ऊपर पहने जाने वाले पूरी बाँहों वाले सफेद कपड़े के जामे (Surplice) पर भी आपत्ति थी, क्योंकि उनकी दृष्टि में ये वस्त्र रोम के और पुरोहित-पद्धति के दावों के प्रतीक थे। जब १५६६ ई० में आर्कबिशप पार्कर ने इस विषय में समुचित परिपाटी को स्पष्ट करने तथा लागू करने की सार्वजनिक घोषणा समाचारपत्रों में प्रकाशित की, उस समय लन्दन के ३७ पादरियों ने इसका पालन करना अस्वीकार किया और इनमें से कुछ को उनकी वृत्तियों से वंचित कर दिया गया। पुस्तिकाओं द्वारा एक उग्र युद्ध आरम्भ हो गया। इस पर प्यूरिटन पक्ष के मुख्य पुस्तिका-लेखकों को उपदेश करने से रोक दिया गया और इनमें से कुछ व्यक्ति बन्दी बना लिये गये। उन्होंने गुप्त धर्म-सभाएँ आरम्भ कर दीं। यह विवाद वस्त्रों से विधियों और सिद्धान्तों तक फैल गया और चूँकि बिशप परेशान करने वाले नियमों को थोपते थे, अतः प्यूरिटन लोगों ने समूची बिशप-पद्धति को और परोक्षरूप से इसके पीछे विद्यमान राजमुकुट की सर्वोच्च सत्ता को चुनौती देना शुरू किया। बिशपों की आमदनियों ने (बिशप अधिकांश लोगों से अधिक धनी थे) और धार्मिक न्यायालयों द्वारा प्रयोग

में लायी जाने वाली उनकी शक्तियों ने उन पर आक्रमण करने के अन्य कारणों को प्रस्तुत किया। दो प्यूरिटन पादरी फौरन न्यूगेट जेल में बन्द कर दिये गये। इन पादरियों द्वारा १५७२ ई० में प्रकाशित 'पार्लियामेण्ट को चेतावनी' (An Admonishment to Parliament) नामक पुस्तिका ने यह प्रदर्शित किया था कि यह आन्दोलन कितना प्रबल हो रहा है। उन्होंने वास्तव में बिशप पद्धति (Episcopal system) की समाप्ति की माँग की। एक कट्टरपन्थी ने यह टिप्पणी की थी कि "आरम्भ में यह विवाद केवल पुरोहित की टोपी, जामे और ग्रीवाच्छादक गुलूबन्द तक सीमित था, अब यह आन्दोलन बिशपों, आर्कबिशपों और कैथेड्रल चर्चों तक पहुँच गया है, यह स्थापित व्यवस्था तथा धार्मिक मामलों में रानी की सत्ता के विध्वंस तक विकसित हो गया है। ये सुधार धार्मिक मामलों में सर्वोच्च-सत्ता राजा से लेना चाहते हैं और ये उसे प्रत्येक पेरिश में गम्भीर स्वामित्व के साथ अपने आपको देना चाहते हैं"। एक बुद्धिमत्तापूर्ण भविष्यवाणी करते हुए आर्कबिशप ने कहा कि प्यूरिटन अन्त में "रानी को और उस पर निर्भर रहनेवाले सभी व्यक्तियों को समाप्त कर देंगे"। किन्तु रानी की शक्ति इन विवादों को, कुछ समय के लिए, सभी दशाओं में शान्त करने में समर्थ थी।

प्यूरिटन आन्दोलन का नेता कैम्ब्रिज में धर्मशास्त्र का प्रोफेसर कार्टराइट था। वह अन्ततोगत्वा लोकतन्त्रीय आधार पर आश्रित रहने वाले चर्च की प्रेसबिटेरियन शासन पद्धति का कट्टर समर्थक था। दूसरे इससे भी आगे जाते थे, विशेषरूप से कैम्ब्रिज का एक दूसरा व्यक्ति रावर्ट ब्राउन यह दावा करता था कि प्रत्येक धर्मसम्मेलन अपने आप में आत्म-निर्भर और स्वतन्त्र होना चाहिए और धार्मिक पुरोहितों की दीक्षा के लिए न तो बिशप और न ही प्रेसबिटरीज़ या पादरीगृह आवश्यक होने चाहिए। उसने १५८१ ई० में नार्विच में अपनी पद्धति का एक क्रियात्मक आदर्श भी स्थापित करने का प्रयत्न किया। भावी स्वतन्त्रतावादियों के पूर्वज ब्राउन-मतानुयायी अनेक उत्तम व्यक्ति थे, किन्तु प्रेसबिटेरियन लोग एकरूपता में विश्वास रखते थे और राष्ट्रीय चर्च के अधिकारों के लिए ऊँचे दावे करते थे, जैसा कि उन्होंने स्काटलैण्ड में प्रदर्शित किया था। इन लोगों ने ब्राउनिस्ट लोगों की उतनी ही प्रबलता से निन्दा की थी, जितनी प्रबलता से एलिज़ाबेथ इनकी निन्दा कर रही थी। अनेक ब्राउन-मतानुयायियों को देशद्रोही के रूप में फाँसी के तख्ते पर झूलना पड़ा, क्योंकि वे राजा की सर्वोच्च सत्ता से इन्कार करते थे। एनाबैप्टिस्ट्स (Anabaptists)[१] आदि कुछ अन्य ऐसे समुदाय थे, जो उनके सिद्धान्तों का अनुसरण गुप्त रीति से करते थे।

---

१. इस शब्द का प्रयोग उस सम्प्रदाय के सदस्य के लिए होता था, जिसकी स्थापना जर्मनी में १५२१ ई० में हुई। यह सम्प्रदाय प्रोटेस्टेण्टों तथा रोमन कैथोलिकों का उग्र विरोधी था, अतः इन दोनों ने इसका दमन किया। इस सम्प्रदाय को यह नाम दिये जाने का यह कारण था कि इसकी यह मान्यता थी कि बचपन में ईसाई-धर्म में दीक्षित करने के लिए किया गया बप्तिस्मा प्रभावरहित होता है; अतः बड़ी आयु में पुनः बप्तिस्मा किया जाना चाहिए।

फिर भी राज्यकाल के मध्य भाग में विवाद तुलनात्मक रीति से शान्त हो गया। इसका कुछ कारण तो स्पेन का खतरा था और कुछ कारण यह था कि इस समय कैन्टरबरी के आर्क-बिशप के पद पर मृदु स्वभाव वाला व्यक्ति ग्रिन्डल (Grindal) आसीन था। वह प्यूरिटन लोगों के साथ सहानुभूति रखता था, और उन्हें उनकी भविष्यवाणियों का कार्य जारी रखने की अनुमति दे रहा था। किन्तु १५८८ ई० के बाद स्पेन का खतरा समाप्त हो गया और ग्रिन्डल के बाद उसका उत्तराधिकारी कट्टरपन्थी ह्विटगिफ्ट (१५८३ ई०) बना, तो संघर्ष पहले की अपेक्षा अधिक उग्रता के साथ भड़क उठा। एलिज़ाबेथ का चर्च राष्ट्र की प्रीति में सुदृढ़ जड़ जमा चुका था। अब यह केवल राजनीतिक समझौता मात्र ही नहीं था, किन्तु इसने अनेक व्यक्तियों के समूचे दिल की निष्ठा प्राप्त की थी। एक उच्च चर्च दल विकसित हो रहा था। दूसरी ओर प्यूरिटन लोग भी अधिक साहसिक कार्यों के लिए उत्सुक हो रहे थे। १५९० ई० में कार्टराइट ने इंग्लैण्ड के विभिन्न भागों में प्रेसबिटेरियन नमूने पर चर्च की परिषदों-श्रेणियों और सिनाडों (Synods) के संगठन के लिए संघ बनाने आरम्भ किये। यह राजकीय सर्वोच्च सत्ता की ऐसी अवहेलना थी, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। प्यूरिटन पार्टी के नेता हाई कमीशन और स्टार चैम्बर के सम्मुख उपस्थित किये गये। किन्तु उन्हें क्षमा-प्रार्थना के बाद छोड़ दिया गया। उनके अनुयायियों की संख्या इतनी अधिक थी कि उन्हें दण्ड देना बुद्धिमत्तापूर्ण नहीं था। इसी बीच में सम्भवतः इंग्लिश इतिहास में व्यापक सार्वजनिक अभिरुचि को उभाड़ने वाला, पहला उग्र तथा प्रेस द्वारा चलाया जाने वाला विवाद भड़क उठा (१५८८-८९ ई०)। एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाये जाने वाले एक गुप्त प्रेस से मार्टिन मार्प्रिलेट (Martin Marprelate) के गुमनाम से कुछ कठोर प्रहार करने वाले ट्रैक्ट प्रकाशित हुए। मार्प्रिलेट ट्रैक्टों के लेखक चाहे जो कोई भी हों, वे न केवल प्यूरिटनवाद के लिए, अपितु प्रेस की स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहे थे, क्योंकि आन्दोलन कुचलने की अपनी धुन में ह्विटगिफ्ट ने स्टार-चेम्बर से एक ऐसी आज्ञा प्राप्त कर ली थी, जिसके अनुसार किसी भी पांडुलिपि को तब तक नहीं छापा जा सकता था, जब तक कि इसके लिए पहले से ही उससे या लन्दन के बिशप से आज्ञा न प्राप्त कर ली जाय।

इस प्रकार धार्मिक विवाद राजनीतिक विवाद के रूप में परिणत हो रहा था। प्यूरिटन लोग चर्च के लोकतन्त्रीय संगठन का समर्थन करने के साथ-साथ ताज द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले कुछ अधिकारों को चुनौती देने लगे थे। वस्तुतः यह अनिवार्य था कि उनके सिद्धान्त उन्हें सरकार में जनता के प्रभाव के प्रति मित्रतापूर्ण बनाएँ। इनके विरुद्ध ह्विटगिफ्ट का यह आरोप था कि वे धार्मिकता के आवरण में मजिस्ट्रेटों के प्रति घृणा का और अपनी लोकप्रियता का पोषण करते हैं। लोकप्रियता से उसका आशय लोगों की शक्ति से था। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि एलिज़ाबेथ के समूचे राज्यकाल में पार्लियामेण्ट में सदैव एक बड़ा प्यूरिटन तत्त्व था। पार्लियामेण्ट के साथ उसके विवाद सब से अधिक चर्च के मामलों पर हुए। यह कहना असम्भव है कि प्यूरिटन सदस्यों की संख्या कितनी थी। पार्लियामेण्ट में अनेक प्यूरिटन सदस्यों के होने का यह तथ्य हमें उनकी शक्ति के बारे में कुछ नहीं बताता, क्योंकि पार्लियामेण्ट किसी भी सच्चे अर्थ में एक लोकप्रिय रूप से निर्वाचित संस्था नहीं थी। किन्तु

यह निश्चित है कि इस राज्य काल की समाप्ति तक उनकी एक बड़ी संख्या लन्दन में, अधिकांश शहरों में और समूचे दक्षिण-पूर्व में रहती थी। इनमें देश के योग्यतम और सबसे अधिक बुद्धिमान मनुष्यों की एक बड़ी संख्या थी तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय पर इनका प्रबल प्रभाव था।

५. रानी और उसकी पार्लियामेण्ट

हम पहले जो बातें देख चुके हैं, उनसे यह स्पष्ट है कि इंग्लैण्ड का वास्तविक शासन रानी तथा उसकी परिषद् के पास था। उन्होंने देश की विदेशनीति निश्चित की और इसकी प्रतिरक्षा की व्यवस्था की। वे चर्च का नियमन और नियन्त्रण करते थे। वे देश की आर्थिक नीति की देखभाल तथा संचालन करते थे। वे पुरशासकों के द्वारा कानून के प्रशासन की देखभाल करते थे; गलत निर्णय देने वाले जूरियों को बिना किसी संकोच के स्टार चेम्बर (Star Chamber) के सामने बलपूर्वक लाया जाता था। इन सब कार्यों में पार्लियामेण्ट मुश्किल से ही कोई बात कह सकती थी। एलिज़ाबेथ स्वतन्त्रतापूर्वक और सामान्य रूप से बिना किसी शिकायत के राजकीय विशेषाधिकार की उन सभी शक्तियों का प्रयोग करती थी, जिनका कटुतम विरोध स्टीवर्ट वंशी लोगों के समय विरोधी दल किया करता था। वह पोतधन (Shipmoney) जैसे चन्दे की वसूली करती थी तथा नयी नयी चुंगियाँ लगाती थी। वह विशेष कानून के प्रभाव से व्यक्तियों को मुक्त करने के अधिकार का प्रयोग करती थी। वह मनुष्यों को इससे अधिक निश्चितता न रखने वाले कारण के आधार पर बन्दी बनाती थी कि ऐसा रानी की विशेष आज्ञा से किया जा रहा है। वह कानून की शक्ति रखने वाली अनेक घोषणाओं को प्रचारित करती थी। वह ये सब बातें करने में इसलिए समर्थ हुई कि उसका शासन एक ऐसा राष्ट्रीय राजतन्त्र था, जो राष्ट्र का विश्वस्त प्रवक्ता और प्रतिनिधि था तथा भीषण मुसीबतों से राष्ट्र की रक्षा कर रहा था।

किन्तु इन सब बातों के होते हुए भी यह सोचना गलत है कि एलिजाबेथ का शासन एक निरंकुश शासन था। उसका अधिकार कभी भी स्थिर नहीं रह सकता था, यदि वह राष्ट्रीय स्वीकृति पर आधारित न होता। यह दो कारणों से था; उसके पास अपनी इच्छा लागू करने के लिए कोई वेतनभोगी सेना नहीं थी और उसके पास सारे देश में फैली हुई तथा उसकी पसन्द की गयी या न पसन्द की गयी नीति को क्रियान्वित करने के लिए वेतनभोगी अधिकारियों की कोई श्रेणी नहीं थी। उसे इन सब कार्यों के लिए अवैतनिक देहाती भद्रजनों पर निर्भर रहना पड़ता था। इंग्लैण्ड की सब श्रेणियों में देहाती राजनीतिक दृष्टि से सबसे अधिक क्रियाशील थे और किसी भी भीषण अत्याचार का विरोध करने के लिए सबसे अधिक तैयार थे, जैसा कि उन्होंने पार्लियामेण्ट में प्रदर्शित किया था।

इसके अतिरिक्त उसे पार्लियामेण्ट का भी ध्यान रखना पड़ता था। हम यह देख चुके हैं कि हेनरी अष्टम के राज्यकाल के अन्तिम भाग के अतिरिक्त पार्लियामेण्ट कभी भी सच्चे अर्थों में वशंवद (Subservient) नहीं थी। एलिज़ाबेथ पार्लियामेण्ट के साथ सम्बन्ध रखना पसन्द नहीं करती थी। वह उसे झगड़ालू और हस्तक्षेप करने वाली संस्था समझती थी और जितना कम हो सके उतना कम बुलाती थी। किन्तु उसे अपने राज्यकाल में इसे १३ बार बुलाना

पड़ा। उसे पार्लियामेण्ट को केवल इसलिए बुलाना पड़ा क्योंकि महत्त्वपूर्ण कानूनों को पास करने के लिए और इससे भी अधिक, सबसे अधिक आमदनी देने वाले करों को वसूल करने के लिए इनका सहयोग आवश्यक था। एलिज़ाबेथ के पास पार्लियामेण्ट के अनुदानों के अतिरिक्त स्वतन्त्र रूप में विशाल राजकीय आमदनी थी। यह आमदनी राजकीय भूमियों से, विभिन्न प्रकार की सामन्ती देयों से और स्मरणातीत काल से चली आने वाली परिपाटी के अनुसार राजा की सम्पत्ति समझी जाने वाली चुंगियों से होती थी। यद्यपि एक रिवाज के अनुसार इन चुंगियों को प्रत्येक राज्यकाल के आरम्भ में नये सिरे से स्वीकार किया जाता था। वह यथासम्भव मितव्ययी थी और इस बात का पूरा प्रयत्न करती थी कि इस० आमदनी से सरकार का खर्च पूरा हो जाय। इसका कुछ कारण तो यह था कि करों को जनता पसन्द नहीं करती थी और कुछ कारण यह भी था कि वह पार्लियामेण्ट बुलाने से बचना चाहती थी। उसने अपने बाद के स्टुअर्टवंशी राजाओं की भाँति राजकीय आमदनी बढ़ाने के साधनों को पाने के लिए राजकीय सर्वोच्च विशेषाधिकार के क्षेत्र को भी बहुत विस्तीर्ण किया, जैसा कि हम देख चुके हैं। उसने युद्ध के संचालन में भी वैयक्तिक प्रयास को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक उपाय का अवलम्बन लिया।

वस्तुत: इंग्लैण्ड यूरोप में ऐसा देश था जिसमें सबसे कम कर लगे हुए थे। पार्लियामेण्ट अपने अनुदान देने में निर्विवाद रूप से बड़ी कंजूस थी और चूँकि अनुदान जिन आगणनों या या मूल्यांकनों (Assessments) पर निश्चित किये गये थे, उन्हें चौदहवीं शताब्दी से परिवर्तित नहीं किया गया था, अत: इनसे अत्यधिक कम मात्रा में आमदनी होती थी। मितव्ययी होने पर भी एलिज़ाबेथ पर ऋण चढ़ गया और उसे बड़े पैमाने पर राजकीय भूमियाँ बेचनी पड़ीं। किन्तु यह अपने आप में इस बात का प्रमाण है कि देश की आय पर पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण अब भी वास्तविक था और एलिज़ाबेथ भी इसकी अवहेलना नहीं कर सकती थी।

एलिज़ाबेथ की प्रत्येक पार्लियामेण्ट में इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिले थे कि यद्यपि समग्र रूप से, देश की भाँति पार्लियामेण्ट के सदस्य भी रानी का सम्मान करते थे और उसकी सामान्य नीति का समर्थन करते थे, तथापि वे अपने किसी अधिकार का बलिदान करने के लिए तैयार नहीं थे और अपने विशेषाधिकारों के लिए डटे रहने में, उनमें साहस की कमी नहीं थी। रानी प्राय: यह समझती थी कि वे अपने अधिकारों से बाहर जा रहे थे। विशेषत: उस समय जब वे उसके विवाह पर विचार करने का अथवा उसकी चर्च की नीति की आलोचना करने का साहस करते थे, जैसा कि वे प्राय: बड़ी तीव्रता से किया करते थे। १५६७ ई० में उसने उन्हें कहा था "अपनी रानी के धैर्य की परीक्षा करने में सावधान रहना चाहिए।" शायद ही कोई ऐसा अधिवेशन बीता हो, जिसमें एक या अधिक सदस्यों को जेलखाने में न डाला गया हो। १५९३ ई० में पाँच सदस्य लन्दन के टावर में भेजे गये, क्योंकि उन्होंने राजमुकुट के उत्तराधिकार पर विचार करने का साहस किया था। इनमें से एक पीटर वेन्टवर्थ पार्लियामेण्ट के विशेषाधिकारों का सबसे उग्र समर्थक था और वह तब तक कारावास में ही रहा, जब तक तीन वर्ष बाद वह मर

नहीं गया। रानी ने बिलों को अस्वीकार या वीटो करने की शक्ति का बहुत बड़ी मात्रा में प्रयोग किया। १५९८ ई० की पार्लियामेण्ट के ५१ बिलों में से ४८ को उसने अपने वीटो से रद्द कर दिया।

किन्तु यदि ये तथ्य यह प्रदर्शित करते हैं कि रानी पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण स्वीकार करने से वस्तुतः बहुत दूर थी, तो ये तथ्य यह भी बताते हैं कि पार्लियामेण्ट अपने अधिकारों के लिए आग्रह रखने वाली थी और इन्हें एक बहुत चाहे जाने वाले राजा के विरुद्ध भी लागू करने का साहस रखती थी। यदि बहुत से बिल रद्द किये गये तो यह स्पष्ट है कि पार्लियामेण्ट कानूनों के निर्माण में क्रियाशील थी और वह इस मामले में पहल करने का कार्य ताज के लिए नही छोड़ती थी, जैसा कि वह हेनरी अष्टम के समय में किया करती थी। यदि सदस्यों को सार्वजनिक नीति के उन प्रश्नों पर विचार करने का आग्रह करने के लिए डाँटा जाता था और बन्दी बनाया जाता था (जो प्रश्न परिपाटी द्वारा रानी और उसकी परिषद् द्वारा निश्चित किये जाते थे) तो स्पष्ट रूप से सदस्य इस बात का प्रयत्न कर रहे थे कि वे राष्ट्र के भाग्य का निर्णय करने में अधिक बड़ा भाग लें।

रानी और उसकी पार्लियामेण्ट के बीच में सम्बन्ध की तीन विशेषताओं का उल्लेख किया जाना चाहिये। पहली बात यह थी कि लार्ड सभा नहीं, किन्तु कामन्स सभा ही सक्रिय भाग लेने वाली थी : लार्ड सभा का महत्व पहले से ही कम होने लगा था। इसका यह अर्थ था कि देहात के भद्रजन और वकील लोग ही ऐसे व्यक्ति थे (क्योंकि कामन्स सभा देहात के भद्रजनों और वकीलों से भरी हुई थी) जो देश के शासन में ताज के साथ वास्तविक हिस्सेदारी पाने का प्रयत्न कर रहे थे। यह स्थिति चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दियों की उस स्थिति से बहुत भिन्न थी, जब कामन्स सभा को बड़े बैरनों के दल मुख्य रूप से निर्वाचित करते थे। दूसरी विशेषता यह थी कि इस राज्यकाल की प्रत्येक पार्लियामेण्ट में एक बड़ी संख्या और कुछ में बहुमत ऐसे सदस्यों का था जो प्यूरिटन लोगों के साथ सहानुभूति रखते थे। रानी के साथ उनके अधिकांश मतभेद धार्मिक प्रश्नों पर उत्पन्न होते थे। इसका यह अर्थ है कि कामन्स सभा में आने वाले मनुष्यों की एक बड़ी संख्या उन विचारों से प्रभावित थी, जो विचार लगभग अनिवार्य रूप से बढ़ रहे लोकप्रिय नियन्त्रण की दिशा में ले जा रहे थे। तीसरी विशेषता यह थी कि राज्य-काल की समाप्ति के आस पास कामन्स सभा की स्वतन्त्रता और रानी के साथ संघर्ष में आने की इसकी तत्परता अधिक स्पष्ट हो गयी। यह उस राजभक्ति और प्रेम के बावजूद था, जिसको सब लोग संकटपूर्ण घड़ी में देश का पथ-प्रदर्शन करने वाली महान राजकुमारी के प्रति अनुभव करते थे। इसका यह अर्थ है कि जब एक बार खतरे का युग बीत गया तो मनुष्य यह अनुभव करने लगे कि अब ऐसा समय आ गया है कि राजा की उसी मात्रा मे अधिक देर तक आवश्यकता नही है और पार्लियामेण्ट राष्ट्रीय मामलों का नियन्त्रण करने में अधिक बड़ा हिस्सा लेने की माँग आरम्भ कर सकती है।

अपने अन्तिम वर्षों में और अपनी अन्तिम तीन पार्लियामेण्टों में यह प्रतीत होता था कि एलिज़ाबेथ, लगभग अपनी जनता के साथ अथवा कामन्स सभा में जिन लोगों के विचार प्रकट किये जाते थे उनमें से अधिक महत्त्वपूर्ण तत्वों के साथ, अपना सम्पर्क खो चुकी थी। यह

असन्तोष १६०१ ई० की पार्लियामेण्ट में अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया, जब रानी द्वारा विभिन्न व्यक्तियों को विविध वस्तुओं के निर्माण करने का एकाधिकार देने वाले आज्ञा-पत्रों के विरुद्ध एक प्रबल आक्रमण किया गया। यद्यपि यह पहला आक्रमण नहीं था, किन्तु यह सबसे अधिक उग्रता के साथ किया गया था। इनमें से कुछ आज्ञा-पत्र एक स्वाधिकार-पत्र या पेटेण्टों (Patents) के रूप में थे और इनसे नवीन उद्योगों को प्रोत्साहन मिला। किन्तु अन्य आज्ञापत्र निश्चित रूप से हानिकारक थे। कामन्स सभा का मिजाज बिगड़ गया। उन्होंने सब एकाधिकार समाप्त करने वाले बिल को पेश करने का प्रस्ताव किया, यह रानी के लिए एक सीधी चुनौती थी। एलिज़ाबेथ इतनी बुद्धिमती थी कि वह खुले संघर्ष का खतरा मोल लेना नहीं चाहती थी। एक घोषणापत्र द्वारा उसने एक ही प्रहार से सब एकाधिकार समाप्त कर दिये और अपनी स्वामिभक्त कामन्स सभा को दिये गये एक भाषण में न केवल उसने उनकी समूची प्रीति पुन: प्राप्त कर ली, अपितु अपने लिए एक ऐसा दावा बना लिया जो उनके हृदयों में गूंज सकता था और जिसे उसके समाधिलेख के रूप में अच्छी तरह उत्कीर्ण किया जा सकता है —

"यद्यपि भगवान् ने मुझे ऊँचे स्थान पर बिठाया है, फिर भी मैं इसे अपने राजमुकुट का गौरव मानती हूँ कि मैंने आप लोगों के प्रेम के साथ शासन किया है। राजा होना और राजमुकुट धारण करना उन लोगों के लिए अधिक गौरवपूर्ण है जो इसे देख रहे हैं, किन्तु यह उनके लिए इतना प्रसन्नतादायक नहीं है, जो इसे धारण कर रहे हैं। मेरे लिए यह बात है कि मैं राजा की अथवा रानी की राजकीय सत्ता के वैभवपूर्ण नाम से कभी इतनी प्रलोभित नहीं हुई, जितनी इस बात से प्रसन्न हुई हूँ कि भगवान् ने अपने सत्य और गौरव की रक्षा के लिए और इस राज्य को संकट, अप्रतिष्ठा, अत्याचार और उत्पीड़न से बचाने के लिए मुझे अपना साधन बनाया है।"

१८ महीने के बाद उसका देहान्त हो गया और उसने उस अनिवार्य प्रश्न को उठते हुए नहीं देखा, जो उसके द्वारा इतने गौरवपूर्ण ढंग से प्रयुक्त की जाने वाली राजसत्ता के तथा उस राष्ट्र की उन महत्वाकांक्षाओं के मध्य में उत्पन्न हुआ था, जिनसे रानी ने उसे अपनी राष्ट्रीयता पर अभिमान रखने का पाठ पढ़ाया था। उसके साथ एक युग की इतिश्री हो गयी। विशुद्ध द्वीपीय इतिहास के युग समाप्त हो गये। इसी प्रकार इंग्लैण्ड के लिए राजकीय संरक्षण के प्रति स्वेच्छापूर्ण समर्पण का युग भी समाप्त हो गया। ब्रिटिश द्वीप-समूह के लोग एक लम्बी तैयारी के बाद विश्व में प्रभाव डालने वाले कार्यों को और एक ऐसी साहसपूर्ण प्रगति को करने वाले थे, जो राष्ट्रीय स्वशासन के आदर्श की ओर अन्य सब जनताओं की अपेक्षा अधिक आगे बढ़ी हुई थी। इससे भी अधिक बड़ी बात यह थी कि वे एक ही राजमुकुट के नीचे संयुक्त राज्यों के समूह के रूप में, तथा एक दूसरे से भेद रखने वाले, किन्तु फिर भी अविच्छेद्य रीति से परस्पर सम्बद्ध राष्ट्रमण्डल के रूप में नवयुग में प्रवेश कर रहे थे, क्योंकि एलिज़ाबेथ का उत्तराधिकारी हेनरी सप्तम का परपोता, स्काटलैण्ड का जेम्स षष्ठ था और उसके राज्यारोहण के साथ इन द्वीपों के लोगों में संघर्ष की शताब्दियाँ औपचारिक रूप से समाप्त हो गयीं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

For literary movements, Cambridge History of English Literature; **Tillyard,** Elizabethan World-Picture; for social and economie conditions, The England of Shakespeare (Claredon Press); **Kelsall,** Wage Regulation under Statute of Artificers; **Leonard,** Early History of English Poor Relief; **Unwin,** Industrial Organisation in the Sixteenth and Seventeenth Centuries; Tawney, Agrarian Problem in the Sixteenth Century; for religious history, **Frere,** English Church in the Reigns of Elizabeth and James I; **Knappen,** Tudor Puritanism; for politics and Parliament, **Prothero,** Constional Documents; **Hallam,** Constitutional History; **Pollard,** England from the Death of Henry VIII. to the Death of Elizabeth; **Neale,** Queen Elizabeth and Elizabethan House of Commons; **Black,** Reign of Elizabeth; **Allen,** Political Thought in the Sixteenth Century.

• •

चौथी पुस्तक

राष्ट्रीय स्वशासन के लिए संघर्ष और समुद्र पार के देशों में इंग्लिश लोगों के विस्तार का आरम्भ

१६०३-१६६० ई०

प्रस्तावना

सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ब्रिटिश टापुओं के लोगों ने पहले से स्थापित नींवों पर निर्माण-कार्य आरम्भ कर दिया ।

पहली बात यह है कि ये लोग प्रथम बार सभ्य जगत् के जीवन में एक इकाई के रूप में प्रकट हुए । ये स्काटलैण्ड के राजा जेम्स षष्ठ के इंग्लैण्ड और आयरलैण्ड की राजगद्दियों के उत्तराधिकार द्वारा, एक राजमुकुट के शासन के नीचे संयुक्त हो गये । किन्तु यह बात नहीं थी कि ये किसी सच्चे अर्थ में एक राज्य के रूप में संयुक्त थे । स्काटलैण्ड अपनी पृथक् सत्ता रखता था, इसके अपने कानून, अपनी पार्लियामेण्ट और सबसे बढ़ कर अपना चर्च था । अब तक दोनों राष्ट्रों में बहुत कम मित्रता थी, किन्तु इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड का पारस्परिक प्रभाव पहले की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ और सतत हो गया था । आयरलैण्ड हाल में जीता हुआ देश था, दुर्भाग्यवश उसके भाग्य में इस युग में पिछले युग की अपेक्षा अधिक कष्ट बदे हुये थे । १६०३ ई० तक मैत्री बढ़ने का जो अवसर खुला हुआ था, उसे गँवा दिया गया था तथा एलिज़ाबेथ के राज्यकाल की और भी अधिक कटुतापूर्ण स्मृतियों का निर्माण हुआ था । फिर भी, एक राजमुकुट के नीचे ब्रिटिश द्वीपसमूह का एकीकरण बहुत महत्त्व रखता था ।

दूसरी बात यह है कि अब स्पेन द्वारा सागरों के आरपार व्यापार में उत्पन्न की गयी बाधाएँ भंग हो गयीं । इंग्लिश लोग समुद्र पार के देशों में नये इंग्लैण्ड को बनाने का तथा उष्ण कटिबन्धों में और पूर्व में एक महान् व्यापार को विकसित करने का कार्य आरम्भ करने लगे । उत्तरी अमेरिका के अन्ध महासागर के तट पर तथा पश्चिमी द्वीपसमूह में उपनिवेशों की स्थापना की गयी । यद्यपि इनकी शुरुआतें डरते हुए की गई थीं और राज्य की शक्ति से इनको बहुत कम समर्थन प्राप्त था, तथापि ये उपनिवेश शताब्दी के मध्य तक अच्छी तरह स्थापित हो गये । लगभग इनकी स्थापना के समय से ही, समुद्र-पार के लोगों में पहली इंग्लिश बस्तियों का दूसरे देशों की बस्तियों से यह भेद था कि यहाँ उस स्थानीय स्वशासन की परिपाटी की स्थापना की गयी, जो इंग्लिश लोगों के स्वभाव का अंग बन चुकी थी । इसी समय में आश्चर्य-जनक परिणाम उत्पन्न करने वाला भारत के साथ व्यापारिक सम्बन्ध इन वर्षों में आरम्भ किया गया और उसकी जड़ अच्छी तरह जम गयी । अभी तक ये लगभग विशुद्ध रूप से, इंग्लिश लोगों के ही साहसिक कार्य थे । ब्रिटिश-द्वीपसमूह के सभी लोगों द्वारा इन कार्यों में पूर्ण भाग लेने का दिन अभी तक नहीं आया था । किन्तु इंग्लैण्ड ही इस क्षेत्र में अग्रणी नहीं था । यूरोप के सभी समुद्र-तटवर्ती देश इसमें भाग ले रहे थे और उपनिवेशों के लिए तथा

समुद्र पार के व्यापार के लिए एक ऐसी तीव्र प्रतिद्वन्दिता आरम्भ हुई, जो आज तक चल रही है और इसने यूरोपियन राज्यों के सम्बन्धों पर गहरा प्रभाव डाला है। इस युग में इंग्लिश लोगों के सबसे अधिक प्रतिद्वन्दी उनके अभी हाल के ही मित्र-डच लोग थे। उनकी पारस्परिक ईर्ष्या इतनी अधिक थी कि इसका परिणाम युद्ध हुआ।

तीसरी बात यह थी कि पहले युग में जिस विकास का पूर्वाभास हो चुका था, वह विकास इस युग में होने लगा। इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की जनताएँ और कुछ अंशों में आयरिश लोग भी, एक ऐसी पद्धति का विकास करने लगे, जो न केवल स्थानीय अथवा धार्मिक स्वशासन की, अपितु राष्ट्रीय स्वशासन की पद्धति भी थी। इन महत्वाकांक्षाओं ने जिस गृह-युद्ध को उत्पन्न किया था, उसके महान् विवाद आधी शताब्दी में इन टापुओं के इतिहास की मुख्य सामग्री हैं। वे समूचे भावी राष्ट्रमण्डल के लिए समान महत्व रखते हैं, क्योंकि वे इसके सब सदस्यों के विकास पर अपनी प्रतिक्रिया का प्रभाव डालते रहे और उन्होंने यह निश्चय किया कि राजनीतिक स्वतन्त्रता का उपभोग सब व्यक्ति करेंगे, यद्यपि इसका स्वरूप अभी तक बहुत कम निश्चित हुआ था। यह विकास इसलिए अधिक उल्लेखनीय था, क्योंकि इसी युग में लगभग सभी यूरोपियन राज्य स्वेच्छाचारी शासन की शृंखलाओं में जकड़े जा रहे थे। इस युग के प्रधान राजनीतिक चिन्तन की यह मान्यता थी कि केवल स्वेच्छाचारी राजतन्त्र के साधन से ही व्यवस्था स्थापित की जा सकती है और प्रगति को सुरक्षित रखा जा सकता है। सम्भवतः ब्रिटिश द्वीपसमूह के कुछ लोगों की सबसे बड़ी उपलब्धि यह प्रदर्शित करती थी कि ऐसी बात ठीक नहीं है।

जब ब्रिटिश द्वीपसमूह इन कार्यों में लगा हुआ था, उस समय यूरोप में और विशेषतः मध्य यूरोप में ऐसे भीषण युद्ध चल रहे थे, जिन्होंने सभ्य जगत् के स्वरूप को बदलने वाला प्रभाव डाला था। किन्तु इन संघर्षों में ब्रिटिश द्वीपसमूह ने बहुत कम भाग लिया और जब अन्त में, अगले युग में उन्होंने पुनः एक बार यूरोपियन राजनीति में भाग लेना शुरू किया तो वे सर्वप्रथम इन मामलों के परिवर्तित स्वरूप से कुछ परेशान हो गये।

• •

१६४८ ई० तक इस तथ्य को अस्वीकार करता रहा, फिर भी उत्तर के संयुक्त प्रान्त अपने इतिहास के एक अधिकतम गौरवपूर्ण युग के आरम्भ पर थे। यह युग असीम व्यापारिक क्रियाशीलता और समृद्धि एवं लगभग समान रूप से महत्त्वपूर्ण साहित्यिक और कलात्मक उपलब्धि का युग था। किन्तु (वर्तमान बेल्जियम से मिलने वाले) नीदरलैण्ड्स के दक्षिणी प्रान्त—जो कभी महान् उद्योगों तथा बड़े व्यापार के केन्द्र थे, कैथोलिक मत के प्रति निष्ठा रखते थे और वे अब भी स्पेन के ऐसे शासन में थे, जिसने उनके लिए उनके प्राचीन गौरव के पुनरुज्जीवन को असम्भव बना दिया था।

केवल मध्य-यूरोप में ही धार्मिक संघर्ष अब भी अनिश्चित था। जर्मनी और उसके पड़ोसी आस्ट्रियन प्रदेश अब भी उसी दशा में थे, जिसमें चार्ल्स पंचम ने इन्हें छोड़ा था। ये सम्राट् की नाम मात्र की अध्यक्षता में बँटे हुए थे, इनके छोटे शासकों को 'राजा का धर्म प्रजा का धर्म होना चाहिए', (Cujus regio ejus religio) के सिद्धान्त के अनुसार अपने प्रजाजनों के धार्मिक मत को निश्चित करने का अधिकार था। इस शताब्दी के आरम्भ में जर्मनी के बड़े भाग में प्रोटेस्टेण्टों की संख्या बहुत अधिक थी। यहाँ तक कि हैब्सबर्ग वंश के प्रदेशों—आस्ट्रिया, बोहीमिया और तुर्कों के अधिकार से बचे हुए हंगरी में भी प्रोटेस्टेण्टों की संख्या बहुत अधिक थी; यह बात विशेष रूप से बोहीमिया में थी। किन्तु जर्मनी के प्रोटेस्टेण्ट दल अपने दो भागों—लूथरवादियों और कैल्विनवादियों की फूट से बहुत निर्बल हो गये थे। ये दोनों एक दूसरे के प्रति बहुत ईर्ष्या रखते थे। प्रोटेस्टेण्ट दल इस कारण भी निर्बल था कि अनेक प्रोटेस्टेण्ट राजाओं में किसी के पास भी पर्याप्त सैनिक शक्ति नहीं थी। लूथरवादी दल का अध्यक्ष सैक्सनी का इलेक्टर था, कैल्विनवादी दल ने १६०८ ई० में अपना पृथक् यूनियन संगठित किया और इसका अध्यक्ष राइन का एलेक्टर पैलेटाइन था। दूसरी ओर कैथोलिक एक नये पौरुष और आक्रमणशीलता की प्रवृत्ति प्रदर्शित कर रहे थे। कैथोलिक राजा-बवेरिया का ड्यूक एक शक्तिशाली सेना बना रहा था और उसने अपने नेतृत्व में कैथोलिक संघ (१६०७ ई०) बना कर छोटी कैथोलिक शक्तियों को एकत्र किया।

यदि जर्मनी में दोनों धर्मों में युद्ध होता, जैसा प्रतिवर्ष अधिक सम्भव प्रतीत होता था तो कैथोलिक उस हैब्सबर्ग घराने के प्रबल समर्थन पर भरोसा रख सकते थे, जिसकी (स्पेन और आस्ट्रिया में विद्यमान) दोनों शाखाएँ यूरोप की सबसे बड़ी शक्तियों में गिनी जाती थीं। स्पेनिश शाखा ने. वस्तुतः इंग्लैण्ड और संयुक्त प्रान्तों द्वारा करारी हारें खाने के बाद अपनी प्रतिष्ठा बहुत खो दी थी। किन्तु एक लम्बे युद्ध में उत्तरी नीदरलैण्ड्स के अतिरिक्त उसने कोई प्रदेश नहीं खोया था। प्रादेशिक दृष्टि से वह अब भी यूरोप में सबसे बड़ा राज्य था और उसके पास अब भी हिन्द द्वीप समूह की सम्पत्ति थी। यूरोप में और इंग्लैण्ड में भी लोकमत ने स्पेन की उस आन्तरिक निर्बलता को नहीं अनुभव किया था, जिसने शीघ्र ही स्पेन को तीसरे दर्जे की शक्ति के स्तर तक ला दिया था, वे उसे भय की दृष्टि से देखते थे। हैब्सबर्ग वंश की आस्ट्रियन शाखा अधिक निर्बल थी। इसका कारण इसके प्रदेशों में विद्यमान मतभेद और फूट थी। किन्तु यदि इन पर विजय पायी जा सकती

तो आस्ट्रिया अपने विस्तृत प्रदेशों और योद्धा प्रजाजनों के साथ एक बड़ी प्रवल शक्ति हो सकता था ।

किसी भी दशा में हैब्सवर्ग वंश की शक्ति निश्चित रूप से इस काम के लिए पर्याप्त थी कि वह प्रोटेस्टेण्टों की विभक्त शक्तियों के विरुद्ध जर्मनी के कैथोलिक राजाओं की विजय को निश्चित बनाये, बशर्ते कि यूरोप के प्रोटेस्टेण्ट देश उनकी सहायता के लिए न आयें । यदि ऐसा होता तो इसका परिणाम एक ऐसा सामान्य यूरोपियन युद्ध होता, जैसा अब तक कभी नही देखा गया था । दोनों पक्षों के उग्रपन्थी लोग उत्सुक थे कि अन्तिम संघर्ष अवश्य किया जाना चाहिए और वे अपने पक्ष के लिए यह आशा रखते थे कि वह दूसरे पक्ष को करारी हार देगा। इंग्लैण्ड के प्यूरिटन लोगों में बहुत से व्यक्ति ऐसे थे, जो यह देख कर प्रसन्न होते कि उनका देश प्रोटेस्टेण्ट धर्म के नेता के रूप में अपना उचित स्थान अवश्य ग्रहण कर रहा है । किन्तु वे महाद्वीप पर ऐसे युद्ध में भाग नहीं लेना चाहते थे, जिसे बचाया जा सकता हो । उनमें अधिकांश यह चाहते थे कि समुद्र से स्पेन पर प्रवल आक्रमण किया जाय । सच तो यह है कि वे यूरोपियन स्थिति से अधिक अनभिज्ञ थे । उन्हें ऐसे सार्वभौम युद्ध की भीषणता की अनुभूति बहुत कम थी, जैसा युद्ध आसानी से हो सकता था और लगभग ऐसा युद्ध हुआ ।

यूरोप में कुछ ऐसे बुद्धिमान व्यक्ति भी थे, जो इस खतरे को पहले से ही देख रहे थे और इससे बचना चाहते थे । वे यह विश्वास रखते थे कि शान्ति तभी रखी जा सकती है, जब राष्ट्रों की नीति का पथ-प्रदर्शन धार्मिक प्रतिस्पर्धाओं से किया जाना समाप्त हो जाय। इसमें से एक व्यक्ति फ्रांस का महान् राजा हेनरी चतुर्थ था ।[1] यह वह महान राजा था, जिसने फ्रांस में धर्म-युद्धों की समाप्ति की थी । वह अपने कटु अनुभव से धार्मिक युद्धों के आतंकों को और इनके द्वारा धर्म को पहुँचायी जाने वाली हानि को जानता था । उसकी दृष्टि में यूरोप के लिए बड़ा खतरा हैब्सबर्ग लोगों की भयंकर शक्ति में था । अन्य लोगों की भाँति वह भी खतरे को बढ़ा-चढ़ा कर कह रहा था । किन्तु एक फ्रेंच व्यक्ति के लिए ऐसा अतिरंजन स्वाभाविक था, क्योंकि फ्रांस चारों ओर से ऐसे हैब्सबर्ग प्रदेशों से लगभग घिरा हुआ था, जिसमें कुछ वास्तविक फ्रेंच प्रदेश सम्मिलित थे ।[2] हेनरी का लक्ष्य धार्मिकम तभेदों की अवहेलना करते हुए हैब्सबर्ग वंश की विरोधी शक्तियों को अपने नेतृत्व में इकट्ठा करना था । युद्ध होने पर उसे यह आशा थी कि वह अपनी सीमाओं पर विद्यमान हैब्सबर्ग प्रदेश को जीत कर फ्रांस की स्थिति को सुदृढ़ बना लेगा । अगले डेढ़ सौ वर्ष तक यह फ्रांस की परम्परागत नीति बन गयी । हेनरी के महान् मन्त्री सल्ली ने, अपना अवकाश ग्रहण करने के बाद लिखे गये अपने संस्मरणों में, हमें यह बताया कि उसके स्वामी के मन में एक इससे भी अधिक महत्त्वाकांक्षापूर्ण योजना थी । यह योजना एक बार हैब्सबर्ग वंश का संकट समाप्त हो जाने

---

१. 'राष्ट्रों के वीर पुरुषों की पुस्तक माला' में हेनरी चतुर्थ की एक जीवनी पी० एफ० विलर्ट ने लिखी है ।

२. एटलस के पाँचवे संस्करण की प्लेट संख्या ६ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४६,४७ और ५५ देखिये ।

१६४८ ई० तक इस तथ्य को अस्वीकार करता रहा, फिर भी उत्तर के संयुक्त प्रान्त अपने इतिहास के एक अधिकतम गौरवपूर्ण युग के आरम्भ पर थे। यह युग असीम व्यापारिक क्रियाशीलता और समृद्धि एवं लगभग समान रूप से महत्त्वपूर्ण साहित्यिक और कलात्मक उपलब्धि का युग था। किन्तु (वर्तमान बेल्जियम से मिलने वाले) नीदरलैण्ड्स के दक्षिणी प्रान्त—जो कभी महान् उद्योगों तथा बड़े व्यापार के केन्द्र थे, कैथोलिक मत के प्रति निष्ठा रखते थे और वे अब भी स्पेन के ऐसे शासन में थे, जिसने उनके लिए उनके प्राचीन गौरव के पुनरुज्जीवन को असम्भव बना दिया था।

केवल मध्य-यूरोप में ही धार्मिक संघर्ष अब भी अनिश्चित था। जर्मनी और उसके पड़ोसी आस्ट्रियन प्रदेश अब भी उसी दशा में थे, जिसमें चार्ल्स पंचम ने इन्हें छोड़ा था। ये सम्राट् की नाम मात्र की अध्यक्षता में बँटे हुए थे, इनके छोटे शासकों को 'राजा का धर्म प्रजा का धर्म होना चाहिए', (Cujus regio ejus religio) के सिद्धान्त के अनुसार अपने प्रजाजनों के धार्मिक मत को निश्चित करने का अधिकार था। इस शताब्दी के आरम्भ में जर्मनी के बड़े भाग में प्रोटेस्टेण्टों की संख्या बहुत अधिक थी। यहाँ तक कि हैब्सबर्ग वंश के प्रदेशों—आस्ट्रिया, बोहीमिया और तुर्कों के अधिकार से बचे हुए हंगरी में भी प्रोटेस्टेण्टों की संख्या बहुत अधिक थी; यह बात विशेष रूप से बोहीमिया में थी। किन्तु जर्मनी के प्रोटेस्टेण्ट दल अपने दो भागों—लूथरवादियों और कैल्विनवादियों की फूट से बहुत निर्बल हो गये थे। ये दोनों एक दूसरे के प्रति बहुत ईर्ष्या रखते थे। प्रोटेस्टेण्ट दल इस कारण भी निर्बल था कि अनेक प्रोटेस्टेण्ट राजाओं में किसी के पास भी पर्याप्त सैनिक शक्ति नहीं थी। लूथरवादी दल का अध्यक्ष सैक्सनी का इलेक्टर था, कैल्विनवादी दल ने १६०८ ई० में अपना पृथक् यूनियन संगठित किया और इसका अध्यक्ष राइन का एलेक्टर पैलेटाइन था। दूसरी ओर कैथोलिक एक नये पौरुष और आक्रमणशीलता की प्रवृत्ति प्रदर्शित कर रहे थे। कैथोलिक राजा-बवेरिया का ड्यूक एक शक्तिशाली सेना बना रहा था और उसने अपने नेतृत्व में कैथोलिक संघ (१६०७ ई०) बना कर छोटी कैथोलिक शक्तियों को एकत्र किया।

यदि जर्मनी में दोनों धर्मों में युद्ध होता, जैसा प्रतिवर्ष अधिक सम्भव प्रतीत होता था तो कैथोलिक उस हैब्सबर्ग घराने के प्रबल समर्थन पर भरोसा रख सकते थे, जिसकी (स्पेन और आस्ट्रिया में विद्यमान) दोनों शाखाएँ यूरोप की सबसे बड़ी शक्तियों में गिनी जाती थीं। स्पेनिश शाखा ने. वस्तुतः इंग्लैण्ड और संयुक्त प्रान्तों द्वारा करारी हारें खाने के बाद अपनी प्रतिष्ठा बहुत खो दी थी। किन्तु एक लम्बे युद्ध में उत्तरी नीदरलैण्ड्स के अतिरिक्त उसने कोई प्रदेश नहीं खोया था। प्रादेशिक दृष्टि से वह अब भी यूरोप में सबसे बड़ा राज्य था और उसके पास अब भी हिन्द द्वीप समूह की सम्पत्ति थी। यूरोप में और इंग्लैण्ड में भी लोकमत ने स्पेन की उस आन्तरिक निर्बलता को नहीं अनुभव किया था, जिसने शीघ्र ही स्पेन को तीसरे दर्जे की शक्ति के स्तर तक ला दिया था, वे उसे भय की दृष्टि से देखते थे। हैब्सबर्ग वंश की आस्ट्रियन शाखा अधिक निर्बल थी। इसका कारण इसके प्रदेशों में विद्यमान मतभेद और फूट थी। किन्तु यदि इन पर विजय पायी जा सकती

तो आस्ट्रिया अपने विस्तृत प्रदेशों और योद्धा प्रजाजनों के साथ एक बड़ी प्रबल शक्ति हो सकता था।

किसी भी दशा में हैब्सबर्ग वंश की शक्ति निश्चित रूप से इस काम के लिए पर्याप्त थी कि वह प्रोटेस्टेण्टों की विभक्त शक्तियों के विरुद्ध जर्मनी के कैथोलिक राजाओं की विजय को निश्चित बनाये, बशर्ते कि यूरोप के प्रोटेस्टेण्ट देश उनकी सहायता के लिए न आयें। यदि ऐसा होता तो इसका परिणाम एक ऐसा सामान्य यूरोपियन युद्ध होता, जैसा अब तक कभी नहीं देखा गया था। दोनों पक्षों के उग्रपन्थी लोग उत्सुक थे कि अन्तिम सघर्ष अवश्य किया जाना चाहिए और वे अपने पक्ष के लिए यह आशा रखते थे कि वह दूसरे पक्ष को करारी हार देगा। इंग्लैण्ड के प्यूरिटन लोगों में बहुत से व्यक्ति ऐसे थे, जो यह देख कर प्रसन्न होते कि उनका देश प्रोटेस्टेण्ट धर्म के नेता के रूप में अपना उचित स्थान अवश्य ग्रहण कर रहा है। किन्तु वे महाद्वीप पर ऐसे युद्ध में भाग नहीं लेना चाहते थे, जिसे बचाया जा सकता हो। उनमें अधिकांश यह चाहते थे कि समुद्र से स्पेन पर प्रबल आक्रमण किया जाय। सच तो यह है कि वे यूरोपियन स्थिति से अधिक अनभिज्ञ थे। उन्हें ऐसे सार्वभौम युद्ध की भीषणता की अनुभूति बहुत कम थी, जैसा युद्ध आसानी से हो सकता था और लगभग ऐसा युद्ध हुआ।

यूरोप में कुछ ऐसे बुद्धिमान व्यक्ति भी थे, जो इस खतरे को पहले से ही देख रहे थे और इससे बचना चाहते थे। वे यह विश्वास रखते थे कि शान्ति तभी रखी जा सकती है, जब राष्ट्रों की नीति का पथ-प्रदर्शन धार्मिक प्रतिस्पर्धाओं से किया जाना समाप्त हो जाय। इसमें से एक व्यक्ति फ्रांस का महान् राजा हेनरी चतुर्थ था।[1] यह वह महान राजा था, जिसने फ्रांस में धर्म-युद्धों की समाप्ति की थी। वह अपने कटु अनुभव से धार्मिक युद्धों के आतंकों को और इनके द्वारा धर्म को पहुँचायी जाने वाली हानि को जानता था। उसकी दृष्टि में यूरोप के लिए बड़ा खतरा हैब्सबर्ग लोगों की भयंकर शक्ति में था। अन्य लोगों की भाँति वह भी खतरे को बढ़ा-चढ़ा कर कह रहा था। किन्तु एक फ्रेंच व्यक्ति के लिए ऐसा अतिरंजन स्वाभाविक था, क्योंकि फ्रांस चारों ओर से ऐसे हैब्सबर्ग प्रदेशों से लगभग घिरा हुआ था, जिसमें कुछ वास्तविक फ्रेंच प्रदेश सम्मिलित थे।[2] हेनरी का लक्ष्य धार्मिकम तभेदों की अवहेलना करते हुए हैब्सबर्ग वंश की विरोधी शक्तियों को अपने नेतृत्व में इकट्ठा करना था। युद्ध होने पर उसे यह आशा थी कि वह अपनी सीमाओं पर विद्यमान हैब्सबर्ग प्रदेश को जीत कर फ्रांस की स्थिति को सुदृढ़ बना लेगा। अगले डेढ़ सौ वर्ष तक यह फ्रांस की परम्परागत नीति बन गयी। हेनरी के महान् मन्त्री सल्ली ने, अपना अवकाश ग्रहण करने के बाद लिखे गये अपने संस्मरणों में, हमें यह बताया कि उसके स्वामी के मन में एक इससे भी अधिक महत्त्वाकांक्षापूर्ण योजना थी। यह योजना एक बार हैब्सबर्ग वंश का संकट समाप्त हो जाने

१. 'राष्ट्रों के वीर पुरुषों की पुस्तक माला' में हेनरी चतुर्थ की एक जीवनी पी० एफ० विलर्ट ने लिखी है।

२. एटलस के पाँचवे संस्करण की प्लेट संख्या ९ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४६,४७ और ५५ देखिये।

पर, शान्ति बनाये रखने के लिए एक प्रकार के यूरोपियन संघ अथवा राष्ट्र संघ के निर्माण से कम नहीं थी। यह बात बहुत सन्देहपूर्ण है कि क्या वास्तव में हेनरी के मन में ऐसा विचार था। इस समय यूरोप कभी समाप्त न होने वाले युद्धों से पीड़ित था, इन युद्धों से बढ़ते हुए असन्तोष का एक चिन्ह यह था कि अपने कार्य से अवकाश ग्रहण करने के बाद भी एक उत्तरदायी राजनीतिज्ञ ने ऐसे विचार का समर्थन किया था।

शान्ति का एक अन्य समर्थक जेम्स प्रथम और षष्ठ था।[1] ब्रिटिश द्वीप समूह के इस नवीन राजा को अपने अधिकांश प्रजाजनों की अपेक्षा यूरोप की राजनीति का अधिक व्यापक ज्ञान था। उसका विचार था कि शान्ति को बनाये रखने का उपाय प्रमुख प्रोटेस्टेण्ट शक्ति-इंग्लैण्ड तथा प्रमुख कैथोलिक शक्ति-स्पेन का पारस्परिक सहयोग था। इस उद्देश्य के लिए उसने स्पेन के साथ मित्रता करने का सर्वोत्तम प्रयत्न किया। अपने राज्यारोहण के बाद यथा-सम्भव शीघ्र ही, उसने स्पेन के साथ एलिज़ाबेथ के समय से चले आने वाले युद्ध को एक सन्धि करके समाप्त कर दिया (१६०४ ई०)। युद्ध की यह समाप्ति असन्तोषजनक थी क्योंकि इसने विवाद के प्रधान विषय-हिन्द पूर्वी द्वीपसमूह में व्यापार के अधिकार का कोई उल्लेख नही किया था। उसके बाद उसने अपने उत्तराधिकारी के साथ स्पेन की एक राजकुमारी के विवाह की व्यवस्था करने का प्रयत्न किया। उस समय राज्यों में मैत्री करने का यह सामान्य ढंग हुआ करता था। जेम्स ने अपने राज्य काल के अधिकांश भाग में इसका अनुसरण किया, किन्तु स्पेनिश लोग उसके उद्देश्यों को कभी नहीं समझे। शुरू में उन्होंने यह सोचा कि वह कैथोलिक बनने वाला है; इसके बाद उन्होंने इंग्लैण्ड को शान्त बनाये रखने के साधन के रूप में इस पाण्डित्याभिमानी राजा को प्रसन्न करना उपयोगी समझा। जेम्स के प्रजाजन भी उसके उद्देश्यों के साथ सहानुभूति नहीं रखते थे। वे उसे प्रोटेस्टेण्ट धर्म के प्रति द्रोह करने वाला समझते थे; स्पेनिश विवाह का विचार उन्हें घृणित प्रतीत होता था और इसने राजा को अपनी पार्लियामैण्ट से पराङ्मुख करने में काफी बड़ा भाग लिया। पार्लियामैण्ट को उससे तब अधिक सहानुभूति हुई, जब १६१३ ई० में जेम्स ने अपनी कन्या का विवाह जर्मनी के प्रधान कैल्विन-वादी राजा और उस देश में आक्रमणात्मक प्रोटेस्टेण्ट पार्टी के अध्यक्ष एलेक्टर पैलेटाइन से किया। किन्तु वे यह नहीं समझ सकते थे कि दोनों विवाह योजनाएँ एक ही नीति अर्थात् प्रोटेस्टेण्ट और कैथोलिक धर्मों में शान्ति बनाए रखने की नीति के अंग थे।

यूरोपियन शान्ति के समर्थक इस युग में बहुत कम संख्या में थे और जेम्स प्रथम इस दृष्टि से अपने समय से आगे बढ़ा हुआ था। फिर भी, इन वर्षों में एक बड़े सफल विकास का आरम्भ हुआ, इसका यह लक्ष्य था कि राज्यों के बीच में होने वाले उन भीषण युद्धों पर पाबन्दी और नियन्त्रण लगाया जाय, जो युद्ध यूरोपियन इतिहास में पहले की अपेक्षा उस समय अधिक

---

१. जेम्स पहले स्काटलैण्ड का राजा था और वहाँ इससे पहले जेम्स नाम रखने वाले पाँच राजा हो चुके थे, अत. इसे जेम्स षष्ठ कहा जाता था। बाद में यह स्काटलैण्ड के अतिरिक्त इंग्लैण्ड का भी राजा बना। इससे पहले दोनों देशों का जेम्स नाम रखने वाला कोई राजा नहीं हुआ था, अत: इसने जेम्स प्रथम की पदवी धारण की।

हो गये थे, जब से मध्य युग के इस विचार का अन्त हो गया था कि समूचे सभ्य जगत् को सामान्य कानूनों का पालन करना चाहिए। उस समय अन्तर्राष्ट्रीय कानून का जन्म हुआ, इसके वास्तविक प्रादुर्भाव का श्रेय महान् डच वकील और दार्शनिक ग्रोशियस को दिया जा सकता है। उसकी पुस्तक "युद्ध और शान्ति का कानून" (de Jure Belli et Pacis) १६२५ ई० में प्रकाशित हुई। ग्रोशियस के ग्रन्थ का आधार यह विश्वास था कि नियमों का एक ऐसा सामान्य समूह अवश्य होना चाहिये, जिसका पालन सब राज्यों को एक दूसरे के साथ अपने सम्बन्धों में करना चाहिए। आश्चर्य की बात यह है कि ग्रोशियस ने जिन नियमों का प्रतिपादन किया और बाद में लिखे जाने वाले ग्रन्थों की एक माला में जिनका विस्तार और विकास हुआ, वे नियम सामान्य रूप से समूचे यूरोप में स्वीकार किये गये और १६४८ ई० में वेस्टफेलिया की महान् सन्धियों के साथ शुरू होने वाली अनेक यूरोपियन सन्धियों में इनका निर्देश बाधित रूप से पालन किये जाने वाले नियमों के रूप में किया गया और समग्र रूप से अगली दो शताब्दियों में ये नियम काफी अच्छी तरह से पालन किये जाते रहे। ग्रोशियस और उसके उत्तराधिकारियों द्वारा विकसित अन्तर्राष्ट्रीय कानून ने लड़ाई को बन्द करने का प्रयत्न नहीं किया। इसका लक्ष्य इसका नियन्त्रण करना और युद्ध में अथवा शान्ति काल में राज्यों के एक दूसरे के साथ अधिकारों और कर्त्तव्यों की व्याख्या करना था। किन्तु यह अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की दिशा में की जाने वाली प्रगति का श्रीगणेश था।

इस युग का सफल राजनीतिक विचारों में से एक विचार शान्ति बनाये रखने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का विचार था। किन्तु इसका उस समय केवल जन्म हो रहा था और इसने घटनाओं के क्रम पर बहुत कम प्रभाव डाला। एक अन्य विचार इस युग की अधिक बड़ी विशेषता थी और इसका प्रभाव कहीं अधिक शक्तिशाली था। यह विचार स्वेच्छाचारी राजतन्त्र के महत्त्व और उसकी उत्कृष्टता का विचार था। इस विचार को समाज का संरक्षण करने वाला और प्रगति का एक मात्र सुरक्षित साधन समझा जाता था। यह फ्रांस जैसे देश में एक स्वाभाविक विचार था। फ्रांस अभी हाल में ऐसे कष्टों के एक लम्बे युग से मुक्त हुआ था, जिन कष्टों से रक्षा एक सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार द्वारा ही सम्भव थी। अत: लगभग सभी स्थानों में और फ्रांस में सबसे अधिक मात्रा में शासकों की शक्ति को नियन्त्रित करने वाले परम्परागत अथवा रिवाजी प्रतिबन्धों को हटाया जा रहा था। उदाहरणार्थ, मध्यकालीन इस्टेट्स (Estates) या सामाजिक वर्ग वह शक्ति खो बैठे, जो अब तक उनके पास थी। फ्रेन्च राज्य क्रान्ति से पहले होने वाली इस्टेटस् जनरल की अन्तिम बैठक इस युग में हुई थी। यह केवल राजाओं की महत्वाकांक्षाओं का परिणाम नहीं था, यद्यपि इसने इसमें सहायता की थी। यह बात उस युग के प्रमुख राजनीतिक सिद्धान्तों के अनुकूल थी। १६वीं शताब्दी में राजनीतिक सिद्धान्तों को बनाने की बड़ी चर्चा हुई थी। इसके कुछ सिद्धान्त जनता के अथवा लोकतन्त्रीय विचारों के भी अनुकूल थे। किन्तु उस समय भी तथा इसके बाद आने वाले नवयुग में और भी अधिक मात्रा में प्रमुख राजनीतिक विचारक निरंकुश राजतन्त्र का समर्थन कर रहे थे। राजाओं की शक्ति जब नियन्त्रित की जाती थी तो ऐसा प्रतीत होता था कि इसका परिणाम अराजकता और उपद्रव होगा। जब यह शक्ति अनियन्त्रित होती थी, उस समय शान्ति और

व्यवस्था का साम्राज्य होता था। राज्यों में उत्तम व्यवस्था बनाये रखने के लिए राजतन्त्र की शक्ति दैवी विधान प्रतीत होता था और इन विचारों ने इस युग की एक विशेषता-राजाओं के दैवीय अधिकार के अर्द्धधार्मिक सिद्धान्त को समर्थन प्रदान किया।

यह उल्लेख किया जा सकता है कि धार्मिक सुधार आन्दोलन ने इस सिद्धान्त को बहुत प्रोत्साहित किया था, क्योंकि पोप और सम्राट् की निन्दित सत्ता के स्थान पर कोई स्थानापन्न सत्ता ढूंढना आवश्यक था। लूथर ने इस सिद्धान्त का प्रचार किया था कि राजाओं का यह सर्वोच्च अधिकार अथवा कर्त्तव्य है कि वे अपने प्रजाजनों के अन्तःकरणों को नियन्त्रित करें। इंग्लैण्ड के ट्यूडरवंशीय शासकों की भाँति जिन राजाओं ने अपने आपको अपने राज्य का पोप बना लिया था, उनका यह दावा करना स्वाभाविक था कि वे पोप की भाँति केवल भगवान् के प्रति उत्तरदायी हैं। स्वाभाविक रूप से, राजाओं ने उन्हें प्रसन्नता देने वाले और उस युग की राजनीतिक प्रवृत्तियों से अधिक अनुकूलता रखने वाले इस सिद्धान्त का स्वागत किया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि नीदरलैण्ड्स तथा इंग्लैण्ड के अतिरिक्त, सर्वत्र दैवी अधिकार के सिद्धान्त को व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता था। इंग्लैण्ड में भी स्वयमेव राजा के अतिरिक्त ऐसे अनेक व्यक्ति थे, जो पूरी ईमानदारी के साथ इसमें विश्वास रखते थे। लगभग अगली दो शताब्दियों में, दार्शनिकों में भी यह विचार प्रचलित था कि सामाजिक व्यवस्था की सत्ता बनाये रखने के लिए निरंकुश राजतन्त्र सर्वोच्च संरक्षक था और ऐसा प्रतीत होता था कि इस विचार के इंग्लिश लोगों द्वारा खण्डन किये जाने के बाद जो गृहयुद्ध हुआ, वह उपर्युक्त धारणा को पुष्ट करने वाला था।

२. तीस वर्षीय युद्ध

यदि फ्रांस का हेनरी चतुर्थ जीवित रहता तो सम्भवतः वह जर्मनी को धार्मिक युद्ध के खतरे से बचा लेता, अथवा इसे हैब्सबर्ग वंश के और फ्रांस की अध्यक्षता में बने एक संघ के बीच में होने वाले विशुद्ध राजनीतिक संघर्ष के रूप में परिणत कर देता। किन्तु १६१० ई० में एक धर्मान्ध कैथोलिक व्यक्ति द्वारा उसकी हत्या कर दी गयी, इसलिए युद्ध अनिवार्य हो गया; क्योंकि स्पेन को मित्र बना कर शान्ति बनाये रखने के लिए जेम्स प्रथम के सब प्रयत्न पूर्णरूप से निष्फल हो चुके थे। अन्त में १६१८ ई० में युद्ध छिड़ गया। यह तीस वर्ष तक चलने वाला एक भीषण और विध्वंसक युद्ध था। यह सार्वभौम युद्ध नहीं हुआ, किन्तु यह इसके लगभग पास तक पहुँच गया, क्योंकि किसी न किसी समय में लगभग प्रत्येक यूरोपियन राज्य इसमें सम्मिलित हुआ। इसकी समाप्ति पर सामान्य यूरोपियन समझौते की शृंखला में वह पहला समझौता करना पड़ा, जिस प्रकार का नवीनतम समझौता हमारे युग से सम्बद्ध है।

यह युद्ध हैब्सबर्ग वंश के शासन के विरुद्ध बोहिमियन अथवा चैक लोगों के विद्रोह से आरम्भ हुआ। मध्य युग में पृथक् राष्ट्र के रूप में बोहीमिया[1] का एक महान् इतिहास था,

१. एवरीमैन्स लायब्रेरी में काउण्ट लुटजोव द्वारा लिखित बोहीमिया का एक संक्षिप्त इतिहास है।

विशेष रूप से १५वी शताब्दी में ऐसी बात थी, जब धर्म सुधारक हस (Hus) के नेतृत्व में उसने कैथोलिक यूरोप की अवहेलना सफलतापूर्वक की थी। चैक लोगो ने बोहीमिया पर शासन करने के हैब्सबर्ग वंश के दावे को निर्विवाद रूप से कभी स्वीकार नही किया था। इस दावे का आधार एक ऐसा सौभाग्यशाली विवाह था जिस प्रकार के विवाहों के लिए यह परिवार प्रसिद्ध था। जब चैक लोगों को यह कहा गया कि वे गद्दी के उत्तराधिकारी के रूप में एक धर्मान्ध कैथोलिक-स्टीरिया के फर्डिनेण्ड को स्वीकार करें तो उन्होंने विद्रोह कर दिया और जर्मन प्रोटेस्टेण्टों से सहायता प्राप्त करने की आशा में उन्होने पहले पैलेटाइन के इलेक्टर फ्रेडरिक को गद्दी स्वीकार करने का निमन्त्रण दिया। इलेक्टर जेम्स प्रथम का दामाद था और इंग्लिश सहायता पाने की आशा रखता था। उसने जेम्स की सलाह माँगी, किन्तु इस सलाह को उसे दिये जाने से पहले ही उसने गद्दी को स्वीकार कर लिया। जेम्स को इस बात से कोई सहानुभूति नहीं थी, यह उसे एक प्रकार से राज्यापहरण का कार्य और सम्भावित युद्ध को जानबूझ कर जल्दी करवाना प्रतीत हो रहा था, सेना न होने के कारण इंग्लैण्ड बोहीमिया को किसी भी दशा में कोई सहायता नही दे सकता था। जर्मनी के लूथरवादी राजा भी तटस्थ बने रहे। जर्मन कैथोलिक राजाओं की सहायता से हैब्सबर्ग वंश ने ह्वाइट माउण्टेन (१६२० ई०) की लड़ाई में बोहीमिया के विरोध की कमर बड़ी जल्दी तोड़ दी और "शीतकालीन राजा" (Winter king—जैसा कि फ्रेडरिक को उस वर्ष शीत ऋतु में ही अल्पकाल तक राज्य करने के कारण कहा जाता था) को भगाने के बाद उन्होंने भीषण अत्याचार से प्रोटेस्टेण्ट मत का और यथा सम्भव राष्ट्रीय भावना का विध्वंस करना बोहीमिया में आरम्भ किया। इस अभागे देश का पुनरुज्जीवन १६वीं शताब्दी तक आरम्भ नहीं हुआ, इसे प्रथम महायुद्ध तक अपनी स्वतन्त्रता पुनः नहीं प्राप्त हुई। इस प्रकार युद्ध की पहली अथवा बोहि- मियन अवस्था समाप्त हुई।

इसके बाद आस्ट्रियन और जर्मन कैथोलिकों ने फ्रेडरिक[१] के तथा दक्षिणी जर्मनी के अन्य कैथोलिक मतानुयायी राजाओं के मूल प्रदेशों को तहस-नहस करना आरम्भ कर दिया। इस आसान काम में उन्हें नीदरलैण्ड्स से राइन नदी के साथ जाने वाली एक स्पेनिश सेना की सहायता मिली। यह इस बात को प्रदर्शित करता था कि जेम्स ने स्पेन से कैसी निरर्थक आशाएँ रखी थीं। उसने स्पेन द्वारा मध्यस्थ का कार्य लेने के अपने निरर्थक प्रयत्नों को दुगने बल से आरम्भ कर दिया। उसका बेटा और स्पेन के राजा का पूर्वनिश्चित वर-चार्ल्स और उसका प्रिय-पात्र बकिंघम विवाह की एक सन्धि द्वारा मामले का निबटारा करने की असम्भव चेष्टा करने के लिए मैड्रिड चले गये। किन्तु इसका एकमात्र परिणाम यह हुआ कि स्पेन के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध भंग हो गये और १ २४ ई० में इंग्लैण्ड और स्पेन में एक नया युद्ध छिड़ गया। इसकी एक मात्र महत्वपूर्ण घटना कैडिज (Cadiz) पर कब्जा करने का एक अव्यवस्थित प्रयास था, इसमें बड़ी अपमानजनक विफलता हुई। जेम्स ने अपने जवाँई इलेक्टर की रक्षा का कोई प्रयत्न नहीं किया, यद्यपि कुछ इंग्लिश स्वयसेवक उसके विनाश में हिस्सा बँटाने के लिए वहाँ गये थे, फ्रेडरिक तथा उसकी इंग्लिश पत्नी एलिजाबेथ अपनी राजधानी हाइडलबर्ग से भगाये जाने

---

१. जर्मनी के नक्शे के लिए देखिये एटलस के पाँचवे संस्करण की प्लेट संख्या २३, (बी०) छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४६, ४७।

के बाद अपने समूचे शेष जीवन में भटकते रहे। उनके लड़के राजकुमार रूपर्ट और मारिस अन्त में इंग्लैण्ड आये, यहाँ पर रूपर्ट ने गृह-युद्ध में तथा चार्ल्स द्वितीय के राज्य काल में बड़ा महत्वपूर्ण भाग लिया।

फ्रेडरिक पर तथा दक्षिण जर्मनी के प्रोटेस्टेण्टों पर विजय कैथोलिक पार्टी के लिए एक बड़ी विजय थी। वे जर्मन प्रोटेस्टेण्ट मत के पूर्ण विध्वंस का अवसर अपनी आँखों के सामने देख रहे थे। इस स्थिति से बचने का एक मात्र मौका यही प्रतीत होता था कि इंग्लैण्ड को और यदि सम्भव हो तो फ्रांस को या तो सीधा हस्तक्षेप करना चाहिए अथवा उन्हें जर्मनी पर आक्रमण करने के लिए उत्तर की शक्तियों में से किसी एक को या अधिक शक्तियों को प्रेरित करना चाहिए तथा उन्हें ऐसा करने के लिए साधन प्रस्तुत करना चाहिए।

सौभाग्यवश इसी समय फ्रांस में महान राजनीतिज्ञ कार्डिनल रिशेल्यू[१] सत्तारूढ़ हुआ। वह फ्रेंच राजतन्त्र की शक्ति का प्रमुख निर्माता और हेनरी चतुर्थ की नीति को जारी रखने वाला था। यद्यपि वह कार्डिनल था, तथापि उसे कैथोलिक मत की एक सम्भव विजय को प्राप्त करने की अपेक्षा हैब्सबर्ग वंश को नियन्त्रित करके अपनी शक्ति बढ़ाने की अधिक चिन्ता थी। इंग्लिश पक्ष की ओर से जेम्स ने वैदेशिक मामलों का नियन्त्रण व्यावहारिक रूप से बकिंघम के ड्यूक के तथा उस राजकुमार चार्ल्स के हाथों में छोड़ दिया था, जो शीघ्र ही राजगद्दी पर बैठा (१६२५ ई०)। चार्ल्स और बकिंघम पैलेटिनेट के राज्य को पुनः प्राप्त करने के लिए, जर्मन प्रोटेस्टेण्ट मत की रक्षा करने के लिए और इंग्लैण्ड में लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए उत्सुक थे। उन्होंने फ्रांस के साथ सन्धि की और इसे चार्ल्स के साथ फ्रेंच राजकुमारी हेनरियेट्टा मेरिया के विवाह से पुष्ट किया। किन्तु यह उस बड़े गुट का एक हिस्सा मात्र था, जिस गुट में डच, वेनिस और डेनमार्क सम्मिलित हुए। डेनमार्क ने प्रोटेस्टेण्टों की सहायता के लिए जर्मनी में एक फौज भेजना स्वीकार किया। इसके व्यय का कुछ हिस्सा इंग्लैण्ड की आर्थिक सहायता से दिया जाना था और नीदरलैण्ड्स में से अथवा फ्रांस में से होते हुए एक इंग्लिश सेना भी भेजी जानी थी।

यह एक महान गुट था और यदि इसे पूर्ण रूप से क्रियात्मक रूप दिया जाता तो यह उस परिस्थिति की रक्षा कर लेता। किन्तु एक बड़ी कठिनाई यह थी कि चार्ल्स के पास अपने वचनों को पूरा करने के लिए धन नहीं था, क्योंकि उसकी पार्लियामेण्ट प्रोटेस्टेण्ट उद्देश्यों के लिए अपना उत्साह रखने के बावजूद भी, उसके लिए कोई धन देने को तैयार नहीं थी। निस्सन्देह, ऊलजलूल तरीके से एकत्र की गयी पंचमेल सेना इंग्लिश चैनल के पार भेजी गयी; इसके एकत्र करने में तथा ठहराने में इंग्लैण्ड में अनन्त कठिनाइयाँ उत्पन्न हुईं। यह सेना कुछ भी सफलता प्राप्त किये बिना, बीमारी और बुरे संगठन के कारण समाप्त हो गयी। डेनमार्क के राजा ने अपनी प्रतिज्ञात आर्थिक सहायता का एक भी पैसा कभी प्राप्त नहीं किया। लट्टर में उसकी सेना बुरी तरह से हरा दी गयी (१६२६ ई०) और उत्तरी तथा दक्षिणी जर्मनी हैब्सबर्ग वंश के अधिकार में आ गया।

---

१. सर आर० लॉज ने 'विदेशी राजनीतिज्ञों की ग्रन्थमाला में रिशेल्यू की एक जीवनी लिखी है।

फ्रांस ने कुछ भी नहीं किया, इसका मुख्य कारण यह था कि ह्यूगनाट दल के कुलीन सरदारों के झगड़ों ने रिशेल्यू के प्रयत्नों का ध्यान बँटा दिया था। चार्ल्स ने यह वचन देने की मूर्खता की थी कि वह लारॉशेल के प्रोटेस्टेण्ट दुर्ग को जीतने में फ्रेन्च लोगों की सहायता के लिए अपने जहाज उधार देगा, अनिवार्य रूप से इंग्लैण्ड में प्यूरिटन लोगों में रोष एवं समुद्री बेड़े में एक विद्रोह उत्पन्न हुआ। शीघ्र ही चार्ल्स रिशेल्यू के साथ झगड़ पड़ा और स्पेन से लड़ाई के साथ-साथ फ्रांस के साथ भी एक मूर्खतापूर्ण युद्ध हो गया। इसकी एक मात्र महत्त्वपूर्ण घटना बिस्के की खाड़ी में रे के टापू के विरुद्ध बकिंघम के ड्यूक के नेतृत्व में किया गया एक विफल तथा भीषण विपत्तिजनक अभियान था। इस मूर्खतापूर्ण कार्य का उद्देश्य इंग्लैण्ड में लोक-प्रियता को पुन. प्राप्त करना था। इसका परिणाम यह हुआ कि इंग्लैण्ड अथवा फ्रांस के लिए जर्मनी में कोई प्रभावशाली हस्तक्षेप करना असम्भव हो गया। भूलों और विश्वासघातों की इस अपमानपूर्ण शृंखला के बाद, चार्ल्स ने युद्ध में भाग लेने का अगला प्रयास नहीं किया। वह कर्ज में बुरी तरह डूबा हुआ था। उसने पार्लियामेण्ट के साथ बड़ा झगड़ा किया था और वह उस स्रोत से धन नहीं प्राप्त कर सकता था। उसने यह संकल्प कर लिया था कि वह पार्लियामैण्ट के बिना शासन करेगा, इसके लिए अत्यधिक मितव्यय और विदेशों में किये जाने वाले युद्धों से बचना आवश्यक था। इस प्रकार अगले अध्यायों का विषय बनने वाले पार्लियामैण्ट के संघर्ष का प्रभाव यूरोप के युद्ध पर हुआ। जर्मनी में प्रोटेस्टेण्ट धर्म को संकटावस्था में ही छोड़ दिया गया। अपने राजा के वचनों के अविवेकपूर्ण ओछेपन से और इन वचनों को पूरा करने की पूर्ण विफलता से इंग्लैण्ड का अपमान हुआ; तथा पार्लियामैण्ट के विरोधी दल को झगड़ा करने का अन्य कारण मिल गया।

तीस वर्षीय युद्ध के शेष भाग ने ब्रिटिश द्वीपसमूह पर सीधा प्रभाव नहीं डाला; किन्तु यूरोप के इतिहास में इसका प्रभाव इतना अधिक है कि उसका सारांश, भले ही वह नीरस हो, अवश्य दिया जाना चाहिए।

डेनिश हस्तक्षेप की पूर्ण पराजय का परिणाम समूचे जर्मनी को कैथोलिक पार्टी के हाथ में दे देना था। लूथर मतानुयायी राजा असहाय थे। कैथोलिकों ने यह माँग की थी कि पिछले ७० वर्षों में प्रोटेस्टेण्टों द्वारा ली गयी चर्च की सब जमीनों को पुन: वापिस कर दिया जाय (१६२९ ई०)। हैब्सबर्ग सम्राट् फर्डिनेण्ड ने जर्मनी की अधिनायकता को अपनी पकड़ में इस तरह से देखा, जैसी पकड़ चार्ल्स पंचम की भी जर्मनी पर कभी नहीं रही थी। महान् साहसिक योद्धा वालेन्स्टाइन ने लूट से निर्वाह करने वाले और कैथोलिक पक्ष की ओर से भाड़े पर लड़ने वाले सैनिकों की एक सेना एकत्र की, जिसका बाल्टिक समुद्र तटों पर भी अधिकार था। किन्तु इससे इस संघर्ष में उस युग का सबसे बड़ा योद्धा स्वीडन का राजा गुस्टावस एडोल्फस[१] आ गया। वह यह देखना नहीं चाहता था कि जिस स्वीडिश शक्ति का वह बाल्टिक सागर पर निर्माण कर रहा था, उसको ऐसे खतरनाक प्रतिस्पर्द्धी से खतरा हो।

---

१. 'राष्ट्रों के वीरों की पुस्तकमाला' में सी० आर० एल० फ्लेचर द्वारा लिखित गुस्टावस एडोल्फस की एक जीवनी है।

वह एक कट्टर प्रोटेस्टेण्ट भी था। फ्रेंच आर्थिक सहायता का समर्थन पा कर तथा कैथोलिक राजाओं में भी फ्रेन्च कूटनीतिज्ञों द्वारा उत्पन्न किये गये हैब्सबर्ग वंश से उत्पन्न होने वाले भय से सहायता पा कर, उसने जर्मनी पर आक्रमण किया (१६३० ई०), एक यशस्वी युद्ध में कुछ समय तक ब्रीटनफेल्ड (१६३१ ई०) और लुटजन (१६३२ ई०) की लड़ाइयों में उसने कैथोलिकों की शक्ति तोड़ दी। दुर्भाग्यवश इन लड़ाइयों में से दूसरी लड़ाई में वह दिवंगत हुआ, किन्तु उसने प्रोटेस्टेण्ट मत के लिए उत्तरी जर्मनी को बचा लिया और हैब्सबर्ग राजमुकुट के नीचे जर्मन लोगों की एकता के अवसर को नष्ट कर दिया। जर्मनी में प्रोटेस्टेण्ट मत और रोमन कैथोलिक मत का आपेक्षिक विस्तार बहुत कुछ अब तक वैसा ही है, जैसा उसने इसे छोड़ा था। जहाँ तक लड़ाई के मूल कारण का सम्बन्ध था, युद्ध तब समाप्त हो जाना चाहिए था।

फिर भी, यह अगले १६ वर्ष तक चलता रहा। इस दयनीय युद्ध के सबसे अन्तिम और लम्बे दौर में, अभागा जर्मनी महत्वाकांक्षी शक्तियों की रणभूमि बन गया, विशेषत: स्वीडन और फ्रांस की (जो १६३३ ई० में इस संघर्ष में सम्मिलित हुआ) और सम्पत्ति की आकांक्षा रखने वाले उन सिपाहियों की युद्धभूमि बना, जो पूर्णरूप से लूट पर गुजारा करने वाली सेनाओं का नेतृत्व करते थे। इस युग की एक बड़ी विशेषता यह है कि ह्यूगनाट विद्रोहियों की पराजय से स्वदेश में, अन्त में उपद्रवों से मुक्त होने पर, फ्रांस ने इस अवसर का उपयोग जर्मनी और स्पेन के प्रदेशों को लेते हुए अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए किया। १६४८ ई० में जर्मनी में युद्ध समाप्त हो गया[१] फिर भी फ्रांस और स्पेन में अगले ११ वर्षों तक युद्ध चलता रहा। इसे फ्रांस में उस समय होने वाले एक विध्वंसक गृहयुद्ध से प्रोत्साहन मिला।

यूरोप द्वारा अब तक देखे गये सब से अधिक भद्दे और पाशविक इस भीषण युद्ध का परिणाम जर्मनी का लगभग पूर्ण विनाश था। जर्मनी एक घनी आबादी वाला और उद्योग-प्रधान देश था, और उसका व्यापार यूरोप में सब से अधिक समृद्ध था। इस युद्ध से उसकी आधी आबादी नष्ट हो गयी। युद्ध के विध्वंस ने उसकी अधिकांश सम्पति नष्ट कर दी। वह पहले ही विभक्त था, अब उसकी फूट अन्तिम तौर से पक्की बना दी गयी, क्योंकि वेस्टफेलिया की सन्धि (१६४८ ई०) के द्वारा इसे यूरोप की संरक्षकता में रख दिया गया। इसके नाममात्र के स्वामी हैब्सबर्ग वंश के सम्राटों ने इसके बाद अपनी सत्ता को वास्तविकता में परिणत करने में कोई प्रयत्न नहीं किया; किन्तु वे दक्षिण-पूर्व में अपने प्रदेशों का विस्तार करने में लगे रहे। यद्यपि वहाँ अब भी शाही दरबार और परिषदें थीं और नाममात्र की एक शाही सेना थी, तथापि इनका कोई महत्व नहीं था। अधिक सौभाग्यशाली, दूसरे देश राष्ट्रीय दृष्टि से संयुक्त होते हुए जर्मन प्रदेश के कई खण्डों पर स्वामित्व रखते थे, जब कि जर्मनी अनेक राज्यों में बंटा हुआ था। फ्रांस ने आल्सेस का अधिकांश भाग प्राप्त कर लिया था

१. वेस्टफेलिया की शान्ति सन्धि के यूरोप के नक्शे के लिए देखिये एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ९ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५५।

और लोरेन में भी उसका प्रबल पंजा गड़ा हुआ था। ये दोनों प्रदेश पुराने जर्मन राज्य के भाग थे। स्वीडन का स्वामित्व पोमेरेनिया पर था और वह एल्ब के मुहाने का नियन्त्रण कर रहा था। जर्मनी के तीन सौ छोटे राज्यों में केवल दो या तीन राज्य ही यूरोपियन मामलों में कुछ महत्व रखते थे। इनमें से एक ब्रैण्डनबर्ग का एलेक्टोरेट था, जिसे बाद में प्रशिया का राज्य बनना था, इसका महत्व बढ़ रहा था और युद्ध के परिणामस्वरूप इसने कुछ लाभ प्राप्त किये थे।[1] किन्तु इस समय तक कोई भी व्यक्ति यह भविष्यवाणी नहीं कर सकता था कि यह भविष्य में कितना बड़ा भाग लेने वाला है। यूरोप के तथा पश्चिमी सभ्यता के जीवन में एक घटक-तत्व के रूप में जर्मनी को नक्शे से लगभग मिटा दिया गया। स्पेन भी स्पष्ट रूप से दूसरे दर्जे की शक्ति हो गया, यद्यपि उसके पास अब भी उसके लगभग सभी प्रदेश थे। किन्तु दो शक्तियाँ इस युद्ध में से प्रथम कोटि की शक्ति बन कर निकलीं। इनमें से एक स्वीडन थी। इसने ऐसी सैनिक भव्यता के संक्षिप्त युग में प्रवेश किया, जो इसके साधनों के लिए बहुत अधिक थी। दूसरी शक्ति फ्रांस थी; यद्यपि १६४८ ई० के गृहयुद्ध से कुछ समय के लिए उसकी महत्ता धूमिल पड़ गयी थी, फिर भी फ्रांस स्पष्ट रूप से यूरोप की सबसे बड़ी शक्ति बन गया और यह अपने आश्चर्यजनक इतिहास के एक भव्यतम युग में प्रवेश करने वाला था।

जब ये भद्दी, किन्तु अत्यधिक महत्वपूर्ण घटनाएँ यूरोप में हो रही थीं, उस समय ब्रिटिश टापू अपने ही मामलों में इतने अधिक व्यस्त थे कि वे इन घटनाओं की ओर कोई गम्भीर ध्यान नहीं दे सकते थे, क्योंकि वे पहले धार्मिक और राजनीतिक विवाद में और फिर गृहयुद्धों में संलग्न थे।

फिर भी, कई बातों में तीस वर्षीय युद्ध ने ब्रिटिश टापुओं के घटनाचक्र पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाला। पहली बात यह थी कि जब लड़ाई चल रही थी, उस समय कोई भी यूरोपियन शक्ति इंग्लैण्ड की घरेलू लड़ाई में हस्तक्षेप करने की स्थिति में नहीं थी। दूसरी बात यह थी कि स्काट के "Legend of Montrose" में वर्णित ड्यूगल्ड डलगेट्टी जैसे अनेक स्काच और अनेक इंग्लिश व्यक्ति इन लम्बे युद्धों में गुस्टावस, वालेन्स्टाइन अथवा अन्य नेताओं की सेनाओं में वेतनभोगी सैनिकों या स्वयंसेवकों के रूप में भर्ती हुए। वे जब स्वदेश लौटे तो वे उस समय तक यूरोप के सबसे अधिक विशाल क्रियात्मक शिक्षणालय में युद्ध की कला सीख चुके थे और उन्होंने गृहयुद्धों में एक या दूसरे पक्ष को अपना सीखा हुआ चातुर्य प्रदान किया था। तीसरी बात यह थी कि डचों के अपवाद के अतिरिक्त यूरोपियन राज्य, विशेषतः फ्रांस उस संघर्ष में इतने अधिक संलग्न थे कि वे गैर यूरोपियन जगत् की ओर बहुत ध्यान नहीं दे सके थे। इस युग में इंग्लिश उपनिवेशों का शान्तिपूर्ण विकास बहुत कुछ इस बात के कारण हुआ। निश्चित रूप से तीस वर्षीय युद्ध के कारण ही ऐसा हुआ। न तो इस समय और न ही कई

---

१. प्रशिया के विकास के मानचित्र के लिये देखिये एटलस का पाँचवाँ संस्करण प्लेट २४ (ए), छठा संस्करण प्लेट ६७ (ए)।

अगली पीढ़ियों तक जर्मनी के साथ उपनिवेशीकरण में और समुद्र पार के देशों के व्यापार में कोई प्रतिस्पर्धा हुई ।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

A Lively general sketch of European history in this period is to be found in **Walkeman,** Ascendency of France; See also **Abbott,** Expansion of Europe; **Reddaway,** History of Europe 1610-1715; **Gardiner,** Thirty years. War (Epochs of Modern History) is an admirable short sketch; the standard book on the subject is **Gindely,** Thirty Years war (Eng. Trans.) Lord Acton has a lecture on the Thirty years' war in his Lectures on Modern History. For the ideas of absolute monarchy, **J. N. Figgs,** Divine Right of Kings; **Davies,** Early Stuarts.

• •

२

प्रथम उपनिवेश और भारत के साथ व्यापार का आरम्भ

१. समुद्र पार के व्यापार में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा

सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में एक ऐसा आन्दोलन शुरू हुआ जो अन्त में यूरोप के लिए तथा दुनियाँ के लिए तीस वर्षीय युद्ध की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ। उत्तरी यूरोप के समुद्र-तट पर बसे हुए लोगों ने स्पेन एवं पुर्तगाल के एकाधिकार की समाप्ति पर और समुद्रों के सब देशों के लिए समान रूप से खुल जाने का लाभ उठाते हुए गैर-यूरोपियन देशों में आगे बढ़ने का, अपने व्यापार और प्रभाव को भूमण्डल के चारों ओर विस्तीर्ण करने का और खाली जमीनों में अपनी सभ्यता के नये केन्द्र स्थापित करने का कार्य आरम्भ किया।[१] इन साहसिक कार्यों के प्राथमिक उद्देश्य आर्थिक थे। उत्तरी यूरोप के राष्ट्र स्पेन और पुर्तगाल की सम्पत्ति के स्रोतों का लाभ उठाना चाहते थे। वे इस बात के इच्छुक थे कि उष्ण कटिबन्धों से प्राप्त होने वाली विलास-वस्तुओं तक उनकी सीधी पहुँच हो सके। इन वस्तुओं में से गरम मसालों द्वारा खाद्यसामग्री के शीत ऋतु के भण्डारों को अधिक स्वादिष्ट बनाया जाता था और ये लगभग आवश्यक वस्तुएँ हो गयी थीं, खाँड और तम्बाकू जैसी वस्तुएँ भी तेजी से ऐसी ही बन रही थीं।

---

१. इस युग के यूरोपियन शान्ति समझौते का एक सामान्य मानचित्र एटलस के पांचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४८ में तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४६ में है।

वे यह भी चाहते थे कि मछली, इमारती लकड़ी अथवा कोलतार जसी उष्ण कटिबन्धों के विभिन्न स्थानों पर उत्पन्न होने वाली वस्तुएँ उन्हें अधिक प्रचुर मात्रा में मिलती रहें; ये वस्तुएँ उन्हें अपने आप में बड़ी कठिनाई से पर्याप्त मात्रा में मिलती थीं। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य उद्देश्य भी थे; अपनी अधिक जनसंख्या के लिए नवीन निवास-स्थानों को प्राप्त करने की इच्छा थी, यद्यपि यह अभी बहुत प्रबल उद्देश्य नहीं था, केवल प्रदेश प्राप्त करने की अधिक गँवारू इच्छा भी महत्व रखती थी और पहले युग के लम्बे संघर्ष से विकसित हुई साहसिक भावना के निकास के लिए भी कोई कार्य-क्षेत्र होना आवश्यक था। इन उद्देश्यों में उस धार्मिक विवाद को भी सम्मिलित करना चाहिए, जो शरणार्थियों को दूसरे देशों में शरण लेने के लिए बाधित कर रहा था। इन सब से हमें इस समय आरम्भ होने वाले, व्यापक क्षेत्र और विभिन्न स्वरूप रखने वाले आन्दोलन का स्वरूप समझ में आ जाता है।

समुद्र पार के देशों में इंग्लिश लोगों के साहसिक कार्य यद्यपि अन्त में सबसे अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुए, तथापि वे एकाकी नहीं थे और न ही इस युग में सबसे अधिक उल्लेखनीय थे। इन आन्दोलनों में जिन देशों की जनताओं ने प्रमुख भाग लिया, वे अपने महत्व के क्रम से इस प्रकार हैं—पहले डच, इसके बाद इंग्लिश लोग और इसके एक काफी बड़े मध्यान्तर के बाद फ्रेंच लोग। डेन तथा स्वीड लोगों द्वारा इसमें लिये गये हिस्से आपेक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण नही थे। हमारा मुख्य विषय इंग्लैण्ड की उपलब्धि का वर्णन करना है। किन्तु यह भी देखना महत्वपूर्ण है कि इंग्लिश लोगों के शेष लोगों के साथ क्या सम्बन्ध थे। इसका कुछ कारण तो यह है कि यह इसके उस विशिष्ट स्वरूप को स्पष्ट करता है, जो भविष्य में अधिक महत्व रखने वाला हुआ और इसका कुछ कारण यह भी है कि अन्य देशों द्वारा खोजे और बसाये जाने वाले कुछ प्रदेश भी ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का सदस्य बनने वाले थे।

प्रथम दृष्टि में, यह समझना बड़ा कठिन है कि एक छोटे, निर्धन तथा कठिन अग्नि-परीक्षा में से होकर गुजरने वाले डच राष्ट्र ने किस कारण से उस विलक्षण उत्कर्ष को प्राप्त किया, जो उसे इस युग में समुद्र पार के व्यापार और उपनिवेश में मिला। इसका एक महत्वपूर्ण कारण यह था कि यद्यपि इंग्लैण्ड ने स्पेन के साथ १६०४ ई० में सन्धि कर ली थी, तथापि डच १६४८ ई० तक उसके साथ युद्ध कर रहे थे। इंग्लिश सरकार स्पेन के साथ मित्रता बढ़ाने पर तुली हुई थी, अतः वह स्पेन के अथवा पुर्तगाल के प्रदेशों पर सीधे हमले की अनुमति नही दे सकती थी, भले ही इसके प्रजाजन ऐसे हमले करने की कितनी अधिक इच्छा क्यों न रखते हों। दूसरी ओर डच सरकार का लक्ष्य अपने शत्रु पर प्रत्येक सम्भव प्रहार करना था। इस युग में डचों के साहसिक कार्यों को नियन्त्रित करने वाली दो बड़ी व्यापारिक कम्पनियाँ—हिन्द पूर्वी द्वीप समूह की कम्पनी तथा पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह की कम्पनी—मुख्य रूप से इसी उद्देश्य से बनायी गयी थीं और क्रियात्मक रूप से उन्होंने अपने बीच में समूचे कार्य-क्षेत्र को विभक्त कर लिया था। ये राष्ट्रीय संगठन थे, इन्हें निरन्तर राज्य से सहायता और समर्थन मिलता रहता था और वे एक सामान्य उद्देश्य के लिए इन क्षेत्रों में सभी वैयक्तिक प्रयत्नों को संगठित करने का लक्ष्य रखते थे। इससे

सादृश्य रखने वाली इंग्लिश कम्पनियाँ संख्या में अधिक निर्बल और अपने उद्देश्यों में अधिक विभक्त थीं और उन्हें कभी ऐसा राष्ट्रीय स्वरूप नहीं प्राप्त हुआ। सरकार द्वारा उनके प्रोत्साहन और सहायता की अपेक्षा उनका नियन्त्रण और नियमन अधिक किया जाता था। इसके अतिरिक्त, डच लोगों के लिए विदेशी व्यापार से राष्ट्रीय सम्पत्ति और शक्ति का विकास करना सबसे बड़ा राष्ट्रीय हित था, जब कि इस समूचे युग में जैसा कि हम देखेंगे इंग्लिश लोग मुख्य रूप से धार्मिक और राजनीतिक समस्याओं में उलझे हुए थे और फ्रेंच लोगों का ध्यान आन्तरिक मतभेदों से तथा यूरोप में उत्कर्ष पाने के लिए उनकी बढ़ती हुई महत्वाकांक्षाओं से बँटा हुआ था।

इस महान् आन्दोलन में भाग लेने वाले सब राष्ट्र बहुत कुछ एक ही ढंग से आगे बढ़े। उन्होंने अपने सारे साहसिक कार्यों को सरकार के नियन्त्रण में नहीं रखा, जैसा कि स्पेन और पुर्तगाल ने किया था और जिसके परिणाम बड़े दुःखपूर्ण हुए थे। उन्होंने अधिकार-पत्र-(चार्टर) प्राप्त कम्पनियों का संगठन किया, इसमें राज्य की देख-भाल में वैयक्तिक व्यापारियों के समूह आपस में सम्बद्ध होते थे और इन्हें अपने देश के तथा राजकीय आज्ञा-पत्रों में निर्दिष्ट देशों के बीच में व्यापार के एकाधिकार की सुविधा दे कर प्रोत्साहित किया जाता था। आरम्भ में ये कम्पनियाँ संयुक्त-पूँजी वाली कम्पनियाँ नहीं थीं; उनके पास तुलनात्मक दृष्टि से एक छोटी सामान्य निधि होती थी। इससे व्यापारिक अड्डों और किलों को बना कर रखा जाता था, जब कि इनके सदस्य अकेली समुद्री यात्रा में अथवा समुद्री यात्राओं की एक श्रृंखला में पृथक् रूप से रुपया लगाते थे। किन्तु डच कम्पनियाँ आरम्भ से ही इतने बड़े पैमाने पर संगठित की गयीं और उनका सरकार के साथ इतना घनिष्ठ सम्बन्ध था कि उन्हें मुश्किल से ही निजी कम्पनियाँ कहा जा सकता है, जब कि फ्रेंच कम्पनियाँ अपनी प्रथम अवस्था में इतनी विफल हुईं कि शीघ्र ही सरकार को उन्हें अपने नियन्त्रण में लेना पड़ा। उन्होंने इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उस समय तक कोई अधिक काम नहीं किया, जब तक कि वे लगभग सरकारी विभागों के रूप में परिणत नहीं हो गयीं। दूसरी ओर इंग्लिश कम्पनियाँ—न केवल १६०० ई० में एलिजाबेथ द्वारा स्थापित की गयी ईस्ट इण्डिया कम्पनी, अपितु १६०६ ई० की दि वर्जिनिया कम्पनी और इस प्रकार की अन्य कम्पनियों की एक समूची श्रृंखला—आरम्भ से ही वास्तविक वैयक्तिक संगठन थे। ये इनका निर्माण करने वाले व्यापारियों द्वारा वास्तव में चलाये जाते थे, यद्यपि सरकार इनकी देख-भाल करती रहती थी। आरम्भ में ऐसा प्रतीत होता था कि सरकारी सहायता के अभाव में उन्हें हानि उठानी पड़ेगी। अन्त में यह उनकी सफलता का रहस्य बना। संगठित और सहयोगी निजी प्रयास ने लगभग सरकारी सहायता के बिना ही, इंग्लैण्ड के विदेशी व्यापार का निर्माण किया और इंग्लिश बस्तियों की स्थापना की और इसी कारण इंग्लिश लोगों के परीक्षण अन्य देशो के परीक्षणों की अपेक्षा कहीं अधिक वैविध्यपूर्ण थे और नियमों से कहीं कम बँधे हुए थे।

२. पूर्व में यूरोपीय जातियों के व्यापार के साहसिक प्रयत्न; ईस्ट इण्डिया कम्पनी

जिस क्षेत्र की ओर सबसे पहले और सबसे अधिक उत्सुकता के साथ व्यापार के

साहसिक कार्यों द्वारा ध्यान दिया गया था, वह क्षेत्र सुदूर पूर्व का था। यहाँ अब तक पुर्तगालियों की पूरी तूती बोलती थी; पूर्वी व्यापार की दो प्रधान शाखाएँ थीं—भारत महाद्वीप के साथ व्यापार तथा मलाया द्वीप समूह के साथ व्यापार, विशेषत: इसके केन्द्र में स्थित समृद्ध और छोटे आकार वाले मसाले के टापुओं के साथ व्यापार।[1] पूर्वी व्यापार की अन्य शाखाएँ ईरान के साथ, जापान के साथ और चीन के साथ व्यापार था, इसकी महत्ता बहुत कम थी। इन दोनों में मसाले का व्यापार कहीं अधिक लाभदायक था। कई बार एक ही समुद्री यात्रा में १२ सौ प्रतिशत तक का लाभ होता था, क्योंकि यहाँ सभ्यता की पिछड़ी दशा में रहने वाले द्वीपों के अनेक ऐसे सरदार थे, जिन्हें पुर्तगालियों ने आंशिक रूप से जीत लिया था, अत: यहाँ यह सम्भव था कि राजनीतिक नियन्त्रण द्वारा व्यापार के एकाधिकार को बलपूर्वक लागू किया जा सके, जैसा कि भारत में सम्भव नहीं था।

इस क्षेत्र में, आरम्भ में, डच और इंग्लिश घनिष्ठ साथी के रूप में प्रविष्ट हुए, किन्तु इनकी मैत्री देर तक नहीं बनी रही। डचों को कई बड़े लाभ थे। पहला लाभ यह था कि वे पुर्तगालियों पर हमला करने के लिए स्वतन्त्र थे, जैसा करने के लिए १६०४ ई० के इंग्लिश लोग स्वतन्त्र नहीं रहे। दूसरा लाभ यह था कि उनके पास बहुत बड़ी पूँजी थी। वे सेनाएँ इकट्ठी कर सकते थे; कोठियाँ अथवा फैक्टरियाँ बना सकते थे, किलों की स्थापना कर सकते थे और इनमें सेनाएँ रख सकते थे। स्वाभाविक रूप से उन्हें यह नहीं समझ आता था कि अँग्रेज उनके द्वारा किये जाने वाले व्यय से लाभ क्यों उठायें, अत: शीघ्र ही आरम्भिक साझीदारी लगभग खुली शत्रुता में बदल गयी। जेम्स प्रथम ने १६१६ ई० में एक समझौता करने का प्रयत्न किया। किन्तु यह निरर्थक था। निकोलस कूर्थोप चिरकाल तक वीरतापूर्वक पुलरून के उस टापू में डटा रहा, जिस पर इंग्लिश लोग दावा करते थे। किन्तु डच लोग लोग बहुत शक्तिशाली थे। १६२३ ई० में उन्होंने (पूर्ण रूप से डच नियन्त्रण में) विद्यमान अम्बोयना के टापू में इंग्लिश व्यापारियों के एक समूह को षड्यन्त्र के निराधार आरोप में गिरफ्तार किया, उनसे जबर्दस्ती अपराध स्वीकार कराने के लिए उन्हें बड़ी यातनाएँ दी और १८ व्यक्तियों में से १२ को मौत के घाट उतार दिया। अम्बोयना के हत्याकाण्ड के नाम से प्रसिद्ध इस घटना ने मसाले के द्वीपसमूह में और मलाया द्वीप के अधिकांश भाग में ब्रिटिश व्यापार को लगभग समाप्त कर दिया, डच यहाँ राजनीतिक तथा व्यापारिक दृष्टि से सर्वोच्च बने रहे, जैसा कि वे अब तक बने हुए हैं। किन्तु यह घटना एक ऐसी लम्बी प्रतिस्पर्धा का चरमोत्कर्ष था, जिसमें इंग्लिश लोगों को काफी नुकसान उठाना पड़ा। इस घटना ने इस प्रतिस्पर्धा को निरन्तर ताजा बनाये रखा। अत: इसने स्पेन के दो शत्रुओं की मित्रता खतम कर दिया और इस शताब्दी के मध्य में होने वाले डच युद्धों के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया।

---

१. एटलस के पांचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४६ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४८ और ४६ के नक्शे देखिए।

डच लोगों ने सुदूरपूर्व में सर्वोच्च शक्ति बन जाने के बाद आश्चर्यजनक शक्ति और सफलता के साथ अपने अवसरों का विकास किया। जापान के साथ व्यापार पर उनका नियन्त्रण था। उन्होंने मलाया प्रायद्वीप से दक्षिण के समुद्रों का अन्वेषण किया और १६०५ ई० और १६५० ई० के बीच में उनके महान् अन्वेषकों और सबसे बड़े अन्वेषक तस्मान[१] ने १६४२-४४ ई० में आस्ट्रेलिया के महाद्वीप का और उन टापुओं का पता लगाया, जो अब तक न्यूजीलैण्ड का डच नाम धारण करते हैं। वे इन टापुओं में नहीं बसे, यद्यपि वे टापू यूरोपियन उपनिवेशकों के लिए बहुत उपयुक्त थे, क्योंकि उनका उद्देश्य उपनिवेशीकरण नहीं, किन्तु व्यापार था। इस शताब्दी में बाद में (१६५१ ई०), उन्होंने उत्तमाशान्तरीप (Cape of Good Hope) में एक बस्ती बसायी, जिसका भविष्य बहुत उज्ज्वल था। किन्तु उनका इरादा इसे बस्ती के रूप में रखने का नहीं था। यह उनके लिए केवल ऐसा स्थान था, जहाँ जहाजों को पुनः ठीक किया जा सके और भारत की ओर जाते हुए ताजी सब्जियाँ जहाजों में भरी जा सकें। इसी कारण यह डच ईस्ट इण्डिया कम्पनी के नियन्त्रण में रहा, जो यहाँ बसने वालों को स्वशासन के सभी अधिकार देने से इन्कार करती रही।

मसाले के द्वीपों से भगाये जाने पर, इंग्लिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अपना ध्यान भारत के उस महाद्वीप में लगाना पड़ा, जहाँ वस्तुतः पहले कई समुद्री यात्राओं के लिए जहाज भेजे जा चुके थे और जहाँ अम्बोयना के हत्याकाण्ड के समय उसके पास पहले से ही कई कोठियाँ थीं। यहाँ भी डच प्रबल प्रतिस्पर्धी थे और श्रीलंका के टापू में डचों ने शनैः-शनैः लगभग पूर्ण एकाधिकार प्राप्त कर लिया था। किन्तु मुख्य भूमि पर से उन्होंने अँग्रेजों को कभी बाहर नहीं खदेड़ा, वस्तुतः भारत में यूरोप के व्यापार करने वाले सभी देशों की कोठियाँ थीं और अभी तक उनमें से किसी ने भारत में राजनीतिक शक्ति स्थापित करने का सपना लेना शुरू नहीं किया था।

जब पुर्तगाली पहली बार एक शताब्दी पहले भारत आये तो उन्होंने इसे अव्यवस्था की दशा में पाया, इसने उन्हें भारत के समुद्रतट पर कुछ क्षेत्रों को जीतने में और इनका स्वामी बनने में समर्थ बनाया। किन्तु उसी समय एक उच्च रीति से संगठित, सभ्य तथा महान् शक्ति ने समूचे उत्तरी भारत पर अपनी प्रत्यक्ष सत्ता स्थापित की, यद्यपि दक्षिणी भारत अब भी कई छोटे राज्यों में बँटा हुआ था।[२] यह शक्ति मुगल साम्राज्य था। हेनरी अष्टम के समय में भारत के उत्तर पश्चिम से आने वाले एक आक्रान्ता बाबर द्वारा स्थापित यह साम्राज्य महान् एवं बुद्धिमान् अकबर के समय में सुदृढ़ बनाया गया और अपनी शक्ति के उच्चतम शिखर पर पहुँचा दिया गया। अकबर रानी एलिज़ाबेथ के समय में आगरा से गंगा

---

१. उसके अन्वेषणों के नक्शे के लिए देखिये एटलस का पाँचवाँ संस्करण प्लेट संख्या ६८ तथा छठा संस्करण प्लेट संख्या ४६।

२. इस युग के भारत के मानचित्र के लिए देखिये एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट सं० ५६ (ए), छठे संस्करण की प्लेट सं० ३० (ए)।

और सिन्धु नदी के समूचे मैदान पर शासन कर रहा था। उसके उत्तराधिकारी जहाँगीर और शाहजहाँ का वही युग है, जिसके साथ इस समय हमारा सम्बन्ध है। इन बादशाहों के समय में मुगल साम्राज्य का वैभव, विशेषत: कला और वास्तुकला के क्षेत्र में अपने चरम शिखर पर पहुँच गया। चार्ल्स प्रथम का समकालीन शाहजहाँ आगरा में ताजमहल के और मोती मसजिद के तथा दिल्ली में संगमरमर के सुन्दर महलों के रूप में विश्व की कुछ भव्यतम और सुन्दरतम इमारतों का निर्माण कर रहा था। इस प्रकार की शक्ति की उपस्थिति में यूरोप के साहसी व्यापारियों को अपना कार्य करना था। जेम्स प्रथम ने १६१५ ई० में जहाँगीर के दरबार में एक राजदूत सर टामस रो को समुचित शिष्टता के साथ यह प्रार्थना करने के लिए भेजा कि इंग्लिश लोगों को व्यापार करने के विशेषाधिकार प्रदान किये जायँ। महान् मुगल सम्राट् ने पहले यह उत्तर दिया कि पुर्तगाली यूरोपियन व्यापार का नियन्त्रण कर रहे हैं, चूँकि भारत के पास कोई समुद्री शक्ति नहीं है, अत: वह स्पष्ट रूप से हस्तक्षेप नहीं करना चाहता था। किन्तु जब पुर्तगाली निरन्तर आग्रह करने वाले तथा दखल देने वाले इंग्लिश लोगों को दूर भगाने में विफल हुए तो मुगल सम्राट् ने शीघ्र ही नवागन्तुकों को अपनी कोठियाँ स्थापित करने की अनुमति दे दी। इन्हें अपना व्यापार करते हुए निस्सन्देह इस देश के कानूनों और शासकों के प्रति समुचित सम्मान प्रदर्शित करना पड़ता था।

इस प्रकार इंग्लिश लोगों को भारत में स्वतन्त्रतापूर्वक व्यापार कर सकने से पहले पुर्तगाल के विरोध पर विजय पानी पड़ी। यद्यपि उन्हें पुर्तगालियों पर हमला करने की अनुमति नहीं थी (क्योंकि १६०४ ई० में शान्ति-सन्धि की जा चुकी थी) तथापि वे पुर्तगालियों के इस अधिकार को स्वीकार नहीं करते थे कि वे उन्हें भारत के व्यापार से बाहर निकाल सकते हैं। पुर्तगालियों द्वारा हमला किये जाने पर वे अपनी रक्षा करने के लिए उद्यत थे। पुर्तगा-गालियों के साथ संघर्ष—१६२२ ई० से पहले के १० वर्षों में उस समय चरम शिखर पर पहुँच गया, जब कि सुदूर पूर्व में डच लोगों के साथ भी संघर्ष चल रहा था। इसके बाद पुर्तगालियों ने इंग्लिश लोगों को स्वतन्त्र छोड़ दिया और दोनों राष्ट्र डचों के विरुद्ध सहयोग भी करने लगे। १६१२ ई० में कप्तान थामस बैस्ट को ईस्ट इण्डिया कम्पनी के केवल दो व्यापारिक जहाजों के साथ और १६१४ ई० में कप्तान निकोलस डौन्टन को केवल चार जहाजों के साथ पुर्तगालियों की प्रबल नौसेनाओं द्वारा किये गये उग्र आक्रमणों का प्रतिरोध सूरत के नगर के निकट करना पड़ा। सूरत पश्चिमी तट पर उत्तरी भारत के व्यापार के लिए मुख्य बन्दरगाह था और पुर्तगाली इस पर तुले हुए थे कि वे अँग्रेजों को यहाँ से बाहर निकाल देंगे। दोनों युद्धों में अँग्रेजों को कीर्ति बढ़ाने वाली आश्चर्यजनक विजयें प्राप्त हुईं। इन विजयों से इंग्लिश लोगों की प्रतिष्ठा बढ़ गयी और सर टामस रो की अनुनयपूर्ण प्रार्थनाओं को इसने इतने उपयोगी रूप से समर्थन प्रदान किया कि १६१६ ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी को सूरत में एक कोठी खोलने की अनुमति दी गयी। इंग्लिश लोगों की प्रतिष्ठा उस समय और अधिक बढ़ गयी, जब स्थानीय सुलतान की प्रार्थना पर इंग्लिश व्यापा-

रियों ने १६२२ ई० में पुर्तगालियों को ओरमुज़ से बाहर भगा दिया। यह ईरान की खाड़ी के मुहाने पर एक सुदृढ़ स्थान था और अल्बूकर्क के समय से इस पर पुर्तगालियों का अधिकार था।

भारत के समुद्र तट पर इंग्लिश लोगों का पहला सुरक्षित स्थान—सूरत की कोठी—केवल किराये पर लिया एक मकान था। यह मकान एक केन्द्रीय आँगन वाला और चारों ओर से घेरने वाली चहारदीवारी अथवा बगीचे वाला चतुष्कोण स्थान था। इसकी उपरली मंजिल में कोठी का अध्यक्ष और उसके सहायक रहते थे, निचले हिस्से का प्रयोग गोदाम के रूप में किया जाता था, जिसमें जहाजों के आने तक इंग्लैण्ड भेजे जाने वाले माल को शनैः-शनैः जमा किया जाता था और जहाजों द्वारा लाया गया माल, भारतीय व्यापारियों को बोली बोल कर बेचा जाता था। चिरकाल तक सूरत भारत में इंग्लिश व्यापार का प्रधान केन्द्र बना रहा था। इसके अतिरिक्त इस युग में कुछ अन्य केन्द्र भी स्थापित किये गये। १६३२ ई० में डच लोगों के साथ कुछ वर्षों तक उग्र प्रतिस्पर्धा के बाद, पूर्वी तट पर मछलीपट्टम में एक कोठी शुरू की गयी। अगले वर्ष हुगली नदी के मुहाने पर एक मामूली कोठी का आरम्भ किया गया। यह बंगाल के साथ इंग्लिश सम्बन्ध की शुरूआत थी और १६५० ई० में हुगली के नगर में इस नदी पर अधिक ऊपर की ओर स्थायी कोठी स्थापित की गयी। इस बीच में १६३६ ई० में एक स्थानीय राजा ने दक्षिण पश्चिमी तट पर कम्पनी को एक भूमि खरीदने की और इस पर न केवल एक कोठी, अपितु एक किला बनाने की अनुमति दे दी। इसे फोर्ट सैण्ट जार्ज का नाम दिया गया तथा यह मद्रास नगर के रूप में विकसित हुआ। इस प्रकार इंग्लिश लोग यद्यपि अभी तक केवल मामूली व्यापारी थे तो भी वे तीन ऐसे केन्द्रों—पश्चिमी तट, मद्रास और बंगाल में जम गये, जहाँ से उनका प्रभाव भारत पर विस्तीर्ण होना था।

इन कोठियों की तथा देश के ऊपरी भाग में माल इकट्ठा करने वाले इन कोठियों के आधीन स्थानों की व्यवस्था करने लिए कम्पनी जिन एजेण्टों या कार्यकर्ताओं को भेजती थी, उन्हें लगभग नाम मात्र के वेतन दिए जाते थे। ये वेतन किसी भी अँग्रेज को अपने घरों से इतनी दूरी पर निर्वाह करने के लिए बहुत कम थे। इसका कुछ कारण यह था कि कम्पनी के साधन बहुत कम थे। किन्तु इससे भी अच्छा एक और भी कारण था। एजेण्टों को इस समझौते के साथ नियुक्त किया जाता था कि वे अपने वेतनों को अपनी ओर से स्थानीय व्यापार करके बढ़ा लेंगे, जहाजों के आने जाने के लम्बे मध्यान्तरों में उन्हें ऐसा करने का बहुत समय होता था। जब इन व्यापारियों को राजनीतिक शक्ति मिल गयी तो इस प्रथा के भीषण परिणाम हुए। किन्तु जब तक वे शक्तिशाली भारतीय सरकारों के नियन्त्रण में रहे, तब तक इस प्रथा ने किसी को कोई हानि नहीं पहुँचायी। वस्तुतः यह प्रथा किसी भी तरह ऊपर से देखने में प्रत्येक सम्बद्ध व्यक्ति के लिए लाभकर थी। इसने वैयक्तिक साहस के कार्यों को प्रोत्साहित किया, एक सामान्य उद्देश्य की सेवा के लिए इसका सहयोग प्राप्त किया। यहाँ पुनः वैयक्तिक साहसपूर्ण कार्य इंग्लिश लोगों की एक विशेषता थी, इस विशेषता में अपने गुण और दोष दोनों विद्यमान थे। पश्चिम के ब्रिटिश द्वीप समूह के

साथ भारत के प्राचीन राज्य के मध्य में महत्वपूर्ण सम्बन्ध की ये मामूली शुरुआतें थीं। कम्पनी को अपने जीवन के पहले ५० वर्षों में कुछ घाटे उठाने पड़े, कई बार यह संकट में भी पड़ी, किन्तु इंग्लैण्ड में पार्लियामेण्ट के संघर्ष के समूचे युग में भारतीय व्यापार निरन्तर बढ़ रहा था और देश को लगातार समृद्ध बना रहा था। यह भारत को भी समृद्ध बना रहा था, क्योंकि वस्तुओं का पारस्परिक विनिमय दोनों पक्षों के लिए लाभदायक था।

३. पश्चिम में उपनिवेश बसाने के कार्य : कनाडा, वर्जिनिया और न्यू इंग्लैण्ड

इस युग में पश्चिम तथा पूर्व में, डचों का आधिपत्य बहुत प्रबल प्रतीत होता था। उनकी शक्तिशाली और प्रबल रूप से समर्थन प्राप्त वैस्ट इण्डीज कम्पनी (१६२१ ई० में स्थापित) उत्तरी तथा दक्षिणी अटलाण्टिक महासागर के डचों के सब कार्य कलापों का नियन्त्रण करती थी[१]। उन्होंने गिआना में व्यापारिक बस्तियाँ स्थापित कीं, अन्य टापुओं के साथ उन्होंने कुरसौ के टापू पर भी अधिकार कर लिया। इस टापू से स्पेनिश समुद्र के साथ एक लाभदायक तस्कर व्यापार किया जा सकता था। वे पश्चिमी अफ्रीका से दासों को लाते थे; उनके जहाज इन सभी समुद्रों में छाये हुए थे, वे इंग्लिश तथा फ्रेंच बस्तियों के भी व्यापार के बड़े भाग का परिवहन करते थे। सब से बढ़ कर तो यह बात थी कि उन्होंने ब्राज़ील के समृद्ध पुर्तगाली प्रदेश पर प्रबल आक्रमण किया और इसके एक बड़े हिस्से को तीस वर्ष तक अपने कब्जे में रखा (१६२४-५४ ई०)। किन्तु उनका लक्ष्य सदैव व्यापार था, न कि बस्ती बसाना, यद्यपि उन्होंने १६२४-२६ ई० में न्यू नीदरलैण्ड्स[२] के नाम से हडसन नदी के मुहाने पर एक बस्ती बसायी। यह उत्तरी अमेरिका के पूर्वी तट पर व्यापार के लिए सर्वोत्तम केन्द्र था, जैसा कि न्यूयार्क के परवर्ती विकास ने प्रदर्शित किया है, किन्तु इसका मुख्य उद्देश्य रेड इण्डियन लोगों के साथ समुद्र के व्यापार को करना था। यहाँ बसने वालों की संख्या चिरकाल तक बहुत कम थी और केपबस्ती (Cape-colony) के निवासियों की भाँति इन्हें स्वशासन के अधिकार कभी नहीं दिये गये।

इस बीच में फ्रेंच और इंग्लिश लोग उत्तरी अमेरिका में ऐसे साहसपूर्ण कार्यों में लगे हुए थे, जो यद्यपि इस समय डच लोगों के कार्यों की अपेक्षा कहीं कम मात्रा में भास्वर और लाभदायक थे, तथापि इन से अधिक बड़े परिणाम उत्पन्न होने वाले थे।

दोनों जातियों की महत्वकांक्षा का प्रथम उद्देश्य पश्चिमी हिन्द-द्वीपसमूह तथा स्पेनिश महासागर का लाभदायक व्यापार था[३]। यहाँ पहले युग की जंगली और कानून-

---

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५३ तथा ५८ (१) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४८ (बी) और ५० के नक्शे देखिये।

२. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५४ (सी) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५२ (बी) के नक्शे देखिये।

३. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५२ (ए) और (बी) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५० (ए) तथा (बी) के नक्शे देखिये।

रहित परम्पराओं का स्वाभाविक रूप में एक बड़ा प्रभाव था और फ्रेंच एवं इंग्लिश लोगों की तथा अनेक डच लोगों की भी अधिकांश क्रियाशीलता केवल समुद्री डकैती में ही लगी रहती थी। अगली दो शताब्दियों तक पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह के समुद्रों में समुद्री डाकू या बटमार (Pirates) चक्कर काटते रहे। ये अपना प्रधान स्थान उन बहुसंख्यक टापुओं पर बनाते थे, जिन्हें स्पेन के लोगों ने बगैर कब्जे के ही छोड़ दिया था, इनमें से टोरटुगा का टापू उल्लेखनीय है। यह मध्य अमेरिका से यूरोप जाने वाले जहाजों के द्वारा अनुसरण किये जाने वाले एक मार्ग का नियन्त्रण करता था। समुद्री डाकू इस समय बक्कानियर्स (Buccaneers) के नाम से प्रसिद्ध थे, यह शब्द फ्रेंच के Boucanes से निकला है और इसका अर्थ लकड़ी से जलाई जाने वाली उन अग्नियों से है, जिस पर वे अपने मांस के भण्डारों को सुखाते थे। ये जलदस्यु फ्रीबूटर (Freebooter) के नाम से भी प्रसिद्ध हैं, यह शब्द डच भाषा के Vliebooten से बना है और इसका अर्थ वे तेज चलने वाली किश्तियाँ थीं, जो शान्तिपूर्ण नौचालकों के लिए आतंकप्रद थीं।

समुद्री डकैती के साथ-साथ वस्ती बसाने का भी कार्य, विशेष रूप से इंग्लिश लोगों द्वारा उन छोटे टापुओं में चल रहा था, जिनकी स्पेनवासियों ने उपेक्षा की थी। फ्रेंच लोगों ने सेण्ट क्रिस्टोफर के छोटे टापू को १६२८ ई० में अपने इंग्लिश साथियों के साथ सामंजस्य-पूर्ण रीति से बाँट लिया था, मार्टीनीक और गुआडेलौप (१६३५ ई०) के सुन्दर टापुओं पर उन्होंने अधिकार कर लिया था; किन्तु पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह में फ्रेंच क्रियाशीलता का महान् युग अगले युग तक नहीं आया। इंग्लिश लोगों ने पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह के टापुओं में कहीं अधिक उत्साह के साथ बस्तियाँ बसाना शुरू कर दिया। विशेषतः यह कार्य उस समय किया गया जब इन्हें यह पता लगा कि इन टापुओं की जमीनें तम्बाकू, खाँड और रूई पैदा कर सकती हैं। स्वदेश में इन वस्तुओं का मूल्य बहुत अधिक मिलता था। सरकार यद्यपि स्पेन के साथ शान्ति बनाये रखना चाहती थी, तथापि उसने अनधिकृत प्रदेशों से इंग्लिश लोगों के बहिष्कृत किये जाने का अधिकार कभी स्वीकार नही किया। उसने इस आन्दोलन का समर्थन इन टापुओं में बस्तियाँ बसाने के प्रयोजन से स्थापित की गयी अनेक छोटी कम्पनियों को चार्टर प्रदान करके किया। इस युग के सबसे महत्वपूर्ण इंग्लिश टापुओं में से बारबेडोज टापू १६२४ ई० में बसाया गया। इसने लगभग आरम्भ से ही महान् समृद्धि का उपभोग किया था। किन्तु छोटे लीवर्ड टापुओं में भी बस्तियाँ बसीं थी, जैसे सेण्ट क्रिस्टोफर (१६२२ ई०) में, नेविस (१६२८ ई०) में, बरबूडा (१६२८ ई०) में, एण्टीगुआ (१६३२ ई०):में और माण्टसेरेंट (१६३२ ई०) में। होण्डुरास में भी एक बस्ती थी (१६३८ ई०) तथा दक्षिण अमेरिका के समुद्र-तट पर बस्तियाँ बसाने के कुछ निष्फल प्रयत्न हुए। सर वाल्टर रेले द्वारा (१६१७ ई०) में एक ऐसा प्रयत्न संगठित किया गया, जिसका लक्ष्य मुख्य रूप से एल्डोरेडो की पौराणिक दन्तकथाओं में प्रसिद्ध सोने की खानों को प्राप्त करना था, जिस कारण से एलिज़ाबेथ के युग के जीवित बचे रहने वाले इस व्यक्ति का वध हुआ।

इंग्लिश लोगों की पश्चिमी हिन्द द्वीप-समूह की बस्तियों में एक ऐसी उल्लेखनीय विशेषता थी, जो उसे अन्य देशों की बस्तियों से पृथक् करती थी। बस्ती बसाने वाले अपने साथ स्थानीय स्वशासन की उन आदतों को ले गये थे, जो स्वदेश में शताब्दियों की प्रथा के कारण उनमें पूरी तरह जमी हुई थी और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने लगभग सभी स्थानों में स्थानीय मामलों की व्यवस्था में भाग लेने के लिए निर्वाचित संस्थाओं को स्थापित किया। हम यह नहीं जानते कि बारबेडोज में एक प्रतिनिध्यात्मक संस्था पहली बार कब स्थापित की गयी, किन्तु १६५२ ई० में बारबेडोजवासियों ने यह कहा कि एक राज्यपाल, एक परिषद् और एक असेम्बली द्वारा शासन यहाँ की प्राचीन और सामान्य परिपाटी है; और इस बात के कई अन्य उदाहरण भी हैं। स्थानीय स्वशासन आरम्भ से ही इंग्लिश बस्तियों की एक विशेषता थी, यह दासों द्वारा काम लिये जाने वाले पश्चिमी हिन्द द्वीप-समूह के उन टापुओं में भी थी, जिन्हें सदैव स्पेनिश आक्रमणों का भय निरन्तर बना रहता था।

किन्तु इस युग के मनुष्यों ने सब से बड़ा काम उत्तरी अमेरिका की मुख्य भूमि पर किया। यह ऐसा काम था, जिसने सब से बड़े परिणाम उत्पन्न किए। यहाँ इंग्लिश और फ्रेंच लोगों ने इसमें मुख्य भाग लिया, इन दोनों ने लगभग बिलकुल एक ही समय में खाली प्रदेशों में बस्तियाँ बसाने का कार्य आरम्भ किया। दोनों का कार्य हमारे लिए समान महत्त्व रखता है; क्योंकि जब एक ओर इंग्लिश बस्तियों को इंग्लिश उपनिवेशीकरण की मुख्य विशेषताओं को निश्चित करना था और अन्त में शक्तिशाली अमेरिकन गणराज्य में विकसित होना था, वहाँ दूसरी ओर लम्बे संघर्षों के बाद फ्रेंच बस्तियों को ब्रिटिश शासन में चला जाना था और ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का हिस्सा बनना था।

फ्रेंच लोग उसी समय से इस भूमि को विशेष रूप से अपना समझते थे, जब से कार्टियर ने (१५३४-३६ ई०) यहाँ बड़े साहसपूर्ण अन्वेषण किये थे और सेण्ट लारेन्स के चौड़े मुहाने को ढूंढा था। उसने इस आशा में इस नदी का अनुसरण किया था कि उसने उत्तर पश्चिमी मार्ग को ढूँढ लिया है। वह इसमें माण्ट्रील तक चला गया था और उसने अपने द्वारा ढूँढ़े हुए इस देश को कनाडा[1] का नाम दिया था। फ्रेंच लोगों ने इसमें बस्ती बसाने के कई निरर्थक प्रयत्न किए। किन्तु १६०३ ई० में महान् अन्वेषक सेमुअल चेम्पलेन को सम्मिलित करने वाले एक अभियान दल ने कार्टियर की खोजों को पुनः नया बनाया और अगले साल अकेडिया (नोवास्कोशिया) के पोर्ट रायल में एक नयी बस्ती बसाई गयी। १६०८ ई० में चेम्पलेन एक अन्य अभियान दल के साथ लौटा और उसने क्वेबक में सेण्ट-लारेन्स नदी के सामने एक ऊँची चट्टान पर एक व्यापारिक बस्ती बसायी।

---

१. कनाडा शब्द 'कन्नाटा' से बना है, यह रेड इण्डियन भाषा में झोपड़ियों के समूह का वाचक है। कार्टियर जहाँ समुद्र तट से उतरा था, उस स्थान का नाम उसे यही बताया गया था, उसने यह कल्पना की कि यह देश का नाम है।

चेम्पलेन का कार्य मुख्य रूप से देश का पता लगाना और नक्शा बनाना था।[1] १६०६ ई० में उसने दक्षिण में उस सुन्दर झील का अन्वेषण किया जिसका नाम अब भी उस के नाम पर है; किन्तु उस समुद्र-यात्रा के कारण उसे इरोकुओई की भीषण रेड इण्डियन जातियों के साथ संघर्ष में आना पड़ा। ये जातियाँ वर्तमान न्यूयार्क राज्य के उत्तरी भाग में रहती थी। इसके बाद से ये फ्रेंच लोगों की कट्टर शत्रु बन गयी। १६१३-१५ ई० में चेम्पलेन ओटावा की ओर ऊपर की तरफ गया, उसका रास्ता ऐसे मार्गहीन जंगलो में से हो कर जाता था, जिनमें इधर-उधर बिखरी हुई रेड इण्डियन जातियाँ निवास करती थी। इसके बाद वह निपिसिंग झील से हूरोन झील तक और आण्टेरियो झील के पूर्वी किनारे तक पहुँचा। यहाँ पुनः वह इरोकुओई लोगों के साथ संघर्ष में आया। अब वह इनकी मूल निवास भूमि तक पहुँच गया था। उत्तरी अमेरिका के आरम्भिक इतिहास में यह एक अन्वेषण का अधिकतम साहसपूर्ण कार्य था, वह इंग्लिश लोगों की किसी भी इस प्रकार की उपलब्धि से बहुत आगे बढ़ा हुआ था। इसने आरम्भ में ही उस रोमांचक साहस को उत्पन्न किया, जो फ्रेंच कनाडा के समूचे इतिहास की विशेषता बनने वाला था।

यद्यपि आरम्भ से ही समूर का एक मूल्यवान् व्यापार शुरू हो गया तथापि जंगलों और भीषण जंगलियों के इस अनाकर्षक प्रदेश में चिरकाल तक बहुत कम फ्रेंच बसे। राजकीय संरक्षण में १६२७ ई० में स्थापित एक नयी कम्पनी ने प्रव्रजन को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया। किन्तु क्वेबक के निकट नदी के तट के साथ-साथ बस्तियों की केवल एक विरल पट्टी थी, यहाँ छोटे-छोटे प्रदेश थे, जहाँ प्रवासी भद्रजन खेती करने वाले अपने मुट्ठी-भर आसामियों के संरक्षण के लिए लकड़ियों के किलेबन्द बाड़े बनाये रखते थे। बहुत थोड़े से बसने वाले अपने को खेती की अपेक्षा अधिक साहसपूर्ण और लाभदायक कार्यों में—जंगलों में समूरधारी जानवरों के पकड़ने में और रेड इण्डियनों के साथ व्यापार करने में अपने को व्यस्त रखते थे। इस युग के उदात्ततम वीरतापूर्ण कार्य उन जेसुइट मिशनरियों के थे, जो वन्य बर्बर जातियों में बहुत दूर अन्दर चले जाते थे और उन्हें ईसाइयत का अनुयायी बनाने के लिए उनके बीच में बस जाते थे। उन्हें हूरोन झील के पूर्वी तटों पर बसी हुई तुलनात्मक रीति से शान्तिप्रिय हूरोन नामक जन-जाति में बड़ी सफलता मिली।

किन्तु इस शिशु बस्ती को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। पहली बात तो यह थी कि इसे इरोकुओई लोगों की निष्ठुर शत्रुता का खतरा था। यह रेड इण्डियन जनजातियों में सबसे अधिक उत्तम रीति से संगठित और अधिकतम योद्धा जाति थी। इसने आग्नेय अस्त्रों का प्रयोग सीख कर अपने को और भी अधिक भयंकर बना लिया था। इन अस्त्रों को यह जाति हडसन नदी पर आने वाले डच व्यापारियों से खरीदती थी। इरोकुओई लोगों ने मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने वाले हूरोन लोगों का समूलोन्मूलन कर दिया और इन्होंने बड़ी वीभत्स यातनाओं के साथ ऐसे कई मिशनरियों को मारा, जिन्होंने इन यात-

---

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५४ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ४२ का नक्शा देखिये।

नाओं को वीरतापूर्वक सहा। उन्होंने नवीन बस्ती के पड़ोस की सब जातियों पर स्वामित्व स्थापित किया, इन बस्तियों पर प्रतिवर्ष आक्रमण किया और फ्रेंच कनाडा में बसने वाला प्रत्येक व्यक्ति सदैव इरोकुओई लोगों द्वारा लड़ाई के समय लगाये जाने वाले नारों (War-whoop) से आतंकित रहने लगा। १६४२ ई० में जब फ्रेंच लोगों ने माण्ट्रील में एक नयी बस्ती बसायी, तो यह कई बार विध्वंस से बाल-बाल बची, १६६० ई० में यह केवल १७ फ्रेंच वीरों की अमर वीरता से ही बचायी जा सकी। उन्होंने अपने प्राण संकट में डाल कर भारी कठिनाइयों के होते हुए ओटावा नदी पर लांगसाल्ट में लकड़ी के खम्भों की एक पंक्ति से सुरक्षित बनाये गये घेरे की रक्षा की। यह बीस वर्ष के इरोकुओई आतंक की समाप्ति थी। बस्ती बसाने वालों को अँग्रेजों के विरोध का भी सामना करना पड़ा; चार्ल्स प्रथम के फ्रांस के साथ मूर्खतापूर्ण युद्ध छिड़ने पर एक इंग्लिश बेड़े ने क्वेबक पर घेरा डाल दिया। १६२९ ई० से १६३२ ई० तक यह बस्ती इंग्लिश लोगों के अधिकार में रही और इसके बाद इसे वापस कर दिया गया। यह लम्बे संघर्ष का आरम्भ था। इन सब कठिनाइयों के होते हुए भी, यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि फ्रेंच कनाडा ने बहुत कम उन्नति की और इस युग की समाप्ति पर उसकी तुलना अधिक दक्षिण में बसी हुई इंग्लिश बस्तियों के साथ संख्या में और सम्पत्ति में नहीं की जा सकती। किन्तु इसने साहस और दिलेरी की एक आश्चर्यजनक परम्परा स्थापित की। इस पर रोमाञ्चकता का एक आवरण है और अब अच्छे दिन जल्दी ही आने वाले थे।

इस बीच में दक्षिण में इंग्लिश लोग एक बड़े अव्यवस्थित और अनियन्त्रित ढंग से ऐसी बस्तियों को बसा रहे थे, जैसी बस्तियाँ अब तक किसी यूरोपियन जाति ने नहीं बसायी थीं।

१६०६ ई० में सर वाल्टर रेले की दो पुरानी योजनाओं को अधिक सफलता के साथ पुनः आरम्भ करने की आशा के साथ, दो वर्जिनिया कम्पनियों की स्थापना शाही चार्टरों के साथ इसलिए की गई कि वे उत्तरी अक्षांश की ४१वीं डिग्री के उत्तर और दक्षिण में क्रमशः बस्तियों को बसायें। प्लिमथ कम्पनी के नाम से प्रसिद्ध होने वाली उत्तरी कम्पनी ने कभी कोई महत्वपूर्ण बात नहीं की, किन्तु दक्षिणी कम्पनी ने लन्दन के अनेक व्यापारियों और सार्वजनिक व्यक्तियों का समर्थन प्राप्त करके ऐसे प्रवासियों का एक दल भेजा, जो १६ अप्रैल १६०७ ई० चेसापीक खाड़ी के दक्षिणी बिन्दु की भूमि पर पहुँचा और १३ मई को उन्होंने इसे राजा की स्मृति में जेम्सटाउन का नाम प्रदान किया। अमेरिका के महाद्वीप पर यह पहली स्थायी इंग्लिश बस्ती थी।

नयी बस्ती को अपने पहले वर्षों में बड़ा कष्टपूर्ण समय बिताना पड़ा। प्रवासी लोगों को जब सोना नहीं मिला तो वे बेचैन और निराश हो गये। इनमें मृत्यु संख्या बहुत अधिक थी। बुद्धिमत्तापूर्वक व्यवहार न किये जाने पर रेड इण्डियन विरोधी बन गये और यह बस्ती सम्भवतः एक रोमांचक साहसी कप्तान जॉन स्मिथ के पौरुष से ही विनष्ट होने से बचायी जा सकी। किन्तु १६१२ ई० के लगभग से इस बस्ती की आर्थिक दशा उन्नत होने लगी।

बस्ती बसाने वाले लोग ऐसे समृद्ध और उपजाऊ देश में उतरे थे, जहाँ यातायात को नौकाएँ चलाने योग्य जलमार्गों के एक जाल से सुगम बना दिया गया। उन्होंने शीघ्र ही यह जान लिया कि यह भूमि तम्बाकू पैदा करने के लिए बहुत उपयुक्त है। यह उस आरम्भिक समय में उनकी मुख्य पैदावार हो गया और इसका प्रयोग धन के स्थान में भी होता था। यद्यपि लोक प्रचलित धारणा (राजा जेम्स ने स्वयमेव एक ग्रन्थ में इस धारणा की व्याख्या की है) के अनुसार तम्बाकू पीना एक गन्दी और अनैतिक आदत समझी जाती थी, तथापि यह आनन्द देने वाली बुराई यूरोप में तेजी से फैल गयी और वर्जिनिया वैस्ट इण्डीज की भाँति लाभ उठाने लगा। नयी बस्ती मुख्य रूप से देहात के उस भद्रजन वर्ग के इंग्लिश लोगों को भूमि के अनुदान प्रदान करके बसायी गयी थी, जो अपने पिताओं के असामियों के लड़कों को खेती करने के लिए लाये थे। निर्धन श्रेणियों के स्वतन्त्र प्रवासी तुलनात्मक दृष्टि से बहुत कम थे, क्योंकि उस समय अमेरिका पहुँचने का किराया लगभग २० पौण्ड था। यह हमारी मुद्रा के कम-से-कम १०० पौण्ड के बराबर है। जो व्यक्ति मुख्य रूप से यहाँ आये, वे शर्तबन्द अथवा प्रतिज्ञापत्र से बँधे हुए थे अर्थात् इन्होंने अपने मार्ग-व्यय को पूरा करने के लिए कुछ वर्षों के लिए अपनी सेवाओं को बेच दिया था। यहाँ अपराधी तथा अन्य अवांछित व्यक्ति भी भेजे जाते थे। ये बाधित श्रम करते हुए अपनी सजा की अवधि पूरी करने के बाद ऐसे वर्ग में चले जाते थे जो अधम श्वेतांग (Mean Whites) जातियों के नाम से प्रसिद्ध था, क्योंकि तम्बाकू की खेती सबसे सस्ते रूप में दासों के श्रम से की जा सकती थी, अतः शीघ्र ही नीग्रो लोगों का आयात किया जाने लगा (१६२० ई०), यद्यपि उनकी संख्या इस युग में बहुत थोड़ी बनी रही। वर्जिनिया पहले से ही एक कुलीन ऐसी बस्ती का रूप धारण कर रहा था, जहाँ प्रमुख नागरिक विशाल गृहों में रहने वाले और खेती करने वाले थे और अपने पर आश्रित व्यक्तियों तथा अनुयायियों से घिरे रहते थे।

पहली इंग्लिश बस्ती के मामलों की व्यवस्था करने की समस्या के कारण कुछ रोचक परीक्षण हुए। आरम्भ में इसका नियन्त्रण राजकीय परिषद् द्वारा नियन्त्रित की जाने वाली एक कम्पनी को दिया गया। फिर भी, १६१९ ई० में कम्पनी के राज्यपाल ने एक प्रतिनिधि सभा बुलायी। इसमें प्रत्येक बागान से दो सदस्य तथा प्रत्येक जिले से दो सदस्य बुलाये गये। किसी व्यक्ति ने इस बात पर कोई आपत्ति नहीं की। यह एक स्वाभाविक इंग्लिश पद्धति प्रतीत होती थी और इस प्रकार पहली इंग्लिश बस्ती ने यूरोप से बाहर कभी भी बनायी गयी पहली प्रतिनिधि सभा को स्थापित होते देखा। अन्य सभी उपनिवेशों को मानों सहज बुद्धि से इस उदाहरण का अनुसरण करना था। इंग्लिश आवासकों की नस-नस में स्वशासन की भावना थी, इसका प्रभाव स्थानीय मामलों के ज्ञान को सुनिश्चित बनाना था और यह उपनिवेश की सफलता का कारण था। इस परिषद् की बैठक की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया, इसे एक स्वाभाविक वस्तु समझा गया। किन्तु ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास में यह मौलिक महत्व रखने वाली घटना थी, क्योंकि इसने इस बात की सूचना दी थी कि इसका भावी विकास किस प्रकार होने वाला है। १६२४ ई० में जब कम्पनी की प्रत्यक्ष सत्ता समाप्त कर दी गयी और राजा उपनिवेश के राज्यपाल की नियुक्ति के लिए

तथा उसके द्वारा उपनिवेशों का शासन करने वाली सरकार के लिए उत्तरदायी बन गया तो वर्जिनिया के शासन ने उस रूप को प्राप्त कर लिया जो इंग्लिश उपनिवेश पद्धति की विशेषता है। यह व्यवस्था ताज द्वारा नियन्त्रित कार्यकारिणी की तथा जनता द्वारा निर्वाचित विधान सभा की है।

जिस शान्ति के साथ इस पद्धति का जन्म हुआ, वह महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ यह है कि यह उस समय निश्चित समझ लिया गया था कि प्रवासी इंग्लिश लोग अपने साथ अपने नये घरों में अपनी विरासत में पायी स्वतन्त्रताओं को भी ले गये हैं। इनमें यह अधिकार भी सम्मिलित था कि वे जिन कानूनों के अधीन रहते हैं, उनके निर्माण में उनके प्रतिनिधियों से परामर्श लिया जाना चाहिए। यह व्यवस्था उन कानूनों के सम्बन्ध में भी थी, जो कानून इंग्लैण्ड के साम्राज्य के कानून के विषय में माने हुए सिद्धान्तों से भेद रखते थे। अब आरम्भ होने वाले महान् उपनिवेशीकरण के समूचे युग में इस सिद्धान्त को लगभग स्वयं-सिद्ध सत्य माना जाता था। इस प्रकार वर्जिनिया असेम्बली की पहली बैठक वाले ही वर्ष १६२० ई० में, एक इसी प्रकार की संस्था बरमूडाज़ में बुलायी गयी। यद्यपि १६०८ ई० में सर जार्ज सोमर्स के पोत भंग से इन टापुओं का पता लग चुका था, तथापि ये टापू पहली बार १६१२ ई० में ही बसाये गये और १६२० ई० में यहाँ बहुत ही थोड़े निवासी थे।

एक प्रवासी इंग्लिश व्यक्ति द्वारा अपने साथ स्वशासन के अधिकारों को ले जाने के तथ्य का यह आशय नहीं था कि वह उस राष्ट्रमण्डल का सदस्य नहीं रहता, जिससे वह प्रादुर्भूत हुआ है। इसके प्रतिकूल, उसकी इंग्लिश नागरिकता उसकी सब दीवानी स्वतन्त्रताओं का संरक्षण करने वाली समझी जाती थी। वह अब भी इंग्लिश कानून के आधीन रहता था और ब्रिटिश ताज की कार्यपालिका की शक्ति के अधीन था। इस युग का कोई भी प्रव्रजक या प्रवासी, यहाँ तक कि राजकीय नीति को न पसन्द करने के कारण इंग्लैण्ड छोड़ने वाला व्यक्ति भी, कभी यह नहीं चाहता था कि वह राष्ट्रमण्डल से अपना सम्बन्ध विच्छिन्न कर ले अथवा ताज के प्रति अपनी निष्ठा को समाप्त कर दे, अतः प्रत्येक उपनिवेश बसाने वाले साहसिक व्यक्ति ने, भले ही वह स्वतन्त्र क्यों न हो, इस बात का प्रयत्न किया कि वह राष्ट्रमण्डल में अपनी स्थिति को नियमित बनाने के लिए ताज से अथवा इसके अभिकर्ताओं से एक चार्टर या राजकीय आज्ञापत्र प्राप्त करे।

१६२० ई० में उपनिवेशों में साहसिक कार्यों का एक नया क्षेत्र न्यू इंग्लैण्ड के लिए एक परिषद् की स्थापना द्वारा खुल गया। यह परिषद् १६०६ ई० की अप्रभावशाली प्लिमथ कम्पनी का स्थान लेने वाली थी। इसे दोनों प्रकार का अधिकार—अपनी ओर से साहसिक कार्यों को आरम्भ करने का तथा अन्य व्यक्तियों को भूमि का दान करने का अधिकार दिया गया। इसके सबसे अधिक साहसी सदस्य, सर फर्डिनेण्डो गोर्जेस के संचालन में इस क्षेत्र में कई छोटी बस्तियाँ बसायी गयीं, बाद में ये क्षेत्र मेन, न्यूहैम्पशायर और मैसाचुसेट्स के नाम से प्रसिद्ध हुए।

इन उत्तरीय प्रदेशों में बस्ती बसाने का मुख्य कार्य न्यू इंग्लैण्ड की परिषद् की

क्रियाशीलता से नहीं हुआ, किन्तु एक नवीन शक्तिशाली कारण—धार्मिक उत्साह से हुआ। ठीक उसी वर्ष जब परिषद् की स्थापना हुई थी, तब पिलग्रिम फादर्स (Pilgrim Fathers)[१] न्यू इंग्लैण्ड के लिए जहाज द्वारा रवाना हुए, यद्यपि इन्हें इस परिषद् से कोई सहायता नहीं मिली थी।

जब यह स्पष्ट हो गया कि न तो एलिजाबेथ और न ही जेम्स प्रथम इंग्लिश चर्च का पुनर्निर्माण एक समूचे प्यूरिटन आदर्श पर किये जाने की अनुमति देगा तो उत्साही व्यक्तियों के कुछ समूह हालैण्ड की ओर प्रव्रजन करने लगे। ऐसा एक समूह १५९३ ई० में ही हालैण्ड चला गया था। १६०६ ई० में एक अन्य समूह—अपने पुरोहित की अध्यक्षता में समूचा धर्मसमुदाय—लिंकनशायर के स्क्रूबी नामक स्थान से हालैण्ड चला गया। किन्तु वे हालैण्ड में भी सुखी नहीं थे। वहाँ उनके चारों ओर बड़ी (धार्मिक) शिथिलता थी; वे डरते थे कि उनके बच्चे इंग्लिश व्यक्ति नहीं रहेंगे। अतः उन्होंने लन्दन की वर्जिनिया कम्पनी के साथ इसके प्रदेश में बसने के लिए अनुमति लेने की बात चलायी। उन्हें यह अनुमति दे दी गयी। विभिन्न दुर्घटनाओं और विलम्बों के बाद, यह छोटा धार्मिक समुदाय ऐतिहासिक पोत 'मेफ्लावर' (Mayflowers) में बैठकर प्लिमथ से रवाना हुआ (१६२० ई०)। हवायें उन्हें उष्ण वर्जिनिया की ओर न ले जा कर केप काड के बुरे समुद्र तट की ओर ले गयीं। यहाँ वे उतरे और उन्होंने पहली बस्ती को प्लिमथ[२] का नाम दिया। सौभाग्यवश पहली शीत ऋतु मृदु थी और रेड इण्डियन मित्र थे। किन्तु ऐसा होने पर भी निर्धन एवं हीन स्थिति के व्यक्तियों की कम्पनी को बड़ी मुसीबतों का सामना करना पड़ा और केवल उनकी अपनी कट्टरता के कारण तथा उनके निर्वाचित राज्यपाल विलियम ब्रेडफोर्ड की बुद्धिमता के कारण ही इस छोटी बस्ती की जड़ जम गयी। इसमें आर्थिक सहायता देने वाले लन्दन के हिस्सेदारों के हिस्से खरीद लिये गये और श्रद्धालु व्यक्तियों के इस लघु समुदाय को अपने मामलों का प्रबन्ध करने के लिए निर्बाध रूप में छोड़ दिया गया। उनके संगठन का आधार स्वाभाविक रूप से उनके चर्च का आधार था। स्वतन्त्र नागरिक चर्च के सदस्य थे और लकड़ी के लट्ठों से बने हुए उनके बाड़े के केन्द्र में खड़ा हुआ चर्च उनका किला तथा पवित्र धर्म स्थान था।

प्लिमथ की छोटी-सी बस्ती ने उस समय तक अपनी विशिष्ट सत्ता बनाये रखी, जब तक इस शताब्दी के अन्त में यह इसकी परवर्ती और बड़ी पड़ोसी बस्ती मैसाचुसैट्स में सम्मिलित नहीं हो गयी। इसकी कोई विशेष समृद्धि नहीं हुई और इसने विस्तार करने में कोई शक्ति नहीं प्रदर्शित की। इसकी निरापद या शान्त जनता को अपने पूर्ण स्वायत्त शासन

१. यह नाम उन प्यूरिटन अँग्रेजों को दिया जाता है, जो १६२० ई० में मेफ्लावर नामक जहाज में सवार हो कर अमेरिका गये थे और वहाँ उन्होंने प्लिमथ की बस्ती बसायी थी।

२. आरम्भिक न्यू इंग्लैण्ड की बस्तियों के नक्शे के लिए देखिये एटलस के पाँचवें संस्करण की ५४ (बी) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५२ (बी)।

के उपयोग के लिए छोड़ दिया गया। यद्यपि उन्होंने अपना एक 'बाइबल राष्ट्रमण्डल' बनाने के लिए इंग्लैण्ड को छोड़ा था, किन्तु वे अब भी अपने को इंग्लिश व्यक्ति और इंग्लिश ताज का प्रजाजन समझते थे, वे इंग्लिश कानून को स्वीकार करते थे और उपनिवेशों के किसी भी अन्य समुदाय की भाँति इस बात पर गर्व करते थे कि वे इंग्लिश लोगों के अधिकार का उपयोग कर रहे हैं।

किन्तु अस्पष्ट तथा नगण्य होने पर भी, पिलग्रिम फादर्स ने उपनिवेशीकरण के एक नवयुग का आरम्भ किया। उन्होंने एक ऐसा रास्ता बनाया, जिसका अनुसरण बहुत वर्ष बीतने से पहले ही आवासकों की एक उल्लेखनीय धारा ने किया। यह आवासन उन राजनीतिक और धार्मिक प्रश्नों पर संघर्ष का प्रत्यक्ष परिणाम था, जो पहली बस्तियों को बसाये जाने के समय में पहले से ही आरम्भ हो चुका था और अब हमें उस संघर्ष की ओर ध्यान देना चाहिए, जिसने समूचे राष्ट्रमण्डल के स्वरूप और विकास पर सब से गहरा प्रभाव डाला।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Abbott, Expansion of Europe; **Williamson,** Short History of British Expansion; Cambridge History of the British Empire; **Doyle,** English in America (3 Vols) is the best English book on the period; **Andrews,** Colonial period in American History; **G. L. Beer,** Origins of the British Colonial System and **Egerton,** British Colonial Policy are books of the highest value on their subjects; **W. L. Grant,** History of Canada is well written short book. **Parkman,** Pioneers of France in the new World and the Jesuits in North America are brilliant and vivid books on the early history of Canada; **Channing**, History of America (8 vols) is a condensed repository and bibliography for all the American Settlements of all Nations; **Hunter,** British India gives a spirited account of early conflicts in India; **Smith,** Oxford History of India.

• •

३

राजा और पार्लियामेण्ट का संघर्ष

(१६०३ से १६२६ ई०)

जेम्स प्रथम तथा षष्ठ १६०३ ई० : चार्ल्स प्रथम १६२५ ई०

१. संघर्ष के सामान्य कारण

स्काटलैण्ड के राजा जेम्स षष्ठ पर उसके कुलीन सरदारों और चर्च के पुरोहितों द्वारा धौंस जमायी जाती थी और उसके पास सदैव धन की कमी रहती थी, अतः जेम्स चिरकाल से सीमा के पार उस एलिज़ाबेथ की सम्पत्ति और निर्विवाद शक्ति को बड़ी ईर्ष्या के साथ देख रहा था, जिस एलिजाबेथ का वह वैध उत्तराधिकारी था। वह बुद्धिमान् और विद्वान् व्यक्ति था। उसने धर्मशास्त्र का विस्तृत अध्ययन किया था और उसे यूरोपियन राजनीति की गहरी सैद्धान्तिक समझ थी। अभिमानी, डरपोक, अपने को महत्व देने वाला, सुशील, काम न निपटा सकने वाला, अव्यावहारिक और पाण्डित्याभिमानी, वह व्यक्ति राजा की अपेक्षा प्रोफेसर के रूप में अधिक अच्छा कार्य कर सकता था। वह राजाओं के दैवीय अधिकार के सिद्धान्त से बहुत प्रभावित हुआ। जब १६०३ ई० में वह इंग्लैण्ड और आयरलैण्ड की राजगद्दियों का उत्तराधिकारी बना तो उसने आशा की कि वह उस अनियन्त्रित सत्ता का उपभोग करेगा, जो उसकी दृष्टि में एक राजा के पास अवश्य होनी चाहिए। किन्तु आरम्भ से ही उसने अपने को कई कठिनाइयों से घिरा पाया।

पहली बात यह थी कि धार्मिक दल बड़ा कष्ट दे रहे थे। एलिज़ाबेथ की भाँति जेम्स मनुष्यों को स्वतन्त्रता की एक

बड़ी मात्रा देने को तैयार था, बशर्ते कि बिशपों के माध्यम से चर्च पर राजा का नियन्त्रण निर्बल न हो और न ही उसे चुनौती दी जाय। किन्तु कैथोलिकों अथवा प्यूरिटनों में से किसी एक को खुली छूट देने का उसका कोई इरादा नहीं था। ये दोनों राजकीय सत्ता को चुनौती देने वाले प्रतीत होते थे। कैथोलिक पोप की सर्वोच्च सत्ता पर बल देते थे और प्यूरिटन चर्च की सरकार में जनता के तत्व को चाहते थे। फिर भी दोनों दल इस राज्य-काल के आरम्भ में आशा रखते थे कि एलिज़ाबेथ के शासन काल की अपेक्षा यह परिवर्तन उनके लिए अधिक अनुकूल हो सकता है।

राज्यकाल के पहले महीनों में कुछ कैथोलिक व्यक्ति राजा को पकड़ने के एक अस्पष्ट और मूर्खतापूर्ण षड्यन्त्र में सम्मिलित हुए। इसका कुछ परिणाम नहीं निकला और इसकी विफलता के बाद मुट्ठीभर निराशोन्मत्त कैथोलिकों ने ५ नवम्बर १६०५ ई० को पार्लियामेण्ट के भवनों को उड़ाने का प्रयत्न किया। इस "गन पाउडर प्लाट (Gunpowder Plot)"[१] के तथा एक तहखाने में बारूद के ढोलों से रोमांचक रूप में घिरे हुए एक मूँछ वाले उन्मत्त साहसी (गाइफाक्स नामक व्यक्ति) का पता लग जाने से एक ऐसी उत्तेजना उत्पन्न हुई, जो इसकी महत्ता के अनुपात से बहुत अधिक थी। बिलकुल अभी हाल तक छोटे बच्चे हास्यजनक रूप में नियमपूर्वक इसकी वर्षगाँठ मनाते रहे हैं। इसने कैथोलिकों के साथ कठोर व्यवहार करने की पार्लियामेण्ट की उत्कण्ठा को बढ़ा दिया। जेम्स को इस बात का श्रेय है कि उसने इसका प्रतिरोध किया, किन्तु उसके प्रतिरोध ने पार्लियामेण्ट के साथ उसकी कठिनाइयों को बढ़ा दिया।

दूसरी ओर प्यूरिटन लोगों ने एक बहुत अधिक हस्ताक्षरों वाले प्रार्थना-पत्र में यह माँग की कि इंग्लैण्ड के चर्च की परिपाटियों का संशोधन किया जाय। जेम्स इस बात में एलिज़ाबेथ से यहाँ तक आगे बढ़ गया कि उसने हैम्पटन कोर्ट में बिशपों और प्यूरिटन नेताओं का एक सम्मेलन बुलाया और स्वयं उसका सभापतित्व किया (१६०४ ई०)। किन्तु उन्हें कोई ठोस रियायत नहीं दी गयी। राजा ने यह स्पष्ट कर दिया कि उसकी दृष्टि में बिशपों की शक्ति को कुछ भी कमज़ोर बनाने से ताज की सत्ता खतरे में पड़ जायगी। उसका नारा था कि "यदि बिशप की सत्ता नहीं होगी तो राजा की भी कोई सत्ता नहीं होगी।" हैम्पटन कोर्ट के सम्मेलन का एकमात्र महत्वपूर्ण, किन्तु बड़ा निर्णय यह था कि

---

१. कुछ रोमन कैथोलिकों ने जेम्स प्रथम को लार्ड सभा एवं कामन्स सभा के सदस्यों के साथ मारने के लिए यह योजना बनाई थी कि पार्लियामेण्ट भवन के तहखानों में बारूद भरे हुए कुछ ढोल रख दिये जायँ और पार्लियामेण्ट का उद्‌घाटन करने के लिए ५ नवम्बर १६०५ ई० को जब राजा वहाँ आये तो गाइफाक्स नामक व्यक्ति द्वारा बारूद के इन ढोलों में आग लगा कर इस भवन को तथा राजा को नष्ट कर दिया जाय। इसीलिए इसे "बारूद से सम्पन्न किया जाने वाला षड्यन्त्र (Gunpowder Plot)" कहते हैं। यह इसलिए नहीं सफल हुआ कि लार्डसभा के एक कैथोलिक सदस्य को षड्यन्त्रकारियों ने उस दिन पार्लियामेण्ट में न जाने की चेतावनी दी थी और उसने यह सूचना अधिकारियों को दे दी थी।

विद्वान् पादरियों की एक समिति द्वारा बाइबिल का नया अनुवाद आरम्भ कराया जाय। इसका परिणाम १६११ ई० में प्रकाशित वह उदात्त एवं प्रामाणिक अनुवाद है, जो ब्रिटिश लोगों के चरित्र का निर्माण करने में एक बहुत बड़ा साधन रहा है। इस सम्मेलन के बाद शीघ्र ही चर्च के एक सम्मेलन ने अधिक उग्र प्यूरिटन माँगों का कोरा इन्कार करने के प्रयोजन से कुछ नियममालाओं का निर्माण किया, और इन नियमों के लागू करने पर कुछ प्यूरिटन पुरोहितों को अपनी वृत्तियों को छोड़ना पड़ा। राजा द्वारा और बिशपों द्वारा प्यूरिटन लोगों को कोई रियायत देने की अस्वीकृति पार्लियामेण्ट में शिकायत का एक और कारण बन गयी।

दूसरी बात यह थी कि जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं कि राजा की विदेश नीति का लक्ष्य स्पेन को मित्र बनाना और यूरोप में शान्ति बनाये रखना था, किन्तु इसमें सदैव अनेक कठिनाइयाँ थीं। उसने १६०४ ई० में स्पेन के साथ सन्धि कर ली, यह हम पहले देख चुके हैं। किन्तु यह एक असन्तोषजनक सन्धि थी और बातें वैसी नहीं हुई, जैसा कि वह चाहता था। एक ओर स्पेन ने उसकी नीति के वास्तविक उद्देश्य को न कभी समझा और न ही उसके साथ सहानुभूति रखी; दूसरी ओर दरबार में भी सदैव युद्ध चाहने वाला दल प्रबल था, और पार्लियामेण्ट के प्यूरिटन सदस्य सामान्य रूप से एक प्रोटेस्टेण्ट युद्ध के लिए उत्कण्ठित थे। उन्हें स्पेन के प्रति जेम्स की चापलूसी बड़ी नापसन्द थी। विदेशी नीति सदैव राजा और पार्लियामेण्ट के बीच में मतभेद का एक कारण थी। पार्लियामेण्ट का यह एक बिलकुल भ्रामक विचार था कि एलिज़ाबेथ ने प्रोटेस्टेण्ट धर्म की वीर नायिका का भाग ग्रहण किया था, जब कि वस्तुतः उसकी नीति सदैव धार्मिक उद्देश्यों से नहीं, अपितु राष्ट्रीय उद्देश्यों से पथ-प्रदर्शन पाती रही थी। अपनी ओर से राजा वैदेशिक मामलों में किसी भी आलोचना अथवा हस्तक्षेप को तीव्रता से नापसन्द करता था। वह एलिज़ाबेथ की भाँति वैदेशिक विषयों को विशेष रूप से अपना क्षेत्र समझता था।

तीसरी बात यह थी कि वकीलों के दो समूहों में तथा कानूनी अदालतों के दो प्रकारों में चिरकाल से भेद चला आ रहा था और अब यह भेद उग्र होने लगा था। स्टार-चेम्बर, चर्च के मामलों का हाई कमीशन कोर्ट और यहाँ तक कि चान्सरी की पुरानी कचहरी जैसे न्यायालय राजा और प्रिवीकौंसिल के प्रभाव में अधिक सीधे तौर से आते थे, ये न्यायालय ऐसा क्षेत्राधिकार रखते थे जिसकी मर्यादा अस्पष्ट थी और वे प्रक्रिया के ऐसे साधनों का प्रयोग करते थे, जो साधारण सामान्य कानून वाले न्यायालयों से बहुत भिन्न थे। जो वकील इन विशेष न्यायालयों में वकालत करते थे, उनका झुकाव राजकीय सर्वोच्च विशेषाधिकार पर बल देने का और यह युक्ति करने का होता था (जो ऐतिहासिक रूप से सत्य था) कि सब न्यायालय न्याय के स्रोत के रूप में राजा से प्रादुर्भूत होते हैं और वे यह मानते थे कि उसकी शक्ति चरम रूप में असीम थी। दूसरी ओर सामान्य कानून (Common law) के वकीलों का झुकाव यह दावा करने की ओर था कि वे देश के अन्तिम और मौलिक कानून मैग्नाकार्टा के संरक्षक थे[1]। वे यह भी दावा करते थे कि यह कानून

१. निश्चय से इस शब्द की यह गलत व्याख्या थी; इसके लिए ऊपर देखिये पहली पुस्तक, पाँचवाँ अध्याय, पृ० ६७।

राजा से ऊपर है और इसमें कोई भी परिवर्तन उसके द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा नहीं किया जा सकता। उनका यह भी कहना था कि इसके साथ संघर्ष में आने वाली अन्य अदालतों की कोई भी प्रक्रिया अवैध थी। इस दृष्टिकोण का महान् व्याख्याता, एक गम्भीर विद्वान् सर एडवर्ड कोक था। अपनी तर्कसंगत सीमा की अतिमात्रा तक ले जाने वाला, सामान्य कानून का यह दृष्टिकोण इंग्लैण्ड में एक अपरिवर्तनशील और अप्रगतिशील पद्धति लागू कर देता। किन्तु यह ताज पर भी कानून की सर्वोच्च सत्ता के महत्वपूर्ण सिद्धान्त को सूचित करता था। इन दोनों प्रकार के प्रतिस्पर्धी न्यायालयों में क्षेत्राधिकार विषयक झगड़े क्षुद्र मामले प्रतीत होते थे। किन्तु उनका ताज और पार्लियामेण्ट के बीच में विवाद के विकास पर बड़ा प्रभाव पड़ा। ये लोग मुख्य रूप से कानूनी पूर्वोदाहरणों या नजीरों पर ध्यान देते थे। यद्यपि बाद में एक समय तक उन्होंने बहुत ध्यान आकर्षित नहीं किया तो भी इनके पीछे बहुत कुछ बात छिपी हुई थी।

चौथी बात यह थी कि राजा एक स्काट व्यक्ति था और इसका यह अर्थ था कि उसमें इंग्लिश दृष्टिकोण के साथ उस सहज सहानुभूति का अभाव था जो हेनरी अष्टम और एलिजाबेथ जैसे विशिष्ट इंग्लिश राजाओं में पायी जाती थी। दो देशों के बीच युद्ध की तीन शताब्दियों में उत्पन्न हुई विरोधी भावनाएँ उस इंग्लिश रोष से जीवित रखी गयीं, जो राजा के इंग्लैण्ड आने पर स्वाभाविक रूप से उसका अनुसरण करने वाले स्काट लोगों पर तथा उनके प्रति प्रदर्शित की गयी कृपा के कारण उत्पन्न हुआ। जेम्स इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के मध्य में वास्तविक एकीकरण उत्पन्न करने के लिए उत्सुक था और इस विषय में उसकी उत्कण्ठा प्रशंसनीय है। किन्तु पार्लियामेण्ट इसे नहीं चाहती थी, और उसके सब प्रयत्नों के बावजूद जेम्स—इस पार्लियामेण्ट द्वारा नहीं, किन्तु कानूनी न्यायालयों द्वारा दिये गये—इस निर्णय से अधिक कुछ भी नहीं पा सका कि इंग्लिश राजगद्दी पर उसके आरोहण की तिथि के बाद में उत्पन्न हुए सभी स्काट इंग्लैण्ड में इंग्लिश प्रजाजनों का अधिकार रखते हैं। (पोस्टनेटी का मामला, १६०७ ई०)।

अन्त में, यह बात सम्भवतः किसी भी अन्य वस्तु के समान महत्वपूर्ण है कि इंग्लैण्ड की बढ़ती हुई समृद्धि के बावजूद भी इंग्लिश सरकार आर्थिक कठिनाइयों में फँसी हुई थी। अपने सम्पूर्ण मितव्यय के बावजूद, पिछले वर्षों में एलिज़ाबेथ पर भारी ऋण चढ़ा हुआ था और राजभूमियों के बड़े विक्रयों से उसने ताज की स्थायी आमदनी को कम कर दिया था। इसका यह अर्थ था कि अब सहायता के लिए पार्लियामेण्ट की शरण में जाना आवश्यक था। एलिज़ाबेथ की कठिनाइयों ने यह प्रदर्शित किया था कि अपनी समूची लोकप्रियता के बावजूद उसे भी पार्लियामेण्ट से पर्याप्त अनुदान प्राप्त करना कठिन प्रतीत हुआ था। जेम्स के अन्धाधुन्ध अपव्यय ने इस कठिनाई को बहुत बढ़ा दिया। मन्त्रियों को, कानून के भीतर धन एकत्र करने के लिए ट्यूडर राजाओं द्वारा ज्ञात प्रत्येक उपाय का उपयोग करना पड़ा, यद्यपि कुछ उपायों के लिए उन्हें पार्लियामेण्ट द्वारा चुनौती दी जा सकती थी। इस स्थिति का यह परिणाम हुआ कि जेम्स आवश्यक रूप से पार्लियामेण्ट पर निर्भर हो गया। इस

स्थिति को वह पसन्द नही करता था। उसके राज्यकाल में इंग्लिश व्यापार के विलक्षण विकास ने चुंगी की आमदनी में बहुत बड़ी वृद्धि करके इस स्थिति को दूर करने में सहायता प्रदान की और उसके राज्यकाल के अन्त में जब तक लड़ाई का खतरा नहीं आया, तब तक पार्लियामेण्ट के बिना काम चलाया जा सकता था। किन्तु उस समय तक वह राजा जो अपने को दैवीय अधिकार से सम्पन्न मानता था, उसने अपने को वश्यता की विक्षोभजनक स्थिति में पाया।

इन्हीं कठिनाइयों ने एक दम पार्लियामेण्ट को अपनी शक्ति में वृद्धि का दावा करने का अवसर प्रदान किया और ताज (Crown) पर आक्रमण करने के कारण प्रस्तुत किये। वस्तुतः पार्लियामेण्ट का नयी शक्तियों का दावा करने का कोई इरादा नहीं था और न ही इसका कोई विचार था कि यह ऐसा कर रही है। इसके सदस्य ईमानदारी से यह विश्वास रखते थे कि वे इंग्लैण्ड की "प्राचीन विरासत में पायी स्वतन्त्रताओं की" रक्षा कर रहे हैं। वे जानबूझ कर कोई परिवर्तन करना नहीं चाहते थे; अधिक-से-अधिक उनकी यह इच्छा थी कि वे उन स्वतन्त्रताओं का पुनरुज्जीवन करें, जिन स्वतन्त्रताओं का अस्थायी रूप से उपयोग नहीं हो रहा है, और वे "नव पद्धति के प्रवर्त्तक" होने के आरोप को नापसन्द करते थे फिर भी वे नूतन पद्धति के प्रवर्त्तक थे, क्योंकि वे सहयोग द्वारा राष्ट्रीय सरकार की नयी पद्धति का रास्ता और ताज की स्थिति का एक ऐसा नया दृष्टिकोण टटोल रहे थे, जो राजा को वस्तुतः राष्ट्र का सब से बड़ा अधिकारी मात्र बना दे। उनकी सारी युक्तियाँ ऐसे पूर्वोदाहरणों पर आधारित होती थीं जो उनके लिए सब से अधिक उपर्युक्त होते थे और वे मध्यकालीन वाक्यांशों में आधुनिक अर्थों को पढ़ा करते थे। कई बार उनका अधूरा ऐतिहासिक ज्ञान उन्हें गलत दिशा में ले जाता था। इस प्रकार अधिकार-याचिका-पत्र (Petition of Rights)[१] की भूमिका में अपने दावों को उन्होंने जिन प्रमाणों पर आधारित किया था, उनमें एडवर्ड प्रथम के चार्टरों की पुष्टि का एक बिलकुल गलत अनुवाद और पार्लियामेण्ट का एक ऐसा कानून सम्मिलित था, जिसे कभी पास नहीं किया गया था। उन्होंने मैग्नाकार्टा (Magna carta) का निर्देश निरन्तर श्रद्धा के साथ एक ऐसे मौलिक एवं अपरिवर्तनीय कानून के रूप में किया है, जो यह कभी नही था। उन्होने इसकी धाराओं में वे अर्थ डाले हैं, जिनके सम्बन्ध में आधुनिक विद्वानों ने यह प्रदर्शित किया है कि इनका ऐसा अर्थ कभी नहीं था।

नजीरों या पूर्वोदाहरणों के आधार पर लड़ने वाले युद्ध में अधिकांश विवादास्पद प्रश्नों पर प्रमाण का बल, कुल मिला कर पार्लियामेण्ट के सदस्यों की अपेक्षा राजा के दावों के अधिक अनुकूल था, क्योंकि ताज भी पूर्वोदाहरणों पर आश्रित था और जेम्स प्रथम एवं चार्ल्स प्रथम चूंकि अधिकांश रूप में दैवी अधिकार के बारे में चर्चा करते थे, अतः उन्होंने

---

१. यह जनता के अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की एक ऐसी घोषणा थी, जिसे पार्लियामेण्ट ने राजा चार्ल्स प्रथम के सम्मुख पेश किया था और उसने १६२८ ई० में इसे स्वीकार किया था।

वास्तव में कभी ऐसी कोई वस्तु नहीं की, जिसका एक प्रबल अथवा कम-से-कम एक प्रत्यक्षत: तर्कानुकूल कानूनी समर्थन न हो सके। उनकी दृष्टि में दैवी अधिकार से शासन करने वाले राजा केवल भगवान् के प्रति उस ढंग के लिए उत्तरदायी हैं, जिसके अनुसार वे अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हैं; वे राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी अधिकारी मात्र नहीं हैं; किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि वे अपनी उन शक्तियों की स्पष्ट व्याख्याओं की अवहेलना करने का और चुनौती देने का इरादा रखते हैं, जो शक्तियाँ उनके पूर्ववर्तियों द्वारा स्वीकार की जा चुकी हैं। यद्यपि यह विवाद पूर्वोदाहरणों पर आश्रित था, तथापि ताज पार्लियामेण्ट की भाँति समान रूप से तथा अचेतन रूप से सरकार की पद्धति में एक महान् परिवर्तन को अपना लक्ष्य बना रहा था। दैवी अधिकार पर बल देने वाला राजतन्त्र उस प्राचीन सामन्ती व्यवस्था से उतना ही बेमेल था, जितना कि पार्लियामेण्टवादियों के विचार उस पुरानी व्यवस्था से मेल न रखने वाले थे, जिस व्यवस्था से दोनों पक्ष अपने पूर्वोदाहरणों को निकाला करते थे।

आगे आने वाले सभी विवादों में पूर्वोदाहरणों या नज़ीरों पर आग्रह करना इंग्लैण्ड की बड़ी विशेषता है। यह कानून के प्रति एक वास्तविक सम्मान को सूचित करता था और इस बात को सुरक्षित बनाता था कि प्रगति सावधान नीति से तथा परम्परा के साथ सम्पर्क रखते हुए होनी चाहिए। किन्तु यह उस तथ्य को छिपाने की भी प्रवृति रखता था कि यह संघर्ष सिद्धान्तों का एक वास्तविक संघर्ष तथा राष्ट्रीय सरकार के दो विचारों का संघर्ष है। दोनों विचार नये और अस्पष्ट थे। इनमें से एक उस समय व्यापक रूप से प्रचलित सिद्धान्त को अभिव्यक्त करता था, जब कि दूसरा विचार इंग्लैण्ड का एक विशिष्ट विचार था। इनमें से एक सिद्धान्त का प्रवक्ता ताज तथा दूसरे सिद्धान्त का प्रवक्ता पार्लियामेण्ट थी। राष्ट्रमण्डल का सम्पूर्ण भविष्य इस विवाद के परिणाम पर अवलम्बित था।

इस महान् और अस्पष्ट विवाद को प्रजा और राजा के बीच में एक संघर्ष समझना बड़ी भूल है। राष्ट्र में दोनों विचारों के समर्थक थे और यदि उस समय यह बात कल्पना करने योग्य होती कि इस विवादग्रस्त प्रश्न की स्पष्ट रूप से व्याख्या की जाय और इस पर जनता का मत लिया जाय तो सम्भवत: उसका वोट राजा के दृष्टिकोण के पक्ष में पड़ा होता। यह सोचना भी समान रूप से भारी भूल है कि पार्लियामेण्ट एक लोकतन्त्रीय संस्था थी और वह विशाल निर्वाचन क्षेत्रों से "आदेशों" को ले कर वेस्टमिन्स्टर आया करती थी। पार्लियामेण्ट का आधा हिस्सा लार्ड सभा थी, वह वंशपरम्परागत लार्डों से तथा राजा द्वारा नामजद किये गये बिशपों से मिल कर बनी होती थी और यद्यपि इसमें ऐसे व्यक्ति थे, जो संघर्ष में कामन्स सभा के समर्थक थे, तथापि लार्ड सभा की प्रवृत्ति समग्र रूप से, राजा का पक्ष लेने की थी। इस संघर्ष में क्रियाशील दल—कामन्स सभा को भी, मुख्य रूप से देहात के भद्रवर्ग की तथा इसी सामाजिक वर्ग के वकीलों की, तथा लन्दन और कुछ अन्य व्यापारिक नगरों से आने वाले थोड़े से व्यापारियों की सभा समझा जाना चाहिए। कामन्स

सभा के सब से अधिक गौरवपूर्ण तत्व का निर्माण करने वाले जिलों (शायर) के बयानवे नाइट लोगों के लिए कानूनी दृष्टि से यह आवश्यक था कि वे उच्च कुलोत्पन्न भद्रजन हों, इस शब्द का उस समय एक बिलकुल निश्चित अर्थ था; वे सब समृद्ध जागीरदार या स्क्वायर थे। चार सौ के लगभग बरो अथवा नगरों के प्रतिनिधियों से यह आशा की जा सकती थी कि वे व्यापारिक श्रेणियों के लिए अधिक बोलेंगे। यदि उन्होंने ऐसा किया होता, तो व्यापारिक हितों का अत्यधिक प्रतिनिधित्व हुआ होता। किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं था। बहुत अधिक बरो छोटे स्थान थे, वे गाँवों से कुछ ही बड़े होते थे। वे बरो प्रायः किसी ग्रामीण रईस जागीरदार के उद्यान के दरवाजों के चारों ओर अवस्थित होते थे। इनमें वोट का अधिकार, स्थानीय रिवाज के अनुसार बहुत वैविध्यपूर्ण था। किन्तु यह केवल कुछ ही स्थानों में व्यापक रूप से बँटा हुआ था। उन दिनों प्रतिस्पर्धी कार्यक्रमों को प्रसारित करने के लिए कोई समाचार-पत्र नहीं थे और न ही विस्तृत रूप से निर्वाचन का प्रचार कार्य होता था। अधिकांश दशाओं में वे इस बात में प्रसन्न रहते थे कि वे अपने पड़ोस के दो भद्रजनों को नामजद कर दें अथवा उनकी सिफारिशों को स्वीकार कर लें। इस प्रकार वास्तव में कामन्स सभा देहात के भद्रजनों के एक ही वर्ग के अधिकतम क्रियाशील और सार्वजनिक भावना वाले सदस्यों से बनी होती थी और इसमें कानून के एक ही पेशे के सदस्य भी मिले होते थे, ये सदस्य भी मुख्य रूप से उसी श्रेणी से आते थे। किन्तु देहात के भद्रजन इंग्लैण्ड में राजनीतिक दृष्टि से सबसे अधिक क्रियाशील श्रेणी, सबसे अधिक सुशिक्षित और प्रशासन के कार्य में सबसे अधिक अनुभवी थे। वे समाज के सबसे अधिक महत्वपूर्ण वर्ग के स्वाभाविक और मान्य नेता थे। वे किसी भी अन्य श्रेणी से अधिक अच्छे थे। इस समय वे सारे देश के लिए बोल सकते थे। यद्यपि पार्लियामेण्ट में प्रकट की गयी उनकी सम्मतियाँ उस राष्ट्र के बड़े भाग की सम्मतियों से सम्भवतः आगे बढ़ी हुई थीं, जिस राष्ट्र की वास्तव में कोई अतीव सुनिश्चित सम्मतियाँ बिलकुल नहीं थीं।

२. जेम्स प्रथम और उसकी पार्लियामेण्ट

इस प्रकार की सभा से व्यवहार करना कठिन था। इसे न तो धमकाया जा सकता था और न ही भ्रष्टाचारी बनाया जा सकता था। राजा जेम्स ने तथा उसके बाद उसके बेटे ने न केवल बुलायी जाने वाली प्रत्येक पार्लियामेण्ट से झगड़ा किया, किन्तु यह अनुभव किया कि पिछली पार्लियामेण्ट की अपेक्षा अगली प्रत्येक पार्लियामेण्ट अधिक कष्टदायक और कठोर होती गयी। १६०४ ई० और १६११ ई० के बीच में चार अधिवेशन करने वाली जेम्स की पहली पार्लियामेण्ट आपेक्षिक दृष्टि से बात मानने वाली थी। किन्तु इसके पहले ही अधिवेशन में इसने झगड़ा पैदा किया, क्योंकि जब विवादग्रस्त चुनाव चान्सरी न्यायालय को सौंप दिये गये तो इस पार्लियामेण्ट ने सफलतापूर्वक इस बात पर आग्रह किया कि इसे स्वयमेव ऐसे सभी प्रश्नों का निर्णय करना चाहिए। इसने यह शिकायत की कि प्यूरिटन लोगों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता और कैथोलिकों के प्रति अनुचित नरमी दिखायी जाती है। इसने स्काटलैण्ड के साथ एकीकरण की राजा की प्रिय योजना के साथ

बड़ा अनिच्छापूर्ण व्यवहार किया और अन्त में इस मामले को अनिश्चित काल के लिए लटका दिया। इसने व्यापारिक व्यक्तियों को दिये जाने वाले विशेष अधिकार पर आक्रमण किया। इसने एक निश्चित वार्षिक देय राशि अदा करने पर राजा की सामन्ती देयों (Feudal Dues) को कम करने के प्रस्ताव पर समझौता करने से इन्कार किया। यह अपने आप में कोई अयुक्तियुक्त सुधार नहीं था और यद्यपि इसने राजा के लिए कुछ धन देने के पक्ष में वोट दिया, तथापि इसने एक बिलकुल अपर्याप्त राशि प्रदान की और इस बात पर आग्रह किया कि इसके बाद कुछ भी अधिक धन दिये जाने से पहले इसकी शिकायतों को दूर किया जाना चाहिए।

सबसे बढ़ कर इसने अपने अन्तिम अधिवेशन में आरोपित की गयी चुंगियों अथवा अतिरिक्त आयात-करों के उस प्रश्न पर एक बड़ा तूफान खड़ा कर दिया, जिसके बारे में भविष्य में असीम विवाद उठ खड़ा हुआ। आयात-कर सदैव राजकीय राजस्व के एक बड़े भाग का निर्माण करते थे। टनेज और पौण्डेज[1] के नाम से प्रसिद्ध पुराने परम्परागत सीमाशुल्क प्रत्येक राजा के राज्यकाल की पहली पार्लियामेण्ट द्वारा स्वाभाविक रूप से उस राजा के जीवन पर्यन्त स्वीकार किये जाते थे, किन्तु बहुत से वकीलों का यह विचार था कि वे पार्लियामेण्ट के अनुदानों से सर्वथा पृथक् हैं और किसी भी दशा में राजा के हैं। स्वभावतः समय-समय पर इन सीमाशुल्कों या चुंगियों की दरों के संशोधन की आवश्यकता होती थी। विशेषतः उस समय जब कि नयी वस्तुएँ महत्वपूर्ण बन रही थीं और ताज ने नयी चुंगियाँ लगाने के अथवा पुरानी चुंगियों के संशोधन के अधिकार का प्रायः प्रयोग किया था। १६०६ ई० में, बेट नामक लन्दन के एक व्यापारी ने किशमिश पर चुंगी अदा करने से इस कारण के आधार पर इन्कार किया कि वह प्राचीन चुंगी का हिस्सा नहीं है, किन्तु न्यायालयों का निर्णय उसके विरुद्ध हुआ। १६०८ ई० में महाकोषाध्यक्ष (Lord Treasurer) सेसिल ने संशोधित दरों की एक पुस्तक प्रकाशित की, इसमें अनेक परिवर्तन किये गये थे। इसने करों के बारे में एक तूफान पैदा कर दिया। कामन्स सभा का यह दावा था कि टनेज और पौण्डेज के पुराने करों के अतिरिक्त कोई भी अन्य कर उसकी सहमति के बिना वसूल नहीं किये जा सकते। पूर्वोदाहरण या नजीरें राजा के पक्ष में थीं। किन्तु ऐसी शक्ति के खतरे के बारे में कोई सन्देह नहीं हो सकता था। विशेष रूप से इसलिए कि अब विदेशी व्यापार ऐसा महत्व प्राप्त कर रहा था, जैसा महत्व पहले कभी नही प्राप्त हुआ था। राजा उस स्रोत से इतना काफी धन प्राप्त कर सकता था कि वह अपने को पार्लियामेण्ट से स्वतन्त्र बना सके। इस पर एक तूफानी वादविवाद हुआ (१६१० ई०), किन्तु कोई समझौता नहीं हो सका और यह प्रश्न तीस वर्ष तक अनिर्णीत ही बना रहा। इसने राजनीतिक स्वतन्त्रता की नींव के लिए नजीरों की अपर्याप्तता का एक उदाहरण प्रस्तुत किया।

पहली पार्लियामेण्ट असन्तोषजनक रही। दूसरी इससे भी अधिक बुरी थी। यह

---

१. टनेज और पौण्डेज नामक करों का अभिप्राय प्रति टन या प्रति पौण्ड के भार पर एक निश्चित मात्रा में लिये जाने वाले कर थे।

१६१४ ई० में बुलायी गयी थी, क्योंकि आर्थिक दशा विकट हो गयी थी। राजा ने चुनावों पर पहले से ही प्रभाव डालने का प्रयत्न किया, किन्तु इससे राजा के विरुद्ध एक तूफान खड़ा हो गया। कामन्स सभा ने उस समय तक अनुदानों पर विचार करने से इन्कार किया, जब तक कि वह अपनी शिकायतों पर विचार न कर ले, बड़े शोर और प्रचण्ड रोष के बाद, बिना कुछ किये इस बौखलाई (Addled) पार्लियामेण्ट को भंग कर दिया गया।

१६२१ ई० में तीसरी पार्लियामेण्ट बुलायी जाने से पहले सात वर्ष बीत चुके थे। यह मध्यान्तर इसलिए सम्भव हुआ, क्योंकि सीमाशुल्कों की आमदनी निरन्तर बढ़ रही थी और स्वाभाविक रूप से जब पार्लियामेण्ट की बैठक हुई तो इसने उसे करों के मामले में अधिक झुकने वाला नहीं बनाया। इस बीच में पार्लियामेण्ट को अप्रसन्न करने वाली कई बातें हुईं। स्पेनिश राजदूत गोंडोमार का प्रभाव दरबार में अमंगलजनक रीति से बढ़ गया, एक राजकीय कृपापात्र, सोमरसेट के अर्ल कार ने इंग्लैण्ड को अपने उड़ाऊपन से चौंका दिया था और परेशान कर दिया था। वह जिस तलाक और विषैले रहस्यों के गन्दे वातावरण से घिरा हुआ था, उस वातावरण ने उसे बरबाद कर दिया था। एक दूसरे और अधिक भास्वर कृपापात्र, बकिंघम के अर्ल विलियर्स का उत्कर्ष हो रहा था। एलिजाबेथ के समय के प्रमुख व्यक्तियों में अन्तिम व्यक्ति सर वाल्टर रेले का वध, लोगों के कथनानुसार स्पेन की माँग पर किया गया था और सबसे बढ़ कर तीस वर्षीय युद्ध शुरू हो गये थे। प्रोटेस्टेण्ट मत खतरे में था। १६२१ ई० में जब पार्लियामेण्ट की बैठक हुई तो यह प्रसन्न होने की मुद्रा में नहीं थी। इससे बढ़ कर यह बात थी कि इसमें अब सुशिक्षित और खरे नेताओं का एक समूह था; इस समय आविर्भूत होने वाला एक नेता जान पिम था और दूसरा नेता महान् वकील सर एडवर्ड कोक था। यह प्रधान न्यायाधीश रह चुका था। किन्तु विशेषाधिकार-न्यायालयों के निरन्तर विरोध के कारण राजा ने इसे पदच्युत कर दिया था और यह महान् वकील एक नये क्षेत्र में संघर्ष को पुनः करने के लिए उत्सुक था।

पार्लियामेण्ट ने पैलेटिनेट को सहायता देने के लिए भेजी जाने वाली अभियान सेना के लिए एक बिलकुल अपर्याप्त अनुदान स्वीकार किया, किन्तु इसने अपनी शिकायतों को दूर करने की ओर अपना मुख्य ध्यान दिया। इसने एकाधिकारों या ठेकों के प्रश्न को उठाया। जेम्स बड़े पैमाने पर ठेके दे रहा था और पार्लियामेण्ट ने एकाधिकारों के विरुद्ध बिल से सन्तुष्ट न होते हुए बकिंघम के एक सम्बन्धी सर गाइल्स मोम्पेस्सोन को दण्ड देने का निश्चय किया, क्योंकि उसने उसे दिये पेटेण्टों या एकस्वाधिकारों का खुल्लम-खुल्ला बड़ा दुरुपयोग किया था। इस प्रयोजन के लिए कामन्स सभा ने लार्ड सभा के समक्ष अपराधी पर महाभियोग चलाने की उस पुरानी परिपाटी का पुनरुज्जीवन किया, जिसका आविष्कार एडवर्ड तृतीय के समय में किया गया था[1] किन्तु चिरकाल से जिसका उपयोग बन्द हो गया था। महाभियोग के पुनरुज्जीवन ने कामन्स सभा को एक बड़ा भयानक शस्त्र और ऐसी कानूनी

---

१. ऊपर दूसरी पुस्तक के सातवें अध्याय का पृ० १५६-७ देखिए।

प्रक्रिया प्रदान की जिससे वह राष्ट्र की ओर से लार्ड सभा के समक्ष अभियोग के लिए सरकार के ऐसे कार्यकर्ताओं को ला सकती थी जिन्होंने अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया हो। माम्पेस्सोन ने यूरोप में पलायन करके अपने को इस दण्ड से बचा लिया।

किन्तु शीघ्र ही इस शस्त्र का प्रयोग एक बड़े शिकार के लिए किया गया। यह उस समय का लार्ड चान्सलर सर फ्रांसिस बेकन था। इस पर अपने न्यायिक कार्यों को करते हुए भ्रष्टाचारी होने का आरोप था। निस्सन्देह बेकन उसके सामने आने वाले मामलों में सम्बद्ध पक्षों से भेंट लेने की अनियमिताएँ करने का दोषी था। किन्तु यह सम्भव है कि उसका वास्तविक अपराध अधिक गम्भीर था। वह सर एडवर्ड कोक और सामान्य वकीलों के मत के प्रतिकूल विशेषाधिकार-न्यायालयों का समर्थक रहा था। उसे दोषी पाया गया और बुरी तरह से दण्डित किया गया। उसका सार्वजनिक जीवन समाप्त हो गया (१६२१ ई०) और कामन्स सभा ने यह अनुभव किया कि महाभियोग के रूप में उसके पास सरकार के कार्यकर्ताओं से जबाव माँगने का एक अतीव शक्तिशाली और प्रभावशाली साधन है।

बाद में जब कामन्स सभा से इलेक्टर पैलेटाइन नामक जर्मन राजा को सहायता देने के लिए अधिक धन माँगा गया तो इसने कैथोलिकों के विरुद्ध अधिक कठोरता करने की और राजा की स्पेनिश नीति के विरुद्ध प्रतिवाद करने के लिए एक प्रार्थनापत्र का प्रारूप तैयार किया। यह राजा के मर्मस्थलों को छूने वाला था, क्योंकि एलिज़ाबेथ की भाँति उसकी दृष्टि में धार्मिक नीति और वैदेशिक नीति उसके अति विशिष्ट सर्वोच्च विशेषाधिकार थे। किन्तु जब उसने कामन्स सभा को उसके विशेषाधिकारों के ऊपर हमला करने के लिए झिड़का, जैसा एलिजाबेथ भी कर चुकी थी तो कामन्स सभा ने इसका उत्तर इस आशय के एक गम्भीर प्रतिवाद को अपनी दैनिक कार्यवाही के चिट्ठे में अंकित करते हुए दिया कि राजा और राज्य एवं चर्च से सम्बन्ध रखने वाले सभी मामले पार्लियामेण्ट में परामर्श और विवाद का समुचित विषय हैं। यहाँ अब वास्तव में एक महान् प्रश्न उठा दिया गया था। राष्ट्रीय नीति का कोई भी प्रश्न राजा के एक मात्र विवेक के लिए सुरक्षित नहीं रहा; ऐसा कोई विषय नहीं था, जिस पर पार्लियामेण्ट पुनर्विचार और आलोचना न कर सके। राजा ने दैनिक कार्यवाही का चिट्ठा मँगवाया और अपने हाथों से आपत्तिजनक सन्दर्भों वाले हिस्से को फाड़ दिया। किन्तु आप वायु-भार-मापक यन्त्र को तोड़ कर मौसम को नहीं सुधार सकते। पार्लियामेण्ट को पहले स्थगित किया गया और इसके बाद भंग कर दिया गया। पैलेटाइन के लिए इसमें कोई व्यवस्था नहीं थी। इसके तीस सदस्यों को—जिसमें बूढ़ा सर एडवर्ड कोक भी सम्मिलित था—लन्दन के किले में भेज दिया गया।

यदि जेम्स का वश चल सकता तो वह अगली पार्लियामेण्टों को नहीं बुलाता। किन्तु १६२४ ई० में स्पेन के साथ सम्बन्ध विच्छेद हो जाने के कारण धन की माँगें आवश्यक हो गयी थीं। इसके अतिरिक्त यह भी आशा रखी जा सकती थी कि कामन्स सभा द्वारा

प्राय: स्वयं माँग किया जाने वाला स्पेन के साथ युद्ध लोकप्रिय होगा। अत: १६२४ ई० में एक नयी पार्लियामेण्ट बुलायी गयी। पुराने नेताओं के अतिरिक्त इसमें दो महान व्यक्ति सम्मिलित थे। पहला व्यक्ति वाग्मी, उदार, उत्साही और कर्मिष्ठ नाइट सर जॉन इलियट, उस बात का प्रगाढ़ प्रेमी था, जिसे वह इंग्लिश स्वतन्त्रता की परम्परा मानता था, और दूसरा व्यक्ति पाण्डित्यपूर्ण, ऐतिहासिक और कानूनी विषयों का विद्वान् जॉन सैल्डन था। इस पार्लियामेण्ट में बकिंघम ने लोकप्रिय दल के साथ मैत्री करने का प्रयास उस कार्य के आधार पर करने का प्रयत्न किया, जो उसने स्पेन के साथ सम्बन्ध विच्छेद करने में किया था। वह एक बड़ी राशि का अनुदान प्राप्त करने में सफल हो गया, यद्यपि यह आवश्यक धन-राशि का केवल आधा ही भाग था। किन्तु यह अनुदान इस महत्वपूर्ण शर्त पर दिया गया था कि पार्लियामेण्ट द्वारा नियत किये गये कोषाध्यक्ष इस धन का नियन्त्रण करेंगे और इसे केवल उसी प्रयोजन के लिए देंगे, जिस प्रयोजन के लिए इसे वोट द्वारा स्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त इस पार्लियामेण्ट ने अपनी पूर्ववर्ती पार्लियामेण्ट का अनुकरण करते हुए एक ऐसे महान् अधिकारी कोषाध्यक्ष मिडलसैक्स पर महाभियोग चलाया। इसने वित्तीय स्थिति को सुव्यवस्थित करने के लिए बहुत कुछ किया था, किन्तु वह अनियमितताओं का भी दोषी था। यह सत्य है कि कामन्स सभा ने यह कार्य बकिंघम की प्रेरणा से किया था, क्योंकि उसका विरोध मिडिलसैक्स ने स्पेनिश युद्ध के मामले में किया था। किन्तु आक्रमण का महान् अस्त्र पैना किया जा चुका था। जब एक लार्ड चान्सलर और एक महान् कोषाध्यक्ष इस शस्त्र से समाप्त किये जा चुके थे तो अन्य कौन अधिकारी इससे सुरक्षित था ? फिर भी जेम्स की मृत्यु ने उसकी चौथी पार्लियामेण्ट का समय से पूर्व ही अन्त कर दिया और अन्तिम संघर्ष उसके उत्तराधिकारी के राज्यकाल के लिए टल गया।

३. चार्ल्स प्रथम और अधिकार-याचिका (Petition of Rights)

चार्ल्स प्रथम एक नौजवान और सुन्दर राजकुमार था। उसमें अनेक मोहक गुण और प्रत्येक परिवारोचित गुण था, इनके कारण अपने राज्यकाल के आरम्भ में उसे अपनी पार्लियामेण्टों के साथ सफलतापूर्वक व्यवहार करने में समर्थ होना चाहिए था, विशेष रूप से इसलिए भी कि उसने तथा उसके मित्र बकिंघम ने पिछली पार्लियामेण्ट के साथ मैत्री बढ़ाने का काफी प्रयत्न किया था। वे देश को एक लोकप्रिय युद्ध में डाल रहे थे और जर्मन प्रोटेस्टेण्टों की सहायता के लिए एक महान् गुट में भाग लेने के लिए तैयार हो रहे थे। किन्तु चार्ल्स अभिमानी और मूक तथा किसी अधिक क्रियाशील मन वाले व्यक्ति के प्रभाव में सदैव रहने वाला था। वह अपने पिता की अपेक्षा आलोचना के बारे में अधिक अधीर था और विरोधी दल को अनुचित समझते हुए उसके साथ व्यवहार में कुटिल अथवा कपटपूर्ण था। इसके अतिरिक्त उसने राज्य के मामलों का क्रियात्मक नियन्त्रण जिस बकिंघम को सौंप रखा था, वह एक अदूरदर्शी और अन्धाधुन्ध रीति से झटपट काम करने वाला व्यक्ति था। वह उत्तम योजनाएँ बनाने की अथवा किन्हीं योजनाओं के साथ दृढ़तापूर्वक लगे रहने की योग्यता नहीं रखता था। उसने पार्लियामेण्ट को युद्ध के अत्यधिक अयोग्य संचालन से उन मामलों में हस्तक्षेप करने के

सर्वोत्तम बहाने प्रदान किये, जिन मामलों को टयूडर राजाओं के समय में भी करने का साहस पार्लियामेण्ट नहीं करती थी। इसी समय कामन्स सभा ने राजा को उसके दायित्व पूरे करने के लिए धन राशि देना अस्वीकार कर दिया। इससे राजा ऐसे उपायों का अवलम्बन करने के लिए विवश हो गया, जिन उपायों के कारण उस पर आक्षेप हो सकता था। चार वर्ष के निरन्तर और कटु संघर्ष तथा विदेशों में लगातार तथा अपमानजनक विफलता के बाद पार्लियामेण्ट सरकार के संचालन को नियन्त्रित करने के उस दावे के बिन्दु तक लगभग पहुँच गयी, जिस दावे को दस वर्ष पहले भी करने की इसने कभी कल्पना भी नहीं की थी। अपनी राजकीय सत्ता को बनाये रखने के लिए चार्ल्स अपने महाद्वीपीय दायित्वों को एकदम समाप्त करने के लिए विवश हुआ तथा उसने पार्लियामेण्ट के बिना अथवा जिन धनराशियों को पार्लियामेण्ट ही दे सकती थी, उनके बिना ही काम चलाने का प्रयत्न किया।

कामन्स सभा उसके बारे में जो सन्देह रखती थी, उसका एक बड़ा कारण यह था कि राजा अब अपने को चर्च के एक ऐसे नये दल से अभिन्न बना रहा था, जो दल अब आक्रमणात्मक हो रहा था। जेम्स प्रथम यद्यपि बिशपों की और उनके माध्यम से ताज की सत्ता बनाये रखने पर तुला हुआ था, तथापि वह स्वयमेव सिद्धान्त की दृष्टि से कैल्विन मतानुयायी थे, जैसा कि उसके अधिकांश धर्माध्यक्ष या प्रिलेट थे। किन्तु उसके राज्यकाल के पिछले वर्षों में एक विचारधारा का उत्कर्ष होने लगा था। ये वे वर्ष थे जिनमें चार्ल्स का और उसके मित्र बकिंघम का प्रभाव बढ़ गया था। सिद्धान्त की दृष्टि से यह दल आरमिनियन था और नियतिवाद के विशिष्ट कैल्विनवादी सिद्धान्त को अस्वीकार करता था। यह प्यूरिटन लोगों की अपेक्षा प्रचार पर कम तथा कर्मकाण्ड पर अधिक बल देता था। यह प्यूरिटन लोगों द्वारा एकमात्र बाइबल पर दिये जाने वाले बल को अस्वीकार करता था और यह मानता था कि धर्मग्रन्थों के प्रतिकूल न होने पर चर्च के परम्परागत रिवाजों और त्यौहारों का अवश्यमेव पालन होना चाहिए। यह विचारधारा इंग्लिश धार्मिक सुधार के समूचे समय में कभी भी अनुपस्थित नहीं रही थी, किन्तु अब यह पहले की अपेक्षा अधिक प्रबल और अधिक ईमानदार थी। इस विचारधारा को मानने वालों को एंग्लो-कैथोलिक दल कहा जा सकता था और इसका योग्यतम जीवित प्रतिनिधि सेण्ट डेविड का बिशप विलियम लाड था। इसे चार्ल्स प्रथम ने लन्दन का बिशप बना दिया और वह चर्च के सभी मामलों में उसकी सलाह को सुना करता था। प्यूरिटन लोगों की भाँति लाड एक सुधारक था और अपने मन के अनुसार इंग्लिश चर्च की पुनर्व्यवस्था करना चाहता था। यह स्वाभाविक था कि वह और उसका सम्प्रदाय उस राजतन्त्र के मित्र थे, जो उनका समर्थन कर रहा था और वे दैवीय अधिकार के सिद्धान्त के समर्थक थे।

जब चार्ल्स की पहली पार्लियामेण्ट की बैठक जून १६२५ ई० में हुई तो पार्लियामेण्ट ने युद्ध के व्यय के लिए केवल १,४०,००० पौण्ड स्वीकार किये, जब कि राजा स्वयमेव इस युद्ध पर कम-से-कम ७ लाख पौण्ड खर्च करने का वचन दे चुका था। इसी समय पार्लियामेण्ट के सदस्यों ने एक भयावह नूतन पद्धति को आरम्भ किया। टनेज और

पौण्डेज के नाम से प्रसिद्ध कर (जो राजा की आय का आवश्यक भाग होते थे) एक रिवाज द्वारा, राज्यकाल की पहली पार्लियामेण्ट द्वारा, राजा के लिए स्वीकार किये जाते थे। किन्तु इस पार्लियामेण्ट ने यह प्रस्ताव किया कि इन्हें केवल एक वर्ष के लिए स्वीकार किया जाय, यह उन्होंने अपनी पार्लियामेण्ट भंग किये जाने के विरुद्ध सुरक्षा के लिए किया था। इसके बाद उन्होंने धार्मिक मामलों पर विचार आरम्भ किया, कैथोलिकों के प्रति अधिक सख्ती की माँग की और एक प्रमुख एंग्लो-कैथोलिक द्वारा लिखे गये ग्रन्थ की सुनिश्चित शब्दों में निन्दा की और इसे उन्होंने एक शस्त्रधारी सार्जेन्ट को सौंप दिया। राजा ने फौरन इसे राजकीय पुरोहित बना दिया। बाद में राष्ट्रीय दायित्वों पूरा करने के लिए आवश्यक धन की एक सच्ची अपील के उत्तर में कामन्स सभा ने एक टरकाऊ जवाब दिया, बकिंघम पर तथा राजा के अन्य परामर्शदाताओं पर उग्र आक्रमण आरम्भ किये। चार्ल्स धैर्य खो बैठा, उसने उस समय पार्लियामेण्ट को भंग कर दिया, जब कि इसकी बैठक दो महीने से भी कम हुई थी और इसे टनेज और पौण्डेज का कानून पास करने का भी समय नहीं मिला था।

६ महीने बाद (१६२६ ई०) उसकी आर्थिक कठिनाइयों ने उसे दूसरी पार्लियामेण्ट बुलाने को बाधित किया। इसी बीच में केडिज को भेजी गयी विपत्तिग्रस्त अभियान-सेना ने विदेशों में इंग्लैण्ड को बदनाम कर दिया। फ्रांस को यह वचन दिया गया था कि ला रॉशेल के प्रोटेस्टेण्टों को कुचलने के लिए उसे इंग्लिश जहाज दिये जायेंगे, क्योंकि इनका विद्रोह फ्रांस को जर्मनी की सहायता करने से रोक रहा था। डेन्मार्क का अभागा राजा उसे वचन दी गयी आर्थिक सहायता पाने के लिए आग्रह कर रहा था। धन के लिए उग्र आवश्कता होने पर चार्ल्स ने एक आवश्यक ऋण को एकत्र करने का प्रयत्न किया। जब पार्लियामेण्ट की बैठक हुई तो कामन्स सभा का पहला कार्य शिकायतों की एक समिति नियत करना तथा युद्ध की कुव्यवस्था की जाँच के लिए माँग करना था। बकिंघम के विरुद्ध सीधा आक्रमण आरम्भ कर दिया गया और अत्यधिक आवश्यक धनराशि के अनुदानों पर उस समय तक विचार करने से मना किया, जब तक कि उसकी शिकायतों को दूर न कर दिया जाय। लार्ड सभा में भी बकिंघम पर कटु आक्रमण किये गये, कामन्स सभा उसके विरुद्ध महाभियोग के प्रबल मुद्दों को तैयार करने लगी। यह वस्तुतः पार्लियामेण्ट के प्रति मन्त्रियों के उत्तरदायित्व का प्रश्न था। जब सर जॉन इलियट ने लार्ड सभा के समक्ष महाभियोग आरम्भ किया तो उसने बकिंघम की तुलना अत्याचारी राजा टाइबेरियस का हथियार बने हुए सिजेनस से की। इस अपमान के लिए इलियट को लन्दन के किले में कैद कर दिया गया। कामन्स सभा ने उस समय तक अपनी कार्यवाही करने से इन्कार कर दिया, जब तक कि इलियट को न छोड़ दिया जाय। इस पर राजा को उसे छोड़ना पड़ा। इसके बाद कामन्स सभा ने जो कार्य किया, वह यह घोषणा थी कि टनेज और पौण्डेज की सभी अदायगियाँ—जिसे ताज इसका कानून न पास होने पर भी इकट्ठा कर रहा था, उसकी सहमति के बिना अवैध थी। उन्होंने उस समय तक कोई भी धनराशि स्वीकार करने से इन्कार किया; जब तक कि बकिंघम को पदच्युत न कर दिया जाय। चार्ल्स को जब यह खतरा

पैदा हो गया कि उसकी पहले से ही पूर्ण रूप से अपर्याप्त आमदनी का बड़ा हिस्सा छिन जायगा और उसके प्रियतम मित्र का विनाश हो जायगा तो उसने इस पार्लियामेण्ट को भी केवल चार ही महीने बाद भंग कर दिया। उसे पार्लियामेण्ट से एक भी पैसा नहीं मिला था। दुनियाँ की दृष्टि में वह और उसका देश बदनाम हो चुके थे। युद्ध के संचालन की व्यवस्था बुरी तरह से की गयी थी। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि चार्ल्स ने यह अनुभव किया कि उसका प्रयोग अनुचित रीति से किया जा रहा है।

उसे धन अवश्य चाहिए था। उसने टनेज और पौण्डेज का कर वसूल करना जारी रखा, वस्तुतः एकदम सब चुंगियों को खत्म कर देने से व्यापार में गड़बड़ पैदा हो जाती। उसने पुरशासक या "जस्टिस ऑफ पीस" नामक अधिकारियों द्वारा देश से एक स्वतन्त्र भेंट के रूप में उस राशि को पाने का प्रयत्न किया, जो यह उस दशा में देता, जब एक धन-राशि स्वीकार की जाती। किन्तु इसका परिणाम नगण्य था। उसने समुद्र-तट वाले जिलों से जहाजों की व्यवस्था के लिए धन वसूल किया; यह प्रायः पहले भी किया जा चुका था। इससे भी धन प्राप्त हुआ। उसने राज्य की ज़मीनों को गिरवी रख दिया। अन्त में उसने यह निश्चय किया कि वह जिस राशि को पार्लियामेण्ट के अनुदान अथवा स्वतन्त्र भेंट के रूप में नहीं प्राप्त कर सकता, उसे वह एक जबर्दस्ती लिए जाने वाले ऋण के रूप में वसूल करे। यह औपचारिक अवैधता के निकटतम पहुँचने वाली बात थी। न्यायधीशों ने इसे कानूनी घोषित करने से इन्कार किया और कई लोगों ने इसे अदा करना स्वीकार नहीं किया। इन्हें बाधित करने के लिए अदायगी से इन्कार करने वाले भद्रजनों को जेल में डाल दिया गया, निम्न कोटि के व्यक्तियों को सिपाही होने के लिए बाधित किया गया। इस प्रकार बन्दी बनाये गये पाँच नाइट लोगों ने राजा के न्यायालय में बन्दी उपस्थापन के आदेश की माँग की (१६२७ ई०)। इस आदेश के जवाब में जेलर को बन्दीकरण का कारण अवश्य बताना चाहिए था। राजा के प्रतिनिधि द्वारा केवल यही कारण बताया गया कि नाइट लोगों को राजा की विशेष-आज्ञा द्वारा (Per speciale mandatum regis) बन्दी बनाया गया है। उन्होंने यह युक्ति दी कि राजा की सुरक्षा के लिए सरकार के पास आपातकाल में प्रयोग की जाने वाली इस प्रकार की विवेकात्मक शक्ति अवश्य होनी चाहिए। इस तर्क में प्रत्यक्षतः कुछ युक्तियुक्तता थी। प्रत्येक विद्यमान सरकार के पास ऐसा अधिकार होता था और वह इसका प्रयोग करती थी। एलिज़ाबेथ ने भी प्रायः इसका प्रयोग किया था, किन्तु जिन ज्ञात परिस्थितियों में—जजों द्वारा वैध घोषित न किये जाने वाले एवं बलपूर्वक लिये जाने वाले ऋण की धनराशि देने से न्कार करने के लिए जिन पाँच नाइटों को बन्दी बनाया गया था, वे परिस्थितियाँ इस युक्ति की शक्ति को नहीं बढ़ा रही थीं।

इसी समय युद्ध में सब बातें बिगड़ रही थीं। प्रतिज्ञात सहायता के अभाव में डेन्मार्क को कुचल दिया गया था और जर्मन प्रोटेस्टेण्ट कैथोलिकों की अनुकम्पा पर थे। फ्रांस के साथ एक बेहूदा युद्ध ने स्पेन के साथ लड़ाई को बढ़ा दिया था और बकिंघम के ड्यूक ने रे के टापू पर विपत्तियों में पड़ने वाले एक बेड़े और सेना का नेतृत्व किया था

(१६२६ ई०)। इन परिस्थितियों में पहले किसी भी समय की अपेक्षा धन की अधिक उग्र आवश्यकता होने पर राजा को अपनी तीसरी पार्लियामेण्ट का सामना करना पड़ा (मार्च १६२८ ई०)।

कामन्स सभा ने यह अनुभव किया कि यह संकट गम्भीर है। उसके नेताओं ने निश्चय किया कि बकिंघम के विरुद्ध महाभियोग को छोड़ देना उचित होगा, क्योंकि किसी वैयक्तिक विवाद की अपेक्षा अधिक गम्भीर प्रश्न उत्पन्न हो गये हैं, यदि पार्लियामेण्ट के बिना करों को लगाने की तथा मनमाने ढंग से बन्दी बनाने की व्यवस्था को सुप्रतिष्ठित होने दिया जाय तो ब्रिटिश स्वतन्त्रता का अन्त हो जायगा। कानून की प्रभुसत्ता को अवश्यमेव लागू किया जाना चाहिए; प्रतिनिधि सदन के अधिकारों को अवश्य बनाये रखना चाहिये। पार्लियामेण्ट के ये ऐसे सर्वोच्च कर्त्तव्य थे, जिन्हें सब आर्थिक अनुदानों से पहला स्थान अवश्य दिया जाना चाहिए। उन्होने अभी हाल में हुए कानून के उल्लंघनों का तथा उनकी दृष्टि में इंग्लिश लोगों के चिरकाल से उपभोग किये जाने वाले और ऐसे अनुल्लंघनीय अधिकारों का एक गम्भीर और वजनदार विवरण तैयार किया, जिन अधिकारों का, उनकी दृष्टि में उपर्युक्त कार्यों से उल्लंघन हुआ था। यह दस्तावेज 'अधिकार-याचिका पत्र' (Petition of Rights) के नाम से प्रसिद्ध है और इसकी गणना इंग्लिश स्वतन्त्रता के प्राचीरों में 'मैग्नाकार्टा (Magna Carta) के बाद की जाती है। यह इससे ऊंचे पद का अधिकारी है, क्योंकि यह बृहद् अधिकार पत्र की अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्टतर व्याख्या को और कहीं अधिक प्रगति को सूचित करता है। इसने पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के बिना किसी "भेंट, ऋण, बलपूर्वक लिये कर अथवा इसी प्रकार के प्रभार" के अवैध होने की घोषणा की। यह सत्य है कि इन शब्दों में स्पष्ट रूप से चुंगी का उल्लेख नहीं था और इस अस्पष्टता के कारण अगले झगड़े के लिए गुंजायश बनी रही, किन्तु उन्होंने प्रत्यक्ष कर के प्रत्येक रूप को अवैध बना दिया। इसने यह घोषणा की कि बिना कारण बताये किसी व्यक्ति को बन्दी बनाना अवैध है; यह कारण बन्दी उपस्थापन के एक आदेश के उत्तर में अवश्य बताया जाना चाहिए। कुछ अन्य धाराएँ भी थीं, किन्तु महत्वपूर्ण बातें यही थीं। इन्होंने प्रजाजनों की वैयक्तिक स्वतन्त्रता को तथा पार्लियामेण्ट द्वारा करपद्धति के नियन्त्रण को पहले की अपेक्षा अधिक स्पष्ट रूप से निश्चित कर दिया।

लार्ड सभा इस महान् दस्तावेज में सम्मिलित की गयी माँगों के लिए सहमत हो गयी। राजा ने इस बात का प्रयत्न किया कि वह विधिपूर्वक इसको स्वीकार करने से बच जाय। उसने एक सावधानी से तैयार किया गया वक्तव्य प्रस्तुत किया। इसमें राज्य के कानून और रिवाजों को बनाये रखने के उसके उत्तरदायित्व पर एवं उसके सर्वोच्च विशेषाधिकार पर बल दिया गया था। इससे पार्लियामेण्ट सन्तुष्ट नहीं हुई, उसे अपना गर्वीला मस्तक झुकाने के लिए विवश होना पड़ा।

किन्तु कामन्स सभा इस महान् विजय से सन्तुष्ट नहीं थी। वह उन धर्माधिकारियों पर हमला करने लगी, जिन्होंने राजकीय विशेषाधिकार को ऊँचा उठाया था। उन्होंने रोजर

मैनवेरिंग पर महाभियोग चलाया, इसने यह प्रचार किया था कि कर लगाने के लिए पार्लियामेण्ट की स्वीकृति आवश्यक नहीं है और इसके उपदेशों के लिए राजा ने अनुमति दी थी। उन्होंने बकिंघम के ड्यूक की पदच्युति की माँग करते हुए एक शिकायत-पत्र तैयार किया। दूसरे अधिवेशन (१६२९ ई०) में उन्होंने एक बार पुनः टनेज और पौण्डेज का प्रश्न उठाया। वे लार्ड तथा उसके सम्प्रदाय के अन्य व्यक्तियों पर हमला करने ही वाले थे कि राजा ने इस पार्लियामेण्ट को स्थगित करने का आदेश दिया। इस पर पार्लियामेण्ट भवन के दरवाजों पर ताले लगा दिये गये और इसके सभापति को जबर्दस्ती उसकी कुर्सी पर बिठा दिया गया और उन धाराओं को पढ़ा और पास किया गया, जिनसे धर्म में नूतन पद्धतियों के विरुद्ध तथा टनेज और पौण्डेज की वसूली के विरुद्ध प्रतिवाद किया गया था।

राजा ने इसका उत्तर सदन को भंग करके दिया और एक सार्वजनिक घोषणा की। इसमें उसने घोषणा की (और यह पूर्ण रूप से अकारण नहीं थी) कि पार्लियामेण्ट ने पहले तो उसे लड़ाई शुरू करने की प्रेरणा दी और फिर उसकी आवश्यकताओं के कारण उससे सौदेबाजी की, अन्त में उसने कामन्स सभा के नौ सदस्यों को बन्दी बनाया, इनमें उनका बड़ा नेता सर जॉन इलियट भी था। अभी हाल में स्वीकार किये गये अधिकार के प्रार्थना-पत्र के साथ इसका समन्वय करना सुगम नहीं था। दो वर्ष बाद इलियट जेल में मर गया और उसके दो साथियों को १६४० ई० तक नहीं छोड़ा गया।

इस प्रकार इस संघर्ष का पहला बड़ा दौर समाप्त हुआ। इसकी एक महत्वपूर्ण उप-लब्धि "अधिकार का याचिका-पत्र थी। किन्तु इसने यह भी प्रदर्शित किया था कि कामन्स सभा शासन करने वाली सरकार का नियन्त्रण करने की आकांक्षा रखती है। इस कारण बहुत से मनुष्य यह प्रश्न पूछने लगे थे कि क्या कोई भी सरकार उस दशा में क्षमतापूर्ण रीति से चलायी जा सकती है जब इतनी बड़ी संख्या और वैविध्य रखने वाली कामन्स सभा को यह अधिकार दिया जाय कि वह किसी भी क्षण शासन को चलाना असम्भव बना दे। यह दृष्टिकोण और ऐसा झुकाव रखने वाला एक व्यक्ति सर थामस वैण्टवर्थ था।[1] यह यार्कशायर का एक बड़ा जागीरदार था। इसने बकिंघम के विरोध में तथा अधिकार के आवेदन-पत्र को तैयार करने में भी एक मुख्य भाग लिया था। एक अयोग्य मन्त्री को हटाना एक बात थी, सरकार के कार्य को असम्भव बना देना दूसरी बात थी। इसने दोनों बातों में सहायता दी थी किन्तु वह क्षमता का प्रेमी था, इसे वह पूर्णता कहता था। बकिंघम की हत्या (१६२८ ई०) ने अक्षमता का एक मुख्य कारण दूर कर दिया था और एक अधिक अच्छी पद्धति को सम्भव बना दिया था। पार्लियामेण्ट को उस पद्धति के स्वरूप का कोई स्पष्ट विचार नही था, जिस पद्धति को यह स्थापित करना चाहती थी। अपनी क्षमता का ज्ञान होते हुए, वेण्टवर्थ को यह प्रेरणा की गयी कि वह राजा की सेवा आरम्भ करे।

---

१. इंग्लिश मैन ऑफ एक्शन सीरीज में वैण्टवर्थ (स्ट्रैफ्फोर्ड) का एक संक्षिप्त जीवन एच० डी० ट्रैल ने लिखा है।

उसने क्षमतापूर्ण सरकार को बनाने में और पार्लियामेण्ट के बिना काम चलाने में सहायता देने की तैयारी की। आज तक मनुष्यों में इस बात पर विवाद है कि क्या वैण्टवर्थ को स्वपक्षत्यागी कहा जाना उचित है अथवा क्या उनका कार्य ऐसे दृष्टिकोण के परिवर्तन के कारण था, जैसा परिवर्तन सहसा एक व्यक्ति में या राष्ट्र में उस समय होता है जब कि वे यह अनुभव करना आरम्भ करते हैं कि उन्होंने जिस पथ पर अपने कदम रखे हैं, उसका अनिवार्य लक्ष्य क्या है।

वैण्टवर्थ और लाड की सहायता से चार्ल्स प्रथम ने ऐसी सरकार चलाने का परीक्षण किया, जिसका लक्ष्य यह प्रदर्शित करना था कि देश के कानूनों के उल्लंघन अथवा अवहेलना के बिना परेशान करने वाली और अयुक्तियुक्त संसदीय आलोचना से मुक्त हो कर राजतन्त्र लोगों को सुव्यवस्थित शान्ति, समृद्धि और सुख प्रदान कर सकता है। बाहर से देखने में, इंग्लैण्ड में यह परीक्षण चिरकाल तक पूर्ण रूप से सफल प्रतीत हुआ, यद्यपि जैसा कि हम देखेंगे कि नयी दुनियाँ की ओर प्रव्रजन के आन्दोलन ने असन्तोष की ऐसी साक्षी उपस्थित की, जिसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए थी। आयरलैण्ड में भी ऐसा प्रतीत होता था कि "पूर्णता की पद्धति" सफल हुई है, यद्यपि वास्तव में इसने भविष्य के लिए बड़े कष्टों को जन्म दिया। किन्तु स्काटलैण्ड में चार्ल्स प्रथम और लाड के शासन ने ऐसा भावनापूर्ण उत्कट प्रतिरोध उत्पन्न किया और राष्ट्रीय भावना का ऐसा उद्रेक उभाड़ा कि सारा परीक्षण भंग हो गया, इंग्लैण्ड ने भी शान्ति के एक मध्यान्तर के बाद अपने को पुनः एकाएक क्रान्ति के कष्टों की ओर खिंचा हुआ पाया, अतः अब हमें आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड की ओर ध्यान देना चाहिए, क्योंकि अब उनका इतिहास राष्ट्रमण्डल के विकास में महत्वपूर्ण बन गया था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

A very readable account of the period will be found in **G. M. Trevelyan,** England under the Stuarts, a more detailed treatment in **F. C. Montague**. England from the Accession of James I. to the Restoration. The period is covered by **S. R. Gardiner's** monumental History of England from 1603 to 1642 (10 vols.), which is the standard authority; also by **Ranke,** History of England principally in the Seventeenth century, and by **Hallam,** Constitutional History. **Gardiner,** Constitutional Documents of the Puritan Revolution is valuable and has a good introduction; the reign of James I. is covered by **Prothero,** Constitutional Documents. There is a shorter and very good account in **Gardiner,** Puritan Revolution (Epochs of Modern History). **Lord Acton** has a lecture on the Puritan Revolution in his Lectures on Modern History;

Pearsall Smith, Sir Henry Wotton; **Notestein,** The Winning of the Initiative in the House of Commons; **Usher,** Court of High Commission; **Holdsworth,** History of English Law Vols IV and V; **Figgis,** Divine Right of Kings; **Kier,** Constitutional History of Modern Britain; **Burton and Pennington,** Members of the Long Parliament; **Davies,** Early Stuarts.

● ●

४

स्टोवर्टवंशी आरम्भिक राजाओं के शासन-काल में आयरलैण्ड और स्कॉटलैण्ड

(१६०३–१६४० ई०)

१. आयरलैण्ड : अल्स्टर का उपनिवेशन

जेम्स प्रथम के राज्यारोहण के अवसर पर ही टाइरोन के अर्ल ने आत्मसमर्पण कर दिया। इसने एलिज़ाबेथ के राज्यकाल की समाप्ति पर एक बड़े विद्रोह को उत्पन्न किया था। अब इसके आत्म-समर्पण से आयरलैण्ड की विजय की लम्बी और कष्टदायक प्रक्रिया समाप्त हो गयी। समूचे देश में ताज की सत्ता को स्वीकार कर लिया गया और अब यह सम्भव था कि एक व्यवस्थित और शान्ति-पूर्ण पद्धति को संगठित किया जाय। यदि इंग्लिश कानून का प्रशासन न्यायपूर्ण रीति से और दृढ़तापूर्वक किया जाता, यदि आयरिश भूस्वामियों को यह अनुभव कराया जाता कि उनकी सम्पत्ति सुरक्षित है और उन्हें कानून के संरक्षण में विकसित होने का प्रोत्साहन दिया जायगा और यदि कैथोलिक बहुमत को युक्तियुक्त सहिष्णुता के साथ रहने दिया जाता तो शायद आयरलैण्ड अब भी उस पुरानी जनजातीय पद्धति के विध्वंस से सामंजस्य स्थापित कर लेता, जिसका वास्तविक अभिप्राय अविरत अराजकता था और एलिज़ाबेथकालीन विजय की कटु स्मृतियाँ भी शायद शनैः-शनैः मिट जाती। नया आरम्भ करने के लिए बहुत देर नहीं हुई थी और कुछ भी हो आयरलैण्ड में नये वंश का आगमन वरदान सिद्ध हो सकता था।

इस समय एक शुभारम्भ किया गया; एक आम माफी दी गयी। ओडोनेल वंश के मुखिया को टिरकोनेल (डोनेगल) का अर्ल बनाया गया। टाइरोन के पास उसकी जमीनें रहने दी गयीं। १६०४ ई० में जेम्स ने प्रधान शासक (डिप्टी) के रूप में सर आर्थर

चिचेस्टर को आयरलैण्ड भेजा, यह एक न्यायी आदमी था और ऐसा राजनीतिज्ञ था जो यह समझता था कि आयरलैण्ड के साथ समझौता आवश्यक है और उसने इसे करने का प्रयत्न किया। इंग्लिश कानून सफलतापूर्वक स्थापित किया गया और ऐसा प्रतीत होता है कि दौरा जजों का भी स्वागत निर्बलों के संरक्षक के रूप में किया गया। इसके अतिरिक्त कैथोलिकों पर अत्याचार बन्द हो गये।

किन्तु पिछले युग की बुरी परम्पराएँ अब भी बहुत प्रबल थीं। एक ओर अनेक इंग्लिश लोगों ने यह विश्वास करना सीख लिया था कि देश की समस्या के समाधान का एक मात्र उपाय आयरिश भूस्वामियों की बेदखली और इनके स्थान पर इंग्लिश लोगों को बसाना है, सुगमता से प्राप्त होने वाली जमीनों के लालच ने इस विचार को पुष्टि प्रदान की। दूसरी ओर आयरिश सरदारों को यह बड़ा कठिन जान पड़ता था कि वे अपनी पुरानी सत्ता की क्षति को मानने के लिए तैयार हो जाँय अथवा उन लोगों को स्वतन्त्र भूस्वामी स्वीकार करें, जो उनके वशवर्ती रहे थे। सम्भवत: ये आकांक्षाएँ समाप्त हो जातीं, यदि मन्स्टर जैसी बस्तियों में नयी जब्तियों का डर सदैव उनके मन में चक्कर न काटता रहता।

टाइरोन-जिसके साथ समझौता हो चुका था-तथा उसके एक भूतपूर्व वशवर्ती जमींदार के मध्य में एक झगड़ा खड़ा हो गया जिससे नया संकट पैदा हो गया। इस प्रश्न को राजा के सामने ले जाना चाहिए था, किन्तु टाइरोन इंग्लैण्ड जाने के स्थान पर स्वदेश कभी वापस न लौटने के लिए, ओडोनेल लोगों के तथा फर्मेनाग के मैग्वायर लोगों के मुखियाओं के साथ देश से भाग गया (१६०७ ई०)। उसे अकारण ही अथवा किसी कारण से यह सन्देह था कि यदि वह इंग्लैण्ड गया तो गिरफ्तार कर लिया जायगा। स्पेन द्वारा समर्थित एक नये विद्रोह के लिए षड्यन्त्र की भी स्पष्ट चर्चा थी। इसके साथ टाइरोन का सम्बन्ध सम्भव हो सकता था अथवा नहीं भी हो सकता था। कुछ भी हो, उसकी जमीनें तथा अन्य भगोड़ों की जमीनें ज़ब्त घोषित कर दी गयीं। इनके उत्तराधिकार का दावा करने वाले व्यक्ति जब अपनी माँगों को मनवाने में निराश हुए, तब उन्होंने एक छोटा विद्रोह कर दिया और इसने इस बात का अवसर दिया कि छहों जिलों में सब जमीनों की पूरी जब्ती कर ली जाय तथा पहले की किसी भी योजना की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर बस्ती बसाने की एक योजना क्रियान्वित की जाय। यही १६०८ ई० में अल्स्टर का बस्ती बसाना था। इन छहों जिलों में प्रत्येक भूस्वामी बेदखल कर दिया गया, पुराने ढंग से बहुत बड़े बँटवारे किये गये, लंडन के शहर को कोलरेन का समूचा जिला और डेरी नाम का नगर दिया गया। इसीलिए इसके बाद से इस नगर को लन्दनडेरी कहा जाने लगा। पहले की भाँति भूमि का अनुदान पाने वाले बहुत से व्यक्ति अपने अनुदानों की शर्तें पालन करने में विफल रहे और पूरे पैमाने पर यहाँ भ्रष्टाचार और भूमि प्राप्त करने के लिए घूँसखोरी चलती रही।

अल्स्टर की बस्ती बसाने की सबसे बड़ी विशेषता स्काट लोगों की एक बड़ी संख्या थी, यह स्काटलैण्ड से उत्तरी आयरलैण्ड में आयी थी। पिछली शताब्दी में अल्स्टर में स्काटिश लोग बसने के लिए आते रहे थे। अब एक स्काटिश राजा के समय में वे बड़ी संख्या में यहाँ आये और और अपने साथ अपनी भाषा और प्रेसबिटेरियन पद्धति को लाये। इस आव्रजन ने

मुख्य रूप से अल्स्टर के भावी स्वरूप को निश्चित कर दिया। वे अपने साथ उस कठोर परिश्रम की प्रवृत्ति को लाये थे, जो उन्होंने उस बंजर भूमि में सीखी थी, जहाँ जीविका के लिए कठोर परिश्रम आवश्यक था और वे शीघ्र ही समृद्ध होने लगे। वे अपने साथ प्रोटेस्टेण्ट मत का स्काटिश रूप भी लाये और आयरलैण्ड के उस भाग में—जहाँ बस्ती बसाने की क्रूर नीति सबसे अधिक सफलतापूर्वक क्रियान्वित की गयी थी—जीवन की और धार्मिक विश्वास की, इंग्लिश नहीं, किन्तु स्काटिश पद्धति स्थापित की गयी। इस प्रकार तीनों राष्ट्रों के भाग्य आयरलैण्ड की अभागी भूमि में परस्पर सम्बद्ध कर दिये गये।

जेम्स प्रथम के राज्यकाल में अल्स्टर की बस्ती बसाने के बाद वैक्सफोर्ड, लौंगफोर्ड तथा अन्य जिलों में इसी प्रकार न्याय की अवहेलना करते हुए बस्तियाँ बसायी गयी। सामंजस्य और समझौते की नीति अच्छी तरह शुरू करने से पहले ही छोड़ दी गयी। इन बस्तियों ने ऐसी किसी भी आशा का उन्मूलन कर दिया कि आयरिश समुदाय सुरक्षा की भावनाओं के साथ रह सकेगा। अल्स्टर के उदाहरण ने तथा इस ज्ञान ने कि अन्य बस्तियों के बसाये जाने का इरादा है, उस बात को उत्पन्न किया, जिसे आयरलैण्ड में संसदीय विरोध की शुरुआत कहा जा सकता है।

ब्रिटेन के मानस की यह एक विशेषता है कि उसे अन्याय को ढाँपने के लिए भी वैधता ढूंढने के कार्य से विचित्र प्रीति है, इसीलिए पालियामेण्टों को नापसंद करने पर भी जेम्स प्रथम ने १६११ ई० में अल्स्टर में किये गये कार्यों को पुष्ट करने के प्रलोभन से पालियामेण्ट बुलाने का निश्चय किया। इसी समय कैथोलिकों के विरुद्ध नये कानून पेश करने का इरादा था। एलिजाबेथ के समय की विजय के बाद से, आयरिश पालियामेण्ट में देश के सब भागों से प्रतिनिधि सम्मिलित होते थे। किन्तु प्रोटेस्टेण्ट बहुमत को सुरक्षित बनाने के लिए जेम्स ने निश्चय किया कि वह संसद में प्रतिनिधि भेजने वाले कम-से-कम ३९ नये बरो (जिले) बनायेगा। इनमें निर्वाचन के अधिकार का प्रयोग विशुद्ध रूप से प्रोटेस्टेण्ट कारपोरेशनों द्वारा किया जाना था। पालियामेण्ट को इस प्रकार प्रोटेस्टेन्ट लोगों द्वारा भरने के इस सादे प्रयत्न का विरोध पेल के कुलीन सरदारों ने किया। वे उन कारपोरेशनों (महानगरपालिकाओं) के निर्माण के विरुद्ध थे, जो "इसके अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकते थे कि आपके प्रजाजनों को दण्ड देने वाले कानूनों को अवश्य लागू करने की व्यवस्था करें।" १६१३ ई० में जब पालियामेण्ट की बैठक हुई तो दोनों सदनों के कैथोलिक अलग हो गये, उन्होंने उस समय तक कोई कार्य करना अस्वीकार किया, जब तक कि उन्हें राजा के सामने अपनी शिकायतों को पेश करने के लिए एक शिष्ट-मण्डल भेजने की अनुमति न दी जाय। जेम्स ने चतुराई से यह देख लिया कि प्रार्थनाएँ विद्रोह से अधिक अच्छी होतीं हैं। अब उसने एक जाँच आयोग नियुक्त कर दिया, यद्यपि इसने कोई सन्तोषजनक रिपोर्ट नहीं दी, तथापि उस अत्याचार करने वाले कानून को बनाने का विचार छोड़ दिया गया, जिसके बनाने का विचार हो रहा था और संसदीय कार्य कुछ उपयोगी ही सिद्ध हुआ। अगले अधिवेशन में पालियामेण्ट ने एक आर्थिक सहायता स्वीकार की, इसे इसका पारितोषिक इस रूप में दिया गया कि उसे ऐसे कानून पास करने की अनुमति दी गयी, जो आयरलैण्ड में जातियों के बीच में अब कानूनी भेदों को हटाने वाले थे और आयरिश

तथा स्काट लोगों के बीच में अन्तर्विवाह के निषेध को वापस लेने वाले थे। यह एक अच्छे युग की शुरूआत हो सकती थी, किन्तु ऐसा नहीं हुआ। कुछ भी हो, ब्रिटिश द्वीपसमूह के अन्य भागों की भाँति, यह आयरलैंड में सरकार की अन्यायपूर्ण और मूढ़तापूर्ण नीति के विरुद्ध संवैधानिक विरोध की शुरूआत थी।

चार्ल्स प्रथम के राज्यकाल के आरम्भ में ऐसा प्रतीत होता था कि समझौते के लिए एक अधिक अच्छा अवसर आ गया है। फ्रांस और स्पेन के विरुद्ध युद्ध होने से और इंग्लिश पार्लियामेण्ट से कोई धन न मिलने के कारण चार्ल्स इन दोनों बातों के लिए उत्सुक था कि आयरलैण्ड को शान्त रखा जाय और यदि सम्भव हो तो पार्लियामेण्ट से धन प्राप्त किया जाय। यदि हो सके तो यह कार्य पार्लियामेण्ट के बिना ही किया जाय। अत. १६२६ ई० में उसने लार्ड डिपुटी, लार्ड फोकलैण्ड को निर्देश दिया कि वह कुलीन और भद्रवर्ग से यह पता लगाये कि क्या वे एक सेना को रखने का व्यय दे देंगे बशर्ते कि वह उन्हें कुछ निश्चित रियायतें दे दे। ये रियायतें कृपाओं (Graces) के नाम से प्रसिद्ध हुईं। इन 'कृपाओं' के अनुसार चर्च में अनुपस्थिति के लिए किये जाने वाले जुर्माने बन्द किये जाने थे, पद ग्रहण करते समय सर्वोच्च सत्ता की शपथ को कैथोलिकों के लिए अनुकूल रूप से संशोधन किया जाना था, और सबसे बढ़ कर यह बात थी कि ६० वर्ष से निरन्तर भूमि पर स्वामित्व रखने वाले व्यक्तियों के इस अधिकार को ऐसा बनाया जाना था कि यह उनसे कभी न छीना जा सके। इस प्रकार इसमे भावी जातियों का और इंग्लिश लोगों की बस्तियों का बसाना बन्द हो जाता था। कुछ विवाद के बाद ४० हजार पौण्ड वार्षिक के अनुदान पर सहमति हो गयी और यह सौदा बाद में पार्लियामेण्ट द्वारा पुष्ट किया जाना था। इन सिद्धान्तों पर समझौता और सद्भावना सम्भव थी।

किन्तु इस समझौते को पुष्ट करने वाली पार्लियामेण्ट प्रति वर्ष स्थगित की जाने लगी और इस बीच में लार्ड डिप्टी ने विक्लो में बिरनेस लोगों का ऐसा भीषण दमन इस दृष्टि से किया कि उन्हें बेदखल करके वहाँ नयी बस्ती बसायी जाय। इससे पुराना अविश्वास उत्पन्न हो गया। समझौते का एक स्वर्ण अवसर गँवा दिया गया।

२. वैण्टवर्थ की आयरिश नीति

१६३२ ई० में, चार्ल्स ने आयरलैण्ड में उसकी सरकार में भाग लेने वाले, सबसे योग्य व्यक्ति पार्लियामेण्ट के पुराने नेता वैण्टवर्थ को भेजा। देश के सन्तापपूर्ण इतिहास में उसका शासन एक संकटपूर्ण युग का निर्माण करता है। वैण्टवर्थ का प्रधान लक्ष्य—जैसा कि अपने मित्र लार्ड के साथ पत्र-व्यवहार में उसने स्पष्ट किया था—आयरलैण्ड को राजकीय शक्ति का एक प्रबल गढ़ बनाना था। यह देश भूतकाल में एक कमजोरी बना हुआ था, किन्तु अब इसे ऐसा स्रोत बनाया जाना था जिससे राजा सेनाएँ तथा अन्यत्र अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए धन को भी प्राप्त कर सके। वह इतना बुद्धिमान था कि वह यह समझता था कि ऐसा करने का एक आवश्यक साधन देश को समृद्ध और सन्तुष्ट बनाना है। उसने अपने संक्षिप्त कार्य काल में इस दिशा में बहुत कुछ किया और शासन में उस क्षमता को

प्रदर्शित किया जिसे वह "पूर्णता" (Thorough) का नाम देता था। उसने लिनन (अलसी के रेशे के कपड़े) के उद्योग के विकास पर बहुत ध्यान दिया, यह शीघ्र ही आयरलैण्ड की सम्पत्ति का स्रोत बन गया। उसने आयरिश मछलीगाहों के प्रोत्साहन के लिए स्पेन के साथ एक व्यापारिक सन्धि की। उसने पशुओं की नस्ल सुधारी और आयरिश व्यापार की प्रधान वस्तुओं-खालों तथा चर्बी—के नि.शुल्क निर्यात पर बल दिया। उसने वनों के संरक्षण के लिए बड़ा उद्योग किया तथा वह खनिजों की खोज के लिए विशेषज्ञों को लाया। अपनी नीति के सभी आर्थिक पक्षों में, उसने आयरलैण्ड की बहुत भलाई की। आयरलैण्ड ने उसके शासन में ऐसी समृद्धि का उपभोग किया, जैसा उसने पहले कभी नहीं किया था। इसी समय में सामान्य व्यक्तियों के लिए व्यवस्था की स्थापना और न्याय के प्रशासन को बड़ी कड़ाई के साथ लागू किया गया, यद्यपि वैण्टवर्थ व्यक्तियों के प्रति भीषण अन्याय का अपराधी था। डबलिन में कैसल चैम्बर[1] के न्यायालय का बड़ा उपयोग किया गया। यह न्यायालय इंग्लैण्ड के स्टार चैम्बर के नमूने पर बनाया गया था। फिर भी चार्ल्स प्रथम के आयरलैण्ड में इस प्रकार का विशेषाधिकार प्राप्त न्यायालय इंग्लैण्ड की अपेक्षा कम आपत्तिजनक था। वह वैसा ही अच्छा प्रयोजन पूरा कर सकता था, जैसा प्रयोजन स्टार चैम्बर ने हेनरी सप्तम के शासनकाल में पूरा किया था।

किन्तु वैण्टवर्थ की नीति की बड़ी बातें सभी पुरानी अभागी विशेषताओं के कारण खराब हो गयीं। पहली विशेषता यह थी कि उसके कार्यों ने इस धारणा को बहुत पुष्ट कर दिया कि इंग्लिश सरकार के वचनों पर विश्वास नहीं किया जा सकता। १६२६ ई० की 'कृपाओं' (Graces) के मौन सौदे को क्रियान्वित करने के लिए बुलायी गयी। १६३४ ई० की पहली पार्लियामेण्ट से उसने इस बात पर आग्रह किया कि प्रजाजनों की शिकायतों का प्रतिकार किये जाने से पहले राजा की आवश्यकताओं को पूरा किया जाना चाहिये, किन्तु जब जब उसने आर्थिक सहायताओं का एक बहुत बड़ा अनुदान इस आशा पर पास करा दिया कि "कृपाओं को" प्रदान किया जायेगा, तो उसने केवल उन्हीं कृपाओं को स्वीकार करने का कार्य आरम्भ किया जो उसकी दृष्टि में राजकीय विशेषाधिकार के प्रतिकूल नहीं थीं। उसने जिन 'कृपाओं' को छोड़ दिया, उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण यह वचन था कि साठ वर्ष के स्वामित्व को भूमि पर स्वत्व माना जाना चाहिये। वह अपनी इस चालाकी और चतुराई पर बड़ा अभिमान करता था कि उसने माल दिये बिना ही बहुत अच्छा मूल्य प्राप्त कर लिया है। किन्तु बेईमानी कभी नहीं फलती, समझौते के लिए तैयार आयरिश भद्रवर्ग ने न केवल यह अनुभव किया कि उन्हें धोखा दिया गया है, किन्तु उन्हें यह निश्चय हो गया कि इंग्लिश सरकार पर कभी विश्वास नहीं किया जा सकता।

इसके अतिरिक्त वैण्टवर्थ अब सब बस्तियों की अपेक्षा अधिकतम अन्यायपूर्ण बस्ती बसाने के लिए तैयारी करने लगा। यह उस वस्तु की अवहेलना करके क्रियान्वित की जा सकती थी,

१. कैसल चैम्बर (Castle Chamber) आयरलैण्ड में ब्रिटिश वायसराय का न्यायालय तथा प्रशासन का केन्द्र था।

जिसे प्रत्येक आयरिश व्यक्ति राजा का पवित्र वचन समझता था और जिसके लिए मूल्य भी दिया जा चुका था। वह कनाट में एक इंग्लिश बस्ती बसाना चाहता था। इसकी तैयारी के लिए उसने उस समय विद्यमान जमींदारों के स्वत्वों के बारे में इस प्रकार की जाँचों की एक शृंखला आरम्भ कर दी, जिसमें भूमि पर दीर्घतम समय से अधिकार रखने का कोई महत्त्व नहीं था। प्रत्येक व्यक्ति यह जानता था कि इसका क्या परिणाम होगा। इस बस्ती के कार्य को कभी क्रियान्वित नहीं किया गया, क्योंकि इस समय स्काटलैण्ड में युद्ध छिड़ गया और इंग्लैण्ड में पार्लियामेण्ट के आह्वान ने इसकी कार्यवाही समाप्त कर दी। किन्तु जब संकट आया, उस समय जिस आयरलैण्ड को राजा की ढाल बनना चाहिये था, वह संघर्ष से पृथक् एवं क्रुद्ध बना रहा।

अन्त में, वैण्टवर्थ ने उत्तर के प्यूरिटन लोगों पर एक विद्वेषपूर्ण आक्रमण को प्रोत्साहित किया। ये आयरिश प्रोटेस्टेण्टों में सबसे अधिक संख्या रखने वाले और दृढ़ विश्वासी थे। ये उसे इसलिए बुरे प्रतीत होते थे, क्योंकि वे अपने हठी, स्काटिश देशभाइयों के विचारों से सहमत थे। इस अत्याचार से पीड़ित होकर वे कैथोलिकों की भाँति राजा की सरकार के प्रत्याख्यान के लिए तैयार थे। जब स्काट लोगों के सफल प्रतिरोध के कारण समूचे ब्रिटिश द्वीपसमूह की भाग्यलक्ष्मी के लिए एकाएक महान संकट उत्पन्न हुआ, उस समय इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की भाँति आयरलैण्ड भी क्रान्ति के लिए तैयार था।

३. स्काटलैण्ड : जेम्स प्रथम का निरंकुश शासन

हम एक पिछले अध्याय में देख चुके हैं कि यूरोप में धार्मिक सुधार आन्दोलन से जितना गहरा परिवर्तन स्काटलैण्ड में हुआ, उससे अधिक परिवर्तन अन्यत्र कहीं नहीं हुआ। इसने न केवल स्काटिश लोगों में धर्मशास्त्रीय प्रश्नों में एक गम्भीर अभिरुचि को तथा हाइलैण्ड्स के हिस्सों को छोड़ कर, रोम के प्रति एक तीव्र घृणा को उत्पन्न किया था, अपितु इसने राष्ट्रीय भावना को भी उग्र बनाया था और चर्च की शासक संस्थाओं में एक राष्ट्रीय संगठन का निर्माण किया था। प्रेसबिटेरियन पद्धति ने प्रतिनिधि संस्थाओं की एक शृंखला स्थापित की थी। प्रत्येक पेरिश के लिए चर्च कर्क सैशन, छोटे क्षेत्रों के लिए प्रेसबिटरी अथवा धर्मसभाएँ, प्रान्तों के लिए साइनाड या प्रान्तीय धर्मपरिषदें तथा समूचे देश के लिए एक सामान्य सभा थी, इसमें गृहस्थ व्यक्ति और पुरोहित दोनों सम्मिलित होते थे। यह निर्बल, शिथिल तथा अप्रतिनिध्यात्मक स्काटिश पार्लियामेण्ट की अपेक्षा राष्ट्रीय मानस की कहीं अधिक प्रभावशाली अभिव्यक्ति करती थी। चर्च का यह लोकतन्त्रीय संगठन राजनीति में भी भाग लेने के लिए उत्सुक हो रहा था और एण्ड्रयू मेलविले जैसे इसके पक्षपोषक प्रमुख पुरोहित कुछ समय के लिए राजा पर धौंस जमाते रहे और उसे काफी नियन्त्रित करते रहे। इस प्रकार स्काटिश ताज ने यह अनुभव किया कि उसकी शक्ति न केवल इसके पुराने शत्रु कुलीन सरदारों से, अपितु एक नयी तथा आक्रमणात्मक शक्ति से भी नियन्त्रित हो रही है।

यद्यपि कुलीन सरदारों ने इसे अनिच्छापूर्वक स्वीकार कर लिया था, तथापि वे प्रेस-बिटेरियनवाद की लोकतन्त्रीय पद्धति को पसन्द नहीं करते थे और इसकी शक्ति को तोड़ने

में सहायता करने के लिए तैयार थे। ऐसा प्रतीत होता था कि कर्क को तथा कुलीन सरदारों को एक दूसरे के विरुद्ध लड़वा कर राजा अपनी शक्ति पुनः प्राप्त करने का मौका पा सकता था। इंग्लिश राजगद्दी पर बैठने से पहले ही जेम्स षष्ठ ने इस अवसर का उपयोग इतनी चतुराई से किया था कि वह अपनी राजनीतिक कुशलता पर अच्छी तरह गर्व कर सकता था। उसकी नयी स्थिति ने उसे जो शक्ति प्रदान की थी, उसने उसे इस प्रक्रिया को इतनी दूर तक ले जाने में समर्थ बनाया था, जिससे वह इंग्लिश पार्लियामेण्ट के आगे यह डींग हाँक सकता था (मानो वह उन्हें इस बात का उदाहरण दे रहा था कि यदि उसकी बात चल सके तो वह इंग्लैण्ड में क्या करेगा) कि "यह बात मैं स्काटलैण्ड के लिए कह सकता हूँ और मैं वस्तुतः इस पर गर्व कर सकता हूँ : मैं यहाँ बैठा हूँ और अपनी कलम से शासन करता हूँ; मैं केवल लिखता हूँ और जो चाहता हूँ, वह हो जाता है; और अब मैं उस स्काटलैण्ड का शासन अपनी परिषद् के एक लेखक द्वारा करता हूँ जिसका शासन अन्य व्यक्ति तलवार से नहीं कर सके।" यह एक स्पष्ट चेतावनी थी। एक और उदाहरण के रूप में स्काटलैण्ड की कार्यवाहियों का इंग्लैण्ड में तथा विशेष रूप से स्काटिश पद्धति से सहानुभूति रखने वाले प्यूरिटन लोगों में बड़ा प्रभाव पड़ा। जेम्स और चार्ल्स की नीति ने स्काटलैण्ड में जो क्रान्ति उत्पन्न की, उसने इंग्लैण्ड में विरोध के अन्तिम विस्फोट में हल्की सहायता पहुँचायी।

कर्क (चर्च) के प्रति कुलीन लोगों की ईर्ष्या का लाभ उठाते हुए सरकार के सामान्य शासन-यन्त्र पर पूरा राजकीय नियन्त्रण स्थापित करने में जेम्स वस्तुतः सफल हो गया। पार्लियामेण्ट बैरन लोगों के विरोध के एक अंग के अतिरिक्त, कभी भी प्रभावशाली और स्वतन्त्र नहीं थी। अब वह राजकीय शक्ति का एक मात्र साधन रह गयी। बरो के सदस्य स्थानीय मैजिस्ट्रेटों द्वारा नियुक्त किये जाते थे, ये मैजिस्ट्रेट राजा द्वारा हटाये जा सकते थे। अतः बरो के सदस्य वस्तुतः राजा के मनोनीत व्यक्ति होते थे। जिलों में एक मात्र वोट देने वाले छोटे बैरनों के प्रतिनिधियों की भी व्यवस्था शेरिफ किया करते थे। किन्तु इसकी अपेक्षा भी एक अधिक प्रत्यक्ष नियन्त्रण इस समय प्राप्त कर लिया गया। एक पुराने रिवाज के अनुसार पार्लियामेण्ट के सामने पेश किये जाने वाले कार्य को लार्ड्स आफ दि आर्टिकल्स (Lords of the Articles) नामक चौबीस व्यक्तियों की एक समिति तैयार करती थी। इस समिति में प्रत्येक सामाजिक वर्ग या इस्टेट के प्रतिनिधि होते थे। इस समिति द्वारा सब बिल तैयार किये जाते थे और इस पर सामूहिक रूप से एक साथ वोट दिया जाता था। इस प्रक्रिया ने पार्लियामेण्ट को उपचार मात्र बना दिया था। जेम्स ने ऐसा प्रयत्न किया कि लार्ड्स आफ दि आर्टिकल्स की नामजदगी क्रियात्मक रूप से उसके हाथ में आ गयी।

प्रशासन का वास्तविक संचालन प्रिवी कौंसिल के हाथ में था। स्काटलैण्ड में उसके अधिकार इंग्लैण्ड की प्रिवी कौंसिल की अपेक्षा भी अधिक थे। यह एक साथ कानून निर्माण, शासन, तथा न्याय पालन की शक्तियों का प्रयोग करती थी। पहले प्रिवी कौंसिल का कुछ अंश स्टेट द्वारा नामजद होता था, जेम्स ने इसके प्रत्येक सदस्य को नामजद करने का एक मात्र विशेषाधिकार प्राप्त करने में सफलता पायी और प्रिवी कौंसिल के माध्यम से ही उसने स्काटलैण्ड का शासन किया, यद्यपि निस्सन्देह कुछ प्रमुख कुलीन सरदारों को इस कौंसिल में रखना पड़ता था।

वस्तुत: राजा इंग्लैण्ड की राजगद्दी पर बैठने के बाद विशेष रूप से अपने उत्तरी राज्य का निरंकुश राजा था, जब कि असन्तुष्ट दल उसके पास नहीं पहुँच सकते थे। वह लन्दन से अपनी शक्ति का प्रयोग करता था; १६०३ ई० के बाद वह केवल एक बार स्काटलैण्ड गया और केवल ११ सप्ताह वहाँ रहा। यह अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि कम-से-कम एक दृष्टि से, उसने अपनी शक्ति का सदुपयोग किया। उसने सीमान्त प्रदेश के उपद्रवों का तथा अव्यवस्था का अन्त किया; उसने हाइलैण्डर्स की अराजकता को भी सीमाओं के भीतर कम कर दिया। इस उद्देश्य के लिए उसका एक कार्य डकैती करने वाली मेकग्रेगोर नामक जनजाति को कानूनी संरक्षण से वंचित करना था।

ताज (Crown) की शक्ति पर एक मात्र नियन्त्रण वास्तव में कर्क की तथा विशेष रूप से उस सामान्य असेम्बली की प्रतिनिधि संस्थाओं में निहित था, जिनके बारे में यह कल्पना की जाती थी कि साल में एक बार उनकी बैठक होगी और जिनकी उपेक्षा आसानी से नहीं की जा सकती थी। अत: स्काटलैण्ड पर पूर्ण प्रभुत्व पाने के लिए जेम्स के लिए सामान्य असेम्बली से मुक्ति पाना आवश्यक था। उसका लक्ष्य यह था कि वह इसकी सत्ता के स्थान पर अपने द्वारा नामजद किये गये बिशपों की सत्ता स्थापित करे। यह उसे चर्च की सरकार का आदर्श रूप प्रतीत होता था। किन्तु यह परिवर्तन बड़ी सावधानी से शुरू करना था, क्योंकि स्काटिश जनता अपनी पद्धति की भक्त थी।

इंग्लिश राजगद्दी पर बैठने से भी पहले उसने स्काटिश पार्लियामेण्ट से ऐसे बिशपों को नामजद करने का अधिकार प्राप्त कर लिया था (१६०० ई०), जिन्हें चर्च की इस्टेट के प्रतिनिधियों के रूप में पार्लियामेण्ट में बैठना चाहिये। इस प्रकार पार्लियामेण्ट को चर्च के मामलों पर बोलने का वह अधिकार मिल गया, जो पुराने बिशपों की समाप्ति के बाद से यह कठिनाई से भी नहीं प्राप्त कर सकती थी। किन्तु नये बिशपों केवल पेरिशों के पादरी थे और पड़ोसियों पर अभी तक उनका कोई धार्मिक अधिकार नहीं था। इसी समय जेम्स ने इस बात का पूरा प्रयत्न किया कि सामान्य असेम्बली की बैठकों से बचा जाय। उसने १६०३ ई० से १६१० ई० तक किसी बैठक की अनुमति नहीं दी, १६०४ ई० में जब कुछ पुरोहितों ने इसकी बैठक बुलवाने पर आग्रह किया तो उसने उन पर मुकदमा चलवाया और राजद्रोह के अपराध में उन्हें दण्डित करवाया, यद्यपि वह इनका वध कराने का साहस नहीं कर सका। १६०६ में ई० उसने एक कानून पास करवाया। इस कानून ने उसे यह शक्ति प्रदान की कि वह ताज के स्वामित्व में विद्यमान चर्च की जमीनों को अपने बिशपों को प्रदान कर सके। १६१० ई० में उसने सावधानी पूर्वक अपने समर्थकों से भरी हुई एक असेम्बली को ग्लासगो में इस प्रयोजन से बैठक करने की अनुमति दी कि यह बिशपों को प्रान्तीय धर्म सभाओं में साइनाडों के सभापति बनने का तथा पुरोहितों को दीक्षा देने का अधिकार प्रदान करे। सामान्य असेम्बली का तथा प्रान्तीय धर्म-सभाओं का अन्त नहीं किया गया, यद्यपि इनकी बैठक केवल ताज की अनुमति से ही होती थी। बिशपों के अधिकार सीमित थे और उनकी आमदनी बहुत कम थी, क्योंकि उनके पूर्ववर्ती रोमन कैथोलिक बिशपों की अधिकांश जमीनें कुलीन सरदारों के हाथों में थीं। किन्तु निस्सन्देह राजा को एक ऊपरी विजय प्राप्त हुई। यह केवल ऊपरी थी, क्योंकि स्काटलैण्ड अब

भी दिल से प्रेसबिटेरियन था और चर्च के शासन की अपनी लोकप्रिय पद्धति में हस्तक्षेप को बहुत अधिक नापसन्द करता था।

किन्तु जेम्स अब भी सन्तुष्ट नहीं था। १६१६ ई० में उसने एबर्डीन में एक असेम्बली की। यह स्थान बहुत दूरी पर तथा स्काटिश नगरों में सबसे कम प्रेसबिटेरियन था; यहाँ उसने धार्मिक विश्वास के अनुसार पाप स्वीकार करने की एक नवीन पद्धति को तथा सार्वजनिक प्रार्थना की नयी पद्धति को पास करवाया। किन्तु जब उसने उन पाँच बातों की व्याख्या की, जिनके बारे में वह कानून बनाना चाहता था और जिनमें कम्यूनियन के समय घुटनों पर झुकने और सम्पुष्टि (Confirmation) आदि जैसे मामलों की व्यवस्था थी तो बिशपों ने भी बल दिया कि ऐसा करना सुरक्षापूर्ण नहीं होगा। एक परवर्ती परिषद ने पर्थ में (१६१८ ई०) ये धाराएँ स्वीकार कीं। किन्तु ये केवल बिशपों और कुलीन सरदारों के वोट से ही स्वीकार की गयीं। जेम्स ने यह एक दूसरी विजय प्राप्त की थी, किन्तु यह विजय पराजय की अपेक्षा अधिक खतरनाक थी।

४. चार्ल्स प्रथम की नीति के विरुद्ध स्काट लोगों का विद्रोह

किन्तु अब भी स्काटिश चर्च इंग्लिश चर्च का अंग नहीं बना था। यह कार्य चार्ल्स प्रथम के लिए बचा हुआ था; उसने चर्च को इंग्लिश बनाने का कार्य अपने लिए भगवान की ओर से सौंपा गया कर्त्तव्य समझा। किन्तु अपनी सारी जवानी इंग्लैण्ड में बिताने के बाद उसमें स्काटिश मामलों को समझने की शक्ति नहीं थी। उसमें इस बात को समझने की भी सामर्थ्य नहीं थी कि उनके साथ व्यवहार में कितनी दूर तक जाना खतरे से खाली है। इस प्रकार इस विषय में उसमें वह चातुर्यपूर्ण समझ नहीं थी, जो उसके पिता में सदैव विद्यमान रहती थी।

अपने राज्य के पहले वर्षों में वह विदेशी युद्धों में तथा पार्लियामेण्ट के साथ झगड़ों में इतना अधिक फँसा हुआ था कि उसे स्काटलैण्ड जाने का अवसर नहीं मिला। किन्तु ऐसा होने पर भी उसकी नीति का प्रभाव प्रतीत होने लगा। उसने छः कुलीन सरदारों को हटाते हुए इनके स्थान पर प्रिवी कौंसिल में छः बिशप नियत किये। इससे कुलीन सरदार क्रुद्ध हो गये। वे कर्क को व्यवस्था में रखने के लिए बिशपों को खड़ा करने में जेम्स की सहायता करने के लिए तैयार थे; किन्तु यदि उन्हें हटा कर उनके स्थान पर अन्य बिशप लाये जाने थे तो यह दूसरा मामला था। पुनः बिशपों के लिए पर्याप्त जमीनें और सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए उसने अपने इस इरादे की घोषणा की कि वह मेरी के राज्यकाल के प्रारम्भ से चर्च को दिये गये अनुदानों को रद्द कर देगा और जिन दशांश करों की वसूली मुख्य रूप से निजी व्यक्तियों के हाथों में चली गयी है, उन्हें वह चर्च को पुनः प्रदान करेगा। यह ऐसी क्षतिपूर्ति थी जो उस मूल्य से बहुत कम थी जो वास्तविक स्वामियों को प्रदान की जा रही थी। इसका अन्तिम परिणाम यह था कि स्काटलैण्ड के जिस चर्च को किसी अन्य चर्च की अपेक्षा कुलीन सरदारों ने अधिक निर्लज्जतापूर्ण रीति से लूटा था, उस चर्च को अब तक की स्थिति की अपेक्षा अधिक अच्छी स्थिति में रख दिया गया, चाहे इसका संगठन बिशप-पद्धति के आधार पर किया जाय

अथवा प्रेसबिटेरियन पद्धति के आधार पर किया जाय, यह बात दोनों दशाओं में सत्य थी। किन्तु स्काटलैण्ड में लगभग प्रत्येक जमीन रखने वाले परिवार पर इस परिवर्तन का हानिकारक प्रभाव पड़ा। इन दो व्यवस्थाओं ने ताज और कुलीन सरदारों की उस मित्रता को भंग कर दिया, जिसने जेम्स को अपनी शक्ति स्थापित करने में समर्थ बनाया था और इन व्यवस्थाओं ने कुलीन सरदारों को विरोधी दल में जाने के लिए तैयार कर दिया। यदि कुलीन सरदार और कर्क मिल जांय, तो उनका प्रतिरोध उस समय तक नहीं किया जा सकता था, जब तक कि इंग्लैण्ड की शक्ति का दबाव उन पर न डाला जा सके।

१६३३ ई० के अन्त में चार्ल्स प्रथम राज्याभिषेक के लिए एडिनबरा गया। राज्याभिषेक में इंग्लैण्ड के चर्च की पूर्ण विधियों का अनुसरण किया गया। प्रेसबिटेरियन लोग इससे बड़े भयभीत हुए कि बिशपों ने पूरी पोशाक पहनी हुई थी, वहाँ मोमबत्तियाँ थीं, एक बेदी और एक क्रास था। कट्टर स्काट लोगों की दृष्टि में यह सब कोरा पोपीय आडम्बर था। अपने समर्थकों से भरी हुई एक पार्लियामेण्ट द्वारा धर्म पर प्रभाव डालने वाले दो कानून इसी समय कुछ विरोध होते हुए भी जबर्दस्ती पास कराये गये। कुलीन सरदारों तक ने एक प्रतिवाद-पत्र तैयार किया। चार्ल्स ने इसे स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। एक कानून बना कर पर्थ की आपत्तिजनक व्यवस्थाओं को जबर्दस्ती लागू किया गया। दूसरे कानून द्वारा यह आवश्यक बनाया गया कि सब पुरोहितों को—चोगा (Surplice)[1] अवश्य पहनना चाहिए। यह प्रतीति होना सम्भव था कि ये छोटे मामले थे, किन्तु १० में से ९ स्काटों के लिए ये केवल रोम के प्रतीक थे। जब चार्ल्स वापस इंग्लैण्ड लौटा तो उसने स्काटलैण्ड को यह विश्वास करा दिया था कि वह इनके धर्म का शत्रु है। यदि इंग्लैण्ड में पार्लियामेण्ट की बैठक हो रही होती तो यह सम्भव था कि कष्टपीड़ित स्काटिश प्यूरिटनवाद के साथ सहानुभूति का कुछ प्रदर्शन होता। किन्तु इस समय और अगले सात वर्ष के लिए पार्लियामेण्ट स्थगित थी। वैयक्तिक शासन का परीक्षण प्रतीयमान सफलता के साथ किया जा रहा था। इंग्लैण्ड समृद्ध तथा शान्त था। स्काट लोगों को अपनी ही शक्ति को देखना था। किन्तु उनका विरोध इतना प्रभावशाली था कि कुछ ही वर्षों में इसने न केवल स्काटलैण्ड में ही राजा को परेशान किया; किन्तु इसने इंग्लैण्ड में बड़े प्रयासपूर्वक निर्माण की गयी उसकी शक्ति के ढाँचे को चकनाचूर करके धराशायी कर दिया।

चार्ल्स ने अब कैण्टरबरी का आर्कबिशप बने हुए अपने उस परामर्शदाता लॉड के पथ-प्रदर्शन मे स्काटिश चर्च के परिवर्तन के उस कार्य को व्यवस्थित रीति से पूर्ण बनाना आरम्भ कर दिया, जिस कार्य को उसने १६३३ में आरम्भ किया था। उसने अपने ही अधिकार से और स्काटिश पार्लियामेण्ट अथवा सामान्य असेम्बली से सलाह लिये बिना एक नया हाइ कमीशन न्यायालय स्थापित किया। इसे उसकी इच्छा को लागू करने के लिए जाँच करने के व्यापक अधिकार थे। १६३५ ई० में इसी प्रकार बिना परामर्श के उसने चर्च के ऐसे नियमों

---

१. यह पूजा के समय पुरोहितों द्वारा धारण किया जाने वाला, पूरी आस्तीन का एक ढीला चोगा है।

की एक बड़ी पुस्तक प्रकाशित करवायी जिन नियमों के अनुसार अब से स्काटिश चर्च की सरकार का और कर्मकाण्ड का निर्धारण किया जाना चाहिए था । जेम्स प्रथम कम-से-कम जनरल असेम्बली से अथवा पार्लियामेण्ट से अथवा दोनों से परामर्श करने का ढोंग सदैव बनाये रखता था, किन्तु अब ये दोनों आवरण हटा कर दूर फेंक दिये गये । इसके अतिरिक्त नियमों का स्वरूप इस प्रकार का था कि वह जॉन नाक्स द्वारा स्थापित की गयी उपासना के उन रूपों को एकदम रद्द करता था, जिन्होंने हाल के सभी परिवर्तनों में अपना स्थान बनाये रखा था । अन्य बातों के साथ धार्मिक नियमों के अनुसार यह भी आवश्यक बना दिया गया था कि सार्वभौम रीति से एक सामान्य प्रार्थनापुस्तक को स्वीकार किया जायगा । यह अभी तक प्रकाशित नहीं की गयी थी, किन्तु अगले वर्ष इसके प्रकाशन का वचन दिया गया था । राजकीय स्वेच्छाचार (Royal Autocracy) इससे आगे नहीं जा सकता था ।

स्काटिश बिशपों के एक समूह द्वारा इंग्लिश प्रार्थनापुस्तक के आधार पर तैयार की गयी; नयी प्रार्थना पुस्तक सब लोगों द्वारा लॉड की कृति समझी जा रही थी । पहली बार २३ जुलाई १६३७ ई० को एडिनबरा में सेण्ट गाइल्स के उस चर्च में इसके पढ़े जाने का निश्चय किया गया, जहाँ नाक्स और मेलविले ने प्राय: उपदेश दिये थे । यद्यपि यहाँ चर्च और राज्य के सभी महत्त्वपूर्ण अधिकारी उपस्थित थे, तथापि इसे पढ़ने के प्रयत्न से दंगा उत्पन्न हो गया । इस प्रार्थनापुस्तक को एडिनबरा के एक भी चर्च में नहीं सुना जा सका और देश के सभी भागों में इसका ऐसा विरोध हुआ कि सब दिशाओं से—पेरिशों से और प्रेसबिटरीज से, कुलीन सरदारों से और नगरनिवासियों से, आवेदन पत्र आने लगे । चार्ल्स ने इन पर कोई ध्यान नहीं दिया । उपद्रव इतना अधिक बढ़ गया कि निराशाजनक स्थिति में स्काटिश प्रिवी कौंसिल इस बात के लिए तैयार हो गयी कि वह चार समितियों की स्थापना करे, जो आवेदन पत्रों में भाग लेने वाले कुलीन सरदारों, जमींदारों, नगरवासियों और पुरोहितों का प्रतिनिधित्व करें । उसने यह इस आशा से किया था कि वे व्यवस्था बनाये रखने में सहायता देंगे । जब चार समितियाँ इस बात पर सहमत हो गयीं कि वे प्रत्येक समिति के प्रतिनिधि रखने वाली एक केन्द्रीय समिति को स्थापित करें तो राष्ट्रीय प्रतिरोध (क्योंकि यह अब इससे कम नहीं था) इसे संचालित करने वाली एक संस्था के रूप में सुसज्जित हो गया । इससे बढ़ कर यह बात थी, क्योंकि प्रिवी कौंसिल व्यवस्था बनाये रखने में नपुंसक पायी गयी थी, अत: ये समितियाँ (Tables) शीघ्र ही देश में एकमात्र प्रभावशाली संघ बन गयीं । स्काट लोगों ने संयुक्त प्रतिरोध का संगठन करने में अपना विलक्षण चातुर्य प्रदर्शित किया था ।

जब इन समितियों ने राजा के नियमों की तथा प्रार्थनापुस्तक की वापसी के लिए और प्रिवी कौंसिल से बिशपों को हटाने के लिए एक आवेदन-पत्र भेजा (दिसम्बर १६३७ ई०) तो चार्ल्स ने एक सार्वजनिक घोषणा में यह उत्तर दिया कि प्रार्थनापुस्तक को वापिस नहीं लिया जायगा और इसके विरुद्ध दिये गये आवेदन पत्र अवैध हैं; आवेदन पत्र देने वालों को राजद्रोह के लिए दण्डित किया जायगा । एक संयुक्त राष्ट्र के विरुद्ध ऐसी घोषणा व्यर्थ थी । समितियों ने एक राष्ट्रीय समझौता (Covenant) तैयार करना शुरू किया । यह राजा के पिता की स्वीकृति से १५८१ ई० में बनाये गये एक धार्मिक सिद्धान्त पर आधारित था, और रोम की

निन्दाओं से परिपूर्ण था, किन्तु इसमें अभी हाल की नूतन पद्धतियों की निन्दा को तथा सच्चे धर्म और ताज की रक्षा के लिए एक गम्भीर शर्त को भी बढ़ाया गया था। स्काट लोग यह समझते थे कि सच्चे धर्म को केवल राजा से ही खतरा है, दोहरी निष्ठा को बनाये रखना सम्भव नहीं है।

राष्ट्रीय समझौते को एडिनबरा के ग्रेफ्रियर चर्च में जनता के हस्ताक्षरों के लिए रख दिया गया। इस पर हस्ताक्षर करने के लिए आने वाली भीड़ें इतनी अधिक थीं कि इसे चर्च के आँगन में एक चौड़े समाधि प्रस्तर पर बाहर ले जाना पड़ा। मनुष्य इस पर रोते हुए हस्ताक्षर करते थे, कुछ इस पर अपने खून से हस्ताक्षर करते थे; न केवल एडिनबरा में किन्तु स्काटलैण्ड के प्रत्येक पेरिश में हस्ताक्षर करने की विधि बड़े प्रभावशाली दृश्यों के साथ हुई। एक संयुक्त राज्य के ऐसे संकल्प के विरुद्ध कोई भी प्रतिरोध तब तक सफल नहीं हो सकता था, जब तक इसका समर्थन बहुत बड़ी शक्ति के साथ न किया जाय और चार्ल्स ऐसी बड़ी शक्ति का प्रयोग इंग्लिश पार्लियामेण्ट से धन माँगे बिना नहीं कर सकता था। वह केवल टालमटोल कर सकता था। उसने हैमिल्टन के मार्क्विस को अपना प्रतिनिधि बना कर भेजा। "मैं तुम्हें इस बात की इजाजत देता हूँ कि तुम जिन आशाओं से चाहो, उन आशाओं से स्काट लोगों को खुश करो......। तुम्हारा मुख्य लक्ष्य किसी भी प्रकार से समय को बचाना है। (उस समय तक उन्हें सन्तुष्ट रखना है)......जब तक कि मैं उनका दमन करने के लिए तैयार न हो जाऊँ।"

अब समितियों की माँग यह थी कि उनकी अब तक की असंवैधानिक कार्यवाहियों को नियमित बनाने के लिए एक स्वतन्त्र असेम्बली और एक स्वतन्त्र पार्लियामेण्ट को बुलवाया जाय। इनमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण सामान्य असेम्बली थी, क्योंकि यह राष्ट्र का अधिक पूर्णरूप से प्रतिनिधित्व करती थी और कानून द्वारा चर्च के मामलों में सर्वोच्च थी। काफी सौदेबाजी के बाद चार्ल्स को बुरी तरह झुकना पड़ा। उसने २१ नवम्बर १६३८ ई० को ग्लासगो में एक सामान्य असेम्बली की बैठक बुलाने की अनुमति दी। एक मात्र अपने संरक्षण के लिए उसने यह घोषणा की कि यदि बिशप इसमें सम्मिलित नही होंगे तो इसकी सारी कार्यवाही अवैध हो जायगी। ये सब बिशप डरकर इंग्लैण्ड से भाग चुके थे, केवल अपना पहला मत बदलने वाले चार बिशप ही नहीं भागे थे।

ग्लासगो की जनरल असेम्बली की गणना विश्व की महान् परिषदों में की जाने योग्य है, क्योंकि इसने एक ऐसी क्रान्ति का श्रीगणेश किया, जो ब्रिटिश द्वीपसमूह में ही जनता की प्रभुसत्ता के सिद्धान्त को स्थापित करने के साथ ही नहीं समाप्त हुई, इसने इसके बाद इस सिद्धान्त को समूचे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल में और अन्त में सारी दुनियाँ में स्थापित किया। यह अब तक हुई किसी भी संस्था की अपेक्षा सबसे अधिक लोकतन्त्रीय और सबसे अधिक प्रतिनिध्यात्मक राष्ट्रीय संस्था थी। प्रत्येक स्काटिश पैरिश से एक पुरोहित और एक सांसारिक स्पीकर प्रेसबिटरी के लिए चुने गये, और प्रत्येक प्रेसबिटरी से एक पुरोहित और एक सांसारिक स्थविर (Elder) असेम्बली में बैठने के लिए भेजे गये। पुरोहित राष्ट्र के बौद्धिक और

आध्यात्मिक नेता थे। सांसारिक स्थविरों में सब शिक्षित श्रेणियों के योग्यतम और सर्वोच्चतम पुरुष थे। ऐसी संस्था के निर्णयों को चुनौती देना बड़ा खतरनाक था।

ये बड़े साहसी और अटल निश्चयी थे। सबसे पहले विशपों की निन्दा की गयी। राजा के आदेशों से उन्होंने ऐसी असेम्बली के सम्मुख उपस्थित होने अथवा उसके क्षेत्राधिकार को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया, जिसमें वे सदस्य के रूप में बैठे थे। इस आधार पर जब असेम्बली ने यह दावा किया कि कानूनी तौर से बनायी गयी इस संस्था को विशपों के मामले पर विचार करने का अधिकार है तो राजा के कमिश्नर हैमिल्टन ने इसके विसर्जन की घोषणा की। किन्तु विसर्जन की ओर कोई ध्यान नहीं दिया गया; असेम्बली अपना कार्य करती चली गयी। इसने विशप पद्धति को समाप्त कर दिया, इसने हाइ कमीशन के कोर्ट का भी अन्त किया। इसने धार्मिक नियमों की और प्रार्थना-पुस्तक की इतिश्री की, और तब एक व्यापक कानून से, इसने समूची प्रेसबिटेरियन पद्धति को प्रत्येक पैरिश में, इसके कर्क अधिवेशनों को, इसकी प्रेसबिटरियों को, इसकी साइनाडों को और इसकी सामान्य असेम्बली को पुनः स्थापित किया और यह व्यवस्था की कि प्रत्येक पैरिश में सार्वजनिक व्यय से पाठशालाएँ स्थापित की जायेंगी। अपने अन्तिम भाषण में सभापति ने कहा कि "हमने जेरिको की दीवारें गिरा दी हैं; जो इनका पुनर्निर्माण करता है, उसे बैथल में रहने वाले हिएल के शाप से सावधान होना चाहिए।"

ऐसी चुनौती के विरुद्ध केवल एक ही उत्तर हो सकता था। इस प्रश्न का निर्णय शस्त्रों द्वारा किया जाना चाहिये था, दोनों पक्ष इसके लिए तैयारी करने लगे। किन्तु चार्ल्स के आगे एक संयुक्त और उत्साहपूर्ण देश को वशवर्ती बनाने का कार्य था; इसके अतिरिक्त इस राष्ट्र के पास अपनी एक अतीव योग्य सरकार थी, जिसके आदेशों का पालन सर्वत्र अच्छी तरह से किया जाता था। चार्ल्स को नागरिक सेना के सुशिक्षित दलों से और अनिवार्य भर्ती-वाले सैनिकों से जितनी उत्तम रीति से सम्भव हो एक सेना एकत्र करनी पड़ी और उसके पास भरोसा करने लायक कोई भी कुशल सेनापति नहीं था। स्काट लोगों ने उत्साह से परिपूर्ण एक सामान्य सेना को एकत्र किया। वे इसकी सेना का संगठन उन अनुभवी सैनिकों के हाथों में देने में असमर्थ हुये, जो विदेशों में सैनिक सेवा कर चुके थे। इनमें प्रमुख व्यक्ति गुस्टावस एडोल्फ़स का एक सेनापति एलेक्जेण्डर लेसली था, यह स्वीडन में फील्ड मार्शल के पद पर था। चार्ल्स की अव्यवस्थित और अप्रशिक्षित सेनाओं का सामना करने के लिए रणक्षेत्र में आने वाली यह सेना उत्तम रीति से अनुशासित थी और इसको रसद पहुँचाने का उत्तम प्रबन्ध था। यदि उन्होंने जमकर लड़ाई लड़ी होती तो इसके परिणाम के बारे में कोई सन्देह नहीं हो सकता था। स्काटिश लोगों ने मुख्य किलों को थोड़ी कठिनाई के साथ जीत लिया, किन्तु सशस्त्र संघर्ष कभी नहीं हुआ। स्काटिश नेता समझौते के लिए उत्सुक थे। राजा एक अधिक कठोर प्रहार के लिए समय चाहता था। बेरविक में की गयी एक विराम सन्धि (जून १६४६ ई०) ने विशपों का पहला युद्ध समाप्त कर दिया।

यह समस्या का कोई समाधान नहीं था। विशपों का दूसरा युद्ध इसके बाद अवश्य होना था। किन्तु इस बीच में, लड़ाई के साधनों से अपने को सुसज्जित करने के लिए ११

वर्ष बाद, चार्ल्स एक बार पुनः इंग्लिश पार्लियामेण्ट से मिलने के लिए बाधित हुआ; इसी क्षण से दोनों देशों के तथा आयरलैण्ड के भी भाग्य एक दूसरे के साथ ऐसी अटल रीति से परस्पर सम्बद्ध हो गये कि यहाँ स्काटिश घटनाओं का पृथक् वर्णन समाप्त कर देना चाहिए। स्काट लोगों ने सुस्पष्ट शब्दों में शासन के विषय में उस महान् प्रश्न को उठाने को बाधित कर दिया था, जिस प्रश्न पर अब तक दुनियाँ के किसी भी राष्ट्र में लड़ाई हुई थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Bagwall, Ireland under the stuarts, **R. Dunlop's** Articles in the Cambridge Modern History, and **C. L. Falkiner,** Illustrations of Irish History in the Seventeenth century. For Scotland, **Hume Brown** or **Andrew Lang.** History of Scotland; **Davies,** Early Stuarts; **Wedgwood,** Strafford; **Trevor, Roper** Laud.

५

वैयक्तिक शासन और इसका पतन

(१६२६-१६४२ ई०)

१. वैयक्तिक शासन के वर्ष

राजा की तथा अन्य अनेक व्यक्तियों की दृष्टि में अधिकार की याचिका (Petition of Right) देने वाली पार्लियामेण्ट का आचरण, विशेष रूप से इसके दूसरे अधिवेशन में इसकी पूर्ववर्ती पार्लियामेण्टों के व्यवहार का अनुसरण करने वाला तथा यह प्रदर्शित करने वाला प्रतीत होता था कि पार्लियामेण्ट की अविरत एवं अयुक्तियुक्त आलोचना के होते हुए क्षमतापूर्ण रीति से शासन को चलाना तथा राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को बनाये रखना सम्भव नहीं है। अतः चार्ल्स ने जितनी देर तक सम्भव हो सके, उतनी देर तक पार्लियामेण्ट के बिना शासन चलाने का निश्चय किया, और चूँकि इसके लिए भारी खर्च वाले साहसिक कार्यों से बचना जरूरी था, अतः उसने जल्दी ही १६२९ ई० में फ्रांस के साथ और १६३० ई० में स्पेन के साथ शान्ति सन्धियाँ कर लीं और जर्मन प्रोटेस्टेण्टों को प्रत्यक्ष सहायता देने का प्रयत्न छोड़ दिया। पिछले कुछ वर्षों से चार्ल्स प्रथम और उसके पिता को बुरी सलाहें देने वाले बकिंघम के ड्यूक की हत्या पोर्ट्समाउथ में (अगस्त, १६२८ ई०) सेना के एक नीम पागल लेफ्टिनेन्ट द्वारा कर दी गयी थी और नवीन रीति से कार्य के लिए मैदान बिल्कुल साफ था। इसके बाद राजा स्वयमेव अपना सलाहकार था, यद्यपि वह लॉड और वैण्टवर्थ के विचारों से गम्भीर रूप से प्रभावित हुआ। ग्यारह वर्षों में उसे इंग्लैण्ड को यह प्रदर्शित करने का अवसर मिला कि राजतन्त्रीय शासन का स्वरूप और प्रभाव क्या होता है। उसका निश्चित इरादा स्थापित कानूनों की उपेक्षा करने अथवा उनका उल्लंघन करने का नहीं था और वह

सदैव अपने कार्यों के लिए कानूनी सलाह प्राप्त करने का प्रयत्न किया करता था। किन्तु परिस्थितियों ने उसे ऐसे उपायों के लिए बाधित कर दिया जो कम-से-कम कानून की स्वीकृत व्याख्या के अर्थ का खींचतान करने वाले थे। उसके अपने स्वच्छन्द स्वभाव और विरोध की अधीरता ने उसे इस पथ पर अग्रसर किया, उसके मुख्य मन्त्री अहम्मन्य वैण्टवर्थ तथा सिद्धान्त-वादी लॉड सर्वोत्तम परामर्श दाता नहीं थे। वस्तुतः मौखिक रूप से उसके शासन के सिद्धान्त उस सीमित राजतन्त्र के विचार से मेल नहीं खाते थे, जो ऐसे कानूनों की प्रभुसत्ता का वशवर्ती था, जिन्हें वह नहीं बदल सकता था, चूँकि उस समय अधिकांश इंग्लिश व्यक्तियों द्वारा स्वीकार की जाने वाली एक अस्पष्ट इंग्लिश परम्परा की ऐसी ही धारणा थी; अतः इसका परिणाम यह हुआ कि शनैः-शनैः इंग्लिश जीवन के सभी, सबसे अधिक शक्तिशाली युक्ति-युक्त तत्व उससे विमुख होते चले गये। उसे उस समय अपनी शक्ति के, बड़ी कष्टपूर्ण रीति से बनाये गये ढाँचे के आकस्मिक और पूर्ण विघटन को किंकर्त्तव्यविमूढ़ रीति से देखने के लिए विवश होना पड़ा, जिस समय स्काटिश क्रान्ति ने उसे इंग्लिश राष्ट्रीय भावना पर निर्भर रहने के लिए बाधित किया।

फिर भी इन सभी वर्षों में (१६२६-१६४० ई०) ऐसा प्रतीत होता था कि सब बातें राजा के अनुकूल हो रही हैं। देश शान्त और अत्यधिक समृद्ध था। पश्चिमी हिन्द द्वीपसमूह के टापुओं के साथ, भारत तथा नवीन अमेरिकन बस्तियों के साथ व्यापार का निरन्तर विकास सीमाशुल्क की आय में होने वाली महान वृद्धि में प्रतिबिम्बित हो रहा था और इसने सरकार को आर्थिक कठिनाइयों से बचाने में सहायता की थी। निर्यात के लिए वस्तुओं की माँग से तथा देश की बढ़ती हुई सम्पत्ति तथा क्रय शक्ति से उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन मिल रहा था। कृषि भी उन्नत हो रही थी और राजा की सहायता से किये गये फैन नामक प्रदेश की दलदलों को सुखाकर कृषि योग्य भूमि बनाने के महान प्रयास खाद्यान्नों की पूर्ति को बढ़ा रहे थे। यह सच है कि मजदूरी कम थी, तो भी इसके अतिरिक्त इंग्लैण्ड में कभी भी इससे अधिक स्थिर अथवा अधिक व्यापक समृद्धि नहीं थी। किसी अन्य देश की अपेक्षा इंग्लैण्ड में करों का बोझ कम था। आने वाली क्रान्ति निश्चित रूप से किसी आर्थिक कष्ट के कारण, अथवा आर्थिक कारणों से नहीं हुई।

यह क्रान्ति जनता द्वारा अनुभव किये जाने वाले उत्पीड़न या अन्याय के कारण भी नहीं हुई। न्याय की सामान्य पद्धति सामान्य ढंग से चल रही थी और कोई विद्रोह या सार्व-जनिक अव्यवस्था नहीं थी। इतिहास की पुस्तकों के पन्नों को भरने वाली इस युग की घटनाऐं संवैधानिक और धार्मिक प्रश्न थे। ये कानूनी न्यायालयों में लड़े जा रहे थे। ऐसा प्रतीत नहीं होता कि इन प्रश्नों में जनता व्यापक रूप से कोई दिलचस्पी ले रही थी अथवा इनका विरोध कर रही थी। यदि अत्यधिक धर्मान्ध व्यक्तियों को दिये गये कुछ दण्ड क्रूरता-पूर्ण रीति से बड़े कठोर थे, तो इनकी संख्या बहुत कम थी और ये उन दण्डों जैसे कठोर नहीं थे, जैसे दण्ड एलिजाबेथ के समय में तथा हेनरी अष्टम के समय में इससे भी अधिक मात्रा में दिये जाते थे। अपनी सम्मतियों के लिए किसी व्यक्ति को अपने प्राण नहीं गँवाने पड़े थे, जैसा कि एलिजाबेथ के शासन में अनेक व्यक्तियों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा था।

चर्च के मामलों में बाह्य एकरूपता के लिए लॉड के उत्साह के कारण कुछ स्थानों में असन्तोष अवश्य उत्पन्न हुआ, किन्तु इसके अतिरिक्त जनता का सामान्य जीवन सरकार की कार्यवाहियों से लगभग अप्रभावित रहा। राष्ट्र की एक अल्प संख्या—अधिक उग्र प्यूरिटन लोगों—के अतिरिक्त इस समय सरकारी कार्यवाहियों से कोई उत्तेजना उत्पन्न हुई प्रतीत नहीं होती। इन कार्यवाहियों से जो बात उत्पन्न हुई, वह चर्च और राज्य की राजकीय नीति की प्रवृत्ति के सम्बन्ध में होने वाला गम्भीर विवाद था और यह विवाद (भद्रवर्ग के) देहात में बने अनेक गृहों में और व्यापारियों के बैठकखानों में हो रहा था। चार्ल्स युक्तियुक्त रूप से यह अनुभव कर सकता था कि वह सफल हो रहा है। वह जिस बात में विफल हुआ, वह यह थी कि वह उस गंभीर परिवर्तन को समझने में विफल रहा, जो परिवर्तन चिरकाल से राष्ट्र के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण वर्गों के मानस में और स्वभाव में हो रहा था।

यह परिवर्तन एलिजाबेथ के शासनकाल के पिछले वर्षों में शनैः-शनैः होने लगा था। उस समय राष्ट्र की जो सत्ता खतरे में पड़ी हुई प्रतीत हो रही थी, वह सुरक्षित हो चुकी थी। इसलिए इस संकट ने राष्ट्रीय भावना के जिस भावावेश और स्पन्दन को उद्बुद्ध किया और जिस आतुर साहसिक भावना को जन्म दिया था और विजय के बाद सफलता की जो मादक भावना उत्पन्न हुई थी, इन सब भावनाओं का स्थान अब अधिक गम्भीर और विचारशील भावना ग्रहण कर रही थी। अब आप इस परिवर्तन के एक पहलू को उस अन्तर में देख सकते हैं, जो अन्तर एलिजाबेथ के युग के अनुभवी समुद्री व्यक्तियों के जयोल्लासपूर्ण साहसिक कार्यों में तथा व्यापारियों और बस्ती बसाने वालों के पूर्ववर्णित अधिक व्यवस्थित साहसिक कार्यों के बीच में था। इसका एक दूसरा पहलू इस युग के साहित्य में प्रदर्शित हो रहा था। एलिजा-बेथ के समय का गौरव समझा जाने वाला, भावावेश से तथा जीवन के अभिमान से परिपूर्ण महान् नाटक-साहित्य अमन्द भास्वरता के साथ जेम्स प्रथम के शासन काल में भी विकसित होता रहा। इसके बाद यह प्रवृत्ति लगभग सहसा समाप्त हो गयी। इसने केवल अपनी शैली और रूप को ही नहीं बदला, यह समाप्त हो गया, और साहित्य में शायद इस प्रकार का कोई उदाहरण नहीं है, जब इतना भास्वर भावोद्रेक हुआ हो और उसने कोई लगातार चलने वाली परम्परा न उत्पन्न की हो। इसके स्थान पर विचारात्मक कविता के ऐसे दार्शनिक गद्य का युग आया, जो जीवन और आचरण की समस्याओं से गहरा सम्बन्ध रखता था। जैसा प्रायः होता है, इस आन्दोलन के समाप्त होने से पहले ही दूसरा आन्दोलन शुरू हो गया। यह परिवर्तन की झलक हमें पहले ही शेक्सपियर के अन्तिम नाटकों—"दी विण्टर्स टेल", "दी टेम्पेस्ट" और "सिम्बेलिन" के संयत और गम्भीर सौंदर्य में दृष्टिगोचर होता है। अगले युग के विशेष कवि डन, जार्ज हर्बर्ट, क्रैशा, कूली, मिल्टन और एण्ड्रयू मारवेल जैसे व्यक्ति थे। उन्होंने सौंदर्य के प्रेम को खोया नहीं था, यदि वे इसे खो देते तो कवि न होते, किन्तु उनका आनन्द अधिक गम्भीर और अधिक कठोर था। ल एलेग्रो जैसी कविता में शेक्सपियर की आरम्भिक कविताओं में पाया जाने वाला रंग और रूप के प्रति उग्र भावावेश एवं सुन्दर शब्दों की मादकता नहीं है। नाजुक प्रणय कविताओं के लेखकों में भी यही बात है। जिस व्यक्ति ने यह लिखा, "प्रिय, यदि मैं प्रतिष्ठा से अधिक प्यार न करता तो मैं तुम्हें इतना अधिक प्यार नहीं कर

सकता था।" वह: चार्ल्स प्रथम का समर्थक एक कैवेलियर (Cavalier) गीतकार था। और स्वभाव में यही परिवर्तन इस युग के शिष्टाचार के तरीकों और-वेशभूषा से भी व्यक्त किया जा सकता है। इस युग के प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करने वाली विशेषताएँ गौरव की भावना, गम्भीरता तथा समृद्धि है। इंग्लैण्ड में बहुत संरक्षण पाने वाले वैण्डाइक द्वारा चित्रित किये गये चित्रों में अथवा ल्यूसी हचिन्सन द्वारा लिखे गये अपने पति के सुन्दर और मधुर वर्णनों[१] जैसे चरित्र-चित्रणों में ये विशेषताएँ मिलती हैं।

यह विचारशील, गम्भीर, आत्मनियन्त्रक स्वभाव शासन और चर्च की महान् समस्याओं से अत्यधिक प्रभावित था। यह स्वभाव कानून का पालन करने वाला था और प्रचण्ड विद्रोह के लिए तैयार नहीं था। राजनीति के क्षेत्र में इसने अपने को ऐतिहासिक ज्ञान के ऐसे उल्लेखनीय विकास के रूप में प्रकट किया, जो विशेष रूप से इंग्लिश संस्थाओं की प्राचीन बातों के अध्ययन में तथा उस युग की पार्लियामेण्टों द्वारा प्रदर्शित किये गये पूर्वोदाहरणों की असाधारण भक्ति में तल्लीन था। किन्तु नवीन भावना धार्मिक प्रश्नों में विशेष रूप से प्रकट हो रही थी। यह केवल प्यूरिटन मत के सर्वोत्तम रूप का ही युग नहीं था, किन्तु महान् विवाद के दूसरे अथवा एंग्लो-कैथोलिक पक्ष के बारे में लिखे जाने वाले अधिक ऊँचे सुन्दर चिन्तन तथा लेखन का युग था। ऊपर बताये गये अधिकांश कवि एंग्लो-कैथोलिक सम्प्रदाय के थे। उन्होंने एंग्लिकन पद्धति में दोनों पक्षों की अतिवादी सीमाओं के बीच में एक वास्तविक मध्यम मार्ग को, सौंदर्य और गौरव को बनाये रखने की पद्धति को तथा स्वतन्त्रता की व्यवस्था के साथ सामंजस्य स्थापित करने की एक प्रणाली को उपलब्ध किया था। विलियम लाड यद्यपि अपने कुछ उपायों में उससे कहीं अधिक दूर चला गया था, जहाँ तक उसके दल के सर्वोत्तम मानस वाले व्यक्ति जाना चाहते थे, फिर भी उसने सच्चे विचार और भावना वाले एक वास्तविक और शक्तिशाली समूह को अभिव्यक्त किया।

निर्विवाद रूप से, इस युग की प्रमुख विचारधारा प्यूरिटन (Puritan) थी। सारा इंग्लैण्ड बाइबल का उदात्त एवं प्रामाणिक अनुवाद पढ़ रहा था। बहुत अधिक इंग्लिश लोग इसे उस जीवन के सब क्षेत्रों में व्याप्त होने वाले नियम को बाइबल में पाने के लिए तैयार थे, जिस जीवन का परम्पराओं और कर्मकाण्डों पर अधिक बल देने के कारण धुँधला पड़ जाना सम्भव था। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि अधिकांश इंग्लिश व्यक्ति अतिवादी प्यूरिटन सिद्धान्तों के प्रति मुग्ध थे, वे बिशपों को समाप्त कर देना चाहते थे और धार्मिक परिवर्तन को अपने स्काटिश पड़ोसियों की तार्किक परिपूर्णता के साथ करना चाहते थे। इस प्रकार की विचारधारा के पर्याप्त अनुयायी, विशेष रूप से इंग्लैण्ड में तथा उन शहरों में थे, जहाँ से सदैव इस विचारधारा को अपनी मुख्य शक्ति प्राप्त होती थी। किन्तु राष्ट्र में ये लोग सदैव अल्प संख्या में थे। इस युग का प्रमुख विचार प्यूरिटन था, इस उक्ति का अभिप्राय यह था कि उस समय बिशपों की अनेक कार्यवाहियों से व्यापक और बढ़ता हुआ असन्तोष था और

१. मेमायर्स आफ कर्नल हचिन्सन नाम की पुस्तक प्यूरिटन भावना को सर्वोत्तम रूप में प्रस्तुत करती है।

लॉड की विचारधारा के अनुयायी धर्माध्यक्ष या प्रिलेट वाह्य रूपों और कर्मकाण्डों पर जो वल दे रहे थे, उससे भी असन्तोष था। उत्तम सिद्धान्तों के प्रचार को प्रोत्साहित करने की इच्छा थी और प्रचारकों के मुँह बन्द कर देने पर रोष था, जीवन के प्रति गम्भीरता बढ़ रही थी और एलिज़ाबेथ के युग के लोग जिस आमोद-प्रमोद में तथा लापरवाही में आनन्द लेते थे, उन्हें बुरा समझने की प्रवृत्ति बढ़ रही थी। किसी अन्य बात की भाँति यह बात नाटक के ह्रास का कारण है, यद्यपि अधिक आदरणीय प्यूरिटन लोगों में से बहुत कम व्यक्ति प्रिन जैसे धर्मान्ध व्यक्तियों द्वारा सभी नाटकों और नाटककारों के विरुद्ध दिये गये अविवेकपूर्ण और अपशब्दपूर्ण शापों का समर्थन करते थे।

प्यूरिटनवाद का सारतत्त्व एक कठोर भगवान के प्रति सीधी और वैयक्तिक उत्तर-दायित्व की भावना तथा यह विश्वास था कि प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य यह है कि वह सदैव "महान् कार्य लेने वाले अपने स्वामी की दृष्टि में अपना जीवन व्यतीत करे।" जब एक राष्ट्र में जीवन का ऐसा दृष्टिकोण सामान्य हो जाता है, जैसा सत्रहवीं शताब्दी के इंग्लैण्ड में मान्य हुआ, तो उसके बहुत बड़े परिणाम स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होते हैं। निश्चित व्यवस्था में विक्षोभ उत्पन्न करने में सहायता देने में दीर्घकालीन प्रतिबन्ध और लम्बी झिझक सम्भव है; किन्तु जब समय आता है तो उस समय अदम्य कठोरता उत्पन्न हो जाती है। इसके लिए यह स्मरण रखना चाहिये कि यह ऐसा युग नहीं था, जिसमें सहिष्णुता को निर्बलता के अतिरिक्त कुछ नहीं समझा जाता था। यद्यपि कुछ क्षेत्रों में, सहिष्णुता की भावना अपना सिर उठाने लगी थी फिर भी अधिकांश प्यूरिटन नितान्त असहिष्णु थे, किसी भी रूप में गलत बात के प्रति सहिष्णु होना, गलत सोचना और गलत कार्य करना उनकी दृष्टि में एक अपराध था। यह एक इस प्रकार की गलती थी, जिसके लिए विशेष रूप से सहिष्णुता की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। राष्ट्रीय संकट के दिनों से चली आने वाली रोम के प्रति भीषण घृणा इस समय पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक प्रबल थी। चार्ल्स को तथा उसके बिशपों को किसी अन्य वस्तु ने इतना अधिक बदनाम नहीं किया, जितना इस सन्देह ने कि वे रोम के प्रति अधिक उदार हैं।

यह स्वाभाविक था कि चार्ल्स को राष्ट्रीय जीवन की इन गंभीर विचारधाराओं का ज्ञान न हो, फिर भी चार्ल्स के पास अपने वैयक्तिक शासन के समूचे युग में बनी रहने वाली व्यवस्था से, समृद्धि और सन्तोष की वाह्य साक्षियों से प्रसन्न होने का प्रत्येक कारण था। इन वर्षों में देश इस दृष्टि से सुखी था कि उसका अपना कोई इतिहास नहीं था, बाद की घटनाओं के प्रकाश में ही हम उन कारणों का परिणाम जान सकते हैं, जिन्होंने आने वाले महान् संकट की तैयारी की। इस दृष्टिकोण से घटनाओं के तीन समूहों पर ध्यान दिया जाना चाहिये। एक तो लॉड की धार्मिक नीति तथा वह पद्धति थी, जिसके अनुसार इसे क्रियान्वित किया गया। दूसरा नयी दुनियाँ की ओर प्रव्रजन का उल्लेखनीय आन्दोलन था, यह लॉड को प्यूरिटनवाद का जवाब था और इन वर्षों में प्यूरिटनवाद की मुख्य अभिव्यक्ति इसी रूप में हुई। तीसरा वे आर्थिक उपाय थे, जिनका अवलम्बन विवश होकर राजा को करना पड़ा और इनसे उत्पन्न होने वाले संवैधानिक प्रश्न थे। घटनाओं की ये तीनों विभिन्न शृंखलाएँ एक दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध थीं। इन्होंने मिलकर शान्त और कानून के पालक इंग्लैण्ड को उस क्रान्ति में

अपना भाग लेने के लिए तैयार किया, जिस क्रान्ति की इस समय आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड में तैयारी हो रही थी।

२. लॉड के लक्ष्य और पद्धतियाँ

इस युग के आरम्भ में, ५२ वर्षीय, लन्दन का बिशप विलियम लाड[1] १६३३ ई० में कैण्टरबरी का आर्कबिशप बना। वह चर्च के मामलों में ही राजा का मुख्य परामर्शदाता नहीं था, किन्तु प्रिवी कौंसिल का एक प्रमुख सदस्य, राजकीय विशेषाधिकारों के उच्चतम दृष्टिकोण का समर्थक और राजा का विश्वासपात्र मित्र था। संकुचित अर्थ में वह अत्याचार करने वाला नहीं था; वह मनुष्यों के अन्तकरणों की वैसी जाँच नहीं करवाता था, जैसी जाँच प्यूरिटन लोग स्काटलैण्ड और अमेरिका में तथा कैथोलिक अनेक देशों में करा रहे थे। किन्तु वह चर्च में एक पार्टी का अध्यक्ष था और सम्भवत: देश में इस दल को सबसे अधिक व्यापक समर्थन नहीं प्राप्त था, यद्यपि इसके अनुयायियों में पादरियों की एक बड़ी संख्या सम्मिलित थी। उसने मनुष्यों को प्यूरिटन सम्मतियाँ रखने के लिए इसके अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार से दण्डित नहीं किया कि उसने ऐसी सम्मतियाँ रखने वालों को केवल तरक्की देने से इन्कार किया। किन्तु तीन बातों पर उसके विचार बड़े कट्टर थे और उसने उन्हें बनाये रखने के लिए प्रबल कार्यवाही की। वह बिशपों की सत्ता पर तथा चर्च पर राजकीय प्रभुसत्ता बनाये रखने के लिए तुला हुआ था तथा वह चर्च की प्रार्थनापद्धतियों में बाह्य एकरूपता लाने के लिए उत्सुक था। उस युग के सभी राजनीतिज्ञों की भाँति वह इस बात में विश्वास रखता था कि जटिल प्रश्नों के सार्वजनिक वादविवाद को संयत रखना चाहिये, विशेष रूप से ऐसे विवादों पर प्रतिबन्ध होना चाहिये, जो ऐसे व्यक्तियों द्वारा किये जाते है, जिनसे वह सहमत नहीं है। उन पर भी प्रतिबन्ध होना चाहिये, जो इन विवादों में चर्च और राज्य की वर्तमान व्यवस्था को चुनौती देते थे अथवा चुनौती देकर इन्हें संकट में डालते थे। उसमें असीम उद्योग और अध्यवसाय, व्यवस्था की सहज बुद्धि और अपने कार्य के लिए वास्तविक उत्साह था। उस युग के कटु विवाद में भी किसी ने कभी यह सुझाव नहीं दिया कि वह भ्रष्टाचार से बिल्कुल मुक्त नहीं था, किन्तु उसका स्वभाव बहुत तेज और व्यवहार औद्धत्यपूर्ण था और वह विरोध को आसानी से बरदाश्त नहीं करता था।

उसने चर्च का एक पूरा निरीक्षण किया, अपने सम्प्रदाय के नियमों के पालन पर बल दिया; उसका कुछ थोड़ा विरोध हुआ, किन्तु उसकी बात चल गयी। सम्भवत: सबसे अधिक शिकायत उसकी इस माँग पर थी कि भगवान् के साथ एकाकार होने की विधि (कम्यूनियन) वाली मेज को चर्च के पूर्वी किनारे पर रखा जाना चाहिये, न कि केन्द्र में, जहाँ प्रार्थना में सम्मिलित होने वाले व्यक्ति इसे अपने हैटों को रखने के लिये सुविधाजनक स्थान के रूप में प्राय: इस जगह का उपयोग करते थे। इस नियम को लागू करने को कठोर अत्याचार नहीं कहा जा सकता। इससे अधिक गम्भीर यह बात थी कि उसने चर्च से निश्चित वेतन को न पाने वाले पादरियों को प्रचारक के रूप में नियुक्त करने की अनुमति देना स्वीकार नहीं किया। यह लन्दन

१. डब्लू० एच० हटन द्वारा लिखित लॉड का एक अच्छा और संक्षिप्त जीवनचरित्र है।

में तथा अन्य प्यूरिटन शहरों में प्रचलित एक अतीव सामान्य परिपाटी के अनुसार था, जहाँ उन प्यूरिटन प्रचारकों को प्रायः रविवार को मध्याह्न के समय में व्याख्यान देने के लिए नियुक्त किया जाता था, जिन्हें तरक्की देना स्वीकार नहीं किया जाता था। उसने प्रेस की सेंसरशिप को बड़ी गम्भीरता से लिया। एलिज़ाबेथ के समय से यह चर्च का काम समझा जाता था, उसने इने-गिने आज्ञाप्राप्त प्रकाशकों के अतिरिक्त लन्दन में पुस्तकें छापने का साहस करने वाले किसी भी व्यक्ति को कोड़े लगाने और लकड़ी के कटघरे में जकड़ने का दण्ड देने का वचन दिया। निस्सन्देह यह वादविवाद की स्वतन्त्रता में एक गम्भीर हस्तक्षेप था ! किन्तु यह पूर्वोदाहरण या नजीर के तथा सरकारी कर्त्तव्यों के मान्य दृष्टिकोण के सर्वथा अनुकूल था। एक प्यूरिटन धार्मिक व्यक्ति भी ऐसे ही मार्ग का अनुसरण करता।

फिर भी, उसके नियम जिन पद्धति से लागू किये गये, उस पद्धति ने ही सब से अधिक रोष उत्पन्न किया। ये नियम हाइ कमीशन कोर्ट के द्वारा और ट्यूडर राजाओं के समय से चले आने वाले स्टार चैम्बर तथा विशेषाधिकार न्यायालयों द्वारा लागू किये गये थे। ये मूलतः राजकीय सत्ता को प्रभावशाली बनाने के प्रयोजन से स्थापित किये गये थे। ये न्यायालय देश के सामान्य कानून का प्रशासन नहीं करते थे, वे राजा के शासन संचालनविषयक आदेशों को लागू करते थे, वे कानूनी कार्य की पद्धतियों तथा दिये जाने वाले दण्डों के बारे में अपने विवेक का प्रयोग करते थे। ट्यूडर राजाओं के न्यायालय ऐसे अपराधियों और अपराधों का दमन करने में उपयोगी रहे थे, जिनके बारे में सामान्य कानून प्रभावशाली नहीं था। किन्तु राष्ट्र अब इनकी आवश्यकताओं से बहुत आगे बढ़ गया था। वस्तुतः इसी कारण नई पीढ़ी ने इन्हें आपत्तिजनक पाया, न कि इस कारण कि इनका उपयोग ट्यूडर राजाओं की अपेक्षा न्यायान्यायविचारशून्य रीति से किया गया था ! इन न्यायालयों द्वारा दिये जाने वाले कुछ दण्ड बड़े भयंकर होते थे। एक गर्म मिजाज प्यूरिटन वकील विलियम प्रिन ने रंगमंच के विरुद्ध एक विद्वत्तापूर्ण, विषाक्त और अपशब्दपूर्ण पुस्तक लिखी थी, इसमें राजा और रानी पर भी लांछन लगाया गया था। इस पुस्तक के लिखने के कारण उसे पाँच हज़ार पौण्ड का जुर्माना किया गया, उसे कटघरे में जकड़ा जाने की, अपने कान कटवाने की और आजीवन कारावास की सजा दी गयी। इसी प्रिन को एक पादरी बर्टन और एक डाक्टर बैस्टविक के साथ बाद में ऐसा ही दण्ड मिला। बिशपों के विरुद्ध तथा राजा की नीति के विरुद्ध एक उग्र पुस्तक लिखने के लिए एलेक्जेण्डर लेटन को दस हज़ार पौण्ड का जुर्माना किया गया, लकड़ी के कटघरे में जकड़ा गया, कोड़े लगाये गये, एक कान काट लिया गया, और इसके बाद आजीवन कारावास का दण्ड दे दिया गया। ये सज़ाएँ बहुत भयंकर थीं। किन्तु इनसे सादृश्य रखने वाले ट्यूडर युग के उदाहरण ढूंढ़े जा सकते हैं और बहुत थोड़े मामलों में ये उन जैसी बुरी थीं। यह ठीक था कि ऐसी बर्बरताओं की निन्दा की जाय और उन्हें भविष्य में रोका जाय, किन्तु न तो लाड ने और न उन न्यायालयों ने, जिनमें उसका प्रभाव इतना अधिक था, इस प्रकार की भीषणता को उत्पन्न किया था। लॉड की कार्यवाहियों के समय में वास्तविक आपत्ति इस बात पर थी कि वह अपनी सत्ता का प्रयोग एक ऐसे उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए कर रहा था, जिस उद्देश्य के साथ उसके आलोचक सहमत नहीं थे। यद्यपि यह बात

अवश्य कहनी चाहिये कि मृदुता और संयम की बढ़ती हुई भावना ने मनुष्यों को उन चीजों की निन्दा करने की प्रेरणा की थी, जो एक या दो पीढ़ी पहले उन पर कोई भी प्रभाव नहीं डालती थीं।

३—प्यूरिटन लोगों का इंग्लैण्ड से बाहर बसना

लॉड के तथा एंग्लो-कैथोलिक दल के उत्कर्ष ने अधिक उग्र प्यूरिटन लोगों को यह विश्वास करा दिया कि अब इस बात का बहुत कम अवसर है कि वे सारे इंग्लिश समाज पर अपने जीवन विषयक कठोर विचारों को लाद सकें अथवा इंग्लैण्ड को एक ऐसा बाइबल के आदर्शों पर आधारित राष्ट्रमण्डल बना सकें, जैसी कि वे कल्पना किया करते थे। वह क्षण जब कि उन पर यह विश्वास बलपूर्वक थोपा गया था, काफी स्पष्ट था। यह वह क्षण था, जब अधिकार के आवेदन पत्रों वाली पार्लियामेण्ट को लॉड के अनुयायी सम्प्रदाय के प्रति प्रदर्शित की गयी कृपाओं के विरुद्ध एक प्रबल प्रतिवाद करने के बाद भंग कर दिया गया। अब जो लोग बाइबल द्वारा वर्णित राष्ट्रमण्डल में रहना चाहते थे उन्हें ऐसा प्रतीत होता था कि अपने सपनों को पूरा करने के लिए उन्हें इंग्लैण्ड से बाहर ही स्थान ढूंढ़ना चाहिए। प्लिमथ ने एक छोटी बस्ती की सफल स्थापना करके इसका प्रदर्शन किया और १६२६ ई० में प्यूरिटन नेताओं के एक समूह ने 'पिलग्रिम फादर्स' का अनुकरण करने का तथा बड़े पैमाने पर ऐसी बस्ती बसाने का निश्चय किया, जहाँ जीवनसम्बन्धी प्यूरिटन पद्धतियों का कठोरता-पूर्वक पालन किया जा सके। यह नहीं कहा जा सकता कि किसी भीषण अत्याचार के कारण ये व्यक्ति इंग्लैण्ड से निकाले गये थे। वे न तो यह चाहते थे कि कोई उनके साथ सहिष्णुता का बर्ताव करे और न ही वे किसी दूसरे के साथ सहिष्णुता का बर्ताव कर सकते थे। वे ऐसी राजभक्त और कानून का पालन करने वाली जनता थे, जो बाइबल में वर्णित ऐसे राष्ट्रमण्डल में रहना चाहते थे, जहाँ सभी व्यक्ति जीवन के एक जैसे कठोर नियमों का अनुसरण करें। क्योंकि वे इंग्लैण्ड को अपनी इच्छा के अनुसार नहीं बना सकते थे, अतः वे जंगलों में एक नये समाज का निर्माण करने के लिए चले गये। फिर भी, वे राजभक्त इंग्लिश व्यक्ति बने रहे और इंग्लिश लोगों के अधिकारों का और स्वतन्त्रताओं का उपभोग करते रहे।

१६२८ ई० में न्यू इंग्लैण्ड की परिषद ने राजा की ओर से 'कम्पनी आफ मैसाचूसेट्स बे' के नाम से प्रसिद्ध एक कम्पनी को भूमि का एक बड़ा दान किया। इसके पहले की वर्जिनिया कम्पनी की भाँति, इसे इसके चार्टर द्वारा इसकी सीमाओं में बसने वाले व्यक्तियों पर शासन के विशाल अधिकार दिये गये। इस कम्पनी का हिस्सा खरीदने वालों में अनेक प्यूरिटन थे। इसने बाइबल के अनुसार राज्य निर्माण की योजना बनाने वाले उन प्रमुख प्यूरिटन लोगों के समूह के लिए यह आसान बना दिया कि वे इस कम्पनी पर नियन्त्रण स्थापित कर लें और अपने उद्देश्यों के लिए इसके चार्टर के अधिकारों का उपभोग करें। चूँकि इस कम्पनी के प्रमुख सदस्य स्वयमेव इसके प्रदेश में बसने का इरादा रखते थे, अतः यह सुगम था कि इसका प्रशासन करने वाले मुख्य कार्यालय को इस बस्ती में ही लाया जाय। इस प्रकार एक व्यापारिक कम्पनी के रूपों को इस प्रकार से प्रयुक्त किया जा सकता था कि

वह बसायी जाने वाली बस्ती के लिए उल्लेखनीय मात्रा में स्वतन्त्रता तथा नियन्त्रण से मुक्ति को प्राप्त करने का तथा ऐसी औपचारिक कानूनी स्थिति प्राप्त करने का साधन बन सके, जिस स्थिति को कानून का पालन करने वाले प्यूरिटन बहुत महत्त्व देते थे। इस उल्लेखनीय साहसिक कार्य में प्रमुख भाग लेने वाला व्यक्ति सफोक का जमींदार, वकील और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का स्नातक जान विनथ्रॉप था। यह कम्पनी का और इस बस्ती का पहला शासक बना और अपने समूचे जीवन में इसका प्रधान व्यक्ति बना रहा। महान् व्यावहारिक बुद्धि का मनुष्य होने के साथ-साथ, वह एक बड़ा निरकुंश व्यक्ति भी था और उसके कुलीन-तंत्रीय पक्षपात उसके प्यूरिटन विचारों जैसे ही लगभग सुदृढ़ थे।

१६३० ई० में, सावधानी से संगठित किये गये ग्यारह जहाजों का बेड़ा दो हजार बसाने वाले व्यक्तियों को ले गया। ये बोस्टन में और उसके चारों तरफ बस गये। इसी क्षेत्र में इन से पहले बसने वालों के साथ इनके कुछ संघर्ष भी हुए। यद्यपि प्रथम वर्ष में कुछ कठिनाइयाँ थीं तो भी यह बस्ती आरम्भ से ही सफल रही। कोई भी बस्ती अब तक इतनी सावधानी से नहीं बसायी गयी थी। रसद की पूर्ति भी प्रचुर मात्रा में थी, क्योंकि इस अभियान दल के नेता धनी, सुशिक्षित गम्भीर और ठोस व्यक्ति थे, न केवल साहसिक व्यक्ति। अगले वर्षों में प्यूरिटन आगन्तुकों की एक अविच्छिन्न धारा आती रही। हमें बताया जाता है कि १६३४ ई० में बोस्टन में आवासकों द्वारा भरे हुए दस या बारह जहाज प्रतिमास आते रहे थे। १६४२ ई० तक जब युद्ध के विस्फोट ने इस धारा को बन्द कर दिया, मैसाचूसेट्स में निवासियों की संख्या १८००० से कम नहीं थी। यह जन संख्या अन्य सभी अमेरिकन बस्तियों की सम्मिलित जनसंख्या से अधिक थी और इसमें अन्य प्यूरिटन बस्तियों में बसने वालों की संख्या सम्मिलित नहीं है। हम देखेंगे कि ये बस्तियाँ एक ही समय में स्थापित की जा रही थीं। इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह है कि इन व्यक्तियों में एक बहुत बड़ा अनुपात धनी व्यक्तियों का था। ये इंग्लैण्ड से निर्धनता के कारण अथवा धार्मिक उत्साह के अतिरिक्त अन्य किसी उद्देश्य के कारण से नहीं आये थे। एक समय में ओलिवर क्रामवेल इनमें लगभग सम्मिलित हो गया था। क्रामवेल का परवर्ती प्रतिस्पर्धी सर हेरी वेन वस्तुतः कुछ समय के लिए बाइबल में वर्णित आदर्श राष्ट्रमण्डल (Bible Commonwealth) में रहा।

यह एक अत्यधिक विलक्षण निर्गमन (Exodus) था, इसे इंग्लैण्ड में बड़े भय की दृष्टि से देखा जा सकता था। उस युग में प्रत्येक सरकार का यह मत था कि इसे अपने प्रजाजनों की हलचलों को नियन्त्रित करने का अधिकार है। किन्तु चार्ल्स प्रथम ने प्यूरिटन लोगों के बाहर जाने के मार्ग में कोई बाधाएँ नहीं डाली। वस्तुतः बोस्टन जाने वाले एक ही बेड़े को कुछ समय के लिए रोका गया था, किन्तु इसके अतिरिक्त कोई हस्तक्षेप नहीं हुआ था। निस्सन्देह चार्ल्स इस बात से प्रसन्न था कि वह उपद्रवी लोगों से मुक्ति पा ले। किन्तु कम-से-कम उसकी प्रवृत्ति अत्याचार करने वाले की नहीं थी। इसकी तुलना लुई चौदहवें की नीति के साथ स्पष्ट रूप से की जा सकती है। वह कट्टर कैथोलिकों के अतिरिक्त किसी को कनाडा जाने की अनुमति नहीं देता था। यदि प्यूरिटन लोगों ने अथवा लाड के अनुयायी इंग्लिश लोगों ने अभी तक यह पाठ नहीं पढ़ा था कि वे धार्मिक स्वतन्त्रता को वाञ्छनीय समझें,

रूप में नहीं, किन्तु बाइबल में वर्णित राष्ट्रमण्डल के आदर्श केरूप में इंग्लैण्ड में वादविवाद की दिशा को प्रभावित करना था ।

कई पहलुओं में, नवीन प्यूरिटन बस्ती विश्व के सर्वोत्तम व्यवस्थित समाजों में से एक थी । इसकी जनता समृद्ध और साहसी थी, जमीन पर खेती के सिवाय उन्होंने मछली पकड़ने का और व्यापार का कार्य शीघ्र ही आरम्भ कर दिया । इस बस्ती में शान्ति का साम्राज्य था । कुल मिला कर अच्छी तरह व्यवहार किये जाने वाले रेड इण्डियन इसमें बहुत कम उपद्रव करते थे । आरम्भ से ही यह एक शिक्षित समुदाय था, प्रत्येक कस्बे में एक पाठशाला थी और बहुत थोड़े वर्षों में ही कैम्ब्रिज में एक विश्वविद्यालय आरम्भ किया गया । इस स्थान को कैम्ब्रिज कहने का यह कारण था कि अधिकांश औपनिवेशिक नेताओं की विद्याभूमि कैम्ब्रिज थी और उसके सम्मान में इस नये स्थान को भी यह नाम दिया गया था । धर्मशास्त्रीय विषयों में जनता की तीव्र अभिरुचि ने (स्काट लोगों की भाँति) उन्हें बौद्धिक दृष्टि से बड़ा कुशाग्र बना दिया था । किन्तु मैसाचुसैट्स एक कठोर और असहिष्णु समुदाय था, वह आध्यात्मिक स्वतन्त्रता का केन्द्र होने से वस्तुतः बहुत दूर था । इसे स्वतन्त्रता से अथवा विभिन्नता से कोई प्रीति नही थी । इसका दृष्टिकोण यह था कि मनुष्यों को एक कठोर नियम के अनुसार कठिनतापूर्वक जीवन बिताने के लिए बाधित किया जाना चाहिये, और जिस प्रकार इसने विचार की स्वतन्त्रता का निषेध किया, उसी प्रकार इसने कला और आनन्द के हल्केपन पर भी पाबन्दी भी लगा दी । प्यूरिटन लोगों के अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति मैसाचुसैट्स जाने का सपना नहीं लेना चाहता था । फिर भी, वहाँ जाने वाले प्यूरिटन लोगों के कई समूहों को विवश होकर जंगल में भाग जाना पड़ा, क्योंकि उनका प्रमुख धार्मिक विश्वास से मतभेद था और एक परवर्ती तिथि पर, जब मुट्ठीभर क्वेकर[1] बोस्टन पहुँचे तो उसमें से तीन व्यक्तियों-दो पुरुषों और एक स्त्री को फाँसी पर लटका दिया गया ।

इस प्रकार न्यू इंग्लैण्ड में प्यूरिटन विचारधारा के अनुसार एक सुव्यवस्थित राज्य का आदर्श खड़ा किया जा रहा था । निस्सन्देह इस समुदाय के पास शक्ति, साहस और आदर्श थे । इसने यदि धार्मिक नहीं तो राजनीतिक स्वतन्त्रता का पोषण किया था और इससे प्रीति रखी । इसकी स्थापना ने स्वतन्त्र जनताओं के नवजात राष्ट्रमण्डल के वैविध्य की समृद्धि की ।

मैसाचुसैट्स और इसका पुराना विनम्र पड़ोसी प्लिमथ देर तक अकेले नहीं रहे । १६३१ ई० में प्रमुख इंग्लिश प्यूरिटन लोगों के एक समूह ने (जिसमें लार्ड सेये और सीली, लार्ड ब्रुक, जॉन हैम्पडन और जॉन पिम थे) कौंसिल से न्यू इंग्लैण्ड के लिए मैसाचुसैट्स के दक्षिण में एक अस्पष्ट किन्तु विस्तृत भूमि का अनुदान प्राप्त किया । इसमें पहली बस्ती बसाने

१. क्वेकर जार्ज फॉक्स द्वारा १६४८-५० ई० में स्थापित किया गया एक धार्मिक सम्प्रदाय था, इसके निश्चित सिद्धान्त और पुरोहित नहीं होते थे । यह बाइबल की शिक्षाओं पर कठोर आचरण करने तथा पोशाक और व्यवहार की सादगी पर अत्यधिक बल देता था । इस सम्प्रदाय का वास्तविक नाम तो मित्र-समाज (Society of Friends) था, किन्तु इसे क्वेकर इसलिए कहा जाता था कि ये भगवान का नाम सुनते ही श्रद्धा के आवेश में काँपने (Quake) लगते थे ।

जाएगी, अपितु इसे प्रोत्साहित किया जाएगा। इसने यह भी निश्चित कर दिया कि राजनीतिक स्वतन्त्रता और स्वशासन की पद्धति ब्रिटिश प्रदेशों की विशेषता होगी। अन्त में मेरीलैण्ड और रोड टापू के दो उदाहरणों में धार्मिक सहिष्णुता की एक वास्तविक पद्धति स्थापित की गयी और यह भी भविष्य में सभी ब्रिटिश बस्तियों की एक विशेषता बननी थी। चार्ल्स प्रथम और उसकी सरकार को इन बातों के लिए निश्चित रूप से श्रेय का कुछ अंश पाने का अधिकार है, यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने जानबूझ कर इनकी योजना बनायी थी। उन्होंने सबको एक ही ढाँचे में जबरदस्ती ढालने का प्रयत्न करने के स्थान पर, नवीन प्रदेशों में शासन करने के विभिन्न प्रकारों को प्रोत्साहित किया। उन्होंने स्वशासन करने वाली संस्थाओं के निर्माण की अनुमति न्यू इंग्लैण्ड में दी और मेरीलैण्ड में इसकी व्यवस्था की; कम-से-कम उन्होंने धार्मिक स्वतन्त्रता के विकास में कोई अड़चन नहीं डाली। औपनिवेशिक मामलों में, कुछ भी हो, चार्ल्स प्रथम की सरकार अत्याचारी नहीं थी; उसने स्वतन्त्र और विभिन्न समाजों के राष्ट्रमण्डल के विकास में वास्तविक योगदान किये।

फिर भी इससे अधिक महत्वपूर्ण बात इन घटनाओं का आदर्शों एवं सिद्धान्तों के महत्व-पूर्ण संघर्ष पर वह प्रभाव था, जो शीघ्र ही ब्रिटिश टापुओं में पुनरुज्जीवित होने वाला था।

यह स्पष्ट है कि प्यूरिटन नेताओं के उपनिवेशीकरण की क्रियाशीलता कुछ अंशों में, वैयक्तिक शासन के ११ वर्षों में इंग्लैण्ड की भ्रामक शान्ति का कुछ कारण है। प्यूरिटन मत के उत्साही पुरुषों ने ऐसा क्षेत्र पा लिया था, जिसमें उनके आदर्शों को क्रियात्मक रूप दिया जा सकता था। दूसरी ओर इन परीक्षणों की सफलता ने उन्हें उस समय प्रोत्साहित किया, जब इंग्लैण्ड में साहसपूर्ण कार्य करने का समय आया। सम्भवतः इसने उन लोगों को भी प्रोत्साहित किया, जो प्रतिरोध के बारे में विभिन्न रूप से सोचते थे, क्योंकि एक प्रकार के स्वभाव वाले व्यक्ति को जो बात आदर्श प्रतीत होती है, वह दूसरे प्रकार के व्यक्ति को चेतावनी भी प्रतीत हो सकती है। बाइबल में वर्णित राष्ट्रमण्डल के आदर्श के बारे में यह सिद्ध हो चुका था कि वह अव्यावहारिक नहीं है; जैसे अठाहरवीं शताब्दी में अमेरिका में लोकतन्त्र की विजय के दृश्य ने फ्रेंच लोगों को प्रोत्साहित किया था कि वे रूसो के सिद्धान्तों को क्रियात्मक रूप प्रदान करें और इस प्रकार इसने फ्रेंच राज्यक्रान्ति उत्पन्न करने में सहायता दी थी, ठीक इसी प्रकार नयी दुनियाँ के बाइबलवर्णित राष्ट्रमण्डलों के दृश्य ने इंग्लैण्ड के प्यूरिटन लोगों को प्रोत्साहित किया और इस प्रकार प्यूरिटन क्रान्ति को उत्पन्न करने में सहायता दी। लम्बी पार्लियामेण्ट की बैठक होने से पहले के वर्षों में, इंग्लैण्ड में प्यूरिटन औपनिवेशिक योजनाओं से संगठन में सहयोग दे रहे थे और चर्च तथा राज्य की उन समस्याओं पर विचार विमर्श कर रहे थे, जो समस्याएँ इन योजनाओं से उत्पन्न हो रही थीं। प्राचीन और नवीन इंग्लैण्ड में सम्पर्क बढ़ रहा था और जब संघर्ष आरम्भ हुआ तो अग्रगन्ताओं के उत्साह से परिपूर्ण अनेक उपनिवेशवासी उसमें अपना भाग लेने के लिए शीघ्र ही स्वदेश वापस लौट आये।

४. पोतधन (जहाजकर) और इसका महत्व

गृहयुद्ध को तथा १६४९ ई० की क्रान्ति को कराने वाले सुदीर्घ विवाद में दो तत्व—एक धार्मिक तत्व और एक संवैधानिक तत्व—सदैव विद्यमान थे। हमने अभी जिन

प्रव्रजनों को देखा है, उनमें धार्मिक तत्त्व प्रधान था, जैसा कि यह इन्हीं वर्षों में होने वाले स्काटिश उपद्रवों में भी था। १६२६ ई० के तथा लम्बी पार्लियामेण्ट की बैठक के बीच में संवैधानिक समस्या का विवाद मुख्य रूप से खटाई में पड़ा रहा। किन्तु इस युग की समाप्ति के समय, यह प्रश्न एक अतीव महत्त्वपूर्ण ढंग से उन आर्थिक उपायों के कारण उठाया गया, जिनका अवलम्बन करने के लिए राजा विवश हुआ था।

राजकीय आमदनी प्राप्त करने की आवश्यकता ने राजा को बाधित किया कि वह धन इकट्ठा करने के लिये ऐसे प्रत्येक सम्भव उपाय का प्रयोग करे, जिसे कानूनी रंगत दी जा सकती थी। निस्सन्देह वह अब भी टनेज और पौण्डेज (प्रति पौण्ड तथा प्रति टन पर वसूल की जाने वाली चुंगी) के कर एकत्र कर रहा था। अधिकारों के आवेदन पत्र में इसका निश्चित रूप से निषेध नहीं किया गया था और यद्यपि पार्लियामेण्ट ने चुंगी का रिवाजी कानून पास नहीं किया था, फिर भी ताज के वकीलों का यह मत था कि क्योंकि ये चुंगियां ताज का प्राचीन अधिकार हैं और इनका निषेध नहीं किया गया, अतः इनके लिये कोई कानून आवश्यक नहीं है। १६३० ई० में धन एकत्र करने का एक चातुर्यपूर्ण ढंग नाइट पद की कुर्की (Distraint of Knighthood) के रूप में आविष्कृत किया गया। एडवर्ड प्रथम ने जमींदारों को नाइट की पदवी लेने के लिए अथवा इसके बदले में एक जुर्माना अदा करने के लिए बाधित किया था, क्योंकि वह लड़ने वाले व्यक्ति चाहता था; केवल जुर्माने प्राप्त करने के प्रयोजन से इस उपाय का प्रयोग औपचारिक दृष्टि से वैध था, किन्तु फिर भी यह उत्तेजनाप्रद दुरुपयोग था। इसी प्रकार वसूली के प्रयोजन के लिए वनों के क्षेत्राधिकार के पुराने दावों का पुनरुज्जीवन भी बहुत क्षोभ उत्पन्न करने वाला था।

किन्तु इन उपायों में सबसे अधिक प्रसिद्ध और दुष्प्रणीत पोतधन (Ship-money) था। युद्ध के दिनों में चिरकाल से राजा इस अधिकार का प्रयोग करते थे कि वे समुद्री जिलों को या तो जहाज देने के लिए अथवा इनके मूल्य के बराबर धन देने के लिए कहें। १६३४ ई० में बेड़े को मजबूत बनाने की उत्सुकता में चार्ल्स ने समुद्री जिलों से यह माँग की थी कि वे (लन्दन को छोड़कर) अधिक बड़े जहाज प्रस्तुत करें अथवा इनके समान मूल्य की राशि दें। यह माँग शान्ति के समय में की गयी थी; इसके अतिरिक्त यह अधिकारों के आवेदन पत्र-द्वारा निषिद्ध करों के शीर्षक में आने वाली समझी जा सकती थी। किन्तु कुछ वकीलों ने यह निर्णय दिया कि यह वैध है और इस धन को सफलतापूर्वक इकट्ठा किया गया। अगले वर्ष यद्यपि लड़ाई का कोई खतरा नहीं था, तथापि इस कर को पुनः न केवल समुद्री, अपितु भीतरी जिलों पर भी लगा दिया गया। १२ में से १० जजों ने यह घोषणा की कि यह टैक्स समूचे राज्य से उचित रीति से वसूल किया जा सकता है, बशर्तें कि राज्य संकट में हो और इसका एक मात्र निर्णय करने वाला राजा होना चाहिये। पुनः धन इकट्ठा किया गया, यद्यपि पहले की अपेक्षा अधिक विरोध किये गये। यह उल्लेख करना उचित है कि यह सारा धन बेड़े पर व्यय किया गया। यह बेड़ा पहले की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली बन गया और इसने कुछ अच्छा कार्य इस रूप में किया कि मोरक्को के समुद्री डकैतों से ३०० कैदियों को मुक्त कराया।

१६३६ ई० में तीसरी बार कर वसूल करने की घोषणा की गयी। स्पष्टत: नया कर एक राष्ट्रीय संकट का सामना करने के लिए असाधारण वस्तु नहीं था, किन्तु इसे राजस्व का एक नियमित स्रोत बनाया जा रहा था। यदि यह सारा कर समुद्री बेड़े पर व्यय किया जाता तो भी इससे राज्य कोष को आनुमानिक तौर पर कुछ सहायता मिलती। बकिंघमशायर के एक धनी जमींदार जान हैम्पडन ने इसका विरोध करने का निश्चय किया। उसने यह विरोध हिंसा द्वारा नहीं, किन्तु उसके सम्मुख खुले हुए एकमात्र कानूनी उपाय से करने का निश्चय किया। हैम्पडन के मामले को कई बार अनुचित रीति से देश के कानून का विरोध करने के लिए न्यायोचित कार्य के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, किन्तु हैम्पडन ने इसे इस आधार पर अदा करने से मना किया कि यह कर अवैध है और इस प्रकार कानूनी न्यायालयों में इस प्रश्न को चुनौती दी। उसमे माँगी गई राशि केवल २० शिलिंग थी। इससे ये दोनों बातें स्पष्ट होती हैं कि इस कर का वास्तविक बोझ किसी भी प्रकार से उत्पीड़न करने वाला नही था और यह विरोध विशुद्ध रूप से सैद्धान्तिक था। एक महान् राजकीय अभियोग में (१६३७ ई०) इस विषय पर दोनों पक्षों की ओर से अगाध विद्वत्ता के साथ बहस हुई। न्यायाधीशों की समूची बेंच द्वारा दिया गया निर्णय पाँच के विरुद्ध सात वोटों से हैम्पडन के प्रतिकूल था। कुछ न्यायाधीशों ने अपने निर्णय में विशुद्ध निरंकुश शासन की भाषा का प्रयोग किया और यह दावा किया कि पार्लियामेण्ट के वे कानून अवैध हैं, जो अपने राज्य की रक्षा करने के लिए राजा के अधिकार को उससे छीनते हैं। किन्तु इस बेन्च को इस बात का श्रेय है कि पाँच न्यायाधीशों ने हैम्पडन के पक्ष में निर्णय की घोषणा करते हुए अपनी आजीविका को संकट मे डाला। १७वीं शताब्दी के इंग्लैण्ड की यह विशेषता है कि एक गम्भीर संवैधानिक प्रश्न को कानूनी न्यायालयों में लड़ा जाय और न्यायाधीशों के निर्णय को निष्ठा के साथ उस समय तब तक स्वीकार किया जाय, जब तक कि कानून को ही न बदला जा सके।

किन्तु पोतधन के मामले के पीछे उच्चतम संवैधानिक महत्त्व रखने वाले प्रश्न थे। यदि राजा अधिकार के आवेदनपत्र के बाद भी ऐसे कर से धन इकट्ठा कर सकता है तो पार्लियामेण्ट के अधिकार कहाँ हैं और इंग्लैण्ड की स्वतन्त्रताओं का क्या होगा? यदि राज्य के न्यायाधीश यह घोषणा कर दें कि पार्लियामेण्ट का कोई कानून राजा के विशेषाधिकार में कोई परिवर्तन नहीं कर सकता और यदि वह इस सिद्धान्त पर आचरण करने लगे तो उन कानूनों के निरन्तर बनाये रखने के लिये क्या सुरक्षा थी "जिन कानूनों का अब तक चार्ल्स ने पालन किया था: यद्यपि उसने उनमें काफी खींचतान की थी।" ये संशय और सन्देह उन हज़ारों मेनरगृहों और ग्रामों में गूँज रहे थे, जहाँ स्वतन्त्रता के पूर्वोदाहरण ज्ञात थे और इन्हें मूल्यवान् समझा जाता था। कोई खुला विरोध नही हुआ, बहुत कम प्रतिवाद किया गया, किन्तु राष्ट्र का अथवा इसके सुशिक्षित भाग का मानस तैयार किया जा रहा था।

इसी समय, सफलता से प्रोत्साहित होकर राजा राजकीय अधिकारों के बारे में तथा पार्लियामेण्ट द्वारा प्रतिबन्ध लगाने की धृष्टतापूर्ण अबुद्धिमत्ता के बारे में अनिवार्य रूप से अपने दृष्टिकोण में कठोर हो रहा था और लॉड भगवान द्वारा अभिषिक्त राजा के दैवी अधिकार

के सिद्धान्त का प्रचार कर रहा था। आयरलैण्ड में वैण्टवर्थ[1] राज्य का पूर्ण स्वामी बन कर एक सेना का निर्माण कर रहा था। वह अपने मित्र लाड को पत्र लिख कर यह प्रेरणा कर रहा था कि पोतधन के पूर्वोदाहरण को इस बात के प्रमाण के रूप में भी प्रयुक्त करना चाहिये कि राजा को (स्थल सेनाओं के लिए कर इकट्ठा करने का) ऐसा ही अधिकार होना चाहिये। वह इस बात पर बल दे रहा था कि इस प्रकार की आर्थिक सहायता से किया जाने वाला एक विदेशी युद्ध इंग्लैण्ड को शान्त बनाये रखेगा। स्वेच्छाचारी शासकों की यह प्रबल युक्ति हुआ करती है। उसने यह युक्ति दी कि "पोतधन का यह कार्य अच्छी तरह सुरक्षित हो जाने पर सदा के लिए राजकीय सत्ता को स्वदेश में प्रजाजनों की शर्तों और बन्धनों से स्वतन्त्र करने वाला है।" वस्तुतः इंग्लैण्ड की राजनीतिक स्वतन्त्रता खतरे में थी, यद्यपि चार्ल्स और उसके परामर्श-दाताओं ने इस विषय में अब तक बड़ी सावधानी से वैधता का पालन किया था।

५ वैयक्तिक सरकार की समाप्ति और सीमित राजतन्त्र की परिभाषा

पोतधन के मामले के निर्णय के कुछ महीनों के भीतर ही स्काट लोगों ने सशस्त्र विद्रोह किया। चार्ल्स उनके सम्मुख असहाय था, अतः उसने एक विराम सन्धि कर ली। किन्तु यदि वह अपने उत्तरी राज्य पर समूचा अधिकार नहीं खोना चाहता था तो उसे स्काट लोगों के विरुद्ध सेनाएँ अवश्य चाहिये थीं। उसके सम्मुख दो विकल्प थे; या तो वह खुले तौर पर कानून की अवहेलना करे अथवा पार्लियामेण्ट को बुलाये और उससे धन माँगे। वैण्टवर्थ अब लार्ड स्ट्रैफ्फोर्ड बन चुका था। उसने पार्लियामेण्ट को बुलाने का परामर्श दिया। वह राष्ट्र की नब्ज टटोलने के साधन के रूप में पार्लियामेण्ट के महत्त्व में विश्वास रखता था, बशर्ते कि इसे शासन चलाने वाली सरकार के मार्ग में बाधा डालने की अनुमति न दी जाय। उसे सदैव यह आशा थी कि ऐसा समय आयेगा कि इसे पुनः बुलाना सुरक्षित होगा, इसके लिये यह एक उत्तम समय प्रतीत हो रहा था। उसे आशा थी कि स्काटिश खतरे के कारण राष्ट्रीय भावना उद्दीप्त होगी। यह एक ऐसा युद्ध था, जिसके बारे में उसे यह आशा थी कि यह लोगों की सम्मति को बदल देगा और वह जानता था कि वह पहले होने वाली आयरिश पार्लियामेण्ट से एक अच्छा अनुदान प्राप्त कर सकेगा (जैसा कि उसने वास्तव में किया) और यह एक अच्छा उदाहरण होगा। उसने यह अनुभव नहीं किया कि इंग्लैण्ड में राजा के उद्देश्यों के प्रति अविश्वास कितना गहरा था और न ही उसने यह देखा कि अनेक इंग्लिश लोगों को यह प्रतीत होता था कि स्काट लोग एक ऐसे उद्देश्य के लिए लड़ रहे थे, जो उनका अपना ही उद्देश्य था। अतः पार्लियामेण्ट बुलायी गयी और १६२६ ई० से जेल में सड़ने वाले इलियट के साथियों को एक अच्छा असर डालने के लिए मुक्त कर दिया गया।

किन्तु नयी पार्लियामेण्ट (अप्रैल १६४० ई०) में पुराने नेता थे। इनमें सबसे बड़ा नेता सधा हुआ राजनीतिज्ञ, रणकलावेत्ता जॉन पिम था, उसके साथ पोतधनवाले मामले का वीर नायक जॉन हैम्पडन था और पिछली बेन्चों पर बैठने वाला हण्टिन्गडन का एक शान्त प्यूरिटन

---

१. एच० डी० ट्रेल द्वारा लिखित वैन्टवर्थ (स्ट्रैफ्फोर्ड) की एक अच्छी छोटी जीवनी है।

जमींदार ओलिवर क्रामवेल था।[१] इनसे स्काटिश युद्ध के लिए आवश्यक धन के अनुदानों की माँग की गयी। उन्होंने यह उत्तर दिया कि वे यह नहीं जानते हैं कि जब तक उनकी स्वतन्त्राएँ सुरक्षित नहीं है, तब तक उनके पास देने के लिए कोई धन राशि है या नहीं है। तीन सप्ताह के भीतर ही विच्छेद पक्का हो गया और 'लघु पार्लियामेंट' को भंग कर दिया गया। इस समय लन्दन में उत्तेजित जनसमुदायों ने लॉड के महल को लूटने की धमकी दी और दंगा करने वालों को जेल से मुक्त कर दिया।

किन्तु स्काटलैण्ड की लड़ाई को चलाया जाना आवश्यक था। किसी न किसी प्रकार के उग्र उपायों से धन एकत्र किया गया, इन उपायों में खोट मिले-मिलावटी सिक्कों को प्रचारित करना भी था, नौबत यहाँ तक पहुँची कि स्पेन से भी निरर्थक सहायता माँगी गयी। किन्तु जो सेनाएँ इकट्ठी की जा सकीं, वे अप्रशिक्षित, अनुशासनहीन और असन्तोष से परिपूर्ण थी, जब कि स्काट लोग पूरी तरह तैयार थे। स्काटिश सेनाओं ने सीमान्त पार कर लिया। टाइन नदी पर न्यूबर्न में उन्हें रोकने का एक निर्बल प्रयास किया गया। न्यू कैसल को छोड़ना पड़ा और स्काट लोगों ने समूचे नार्थम्बरलैण्ड और डरहम पर अधिकार कर लिया। यहाँ एक बार उन्होंने अपनी शिकायतों को दूर करने के लिए तथा इंग्लिश पार्लियामेण्ट को बुलाने के लिए राजा को एक आवेदन पत्र दिया। बारह इंग्लिश लार्डों ने भी ऐसा ही आवेदन पत्र भेजा। निराश होकर चार्ल्स ने यार्क में इंग्लिश लार्डों की एक सभा, यह पता लगाने के लिए, बुलायी कि वे उसे क्या सहायता दे सकते हैं। किन्तु वे सबसे अच्छा काम यही कर सकते थे कि स्काटिश लोगों के साथ सन्धि वार्ता चलाएँ। स्काट एक विराम सन्धि स्वीकार करने के लिए तैयार थे, बशर्ते कि उन्हें २५ हजार पौण्ड की धन राशि प्रति मास उनकी सेनाओं के व्यय के लिए प्रदान की जाय। किन्तु यह धन उस धन के साथ कहाँ से प्राप्त हो, जिस धन से इंग्लिश सेनाओं को बनाए रखा जा सकता था। इस स्थिति से निकलने का कोई रास्ता नहीं था। अत: एक नयी पार्लियामेण्ट को बुलाया गया और इसकी पहली बैठक ३ नवम्बर १६४० ई० को हुई। यह सुप्रसिद्ध "**लम्बी पार्लियामेण्ट**" (Long Parliament) थी।

लम्बी पार्लियामेण्ट की बैठक स्वतन्त्र सभाओं के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण तिथि है। इसके सदस्यों में अधिकांश को राजा के साथ व्यवहार का लम्बा संसदीय अनुभव था और वे एक स्पष्ट मान्यता के साथ यहाँ आए थे कि उन्हें यहाँ केवल प्राचीन पूर्वोदाहरणों और विशेषाधिकारों का उल्लेख करना और इनकी रक्षा करना ही नहीं है, अपितु वास्तव में उनका कार्य पार्लियामेण्ट के अधिकारों की तथा राजा के साथ इसके सम्बन्धों की निर्भ्रान्त रीति से व्याख्या करना है तथा सदा के लिए पूर्वोदाहरण की उन अस्पष्टताओं को दूर कर देना है, जिनके कारण पिछले ग्यारह वर्षों में राजा अपने ढंग से सरकार को चलाने में समर्थ हुआ था। इस मुख्य प्रश्न पर वस्तुत: उनमें कोई मतभेद नहीं था। जहाँ तक इस बात का सम्बन्ध है,

---

१. क्रामवेल की अनेक जीवनियों में सर्वोत्तम सी० एच० फर्थ द्वारा "राष्ट्रों के वीर पुरुषों की पुस्तक माला" में प्रकाशित हुई है।

वहाँ तक व्यावहारिक रूप से राजा का कोई दल नहीं था। लम्बी पार्लियामेण्ट की आरम्भिक कार्यवाहियाँ एक संयुक्त राष्ट्र के संयुक्त प्रतिनिधियों का कार्य थीं।

पहला और सबसे अधिक सनसनीखेज कार्य जो उन्होंने शुरू किया, वह शासन की अभिनव पद्धति के मुख्य अभिकर्त्ताओं की पदच्युति करना और उन्हें दण्ड देना था। कामन्स सभा ने एक सन्देश में यह कहा कि महाभियोग की प्रक्रिया से स्ट्रेफ्फोर्ड के विरुद्ध महाराज-द्रोह का आरोप लगाया जायगा। इस पर लार्ड सभा ने यह आदेश दिया कि उसकी जाँच हो जाने तक उसे कारावास में रखा जाय। राज्यमन्त्री केवल फ्रांस भाग कर ही दण्ड से बच सका और हैम्पडन के मामले में अध्यक्षता करने वाला प्रधान न्यायाधीश तथा महामुद्रा का संरक्षक (Lord Keeper of the Great Seal) हालैण्ड भाग गया।

स्ट्रेफ्फोर्ड का लम्बा अभियोग और बाद में उसे दण्ड देने के संसदीय कानून ने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किये रखा, हमें अब इसका वर्णन करना चाहिए। इस बीच मे स्काट लोगों की समस्या को भी देखना चाहिए। उन्हें सेना के रखने का भत्ता उस समय तक दिया जा रहा था, जब तक कि उनके तथा राजा के बीच के विवादास्पद प्रश्नों का समाधान न हो जाय। किन्तु केवल राजा ही स्वयमेव इन प्रश्नों का समाधान कर सकता था। उसने स्काटलैण्ड की यात्रा में ऐसा किया। पार्लियामेण्ट ने बड़ी अनिच्छा से अगस्त १६४१ ई० में उसे इसकी अनुमति दी। निस्सन्देह, प्रत्येक बात पर झुकने और स्काटिश क्रान्ति के परिणामों को स्वीकार करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। किन्तु उसने इस अवसर का प्रयोग स्काटिश लार्डों के एक ऐसे दल के साथ सम्पर्क करने में किया, जिस दल का नेता माण्ट्रोस[1] का अर्ल था। ये लार्ड आरगिल के अर्ल के तथा मन्त्रियों के नेतृत्व से असन्तुष्ट थे। वस्तुतः स्काटलैण्ड में एक ऐसा बड़ा समुदाय था जो एक बार कर्क की स्थिति सुप्रतिष्ठित हो जाने पर राजा के साथ समझौता करने के लिए उत्सुक था और इसके बडे महत्त्वपूर्ण परिणाम हुए। इसी बीच में यह सन्देह पैदा हुआ कि चार्ल्स अपने स्वार्थ के लिए स्काटिश पार्टी बना रहा है, इस कारण पार्लियामेण्ट के नेताओं के साथ उसकी मित्रता नही बढ़ सकी।

किन्तु लम्बी पार्लियामेण्ट का मुख्य कार्य न तो स्काटलैण्ड की समस्या थी (जो उनका सीधा कार्य नहीं था) और न ही स्ट्रेफ्फोर्ड का महाभियोग था। उनका प्रधान कार्य इंग्लिश संविधान की व्याख्या करना था। यह कार्य १६४० ई० की पतझड़ में तथा १६४१ ई० में अनेक महत्त्वपूर्ण कानूनों की श्रृंखला द्वारा पूरा किया गया। इन सब कानूनों के बारे में चार्ल्स प्रथम के पास पार्लियामेण्ट के आगे झुकने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था। यद्यपि अनेक मामलों में उसने अधिकतम अनिच्छा से ही ऐसा किया। तिथिक्रम की अपेक्षा तर्कसंगत

---

१. इंग्लिश मैन आफ एक्शन सीरीज नामक ग्रन्थमाला में मोब्रे मोरिस ने साहसी और शूरवीर मॉण्ट्रोस की सुन्दर तथा लघु जीवनी लिखी है। सी० एस० टेरी ने इसकी विस्तृत जीवनी लिखी है।

क्रम में यदि हम कानूनों को लें तो **त्रैवार्षिक अधिनियम** (Triennial Act) फरवरी (१६४१ ई०) ने यह व्यवस्था की कि पार्लियामेण्ट प्रति तीन वर्ष में कम-से-कम एक बार अवश्य बुलायी जानी चाहिये; यदि तीन वर्ष तक पार्लियामेण्ट की बैठक न बुलायी जाय तो राजा के आदेशों की प्रतीक्षा किये बिना लार्ड चान्सलर को एक बैठक अवश्य बुलानी चाहिये, यदि वह भी इसे नहीं बुलाता तो शैरिफ लोगों को चुनाव अवश्य करने चाहिये। इसके बाद से पार्लियामेण्ट के बिना शासन असंभव हो गया। दूसरी व्यवस्था यह थी कि ट्यूडर युग के सभी **विशेषाधिकार वाले न्यायालय**—स्टार चैम्बर, हाइकमीशन कोर्ट, उत्तर की परिषद्, वेल्स की परिषद्—एकदम समाप्त कर दिये गये (१६४१ ई०)। इसके बाद से देश का सामान्य कानून पर्याप्त था। अब अन्य यूरोपियन देशों से सर्वथा भिन्न, इंग्लैण्ड की सरकार को सत्ता बनाये रखने के लिए विशेष प्रशासनात्मक न्यायालयों के बिना ही अपना काम चलाना पड़ता है। तीसरी व्यवस्था **टनेज और पौंडेज कानून** (१६४१ ई०) का बनाना था, इसने पार्लियामेण्ट से स्वीकृति के बिना किसी प्रकार के सीमा शुल्क को वसूल करना अवैध घोषित किया, एक अन्य कानून ने औपचारिक रूप से पोतधन की, नाइट न बनने पर कुर्की करने की तथा जंगलों की वसूलियों को अवैध घोषित किया। अधिकार के आवेदन पत्र के साथ मिल कर इन सब कानूनों ने इस बात को निश्चित कर दिया कि भविष्य में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष सभी प्रकार के करों का नियन्त्रण पार्लियामेण्ट द्वारा किया जाना चाहिये। दोनों सदनों ने ये सब कानून बिना किसी तर्क वितर्क के पास कर दिये और चार्ल्स के पास इन्हें स्वीकार करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था।

लम्बी पार्लियामेण्ट के कार्य का यह सबसे अधिक स्थायी और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग था। यह कार्य पार्लियामेण्ट के पहले वर्ष में ही पूरा हो गया। यह अगले १८ वर्षों के क्रान्तिकारी परिवर्तनों के बाद भी बना रहा और राजतन्त्र की पुनः स्थापना (Restoration) के समय में बिना किसी सन्देह के इसे इंग्लिश संविधान का अंग स्वीकार किया गया। किन्तु यह कार्य पूर्वोदाहरणों के केवल पुनर्विवरणमात्र से कहीं अधिक था। यह एक समूचा संविधान था। यह इतिहास में सीमित संसदीय राजतन्त्र की पहली स्पष्ट परिभाषा थी। इसने अब भी राजा को कार्यपालिका के शासन के संचालन के लिए और मन्त्रियों की नियुक्ति के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया। इसमें ताज की स्थिति संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के राष्ट्रपति की स्थिति से बहुत कुछ मिलती थी। किन्तु ताज को अब सदैव पार्लियामेण्ट के साथ सहयोग करते हुए कार्य करना चाहिए था, विशेष रूप से इसलिए कि पार्लियामेण्ट के बिना यह शान्ति के समय में भी सरकार को चलाने के लिए भी आवश्यक धन नहीं प्राप्त कर सकता था। ताज को देश का ऐसा सामान्य कानून स्वीकार करना चाहिये तथा ऐसे कानून की सीमाओं के भीतर रहते हुए कार्य करना चाहिये जो कानून पार्लियामेण्ट में पेश किये गये परिवर्तनों से ही संशोधित हो सकता है। कानून की सामान्य पद्धति से बाहर रहने वाले कोई विशेष क्षेत्राधिकार अथवा विशेषाधिकार न्यायालय अब नहीं रहे। वस्तुतः यह एक स्वतन्त्र संविधान के मौलिक सिद्धान्तों की स्पष्ट व्याख्या थी।

६—दलों में फूट पड़ना और गृहयुद्ध की दिशा में प्रगति

समूची पार्लियामेण्ट प्रमुख संवैधानिक प्रश्न पर लगभग एकमत थी। किन्तु दृष्टिकोण के मतभेद पहले से ही प्रकट होने लगे थे और दो दल अपना निर्माण कर रहे थे। क्रान्ति के समय में घटनाएँ बड़ी तेजी से होती हैं। लम्बी पार्लियामेण्ट आरम्भ होने के पन्द्रह महीने के भीतर ये दल इतनी स्पष्ट रीति से पृथक् हो गये कि गृहयुद्ध अनिवार्य हो गया। दो वर्षों के भीतर यह युद्ध शुरू हो गया।

स्ट्रैफर्ड के महाभियोग से राजा के प्रति अनुकूल भावना उत्पन्न होने लगी। कामन्स सभा इस बात की आवश्यकता पर सहमत थी कि राजा जिस पर निर्भर रह सकता था, ऐसे महान् अधिकार और शक्ति वाले व्यक्ति को हटा दिया जाय और वह महाराजद्रोह के आरोप पर महाभियोग की प्रक्रिया के सम्बन्ध में भी इस कारण के आधार पर सहमत थी कि अभियुक्त ने इंग्लैण्ड के प्राचीन मौलिक कानूनों को उलटने का तथा सरकार की स्वेच्छाचारी तथा अत्याचारपूर्ण पद्धति को चलाने का प्रयत्न किया था। किन्तु शीघ्र ही कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गयीं। राजद्रोह के इंग्लिश कानून ने इस अपराध को राजा के विरुद्ध लड़ाई करने तक सीमित कर दिया, इसे राष्ट्र के प्रति ऐसे किसी द्रोह का ज्ञान नहीं था, जिसमें राजा एक दल हो सकता था। लार्ड सभा के सामने एक न्याय करने वाली संस्था के रूप में यह आरोप पेश किया गया और वह कानून का और केवल कानून का प्रशासन करने के लिए बँधी हुई थी। कामन्स सभा ने अपने मामले को पुष्ट करने के लिए प्रिवी कौंसिल की बैठक की कार्यवाहियों के विवरण से सर हेनरी वेन के वे पत्र पेश किये, जिनमें स्ट्रैफर्ड ने कहा था, "आपके पास आयरलैण्ड में एक सेना विद्यमान है और आप इस राज्य को वशवर्ती बनाने के लिए इस सेना का प्रयोग कर सकते हैं।" किन्तु यह बड़ी निर्बल साक्षी थी—वेन के पत्र ग़लत हो सकते थे; यह राज्य स्काटलैण्ड हो सकता था। यदि यह इंग्लैण्ड का राज्य था तो क्या यह "राजा के विरुद्ध युद्ध था ?"; इसके अतिरिक्त बड़ी कठिनाइयों में किया जाने वाला स्ट्रैफर्ड का बचाव असाधारण रूप से वाग्मी और प्रभावशाली था और उसने जनता में बड़ी सहानुभूति को उत्पन्न किया। ऐसा प्रतीत होता था कि महाभियोग शायद समाप्त हो जायगा। कामन्स सभा के नेताओं ने यह निर्णय किया कि वे किसी व्यक्ति को दण्डित करने तथा सम्पत्ति से वंचित करने वाले संसदीय मत के अधिक व्यापक साधन का अवलम्बन करें। इसका अर्थ बगैर अभियोग चलाये दण्ड देना था। किन्तु कामन्स सभा में भी ऐसे हथियार के प्रयोजन के विरुद्ध पर्याप्त विरोध था, जो अत्याचार का हथियार था, जिसे 'गुलाबों के युद्धों' (Wars of the Roses) के बुरे पूर्वोदाहरणों में से खोजा गया था और हेनरी अष्टम ने जिसका बहुत प्रयोग किया था। कानून के शासन के समर्थकों को विद्वेष की भावना खतरनाक रास्तों पर ढकेल रही थी। किन्तु वे अपनी बात पर अड़े रहे। चार्ल्स ने अपने मित्र को बचाने के लिए यह वचन देने का निष्फल प्रयत्न किया कि वह भविष्य में उसे किसी सार्वजनिक पद पर कभी नहीं नियुक्त करेगा। स्ट्रैफर्ड को प्राणदण्ड देने वाला कानून पास कर दिया गया और उस पर राजा के हस्ताक्षरों की प्रतीक्षा की जाने लगी। (मई १६४१ ई०)।

एक उदात्त आत्मबलिदान की भावना के साथ स्ट्रैफ्फोर्ड ने राजा को इस पर हस्ताक्षर करने की सलाह दी, और एक पीड़ादायक दिवस के बाद उसने ऐसा किया। अपने (इस) समर्पण के पतन के लिए उसने अपने को कभी क्षमा नहीं किया, फाँसी के तख्ते पर उसने इसका निर्देश करते हुये कहा कि भगवान के साथ व्यवहार में यह उसके लिये सर्वथा न्यायोचित है, और उसने पार्लियामेण्ट के नेताओं को कभी क्षमा नहीं किया। स्ट्रैफ्फोर्ड अपने वधस्थल पर ऐसे भक्तिपूर्ण उत्साह के साथ गया (१२ मई), जिसकी प्रशंसा किये बिना मनुष्य नहीं रह सकते और जब वह उस घर के पास से गुजर रहा था जहाँ लॉड बन्दी था और जो आर्क-बिशप यह जानता था कि उसकी बारी भी अवश्य आनी है, उस समय वह खिड़की के पास आशीर्वाद की मुद्रा मे हाथ उठा कर खड़ा हो गया। अनेक मनुष्यों की दृष्टि में स्ट्रैफ्फोर्ड के दण्ड के प्रतिशोध की भावना ने पार्लियामेण्ट के नेताओं को गलत रास्ते पर डाल दिया। उनका कहना यह था कि जब तक स्ट्रैफ्फोर्ड जीवित है, तब तक वे सुरक्षित नहीं हैं, किन्तु इस कार्य ने वास्तविक समझौते को असम्भव बना दिया। लॉड के विरुद्ध बदला लेने का समय अभी नहीं आया था। उसने लगभग चार वर्ष तक कारावास में प्रतीक्षा की, तब जनवरी १६४५ ई० में उसका वध उसके मित्र के समान निष्ठुरता के साथ कर दिया गया।

इसी बीच में धार्मिक प्रश्नों पर विवाद हो रहा था और संवैधानिक प्रश्नों पर जैसा ऐकमत्य था, वैसा इन प्रश्नों पर नहीं था। किसी भी पूर्ववर्ती पार्लियामेण्ट की अपेक्षा इसमें अनिवादी प्यूरिटन लोगों की संख्या अधिक थी और वे राष्ट्रीय चर्च के समूचे संविधान को बदलने के लिए उत्कण्ठित थे। शुरू में ही पार्लियामेण्ट में उन्होने लार्ड सभा से बिशपों के निष्कासन के लिए एक बिल पेश किया था। इसके बाद उन्होंने एक इससे भी अधिक उग्र बिल-आर्कबिशपों, बिशपों, डीकनों आर्क डीकनों, वेतनभोगी धर्मयाजकों और पादरियों के समूलोन्मूलन के लिए पेश किया। यह **जड़ और शाखा विधेयक** (Root and Branch Bill) के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि इसका उद्देश्य चर्च की जड़ और शाखाओं को काटना था। किन्तु कामन्स सभा में भी एक बड़ा भाग और देश में एक इससे भी बड़ा भाग इंग्लिश चर्च के प्रति वास्तविक भक्ति रखता था और ऐसे किसी परिवर्तन का आमरण विरोध करना चाहता था। एक मध्यगामी दल में पार्लियामेण्ट के अनेक नेता सम्मिलित थे, इसे बिशप पद्धति में अपने आप में कोई आपत्ति नहीं थी; किन्तु यह दल बिशपों को राजकीय विशेषाधिकार का भयंकरतम समर्थक समझता था और इस कारण तथा अपने प्रबलतम समर्थकों को पृथक् न करने की इच्छा के कारण इन्होने इन बिलों का आधे मन से समर्थन किया। इस प्रकार बहुमत बिशपों के विरुद्ध था। बिशपों के मित्र स्वाभाविक रूप से एक ठोस दल बनाते चले गये और मौलिक संवैधानिक प्रश्नों के अतिरिक्त अन्य सब मामलों में वे राजा का पक्ष लेने लगे।

मतभेद का एक अन्य गम्भीर कारण भी उत्पन्न हो रहा था। अब संविधान की व्याख्या की जा चुकी थी। क्या राजा पर यह विश्वास किया जाय कि जो महान् शक्तियाँ उसके पास रह गयी थीं वह उनका प्रयोग करे अथवा उसे विशुद्ध अविश्वास की दृष्टि से देखा जाय और वास्तव में पार्लियामेण्ट ही शासन करने वाली सरकार का कार्यभार ग्रहण कर ले।

चर्च के विवाद में जो व्यक्ति एंग्लिकन पक्ष के अनुयायी थे, वे राजा पर विश्वास करने के पक्षपाती थे। बहुमत के नेता उस पर विश्वास नहीं कर सकते थे और उनके इस रुख के कारण कोई वास्तविक समझौता असम्भव हो गया। उनका अविश्वास निराधार नहीं था। चार्ल्स प्रथम स्पष्टतः यह विचार रखता था कि वह राजतन्त्र की दैवी व्यवस्था के कारण शत्रुओं के साथ ईमानदारी का व्यवहार रखने के लिए बाधित नहीं है। किन्तु अविश्वास के इस सामान्य कारण के अतिरिक्त लम्बी पार्लियामेण्ट के पहले महीनों में सन्देह पैदा करने वाली कई घटनाएँ हुईं। मई १६४१ ई० में अभी तक उत्तर मे रहने वाली सेना में एक मूर्खतापूर्ण षड्यन्त्र का भण्डाफोड़ हुआ; अधिकांश अफसर राजभक्त थे और उस समय लन्दन पर चढ़ाई करने की चर्चा थी। यद्यपि यह षड्यन्त्र विफल हुआ, किन्तु इसका सब से अधिक लाभ उठाया गया; इस अवसर पर पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के बिना पार्लियामेण्ट के विघटन को निषिद्ध ठहराने वाला एक कानून बनाया गया। इस कानून ने राजा को उस बात से वंचित कर दिया जिसे वह अपना एक मौलिक विशेषाधिकार समझता था। स्काटलैण्ड मे भी राजा के षड्यन्त्रों से सन्देह बढ़ रहे थे। ये स्काटलैण्ड में उग्र प्रेसबिटेरियन पार्टी के नेता आरगिल के अर्ल के मारने अथवा अपहरण करने के रहस्यमय षड्यन्त्र की अफवाहों से पराकाष्ठा पर पहुँच गये। राजा इनके सभी प्रकार के ज्ञान से इन्कार करता था, किन्तु पार्लियामेण्ट के नेता यह विश्वास करते थे कि वे चारों ओर से षड्यन्त्र के जाल से घिरे हुए है।

किन्तु आयरलैण्ड में होने वाली घटनाओं ने ही शान्तिपूर्ण समझौते को अन्त मे असम्भव बना दिया। यह बात ध्यान देने योग्य है कि जैसे स्काटलैण्ड ने सवैधानिक संघर्ष को जल्दी लाने में सहायता दी थी, इसी प्रकार आयरलैण्ड ने इसे इसको अधिकतम संकटपूर्ण दशा में ढकेल दिया। स्ट्रैफर्ड ने अपने को आयरलैण्ड का पूरा स्वामी बना लिया था, किन्तु उसने अनेक असन्तोष भी उत्पन्न कर दिये थे। कनाट में बस्ती बसाने की उसकी योजना ने पहली बस्तियों की सभी अनवरत पीड़ादायक स्मृतियों को उद्बुद्ध कर दिया था, उसके आकस्मिक पतन ने अनिवार्य रूप से बेचैनी उत्पन्न की, और इग्लिश पार्लियामेण्ट द्वारा स्वाभाविक रूप से माँग किये जाने वाले आयरिश सेना के विघटन ने स्थिति को संकटपूर्ण बना दिया। संसदीय संकट में राजा को अब भी आयरलैण्ड से सहायता की आशा थी, उसने कुछ कैथोलिक नेताओं के साथ, विशेषतः पेल के एंग्लोआयरिश लार्डों के साथ बात की और सहायता देने के बदले में कैथोलिकों के साथ सहिष्णुता के व्यवहार की आशा दिलायी। किन्तु जहाँ एक ओर पेल के अनेक लार्ड कट्टर राजपक्षपाती और इंग्लैण्ड के साथ सम्बन्ध के प्रति निष्ठा रखने वाले थे, वहाँ दूसरी ओर आयरिश कैथोलिकों की साधारण जनता अस्पष्ट वचनों पर भरोसा नहीं कर सकती थी और आयरिश कैथोलिकों का विशाल जनसमूह अस्पष्ट प्रतिज्ञाओं पर भरोसा करने में सन्तुष्ट नहीं था। वे जानते थे कि यदि प्यूरिटन लोग विजयी हुए तो वे पहले की अपेक्षा कहीं अधिक क्रूर स्वामी होंगे। उन्होंने एक विद्रोह का संगठन किया, यह अक्टूबर १६४१ ई० में भड़क उठा। इसके नेताओं ने राजा की ओर से कार्य करने का दावा किया और स्काटलैण्ड की राजमुद्रा के साथ एक जाली फरमान प्रदर्शित किया, यह मुद्रा सम्भवतः किसी पुराने चार्टर से फाड़ ली गयी होगी। इतनी कटु स्मृतियों और पुराने असन्तोष से

परिपूर्ण आयरलैण्ड जैसे देश में एक विद्रोह सम्भवतः शान्तिपूर्वक और व्यवस्थित नहीं रह सकता था, देश के विभिन्न भागों में, विशेषतः अल्स्टर में हत्याकाण्ड के ऐसे दृश्य देखे गये जिन में मनुष्यों के साथ स्त्रियों और बच्चों की हत्या की गयी। सम्भवतः विद्रोह आरम्भ होने पर, हत्याकाण्ड से चार या पाँच हजार व्यक्तियों की जानें गयीं और सम्भवतः भुखमरी तथा अन्य कठिनाइयों से इससे दुगने व्यक्ति मरे। इंग्लैण्ड में अफवाहों द्वारा इन नृशंसताओं को अनिवार्य रूप से कई गुना बढ़ा-चढ़ा दिया गया। मनुष्य यह चर्चा कर रहे थे कि रोम के षड्यन्त्रों से पोषण पाकर आयरिश बर्बरता ने दो लाख व्यक्तियों का वध कर दिया।

जब आयरिश विद्रोह का समाचार लन्दन पहुँचा, उस समय वहाँ तुरन्त कठोर प्रतिशोध लेने की आवश्यकता के बारे में कोई मतभेद नहीं था, एक सेना अवश्य एकत्र की जानी चाहिए और आयरलैण्ड को पुनः अवश्य जीता जाना चाहिये। किन्तु कमान किसे सम्भालनी चाहिये ? इंग्लैण्ड के कानूनों के अनुसार इस बात का निर्णय राजा को करना था। किन्तु पहले ही राजा पर यह सन्देह था कि वह कुछ आयरिश नेताओं के साथ सम्बन्ध रखता है। आयरलैण्ड वह देश था जहाँ से स्ट्रैफ्फोर्ड का इरादा इंग्लैण्ड में विरोध को कुचलने वाली सेनाएँ प्राप्त करना था। क्या राजा को एक इंग्लिश सेना की व्यवस्था का भार तथा आयरिश समस्या के समाधान की खुली छूट सुरक्षापूर्वक दी जा सकती थी ? इस प्रश्न ने राजा में विश्वास या अविश्वास को बड़े उग्र रूप में उठा दिया। इसने सेना पर नियन्त्रण के उस प्रश्न को भी उठाया, जो कुछ समय बाद अधिक उग्र हो गया।

८ नवम्बर १६४१ ई० को जान पिम ने कामन्स सभा में एक भीषण दस्तावेज पेश किया, यह **"महान् विरोध प्रस्ताव"** (Grand Remonstrance) के नाम से प्रसिद्ध है। इसने निश्चित रूप से और स्पष्ट शब्दों में राजा में विश्वास का प्रश्न उठाया, इसमें अधिकतम पक्षपात के स्वरूपवाली कठोर भाषा में राज्य के प्रत्येक अवैध कार्य का वर्णन किया गया था और पार्लियामेण्ट के प्रत्येक कार्य को आवश्यक ठहराते हुए उसका समर्थन किया गया था। इस परएक तूफानी वाद-विवाद हुआ, इसमें अब निश्चित रूप से राजपक्षपाती कहलाने वाले दल ने अपनी शक्ति प्रदर्शित की। महान् विरोध प्रस्ताव भारी शोरगुल में एक सौ अड़तालीस (१४८) के विरुद्ध केवल १५९ वोटों से पास किया गया। अपनी पहली बैठक में एक बना हुआ सदन अब राष्ट्र की भाँति दो लगभग समान दलों में बँट गया। अधिक शक्तिशाली दल समूचे विरोध की उपेक्षा करने के लिए और कोई भी समझौता न करने के लिए तैयार था। क्रामवेल ने कहा था "यदि आवेदन पत्र रद्द कर दिया जाता है तो मैं अगले दिन प्रातःकाल अपनी सब वस्तुएँ बेच डालता और फिर कभी इंग्लैण्ड को न देखता।" इस क्षण से गृहयुद्ध अनिवार्य हो गया। अगला पग नागरिक सेना के एक बिल को पेश करना था, इसमें पार्लियामेण्ट द्वारा एक लार्ड जनरल और एक लार्ड एडमिरल के मनोनीत किये जाने की व्यवस्था थी, इन्हें स्थल और जल की सभी सेनाओं पर पूर्णतम अधिकार था; इस प्रकार राजा को एक ऐसी शक्ति से वंचित कर दिया गया था, जिस शक्ति का प्रयोग उसके सभी पूर्ववर्ती निश्चित रूप से करते रहे थे।

चार्ल्स ने बहुत देर में, जनवरी १६४२ ई० में यह निश्चय किया कि वह पार्लियामेण्ट के नेताओं को अपना मन्त्री बनायेगा। यह स्वाभाविक था कि उसने राजपक्षपाती दल के नेताओं को चुना। उन्होंने पहले अधिवेशन के सब संवैधानिक कानूनों के पक्ष में वोट दिया था और वे अब भी निष्ठापूर्वक उन्हें स्वीकार करते थे। किन्तु अब वे केवल पार्टी-नेता थे और दलों के झगड़े अब बिल्कुल असमाधान-योग्य हो गये थे।

यह विवाद उस समय बिलकुल असमाधान योग्य कर दिया गया, जब राजा ने यह सुना कि रानी पर महाभियोग चलाने का प्रस्ताव किया जा रहा है, यह सुनकर उसने अपने विरोधियों से बदला लेने के लिए यह निश्चय किया कि वह उनके मुखिया पर इस अपराध के लिए महाभियोग चलाये कि उसने संविधान को उलट दिया है ओर स्काट लोगों के साथ उसके राजद्रोहपूर्ण सम्बन्ध हैं। निश्चित रूप से पिम और उसके साथी स्ट्रैफ्फोर्ड की अपेक्षा "राजा के विरुद्ध युद्ध करने के" अधिक निकट तक आ गये थे। किन्तु जब राजा स्वयमेव उत्तेजित तरुण राजपक्षपातियों के एक समूह के साथ पिम, हैम्पडन, हेज़लेरिग, होल्लेस और स्ट्रोड को गिरफ्तार करने के लिए पार्लियामेण्ट भवन तक आया तो उसका कार्य युद्ध की घोषणा करने के तुल्य था। वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुआ। पाँच सदस्य कभी गिरफ्तार नहीं किये जा सके; सम्भवतः इसी कारण इस घटना को **पाँच सदस्यों की गिरफ्तारी** कहा जाता है। वे भाग कर लन्दन नगर के संरक्षण में चले गये, दो दिन बाद वे वहाँ से लौटे, उस समय नगर के प्रशिक्षित सैनिक दस्ते और हैम्पडन की रक्षा करने के लिए बकिंघमशायर से आने वाले ४००० उन्मुक्त जागीरदार उनकी रक्षा कर रहे थे। छः सप्ताह बाद रानी राजमुकुट की मणियों को ले कर इंग्लैण्ड से बाहर चली गयी और राजा यार्क के लिए चल पड़ा। दोनों पक्षों का अन्तिम सम्बन्ध विच्छेद हो गया (मार्च १६४२ ई०)।

राजा के जाने के बाद पार्लियामेण्ट ने एक दस्तावेज तैयार किया (जून)। इसमें विवादास्पद प्रश्नों को असंदिग्ध रूप से स्पष्ट बना दिया गया था। इस कामन्स सभा के बहुमत के इस अन्तिम घोषणापत्र के १६ मन्तव्यों में पार्लियामेण्ट के बिना शासन के बारे में अथवा पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के बिना कर लगाने के बारे में अथवा विशेषाधिकार सम्पन्न न्यायालयों के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया था। इन सब बातों को पहले ही सुरक्षित रीति से प्राप्त किया जा चुका था। इन मन्तव्यों को एक मन्तव्य में इस प्रकार संक्षिप्त किया जा सकता है कि इंग्लैण्ड के शासन के लिए अब राजा नहीं, किन्तु पार्लियामेण्ट उत्तरदायी थी। पार्लियामेण्ट राज्य के सब मन्त्रियों की, प्रधान न्यायाधीशों की, और प्रिवी कौंसिल के सदस्यों की नियुक्तियों को स्वीकार करने वाली थी। पार्लियामेण्ट को राजा के बच्चों की शिक्षा और विवाहों का नियन्त्रण करना था। पार्लियामेण्ट को इस बात का निश्चय करना था कि किन लार्डों को लार्ड सभा में बैठने की और वोट देने की अनुमति दी जानी चाहिये। पार्लियामेण्ट को प्रार्थना पुस्तक का और चर्च के शासन का निश्चय करना था। पार्लियामेण्ट को सभी सैनिक फौजों और किलों का नियन्त्रण करना था।

ये प्रस्ताव पूर्वोदाहरण पर आधारित प्राचीन स्वतन्त्रताओं की रक्षा करने वाले नहीं थे, अपितु क्रान्तिकारी परिवर्तन की घोषणा करने वाले थे और अनेक व्यक्ति युक्तियुक्त रीति से

यह संदेह कर सकते थे कि क्या पार्लियामेण्ट जैसी एक बड़ी और बदलने वाली संस्था ऐसे अधिकारों का प्रयोग प्रत्यक्ष रूप से क्षमता के साथ कर सकती है। इंग्लिश जनता का एक बड़ा भाग ऐसी क्रान्ति को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था, यद्यपि उसने स्वेच्छापूर्वक सीमित और वैधानिक राजतन्त्र की उस स्पष्ट परिभाषा को स्वीकार कर लिया होता, जो लम्बी पार्लियामेण्ट के आरम्भिक कानूनों में प्रतिपादित की गयी थी। अब प्रश्न का निर्णय केवल शस्त्रों द्वारा किया जा सकता था और जब शस्त्रों से अपील की जाती है तो सब प्रकार की अपूर्वदृष्ट या अज्ञात शक्तियाँ कार्य करने के लिये स्वतन्त्र हो जाती हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Trevelyan's or **Montague's** books, as for last chapter; also Gardiner **Ranke, Hallam, and Gardiner,** Constitutional Documents. **Masson**, Life of Milton (7 vols.) is not merely a biography, but a history of the period of great value. **Hutton**, English Church from Charles I. to Anne; **Davies,** Early Stuarts; **Trevor-Roper,** Laud; **Wedgwood,** Strafford; **Firth,** The House of Lords in the Civil War; **Feiling,** History of the Tory party; **Higham,** Charles I; **Brunton and Pennington,** Members ot the Long Parliament.

• •

६

ब्रिटिश द्वीपसमूह में गृहयुद्ध

(१६४२–१६४८ ई०)

१. युद्ध छिड़ने के समय की स्थिति

अगले सात से अधिक वर्षों में, ब्रिटिश द्वीपसमूह के सभी भागों में, बीच-बीच में गृहयुद्ध चलता रहा। गृहयुद्ध के साथ साथ एक क्रान्ति भी हुई और इसमें वे महान् परिवर्तन क्रमशः होते रहे, जिन्हें एक सामान्य उथल-पुथल सदैव लाती है। इन टापुओं के आधुनिक इतिहास में हिंसापूर्ण क्रान्ति का यही एकमात्र युग है। शक्ति द्वारा लाये गये अधिकांश महान् परिवर्तनों की भाँति, इन वर्षों के परिवर्तन भी अल्पकाल तक ही बने रहे, किन्तु उन्होने अपने पीछे ऐसे विचार और शिकायतें छोड़ी जो आने वाले बड़े लम्बे समय तक खमीर का काम करती रहीं और जिन्होने इन टापुओं के तथा राष्ट्रमण्डल के भावी निर्माण में सहायता प्रदान की।

स्काटलैण्ड के गृहयुद्ध में पहले ही लोकप्रिय दल की तथा प्रेस-बिटेरियन चर्च की पूर्ण विजय हो चुकी थी। यहाँ इस चर्च के सिद्धान्त और अनुशासन को स्थापित किया जा चुका था और ऐसी कठोरता के साथ लागू किया गया था, जिसमें सहिष्णुता का कोई स्थान नही था। किन्तु आर्गिल के अर्ल तथा कर्क (चर्च) के पुरोहितों की अध्यक्षता वाले प्रमुख दल को यह विश्वास था कि उनकी विजय की सुरक्षा इंग्लैण्ड में संघर्ष के परिणाम पर निश्चित है। दूसरी ओर एक दल यद्यपि समझौते को तथा प्रेसबिटेरियन पद्धति को स्वीकार करता था, तो भी यह दल राजनीति में राजपक्षावलम्बी था; इंग्लिश संघर्ष में राजा के साथ सहानुभूति रखता था और उसे सहायता देने में प्रसन्न होता था। इस दल का प्रमुख सदस्य तेजस्वी एवं वीर पुरुष माण्ट्रोज़ का अर्ल था (यह बाद में मार्क्विस बना)। लड़ाई की

पिछली अवस्थाओं में उसने राजा की ओर से एक ऐसा साहसिक प्रयत्न किया, जो लगभग सफल हो गया था।

आयरलैण्ड में उस समय गृहयुद्ध पहले से ही चल रहा था, जब इंग्लैण्ड में संघर्ष आरम्भ हुआ और यह इंग्लिश युद्ध के समूचे समय में निरन्तर चलता रहा। यह एक अत्यधिक अव्यवस्थित संघर्ष था। आयरिश कैथोलिकों के अधिकार में देश का ३/५ भाग था और १६४२ ई० की ग्रीष्म ऋतु में उन्होंने किलकेन्नी में एक प्रबन्धकारिणी परिषद् के साथ प्रतिनिधियों की असेम्बली का निर्माण करके अपने लिए एक राष्ट्रीय संगठन बनाया। वे राजा के प्रति राजभक्ति प्रकट करते थे, किन्तु एक स्वतन्त्र पार्लियामेण्ट की और रोमन कैथोलिक धर्म के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग करते थे। राजा को इसे स्वीकार करने का साहस नही था और न ही वह इसे स्वीकार करना चाहता था। किन्तु इसके सैनिक मामलों का प्रबन्ध बहुत बुरा था। वे कभी भी उस पूर्ण विजय के निकट तक नहीं आये, जो विजय उनकी पकड़ में अवश्य होनी चाहिये थी। आरमण्ड के अर्ल के नेतृत्व में राजपक्षपाती सेना ने इंग्लैण्ड से आयी कुछ फौजों की मदद से उन्हें लीन्स्टर में रोके रखा, अन्य राजपक्षपाती सेनाएँ मन्स्टर में जमी रहीं, अल्स्टर में विद्रोह के पहले धक्के से सँभलने के बाद तथा स्काटलैण्ड से आयी एक छोटी सेना से सहायता पाकर स्काटिश बस्ती बसाने वाले व्यक्तियों ने कम या अधिक मात्रा में अपना अधिकार बनाये रखा। इस प्रकार आयरलैण्ड में तीन दल थे; राष्ट्रवादी दल, ऑरमण्ड के नेतृत्व में राजपक्षपाती और इंग्लिश संघर्ष में पार्लियामेण्ट के पक्ष के साथ सहानुभूति रखने वाले स्काट। आयरलैण्ड में हुए भीषण संघर्ष का विस्तृत विवरण यहाँ नहीं दिया जा सकता, किन्तु यह अवश्य स्मरण रखना चाहिये कि यह संघर्ष चलता रहा और विभिन्न बिन्दुओं पर इस संघर्ष में आने वाले उतार-चढ़ावों ने इंग्लिश संघर्ष पर एक महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाला। यही प्रमुख संघर्ष था, क्योंकि स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड दोनों का भाग्य निश्चित रूप से इस बात पर निर्भर था कि राजा जीतता है या पार्लियामेण्ट जीतती है।

इंग्लैण्ड में शुरू होने वाला यह एक अत्यधिक वास्तविक युद्ध था। यह तब शुरू हुआ, जब अगस्त १६४२ ई० में राजा ने नार्टिघम में इसका श्रीगणेश किया, क्योंकि देश में प्रत्येक वर्ग और प्रत्येक जिला बँटा हुआ था, यहाँ तक कि बाप और बेटे इस संघर्ष में एक दूसरे का विरोधी पक्ष ले रहे थे और कई बार युद्ध में एक दूसरे का सामना कर रहे थे। लगभग प्रत्येक जिले में छोटे-छोटे पृथक् युद्ध हुए और इस कारण समूचे युद्ध का एक स्पष्ट चित्र प्राप्त करना बड़ा कठिन है[1]। यह एक श्रेणी और दूसरी श्रेणी के बीच में संघर्ष नहीं था। वस्तुतः लार्डों का तीन चौथाई भाग राजा के साथ था; यद्यपि कामन्स सभा के सदस्यो में एक तिहाई भाग उसका अनुयायी था, तथापि देहात के भद्रवर्ग में राजा का एक ठोस बहुमत था। फिर भी, पार्लियामेण्ट वाले पक्ष में राजा के पक्ष की भाँति सभी नेता, या तो लार्ड थे अथवा देहात

---

१. विशेष जिलों अथवा नगरों पर प्रभाव डालने वाले इस युद्ध के कुछ अच्छे विवरण हैं। इंग्लिश विद्यार्थी के लिए यह बड़ा मनोरंजक होगा कि वे अपने जिलों में हुए युद्ध का अध्ययन करें।

के भद्रजन थे। कुछ क्षेत्रों में विशेषत: पूर्व और दक्षिण-पूर्व में समृद्ध कृपकों की अधिकांश संख्या पार्लियामेण्ट की सुदृढ़ समर्थक थी। किन्तु देश के अधिकांश भाग में ऐसा नहीं था। सर्वत्र राजा के प्रति सामान्य रूप से राजभक्त बने रहने वाले क्षेत्रों में भी, अधिकांश व्यापारिक श्रेणियाँ पार्लियामेण्ट की प्रबल पक्षपाती थीं। वस्तुत: यह श्रेणी इस दल का मेरुदण्ड थी। जहाँ कहीं एक अच्छा नगर था, वह पार्लियामेण्ट के दल का गढ़ था और लन्दन के प्रशिक्षित सैनिक दलों की कट्टरता ने तथा हल, लीड्स मैनचेस्टर, ग्लास्टर और प्लिमथ जैसे नगरों के साहसिक प्रतिरोध ने ही युद्ध के पहले दो वर्षों में राजपक्षपातियों की विजय नहीं होने दी। फिर भी प्रत्येक नगर में एक राजपक्षपाती दल था, लन्दन में भी यह अन्दाज लगाया गया है कि आबादी का एक तिहाई भाग राजा के पक्ष में था। आबादी में कुछ ऐसे विशाल तत्त्व थे, जिनमें कुछ लार्ड भी थे, अनेक देहात के भद्रजन थे, और निम्न श्रेणियों की एक बड़ी संख्या ऐसी थी; ये सब यथासम्भव इस युद्ध से अलग-अलग खड़े हुए थे। वे या तो इस कारण अलग थे, क्योंकि वे सिद्धान्तों के इस संघर्ष में तटस्थ थे अथवा इस कारण से कि विभक्त सहानुभूतियों से वे विदीर्ण हो रहे थे। दोनों पक्षों को अपने सैनिकों की संख्या बढ़ाने के लिए बल का सहारा लेना पड़ा था, यद्यपि उस समय कभी भी शस्त्रधारी सैनिकों की संख्या आबादी की ढाई फी सदी से अधिक नहीं हुई; इसकी तुलना जर्मनी के विरुद्ध महायुद्ध में भर्ती किये गये सैनिकों के १५ प्रतिशत से की जा सकती है। युद्ध की पिछली अवस्थाओं में लोगों ने देश के अपने भाग से दोनों दलों को दूर रखने के लिए मनुष्यों की बड़ी संख्या वाले अपने सैनिक दल बना लिये, और इन्हें डण्डे वाले आदमी या **दण्डधर** (Clubmen) कहा जाता था। इनसे दोनों पक्षों के सेनापतियों को कठिनाई हुई। सच तो यह है कि अभी तक इंग्लिश जनता का केवल एक सीमित भाग ही रिवाज के दैनिक क्रम से निकल कर पर्याप्त रूप से इतना जागृत हुआ था कि वह ऐसे मौलिक प्रश्नों को समझे अथवा उन प्रश्नों के बारे में कोई चिन्ता करे, जिन प्रश्नों का निर्णय करने के लिए यह युद्ध लड़ा जा रहा था। अपनी आदतों में हस्तक्षेप करने पर नाक सिकोड़ने वाली यह विशाल उपेक्षा एक ऐसा तत्त्व था, जिसका राजनीतिज्ञों को ध्यान रखना पड़ता था। जनता किन्हीं महान् परिवर्तनों के लिए पूर्ण रूप से तैयार नहीं थी और विशेष रूप से वह जीवन की परम्परागत पद्धतियों में कोई बड़ा अन्याय पूर्णहस्तक्षेप नहीं चाहती थी। यह ऐसा तत्त्व था जिसकी प्रायः भावुक सुधारक उस समय उपेक्षा कर देते थे, जब वे यह कहते थे कि जनता उन सिद्धान्तों को स्वीकार करने की माँग कर रही है, जिन सिद्धान्तों से वे स्वयमेव माता-पिता की सन्तान के प्रति स्नेह की भावना के साथ प्रेम करते थे।

भौगोलिक दृष्टि से विभाजन की रेखाएँ अधिक स्पष्ट थीं।[1] पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण दक्षिण-पूर्व में वैश से सोलेण्ट तक था, राजा उत्तर और पश्चिम में सबसे अधिक प्रबल था, मिडलैण्ड्स बँटे हुए थे। किन्तु दूसरे पक्ष द्वारा हावी होने वाले क्षेत्रों में भी प्रत्येक दल के अनेक अनुयायी थे, दक्षिण-पूर्व में भी जहाँ राजा कोई प्रभाव डालने में सफल नहीं हुआ, १६४८ ई० के 'द्वितीय गृहयुद्ध' ने यह प्रदर्शित किया कि वहाँ हजारों राजपक्षपाती व्यक्ति हैं।

---

१. नक्शे के लिए एटलस के पंचम संस्करण की प्लेट संख्या ३८ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५४ (ए) देखिये।

संघर्ष आरम्भ होने पर, पार्लियामेण्ट को अनेक बड़े लाभ प्राप्त थे। यह देश के सबसे अधिक धनी और सबसे अधिक घनी आबादी वाले हिस्से का नियन्त्रण कर रही थी, लगभग सभी बन्दरगाह इसके अधिकार में थे। इसके हाथों में देश के सारे जहाज थे और इसे आयात-करों का समूचा लाभ मिल रहा था, इसने राजा को यूरोप के महाद्वीप के साथ सुगम सम्बन्ध स्थापित करने से रोक दिया था। यह लाभ इस तथ्य से अधिक बढ़ गया था कि आरम्भ में नौ-सेना ने पार्लियामेण्ट का पक्ष लेने की घोषणा की थी। इससे सेनाओं को एक जगह से दूसरी जगह ले जाना तथा हल जैसे महत्त्वपूर्ण बन्दरगाहों से सम्बन्ध बनाये रखना आसान हो गया। इस प्रकार पार्लियामेण्ट के लिए धन एकत्र करना तुलनात्मक दृष्टि से अधिक आसान था, यद्यपि यह नये कर लगाने में अनिच्छुक थी, क्योंकि इससे असन्तोष उत्पन्न होता था। उसने यह जान लिया था कि व्यापारिक श्रेणियाँ कर देने के लिए उत्सुक नहीं हैं, तो भी इसे शनैः-शनैः कर लगाने की पद्धति में बड़े नवीन आविष्कार करने पड़े। इस विषय में इसका काम स्थायी था और इंग्लैण्ड मध्ययुग की पुरानी आर्थिक पद्धति से अलग हो गया। दूसरी ओर राजा को सदैव धन एकत्र करने में बड़ी कठिनाई होती थी। उसे मुख्य रूप से अपने अनुयायियों से प्राप्त होने वाली भेंटों पर निर्भर रहना पड़ता था, इनमें से अनेक व्यक्ति बिना किसी झिझक के ये भेंटें देते थे और अपने परिवार की सम्पत्ति को स्थायी रूप से कम कर देते थे। उसका एक बड़ा लाभ यह था कि भद्र वर्ग का अधिकांश भाग उसका अनुयायी था और इस वर्ग के लोग अपने साईसों और देख-भाल करने वाले व्यक्तियों के साथ उत्कृष्ट योद्धाओं का, विशेषतः, अश्वारोही सेना का निर्माण करते थे। यह सेना पार्लियामेण्ट की सेना से उस समय तक कहीं अधिक उत्कृष्ट थी, जब तक कि इसने स्वयंसेवकों और शिक्षित नागरिक सेना पर भरोसा करना नहीं छोड़ दिया और एक पेशेवर सेना का निर्माण नहीं किया। युद्ध के पहले दो वर्षों में राजा के समर्थकों के उत्कृष्ट जोश और विश्वास ने उसे लगभग विजय प्रदान की थी। दोनों पक्षों में, विशेषतः पार्लियामेण्ट के पक्ष में, पैदल सेना विजय के बाद तितर-बितर हो जाती थी।

२—पहली तीन लड़ाइयाँ

१६४२ ई० की संक्षिप्त लड़ाई में राजपक्षपातियों को पर्याप्त लाभ हुए। मिडलैण्ड्स में मुख्य राजकीय सेना ने एंजहिल की अनिर्णयात्मक लड़ाई के बाद आक्सफोर्ड ले लिया (अक्टूबर)। यह समूचे युद्ध के समय में राजा का मुख्य कार्यालय बना रहा और कुछ समय के लिए इससे लन्दन को गम्भीर खतरा पैदा हो गया। न्यूकैसल के नेतृत्व में उत्तर के राज-पक्षपातियों ने फेयरफैक्स के नेतृत्व में उन पार्लियामेण्ट-पक्षपातियों को पराभूत करने का संकट उत्पन्न कर दिया, जिनकी शक्ति वैस्टराइडिंग के ऊनी उद्योग वाले नगरों पर तथा हल पर आश्रित थी। सुदूर दक्षिण-पश्चिम में हॉप्टन ने डेवन और कार्नवाल में राजा के पक्ष को प्रबल बनाया। अगले वर्ष १६४३ ई० में इन लोगों का पक्ष और भी अधिक प्रबल हुआ। उत्तर में, एडवल्टन मूर में फेयरफैक्स बुरी तरह से हराया गया और इसे हल में बन्द कर दिया गया। दक्षिण-पश्चिम में पार्लियामेण्ट की मुख्य सेना को नष्ट कर दिया गया।

राजकुमार रूपर्ट ने ब्रिस्टल पर अधिकार किया। यह केवल प्लिमथ और ग्लास्टर के नगरों का ही प्रतिरोध था, जिसने इस क्षेत्र के विजयी राजपक्षपातियों को मिडलैण्ड्स की मुख्य सेनाओं के साथ नहीं मिलने दिया। ग्लास्टर कठिनाइयों से बुरी तरह घिर गया, सितम्बर में पार्लियामेण्ट की एक सेना द्वारा इसको दी गयी सहायता ने पार्लियामेण्ट के पक्षपातियों को सम्भवत: एक महान् विपत्ति से बचा लिया।

केवल एक ही क्षेत्र में पार्लियामेण्ट के पक्ष के लिए सफलता की आशा की एक किरण थी। पूर्व में, पूर्वी संघ में सम्मिलित जिले अन्य जिलों की अपेक्षा अधिक अच्छी रीति से संगठित थे, और पूर्वी संघ की सेना के अंग के रूप में ओलिवर क्रामवेल ने एक नये प्रकार की लड़ने वाली सेना का निर्माण आरम्भ कर दिया था। उसने अनुशासनहीन उन सेनाओं पर भरोसा करने की निरर्थकता का अनुभव कर लिया था, जिन पर पार्लियामेण्ट राजपक्षावलम्बी अश्वारोही भद्रजनों के धावों और जोश का मुकाबला करने के लिए भरोसा रखती थी और पहली शीत ऋतु में उसने एक घुड़सवार सेना को एकत्र किया। इसमें केवल वही व्यक्ति लिए गये, जिन्हें अपने उद्देश्य के प्रति पूरी आस्था थी। उसने उन्हें पूरी तरह प्रशिक्षित किया, उन्हें अच्छे हथियार दिये। उसने यह भी व्यवस्था की कि उन्हें नियमित रूप से वेतन मिलता रहे और उसने कठोरतम अनुशासन पर बल दिया। इस सेना को युद्ध में लगे हुए पेशेवर सैनिकों की पहली सेना कहा जा सकता है। किन्तु यह उससे कुछ अधिक थी। यह उत्साह से पूर्ण व्यक्तियों की सेना थी। इसको शीघ्र ही यह सिद्ध करना था कि उत्तम नेतृत्व में ऐसी सेना अजेय होती है और इसका **लौहपक्ष** (Ironsides) का नाम सर्वथा उपयुक्त था। यह नाम राजकुमार रूपर्ट ने बाद में इसके नेता को दिया था। १६४३ ई० में, पहले ही क्रामवेल ने तथा उसके व्यक्तियों ने पूर्वी जिलों की संसदीय सेनाओं द्वारा लिंकनशायर की विजय में एक प्रमुख भाग लिया था। अब इस सेना में उसका दूसरा स्थान था और उसका प्रभाव और सत्ता प्रबल हो रही थी, इसके द्वारा उसकी सैन्य संगठन की पद्धति और सेना द्वारा किये गये कार्यों का प्रभाव दृढ़तापूर्वक चारों ओर फैल रहा था।

१६४३ ई० के अन्त में दोनों पक्षों ने मित्रों के लिए खोज आरम्भ की। राजा ने आयरलैण्ड से सहायता चाही, उसने ऑरमाण्ड को यह अधिकार दिया कि वह कैथोलिक विद्रोहियों के साथ एक साल के लिए लड़ाई बन्द करने की व्यवस्था करे और ऐसे समझौते के लिए वार्ता शुरू करे, जो समझौता समूचे आयरलैण्ड को उसके पक्ष में ला सके। कोई समझौता नहीं हो सका, क्योंकि राजा जो शर्तें दे सकता था, कैथोलिक उससे अधिक ऊँची शर्तों की माँग कर रहे थे। किन्तु कम से कम युद्धविराम ने ऑरमाण्ड की सेना के एक भाग को इंग्लैण्ड भेजे जाने योग्य बनाया, यह सेना चेशायर में उतरी, किन्तु इसने कोई भी कार्य नहीं किया और जनवरी १६४४ ई० में इसे नष्ट कर दिया गया। चार्ल्स को आयरलैण्ड से विद्रोहियों के साथ बातचीत करने के लिए सार्वजनिक बदनामी के अतिरिक्त कुछ भी नहीं मिला।

दूसरी ओर, पार्लियामेण्ट ने स्काट लोगों से सहायता माँगी। स्काटलैण्ड का शक्तिशाली दल राजपक्षपाती दल की पूर्ण विजय की सम्भावना से भयभीत होकर एक शर्त पर

सहायता देने को तैयार था। शर्त यह थी कि स्काटिश आदर्श पर चर्च के शासन की प्रेसबिटेरियन पद्धति इंग्लैण्ड में और अन्त में आयरलैण्ड में भी अवश्य स्थापित की जानी चाहिए। स्काटलैण्ड के साथ समझौते की उपर्युक्त व्यवस्था को स्वीकार करना मित्रता की एक अनिवार्य शर्त बना दी गयी। पार्लियामेण्ट का बहुमत अपने एंग्लिकन सदस्यों से विशुद्ध बनाया जा चुका था, वह प्रेसबिटेरियन दृष्टिकोण की ओर झुका हुआ था और उसने बिशप पद्धति को पहले ही समाप्त कर दिया था। उसने प्यूरिटन धर्मशास्त्रियों के एक सम्मेलन को वेस्टमिन्स्टर में इसलिए बुलाया था कि वह इसे प्रशासन, धार्मिक विश्वास और उपासना के क्षेत्रों में, राष्ट्रीय चर्च के पुनः संगठन के विषय में परामर्श दे। किन्तु पार्लियामेण्ट की ऐसी इच्छा बिलकुल नहीं थी कि वह चर्च को राज्य से इतना स्वतन्त्र बना दे और चर्च निजी मनुष्यों के जीवन पर इतना व्यापक प्रभाव डाले, जैसा स्काट लोगों ने व्यवस्था की थी। इसके अनेक सदस्य स्काटिश पद्धति की कठोरता और असहिष्णुता से डरते थे और इसे नापसन्द करते थे। राजपक्षपाती विजय के खतरे को देखते हुए भी, इन सन्देहों की उपेक्षा की गयी। सितम्बर १६४३ ई० में दोनों पक्षों ने पवित्र संघ (Solemn League) और ईसाई धार्मिक संघ और समझौते को स्वीकार किया और इसके लिए शपथ खायी। इससे पार्लियामेण्ट अपने सारे कठोर अनुशासन के साथ इंग्लैण्ड में एक प्रेसबिटेरियन पद्धति लागू करने के लिए बँध गयी।

धर्मशास्त्रविशारदों की वेस्टमिन्स्टर की सभा कुछ स्काटिश प्रतिनिधियों की वृद्धि से पुष्ट हुई। अगले चार वर्षों में यह निरन्तर बैठकें करती रही और चर्च के शासन की योजनाओं को सार्वजनिक पूजा के एक विधान-ग्रन्थ को तथा धार्मिक विश्वासों की प्रश्नोत्तर की पुस्तक को तैयार करती रही। किन्तु पार्लियामेण्ट ने धार्मिक व्यक्तियों की परिषद को उस तरह की कोई स्वतन्त्रता प्रदान नहीं की, जैसी स्वतन्त्रता स्काटलैण्ड में सामान्य परिषद को प्राप्त थी। यह उनसे केवल मामूली परामर्श ही माँगती थी, इसने उनके प्रस्तावों में ठोस संशोधन किये और इसने चर्च पर राज्य का नियन्त्रण बनाये रखने पर आग्रह किया। स्काट लोगों की दृष्टि में यह इरेस्टियनवाद (Erastianism)[1] का भयंकर युद्ध था और इसने आरम्भ से ही मित्र की मित्रता में खिंचाव उत्पन्न कर दिया। फिर भी चर्च का एक प्रेसबिटेरियन संगठन बनाया गया तथा अगले वर्षों में इसे इंग्लैण्ड में लागू किया गया। सबसे बढ़कर, धर्मशास्त्रियों की परिषद ने, धार्मिक सिद्धान्तों का विवरण तैयार किया, इसका स्वरूप कट्टर कैल्विनवादी था। इसके साथ ही दो प्रश्नोत्तरियाँ तैयार की गयीं। यद्यपि इंग्लैण्ड में इसका कभी भी व्यापक रूप से प्रयोग नहीं हुआ, तथापि स्काटलैण्ड में इसे अपना लिया गया, ये दोनों विशेषतः लघु प्रश्नोत्तरी

---

१. इस शब्द का अर्थ धार्मिक विषयों में राज्य द्वारा हस्तक्षेप करना तथा सर्वोच्च शक्ति रखना है। इंग्लैण्ड के चर्च में यही स्थिति है, क्योंकि यहाँ चर्च की असेम्बली द्वारा किये गये सभी कार्यों पर पार्लियामेण्ट की स्वीकृति लेना आवश्यक होता है और इंग्लैण्ड का राजा सर्वोच्च शासक होने के नाते प्रधानमन्त्री के परामर्श से बिशपों को तथा चर्च के अन्य पदाधिकारियों को नियुक्त करता है। इस विचारधारा का प्रतिपादन सर्वप्रथम जर्मनी के एक विचारक थामस इरेस्टस (Erastus) ने किया था। अतः इसके अनुयायी इरेस्टियन (Erastian) कहलाते हैं।

(Shorter Catechism) स्काटिश जनता की शिक्षा में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य बन गये। लघु प्रश्नोत्तरी की आलोचना में चाहे कुछ भी क्यों न कहा जाये, तथापि इसने उन व्यक्तियों को चुनौती दी, जिन्हें महान प्रश्नों के बारे में सोचने के लिए इसे अध्ययन करना पड़ता था। इसका पहला प्रश्न यह था कि "मनुष्य का मुख्य उद्देश्य क्या है ?" यह प्रश्न इंग्लिश चर्च की प्रश्नोत्तरी के इस घिसे हुए और स्पष्ट प्रश्न के साथ सुस्पष्ट तुलना में रखा जा सकता है कि "आपका नाम क्या है।" इसका दूसरा प्रश्न था कि "ईश्वर क्या है ?" यह प्रश्न और भी अधिक बड़ा था। स्काटिश जनता ऐसी जनता है जिसके बच्चे दो शताब्दियों से भी अधिक समय से प्रतिदिन इन गम्भीर प्रश्नों की चुनौती स्वीकार करते रहे हैं।

स्काट लोगों का हस्तक्षेप ईसाई धर्म के पवित्र संघ और समझौते (Solemn League and Covenant) का परिणाम था। यह हस्तक्षेप १६४४ ई० की लड़ाई में एक निर्णायक तत्त्व था।[1] उत्तर के आक्रमण ने वहाँ न्यूकैसल की शक्ति को भंग कर दिया और उसे यार्क में शरण लेने के लिए विवश किया। उसे सहायता देने के लिए राजकुमार रूपर्ट को मिडलैण्ड्स से उत्तर की ओर तेजी से जाना पड़ा। दूसरी ओर पूर्वी जिलों की संसदीय सेना में घुड़सवार सेना की कमान क्रामवेल के हाथ में थी। यह सेना स्काट लोगों के साथ तथा फेयरफैक्स की अध्यक्षता में यार्कशायर की सेनाओं के साथ सम्मिलन के लिए उत्तर की ओर आयी। लड़ने वाले व्यक्तियों की संख्या की दृष्टि से सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण एक बड़ी घमासान लड़ाई जुलाई १६४४ ई० में **मार्सटन मूर** में लड़ी गयी। इसकी समाप्ति राजपक्षपातियों की पूर्ण पराजय के साथ हुई, यद्यपि आरम्भ में ऐसा प्रतीत होता था कि इसमें उनकी ही विजय होगी। इस लड़ाई में निर्णायक तत्त्व क्रामवेल की घुड़सवार सेना की दृढ़ता और लड़ने की शक्ति तथा वह कुशलता थी, जिसके साथ उसने इसका प्रयोग किया था। सत्यमेव, मार्सटन मूर युद्ध का परिवर्तन करने वाला बिन्दु था। इससे राजा को वह समूचा उत्तरी इंग्लैण्ड अपने हाथ से गवाँना पड़ा, जिसे अगले दो वर्षों में स्काट सेना ने और राजकीय पार्लियामेण्ट की पक्षपाती सेनाओं ने पूर्ण रूप से जीत लिया। अब उसे दो मोर्चों पर लड़ाई करनी पड़ी।

फिर भी राजा का उद्देश्य अब तक निराशापूर्ण नहीं प्रतीत होता था, क्योंकि अन्य सभी स्थानों में पार्लियामेण्ट के पक्ष वाले कुलीन सेनापति ऐसे निर्बल अनिश्चय से कार्य कर कर रहे थे, जो उन्हें राजा को हानि पहुँचाने से रोक रहा था। उनके पास एक मात्र बहाना यही था कि उनकी सेनाएँ अविश्वसनीय हैं। किन्तु उसमें से कुछ सेनाएँ अधूरे मन वाली थीं। पूर्वी संघ की सेनाओं में क्रामवेल के एक उच्च अधिकारी मैनचेस्टर के अर्ल ने कहा था "यदि हम राजा को ९९ बार भी हरा देते हैं तो भी वह राजा है, उसकी भावी पीढ़ी भी उसके बाद राजा बनी रहेगी। किन्तु यदि राजा हमें एक बार भी हरा देता है तो हम फाँसी पर लटका दिये जायेंगे। हमारी भावी सन्तान दास बना दी जायेगी।" ऐसा स्वभाव कभी मुश्किल से ही विजय को प्राप्त करा सकता है।

---

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ३८ तथा छठे संस्करण की प्लेट ५४ के दो नक्शों की तुलना कीजिये।

इसी बीच में, १६४४ ई० की गर्मी के पिछले हिस्से में माण्ट्रोज़ के वीर मार्क्विस[1] ने स्काटलैण्ड के हाइलैण्ड प्रदेश में राजा के झण्डे को खड़ा किया। उसने विशेष रूप से कैम्पवैल जनजाति के और उनके मुखिया आरगिल के अर्ल के विरुद्ध घृणा को उकसाया। यह घृणा पश्चिमी हाइलैण्ड की सभी जातियों में अनुभव की जाती थी। अब कर्क पार्टी के अध्यक्ष के रूप में मार्क्विस स्काटलैण्ड के शासन पर हावी था। मैकडानल्ड वंश के लोग तथा अन्य जनजातियाँ इस बात से भय खा रही थीं कि वह उनके अपने वन्य देशों में अपनी शक्ति का प्रयोग किस तरह से करेगा। आयरलैण्ड से आने वाली छोटी सेना से सहायता पाते हुए, किन्तु मुख्य रूप से जनजातियों के व्यक्तियों की वीरता पर अवलम्बित रहते हुए माण्ट्रोज़ ने हाइलैण्ड्स के प्रदेश में से होते हुए प्रयाण किया।[2] वह प्रत्येक पड़ाव पर अधिक प्रबल होता जा रहा था, उसको घेरने वाली दोनों सेनाओं से वह बचता रहा और तीसरी सेना को उसने पर्थ के निकट **टिप्पर-म्यूर** में कुचल डाला (सितम्बर १६४४ ई०) और नगर पर अधिकार कर लिया। बाद में उसने एबर्डीन को जीत लिया और शीत ऋतु में उसने कैम्पबेल प्रदेश में धावा किया, आग लगायी और लोगों की हत्या की। अगले युद्ध में उसका यह प्रकोप निम्न भूमियों के प्रदेशों में उतरने को तैयार था। स्काटलैण्ड में राजा का पक्ष प्रबल होने लगा। आयरलैंड में भी उन कैथोलिक विद्रोहियों के साथ शान्ति स्थापित करने के लिए बातचीत चल रही थी, जो विद्रोही राजा की ओर से रणक्षेत्र में लड़ने के लिए तैयार थे। ये सन्धिवार्ताएँ अगले वर्ष तक किसी भी निश्चित परिणाम पर नहीं पहुँच सकीं और इस समय इनमें बहुत देर हो गयी थी। किन्तु यह बात ही स्थिति को गम्भीर बना रही थी कि ऐसी सन्धि चर्चाएँ हो रही हैं।

३. पेशेवर सेना और राजपक्षपाती उद्देश्य का पतन

मार्सटन म्यूर की विजय के बावजूद, १६४४ ई० की पतझड़ में, पार्लियामेण्ट के लिए भविष्य किसी प्रकार उज्ज्वल दिखायी नहीं देता था। राजा के साथ सन्धि वार्ता का प्रयत्न किया गया, किन्तु उसका कोई फल नहीं निकला। अन्य साधनों से ही इस गतिरोध का समाधान होने वाला था। शीतऋतु में पार्लियामेण्ट की सेना के अध्यक्षों के बेदिली से काम करने के बारे में तथा अयोग्यता के सम्बन्ध में एवं उनकी कमान में विद्यमान सेनाओं की क्षमता के बारे में बड़े खरे शब्दों· आलोचना की गयी। सबसे अधिक खरी बातें ओलिवर क्रामवेल ने कहीं, जिसे बोलने का अच्छा अधिकार था, क्योंकि दोनों पक्षों में उसकी सेनाएँ सबसे अधिक क्षमता रखने वाली थीं। जब कभी उसे स्वतन्त्रता पूर्वक काम करने को मिला था, उस समय सदैव उसका नेतृत्व सफल हुआ था। उसे शिकायत थी कि सेना में बहुत अधिक राजनीतिज्ञ हैं। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा, "यदि सेना को दूसरी पद्धति में नहीं रखा जाता और युद्ध को अधिक उत्साह से नहीं चलाया जाता, तो जनता युद्ध को अधिक देर तक सहन नहीं कर सकेगी और आपको एक अपमानजनक सन्धि करने के लिए बाधित करेगी।"

---

१. मारिस द्वारा अथवा टेरी द्वारा लिखी हुई माण्ट्रोज की जीवनी देखिये।

२. स्काटलैण्ड के मानचित्र के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ४० (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट ४५ (ए) देखिये।

अनेक क्षेत्रों में क्रामवेल पर गहरा अविश्वास किया जाता था, उसकी सेना कुख्यात रूप वाले स्वतन्त्र व्यक्तियों से, तथा सब प्रकार के मतवादियों (Sectaries) से, (कट्टर व्यक्तियों की दृष्टि में) सभी निश्चित और शिष्ट व्यवस्था के शत्रुओं से और विशेषत: प्रेसबिटेरियन पद्धति के शत्रुओं से भरी हुई थी। पूर्वी संघ की सेना के द्वारा उनका प्रभाव फैल रहा था और उत्तम प्रेसबिटेरियन पुरोहित उनके विचारों की स्वतन्त्रता और निर्भीकता से स्तब्ध एवं आतंकित थे। क्रामवेल ने उन्हें नियन्त्रित करने के लिए कुछ भी नहीं किया। किन्तु उसने उन्हें इस युक्ति के आधार पर उत्साहित किया कि जब तक वे उत्तम योद्धा और अपने उद्देश्य के लिए उत्साही हैं, तब तक सब ठीक है। उस पर स्वयमेव यह सन्देह था कि वह प्रेसबिटेरियन पद्धति का विरोधी था, यद्यपि उसने समझौता स्वीकार किया था और वह सहिष्णुता की उस हानिकर पद्धति की ओर झुका हुआ था, जो समूची शालीनता और सुव्यवस्था का अन्त करने वाली थी। स्काट लोग विशेष रूप से उस पर अविश्वास करते थे।

किन्तु सैनिक प्रश्न पर क्रामवेल की स्थिति के सहीपन का खण्डन नहीं किया जा सकता था। पार्लियामेण्ट अपने को लाभ से वंचित करने वाले एक अध्यादेश के लिए सहमत हो गयी, यह अध्यादेश अपने अन्तिम रूप में दोनों सदनों के प्रत्येक सदस्य से यह अपेक्षा रखता था कि वे सब सैनिक पदों से त्यागपत्र दे दें। किन्तु उसने किसी भी सदस्य के लिए बाद में इन पदों पर नियुक्ति की बात को खुला छोड़ दिया था। पार्लियामेण्ट ने यह भी निश्चय किया कि सेना के अधिक भाग का पुन: संगठन पेशेवर आधार पर किया जाय और प्रशिक्षित सैनिक दलों पर अथवा नागरिक सेना पर अधिक भरोसा न रखा जाय। सर थामस फेयरफैक्स ने राजनीति में कोई हिस्सा नहीं लिया था, किन्तु अपने को एक योग्य सेनानायक प्रदर्शित किया था, उसे प्रधान सेनापति नियत किया गया। महाद्वीप में पेशेवर सेना का पर्याप्त अनुभव रखने वाले स्किप्पन को संगठन सम्बन्धी प्रश्नों के लिए मेजर जनरल नियत किया गया। बाद में, क्रामवेल को सैनिक कमान में दूसरे दर्जे पर नियत किया गया। किन्तु अपने पुनर्निर्माण के आरम्भ से ही नयी सेना उसे अपना वास्तविक नेता समझती थी। अब उसकी स्थिति अत्यधिक प्रभावशाली हो गयी; क्योंकि वह न केवल सेना का एक प्रधान मुखिया था, अपितु वह एकमात्र ऐसा अधिकारी था, जो पार्लियामेण्ट में बैठता था और वह युद्ध के संचालन के लिए **दोनों राज्यों की समिति** का एक सदस्य था।

नयी आदर्श सेना[1] इसके संगठन का केवल प्रारम्भ था। यह उस समय नये रंगरूटों से भरी हुई थी, जब कि इसे जून १६४५ ई० में मिडलैण्ड्स में राजपक्षपाती सेनाओं के एक अप्रत्याशित जमाव का सामना करने के लिए बुलाया गया, उस जमाव से पूर्वी संघ के अब तक सुरक्षित क्षेत्र पर आक्रमण का खतरा था। फेयरफैक्स राजा का सामना करने के लिए तेजी से आगे बढ़ा, नेजबी में लड़ाई हुई। क्रामवेल इस समय संसदीय अश्वारोही सेना का नेतृत्व कर रहा था। यह लड़ाई बड़ी अव्यवस्थित थी और आरम्भ में पार्लियामेण्ट के

---

१. गृहयुद्ध की सैनिक पद्धतियों के लिए फर्थ की पुस्तक क्रामवेल्स आर्मी (Cromwell's Army) देखिये।

पक्ष के प्रतिकूल जा रही थी। किन्तु मार्सटन म्यूर की भाँति यहाँ भी क्रामवेल की अश्वारोही सेना की वीरता और दृढ़ता ने पार्लियामेण्ट के पक्ष को विजय प्रदान की। राजपक्षपाती पूरी तरह हार गये, लगभग ५,००० कैदी, राजा का सारा सामान और तोपखाना तथा उसके सब निजी कागजात विजेताओं के हाथ में पड़ गये। इस प्रबल विजय के कुछ समय बाद ही नयी आदर्श सेना दक्षिण-पश्चिम के राजपक्षपातियों की ओर मुड़ी। ये राजपक्षपाती अब तक लगभग अविच्छिन्न रूप से सफल थे। जुलाई में ब्रिजवाटर के निकट **लैंगपोर्ट** की लड़ाई में में नवीन सेना ने इस सेना की भी धज्जियाँ उड़ा दी।

नेज़बी और लैंगपोर्ट ने मिल कर राजपक्षपाती दल का विध्वंस कर दिया। अगले वर्ष, देश के उन हिस्सों को शनैः शनैः वशवर्ती बनाया जाता रहा, जिन हिस्सों में अब भी राजपक्षपातियों का अधिकार था[1]। यह एक मन्द एवं कठिन कार्य था, इसमें नयी आदर्श सेना ने बारम्बार अपनी क्षमता प्रदर्शित की। जब जून १६४६ ई० में राजा के मुख्य कार्यालय आक्सफोर्ड ने समर्पण किया तो कुछ समय के लिए इंग्लैण्ड में गृहयुद्ध समाप्त हो गया। राजा ने काफी झिझक के बाद अपने को नेवार्क में स्काट लोगों के हाथ में सौंप दिया। इस सारी उथल-पुथल के बाद समझौते की समस्या का सामना किया जाना था।

इस बीच में स्काटलैण्ड में मोण्ट्रोस की आरम्भिक सफलताओं के कारण उत्पन्न हुई आशाएँ और भी अधिक बढ़ने लगीं, किन्तु अन्त में इन आशाओं पर तुषारपात हो गया। १६४५ ई० के वसन्तकाल में वह अब भी हाइलैण्ड्स में प्रयाण कर रहा था और उसके विरुद्ध भेजी गयी प्रत्येक सेना पर विजय प्राप्त कर रहा था। अगस्त में **नेज़बी** युद्ध के दो महीने बाद वह निम्नभूमियों में टूट पड़ा और **किलसिथ** में एक प्रसिद्ध हमले में उसने मुख्य "समझौता-सेना" को भंग कर दिया और उन पर कोई दया नहीं दिखायी। ऐसा प्रतीत होता था कि किलसिथ ने सारा स्काटलैण्ड उसके चरणों पर रख दिया, उसने राजा के नाम पर ग्लासगो में स्काटिश पार्लियामेण्ट की बैठक बुलायी, उसे आशा थी कि वह एक विशाल सेना के साथ इंग्लैण्ड पर आक्रमण करेगा। किन्तु उसके हाइलैण्ड्स के अनुयायी विजय पाते ही अपनी लूट घर ले जाने के लिए तितर-बितर हो गये, उन्होंने उसके पास इंग्लैण्ड में गयी हुई स्काटिश सेना से जल्दी में वापस बुलायी हुई फौजों का मुकाबला करने के लिए केवल १२०० व्यक्ति ही छोड़े। किलसिथ में उसकी विजय के एक महीने के भीतर ही उसकी छोटी सेना फिलिपहौग में नष्ट हो गयी और मोण्ट्रोस एक नये निराशोन्मत्त आक्रमण के लिए शक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से विदेश भाग गया। इंग्लैण्ड की भाँति स्काटलैण्ड से भी राजा की आशाएँ पूरी नहीं हुईं।

निराशा में, राजा ने पहले आयरिश कैथोलिकों की सहायता प्राप्त करने के लिए अन्तिम प्रयत्न किया। नेज़बी और लैंगपोर्ट के बाद, अगस्त १६४५ ई० में उसने इंग्लिश कैथोलिक लार्ड ग्लेमोरगन को कोई भी ऐसा समझौता करने के लिए पूरे अधिकारों के साथ

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट ३८ (बी) तथा छठे संस्करण की प्लेट ४५ (बी) का नक्शा देखिये।

भेजा, जिस समझौते के द्वारा आयरिश सेनाएँ उसके पक्ष की ओर से लड़ें। किन्तु कुछ वर्ष पहले जिन रियायतों का स्वागत किया जाता और जो रियायतें आयरिश लोगों की निष्ठा को अवश्य प्राप्त कर सकती थी, वे रियायतें अब अपर्याप्त थीं। आयरलैण्ड में पोप का एक राजदूत रिनूसिनी पहुँचा और उसने किलकेन्नी की परिषद के विचार-विमर्श में अपने को एक प्रभावशाली तत्त्व बना लिया, मुख्य रूप से रोमन कैथोलिक मत की पूर्ण विजय प्राप्त करने के लिए तुला होने के कारण, उसने शर्तों को कड़ा बनाने पर बल दिया। ग्लेमोरगन को दस हजार सैनिकों का वचन केवल इस शर्त पर मिला कि कैथोलिकों के विरुद्ध सभी दण्डात्मक कानून रद्द कर दिये जाने चाहिएँ, उस समय कैथोलिक अधिकार में विद्यमान सभी चर्च और मठ कैथोलिक रहने चाहिएँ, एक स्वतन्त्र पार्लियामेण्ट बुलायी जानी चाहिए, यह पायनिंगस के उस कानून से नहीं बँधी होनी चाहिए, जिस कानून ने इसे इंग्लिश और आयरिश प्रिवीकौंसिलों का वशवर्ती बनाया था। इससे आयरलैण्ड एक स्वतन्त्र रोमन कैथोलिक राज्य बन जाता और वह इंग्लैण्ड के साथ केवल ताज द्वारा जुड़ा रहता। जब इस समझौते का ज्ञान जनता को हुआ, जैसा कि होना ही था तो इंग्लैण्ड में न केवल पार्लियामेण्ट के पक्षपाती, अपितु राजा के अनुयायी भी बहुत अधिक रुष्ट हुए। आयरलैण्ड में राजा के दल के अध्यक्ष आरमाण्ड ने स्वयमेव इसे स्वीकार करने से इन्कार किया और इस बीच में जिस सेना की सहायता इस समझौते से खरीदी गयी थी, उस सेना को इंग्लैण्ड में संसदीय पक्ष की विजयों से बेकार बना दिया गया। इस सेना का परिवहन तक भी नहीं किया जा सकता था, क्योंकि प्रत्येक इंग्लिश बन्दरगाह संसदीय पक्ष के अधिकार में था। बहुत देर में, आयरिश कैथोलिक नेताओं ने धार्मिक धाराओं के बिना इस शान्ति सन्धि की पुष्टि करने का निश्चय किया; वे रियायतों के लिए राजा की कृतज्ञता पर भरोसा रख रहे थे। उन्हें इस निर्णय तक पहुँचने मे रिनूसिनी की तथा पादरियों के दल की अवहेलना करनी पड़ी। किन्तु यह निर्णय किसी भी अवस्था में उपयोगी नहीं था।

इस दल की विजय बहुत थोड़े समय तक रही। जून १६४६ ई० में, अल्स्टर में कैथोलिक सेनाओं के अध्यक्ष ओवन रो ओनील ने बेनबर्ब की लड़ाई में उत्तर के स्काट लोगों को लगभग नष्ट कर दिया। युद्ध में कैथोलिकों द्वारा प्राप्त की गयी यह एक बड़ी विजय थी। इस विजय से रिनूसिनी तथा कैथोलिक मत के दृढ़ समर्थकों का उत्कर्ष पुनः स्थापित हो गया। उन्होंने शान्ति संधि का तथा युद्ध-विराम का परित्याग किया और डबलिन पर एक बड़ा आक्रमण आरम्भ किया (नवम्बर, १६४६ ई०)। आरमाण्ड की सेनाएँ लगभग खतम हो चुकीं थीं। यदि आयरलैण्ड में इंग्लिश प्रभुता को बनाये रखना था तो उसके आगे इसके अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था कि वह इस नगर को पार्लियामेण्ट को सौंप दे। एक अत्यन्त योग्य संसदीय सेनापति, माइकेल जोन्स यहाँ की कमान सँभालने के लिए भेजा गया और प्रतिरक्षा से सन्तुष्ट न रहते हुए उसने आगे बढ़ कर धावे किये, ड्रोइडा की दुर्ग रक्षक सेना के साथ उसकी सेनाएँ मिल गयीं और वह ट्रिम के निकट डैंगन पहाड़ी पर मुख्य कैथोलिक सेना पर टूट पड़ा, उसने इसे लगभग समाप्त कर दिया (अगस्त १६४७ ई०)। कुछ समय बाद मन्स्टर के प्रोटेस्टेन्टों ने इस प्रान्त के कैथोलिकों पर लगभग ऐसा ही कठोर प्रहार

किया और अल्स्टर में प्रतिरोध का संगठन करने के लिए जार्ज मौंक[1] को भेजा गया। इससे इस प्रान्त में भी कैथोलिक सफलताएँ बन्द हो गयीं। अब तक कैथोलिक विद्रोह पूरी तरह शान्त नहीं हुआ था; किन्तु इसकी पूर्ण विजय का अवसर भंग हो गया और अब इस देश को पूर्ण रूप से वशवर्ती बनाने का कार्य एक संसदीय सेना के लिए शेष रहा।

४. समझौता करने के प्रयास

आयरिश उपद्रवों की पिछली अवस्थाओं में, इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड में धर्म के और राजनीति के उन महान् प्रश्नों के समाधान की तैयारी के लिए इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड में वार्ताओं और षड्यन्त्रों की एक लम्बी और जटिल शृंखला चल रही थी, जिन प्रश्नों के लिए यह लड़ाई लड़ी गयी थी। राजा स्काट लोगों के पास गया था, क्योंकि वह यह जानता था कि उनमें तथा संसदीय नेताओं में ईर्ष्या है। यद्यपि स्काट लोग प्रेसबिटेरियनवाद के बारे में पार्लियामेण्ट के संकल्प-विकल्पों से प्रसन्न नहीं थे, वे राजा को विशाल राजनीतिक अधिकार देने को तैयार थे, बशर्ते कि वह उनके चर्च को स्वतन्त्र एवं विजेता के रूप में मानने के लिए सहमत हो जाय, तो भी वे पार्लियामेण्ट से सम्बन्ध-विच्छेद के लिए तैयार नहीं थे, राजा उनकी शर्तों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। यह स्पष्ट था कि उसका उद्देश्य फूट पैदा करना था, न कि एक स्पष्ट और निश्चित परिणाम पर पहुँचना। उसे विश्वास था कि वह उनके लिए अपरिहार्य है और वह द्युलोक की व्यवस्थाओं को चुनौती देने वाले पापी व्यक्तियों के विभिन्न दलों को एक दूसरे के विरुद्ध लड़ा कर उस समय भी, सद्धर्म के उद्देश्य को, जैसा कि वह उसे समझता था, सफल बनाना चाहता था। इस विश्वास से अभिभूत होने के कारण उसने अगले दो वर्षों में अनेक षड्यन्त्र किये। प्रायः ये षड्यन्त्र बहुत चातुर्यपूर्ण थे, किन्तु इनका मुख्य प्रभाव बारी-बारी से प्रत्येक दल को यह विश्वास कराता रहा कि राजा का विश्वास नहीं किया जा सकता। इससे कोई अन्य परिणाम सम्भव नहीं प्रतीत होता था, क्योंकि सच्चाई यह प्रतीत होती है कि वह अपनी शक्ति की दैवीय व्यवस्था में ईमानदारी से सच्चा विश्वास रखता था और अपने विरोधियों को सत्य का शत्रु समझता था। उसे वास्तव में यह विश्वास था कि ऐसे व्यक्तियों को धोखा देना न्यायोचित था। उसका कोई गम्भीर इरादा विवादास्पद प्रश्नों के ऐसे स्थायी समाधान पर पहुँचने का नहीं था, जिसका आधार उसके सिद्धान्तों से टकराता हो। इस मानसिक प्रवृत्ति का पहला परिणाम यह हुआ कि आठ महीने बाद निराश होकर स्काट लोगों ने सन्धि चर्चा बन्द कर दी। वे घर वापस जाना चाहते थे, पार्लियामेण्ट भी यह चाहती थी कि वे वापस चले जायँ। उन्होंने राजा को संसद के हाथों में छोड़ दिया।

राजा ने अभी तक स्काट लोगों से मदद की आशा नहीं छोड़ी थी। किन्तु अगले बारह महीनों में उसे अपने षड्यन्त्र करने के गुणों का एक नया क्षेत्र—पार्लियामेण्ट और सेना के बीच में बढ़ती हुई शत्रुता में प्राप्त हुआ। पार्लियामेण्ट चर्च के एक विशुद्ध, प्रेसबिटेरियन समाधान पर

१. जूलियन कार्बेट ने इंग्लिश मैन ऑफ एक्शन सीरीज में मौंक की एक जीवनी लिखी है।

तुली हुई थी, यद्यपि स्काट लोगों को सन्ताप पहुँचाते हुए वह इस बात पर बल दे रही थी कि चर्च राज्य के आधीन हो। राजनीतिक दृष्टि से वे राजा को पुनः गद्दी पर बिठाना चाहते थे, किन्तु सब आवश्यक बातों में वे उसे पूर्ण रूप से अपने पर निर्भर बनाये रखना चाहते थे, किन्तु सेना यह अनुभव करती थी कि उसने युद्ध जीता है, न कि पार्लियामेण्ट ने। इसलिए सेना में एक अतीव भिन्न प्रकार के विचार प्रचलित थे।

अपने पेशेवर स्वरूप के कारण नयी सेना एक प्रबल सामूहिक भावना से परस्पर सम्बद्ध थी। इसके अतिरिक्त, क्योंकि इसमें अत्यधिक स्वतन्त्र मन वाले और चरित्र की अधिकतम शक्ति रखने वाले व्यक्ति सम्मिलित हुए थे, अतः सेना उन गम्भीर धार्मिक और राजनीतिक समस्याओं पर अविरत वाद-विवादों का केन्द्र बन गयी थी, जिन समस्याओं को इस लम्बे संघर्ष ने उत्पन्न किया था। चूँकि विशेष रूप से क्रामवेल के प्रभाव से. इस समूचे विवाद में पूर्णतम स्वतन्त्रता दी गयी थी, अतः सेना में धार्मिक सम्मतियों के असीम वैविध्य का प्रतिनिधित्व हो रहा था। विभिन्न मत सेना में बहुत अच्छी प्रकार से चल रहे थे। इस दशा में उन सिपाहियों को यह प्रश्न पूछने का प्रलोभन होता था कि समाज में इस प्रकार की सम्मतियों की विविधता की अनुमति क्यों नहीं दी जानी चाहिये। वे निजी निर्णय के अधिकारों के समर्थक थे, उनका यह निश्चय था कि वे प्रेसबिटेरियन पद्धति के कठोर नियमों को स्वीकार नहीं करेंगे। नया प्रेसबाइटर केवल पुराने पुरोहितों का विशाल रूप है। धार्मिक स्वतन्त्रता का युद्ध लड़ना बेकार है, यदि इसका परिणाम एक कठोर प्रेसबिटेरियन पद्धति हो। यह सत्य है कि इनमें बहुत थोड़े व्यक्ति रोमन कैथोलिकों को अथवा एंग्लिकनों को पूरी सहिष्णुता देने के लिए तैयार थे। किन्तु इसका कारण यह था कि ये धार्मिक मत राजनीतिक दृष्टि से खतरनाक समझे जाते थे। इसके बावजूद इस विचित्र सेना के युक्ति करने वाले सिपाही आधुनिक जगत् में धार्मिक सहिष्णुता के, विचार और वाणी की पूर्ण स्वाधीनता के पहले प्रबल समर्थक थे। कट्टर सम्मति रखने वालों को उनकी नास्तिकता से बड़ा धक्का लग रहा था। लन्दन के पादरियों की एक सभा ने यह घोषणा की कि "हम इस अधिक प्रयाससाध्य सहिष्णुता से घृणा एवं विद्वेष करते हैं। यदि शैतान को इस बात का विकल्प दिया जाय कि राज्य में पुरोहितों के शासन का सोपानतन्त्र, कर्मकाण्ड और प्रार्थना-पुस्तक स्थापित की जाय अथवा सहिष्णुता को स्वीकार किया जाय तो वह सहिष्णुता का वरण करेगा।"

फिर भी, सिपाहियों के वाद-विवादों में विकसित होने वाली राजनीतिक सम्मतियाँ अधिक उल्लेखनीय थीं। वे विरासत में प्राप्त स्वतन्त्रताओं को तथा पार्लियामेण्ट के व्यक्तियों द्वारा इतना अधिक महत्त्व दिये जाने वाले पूर्वोदाहरणों को बहुत कम महत्त्व देते थे, तथा अमूर्त सिद्धान्तों को अधिक महत्व देते थे। **समतावादी** या सबको समान बनाने वालों (Levellers) का नाम धारण करने वाले इनमें से अनेक व्यक्तियों ने लोकतन्त्र के एक पूर्ण सिद्धान्त का विकास किया था, इनमें मुट्ठीभर लोग समाजवाद के सिद्धान्त को भी मानते थे। समतावादी लोगों का दिव्य-सन्देश वाहक जॉन लिलबर्न था, यह कुछ अंशों में रूसो के सिद्धान्तों को उससे पहले प्रतिपादित करने वाला था; शासन के एक आधार के रूप में जनता की प्रभुसत्ता इनका सिद्धान्त था।

"इंग्लैण्ड में उत्पन्न होने वाले प्रत्येक व्यक्ति को चाहे वह कितना ही दरिद्र और हीनतम स्थिति वाला क्यों न हो," उसे उन व्यक्तियों के चुनने में अपनी आवाज रखने का अधिकार होना चाहिये, जो व्यक्ति कानून बनाते हैं और उन्होंने 'जनता का समझौता' (यद्यपि इसमें जनता से परामर्श नहीं लिया गया था और वह निश्चित रूप से इससे सहमत नहीं थी) नामक एक दस्तावेज में द्विवार्षिक पार्लियामेण्टों की, समान निर्वाचन क्षेत्रों की तथा पुरुष मताधिकार की माँग की थी। यदि उनकी माँगें स्वीकार कर ली जातीं तो पहले चुनावों द्वारा ऐसा विशाल बहुमत चुना जाता जो राजा को उसकी सत्ता पुनः वापस करने के पक्ष मे होता।

यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि पार्लियामेण्ट इस प्रकार के विचार रखने वाली ऐसी भीषण संस्था से छुटकारा पाने के लिए उत्सुक हो। क्योंकि युद्ध समाप्त हो चुका था, अतः सेना को अवश्यमेव विघटित किया जाना चाहिये था अथवा विद्रोहियों का दमन करने के लिए जहाजों द्वारा आयरलैण्ड भिजवा देना चाहिये था। किन्तु सेना ने विघटित होने से इन्कार किया। पार्लियामेण्ट ने इसका वेतन बकाया हो जाने के कारण इसे एक वैध शिकायत करने का अवसर प्रदान किया और इसके अतिरिक्त सेना में यह विश्वास बल पकड़ रहा था कि चूँकि भगवान ने इसे युद्ध का निर्णय करने के लिए बुलाया था, अतः इसका यह भी कर्त्तव्य है कि यह इस बात को देखे कि इसके बाद इसका समाधान भी ठीक हुआ है या नहीं। इसने अपनी शिकायतों का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रत्येक रेजीमेण्ट से दो "आन्दोलको" (Agitators) का चुनाव शुरू कर दिया, इसने कठोर प्रेसबिटेरियन पार्टी के नेता पार्लियामेण्ट के ग्यारह सदस्यों के निष्कासन की माँग की और इनको पार्लियामेण्ट से निकलवा दिया।

प्रतिदिन एक दूसरे से अधिक दूर होने वाली पार्लियामेण्ट और सेना के इन दोनों विरोधी विचारों के बीच में क्रामवेल खड़ा हुआ था। वह सेना का विश्वस्त नेता और एक-मात्र ऐसा व्यक्ति था जो सेना का नियन्त्रण कर सकता था। किन्तु वह पार्लियामेण्ट का भी सदस्य था तथा युद्धकालीन मन्त्रीमण्डल का और **दोनों राज्यों की समिति** का भी सदस्य था। एक आवश्यक बात में उसकी सब भावनाएँ सेना के साथ थीं। उग्र संघर्षों में, उसने अपने विश्वास को प्राप्त किया था, और उसके लिए धार्मिक स्वतन्त्रता सबसे बड़ी वस्तु थी और प्रिसबिटरी का संकटपूर्ण अत्याचार लॉड के अत्याचारों से भी अधिक निकृष्ट था। किन्तु वह कोई कटु धर्मान्ध व्यक्ति नहीं था, वह एक विनोदी व्यक्ति था, अपने सिपाहियों से बड़ा घुला मिला हुआ और मजाक करने का शौकीन था। सैनिक हमें बताते हैं कि इन चिन्तापूर्ण महीनों में किस प्रकार उसमें तथा उसके एक सेनापति में उत्पन्न होने वाला एक गम्भीर विवाद तकियों की लड़ाई में बदल गया। उसकी महत्ता किसी अन्य बात में इससे अधिक नहीं प्रकट हुई कि वह कभी भी सूत्रों और सिद्धान्तों से बँधा हुआ नहीं था, भले ही ये सूत्र कितने ही युक्तियुक्त क्यों न प्रतीत हों। उसमें सदैव वास्तविकता की भावना और तथ्यों के प्रति एक सुदृढ़ निष्ठा थी। वह चर्च के शासन के रूपों के सम्बन्ध में भी बहुत अधिक परवाह नहीं करता था, किन्तु उसने एक मृदु विशप पद्धति अथवा नरम प्रेसबिटरी को स्वीकार कर लिया होता, यदि इनमें से किसी का भी मतभेदों की वास्तविक सहिष्णुता के साथ सामंजस्य सम्भव हो सकता। उसने शासन के प्रकारों सम्बन्ध में भी बहुत परवाह नहीं की। उसने कहा था

कि ' वह शासन के प्रकारों के साथ सन्वद्ध अथवा गोंद से जुड़ा हुआ नहीं है" । कुल मिला कर, वह यह सोचता था कि समुचित संरक्षणों के साथ, राजतन्त्र इंग्लैण्ड में सर्वोत्तम शासन है। इसके दो कारण थे । पहला तो यह था कि एक सैनिक के रूप में वह सब वस्तुओं के केन्द्र में एक शक्तिशाली और मान्य सत्ता की आवश्यकता का अनुभव करता था और इससे अधिक बड़ा कारण यह था कि किन्ही भी प्रस्तावों में विचार करने योग्य सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु यह थी कि "क्या देश की जनता की भावना और स्वभाव इसके साथ चलने के लिए तैयार है और वह जानता था कि इस राष्ट्र की जनता राजा के नाम और सत्ता की अभ्यस्त है। सबसे बढ़ कर वह इस विचार से घृणा करता था कि केवल शक्ति द्वारा, अपने आप में अच्छे प्रतीत होने वाले समझौते को लागू किया जाय। हम स्वतन्त्र रूप से जो प्राप्त करते हैं, वह बल की विधि से प्राप्त होने वाले दुगुने लाभ से अधिक अच्छा है और वह वस्तुत: हमारे लिए तथा हमारी भावी सन्तति के लिए अधिक वास्तविक होगा। आप शक्ति से जिस वस्तु को प्राप्त करते हैं, मैं उसे कुछ भी नहीं समझता हूँ। मैं नहीं जानता हूँ कि शक्ति का प्रयोग इसके सिवाय किसी और काम में किया जा सकता है कि हम **इसे राज्य की भलाई के लिए तथा उस उत्तम वस्तु को प्राप्त करने के लिए करें जिसे हम शक्ति के बिना नहीं प्राप्त कर सकते**।" यह अपवाद घातक था। इसने अन्त में उसे शक्ति के प्रयोग के लिए विवश किया, और इसीलिए वह इससे भलाई के जिस लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता था, वह नष्ट हो गया । इसी बीच में अपने संशयों के कारण वह अपने सैनिकों का विश्वास लगभग खो बैठा।

यही वे तत्त्व थे, जिनके बारे में अभागा राजा यह सोचता था कि वह इन्हें एक दूसरे के विरुद्ध भिड़ाये रखेगा। वह सबसे बातचीत चला रहा था और उसका इरादा किसी के भी साथ वास्तविक समझौता करने का नहीं था। सेना ने राजा को अपने अधिकार में लिया (जून १६४७ ई०) और उसे कुछ शर्तें पेश की । ये शर्तें स्काट लोगों द्वारा अथवा पार्लियामेण्ट द्वारा दी जाने वाली शर्तो से कहीं अधिक उदार थी। वे क्रामवेल के दायें हाथ, इरेटन द्वारा प्रस्तावों के शीर्षकों में तैयार की गयी थी । इनके अनुसार एक मृदु बिशप पद्धति और सर्वांगीण सहिष्णुता का अवलम्बन किया जाना था। दो वर्ष के लिए समान निर्वाचन क्षेत्रों से व्यापक मताधिकार पर एक नयी पार्लियामेण्ट चुनी जानी थी। आरम्भ में समझौते द्वारा एक राज्य परिषद् नियुक्त की जानी थी। यह राजनीतिज्ञतापूर्ण और क्रियात्मक प्रस्ताव था। किन्तु चार्ल्स ने इसकी चर्चा अपने शत्रुओं में फूट डालने के साधन के रूप में की। इस सारे समय में वह पार्लियामेण्ट के साथ भी तथा उन स्काटों के साथ भी संघर्ष में था, जो अपने स्काटिश राजा के साथ किये जाने वाले व्यवहार में सम्मान के अभाव के कारण बेचैन हो रहे थे और उसकी ओर से हस्तक्षेप करने के लिए तैयार थे। इंग्लिश राजपक्षपातियों में भी गुप्त रीति से काम चल रहा था और विदेश से सहायता पाने की आशा थी।

५. तलवार द्वारा समस्या का समाधान

चार्ल्स एकाएक मृदु और अपना सम्मान करने वाले सैनिक जेलरों के हाथ से चुपचाप निकल भागा और उसने वाइट के टापू में शरण ली (नवम्बर १६४७ ई०)। कुछ ही महीनों

के भीतर दक्षिण वेल्स में एक राजपक्षपाती विद्रोह हुआ और क्रामवेल को इसका सामना करना पड़ा। एक अन्य विद्रोह कैण्ट और एसेक्स में हुआ, जिससे फेयरफैक्स को कुछ तकलीफ उठानी पड़ी। बेड़े के कुछ हिस्से ने विद्रोह किया और वह राजपक्षपातियों के साथ मिल गया। जल्दी ही स्काटिश प्रेसबिटेरियन लोगों में राजपक्षपाती दल का पलड़ा भारी हो गया और एक स्काटिश सेना राजा की सहायता करने के लिए सीमान्त की ओर आने लगी (जुलाई)। यह उस घटना के ठीक चार वर्ष बाद आयी, जबकि यह पहले पार्लियामेण्ट की सहायता करने के लिए आयी थी। उत्तर में पार्लियामेण्ट की फौजों को पीछे हटना पड़ा, किन्तु क्रामवेल कुमुक लेकर आया और उसने यार्कशायर से पहाड़ियों में रास्ता बनाते हुए लंकाशायर में बढ़ रही स्काटिश सेना पर हमला किया, इसे प्रेस्टन में हराया (अगस्त १६४८ ई०), इसका सम्बन्ध अपने आधार से विच्छिन्न किया और इसे विगन तथा वारिंगटन में समाप्त कर दिया।

इन घटनाओं को 'द्वितीय गृहयुद्ध' कहा जाता है। प्रथम गृहयुद्ध की सम्मानपूर्ण विशेषता यह थी कि दोनों पक्षों की ओर से यह मानवीयता के साथ लड़ा गया। द्वितीय युद्ध में एक अधिक निष्ठुर स्वभाव प्रदर्शित किया गया। सेना अपना धैर्य खो बैठी थी। यह इसे उस समय और भी अधिक पूर्णता के साथ खो बैठी, जब संकट टल जाने पर पार्लियामेण्ट और राजा पेनिलोप के जाल की भाँति सन्धि वार्ता का (Penelope's web) कभी समाप्त न होने वाला कार्य करने लगे और न्यूपोर्ट सन्धि (Newport Treaty) के नाम से प्रसिद्ध व्यवस्था पर बातचीत होने लगी थी। न केवल सेना के सिपाही और छोटे पदों के अधिकारी अपितु सेना के अध्यक्ष भी फेयरफैक्स के अपवाद को छोड़कर इस परिणाम पर पहुँच गये कि धैर्य और युक्ति करने का समय समाप्त हो चुका है। युद्ध के लिए प्रस्थान करने से भी पहले "हम इस स्पष्ट निश्चय तक पहुँच चुके थे कि यदि भगवान ने पुनः कभी हमें शान्ति के युग तक पहुँचाया तो हमारा कर्त्तव्य यह होगा कि हम उस खूनी आदमी चार्ल्स स्टीवर्ट को उसके द्वारा बहाये गये रक्त का जवाब देने के लिए बुलाएँ ।" २० नवम्बर १६४८ ई० को सेना ने पार्लियामेण्ट को एक शिकायत भेजी और इसमें यह माँग की कि राजा के साथ वार्ता भंग कर कर दी जाय और "हमारे सब कष्टों के जनक के रूप में" उसको दण्ड दिया जाय। क्रामवेल भी अब इस परिणाम पर पहुँच गया था, उसके संशय और समझौते की इच्छा समाप्त हो चुकी थी। उसने "शक्ति" से डरना बन्द कर दिया था और वह ऐसा व्यक्ति था जो एक बार मन बना लेने पर, अपने संकल्प को क्रियान्वित करने में कभी भी झिझक नहीं करता था।

किन्तु पहले पार्लियामेण्ट के साथ मुकाबला करना था। जब इसने राजा के साथ वार्ता जारी रखने का निश्चय किया, तो कर्नल प्राइड और बन्दूकचियों का एक दल वहाँ आ गया और उसने ५० अथवा ६० सदस्यों के अतिरिक्त सब को वहाँ से निकाल दिया (दिसम्बर १६४८ ई०)। क्रामवेल पार्लियामेण्ट का बल पूर्वक भंग करवाना और एक नया चुनाव कराना अधिक पसन्द करता। किन्तु उसने इस निष्पन्न तथ्य को स्वीकार किया और वह अब राजा के विरुद्ध दोषारोपण करने की योजना चलाने की कार्यवाहियों में पूरी तरह से लग गया।

वेस्टमिन्स्टर में विलियम रूफस के महान हाल ने इंग्लिश इतिहास की अनेक घटनाओं को देखा था। इसमें १० जनवरी १६४६ ई० को एक ऐसा दृश्य हुआ, जैसा दृश्य अब तक इंग्लैण्ड में अथवा किसी अन्य देश में नहीं देखा गया था। राष्ट्र के विरुद्ध द्रोह के अपराध की जाँच करने का अधिकार रखने वाले न्यायाधीशों के एक समुदाय के समक्ष एक अभिषिक्त राजा पर आरोप लगाया गया। इंग्लिश लोगों को ज्ञात कोई भी कानून ऐसे कार्य को न्यायोचित नही ठहराता था। इस अभियोग को चलाने वाले व्यक्ति राज्य के न्यायाधीश नहीं थे, अपितु इस प्रयोजन के लिए नियुक्त किया गया एकपक्षीय समूह मात्र था, जिसका निर्णय पहले से ही निश्चित हो चुका था। जिन व्यक्तियों ने इन न्यायाधीशों को नियुक्त किया था, वे राष्ट्र के प्रतिनिधि नहीं थे। वे उस असेम्बली के अवशेष थे, जो अपने शुद्धीकरण से पहले ही प्रतिनिधि संस्था नहीं रही थी। राजा ने इस समय अपना शान्त गौरव बनाये रखा, यह उसके जीवन के किसी भी अन्य कार्य से अधिक अच्छा था कि उसने इस समूचे समय में न्यायालय के अधिकार को मानने से इन्कार किया और अपने लिए सफाई देना अस्वीकार किया। किन्तु उसने यह स्पष्ट कर दिया कि वह एक ऐसे न्यायालय के सम्मुख खड़ा है, जो वास्तव में न्यायालय नहीं है और अब वही ऐसा व्यक्ति है जो कोरी पाशविक शक्ति और स्वेच्छाचारपूर्ण अधिकार के विरुद्ध न्याय और कानून के मूल तत्त्वों की रक्षा करने वाला है, "यह केवल मेरा ही मामला नहीं है, यह इंग्लैण्ड की जनता की स्वतन्त्रता और स्वाधीनता का मामला है....क्योंकि यदि कानून के बिना शक्ति कानून बनाने लगे.... तो मैं नहीं जानता कि इंग्लैण्ड में ऐसा कौन प्रजाजन होगा जो अपने जीवन के सम्बन्ध में अथवा ऐसी किसी भी वस्तु के सम्बन्ध में जिसे अपना कहता है, भरोसा रख सकेगा...।"

राजा को दण्ड दिया गया, वस्तुतः उसको दण्ड दिया जाना पहले से ही निश्चित हो चुका था। दण्ड देने के बाद जब उसने बोलने का अधिकार माँगा, तब भी उसे यह अधिकार नहीं दिया गया। किन्तु उसके कुछ कठोर जजों को भी क्रामवेल की तथा उसके मित्रों की दृढ़ इच्छा ने ही अपने कर्त्तव्य पथ पर बनाये रखा। बाहर, राष्ट्र में एक भीषण आतंक था। ३० जनवरी को एक शीतल तुषाराच्छादित प्रातः काल के समय, सौ राजाओं का उत्तराधिकारी ह्वाइट एक हाल की भोजन शाला से एक काले कपड़े से ढके मंच की ओर बढ़ा, जहाँ एक वध्य मंच के निकट चुस्त वस्त्रों में दो नकाबधारी व्यक्ति खड़े थे। चारों ओर अश्वारोही और पदाति सैनिकों की पंक्तियाँ खड़ी थीं और उनके पीछे सब खिड़कियों में और छतों पर मूक स्त्री-पुरुषों की भारी भीड़ वाला समुदाय था। राजा ने अपने निकटवर्ती व्यक्तियों से युद्ध के कारणों के बारे में अपने दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया। उसने कहा, "जनता के लिए मैं उतनी ही अधिक स्वतन्त्रता और स्वाधीनता चाहता हूँ, जितनी कोई अन्य व्यक्ति चाहता है, किन्तु मुझे आप को यह अवश्य बताना चाहिये कि उनकी स्वाधीनता और स्वतन्त्रता ऐसी सरकार को रखने में और ऐसे कानूनों में है, जिनसे उनका जीवन और उनका माल सबसे अधिक उनका हो सके। यह इस बात में नहीं है कि सरकार में उनका हिस्सा हो। यदि तलवार की शक्ति के अनुसार सब परिवर्तनों के लिए मैंने आत्मसमर्पण किया होता, तो मुझे यहाँ आने की

आवश्यकता नहीं थी और इसलिए मैं आपको यह कहता हूँ (और मैं भगवान् से यह प्रार्थना करता हूँ कि आप पर यह आरोप न लगाया जाय) कि मैं जनता का शहीद हूँ।"

वह शान्तिपूर्वक लेट गया और उसने एक क्षण तक प्रार्थना की, तब उसने हाथों को फैलाया और एक ही प्रहार से सिर को धड से अलग कर दिया गया। जनता के देखने के लिए कटे हुए सिर को ऊँचा उठाया गया, इस पर वध्यमंच के चारों ओर से हजारों व्यक्तियों के कण्ठ से एक आर्तनाद निकला। वहाँ उपस्थित एक व्यक्ति लिखता है "ऐसा आर्तनाद मैंने पहले कभी नहीं सुना और मेरी इच्छा है कि ऐसी चीख को मैं फिर कभी न सुनूँ।"

कुछ दिन बाद एक मर्मस्पर्शी छोटी पुस्तक प्रकाशित की गयी। इसका नाम Eikon Basilike अथवा राजकीय मूर्ति था। इसका प्रयोजन अपने जीवन के अन्तिम दिनों में अभागे राजा के विचारों और चिन्तन का प्रतिनिधित्व करना था। लाखों व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाने वाली इस पुस्तक ने राष्ट्र के मन में ह्वाइट हाल के दृश्य से उत्पन्न होने वाली दया और आतंक को अंकित कर दिया। राजा की मृत्यु ने राजसत्ता के पक्ष को पवित्र बना दिया, इसे कोरी शक्ति के विरुद्ध न्याय से अभिन्न बना दिया।

स्वतन्त्रता कानून पर अवलम्बित है, जैसा कि राजा ने कहा था। सब दोषों के होते हुए भी जब उसने इसे स्पष्ट किया था तो उसने सत्य ही कहा था कि कोरी शक्ति किसी वस्तु को ठीक नहीं बना सकती। यह अच्छे उद्देश्य को भी विषाक्त कर सकती है। कानून की सर्वोच्च सत्ता पर सुदृढ़ आग्रह से आरम्भ होने वाली क्रान्ति अब इस सीमा तक पहुँच गयी थी। इस अमङ्गल अपशकुन के साथ प्यूरिटन गणराज्य का लघु एवं उपद्रवपूर्ण इतिहास आरम्भ हुआ।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The Standard history of the Civil war is **S. R. Gardiner's** in four Volumes. **Clarendon,** History of the Great Rebellion is one of the greatest pieces of English historical writing; it is also the work of a participator, on the royalist side. On the other side see **Lucy Hutchinson,** Memoirs of Colonel Hutchinson and **Ludlow,** Memoirs, also **Carlyle,** Letters and Speeches of Oliver Cromwell. For the more advanced movements **Pease,** Leveller Movement; **Simpkinsson,** Harrison, and **Brown,** Fifth Monarchists; **Firth,** Cromwell's Army; **Coate,** Cornwall in the Great Civil war; **Bayley,** Civil War in Dorset; **Broxap,** Great Civil War in Lancashire; **Lewis,** Lives from the Claredon Gallery; **Higham,** Charles I; **Buchan,** Cromwell **Davies,** Early Stuarts; **Clark,** Seventeenth Century; **Brunton** and **Pennington,** Members of the Long Parliament; **Woodhouse,** Puritanism and Liberty; **Braithwaite,** Beginnings of Quakerism.

फिर भी शासन के सब कार्यों को अपने आप ग्रहण करने वाली तथा किसी भी इंग्लिश राजा द्वारा कभी भी उपभोग की जाने वाली शक्ति की अपेक्षा अधिक अनुत्तरदायी और अत्याचारपूर्ण शक्ति का प्रयोग करने वाली इस संस्था ने अपने दावों का आधार जनता की प्रभुसत्ता के सिद्धान्त की घोषणा को तथा जनता के प्रतिनिधि होने के अपने स्वरूप को बनाया। मई १६४९ ई० में पास किये गये एक कानून में यह कहा गया था कि अब से "इंग्लैण्ड का शासन इस राष्ट्र की सर्वोच्च सत्ता-पार्लियामेण्ट में जनता के प्रतिनिधियों द्वारा एक राष्ट्रमण्डल अथवा स्वतन्त्र राज्य के रूप में किया जायगा।" और नयी महामुद्रा पर यह लेख अंकित था—"भगवान् के आशीर्वाद से पुनः प्राप्त की गयी स्वतन्त्रता के प्रथम वर्ष में।" पार्लियामेण्ट ने इसकी व्याख्या नही की कि एक "स्वतन्त्र राज्य" का अभिप्राय क्या है? क्योकि राजा ने स्वयमेव फांसी के तख्ते पर राज्य की स्वतन्त्रता के लिए शहीद होने का दावा किया था, इससे यह स्पष्ट हो गया था कि स्वतन्त्रता के अनेक विभिन्न अर्थ हो सकते हैं। पार्लियामेण्ट ने गणराज्य की घोषणा करने के लिए अपने कारणों को बताते हुए यह दावा किया था कि राजा प्रजा के समझौते से स्थापित किये गये अधिकारीमात्र होते हैं, प्रजा को उन्हें गद्दी से हटाने का अधिकार है और उसने मौन रूप से यह मान लिया था कि केवल पार्लियामेण्ट ही जनता के लिए बोल सकती है। राज्य परिषद का एक सचिव बनने वाले जान मिल्टन ने यह घोषणा की थी कि सब मनुष्य स्वाभाविक रूप से स्वतन्त्र उत्पन्न होते हैं और उसने यह दावा किया था कि सब सरकारें जिस "समझौते" पर आधारित होती हैं, वह समझौता कुशासन से अवैध बना दिया जाता है। ये बड़े उदात्त सिद्धान्त थे। किन्तु उनमें तथा वास्तविक तथ्यों में एक बड़ा भद्दा विरोध था; क्योंकि वास्तविक तथ्य ये थे कि इंग्लैण्ड के नये शासक एक अनुत्तरदायी अल्पतन्त्र के थे, केवल सैनिक शक्ति से ही इन्हें एक विरोधी राष्ट्र के विरुद्ध समर्थन प्राप्त हो रहा था और यदि वे जनता द्वारा अपने चुनाव के लिए तथा इसके परिणाम स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाते तो उनकी शक्ति एक भी क्षण नहीं बनी रह सकती थी।

उच्च राजनीतिक सिद्धान्तों के दावे करने तथा उन्हें स्वीकार करने के लिए न तैयार होने वाले तथा उसके समर्थकों से घृणा करने वाले राष्ट्र में इन सिद्धान्तों को क्रियात्मक रूप देने की असम्भवता के बीच में पाये जाने वाले महान् अन्तर ने राष्ट्रमण्डल के सबसे अधिक प्रबुद्ध कार्यों को भी निष्प्रभाव कर दिया था, जैसे कि इसी प्रकार के विरोध ने एक हिंसक क्रान्ति के बाद होने वाली दूसरी क्रान्ति को प्रभावहीन बना दिया था। इसने यह परिणाम उत्पन्न किया कि शासन के एक स्थायी आधार की खोज में उग्र संघर्ष करने वाले क्रान्तिकारियों ने, एक-एक पग करते हुए अपने को पुरानी पद्धति की ओर लौट जाने के लिए विवश पाया। अन्त में लम्बी पार्लियामेण्ट के सभी कार्यों में से केवल वही हिस्सा शेष रहा, जो इसके पहले अधिवेशन में पाशविक शक्ति को युक्ति के रूप में स्वीकार करने से पहले किया गया था। ब्रिटिश राजनीति में इस अनुभव के पाठों का चिरकाल तक अतीव अधिक महत्व बना रहा।

गणराज्य सरकार की ओर से इस विफलता का कारण शक्ति अथवा योग्यता का अभाव नहीं था, क्योंकि उनके कार्य शक्तिशाली और सफल दोनों थे। जनवरी १६४६ ई० में ऐसा प्रतीत होता था कि वे एक लगभग निराशापूर्ण और असम्भव स्थिति में थे। राष्ट्र का आधे से अधिक क्रियाशील भाग—राजपक्षपाती उनके कट्टर शत्रु थे। उन्होने तटस्थ और उदासीन सम्मति रखने वाले एक ऐसे विशाल जन समूह को निश्चित रूप से अपने से विमुख कर दिया था, जो त्यों-त्यों अधिकाधिक विरोधी होता जा रहा था, ज्यों-ज्यों मनुष्यों पर करों का अभूतपूर्व भार बढ़ रहा था, तथा यह भार उनके जीवन की सामान्य आदतों पर बुरा प्रभाव डाल रहा था। विशेष रूप से, लन्दन में तथा अन्य नगरों में प्यूरिटन अल्प संख्या का बड़ा भाग बनाने वाले प्रेसबिटेरियन लगभग राजपक्षपातियों के समान ही कट्टर विरोधी थे और वे निश्चय से स्वयमेव राजपक्षपाती बन रहे थे। अतिवादी प्यूरिटन लोगों की बड़ी अल्पसंख्या में भी कई गम्भीर मतभेद थे। कुछ लोग प्राइड द्वारा की शुद्धि को तथा राजा के वध को न्याय और स्वतन्त्रता के विरुद्ध अत्याचार मानते हुए इनकी निन्दा करते थे। दूसरी ओर, कुछ व्यक्ति यह चाहते थे कि सन्तों का शासन स्थापित हो और वे न्यू इंग्लैण्ड की भाँति नागरिकता के विशेष अधिकारों को अपने ढंग का विश्वास रखने वाले धार्मिक और कट्टर प्यूरिटन लोगों तक सीमित रखना चाहते थे। विशेषतः, सेना में विशुद्ध लोकतन्त्रीय तत्व भी थे। ये इस समय क्रुद्ध थे, क्योंकि लोकतन्त्रीय आधार पर नये चुनाव फौरन नहीं किये जा रहे थे। उन्होंने पार्लियामेण्ट को इस आशय की माँगें भेजी थीं। उनमें से लिलबर्न जैसे कई व्यक्ति क्रामवेल को एक अत्याचारी, धर्म-त्यागी और ढोंगी शासक मानते हुए उसकी निन्दा कर रहे थे। उनके साथ कठोर व्यवहार अवश्य किया जाना चाहिए था। क्रामवेल ने कहा था कि "उनको तोड़ दो अथवा वे तुम्हें तोड़ देंगे।" राज-परिषद् ने इनमें से चार व्यक्तियों को टावर में उसी प्रकार वैसी ही अन्यायपूर्ण रीति से कैद किया, जैसे चार्ल्स प्रथम और लॉड ने अपने विरोधियों को बन्दी बनाया था और इन्हें कानूनी अधिकार के भय और दिखावे के साथ कैदी बनाया गया। मई १६४६ ई० में तीन सेनाओं में एक भयोत्पादक विद्रोह हुआ, किन्तु फेयरफेक्स और क्रामवेल ने फुर्ती से इसका दमन किया और तीन नेताओं को गोली से उड़ा दिया।

जब इंग्लैण्ड में नयी सरकार की स्थिति अनिश्चित थी, उस समय इसे स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड से गम्भीर खतरा था। स्काट लोग एक स्काटिश राजा के अवैध वध पर और इंग्लैण्ड में प्रेसबिटेरियन उद्देश्य के पतन पर प्रकुपित थे। वे उस चार्ल्स द्वितीय के साथ पहले ही सन्धि कर चुके थे, जो अब निर्वासित दशा में था और जिसने बड़ी सौदेबाजी के साथ उस पर थोपी गयी कठोर शर्तों को स्वीकार कर लिया था। १६५० ई० के ग्रीष्मकाल में वह स्काटलैण्ड में उतरा। आयरलैण्ड में राजा के वध ने समूची स्थिति को बदल दिया। १६४७ ई० में पार्लियामेण्ट को समर्पण करने वाले राजपक्षपातियों ने पुनः अपना सिर उठाया और आरमाण्ड ने कैथोलिकों के साथ एक संघ बनाया, उत्तर के स्काट लोग भी राजहन्ताओं के साथ कोई सम्बन्ध नहीं नखना चाहते थे। एक क्षण के लिए आयरलैण्ड एक

ऐसा संयुक्त राष्ट्र बन गया, जैसा वह इससे पहले कभी नहीं बना था। पार्लियामेण्ट की दुर्ग-रक्षक सेनाओं का एक-एक करके पतन होने लगा और अन्त में डबलिन ही बच गया। डबलिन की भी रक्षा माइकेल जोन्स के अदम्य पौरुष से ही हुई। उसने आरमाण्ड की ओर से आक्रमण करने वाली फौजों के विरुद्ध रैथमाइन्स में एक प्रबल आघात पहुँचाते हुए ही इसकी रक्षा की। राजकुमार रूपर्ट की अध्यक्षता में वही राजपक्षपाती बेड़ा किन्सेल में अपना अड्डा बनाये हुए था, जिस बेड़े ने १६४८ ई० में विद्रोह किया था। यह आशा की जाती थी कि चार्ल्स द्वितीय आयरलैण्ड में आएगा। वह वहाँ आने के लिए वास्तव में चल पड़ा था। किन्तु क्रामवेल की विजयों ने उसे आयरलैण्ड के स्थान पर स्काटलैण्ड की ओर मुड़ने को बाधित किया।

यूरोप के महाद्वीप में प्रत्येक राज्य राजा के हत्यारों के विरुद्ध था और यह अधिक गम्भीर बात थी; क्योंकि ३० वर्षीय युद्ध अब समाप्त हो चुका था, यद्यपि फ्रांस और स्पेन में युद्ध अब तक जारी था। आयरलैण्ड और स्पेन में जनता के समर्थन के साथ इंग्लिश राजदूतों की हत्या कर दी गयी थी। इस बात की वास्तविक सम्भावना थी कि यूरोप की शक्तियों में से कुछ शक्तियाँ चार्ल्स द्वितीय को अपनी गद्दी पुनः प्राप्त करने में सहायता देंगी। १६४६ ई० में यह परिस्थिति थी। १६५२ ई० तक सारी दुनिया इंग्लैण्ड के प्रति सम्मान का भाव रखने लगी और इंग्लिश लोगों की मित्रता पाने के लिए उत्सुक हो गयी। यह अन्तर नयी सरकार और इसकी सेना की शक्ति और सफलता का कारण है; किन्तु उनकी स्थिति की मूलभूत असत्यता का इलाज कोई भी पौरुष और सफलता नहीं कर सकती थी।

२. गणराज्य को सुरक्षित बनाना

आयरलैण्ड के खतरे का सबसे पहले मुकाबला किया जाना था। ३० मार्च १६४६ ई० को क्रामवेल को आयरलैण्ड में सहायक गवर्नर और प्रधान सेनापति नियुक्त किया गया। १३ अगस्त को (पहले माइकेल जोन्स को कुमुक भेजने के बाद) वह १२ हजार व्यक्तियों के साथ डबलिन में उतरा।[१] वह इस दृढ़ निश्चय के साथ आया था कि वह न केवल राष्ट्र-मण्डल के संकट का निवारण करेगा, अपितु वह १६४१ में "बहाये गये निर्दोष रुधिर का भयंकर बदला लेगा", अपने सभी समकालीन व्यक्तियों की भाँति इस रक्तपात के सम्बन्ध में उसका एक पूर्ण रूप से अतिरंजित दृष्टिकोण था। वह "भगवान् के न्याय को करने वाला सेवक" बनना चाहता था। वह पहले उत्तर की ओर द्रोघेडा के विरुद्ध मुड़ा, इस पर राज-पक्षपातियों ने हाल में अधिकार किया था और यहाँ आरमाण्ड ने अपनी सेना का सर्वोत्कृष्ट भाग लगाया था। १० दिसम्बर को इस नगर पर धावा किया गया और समूची दुर्ग-रक्षक सेना को प्रत्येक पुरोहित के साथ तलवार के घाट उतार दिया गया। इसके बाद वह दक्षिण में वैक्सफोर्ड की ओर मुड़ा। यहाँ भी उसका काम लगभग इतना ही कठोर था। दुर्ग-रक्षक

---

१. आयरिश युद्ध के लिए एटलस का पंचम संस्करण ४२ (बी) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५८ (बी) देखिये।

सेना के १५०० व्यक्तियों को तथा प्रत्येक पुरोहित को डाला गया। इस निष्ठुर कार्य का प्रभाव यह था कि इससे आतंक उत्पन्न हो गया। आरमाण्ड ने लिखा था कि जनता इतनी स्तब्ध हो गयी थी कि "मैं उन्हें अपने संरक्षण के लिए मनुष्यों की भाँति कोई कार्य करने के लिए बड़ी कठिनाई से ही प्रेरणा कर सकता हूँ।" इसके पश्चात् एक नगर के बाद दूसरे नगर ने आत्मसमर्पण कर दिया और आरमाण्ड के आदमी बड़ी संख्या में उसका साथ छोड़ने लगे। यह जादू उस समय टूट गया, जब वाटरफोर्ड के उग्र विरोध ने उसे इस बात के लिए बाधित किया कि वह इस घेरे को उठा ले (नवम्बर)। किन्तु इस बीच में आयरिश संघ के विभिन्न तत्व लड़ने लग गये थे। मन्स्टर के राजपक्षपातियों ने सन्धि कर ली। उत्तर के स्काट लोगों ने भी समर्पण किया। १६४९ ई० की समाप्ति तक लन्दनडेरी से केप क्लियर तक का समूचा समुद्रतट क्रामवेल के हाथों में आ गया। भीतर के तथा पश्चिम के भाग को अब भी पुनः जीता जाना था, वह १६५० ई० के वसन्तकाल में मन्स्टर के किले की तथा लीन्स्टर के कुछ हिस्से की पुनर्विजय में लगा रहा। इसी समय उत्तर में एक अन्य सेना ने अपनी सफलताएँ प्राप्त कीं। मई १६५० ई० में क्रामवेल को इंग्लैण्ड बुला लिया गया। आयरलैण्ड का अन्तिम वशीकरण अब उसके सहायकों पर छोड़ा जा सकता था, जिन्होंने इस कार्य को व्यवस्थित रूप से अगले दो वर्षों में पूरा किया। प्रतिरोध करने वाले अन्तिम स्थान गाल्वे ने मई १६५२ ई० में आत्मसमर्पण किया। इस प्रकार १२ वर्ष से चलने वाला और देश को वीरान बनाने वाला युद्ध समाप्त हो गया। हजारों आयरिश व्यक्ति यूरोपियन देशों की सेनाओं में नौकरी करने के लिए जाने लगे। एलिज़ाबेथ के समय की अपेक्षा अधिक मूर्खता के साथ आयरलैण्ड को वशवर्ती बनाया गया।

क्रामवेल को वापस बुलाने का कारण यह था कि चार्ल्स द्वितीय ने स्काटिश नेताओं द्वारा उसे आदेश के रूप में दी गयी शर्तों को स्वीकार कर लिया था और वे नेता इंग्लैण्ड पर अपने अधिकारों को लागू करने की तैयारी कर रहे थे। इसी समय, वे "पवित्र धर्म संघ" और समझौते का पालन करने पर आग्रह कर रहे थे। मार्च १६५० ई० में वीर माण्ट्रोस ने वास्तव में राजा को उस अपमानजनक स्थिति से बचाने का एक उग्र प्रयास किया, जिस स्थिति में राजा को रखने के लिए आर्गिल और कर्क के नेता आग्रह कर रहे थे। वह डेनिश और जर्मन वेतनभोगी सैनिकों के एक छोटे समूह के साथ ओर्कनीज टापू में उतरा था, किन्तु सदरलैण्ड में कार्बिसडेल नामक स्थान में उसकी सेना नष्ट कर दी गयी, बाद में वह स्वयं पकड़ा गया और सरकार को सौंप दिया गया। सरकार ने उसे ३८ फीट ऊँची टिकटी पर एडिनबरा की मण्डी के चौराहे पर फाँसी पर लटकाया और उसके शरीर के विभिन्न टुकड़ों को प्रदर्शन के लिए विभिन्न नगरों में भेजा (मई १६५० ई०)। यह ठीक उस समय की बात है, जब क्रामवेल आयरलैण्ड से इंग्लैण्ड वापस आया। स्काट लोग क्रामवेल के पुराने सैनिक साथी डेविड लेसली की अध्यक्षता में इंग्लैण्ड पर हमला करने की तैयारी कर रहे थे। क्या उन्हें ऐसा करने की अनुमति दी जाय अथवा इससे पहले ही स्काटलैण्ड पर एक हमला कर दिया जाय? अब भी फेयरफैक्स प्रधान सेनापति था, उसने स्काटलैण्ड पर

चढ़ाई करने के स्थान पर अपने पद से त्यागपत्र दे दिया और जून में क्रामवेल राष्ट्रमण्डल की सब सेनाओं का कैप्टन-जनरल तथा प्रधान सेनापति बन गया।

क्रामवेल ने पूर्वी समुद्रतट के उस मार्ग का अनुसरण किया, जहाँ बेड़ा उसके साथ-साथ जा सकता था। उसने २६ हजार स्काट लोगों के विरुद्ध १६ हजार पुराने अनुभवी सैनिकों की सेना का आक्रमण के लिए नेतृत्व किया।[१] ३ सितम्बर १६५० ई० को डनबर में उसने सम्भवतः अपनी उज्ज्वलतम विजय प्राप्त की। यद्यपि उसे लैसली की योजनाओं की अवहेलना पर बल देने वाले स्काटिश मन्त्रियों के हस्तक्षेप से सहायता मिली थी, तथापि जब युद्ध शुरू हुआ तो वह एक कठिन परिस्थिति में था, यदि मन्त्रियों ने तत्काल आक्रमण पर आग्रह न किया होता तो सम्भवतः क्रामवेल हरा दिया जाता। समूचे पूर्वी निम्न प्रदेश का स्वामी बनने के बाद, क्रामवेल एक शान्तिपूर्ण समझौते के लिए उत्सुक था। किन्तु स्काटिश लोग समर्पण नहीं करना चाहते थे और उनकी सेना हाइलैण्ड्स के प्रवेशद्वार स्टरलिंग के पीछे पुनः व्यूह रचना कर रही थी। समझौता करने के लिए सबसे अधिक तैयार अतिवादी कर्क पार्टी डनबर में हस्तक्षेप करने के कारण बदनाम हो चुकी थी और उनका पलड़ा भारी नहीं रहा था। अतः चार्ल्स द्वितीय अपने घर में अधिक पूर्णता के साथ स्वामी बन गया था। क्रामवेल ने स्काटिश स्थिति को बदलने के लिए फोर्थ नदी के चौड़े मुहाने के आरपार फाइफ में अपनी सेना लगा दी और फर्थ पर अधिकार कर लिया। इससे लेसली का सम्बन्ध उत्तर से कट गया, किन्तु इसने दक्षिण का रास्ता खुला छोड़ दिया और जैसा क्रामवेल ने पहले ही देख लिया था कि चार्ल्स द्वितीय ने तथा स्काट लोगों ने यह निश्चय किया कि वे इस अवसर का उपयोग इंग्लैण्ड पर हमला करने के लिए करेंगे। उन्हें यह आशा थी कि वे इंग्लैण्ड में राजा के पक्षपातियों से सहायता प्राप्त करेंगे। क्रियात्मक रूप से, उन्हें कोई सहायता नहीं मिली, क्योंकि इंग्लैण्ड पर इस समय अधिक दृढ़ता से काबू पा लिया गया था। किन्तु स्काट लोग बढ़ती हुई कठिनाई के साथ वोर्सेस्टर तक आगे बढ़ने में सफल हुए। इसका पीछा करते हुए नवीन फौजें एकत्र करने वाला क्रामवेल अब लन्दन का मार्ग इनके लिए बन्द करने में सफल हुआ, अब लगभग थके हुए और हिम्मत हारे हुए स्काटों के विरुद्ध लगभग दो और एक का अनुपात रखते हुए उसने स्काटों पर वोर्सेस्टर में दो पार्श्वों से हमला किया (३ सितम्बर १६५१ ई०), उसने उन्हें लगभग नष्ट कर दिया। इनमें से शायद ही कोई व्यक्ति अपने घर वापस पहुँचा हो। बन्दी बनाये गये व्यक्तियों में स्काटलैण्ड का आधा कुलीन वर्ग था। चार्ल्स द्वितीय को भागने में बड़ी कठिनाई हुई; सैनिक सब सड़कों की द्रुत गति से छानबीन कर रहे थे और सब बन्दरगाहों में काले बालों वाले "दो गज से भी अधिक ऊँचे मनुष्य" की गिरफ्तारी के लिए सूचनाएँ भेजी गयीं थीं। किन्तु सात सप्ताह तक भगोड़ा व्यक्ति देश में प्रत्येक प्रकार के अधम छद्मवेश में घूमता रहा। उन बीसियों आदमियों में से, जिन पर उसने विश्वास

---

१. स्काटिश युद्ध के लिए देखिये एटलस का पाँचवाँ संस्करण प्लेट ३८ (ए), तथा छठे संस्करण की प्लेट ५४ (ए)।

किया था, एक भी झूठा सिद्ध नहीं हुआ। वह अक्टूबर के अन्त में फ्रांस भाग गया। चार्ल्स द्वितीय के पलायन की रोमांचक कथा ने उस के पिता की मृत्यु के दुःखान्त नाटक के साथ मिल कर इंग्लिश जनता की कल्पना पर अस्तंगत राजतन्त्र के प्रभाव को बढ़ाने में सहायता दी।

डनबर और वोर्सेस्टर ने गणराज्य की विजय को पूर्ण बना दिया। इंग्लैण्ड और आयरलैण्ड की भाँति, अब स्काटलैण्ड सेना के सम्मुख असहाय पड़ा हुआ था। युद्ध के अन्तिम वर्षों में उसने बड़ा भयंकर कष्ट उठाया था। वह वोर्सेस्टर में नष्ट की गयी सेना के स्थान पर नयी सेना को दुबारा नहीं ला सकता था। देश के शेष भाग को जीतने के लिए जार्ज मोंक की अध्यक्षता में ६ हजार व्यक्तियों की सेना पर्याप्त थी। मई १६५२ ई० में "ठीक उसी महीने में जब गाल्वे के आत्मसमर्पण ने आयरिश युद्ध को समाप्त कर कर दिया था," प्रतिरोध करने वाले अन्तिम स्काटिश दुर्ग दुन्नोत्तर के किले ने भी आत्म-समर्पण कर दिया। दोनों जीते गये देश स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड अब उस योग्य और शक्तिशाली अल्पतन्त्र के हाथ में थे, जो इंग्लैण्ड की इच्छा के विरुद्ध इसका शासन कर रहा था।

इसी बीच में रूपर्ट को समुद्र से भगा दिया गया, अन्यत्र वर्णन किये जाने वाले,[१] डचों के साथ एक युद्ध ने यह प्रदर्शित किया कि गणराज्य स्थल की भाँति समुद्र में भी उतना ही शक्तिशाली था, ब्लेक के रूप में इसके पास एक ऐसा समुद्री योद्धा था, जो क्राम-वेल का योग्य सशस्त्र सहयोगी था। जब ये विजयें प्राप्त की जा रहा रही थीं, उस समय राष्ट्रमण्डल का प्रशासनात्मक कार्य लगभग इतनी ही क्षमता के साथ सदस्यों की एक राज्य की परिषद द्वारा किया जा रहा था। इस परिषद के सदस्यों में से ३१ व्यक्ति पार्लियामेण्ट के सदस्य थे। इसमें कोई सन्देह नहीं था कि ये मनुष्य ईमानदार और निःस्वार्थ व्यक्ति थे। एक फ्रेंच एजेन्ट ने लिखा था "वे अपने निजी मामलों में मितव्ययी हैं और सार्वजनिक मामलों के प्रति अपनी निष्ठा में बहुत उदार हैं। वे धन की विशाल राशियों का प्रशासन ईमानदारी से करते हैं, वे अच्छा पुरस्कार और कठोर दण्ड देते हैं"। उन्होंने प्रति वर्ष २० लाख पौण्ड का राजस्व एकत्र किया, यह लम्बी पार्लियामेण्ट की बैठक से पूर्व चार्ल्स के राजस्व से तीन गुना अधिक था। इसका अधिकांश भाग राजपक्षपातियों पर किये गये भारी जुर्मानों से तथा जब्त की गयी भारी जागीरों की बिक्री से प्राप्त किया गया था। किन्तु पहले की अपेक्षा प्रत्यक्ष और परोक्ष करों का भार अधिक बढ़ गया था और इन्हें अधिक मनमाने ढंग से वसूल किया जाता था। सावधानी के साथ किये जाने वाले मितव्यय के बावजूद स्थल सेना और नौ सेना को इस विशाल व्यय की आवश्यकता थी। वे इस कार्य को चलाने के लिए योग्य और निष्ठावान मनुष्य थे। इनमें एक सब से योग्य व्यक्ति सर हेनरी वेन था। एक अन्य प्रसिद्ध व्यक्ति जान मिल्टन था। यह राज्य की परिषद का

---

१. देखिए नीचे आठवां अध्याय पृ० ४९६

एक मन्त्री तथा उस समय की पुस्तिकाओं के प्रकाशन द्वारा लड़े जाने वाले सैद्धान्तिक संघर्ष में गणराज्य का प्रधान प्रतिरक्षक था।

अन्य कार्यों के अतिरिक्त, पार्लियामेण्ट ने कई महान् सुधार किये। इसने चर्च के पुनः संगठन का कार्य अपने हाथों में लिया और मुख्य रूप से एक प्यूरिटन धर्म-शास्त्री जॉन ओवेन के पथप्रदर्शन में १६५२ ई० में एक ऐसी पद्धति बनायी, जिसके अनुसार पुरोहित के पदों के सभी उम्मीदवारों की परीक्षा कुछ अंशों में सांसारिक और कुछ अंशों में धार्मिक व्यक्तियों को सदस्य रखने वाले स्थानीय आयोगों से की जाती थी। प्रेस-बिटेरियन, स्वतन्त्र बैप्टिस्ट और मृदु एंग्लिकन आदि प्रत्येक प्रकार के मत वाले व्यक्तियों को स्वतन्त्रता पूर्वक इन पदों को दिया जाता था। एक दौरा करने वाला आयोग एक स्थान से दूसरे स्थान में जाते हुए अयोग्य पुरोहितों और विद्यालय के अध्यापकों को निकालता रहता था। इसमें सन्देह नहीं कि यह कार्य बड़ी सावधानी से किया गया था, अधिकांश पेरिशों की सेवा इस युग में योग्य और ईमानदार आदमी कर रहे थे। उस समय सहिष्णुता उन सब व्यक्तियों के लिए स्वीकार की जा रही थी, जो नियमित पुरोहित पद स्वीकार नहीं कर सकते थे, बशर्ते कि वे ईसाइयत के कुछ मौलिक सिद्धान्तों को स्वीकार करते हों। इसी भावना से कानूनी पद्धति का एक सुधार आरम्भ किया गया। मैथ्यू हेल की अध्यक्षता में इक्कीस व्यक्तियों के आयोग को यह अधिकार दिया गया कि वे कानून की असुविधाओं पर तथा इन्हें दूर करने के द्रुततम उपायों पर विचार करें। उन्होंने बहुत से अच्छे विधेयकों के प्रारूप भी तैयार किये, इसमें से कुछ प्रोटेक्टोरेट में कानून बन गये और पुनः स्थापना के काल तक बने रहे। अन्य बिलों को १९वीं शताब्दी तक प्रतीक्षा करनी पड़ी।

किन्तु अधिकतम क्षमता और निष्ठा **लम्बी या दीर्घकालीन**[1] (Long Parliament) पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट अंश अथवा **रम्प**[2] (Rump) के शासन की मौलिक बुराई पर विजय

---

१. लम्बी या दीर्घकालीन पार्लियामेण्ट (Long Parliament) उस पार्लियामेण्ट को कहते हैं, जो १६४० ई० में चुनी गयी थी और १६६० ई० तक चलती रही। इस ने गृह युद्ध आरम्भ किया था और १६५३ ई० में क्रामवेल ने इसे विसर्जित किया था, १६५९ ई० में इसे दो बार बुलाया गया तथा १६६० ई० में चार्ल्स द्वितीय को राजगद्दी पर बिठाने के बाद यह समाप्त हो गयी। इस प्रकार यह पार्लियामेण्ट २० वर्ष तक चलती रही। इसे लम्बी या दीर्घकालीन पार्लियामेण्ट का विशेषण १३ अप्रैल १६४० ई० से ५ मई १६४० ई० तक की बहुत थोड़ी अवधि तक चलने वाली **अल्पकालीन पार्लियामेण्ट** की तुलना में दिया गया।

२. रम्प (Rump) सुदीर्घ पार्लियामेण्ट (Long Parliament) के उस भाग को कहते हैं, जो कर्नल प्राइड द्वारा पार्लियामेण्ट से उन सदस्यों को बाहर निकालने के बाद शेष बची थी, जो सदस्य चार्ल्स प्रथम के समर्थक थे। चूंकि यह लम्बी पार्लियामेण्ट इन सदस्यों के कारण चार्ल्स को दण्ड देने के लिए तैयार नहीं थी, अतः ६ दिसम्बर १६४८ ई० के दिन कर्नल थामस प्राइड सेना लेकर पार्लियामेण्ट भवन में घुसा, उसने इसमें चार्ल्स प्रथम का समर्थन करने वाले ४७ सदस्यों को बन्दी बना लिया,

नहीं पा सकती थी। वे लोग राष्ट्र के प्रतिनिधित्व का दावा करते थे, किन्तु वे केवल इसके एक अंश का प्रतिनिधित्व करते थे और वह अंश भी—उनकी सारी शक्ति का आधार सेना भी—इस बात से सन्तुष्ट नहीं थी कि वह एक ऐसे अपरिवर्तनशील अल्पतन्त्र को स्वीकार कर ले, जिसके पास अपने अधिकार के लिए कोई कानूनी आधार नहीं है।

३. शासन की नयी पद्धति ढूँढने का प्रयास

चार्ल्स प्रथम की मृत्यु के बाद समूचे तीन वर्षों में, शासन की समस्या के बारे में आन्दोलन होता रहा। जब आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड के वशीकरण से गणराज्य के तात्कालिक संकट दूर हो गये तो यह आन्दोलन अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया। अब अन्त में यह प्रतीत होता था कि सिद्धान्त और व्यवहार की असंगति को सुरक्षित रूप से हटाया जा सकता है, किन्तु पार्लियामेण्ट का अवशिष्ट भाग (Rump) उस शक्ति को छोड़ने में बड़ा मन्द था, जिस शक्ति का वह प्रयोग कर रहा था। इसके सदस्य उनकी आलोचना करने वाले अनेक उत्साही लोकतन्त्रवादियों की अपेक्षा यह अधिक अच्छी तरह जानते थे कि इस सिद्धान्त को व्यवहार में लाने का परिणाम अराजकता की ओर बढ़ना होगा। पार्लियामेण्ट का अवशिष्ट भाग अधिक-से-अधिक यह प्रस्ताव कर सकता था कि वर्तमान सदन को बने रहने देना चाहिए, सदस्यों का पुनर्निर्वाचन न हो कर केवल रिक्त होने वाले स्थानों की ही पूर्ति की जानी चाहिए, वर्तमान पार्लियामेण्ट ही सब चुने जाने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध निर्णय करे कि निर्वाचित व्यक्तियों में से किनको इसका सदस्य स्वीकार किया जाय और उनका यह प्रस्ताव था कि इस पद्धति को स्थायी बना दिया जाय।

सेना धैर्य खो बैठी, क्रामवेल सेना के अभिकर्ता के रूप में कार्य करते हुए, उस समय सदन में आया (२० अप्रैल १६५३ ई०) जब पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट भाग के पुनः नवीनीकरण का प्रस्ताव होने वाला था। वाद-विवाद को सुनने के बाद वह उठ खड़ा हुआ और उसने अपने सभी सदस्यों को ललकारते हुए कहा—"आप कोई पार्लियामेण्ट नहीं हैं, मैं कहता हूँ आप कोई पार्लियामेण्ट नहीं हैं। मैं आपकी बैठक को समाप्त कर दूँगा"। उसने अपनी सेना के सिपाहियों को अन्दर बुलाया, सदस्यों को बाहर निकाल दिया गया; अध्यक्ष को तथा कट्टर गणराज्यवादी एलगर्न सिडनी को शक्ति के प्रदर्शन के साथ हटाया गया। जब उसकी दृष्टि पार्लियामेण्ट की कानूनी सत्ता की प्रतीक-गदा पर पड़ी तो उसने चिल्ला कर कहा, "हम इस कम मूल्य के आभूषण या खिलौने से क्या करेंगे ?" और तब सिपाही को बुलाते हुए उसने कहा "यहाँ आओ, इसे ले जाओ"। इस प्रकार इंग्लैण्ड में कानूनी सत्ता के अन्तिम प्रतीक का भी अन्त हो गया। अब एक मात्र कोरी नग्न शक्ति राज्य की सत्ता को कायम रख रही थी।

---

९६ सदस्यों को पार्लियामेण्ट से निकाल दिया और अब पार्लियामेण्ट में केवल ८० सदस्य ही शेष रह गये, इसी को अवशिष्ट पार्लियामेण्ट या रम्प (Rump) कहते हैं।

विसर्जित सदन का स्थान किसे लेना चाहिए ? इंग्लैण्ड के शासन का नया ढांचा क्या होना चाहिए ? इसका निर्णय क्रामवेल को तथा उसके सिपाहियों को करना था, क्योंकि इंग्लैण्ड में कोई अन्य सत्ता नहीं थी। निर्वाचिक मण्डल को एक स्वतन्त्र अपील करने की बात विचारणीय नहीं थी। किन्तु प्रमुख सिपाहियों में दो प्रकार के दृष्टिकोण थे और क्रामवेल इन दोनों के बीच झूल रहा था। एक दृष्टिकोण सिपाहियों में सबसे अधिक राजनीतिज्ञ व्यक्ति लैम्बर्ट का था। इसका यह मत था कि एक पार्लियामेण्ट का निर्वाचन होना चाहिये और एक छोटी प्रशासनात्मक परिषद् होनी चाहिए, इनके एक दूसरे के प्रति अधिकारों की तथा समूची पद्धति के स्थायित्व की भी रक्षा एक लिखित संविधान द्वारा होनी चाहिए और इससे आगे कोई अपील नहीं होनी चाहिए। यह पुराने संविधान की परम्पराओं के आग्रहपूर्ण नैरन्तर्य के विरुद्ध एकमात्र संरक्षण प्रतीत होता था। दूसरे दृष्टिकोण का प्रतिनिधि एक वीर, किन्तु अनपढ़, धर्मान्ध और पाँचवें राजतन्त्र के समर्थक मनुष्यों का नेता हैरिसन था। उसका यह मत था कि असीरिया, ईरान, मेसीडोनिया और रोम के चार राजतन्त्रों का पतन हो चुका है; ईसा का पाँचवाँ राजतन्त्र अब आरम्भ होने वाला है; उसका प्रिय बाइबिल वाक्य यह था, "सन्त राज्य को लेंगे तथा इस पर अपना स्वामित्व रखेंगे"। क्रामवेल में एक ऐसी क्रियात्मक मनोवृत्ति थी, जिस कारण वह कागजी संविधानों पर विश्वास नहीं करता था। उसमें एक ऐसी रहस्यवादी भावना भी थी, जिसे सन्तों के शासन के विचार के प्रति कुछ आकर्षण था; चार्ल्स प्रथम के वध के बाद से वह असाधारण रूप से भगवान् के ऐसे निर्णयों की चर्चा करता था, जो उसे प्रत्येक विजय में दिखायी देते थे।

इसका परिणाम यह हुआ कि हैरिसन द्वारा निर्दिष्ट दिशा में एक परीक्षण किया गया। एक सौ चालीस व्यक्तियों को एक ऐसी परिषद् का सदस्य बनाने के लिए निमन्त्रित किया गया, जिसे राष्ट्रमण्डल का शासन करना था, इसमें सभी लोग प्रसिद्ध प्यूरिटन पुरुष थे, इनमें पाँच स्काटलैण्ड के और छः आयरलैण्ड के व्यक्ति भी सम्मिलित थे। यह परिषद् अपने एक सदस्य बेयरबोन के नाम से **बेयरबोन की पार्लियामेण्ट** कहलाती है। क्रामवेल ने अर्द्ध रहस्यवादी उत्साह के असाधारण भावोद्रेक में इसका स्वागत किया (४ जुलाई १६५३ ई०)। भगवान् के प्रत्यक्ष पथ प्रदर्शन से सन्तों का शासन लाया गया था। "मैंने इस जैसी वस्तु देखने की कभी आशा नहीं की थी, यह ऐसा द्वार हो सकता है कि इस से उन चीजों का यहाँ प्रवेश हो, जिन का भगवान् ने वचन दिया है और जिनके लिए भविष्यवाणी की है...वस्तुतः मैं यह सोचता हूँ कि दरवाजे पर कुछ है। हम देहली पर खड़े हैं"।

किन्तु शोक इस बात का है कि सन्त लोग अतीव व्यावहारिक शासक नहीं थे, यद्यपि वे **पंचम राजतन्त्र** के उन मनुष्यों की भाँति इतनी दूर तक नहीं जाने वाले थे, जो उनसे इंग्लैण्ड के सारे कानूनों को समाप्त करके उसके बदले में मूसा की व्यवस्था चलाना चाहते थे। उन्होंने प्रत्येक वस्तु को फौरन करना शुरू किया और प्रत्येक वस्तु में गड़बड़ पैदा कर दी। इसी बीच में **समतावादी** (Levellers) क्रामवेल की निन्दा इसलिए कर रहे थे कि उसने वास्तविक निर्वाचित पार्लियामेण्ट की बैठक को नहीं बुलाया था। क्रामवेल की

प्रकृति का व्यावहारिक पक्ष पुनः प्रबल हुआ। बेयरबोन की पार्लियामेण्ट मे भी एक नरम दल था। उन्होंने उत्साही व्यक्तियों के आ जाने से पहले ही एक आरम्भिक बैठक की (१२ दिसम्बर) और जल्दी से यह निश्चय किया कि इस पार्लियामेण्ट की अगली बैठक राष्ट्रमण्डल की भलाई के लिए नहीं होगी, अतः यह आवश्यक है कि वे उन शक्तियों को लार्ड जनरल क्रामवेल को सौंप दें, जो शक्तियाँ उन्होंने उससे प्राप्त की है। क्रामवेल ने बड़ी शान्ति के साथ पार्लियामेण्ट के इस त्यागपत्र को स्वीकार किया। यह परीक्षण केवल पांच महीने चार दिन चला। किन्तु एक बार पुनः तलवार की शक्ति के सिवाय किसी अन्य शक्ति की सत्ता नहीं रही।

समाधान का अगला प्रयास लैम्बर्ट की एक लिखित और अपरिवर्तनीय संविधान की योजना थी, जिसके अनुसार पार्लियामेण्ट का निर्वाचन करना सुरक्षित हो सके। लैम्बर्ट ने "शासन के अधिकारपत्र" (Instrument of Government) के नाम से एक संविधान का प्रस्ताव तैयार किया। क्रामवेल ने इसे स्वीकार कर लिया। यह सविधान निर्माण की बुरी रचना नहीं थी। किन्तु एक संविधान को बनाना कठिन नहीं है; कठिनाई इस बात की है कि इसे राष्ट्र के जीवन का अंग कैसे बनाया जाय। इस लेखपत्र की विलक्षण विशेषता यह थी कि यह इंग्लैण्ड के पुराने संविधान के आदर्श पर बनाया गया था। इसमे कुछ बात राजतन्त्रात्मक थी, क्रामवेल सदैव कहा करता था कि ऐसा होना आवश्यक है; अतः इसमें कार्यपालिका के अध्यक्ष के रूप मे एक संरक्षक (Protector) था। यह लगभग वही कर्त्तव्य पूरे करता था जो पहले राजा के कर्त्तव्य होते थे। उसकी सहायता प्रिवीकौंसिल से सादृश्य रखने वाली एक राजपरिषद् को करनी थी, प्रोटेक्टर के पास एक ऐसा निश्चित वार्षिक राजस्व था, जिसमें पार्लियामेण्ट हस्तक्षेप नहीं कर सकती थी, यह सरकार के सब सामान्य व्ययों को पूरा कर सकने के लिए पर्याप्त था, सिद्धान्त रूप से चार्ल्स प्रथम की यही स्थिति थी। पार्लियामेण्ट की बैठक (जैसा कि लम्बी पार्लियामेण्ट ने निश्चित किया था) तीन वर्ष में एक बार होनी थी, केवल पाँच महीने बाद इसे भंग किया जा सकता था। अतः लम्बी पार्लियामेण्ट जैसा चाहती थी, पार्लियामेण्ट द्वारा कार्यपालिका पर वैसा कोई स्थायी नियन्त्रण नहीं था। इसके अतिरिक्त पार्लियामेण्ट के अधिकार सीमित थे; इसे उन कानूनों को पास करने से रोक दिया गया था, जो कानून "संविधान" से टकराते हों। यह ठीक वही बात थी, जिसके बारे में चार्ल्स ने यह शिकायत की थी कि उसकी पार्लियामेण्ट वैसा करने पर बल दे रही थी। पार्लियामेण्ट की बैठक से पहले प्रोटेक्टर को अध्यादेश जारी करने का अधिकार था, जैसा स्टीवर्ट राजा घोषणा प्रसारित करके किया करते थे। अन्त में, एक संरक्षण के तौर पर मताधिकार को परिवर्तित किया गया; जिलों में केवल दो सौ पौण्ड के मूल्य की सम्पत्ति रखने वाले व्यक्ति ही वोट दे सकते थे। यह समतावादियों द्वारा वाञ्छित पद्धति से बहुत दूर की बात थी।

दिसम्बर १६५३ ई० में क्रामवेल को एक गम्भीर विधि के साथ प्रोटेक्टर के पद पर प्रतिष्ठित किया गया। उस समय सैनिक शासन की समाप्ति को प्रदर्शित करने के लिए

उसने एक काला कोट पहना हुआ था। पार्लियामेण्ट की बैठक सितम्बर १६५४ ई० तक नहीं हुई, इस बीच में क्रामवेल ने अध्यादेश बनाने की अपनी शक्ति का प्रयोग खुले रूप से किया। उसकी घरेलू नीति के कुछ सब से अधिक विशिष्ट अंश पार्लियामेण्ट की सहमति को लिये बिना ही पूरे किये गये, किन्तु जब पार्लियामेण्ट की बैठक हुई तो प्रोटेक्टर ने उसे चार्ल्स प्रथम की भाँति, उपद्रव करने वाला पाया, क्योंकि निर्वाचित सदस्य यह अनुभव करते थे कि निर्वाचन के तथ्य के कारण उनके पीछे उससे कहीं अधिक उत्कृष्ट सत्ता है, जिसके आधार पर शासन का अधिकारपत्र टिका हुआ है, वे इसकी शर्तों के संशोधन पर आग्रह कर रहे थे, क्योंकि अफसरों का एक गुट सदा के लिए जनता के प्रतिनिधियों के हाथ क्यों बाँध दे ? सौ के लगभग सदस्यों को इसलिए निकाल दिया गया, क्योंकि उन्होने इस पद्धति की मुख्य बातों में परिवर्तन न करने के लिए वचन देने से इन्कार किया। चार्ल्स प्रथम इतनी दूर तक कभी नहीं गया था। किन्तु जो बचे रहे, वे यह विवाद करते रहे और विशेष रूप से उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि सेना का आकार घटा दिया जाय। शासन के अधिकारपत्र द्वारा अनुमति दिये गये सब से पहले दिन—एक महीने में चार सप्ताह की गणना करते हुए—प्रोटेक्टर ने उतनी ही उत्कण्ठा से अपनी पार्लियमेण्ट से छुट्टी पायी, जैसे कभी चार्ल्स प्रथम ने पायी थी।

वस्तुतः उसे विद्रोह की कई शृंखलाओं के खतरे का सामना करना था। ये इस साक्षी से प्रोत्साहित हुए थे कि विजेताओं में फूट थी। स्काट लोगों ने, कैवेलियर अश्वारोहियों (Cavaliers) ने, समतावादियों (Levellers) तथा पंचम राजतन्त्र के समर्थकों (Fifth Monarchymen)[1] ने विद्रोह किया था। चार्ल्स प्रथम को अपने वैयक्तिक शासन के चरम उत्कर्ष के काल में भी शासन के प्रति ऐसे खतरे कभी नहीं प्रतीत हुए, यद्यपि उसके पास देश को डराने के लिए कोई सेना नहीं थी। ये सभी विद्रोह स्काटलैण्ड के विद्रोह के अतिरिक्त और इंग्लैण्ड में कैवेलियर के छोटे विस्फोट के अतिरिक्त, आरम्भ मे ही दबा दिये गये, ये दोनों विद्रोह भी आसानी से दबाये गये। किन्तु उन्होने सैनिक शासन के प्रसार के लिए ऐसा बहाना प्रदान किया, जिसके कारण किसी अन्य कार्य की अपेक्षा प्रोटेक्टर की अधिक बदनामी हुई। इंग्लैण्ड दस जिलों में बाँटा गया। इनमें के प्रत्येक एक मेजर जनरल के चार्ज में रखा गया और उसे पुलिस की जाँच के विस्तृत अधिकार तथा सार्वजनिक नैतिकता से सम्बन्ध रखने वाले कानूनों को लागू करने के लिए निर्देश दिये गये। इन मेजर जनरलों ने स्थानीय स्वशासन की उस समूची पद्धति की बड़ी मात्रा में

---

१. **पंचम राजतन्त्र पक्षपाती** (Fifth monararchymen) उन व्यक्तियों के उग्र एवं कट्टर धार्मिक सम्प्रदाय को कहते हैं, जो १६५४ ई० से १६६० ई० तक यह विश्वास रखते थे कि अब भूमण्डल पर दूसरी बार ईसा मसीह का अवतरण होने वाला है और वे पाँचवाँ सार्वभौम राजतन्त्र स्थापित करेंगे। इससे पहले चार सार्वभौम राजतन्त्र (Universal Monarchies) असीरियन, ईरानी, मैसीडोनियन तथा रोमन थे।

अवहेलना की, जिस पद्धति में अब तक कोई हस्तक्षेप नहीं हुआ था। उनके पास सैनिक फौज थी और उसका व्यय अत्यधिक पीड़ित राजपक्षपातियों पर लगाये गये दस प्रतिशत के आय कर से दिया जाता था। इन मेजर जनरलों से इंग्लैण्ड को निरंकुश सैनिक शासन का ऐसा आस्वादन करना पड़ा कि वह इसे एक लम्बे समय तक नहीं भूल सका। उसने स्थायी सेना के विचारमात्र से घृणा करना सीख लिया।

इन कष्टों को बढ़ाने के लिए, वकील क्रामवेल के अध्यादेशों की वैधता में सन्देह प्रकट करने लगे, जैसे एक बार सर एडवर्ड कोक ने विशेषाधिकार न्यायालयों की वैधता के बारे में सन्देह प्रकट किया था। कोनी नामक एक व्यापारी ने, थोपे जाने वाले करों के विरोध के कारण प्रसिद्धि पाने वाले एक समय के लोकप्रिय वीर बेट का अनुसरण करते हुए पार्लियामेण्ट द्वारा न लगाये गये सीमाशुल्कों को अदा करने से इन्कार किया। जेम्स अथवा चार्ल्स की अपेक्षा अधिक अन्यायपूर्ण रीति से, किन्तु ठीक उन्हीं के ढंग से क्रामवेल ने हठी न्यायाधीशों के स्थान पर ऐसे व्यक्तियों को न्यायाधीश बनाया जो उससे सहमत थे, उसने कोनी के वकीलों को टावर में बन्द करा दिया। जो आन्दोलन इस बात से आरम्भ हुआ था कि कोरी शक्ति पर कानून की प्रभुसत्ता के दावे को स्थापित किया जाय, कर लगाने की व्यवस्था पर पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण हो, स्वेच्छाचारपूर्ण रीति से बन्दी बनाने का अन्याय दूर हो और जजों को स्वाधीनता होनी चाहिये, वह आन्दोलन अब इस हद तक पहुँच गया। क्रामवेल ने एक बार एक कट्टर गणराज्यवादी लडलो से पूछा था, "आप क्या बात चाहते हैं ?" लडलो ने कहा था, "हम वह चाहते हैं, जिसके लिए हम लड़े थे, कि राष्ट्र का शासन इसकी अपनी सहमति से किया जाना चाहिये"। प्रोटेक्टर ने शान्त भाव से उत्तर दिया, "किसी भी अन्य व्यक्ति के समान मैं भी सहमति से शासन करने का पक्षपाती हूँ, किन्तु वह सहमति हम कहाँ पायेंगे ?"

इसी बात की कठिनाई थी। स्वतन्त्रता के लिए यह पर्याप्त नहीं है कि आप उन वस्तुओं की इच्छा रखें, जिन्हें आप अच्छा समझते हैं और उनके लिए शक्ति का प्रयोग करें। सहमति अवश्य होनी चाहिये और यह सहमति न सोचने वाले व्यक्तियों की विशाल संख्या द्वारा उस समय आसानी से नहीं दी जाती, जब एक बार वे नियम और पद्धतियाँ उलट जायें, जिनके प्रति वे अभ्यस्त होते हैं। अब भी उस सहमति को पाने के लिए—जिसके बिना अपनी सारी क्षमता होते हुए भी उसका शासन निरर्थक था—क्रामवेल ने १६५६ ई० में, शासन के अधिकारपत्र के अनुसार एक अन्य पार्लियामेण्ट बुलायी। उसे यह विश्वास था कि मेजर जनरल इसे अनुकूल सदस्यों से भर देंगे। जेम्स प्रथम के समय में इस दिशा में तुच्छ प्रयास कितने तूफान पैदा करते। किन्तु मेजर जनरल बिलकुल विफल रहे। अनेक विरोधी सदस्य चुने गये; क्रामवेल ने इसमें से एक सौ सदस्यों को सामान्य रूप से निष्कासित कर दिया। फिर भी जब पार्लियामेण्ट की बैठक हुई तो मेजर जनरलों पर उग्र आक्रमण किया गया और कैवेलियरों पर दस प्रतिशत के कर की निन्दा अन्यायपूर्ण विश्वासघात के रूप में की गयी।

पार्लियामेण्ट की भावनायें किधर जा रही थीं, इसका पता उस प्रस्ताव के पेश करने से लगता है, जिसमें क्रामवेल से राजमुकुट स्वीकार करने की प्रार्थना की गयी थी। इस सावधानी से चुने गये प्यूरिटन सदस्यों का बहुमत रखने वाले सदन में भी यद्यपि स्टीवर्ट वंश वाले राजाओं को वापस लाने की वैसी इच्छा नहीं थी, जैसी पार्लियामेण्ट के बाहर जनता में थी और क्रामवेल के प्रति वैसा वैयक्तिक विद्वेष नहीं था, जैसा उसके प्राण लेने के लिए षड्-यन्त्रों की एक पूरी शृंखला को उत्पन्न कर रहा था, तथापि एक ऐसी इच्छा थी जो पुरानी पद्धतियों की ओर, ज्ञात कानूनों की ओर तथा सुगमतापूर्वक समझी जाने वाली सत्ता की ओर वापस लौट जाना चाहती थी। गणराज्यवादी विरोध के बावजूद संविधान के संशोधन के लिए तथा राजतन्त्र के पुनरुज्जीवन के लिए एक विधेयक "विनम्र प्रार्थना और परामर्श" के नाम से एक के विरुद्ध दो वोटों से पास किया गया (मार्च १६५७ ई०)। क्रामवेल इस से प्रभावित हुआ। यहाँ सहमति के किसी प्रकार की सम्भावना थी। उसने अपने अफसरों को कहा "अब समझौता करने का तथा राष्ट्र को इतनी अस्वीकरणीय स्वेच्छाचारपूर्ण कार्य-वाहियों को अलग रखने का समय है।" किन्तु सेना का विरोध बहुत अधिक प्रबल था। क्रामवेल ने अनिच्छा के साथ राजा की पदवी ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। यह अनिच्छा किसी वैयक्तिक महत्त्वाकांक्षा का परिणाम नहीं थी, किन्तु समझौते और सहमति के लिए इच्छा के कारण तथा सामान्य परिस्थितियों की ओर लौट जाने की इच्छा के कारण थी। किन्तु वह अपने द्वारा मनोनीत की जाने वाली लार्ड सभा की स्थापना के लिए तैयार हो गया, यह अन्य पहलुओं में पुरानी पद्धति के यथासम्भव अधिक निकट था। एक बार पुनः उसे प्रोटेक्टर के पद पर प्रतिष्ठित किया गया (जून १६५७ ई०)। इस बार उसने बैंगनी, मखमली और समूर की पोशाक धारण की और पुराने जमाने के राज्य की घोषणा करने वाले अग्रदूतों ने अपने बिना आस्तीन के जामे में पुरानी पद्धति से तुरहियों की आवाज के साथ उसके राज्याभिषेक की घोषणा की। अन्त में उसने अपनी शक्ति के लिए एक संवैधानिक आधार प्राप्त कर लिया; वह सेना के आदेश पर नहीं, किन्तु पार्लियामेण्ट के चुनाव पर आश्रित था।

किन्तु बड़े दुःख की बात यह थी कि नया संविधान भी पुराने संविधान की भाँति अक्रियात्मक था। अब सदस्यों का निष्कासन अधिक देर तक सम्भव नहीं था, नये संविधान ने चार्ल्स प्रथम की पार्लियामेण्टों की भाँति इसे अपनी सदस्यता पर नियन्त्रण प्रदान किया था। निष्कासित सदस्य लौट आये और क्रामवेल के अपने समर्थकों की संख्या इनमें से बहुतों के नये द्वितीय सदन में नियुक्त हो जाने से कम हो गयी। सदन ने नये संविधान पर पुनः विचार करने पर आग्रह किया; इसे ऐसा क्यों नहीं करना चाहिये था? इसने नये द्वितीय सदन के साथ संघर्ष किया; क्या ऐसी संस्था चिरकाल से अनावश्यक घोषित नहीं की जा चुकी थी? यहाँ इसे सेना का महत्वपूर्ण समर्थन प्राप्त था। इस प्रकार समझौते को भंग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती थी। याचिका-अधिकार (Petition of Right) वाली पार्लियामेण्ट द्वारा राजा की सभा को चुनौती दिये जाने पर जिस प्रकार चार्ल्स उसे

डाँटने आया था, वैसे ही क्रामवेल सदन में आया, उसने कामन्स सभा को डाँटा फटकारा और पार्लियामेण्ट के भंग होने की घोषणा की (फरवरी १६५८ ई०)। इसके बाद वह पुनः पार्लियामेण्ट से कभी नहीं मिला। वह सहमति को प्राप्त करने में विफल रहा, अब अपने जीवन के शेष बचे हुए कुछ महीनों में उसे यह अवश्य ज्ञान हो गया कि उसने जिस बात के लिए प्रयत्न किया था, उसमें वह विफल हुआ है।

हमने यहाँ विशेष रूप से एक अत्यधिक कार्यक्षम शासन के उस सार्वजनिक समर्थन को प्राप्त करने की अविरत विफलता का वर्णन किया है, जिसके विना इसका सत्ता इसकी समूची सैनिक शक्ति के होते हुए भी सम्भव नहीं थी, क्योंकि यह वस्तुतः राष्ट्रमण्डल के इतिहास का सब से अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू है। इसने स्थायी महत्त्व का एक पाठ पढ़ाया। वह पाठ यह था कि एक समुदाय जब स्वशासन के स्वभाव को एक बार प्राप्त कर लेता है तो कोई भी क्षमता, यहाँ तक कि प्रबोध की उच्चतम मात्रा भी स्थायी सफलता नहीं प्राप्त कर सकती, यदि यह राष्ट्र की इच्छा और भावना के प्रतिकूल जाती है और यदि यह अपने लिये 'सहमति' को नहीं प्राप्त करती। नैपोलियन की स्थिति अनेक अंशों में क्रामवेल के समान थी। उसने क्रामवेल की अपेक्षा भी अधिक स्वेच्छाचारपूर्ण पद्धति के लिए फ्रांस की सहमति प्राप्त की। किन्तु यह केवल इस कारण प्राप्त की कि फ्रेंच जनता ने उस स्वशासन की आदत को नहीं प्राप्त किया था, जो लम्बे अभ्यास के कारण इंग्लिश लोगों में जड़ जमा चुकी थी। चूँकि इसमें इस आवश्यक आधार का अभाव था, अतः गणराज्य के और प्रोटेक्टर के सभी सर्वोत्तम कार्य अस्थायी थे, इन कार्यों को उन्हें पुनः करना पड़ा। इनका केवल एक अंश ही स्थायी था और वह बुरा अंश था। इस अंश ने नयी कटुता को उत्पन्न किया अथवा पुरानी कटुता को बढ़ाया।

४. गणराज्य और प्रोटेक्टोरेट की उपलब्धियाँ

फिर भी, कुछ पहलुओं में, इस युग का कार्य विलक्षण रूप से प्रबोधपूर्ण था और अपने युग से बहुत आगे बढ़ा हुआ था। दो प्रकार से इसने स्वतन्त्रता के विकास में बड़ा योगदान दिया। मुद्रण पर प्रतिबन्ध को पहले न केवल इंग्लैण्ड में, अपितु लगभग सभी देशों में मुद्रण कला के आविष्कार के समय से ही सरकार का एक आवश्यक अधिकार समझा जाता था, अब यह प्रतिबन्ध उस समय टूट गया जब कि इसे लागू करने वाले विशेषाधिकार न्यायालय १६४१ ई० में समाप्त कर दिये गये, इसे कभी पूर्ण रूप से पुनः नहीं स्थापित किया जा सका। इस समूचे युग में प्रायः अत्यधिक योग्य राजनीतिक लेखन की अविरत धारा बहती रही, इसने समूचे राष्ट्र में राजनीतिक चिन्तन को प्रोत्साहित करने में असीम योगदान दिया, यह अधिक मात्रा में इस युग को विशिष्ट बनाने वाले विचारों और सिद्धान्तों के शीघ्र विकास के लिए उत्तरदायी है। मिल्टन की उदात्त पुस्तिकाएँ[1] ऐसी क्रियाशीलता की ही उपज हैं, ये अब भी पढ़ी जाती हैं, किन्तु मिल्टन अनेक व्यक्तियों में

१. विशेष रूप से Areopagitica स्वतन्त्र प्रेस के समर्थन के लिए एक उदात्त युक्ति वाली पुस्तिका है।

से, अनेक लेखकों में से केवल एक ही लेखक था। अकेले जान लिलवर्न ने लगभग एक सौ पुस्तकें लिखी थीं। इन्होंने तथा उसके सम्प्रदाय की अन्य रचनाओं ने १८वीं शताब्दी की क्रान्तिकारी विचार धारा को पहले ही प्रतिपादित किया। राजनीतिक समाचारपत्रों के आविभाव का श्रेय इसी युग को है। यह बड़ा कठिन है कि विश्व में किसी भी अन्य देश की अपेक्षा राजनीतिक दृष्टि से पहले से ही सब से अधिक क्रियाशील राष्ट्र के मन पर इस की महत्ता का अतिरंजित चित्रण किया जाये। यद्यपि राजतन्त्र की पुनः स्थापना (Restoration) के युग में पुराने प्रतिबन्ध पुनः स्थापित हो गये, किन्तु मिल्टन ने जिस स्वतन्त्र प्रेस की इतनी उदात्त रीति से वकालत की थी, वह इंग्लिश लोगों के मनों में ऐसी आवश्यक वस्तु बन गयी कि इस पर लगाये जाने वाले प्रतिबन्ध निरुपयोगी थे अथवा वे एक पीढ़ी से अधिक नहीं बने रहे।

गणराज्य और प्रोटेक्टोरेट-दोनों ने धार्मिक सहिष्णुता की दिशा में एक वास्तविक प्रगति की। क्रामवेल किसी अन्य उद्देश्य की अपेक्षा इस उद्देश्य की अधिक परवाह करता था और मिल्टन ने इस विषय में गद्य और पद्य में अपनी उदात्ततम रचनाएँ लिखी हैं। यह सत्य है कि एंग्लिकन तथा रोमन कैथोलिक मतों को धार्मिक स्वतन्त्रता के पूरे लाभों से इस आधार पर वंचित किया गया था कि वे राजनीतिक दृष्टि से खतरनाक हैं। किन्तु अनेक एंग्लिकन लोगों को आजीविका बनाये रखने की तथा प्रार्थना पुस्तकों के कुछ अंशों के उपयोग की अनुमति दी गयी, अनेक छोटे धर्म सम्मेलन निजी घरों में होते थे और सरकार इन्हें किसी तरह से परेशान नहीं करती थी। लन्दन में भी केवल उस समय को छोड़ कर जब राजपक्षपाती षड्यन्त्र होते थे, अन्य समयों में एंग्लिकन उपासना पद्धतियों के और कर्मकाण्ड के प्रयोग की उपेक्षा की जाती थी। रोमन कैथोलिकों को भी पहले की अपेक्षा कम सताया जाता था, फ्रेंच सरकार को लिखे गये एक पत्र में क्रामवेल न्यायोचित रीति से यह दावा कर सका कि उसने उनके लिए परिस्थिति को सुगम बना दिया है। वह इस दिशा में बहुत आगे चला जाता, किन्तु लोकमत बहुत अधिक विरोधी था। यहूदियों का तथा क्वेकरों का दमन पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट भाग ने किया था, इनके प्रति उसने एक अनूठी कृपा प्रदर्शित की। एडवर्ड प्रथम के समय से निर्वासित किये गये यहूदियों की इंग्लैण्ड में वापसी प्रोटेक्टोरेट के समय में हुई। "शासन के अधिकार पत्र" तथा "विनम्र प्रार्थना और परामर्श"—दोनों ने एक संशोधित सहिष्णुता को अपनी पद्धतियों का एक मौलिक सिद्धान्त बनाया, यह बात महत्वपूर्ण थी कि इस विचार को सार्वजनिक रूप से स्वीकार किया गया, प्रोटेक्टर इस विषय में कानूनों की अपेक्षा अधिक उदार था। किन्तु सम्भवतः धार्मिक स्वतन्त्रता के विकास में इस युग का सबसे बड़ा अंशदान केवल यही तथ्य था कि इस समय संगठित सम्प्रदायों की उत्पत्ति हुई। लोकमत पूर्ण सहिष्णुता के विचार को स्वीकार करने में मन्द था। कोई भी सरकार लोकमत से आगे बहुत दूर तक नहीं जा सकती थी, अगले युग में एक महान् प्रत्यावर्तन हुआ। फिर भी अगले युग में सम्प्रदायों की सत्ता की उपेक्षा असम्भव थी। उन पर अतीव गम्भीर पाबन्दियाँ लगी रह सकती थीं, किन्तु वे समुदाय के

सदस्य बने रहे और उन्हें कुचला नही जा सका। इसके बाद से एक राष्ट्रीय चर्च मे आचरण और विश्वास की बलपूर्वक स्थापित की जाने वाली एकरूपता का आदर्श असम्भव हो गया, अपने आप में इस तथ्य ने सहिष्णुता की एक वास्तविक परिपाटी के क्रमिक विकास को सुरक्षित बना दिया।

इस युग की उपलब्धियों में, विशेषत: प्रोटेक्टोरेट के समय में एक महत्वपूर्ण बात इग्लिश कानून की प्रक्रिया के सुधार का प्रयास था। इस प्रक्रिया को पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट भाग ने आरम्भ किया था। क्रामवेल ने चान्सरी सरीखे न्यायालय की दुष्कर प्रक्रिया में अनेक महत्वपूर्ण सुधार किये और इस बात का प्रयत्न किया कि इंग्लिश फौजदारी कानून को कलंकित करने वाली पैशाचिक कठोरताओं से मुक्ति पा ली जाय। उसने पार्लियामेण्ट को कहा था "छोटी बातों के लिए मनुष्यों को प्राण गँवाते हुए देखना एक ऐसी वस्तु है जिसको भगवान् ध्यान में रखेगा और मैं यह चाहता हूँ कि यह कलंक राष्ट्र पर एक भी अधिक दिन तक न लगा रहे, जब कि आपके पास इसका इलाज करने का अवसर हो।" किन्तु उस समय उन वकीलों के प्रतिरोध के कारण क्रामवेल के सुधारों में बड़ी बाधा पड़ी, जो वकील उसके अध्यादेशों को स्वीकार करने में कठिनाई डाल देते थे। ये सब अध्यादेश एक कानूनी सत्ता द्वारा न बनाये जाने के कारण पुन: स्थापना के काल में समाप्त हो गये और उन्नीसवी शताब्दी में ही इन्हें क्रियात्मक रूप दिया गया।

गणराज्य की सबसे अधिक उल्लेखनीय राजनीतिक उपलब्धि इंग्लैण्ड के साथ, एक ही राज्य में आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड का पूर्ण एकीकरण था। स्काटिश और आयरिश सदस्य प्रोटेक्टोरेट की प्रत्येक पार्लियामेण्ट में बेयरबोन की पार्लियामेण्ट तक में बैठते रहे और दोनों देशों की धार्मिक पद्धति और कानूनी पद्धति का इंग्लैण्ड की इन पद्धतियो के साथ घनिष्ठ सात्म्यीकरण हुआ। किन्तु यह एकीकरण शान्ति द्वारा स्थापित किया गया था, न कि सहमति द्वारा। इस तथ्य ने गणराज्य की अवाप्तियों को प्रभावहीन कर दिया और इस एकीकरण (Union) को भी नष्ट कर दिया। पुन: स्थापना के समय यह समाप्त हो गया।

इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि स्काटलैण्ड में न्याय को उत्तम एवं सुदृढ़ रीति से प्रशासित किया गया। वहाँ ऐसी व्यवस्था रखी गयी जैसी स्काटलैण्ड में इससे पहले कभी नहीं थी। जंगली हाईलैण्ड्स के प्रदेश को दुर्गरक्षक सेनाओं द्वारा वश में लाया गया। इंग्लैण्ड के साथ व्यापार की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। इससे इस देश ने नि:सन्देह लाभ उठाया। स्काटिश ऐतिहासिक बर्नेट ने लिखा था कि "हम स्वत्वापहरण के इन आठ वर्षों को सदैव महान् शान्ति और समृद्धि का समय मानते हैं"। यद्यपि टैक्सों का बोझ अन्यायपूर्ण रीति से नहीं बँटा हुआ था, तथापि वह बहुत अधिक था और सबसे बढ़ कर यह बात थी कि प्रत्येक स्काट यह अनुभव करता था कि ये वरदान एक विदेशी विजेता की भेंट हैं और वह इनके लिए कोई कृतज्ञता नहीं अनुभव करता था। स्काटलैण्ड में सभी परिवर्तन राजतन्त्र की पुन: स्थापना के समय लुप्त हो गये। यहाँ पुन: उत्तम कार्य निष्फल हुआ, क्योकि यह शक्ति पर आधारित था।

यदि स्काटलैण्ड के असन्तोष के कारण थे तो आयरलैण्ड में इन वर्षों की नीति से कहीं अधिक गम्भीर असन्तोष उत्पन्न हुए। आयरिश लोगों के शापों में सब से कटु "क्रामवेल का शाप" बन गया। फिर भी, दुःखपूर्ण होते हुए भी, आयरलैण्ड ही क्रामवेल के विविध कार्यकलापों का ऐसा केन्द्र है, जहाँ उसके कार्य ने एक स्थायी और अमिट प्रभाव छोड़ा है। यह बात इसलिए है कि उसकी नीति उस समय की दुर्भाग्यपूर्ण शत्रुताओं को प्रतिबिम्बित कर रही थी और उसने कठोर तर्कशक्ति के साथ इन्हें क्रियात्मक रूप प्रदान किया। अपने सभी समकालीन व्यक्तियों की भाँति, क्रामवेल आयरलैण्ड को एक भगिनी-राष्ट्र नहीं, अपितु इंग्लैण्ड की एक सम्पत्ति समझता था और केवल यहीं धार्मिक सहिष्णुता के समर्थक ने अपनी नीति को धार्मिक विद्वेष के विष से शासित होने दिया। उसका लक्ष्य देश को धार्मिक इंग्लिश व्यक्तियों से भरते हुए आयरलैण्ड को पूर्ण रूप से इंग्लिश बनाना था, इस देश की पुनर्विजय ऐसी पूर्ण थी कि यह उसके हाथों में अभीष्ट ढांचा बनाये जाने के लिए पड़ा हुआ था और ऐसा प्रतीत होता था कि इसने उसे अपने उद्देश्य को पूरा करने का अवसर प्रदान किया हो। यह कार्य आयरिश कैथोलिकों की समूची भूसम्पत्ति की पूरी जब्ती को न्यायोचित ठहराते हुए तथा एलिजाबेथ अथवा जेम्स प्रथम अथवा वेण्टवर्थ द्वारा कभी भी सोची गयी योजना से कहीं अधिक उग्र उपनिवेशीकरण की योजना को सम्भव बना कर किया जा सकता था।

क्रामवेल ने समूची कैथोलिक जनसंख्या कनाट में लाने का प्रयत्न किया। वह इस प्रान्त में ही आयरिश लोगों के भूमि पर स्वामित्व को सीमित करने में लगभग सफल हो गया। आयरलैण्ड की जमीन के दो तिहाई भाग के स्वामी बदल गये और यह प्रक्रिया उस हद तक की गयी, जहाँ तक अप्रतिरोध्य शक्ति इसे प्राप्त कर सकती है। बड़ी कठोरता-पूर्वक क्रियान्वित की गयी इस प्रक्रिया द्वारा आयरिश लोग उस भूमि पर लकड़ी काटने वाले और पानी भरने वाले बना दिये गये, जिस भूमि पर उनके पूर्वजों का स्वामित्व था। किन्तु आयरिश आबादी को बलपूर्वक निकाल कर बाहर नहीं फेंका जा सकता था। वे अब भी देश के सभी भागों में दूसरे व्यक्तियों की जमीनों पर मजदूर और असामी बने रहे। एक ही पीढ़ी में नये बसने वाले व्यक्तियों ने—जिनमें अनेक क्रामवेल के सिपाही थे—"सब प्रतिबन्धों के बावजूद" आयरिश स्त्रियों से विवाह किये और ऐसे बच्चे पैदा किये, जो अल्स्टर के अतिरिक्त सर्वत्र "आयरिश लोगों से भी अधिक आयरिश" तथा अपने पड़ोसियों की भाँति कैथोलिक हो गये। पहले युग के छुटपुट और अप्रभावशाली धार्मिक अत्याचार के स्थान पर, व्यवस्थित रीति से पुरोहितों का शिकार किया जाना आरम्भ हुआ, यद्यपि सांसारिक व्यक्तियों को कैथोलिक होने के लिए दण्ड देने का अथवा प्रोटेस्टेण्ट प्रार्थना-पद्धतियों में सम्मिलित होने के लिए जबर्दस्ती करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। क्रामवेल धर्मप्रचारकों के साहसिक कार्यों से और उपदेशों से बड़ी आशा रखता था। उसने नवीन उपदेशक भेजने के लिए न्यू इंग्लैण्ड से अपील की तथा बहुत से प्रचारक आयरलैण्ड

भेजे। उसकी आशापूर्ण रूप से व्यर्थ थी। आयरलैण्ड कट्टर कैथोलिक बना रहा, इसका एक अधिक बड़ा कारण यह था कि कैथोलिक धर्म राष्ट्रीयता का प्रतीक बन गया था।

स्काटलैण्ड की भाँति आयरलैण्ड ने क्रामवेल के शासन में इंग्लैण्ड के साथ व्यापार की पूर्ण स्वतन्त्रता के लाभ का उपभोग किया, इससे फायदा उठाया, उसने एक योग्य और सस्ते न्याय के प्रशासन का वास्तविक लाभ उठाया। किन्तु ये वरदान उस अमिट अपराध की तुलना में कुछ भी नहीं थे, जिसने एक समूचे देश की परम्पराओं को और रिवाजों को नष्ट करने का प्रयत्न किया और यह कल्पना करने की भारी भूल की कि स्मृतियाँ और कल्पनाएँ रखने वाले व्यक्तियों के किसी राष्ट्र के पास क्रामवेल के शब्दों में "एक कोरे कागज" जैसा व्यवहार किया जा सकता है, जिस कागज पर स्वामी का हाथ जो चाहे वह लिख सकता है। आयरलैण्ड में क्रामवेल की नीति ने असाधारण मात्रा में कटुता की उस विरासत को जन्म दिया, जिसने आयरिश समस्या को लगभग असाध्य बना दिया है। यहाँ पुनः किसी अन्य स्थान की अपेक्षा अधिक मात्रा में यह सिद्ध हुआ कि शक्ति कोई इलाज नहीं है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Trevelyan's and **Montague's** books, already referred to; **Firth,** Life of Cromwell; **Carlyle,** Letters and Speeches of Cromwell; **Gardiner,** Cromwell's Place in History, and History of the Commonwealth and Protectorate, with continuation by **Firth**; **Masson,** Life of Milton; **Ranke**, History of England principally in the Seventeenth Century, **Davies,** Early Stuarts; **Woodhouse,** Puritanism and Liberty; **Brunton** and **Pennington**, Members of the Long Parliament; **Clark,** Seventeenth Century; **James,** Social Policy during the Puritan Revolution; **Schenk,** Concern for Social Justice in the Puritan Revolution; **Holdsworth,** History of English Law; **Kier,** Constitutional History of Modern Britain. For the constitutional devices of the time see **Jenks,** Constitutional Experiments of the Commonwealth; **Gardiner,** Constitutional Documents of the Puritan Revolution gives the actual enactments. For Ireland, **Dunlop's** chapter in the Cambridge Modern History and his Ireland under the Commonwealth; for Scotland, **Hume Brown** or **Lang,** History of Scotland.

• •

८

प्यूरिटन गणराज्य तथा बाह्य जगत्

१. नौसैनिक तथा औपनिवेशिक नीति : डच युद्ध

यद्यपि प्यूरिटन गणराज्य की सभी संवैधानिक योजनाए विफल हुईं, तथापि इसकी एक अवाप्ति समूचे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिए सर्वोच्च एवं स्थायी महत्व रखती है। इसने क्रियात्मक रूप से नौसेना का एक स्थायी, संगठित रूप से लड़ने वाली फौज के रूप में निर्माण किया और इंग्लैण्ड के लिए समुद्र के महामार्गों पर अधिकार को प्राप्त किया। यह अधिकार बाद में कभी भी पूर्ण रूप से नष्ट नहीं हुआ, यह ब्रिटिश लोगों के और उनकी संस्थाओं के विश्वव्यापी वितरण में तथा उनकी एकता बनाये रखने में एक प्रधान तत्व का निर्माण करता रहा। एलिज़ाबेथ के समय में, समुद्री युद्ध मुख्य रूप से निजी साहसी व्यक्तियों द्वारा किया जाता था, यहाँ तक कि स्पेनिश आरमेडा को हराने वाले बेड़े का मेरुदण्ड यद्यपि रानी के कुछ जहाजों से बना था, तथापि इसमें मुख्य रूप से निजी जहाज थे और इसके प्रसिद्धतम सेनानी नौसेना के अधिकारी नहीं, किन्तु निजी साहसी व्यक्ति थे। राजकीय नौसेना कभी भी इतनी प्रबल नहीं थी कि वह व्यापारी जहाजों की सहायता के बिना एक बड़ी लड़ाई लड़ सके। चार्ल्स प्रथम को इस बात का श्रेय है कि उसने एक ऐसे शक्तिशाली बेड़े का निर्माण आरम्भ कर दिया, जो अपने आप समुद्रों पर स्वामित्व रख सके और पोतधन से भी उसने इस निर्माण के साधन प्राप्त किये। पोतधन ने उस शक्तिशाली बेड़े का निर्माण किया, जो गृहयुद्ध के आरम्भ में ही पार्लियामेण्ट के पक्ष में चला गया, इसने समुद्रों पर नियन्त्रण रखते हुए इसके निर्माता की पराजय को सुरक्षित बनाने

में सहायता दी। किन्तु चार्ल्स प्रथम के और गृहयुद्ध के बेड़े की व्यवस्था और प्रबन्ध अब भी अच्छा नहीं था। गणराज्य ने इसे शानदार लड़ाकू फौज के रूप में परिणत किया, इसे एक क्षमतापूर्ण संगठन प्रदान किया और इसकी संख्या दुगुनी कर दी। १६४६ ई० के बाद के ११ वर्षों में नौसेना में कम-से-कम दो सौ जहाजों की वृद्धि की गयी। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि गणराज्य के शासकों, विशेषत: हेनरी वेन ने उस पुरानी पद्धति को समाप्त कर दिया, जिसके अनुसार बेड़े का प्रबन्ध एक कुलीन वर्ग के लार्ड एडमिरल के हाथों में होता था। पहली बार विशेषज्ञों और लड़ने वाले समुद्री व्यक्तियों के एक समूह को परामर्श के लिए बुलाया गया, यह भावी जल-सेना विभाग का मूल था।

नौसेना के प्रबन्धकों को राबर्ट ब्लेक[1] के रूप में एक उत्कृष्टतम गुणों वाला समुद्री योद्धा मिला, यह अपने जीवन के मध्य भाग तक सिपाही था, किन्तु फिर भी इसकी गणना तीन या चार सब से अधिक बड़े जलसेनापतियों में होती है। इस समय एस्क्यू और पैन तथा जल और स्थल युद्धों में निपुण मोंक[2] आदि अन्य ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने बड़े वीरतापूर्ण कार्य किये। राज्य परिषद् इतनी बुद्धिमान् थी कि उसने इनमें कुछ व्यक्तियों से अपने निर्माण कार्यक्रम के बारे में, अपनी नौसैनिक नीति के बारे में सलाह ली और क्रिया रूप में परिणत किये जाने वाले समुद्री बेड़े में व्यक्तियों को भरती करने, इन्हें खाद्य सामग्री पहुँचाने और वेतन देने के बारे में किये जाने वाले महान् सुधारों के विषय में भी उपर्युक्त व्यक्तियों से परामर्श लिया गया।

पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट भाग को चार्ल्स प्रथम के वध के बाद नौसेना की ओर गम्भीर ध्यान देने के लिए बाधित होने का पहला कारण यह था कि १६४८ ई० में समुद्री बेड़े का एक भाग—केवल नौ जहाज—राज पक्षपाती दल से मिल गया और अब राजकुमार रूपर्ट के नेतृत्व में व्यापार को बड़ी हानि पहुंचाने लगा। यह बेड़ा आयरलैण्ड में आर्मोण्ड की सहायता कर रहा था। दूसरा कारण यह था कि सभी यूरोपियन शक्तियाँ विरोधी थीं, इन में से कुछ, विशेषत: फ्रान्स, निजी योद्धा जहाजों द्वारा इंग्लिश व्यापार पोतों को विनष्ट करके अपनी शत्रुता प्रकट कर रहा था। अब तीस वर्षीय युद्ध समाप्त हो चुका था, पिछले राजा के बेटों का विदेशों में स्वागत किया जा रहा था, विदेशी आक्रमण भी असम्भव नहीं प्रतीत होता था। एक शत्रु जगत् का मुकाबला करने के लिए अनतिक्रम्य द्वीप की रक्षा करने में नौसेना का कार्य अधिक महत्वपूर्ण हो गया था।

ब्लैक का पहला कार्य प्रिन्स रूपर्ट की अध्यक्षता में कार्य करने वाले एक छोटे राजपक्षपाती बेड़े का मुकाबला करना था। उसने इन जहाजों को किनसेल में अपने आयरिश अड्डे से भगा दिया। उसने लिस्बन के बन्दरगाह में इनके शरण लेने पर सात महीने तक इनका परिवेष्टन किया। ऐसा करते हुए उसे पुर्तगाल को भी चुनौती देनी पड़ी, एक तूफान के मध्य में उसने पुर्तगाली बेड़े से लड़ाई लड़ी और उसे डुबो दिया। इसके बाद

१. डेविड हैन्ने ने ब्लेक की एक उत्तम लघु जीवनी लिखी है।

२. इंग्लिश मैन आफ सीरीज में कार्बेट का लिखा मौंक देखिये।

उसने भूमध्य सागर में रूपर्ट का पीछा किया और कुछ समय तक उसका बेड़ा वहाँ बिखरा रहा, (१६५० ई०)। लिस्बन का अवरोध (Blockade) इंग्लिश नौसेना द्वारा बड़े पैमाने पर किया जाने वाला इस प्रकार का पहला व्यवस्थित कार्य था; भूमध्य सागर में इसके आक्रमण ने पहली बार उन समुद्रों में इंग्लिश नौसेना के झण्डे को प्रदर्शित किया, जिन समुद्रों में इस नौसेना द्वारा इतने वीरता पूर्ण कार्य किये जाने थे। इन कार्यों ने क्रामवेल की विजयों की भाँति नयी सरकार की प्रतिष्ठा और सुरक्षा को स्थापित करने में बड़ा कार्य किया। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि नौसेना में एक ऐसी शक्ति है जिसको अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। इंग्लिश नौसेना अब एक दुर्जेय स्थायी शक्ति थी, वह यूरोपियन राजनीति में ऐसा महत्वपूर्ण तत्व बन गयी, जैसा वह पहले कभी नहीं बनी थी।

एक अन्य क्षेत्र में भी नौसेना ने प्यूरिटन गणराज्य के शासकों को इंग्लैण्ड की शक्ति का दावा करने में समर्थ बनाया। स्वदेश में उपद्रवों के होते हुए भी, उनका उन उपनिवेशों पर अपना अधिकार शिथिल करने का कोई इरादा नहीं था, जो उपनिवेश पहली आधी शताब्दी में स्थापित किये गये थे। वस्तुत: इस सरकार के समय में ही सबसे पहले ब्रिटिश इतिहास में एक सुव्यवस्थित औपनिवेशिक नीति प्रकट होने लगी, क्योंकि जेम्स प्रथम तथा चार्ल्स प्रथम ने अमेरिकन तथा पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह की बस्तियों को बहुत कुछ उन पर छोड़ दिया था। यह नौसेना ही थी, जिसने नयी सरकार को इस योग्य बनाया कि वे इन बिखरे हुए प्रदेशों को इकट्ठा करके रख सकें। इसने उपनिवेशों को यह अनुभव कराया कि उनके स्वार्थ तथा इंग्लैण्ड के स्वार्थ एक जैसे ही हैं।

राजा के वध के समय में ऐसा वास्तविक खतरा प्रतीत होता था कि सब उपनिवेश पृथक् होकर या तो स्वतन्त्र राज्य बन जायेंगे, अथवा डचों के नियन्त्रण में आ जायेंगे। न्यू इंग्लैण्ड की बस्तियाँ पहले से ही लगभग स्वतन्त्र थीं और वे अपने गवर्नरों तक को स्वयं नियुक्त करती थीं। अपने साथी प्यूरिटनों के साथ सहानुभूति के कारण गणराज्य के युग में मातृभूमि के साथ उनका सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ हुआ; यद्यपि एक बोस्टनवासी को यह आशंका थी कि क्रामवेल "हमारे युग के ईश्वर-निन्दकों के विरुद्ध एक पूर्ण जाँच नहीं करता है" और सहिष्णुता की नीति न्यू इंग्लैण्ड की दृष्टि में एक कोरा अन्याय थी। कुल मिला कर, पार्लियामेण्ट का अल्पभाग (Rump) और प्रोटेक्टर न्यू इंग्लैण्ड के साथ, व्यवहार में बड़े कृपालु थे क्योंकि यह उत्तर अमेरिका में इस सम्प्रदाय का गढ़ था। क्रामवेल ने आयरलैण्ड के लिए प्रचारक यहाँ से प्राप्त किये। उसने इस अभागे देश के लिए बस्ती बसाने वालों तक को आमन्त्रित किया। फिर भी हम उसे रोड टापू के उपनिवेश को एक चार्टर देता हुआ पाते हैं, इस उपनिवेश को इसके न्यू इंग्लैण्ड के पड़ोसी नापसन्द करते थे, क्योंकि इसमें सहिष्णुता की बुराई थी। हम क्रामवेल को मैसाचुसैट्स को इसलिए डाँटता हुआ पाते हैं कि "उसमें सब मनुष्यों में इतनी अधिक मात्रा में सामान्य रूप से पायी जाने वाली उत्तम भावना का अभाव था"।

किन्तु, वर्जिनिया मेरीलैण्ड और पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह की दक्षिणी बस्तियों में

सत्ता का एक अधिक प्रत्यक्ष प्रयोग आवश्यक था। वर्जिनिया ने चार्ल्स प्रथम की मृत्यु का समाचार आते ही चार्ल्स द्वितीय के राजा होने की घोषणा की थी, उन व्यक्तियों को दण्ड दिया था जो वध का समर्थन करते थे। बारबेडोज, एण्टीगुआ और सैण्टकिट्स ने गणराज्य को स्वीकार करने से इन्कार किया, इसके समर्थकों को निर्वासित कर दिया, ऐसा प्रतीत होता था कि बारबेडोज अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा करने वाला है। नौसेना ने इसे समाप्त कर दिया; सर जार्ज एस्क्यू को मान्यता स्वीकार कराने के लिए बारबेडोज, वर्जिनिया और मेरीलैण्ड भेजा गया।

राष्ट्रमण्डल के कुछ राजनीतिज्ञों में से सर हेनरी वेन जैसे कुछ व्यक्तियों को उपनिवेशों का अनुभव था। इन राजनीतिज्ञों ने जब औपनिवेशिक समस्या का सर्वेक्षण किया तो वे विशेष रूप से इस तथ्य से प्रभावित हुए कि आपेक्षिक दृष्टि से बहुत कम औपनिवेशिक व्यापार वास्तव में इंग्लैण्ड में से होकर गुजरता था। इंग्लैण्ड उपनिवेशों की रक्षा के लिए भी जिम्मेदार था। किन्तु ऐसा प्रतीत होता था कि उसे इसके बदले में कुछ नहीं मिलता था। सभी उपनिवेशों में और विशेषत: पश्चिमी द्वीप समूह में सारा व्यापार डच जहाजों द्वारा होता था। यह कहा जाता था कि बारबेडोज में दस डच पोतों के पीछे एक इंग्लिश जहाज दिखाई देता था। इस स्थिति को सुधारने के लिए, उपनिवेशों तथा मातृभूमि के मध्य में सम्बन्ध सुदृढ़ करने के लिए और इसी समय में इंग्लैण्ड व्यापारिक पोतों को विकसित करने के लिए, पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट भाग (Rump) ने १६५१ ई० में एक बड़ा महत्वपूर्ण कानून पास किया। यह औपनिवेशिक नीति में एक नवयुग का श्रीगणेश था। यह **नौचालन अधिनियम** (Navigation Act) था। इसने यह व्यवस्था की थी कि इंग्लैण्ड से उपनिवेशों को निर्यात किया गया अथवा उपनिवेशों से इंग्लैण्ड में आयात किया गया कोई भी माल इंग्लिश प्रदेश में बने हुए अथवा उपनिवेशों में बने हुए पोतों के अतिरिक्त अन्य जहाजों में नहीं ले जाया जा सकता है। ये पोत इंग्लिश प्रजा जनों के होने चाहिए और इनके कैप्टेन इंग्लिश अथवा औपनिवेशिक व्यक्ति होने चाहिए। इन पोतों का कम से कम तीन चौथाई नाविक वर्ग इंग्लिश अथवा औपनिवेशिक होना चाहिए। इस कानून ने यह व्यवस्था की कि इंग्लैण्ड में अथवा उपनिवेशों में आयात किया जाने वाला विदेशी माल केवल इंग्लिश अथवा औपनिवेशिक जहाजों में अथवा ऐसे जहाजों में आना चाहिए, जो जहाज उस देश के हों, जहाँ से यह माल आया हो। इस कानून ने इंग्लिश उपनिवेशों के व्यापार में डचों की प्रभुता पर सीधी चोट की। इसने कुछ समय तक उपनिवेशों में इस तथ्य के बावजूद भी उग्र विरोध उत्पन्न किया कि इस कानून ने उपनिवेशों के पोतों को इंग्लिश जहाजों वाले ही विशेषाधिकार प्रदान किये। इसका कारण यह था कि डच लोग इंग्लिश व्यापारियों की अपेक्षा अधिक सस्ता किराया लेने में समर्थ थे और शुरू में डचों का स्थान लेने के लिए इंग्लिश जहाज पर्याप्त मात्रा में नहीं थे। किन्तु इस कानून ने इंग्लिश तथा औपनिवेशिक जहाजरानी के उस विलक्षण विकास को अधिक प्रोत्साहित किया, जो इस युग की तथा अगले युग की विशेषता है।

नौचालन कानून ने इस शताब्दी के आरम्भ में विकसित हो रही इंग्लिश और डच लोगों के बीच की दुर्भावना को पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया। यद्यपि यह एक मात्र कारण नहीं था, तथापि निःसन्देह इसने स्पेन के विरुद्ध एक बार मित्र बनी हुई दो प्रोटेस्टेण्ट समुद्री शक्तियों में युद्ध आरम्भ करने में सहायता प्रदान की। यह युद्ध १६५२ ई० में हुआ। यह समुद्री बेड़ों की लड़ाइयों की शृंखलाओं में लड़ा जाने वाला पहला विशुद्ध नौसैनिक युद्ध था, इसमें आधुनिक नौसैनिक रण कलाओं का आरम्भ हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि **गैब्बर्ड्स की लड़ाई** में ब्लेक ने सर्वप्रथम युद्ध में पंक्तिबद्ध व्यूह रचना की पद्धति का श्रीगणेश किया, यह इंग्लिश बेड़े की नियमित परिपाटी बन गयी। इस नौसैनिक युद्ध में प्रतिद्वन्द्वी अच्छे मुकाबले के थे। दोनों के पास योद्धा जहाजों के बेड़े थे, यद्यपि चार्ल्स प्रथम के तथा पार्लियामेण्ट के अध्यवसायपूर्ण पोतनिर्माण के कारण इंग्लिश बेड़ा कुछ अधिक बड़ा था। कुल मिला कर ऐसा प्रतीत होता था कि इंग्लिश जहाज डच जहाजों की अपेक्षा अधिक मजबूती से बनाये गये हैं और वे गोलाबारी को अधिक सह सकते हैं। दोनों जातियाँ समुद्री युद्ध की परिस्थितियों के अनुभव और वास्तविक ज्ञान के साथ लड़ीं। दोनों के योग्य सेनापति थे; डच सेनापति ट्राम्प सम्भवतः ब्लेक की अपेक्षा भी अधिक बड़ा जल सेनापति था, डचों को इंग्लिश लोगों की अपेक्षा समुद्र का अधिक व्यापक अनुभव था।

किन्तु डचों को दो बड़े घाटे थे। उनके पास युद्ध के आक्रमणों के लिए खुला हुआ एक अतीव विशाल व्यापारिक पोत समूह था और ब्रिटिश द्वीप समूह ठीक उस रास्ते पर थे, जहाँ से इन सब जहाजों को अपने स्वदेश के बन्दरगाहों से आते हुए और वापस जाते हुए अवश्य गुजरना पड़ता था। इसके अतिरिक्त डच अपनी सत्ता के लिए लगभग अपने समुद्री व्यापार पर इतनी अधिक मात्रा में निर्भर थे, जिसकी कोई तुलना इंग्लिश पक्ष से नहीं की जा सकती थी। युद्ध आरम्भ होने से पहले एक डच राजदूत ने कहा था कि "इंग्लिश लोग सोने के पहाड़ पर हमला करने वाले हैं, हम लोहे के पहाड़ पर हमला करने वाले हैं।" इस युद्ध में ब्रिटिश बेड़े द्वारा पकड़े गये डच जहाजों की क्षतियाँ अत्यधिक गम्भीर थीं; इन पकड़े गये जहाजों का ही मूल्य इंग्लैण्ड के समूचे समुद्रगामी व्यापारिक पोत समूह के मूल्य से दुगुना था। इन क्षतियों ने डच व्यापार को पंगु बना दिया और इसी अनुपात से इंग्लिश व्यापार के विकास को सुदृढ़ बनाया।

१६५२ ई० और ५३ ई० के दो वर्षों में आठ महान सैनिक युद्ध लड़े गये।[१] ये समूचे बेड़े द्वारा उग्र रूप से लड़ी गयी घमासान लड़ाइयाँ थीं। पहले साल की सब से महत्वपूर्ण लड़ाइयाँ टेम्स नदी के मुहाने के पास **कैण्टिश नाक** (सितम्बर १६५२ ई०) का युद्ध था, इसमें डच सेनापति डीविट को केवल लोहे के भार से और अच्छी गोलाबारी के कारण हरा दिया गया और वह दो जहाजों का नुकसान उठा कर वापस लौट गया। दूसरा युद्ध अगले नवम्बर में, **डंगेनैस का युद्ध था।** इसमें ब्लेक बुरी तरह से हारा, क्योंकि बीस

---

१. इंग्लिश चैनल के संकीर्ण समुद्रों के नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवे संस्करण की प्लेट संख्या ४५ (ए), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६२।

इंग्लिश जहाज भूमध्य सागर की ओर भेज दिये जाने से वह निर्बल हो गया था, उसके एक जहाज के बदले में डचों के पास दो जहाज थे। इस हार के कारण कुछ समय तक इंग्लिश लोग चैनल के नियन्त्रण को खो बैठे।

किन्तु सरकार ने इस विपत्ति पर पूरा ध्यान दिया; एक शक्तिशाली नौसेना का पुनः संगठन किया और अगले साल पहले की अपेक्षा बहुत बढ़िया बेड़ा समुद्र में भेजा। एक बड़े व्यापारी बेड़े की रक्षा करता हुआ ट्राम्प पोर्टलैण्ड के निकट तीन दिन तक चलने वाले एक भयंकर युद्ध के बाद इस बेड़े से बड़ी मुश्किल से बच कर भागा, इस युद्ध में उसने नौ जहाज गँवाये। अगले मई महीने में गैब्बर्ड के उथले जल वाले सैंकत तट के निकट हारविच के पूर्व में इस युद्ध की सब से बड़ी लड़ाई ट्राम्प की अध्यक्षता में ९८ जहाजों के तथा ब्लेक की अध्यक्षता में सौ जहाजों के बीच हुई। इसकी समाप्ति इंग्लिश की पूरी विजय के साथ हुई। इसमें २० डच जहाज पकड़े गये। इस विजय के बाद डच समुद्र तट का भीषण परिवेष्टन किया गया। इसने कुछ समय के लिए डच व्यापार को बिलकुल बन्द कर दिया। इस परिवेष्टन को तोड़ने के प्रयत्न में डचों ने जुलाई के अन्त में **शेवेनिन्जन के** निकट एक नयी लड़ाई की चुनौती दी। यह इस युद्ध की अन्तिम बड़ी लड़ाई थी। मोंक के नेतृत्व में इंग्लिश बेड़े ने पूर्ण विजय प्राप्त की और महान् डच सेनापति ट्राम्प मारा गया। किन्तु कुछ समय के लिए घेरा तोड़ दिया गया, क्योंकि इतने अधिक इंग्लिश जहाजों को क्षति पहुँची थी कि बेड़े को पुनः सुसज्जित करने के लिए वापस लौटना पड़ा।

लड़ाइयों की इन भीषण शृंखलाओं से डच किसी भी प्रकार नहीं कुचले गये। किन्तु उन्हें जो नुकसान उठाने पड़े थे, वे इतने अधिक थे कि वे सन्धि करने में प्रसन्न थे (१६५४ ई०)। यह ऐसी सन्धि थी जिसके बारे में यह कहा जा सकता है कि इसने डच नाविक प्रभुसत्ता के युग का अन्त कर दिया, यद्यपि अगले युग में इन्हीं दोनों शत्रुओं में दो और लड़ाइयाँ लड़ी जानी थीं। इस सन्धि ने नौचालन के अंग्रेजी कानून को मूक रूप से स्वीकार किया। इसकी सब से बड़ी उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि डचों ने ३० वर्ष पहले के अम्बोयना के हत्याकाण्ड की क्षतिपूर्ति देना स्वीकार कर लिया था।

२. क्रामवेल की विदेश नीति और स्पेन के साथ युद्ध

इस शान्ति सन्धि पर हस्ताक्षर वास्तव में इस युद्ध को शुरू करने वाली पार्लियामेण्ट के अवशिष्ट भाग (Rump) की सरकार ने नहीं, किन्तु प्रोटेक्टोरेट की सरकार ने किया। क्रामवेल इस संघर्ष को समाप्त करने लिए उत्सुक था, क्योंकि उसकी विदेश-नीति का पहला लक्ष्य यह था कि प्रोटेस्टेण्ट शक्तियों के ऐसे संघ का निर्माण किया जाय कि जिसमें डच एक आवश्यक तत्व हों। वह अब भी उन विचारों के प्रभाव में था, जो तीस वर्षीय युद्ध के प्रारम्भ में प्रचलित थे। किन्तु यूरोप का स्वभाव बदल चुका था और प्रोटेस्टैण्ट संघ को बनाने का प्रयास पूर्णरूप से विफल हुआ था। यह सम्भवतः यूरोप के लिए सौभाग्य की बात थी। क्रामवेल ने यह अनुभव किया कि यूरोपियन राजनीतिक क्षेत्र में उसको इस मुख्य समस्या का निर्णय करना है कि वह अब भी स्पेन और फ्रांस के दोनों राज्यों में चल रहे

भीषण युद्ध में फ्रांस का समर्थन करेगा या स्पेन का, अथवा वह इस युद्ध से पृथक् और तटस्थ रहेगा। दोनों शक्तियाँ उसकी सहायता पाने के लिए उत्कण्ठित थीं। पहली बार ऐसा प्रतीत होता था कि इंग्लैण्ड यूरोपियन संघर्ष में पंच की भूमिका ग्रहण करने की स्थिति में है और समुद्रों पर उसके प्रभुत्व ने ही उसे यह स्थिति प्रदान की थी। फ्रांस तरुण गणराज्य के प्रति इन दोनों देशों में से अधिक शत्रु था। उसने अपने निजी योद्धा जहाजों को इंग्लिश जहाजों को स्वतन्त्रतापूर्वक लूटने की अनुमति दी थी। समुद्र पर दोनों देशों में लगभग युद्ध की स्थिति थी। दूसरी ओर क्रामवेल की दृष्टि में स्पेन पुराना शत्रु तथा रोम के पोप की ढाल था, उसके साथ ही पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह के समुद्रों में लगभग खुले युद्ध की स्थिति थी।

यह स्वाभाविक होता तथा एक लम्बे युद्ध से पहले ही थके हुए देश के लिए यह अधिकतम लाभ की बात होती कि इंग्लैण्ड इन संघर्षों से पृथक् रहता। किन्तु क्रामवेल न केवल एक सैनिक प्रोटेक्टर था, अपितु वह एक साम्राज्यवादी था। वह इंग्लिश इतिहास का पहला स्पष्ट साम्राज्यवादी था। हम उसे लगभग पहला उग्र देशभक्त कह सकते हैं। वह समुद्रों के पार इंग्लिश शक्ति को बढ़ाने पर तुला हुआ था, वह उन साधनों के बारे में किसी भी प्रकार का कोई सदसत् विचार या विवेक नहीं रखने वाला था, जिन साधनों से इस उद्देश्य की पूर्ति की जानी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि उसने यहाँ तक कल्पना की थी कि वह सुदूरवर्ती समुद्रों में आक्रमण के सब से अधिक दारुण कार्य करेगा और फिर भी यूरोप में उन देशों के साथ शान्तिपूर्वक रहेगा, जिन पर उसने आक्रमण किया था। १६५४ ई० में उसने अमेरिका में एक बड़ा बेड़ा न्यू नीदरलैण्ड्स् की डच बस्ती पर आक्रमण करने में न्यू इंग्लैण्ड की एक स्थल सेना के साथ सहयोग देने के लिए भेजा। डचों के साथ इसी समय की गयी शान्ति सन्धि के कारण इस योजना को बन्द करना पड़ा। किन्तु डच बस्ती पर हमला करने के लिए भेजी गयी सेनाओं को जानबूझ कर एकेडिया (नोवास्कोशिया) की फ्रेंच बस्तियों के विरुद्ध मोड़ दिया गया[1] और केप ब्रेटन टापू सहित, फ्रेंच किलों पर तथा समूचे देश पर अधिकार कर लिया गया, यद्यपि इंग्लैण्ड इस समय फ्रांस के साथ ऊपर से शान्ति का सम्बन्ध रखे हुए था। १६६८ ई० में चार्ल्स द्वितीय द्वारा वापस किये गये जाने तक इन प्रदेशों को अपने अधिकार में रखा गया। फ्रेंच सरकार ने इस बलात्कार को स्वीकार किया, क्योंकि वह इंग्लैण्ड को नाराज करने की हिम्मत नहीं रखती थी और वह इंग्लैण्ड की मैत्री को चाहती थी। इससे अधिक अन्यायपूर्ण अथवा समर्थन न किये जा सकने वाले कार्य की कल्पना करना कठिन है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के इतिहास में इससे तुलना करने वाला कोई दूसरा दृष्टान्त नहीं है।

इस बीच में क्रामवेल फ्रांस और स्पेन दोनों के साथ सन्धि की बातें चला रहा था। स्पेनिश सरकार से उसने यह माँग की थी कि स्पेन में रहने वाले इंग्लिश व्यापारियों को

---

१. उत्तरी अमेरिका के उपनिवेशीकरण के नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५४ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५२।

इन्क्विज़िशन (Inquisition) से अथवा धार्मिक न्यायालय के नियन्त्रण से मुक्त किया जाना चाहिए और पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह में व्यापार खोल देना चाहिए। स्पेनिश राजदूत ने कहा कि यह "उसके स्वामी की दोनों आँखें माँगना है।" क्रामवेल ने वार्ता की समाप्ति की प्रतीक्षा किये बिना ही तथा युद्ध की घोषणा किये बिना यह निश्चय किया कि वह स्पेन के पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह पर आक्रमण करेगा। उसने महान् क्वेकर के पिता जल सेनापति पैन के नेतृत्व में ३८ जहाजों का एक बेड़ा तथा जनरल वेनेबल्स के नेतृत्व में ढाई हजार व्यक्तियों की एक सेना सुसज्जित की, बाद में इस सेना को बारबेडोस में तथा अन्यत्र की गयी भर्तियों से सात हजार तक बढ़ा दिया गया। अगस्त १६५४ ई० में प्रयाण करने वाली इस भीषण अभियान सेना का उद्देश्य जानबूझ कर स्पेनिश अमेरिकन साम्राज्य के प्राचीनतम भाग हिसपेनिओला (हेटी)[1] के टापू को जीतने का प्रयत्न करना था। हिस्पेनिओला पर आक्रमण एक विफलता और बदनाम करने वाली विफलता थी। किन्तु पैन और वेनेबल्स ने इसके स्थान पर जमैका की कम आबादी वाले टापू पर हमला किया और इसे जीत लिया (१६५५ ई०)। क्रामवेल निराश था, उसने कहा "भगवान् ने हमारा अभिमान बड़ी मात्रा में चूर कर दिया है"। किन्तु उसे अपने कार्य के औचित्य के बारे में कोई सन्देह न था। उसने सब स्पेनिश हमलों के बावजूद जमैका पर सुदृढ़ अधिकार बनाये रखा, उसे यह आशा थी कि वह स्पेन के अमेरिकन साम्राज्य के पतन के लिए इसे अड्डा बनायेगा। उसने जमैका के अपने एक सेनापति को लिखा था कि "हम लोगों में यह इरादा बहुत किया जा रहा है कि हम स्पेनिश लोगों के साथ समुद्रों पर स्वामित्व के लिए प्रयत्न करें।" एक दूसरे सेनापति को उसने यह उपदेश दिया कि "ईसा के नाम पर अपने झण्डे स्थापित करो, क्योंकि निश्चित रूप से यह उसकी योजना है।" चुनी हुई जनता उन स्वतन्त्रताओं का प्रयोग कर सकती है, जिन स्वतन्त्रताओं की अनुमति अन्य व्यक्तियों को नहीं है!

यद्यपि स्पेन की पुरानी महत्ता कम हो चुकी थी, तथापि वह ऐसे व्यवहार को दब्बूपन के ढंग से, स्वीकार करने लिए फ्रांस की अपेक्षा कम तैयार था। उसने युद्ध की घोषणा की और क्रामवेल के शासन के अन्तिम वर्ष मुख्य रूप से स्पेनिश युद्ध से सम्बद्ध थे।

इस युद्ध ने ब्लेक के नेतृत्व में नौसेना को एक अन्य महान् अवसर प्रदान किया। १६५४ ई० में ब्लेक "बरबरी अर्थात् उत्तरी अफ्रीका के समुद्री डाकू" कहलाने वाले ट्यूनिस और अल्जीयर्स के जल दस्युओं पर एक यशस्वी आक्रमण में लगा हुआ था। उसने ट्यूनिस के लोगों का मुँह बन्द कर दिया था, वहाँ के समुद्री डाकुओं के बेड़े का विध्वंस किया और अल्जीयर्स के शासक दे को सब ब्रिटिश बन्दी छोड़ने के लिए तथा इंग्लिश व्यापारियों को व्यापार की स्वतन्त्रता देने के लिए बाधित किया था। नौसेना की प्रतिष्ठा इन कार्यों से अधिक मात्रा में बढ़ गयी थी, क्योंकि बरबरी के जल दस्युओं ने अब तक प्रत्येक हमले को विफल किया था। स्पेन के विरुद्ध नौसैनिक युद्ध में ब्लेक का पहला कार्य केडिज का तथा

१. पश्चिमी हिन्द द्वीप समूह के नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५३ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५०।

स्पेनिश समुद्र तट के एक बड़े भाग का १६५६ ई० के समूचे शीतकाल में परिवेष्टन करना था। ऐसी दूरी पर परिवेष्टन का कार्य एक उल्लेखनीय अवाप्ति थी और नौसेना का उत्कर्ष उस समय और भी अधिक बढ़ गया, जब तीन इंग्लिश जहाजों ने आठ पोतों वाले स्पेनिश बेड़े पर हमला किया और उसे नष्ट कर दिया। १६५७ ई० में और भी आगे बढ़ कर प्रहार करते हुए ब्लेक ने टेनेरिफ के प्रमुख नगर सान्ताक्रुज पर आश्चर्यजनक रीति से एक शानदार हमला किया, यहाँ स्पेन को प्रति वर्ष कोष ले जाने वाला बेड़ा कई किलों के संरक्षण में विद्यमान था। उसने किलों को चुनौती दी, समूचे बेड़े को नष्ट कर दिया और लगभग बिना किसी हानि के वह वहाँ से निकल आया। इस उपलब्धि ने न केवल इंग्लिश नौसेना की कीर्ति को चरम शिखर तक पहुँचा दिया किन्तु उस यूरोपियन युद्ध में स्पेन के कार्यों को गम्भीरतापूर्वक पंगु बना दिया, जिस युद्ध में अब इंग्लैण्ड भी पड़ गया था।

क्रामवेल के स्पेनिश युद्ध में जिस घटना पर बल दिया जाता है, वह ड्यून्स की लड़ाई थी (जून १६५८ ई०)। इसमें इंग्लिश सेनाओं के एक दस्ते ने महान् जल सेनानी तूरेन्ने के सेनापतित्व में एक फ्रेंच सेना के साथ सहयोग करते हुए स्पेन की अन्तिम और करारी हार में एक बड़ा भाग लिया। इंग्लण्ड के लिए इस लड़ाई के परिणाम ये थे कि स्पेन से सहायता पाने की चार्ल्स द्वितीय की आशाएँ भग्न हो गयीं और डन्कर्क बन्दरगाह पर इंग्लिश अधिकार हो गया। इस यूरोपियन प्रदेश का महत्व इसलिए था कि यह डचों के लिए एक लगाम हो गयी और यूरोप का एक बड़ा द्वार हो गया। किन्तु इस दृष्टिकोण में अन्तर्हित ब्रिटिश नीति के विचार गलत और खतरनाक थे। क्रामवेल यूरोप के झंझटों से बचे रहने की उस नीति को उलटने की ओर प्रवृत्त हो रहा था, जो नीति कैले के नुकसान के बाद प्रबल हो रही थी; १६६२ ई० में फ्रांस को डनकर्क प्रदान किया गया और इसके लिए चार्ल्स द्वितीय को बाद में कटुतापूर्ण शब्दों के साथ दोष दिया गया था। वस्तुतः यह एक बुद्धिमतापूर्ण पग था। इसने इंग्लैण्ड को एक पूर्ण रूप से गलत और विध्वंसक महत्वाकांक्षा का अनुसरण करने से बचा लिया। एक दूसरे पहलू से क्रामवेल की युद्ध-नीति के दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम हुए। स्पेन के पतन के लिए इंग्लैण्ड की शक्ति को लगा देने से उसने फ्रांस के लुई चौदहवें की उठ अभिमानी शक्ति को स्थापित करने में सहायता प्रदान की, जो अगली पीढ़ी में यूरोप की स्वतन्त्रताओं के लिए खतरा बन गयी।

यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रमुख प्यूरिटन लोगों के अपने पड़ोसियों के साथ सम्बन्धों के बारे में ब्रिटिश द्वीप समूह द्वारा अपनाए जाने वाले विचार किसी वास्तविक अन्तर्दृष्टि को अथवा दृष्टिकोण की उदारता को प्रदर्शित करते थे। किन्तु उन्हें ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के निर्माण में दो महान अंशदान देने का श्रेय प्राप्त है। एक तो उनको समुद्रपार की नवीन बस्तियों की महत्ता स्वीकार करने की और उस मातृभूमि के साथ अपने सम्बन्धों को सुदृढ़ आधार पर स्थापित करने की आवश्यकता थी, जिस मातृभूमि से वे स्वतन्त्रता की परम्पराएँ ग्रहण कर रहे थे और अपने भावी विकास में सुरक्षा

के लिए जिस पर वे आवश्यक रूप से निर्भर थे। दूसरा अंशदान नौसेना का संगठन था। भविष्य में इस सेना का प्रयोग केवल बलपूर्वक आक्रमण के लिए ही नहीं होना था, जैसा कि क्रामवेल ने इसका उपयोग किया था, किन्तु इसका प्रयोग स्वतन्त्र संस्थाओं की रक्षा के लिए और समुद्रों की स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिए किया जाना था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

For naval development, **Laird Clowes,** History of the British Navy, and **Oppenheim,** Administration of the Royal Navy; there is a good chapter on this period in the Cambridge Modern History, by **J. R. Tanner**. For contemporay European history, **Wakeman,** Ascendancy of France, and **Abbott,** Expansion of Europe. For the colonial policy of the Protectorate, **Egerton,** Short History of British Colonial Policy; **Hertz,** Old Colonial System, and **Beer,** Old Colonial System; also **Cunningham,** Growth of English Industry and Commerce; **Reddaway,** History of Europe, 1610-1715; **Williamson,** Short History of British Expansion; **Harper,** The English Navigation Laws; **Scott,** Constitution and Finance of English, Scottish and Irish Joint Stock Companies to 1720; **Prestage,** Diplomatic Relations of Portugal with France, England and Holland, 1640-1688; **Davies,** Early Stuarts.

• •

९

प्यूरिटन गणराज्य का पतन

(१६५८ से १६६० ई०)

प्यूरिटन अल्पसंख्या की कृत्रिम प्रभुता उस महान् व्यक्ति की मृत्यु के बाद अधिक देर तक नहीं बनी रह सकती थी, जिस व्यक्ति में इसके अनेक उच्चतम गुण थे और जिसने इसे उन उच्छृंखलाओं से रोके रखा, जिनमें यह पड़ सकती थी। क्रामवेल के दृढ़ संकल्प ने भयंकरतम आपातकालीन परिस्थितियों का मुकाबला किया था और उन पर विजय पायी थी। क्रामवेल को अपने उद्देश्य में आस्था थी और इस आस्था ने निराशाओं पर विजय पायी थी। क्रामवेल की स्वाभाविक मृदुता ने और मतभेदों की सहिष्णुता ने सम्प्रदायों को, अपने आप को तथा अपने देश को नष्ट होने से बचाया था। क्रामवेल सबसे महान् इंग्लिश लोगों में से एक था और वह किसी भी बात में इतना महान् और इंग्लिश व्यक्ति की इतनी विशेषताएँ रखने वाला नहीं था, जितना वास्तविकताओं की सुदृढ़ पकड़ में और तथ्यों का सामना करने की अपनी तत्परता में था। इस गुण ने उसे अपनी मृत्यु से पहले यह विश्वास अवश्य करा दिया होगा कि उस पद्धति में कोई स्थायित्व सभव नहीं है, जिसे बनाये रखने में उसने अपने सारी शक्ति लगा दी थी, क्योंकि यह राष्ट्रीय 'सहमति' (Consent) पर नहीं, किन्तु 'शक्ति' पर आधारित थी। यह खतरा था कि स्थल-सेना और नौसेना की अदम्य शक्ति अपने पतन से पहले ही बड़ी खराबियाँ पैदा कर सकती थी। ब्रिटिश द्वीपसमूह इस खतरे से उस अति शीघ्रता के कारण बच गये, जिस शीघ्रता के साथ यह पद्धति कुछ आन्तरिक मतभेदों के कारण भंग हो गयी। इन मतभेदों को केवल क्रामवेल ही नियन्त्रण में रख सकता था।

देश का शासन अन्तिम वर्षों के सभी परिवर्तनों में जिस

तेजी के साथ पीछे की ओर लौट रहा था, उसने यह प्रदर्शित किया था कि क्रामवेल की सरकार की नींव कितनी असुरक्षित थीं। उसकी मृत्यु ३ सितम्बर, १६५८ ई० को हुई। आरम्भ में उसका उत्तराधिकारी प्रोटेक्टर के रूप में उसका पुत्र रिचर्ड शान्तिपूर्ण रीति से उत्तराधिकारी बन गया। किन्तु रिचर्ड एक गैर सैनिक व्यक्ति था और सेना पर उसका कोई प्रभाव नहीं था। सैनिक अधिकारी यह सोचते थे कि वे एक व्यावहारिक स्वतन्त्रता की माँग कर सकते हैं। उन्होंने यह माँग की कि उसके एक व्यक्ति फ्लीट वुड को प्रधान सेनापति बना दिया जाना चाहिए और अफसरों की सब नियुक्तियों का उसे नियन्त्रण करना चाहिए। यद्यपि यह माँग स्वीकार नहीं की गयी, तथापि इसने यह प्रदर्शित किया कि सेना कितनी खतरनाक थी। जनवरी १६५९ ई० में होने वाली पार्लियामेण्ट ने नवीन प्रोटेक्टर को स्वीकार किया। किन्तु एक गणराज्यवादी अल्पसंख्या ने इसका उग्र विरोध किया और वह सेना के प्रमुख आदमियों के साथ षड्यन्त्र करने लगी। अप्रैल में सेनापतियों ने पार्लियामेण्ट के विसर्जन की माँग की और उनकी यह माँग पूरी हुई। मई में उन्होंने रम्प (Rump) की पुन: स्थापना की, जैसे यह १६५२ ई० में थी; इसमें १६४८ ई० में प्राइड की विशुद्धि द्वारा वाहर निकाले गये प्रेसबिटेरियन नहीं थे। रम्प ने एकदम यह घोषणा की कि प्रोटेक्टोरेट की समाप्ति की जाती है और आठ महीने के शासन के बाद रिचर्ड क्रामवेल ने अतीव स्वेच्छापूर्वक निजी जीवन बिताने के लिए अवकाश ग्रहण किया।

रम्प में तथा सेना में पुराना संघर्ष एक बार पुन: भड़क उठा। यह विशेष रूप से सेना में नियुक्तियों के प्रश्न पर था, इन्हें सेनापति अपने हाथों में रखना चाहते थे। इसी समय में व्यापक रूप से राजपक्षपाती विद्रोहों की योजनाएँ बनीं। चेशायर और लंकाशायर में बनी एक योजना काफी गम्भीर थी। डर्बी के अर्ल ने कुछ समय के लिए चेस्टर पर अधिकार कर लिया। किन्तु सेना इन उपद्रवों का दमन करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली थी। पार्लियामेण्ट के साथ झगड़ा अधिक गम्भीर था। अक्टूबर में सेना ने एक बार पुन: रम्प को पार्लियामेण्ट से बाहर निकाल दिया। सेना के आदेश का पालन न करने वाली कोई भी सरकार नहीं टिक सकती थी। सेनापतियों ने प्रशासन चलाने के लिए एक सुरक्षा समिति को मनोनीत किया और एक उपसमिति एक अन्य नया संविधान तैयार करने के कार्य में लग गयी।

किन्तु बारम्बार होने वाली इन क्रान्तियों ने न केवल राष्ट्र को परेशान एवं भयभीत कर दिया, अपितु इनसे सेना में फूट आरम्भ हो गयी। पोर्ट्समाउथ के राज्यपाल ने पार्लियामेण्ट की पुन: स्थापना के लिए घोषणा की और उसका दमन करने के लिए भेजी गयी सेनाएँ उसके पक्ष में मिल गयीं। आयरलैण्ड में भी सेना ने पार्लियामेण्ट के समर्थन की घोषणा की। डाउन्स में समुद्री बेड़े ने पार्लियामेण्ट का पक्ष लिया। सबसे बढ़ कर स्काटलैण्ड में सेना के चतुर एवं योग्य सेनापति, जार्ज मोंक ने कानूनी सरकार की ओर से कोरी शक्ति के विरुद्ध खुली लड़ाई की तैयारी की। सेनापतियों में सबसे अधिक क्रियाशील सेनापति जनरल लैम्बर्ट को उसका दमन करने के लिए उत्तर की ओर भेजा गया। किन्तु उसने सन्धि की बातचीत में ही समय नष्ट कर दिया। इसी बीच में भयभीत हो कर, लंदन में लैम्बर्ट के

मित्रों ने एक बार पुन: रम्प को बुलाया। इसने रक्षा करने के लिए मोंक को फौरन बुलाया, क्योंकि सेना में जबर्दस्त फूट पड़ गयी थी।

इस बीच में, सारे देश में, पिछले दस वर्षों के काम को समाप्त करने की दिशा में नया पग उठाने के लिए व्यापक माँगें की जा रही थीं। प्रोटेक्टोरेट द्वारा बनाये गये सभी कानून समाप्त कर दिये गये; अब प्राइड की शुद्धि को खतम करना और बहिष्कृत प्रेसबिटेरियन लोगों को पार्लियामेण्ट में वापस लाना शेष रहा था। फरवरी के आरम्भ में जब मोंक लन्दन पहुँचा तो यहाँ लगभग विद्रोह की स्थिति थी। अपने आगमन के एक सप्ताह बाद मोंक ने बहिष्कृत सदस्यों की वापसी की घोषणा की। इस प्रकार गृह युद्ध की **लम्बी पार्लियामेण्ट** पुन: स्थापित हो गयी। उसने फरवरी १६६० ई० के अन्त में नियन्त्रण सँभाल लिया और यह घोषणा की कि प्राइड की शुद्धि के बाद से किया गया प्रत्येक कार्य (नि:सन्देह इसमें चार्ल्स प्रथम का वध भी सम्मिलित था) अवैध था; इसने प्रेसबिटेरियन पद्धति, 'पवित्र संघ' और समझौते को पुन: स्थापित किया। इस प्रकार यह १६४३ ई० की स्थिति में लौट गयी; इसने एक नयी पार्लियामेण्ट के चुनाव की आज्ञा दी। लगभग २० वर्ष तक बने रहने के बाद यह मार्च में विसर्जित हो गयी।

नयी पार्लियामेण्ट पुराने आधार पर चुनी गयी थी और यह नि:संदेह केवल इंग्लैण्ड का प्रतिनिधित्व करती थी। बाद में यह 'सम्मेलन' के नाम से प्रसिद्ध हुई, क्योंकि यह राजा के द्वारा नियमित रूप से नहीं बुलायी गयी थी। इसके सदस्यों की अधिक संख्या प्रेसबिटेरियन थी, किन्तु उसमें एंग्लिकन लोगों की भी एक बड़ी संख्या सम्मिलित थी। किन्तु दोनों राजनीति में समान रूप से राजपक्षपाती थे। लार्ड सभा का अवशिष्ट अंश भी यद्यपि नहीं बुलाया गया था, तथापि उसने इसी समय अपनी बैठक की। इस बीच में मोंक ने चार्ल्स द्वितीय के साथ निजी वार्ता आरम्भ की, चार्ल्स ने ब्रेडा से एक घोषणा-पत्र प्रकाशित किया, इसमें अन्त:करण की स्वतन्त्रता प्रदान करने वाले कानून को उसकी सहमति देने का, एक आम माफी देने का तथा सेना को बकाया वेतन देने का वचन दिया गया था। चार्ल्स के पास से एक राजकीय सन्देशवाहक इन शर्तों वाला एक पत्र लेकर आया। इसका सम्मान के साथ स्वागत किया गया और पहली मई को दोनों सदनों ने यह निश्चय किया कि "राज्य के पुराने और मौलिक कानूनों के अनुसार" शासन का कार्य, राजा, लार्ड सभा और कामन्स सभा द्वारा चलाया जाना चाहिए। ८ मई को चार्ल्स द्वितीय को समूचे प्राचीन विधि विधान के साथ राजा घोषित किया गया। इस प्रकार सुगमता से और अकस्मात्, प्यूरिटन गणराज्य का पतन हो गया। शक्ति द्वारा शासन का लम्बा दु:स्वप्न और इंग्लिश सरकार के व्यवस्थित और कानूनपालक ढंगों के साथ सुदीर्घ सम्बन्ध-विच्छेद समाप्त हो गये।

राजा को वापस लौटने के लिए निमन्त्रण देने के उद्देश्य से प्रभावशाली शिष्टमण्डल हालैण्ड गये। २४ मई को चार्ल्स द्वितीय डोवर में उतरा। २९ मई को वह रोचेस्टर से घोड़े पर सवार होकर अत्यधिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए जन-समुदायों के बीच में से २५ मील तय करता हुआ लन्दन आया, उस समय जनसमूह ऐसी प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे कि मानों भलाई का देवदूत आ रहा है। लन्दन की गलियों में अपने सर्वोत्तम वस्त्र पहने हुए प्रसन्न

नागरिकों की इतनी जबर्दस्त भीड़ थी कि ह्वाइट हाल तक राजा की शोभायात्रा को पहुँचने में सात घण्टे लग गये, यहाँ एक सहभोजशाला में नये राजा को विनम्र और उत्कट भक्तिपूर्ण अभिनन्दनों के साथ अभिवादन करने के लिए लार्ड्स सभा के और कामन्स सभा के सदस्य इकट्ठे हुए थे। इसी शाला से उसका पिता फाँसी के तख्ते की ओर बढ़ा था। इस उत्तम स्वभाव वाले, इन्द्रियपरायण राजा के शासन के लिए एक ऐसी उत्कण्ठापूर्ण सहमति थी, जैसी क्रामवेल को अपनी उच्चतम सफलता के क्षण में भी कभी नहीं मिल सकी थी। यह केवल इस कारण था, क्योंकि वह पुराने ढंगों और पुराने कानूनों का समर्थक था।

प्यूरिटन क्रान्ति समाप्त हो गयी। यद्यपि कानून के वे सब औपचारिक परिवर्तन खत्म कर दिये गये थे, जिनके लिए इतना खून बहाया गया था, यद्यपि इंग्लैण्ड बाह्य रूप में १६४० ई० की स्थिति में चला गया था, तथापि कोई भी वस्तु उस प्रभाव को समाप्त नहीं कर सकती थी, जो प्यूरिटन लोगों के कठोर स्वभाव ने ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के स्वरूप पर डाला था। यह प्रभाव अब भी पड़ना था। इसके बाद धार्मिक सम्प्रदाय अत्याचारपीड़ित अवशेष हो सकते थे, किन्तु वे ठोस रीति से सम्मत्ति के संगठित समूह बने रहे और वे सहनशीलता में उतने ही दृढ़ थे, जितने अपने कार्य में कठोर थे। इसके बाद से यह विचार स्पष्ट रूप से असम्भव समझा जाने लगा कि एक राष्ट्र में सभी व्यक्ति एक समान सिद्धान्तों में विश्वास रखें और समान रूपों में उपासना करें। इसके बाद, सदैव ऐसे व्यक्तियों के विशाल समूह बने रहे जो इस विचार का मूर्तिमान् खण्डन थे। जीवन और सत्य के अपने विशिष्ट विचार के लिए अजेय रूप से खड़े रहने वाले साम्प्रदायवादियों के रूप में प्यूरिटन लोग अपने देश के प्रति तथा स्वतन्त्रता के प्रति कहीं अधिक बड़ी सेवाएँ करने में समर्थ हुए। यदि वे समूचे राष्ट्र पर इन विचारों को आरोपित करने के अपने लक्ष्य में सफल हुए होते तो वे इन सेवाओं को उस दशा में नहीं कर सकते थे। उन्हें सदैव राजनीति में तथा धर्म के क्षेत्र में प्रमुख रूप से प्रचलित कट्टर सिद्धान्तों का प्रतिवाद करना था।

इसके अतिरिक्त उनकी भावना की कुछ बात, इसके सर्वोत्तम अंश की कुछ चीज, शक्ति के प्रयोग के लिए भगवान् के प्रति सदैव बनी रहने वाली भावना और राजनीतिक कार्यों के लिए उपयोगिता की अपेक्षा उच्चतर मानदण्डों को कसौटी बनाने की इसकी तत्परता आगामी पीढ़ियों में सम्प्रदायों की सीमा से बहुत दूर तक विस्तीर्ण हो गयी और यह इंग्लैण्ड के सार्वजनिक जीवन का एक संरक्षक तत्व बन गयी। यदि प्यूरिटन मत की जारी रहने वाली परम्पराओं ने इंग्लिश जीवन में कुछ तथा स्काटिश जीवन में इससे भी अधिक संकीर्णता को उत्पन्न किया तो इसमें भी कोई सन्देह नहीं है कि यह निर्बलता की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति का स्रोत बन रही है।

प्रतिक्रिया के रूप में भी, प्यूरिटन क्रान्ति ने, इंग्लिश जीवन पर और संस्थाओं पर अमिट प्रभाव छोड़े हैं। इसने शक्ति के शासन का एक कभी न समाप्त होने वाला भय उत्पन्न किया, इसने काफी समय तक स्थायी सेनाओं के प्रति अविश्वास का अतिरंजित रूप धारण किया। इसने कानून के प्रति सम्मान की प्राचीन आदत को तथा खराब कानूनों को भी

परिवर्तन करने के लिए संवैधानिक और कानूनी साधनों के अतिरिक्त अन्य उपायों के अवलम्बन करने की अनिच्छा को तीव्र बनाया । इसने इस विश्वास की जड़ जमा दी कि भव्यतम और सबसे अधिक प्रबुद्ध उद्देश्य भी खराब हो जाते हैं और अन्ततोगत्वा विफल हो जाते हैं, यदि इनका समर्थन करने वाले वादविवाद और प्रेरणा से नहीं, किन्तु शक्ति से अपनी विजय सुरक्षित रखने का प्रयत्न करते हैं। इसके बाद से ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल में ये बातें स्वतन्त्र संस्थाओं के विकास का विशिष्ट अंश बन गयीं । उच्चतम उद्देश्यों के लिए भी हिंसा द्वारा की गयी क्रान्ति की अनुभव के आधार पर निन्दा की गयी। १६६० ई० में न केवल स्टीवर्ट राजाओं का शासन पुनः स्थापित हुआ, अपितु कानून का शासन भी स्थापित हुआ।

• •

पाँचवीं पुस्तक

संवैधानिक व्यवस्था और साम्राज्य का विकास

(१६६०-१७१४ ई०)

प्रस्तावना

सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध और १८वीं शताब्दी के आरम्भिक वर्ष ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल के तथा इसकी विशिष्ट संस्थाओं के विकास में, सबसे अधिक महत्त्व रखने वाले युग का निर्माण करते हैं।

पहली बात यह है कि इस युग में ही कार्यपालिका (Executive) पर पार्लियामेण्ट के नियन्त्रण द्वारा शासन की पद्धति निश्चित रूप से स्थापित की गयी और पार्लियामेण्ट द्वारा नियन्त्रण किये जाने के साधनों – कैबिनेट पद्धति और पार्टी पद्धति—का विकास आरम्भ हुआ। राष्ट्रीय स्वशासन की पद्धति के लिए होने वाले कार्य ने इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में एक गृह युद्ध उत्पन्न किया था और इसकी समाप्ति एक निराशाजनक रूप में हुई थी। प्यूरिटन गणराज्य द्वारा अनुसरण की जाने वाली दिशाओं में कोई हल नहीं पाया गया और इसका यह परिणाम हुआ कि पुनः स्थापना के समय द्वीप समूह कार्यपालिका के शासन के राजतन्त्रीय नियन्त्रण की पुरानी पद्धति की ओर फिर लौट गया। स्काटलैण्ड में, और कुछ कम मात्रा में आयरलैण्ड में, "पुनः स्थापना" (Restoration) ने लगभग निरंकुश राजतन्त्र की स्थापना की थी। किन्तु इंग्लैण्ड में पार्लियामेण्ट के परम्परागत अधिकारों ने इसे असम्भव बना दिया। चार्ल्स द्वितीय ने अपनी वापसी के बाद पायी जाने वाली राजभक्ति के उत्साह में भी इस बात को असम्भव पाया कि वह अपने पिता द्वारा प्रयोग में लायी जाने वाली शक्तियों का उपभोग करे और अपने चचेरे भाई लुई चौदहवें की भाँति एक अनियन्त्रित निरंकुश शासक की भाँति राज्य करे। उसके राज्य काल में दो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ हुईं। राज्य के मन्त्रियों ने कैबिनेट के रूप में इकट्ठा मिल कर कार्य करना शुरू किया और पार्लियामेण्ट कुछ कम या अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देने वाले दो दलों में विभक्त होने लगी। इसका यह परिणाम हुआ कि कुछ हद तक राजा को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह अपने मन्त्रियों को ऐसे ढंग से चुने कि वे पार्लियामेण्ट का समर्थन प्राप्त कर सकें। अपने राज्य काल की समाप्ति पर उसने कुछ समय के लिए प्रधानता प्राप्त कर ली और अपने को पार्लियामेण्ट के नियन्त्रण से मुक्त कर लिया और जेम्स द्वितीय के लघु राज्यकाल में इंग्लैंण्ड में निरंकुश शासन की स्थापना का वास्तविक खतरा प्रतीत होने लगा। यह खतरा १६८८ ई० की क्रान्ति से समाप्त हो गया। इसने अन्तिम तथा निश्चित रूप से पार्लियामेण्ट की प्रभुसत्ता को स्थापित किया; विलियम तृतीय तथा महारानी एन के राज्यकालों में दोनों राजनीतिक दलों के अविरत संघर्षों ने शनैः शनैः एक ऐसी पद्धति को विकसित करने के लिए बाधित किया, जिसके अनुसार राज्य के मन्त्री अधिकाधिक रूप में, पार्लियामेण्ट में बहुमत रखने वाले दलों से लिये जाने लगे। इस युग की महान् अवाप्ति,

इतिहास में पहली बार ऐसी शासन प्रणाली का विकास करना था, जिसने राष्ट्रीय पैमाने पर स्वशासन को व्यावहारिक बनाया।

दूसरी बात यह थी कि इस युग में ब्रिटिश द्वीप समूह के विभिन्न राष्ट्रों के बीच में सम्बन्धों का स्वरूप अधिक स्पष्ट हुआ। स्काटलैण्ड इस क्रान्ति द्वारा एक क्रियाशील राजनीतिक जीवन के लिए जागृत हुआ, वह अपनी पार्लियामेण्ट में एक स्वतन्त्र नीति का अनुसरण करने के लिए प्रवृत्त हुआ तथा इंग्लैण्ड के साथ ऐसी उदार शर्तों पर संयुक्त हुआ, जिन शर्तों ने उसके लिए ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल में एक पूर्ण हिस्सेदारी के रूप में बढ़ती हुई समृद्धि का एक युग खोल दिया। दूसरी ओर, आयरलैण्ड इस द्वीपसमूह के परिवार में सदैव अनादृता नारी (Cindrella) बना रहा, क्रान्ति की घटनाओं से वह अधिक अच्छी स्थिति के स्थान पर एक अधिक बुरी स्थिति में चला गया। उसकी आबादी में कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्ट तत्त्वों में वैमनस्य बढ़ गया। आबादी के बहुमत को सब राजनीतिक अधिकारों से वंचित कर दिया गया और उसे एक निष्ठुर दण्ड विधान का शिकार बनाया गया। कुल मिला कर इस देश के साथ एक पराधीन प्रदेश का सा व्यवहार किया गया और ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा लगाये गये कठोर व्यापारिक प्रतिबन्धों के कारण इसे अपने साधनों के स्वतन्त्र विकास के अधिकार से वंचित कर दिया गया। इस समय स्काटलैण्ड की भाँति आयरलैण्ड में, पुराने घावों को भरने के लिए, इस अवस्था में सहायक हो सकने वाले एकीकरण के सुझाव पर विचार तक भी नहीं किया गया। क्रान्ति के बाद आयरलैण्ड के साथ व्यवहार समूचे इतिहास पर कृष्णतम कलंक है।

तीसरी बात यह है कि इस युग में साम्राज्यवादी नीति को स्पष्ट करने का पहला क्रमबद्ध प्रयत्न हुआ, इसमें नयी बस्तियों के निर्माण और संगठन की महान् क्रियाशीलता, विशेष रूप से, चार्ल्स द्वितीय के शासन काल में हुई। देश की नयी साम्राज्यवादी नीति की दो बड़ी उल्लेखनीय विशेषताएँ थीं। पहली यह थी कि सब उपनिवेशों को स्थानीय स्वशासन के लिए पूरी शासन पद्धति प्रदान की गयी; इनकी संस्थाएँ इन उपनिवेशों की मातृभूमि—इंग्लैण्ड की संस्थाओं के आदर्शों पर बनीं और इनमें पूर्ण धार्मिक सहिष्णुता को स्थान दिया गया। इन बातों में ब्रिटिश साम्राज्यवादी पद्धति विश्व में किसी भी अन्य पद्धति से बहुत आगे बढ़ी हुई थी। विदेश-नीति का तथा व्यापारिक सम्बन्धों का नियन्त्रण इन उपनिवेशों की मातृभूमि—इंग्लैण्ड के लिए सुरक्षित रखा गया। इस पद्धति की दूसरी विशेषता यह थी कि साम्राज्य को एक ऐसी आर्थिक इकाई के रूप में संगठित करने का प्रयास किया गया था, जिसमें इंग्लैण्ड केन्द्रीय मण्डी तथा वितरण का केन्द्र बन गया। इस प्रवृत्ति में खतरा यह था कि इसमें उपनिवेशों के आर्थिक हित इंग्लैण्ड के वशवर्ती बन जाते थे और इस प्रकार दोनों में संघर्ष उत्पन्न होता था। क्रान्ति के बाद यह प्रवृत्ति एक दुर्भाग्यपूर्ण मात्रा में इस कारण बढ़ गयी, क्योंकि उस समय ब्रिटेन की व्यापारिक श्रेणी को सरकार में अधिक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हो गया था।

चौथी बात यह थी कि इस युग की विशेषता दो डच युद्ध थे; ये मुख्य रूप से दो समुद्री शक्तियों की पुरानी व्यापारिक प्रतिस्पर्धा से उत्पन्न हुए थे और इन युद्धों से भी अधिक

महत्त्वपूर्ण बात फ्रांस के विरुद्ध उग्र संघर्ष था। यह युद्ध राष्ट्रमण्डल के इतिहास में लगभग उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना एक शताब्दी पहले स्पेन के साथ हुआ संघर्ष महत्त्वपूर्ण था। यह संघर्ष चिरकाल तक इसलिए टलता रहा कि चार्ल्स द्वितीय और जेम्स द्वितीय फ्रांस के पेन्शन पाने वाले व्यक्ति बनने के लिए सहमत हो गये, परन्तु अब क्रान्ति के साथ यह संघर्ष भड़क उठा और इस युग के शेष भाग में चलता रहा। यह बहुपक्षीय संघर्ष था और इसके महत्त्वपूर्ण परिणाम निकले। यह संघर्ष एक अतीव अभिमानी शक्ति द्वारा यूरोप पर हावी होने को रोकने के लिए था और इस पहलू में ब्रिटिश द्वीप समूह ने अपने को पहले तो संयुक्त यूरोप का साझीदार और बाद में इसका नेता पाया। यह व्यापारिक, नौसैनिक और औपनिवेशिक प्रभुता पाने के लिए भी एक संघर्ष था, यद्यपि तत्कालीन व्यक्तियों के मनों में संघर्ष के इस पहलू की प्रधानता नहीं थी और इसीलिए अगले युग में संघर्ष को पुन: आरम्भ किया गया और अन्तिम दम तक लड़ाई लड़ी गयी। सम्भवत: समग्र दृष्टि से, राष्ट्रमण्डल के दृष्टिकोण से इस संघर्ष का मुख्य परिणाम यह था कि इसने ब्रिटिश नौसैनिक आधिपत्य को निश्चित रूप से स्थापित कर दिया। यह ऐसी नींव थी, जिस पर अगले युग की शानदार उपलब्धियाँ आधारित होनी थीं।

किन्तु इन वर्षों की कथा का मर्म और केन्द्र इसे विशिष्ट बनाने वाला राष्ट्रीय स्व-शासन का अर्द्ध अन्ध-संघर्ष था, क्योंकि यह दोनों दलों के प्राय: अधम संघर्षों की एक शृंखला में किया गया था, अत: इसका पूरा महत्त्व प्राय: भुला दिया जाता है, जबकि पाठक सदैव अपने मन में इस तथ्य को नहीं रखता कि इस युग की पार्टियाँ और राजनीतिज्ञ न केवल ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिए, किन्तु सारी दुनिया के लिए असाधारण महत्त्व रखने वाले एक महान् ऐतिहासिक विकास के अयोग्य उपकरण थे।



१

पुनःस्थापना (RESTORATION)

१. पुनःस्थापना का विचार और चार्ल्स द्वितीय का चरित्र

"पुनः स्थापना" का सिद्धान्त यह था कि युद्ध से पहले विद्यमान पुरानी पद्धति की ओर लौटना चाहिए। व्यवहार में यह असम्भव था, क्योंकि ब्रिटिश प्रदेशों में पहले १८ वर्षों में किये गये कार्यों को को बिलकुल मलियामेट नहीं किया जा सकता था। इस सारे समय में मानव का चिन्तन राज्य तथा चर्च में शासन की समस्याओं पर विचार करने में लगा हुआ था। विचारक लोग विभिन्न प्रकार के परीक्षण कर रहे थे और यह असम्भव था कि परम्परागत सत्ताओं के आगे समर्पण करने की और उन्हें निश्चित समझने की पुरानी आदत को पुनः स्थापित किया जाय। किसी भी दशा में पुरानी पद्धति की पुनः व्याख्या करने की आवश्यकता थी। जो व्यक्ति पुरानी पद्धति को पुनः स्थापित करने के लिए सबसे अधिक उत्सुक थे, उनमें भी इस पर मतभेद था कि वास्तव में यह पद्धति क्या थी। इसके अतिरिक्त ऐसे साहसिक और राजनीतिक परिवर्तन हो चुके थे, जिनका एक महान् प्रभाव अवश्य पड़ना था। इंग्लिश व्यापार के निरन्तर विकास ने व्यापारिक श्रेणी को पहले की अपेक्षा अधिक धनी और महत्त्वपूर्ण बना दिया था। ब्रिटिश द्वीपसमूह और यूरोप के महाद्वीप के मध्य में सम्बन्ध पहले की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ हो गये थे। इसका मुख्य कारण व्यापार का विकास था, कुछ कारण क्रामवेल की क्रियाशील विदेश-नीति थी और कुछ कारण यह था कि बहुत अधिक राजपक्षावलम्बी व्यक्ति कई वर्षों तक निर्वासित दशा में महाद्वीप में रहे थे। वैदेशिक मामले भी अतीत काल की अपेक्षा भविष्य में ब्रिटिश राजनीति पर एक बहुत अधिक गहरा प्रभाव रखने वाले थे और चूंकि यह स्पष्ट हो रहा था कि इनसे

प्रत्येक व्यक्ति के हित प्रभावित होते हैं, अतः यह असम्भव था कि वे मामले अब देर तक केवल राजा का तथा उसके परामर्शदाताओं के छोटे समूह का विशेष विषय समझे जांय । अनेक इंग्लिश व्यक्तियों के जीवन में उपनिवेश महत्त्वपूर्ण तथ्य बन गये थे । यह अनिवार्य था कि उनके विचार तथा जीवनपद्धतियाँ इंग्लैण्ड में कुछ प्रभाव डालें, यद्यपि यह प्रभाव अब तक ब्रिटिश द्वीपसमूह के दूसरे हिस्सों में नहीं पड़ रहा था । सबसे बढ़ कर पिछले वर्षों के लम्बे विवाद में राजनीति के तथा चर्च के शासन विषयक प्रतिस्पर्धी सिद्धान्त ऐसी तीक्ष्णता के साथ विकसित हुए थे, जैसी तीक्ष्णता पहले कभी नहीं थी । इनके अनुयायी कम या अधिक मात्रा में संगठित होने वाली पार्टियों में अपने समूह बनाने की प्रवृत्ति रख रहे थे और अगली पीढ़ी की एक विशेषता—संगठित दलों का आविर्भाव— समूची पद्धति पर अवश्य प्रभाव डालने वाला था । अतः पुरानी पद्धतियों की एक कोरी पुनः स्थापना असम्भव थी । एक महान् ऐतिहासिक ने कहा है "पुनःस्थापना सदैव एक प्रकार की क्रान्ति होती है ।"

पुनःस्थापित राज्य के राजनीतिज्ञ यदि इसका प्रयोग करना चाहते तो उनके हाथों में सब ब्रिटिश प्रदेशों के लिए सम्बन्धों की एक सुबोध पद्धति तैयार करने की सम्भावना थी । किन्तु कोरे पुनःस्थापना के सिद्धान्त ने तथा क्रामवेल की अध्यक्षता में बाधित रूप से किये गये एकीकरण से उत्पन्न होने वाले विद्वेषों ने इसे रोक दिया । इंग्लैण्ड में, स्काटलैण्ड में, आयरलैण्ड में और उपनिवेशों में समझौते द्वारा उत्पन्न समस्याओं पर बिलकुल पृथक् रूप से विचार किया गया । इनमें एकमात्र सामान्य कड़ी राजा और उसके चरित्र तथा उद्देश्य थे ।

चार्ल्स द्वितीय को यह अवसर प्राप्त था कि वह ब्रिटिश प्रदेशों में राजतन्त्र के लिए एक नवीन शुरूआत करे, किन्तु वह इतने बड़े कार्य के लिए प्रत्येक प्रकार से योग्य नहीं था । वह विनोदी, उत्तम स्वभाववाला, आराम-पसन्द, तीसवर्षीय युवा लम्पट व्यक्ति था । उसके कोई सिद्धान्त और विश्वास नही थे, उसमें प्रतिष्ठा की कोई भावना नहीं थी । उसने सुदीर्घ निर्वासन और दरिद्रता का दुःख झेला था, और अब उसका इरादा राजा की तरह एक आनन्द-मय जीवन बिताने का और "पुनः अपनी यात्राओं पर जाने" के सब खतरों से बचने का था । जिन व्यक्तियों को उसने अपना मित्र चुना था, उन व्यक्तियों के जीवन की खुल्लमखुल्ला तथा निर्लज्जतापूर्ण अनैतिकता ने उस पीढ़ी तक को धक्का पहुँचाया था, जो उन प्रतिबन्धों को खत्म करने के लिए तैयार थी, जिन्हें प्यूरिटन लोगों ने लगाया था । इंग्लैण्ड में तथा स्काटलैण्ड में जीवन के प्यूरिटन आदर्श जनता के बहुत बड़े तत्त्वों को प्रभावित कर रहे थे और चार्ल्स वैयक्तिक रूप से लोकप्रिय था । अतः वह इंग्लिश जीवन पर एक बहुत बुरा प्रभाव डालने में समर्थ हुआ । उसके व्यवहार ने तथा उसके दरबार के चरित्र ने दोनों देशों में राजतन्त्र को खोखला करने में निश्चित रूप से सहायता की । चार्ल्स की सर्वोत्तम विशेषता एक प्रकार की दयालुता थी । इसके कारण वह अनावश्यक अत्याचार को नापसन्द करता था और इसने उसे एक ऐसी सहिष्णुतापूर्ण नीति का समर्थन करने को प्रोत्साहित किया, जो नीति किसी भी दशा में उसके निजी उद्देश्यों के अनुकूल थी ।

जहाँ तक राजनीतिक क्षेत्र के उसके विचारों का सम्बन्ध है, उसे राजकीय सत्ता के बारे में भगवान् की ओर से दिये गये उत्तरदायित्व का वह उदात्त विश्वास बहुत कम था, जो उसके

पिता में था और जिसने उसके पिता को नष्ट किया था । उसमें विनोद की इतनी तीव्र भावना थी कि वह अपने को भगवान द्वारा अभिषिक्त प्रतिनिधि होने के विचार को गम्भीरतापूर्वक नहीं ले सकता था और न ही वह ऐसे उद्देश्य के लिए खतरा उठाने को तैयार था; किन्तु वह अपने यशस्वी चचेरे भाई, फ्रांस के लुई चौदहवें द्वारा उपभोग की जाने वाली प्रतिबन्धहीन शक्ति से और राज्य के सभी साधनों पर उसके अधिकार से ईर्ष्या रखता था । यद्यपि वह इसके लिए खुले तौर से लड़ने को तैयार नहीं था, तथापि वह बड़े सस्ते दाम पर और एक गुप्त रीति से अपने सम्मान को तथा अपने देश के सम्मान को बलिदान करने के लिए तैयार था, बशर्ते वह इतने सस्ते दाम पर और एक गर्हणीय रीति से पार्लियामेण्ट के उस नियन्त्रण से मुक्ति पा सकता, जो उसे क्लेशप्रद प्रतीत होता था । उसके लिए धर्म बहुत कम, या कोई महत्त्व नहीं रखता था; किन्तु उसका झुकाव इस विचार की ओर था कि एक राजा के लिए रोमन कैथोलिक मत सबसे अधिक सुविधाजनक धर्म है; यदि वह ऐसा कर सकता तो वह सब ब्रिटिश द्वीपों को रोमन कैथोलिक बना देता । वह इतना अधिक आलसी और आमोद-प्रमोद का प्रेमी था कि वह शासन की विस्तृत बातों के बारे में कोई चिन्ता नहीं करता था । इसलिए उसने वास्तविक कार्य मन्त्रियों पर छोड़ दिया । ये मन्त्री इस युग में आपेक्षिक दृष्टि से पहले युग की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण हो गये । किन्तु वह चतुर और दक्ष व्यक्ति था और आचरण के सम्बन्ध में धर्माधर्म की शंकाओं या दुविधाओं से मुक्त था । वह राज-नीतिक षड्यन्त्रों के खेलने में तथा अपने विरोधियों को मात देने के कार्य में अधिक आनन्द लेता था और इसमें वह बहुत चतुर हो सकता था । इस प्रकार वह अपने पिता की अपेक्षा कहीं अधिक भयंकर था, क्योंकि वह कभी भी अपने पिता की तरह स्वभाव के सन्तुलन को नहीं खोता था । वह मनुष्यों की नीच प्रवृत्तियों को समझता था और उसमें ऐसे सरल और दूसरों का दिल जीतने के आकर्षक ढंग थे, जो उसे मनुष्यों के साथ व्यवहार में एक बड़ा लाभ प्रदान करते थे । उसे अपने भाई और निश्चित उत्तराधिकारी यार्क के ड्यूक जेम्स की तुलना में भी लाभ था । जेम्स से प्रत्येक व्यक्ति घृणा करता था, क्योंकि वह एक संकीर्ण हृदय, कभी न क्षमा करने वाला अहंकारी व्यक्ति, एक जन्मजात अत्याचारी था और वह क्रूरता तथा विश्वासघात के दोनों प्रकार के कार्य करने में समर्थ था । फिर भी चार्ल्स से विपरीत, जेम्स के ऐसे विश्वास थे, जिनके लिए वह खतरा उठाने और कष्ट सहने के लिए तैयार था और उसमें देशभक्ति की भी कमी नहीं थी ।

आयरलैण्ड और स्काटलैण्ड के साथ पृथक् व्यवहार करने का एक कारण यह था कि इन देशों में इंग्लैण्ड की अपेक्षा, इस बात की अधिक सम्भावना थी कि वहाँ राजा की निरकुंश सत्ता को स्थापित किया जाय । यद्यपि इंग्लैण्ड वापस लौटने पर चार्ल्स का स्वागत बड़े उत्साह के साथ किया गया था और राजाओं के दैवी अधिकार और प्रजा के द्वारा शान्त भाव से आज्ञापालन के कर्त्तव्य की चर्चा की गयी, तथापि इसके बावजूद चार्ल्स इतना चतुर था कि वह यह जानता था कि इंग्लिश पार्लियामेण्ट के साथ व्यवहार करना आसान नहीं है । उसके राज्य का समूचा इतिहास इस दृष्टिकोण को न्यायोचित ठहराता है । इस युग में पार्लियामेण्ट के अधिकार का निरन्तर विकास हुआ, इसकी शक्ति को उलटने के जो प्रयत्न

चार्ल्स के अन्तिम वर्षों में तथा उसके उत्तराधिकारी के समय में किये गये और जो कुछ समय के लिए सफल होते हुए प्रतीत हुए, उनकी समाप्ति केवल उस क्रान्ति में हुई, जिसने अन्तिम रूप से इंग्लिश राजतन्त्र पर लगाम लगा दी और उसे नियन्त्रित कर दिया तथा न केवल इंग्लैण्ड में, अपितु सभी ब्रिटिश द्वीपों में पार्लियामेण्ट की प्रभुसत्ता को स्थापित किया ।

२. इंग्लैण्ड : सीमित राजतन्त्र और धार्मिक असहिष्णुता

चार्ल्स द्वितीय ने इंग्लैण्ड में अपने वापस लौटने से पहले प्रकाशित किये गये **ब्रेडा के घोषणा पत्र** में यह वचन दिया था कि वह धार्मिक सहिष्णुता की और राजनीतिक समझौते की नीति का समर्थन करेगा, किन्तु इस घोषणा ने मुख्य विवादास्पद प्रश्नों का निर्णय एक स्वतन्त्र पार्लियामेण्ट के लिए छोड़ दिया था । इस विषय में पहला सच्चा चिह्न राजा का यह इरादा था कि वह प्रिवी कौंसिल में न केवल राजपक्षपातियों की बड़ी संख्या को सम्मिलित करे, अपितु अनेक ऐसे व्यक्तियों को भी सम्मिलित करे, जिन्होंने गृहयुद्ध में पार्लियामेण्ट का पक्ष लिया था अथवा क्रामवेल के नेतृत्व में जिन्होंने देश की सेवा की थी, जैसे मोंक (जो अब एल्बेमार्ले का ड्यूक बना दिया गया था) अथवा एन्थनी ऐशले कूपर, जो बाद में लार्ड एशली और शेफ्टसबरी का अर्ल बना । इसका परिणाम यह हुआ कि प्रिवी कौंसिल ट्यूडर राजाओं तथा आरम्भिक स्टीवर्ट राजाओं के काल की भाँति इतनी बड़ी और पंचमेल तत्त्वों वाली बन गयी कि वह शासन का एक क्रियाशील कार्य करने वाला केन्द्र नहीं रही । विभिन्न मामलों का वास्तविक संचालन राजा द्वारा मनोनीत परिषद् की समितियों के हाथ में चला गया । ये सामान्य रूप से महान् परिश्रम और बुद्धिमत्ता के साथ कार्य करती थीं । किन्तु ऐसे प्रमुख पुरुषों का एक छोटा अनौपचारिक समूह भी उत्पन्न हो गया जो राजा के साथ नीति-सम्बन्धी व्यापक प्रश्नों पर विचार करता था और समितियों के कार्य में समन्वय स्थापित करता था । इस समूह में प्रमुख मन्त्री, लार्ड सभा के अध्यक्ष (लार्ड चान्सलर), कोषाध्यक्ष (लार्ड ट्रेजरर) और राज्य के दो सचिवों के साथ राजा द्वारा चुने जाने वाले कुछ अन्य व्यक्ति भी सम्मिलित होते थे । इस अनौपचारिक और अनिश्चित संस्था का अभ्युत्थान शासन में एक नया परिवर्तन था । एक प्रकार से इसे **कैबिनेट पद्धति** का श्रीगणेश कहा जा सकता है । राज्यकाल के प्रथम वर्षों में इस कैबिनेट पर, लार्ड चान्सलर के पद पर रहने वाला लार्ड क्लेरेण्डन हावी रहा । यह लम्बी पार्लियामेण्ट का सदस्य रहा था और बाद में युद्ध के समय चार्ल्स प्रथम का तथा निर्वासन में चार्ल्स द्वितीय का मुख्य मन्त्री रहा था । क्लेरेण्डन धार्मिक विचारों में संस्कारों को तथा कर्मकाण्ड को प्रधानता देने वाला (Highchurchman) व्यक्ति था; राजनीतिक विचारों में वह लम्बी पार्लियामेण्ट के प्रथम सत्र के उस कार्य का अनुयायी था, जिसमें उसने भाग लिया था । 'पुनः स्थापना' का समझौता वस्तुतः मुख्य रूप से क्लेरेण्डन का कार्य था; चूँकि उसको पार्लियामेण्ट को अपने साथ बनाये रखना था, अतः पार्लियामेण्ट की सब अतियों के लिए उसे दोष देना ठीक नहीं है ।

आरम्भ में उसे उस **सम्मेलन** (Convention) के साथ व्यवहार करना पड़ा, जिसने राजा को वापस बुलाया था और जिसमें प्रेसबिटेरियन लोगों का बहुमत था । एक 'क्षति-

पूर्ति और विस्मृति का कानून' पास किया गया। उसकी शर्तें इतनी उदार थी कि क्रुद्ध राजपक्षीय (Cavaliers) व्यक्तियों ने कहा कि इसने राजा के शत्रुओं को क्षतिपूर्ति प्रदान की है तथा मित्रों को भुला दिया है। इंग्लैण्ड में केवल १४ व्यक्तियों को ही मरवाया गया, ये प्रधान रूप से उन राजहन्ताओं (Regicides) में से थे, जिन्होंने चार्ल्स प्रथम को दण्डित किया था। क्लेरेण्डन को इस बात का श्रेय प्राप्त है कि उसने लार्ड सभा में अधिक कठोरता की माँग करने वाले प्रयास का विरोध किया। भूमि के अधिकारों के जिस जटिल प्रश्न के कारण उपद्रवों में राजपक्षपाती अलग हो गये थे, उस प्रश्न का समाधान वर्तमान व्यवस्थाओं को सम्पुष्ट करते हुए किया गया। इसका अपवाद केवल राज्य और चर्च के प्रदेश अथवा वे प्रदेश थे, जिन्हें बलपूर्वक स्वत्व हड़पने वाली सरकार ने जब्त कर लिया था। असन्तुष्ट राजपक्षपातियों के लिए यह भी शिकायत की एक बात थी; इसने उन्हें उस राजा का और मन्त्री का वशवर्ती बनाने के लिए कम तत्पर बनाया, जिसने उनकी दृष्टि में उन्हें धोखा दिया था। सम्मेलन ने जेम्स प्रथम की एक पुरानी योजना पास की। इसके इसके अनुसार सामन्ती भूमि, भूधारण-पद्धतियों या पट्टों की समाप्ति करके इनके स्थान पर राजा को उन निर्माण शुल्कों का एक स्थायी राजस्व प्रदान किया गया, जो शुल्क गृहयुद्ध में पहली बार लगाये गये थे। इसका अभिप्राय यह था कि भूमि पर स्वामित्व रखने वाले कुलीन वर्ग ने राष्ट्र के व्यय पर पुराने सामन्ती दायित्वों के अन्तिम अवशेषों से मुक्ति पा ली।

किन्तु मुख्य तात्कालिक समस्या धार्मिक समझौते की थी। सम्मेलन इस समस्या को हल नहीं कर सका। यह एक समुचित रीति से निर्वाचित पार्लियामेण्ट के लिए छोड़नी पड़ी। किन्तु क्लेरेण्डन के घर पर हुए प्रमुख ऐंग्लिकन और प्रेसबिटेरियन लोगों के सम्मेलन में ऐसे समझौते की आशा हो गयी, जो एक मृदु विशपीय पद्धति पर आधारित था और जिसने प्रेसबिटेरियन लोगों की बहुसंख्या को सन्तुष्ट कर लिया होता। इन चर्चाओं को पुनः **सेवाय सम्मेलन** में आरम्भ किया गया, इसका सभापति लन्दन का बिशप था, किन्तु इसके द्वारा किसी निश्चित परिणाम पर पहुँचने से पहले नयी पार्लियामेण्ट (मई १६६१ ई०) चुनी गयी, उसने यह मामला अपने हाथों में ले लिया।

पुनः स्थापना के पहले उत्साह में चुनी गयी यह पार्लियामेण्ट १८ वर्ष तक बनी रही। यह अवधि लम्बी पार्लियामेण्ट जैसी ही दीर्घ थी। इस पार्लियामेण्ट में कट्टर राजपक्षपातियों का प्रबल बहुमत था, वे इस बात पर तुले हुए थे कि अब तक सहे गये वे अपने सभी कष्टों का बदला लेंगे और शीघ्र ही उन्होंने समझौते की सब आशाएँ समाप्त कर दीं। उन्होंने एकदम १६४२ ई० के उस कानून को रद्द कर दिया, जिसने विशपों को लार्ड सभा से बहिष्कृत किया था। इसके बाद प्यूरिटन लोगों के नगरों में प्रबलतम होने के कारण उन्होंने एक **कार्पोरेशन अधिनियम** (Corporation Act) पास किया (१६६१ ई०)। इसके अनुसार म्युनिसिपल कार्पोरेशनों के सब सदस्यों के लिए यह घोषणा करना आवश्यक बना दिया गया कि वे राजमुकुट के प्रति प्रतिरोध के विरोधी हैं तथा 'पवित्र संघ और समझौते' के एक औपचारिक परित्याग के समर्थक हैं। इसके बाद उन्होंने **'एकरूपता का कानून'** (Act of uniformity) पास किया (१६६२ ई०)। इसके अनुसार प्रार्थना पुस्तक को आवश्यक बना दिया गया और बिशपों से

दीक्षा लेने की पद्धति को स्वीकार करना तथा प्रार्थना पुस्तक के सब सिद्धान्तों और संस्कारों को मानना सब पेशों के लोगों के लिए और सब विश्वविद्यालयों, पाठशालाओं तथा निजी गृहों में भी काम करने वाले शिक्षकों के लिए, सन्त बार्थोलोम्यू के दिवस (२४ अगस्त)[1] से पहले आवश्यक बना दिया गया। **लाइसेन्स या अनुज्ञप्ति देने वाला कानून** या अधिनियम (Licensing Act) भी बनाया गया (१६६२ई०), इसका उद्देश्य नास्तिक, फूट डालने वाली और राजद्रोही पुस्तकों और पुस्तिकाओं के प्रकाशन और बिक्री का नियन्त्रण करना और प्रेस की सेन्सरशिप को पुनः स्थापित करना था। न्यायाधीशों को सब कानूनी रचनाओं को, राज्य-सचिवों को सब ऐतिहासिक और राजनीतिक रचनाओं को तथा बिशपों को सब धार्मिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक रचनाओं को स्वीकृत करना था। यह कानून केवल दो वर्ष के लिए था, किन्तु १६७९ ई० तक नियमित रूप से इसका नवीकरण होता रहा। बाद में, राजा की ओर से सहिष्णुता की इच्छा को देख कर भयभीत होने वाली पार्लियामेण्ट ने न केवल एक सहिष्णुता-विधेयक को रद्द कर दिया (१६६२ ई०), किन्तु उसने प्यूरिटन लोगों के विरुद्ध दो उग्र कानून भी पास किये। एक **कान्वेंण्टिकल अधिनियम** (Conventicle Act) ने (१६६४ ई०) में इंग्लैण्ड के चर्च के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार की उपासना के लिए एकत्र होने वाले चार व्यक्तियों से अधिक लोगों की सभा में उपस्थिति के लिए कठोर दण्ड का विधान करते हुए इसे रोका और **पाँच मील के अधिनियम** (Five mile Act) (१६६५ ई०) द्वारा पदच्युत प्यूरिटन पुरोहितों के उस कार्पोरेशन वाले नगर में अथवा पेरिश के निकट पाँच मील के भीतर आने को कठोर दण्डों द्वारा रोका गया, जिसमें वे पहले प्रचार करते थे या पढ़ाते थे; वे उसमें तब तक नहीं आ सकते थे जब तक वे, एकरूपता के कानून को शपथ लेकर न स्वीकार करें, किसी भी बहाने से विरोध करने के विरुद्ध शपथ न लें और इस बात की सौगन्ध न खाएँ कि वे चर्च अथवा राज्य में किसी परिवर्तन के लिए प्रयत्न नहीं करेंगे। इस बदनाम कानून को बनाने का कारण यह था कि इस समय लन्दन में प्लेग बड़े जोरों पर थी और अनेक प्यूरिटन पुरोहित अपने अनुयायियों की सहायता करने के लिए लौट आये थे। ऑक्सफोर्ड में सुरक्षित रूप से अवस्थित पार्लियामेण्ट को इस सम्भावना की आशंका थी कि पुरोहित अपनी पुरानी प्रभुता दुबारा न प्राप्त कर लें।

सिद्धान्त रूप में इन कानूनों द्वारा प्यूरिटन सम्प्रदाय बिलकुल समाप्त हो जाना चाहिए था। १२०० से अधिक पादरियों ने सैण्ट बार्थोलोम्यू के दिन १६६२ ई० में, अपने घरों और चर्चों को छोड़ना एकरूपता की शपथ लेने की अपेक्षा अधिक पसन्द किया। इनमें कुछ उच्चतम प्यूरिटन व्यक्ति भी सम्मिलित थे, जैसे रिचर्ड बेक्सटर, एडमण्ड केलेमी, विलियम बेट्स और जॉन वेसली के दो दादा। ये लोग निर्धन हो गये, उनके अनुयायी उनकी सहायता नहीं कर सके। किन्तु उनके उदाहरणों ने प्यूरिटन परम्पराओं को एकदम उदात्त किया और

---

१. सन्त बार्थोलोम्यू को आर्मीनिया में ४४ ई० में ईसाइयत के सिद्धान्त का प्रचार करने के अपराध में जिन्दा खाल खिंचवा कर शहीद बना दिया गया था। इस घटना की स्मृति प्रति वर्ष २४ अगस्त को मनायी जाती है।

उन्हें बनाये रखा। प्यूरिटन भावना की कुछ उच्चतम अभिव्यक्तियाँ इन वर्षों से सम्बन्ध रखती हैं। अन्धे, निर्धन और अप्रसिद्ध मिल्टन ने इन्हीं वर्षों में प्यूरिटन मत का महाकाव्य पैरा-डाइज़ लॉस्ट और पैराडाइज़ रिगेण्ड (Paradise Host, Paradise Regained) लिखा। काँसे के बर्तनों का काम करने वाले उपदेशक जॉन बनियन ने कानवेण्टिकल एक्ट के कानून के अनुसार बन्दी होने पर 'दी पिलग्रिम्स प्रोग्रेस' में प्यूरिटन मत के उच्चतम और कोमलतम पहलुओं को प्रतिबिम्बित किया। इन दोनों ने न केवल इंग्लैण्ड के जीवन और विचारधारा में प्यूरिटन लोगों की भावना को एक शक्तिशाली तत्त्व के रूप में सजीव बनाये रखने में सहायता की, अपितु वे अपने युग के लेखकों में सर्वोत्तम माने गये। सामान्य प्यूरिटन लोगों की अधिकांश संख्या मौन भाव से उसी प्रकार समरूपता प्रकट करती रही, जैसे इनके पिताओं ने लॉड (Laud) के समय में प्रकट की थी। किन्तु वह अब भी प्यूरिटन मत से सहानुभूति रखती थी; इसने कार्पोरेशन कानून के उद्देश्यों को विफल बना दिया, क्योंकि इसका यह अभिप्राय था कि नगरों में अब भी प्यूरिटन प्रभाव बना रहे। राजपक्षपाती पार्लियामेण्ट में भी प्यूरिटन लोगों के साथ सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियों की एक ठोस अल्प संख्या थी। हमारे पास यह जानने के लिए कोई साधन नहीं है कि समूचे देश में कितने प्यूरिटन लोगों ने एंग्लिकन चर्च के साथ एकरूपता स्वीकार करने से इन्कार किया। २० वर्ष के बाद एल्गरनॉन सिडनी ने इनकी संख्या का अनुमान दस लाख लगाया था। यह अवश्यमेव एक बड़ी अतिशयोक्ति है, क्योंकि उस समय देश की समूची जनता केवल लगभग पाँच लाख थी। किन्तु चर्च से असहमति रखने वाले लोगों की संख्या निश्चित रूप से बहुत अधिक थी और इसके बाद से वे राष्ट्र के जीवन में ऐसा तत्त्व बन गये, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती थी।

राजपक्षपाती पार्लियामेण्ट प्यूरिटन लोगों के प्रति विरोध में तथा धार्मिक स्वतन्त्रता के विचार से घृणा करने में यदि कट्टर थी तो यह किसी भी प्रकार राजनीति के क्षेत्र में ताज की शक्ति बढ़ाने की समर्थक नहीं थी। उसने उन विशेषाधिकारों को पुनः स्थापित करने का सपना नहीं लिया जिनका प्रयोग ट्यूडर वंशी और आरम्भिक स्टीवर्ट राजा किया करते थे। इसने १६४०-४१ ई० के संविधान को ही स्वीकार किया और इसकी पुनः व्याख्या की। पुराने विशेषाधिकार न्यायालयों—स्टार चैम्बर की तथा हाई कमीशन कोर्ट आदि—की समाप्ति को १६६१ ई० में पुष्ट किया गया। सरकार की शक्ति बनाये रखने के लिए कानून की सामान्य प्रक्रिया पर्याप्त होनी चाहिए। यह सत्य है कि १६४१ ई० का **त्रैवार्षिक अधिनियम** (Triennial Act) रद्द कर दिया गया, किन्तु यह केवल इसलिए हुआ कि इसकी शर्तें आक्षेप-योग्य थीं; इसकी मुख्य व्यवस्था यह थी कि प्रति तीन वर्ष में पार्लियामेण्ट की कम-से-कम एक बैठक अवश्य होनी चाहिए। इस व्यवस्था को १६६४ ई० के त्रैवार्षिक कानून से पुनः कानूनी रूप दिया गया। नागरिक सेना (Militia) अधिनियमों (१६६१-६३ ई०) द्वारा पार्लियामेण्ट ने ताज (Crown) को स्थलीय और समुद्री सेनाओं पर सर्वोच्च नियन्त्रण पुनः प्रदान किया, किन्तु इसे युद्ध आरम्भ होने से पहले लम्बी पार्लियामेण्ट ने वापस ले लिया था। **नागरिक सेना अधिनियमों** (Militia Acts) का तात्पर्य यह था कि जिलों के अधिकारियों या लार्ड लेफ्टिनैण्टों की अध्यक्षता में पुराने ढंग की पुरानी नागरिक सेना प्रतिरक्षा के लिए पर्याप्त

होनी चाहिए। स्थायी पेशेवर सेना का विचार राजपक्षावलम्वियों के लिए उतना ही घृणास्पद था, जितना किसी अन्य व्यक्ति के लिए। वह इसलिए घृणास्पद था कि इसे राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए खतरा समझा जाता था।

वस्तुतः इस बात की बहुत कम आशंका थी कि चार्ल्स द्वितीय अपने को इंग्लिश पार्लियामेण्ट पर निर्भर होने की स्थिति से मुक्त करने में समर्थ होगा, क्योंकि अपने जीवन भर के लिए स्वीकार किये गये भारी राजस्व के बावजूद वह ऋणी था और वह कभी ऋण से मुक्त होने में समर्थ नहीं हो सका। वह निर्वासन से लौटने पर अपने साथ तीस लाख पौण्ड का कर्ज लाया था, उसने पिछले दो वर्षों की अराजकता के कारण देश की वित्तीय व्यवस्था को अस्तव्यस्त पाया। उसके निजी अपव्यय ने उसके आर्थिक कष्टों को अधिक बढ़ाया। यद्यपि देश की बढ़ती हुई समृद्धि ने सीमा-शुल्कों से होने वाली आमदनी को दिन-दूना रात-चौगुना बढ़ाया, तथापि वह सहायता के बिना अपनी आय के भीतर निर्वाह नहीं कर सका। करों पर पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण अब इतना पूर्ण हो गया था कि वह अपने पिता द्वारा प्रयोग में लाये गये किसी अनियमित उपाय का अवलम्बन करने का साहस नहीं कर सकता था। यदि वह पार्लियामेण्ट पर अपनी निर्भरता को स्वीकार नहीं करता, तो उसके लिए एक मात्र विकल्प किसी विदेशी शक्ति का पेन्शन पाने वाला व्यक्ति बन जाना था और जब उसने उसका अवलम्बन किया, तो उसका पार्लियामेण्ट के साथ नया झगड़ा शुरू हो गया। यह बात निश्चित थी कि पुन. स्थापना का अभिप्राय इंग्लैण्ड में निरंकुश राजसत्ता की स्थापना जैसी कोई वस्तु नहीं थी।

३. स्काटलैण्ड : निरंकुश राजसत्ता और धार्मिक अत्याचार

स्काटलैण्ड में बड़ी विभिन्न परिस्थिति थी। यहाँ चार्ल्स निरंकुश शक्ति की स्थापना करने की आशा रख सकता था और उसने लगभग ऐसी शक्ति की बहुत कुछ स्थापना भी कर ली थी। केवल अत्यधिक उग्र प्रेसबिटेरियन लोगों के कठिन प्रतिरोध ने ही उसे इस बात से रोका। स्काटलैण्ड के वशीकरण में उसका मुख्य कार्यकर्ता लॉडरडेल का अर्ल (बाद में ड्यूक) था, यह स्काटलैण्ड के सचिव के रूप में अधिकांश समय लन्दन के दरबार में बिताता था और अपने अभिकर्त्ताओं के माध्यम से स्काटलैण्ड पर शासन करता था। लॉडरडेल ने दरबारी दलों के सब परिवर्तनों के मध्य में बीस वर्ष तक अपनी स्थिति बनाये रखी। वह प्रेसबिटेरियन था और उसने स्काटलैण्ड के उपद्रवों में प्रमुख भाग लिया था। उसने चार्ल्स द्वितीय को १६६० ई० में समझौता स्वीकार करने की प्रेरणा की थी। अब वह इस बात के लिए तैयार था कि उस समय उसने राजा को जिस पद्धति के लिए शपथ दिलाई थी, अब उसका विध्वंस कर दिया जाय। किन्तु समग्र रूप से उसकी नीति कम-से-कम अपनी शक्ति की अवधि के पूर्वार्द्ध में प्रेसबिटेरियन लोगों के लिए मृदु सहिष्णुता बरतने की थी। इस नीति के साथ, चर्च के शासन में बिशप-पद्धति की पुनः स्थापना की गयी, तथा राज्य के सभी मामलों में ताज द्वारा प्रभावशाली नियन्त्रण को स्थापित किया गया।

इंग्लैण्ड की अपेक्षा स्काटलैण्ड में नवीन शासन की स्थापना के आरम्भ के समय में

बहुत ही कम व्यक्तियों को दण्डित किया गया। केवल चार व्यक्तियों को ही प्राणदण्ड दिया गया। इनमें से एक आरगिल का अर्ल था, दूसरा व्यक्ति जेम्स गुथरी था, वह प्रेसबिटेरियन लोगों के उग्रवादी सम्प्रदाय का सबसे अधिक धर्मान्ध व्यक्ति था। १६६१ ई० में स्काटिश पार्लियामेण्ट की बैठक हुई। इसके एक सदस्य ने कहा कि "पार्लियामेण्ट कभी इतनी चापलूस नहीं थी।" इसके मुख्य कारण ये थे कि कुलीन लोग पुरोहितों के उस अत्याचार से ऊब चुके थे, जिसे वे १६३८ ई० से सहन कर रहे थे। इनकी तथा ताज की जिस पुरानी मैत्री को चार्ल्स प्रथम ने भंग कर दिया था, वह मैत्री पुनः स्थापित की गयी। राजा के लिए एक विशाल राजस्व देना स्वीकार किया गया। इसने उसे ऐसी सेना बनाये रखने में समर्थ बनाया, जैसी सेना उसके किसी पूर्ववर्ती राजा के पास नहीं थी।

जेम्स प्रथम के दिनों की भाँति, लार्ड्स ऑफ दि आर्टिकल्स ([illegible] के सारे मामलों के प्रारूप तैयार करने वाले व्यक्ति), ताज की ओर से लॉडरडेल द्वारा क्रियात्मक रूप से मनोनीत किये गये थे। १६३३ से बनाये गये पार्लियामेण्ट के सभी कानून रद्द कर दिये गये। इनमें १६४१ ई० की उस पार्लियामेण्ट का भी कानून था, जिसमें चार्ल्स प्रथम भी उपस्थित था। इसका यह अभिप्राय था कि एक ही चोट से १६३८ ई० के बाद से स्काटिश क्रान्ति के समूचे परिणामों को मलियामेंट कर दिया गया और चार्ल्स द्वितीय वैसा ही निरंकुश शासक बना, जैसा जेम्स प्रथम था। एक बार पुनः सारी राजनीतिक शक्ति का प्रयोग एक छोटी प्रिवीकौंसिल द्वारा किया जाने लगा, इसके सब सदस्य लॉडरडेल द्वारा मनोनीत किये जाते थे।

धर्म के क्षेत्र में आज्ञाकारी स्काटिश पार्लियामेण्ट ने एक कानून पास किया। इसमें यह घोषणा की गयी थी कि "चर्च के बाह्य शासन की व्यवस्था उचित रीति से ताज के एक स्वाभाविक अधिकार के रूप में राजा से सम्बन्ध रखती है।" यह घोषणा उन उत्तम प्रेस-बिटेरियन लोगों के लिए घृणास्पद थी, जो चर्च के लिए राज्य के नियन्त्रण से पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग करते थे। समझौतों (Covenants) को अवैध घोषित किया गया और सब पदाधिकारियों के लिए इन समझौतों के परित्याग को तथा ताज के प्रति सम्पूर्ण प्रतिरोध की समाप्ति को आवश्यक बना दिया गया। किन्तु लॉडरडेल इतना चतुर व्यक्ति था कि वह इन असीम दावों के लिए, अनुचित रूप से बहुत दूर तक जाने का आग्रह नहीं करता था, यद्यपि कुछ राजपक्षा-वलम्बी किसी भी हद तक जाने को तैयार थे। यद्यपि बिशपों की पुनः स्थापना की गयी, तथापि उन्हें बड़े अधिकार नहीं दिये गये थे और यद्यपि सामान्य परिषद् (General Asse-mbly) को इसलिए नहीं बुलाया गया कि कहीं यह राष्ट्रीय प्रतिरोध को संगठित करने का प्रयास न करे, तथापि कर्क अधिवेशन (Kirk Sessons) प्रेसबिटरी और डायोसीसन धर्म सभाओं (Diocesan synods) ने अपना काम जारी रखा। दुराग्रही स्काटों पर ऐंग्लिकन प्रार्थना-पुस्तक थोपने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया।

कुल मिला कर यह समझौता देश के बड़े भाग में स्वीकार कर लिया गया। किन्तु दक्षिण पश्चिम में लेनार्क, एयरशायर और गैलोवे में दूसरी ही हवा थी। यह जिला सदैव उग्र मतवालों का गढ़ रहा था, यहाँ तीन सौ पुरोहितों ने समझौते को शपथ खाकर त्याग करने से

अथवा बिशप पद्धति को स्वीकार करने से इन्कार किया। इन्हें अपने पेरिशों (Parishes) से बलपूर्वक बाहर निकाल दिया गया। किन्तु उनके पेरिश वालों ने कन्वेण्टिकल्स या **गुप्त धार्मिक सभाओं** के विरुद्ध के सब प्रतिबन्धों के होते हुए भी उनका अनुसरण किया और इनका स्थान ग्रहण करने वाले उपयाजकों (Curates) के सेवा-क्षेत्र उजड़ गये। यह वेस्टलैण्ड के समझौतावादी (Covenanters) कठोर ह्विग लोगों का आरम्भ था, जिन्हें कोई भी वश में नहीं कर सका। सिपाही इन पर नियन्त्रण करने के लिए भेजे गये। चर्च से अनुपस्थित रहने वालों को जुर्माना किया गया और उन्हें सैनिकों के ठहरने के लिए स्थान और भोजन देने की व्यवस्था करनी पड़ी। यह अत्याचार १६६६ ई० तक निरन्तर जारी रहा, इस वर्ष इसके कारण एक विद्रोह हुआ। किन्तु राजा जिन शक्तियों का नियन्त्रण कर रहा था, उनके मुकाबले में विद्रोह की सफलता की कोई आशा नहीं थी। **पैण्टलैण्ड का विद्रोह** (इसे ऐसा नाम देने का कारण यह है कि पैण्टलैण्ड की पहाड़ियों में इसका अन्तिम रूप से दमन किया गया था, यद्यपि यह विद्रोह गैलोवे में शुरू हुआ था) देश को बगावत के लिए उभाड़ने में असफल हुआ और इसे रुलियोन ग्रीन में कुचल दिया गया। लड़ाई में ४० व्यक्ति मारे गये, इससे अधिक बन्दी बनाये गये इन्हें समझौते को परित्याग करने से इन्कार करने पर फाँसी पर लटकाया गया और पुरोहितों तथा अन्य नेताओं को अपने साथियों का नाम बताने के लिए बूटों से तथा अँगूठा दबाने के शिकंजों से सताया गया। विन्स के क्रूर डेल्जील के सेनापतित्व में पहले की अपेक्षा अधिक सेनाएँ गैलोवे में भेजी गयीं। किन्तु इस नृशंसता के बाद केवल मामूली सफलता मिली।

१६६३ ई० से १६६७ ई० तक चलने वाला यह अत्याचार प्रधान रूप से स्काटलैण्ड में प्रिवीकौंसिल के सदस्यों के कारण हुआ। लॉडरडेल अधिक नरम नीति के प्रभावों का परीक्षण करने के लिए तुला हुआ था। सेनाओं को वापस बुला लिया और १६६९ ई० में एक मुक्ति-पत्र (Indulgence) निकाला गया। इससे बलपूर्वक बाहर निकाले गये पुरोहितों को अपने क्षेत्रों या पेरिशों में वापस लौटने की अनुमति दी गयी, बशर्ते कि वे शान्तिपूर्ण व्यवहार करें। इन्हें शपथ लेने की आवश्यकता नहीं थी। इनमें से चालीस व्यक्तियों ने इन शर्तों को स्वीकार कर लिया, किन्तु इससे उन व्यक्तियों का साहस और कटुता बढ़ गयी, जिन्होंने रोटी के टुकड़े के प्रलोभन में अपने सिद्धान्तों की बलि देने से इन्कार किया। दक्षिण-पश्चिम की आबादी ने सिपाहियों की उपस्थिति से मुक्ति पा कर एक बार पुनः **गुप्त धार्मिक सभाओं** या कन्वेण्टिकल्स (Conventicles) की शरण ली।

इस पर लॉडरडेल ने कठोरता आरम्भ की। १६७० ई० में उसने कन्वेण्टिकल्स या गुप्त धार्मिक सभाओं के विरुद्ध एक भयंकर कानून पार्लियामेण्ट से पास कराया। यह इससे सादृश्य रखने वाले इंग्लिश कानून से कहीं अधिक कठोर था। इस कानून के अनुसार गुप्त धार्मिक सभाओं में प्रचार करने वालों को तथा इसके उपदेशों को सुनने वाले व्यक्तियों को जुर्माने और जेल की सजा हो सकती थी तथा प्रचारकों को मृत्यु दण्ड दिया जा सकता था। किन्तु इस कानून ने समस्या का समाधान नहीं किया, यद्यपि यह कानून इतना कठोर था कि इसे शाब्दिक रूप से पूरा लागू नहीं किया जा सकता था। दक्षिण-पश्चिमी भाग के साथ समझौता नहीं किया जा सकता था और शीघ्र ही भीषण असन्तोष का विस्फोट खुले विद्रोह में होने वाला था।

गुप्त धार्मिक सभाओं (Conventicles) के विरुद्ध इस कठोर कानून को पूरी तरह से लागू करने के कार्य को १६७४ ई० तक स्थगित कर दिया गया। पुन: सैनिकों को असन्तुष्ट जिलों में भेजा गया। सब जमींदारों को अपने लिए, अपने सब असामियों और आश्रितों के लिए यह जमानत देना आवश्यक था कि वे न तो स्वयं इन धार्मिक सभाओं में जायेंगे और न ही इनके किसी उपदेशक की अथवा सभाओं में बार-बार जाने वालों की सहायता करेंगे। जब उन्होंने प्रतिवाद करते हुए यह कहा कि वे ऐसी जिम्मेदारी नहीं ले सकते तो दस हजार सैनिकों को, जिनमें छ: हजार हाइलैण्डर्स भी सम्मिलित थे, पश्चिम में भेजा गया और उन्हें यह अधिकार दिया गया कि वह विशेष रूप से सैनिकों को ठहराने के बन्धन से मुक्त न किये गये किसी भी घर में बगैर व्यय दिये निवास कर सकते हैं। कुछ महीनों के बाद हाईलैण्डर लूट के माल को लाद कर अपने घर वापस लौट गये।

इस प्रकार के कार्यों का केवल एक ही परिणाम — विद्रोह -- हो सकता था। १६७९ ई० में कुछ निराशोन्मत्त व्यक्तियों ने आर्कबिशप शार्प की हत्या सेण्ट एण्ड्रयूज के निकट मेगस-म्यूर में कर दी। यह पहले प्रेसबिटेरियन पुरोहित था और अब लॉडरडेल का दाँया हाथ था। हत्यारे शरण ग्रहण करने के लिए पश्चिमी प्रदेश में भाग गये, पश्चिमी प्रदेश ने इनका समर्थन करने के लिए सशस्त्र विद्रोह किया। ड्रमक्लाग की दलदलों में उत्साह के साथ उपासना करती हुई एक विशाल धार्मिक सभा पर क्लेवरहाउस निवासी जान ग्राहम नामक कुख्यात अत्याचारी के नेतृत्व में सैनिकों ने हमला कर दिया और उन्हें हानि पहुँचाते हुए भगा दिया। इससे पश्चिम में विद्रोह भड़क उठा; मानमाऊथ के ड्यूक की अध्यक्षता में १५०० व्यक्तियों की एक सेना विद्रोहियों का दमन करने के लिए भेजी गयी। बाथवैल के पुल पर नियमित सेनाओं ने एक सुगम विजय प्राप्त की, ४०० मनुष्यों को मौत के घाट उतार दिया गया और १२०० को बन्दी बनाया गया। इसके बाद स्काटलैण्ड के इतिहास में **'हत्या के समय'** (Killing Time) के नाम से प्रसिद्ध एक बुरे युग का प्रारम्भ हुआ, इसमें अभागे समझौतावादियों का पीछा बिना किसी दया या करुणा के, दक्षिण के दलदली प्रदेशों में जंगली जानवरों की भाँति किया जाता था, उन्हें अपने मकानों की देहलियों पर कुत्तों की तरह गोली से उड़ाया जाता था और बूट से तथा अंगूठा दबाने के शिकंजों से उन्हें यातना दी जाती थी। इन वर्षों में स्काट-लैण्ड का मुख्य शासक यार्क का ड्यूक जेम्स था। १६८८ ई० में जब वह गद्दी पर बैठा तो 'हत्या का समय' अब भी चल रहा था। यह केवल क्रान्ति के साथ ही समाप्त हुआ और इसने स्काटिश इतिहास पर अमिट प्रभाव छोड़ा।

'पुन: स्थापना' ने स्काटलैण्ड को जो वस्तुएँ प्रदान कीं, वे ये थीं; राजनीतिक स्वेच्छा-चारी सत्ता; एक ऐसी सेना जो अन्यत्र आवश्यकता पड़ने पर उपयोग के लिए तैयार रहती थी और दक्षिण-पश्चिम के अधिक कट्टर प्रेसबिटेरियनों के लिए एक ऐसा भीषण अत्याचार, जैसा अत्याचार इससे पहले अपने समूचे इतिहास में ब्रिटेन के किसी भाग ने बर्दाश्त नहीं किया था। इस अत्याचार से प्रत्यक्ष रूप से केवल देश के एक ही भाग ने कष्ट उठाया; किन्तु शेष भाग इसकी ओर कटुतापूर्ण सहानुभूति के साथ देखता रहा।

इस बीच में समूचे युग में, स्काटलैण्ड को अपने शक्तिशाली पड़ोसी द्वारा एक पृथक् देश के रूप में व्यवहार किये जाने की कुछ हानियाँ अच्छी तरह समझ आ रही थीं। हम आगे चल कर देखेंगे कि इंग्लैण्ड अब अपने विकास के लिए अत्यधिक संरक्षण की नीति का श्रीगणेश कर रहा था। स्काटलैण्ड में यह अनुभव किया गया कि उसके साथ एक विदेशी देश का सा व्यवहार किया जा रहा है, वह इंग्लैण्ड की और उपनिवेशों की मण्डियों से वहिष्कृत किया जा रहा है। इस समय में, उसकी कोई स्वतन्त्र विदेश नीति नहीं हो सकती थी; उसकी नीति का नियन्त्रण उसके राजा की इंग्लिश सरकार द्वारा किया जाता था। उसके चर्च को स्वतन्त्रता नहीं प्राप्त थी। राजनीतिक मामलों में वह एक क्रियात्मक निरंकुश शासन का वशवर्ती था। वह अपनी दरिद्र दशा में एक उन्नतिशील और समृद्ध पड़ोसी से पृथक् होने के सब दोषों का दु:ख भोग रहा था जब कि वह स्वतन्त्रता के किसी लाभ का उपभोग नहीं कर रहा था।

४—आयरलैण्ड : निरंकुश शासन और आंशिक समझौता

आयरलैण्ड में, पुन: स्थापना के राजनीतिज्ञों के सम्मुख स्काटलैण्ड की समस्या की अपेक्षा अधिक कठिन समस्या थी, क्योंकि आयरिश विद्रोह के तथा प्यूरिटन लोगों के शासन काल में की गयी बुराइयों और अन्यायों का इलाज करना कहीं अधिक कठिन था। फिर भी, यह बात अच्छी तरह कही जा सकती है कि किसी अन्य स्थान की अपेक्षा आयरलैण्ड में परिणाम अधिक सन्तोषजनक थे। यह दो कारणों से था। पहला कारण इस समस्या के समाधान में ऑरमाण्ड के ड्यूक का प्रबल प्रभाव था। वह स्वयमेव ऐसा आयरिश व्यक्ति था, जिसे आयरिश कैथोलिक लोगों के साथ बड़ी सहानुभूति थी; किन्तु इसके साथ ही वह इंग्लैण्ड केउत्कर्ष को भी बनाये रखने के लिए दृढ़ निश्चयी था। दूसरा कारण यह था कि चार्ल्स द्वितीय और उसके राजपक्षावलम्बी परामर्शदाता कैथोलिकों के लिए कुछ मृदुता की भावना रखते थे; किन्तु इसी समय में वे इस बात का साहस नहीं रखते थे कि वे हाल में वहाँ बसने वाले इंग्लिश लोगों से पृथक् हो जाँय। अत: आयरलैण्ड में नया शासन स्काटलैण्ड की अपेक्षा कम पाशविक और कम एकपक्षीय था, वहाँ समृद्धि और सन्तोप का श्रीगणेश भी हो गया। यह वात वस्तुत: सच्ची प्रगति का चिन्ह था कि लार्ड लेफ्टिनेण्ट (आयरलैण्ड में राजा के प्रतिनिधि) ने कैथोलिकों के पादरीवर्ग से तथा कुलीन वर्ग से एक ऐसा मानपत्र पाया, जिसमें ब्रिटिश सत्ता के प्रति राजभक्ति प्रकट की गयी थी और सभी विदेशी शक्तियों को—पोप की अथवा किसी अन्य राजा की धार्मिक अथवा सांसारिक विदेशी शक्ति को अस्वीकार किया गया था। यह राजभक्तिपूर्ण आवेदनपत्र निश्चित रूप से, आयरिश कैथोलिकों की सम्मति का प्रतिनिधित्व नहीं करता था, किन्तु इसने समझौते के एक युग के श्रीगणेश को सूचित किया।

मुख्य कठिनाई उन जमीनों के साथ व्यवहार करने की समस्या थी, जो जमीनें प्यूरिटन गणराज्य के समय में कैथोलिक स्वामियों से जबर्दस्ती छीन ली गयी थी और वहाँ बसने वाले इंग्लिश लोगों को हस्तान्तरित कर दी गयी थी। इन्हें पूरे तौर से वापिस नहीं किया जा सकता था, किन्तु कम-से-कम उन आयरिश कैथोलिकों के साथ न्याय करने का एक प्रयास किया गया, जो कैथोलिक यह सिद्ध कर सकते थे कि उन्होंने ताज के विरुद्ध युद्ध में क्रियाशील

भाग नहीं लिया था, इस दशा में उनके मामले में प्रोटेस्टे स्वामियों को उनकी लूट का कुछ हिस्सा उन्हें वापिस करने के लिए बाधित किया गया। इस कठिन समस्या के विचार में पाँच वर्ष लग गये। अस्थायी रूप से इसे **समाधान के कानून या एक्ट ऑफ सेटलमेण्ट** (१६६२) से निश्चित किया गया। १६६५ ई० में इसका संशोधन किया गया। इसने केवल स्थूल न्याय किया। इसका परिणाम यह था कि (कनाट को छोड़ते हुए) बस्तियों के कुल क्षेत्रफल का लगभग एक तिहाई हिस्सा बेदखल किये गये आयरिश भूस्वामिवों को पुनः वापिस किया गया। लगभग एक तिहाई हिस्सा एलिज़ाबेथ के समय से बसने वाले आरम्भिक इंग्लिश लोगों के पास चला गया और लगभग एक तिहाई हिस्सा क्रामवेल के युग में बसने वालों ने अपने पास रखा। इसे न्यायपूर्ण बँटवारा नहीं कहा जा सकता, किन्तु यह क्रामवेल के समय की भीषण लूट से अधिक अच्छा था। फिर भी वहाँ ऐसे बहुत से व्यक्ति थे, जो दरिद्र हो गये और जिनको कोई परि-त्राण या क्षतिपूर्ति नहीं मिली, इन व्यक्तियों की एक बड़ी संख्या जंगलों में चली गयी। वे लुटेरे और जातिच्युत (Ishmael) बन गये। वे **टोरी** के नाम से प्रसिद्ध हुए।

स्काटलैण्ड की भाँति आयरलैण्ड को भी इंग्लैण्ड की नवीन संरक्षणात्मक नीति से, एक विदेशी देश के समान व्यवहार किये जाने के कारण कष्ट उठाना पड़ा। उसने यह अनुभव किया कि १६६६ ई० के एक कानून से उसकी मुख्य उपज-पशुधन को इंग्लैण्ड में आयात करने से रोक दिया गया है। किन्तु इन सभी बातों के होते हुए भी, उसने उस युग में एक वास्तविक और वृद्धिशील समृद्धि का उपभोग किया; पशुओं के स्थान पर, उसने इंग्लैण्ड को गोमांस, मक्खन, चर्बी और खालें बेचीं। उसने बड़े पैमाने पर भेड़ें पाली, और कुछ समय के लिए इंग्लिश मण्डी में ऊन का बड़ी मात्रा में निर्यात किया। जब इस निर्यात को रोक दिया गया तो उसने ऊनी वस्त्रों के निर्यात का पर्याप्त विकास आरम्भ किया, इस समय उसका क्षौमवस्त्रोद्योग (linen industry) भी उन्नत हो रहा था। संरक्षणात्मक पद्धति के कारण वह उपनिवेशों की मण्डियों से भी बहिष्कृत था, किन्तु उसने यूरोप के साथ एक समृद्धिशाली व्यापार आरम्भ किया और सामान्य रूप से पुनः स्थापना के बाद के बीस वर्षों में उसने एक अनुपम समृद्धि का उपभोग किया। इस समृद्धि ने जातीय और धार्मिक भावना की कटुता को घटाने में सहायता की, यद्यपि यह कटुता किसी भी प्रकार से अब तक समाप्त नहीं हुई थी। यह तथ्य अब भी इस अच्छी भावना को अधिक बढ़ाने में सहायता दे रहा था कि ऑर्मण्ड सामान्य रूप से सहिष्णुता की नीति का अनुसरण करता था और कैथोलिकों को उत्पीड़ित करने से बचता था। वह जान-बूझकर कैथोलिकों को कार्पोरेशनों या नगरपालिका वाले नगरों से निकालने की उस व्यवस्था को जबरदस्ती लागू करने का कोई प्रयास नहीं करता था, जो प्यूरिटन नीति का एक हिस्सा था। इसका एक परिणाम यह था कि आयरिश पार्लियामेण्ट ने अपनी बैठक के बहुत ही कम अवसरों पर कुछ परेशान किया। उसने राजा के लिए एक बहुत बड़े राजस्व को अपने वोट से पास किया, इस प्रकार उसे एक सेना रखने का अवसर प्रदान किया।

उपनिवेशों पर पुनः स्थापना का प्रभाव स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड पर इसके प्रभाव से कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण था, क्योंकि इस क्षेत्र में नये शासन ने एक ऐसे नये प्रकार की

साम्राज्यवादी नीति को आरम्भ किया, जो ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के भावी विकास पर महत्त्व-पूर्ण प्रभाव रखती है। इस प्रभाव का विशेष एवं पृथक् रूप से वर्णन किया जाना आवश्यक है।

फिर भी उपनिवेशों के लिए और इंग्लैण्ड के लिए स्काटलैण्ड में तथा आयरलैण्ड में, जहाँ राजा को पूरी स्वतन्त्रता थी, पुनः स्थापना के उद्देश्य और स्वरूप अत्यधिक महत्त्वपूर्ण थे। स्काटलैण्ड में निरंकुश शासन ने देश को सुदृढ़ रूप से अपने अधिकार में रखा, अत्यधिक उग्र प्रेसबिटेरियन लोगों पर बड़ी कटुतापूर्वक अत्याचार किये और एक विशाल सेना रखी। आयरलैण्ड में भी एक व्यावहारिक निरंकुशवाद ने कठोर व्यावहार के अभ्यस्त कैथोलिकों के प्रति एक अनोखी सहिष्णुता प्रदर्शित की, देश की बढ़ती हुई समृद्धि से एक ठोस राजस्व प्राप्त किया, और एक बड़ी सेना रखी। ये तथ्य राजा और पार्लियामेण्ट के उस अन्तिम संघर्ष में एक महत्त्वपूर्ण प्रभाव रख सकते थे और उन्होंने उस संघर्ष में लगभग ऐसा प्रभाव रखा, जिस संघर्ष को शनैः शनैः घटनाएँ इंग्लैण्ड में अधिक नजदीक ला रही थी।

हमने दो छोटे देशों में पुनः स्थापना के समझौते के विश्लेषण का उस तिथि से कहीं अधिक दूर तक वर्णन किया है, जिस तिथि तक हमने इंग्लैण्ड में इसका वर्णन किया है, क्योंकि इन बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है जो इन देशों में उस समय हो रही थीं, जब इंग्लैण्ड में महान् संघर्ष लड़ा जा रहा था। यह भी समान रूप से ध्यान में रखना आवश्यक है कि इस समय यूरोप में क्या घटनाएँ घट रहीं थीं, इंग्लिश व्यापार और औपनिवेशिक नीति का विकास किस प्रकार हो रहा था, क्योंकि संवैधानिक संघर्ष के विकास पर इन घटनाओं का पहले की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ प्रभाव पड़ा। वस्तुतः न केवल ब्रिटिश द्वीपसमूह, अपितु समूचे रूप में ब्रिटिश राष्ट्र मण्डल और पश्चिमी सभ्यता की समूची दुनियाँ आने आगे वाले विवाद में पड़ने वाली थी और उनका भाग्य इसके घटना क्रम से और इसके परिणामों से गम्भीर रूप से प्रभावित होने वाला था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

R. Lodge. England from the Restoration to the Death of William III. **Clark,** Later stuarts, and **Ogg,** England in the Reign of Charles II are the best modern Summaries of the period. **Ranke,** History of England principally in the Seventeenth Century; **Hallam,** Consitutional History; **Robertson,** Statutes and Documents; **Bryant,** Charles II. and SamuelPepys; **Feiling,** History of the Tory Party; **Bosher,** Making of Restoration settlement; **Wormald,** Clarendon; **Kier,** Constitutional History of Modern Britain. **Clarendon,** Autobiography is a firsthand authority for the period covered by this chapter; so is Burnet. History of His own Times, which is valuable for Scotland; for which see also **Hume Brown,** or Lang History of Scotland. **Airy,** The Restoration (Epochs of Modern History) is a useful short book, both for England and for Europe.

२

लुई चौदहवें के युग का यूरोप

(१६६१-१६८८ ई०)

१. प्रबोध (Enlightenment) का युग

सत्रहवीं शताब्दी के मध्य भाग में, समग्र दृष्टि से, पश्चिमी सभ्यता के तथा ब्रिटिश द्वीपसमूह के इतिहास में एक नवयुग का श्रीगणेश हुआ। लगभग एक शताब्दी तक चलने वाले धर्म-युद्ध समाप्त हो गये थे। इसके बाद यद्यपि राज्यों के भीतरी भाग में धार्मिक संघर्ष कटुतापूर्ण रीति से चल रहे थे, तथापि राज्यों के पारस्परिक सम्बन्ध अब धार्मिक मतभेदों द्वारा नियन्त्रित नहीं होते थे। राजनीतिक क्षेत्र में नये युग की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि ब्रिटिश प्रदेशों, हालैण्ड और स्विट्ज़रलैण्ड के अतिरिक्त, अन्यत्र सब देशों में निरंकुश राजतन्त्र की पद्धति विजय प्राप्त कर चुकी थी; ऐसा प्रतीत होता था कि केवल निरंकुश राजतन्त्र में ही क्षमता, पौरुष एवं नीति की एकरूपता की वे विशेषताएँ सुरक्षित रह सकती थीं, जो राष्ट्रीय शक्ति और महत्ता का निर्माण करती थीं। लुई चौदहवें के वशवर्ती फ्रांस में ही यह प्रतीत होता था कि निरंकुश राजतन्त्र ने अपनी सबसे अधिक उज्ज्वल सफलताएँ प्राप्त की हैं। इस युग में कला, शिष्टाचार और राजनीति के क्षेत्र में फ्रांस जिस उत्कर्ष का उपभोग कर रहा था, वह अब तक किसी राज्य द्वारा भोग किये जाने वाले उत्कर्ष से अधिक महान् था और ऐसा प्रतीत होता था कि बड़ी मात्रा में इसका कारण वह बुद्धिमत्तापूर्ण निरंकुश शासन है, जो राष्ट्र के सभी साधनों का नियन्त्रण एवं विकास कर रहा है।

इस युग की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि अधिक प्रगतिशील राज्य उद्योग और व्यापार के सुव्यवस्थित विकास को राष्ट्रीय सम्पत्ति का प्रधान स्रोत मानते हुए इनकी ओर पहले की अपेक्षा अधिक ध्यान दे रहे थे। मनुष्यों ने अब धन कमाने के

विज्ञान के सिद्धान्तों पर तथा राष्ट्रीय समृद्धि के कारणों पर विचार करना आरम्भ कर दिया था। अर्थशास्त्र के मूलतत्त्वों की व्याख्या का किया जाना आरम्भ हो गया था, क्योंकि इस समय विदेशी व्यापार को अत्यधिक महत्त्व दिया जा रहा था, अतः अधिक बड़े राज्य समुद्र पार के प्रदेशों पर नियन्त्रण पाने के लिए तथा मातृभूमि को अधिकतम लाभ पहुँचाने वाली पद्धति की दृष्टि से इनका संगठन करने के लिए अधिक उत्सुक हो गये और इससे पहले के किसी युग की अपेक्षा कहीं अधिक सुव्यवस्थित औपनिवेशिक साम्राज्य के लिए तीव्र प्रतिस्पर्धा आरम्भ हो गयी थी। हम अगले अध्याय में इसका वर्णन करेंगे।

किन्तु वर्तमान युग के सुविधाजनक स्थान से पीछे की ओर देखते हुए इस युग की ये विशेषताएँ भले ही महत्त्वपूर्ण हों, किन्तु वे इस युग की एक अन्य ऐसी विशेषता से कम महत्वपूर्ण हैं, जिसे उस समय के व्यक्ति आपेक्षिक दृष्टि से कम महत्व देते थे। इस कथन में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि उस युग में व्यवस्थित विज्ञान का जन्म हुआ। जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि वैज्ञानिक अन्वेषण ने मनुष्य को किस प्रकार प्रकृति की शक्तियों पर अभूतपूर्व अधिकार प्रदान किया और इसने किस प्रकार मानव जीवन की भौतिक परिस्थितियों को परिवर्तित किया और कितने गम्भीर रूप में इसने सब मनुष्यों के अपने से तथा विश्व से सम्बन्ध रखने वाले विचारों पर और उनके धार्मिक एवं राजनीतिक विचारों पर प्रभाव डाला, तो व्यवस्थित विज्ञान का जन्म इस युग की सर्वोच्च उपलब्धि प्रतीत होती है। इस युग को विशिष्ट बनाने वाले युगान्तरकारी आविष्कारों में इंग्लिश लोगों ने अपना हिस्सा लिया और अपने हिस्से से भी बढ़ कर भाग लिया। यह दावा न्यायोचित रीति से किया जा सकता है कि विचार की स्वतन्त्रता इंग्लैण्ड में किसी भी अन्य देश की अपेक्षा अधिक पूर्णता के साथ स्थापित हो चुकी थी और इस देश ने उस वैज्ञानिक आन्दोलन का नेतृत्व ग्रहण किया, जो उस युग का सबसे बड़ा गौरव था।

वस्तुतः इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में, विज्ञान के अनेक क्षेत्रों में पहले ही महान् प्रगति की जा चुकी थी। महान् इंग्लिश व्यक्ति बेकन ने तथा महान् फ्रेन्च व्यक्ति देकार्त (Descartes) ने एक नये दर्शन के तथा निरीक्षण और परीक्षण करने की एक नयी वैज्ञानिक पद्धति के सिद्धान्तों का निर्माण किया था। महान् इटालियन गैलीलियो ने आधुनिक भौतिक विज्ञान की नींव रखी थी और आकाशीय पिण्डों में पृथ्वी के स्थान के बारे में मनुष्यों के दृष्टिकोण में क्रान्ति उत्पन्न की थी। महान् इंग्लिश व्यक्ति हार्वे ने रक्त संचार को प्रदर्शित करते हुए आधुनिक 'शरीर क्रिया विज्ञान' (Physiology) को आरम्भ किया था। सभी क्षेत्रों में, विशेष रूप से गणित और ज्योतिष के क्षेत्र में तथा भौतिकशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र और प्राणिशास्त्र के क्षेत्र में अनेक छोटे कार्यकर्ताओं ने मध्य युग की अवैज्ञानिक विधियों और परम्पराओं के भंग करने में भी सहायता की थी। यह सब इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही हुआ। जब धार्मिक भावनाओं की तीव्रता कम हुई और जब धर्मशास्त्रीय समस्याएँ योग्यतम मस्तिष्कों पर हावी नहीं रहीं, उस समय अन्वेषण की नयी भावना और विधियाँ सफल होने लगीं। सब देशों में धैर्यपूर्वक काम करने वाले जनसमुदाय के सहयोग से विज्ञान के मन्दिर का निर्माण आरम्भ हुआ, क्योंकि वैज्ञानिक अन्वेषण उन सब के सहयोग पर तथा उनके परिणामों के स्वतन्त्र और

अविरत विवाद पर निर्भर है, जो इस कार्य में लगे होते हैं। विज्ञान की कोई सीमाएँ और कोई राष्ट्रीयताएँ नहीं हैं। सम्भवतः नवयुग की सबसे बड़ी देन यही थी कि इसने विज्ञान के व्यक्तियों को विवाद के लिए तथा अपने परिणामों की तुलना के लिए केन्द्र प्रदान करके और उन्हें सार्वजनिक मान्यता और समर्थन प्रदान करके, इस सहयोग को सम्भव बनाया। इंग्लैण्ड में १६६२ ई० में रायल सोसायटी (Royal Society) की स्थापना हुई। फ्रांस में विज्ञानों की अकादमी (Academy of Sciences) का आरम्भ १६६६ ई० से हुआ और अन्य देशों में इस प्रकार की संस्थाएँ शीघ्र ही स्थापित होने लगीं। इस युग के वैज्ञानिक अन्वेषण में सर्वोच्च स्थान एक इंग्लिश व्यक्ति आइज़क न्यूटन का है। इसका काम ब्रिटिश जनता के लिए वैसे ही गौरव का कार्य था और उसकी ओर से विश्व की सभ्यता की सामान्य पूंजी में वैसा ही बड़ा योगदान था, जैसा एक अन्य क्षेत्र में, इससे पहले शेक्सपियर का कार्य था। १६८७ ई० में प्रकाशित न्यूटन के ग्रन्थ **प्रिन्सिपिया** (Principia) ने एक आश्चर्यजनक विस्तृत क्षेत्र में आधुनिक विज्ञान की एक सुरक्षित नींव डाली थी। न्यूटन के साथ महान् जर्मन लाइबनित्स का नाम लिया जा सकता है। इंग्लैण्ड और फ्रांस में सबसे अधिक मात्रा में, किन्तु पश्चिम के अन्य सभी देशों में भी, फैले हुए छोटे अन्वेषकों की एक पूरी सेना इस समय काम कर रही थी।

यह हमारे क्षेत्र से बाहर होगा कि हम इस युग के उत्साही कार्यकर्ताओं द्वारा मनुष्य के लिए प्रस्तुत किये गये नये ज्ञान का विश्लेषण करें, किन्तु उनके कार्य के एक मुख्य परिणाम का अवश्य वर्णन किया जाना चाहिये। उन्होंने यह प्रदर्शित किया कि विश्व निश्चित और अपरिवर्तनशील नियमों द्वारा शासित हो रहा है। इन नियमों को धीरतापूर्वक एवं सम्मान-सहित किये गये निरीक्षण और परीक्षण से खोजा जा सकता है और इन्हें प्रयोग में लाया जा सकता है। उनका सारा कार्य इस कल्पना पर आधारित था और इससे पृथक होकर यह निरर्थक था। जब यह विचार एक बार मनुष्यों के मनों में जम गया, तो विचार के प्रत्येक क्षेत्र में इसका बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। पहले ही विश्व के जीवन को शासित करने वाले नियमों की धीरतापूर्ण खोज की भावना अपने आप को अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों की खोज के आरम्भिक रूप में तथा राजनीतिक सिद्धान्तों के लिए एक वैज्ञानिक आधार ढूंढने के प्रयास में प्रदर्शित कर रही थी। यहाँ तक कि पूर्वोदाहरणप्रेमी इंग्लैण्ड में भी अब अधिक देर तक इस कोरे तथ्य को भी पर्याप्त युक्ति नहीं समझा जाता था कि हमारे पूर्वजों ने ऐसे मार्ग का अनुसरण किया है। पिछली पीढ़ी को सन्तुष्ट करने वालीं अधिक विशुद्ध ऐतिहासिक और कानूनी युक्तियों के स्थान पर हाब्स और लाक के वे अधिक तर्कयुक्त राजनीतिक सिद्धान्त लोकमत को प्रभावित करने लगे, जिनका हम अन्यत्र उल्लेख करेंगे। अन्य देशों की अपेक्षा इंग्लैण्ड में राजनीतिक चिन्तन अधिक क्रियाशील था, क्योंकि यहाँ राजनीतिक समस्याएँ अन्य देशों की अपेक्षा अधिक आवश्यक थीं। किन्तु कम या अधिक मात्रा में, वही विशेषताएँ सभी देशों के बौद्धिक नेताओं में पायी जा रही थीं। कट्टर सिद्धान्त (Dogma) के युग के बाद **बुद्धि के युग** (Age of Reason) का अभ्युदय हो रहा था।

किन्तु अब तक ये नयी शक्तियाँ केवल कुछ व्यक्तियों को प्रभावित कर रही थीं। भविष्य में विश्व का स्वरूप वैज्ञानिकों के धैर्यपूर्ण कार्य द्वारा गम्भीरतापूर्वक प्रभावित होना

था। किन्तु इस बीच में, निर्णायक तत्व अब भी शक्तिशाली राजाओं की महत्वाकांक्षाएँ और प्रतिस्पर्धी राष्ट्रों के अहंभावना थी।

२. फ्रांस का उत्कर्ष

इस युग में यूरोप के राजनीतिक इतिहास में विभिन्न राज्यों के स्वार्थों के तीन विशिष्ट सूत्र ढूंढ़े जा सकते हैं। पहला सूत्र उत्तरीय शक्तियों-डेनमार्क, स्वीडन, पोलैण्ड और ब्रैण्डनबर्ग से छोटे जर्मन राज्य की प्रतिस्पर्धा थी। इसके सबसे अधिक विलक्षण परिणाम ऊपरी महत्ता के अल्प युग के बाद स्वीडन का पतन और ब्रैण्डनबर्ग का द्रुत उत्कर्ष था। ब्रैण्डनबर्ग शीघ्र ही प्रशिया का राज्य बनने वाला और प्रभावशाली स्थिति में पहुँचने वाला था। दूसरा सूत्र तुर्कों की शक्ति का खतरनाक विकास और बाद में इसका ह्रास था। इसने उस समस्या को जन्म दिया जो अब **पूर्वी प्रश्न** (Eastern Question) के नाम से प्रसिद्ध है। इस समय इन दोनों समस्याओं से ब्रिटिश द्वीपसमूह की जनता का अधिक सीधा सम्बन्ध नहीं था, फिर भी उनका पिछला विकास ब्रिटिश इतिहास के लिए बहुत अधिक महत्त्व रखता है, अतः हम इन पर संक्षेप से विचार करेंगे।

सब ब्रिटिश प्रदेशों के स्वरूप पर तत्काल प्रभाव डालने वाला एक तीसरा ही सूत्र था। यह लुई चौदहवें के समय में फ्रांस की चौंधिया देने वाली शक्ति और महत्ता थी। इसने कुछ समय के लिए समूचे यूरोपियन मामलों में फ्रांस की प्रभुता के खतरे को उत्पन्न किया और अन्त में इसने ब्रिटिश द्वीपसमूह को ऐसे संघर्ष में घसीट लिया जो उसके लिए १६वीं शताब्दी में स्पेन के साथ हुए संघर्ष से कुछ ही कम महत्त्व रखता था। न केवल ब्रिटिश द्वीपसमूह के व्यक्तियों के लिए, अपितु सारे यूरोप के लिए फ्रांस की भीषण शक्ति और आक्रमणात्मक नीति इस युग का सर्वोच्च राजनीतिक तथ्य बना हुआ था।

१६वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में फ्रांस धार्मिक युद्धों की सुदीर्घ कालीन व्यथा से पीड़ित था। १७वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में उसके पुनरुज्जीवन में उस गृहयुद्ध ने बाधा डाली, जो कुलीन व्यक्तियों के द्वारा तथा राष्ट्र के अन्य तत्त्वों द्वारा राजा की बढ़ती हुई शक्ति का प्रतिरोध करने के लिए किये जाने वाले अन्तिम संघर्षों से उत्पन्न हुआ था। इसके बावजूद, फ्रांस ने तीस वर्षीय युद्ध में और इससे उत्पन्न होने वाले स्पेन के साथ युद्ध में एक बड़ा भाग लिया और विशाल प्रदेश और प्रतिष्ठा प्राप्त की। अब उसके आन्तरिक उपद्रव समाप्त हो गये, राष्ट्र ने ऐसे उपद्रवों के पुनः भड़क उठने को रोकने में समर्थ एवं शक्तिशाली सरकार की स्थापना का स्वागत किया। एक लम्बी अल्पवयस्कता के बाद जब राजा लुई चौदहवें[1] ने १६६१ ई० में शासन सूत्र का संचालन अपने हाथ में लिया, उस समय राष्ट्र में कोई ऐसी शक्ति नहीं थी, जो राजकीय सत्ता का विरोध करने में समर्थ हो अथवा ऐसा करने की इच्छा रखती हो। लुई के पास अपने इंग्लिश चचेरे भाई की भाँति उसके कार्यों को नियन्त्रित करने वाली कोई पार्लियामेण्ट नहीं थी। इससे अधिकतम सादृश्य रखने वाली फ्रेन्च संस्था स्टेट्स-जनरल (States General) ने चिरकाल से अपनी बैठक करना बन्द कर दिया था और इसे १७८९

१. ए० हैस्सल ने लुई चौदहवें की एक जीवनी हीरोज़ ऑफ दि नेशन्स नामक पुस्तक-माला में लिखी है।

ई० तक पुनः नहीं बुलाया गया। राजा कानून से ऊपर था, वह कानून का एक मात्र निर्माता था। वह अपनी इच्छा से करों को वसूल करता था। देश के सब भागों में राज्य के सभी अधिकारी उसके मनोनीत वेतनभोगी व्यक्ति होते थे। अभिजात व्यक्ति राजकीय कृपाओं को चाहने वाले दरबारी कुलीन बन गये थे। राजा की सत्ता का समर्थन प्रसिद्ध सेनापतियों द्वारा नेतृत्व की जाने वाली, यूरोप में सर्वोत्तम एवं पुराने योद्धाओं की एक उत्तम सेना कर रही थी। किन्तु इसे ऐसे समर्थन की बहुत ही कम आवश्यकता थी, क्योंकि समूचा राष्ट्र इस सत्ता को प्रबलनिष्ठा और राजभक्ति के साथ स्वीकार कर रहा था।

१६६१ ई० से पहले ही वरसाय (Versailles) के दरबार ने विलक्षण वैभव प्रदर्शित किया। समय बीतने के साथयह वैभव निरन्तर अधिकाधिक प्रखर होता गया। ऐसा वैभव आधुनिक जगत् ने कभी नहीं देखा था। इसने सारे यूरोप के लिए शिष्टाचार और वेश-भूषा के फैशन का आदर्श स्थापित किया। प्रत्येक छोटा राज्य इसका अनुकरण करने का प्रयत्न करता था। इसने अपने आप **महान् राजा** को ऐसी प्रतिष्ठा प्रदान की, जिसका बहुत बड़ा राजनीतिक महत्त्व था। फ्रांस ने साहित्य और कला के क्षेत्र में भी फैशन स्थापित किया; फ्रेन्च आलोचकों और कवियों तथा नाटक लेखकों का उत्कर्ष किसी भी राष्ट्र द्वारा इससे पहले उपभोग किये गये अथवा इस समय से उपभोग किये जाने वाले उत्कर्ष से कहीं अधिक था। फ्रेन्च भाषा संस्कृति की, कूटनीति की और शिष्ट समाज की भाषा बन गयी। राजकीय संरक्षण में बनायी गयी अकादमियों के द्वारा साहित्य को और कलाओं को भी राजतन्त्र के इस उज्ज्वल रूप के साथ सम्बद्ध कर दिया गया। एक योग्य विदेशी मन्त्री की अध्यक्षता में, फ्रांस की कूटनीतिक सेवा को इतनी चतुराई से संघटित किया गया कि अपने देश की प्रतिष्ठा से गौरव पाने वाला फ्रेन्च राजप्रतिनिधि प्रत्येक राजधानी में अधिकतम महत्त्व रखने वाला एक राजनीतिक तत्त्व बन गया। सबसे बढ़ कर, एक अत्यन्त योग्य और अत्यन्त परिश्रमी वित्त मन्त्री कोलबर्ट की अध्यक्षता में फ्रांस की साधन-सम्पत्ति का विकास उस उच्चतम शिखर तक किया गया, जिस पर उस समय तक कोई भी देश नहीं पहुँचा था। प्रत्येक सम्भव उपाय से कृषि को प्रोत्साहित किया गया और उसकी सहायता की गयी। सरकार के संचालन में हस्त-उद्योगों को पुनः संघटित किया गया। यूरोप में अथवा दुनियाँ में सबसे सुन्दर, भव्य सड़कें बनायी गयीं। ऐसी नहरों का निर्माण हुआ, जैसी नहरें किसी अन्य राज्य में नहीं थीं। फ्रांस का व्यापारिक बेड़ा, यहाँ तक विकसित किया गया कि वह इंग्लैण्ड और हालैण्ड के बेड़ों से प्रतिद्वन्द्विता करने में समर्थ हो गया। समुद्री शक्ति के महत्व को अनुभव करते हुए, कोलबर्ट ने शक्तिशाली नौसेना का निर्माण किया (जैसा कि हम आगे देखेंगे), १६९० ई० में यह इंग्लैण्ड और हालैण्ड के सम्मिलित बेड़ों को हराने में समर्थ हो सकी। अन्त में, फ्रांस ने समुद्र पार के देशों के उपनिवेशीकरण और व्यापार के क्षेत्र में बड़े उत्साह के साथ प्रवेश किया। हम इसका अधिक वर्णन अगले अध्याय में करेंगे। संगठन का यह सब पौरुषपूर्ण और सफल कार्य लुई १४वें के राज्य-काल के पहले बीस वर्षों में चलता रहा। इसका परिणाम फ्रांस को सब प्रकार की प्रतिस्पर्धा अथवा प्रतिद्वन्द्विता से परे, विश्व में सबसे अधिक महान् और सबसे अधिक शानदार राज्य बनाना और उसकी जनता के लिए समृद्धि में उल्लेखनीय वृद्धि करना था। उस समय यह ठीक प्रतीत होता था

कि उत्तम सेवकों से सम्पन्न निरंकुश राजतन्त्र राष्ट्रीय कल्याण को प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन है।

इस शानदार युग के आरम्भ में ऐसा प्रतीत होता था कि लुई चौदहवें के सामने दो वैकल्पिक मार्गों में से एक का चुनाव करना था। ये दोनों उस देश की शक्ति और सम्पत्ति का उपयोग करने के सम्बन्ध में थे, जिसकी बागडोर अब पूर्णरूप से उसके हाथों में थी। ये दोनों मार्ग उसकी अपनी शक्ति को विस्तीर्ण करने के ढंग थे। महान् प्रश्न उस चुनाव पर निर्भर करते थे, जिस चुनाव को अब उसके द्वारा किया जाना था। एक मार्ग यह था कि यूरोपियन मामलों में फ्रांस की सरकार को प्राप्त असंदिग्ध उत्कर्ष से सन्तुष्ट रहते हुए वह शक्ति-पूर्ण रीति से यूरोप पर हावी हो, इसके साथ ही वह देश के उद्योग और व्यापार को अधिक ऊँचे शिखर तक विकसित कर सकता था और फ्रांस के लिए समुद्रों पर सर्वोच्च सत्ता प्राप्त कर सकता था और समुद्र पार के देशों में एक महान् साम्राज्य का निर्माण कर सकता था। यदि उसने और उसके उत्तराधिकारियों ने इस मार्ग को चुना होता तो फ्रांस की सभ्यता और निरंकुश राजतन्त्र की पद्धतियाँ और विचार सम्भवतः दुनियाँ पर अच्छी तरह हावी हो जाते। किन्तु अनिवार्य रूप से, वह दूसरे मार्ग— यूरोप पर प्रभुता स्थापित करने की कल्पना से आकृष्ट हुआ। विशेषतः, जीर्ण होता हुआ स्पेनिश साम्राज्य उसकी कृपा पर जीवित प्रतीत होता था, वह स्पेन के प्रदेश को हड़प कर फ्रांस की सीमाओं को ठीक बना सकता था। वह स्पेनिश अमेरिका की सम्पत्ति को भी प्राप्त कर सकता था। उसकी अदम्य सेना विजय को आसान बना सकती थी। गम्भीर विरोध का कोई खतरा प्रतीत नहीं होता था। स्पेन स्वयमेव कोई प्रभावशाली प्रतिरोध नहीं कर सकता था। पवित्र रोमन सम्राट् के आस्ट्रियन प्रदेश निर्धनता से पीड़ित और बुरी तरह से संघटित थे तथा उसे तुर्कों की पुनरुज्जीवित शक्ति से भीषण खतरा था। जर्मनी तीस वर्षीय युद्ध से परिश्रान्त हो चुका था। उत्तरी देशों की शक्तियाँ एक दूसरे का गला काटने में लगी हुई थीं। डचों ने ऑरेन्ज के घराने को उलट दिया था और अपने को जॉन डी विट के नेतृत्व में शान्ति-प्रेमी व्यापारियों के हाथ में सौंप दिया। वे बहिष्कृत ऑरेन्ज वंश के प्रति सेना की राजभक्ति के बारे में ईर्ष्या रखते थे। अतः उन्होंने अपनी सेना को न्यूनतम मात्रा तक घटा दिया। केवल इंग्लैण्ड खतरनाक हो सकता था, किन्तु इंग्लिश लोग इस समय डचों के प्रति ईर्ष्या से जल भुन रहे थे और लुई उन लोगों को एक दूसरे को नष्ट करने के लिए प्रोत्साहित कर सकता था। नया अंग्रेज राजा चार्ल्स द्वितीय लुई का चचेरा भाई और उसका प्रशंसक था, वह पार्लियामेण्ट से अपने को स्वतन्त्र करने के लिए उत्सुक था, उसे या तो फ्रेंच राजा का पक्ष लेने के लिए शीघ्र ही तैयार किया जा सकता था, अथवा वह कम-से-कम तटस्थ रह सकता था। यूरोप को जीतने में सफलता की सम्भावनाएँ बहुत उज्ज्वल थीं। वे इतनी अधिक उज्ज्वल थीं कि उनके प्रलोभन को रोक सकना सम्भव नहीं था। इस प्रकार पुनः संगठित फ्रांस की विशाल शक्ति शनैः-शनैः यूरोप की शक्ति और स्वतन्त्रता के लिए खतरे में परिणत हो गयी। लुई की महत्वाकांक्षाओं की प्रगति न केवल यूरोप के लिए, अपितु ब्रिटिश द्वीपसमूह के लिए और समूचे ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिए इतना अधिक महत्व रखती है कि अब हमें उन महत्वाकांक्षाओं की एक संक्षिप्त रूपरेखा देखनी चाहिये।

लुई १४वें के युद्ध (१६८८ ई० तक)

अपने वैयक्तिक शासन के पहले छः वर्षों (१६६१-१६६६ ई०) में लुई ने शान्ति रखी और तुर्कों के साथ एक उग्र संघर्ष में पवित्र रोमन सम्राट् को उदार सहायता देने के साधन के रूप में ही उसने अपनी शानदार सेना का प्रयोग किया। इस संघर्ष का हम बाद में वर्णन करेंगे। औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा के बावजूद अपने नये राजा की अध्यक्षता में इंग्लैण्ड उसका मित्र था। १६६२ ई० में चार्ल्स ने लुई को डंकर्क का वह बन्दरगाह बेच दिया, जिसे १६५८ ई० में क्रामवेल ने प्राप्त किया था। चार्ल्स की ओर से यह एक बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य था, यद्यपि उसका प्रधान उद्देश्य धन पाने की इच्छा थी। किन्तु इसने फ्रांस के प्रति इंग्लिश लोगों की ईर्ष्या को उभाड़ना आरम्भ किया। लुई ने ही चार्ल्स का विवाह एक पुर्तगाली राजकुमारी से करवाया (१६६१ ई०)। इससे इंग्लैण्ड और पुर्तगाल में एक लम्बी अविच्छिन्न मैत्री आरम्भ हुई। पुर्तगाल को १५८० ई० में स्पेन के राजा फिलिप द्वितीय ने अपने राज्य में मिला लिया था, इसने १६४० ई० में स्पेन के विरुद्ध विद्रोह किया और यह विद्रोह फ्रेन्च सहायता के कारण ही चल सका। किन्तु १६५९ ई० में फ्रांस और स्पेन के बीच सन्धि हो जाने के कारण लुई के लिए पुर्तगाल को सहायता देना कठिन हो गया। अतः पुर्तगाल को सहायता देने का और इस प्रकार स्पेन को निर्बल बनाने का कार्य इंग्लैण्ड को सौंप दिया गया। इसके बदले में इंग्लैण्ड ने टेन्जियर का भूमध्यसागर का तीरवर्ती दुर्ग और बम्बई का भारतीय द्वीप प्राप्त किया।

इन वर्षों में पश्चिमी शक्तियों के सम्बन्धों को सुनिश्चित बनाने वाले तत्व उष्ण कटिबन्धीय समुद्रों में इनकी व्यापारिक प्रतिस्पर्धा थी। लुई ने इंग्लिश और डच लोगों के बीच में पुरानी तीव्र ईर्ष्या के पुनरुज्जीवन को बड़े सन्तोष के साथ देखा। वह इससे लाभ उठाने की आशा रखता था। जब १६६५ ई० में यह ईर्ष्या एक महान् नौ सैनिक युद्ध के रूप में भड़क उठी तो पहले यह प्रतीत होता था कि इंग्लिश लोग जीत जायेंगे, क्योंकि इंग्लिश नौसेना ने युद्ध के पहले दो वर्षों में यह प्रदर्शित किया कि इसकी लड़ने की शक्ति पहले किसी भी समय की भाँति महान् है और यद्यपि ब्लैक मर चुका था, तथापि उसका युद्धों का पुराना साथी मांक उसके योग्य उत्तराधिकारी के रूप में विद्यमान था। १६६५ ई० में लोवेसटाफ्ट में और १६६६ ई० में डौंस में भीषण युद्ध हुए तथा इन दोनों युद्धों में इंग्लिश लोग विजयी हुए। किन्तु इंग्लैण्ड की विजय फ्रांस के लिये उपयुक्त नहीं थी। अतः लुई इस संघर्ष में डच लोगों की ओर से प्रविष्ट हुआ। इंग्लिश और फ्रेन्च लोगों में १६६६-६७ ई० में,वेस्ट इण्डीज़ में भीषण युद्ध हुआ। यद्यपि इंग्लिश लोग वहाँ डटे रहे, फिर भी इंग्लिश लोगों के लीवर्ड टापू की समृद्धि को एक प्रबल धक्का लगा। इस समय से इंग्लैण्ड के व्यापारिक हित चाहने वाले व्यक्ति फ्रांस की ओर सन्देह की दृष्टि से देखने लगे और वे डचों की अपेक्षा उससे अधिक डरने लगे। युद्ध की पिछली अवस्थाओं में दुर्भाग्य ने इंग्लिश लोगों का पीछा किया। १६६५ई० में महान् प्लेग शुरू हुई। इसने बेड़े के कुछ हिस्से को भी प्रभावित किया। इससे रसद पहुँचाने के काम में भीषण अव्यवस्था हुई और १६६६ई० में लगी लन्दन की महान् आग ने इस अव्यवस्था को पूर्ण

कर दिया। १६६६ ई० के शीतकाल में बेड़े को बन्द रहना पड़ा, और १६६७ ई० में डचों ने अपने अवसर का लाभ उठाया, वे मिडवे तक चले गये। उन्होंने एक पोत को पकड़ लिया और तीन अन्य जहाजों को जला दिया। उन्हें प्रतिरक्षारहित लन्दन पर हमला करने से बड़ी कठिनाई से रोका गया। इन परिस्थितियों में, इंग्लिश सरकार १६६७ ई० की ब्रेडा की शान्ति सन्धि द्वारा युद्ध समाप्त करने में प्रसन्न थी और डच लोग भी इस शान्ति-सन्धि के लिए इतने इच्छुक थे कि उन्होंने न्यू नीदरलैण्ड्स की हाल में जीती हुई डच अमेरिकन बस्ती इंग्लिश लोगों को सौंप दी। इसके बाद से यह बस्ती न्यूयार्क के नाम से प्रसिद्ध हुई।[1]

शान्ति के लिए इंग्लिश सरकार की तत्परता निःसन्देह फ्रेन्च हस्तक्षेप द्वारा उत्पन्न किये गये भय से प्रोत्साहित की गयी थी और एक अन्य क्षेत्र में फ्रेन्च महत्त्वाकांक्षाओं से उत्पन्न होने वाले भय के कारण ही डच लोगों ने उस समय एक प्रतिकूल सन्धि की थी, जब कि युद्ध की घटनाएँ उनके लिए बहुत अच्छे रूप में चल रही थीं। क्योंकि जब ये दोनों समुद्री शक्तियाँ एक दूसरे का गला दबोच रही थीं, उसी समय लुई १४वें ने सहसा यूरोप को विजय करने की अपनी योजनाओं को क्रियारूप में परिणत करना शुरू कर दिया था। उसने इस तुच्छ बहाने पर अपनी सेना फ्लैण्डर्स में भेज दी कि देश के उत्तराधिकार के स्थानीय कानून के अनुसार उसकी स्पेनिश रानी को—जिसका पिता फिलिप चतुर्थ १६६५ ई० में मर चुका था—स्पेनिश नीदरलैण्ड्स को विरासत में पाने का अधिकार है। स्पेनिश सेनाएँ उसका प्रतिरोध करने में असमर्थ थीं। यूरोप दो बातों से-फ्रांस के राजा की प्रबल शक्ति से और उसकी धर्माधर्मविचारशून्यता के इस कार्य से चौंक उठा। किन्तु डच विशेष रूप से भयभीत हो गये, इस भीषण शक्ति के विरुद्ध उनकी एक मात्र ढाल स्पेनिश नीदरलैण्ड्स थे। उन्होंने विजेता को रोकने के लिए मैत्री की सन्धि वार्ता उत्सुकता से आरम्भ कर दी और १६६८ ई० में हालैण्ड, इंग्लैण्ड और स्वीडन ने एक **त्रिराष्ट्र मैत्री सन्धि**(Triple Alliance)की। यह इस बात का पहला चिह्न था कि यूरोप उस पर एक प्रबल प्रभुत्व स्थापित करने के किसी भी प्रयत्न का विरोध करेगा। अब लुई ने इतने बड़े पैमाने पर युद्ध से बचना अधिक पसन्द किया। १६६८ ई० में उसने **एक्स-ला-शापेल की सन्धि** से उस युद्ध को समाप्त कर दिया, जो **उत्तराधिकार के हस्तान्तरण** के युद्ध (War of Devolution) के नाम से प्रसिद्ध है। इस सन्धि ने उसे फ्लैण्डर्स का काफी बड़ा भाग प्रदान किया।[2]

किन्तु अभिमानी राजा पर इस घटना का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। यूरोपियन आक्रमणों से बचे रहने के स्थान पर उसने डचों को दण्ड देने का निश्चय किया। उसने अगले चार वर्ष इस की तैयारी में, और विशेषरूप से डचों को उन मित्रों से पृथक् करने में लगाये गये, जिनमें वे विश्वास रखते थे। १६७ ई० में लुई ने चार्ल्स द्वितीय के साथ डोवर की गुप्त सन्धि की, इसके अनुसार इंग्लिश राजा ने एक बड़ी आर्थिक सहायता लेने के बदले में न केवल त्रिराष्ट्र सन्धि को छोड़ना स्वीकार किया, अपितु एक बार पुनः डचों पर आक्रमण करना और इंग्लैण्ड

१. देखिए नीचे तीसरा अध्याय, पृ० ५६१

२. नीदरलैण्ड्स के मानचित्र के लिए देखिए एटलस की प्लेट सं० ५३

को रोमन कैथोलिक राज्य बनाने का प्रयास करना स्वीकार किया[1]। चार्ल्स प्रथम द्वारा इस अपमानजनक मार्ग के अवलम्बन करने का कारण उसकी पार्लियामेण्ट के नियन्त्रण से स्वतन्त्र होने की इच्छा थी। १६७२ ई० में स्वीड लोगों को भी यह मैत्री सन्धि छोड़ने के लिए घूंस दी गयी, अब डच अकेले रह गये। इस बीच में डच शासन के अध्यक्ष, जॉन डीविट ने आने वाले तूफान के लिए कुछ भी तैयारी नहीं की। १६७२ ई० में इस तूफान का विस्फोट सहसा उस समय हुआ, जब दो श्रेष्ठ सेनाएँ उस युग के दो महानतम सेनापतियों—कोण्डे और तूरेन्ने के नेतृत्व में म्यूज और राइन नदियों के मार्ग से डच प्रदेशों में प्रविष्ट हो गयीं। भय से आतंकित होकर और यह विश्वास करते हुए कि उनके साथ विश्वासघात किया गया है, डचों ने जॉन डीविट और उसके भाई जलसेनापति की हत्या की। वे सहायता के लिए उस युवा राजकुमार ऑरेन्ज के विलियम की ओर अभिमुख हुए, जो निर्बल, मौन, कठोर तथा डच स्वतन्त्रता का संस्थापक और प्रतिनिधि था और जिसे डीविट ने पृष्ठभूमि में डाल रखा था। निराशापूर्ण परिस्थितियों में विलियम ने फ्रेन्च राजा के साथ संघर्ष किया और अपने शेष जीवन में उसने अपनी सारी शक्ति इसी में लगा दी। स्पेन के साथ संघर्ष के निराशापूर्ण दिनों की भाँति, एक बार पुनः बाँधों को खोल दिया गया और समुद्र को उस भूमि के बचाव के लिए बुलाया गया जो भूमि उससे प्राप्त की गयी थी। इस बीच में फ्रेन्च बेड़े के साथ मिलकर इंग्लिश बेड़ा समुद्र के मार्ग से डचों पर हमला कर रहा था (१६७२-७४ ई०)। सदा की भाँति इन पुराने शत्रुओं में खूब घमासान लड़ाई हुई, किन्तु संख्या की कमी होने पर भी डच लोग जमे रहे। यह उनके महान् जल सेनापति रुएटर के भास्वर नेतृत्व का परिणाम था; सौथवल्डबे के निकट १६७२ ई० में तथा टैक्सल के निकट १६७३ ई० की दो लड़ाइयों में दोनों पक्ष बराबर रहे। इस बीच में, इंग्लैण्ड में डचों के साथ लम्बी और कटुतापूर्ण प्रतिस्पर्धा होते हुए भी ब्रिटिश लोकमत युद्ध का प्रबल विरोधी हो रहा था। पार्लियामेण्ट ने इस विरोध को और भी उग्रता के साथ प्रकट किया, क्योंकि डोवर की अन्यायपूर्ण गुप्त सन्धि का ज्ञान लोगों को धीरे-धीरे होने लगा था; और १६७४ ई० में एक हाल के मित्र पर इस निर्लज्जतापूर्ण हमले ने इस युद्ध को समाप्त कर दिया। अनेक इंग्लिश व्यक्ति यह अनुभव करते थे कि उनके देश को डचों के पक्ष का विरोध करने के स्थान पर उनका पक्ष लेना चाहिए था। फ्रांस के नवीन भय के प्रभाव से डचों के प्रति चिरकाल से चली आने वाली ईर्ष्या कम होने लगी। यद्यपि चार्ल्स द्वितीय को सन्धि करने के लिए विवश होना पड़ा था, तथापि लुई अब भी उसकी दाम देकर खरीदी हुई तटस्थता पर भरोसा रख सकता था।

डचों ने युद्ध के सबसे पहले और उग्रतम संकट को झेल लिया था और अब अन्य शक्तियाँ, यूरोप पर फ्रांस की प्रभुता के खतरे से भयभीत होकर उनकी सहायता करने के लिए आयीं। ये शक्तियाँ पवित्र रोमन सम्राट्, स्पेन तथा ब्रैण्डनबर्ग का इलेक्टर था। डचों पर उद्धत आक्रमण ने एक सामान्य यूरोपियन युद्ध को उत्पन्न किया, इसमें फ्रांस लगभग अकेला खड़ा था। युद्ध चार वर्ष तक चलता रहा, फ्रेन्च सेनापतियों की उज्ज्वल प्रतिभा ने और उनकी

१. देखिए नीचे, अध्याय ५,

सेनाओं की वीरता ने अनेक विजयें प्राप्त की, किन्तु वे युद्ध का निर्णय नहीं कर सकी। कोल्बर्ट द्वारा निर्माण की गयी सम्पत्ति और समृद्धि बेकार नष्ट की जा रही थी। अन्त में १६७८ ई० में **निमवेजन में शान्ति सन्धि** की गयी। लुई ने स्पेन से फ्रेन्च भाषा बोलने वाला फ्रान्शेकोम्ते का जिला प्राप्त किया। किन्तु यह उसके साधनों को क्षीण करने वाले महान् प्रयत्न का एक मात्र परिणाम था[1]। बाह्य रूप से, निमवेजन लुई के चरित्र में उच्चतम बिन्दु को सूचित करता है। वास्तव में यह उसके पतन में पहला पग था, क्योंकि उसने यूरोप में सर्वोच्च सत्ता प्राप्त करने के लिए जान-बूझकर एक प्रयत्न किया था और वह विफल हुआ था।

लुई स्वयमेव एक्स-ला-शापेल की भाँति निमवेजन को अपनी विजय के मार्ग में केवल एक अड़ंगा समझता था। अगले १० वर्षों में (१६७८-८८ ई०) वस्तुतः उसने शान्ति बनाये रखी। किन्तु उसका औद्धत्य इन वर्षों में कभी भी इससे अधिक ऊँचे शिखर पर नहीं पहुँचा; क्योंकि अन्ध औद्धत्य ही भीषण पतन का कारण होता है और उसका पूर्ववर्ती बनता है। यद्यपि वह सबसे अधिक कट्टर कैथोलिक होने का दावा करता था, तथापि उसने पोप के साथ कभी शान्त न होने वाला झगड़ा किया, क्योंकि वह फ्रांस में चर्च पर उस सर्वोच्च सत्ता का दावा करता था, जिसे पोप स्वीकार करने को तैयार नहीं था। इसी समय उसने अपनी कट्टरता को प्रमाणित करने के लिए फ्रेन्च प्रोटेस्टेन्टों का एक निष्ठुर दमन किया, यह दमन १६८५ ई० में **नान्तेस की** उस राजाज्ञा के वापस लेने के साथ चरम शिखर पर पहुँच गया, जो राजाज्ञा लगभग १०० वर्ष से उनकी रक्षा कर रही थी। निरंकुश राजा अपने प्रजाजनों को इस बात की अनुमति नहीं दे सकता था कि वे उससे मतभेद रखें। किन्तु मुख्य रूप से शहरों में पाये जाने वाले फ्रेन्च प्रोटेस्टेण्ट-ह्यूगनाट्स लोगों में फ्रेन्च व्यापारियों और निर्माताओं की एक अधिकतम परिश्रमी और समृद्धशाली विशाल संख्या सम्मिलित थी। अपने देश से हजारों की संख्या में भगाये जाने पर, वे अपना ज्ञान और चातुर्य इंग्लैण्ड में तथा अन्य देशों में ले गये। इस प्रकार फ्रान्स को जो हानि उठानी पड़ी वह युद्धों द्वारा की जाने वाली हानि से कहीं अधिक गम्भीर थी। राज्यकाल के आरम्भिक वर्षों की गौरवपूर्ण समृद्धि पहले ही लुप्त होने लगी थी। अन्त में, इन तथ्यों पर भरोसा रखते हुए कि डच युद्ध से परिश्रान्त हो चुके हैं, तथा पवित्र रोमन सम्राट् तुर्कों के साथ एक मरणान्तक संघर्ष में लगा हुआ है और चार्ल्स द्वितीय के वशवर्ती इंग्लैण्ड को घूँस देकर चुप रखा जा सकता है, लुई ने कानूनी रूपों में, अधिकतम निर्लज्जतापूर्ण आक्रमणों की एक शृंखला आरम्भ की। निमवेजन की सन्धि ने उसे कुछ प्रदेश "अपने वशवर्ती के साथ प्रदान किये थे। इन वशवर्ती का स्वरूप निश्चित करने के लिए फ्रेन्च न्यायाधिकरण स्थापित किये गये। उन्होंने वही फैसले दिये, जिनकी उनसे अपेक्षा की गयी थी और इस प्रकार से आल्सेस के विशाल प्रदेश फ्रांस का अंग बना लिये गये। इस प्रकार फ्रांस का हिस्सा बनाये गये प्रदेशों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्ट्रासबुर्ग का महान् शहर था (१६८१ ई०)।

यूरोप इसे चिन्ता और भय की दृष्टि से देख रहा था। १६८३ ई० में स्पेन ने और पवित्र रोमन सम्राट् ने विरोध का एक लघु और निरर्थक प्रयास किया, इसने फ्रेन्च शक्ति की

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ६० देखिये।

महत्ता को ही प्रदर्शित किया और लुई के आत्मविश्वास को प्रोत्साहित किया। किन्तु हर बार प्रतिरुद्ध और अवरुद्ध होने पर एक व्यक्ति ने यह दृढ़ संकल्प किया कि महान् राजा को उसके औद्धत्य का दाम चुकाना चाहिए। यह व्यक्ति चिड़चिड़ा, सहानुभूति शून्य और हृदयहीन ऑरेन्ज का विलियम था। यह अपने अटूट निश्चय और अजस्र घृणा के साथ अपने श्रेष्ठ प्रतिस्पर्धी को देख रहा था, इन्हीं गुणों के कारण वह महान् बना था। वह लुई से बदला लेने के अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था। इस समय हालैण्ड में अपनी सत्ता असुरक्षित होने के कारण वह शक्तिहीन था, और यह प्रतीत होता था कि इन दस वर्षों में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो चुकी थी कि लुई चौदहवां जब चाहता, तब यूरोप में अपनी इच्छा पूरी कर सकता था।

ऐसा होना या न होना सबसे अधिक ब्रिटेन पर निर्भर था। यदि तुला में उसका भार लुई के विरोधी पलड़े में डाल दिया जाता तो वह कभी सफल नहीं हो सकता था, जैसा कि समय ने आगे प्रदर्शित करना था। लुई ने आंशिक रूप में इसे समझ लिया। अब तक चार्ल्स द्वितीय के निर्लज्जतापूर्ण रवैये के कारण ब्रिटेन के साथ उसका काम आसानी से चल गया था। यदि चार्ल्स बेचैनी या परेशानी के चिह्न प्रदर्शित करे तो लुई के हाथ में उसे ठीक करने के लिए एक कोड़ा भी था, क्योंकि वह अपने साथ चार्ल्स की सौदेबाजियों के गुप्त रहस्यों को प्रकट करके क्रुद्ध एवं सावधान पार्लियामेण्ट से उस पर सदैव हमला करवा सकता था। लुई ने अपने अत्यन्त चतुर राजदूतों के द्वारा पार्लियामेण्ट के नेताओं के साथ तथा राजा और उसके दरबारियों के साथ सम्बन्ध बनाये हुए थे।

किन्तु इंग्लिश राजनीति को बड़े ध्यान से देखने वाला अकेला लुई ही नहीं था। ऑरेन्ज का विलियम भी इंग्लिश लोगों को बड़ी उत्सुकता से देख रहा था। उसकी सबसे बड़ी इच्छा इंग्लैण्ड को फ्रांस के विरुद्ध लड़ाई में लाने की थी। इस देश के साथ उसके सम्बन्ध घनिष्ठ थे, उसकी माता चार्ल्स प्रथम की कन्या थी और वह स्टीवर्ट राजगद्दियों का उत्तराधिकारी बनता, यदि चार्ल्स द्वितीय और उसका भाई जेम्स कोई उत्तराधिकारी छोड़े बिना मर जाते। १६७७ ई० में विलियम ने जेम्स की सबसे बड़ी लड़की मेरी से विवाह करके अपनी स्थिति सुदृढ़ बना ली। जब इंग्लैण्ड में कैथोलिक के रूप में जेम्स के उत्तराधिकार से निष्कासन के लिए आन्दोलन उत्पन्न हुआ तो विलियम को इससे गहरी चिन्ता हुई। किन्तु उसकी स्थिति बहुत नाज़ुक थी। वह केवल देख सकता था और प्रतीक्षा कर सकता था तथा इंग्लिश राजनीतिक नेताओं से सम्बन्ध बनाये रख सकता था।

इस प्रकार एक ओर यूरोपियन राजनीतिक इतिहास के महान् प्रश्नों ने ब्रिटिश द्वीपसमूह के घटना क्रम को प्रभावित किया, दूसरी ओर यूरोप का भविष्य इंग्लैण्ड में चल रहे दलों के संघर्ष के परिणामों पर निर्भर प्रतीत होता था। १६८८ ई० में जब अकस्मात् इंग्लिश क्रान्ति हुई तो यह यूरोप के लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण थी, जितनी ब्रिटिश द्वीपसमूह के लिए १६८८ ई० के बाद यह अधिक देर तक सम्भव नहीं है कि यूरोप के इतिहास का ब्रिटिश द्वीपसमूह के इतिहास से पृथक् रूप में वर्णन किया जाय।

४. उत्तरी यूरोप : होहैन्जॉलर्न वंश का अभ्युत्थान

इससे पहले कि हम उस लम्बे राजनीतिक विवाद की ओर मुड़ें, जिस पर इतनी अधिक बातें निर्भर थीं, यूरोपियन मामलों के उन अन्य पहलुओं पर कुछ कहना आवश्यक है, जो भविष्य में ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण हो गये, यद्यपि वे उस समय इसके लिए महत्त्वपूर्ण प्रतीत नहीं होते थे।

उत्तरी यूरोप में तीस वर्षीय युद्ध ने युद्धों की ऐसी अव्यवस्थित शृंखला उत्पन्न की, जिसमें सभी उत्तरी शक्तियाँ संलग्न थीं। ये युद्ध १६६० ई० में हमारे युग के ठीक आरम्भ होने पर समाप्त हो गये। हमें इन जटिल संघर्षों के देखने की आवश्यकता नहीं है, किन्तु इनके सामान्य परिणामों को देखना उपयोगी है। तत्कालीन व्यक्तियों की दृष्टि में इन राज्यों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्वीडन था, यह गुस्टावस एडोल्फस के समय में सहसा यूरोप की प्रथम कोटि की शक्ति बन गया।[1] उत्तरी शक्तियों में यह सबसे बड़ा प्रतीत होता था, उसकी सेनाएँ प्रथम श्रेणी की थीं। उसने उन प्रदेशों को जीत लिया था, जिन पर स्कण्डेनेविया की मुख्य भूमि में चिरकाल से डेनमार्क का अधिकार था। उसने पश्चिमी पोमेरेनिया पर तथा जर्मनी के बाल्टिक तट पर ओडर नदी के मुहाने पर स्वामित्व प्राप्त कर लिया था और फिनलैण्ड के अतिरिक्त फिनलैण्ड की खाड़ी के सभी समुद्र तटों पर नियन्त्रण स्थापित किया था। उत्तर पश्चिमी जर्मनी में ब्रेमन और वर्डेन तथा ऐल्ब और वेस के मुहाने उसके अधिकार में थे। किसी शक्ति ने जर्मनी के विध्वंस का इतना अधिक लाभ नहीं उठाया था, किन्तु वह युद्ध के लम्बे दबाव से परिश्रान्त हो गया था। उसने अपने अनेक शत्रु बना लिए थे और उसकी महत्ता के दिन बहुत देर तक नहीं चलने वाले थे, यद्यपि उसके अनेक राजाओं ने लड़ने की बढ़िया योग्यता प्रदर्शित की थी।

बाद में प्रशिया का राज्य बनने वाले ब्रैण्डनबर्ग के छोटे राज्य का उत्थान इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण था, यद्यपि उस समय के व्यक्तियों को यह उतना प्रभावशाली प्रतीत नहीं होता था। ब्रैण्डनबर्ग के महान् इलेक्टर के नाम से प्रसिद्ध पहले बड़े होहैन्जालर्न वंशी फ्रैडरिक विलियम की चातुरी तथा धैर्यपूर्ण परिश्रम के कारण ब्रैण्डनबर्ग का अभ्युदय हुआ।[2] जब १६४० ई० में, ३० वर्षीय युद्ध के समय, महान् इलेक्टर अपनी राजगद्दी पर बैठा तो उसके प्रदेशों की आबादी बहुत कम थी। वे विभक्त और युद्ध से विध्वस्त थे। वे तीन विशिष्ट खण्डों में बँटे थे; मध्य में बर्लिन की राजधानी वाला वास्तविक इलेक्टोरेट, राइन नदी पर अधिक समृद्ध भूमि के कुछ छोटे टुकड़े, और पूर्वी प्रशिया की डची, यह अधिक बड़े और शक्तिशाली पोलैण्ड के राज्य के आधिपत्य में समझी जाती थी और पश्चिमी प्रशिया के पोलिश जिले द्वारा ब्रैण्डनबर्ग से पृथक् थी। इन तीनों पृथक् खण्डों में डायट अथवा विधान सभाएँ थीं, ये शासक की शक्ति को नियन्त्रित और सीमित करती थीं। वेस्टफेलिया की सन्धि से (१६४८ ई०)

---

१. नक्शों के लिए एटलस की प्लेट सं० ५५, ५६ देखिये।

२. एटलस की प्लेट सं० ६७ (ए) में ब्रैण्डनबर्ग का विकास प्रदर्शित करने वाला मानचित्र है।

महान् इलेक्टर को कई महत्त्वपूर्ण प्रदेश प्राप्त करने में सफलता मिली, उन्होंने खास ब्रैण्डन-बर्ग के क्षेत्रफल को लगभग दुगुना कर दिया। उसने विशेषरूप से पोमेरेनिया के पूर्वी भाग को प्राप्त किया, इसका पश्चिमी तथा अधिक महत्त्वपूर्ण भाग स्वीडन को मिला, किन्तु वह समूचे पोमेरेनिया का दावा करता था और इसके बाद से उसने स्वीडन को अपना कट्टर शत्रु समझा।

वेस्टफेलिया की सन्धि के बाद होने वाले उत्तरी राज्यों के युद्धों में स्वीडन और पोलैण्ड दोनों सम्मिलित हुए। महान् इलेक्टर ने इस संघर्ष का चातुर्यपूर्ण उपयोग किया। बारी-बारी से स्वीडन और पोलैण्ड के प्रति विश्वासघात करते हुए उसने अपनी पूर्वी प्रशिया की डची को पोलिश आधिपत्य से मुक्त करने में सफलता प्राप्त की। १६६० ई० के बाद के शान्ति के वर्षों में उसने अपने बिखरे हुए प्रदेशों में, अपनी शक्ति को सुदृढ़ करने के कार्य में अपने आप को लगाया। उसने राष्ट्रीय सभाओं (Diets) से लड़ाई की और अपनी सरकार को क्रियात्मक रूप से एक निरंकुश राजतन्त्र में परिणत कर दिया। उसने अपने दरिद्रता-पीड़ित प्रदेशों के आर्थिक विकास की ओर अध्यवसायपूर्ण ध्यान दिया, ताकि वह एक शक्ति-शाली सेना बनाये रखने के लिए अपने साधनों को बढ़ा सके। उसने एक ऐसी सेना का निर्माण किया, जो आनुमानिक दृष्टि से उसके प्रदेशों के उस आकार से अथवा सम्पत्ति से कहीं अधिक बड़ी थी, जिसे यह आकार और सम्पत्ति सँभाल सकते थे। होहैन्जालर्न वंश द्वारा अनुसरण की जाने वाली नीति की विशेष दिशाएँ पहले से ही निश्चित की जा चुकी थीं। ये इस प्रकार थीं—सरकार में उच्चकोटि का केन्द्रीकरण, राज्य के भौतिक साधनों का व्यवस्थित विकास और अधिक विजयें करने के दृष्टिकोण से अधिकतम सम्भव सैनिक शक्ति बनाये रखने के प्रयोजन से इन साधनों का उपयोग करना।

जब लुई चौदहवें ने डच लोगों पर आक्रमण किया तो स्वीडन और ब्रैण्डनबर्ग की कटु प्रतिस्पर्धा पुनः भड़क उठी। स्वीडन लुई का मित्र था, अतः ब्रैण्डनबर्ग ने दूसरा पक्ष ग्रहण किया। इस युद्ध की एक सबसे बड़ी घटना १६७५ ई० में फेहरबैलिन की लड़ाई थी। इसमें सारे यूरोप को आश्चर्य में डालते हुए महान् इलेक्टर ने स्वीडन की सैनिक शक्ति को पराभूत किया। इस लड़ाई ने स्वीडन के पतन के आरम्भ को सूचित किया। किन्तु इसने यूरोपियन मामलों में एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व के रूप में होहैन्जालर्न राज्य के आविर्भाव को भी सूचित किया। बल से और छल से की जाने वाली अविरत सिद्धान्तशून्य वह प्रगति अच्छी तरह से आरम्भ हो गयी, जिसको सुदूर भविष्य में होहैन्जॉलर्नवंशियों के लिए सेडोवा और सेडान की विजयों को तथा १९१८ ई० की मुसीबतों को लाना था।

५. तुर्क साम्राज्य की स्थापना

इस युग में दक्षिण पूर्वी यूरोप में किये जाने वाले परिवर्तन उत्तर के परिवर्तनों की अपेक्षा कम महत्त्वपूर्ण नहीं थे। इनमें प्रमुख तत्त्व तुर्कों के संकट का पुनः प्रकोप था। इसके

बाद तुर्क शक्ति का पतन होने लगा। हम पहले देख चुके हैं[1] कि चार्ल्स पंचम तथा हेनरी अष्टम के समकालीन भव्य सुल्तान सुलेमान (Sultan Solyman the Magnificent) के समय में तुर्कों ने अपनी अधिकतम शक्ति प्राप्त की। इस सुल्तान ने हंगरी के बड़े भाग को जीत लिया और उस समय धार्मिक क्रान्ति के कारण ध्यान बँटा होने वाले जर्मनी में कुछ समय के लिए उसके आक्रमण का खतरा पैदा हो गया, उसे वियना की दीवारों के आगे से बड़ी कठिनाई से पीछे हटाया गया। उस समय तुर्कों का संकट वास्तविक और महान् था। तुर्कों ने जिन देशों को जीता, उन सभी देशों में उन्होंने कभी सुशासन करने की योग्यता को नहीं प्रकट किया, अथवा सभ्यता के विकास को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया। बाल्कान प्रायद्वीप के ईसाई लोगों पर तथा जब तक उनका शासन हंगरी में बना रहा तब तक वहाँ की ईसाई जनता पर उनका अधिकार एक कोरी महान् विपत्ति थी। किसी भी अन्य प्रकार से इसका सन्तुलन नहीं हो रहा था और तुर्कों के प्रदेशों का कोई भी अधिक विस्तार बुराई के सिवाय कुछ भी नहीं लाने वाला था।

सौभाग्यवश सुलेमान की मृत्यु के बाद (१५६६ ई०) में ऐसा लम्बा युग आया जब तुर्क शक्ति निर्बल और असंगठित हो गयी, जैसा कि प्रायः कोरे सैनिक उत्कर्ष के बाद हुआ करता है। यूरोप इसका लाभ उठाने में असमर्थ रहा, क्योंकि धार्मिक युद्धों के कारण उसका ध्यान बँटा हुआ था। इसका एक और कारण यह था कि तुर्क लोग भी अपनी कठिनाइयों के कारण यूरोप की मुसीबतों से अपना लाभ नहीं उठा सके। किन्तु तुर्क हंगरी के केन्द्रीय भाग का प्रत्यक्ष नियन्त्रण करते रहे।[2] पूर्वी हंगरी ने और ट्रांसिल्वेनिया ने उनका आधिपत्य स्वीकार किया, यहाँ तक कि सम्राट् द्वारा शासित होने वाली पश्चिमी हंगरी के तंग पट्टी को भी तुर्कों को कर देना पड़ा और वे कृष्णसमुद्र के समूचे दक्षिण तट को तथा समूचे आधुनिक रूमानिया को नियन्त्रित कर रहे थे। इस क्षेत्र में पोलैण्ड का राज्य उनका पड़ोसी था। किन्तु पोलैण्ड एक असंगठित राज्य था। इसके निर्वाचित राजाओं को बहुत कम अधिकार था। इन राजाओं को ऐसे कुलीन सरदारों की सभा नियन्त्रित करती थी, जो तब तक कोई कार्य नहीं करते थे, जब तक कि सर्व सम्मति न हो और वे यह दावा करते थे कि उनमें से कोई भी कुलीन सरदार कार्यवाहियों को अपने निषेधाधिकार से रद्द कर सकता है। एक ओर हैप्सबर्ग सम्राटों के तीस वर्षीय युद्ध से परिश्रान्त, निर्बल और विभक्त प्रदेश थे; दूसरी ओर पोलैण्ड का महान् किन्तु असंगठित राज्य था। यदि तुर्कों की पुरानी सैनिक भावना पुनरुज्जीवित होती तो किसी भी गम्भीर तुर्क हमले को रोकने की दृष्टि से ये दोनों राज्य बड़ी कमजोर बाधाओं का निर्माण करने वाले।

तीस वर्षीय युद्ध की समाप्ति के बाद तुर्कों ने उल्लेखनीय पुनरुज्जीवन आरम्भ किया। यह तुर्की की सेवा में प्रविष्ट होने वाले एक अल्बानियन परिवार से चुने जाने वाले शक्तिशाली

१. ऊपर तीसरी पुस्तक का दूसरा अध्याय देखिये तथा एटलस की प्लेट संख्या ५६ का नक्शा भी देखिये।

२. एटलस की प्लेट संख्या ५५ और ५६ के नक्शे देखिये।

वजीरों अथवा मुख्य मन्त्रियों की परम्परा से पथप्रदर्शन और प्रेरणा प्राप्त कर रहा था। १६६३ ई० में आस्ट्रियन हंगरी और मोरेविया के विरुद्ध एक महान् आक्रमण आरम्भ किया गया। इसे लुई चौदहवें द्वारा सम्राट् को उधार दी गयी तीस हजार फ्रेंच सेनाओं की सहायता से पीछे धकेला गया। इसके बाद वेनेशियन लोगों द्वारा चिरकाल से ईसाइयत के लिए अधिकार में रखे जाने वाले क्रीट के टापू पर हमला किया गया और इसे जीत लिया गया। तत्पश्चात् पोलैण्ड के साथ एक उग्र युद्ध हुआ (१६७२-१६७६ ई०), इसने पोलिश सरदारों की देशभक्ति को उद्दीप्त किया। जॉन सोवियस्की नामक एक राष्ट्रीय योद्धा अपनी वीरता द्वारा एवं सैनिक दक्षता के कारण आक्रान्ताओं को पीछे धकेलने में समर्थ हुआ, यद्यपि तुर्कों ने यूक्रेन का एक बड़ा हिस्सा प्राप्त कर लिया। इसी समय १६८२ ई० में लुई चौदहवाँ पवित्र रोमन सम्राट् के साथ स्ट्रासबुर्ग को अपने राज्य में सम्मिलित किये जाने के प्रश्न पर झगड़ रहा था। अतः फ्रांस से किसी सहायता की आशा नहीं की जा सकती थी। उस समय आस्ट्रियन प्रदेशों के विरुद्ध एक नया हमला किया गया, वियना को भी घेर लिया गया (१६८२ ई०)। इसका बचाव इसकी सहायता के लिए सोबियस्की के नेतृत्व में आने वाले पोल लोगों की वीरता से ही हुआ। इस प्रकार दो बार पोलों ने एक महान् संकट से ईसायइत की रक्षा की। इस समय खतरे की गम्भीरता ने तुर्कों के ईसाई पड़ोसियों को संयुक्त कार्यवाही के लिए प्रेरित किया। पवित्र रोमन सम्राट् ने, पोलों ने तथा वेनिस के गणराज्य ने १६८४ ई० में एक मित्रसंघ का निर्माण किया। जान सोबियस्की की अध्यक्षता में पोलों ने तथा लोरेन के ड्यूक के सेनापतित्व में शाही फौजों ने तुर्कों पर एक के बाद एक करके अनेक प्रहार किये। समूचे हंगरी को तेजी से पुनः जीत लिया गया, एक प्रकार के आदर्श न्याय के साथ १६८७ ई० में सबसे बड़ी विजय मोहक्ज के उसी रण-क्षेत्र में प्राप्त की गयी, जहाँ एक सौ साठ वर्ष पहले भव्य सुलेमान ने हंगरी की सेना को नष्ट किया था और अपने को इस देश का स्वामी बनाया था।

यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि अपने हाथों में ऐसा साहसपूर्ण कार्य होते हुए, पवित्र रोमन सम्राट् १६७८ ई० से १६८८ ई० की दशाब्दी में लुई चौदहवें के आक्रमण को रोकने में असमर्थ रहा। किन्तु १६८८ ई० तक तुर्क खतरा भया वह नहीं रहा था और इस प्रकार ठीक उस समय में जब इंग्लैण्ड में हुई क्रान्ति ने लुई चौदहवें से उस दिशा की सुरक्षा छीन ली थी तथा तुर्कों के पतन ने उसके एक अन्य शत्रु पवित्र रोमन सम्राट् को उस पर हमला करने के लिए स्वतन्त्र कर दिया था। पश्चिमी यूरोप के अधिक बड़े युद्ध के साथ, अब भी टर्की के विरुद्ध लड़ाई चल रही थी। वस्तुतः यह सम्भव है कि पश्चिमी युद्ध ने पवित्र रोमन सम्राट् का ध्यान बँटा कर तुर्क शक्ति को विध्वस्त होने से बचाया और बाल्कान प्रायद्वीप की ईसाई जनता को विनाशक तुर्क शासन में बने रहने का दण्ड दिया। फिर भी, तुर्क-आस्ट्रियन युद्ध को समाप्त करने वाली **कार्लोविट्ज की शान्तिसन्धि** ने तुर्कों को डैन्यूब नदी के दक्षिण तक सीमित कर दिया। इसके बाद से उनकी शक्ति क्षीण होने लगी और राजनीति का यह एक सबसे अधिक जटिल प्रश्न बन गया कि इस तुर्क साम्राज्य का क्या हो?

६. यूरोप में निरंकुश राजतन्त्र का प्रचलन

इस प्रकार जब यूरोप का ध्यान अविरत चलने वाले और जटिल युद्ध के युग में लगा हुआ था, उस समय ब्रिटेन में संवैधानिक शासन की समस्याओं पर नये सिरे से वादविवाद हो रहा था। इन कष्टों में, यूरोपियन राज्यों के समूचे अनुभव से, तत्कालीन प्रेक्षकों को एक बात स्पष्ट रूप से प्रतीत हो रही थी कि केवल वही राज्य सफलता और सुरक्षा प्राप्त करते हैं जिनमें सुदृढ़ केन्द्रीय सरकारें होती हैं, जहाँ अज्ञानी तथा हस्तक्षेप करने वाली पार्लियामेण्टें अथवा डायटें अपने हस्तक्षेपों से इनके मार्ग में कोई बाधा नहीं डालती हैं। लुई चौदहवें की अध्यक्षता में फ्रांस यूरोपियन राज्यों में सबसे बड़ा था। क्या उसकी महत्ता उसकी सरकार की शक्ति के कारण नहीं थी? पवित्र रोमन सम्राट् ने अपने प्रदेशों की स्थानीय स्वतन्त्रताओं को समाप्त करना आरम्भ किया था, क्या यह नहीं प्रतीत होता था कि तुर्कों पर उसकी विजयों का मूल कारण उसका बढ़ा हुआ अधिकार था? ब्रैण्डनवर्ग प्रधानता प्राप्त कर रहा था और समृद्ध हो रहा था। उसका एलेक्टर यह दावा कर सकता था कि यह सब इसलिए सम्भव हुआ था कि उसने प्रान्तीय विधान सभाओं के स्थान पर अपनी शक्ति स्थापित की थी। स्वीडन अपनी प्रतिष्ठा खो रहा था। इसका कारण यह था कि वह कुलीन सरदारों के अल्पतन्त्र के शासन में पड़ गया था; उसने पुनः उस समय उन्नति करनी आरम्भ की, जब उसके राजा चार्ल्स एकादश ने एक षड्यन्त्र द्वारा राजकीय सत्ता को निरंकुश बना दिया। पोलैण्ड को उसके अराजक संविधान ने उसे वह भाग लेने से रोक दिया, जिसे लेना उसकी महत्ता के कारण सम्भव था। वह केवल उसी समय महान् वस्तुओं को प्राप्त कर सका, जब एक महापुरुष सोबियस्की की वैयक्तिक सत्ता ने उसे उद्देश्य की दृष्टि से एक अल्पकालीन एकता प्रदान की। जब डचों पर विपत्ति का महान् संकट आया तो उनका बचाव केवल ऑरेन्ज के विलियम के वैयक्तिक नेतृत्व पर निर्भर रहने के कारण हुआ। क्या उचित रीति से यह युक्ति नहीं दी जा सकती थी कि ब्रिटेन की दोलायमान और अपमानजनक नीति का मुख्य कारण राजा और पार्लियामेण्ट के सतत संघर्ष थे?

इस प्रकार इतिहास के तथ्यों से पुष्ट होने वाली यूरोप की यह सर्वसम्मत सम्मति थी कि निरंकुश राजतन्त्र अथवा इसके निकट पहुँचने वाली कोई वस्तु ही एक मात्र ऐसा साधन है, जिससे किसी राज्य को व्यवस्थित शान्ति और सुरक्षा निश्चित रूप से प्राप्त हो सकती है। इस विश्वास की लगभग सार्वभौम स्वीकृति ऐसा तथ्य है, जिसे उस समय नहीं भुलाया जाना चाहिये, जब कि हम पुनः एक अधिक विस्तृत पैमाने पर राष्ट्रीय शासन स्थापित करने के इंग्लिश लोगों के नवीन संघर्षों की समीक्षा करेंगे।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Wakeman, Ascendancy of France gives a clear and vigorous account of this period. See also **Seeley**, Growth of British policy, **Abbott**, Expansion of Europe and **Airy**, Restoration (Epochs of Modern History); also **Bryant**,

Samuel pepys which brings out the great contribution made by Pepys to the re-organisation of the Navy. A good account of the court and government of Louis XIV, is by **E. Lavisse**, which forms apart of **Lavisse**, Histoire de France, See also **Voltaire**, Siecle de Louis XIV, **Grant**, French Monarchy, and **Hassall**, Louis XIV. (Heroes of the Nations); **Marriott and Robertson**, Growth of Prussia; **Pontalis**, de Witt; **Nisbet Bain**, Scandinavia; Lanepoole, Turkey (Story of the Nations), **Feiling**, British Foreign Policy, 1660-1672; Prestage, Diplomatic Relations of Portugal with France, England and Holland, 1940-1688; **Nussbaum**, Triumph of Science and Reason, 1660-1685; **Reddaway**, History of Europe, 1910-1715; **Clark**, The Seventeeth Century.

● ●

३

प्रतिस्पर्धी औपनिवेशिक साम्राज्य

१. समुद्र पार के देशों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा

सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध के औपनिवेशिक और व्यापारिक साहसपूर्ण कार्यों ने और सबसे बढ़ कर डचों के कार्यो ने संसार को यह प्रदर्शित किया था कि व्यवस्थित रीति से समुद्र पार के प्रदेशों में संचालित किये जाने वाले साहसिक कृत्यों से कितनी अधिक सम्पत्ति और शक्ति प्राप्त की जा सकती है। डच लोग यद्यपि एक अल्पसंख्या रखने वाली जनता थी, तथापि वह विश्व की एक सबसे बड़ी और निश्चित रूप मे उत्कृष्ट शक्ति गिनी जाती थी। यह स्पष्ट था कि डचों की शक्ति लगभग पूर्णरूप से उनके समुद्र पार के व्यापार पर तथा उनके व्यापारिक और नौसैनिक बल पर आश्रित थी। अत: ज्यों ही धर्म-युद्ध समाप्त हुए, त्यों ही पश्चिमी यूरोपियन राज्य औपनिवेशिक कार्यों को एक ऐसी व्यवस्थित पूर्णता के साथ करने लगे, जैसी पूर्णता उससे पहले डचों के अतिरिक्त अन्य किसी जाति ने नहीं प्रदर्शित की थी[१]। यहाँ तक कि डेन लोगों ने भी भारतीय व्यापार में पाँव जमाने का प्रयत्न किया, तथा वेस्ट इण्डीज में सेण्ट थामस के टापू को प्राप्त किया। ब्रैण्डनबर्ग के इलेक्टर ने भी पश्चिमी अफ्रीका में एक किला और व्यापारिक अड्डा बनाया। इस युग में अब भी डच महान् समृद्धि का उपभोग कर रहे थे और इंग्लिश लोग अब भी उन्हें अपना भयंकरतम प्रतिस्पर्धी समझ रहे थे। किन्तु वस्तुत: आपेक्षिक दृष्टि से, न कि पूर्णरूप से, डचों की व्यापारिक शक्ति की क्षीणता आरम्भ

---

१. इस युग के औपनिवेशिक कार्यों के एक सामान्य वर्णन के लिए देखिए एटलस की प्लेट संख्या ४९ का नक्शा।

हो चुकी थी। पुर्तगालियों ने स्पेन से स्वतन्त्रता प्राप्त करके और डचों ने ब्राजील की पुनर्विजय करके पुनरुज्जीवित समृद्धि के एक युग में प्रवेश किया। किन्तु अब पूर्व में उनका अधिक महत्व नहीं रहा था। अब उनका मुख्य साधन ब्राजील की बढ़ती हुई सम्पत्ति और इसकी गल्ले की मूल्यवान् खेतियाँ थीं। अमेरिका में स्पेनिश साम्राज्य, विस्तार में और सम्भावित सम्पत्ति में, अब भी समुद्र पार के सभी साम्राज्यों में सबसे बड़ा था, किन्तु स्पेनिश प्रदेश अपना एक पृथक् जीवन बिताते थे। इस युग की महान् प्रतिस्पर्धा में उनका महत्व बहुत कम था, उपनिवेशों के निर्माण और संगठन के कार्य में अधिकतम उत्साह के साथ अपने को डालने वाली दो शक्तियाँ—फ्रांस और इंग्लैण्ड थीं। अब उनकी तीव्र प्रतिस्पर्धा आरम्भ हुई तथा यह डेढ़ शताब्दी तक चलती रही। अब दोनों देश अपनी परम्पराओं से और स्वदेश में शासन करने के ढंगों से पथप्रदर्शन पाते हुए सुव्यवस्था के साथ औपनिवेशिक नीतियों का विकास करने लगे। इस युग में विकसित होने वाला, दोनों जातियों के सिद्धान्तों और विधियों का, अन्तर उतना ही शिक्षाप्रद है, जितना वह तीव्र और स्पष्ट है।

२. फ्रांस औपनिवेशिक साम्राज्य और कनाडा का विकास

जब लुई चौदहवें ने तथा उसके परिश्रमी मन्त्री कोलबर्ट ने १६६१ ई० में फ्रांस के शासन का नियन्त्रण अपने हाथों में लिया तो उन्हें एक औपनिवेशिक साम्राज्य के निर्माण का कार्य लगभग आरम्भ से शुरू करना पड़ा। कनाडा में फ्रेंच बस्तियों की सत्ता अनिश्चित थी, इनकी आबादी केवल दो हजार थी। एकेडिया के समुद्री प्रान्त को हाल में ही क्रामवेल ने ब्रिटिश प्रदेश में मिला लिया था; फ्रेंच वेस्टइण्डीज की बस्तियाँ जलदस्युओं के अड्डों से अधिक कुछ भी नहीं थी और फ्रांस के लिए भारत के व्यापार में हिस्सा पाने के प्रयास के अब तक कोई उपयोगी परिणाम नहीं निकले थे। बीस वर्ष में कोलबर्ट ने एक आश्चर्यजनक परिवर्तन किया। यदि उसकी नीति में लुई चौदहवें के खर्चीले महाद्वीपीय युद्धों के कारण बाधा न पड़ती तो यह सम्भव है कि समुद्रों में और उपनिवेशों के क्षेत्र में सर्वोच्च सत्ता फ्रांस के भाग्य बदी होती।

कोलबर्ट ने स्वाभाविक रूप से डचों का अनुसरण किया। सामान्य रूप से डचों के ढंगों को सबसे अधिक सफल समझा जाता था। उनकी भाँति उसने दो महान् व्यापारिक कम्पनियों की स्थापना की। इनमें से एक कम्पनी पूर्व के प्रदेशों के साथ व्यापार के लिए और एक पश्चिम के प्रदेशों के लिए थी (१६६४ ई०)। इसने उसे व्यापारिक नीति के विषय में सलाह देने के लिए अनुभवी व्यापारियों की एक संस्था बनायी। किन्तु आरम्भ से ही इन दोनों व्यापारिक कम्पनियों के मुख्य समर्थक कुलीन सरदार और दरबारी लोग थे, न कि व्यापारियों की श्रेणियाँ। ये कम्पनियाँ पूर्णरूपेण राजा के समर्थन पर निर्भर थीं। पश्चिम की कम्पनी का सम्बन्ध उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका से, वेस्टइण्डीज से और पश्चिमी अफ्रीका से था, यह शीघ्र ही टूट गयी। इन प्रदेशों में सभी व्यापारिक और औपनिवेशिक कार्यों का संचालन सरकार के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में चला गया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी का जीवन

अधिक लम्बा था, किन्तु वह अभी तक बहुत समृद्ध नहीं थी। इसके पहले प्रयास मैडागास्कर में बस्ती स्थापित करने के प्रयत्न में मुख्य रूप से बर्बाद किये गये। कुछ समय तक पूर्व में मैडागास्कर फ्रांस के साहसिक कार्यों का मुख्य केन्द्र था। यद्यपि भारत की मुख्य भूमि पर मद्रास के निकट पाण्डिचेरी में तथा कलकत्ता के निकट चन्द्रनगर में व्यापारिक बस्तियाँ शुरू की गयी थीं, तथापि इस युग में फ्रेंच लोग पूर्व में डचों की अथवा इंग्लिश लोगों की कम्पनियों के साथ मुकाबला करने में कभी समर्थ नहीं हुए।

उत्तरी अमेरिका, वैस्टइण्डीज और पश्चिमी अफ्रीका में ही मुख्य फ्रेंच प्रयत्न किये गये और यहाँ विलक्षण परिणाम प्राप्त किये गये। वैस्टइण्डीज में कोलबर्ट द्वारा स्नेह पालन-पोषण करने वाले निरीक्षण में मार्टिनीक और ग्वादलूप के चीनी पैदा करने वाले टापू उन्नति करने लगे। फ्रेंच लोगों ने स्पेन की अमेरिकन शक्ति के प्राचीनतम केन्द्र--हिस्पेनिओला के महान् टापू के पश्चिमी भाग में पैर जमाने का स्थान प्राप्त कर लिया। १६७८ ई० में स्पेन को बाधित किया गया कि वह सेण्ट डोमीनीक के नाम से प्रसिद्ध इस प्रदेश पर फ्रेंच लोगों की सर्वोच्च सत्ता स्वीकार करे; इस प्रकार फ्रांस ने एक ऐसे प्रदेश को पा लिया, जो जमैका टापू पर इंग्लिश लोगो के स्वामित्व को सन्तुलित कर रहा था। वैस्ट इण्डीज के प्रदेशों को प्रदान किया जाने वाला महत्व १६६६-६७ ई० के छोटे एंग्लो-फ्रेंच युद्ध में लीवर्ड टापुओं में की गयी लड़ाई की भीषणता से प्रदर्शित किया गया था। उस समय से इन समुद्रों में फ्रेंच तथा इंग्लिश साहसी व्यक्तियों द्वारा की जाने वाली मैत्री समाप्त हो गयी और इसका स्थान तीव्र प्रतिस्पर्धा और पारस्परिक सन्देह ने ले लिया। वैस्ट इण्डीज के टापू पूर्णरूप से दासों के परिश्रम पर अवलम्बित थे और नीग्रो दासों की पूर्ति को सुरक्षित बनाने के लिए फ्रांस ने पश्चिमी अफ्रीका के समुद्री तट पर सेनेगाल में वैसे ही अपना नियन्त्रण स्थापित किया; जैसे इस समुद्र तट के अन्य भागों में डचों ने, इंग्लिश लोगों ने तथा पुर्तगालियों ने अपने अड्डे स्थापित किये थे।[१] १६७२ ई० में डचों पर फ्रेंच आक्रमण का एक परिणाम यह हुआ कि डच फ्रांस को पश्चिमी अफ्रीका में गोरी का टापू देने के लिए बाधित किये गये। दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी समुद्र तट पर गिआना में भी कुछ संघर्ष करने वाली फ्रेंच बस्तियाँ थी। किन्तु इस क्षेत्र में व्यापार के और बस्ती बसाने के विकास में समुद्री डाकुओ के प्रबल होने से गम्भीर बाधा पड़ी। १६६० ई० से १६७५ ई० का युग जलदस्युओं का अतीव स्वर्णिम काल है, इसमें फ्रेंच लोग सबसे अधिक क्रियाशील थे, यद्यपि डच और इंग्लिश लोग भी इस भद्दे खेल मे हिस्सा ले रहे थे। समुद्री डाकू प्रायः अधिकतम घिनौने कार्यों के दोषी होते थे। यह वह समय था, जब इंग्लिश लोगों में मोर्गन, काक्सन और डेविस ने तथा फ्रेंच लोगों मे ग्रेमोन्त तथा दुकास्से ने कुख्याति प्राप्त की थी। जब तक इन बुरी परम्पराओं से मुक्ति न प्राप्त कर ली जाय तब तक वैस्ट इण्डीज के टापुओं की सम्पत्ति का पूर्ण विकास नहीं हो सकता था। १६९८ ई० में ही यूरोपियन शक्तियाँ इन्हें कुचलने के लिए सामान्य कार्यवाही करने के लिए सहमत हुई।

---

१. एटलस की प्लेट संख्या ८९ (सी) में पश्चिमी अफ्रीका का मानचित्र देखिए।

कोलबर्ट के तथा उसके स्वामी के मुख्य प्रयत्न कनाडा के विकास में लगे रहे। उन्होंने भीषण इरोकुआई[1] लोगों के विध्वंसों को रोकने के लिए नियमित सैनिकों की एक छोटी सेना भेजी और अफसरों तथा सैनिकों को भूमि देते हुए उन्हें संकटपूर्ण क्षेत्र में बसने की प्रेरणा की। इरोकुओई लोगों के दमन से कनाडा के विकास की मुख्य बाधा दूर हो गयी। उन्होंने वहाँ जा कर बसने वालों के सावधानी से छाँटे हुए दलों को भेजा और उन स्त्रियों को दहेज भी प्रदान किये, जो स्त्रियाँ उपनिवेश बसाने वालों से विवाह के लिए अपने देश से बाहर जाने को तैयार थीं। उन्होंने कनाडा में बसने वालों के उपयोग के लिए खेती के औजार और पशु भेजे, मछलीगाहें स्थापित कीं, पोत निर्माण आरम्भ किया और इन सब चीजों के लिए सर्वेक्षण किये। लगभग दस वर्ष में इस उपनिवेश में बसने वालों की संख्या चौगुनी हो गयी। ये सब कार्य राजा के खर्च से किया गया था; इंग्लिश उपनिवेशों के सर्वथा विपरीत फ्रेंच कनाडा ने उस युग में कभी अपना खर्चा नहीं अदा किया, किन्तु वह सदैव फ्रांस के लिए बोझ बना रहा।

चूंकि कनाडा इस प्रकार पूर्ण रूप से राजा पर निर्भर था और फ्रांस में लुई १४ वें की सरकार एक निरंकुश राजतन्त्र का आदर्श थी, अत: उपनिवेशविषयक मामलों के प्रबन्ध में उपनिवेशवासियों से किसी भी प्रकार का कोई परामर्श नहीं लिया जाता था। जब इस युग के सबसे बड़े औपनिवेशिक राजनीतिज्ञ कौण्ट फ्रान्तेनेक ने कनाडा में 'एस्टेट्स' की सभा को १६७२ ई० में बुलाया तो उसकी तीव्र भर्त्सना की गयी। उसे यह कहा गया कि ऐसी किसी सभा की अनुमति नहीं दी जा सकती। सारी सत्ता गवर्नर अथवा सैनिक अध्यक्ष और अधीक्षक (Intendent) अथवा वित्तीय तथा कानूनी अध्यक्ष के पास थी। ये दोनों राजा द्वारा नियत किये जाते थे। प्राय: इनके मतभेदों को समाधान के लिए फ्रांस भेजा जाता था। कनाडा में सब भूमि राजा से प्राप्त होने वाली सामन्ती भूधारण-पद्धति के रूप में रखी जाती थी, जब कि इंग्लिश उपनिवेशों में यह उन्मुक्त भूम्यधिकार के रूप में रखी जाती थी। १४ से ७० वर्ष की आयु के प्रत्येक उपनिवेश निवासी पुरुष को बाधित रूप से सैनिक सेवा करनी पड़ती थी और उसे प्राय: होने वाली कवायद में भी सम्मिलित होना पड़ता था। सम्पूर्ण शक्ति के इस केन्द्रीकरण ने तथा इस कठोर सैनिक अनुशासन ने ही फ्रेंच कनाडा को इस योग्य बनाया कि वह अपने से कहीं अधिक जनसंख्या रखने वाले पड़ोसियों के मुकाबले में अपनी स्थिति को बनाये रखे।

राजा की स्वीकृति के बिना कोई उत्प्रवासी (Emigrant) कनाडा में प्रविष्ट नही हो सकता था। क्योंकि लुई ने नवीन फ्रांस को कठोर रीति से कट्टर बनाये रखने का संकल्प किया था, अत: उसने किसी भी फ्रेंच प्रोटेस्टेण्ट (Huguenots) को यहाँ प्रवेश देने से इन्कार किया। इस प्रकार एक ऐसे तत्व का बलिदान कर दिया गया, जो नवीन देशों के विकास में उच्चतम महत्व रखने वाला हो सकता था। इस नीति में तथा इंग्लिश बस्तियों में अनुमति दी जाने वाली सामान्य धार्मिक सहिष्णुता में एक स्पष्ट अन्तर है। जब नान्तेस

---

१. ऊपर चौथी पुस्तक का दूसरा अध्याय देखिए।

की राजाज्ञा के रद्द करने के कारण (१६८५ ई०) पराकाष्ठा पर पहुँच जाने वाले सुव्यवस्थित अत्याचार ने ह्यूगनाटों या फ्रेंच प्रोटेस्टेण्टों को फ्रांस से बाहर ढकेलना शुरू किया तो वे इंग्लिश बस्तियों में तथा उत्तमाशा अन्तरीप (Cape of Good Hope) की डच बस्तियों में चले गये। इस प्रकार फ्रांस ने उनको सदा के लिए खो दिया। अन्त में, कनाडा का सारा व्यापार कठोर रीति से फ्रांस तक सीमित कर दिया गया और सरकार द्वारा पूर्णरूप से नियन्त्रित किया गया।

यद्यपि कनाडा फ्रेंच सरकार की सस्नेह पालन-पोषण करने वाली देख-भाल में उन्नति कर रहा था, और विकसित हो रहा था, तथापि इसने उन इंग्लिश उपनिवेशों की भाँति उतनी मादक मात्रा में उन्नति का विकास नहीं किया—जहाँ सरकार का नियन्त्रण बहुत कम था, किन्तु स्वतन्त्रता बहुत अधिक थी। कोलबर्ट के तथा राजा के प्रयास कनाडा को एक स्वावलम्बी देश नहीं बना सके। उपनिवेशवासी लगभग भूखे मर जाते, यदि उन्हें फ्रांस से विशाल सहायता न मिलती। इसका एक प्रधान कारण यह था कि अपने इंग्लिश पड़ोसियों के प्रतिकूल कनाडा में बसने वाले इस बात के लिए अनिच्छुक थे कि वे अपने को खेती के नीरस कार्य में लगाये रखें, वे समूर वाले जानवरों को पकड़ने तथा अन्वेषण के गौरवपूर्ण तथा प्रायः लाभप्रद साहसिक कार्यों को करना अधिक पसन्द करते थे। आबादी का एक विशिष्ट भाग ऐसे व्यक्तियों का था, जो अपना जीवन बनों में बिताते थे। इंग्लिश बस्तियों में इस श्रेणी से वास्तविक सादृश्य रखने वाली कोई श्रेणी नहीं थी।

कनाडा के जीवन की इस विलक्षण विशेषता का प्रधान कारण भौगोलिक तथ्य थे।[१] कनाडा की भूमि इंग्लिश बस्तियों की भाँति समृद्ध और उपजाऊ नहीं थी, अतः वह किसान को बहुत कम फल देती थी। दूसरी ओर, समुद्र तट के साथ-साथ समानान्तर चली जाने वाली एलेघेनी पर्वतमाला की जंगलों से ढकी हुई अनेक श्रेणियाँ अमेरिका के भीतरी भाग को इंग्लिश लोगों के लिए बन्द कर रही थी। सेण्ट लारेन्स की शक्तिशाली नदी फ्रेंच उपनिवेशों को स्वाभाविक एवं सुगम रूप से उत्तरी अमेरिका के विशाल भीतरी भू-भाग में ले जा रही थी। अतः अपनी लघु संख्या के बावजूद ये फ्रेंच लोग ही थे, न कि इंग्लिश लोग, जिन्होंने अमेरिका के विशाल केन्द्रीय मैदान का और महान् झीलों का अन्वेषण किया। फ्रेंच लोगों में धर्म प्रचार का उत्साह इंग्लिश लोगों से भी अधिक बढ़ा हुआ था। इसने इस प्रवृत्ति को बढ़ाया, इसके अतिरिक्त समग्र रूप से फ्रेंच लोगों ने रेड इण्डियन जातियों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाने में कहीं अधिक कौशल और दक्षता प्रदर्शित की थी।

हम जिस काल का वर्णन कर रहे हैं, वस्तुतः वह उत्तरी अमेरिका के अन्वेषण का महान् युग था। इसका पूर्ण श्रेय फ्रेंच कनाडा के साहसी अन्वेषकों को है कि संसार को इन से ही महान् केन्द्रीय मैदान का और इसकी शक्तिशाली नदियों का तथा झीलों का ज्ञान हुआ। अनेक यात्रियों ने महान् झीलों के नक्शे बनाये, अन्य यात्री हडसन खाड़ी तक विशाल

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ५१ तथा ६३ देखिए।

जंगलों में से हो कर पहुँचे। किन्तु इससे भी अधिक उल्लेखनीय इस समय की दो महान् नदी-यात्राएँ हैं।[१] १६७३ ई० में, एक जैसुइट मिशनरी पेरे मारक्वेटे और जोलियट नामक एक व्यापारी हूरोन झील से विसकान्सिन नदी तक और वहाँ से मिसिसिपी नदी के साथ-साथ नीचे की ओर आर्कान्सास नदी तक पहुँचे। १६८१-८२ ई० में एक और भी अधिक बड़े अन्वेषक, साहसी सिउर दी ला साल्ले ने मिशिगन झील के निचले भाग से इलीनाय नदी के नीचे की ओर तथा वहाँ से मैक्सिको की खाड़ी में मिसिसिपी नदी के मुहाने तक यात्रा की। यहाँ उसने महान् लुई की प्रभुसत्ता को घोषित करने वाले एक स्तम्भ की स्थापना की।[२] ला साल्ले यहाँ एक नया उपनिवेश बसाना चाहता था। यह योजना उसकी तथा महान् राजा की मृत्यु के बाद १७१७ ई० तक क्रियान्वित नहीं हुई। किन्तु उसने फ्रांस के लिए विशाल केन्द्रीय मैदान को खोल दिया और उन पर दूर तक असर रखने वाले शाही दावों का मार्ग प्रशस्त किया। ये दावे यदि प्रभावशाली बनाये जाते तो वे अधिक आबादी वाले और उन्नतिशील इंग्लिश उपनिवेशकों को समुद्र की एक संकीर्ण पट्टी तक ही सीमित कर देते। यह स्पष्ट था कि ये दावे ऐसे थे जिनकी अवहेलना इंग्लैण्ड के औपनिवेशिक नहीं कर सकते थे। इस प्रकार १६८८ ई० की इंग्लिश क्रान्ति से पहले ही यह स्पष्ट हो गया था कि फ्रेंच लोग डच्च लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक खतरनाक प्रतिस्पर्धी होने की सम्भावना रखते हैं। वे और भी अधिक भीषण होते, यदि अपने राज्यकाल के पिछले युग में लुई १४वें के बहुव्ययी और बर्बादी करने वाले विदेशी युद्धों ने कोलबर्ट के शानदार काम को अधिकांश रूप में मलियामेट न किया होता। विदेशी युद्ध के दबाव के कारण राजा तक ने अपने को इसके लिए बाधित अनुभव किया कि वह कनाडा के उत्प्रवास को रोक दे ताकि कहीं यह फ्रांस की जनसंख्या की शक्ति को निर्बल न बनाये।

३. ब्रिटेन की उपनिवेश-नीति में नवयुग

यदि लुई १४वें ने तथा कोलबर्ट ने फ्रेंच औपनिवेशिक साम्राज्य के विकास में और इसके प्रशासन के आधारभूत सिद्धान्तों की व्याख्या करने में पौरुष और साहस प्रदर्शित किया तो चार्ल्स द्वितीय की सरकार भी इस विषय में कम क्रियाशील नहीं थी। वह कहीं अधिक दूरदर्शी थी। वस्तुतः पुनःस्थापना के बाद के २० वर्ष ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास के एक सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण युग का निर्माण करते हैं, क्योंकि इस समय न केवल इंग्लिश बस्तियों की संख्या में वृद्धि हुई, अपितु अमेरिकन क्रान्ति के समय तक अनुसरण किये जाने वाले इंग्लैण्ड की औपनिवेशिक नीति के प्रधान सिद्धान्तों की व्याख्या की गयी और अधिकतम स्पष्टता के साथ इनका विकास किया गया।

पुनःस्थापना युग के सभी राजनीतिज्ञों ने औपनिवेशिक समस्याओं में एक वास्त-

---

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ५१ तथा ६३ देखिए।

२. पार्कमैन द्वारा लिखित 'ला साल्ले एण्ड दी डिस्कवरी आफ दी ग्रेट वेस्ट' में इन ऐतिहासिक कार्यों का सजीव वर्णन है।

विक और बुद्धिमत्तापूर्ण अभिरुचि प्रदर्शित की। अपने आलसी ढंग से राजा को स्वयमेव इसमें दिलचस्पी थी, उसके भाई यार्क के ड्यूक को तथा उसके चचेरे भाई—वीर राजकुमार प्रिन्स रूपर्ट को—इसमें इससे भी अधिक दिलचस्पी थी। राज्यकाल के प्रथम वर्षों में सर्वशक्तिशाली बने रहने वाले क्लेरेण्डन ने बाद में यह दावा किया था कि उसने अपने सभी प्रयास "इस बात के लिए किये हैं कि वह राजा को इस बात के लिए तैयार कर सके कि वह उपनिवेशों की बस्तियों के प्रति महान् सम्मान रखे और उनके विकास को प्रोत्साहित करे।' यह दावा बिलकुल ठीक था। 'पुनः स्थापना' के बाद के पहले सात वर्षों में उपनिवेश-नीति में क्लेरेण्डन का प्रभाव सब से अधिक था, उस समय नयी नीति की व्याख्या मुख्य रूप से की जा रही थी। क्लेरेण्डन के बाद इसमें दूसरा भाग लेने वाला व्यक्ति बैनेट था, यह बाद में लार्ड एर्लिंगटन बना। मोंक ने क्रामवेल के तीव्र साम्राज्यवाद का प्रतिनिधित्व किया। एशली अथवा सुप्रसिद्ध लार्ड शेफ्ट्सबरी[1] क्रामवेल का अनुयायी था। उसने औपनिवेशिक प्रश्नों की ओर सूक्ष्मतापूर्वक ध्यान दिया। उसका राजनीतिक कार्य मुख्य रूप से इस दिलचस्पी से निश्चित हुआ कि वह अपने मित्र दार्शनिक जान लॉक को उपनिवेशों के सेवा कार्य में लाया। इस राज्यकाल के आरम्भ में ही एक नयी संस्था बनाई गयी, यह व्यापार और बस्तियों की परिषद (Council of Trade and Plantations) के नाम से प्रसिद्ध हुई। बाद में लॉक इसका सचिव बना। यद्यपि इसे शीघ्र ही समाप्त कर दिया गया, तथापि इसके स्थान में प्रिवीकौंसिल की विशेष समितियाँ बनायी गयीं। उस समय के दस्तावेजों से यह प्रदर्शित होता है कि इन संस्थाओं के सदस्य अपने काम में अधिकतम ध्यान देते थे। उन्होंने इस बात का सर्वोत्तम प्रयास किया कि वे एक शाही नीति का निर्माण करें और साम्राज्य के सभी सदस्यों के सामान्य मामलों के लिए एक क्षमतापूर्ण केन्द्र प्रस्तुत करें। चार्ल्स द्वितीय की सरकार की कुछ भी आलोचना की जाय, तथापि इसे इस बात का श्रेय है कि इसने अपनी किसी पूर्ववर्ती सरकार की अपेक्षा अथवा उन्नीसवीं शताब्दी तक किसी भी अपनी उत्तराधिकारी सरकार की अपेक्षा, औपनिवेशिक समस्याओं में अधिक तीव्र और अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण दिलचस्पी दिखायी।

इस युग के कार्य का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू औपनिवेशिक नीति के सिद्धान्तों की व्याख्या करने का तथा उपनिवेशों और इंग्लैण्ड के बीच के सम्बन्धों को निश्चित करने का प्रयास था। नई नीति का मुख्य उद्देश्य इस बात को सुरक्षित करना था कि उपनिवेशों के विस्तार से इंग्लिश व्यापार को लाभ पहुँचना चाहिये और समूचे रूप से साम्राज्य को व्यापार के बन्धनों में बाँधा जाना चाहिये, इंग्लैण्ड समूचे साम्राज्य की केन्द्रीय मण्डी, कारखाना तथा प्रशासनात्मक राजधानी बन जाय और साम्राज्य की व्यापारिक नीति इंग्लैण्ड की सरकार तथा पार्लियामेण्ट द्वारा निश्चित की जाय। यह विचार उस समय किसी व्यक्ति के मन में नहीं आया कि इस नीति को निश्चित करने में उपनिवेशों से भी परामर्श लिया जाना चाहिये; वस्तुतः उस समय ऐसा विचार पूर्ण रूप से

१. एच० डी० ट्रेल ने शेफ्ट्सबरी की एक उत्तम छोटी जीवनी लिखी है।

अव्यावहारिक था। इस बात के कई उत्तम कारण थे कि उपनिवेशों के व्यापार से कुछ लाभ उठाने का दावा इंग्लैण्ड को क्यों करना चाहिये। उसे उनकी प्रतिरक्षा का समूचा व्यय वहन करना पड़ता था। यदि ये उपनिवेश इंग्लैण्ड के संरक्षण पर भरोसा न रख सकते और यदि इंग्लिश नौसेना का समुद्रों पर अधिकार न होता तो ये उपनिवेश बिखरे हुए और निर्बल होने के कारण अन्य औपनिवेशिक शक्तियों की कृपा पर ही निर्भर रहते। इंग्लैण्ड में उपनिवेशों से आने वाले तथा इन्हें भेजे जाने वाले माल पर लगाये जाने वाले सीमाशुल्क ही एक मात्र ऐसे साधन थे, जिन से उपनिवेशों को अपनी सामान्य प्रतिरक्षा के लिए अंशदान देने को कहा जाता था।

स्काटलैण्ड को इन व्यापारिक लाभों को पाने से कठोर रीति से वंचित किया गया था; आरम्भ में यद्यपि आयरलैण्ड को औपनिवेशिक व्यापार के विशेषाधिकारों से लाभ उठाने के कार्य में सम्मिलित किया गया था; तथापि बाद में उसे इन से वंचित कर दिया गया। वस्तुतः पुनःस्थापना की संरक्षणात्मक पद्धति में स्काटलैण्ड एवं आयरलैण्ड के साथ विदेशी देशों का सा व्यवहार किया गया था और इनकी उपज के अनेक पदार्थों को न केवल उपनिवेशों से, अपितु इंग्लैण्ड से भी बहिष्कृत किया गया था। इस नीति की निन्दा करना बेकार है। यह उस संरक्षणवादी सिद्धान्त (Protectionist theory) का अनिवार्य एवं तर्कसंगत परिणाम था, जिसे सभी व्यक्ति न केवल इंग्लैण्ड में अपितु अन्य सभी देशों में स्पष्ट रूप से सत्य स्वीकार करते थे।

इस नीति की रूपरेखा १६६० ई० के एक **नौचालन अधिनियम** (Navigation Act) में दी गयी थी, यह पुनःस्थापना का एक पहला कानून था और इसकी व्यवस्थाओं को सुदृढ़ बनाने वाले अन्य चार कानून अगले १२ वर्षों में पास किये गये। नौचालन कानून ने न केवल १६५१ ई० के कानून की उस प्रमुख व्यवस्था को पुनः प्रतिपादित किया, जिसके अनुसार साम्राज्य के भीतर का व्यापार केवल इंग्लैण्ड के अथवा उसके उपनिवेशों के जहाजों द्वारा ही किया जा सकता था, अपितु उन्होंने इसमें यह अति महत्वपूर्ण धारा बढ़ा दी कि औपनिवेशिक उत्पादन के कुछ परिगणित पदार्थ—जिन में मुख्य चीनी, तम्बाकू, रुई और रंग बनाने की वस्तुएँ थीं—इंग्लैण्ड के अथवा अन्य किसी उपनिवेश के अतिरिक्त किसी अन्य देश को जहाजों द्वारा नहीं भेजे जाने चाहिएँ, ताकि उपनिवेशों की वस्तुओं को चाहने वाले अन्य देशों को ये वस्तुएँ मुख्य रूप से इंग्लैण्ड से ही खरीदनी पड़ें। १६६४ ई० में इस व्यापार पद्धति को इस व्यवस्था द्वारा पूर्ण बना दिया गया कि उपनिवेशों को भेजी जाने वाली सभी विदेशी वस्तुओं को पहले इंग्लैण्ड लाना चाहिए; इस प्रकार इंग्लैण्ड समूचे साम्राज्य की केन्द्रीय मण्डी बन गयी। आरम्भ से ही इन व्यवस्थाओं की अत्यधिक आलोचना की गयी और बड़े पैमाने पर इनसे बचा जाता था। ऐसा कार्य विशेष रूप से न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेश करते थे। किन्तु इन व्यवस्थाओं ने एक बड़ी मात्रा में औपनिवेशिक व्यापार की दिशाओं को निश्चित करने में भाग लिया। इस प्रकार इस सिद्धान्त को पूरा अवसर दिया गया कि साम्राज्य की एकता व्यापारिक नियमों और बन्धनों पर आधारित

की जा सकती है; यह सिद्धान्त एक शताब्दी तक चलता रहा और अमेरिकन क्रान्ति से इस सिद्धान्त की समाप्ति हुई।

फिर भी, अपनी योजनाओं की अन्तिम विफलता के लिए पुन:स्थापना के राजनीतिज्ञों को दोष देना ठीक नहीं होगा। इस युग के विचारों के अनुसार वे ब्रिटिश प्रदेशों के एकीकरण को एक सुदृढ़ आर्थिक आधार पर कर रहे थे। उनकी नीति ने इंग्लैण्ड में तथा उपनिवेशों में व्यापारिक समुद्री बेड़े के विकास को प्रोत्साहित करने का तथा नौसैनिक शक्ति की नींव को सुदृढ़ बनाने का बहुत काम किया। यह स्मरण रखना चाहिए कि व्यापार के मामलों में भी उनकी नीति किसी भी अन्य उपनिवेश बसाने वाली शक्ति की अपेक्षा कहीं कम प्रतिबन्ध लगाने वाली थी, क्योंकि उन्होंने उपनिवेशों की अपरिगणित वस्तुओं को सारी दुनिया से सीधा व्यापार करने के लिए खुला छोड़ दिया था, जब कि स्पेन और फ्रांस ने तथा डचों ने समूचे औपनिवेशिक व्यापार पर अपना पूर्ण एकाधिकार बनाये रखा था।

नयी साम्राज्यवादी नीति अन्य किसी देश की नीति की अपेक्षा व्यापारिक मामलों से भिन्न विषयों में असीम रूप से अधिक प्रबुद्ध थी। पहली बात तो यह थी कि इस बात को वास्तविक रूप से मान लिया गया था कि प्रत्येक औपनिवेशिक बस्ती में ताज द्वारा अथवा उस के प्रतिनिधियों द्वारा नियत किये गये गवर्नर तथा परिषद् के साथ-साथ प्रतिनिधियों की एक सभा अवश्य होनी चाहिये। स्थानीय स्वशासन की यह विशेषता निस्सन्देह इंग्लिश पद्धति की सब से बड़ी, विशिष्ट और विलक्षण बात थी। प्रत्येक इंग्लिश उपनिवेश इसका उपभोग करता था, अन्य किसी देश द्वारा स्थापित उपनिवेश में यह विशेषता नहीं थी। इस युग में उपनिवेश-नीति का एक उद्देश्य इस बात को निश्चित करना प्रतीत होता है कि उपनिवेश का शासन एक समरूप पद्धति के आधार पर एक गवर्नर और उसकी परिषद् द्वारा तथा एक प्रतिनिधिसभा द्वारा चलाया जाना चाहिए। इन प्रतिनिधिसभाओं को इस बात का पूरा अधिकार दिया गया था कि वे इंग्लैण्ड के कानूनों से संगति रखने वाले कानून बनायें और अपनी आवश्यकताओं के लिए कर लगाएँ, कभी भी यह प्रयत्न नहीं किया गया कि इंग्लिश पार्लियामेण्ट की अथवा इंग्लिश सरकार की सत्ता द्वारा उपनिवेशों पर सीधा कर लगाया जाय। कानून निर्माण के लिए प्रायः यह मान लिया जाता था कि व्यापार के क्षेत्र के अतिरिक्त औपनिवेशिक प्रश्नों पर केवल औपनिवेशिक प्रतिनिधिसभाओं को ही कानून बनाने चाहियें, साम्राज्य की पार्लियामेण्ट को केवल सामान्य विषय के मामलों में ही कानून बनाने चाहिए। इस विषय में भी इंग्लिश उपनिवेश उस युग की यूरोपियन बस्तियों में निराले हैं। संक्षेप में नयी साम्राज्यवादी पद्धति का यह विचार था कि समूचे साम्राज्य की सामान्य प्रतिरक्षा के लिए इंग्लैण्ड को उत्तरदायी होना चाहिए और उसकी सरकार को इसकी विदेश नीति और व्यापारिक नीति का संचालन करना चाहिए, किन्तु अन्य सभी मामलों में उपनिवेश स्वावलम्बी और स्वशासक होने चाहिएँ।

पुन: स्थापना के समय की सरकार की उपनिवेशों में स्वशासन को प्रोत्साहन देने की तत्परता न केवल उन संविधानों से प्रदर्शित हुई, जो उस युग की नयी बस्तियों को प्रदान

किये गये थे, अपितु यह इस बात से भी प्रकट हुई कि कुछ पुरानी बस्तियों को भी शासन करने के लिए चार्टर प्रदान किये गये। इस प्रकार १६६१ ई० में ६ वर्ष पूर्व क्रामवेल द्वारा जीते गये जमैका टापू को एक सामान्य ढंग की प्रतिनिध्यात्मक पद्धति प्रदान की गयी। १६६२ ई० में कनैक्टिकट को तथा १६६३ ई० में रोड टापू को दिये गये चार्टर इससे भी अधिक विलक्षण थे। इन दोनों उपनिवेशों में से किसी ने अब तक एक भी औपचारिक चार्टर प्राप्त नहीं किया था, यद्यपि दोनों ने अपनी सरकारें स्थापित कीं थीं। चार्ल्स द्वितीय को न्यू इंग्लैण्ड वालों से प्रेम करने का कोई विशेष कारण नहीं था। दोनों बस्तियाँ उसकी दया पर अवलम्बित थीं। फिर भी, उनके लिए दिये गये चार्टरों ने उनके द्वारा स्थापित पद्धति को स्वीकार किया गया और उन्हें न केवल प्रतिनिधिसभाएँ चुनने का अधिकार दिया गया, अपितु वास्तव में उन्हें अपने गवर्नर नियुक्त करने का भी अधिकार दिया गया।

फ्रांस की नीति के साथ नयी साम्राज्यवादी पद्धति का उग्र अन्तर प्रस्तुत करने वाली एक अन्य विशेषता विशेष ध्यान दिये जाने योग्य है। धार्मिक मामलों में यहाँ अन्तःकरण की पूर्ण स्वतन्त्रता थी। सम्भवतः इस सिद्धान्त को निश्चित करने का श्रेय मुख्य रूप से शेफ्ट्सबरी को तथा उसके मित्र जान लॉक को है। शेफ्ट्सबरी धार्मिक सहिष्णुता के उस आदर्श के बारे में गहरी चिन्ता रखता था, जिसे उसने क्रामवेल से सीखा था; स्वदेश में तथा उपनिवेशों में उसकी नीति इस उद्देश्य से बड़ी मात्रा में प्रभावित हुई थी। कैरोलिना की नयी बस्ती के लिए बसने वालों को आकर्षित करने के इरादे से तैयार किये गये एक विज्ञापन में पहला स्थान इस वक्तव्य को दिया गया था कि "वहाँ अन्तःकरण की पूर्ण एवं उन्मुक्त स्वाधीनता प्रदान की जाती है।" यार्क के ड्यूक जेम्स तक ने न्यूयार्क के गवर्नर को यह हिदायत दी थी कि उसे "सब धर्मों के व्यक्तियों को शान्ति-पूर्वक बसने की अनुमति देनी चाहिए और उनके धर्म-कार्य में किसी प्रकार की बाधा नहीं डालनी चाहिए"। मैसाचुसेट्स के साथ इस समूचे युग में चलने वाले स्थायी विवाद का एक मुख्य कारण इंग्लिश सरकार की यह माँग थी कि इस बस्ती में धार्मिक सहिष्णुता की अनुमति दी जानी चाहिए और मताधिकार चर्च के सदस्यों तक सीमित नहीं रखना चाहिए। इंग्लैण्ड में उस समय, एंग्लिकन चर्च से मतभेद रखने वालों के साथ तथा रोमन कैथोलिकों के साथ किये जाने वाले अत्याचार को देखते हुए सहिष्णुता पर दिए जाने वाले इस आग्रह के मूल कारण की व्याख्या करना कठिन प्रतीत होता है, किन्तु इंग्लैण्ड में यह अत्याचार मुख्य रूप से राजपक्षावलम्बी पार्लियामेण्ट का कार्य था और हम आगे यह देखेंगे कि सरकार इसके विरुद्ध व्यर्थ में ही संघर्ष कर रही थी।

४. नयी बस्तियों की स्थापना

विदेशों में नयी इंग्लिश बस्तियों के निर्माण में तथा इंग्लिश व्यापार के विस्तार में इस उल्लेखनीय युग का कार्य उतना ही महत्वपूर्ण था, जितना साम्राज्यवादी नीति के निर्धारण में।

मुख्य रूप से सरकार के प्रोत्साहन के कारण ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने महान् समृद्धि

के युग में प्रवेश किया, चिरकाल से एक बड़ी पूँजी के साथ इसे एक नियमित सम्मिलित पूँजी वाली कम्पनी बना दिया गया था। १६६१ ई० में कम्पनी ने एक नया चार्टर प्राप्त किया, उसने इसे मुद्रा बनाने, दुर्ग रक्षक सेनाओं को तैयार करने तथा उसकी बस्तियों में रहने वाले निवासियों पर क्षेत्राधिकार स्थापित करने के अधिकार दिये। १६६८ ई० में राजा ने अपनी पुर्तगाली पत्नी के दहेज के एक भाग के रूप में उसे प्राप्त हुए बम्बई के टापू को कम्पनी को सौंप दिया। कम्पनी द्वारा भारत में पूरी प्रभुसत्ता के साथ अपने स्वामित्व में रखा जाने वाला पहला प्रदेश बम्बई था।

इस युग में भारत में अव्यवस्था मची हुई थी। मुगल सम्राट् औरंगजेब दक्षिणी भारत में अपने प्रत्यक्ष शासन को स्थापित करने का प्रयत्न कर रहा था, यहाँ उसके पूर्ववर्तियों ने अपनी प्रभुता को कभी नहीं स्थापित की थी।[1] अपने युद्धों में उसने बम्बई के पीछे के पहाड़ी प्रदेश में रहने वाले मराठों के दुर्जेय सैनिक दस्तों को अपने विरुद्ध उभाड़ दिया। अपने साहसी मुखिया शिवाजी के नेतृत्व में मराठे विशाल प्रदेशों पर हमले करने लगे। पहले से ही मुगल सम्राट् का पतन अब स्पष्ट दिखाई देना शुरू हो गया था। उस अवस्था में कम्पनी को स्वयं अपनी प्रतिरक्षा करने के लिए तैयार होना पड़ा। इसी कारण उसे दुर्गरक्षक सेनाओं की आवश्यकता थी। इसके कार्यकर्ताओं ने यह प्रदर्शित किया कि वे अपनी स्थिति स्वयं बनाये रखने में अच्छी तरह समर्थ हैं और इस युग के पिछले हिस्से में, कुछ नेता प्रदेशों को प्राप्त करने की सम्भावना का एक धुँधला सा विचार भी रखने लगे थे। यद्यपि १६८६ ई० में कम्पनी मुगल साम्राज्य के साथ खुली लड़ाई कर रही थी, तथापि इन उपद्रवों के बावजूद इसका व्यापार इतना अधिक था कि इसके हिस्से पाँच सौ प्रतिशत के लाभ से बिक रहे थे।

१६६२ ई० में एक राजकीय चार्टर द्वारा बनायी गयी तथा १६७२ ई० में पुनर्निर्मित एक कम्पनी की अध्यक्षता में अफ्रीका के व्यापार को संगठित करने के लिए पुनः एक प्रयत्न किया गया। इसका मुख्य व्यवसाय अन्यायपूर्ण ढग से दासों की आपूर्ति (Supply) करना था, इसने सब इंग्लिश बस्तियों के लिए दासों की पूर्ति पर एकाधिकार स्थापित किया और इस प्रयाजन के लिए गेम्बिया पर तथा गोल्डकोस्ट पर स्थित व्यापार बन्दरगाहों को अपने अधिकार में बनाये रखा। उस समय तक इस अन्यायपूर्ण व्यापार में किसी बस्ती ने लज्जा की किसी भावना का अनुभव करना शुरू नहीं किया था। इस दास व्यापार में सभी राष्ट्र हिस्सा ले रहे थे: दासों के श्रम की पूर्ति के बिना वेस्ट इण्डीज के तथा उत्तरी अमेरिका के चीनी, रुई और तम्बाकू के बड़े फार्म बड़ी कठिनाई से ही चलाये जा सकते थे; मनुष्य उस समय तक भी इस विश्वास से अपने को प्रतारणा दे रहे थे कि नीग्रो लोगों को इस प्रकार सभ्य बनाने वाले प्रभावों में लाया जाना उनके लिए वरदान है।

वेस्ट इण्डीज में प्रिवीकौंसिल इंग्लिश टापुओं के विकास की ओर निरन्तर ध्यान देती रही। १६६६-६७ ई० के फ्रेंच युद्ध में पहुँचाई गयी हानि के बावजूद यह एक निरन्तर

---

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ३० देखिए।

विकास का युग था। लीवर्ड टापू को एक विशिष्ट सरकार प्रदान की गयी और बहामा टापुओं में बस्ती बसायी गयी। समुद्री डाकुओं के प्रति इंग्लिश सरकार ने एक दोलायमान या अनिश्चित नीति का अनुसरण किया। ऐसा प्रतीत होता था कि कुछ मात्रा तक ड्रेक की परम्पराएँ उनकी रक्षा कर रहीं थीं। कुछ समय के लिए कुख्यात मोर्गन को वास्तव में जमैका का गवर्नर नियुक्त किया गया। किन्तु समग्र रूप से इस समय यह प्रवृत्ति थी कि जल-दस्युओं को प्रश्रय न दिया जाय। वस्तुतः उनकी घृणित कार्यवाहियाँ इन टापुओं के मूल्यवान् व्यापार के विकास में बाधा डाल रहीं थीं, ये टापू अगली शताब्दी में अधिकतम लाभदायक व्यापार करने वाले बन गये।

फ्रेंच सरकार की भाँति, इंग्लिश सरकार की शक्ति भी मुख्य रूप से उत्तरी अमेरिका के महाद्वीप में ही लगी रही। इस युग में पहली आधी शताब्दी की बिखरी हुई और असम्बद्ध बस्तियाँ उन्नतिशील और अधिक आबादी वाले राज्यों की एक अविच्छिन्न शृंखला में परिणत हो गयीं।[१] १६६३ ई० में क्लेरेण्डन, शेफ्ट्सबरी, मांक तथा अन्य व्यक्तियों के नाम से प्रकाशित किये गये एक राजकीय अधिकार-पत्र (Patent) में उन्हें यह अधिकार दिया गया कि वे वर्जिनिया के दक्षिण में कैरोलिना के नाम से एक उपनिवेश की स्थापना करें। इस उपनिवेश की योजना अधिकतम सावधानी के साथ बनायी गयी थी और इस युग के सबसे बड़े राजनीतिक दार्शनिक जान लॉक को इसका संविधान बनाने के लिए कहा गया था। यह संविधान इतना अधिक विस्तृत था कि इसे क्रियात्मक रूप नहीं दिया जा सकता था, किन्तु लॉक को इसे बनाने के लिए कहने का तथ्य ही यह प्रदर्शित करता था कि उन दिनों उपनिवेशीकरण का कार्य कितना गम्भीर समझा जाता था। कैरोलिना शीघ्र ही दो पृथक् बस्तियों में विभक्त हो गया, इनमें से चार्ल्सटन में अपनी राजधानी रखने वाला दक्षिणी उपनिवेश अधिक व्यवस्थित और समृद्ध बन गया। दोनों दासों के श्रम पर निर्भर थे और दोनों में गवर्नर और परिषद् के साथ एक निर्वाचित असेम्बली की सार्वभौम पद्धति प्रचलित थी।

अगले वर्ष १६६४ ई० में, न्यू नीदरलैण्ड्स की डच बस्ती के विरुद्ध एक आक्रमण किया गया।[२] क्योंकि डचों ने इससे पहले डेलावेयर की स्वीडिश बस्तियाँ जीत ली थीं, अतः उनकी पराजय का आशय यह था कि न्यू इंग्लैण्ड और वर्जिनिया के बीच का समूचा समुद्री तट इंग्लिश लोगों के हाथ में चला गया। यह आक्रमण चार्ल्स द्वितीय के प्रथम डच युद्ध का तात्कालिक कारण था। यह युद्ध आवश्यक रूप से दोनों राष्ट्रों की प्रबल व्यापारिक प्रतिस्पर्धा का परिणाम था। जब शान्ति सन्धि की गयी (१६६७ ई०) तो यह समूचा महत्वपूर्ण क्षेत्र स्थायी रूप से इंग्लैण्ड के अधिकार में आ गया। इस प्राप्ति के महत्व को कठिनता से ही अतिरंजित किया जा सकता है। न केवल इसने उत्तरी और दक्षिणी

१. इसके बाद के विवरण के लिए उत्तरी अमेरिका के उपनिवेशीकरण के सामान्य नक्शे के लिए देखिए एटलस की प्लेट संख्या ५२ (ए)।

२. मध्यवर्ती उपनिवेशों के नक्शे के लिए प्लेट संख्या ५२ (बी) देखिए।

बस्तियों को मिला दिया, अपितु इसने हडसन नदी की सबसे महत्वपूर्ण रेखा पर नियन्त्रण प्रदान किया।[1] यह नदी पहाड़ों में एक गहरी दरार थी और आजकल की भाँति फ्रेंच कनाडा के साथ यातायात के मुख्य मार्ग का निर्माण करती थी। पश्चिम से आने वाली मोहाक की सहायक नदी की घाटी सेण्ट लारेन्स के दक्षिण की पर्वतीय मेखला में से एकमात्र स्पष्ट मार्ग को प्रस्तुत करती थी, इसलिए यह महान् झीलों और केन्द्रीय मैदानों तक पहुँचने का मार्ग देती थी। चिरकाल से फ्रेंच लोगों ने इस महान् जल मार्ग का महत्व समझ लिया था। शैम्पलेन झील का उत्तरी भाग पहले से ही उनके अधिकार में था। वे शेष भाग को प्राप्त करने का तथा इस प्रकार इंग्लिश उपनिवेशों को दो भागों में विभक्त करने का सपना देख रहे थे। अगली शताब्दी की कुछ भयंकरतम लड़ाइयाँ इस रेखा के साथ-साथ हुईं। इससे भी बड़ी बात यह थी कि हडसन घाटी पर स्वामित्व हो जाने के कारण इंग्लिश लोगों का उस इरोक्वोई जनजाति के साथ सम्पर्क स्थापित हुआ, जो रेड इण्डियन लोगों में सर्वोत्तम रूप से संगठित और भीषणतम जाति थी। इसके प्रमुख केन्द्र मोहाक नदी की धारा के साथ-साथ थे। शीघ्र ही इरोक्वोई लोगों के साथ उनके मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हो गये। ये लोग फ्रेंचों के लिए उपयोगी नियन्त्रण का काम करते थे। रेड इण्डियन जातियों के साथ वार्ता करने का प्रधान कार्यालय मोहाक और हडसन नदी के संगम के निकट ऑरेन्ज का व्यापारिक अड्डा था, अब उसे पुनः एलबेनी का नाम दिया गया।

डचों से जीता गया प्रदेश यार्क के ड्यूक को प्रदान किया गया। इसी कारण इसका नाम न्यूयार्क का राज्य हो गया। न्यूयार्क (यह पहले न्यूएमस्टर्डम था) में तथा हडसन घाटी में अनेक यूरोपियन जातियों की एक मिश्रित जनसंख्या बस गयी, निस्सन्देह इनमें डच लोग प्रधानता रखते थे। किन्तु अधिकांशतः न्यू इंग्लैण्ड से आने वाले इंग्लिश उपनिवेशक भी लगभग डचों जितनी संख्या रखते थे। यही बात बड़ी मात्रा में, इस उपनिवेश को आसानी से जीता जाने का कारण है और उस तत्परता का भी कारण है, जिससे इस उपनिवेश ने नये शासन के साथ अपना सामन्जस्य स्थापित किया। यह बात उल्लेखनीय है कि यह ऐसी पहली बस्ती थी, जिसमें ब्रिटिश पद्धति को यूरोपियन वंश के विजित प्रजाजनों के साथ व्यवहार करना पड़ा। सम्भवतः इसी कारण प्रतिनिध्यात्मक संस्थाओं की स्थापना में १६६८ ई० तक विलम्ब होता रहा। किन्तु स्थानीय स्वशासन को तत्काल स्थापित किया गया। डचों ने यह अनुभव किया कि उनके रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप नहीं किया गया, उन्हें इंग्लिश ढाँचे में ढालने का प्रयास नहीं किया गया। बीस वर्षों के भीतर ही उन्होंने स्वशासन की ऐसी पद्धति प्राप्त कर ली, जैसी पद्धति की अनुमति डच कम्पनी ने उन्हें कभी नहीं प्रदान की थी। अपने पड़ोसियों के साथ संघर्ष से मुक्त हो कर यह उपनिवेश महान् समृद्धि के एक युग में प्रविष्ट हुआ।

हडसन नदी से डेलावेयर की खाड़ी तक विस्तीर्ण प्रदेश में यार्क के ड्यूक ने सर जार्ज कार्टेरेट को तथा अन्य व्यक्तियों को विशाल भूमियाँ प्रदान कीं। इन्होंने यहाँ एक

---

१. हडसन घाटी के विशेष नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ६६ (ए) देखिए।

उपनिवेश स्थापित किया। इसे न्यू जर्सी का नाम दिया गया। पहले यह दो भागों में बाँटा गया। इस उपनिवेश में क्वेकर लोगों की एक बड़ी संख्या को प्रवेश दिया गया। वे अब भी इस देश के विभिन्न भागों की जनसंख्या में एक ठोस तत्व का निर्माण करते थे। यहाँ वे पूर्ण धार्मिक सहिष्णुता के और सामान्य स्वशासन के अधिकारों का उपभोग करते थे।

डेलावेयर खाड़ी की दूसरी ओर ऐसी भूमि थी, जिसमें मुख्य रूप से स्वीडिश लोग बसे हुए थे, यद्यपि उनकी संख्या कभी भी अधिक नहीं थी। कुछ समय के लिए इस प्रदेश को यार्क के ड्यूक ने अपने नियन्त्रण में रखा। बाद में यह कुछ समय के लिए पेन्सिल-वेनिया के साथ मिला दिया गया, किन्तु अन्त में यह डेलावेयर का छोटा उपनिवेश बन गया। इन सब नये क्षेत्रों में इंग्लिश लोगों ने यह पाया कि उनके सामने अपने से भिन्न जातियों वाले यूरोपियन उपनिवेशकों के शासन की समस्या है। इसमें कोई गम्भीर कठिनाई नहीं अनुभव की गयी। स्थानीय स्वशासन की परिपाटी ने कार्य को सुगम बना दिया।

न्यू जर्सी के पीछे डेलावेयर नदी के दूरवर्ती पार्श्व पर एक समृद्ध और उर्वर प्रदेश था। यहाँ १६८१ ई० में क्वेकर मतावलम्बी विलियम पेन ने चार्ल्स द्वितीय से एक विशाल भूमि का दान प्राप्त किया। जमैका टापू को जीतने वाले जल सेनापति तथा विलियम पेन के पिता का ऋण चुकाने के लिए यह भूमि उसे दी गयी थी। पेन पहले से ही न्यू जर्सी के पड़ोसी प्रदेश में क्वेकर लोगों की बस्ती बसाने के विषय में सोच रहा था। अब उसने अपने को नयी बस्ती को संगठित करने में लगा दिया, यह सब आगन्तुकों के लिए उन्मुक्त रूप से खुली हुई थी, यह उसके परोपकारपूर्ण पथ-प्रदर्शन में शीघ्र ही सब बस्तियों में सबसे अधिक स्वतन्त्र और उदारतम बस्ती के रूप में प्रसिद्ध हो गयी। इसने बाहर से आने वाले बहुत अधिक व्यक्तियों को आकृष्ट किया। यद्यपि यह बस्ती सबसे बाद में बसी थी, किन्तु इसकी गणना शीघ्र ही सब बस्तियों में प्राचीनतम और प्रबलतम समझी जाने वाली मेसाचुसेट्स की और वर्जिनिया की बस्तियों के साथ की जाने लगी। पेन ने अपनी बस्ती को पेन्सिलवेनिया का नाम दिया। इसकी विशेषता उन रेड इण्डियन जनजातियों के साथ सम्मानपूर्ण और उदार व्यवहार था, जिन जातियों के साथ इसको व्यवहार करना पड़ता था। इसकी दूसरी विशेषता किन्हीं भी युद्ध जैसे साहसिक कार्यों में भाग लेने में इसकी अनिच्छा थी। डेलावेयर नदी के तटों पर इसकी राजधानी फिलाडेल्फिया (भ्रातृप्रेम) आधुनिक जगत् में ऐसा पहला नगर था, जिसकी स्थापना एक व्यवस्थित और क्रमबद्ध योजना के आधार पर की गयी थी।

इस साहसी युग की क्रियाशीलता मेन से दक्षिणी कैरालिना तक के अमरीकी समुद्रतट के उपनिवेशन और संगठन की पूर्णता में ही समाप्त नहीं हुई। १६७० ई० में फ्रेंच कनाडा के गवर्नर के साथ झगड़ा करने के बाद दो साहसी फ्रेंच व्यक्तियों ने हडसन की खाड़ी से पहुँची जा सकने वाली फ्रेंच बस्तियों के उत्तरी वन्य देश में समूर का व्यापार विकसित करने के लिए एक कम्पनी की स्थापना का सुझाव दिया। एक नयी **हडसन बे**

कम्पनी बनायी गयी, राजकुमार रूपर्ट को इसका गवर्नर बनाते हुए एक चार्टर प्रदान किया गया और इसके बाद से उस विशाल प्रदेश में सदैव व्यापार चलता रहा, जो राजकुमार रूपर्ट की भूमि (Prince Rubert's Land) के नाम से प्रसिद्ध हुआ, यद्यपि फ्रेंच लोग यह दावा करते थे कि यह व्यापार अवैध है। यहाँ फ्रेंच लोगों के साथ झगड़े का एक अन्य कारण भी प्रकट हो रहा था।

पुन: स्थापना के बाद २५ वर्षों के व्यवस्थित और परिश्रमपूर्ण कार्य का परिणाम यह था कि उत्तरी अमेरिका में इंग्लिश लोगों के प्रदेश सुदृढ़ एवं सगठित हो गये; वे आक्रमण का प्रतिरोध करने में तथा अधिक विस्तार करने में उससे कहीं अधिक अच्छे रूप से समर्थ हो गये, जितना वे उस समय थे जब कि चार्ल्स द्वितीय राजगद्दी पर बैठा था। न केवल इन उपनिवेशों का व्यापार विस्तृत हो रहा था, अपितु वे नया घर चाहने वाले मनुष्यों के लिए स्वाभाविक शरणस्थल बन गये, भले ही ये मनुष्य इंग्लैण्ड से अथवा अन्य देशों से आयें। अत्याचार पीड़ित फ्रेंच ह्यूगनाट एवं साल्जबर्ग के आर्कबिशप की कठोरताओं के कारण अथवा लुई १४वें के युद्धों के परिणामस्वरूप पेलेटिनेट के विनाश और विध्वंस के कारण, अपने देश से बाहर भगाये जाने वाले जर्मन नयी दुनिया के उन स्वतन्त्र देशों की ओर मुड़े, जहाँ ऐसी धार्मिक सहिष्णुता विद्यमान थी, जैसी अन्यत्र किसी देश में नहीं थी और जहाँ स्वतन्त्र व्यक्तियों को अपने भाग्य के निर्माण में भाग लेने का विलक्षण अवसर था। ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल पहले से ही स्वतन्त्र राज्यों का ऐसा परिवार था, जिसके साथ सादृश्य रखने वाली कोई अन्य वस्तु विश्व में कभी विद्यमान नहीं थी।

५. संघर्ष का एक युग

चार्ल्स द्वितीय के राज्यकाल के पहले २० वर्षों में इस प्रकार इंग्लिश साम्राज्य में एक महान् परिवर्तन हुआ। मेन से दक्षिणी कैरोलिना तक का अटलाण्टिक महासागर का समुद्र तट अविच्छिन्न रूप से इंग्लैण्ड के अधिकार में आ गया। कुल मिलाकर साम्राज्य के लिए एक सुस्पष्ट धार्मिक नीति निश्चित की गयी। मुख्य अमेरिकन महाद्वीप में तथा वेस्ट-इण्डीज में, स्थानीय स्वशासन और धार्मिक सहिष्णुता की पद्धति इंग्लिश उपनिवेशों की सामान्य विशेषता बन गयी और इन उपनिवेशों के प्रधान कार्यालय में प्रिवी कौंसिल की समितियों ने (विशेषत: जिस रूप में १६७५ ई० में ये पुन: संगठित हुई थीं उस रूप में) एक सरकार के केन्द्रीय शासन पद्धति जैसी चीज़ प्रस्तुत की। यह सभी उपनिवेशों के गवर्नरों को निर्देश जारी करती थी।

किन्तु इस पद्धति में कुछ स्पष्ट दोष थे। पहला दोष यह था कि गवर्नरों पर सदा यह भरोसा नहीं रखा जा सकता था कि वे केन्द्रीय शक्ति के अभिकर्ता के रूप में कार्य करेंगे। यह बात न्यू इंग्लैण्ड के बारे में विशेष रूप से सत्य थी, यहाँ गवर्नर उपनिवेशवासियों द्वारा स्वयमेव नियुक्त किये जाते थे। दूसरा दोष यह था कि नयी आर्थिक पद्धति की व्यापक रूप से अवहेलना की जाती थी और नौचालन कानूनों के प्रतिबन्धों का खुले रूप से उल्लंघन किया जाता था। यह भी विशेष रूप से न्यू इंग्लैण्ड में होता था। इस स्थिति का

अध्ययन करने के लिए भेजे गये एक अतीव योग्य व्यक्ति एडवर्ड रैण्डोल्फ द्वारा प्रस्तुत की गयी रिपोर्ट में न्यू इंग्लैण्ड की उपर्युक्त प्रवृत्ति का एक निराशाजनक चित्र खींचा गया था। इसके अतिरिक्त समग्र रूप से, उपनिवेशों के लिए एक सामान्य संगठन नहीं था और सामान्य प्रतिरक्षा के लिए कोई व्यवस्था नही थी। यह बात उत्तरी उपनिवेशों के लिए विशेष रूप से गम्भीर थी, जहाँ एक फ्रेंच आक्रमण की सम्भावना से लोग पहले से ही चिन्तित होने लगे थे। फ्रेंच इरोकुओई लोगों के प्रदेश पर स्वामित्व का दावा कर रहे थे। इस दावे ने उन्हें न्यू इंग्लैण्ड और न्यूयार्क के संकटपूर्ण सान्निध्य में ला दिया था। इन विचारों से प्रभावित हो कर चार्ल्स द्वितीय ने तथा जेम्स द्वितीय ने मुख्य रूप से रैण्डोल्फ के परामर्श पर अमेरिका में और अधिक केन्द्रीकरण की नीति को अपनाने का प्रस्ताव किया।

ऐसी नीति के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता था, बशर्ते कि इसे उपनिवेशों की स्वतन्त्रताओं पर कोई हमला किये बिना पूरा किया जा सकता हो। किन्तु जिस तिथि पर इस नयी नीति को स्वीकार किया गया, वह अमंगलसूचक थी। जैसे कि हम आगे चल कर देखेंगे कि १६८१ ई० में चार्ल्स द्वितीय ने क्रियात्मक रूप से निरंकुश शासन स्थापित किया था, वह पार्लियामेण्ट पर नियन्त्रण पाने के लिए बरो चार्टरों के संशोधन में बहुत व्यस्त था। उपनिवेशों के साथ भी वही अन्यायपूर्ण तरीके ग्रहण किये गये। उदाहरणार्थ, मैसाचुसेट्स से अधिकार प्रदर्शित करने वाले न्यायालय-समादेश-आदेशपत्र (Quo Warranto)[1] की युक्ति के आधार पर उसे यह कारण बताने के लिए कहा गया कि इसका चार्टर क्यों न रद्द कर दिया जाय। एक न्यायिक जाँच के बाद इसके चार्टर को रद्द कर दिया गया। इसी प्रकार न्यू इंग्लैण्ड की अन्य बस्तियों को तथा न्यू जर्सी के चार्टरों को भी खतरा था। मैसाचुसेट्स ने इस समय असाधारण मृदुता के साथ समर्पण किया। इसके बाद जेम्स द्वितीय ने डेलावेयर से मेन तक के समूचे प्रदेश के लिए एक सामान्य सरकार एकमात्र गवर्नर सर एडमण्ड एण्ड्रोस की अध्यक्षता में स्थापित करने का प्रयत्न किया। इसका कार्य उपनिवेशों का एकीकरण तथा व्यापारिक कानूनों को लागू करने के कार्य को संगठित करना था।

विस्तृत रूप में, यह नीति किस प्रकार से कार्य करती, और विभिन्न उपनिवेशों में नयी केन्द्रीय सत्ता के साथ क्या सम्बन्ध स्थापित होता, इसे कभी प्रदर्शित नहीं किया गया, क्योंकि एण्ड्रोस द्वारा अपना कार्य अच्छी तरह सम्भालने से पहले ही मैसाचुसेट्स को एक नया चार्टर दिया गया और अन्य उपनिवेशों के पुराने चार्टर रद्द होने से भी पहले, इस

---

१ लैटिन के इन शब्दों का अर्थ है—किस अधिकार से। जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु पर अधिकार न होते हुए भी अपना अधिकार बताता है तथा असली अधिकार रखने वाला व्यक्ति न्यायालय में अपना अधिकार दिलाने की प्रार्थना करता है तो न्यायालय उस व्यक्ति को अपना अधिकार पुष्ट करने के प्रमाण उपस्थित करने के लिए आदेश भेजता है। यह न्यायालय-समादेश-पत्र (Writ) Quo Warranto के शब्दों से शुरू होता है, जिसका अर्थ होता है कि आप किस अधिकार से इस विषय में अपना स्वत्व मानते हैं।

समूची कार्यवाही में १६८८ ई० की क्रान्ति ने बाधा डाली थी। किन्तु उसके अन्य कार्यों के आधार पर निर्णय करते हुए यह कल्पना करना समुचित है कि जेम्स द्वितीय के तरीके अन्यायपूर्ण और अत्याचारपूर्ण होते, इनसे उपनिवेशों की स्वतन्त्रता को गम्भीर रूप से क्षति पहुँचती। यह निश्चित था कि जेम्स द्वितीय की तथा एण्ड्रोस की कार्यवाहियाँ ऐसी किसी भी वस्तु से कहीं अधिक बढ़ी हुई थीं, जिसकी कल्पना जार्ज तृतीय और उसके परामर्श-दाताओं ने कभी भी की थी। यह उपनिवेशों की वश्यता को और भी अधिक आश्चर्यजनक बना देता है। वस्तुतः इसकी व्याख्या इसी कल्पना के आधार पर की जा सकती है कि उस समय औपनिवेशिक शासन के लिए किसी समन्वय की आवश्यकता व्यापक रूप से अनुभव की जाती थी।

क्रान्ति ने इसे समाप्त कर दिया। किन्तु ऐसा करते हुए इसने लगभग निश्चित रूप से स्वशासन की उस परम्परा में विच्छेद को रोक दिया, जो परम्परा अब तक इंग्लिश औपनिवेशिक पद्धति का सबसे बड़ा विशिष्ट तत्व था। वस्तुतः पुनःस्थापना के महान् औपनिवेशिक युग के इस अन्तिम काल की घटनाओं ने यह प्रदर्शित किया कि यह क्रान्ति और इससे उत्पन्न होने वाला संवैधानिक संघर्ष उपनिवेशों के लिए उतने ही महत्वपूर्ण थे, जितने वे ब्रिटिश द्वीप समूह के लिए थे। उन्होंने यह प्रदर्शित किया कि जिन राजनीतिक स्वतन्त्रताओं में उपनिवेश आनन्द का अनुभव करते हैं और जिनकी दृष्टि से वे विश्व के राज्यों में लगभग विलक्षण थे, वे स्वतन्त्रताएँ अन्ततोगत्वा इंग्लैण्ड में स्वतन्त्र संस्थाओं के बनाये रखने पर और इनके विस्तार पर निर्भर हैं।

वे किसी अन्य वस्तु पर भी आश्रित थीं। इंग्लैण्ड में तथा उपनिवेशों में जेम्स की निरंकुश शासनवादी नीति फ्रांस के लुई १४वें के समर्थन पर आश्रित थी। लुई १४वें के सचालन में कनाडा में निरंकुश शासन पहले ही विजयी हो चुका था और यहाँ से यह विभक्त उपनिवेशों के लिए खतरा बन रहा था। खतरे का निराकरण करना आवश्यक था। यदि ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल द्वारा पहले से ही प्राप्त की गयी स्वतन्त्रता के स्वरूप को स्थायी बनाया जाना था तो न केवल इंग्लैण्ड में राजनीतिक स्वतन्त्रता की विजय जरूरी थी, अपितु नयी दुनियाँ में निरंकुश शासन की पराजय भी आवश्यक थी। प्रत्येक कारण के आधार पर १६८८ ई० की क्रान्ति समूचे राष्ट्रमण्डल के लिए एक महत्वपूर्ण घटना थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Payne, European Colonies; **C. M. Andrew,** The Colonial Period; **Grant,** History of Canada; **Abbott,** Expansion of Europe; **Egerton,** British Colonial Policy; **Lucas,** Historical Geogrphy of the British Colonies; **Parkman**, La Salle, The old Regime in Canada, and Count Frontenac, **Doyle,** English in America; **G. L. Beer,** Old Colonial System; **Hertz,** Old Colonial system. **Christle**, Life of Shaftesbury; **Channing,** History of the United States; **Winsor**, Narra-

tive and Critical History of America; **Hunter**, British India; **Williamson.** Short History of British Expansion, Cambridge History of the British Empire; **Newton,** The European Nations in the West Indies to 1688; **Keith,** the First British Empire; **Mahan,** influence of Sea-power on History begins at the Restoration and is very important for colonial History.

• •

४

इंग्लैण्ड में राजनीतिक दलों का अभ्युत्थान

(१६६०-१६८८ ई०)

केबिनेट का तथा राजनीतिक दलों का प्रथम सूत्रपात : क्लेरेण्डन (१६६०–१६६७ ई०)

कई बार चार्ल्स द्वितीय के राज्यकाल को राजनीतिक प्रतिक्रिया का ऐसा युग समझा जाता है, जब राजतन्त्र ने अपनी पुरानी प्रतिष्ठा और शक्ति के बड़े अंश को पुनः प्राप्त किया और जब दैवी अधिकार और मूकभाव से आज्ञा-पालन के सिद्धान्तों को न केवल सिद्धान्त रूप में स्वीकार किया जाता था, अपितु इन पर आचरण भी किया जाता था। यह एक बड़ा भ्रामक दृष्टिकोण है; केवल इस राज्यकाल की समाप्ति पर और जेम्स द्वितीय के लघु राज्यकाल में निरंकुश शासन की स्थापना के लिए एक गम्भीर प्रयत्न किया गया था। चार्ल्स द्वितीय के राज्यकाल का अधिकांश भाग वास्तव में संवैधानिक प्रगति का एक युग था। इसमें प्रबल रूप से राजपक्षावलम्बी भावनाएँ थीं फिर भी पार्लियामेण्ट ने अपनी शक्ति में अधिक वृद्धि की और राष्ट्रीय नीति के प्रधान प्रश्नों में अपनी निर्णयात्मक आवाज रखने के दावे को पुष्ट किया।

इस युग में ऐसे शासन-यन्त्र के निर्माण की ओर एक वास्तविक किन्तु अचेतन रूप से प्रगति की गयी, जिस शासन-यन्त्र से सरकार पर पार्लियामेण्ट का नियन्त्रण प्रभावशाली बनाया जा सकता था। अन्त में, इस शासन-यन्त्र में कुछ उत्तरदायी मन्त्रियों की छोटी केबिनेट द्वारा राजकीय मामलों का संचालन किया जाता था, ये मन्त्री उस दल से लिये जाते थे जिसका कामन्स सभा में बहुमत होता था। किन्तु ऐसा होने से पहले यह आवश्यक था कि

एक केबिनेट का निर्माण करने वाले और इकट्ठा मिल कर कार्य करने वाले मन्त्रियों का एक सामंजस्यपूर्ण समूह हो। राजनीतिक दलों का संगठित किया जाना भी आवश्यक था, यह स्वीकार किया जाना भी जरूरी था कि पार्लियामेण्ट से न केवल कानून निर्माण और कर लगाने के बारे में, अपितु नीति के सभी महत्वपूर्ण प्रश्नों के बारे में परामर्श अवश्य लिया जाना चाहिए। इन सब पहलुओं में चार्ल्स द्वितीय के राज्यकाल में एक महान् प्रगति हुई। इस प्रगति का स्वरूप सर्वोत्तम रीति से इस राज्यकाल के विभिन्न युगों में इसके अवलोकन से स्पष्ट किया जा सकता है।

१६६० ई० से १६६७ ई० तक का पहला युग ऐसा था जिसमें क्लेरेण्डन सब से अधिक प्रभावशाली व्यक्ति था। किन्तु वह अकेला मन्त्री नहीं था। उस समय एक ऐसा छोटा समूह था, जिससे राजा विशेष रूप से परामर्श लिया करता था, क्योंकि प्रिवी कौंसिल अब इतनी अधिक बड़ी और स्वरूप में इतने अधिक विभिन्न प्रकार की बन चुकी थी कि वह गोपनीय कार्य को ठीक तरह से नहीं कर सकती थी; क्योंकि इस समूह के सदस्यों में कोई वास्तविक सामंजस्य नहीं था। इनमें से कुछ व्यक्ति क्लेरेण्डन के विरुद्ध सदैव षड्यन्त्र करते रहते थे, अतः उन्हें अधिक-से-अधिक एक केबिनेट के आरम्भिक तत्व अथवा इसकी रूपरेखामात्र कहा जा सकता है।

राजनीति और धर्म के दोनों क्षेत्रों में, क्लेरेण्डन का रुख पार्लियामेण्ट के बहुमत के साथ बहुत अधिक मेल खाता था। फिर भी, वह सम्भवतः इतनी दूर नहीं जाना चाहता था जितनी दूर तक पार्लियामेण्ट प्यूरिटन (अथवा इसके बाद से उन्हें डिसेण्टर या मतभेद रखने वाला कहा जाना चाहिए) लोगों का दमन करने में गयी। राजा स्वयमेव सहिष्णुता की नीति के लिए प्रतिज्ञाबद्ध था। डिसेण्टर लोगों के साथ सहानुभूति रखने वाले बकिंघम और एशली जैसे उसके कुछ छोटे परामर्शदाता कैथोलिकों के साथ नरमी का व्यवहार करना चाहते थे, अतः यदि वे ऐसा करने में स्वतन्त्र होते तो वे निश्चित रूप से एक विभिन्न नीति का अनुसरण करते। हम चाहें कुछ भी सोचें, धार्मिक अत्याचार की नीति पार्लियामेण्ट के कारण थी। इसने यह प्रदर्शित किया कि पार्लियामेण्ट का इरादा यह था कि वह उन धार्मिक प्रश्नों पर अपनी निर्णयात्मक आवाज रखे, जिन्हें ट्यूडरवंशी और आरम्भिक स्टीवर्ट वंशी राजा सदैव विशेष रूप से ताज के क्षेत्र के भीतर आने वाला विषय मानते थे। १६६२ ई० के अन्त में तथा १६६३ ई० में राजा ने इस बात का प्रयत्न किया कि वह ऐसा कानून पास कराये जो उसे **एकरूपता के कानून** (Act of uniformity) से तथा अन्य कानूनों से मुक्ति पाने की अनुमति दे। न केवल इसे रद्द कर दिया गया, अपितु पार्लियामेण्ट में डिसेण्टर लोगों के विरुद्ध कठोरतम कानून--**गुप्त सभा कानून** (Conventicle Act) तथा **पाँच मील का कानून** (Five-mile Act) पास किये गये, मानों ये राजा के प्रयास का सीधा उत्तर हों।

विदेश नीति सदैव विशेष रूप से राजा और उसके मन्त्रियों का क्षेत्र या विषय समझी जाती थी। क्लेरेण्डन का भी यही मत था। किन्तु पार्लियामेण्ट यह आग्रह करती

थी कि उससे परामर्श लिया जाना आवश्यक है। इस समूचे युग में विदेशी मामले घरेलू राजनीति को निरन्तर प्रभावित करते रहे। १६६२ ई० में फ़्रांस को डंकर्क बेचने पर पार्लियामेण्ट क्रुद्ध हो गयी थी। यह अपने आप में एक बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य था। पहले तो इसने प्रथम डच युद्ध का विरोध नहीं किया, पर इसने धन के अनुदानों के साथ एक विनियोग धारा (Appropriation clause) जोड़ दी। यह इस बात को निश्चित बनाने का साधन था कि इस धन का व्यय उन्हीं प्रयोजनों के लिए किया जायगा, जिनके लिए इसे स्वीकार किया गया है। पार्लियामेण्ट की शक्ति को बहुत अधिक बढ़ाने वाली यह विधि उस समय एक नियमित परिपाटी बन गयी थी। जब डच-युद्ध इग्लिश लोगों के प्रतिकूल जाने लगा और कुव्यवस्था की कहानियाँ प्रकाश में आने लगी तो राजपक्षावलम्वी पार्लियामेण्ट क्लेरेण्डन पर अपने आक्रमण में उतनी ही साहसपूर्ण थी, जितनी चार्ल्स प्रथम की पहली पार्लियामेण्ट बकिंघम पर अपने आक्रमणों में थी। यह पार्लियामेण्ट कहीं अधिक सफल थी। इसने पुनः स्थापना के केवल सात वर्ष बाद क्लेरेन्डन पर महाभियोग चलाया, उसे निर्वासन में जाने के लिए बाधित किया। यद्यपि चार्ल्स को इस बात में दुःख नहीं था कि वह ऐसे कठोर और औपचारिक मन्त्री से मुक्ति पा गया है, जिसका ईमानदारी से किया जाने वाला परिश्रम राजा के आलसी जीवन की सदा भर्त्सना करता था, तथापि राजकीय शक्ति के लिए यह प्रहार कम कठोर नहीं था।

अन्त में, जब क्लेरेण्डन का पतन हो गया तो भी पार्लियामेण्ट आग्रह करती रही कि उस ढंग की जाँच की जाय, जिसके अनुसार इसके विशाल अनुदानों का व्यय किया गया है। पार्लियामेण्ट अपव्यय करने वाले राजा की वित्तीय कठिनाइयों को दूर करने के लिए पर्याप्त धन स्वीकार करने के लिए तैयार नही थी; यद्यपि वह लन्दन के महाजनों का बहुत अधिक ऋणी था और उसे अपनी आमदनी का एक बड़ा भाग अपने महाजनों को ब्याज देने मे व्यय करना पड़ता था। वस्तुतः क्लेरेण्डन के युग में ही एक निश्चित विरोधी दल विकसित हो चुका था। यह 'देश का दल' (Country Party) के नाम से प्रसिद्ध था और इसके अपने माने हुए नेता थे। विशेष रूप से, इनका नेता सर डब्लू०-कोवेन्ट्री था, इसका पिता चार्ल्स प्रथम का एक अधिकतम विश्वस्त सेवक रहा था। सरकार का सुदृढ़ समर्थन करने वाले 'दरबारी दल' (Court Party) के नाम से प्रसिद्ध थे। इस प्रकार संगठित दलों के मूल तत्व प्रकट हो रहे थे।

२. कैबल : धार्मिक सहिष्णुता, फ्रांस के साथ गुप्त व्यवहार और पार्लियामेण्ट का विरोध (१६६७-७३ ई०)

अगले युग में (१६६७-७३ ई०), राजा चर्च के समर्थक उन राजपक्षावलम्बियों से ऊब गया, जो राजा की आशा से कहीं कम जीहज़ूर सिद्ध हुए थे। चार्ल्स ने राजकीय मामलों का संचालन कार्य प्रधान रूप से सर्वथा विभिन्न स्वरूप रखने वाले व्यक्तियों के समूह को सौंपा। यह परिवर्तन इतना बड़ा था कि यह लगभग मन्त्रिमण्डल के आधुनिक

परिवर्तन से सादृश्य रखता है। एक विचित्र संयोग से इस समूह के पाँच प्रधान सदस्यों के नामों के पहले अक्षर मिल कर 'कैबल' (Cabal) शब्द को बनाते हैं।[१] इसी कारण यह नाम सदैव विशेष रूप से इस मन्त्रिमण्डल को दिया जाता है। ये पाँचों व्यक्ति समान रूप से धार्मिक सहिष्णुता की नीति के पक्षपाती थे; क्लिफ्फोर्ड और एलिंगटन (जिन्हें चार्ल्स ने अपना विश्वास प्रदान किया था) इस नीति के समर्थक इस के लिए थे कि वे गुप्त रूप से कैथोलिक थे, बकिंघम, एशली और लौडरडेल इसके समर्थक इसलिए थे कि उनका सम्बन्ध डिसेन्टर लोगों के साथ था। इस समूह का योग्यतम व्यक्ति एशली (जो बाद में शेफ्टसबरी का अर्ल बना) क्रामवेल का एक पुराना अनुयायी था, वह सहिष्णुता में वास्तव में विश्वास रखने वाला था। उसने १६६२-६३ ई० में दण्डात्मक कानूनों को शिथिल बनाने में राजा के प्रयास में प्रबल सहायता दी थी।

आरम्भ में नयी सरकार ने त्रिराष्ट्र-सन्धि में डचों तथा स्वीडिश लोगों के साथ सम्मिलित हो कर लोकप्रियता प्राप्त की। इस सन्धि ने लुई १४वें को नीदरलैण्ड्स में अपना आक्रमण रोकने की प्रेरणा करने में सहायता दी,[२] किन्तु शीघ्र ही उनकी विदेश नीति की दिशा बदलने लगी। लुई १४वां त्रिराष्ट्र-सन्धि को छोड़ने के लिए उत्सुक था, ताकि वह डचों से बदला ले सके। वह चाहता था कि इंग्लैण्ड को धन द्वारा वह अपने पक्ष में खरीद ले। चार्ल्स अपनी धन विषयक कठिनाइयों के कारण पार्लियामेण्ट से ऊब चुका था और पैसे से खरीदा जाने के लिए बहुत अधिक तैयार था। वह इसके लिए यहाँ तक तैयार था कि फ्रांस की सहायता से इंग्लैण्ड में रोमन कैथोलिक मत के प्रवेश का प्रयास किया जाय, क्योंकि वह रोमन कैथोलिक मत को राजतन्त्र की शक्ति के अनुकूल समझता था।

इस आधार पर, १६६९ ई० में फ्रांस के साथ गुप्त सन्धि-वार्ता आरम्भ की गयी। इसका परिणाम १६७० ई० में **डोवर की गुप्त सन्धि** थी। इस सन्धि द्वारा विशाल फ्रेंच आर्थिक सहायता के बदले में चार्ल्स ने यह वचन दिया कि वह डचों पर हमला करने में लुई का साथ देगा और एक उपयुक्त समय पर अपने कैथोलिक होने की घोषणा करेगा। इस भीषण और अपमानजनक षड्यन्त्र की सूचना कैबल गुट के प्रोटेस्टेण्ट सदस्यों को सुरक्षित रूप से नहीं दी जा सकती थी। यह केवल क्लिफ्फोर्ड और एलिंगटन को ही ज्ञात थी, केवल इन्होंने गुप्त सन्धि पर हस्ताक्षर किये। किन्तु चूँकि फ्रांस के साथ मैत्री की तथा फ्रांस से मिलने वाली आर्थिक सहायता की प्राप्ति की व्याख्या करना आवश्यक थी, अतः एक दूसरी बनावटी सन्धि की चर्चा आरम्भ की गयी, इसमें बकिंघम और एशली को विश्वास दिलाया गया कि उन में पूर्ण रूप से परामर्श लिया गया है। एशली को व्यापार में तथा उपनिवेशों में गहरी दिलचस्पी थी, अतः वह डचों के विनाश से

१. एच० डी० ट्रेल ने शेफ्टसबरी की एक लघु जीवनी लिखी है।

२. ऊपर दूसरा अध्याय देखिए।

फायदा उठाने का अनिच्छुक नहीं था। चूंकि वह चाहता था कि पार्लियामेण्ट एंग्लिकन चर्च से मतभेद रखने वालों को सहिष्णुता प्रदान करे और चूंकि पार्लियामेण्ट इसके लिए कभी सहमत नहीं हो सकती थी, अतः वह युद्ध का व्यय पूरा करने के लिए फ्रांस से आर्थिक सहायता को स्वीकार करने के लिए तथा इसी प्रकार ताज को अत्याचार करने वाले कानूनों को स्थगित करने के लिए स्वतन्त्रता देने को तैयार था। अतः १६७१ ई० में पूरे कैबल ने बड़ी गम्भीरता के साथ इस बनावटी सन्धि पर हस्ताक्षर किये, १६७२ ई० में डचों पर हमला करने का समझौता हो गया। किन्तु चूंकि इस प्रकार की नीति जनता के थोड़े समर्थन के बिना सफल नहीं हो सकती थी, अतः चार्ल्स ने पार्लियामेण्ट की अवहेलना करते हुए राजकीय सत्ता के प्रयोग द्वारा सहिष्णुता प्रदान करके डिसेण्टर लोगों को अपने पक्ष में लाने का विचार किया। एशली तथा उसके समान विचार रखने वाले व्यक्ति धार्मिक सहिष्णुता को प्राप्त करने के एकमात्र साधन के रूप में राजकीय सत्ता के इस विस्तार को स्वीकार करने के लिए अनिच्छुक नहीं थे। इस प्रकार एक साथ प्रोटेस्टेण्ट मत और इंग्लिश राजनीतिक स्वतन्त्रता खतरे में पड़ गयी, क्योंकि उनके विध्वंस के लिए डिसेण्टर लोगों को और उनके मित्रों को साधन बनाया जा रहा था।

इस प्रकार तैयार किये जाने वाले नीति के आकस्मिक परिवर्तन का मार्ग दो घटनाओं ने प्रशस्त किया। एक घटना को वित्त विभाग द्वारा अदायगी बन्द करना (Stop of exchequer) कहा जाता है (जनवरी १६७२ ई०)। इससे चार्ल्स ने लन्दन के महाजनों से लिये गये अपने कर्जे की अदायगी एकदम बन्द कर दी, यद्यपि वह व्याज अब भी दे रहा था। एशली ने व्यर्थ में ही उस बेईमानी से भरी हुई मूर्खता के विरुद्ध प्रतिवाद किया, जिसके कारण महाजनों के लिए यह सम्भव हो गया था कि वे अपने यहाँ रुपये जमा करने वालों के प्रति अपने दायित्वों को पूरा करें। इससे बहुत से महाजन दिवालिया हो गये। इस बात ने कुछ समय के लिए लन्दन का व्यापार अस्त-व्यस्त कर दिया, नवीन नीति को अधिकतम अप्रिय बना दिया। दूसरी घटना **मुक्ति की घोषणा** (Declaration of Indulgence) का प्रकाशन था। इससे राजा ने "धार्मिक मामलों में अपनी सर्वोच्च शक्ति होने के कारण" सभी दण्डात्मक कानूनों को स्थगित कर दिया। अगले वर्ष उपासना के विषय में एंग्लिकन चर्च से मतभेद रखने वाले उपासना-स्थानों की एक बड़ी संख्या को इस कार्य के लिए अनुमति दी गयी, रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्ट डिसेण्टरों ने स्वतन्त्रता का एक लघु अवधि तक उपभोग किया। किन्तु यह ऐसी स्वतन्त्रता थी, जो कानूनों की उपेक्षा से खरीदी गयी थी। कानून अन्यायपूर्ण हो सकते हैं, किन्तु फिर भी वे कानून थे। अब यह देखना शेष था कि ऐसे साधनों से क्या उन व्यक्तियों का समर्थन राजकीय सत्ता के लिए प्राप्त करना सम्भव होगा, जिन्होंने देश के कानूनों की इससे कम साहसिक उपेक्षा करने पर एक राजा का वध कर दिया गया।

आरम्भ में ऐसा प्रतीत होता था कि डिसेण्टर मुक्ति की घोषणा से लाभ उठाने के इच्छुक थे, यहाँ तक यह षड्यन्त्र ठीक चलता रहा। किन्तु प्रत्येक वस्तु उस युद्ध की

सफलता पर निर्भर थी, जिसने नयी नीति के लिए लोकप्रियता को प्राप्त करना था और डच व्यापार की लूट से कोष को भरना था। आरम्भ से ही युद्ध उनके प्रतिकूल चलता रहा।' डच लोग यद्यपि यह नहीं जानते थे कि वे इंग्लैण्ड की तथा अपनी राजनीतिक स्वतन्त्रताओं के लिए लड़ रहे हैं, तथापि वे समुद्र पर उग्र वीरता के साथ लड़े। जब लुई की सेनाओं ने स्थल पर उनकी सत्ता मात्र को संकट में डाल दिया, उस समय उन्होंने इंग्लिश बेड़े का सामना पहले दोनों डच युद्धों की अपेक्षा कहीं अधिक सफलता के साथ किया। डच व्यापार से प्राप्त की जाने वाली लूट का माल नहीं मिल रहा था। एक वर्ष के भीतर ही राजा फ्रेंच आर्थिक सहायताओं के बावजूद पहले की तरह ही वित्तीय दृष्टि से परेशान हो गया, राजकोष से अदायगी बन्द कर देने के बाद से धन उधार लेना सुगम नहीं था। क्योंकि इसके परित्राण का कोई मार्ग नहीं था; अतः पार्लियामेण्ट को बुलाना ही पड़ा (१६७३ ई०)।

अब भी यह वही पार्लियामेण्ट थी जो राजतन्त्र की पुनःस्थापना के प्रथम उत्साह में १६६१ ई० में चुनी गयी थी। किन्तु १६७३ ई० में इसकी भावना १६६१ ई० की भावना से बहुत भिन्न थी। इसके सदस्य प्रबल रोष के साथ एकत्र हुए। वे डच युद्ध से तीव्र रूप से असन्तुष्ट थे। इसका एक बड़ा कारण यह था कि यह युद्ध सफल नहीं हो रहा था। सदस्यों को फ्रांस से भय था और उन्हें सन्देह था कि राजा इस शक्ति का अनुचित रूप से वशवर्ती बना हुआ है। किन्तु सबसे बढ़ कर वे 'मुक्ति की घोषणा' से रुष्ट थे। यह डिसेण्टरों के विरुद्ध उनकी सोच विचार कर स्वीकार की गयी नीति का केवल परित्याग ही नहीं था, अपितु इस से भी अधिक गम्भीर बात यह थी कि उन्होंने यह सन्देह करना आरम्भ कर दिया था कि इसका वास्तविक उद्देश्य—रोमन कैथोलिक मत का समर्थन करना है। डोवर की गुप्त सन्धि के बारे में कुछ फुसफुसाहटें प्रकाश में आने लगीं। एशली (शेफ्टसबरी के अर्ल) ने यह सुना कि वह किस प्रकार बेवकूफ बनाया गया था, पदच्युत किये जाने के बाद उसने विरोधी पक्ष के लिये अपनी महान् योग्यता प्रदान की और राजा से बदला लेने की प्रतिज्ञा की। सबसे अधिक गम्भीर बात यह थी कि मुक्ति की घोषणा का आशय यह दावा करना था कि राजा कानूनों से ऊपर है और वह अपनी इच्छानुसार सब बातों को क्रियान्वित कर सकता है। किन्तु यदि ऐसा था, और ताज के पास वास्तव में कानूनों को स्थगित करने की ऐसी शक्ति थी तो पार्लियामेण्ट द्वारा कानून-निर्माण का क्या अर्थ था ? यह उल्लेखनीय है कि पार्लियामेण्ट में इन असंवैधानिक दावों के विरोध करने में तथा रोमन कैथोलिकों के मत के प्रति अपनी आशंकाएँ बताने में डिसेण्टर लोग उतने ही दृढ़ थे, जितने राजपक्षावलम्वी लोग। इससे एक निश्चित समझौता हो गया और कामन्स सभा में प्रोटेस्टेण्ट डिसेण्टर लोगों का कष्ट दूर करने के लिए एक विधेयक वास्तव में पास हो गया, यद्यपि लार्ड सभा में बिशपों ने इसे रद्द कर दिया। एक सच्ची संवैधानिक स्थिति ग्रहण करके, अत्याचार पीड़ित डिसेण्टर एक वास्तविक सहिष्णुता के लिए तैयारी कर रहे थे। यह सहिष्णुता सहमति पर आधारित थी और कोरी सत्ता पर नहीं।

---

१. ऊपर दूसरा अध्याय, देखिए।

यदि चार्ल्स इसका विरोध करता तो वह "पुन: विदेश यात्राओं पर जाने की" सम्भावना अपने आगे देख रहा था। अत: उसने अपनी घोषणा को वापस ले लिया। उसने एक टेस्ट अधिनियम (Test Act) को अपनी सहमति प्रदान की। इसका उद्देश्य रोमन कैथोलिकों को सब सार्वजनिक पदों से ऐसी व्यवस्था द्वारा बहिष्कृत करना था, जिसके अनुसार अधिकारियों को एंग्लिकन संस्कार स्वीकार करना तथा ट्रांस सब्स्टेन्शिएशन (Trans-Substantiation) के सिद्धान्त का परित्याग करना आवश्यक था। यार्क के ड्यूक तथा सर थामस क्लिफफलोर्ड ने यह परीक्षा देने से बचने के लिए अवकाश ग्रहण कर लिया इस प्रकार उन्होंने अपना कैथोलिक होना स्वीकार कर लिया और मनुष्यों के भयों को तीव्र बना दिया। ये भय उस समय और अधिक बढ़ गये जब पार्लियामेण्ट के वास्तविक अधिवेशन के समय में ही जेम्स ने अपनी दूसरी पत्नी के रूप में एक कैथोलिक राजकुमारी मोडेना की मेरी से विवाह किया। उसकी पहली पत्नी, क्लेरेण्डन की लड़की थी और प्रोटेस्टेण्ट थी। किन्तु उससे केवल कन्याएँ उत्पन्न हुई थीं। अब यदि उसका लड़का उत्पन्न होता तो कैथोलिक राजाओं की एक अनन्त परम्परा की सम्भावना देश के सम्मुख उत्पन्न हो गयी। इस अवस्था में क्या राजकीय सत्ता को अपनी वर्तमान शक्ति बनाये रखने के लिए सुरक्षित रूप से अनुमति दी जा सकती है? कट्टर राजपक्षावलम्बी भी इसमें सन्देह करने लगे थे।

३. डेनबी और राजनीतिक दलों का संगठन (१६७३-७८ ई०)

१६७३ ई० का तूफान कैबल को बहा ले गया, और उसने कुछ समय के लिए महान् षड्यन्त्र को नष्ट कर दिया। चार्ल्स ने यह स्वीकार किया कि उसे अपनी सरकार को पार्लियामेण्ट की भावना के अनुकूल बना लेना चाहिए। अत: उसने अपना मुख्य मन्त्री एक उत्तम राजपक्षावलम्बी एवं चर्च के प्रबल समर्थक सर थामस ओस्बोर्न को बनाया, वह शीघ्र ही डेनबी का अर्ल बनने वाला था। यह अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण बात थी। यह इस बात की स्वीकृति थी कि किसी भी ऐसे व्यक्ति को सुरक्षित रूप से मन्त्री पद पर नहीं रखा जा सकता, जो पार्लियामेण्ट का विश्वास न प्राप्त कर सकता हो। किन्तु अब अविश्वास इतनी गहरी जड़ जमा चुका था कि डेनबी को भी पार्लियामेण्ट से निरन्तर परेशानी उठानी पड़ी।

इस राज्य के तीसरे युग में, डेनबी एक बार पुन: 'चर्च और राजा' (Church and King) के नाम से प्रसिद्ध होने वाले दल के निर्माण द्वारा राजकीय सत्ता के पुन: स्थापित करने के दक्षतापूर्ण प्रयास में लगा रहा। डच-युद्ध समाप्त किया जा चुका था (१६७४ ई०) और यह प्रदर्शित करने के लिए कि राजा की विदेश नीति फ्रांस के प्रति अनुचित रूप से वशवर्ती नहीं है, ताज की सम्भाव्य उत्तराधिकारिणी राजकुमारी मेरी का विवाह लुई के उग्रतम शत्रु (१६६७ ई०) ऑरेंज के विलियम के साथ कर दिया गया। डेनबी इस बात से प्रसन्न होता, यदि फ्रांस से बिलकुल सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता, किन्तु चार्ल्स उसे ऐसा करने की अनुमति नहीं देना चाहता था, उसने उसे १६७५ ई० में एक

नयी गुप्त सन्धि करने के लिए बाधित किया, इसके अनुसार उसने आर्थिक सहायताओं के बदले में इंग्लैंड की तटस्थता को सुरक्षित रखने का वचन दिया। अपने सामने पार्लियामेण्ट का भय होने के कारण डेनबी ने इस सन्धि पर यह टिप्पणी चढ़ा दी कि उसने राजा की स्पष्ट आज्ञा के कारण ही इस सन्धि पर हस्ताक्षर किये थे।

यह पार्लियामेण्ट के महत्व का और इसकी स्वीकृति के बिना सरकार का चलना असम्भव होने का एक चिह्न था। डेनबी को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह कामन्स सभा में सरकारी प्रस्तावों के पक्ष में वोट देने के लिए सुदृढ़ समर्थकों के एक समूह को संगठित करे। ऐसा करने के कारण उसे पहला पार्टी-संगठनकर्ता कहा जा सकता है। उसने जिस पार्टी का संगठन किया, उसे शीघ्र ही **टोरी** (Tory) का उपनाम दिया गया। किन्तु ऐसा करने वाला वह अकेला नहीं था। दूसरी ओर चतुर और सूक्ष्म शेफ्टसबरी इसी काम में अर्थात् एक विरोधी दल का निर्माण करने में लगा हुआ था। इसके सदस्य इकट्ठा मिलकर सार्वजनिक मामलों में अनुसरण की जाने वाली नीति की दिशा के बारे में परामर्श करते थे। यह उसका आरम्भ था, जो शीघ्र ही **ह्विग** (Whig) पार्टी के नाम से प्रसिद्ध हुई।

दोनों पार्टियाँ जिन विचारों का समर्थन कर रही थीं, वे विचार इनके विरोध के कारण अधिक स्पष्ट हो गये थे। वे उस भीषण और उत्तेजक संघर्ष में निरन्तर अधिक निश्चित होते चले गये, जो संघर्ष शीघ्र ही शुरू होना था। डेनबी की पार्टी चर्च की और दैवी व्यवस्था के रूप में राजकीय सत्ता को बनाये रखने की, सब उत्तम नागरिकों के प्रथम कर्त्तव्य के रूप में आज्ञापालन के कर्त्तव्य की समर्थक थी। किन्तु उनकी कठिनाई यह थी कि चर्च के प्रति और राजा के प्रति उनकी दो प्रकार की निष्ठाओं का सदैव समन्वय नहीं किया जा सकता था, जैसा कि वर्तमान घटनाओं में पहले ही प्रदर्शित किया गया था और भावी घटनाएँ इसे और भी अधिक स्पष्टता से प्रदर्शित करने वाली थीं। शेफ्टसबरी की पार्टी कुल मिला कर सारी शासन सत्ता पर कानून की सर्वोच्च सत्ता की समर्थक थी, इस सत्ता में राजा की तथा कानून निर्माता के रूप में और राष्ट्र के प्रत्यक्ष प्रवक्ता के रूप में पार्लियामेण्ट की सत्ता भी सम्मिलित थी। वे राजकीय पद का कोई विशेष सम्मान नहीं करते थे। वे राजा को राष्ट्र का केवल पहला अधिकारी मात्र समझते थे। इनमें से कुछ निजी रूप में सिद्धान्ततः गणराज्य के समर्थक थे, यद्यपि वे खुले रूप में ऐसा कहने का साहस नहीं करते थे। धार्मिक मामलों में वे यह कहते थे कि उनकी इच्छा वर्तमान स्थिति को अथवा चर्च को बदलने की नहीं है। किन्तु वह इसे राज्य की वश्यता में बनाये रखना चाहते थे, वे डिसेण्टरों के लिए सहिष्णुता के पक्षपाती थे। वे अपने विचारों की अभिव्यक्ति के रूप में शासन के एक सिद्धान्त का विकास पहले से ही करने लगे थे। शेफ्ट्सबरी का मित्र जान लॉक मर्यादित अथवा संवैधानिक राजतन्त्र का दार्शनिक बनने वाला था, किन्तु इस समय तक उन्होंने अपने सिद्धान्तों का खुला प्रतिपादन नहीं किया था : वे इसी में सन्तुष्ट थे कि वे रोम के भय का तथा कैथोलिक मतानुयायी यार्क के

ड्यूक के अविश्वास का लाभ उठाते रहें। डेनबी को और उसके अनुयायियों को भी ऐसा भय और अविश्वास था।

दोनों दलों का बढ़ता हुआ विरोध १६७८ ई० में उस समय उग्र शत्रुता के रूप में प्रकट हुआ, जब कई परिस्थितियों ने मिल कर राजनैतिक तापमान को ऊँचा उठा दिया। पहली बात यह थी कि बदनाम टाईटस ओट्स पार्लियामेण्ट के ग्रीष्मकालीन अवकाश के समय में राजा की हत्या करने के लिए एक जैसुइट षड्यन्त्र के किस्से के साथ आया ताकि यार्क का ड्यूक राजगद्दी पर बैठ सके। ड्यूक दो वर्ष से एक कट्टर कैथोलिक था और ओट्स ने उसके पाप स्वीकार करने वाले पर यह आरोप लगाया था कि वह इस षड्यन्त्र में सम्मिलित है। षड्यन्त्र की कहानी विदेशों में भी पहुँच गयी। उस समय की उत्तेजित दशा के कारण इस पर अत्यधिक उत्कण्ठा के साथ विश्वास किया गया। सारा राष्ट्र पागल हो गया। जूरी अधिकतम तुच्छ साक्षी पर निर्दोषतम कैथोलिकों को फांसी पर लटकाने के लिए तैयार थी, ओट्स को शीघ्र ही ऐसे अन्य झूठी शपथ खाने वालों से बड़ा बल मिला, जो किसी भी वस्तु के लिए शपथ खाने को तैयार थे। यह एक कायरतापूर्ण आतंक था, जिसके लिए राष्ट्र को लज्जित होना चाहिए था और जिसे शान्त कराने के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों को अधिकतम प्रयत्न करना चाहिए था। किन्तु जब पार्लियामेण्ट की बैठक हुई तो शेफ्टसबरी के लिए तथा उसके मित्रों के लिए यार्क के ड्यूक पर तथा सरकार पर आक्रमण करने में पोप के षड्यन्त्र का उपयोग करने का प्रलोभन इतना प्रबल था कि वे उसका संवरण नहीं कर सके।

घटनाओं की एक अन्य शृंखला ने एक दूसरा तूफान उत्पन्न करने में सहायता की। ऑरेन्ज का विलियम १६६७ ई० में अपने विवाह के लिए आया था, उस समय इंग्लैण्ड में तथा डचों में मैत्री-सन्धि की चर्चा चल रही थी। डेनबी इसके पक्ष में था। वह राजा लुई १४वें को यह प्रदर्शित करने के लिए अनिच्छुक नहीं था कि वह उसका पूरा बन्दी नहीं था। लुई ने अपनी ओर से यह निश्चय किया कि चार्ल्स को इस बात का पाठ पढ़ाया जाय कि वह अपने स्वामी के साथ दुरंगी चाल न चले और उसे डराने के लिए लुई ने शेफ्ट्सबरी को तथा उसके मित्रों को १६७१ ई० की गुप्त सन्धि का पता लग जाने दिया।

यह आक्रमण का एक भव्य आधार था। इन रहस्योद्घाटनों ने तथा पोपीय षड्-यन्त्र की कहानियों से उत्पन्न की गयी सार्वभौम उत्तेजना ने डेनबी के पैरों के तले की जमीन काट ली। उस पर विधिपूर्वक महाभियोग चलाया गया। जब उसने यह कहते हुए अपना बचाव किया कि उसने फ्रेंच सन्धि पर राजा की स्पष्ट आज्ञा से हस्ताक्षर किये थे तो पार्लियामेण्ट ने उत्तर दिया कि यह बात उसे दोष से मुक्त नहीं करती है। इसका यह अर्थ था कि कुछ विशेष परिस्थितियों में मन्त्री का यह कर्त्तव्य था कि वह राजा की स्पष्ट आज्ञाओं का उल्लंघन करे। जिस राज्य में ऐसा नियम हो उसे निरंकुश राजतन्त्र कभी नहीं कहा जा सकता। चार्ल्स ने डेनबी की रक्षा पहले तो पार्लियामेण्ट का अधिवेशन स्थगित करके और बाद में उसे भंग कर के ही की (जनवरी १६७९ ई०)। इस प्रकार जो

पार्लियामेण्ट १६६१ ई० में राजभक्ति के आवेश में चुनी गयी थी, उसकी समाप्ति ताज के उग्र विरोध के साथ हुई।

४. दलों का उग्र संघर्ष (१६७९-८१ ई०)

पुनःस्थापना की लम्बी पार्लियामेण्ट के भंग होने के साथ इस राज्यकाल का चौथा युग शुरू हुआ। इसमें लगभग तीन वर्ष तक उग्र संघर्ष चलता रहा। इस समय ऐसा प्रतीत होता था कि देश में गृहयुद्ध शुरू होने वाला है। इस विवाद का सर्वोच्च विषय **निस्सारण विधेयक** (Exclusion Bill) था। इसमें यार्क के ड्यूक को राजगद्दी से निस्सारित या बहिष्कृत करने का प्रस्ताव था। यह पोपीय षड्यन्त्र की कहानियों से उत्पन्न उत्तेजना का परिणाम था। इन तीन वर्षों में तीन आम चुनाव हुए (१६७९,८०,८१ ई०) और तीनों में पार्लियामेण्टें इस विवाद में इतनी व्यस्त रहीं कि स्थायी महत्त्व के एक ही कानून को बनाने में समर्थ हुईं। यह १६७९ ई० का **हैबियस कार्पस एक्ट** या **बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम** (Habeas Corpus Act) था। इसने पुराने बन्दी प्रत्यक्षीकरण के आदेश के जारी करने में किये जाने वाले विलम्बों को रोका और इस प्रकार बिना जाँच के बन्दी बनाने के विरुद्ध उन संरक्षणों को सुदृढ़ बनाया, जिन्हें बृहत्-अधिकार-पत्र (Magna Carta) ने आरम्भ किया था और जिन्हें 'अधिकार के आवेदन पत्र' (Petition of Right) ने परिष्कृत किया था। किन्तु इस कानून में कोई नया सिद्धान्त सम्मिलित नहीं था। इसके अतिरिक्त इन वर्षों का विवरण ऐसे निष्फल संघर्ष का विवरण है, जिसका अन्त एक ऐसी उग्र प्रतिक्रिया में हुआ जिसने कुछ समय के लिए इंग्लैण्ड की राजनीतिक स्वतन्त्रताओं को गम्भीर संकट में डाल दिया। इस युग की मुख्य शिक्षा यह थी कि बहुमत की ओर से उग्र तथा उच्छृंखल दलबन्दी की भावना अन्त में अपने उद्देश्य को ही विफल बनाने वाली होती है। राजतन्त्र के विरोधियों ने अपनी कटुता के कारण लोकमत से अपने को इतना पराङ्मुख कर लिया कि कुछ समय तक उन्होंने अपने को तथा उस उद्देश्य को नष्ट कर दिया, जिसके लिए वे लड़ रहे थे।

विस्तृत रूप से इस भीषण संघर्ष का वर्णन करना अनावश्यक है। किन्तु हमें इसके कुछ पहलुओं पर ध्यान देना चाहिए। इनमें से एक पहलू पार्लियामेण्ट के साथ मिल कर सरकार चलाने के एक नवीन उपाय खोजने का प्रयास था। १६७९ ई० की पार्लियामेण्ट ने डेनबी को पदच्युत किये जाने का आग्रह किया, वह वास्तव में पाँच वर्ष के लिए लन्दन के टावर में बन्दी बना रहा। इसके बाद सर डब्ल्यू० टैम्पल के सुझाव पर एक नया परीक्षण किया गया। गुप्त केबिनेट को तथा मन्त्रियों के एक गुप्त ममूह को समाप्त कर दिया गया। कुछ व्यक्ति इस पद्धति को सब प्रकार के बुरे परिणामों का कारण मानते थे। प्रिवी-कौंसिल को एक बार पुनः सरकार का क्रियाशील केन्द्र बनाया जाना था। किन्तु इसका आकार घटाया जाना था और इसकी रचना राजा के १५ व्यक्तियों से तथा पार्लियामेण्ट के १५ नेताओं से की जानी थी। कम-से-कम यह इस बात का प्रयास था कि सरकार

का पार्लियामेण्ट के बीच में सम्बन्ध स्थापित किया जाय। किन्तु यह पूर्ण रूप से विफल हुआ। सरकार केवल ऐसे व्यक्तियों के समूह द्वारा चलायी जा सकती है, जो एक-दूसरे को समझते हों, एक-दूसरे पर विश्वास रखते हों और जिनके कुछ सामान्य सिद्धान्त होते हों तथा जिन्हें मिलकर काम करने की आदत होती हो। समान राजनीतिक विचारों वाले मनुष्यों को सरकारों में भरने का वास्तविक औचित्य यही है। एक-दूसरे के उग्र विरोधी मनुष्यों का समूह सम्भवतः मिलकर कार्य नहीं कर सकता है।

इस संघर्ष की दूसरी विशेषता वे हानिकर परिणाम थे, जो इस तथ्य से उत्पन्न हुए कि पार्लियामेण्ट का सारा ध्यान एक ही प्रश्न पर केन्द्रित था, अतः यह किसी अन्य प्रश्न की ओर ध्यान नहीं दे सकी। वैदेशिक मामलों में यह युग बहुत महत्त्वपूर्ण था। लुई १४वाँ पुनरेकीकरणों (Reunions)[1] के नाम से प्रसिद्ध कानूनी रूपों द्वारा दूसरे देशों के प्रदेशों को अन्यायपूर्ण रीति से अपने राज्य में मिलाना आरम्भ कर रहा था। चार्ल्स द्वितीय भी विक्षुब्ध हो गया था, वह इन आक्रमणों को रोकने के लिए डचों के साथ, पवित्र रोमन सम्राट् के तथा स्पेन के साथ मिलकर एक सन्धि करने के लिए तैयार था, बशर्ते कि पार्लियामेण्ट लुई की सहायता से मुक्त करने के लिए उसे पर्याप्त धन दे। यदि ऐसी सन्धि कर ली जाती तो यह सम्भव है कि बाद में होने वाले लम्बे युद्धों से बचा जा सकता था। किन्तु पार्लियामेण्ट ने उस समय तक एक भी पाई स्वीकार करने से इन्कार किया, जब तक राजा **निस्सारण विधेयक** (Exclusion Bill) को स्वीकार न कर ले। इसने उसे टेन्जियर की प्रतिरक्षा के लिए भी धन देना स्वीकार नहीं किया, जो इस समय बुरी तरह से घिरा हुआ था और जिसे १६८३ ई० में खाली करना पड़ा।

निस्सारण के बिल के अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु विचारणीय नहीं थी। इस बिल को तीनों पार्लियामेण्टों में पेश किया गया, इसी कारण बारी-बारी से प्रत्येक पार्लियामेण्ट को भंग कर दिया गया। इस समस्या का समाधान करने के लिए किन्हीं अन्य उपायों पर विचार भी नहीं किया जा सकता था। हेलीफैक्स का अर्ल यार्क के ड्यूक का मित्र नहीं था, वह लगभग गणराज्यवादी भावना रखता था। किन्तु वह यह जानता था कि सम्भवतः निस्सारण का अर्थ गृह युद्ध होगा, अतः उसने रोमन कैथोलिक व्यक्ति द्वारा गद्दी पर बैठने के काल में राजकीय सत्ता को कठोर रीति से मर्यादित करने की नीति का समर्थन किया। किन्तु शेफ्ट्सबरी और उसके मित्र ऐसी कोई बात नहीं चाहते थे। जब १६८० ई० की पार्लियामेण्ट में, हैलीफैक्स की वाग्मिता ने लार्ड लोगों को निस्सारण बिल रद्द करने की प्रेरणा दी तो कामन्स सभा के सदस्यों ने क्रोध से पागल हो कर यह माँग की कि उसे राजा की परिषदों से सदा के लिए निकाल दिया जाय। १६८१ ई० में चार्ल्स ने यह बात तक मानने का प्रस्ताव किया कि यदि उसके भाई को राजगद्दी के लिए उसका उत्तराधिकारी मान लिया जाता है तो उसके सब अधिकारों का प्रयोग एक राजसंरक्षक (Regent) द्वारा किया जा सकता है। इस उपाय को भी नापसन्द किया गया। कामन्स सभा

१. ऊपर देखिए पुस्तक ५, अध्याय २।

का बहुमत औरों की प्रत्येक बात में अपनी चलाना चाहता था। इस आग्रह से उन्होंने नरम विचारों वाले आदमियों की दृष्टि में अपने को गलत स्थिति में डाल दिया।

उन्होंने उत्तराधिकार के लिए अपने उम्मीदवार के रूप में चार्ल्स द्वितीय के एक अवैध बेटे, मानमाऊथ के ड्यूक को प्रस्तुत करके अपने को और भी अधिक गलत स्थिति में डाल दिया। यदि जेम्स को राजगद्दी से निस्सारित किया जाना था तो ठीक वंश-परम्परा में अगला उत्तराधिकारी उसकी कन्या मेरी थी, यह उस ऑरेन्ज के विलियम की पत्नी थी, जो एक पक्का प्रोटेस्टेण्ट और लुई १४वें का कट्टरतम शत्रु था। किन्तु शेफ्टसबरी और उसके मित्र ऐसे मार्ग का समर्थन कर रहे थे, जिससे ऑरेन्ज के विलियम का इंग्लैण्ड का राजा बनने के अधिकार से निस्सारण हो जाता था। यह बात कुछ तो इसलिए थी कि वे इंग्लैण्ड पर किसी विदेशी व्यक्ति का शासन नहीं चाहते थे और उन्हें यह भय था कि इससे इंग्लैण्ड व्यापारिक हित डचों के व्यापारिक हितों के वशवर्ती बन जायेंगे और कुछ इसलिए भी था कि वे डेनबी के मित्र के रूप में विलियम पर अविश्वास करते थे। किन्तु इसका मुख्य कारण यह आशा थी कि अपने अधिकार की निर्बलता के कारण, मानमाऊथ को नियन्त्रण करना अधिक सुगम होगा। एक पुस्तिका के लेखक ने कहा था कि "अधिकार जितना निर्बल होगा राजा उतना ही अच्छा होगा।" वे उत्तराधिकार में प्राप्त दैवी अधिकार को अधिक नहीं चाहते थे। किन्तु उस मार्ग का अवलम्बन करने में, उन्होंने निश्चित रूप में लोकमत के एक विशाल समूह को धक्का पहुँचाया। मनमाऊथ का उत्तराधिकारी बनना निश्चित रूप से गृहयुद्ध उत्पन्न कर देता। यह सत्य है कि वह जनसमूह में बड़ा लोकप्रिय था, क्योंकि वह एक सुन्दर युवा पुरुष था। किन्तु एक वर्णसंकर व्यक्ति के गद्दी का उत्तराधिकारी बनने का विचार उस विश्वास को ठेस पहुँचाने वाला था जो विश्वास राष्ट्र का एक बड़ा भाग निश्चित रूप से रखता था कि आनुवंशिक उत्तराधिकार द्वारा एक प्रकार की दैवी शक्ति एक राजा से दूसरे राजा तक पहुँचती है। यह विश्वास हमें भले ही दुर्बोध प्रतीत होता हो, किन्तु यह वास्तविक था और यह एक ऐसा तथ्य था जिसे अधीर सुधारकों को ध्यान में रखना आवश्यक था। इसने एक उल्लेखनीय रीति से इस सार्वभौम विश्वास के रूप में अपने को प्रदर्शित किया था कि राजा बीमारों को छूने से ही कुछ बीमारियों का इलाज कर सकता था। सभी स्टीवर्टवंशी "बुराई दूर करने की राजा की शक्ति में" विश्वास रखने के कारण इस उद्देश्य से स्पर्श किया करते थे। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि सीधी वंशपरम्परा में अन्तिम रानी एन चिरकाल से चली आने वाली इस परिपाटी का अनुसरण करने वाली अन्तिम व्यक्ति थी। ऐसी तर्कशून्य, किन्तु इतनी गम्भीर भावना, की उपेक्षा हल्केपन से नहीं की जा सकती थी; इसकी समाप्ति उन गढ़े हुए किस्सों से नहीं की जा सकती थी, जिनमें बहुत कम लोग विश्वास करते थे और जो किस्से मानमाऊथ की माता के साथ चार्ल्स द्वितीय के गुप्त विवाह के बारे में थे।

निस्सारणवादी जिस विद्वेष एवं उग्रता के साथ अपने उद्देश्य का अनुसरण कर रहे थे और विशेष रूप से जिस प्रकार उन्होंने पोपीय षड्यन्त्र का उपयोग किया, इससे उन्होंने

अपने को और भी अधिक गलत स्थिति में डाल दिया। राष्ट्र कुछ समय के लिए इस षड्यन्त्र के बारे में पागल हो गया। किन्तु थोड़ा समय बीतने पर उसे होश आयी और कुछ लज्जा भी अनुभव हुई। जिन लोगों ने इसका बहुत प्रचार किया था, वे राष्ट्र का विश्वास खो बैठे। इस मामले में अपने प्राण गँवाने वाला अन्तिम व्यक्ति एक बूढ़ा एवं निर्बल कैथोलिक लार्ड स्टेफोर्ड था। उसको एक सामान्य न्यायालय ने दण्ड नहीं दिया था, अपितु यह उन सभी पार्लियामेण्टों में अधिकतम विद्वेषपूर्ण पार्लियामेण्ट की १६८० ई० की कामन्स सभा द्वारा चलाये गये महाभियोग का परिणाम था। १६८० ई० में उसके वध ने लज्जापूर्ण जोश की समाप्ति को सूचित किया, चार्ल्स द्वितीय इतना चतुर था कि उसने यह देख लिया कि अब हवा का रुख बदल रहा है।

किन्तु इस युग की सबसे बडी विशेषता निस्सारण के बारे में विवाद की उग्रता थी। यह केवल पार्लियामेण्ट में ही नहीं थी, जहाँ इतनी उग्र भाषा का प्रयोग किया गया कि सब व्यक्ति यह अनुभव करने लगे कि गृह युद्ध होने वाला है, अपितु यह उग्रता सारे देश में बार-बार होने वाले चुनावों में तथा प्रेस में प्रकट हुई। १६७९ ई० में **अनुज्ञा देने वाले अधिनियम** (Licensing Act) की अवधि समाप्त हो गयी।[१] पार्लियामेण्ट ने उसका नवीकरण नहीं किया, इससे सहसा पैम्फलेटवाजी का एक असाधारण उद्रेक सम्भव हो गया। इस युग की केवल एक ही रचना अब तक पढ़ी जाती है और अब भी पठनीय है; यह ड्राइडिन की महान् व्यंग्योक्ति Absalom and Achitophel है। यह इंग्लिश साहित्य की उज्ज्वलतम कृति है, इसमें शेफ्टसबरी और उसके साथियों का कटु छिद्रान्वेषण करते हुए, विषभरे व्यंग्यवाणों से उन्हें दुःख पहुँचाया गया है। यह रचना बहुत व्यापक रूप से पढ़ी गयी और इसने प्रतिक्रिया को आगे बढ़ाने में बड़ी सहायता की। यह स्थिति संघर्ष के अन्त में आयी। उस समय तक दोनों पक्षों की ओर से उग्रतम लेख लिखे जा चुके थे। इस उग्र विवाद में प्रतिस्पर्धी दलों का स्वरूप तीव्रता के साथ निश्चित हुआ, यह बात भी लगभग इतनी ही महत्त्वपूर्ण है कि उन्हें ऐसे नाम दिये गये जो उनके साथ चिपक गये। जोशीले निस्सारणवादियों ने अपने विरोधियों को रोमन कैथोलिक, आयरिश आततायियों और डाकुओं को दिया जाने वाला 'टोरी' का नाम उन्हें देते हुए उनको नष्ट करने का प्रयास किया। राजपक्षपातियों ने भी इसका जवाब निस्सारणवादियों को 'ह्विग' का नाम दे कर किया। यह नाम स्काटलैण्ड के उन कटु समझौतावादियों का था, जो चर्च और राज्य की समूची सत्ता के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह कर रहे थे। चिढ़ाने के लिए दिये गये ये नाम आगे चलकर गर्व करने वाले नाम बन गये। यह एक विचित्र बात है कि इंग्लिश राजनीतिक दलों के ऐतिहासिक नाम क्रमशः आयरलैण्ड एवं स्काटलैण्ड से आये।

किन्तु ज्योंही मनुष्य पोपीय षड्यन्त्र के उन्मत्त जोश के ठंडा होने पर होश में आने लगे तो यह अनिवार्य था कि उनके विद्वेष इस बात से कम हो जायें कि गृहयुद्ध वास्तव में दिखाई दे रहा था। पिछला गृहयुद्ध मनुष्यों के स्मृतियों में अभी तक इतना ताजा और

१. ऊपर देखिए अध्याय १

इतनी अच्छी तरह् से जमा हुआ था कि इसके पाठ इतनी जल्दी नही भुलाये जा सकते थे। जब यह अमंगल कल्पना अधिक स्पष्ट हो गयी और इसने पोपीय षडयन्त्र के दूसरे तथा कम वास्तविक दुःस्वप्न को धुँधला कर दिया, तो प्रवाह में बह कर आत्मनियन्त्रण खो बैठने वाले अनेक व्यक्ति यह विचार करने लगे कि शान्ति और व्यवस्था का बनाये रखना सबसे पहली राष्ट्रीय आवश्यकता है। इस प्रयोजन के लिए एक शक्तिशाली सरकार आवश्यक है, अतः राजपक्षपाती दृष्टिकोण की दिशा में एक प्रतिक्रिया बड़ी तेजी से हुई। वस्तुतः पार्लियामेण्ट में यह प्रतिबिम्बित नहीं हुई, इसका मुख्य कारण यह था कि कामन्स सभा के अस्सी प्रतिशत सदस्य उन नगरों से चुने हुए थे, जहाँ प्यूरिटन भावना प्रबलतम थी। किन्तु यह प्रतिक्रिया कुछ कम वास्तविक नहीं थी। इसने हैलीफैक्स जैसे नरम मत वालों को प्रभावित किया। हैलीफैक्स अपने को दोनों पक्षों के पागलपन के बीच में व्यवस्था स्थापित करने वाला तटस्थ व्यक्ति (Trimmer) कहता था। किन्तु अब वह गृहयुद्ध के विरुद्ध एक मात्र संरक्षण के रूप में राजा का समर्थन करने के लिए तैयार था। चार्ल्स ने अपनी सहज बुद्धि से यह जान लिया कि लोकमत की धारा किधर जा रही है। उसने इस मौके का लाभ उठाया, १६८१ ई० की पार्लियामेण्ट को भंग कर दिया और अपने जीवन तथा राज्यकाल के शेष चार वर्षों में उसने कोई दूसरी पार्लियामेण्ट नहीं बुलायी।

ऐसा करते हुए उसने जानबूझ कर उस **त्रैवार्षिक कानून** (Triennial Act) की अवहेलना की, जिसने यह व्यवस्था की थी कि कम से कम प्रति तीन वर्ष में पार्लियामेण्ट की बैठक अवश्य होनी चाहिए। किन्तु यह बात हिंसा के उस अत्यधिक खतरे को प्रदर्शित करती है कि इससे बहुत कम नाराजगी उत्पन्न हुई। पार्लियामेण्ट को एक खतरनाक संस्था समझा जाने लगा। लोकमत ने भी उस समय बड़ी प्रबलता से कोई आपत्ति नहीं की, जब चार्ल्स ह्विग नेताओं के विरुद्ध बदला लेने लगा। प्रमुख व्यक्तियों में से अधिकांश हालैण्ड भाग गये, इनमें शेफ्ट्सबरी (जो वहीं मरा) और मानमाऊथ भी सम्मिलित थे। अधिक उग्र व्यक्तियों के एक समूह ने वस्तुतः राजा को तथा यार्क के ड्यूक को पकड़ने के लिए एक षड्यन्त्र (Ryehouse Plot)[१] किया। पार्टी के वास्तविक नेताओं को इन उग्र उपायों का कोई ज्ञान नहीं था, यद्यपि उन्होंने निश्चित रूप से कुछ ऐसी सभाएँ की थीं, जिनमें उन्होंने प्रतिरोध की सम्भावना पर विचार किया था, किन्तु इस षड्यन्त्र का उपयोग उस समय के कुछ सर्वोत्तम व्यक्तियों पर राजद्रोह के लिए अभियोग चलाने के बहाने के रूप में

१. यह षड्यन्त्र १६८३ ई० में चार्ल्स द्वितीय तथा उसके भाई जेम्स की हत्या के लिए उस समय किया गया था, जब वे न्यूमार्केट नामक स्थान से आगे जाते हुए हर्टफोर्डशायर में राइ हाउस फार्म (Rye House Farm) नामक स्थान में ठहरे थे। यहाँ राजा जिस मकान में निवास कर रहा था, उसमें अचानक आग लग गयी और राजा अपने दल के साथ यहाँ से तत्काल चला गया, यद्यपि अपने पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार उसे अभी यहाँ आठ दिन और ठहरना था। राजा के यहाँ से जल्दी चले जाने के कारण षड्यन्त्रकारियों की योजना सफल नहीं हो सकी।

किया गया, बैडफोर्ड के अर्ल के बेटे तथा एक अतीव ईमानदार पुरुष लार्ड रसेल का तथा क्रामवेल के समय के एक पुराने गणराज्यवादी एलगर्नन सिडनी का वध किया गया। वे ह्विग मत के बड़े शहीद समझे जाने लगे। जो उद्देश्य अपने लिये शहीदों की गणना कर सकता है, वह इससे अतीव ऊँचा उठ जाता है और सुदृढ़ बन जाता है।

५. विजयाभिमानपूर्ण प्रतिक्रिया और कानूनों की अवहेलना (१६८१-१६८८ ई०)

अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में, अपने विरोधियों की अतीव उग्रता के कारण, चार्ल्स वस्तुतः लगभग एक अतीव निरंकुश राजा बन गया। यद्यपि उसे अब भी लुई १४वें पर धन के लिये निर्भर रहना पड़ता था और वह पालियामेण्ट द्वारा स्वीकृत न किये जाने वाले उपायों से कर लगाने का साहस नहीं कर सकता था, तथापि वह इतना मजबूत था कि वह एक ऐसी नई पालियामेण्ट को बुला सकता था, जो उसकी बात को अधिक मानने वाली हो। वह यह कार्य इस प्रकार कर सकता था कि वह उसके विरोधियों की बड़ी संख्या चुनने वाले अधिकांश बरों अथवा नगरों के चार्टरों को वापस मँगा ले और उनका ऐसे ढंग से संशोधन करे कि जिससे यह निश्चित हो जाए कि उसके अपने पक्ष वाले व्यक्ति ही सरकार का नियन्त्रण तथा अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन करेंगे। यह बड़ा अन्यायपूर्ण किन्तु एक पालियामेण्ट के विरोध को जड़ से ही कुचलने का बहुत प्रभावशाली ढंग था। यह कार्य चार्ल्स के जीवनकाल में इस ढंग से ठीक समय तक पूरा नहीं हो सका कि वह इस प्रकार की प्रशिक्षित पालियामेण्ट से स्वयमेव मिल सके, क्योंकि १६८५ ई० में उसकी मृत्यु हो गयी उसने पुनः "अपनी यात्राओं पर जाने की" आवश्यकता का सफलतापूर्वक निवारण किया, पालियामेण्ट ने उसके राज्यकाल में जो प्रगति की थी, उसके बहुत बड़े हिस्से को उसने मलियामेट कर दिया। उसकी सफलता का श्रेय बहुत कुछ उसके विरोधियों की पक्षपातपूर्ण हिंसा को उतना ही था, जितना उसके धैर्य, प्रत्युत्पन्नमति और चालबाजी को था। यह असम्भव है कि दुर्जन के रूप में उसकी स्तुति न की जाए।

उसका उत्तराधिकारी जेम्स द्वितीय था। पाँच वर्ष पहले ताज की पूर्ण सत्ता का उत्तराधिकारी बनने का उसका मौका अत्यधिक दूरवर्ती प्रतीत होता था। वस्तुतः उसने अपने राज्यकाल का आरम्भ जेम्स प्रथम के समय से होने वाले किसी भी अन्य राजा की अपेक्षा अधिक सुरक्षित एवं चुनौती न दिये जाने वाले अधिकार के साथ किया। पालियामेण्ट को इसके सदस्य चुनने वाले नगरों के चार्टरों के संशोधन द्वारा सफलतापूर्वक प्रशिक्षित किया जा चुका था और अब भी वह १६८० ई० और १६८१ ई० की शिक्षाओं के प्रभाव में थी। उसे उसके राज्यारोहण के बाद तुरन्त बुलाया गया। इसने जेम्स के लिए जीवन पर्यन्त अद्वितीय परिमाण वाली आमदनी को स्वीकार किया, लगभग सभी प्रकार से पालियामेण्ट ने अपने को जेम्स की बात मानने वाला प्रदर्शित किया। फिर भी इस पालियामेण्ट ने कैथोलिकों के विरुद्ध टेस्ट ऐक्ट (Test Act) को उस समय रद्द करने से इन्कार किया, जब कि इसके कैथोलिक राजा ने इसे ऐसा करने को कहा। दो सत्रों के बाद इस पालिमामेण्ट को भंग करना पड़ा। न केवल पार्लियामेन्ट की सामान्य वशवर्तिता से, अपितु राजनीतिक परिस्थिति के

प्रत्येक अन्य तत्व से यह प्रतीत होता था कि परिस्थिति राजकीय निरंकुश शासन की पुन: स्थापना के अनुकूल थी। एंग्लिकन चर्च के बिशपों और पादरियों को पिछले कुछ वर्षों की घटनाओं से मौनभाव से आज्ञापालन के कर्त्तव्य का अधिक दृढ़ता से विश्वास हो गया था। वे अपने सभी अनुयायियों को इस सिद्धान्त का उपदेश दे रहे थे, कि कोई भी शासक अपनी सत्ता के लिए इससे अधिक शक्तिशाली समर्थन को नहीं चाह सकता था। फिर भी धार्मिक संस्कारों को अत्यधिक महत्व देने वाले (High Church) पादरी अपने चर्च के प्रति और ताज के प्रति निष्ठा रखते थे। इसके अतिरिक्त जेम्स के पास इंग्लैण्ड में चार्ल्स द्वितीय के द्वारा शनैः शनैः निर्मित की गयी १६००० व्यक्तियों की एक नियन्त्रित ठोस सेना थी। अब तक विद्यमान प्राचीनतम रेजीमेण्टें इसी समय बनी थीं, जेम्स के किसी भी पूर्ववर्ती के पास कभी ऐसी सेना नहीं थी। इस सेना को असन्तुष्ट प्रजाजनों को भयभीत करने में समर्थ होना चाहिए था। स्काटलैण्ड सुदीर्घ अत्याचारों द्वारा पूर्णरूप से दबा दिया गया था और स्काटलैण्ड में भी एक सेना थी। आयरलैण्ड एक कैथोलिक राजा के गद्दी पर बैठने से प्रसन्न हो सकता था और एक सेना भी दे सकता था। इसके अतिरिक्त संसार में सबसे शक्तिशाली राजा फ्रांस का लुई १४ वां राजा का घनिष्ठ मित्र था। वह उसकी शक्ति स्थापित करने में और कैथोलिक मत को पुन: स्थापित करने में उसे समर्थन देने के लिए तैयार था।

देश पर जेम्स की प्रतीयमान प्रभुता कितनी पूर्ण थी, यह उन विद्रोहों की शोचनीय विफलता से प्रदर्शित किया जा चुका था, जो विद्रोह उसके राज्यकाल के आरम्भ में हालैण्ड में निर्वासित किये गये ह्विग लोगों ने उभाड़ने का प्रयत्न किया था। स्काटलैण्ड में एक विद्रोह का नेता आरगिल का अर्ल था और इंग्लैण्ड में दूसरे विद्रोह का नेता जेम्स का भतीजा, मानमाऊथ का ड्यूक था। आरगिल का प्रयास पूर्ण रीति से विफल हुआ, उसे पकड़ लिया गया और उसका वध कर दिया गया (१६८५ ई०)। मानमाऊथ के झण्डे के नीचे उस समय पश्चिमी प्रदेश के किसानों तथा समृद्ध कृषकों की एक बड़ी संख्या एकत्र हुई, जब वह टोरबे में उतरा (१६८५ ई०)। किन्तु आरम्भ से ही उसके लिए सफलता की क्षीणतम आशा भी नहीं थी। उसे सेजमूर में सुगमता से कुचल दिया गया। उसका स्वयमेव वध कर दिया गया। युद्ध का यह परिणाम था। उसके अभागे अनुयायियों को ऐसी दारुण पाशविकता के साथ सताया गया कि इंग्लैण्ड के आधुनिक इतिहास में सौभाग्यवश उसकी कोई मिसाल नहीं है। उन खूनी न्यायालयों (Bloody Assizes) ने परम्परा में अपना प्रभाव छोड़ा है, जिनमें न्यायाधीश जेफरीज ने विद्रोहियों से बदला लिया था। सेजमूर के बाद होने वाले पाशविक हत्याकाण्ड के अतिरिक्त तीन सौ से अधिक व्यक्तियों को मार डाला गया और आठ सौ से अधिक व्यक्तियों को दासों के रूप में वेस्ट इण्डीज में भेजा गया। किन्हीं भी भावी विद्रोहों को आतंक द्वारा रोका जा सकता था।

फिर भी राज्यारोहण के चार वर्ष के भीतर जिस राजा की शक्ति इतनी सुदृढ़ रूप से प्रतिष्ठित प्रतीत होती थी, वह एक निर्वासित और भगोड़ा बन गया। उसने तथा उसके भाई ने जिस स्वेच्छाचारी शासन की नींव रखने के लिए प्रयत्न किया था, वह सदैव के

लिए समाप्त हो गया। इसका कारण केवल यही था कि अविश्वसनीय मूर्खता के साथ जेम्स ने उस इंग्लिश चर्च और टोरी पार्टी के साथ अपनी मैत्री को जानबूझ कर भंग कर दिया, जिस पर उसकी शक्ति टिकी हुई थी। प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण रूप से यह विश्वास हो गया कि धार्मिक सुधार-आन्दोलन के बाद के किसी भी समय की अपेक्षा इस समय प्रोटेस्टेण्ट मत तथा इंग्लैण्ड की राजनीतिक स्वतन्त्रताएँ कहीं अधिक गम्भीर खतरे में पड़ी हुई हैं। इस प्रकार उसने ह्विग लोगों को उस अवसर का पुनः लाभ उठाने का मौका दिया, जिसे उनकी अपनी हिंसा ने १६८१ ई० में गँवा दिया था।

यद्यपि १६४१ ई० में वैध रूप से हाई कमीशन कोर्ट की समाप्ति कर दी गयी थी, और १६६१ ई० में इसकी समाप्ति को सम्पुष्ट किया गया था; तथापि जेम्स ने चर्च पर वैयक्तिक नियन्त्रण स्थापित करने के एक साधन के रूप में इसको पुनरुज्जीवित किया। उसने टेस्ट ऐक्ट (Test Act) की अवहेलना करते हुए सेना में रोमन कैथोलिक अफसरों को नियुक्त किया और यह दावा किया कि उसे विशेष अवस्था में किसी भी कानून को समाप्त करने का अधिकार है। उसने प्रिवी कौंसिल में रोमन कैथोलिकों की नियुक्ति की। वस्तुतः आक्सफोर्ड के क्राइस्ट चर्च के अध्यक्ष के पद (Deanery) पर एक कट्टर रोमन कैथोलिक को नियुक्त किया (१६८६ ई०)। माडलिन महाविद्यालय के सदस्यों को अपना अध्यक्ष चुनने के अधिकार से वंचित किया[१], ताकि वह उन पर एक रोमन कैथोलिक को जबर्दस्ती थोप सके (१६८८ ई०)। आक्सफोर्ड धार्मिक कर्मकाण्ड को महत्व देने वाले चर्च की निष्ठा का तथा मौन भाव से राजा की आज्ञापालन के सिद्धान्त का केन्द्र था, उसके साथ इस प्रकार का व्यवहार लगभग किसी अन्य कल्पना की जा सकने वाली चुनौती से इस सिद्धान्त के लिए कहीं अधिक भीषण चुनौती थी। इससे इंग्लैण्ड का प्रत्येक देहाती पादरी भयभीत हो गया।

जेम्स जानबूझ कर उस प्रमुख स्तम्भ को नीचे से काट रहा था, जिस पर उसकी गद्दी टिकी हुई थी। इंग्लैण्ड में अधिकतम और पूर्णतम राजभक्त रोचेस्टर और क्लेरेण्डन नामक दो हाइडबन्धु थे, ये क्लेरेण्डन के पुराने अर्ल के बेटे तथा राजा के अपने साले थे। दोनों निरंकुश शासन की दिशा में बहुत दूर तक जाने को तैयार थे। जेम्स ने उन दोनों को पदच्युत कर दिया, एक को कोषाध्यक्ष के पद से हटाया और दूसरे को आयरलैण्ड के लार्ड लेफ़्टिनेण्ट पद से हटाया गया, क्योंकि ये दोनों रोमन कैथोलिक नहीं बनना चाहते थे। आयरलैण्ड का शासन करने के लिए एक रोमन कैथोलिक टिरकोनल के अर्ल, टेलबोट को भेजा। एक रोमन कैथोलिक लार्ड लेफ़्टिनेण्ट की नियुक्ति अपने आप में एक अच्छी बात हो सकती थी। किन्तु एक विवेकान्ध और दुराचारी टिरकोनल आयरिश कैथोलिकों के साथ न्याय करने के उद्देश्य से नहीं, अपितु प्रोटेस्टेण्ट मत का विनाश करने के उद्देश्य से भेजा

१. Magdalen का उच्चारण माडलिन है, यह आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय का एक महाविद्यालय है। इसकी स्थापना १४५८ ई० में विन्चैस्टर के बिशप विलियम वेन फ़्लीट ने की थी।

गया था। उसने आयरिश सेना से प्रोटेस्टेण्टों को जानबूझ कर चुन-चुन कर निकाला, उसने आयरिश बरो अर्थात् पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजने वाले नगरों की सभी महा-नगरपालिकाओं का पुनर्निर्माण इस प्रकार किया कि सारी शक्ति कैथोलिकों के हाथ में रहे। आयरिश प्रोटेस्टेण्ट भविष्य में होने वाली घटनाओं को काँपते हुए देखने लगे। इंग्लिश लोगों को यह डर था कि आयरिश सेना का उपयोग उनके विरुद्ध किया जायगा।

स्काटलैण्ड में इस समय सम्भवतः द्वीपसमूह के किसी भी अन्य हिस्से की अपेक्षा राजकीय सत्ता अधिक पूर्णता से जमी हुई थी। यहाँ भी जेम्स ने उसी प्रकार की नीति का अनुसरण किया। रोमन कैथोलिकों को पूरी धार्मिक सहिष्णुता प्रदान की गयी। प्रेसबिटेरियन लोगों को केवल बहुत मामूली रियायतें दी गयीं। नगरों को ये आदेश दिये गये कि वे अपने पदों के लिए राजा द्वारा मनोनीत किये गये व्यक्तियों को स्वीकार करें। प्रिवी-कौंसिल को ऐसे रोमन कैथोलिकों से भर दिया गया, जिनके पास राज्य के लगभग सभी अधिकतम महत्वपूर्ण पद थे।

इस प्रकार का शासन कुछ वर्ष करने के बाद जेम्स यह आशा करने में समर्थ हो सकता था कि वह इंग्लैण्ड में उत्पन्न होने वाले किसी भी विद्रोह को स्काटलैण्ड की और आयरलैण्ड की सहायता से कुचल सकता है। इस बीच में चूँकि उसने इंग्लिश चर्च के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की थी, उसे इंग्लैण्ड में किसी अन्य दिशा से समर्थन की खोज करना आवश्यक था। ऐसी एक और स्पष्ट दिशा प्रोटेस्टेण्ट डिसेण्टर थे। चार्ल्स ने १६७२ ई० में इनसे अपील की थी। १६८७ ई० में १६७२ ई० के घोषणा-पत्र की घोषित अवैधता की अवहेलना करते हुए जेम्स ने एक नयी मुक्ति घोषणा (Declaration of Indulgence) की, १६७२ ई० की अपेक्षा इसकी शर्तें अधिक विस्तृत थीं। इसने न केवल उपासना की पूर्ण स्वतन्त्रता को स्वीकार किया, अपितु यह घोषणा की कि किसी पद पर प्रवेश के लिए किसी भी प्रकार की परीक्षाएँ आवश्यक नहीं होंगी। यदि डिसेण्टर लोगों को घूंस दी जा सकती थी तो इससे अवश्य ऐसा होना चाहिए था। ऐसा होने की आशा से जेम्स ने सभी दण्डात्मक कानूनों को रद्द करने वाली एक नयी पार्लियामेण्ट की तैयारी के लिए नगरपरिषदों को डिसेण्टर सदस्यों से भरना शुरू कर दिया। किन्तु उसे बहुत सन्ताप के साथ यह अनुभव हुआ कि डिसेण्टर लोगों पर भी (यद्यपि उन्होंने उसे धन्यवाद के कुछ पत्र भेजे थे) यह भरोसा नहीं किया जा सकता था कि वे उसके मनचाहे उम्मीदवारों के लिए वोट देंगे। उनके लिए अपनी स्वतन्त्रता की अपेक्षा राष्ट्र की स्वतन्त्रता अधिक महत्त्व रखती थी। सहिष्णुता के लिए उनकी इच्छा से कहीं अधिक प्रबल बात पोप-पद्धति के प्रबल होने का डर था। राजा अब सहिष्णुता का समर्थन कर रहा था। किन्तु क्या उसका साथी लुई १४वां सब प्रोटेस्टेण्टों को फ्रांस से बाहर निकालने के लिए बाधित नहीं कर रहा था? **नान्तेस की राजाज्ञा का खण्डन** (१६८५ ई०) का जेम्स के लिए इससे अधिक प्रतिकूल अवसर नहीं हो सकता था, क्योंकि इंग्लैण्ड एक कैथोलिक राजा की क्रूरता पर क्रन्दन करने वाले फ्रांस के ह्यूगनाट निर्वासितों से भरा हुआ था।

प्रथम घोषणा के परिणाम से निराश होने पर जेम्स ने १६८८ ई० में दूसरी घोषणा प्रकाशित की और यह आदेश दिया कि राज्य के प्रत्येक चर्च में इसे लगातार दो रविवारों को पढ़ा जाय। यह पादरियों द्वारा अपने विध्वंस का साधन तैयार करना था। कैण्टरबरी के आर्क बिशप ने तथा उसके छः साथियों ने एक आवेदन-पत्र प्रस्तुत किया, इसमें उन्होंने राजा से यह प्रार्थना की थी कि वह इस घृणित आदेश को वापस ले। इसमें एक ऐसा वाक्यांश भी था, जिसमें कानून को समाप्त करने वाली राजा की शक्ति मे सन्देह प्रकट करने की बात थी। इस आधार पर बिशपों पर यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने राज-द्रोहपूर्ण मानहानि की है और उन्हें टावर में डाल दिया गया। बिशपों पर अभियोग चलाया गया। जूरी ने उनके निर्दोष होने का निर्णय दिया और लन्दन के जन समूह ने इस पर एक महान् विजय के समाचार की भाँति प्रसन्नता प्रकट की। (डिसेण्टर भी इस हर्ष में उनके साथ मिल गये) यहाँ तक कि जिन सिपाहियों को राजा ने हौंनस्लो हीथ पर शिविर डालने को कहा था, उन्होंने भी जब यह समाचार सुना तो अन्य व्यक्तियों की भाँति उच्च स्वर से प्रसन्नता प्रकट की। इस से राजा को यह समझ लेना चाहिए था कि किस प्रकार के तूफान की तैयारी हो रही थी। मुक्ति की घोषणा ने यह सिद्ध कर दिया था कि डिसेण्टर लोग कानून के उद्देश्य पर सुदृढ़ हैं, इसने अन्त में एंग्लिकन पादरियों की निष्ठा पर बहुत अधिक दबाव डाला था। हैलीफैक्स ने कहा कि "इसने सब प्रोटेस्टेण्टों को इकट्ठा कर दिया है और उन्हें ऐसी गाँठ में बाँध दिया है जिसे आसानी से खोला नहीं जा सकता"।

जब सात बिशपों पर मुकदमा चल रहा था, उस समय जेम्स इस कारण आनन्दित हो रहा था कि अन्त में उसका एक लड़का पैदा हो गया था। इसका यह अर्थ था कि जेम्स ने जिस नीति का अनुसरण किया था उस प्रकार की नीति के अनन्त काल तक निरन्तर चलते रहने की सम्भावना राष्ट्र भविष्य में देख सकता था। अब एक प्रोटेस्टेण्ट राजा को गद्दी पर बैठाने के साधन द्वारा इस परिस्थिति से परित्राण पाने की कोई आशा नहीं थी। मनुष्य इस समाचार पर विश्वास करने के लिए इतने अनिच्छुक थे कि उन्होंने यह किस्सा गढ़ा कि यह शिशु बाहर से बदल कर लाया गया बच्चा था और एक उष्णता पहुँचाने वाले बर्तन में छिपा कर रानी के बिस्तर पर लाया गया था। इस अभागे बच्चे के जन्म ने क्रान्ति को अनिवार्य बना दिया।

तीस जून को, ठीक उसी दिन, जब जनसमूह बिशपों के मुक्त होने की खुशी मना रहे थे, सात प्रमुख व्यक्ति एकत्र हुए और उन्होंने ऑरेंज के विलियम को लिखे गये एक पत्र पर हस्ताक्षर किये। इसमें उस से यह प्रार्थना की गयी थी कि वह राज्य की रक्षा के लिए एक पर्याप्त सेना लेकर वहाँ आये,[१] इनमें से चार लार्ड थे और एक चार्ल्स द्वितीय का मन्त्री डेनबी था। एक लन्दन का बिशप था। अन्य दो व्यक्ति महान् ह्विग घरानों के

१. इस महत्वपूर्ण पत्र पर हस्ताक्षर करने वाले ये व्यक्ति थे --लार्ड शूजबरी डेवनशायर, डेनबी तथा लमली और बिशप काम्पटन, एडवर्ड रसेल और हेनरी सिडनी।

सामान्य व्यक्ति थे। यह पत्र एक सामान्य नाविक के वेश में जलसेनापति हर्बर्ट ले गया और उसने इसे विलियम तृतीय को दे दिया।

हिंसा ने उस भीषण शक्ति का विध्वंस कर दिया था, जिसकी स्थापना हिंसा के विरुद्ध प्रतिक्रिया के कारण हुई थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The best modern summaries of the period are **Lodge**, History of England from the Restoration to the Death of Villiam III; **Clark,** Later Stuarts; and **Ogg,** England in the Reign of Charles II; see also **Trevelyan,** England under the Stewarts; **Macaulay**, History of England covers the reign of James II in detail, but gives only one chapter to a survey of the reign of Charles II; **Hallam**, Constitutional History, both **Macaulay** and **Hallam** are unduly biased in favour of the Whigs; **Ranke,** History of England gives a more detached view. See also **Bryant**, Charles II, and Samuel Pepys, **Airy** Restoration (Epochs of Modern History) and Charles II; **Christie,** Life of Shaftesbury; **Foxcroft,** Life of Halifax, **Burnet,** History of His own Times; **Holdsworth,** History of English Law, **Feilling,** History of the Tory Party; **Browning,** Danby; **Brunton** and **Pennington,** Members of the Long Parliament; **Anson,** Law and Custom of the Constitution. **Lord Acton** has a lecture on 'The Rise of the Whigs' in his Lectures on Modern History.

• •

५

क्रान्ति

(१६८८-१६९२ ई०)

१. यूरोप की स्थिति तथा जेम्स द्वितीय का पतन

ऑरेन्ज के विलियम को भेजे गये निमन्त्रण-पत्र द्वारा आरम्भ की गयी क्रान्ति इंगलैण्ड में इतनी शान्त पूर्ण रीति से हुई और उसने ऐसे महत्वपूर्ण वैधानिक परिवर्तन किये कि प्रायः इस महान् घटना के इन पहलुओं पर ही ध्यान केन्द्रित किया जाता है। वस्तुतः नवीन शासन की स्थापना का संघर्ष चार वर्ष तक चलता रहा और इस सारे समय में क्रान्ति सदैव खतरे में थी। इंगलैण्ड में लड़ाई का न होना मुख्य रूप से भाग्य की बात थी। स्काटलैण्ड में लड़ाई चली और इससे भी अधिक भीषण लड़ाई आयरलैण्ड में हुई। इंग्लिश चैनल में भी ऐसा नौसैनिक युद्ध हुआ, जिस पर बड़ी मात्रा में क्रान्ति का परिणाम निर्भर था और यूरोप के महाद्वीप पर भी एक बड़े पैमाने पर लड़ाई हुई, जिसका परिणाम ब्रिटिश द्वीप समूह के लिए अधिकतम महत्व रखता था, क्योंकि यदि यूरोप के महाद्वीप पर घटनाओं का क्रम कुछ भिन्न होता तो ब्रिटिश द्वीप समूह का तथा राष्ट्रमण्डल का समूचा भविष्य बदल जाता। क्रान्ति का एक यथार्थ दृष्टिकोण पाने के लिए यह स्मरण रखना आवश्यक है कि यह यूरोप के तथा इंगलैण्ड के इतिहास में एक परिवर्तन लाने वाली घटना थी। इसी कारण इसकी सफलता को उत्पन्न करने वाली घटनाओं को समकालीन यूरोपियन इतिहास के प्रकाश में देखा जाना चाहिए। ऑरेन्ज का विलियम इंग्लैण्ड में केवल इसलिए नहीं आया था कि वह जेम्स द्वितीय के असंवैधानिक कार्यों को रोके, वह अपने

लिए मुकुट प्राप्त करने की दृष्टि से भी नहीं आया था। वह इसलिए आया था कि उस समय यूरोप का भाग्य इस बात पर अवलम्बित था कि ब्रिटिश द्वीप समूह के भाग्य का संचालन इन वर्षों में किस प्रकार और किस व्यक्ति द्वारा किया जाता है। विलियम इन चार वर्षों के पूरे संघर्ष को मुख्य रूप से यूरोपियन स्थिति की दृष्टि से देखता था।

हमें भी इसे उसी दृष्टि से देखने का प्रयत्न करना चाहिए और यह समझना चाहिए कि ब्रिटिश द्वीप समूह का भाग्य यूरोप के भाग्य के साथ किस घनिष्ठ रीति से सम्बद्ध था। इस कारण हमारे लिए अच्छा होगा कि हम पहले चार वर्षों के संघर्ष का सर्वेक्षण उन संवैधानिक समन्वयों के वर्णन से पूर्व ही करें, जो उस समय हो रहे थे जब कि यह संघर्ष चल रहा था, यदि इसका परिणाम भिन्न प्रकार का होता तो ये समन्वय स्थायी न होते।

हम देख चुके हैं (तृतीय अध्याय) कि यूरोप में १६६८-१६८८ के २० वर्षों में लुई १४वें की स्थिति यूरोप में कितनी प्रबल थी और वह अपनी शक्ति का प्रयोग किस उद्धत रीति से कर रहा था। उसके उद्देश्य महान् थे। वह विशाल स्पेनिश साम्राज्य के समूचे अथवा बड़े भाग पर नियन्त्रण प्राप्त करने की आशा कर रहा था। वह उत्तराधिकार द्वारा इस साम्राज्य पर दावा कर रहा था। स्पेन का राजा सख्त बीमार था, उसके देर तक जीने की आशा नहीं थी। ऐसा प्रतीत होता है कि लुई को यह भी आशा थी कि वह अपने बेटे के लिए सम्राट् की पदवी प्राप्त कर लेगा। इस पद को उसकी शक्ति उसे वास्तविकता में परिणत करने के लिए सामर्थ्य प्रदान कर सकती थी; शाही दावों से सुसज्जित होने पर वह अपने को विभक्त जर्मनी का स्वामी बना सकता था। यदि ये सपने पूरे हो जाते, तो वह भी नेपोलियन की अपेक्षा अधिक पूर्णता के साथ विश्व का स्वामी बन जाता। उसकी शक्ति इतनी खतरनाक थी और व्यवहार में उसने अपने को इतना शक्तिशाली और सिद्धान्तहीन प्रदर्शित किया था कि १६८० ई० में इसे खतरनाक समझने वाले राज्यों ने एक गुप्त संघ का निर्माण किया। यह **ऑग्सबर्ग के संघ** (League of Augsburg) के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें पवित्र रोमन सम्राट्, स्पेन, डच लोग, स्वीडन और प्रमुख उत्तरी राज्य सम्मिलित हुए, अगले वर्ष (१६८७ ई० में) बवेरिया, इटली के राजा और पोप भी इसमें सम्मिलित हो गये।

यह संघ कागज पर ही शक्तिशाली था। इसने उस दशा में बहुत कम प्रतिरोध किया होता, यदि इसकी सत्ता का ज्ञान रखने वाले लुई ने उस समय तत्काल हमला किया होता, जब पवित्र रोमन सम्राट् तुर्कों के साथ संघर्ष में लगा हुआ था और जेम्स द्वितीय सुदृढ़ रूप से ब्रिटिश राजगद्दी पर बैठा हुआ था। किन्तु उसने दो वर्ष की देर कर दी और इस बीच में तुर्कों की शक्ति भंग कर दी गयी। पवित्र रोमन सम्राट आपेक्षिक दृष्टि से तुर्कों के संकट से मुक्त हो गया। बेलग्रेड पर जून १६८८ ई० में अधिकार कर लिया गया। जून १६८८ ई० का काल वह समय था, जब इंगलैण्ड से ऑरेन्ज के विलियम को निमन्त्रण भेजा गया था। वस्तुतः यूरोपियन परिस्थिति में यह एक नाजुक घड़ी थी। इसी महीने में

कोलोन का राजकुमार-विशप मर गया, इसके प्रदेश राइन नदी के निचले हिस्से को नियन्त्रित करते थे और डचों के लिए खतरा पैदा कर रहे थे। यह लुई का एक घनिष्ठ मित्र था। राइन नदी के निचले भाग पर प्रभुता बनाये रखने के लिए लुई ने यह निश्चय किया कि वह पवित्र रोमन सम्राट् और पोप द्वारा मनोनीत किये गये व्यक्ति के विरुद्ध आर्कबिशप के पद पर अपने उम्मीदवार को शक्ति द्वारा स्थापित करेगा। यह, वस्तुतः, ऐसे महान् युद्ध का आरम्भ था, जो दस वर्ष तक चलता रहा। इसी वर्ष के सितम्बर मास में ऑरेन्ज के विलियम के इंगलैण्ड के लिए रवाना होने से पहले, लुई ने जर्मनी पर आक्रमण किया और राइन नदी के उपरले भाग में फिलिप्सबर्ग के दुर्ग पर आक्रमण किया। इसका पतन २६ अक्टूबर को विलियम के रवाना होने से ठीक पहले हो गया।

यह ऐसी स्थिति थी, जिस पर ऑरेन्ज के विलियम को उस समय विचार करना था जब उसे इंग्लिश लोगों का निमन्त्रण-पत्र मिला। लुई द्वारा यूरोप की प्रभुता के लिए अथवा इसकी स्वतन्त्रता के लिए विशाल संघर्ष में इसे आरम्भ करने वाली चालें पहले ही चली जा चुकी थीं। डच प्रान्तों को स्वयमेव कोलोन में स्थित फ्रेंच फौजों से खतरा था। क्या यह विलियम के लिए सुरक्षित था और क्या उसके डच प्रजाजन उसे इस बात की अनुमति दे सकते थे कि वह एक ऐसे अतीव संकटपूर्ण साहसिक कार्य को आरम्भ करने के लिए चुने, जिसमें डच बेड़े की और डच सेना के एक हिस्से के उपयोग की आवश्यकता पड़ सकती थी ? विलियम और डच यह अनुभव करते थे कि यह खतरा महान् होने पर भी इसलिए अवश्य उठाया जाना चाहिए कि इससे ब्रिटिश प्रदेशों को फ्रांस की मैत्री से पृथक् करने का तथा उन्हें दूसरे पक्ष में ले जाने का प्रयोजन पूरा हो सकेगा। यह निर्णय अन्त में ठीक सिद्ध हुआ। इसने युद्ध के समूचे स्वरूप को बदल दिया। किन्तु यदि इस साहसिक कार्य का साथ अधिकतम आश्चर्यजनक सौभाग्य न देता तो यह सम्भवतः यूरोपियन मित्रों के लिए भी एक भीषण विपत्ति बन सकता था। लुई १४वां ठीक इसी बात की आशा करता था कि ऐसा ही होगा।

जब हम इस बात पर विचार करते हैं कि लुई के लिए इंग्लैण्ड की तथा इसके बेड़े की क्रियाशील सहायता न होने पर भी, इसकी तटस्थता पर निर्भर रहना अतीव महत्वपूर्ण था, तो यह अविश्वसनीय प्रतीत होता है कि उसने बिना हस्तक्षेप किये हुए ही इस हमले के हो जाने की अनुमति दी। हालैण्ड पर हमला क्यों नहीं किया गया ? फ्रांस का बेड़ा इस अभियान दल के प्रयाण का प्रतिरोध करने के लिए आगे क्यों नहीं बढ़ा ? फ्रेंच सेना जेम्स की सहायता करने के लिए क्यों नहीं भेजी गयी ? इसका मुख्य कारण यह था कि जेम्स लुई के जुए में बन्धे रहने में एक निश्चित बेचैनी प्रदर्शित कर रहा था। सितम्बर में अपना जर्मन युद्ध शुरू करने से पहले लुई ने डचों को यह चेतावनी दी थी वह जेम्स द्वितीय पर हमला न करें, क्योंकि समुद्र पार भेजी जानी वाली सेना के लिए विलियम की तैयारियाँ प्रसिद्ध हो चुकी थीं। वस्तुतः उन्हें गुप्त नहीं रखा जा सकता था। जेम्स को इस बात से नाराजगी थी कि यह ऐसा सुझाव है कि वह अपनी आत्मरक्षा नहीं कर

सकता। इस पर लुई ने उसे अपने साधनों पर छोड़ दिया। लुई ने वस्तुतः यह विचार किया कि जेम्स यदि विलियम को एकदम नहीं हरा सकेगा तो भी वह किसी प्रकार इतना शक्तिशाली अवश्य होगा कि वह उसे इंग्लैण्ड में रोके रहे और हालैण्ड से सेनाएँ बाहर चली जायँ। वह यह अनुभव करता था कि वह उस जेम्स का पूरा भरोसा नहीं कर सकता जो वस्तुतः स्पेन को अपना मित्र बनाने की चर्चा कर चुका था, अतः डचों की अभियान सेना उसे जेम्स को व्यस्त बनाये रखने का तथा इसी समय में ऑरेन्ज के विलियम को अन्यत्र भेज देने का सराहनीय उपाय प्रतीत होता था। परिणाम स्वरूप लुई ने इस अभियान सेना को जान-बूझ कर प्रयाण करने की अनुमति दी।

किन्तु यदि लुई ने इस साहसिक कार्य को नहीं रोका तो जेम्स ने इसे क्यों नहीं रोका जब कि वह पूरी तरह यह जानता था कि इसकी तैयारी हो रही है? जेम्स सदैव इंग्लिश नौसेना में दिलचस्पी लेता था। यह नौसेना इस समय टेम्स नदी के मुहाने के निकट थी। इसे डच समुद्र-तट की देख-भाल के लिए नहीं भेजा गया। यद्यपि एक उत्सुकतापूर्ण महीने तक, एक पछवा हवा ने (विलियम के मित्र इसे 'पोप-पक्षपाती हवा' कहते थे) इस अभियान दल के जहाजों को डच बन्दरगाहों में बन्द रखा और यह हवा इंग्लिश बेड़े को डच समुद्र तट तक ले जा सकती थी। जब अन्त में पहली नवम्बर को "प्रोटेस्टेण्ट हवा" चली तो विलियम को बिना किसी बाधा के प्रयाण करने दिया गया और निर्विघ्न रीति से इंग्लिश चैनल के समूचे विस्तार को यहाँ तक पार करने दिया गया कि यह डेवन में अपने उतरने के स्थान-टोरबे में पहुँच गया।

इस बीच में, जेम्स मुकाबला करने के लिए अपनी सेनाओं का संगठन कर रहा था। इंग्लैण्ड में उसके पास २०,००० सैनिकों की नियमित सेना थी, वह इससे भी अधिक सेनाएँ स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड से लाया। ये सेनाएँ ठीक ऐसे समय के लिए तैयार रखी गयी थीं। उसकी सेनाएँ आक्रान्ताओं की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट कोटि की थीं, ये लन्दन के मार्ग की रक्षा करने के लिए नियुक्त की गयीं। इंग्लैण्ड में उतरने के बाद एक पखवाड़े में जब विलियम ने यह अनुभव किया कि उसे जैसी आशा दिलायी गयी थी वैसा कोई राष्ट्रीय विद्रोह उसके पक्ष में नहीं हुआ तो वस्तुतः उसे यह स्थिति निराशापूर्ण प्रतीत हुई। फिर भी कुछ सप्ताहों में बिना किसी युद्ध के विलियम ने लन्दन पर अधिकार कर लिया और जेम्स एक भगोड़ा एवं निर्वासित बन गया। प्रतिरोध समाप्त हो गया। जेम्स के मुख्य समर्थकों ने पहले तो एक-एक दो-दो करके, बाद में विशाल समूह में उसका साथ छोड़ दिया। उसकी अपनी लड़की एन इसमें थी। अन्त में जेम्स स्वयमेव हिम्मत हार गया और भाग गया। विलियम को इस बात से तीव्र सन्ताप हुआ कि कुछ मछुओं ने उसे बीच में ही पकड़ लिया, उसे लन्दन वापस लौटना पड़ा। किन्तु वह विलियम पर अनुग्रह करते हुए दूसरी बार भाग गया। इस प्रकार प्रत्येक समस्या का समाधान हो गया।

जब इस अभियान सेना ने प्रयाण किया था, उस समय विलियम और उसके

समर्थक ऐसी सुरक्षित यात्रा करने की, और ऐसी सुगम विजय की आशा युक्तियुक्त रीति से नहीं कर सकते थे। इंग्लैण्ड में क्रान्ति की रक्तपातहीनता का प्रधान श्रेय जेम्स की कायरता को तथा उसके सहसा हिम्मत हार जाने को था। यदि वह चाहता तो निश्चित रूप से जमकर मुकाबला कर सकता था। अथवा यदि वह रियायतें देने के लिए तथा समझौते के लिए उत्सुक कट्टर टोरियों के हाथों में अपने को समर्पित करने को तैयार होता तो वह विलियम से विजय के लाभों को छीन सकता था, अथवा कम से कम आक्रान्ता की स्थिति को असह्य रूप से कठिन बना सकता था। विशेषतः यूरोपियन स्थिति को दृष्टि में रखते हुए, विलियम लम्बी देरी को सहन नहीं कर सकता था। जेम्स के पलायन ने स्थिति को सम्भाल लिया और इस प्रकार उसने विलियम का मूल उद्देश्य को पूरा कर दिया। यह लुई १४वें की विशाल उदारता की सब से बड़ी प्रशंसा थी कि उसने बिना किसी भर्त्सना के, बदनाम भगोड़े का स्वागत किया और लम्बे समय तक उसके साथ तथा उसके पुत्र के साथ सम्मानित अतिथि का व्यवहार किया।

इंग्लैण्ड पर नयी सरकार के नियन्त्रण को राजा के भाग जाने के क्षण के बाद से किसी अन्य व्यक्ति के प्रतिरोध ने बिलकुल कोई चुनौती नहीं दी। इसे एक नयी पार्लियामेण्ट का चुनाव करवाने में कोई कठिनाई अनुभव नहीं हुई। नयी पार्लियामेण्ट को सम्मेलन (Convention) कहा जाता है, क्योंकि इसे नियमित रूप से राजकीय आदेशों द्वारा नहीं बुलाया जा सकता था। इसमें ह्विग लोगों का बहुमत था, यह जटिल संवैधानिक समस्याओं पर शान्त भाव से विचार आरम्भ करने में समर्थ हुई। किन्तु फिर भी, स्थिति किसी भी प्रकार सुरक्षित नहीं थी। इंग्लैण्ड में भी कट्टर राजपक्षपातियों की संख्या बहुत अधिक थी। अगले कुछ वर्षों में जेम्स किसी भी समय राजगद्दी लगभग उसी सुगमता के साथ पुनः प्राप्त कर सकता था, जिस सुगमता के साथ विलियम ने इसे जीता था, बशर्ते कि वह इंग्लिश चर्च के लिए सुरक्षा का वचन देने के लिए सहमत हो जाता। आरम्भ से ही, विलियम कभी भी लोकप्रिय नहीं था। उसे बहुत सावधानी के साथ चलना पड़ता था। इंग्लिश लोग विदेशी शासकों को पसन्द नहीं करते थे, डच हाल के तीन युद्धों में उनके शत्रु रह चुके थे। उस समय स्थिति इतनी अनिश्चित समझी जाती थी कि अनेक प्रमुख ह्विग तथा टोरी इंग्लिश राजनीतिज्ञ (इनमें से कुछ पर विलियम मुख्य रूप से भरोसा रखता था) बड़ी कठिनाई से निर्वासित राजा के साथ सम्बन्ध बनाये रख कर अपने को सुरक्षित रख रहे थे। यदि इंग्लैण्ड में और आयरलैण्ड में अथवा यूरोप के महाद्वीप में युद्ध में कोई गम्भीर गड़बड़ होती अथवा यदि लुई इंग्लैण्ड को पुनः प्राप्त करने के लिए स्वतन्त्र होता और इसमें अपनी शक्ति लगाने का इच्छुक होता तो क्रान्ति का विध्वंस सुगमतापूर्वक किया जा सकता था। इसका परिणाम अन्यत्र चलने वाले संघर्ष के परिणाम पर निर्भर था।

२. स्काटलैण्ड, आयरलैण्ड तथा समुद्रों पर क्रान्ति का युद्ध

विलियम अपने इंग्लिश परामर्शदाताओं (जिनमें से एक पर भी वह पूरा विश्वास

नहीं करता था) की अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्टता से यह अनुभव करता था कि क्रान्ति की सफलता युद्ध के घटनाक्रम पर अवलम्बित है। उसका एक पहला कार्य फ्रेंच राजदूत का निष्कासन और इंग्लैण्ड को महाद्वीपीय युद्ध में डालना था। मई १६८९ ई० में इंग्लैण्ड महान् संघ (Grand Alliance)[१] का सदस्य हो गया। ब्रिटिश सेनाएँ और इंग्लिश सेनाएँ एक ऐसे विशाल संघर्ष में लग गयीं, जो अब क्रान्ति द्वारा किये गये समाधान की सुरक्षा के लिए तथा लुई १४वें के आक्रमणात्मक उद्देश्यों की पराजय के लिए किया जाने वाला संघर्ष था।

१६८९ ई० में, फिर भी, ब्रिटिश [illegible] की मुख्य दिलचस्पी महाद्वीप में नहीं थी, किन्तु यह स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड में थी। इन दोनों देशों में पदच्युत राजा के समर्थक शस्त्रों की शक्ति से सफलता पाने का प्रयत्न कर रहे थे। स्काटलैण्ड में जेम्स के पलायन के समाचार से, १६६० ई० से बनायी गयी निरंकुश राजसत्ता की समूची रचना का आकस्मिक और पूर्ण पतन हो गया। रोमन कैथोलिक पुरोहित भाग गये। सर्वत्र प्रेसबिटेरियन हावी होने लगे और उस दक्षिण-पश्चिम के प्रदेश में जहाँ तीव्रतम अत्याचार हुआ था, अलोकप्रिय पादरी निम्न वर्ग के लोगों द्वारा दबाये जाने लगे, उन्हें चर्च से भगा दिया गया, उनके वास-स्थान को तथा वेतन के निमित्त मिली भूमि को उन से छीन लिया गया। मार्च १६८९ ई० में एक स्काटिश सम्मेलन हुआ। इसे यह प्रलोभन हो सकता था कि यह इंग्लैण्ड के साथ सम्बन्ध विच्छेद कर ले, क्योंकि अब तक इस सम्बन्ध ने निश्चित रूप से इसको बहुत कम लाभ पहुँचाये थे। किन्तु इसने विलियम तथा मेरी को राज-मुकुट प्रस्तुत किया। इनकी सत्ता समूची निम्न भूमियों में पूर्ण रूप से स्वीकार की गयी। केवल वन्य हाईलैड्स में नये शासन का प्रतिरोध था। यहाँ अब क्लेवर हाउस के ग्रैहम वाइकौण्ट डण्डी ने जो समझौतावादियों के हथौड़े के नाम से प्रसिद्ध था राजा के पक्ष में लड़ने के लिए हाईलैण्ड्स की सेना एकत्र की। उसने किल्लीक्रैन्की में जनरल मैके की अध्यक्षता में नियमित स्काटिश सिपाहियों की एक छोटी सेना पर शानदार विजय प्राप्त की (जुलाई १६८९ ई०)। किन्तु डण्डी स्वयमेव चाँदी की एक गोली से मारा गया क्योंकि मनुष्य यह कहते थे कि शैतान सीसे की गोली से उसकी रक्षा कर रहा था और जब इसका नेता मर गया तो सेना भी तितर-बितर हो गयी।

हाईलैण्ड्स को शान्त करने में और दो वर्ष लगे। १६९१ ई० में उन सब व्यक्तियों को दण्ड से मुक्ति देने की एक घोषणा की गयी, जो वर्ष की समाप्ति से पहले ही राजभक्ति की शपथ ले लें, एक के अतिरिक्त प्रत्येक मुखिया ने ऐसा किया। यह अभागा ग्लैंको का मैकडॉनल्ड था, यह अभिमान की भावना से अन्तिम घड़ी तक वश्यता स्वीकार करने को टालता रहा, किन्तु वस्तुतः उसने ७ जनवरी को शपथ ली। अपने योग्यतम स्काटिश मन्त्री

---

१. यह सन्धि १२ मई १६८९ ई० को जर्मनी, इंग्लैण्ड, स्पेन और सेवाय में इस उद्देश्य से हुई थी कि फ्रांस और स्पेन के एकीकरण को रोका जाय।

२. जी० एस० टेरी ने क्लैवरहाउस के ग्रैहम की एक जीवनी लिखी है।

स्टेयर के मास्टर के परामर्श पर विलियम तृतीय ने इस बात का निश्चय किया कि वह भविष्य के लिए हाईलैण्ड को एक पाठ पढ़ाने के रूप में अपराधी को कठोर दण्ड देगा। इसका परिणाम ग्लैंको का वीभत्स और निष्ठुर हत्याकाण्ड था (१ फरवरी १६९२ ई०)। यद्यपि यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वह यह नहीं जानता था कि मैकडानल्ड ने वास्तव में शपथ ले ली है, तथापि विलियम तृतीय इस घृणित अपराध के दोष से मुक्त नहीं किया जा सकता। आंतकवाद सदैव अन्त में अपना फल लाता है। १८वीं शताब्दी तक इतना अधिक कष्ट उत्पन्न करने वाले नये शासन के प्रति हाईलैण्ड्स का देर तक चलने वाला विरोध निश्चित रूप से ग्लैंको की हत्या से उद्दीप्त हुआ था। फिर भी स्काटलैण्ड शान्त था, निम्न भूमियाँ कट्टर राजभक्त थीं। हाईलैण्ड्स वशवर्ती बने हुए थे और इस ओर से किसी अगले संकट की आशंका नहीं थी।

इससे कहीं अधिक गम्भीर उपद्रव आयरलैण्ड में था, यहाँ तीन वर्ष से भीषण युद्ध चल रहा था। आयरलैण्ड में लार्ड लेफ़्टिनेण्ट टिरकोनल की अध्यक्षता में सरकार का समूचा संगठन जेम्स के पक्ष में व्यूहबद्ध था और सेना को तथा प्रशासन को निरन्तर रोमन कैथोलिक बनाने की जो तैयारियाँ की गयी थीं, उनका प्रभाव पड़ा। टिरकोनल की सेना विलियम का प्रतिरोध करने के लिए हाइलैण्ड में भेजी गयी फौजों के कारण कुछ कमजोर हो गयी थी। इसका परिणाम यह था कि १६८८ ई० की पतझड़ में उत्तर के प्रोटेस्टेण्ट-विशेषत: लन्दनडेरी में तथा एनिसकिल्लेन में अपने को संगठित करने में समर्थ हुए। आयरलैण्ड में अन्य सभी स्थानों में जेम्स का पक्ष विजयी था। फ्रांस में अपने आगमन के दो मास बाद जब वह अपने साथ १२०० सैनिक लेकर आयरलैण्ड आया तो उसने अपने स्वागत के लिए एक संयुक्त राष्ट्र को तैयार पाया, लगभग पूर्ण रूप से कैथोलिकों से बनी हुई एक पार्लियामेण्ट को क्रान्ति करने के लिए तैयार पाया। जेम्स आयरलैण्ड को इंग्लैण्ड में बढ़ने का पहला कदम मात्र समझता था। टिरकोनल और उसके अनेक अनुयायी मुख्य रूप से आयरिश स्वतन्त्रता को स्थापित करना ही अपना मुख्य कार्य समझते थे। इस कारण आरम्भ से ही कठिनाइयाँ उत्पन्न होने लगीं।

किन्तु उत्तर में प्रोटेस्टेण्टों के प्रतिरोध को दबाने की आवश्यकता पर सब सहमत थे। १६८९ ई० के वसन्तकाल में लन्दनडेरी पर प्रबल घेरा डाला गया। यदि इसका पतन होता तो एनिसकिल्लेन का भी पतन अवश्य होता। इसमें खाद्य सामग्री इतनी कम थी कि इसका गवर्नर लण्डी समर्पण करने के पक्ष में था। किन्तु इसके निवासी प्रतिरोध करने का आग्रह कर रहे थे और वे १५ सप्ताह तक अधिकतम वीरता के साथ मुकाबला करते रहे। वे उस समय तक लगभग परिश्रान्त हो चुके थे, जब उनकी सहायता के लिए जुलाई के अन्त में इंग्लैण्ड से एक सेना आयी और उसने कैथोलिकों को घेरा उठा लेने के लिए बाधित किया तीन दिन बाद एनिसकिल्लेन की दुर्गरक्षक सेना ने न्यू टाऊन बटलर नामक स्थान में एक शानदार विजय प्राप्त की। इससे अल्स्टर पर प्रोटेस्टेण्टों का नियन्त्रण सुरक्षित हो गया। कुछ समय बाद ऑरेन्ज के विलियम के मित्र फ्रेंच ह्यूगनाट शोमबर्ग के नेतृत्व में एक सेना आयर-

लैण्ड की पुनर्विजय करने के लिए बेलफास्ट में उतरी; किन्तु यह जेम्स की उत्कृष्ट सेना के मुकाबले में अल्स्टर पर प्रभुत्व स्थापित करने के अतिरिक्त बहुत कम कार्य करने में समर्थ हुई। फिर भी, इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड में क्रान्ति की सुरक्षा के लिए आयरलैण्ड को पुन: प्राप्त करना आवश्यक था। यह लुई के विरुद्ध महाद्वीपीय युद्ध में सफलता पाने के लिए भी अत्यावश्यक था। इसी कारण महाद्वीपीय युद्ध में भाग लेने के लिए उत्कण्ठित ऑरेन्ज के विलियम ने अगले वर्ष स्वयमेव आयरलैण्ड में प्रधान सेना का नेतृत्व करने का निश्चय किया। यदि लुई ने विलियम की भाँति स्पष्टता से आयरिश युद्ध की महत्ता को समझा होता और वह विशाल सेनाएँ वहाँ भेज देता तो युद्ध का परिणाम बिलकुल भिन्न होता।

लुई जो सेनाएँ चाहता, उन सेनाओं को वह इस वर्ष भेज सकता था, क्योंकि इस नाजुक घड़ी में इंग्लिश नौसेना अपने कर्त्तव्य में विफल हुई थी। यह आश्चर्यजनक रीति से आलसी पड़ी हुई थी और इसका संगठन बिगड़ गया था। इसमें अनुशासनहीनता थी। दूसरी ओर फ्रेंच बेड़े के निर्माण में कोलबर्ट ने इतना प्रयास किया था कि वह इस समय सबसे अधिक शक्तिशाली था। जुलाई १६९० ई० में यह जल सेनापति टूरविल्ले की कमान में आगे बढ़ा और इसने बीची हैड के निकट इंग्लिश और डच बेड़ों को संयुक्त रूप में पाया और उन्हें ऐसी पूर्णतम करारी हार दी, जैसी ब्रिटिश नौसनिक इतिहास में अभी तक कभी नहीं हुई थी। केवल डचों की उग्र वीरता ने अनेक मित्रों को एक ऐसी विपत्ति से बचा लिया, जिससे वे उभर नहीं सकते थे। इस विजय ने इंग्लिश चैनल पर फ्रांस के प्रभुत्व को स्थापित कर दिया। इंग्लैण्ड में इस समय इस विचार से आतंक छा गया कि डंकर्क में तैयार पड़ी हुई एक सेना द्वारा फ्रेंच आक्रमण उस समय किया जा सकता है, जब कि राजा और उसे उपलब्ध हो सकने वाली उसकी सर्वोत्तम सेनाएँ आयरलैण्ड में थीं। यह भय इसलिए अधिक बढ़ गया कि मित्र राज्यों की अभी फलैण्डर्स में फलरस नामक स्थान पर एक भीषण पराजय हुई थी। १६९० ई० की ग्रीष्मऋतु क्रान्ति के समर्थकों के लिए एक चिन्तापूर्ण घड़ी थी। किन्तु फ्रेंचों ने अपनी सैनिक सफलता का कोई उपयोग नहीं किया। किसी भी दशा में, आयरलैण्ड जाने वाली विलियम की अभियान सेना को रोकने में अब बहुत देरी हो गयी थी। यह सेना जून में सुरक्षित रूप से आयरलैण्ड में उतर गयी थी। किन्तु फ्रेंच बेड़े ने उसके सम्बन्ध मार्गों को भी काटने का प्रयत्न नहीं किया।

आयरिश प्रोटेस्टेण्ट इस समय बहुत भयभीत थे। वे यह नहीं जानते थे कि क्या होने वाला है। उन्हें यह निश्चय था कि यदि जेम्स विजयी हुआ तो उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली जायगी। उनके लिये ऑरेंज का विलियम त्राता के रूप में आया, पहली जुलाई १६९० ई० को बोयने के युद्ध में उसने आयरिश सेना की शक्ति भंग कर दी। इसके बाद उन आयरिश लोगों के लिए यह सबसे बड़ी घटना हो गयी, अपने को ऑरेन्ज का अनुयायी कहने में गर्व करने वाले सभी व्यक्ति प्रतिवर्ष इस घटना का महोत्सव मनाने लगे। फिर भी यह किसी भी प्रकार निर्णयात्मक विजय नहीं थी। वस्तुत: इसने विलियम को केवल डबलिन और लीन्स्टर का प्रान्त प्रदान किया। आयरिश पक्ष का कोई योग्य नेता अब भी पुरानी स्थिति को पुन: वापस ला सकता था। यह बात विशेष रूप से सत्य

बेडफोर्ड के महान् ह्विग घराने का एडवर्ड रसेल अब यह कार्य करने वाली नौसेना का सेनापति था, इस सेना को सुदृढ़ बनाया गया था और पुनः संगठित किया गया था।

यद्यपि रसेल ह्विग था और वास्तव में विलियम को निमन्त्रण देने वाले पत्र पर एक हस्ताक्षर करने वाला व्यक्ति था, तथापि वह गुप्त रूप से सेन्ट जर्मेन्स में विद्यमान निर्वासित राजा के साथ षड्यन्त्र कर रहा था। १६९२ ई० में जेम्स ने इंग्लैण्ड पर आक्रमण की योजना बनायी, लुई ने यह वचन दिया कि उसका फ्रेंच बेड़ा इंग्लिश चैनल से ब्रिटिश नौसेना को हटा देगा और निर्वासित राजा के साथ एक फ्रेंच सेना को यह बेड़ा इंग्लिश विद्रोह का केन्द्र बनाने के लिए जहाज द्वारा इंग्लैण्ड तक ले जायगा। एक विस्तृत घोषणा-पत्र का प्रारूप तैयार कर लिया गया, जेम्स नार्मण्डी के तट पर जहाज पर सवार होने के लिए तैयार हो कर गया। रसेल की कमान में एक संयुक्त इंग्लिश और डच बेड़ा फ्रेंच लोगों के जहाज द्वारा प्रस्थान करने का निरीक्षण कर रहा था। यदि उस समय उसने धोखा दिया होता जैसा कि एक समय उसका ऐसा करने का इरादा प्रतीत होता था तो इंग्लैण्ड के लिए बड़ी विषम स्थिति पैदा हो जाती। किन्तु जब फ्रेंच बेड़ा बाहर आया तो रसेल पर नौसेना का अभिमान हावी हो गया। वह ट्राय की लड़ाई के एक योद्धा की भाँति वीरतापूर्वक लड़ा। **लाहोग** की महान् लड़ाई में कुछ समय तक समुद्रों का नियन्त्रण करने वाला फ्रेंच बेड़ा एक घमासान लड़ाई में चकनाचूर हो गया और उसे भागना पड़ा। उसके सर्वोत्तम १२ जहाज लाहोग के बन्दरगाह में ही सर जार्ज रुक ने उस अभागे जेम्स की आँखों के आगे ही जला दिये, जिसकी आशाएँ इस प्रज्वलन के धुएँ में ही लुप्त हो गयीं।

लाहोग की लड़ाई ने क्रान्ति की विजय को अन्तिम रूप से सुरक्षित बना दिया। इससे भी बड़ी बात यह थी कि इसने अंग्रेजों को तथा उनके डच मित्रों को भविष्य में होने वाले लम्बे युद्धों में समुद्रों पर पूर्ण आधिपत्य प्रदान किया और उन्हें फ्रेंच विदेशी व्यापार को असीम हानि पहुँचाने में तथा ब्रिटिश सेनाओं को लड़ाई के यूरोपियन रणक्षेत्रों तक सुरक्षित रूप से परिवहन करने में समर्थ बनाया। एक बार पुनः नौसेना ने युद्ध का निर्णय किया था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

General works on the revolution period will be noted at the end of the next chapter, **Mahan,** Influence of Sea-Power on History is important for the naval struggle; for military events, **Fortescue,** History of the British Army. **Clark,** Later Stuarts; **Churchill,** Marlborough, Vol. I; **Feiling,** History of Tory party; **Trevelyan,** English Revolution; **Higham,** James II; **Powley,** The English Navy in the Revolution of 1688; **Reddaway.** History of Europe 1610-1715

६

क्रान्ति के बाद की व्यवस्था

(१६८६–१७०७ ई०)

१. व्यवस्था (Settlement) का सामान्य स्वरूप

पुनःस्थापना के बाद की व्यवस्था की भाँति, क्रान्ति के बाद होने वाली व्यवस्था इंग्लैण्ड में एवं वेल्ज में, स्काटलैण्ड में, आयरलैण्ड में और उपनिवेशों में पृथक् रूप से की गयी और राष्ट्र-मण्डल के सम्बन्धों के लिए एक सुसम्बद्ध योजना तैयार करने का कोई प्रयास समग्र रूप से नहीं किया गया। किन्तु इंग्लैण्ड अतीव स्पष्ट रूप से, राज्यों के एक शिथिल संघ में प्रधान हिस्सेदार था और विभिन्न तरीकों से उसके निर्णयों ने शेष राज्यों को प्रभावित किया। यह प्रभाव कुछ तो अनुकरण के कारण पड़ा और इसका कुछ कारण यह था कि आयरलैण्ड के और उपनिवेशों के मामलों की सभी घटनाओं में इंग्लिश पार्लियामेण्ट ने उन प्रदेशों के लिए कानून बनाने में संकोच नहीं किया, जिन्हें वह अपना वशवर्ती राज्य समझती थी। वस्तुतः इंग्लैण्ड में इस व्यवस्था ने जो रूप ग्रहण किया, उसने मुख्य रूप से आगे आने वाले समय में समूचे राष्ट्रमण्डल के राजनीतिक विकास के स्वरूप को निश्चित किया, क्योंकि क्रान्ति ने इंग्लैण्ड में उस संवैधानिक पद्धति को स्थापित किया, जो न केवल शेष राष्ट्रमण्डल के लिए अपितु दुनियाँ के एक बड़े भाग के लिए आदर्श बन गयी।

यह नयी पद्धति किसी एक व्यक्ति की बुद्धिमत्ता का परिणाम नहीं थी। इसका श्रेय विलियम तृतीय[१] को देना एक बहुत बड़ी भूल होगी। किसी भी ब्रिटिश प्रदेश की व्यवस्था में राजा के वैयक्तिक चरित्र और विचारों का प्रभाव बहुत कम पड़ा था। वह एक महान् व्यक्ति था, उसकी मुख्य दिलचस्पी लुई १४वें के विरुद्ध संघर्ष

---

१. इंग्लिश राजनीतिज्ञों की पुस्तकमाला में एच० डी० ट्रेल द्वारा लिखित विलियम तृतीय की एक लघु जीवनी है।

में थी। जब तक ब्रिटिश द्वीपों को इस संघर्ष के सही पक्ष में लाया गया और जब तक उसे उनकी विदेश नीति के संचालन का तथा उनके सैनिक साधनों के उपयोग का अधिकार दिया गया, तब तक वह इस बात से सन्तुष्ट था कि शासन की समस्याओं का समाधान उसी प्रकार किया जाना चाहिये, जैसा ये टापू स्वयमेव चाहते थे। वह एक चुप रहने वाला और आत्म-निष्ठ व्यक्ति था, उसने अपने ब्रिटिश प्रजाजनों को कभी भी पूरी तरह नहीं समझा अथवा उन प्रश्नों की अधिक चिन्ता नहीं की, जिनमें ब्रिटिश लोगों की मुख्य रूप से दिलचस्पी थी स्काटिश मामलों में उसके विश्वस्त परामर्शदाता विलियम कारस्टेअर्स के अतिरिक्त अन्य किसी स्काट व्यक्ति पर अथवा जिन प्रमुख इंग्लिश लोगों के साथ उसे कार्य करना पड़ा, उनमें से किसी पर भी उसने कभी पूरा विश्वास नहीं किया। उसके एक मात्र वास्तविक विश्वासपात्र वे डच कुलीन व्यक्ति थे, जिन्हें वह अपने साथ लाया था। इनमें विशेषतः एक व्यक्ति बैण्टिक था, यह बाद में पोर्टलैण्ड का अर्ल बना तथा दूसरा व्यक्ति केप्पल था, जिसे उसने एल्ब मार्ले का अर्ल बनाया। इन विदेशियों के प्रति प्रदर्शित की गयी कृपा पर उस समय गहरी नाराजगी प्रकट की गयी। उसकी रानी एक इंग्लिश स्त्री होने के नाते अधिक लोकप्रिय थी। विलियम के अधिकतम बुरे सभी कष्ट १६९४ ई० में रानी की मृत्यु होने के बाद आये। किन्तु इस समझौते में उसका सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान यह था कि उसने इस स्थिति को स्वीकार करने से इन्कार किया कि वह केवल रानी का पति है और उसने यह कहा कि यदि उसे राजमुकुट नहीं दिया जायगा तो वह हालैण्ड लौट जायगा। इस प्रकार उसने आनुवंशिक उत्तराधिकार के बारे में सभी विवादों को समाप्त कर दिया और इस बात को अनिवार्य बना दिया कि पार्लियामेण्ट को राजमुकुट की व्यवस्था करने का अधिकार ग्रहण करना चाहिए। इसके अतिरिक्त उसने इस समझौते में कोई वैयक्तिक अंशदान नहीं किया; उसने केवल इसे स्वीकार किया।

२. टोरी तथा ह्विग पार्टियों के शासन के सम्बन्ध में विरोधी विचार

इंग्लैण्ड में उस समय की परिस्थिति की प्रधान विशेषता यह थी कि इसकी व्यवस्था को किसी एक दल के विचारों के अनुसार बलपूर्वक नहीं थोपा गया था, क्योंकि यह क्रान्ति युद्ध का परिणाम नहीं थी, किन्तु वस्तुतः इसमें ह्विग तथा टोरी लोगों ने, एंग्लिकन तथा डिसेन्टर लोगों ने भाग लिया था। यह व्यवस्था विचार-विमर्श और समझौते का परिणाम थी। इसने ही इसके परिणामों को इनमें स्पष्ट अपूर्णताएँ होते हुए भी, इतना चिरस्थायी बना दिया। यह **सहमति** पर आधारित थी। विचार-विमर्श के बाद शान्तिपूर्ण समझौते द्वारा बनायी जाने वाली शासन की पद्धति विश्व के इतिहास में एक नयी वस्तु थी। यह व्यवस्था या समझौता इसलिए और भी अधिक उल्लेखनीय है, क्योंकि यह उन मनुष्यों द्वारा किया गया था, जिनके शासनविषयक सिद्धान्तों में तीव्र मतभेद था।

टोरी अब तक भी इस विचार से चिपके हुए थे कि राजतन्त्र दैवी व्यवस्था है, राज्य की दृढ़ता एक प्रबल राजा की शक्ति की सत्ता पर निर्भर रहनी चाहिए और इसका समर्थन जनता के विश्वास और स्वाभाविक आज्ञापालन से होना चाहिए। वे अब भी इस विचार से चिपके हुए थे कि धर्म में एकरूपता राज्य के हित के लिए आवश्यक है। वे किसी ऐसे

समझौते को स्वीकार करने के लिए अपने को तैयार नहीं कर पाते थे और समझौता आनु-वंशिक उत्तराधिकार के सिद्धान्त को निर्बल बनाने अथवा [illegible] सिद्धान्त को [illegible] करने [illegible] सत्ता के प्रति [illegible] रूप में उस समय के इंग्लैण्ड [illegible] के मध्य [illegible] हल्केपन में [illegible] मनों में न केवल उन गृहयुद्धों [illegible] हो चुका था [illegible] बिताया था, अपितु [illegible] अच्छी तरह जम चुका था। टोरी राजभक्ति [illegible] बनाये रखने में [illegible] भी ठीक थी कि [illegible] आधारों में आने वाली किसी भी विच्छिन्नता से उत्पन्न होने वाली [illegible] अव्यवस्थता अपने साथ [illegible] बुराइयों को ला सकती है।

टोरी लोगों के राज्य के समर्थन के लिए [illegible] के दृष्टिकोण की सबसे युक्तियुक्त व्याख्या [illegible] हाब्स के लेवियाथन नामक ग्रन्थ में पायी जाती है। वह १६५१ ई० में उस समय प्रकाशित हुआ था, जब गृहयुद्धों ने यह प्रदर्शित किया था कि किस प्रकार सुगमता से एक अच्छी प्रकार सुव्यवस्थित व्यवस्था अराजकता में परिणत हो सकती है। हाब्स ने यह तर्क किया कि यदि समाज को व्यवस्थित बनाये रखना है, तो उसमें असीम सत्ता वाली एक केन्द्रीय शक्ति अवश्य होनी चाहिए। उसका विश्वास था कि व्यवस्था ऐसी शक्ति की सत्ता पर अवलम्बित है। उसकी दृष्टि में यदि मनुष्य एक [illegible] समाज या राज्य के सदस्य हो सकते हैं तो उनके बारे में अवश्य यह समझना चाहिए कि उन्होंने उस प्राकृतिक दशा से बचने के एक साधन के रूप में एक सरकार स्थापित करने के लिए एक दूसरे के साथ समझौता कर लिया है, जिस प्राकृतिक दशा में प्रत्येक मनुष्य को अपने पड़ोसी का सिर फोड़ने की स्वतन्त्रता थी और जिसमें मानवीय जीवन 'घृणित, पाशविक और अल्पकालीन' था। एक बार जब मनुष्यों ने स्वयमेव स्थापित की हुई सत्ता के विरुद्ध विद्रोह आरम्भ किया तो उन्होंने एक-दूसरे के साथ अपना समझौता तोड़ दिया। उससे अराजकता उत्पन्न हो गयी। हाब्स की युक्ति (जैसा कि वह स्वीकार करता था,) इस बात की सम्भावना का निराकरण नहीं करती थी कि इस पूर्ण प्रभुसत्ता का प्रयोग एक पार्लियामेंट द्वारा किया जाय। किन्तु उसे इस बात में सन्देह था कि क्या एक झगड़ने वाली और विभक्त संस्था द्वारा उसका प्रयोग प्रभावशाली रीति से किया जा सकता है। किन्तु अधिकांश टोरी हाब्स को स्वतन्त्र विचारक समझते हुए उस पर अविश्वास करते थे। उसने राजतन्त्र के रहस्यमय और धार्मिक पक्ष का बहुत कम प्रतिपादन किया था। सामान्य टोरी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति इससे अधिक अच्छी तरह से सर रावर्ट फिल्मर की पुस्तक पेट्रियार्का (Patriarcha) में हुई थी। इसमें उसने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया था कि आनुवंशिक राजतन्त्र विश्व के शासन के लिए भगवान् द्वारा वरण की गयी विधि है और उसने बाइबल के बहुत अधिक उद्धरणों से अपने मत को स्थापित करने का प्रयत्न किया।

अस्वीकार नही कर सके कि उन्होंने इस स्थिति के उत्पन्न करने में सहायता दी थी। किन्तु एक शाब्दिक समझौते ने आंशिक रूप से स्थिति की रक्षा की। यह प्रस्ताव पास किया गया कि अपने पलायन द्वारा जेम्स ने राजगद्दी का परित्याग किया है, इसलिए वह गद्दी खाली है, विलियम तथा मेरी को इस पर बैठने के लिए निमन्त्रित किया गया। वास्तविक तथ्य को सावधानी भरे शब्दों में आवेष्टित किया गया था, तथापि एक राजा को राजगद्दी से हटाया गया था, और नये राजा को चुना गया था। क्रान्ति का यह मौलिक तथ्य है और इसका किसी प्रकार अपलाप नही किया जा सकता था।

३. इंग्लैण्ड में संवैधानिक व्यवस्था

शासन की पद्धति का नया समाधान कानूनों की एक श्रृंखला द्वारा किया गया। इनमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण **अधिकारों का विधेयक** (Bill of Rights 1689) था। यह अधिकारों की एक पहली घोषणा पर आधारित था। इसका प्रारूप तैयार करना सम्मलन (Convention) का एक पहला कार्य था। किन्तु इस महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ ने भी कोई सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित नहीं किये अथवा शासन की नयी पद्धति की व्याख्या करने का प्रयत्न नही किया। यह इसी से सन्तुष्ट था कि इसमें जेम्स द्वितीय द्वारा सत्ता के उन दुरुपयोगों का प्रतिपादन किया जाय, जिनके लिए वह दोषी था और इन्हें अवैध घोषित किया जाय। इसकी धाराओं में सक्षिप्त एवं महत्त्वपूर्ण धाराएँ वे थी, जिनमें कानूनों को स्थगित करने की शक्ति को (जैसा मुक्ति की घोषणा द्वारा किया गया था), पार्लियामेण्ट की सहमति के बिना राज्य मे स्थायी सेना बनाये रखने को,पार्लियामेण्ट के सदस्यों के स्वतन्त्र चुनाव में समूचे हस्तक्षेप को, अथवा पार्लियामेण्ट में होने वाले विवाद में और भाषण की स्वतन्त्रता में बाधा डालने को अवैध घोषित किया गया था।

किन्तु किसी कार्य के विभिन्न प्रकारों की अवैधता की एक सामान्य घोषणा तब तक बहुत कम उपयोगी होती है, जब तक कि भविष्य में उसे रोकने के साधन प्रभावशाली नहीं बनाये जाते। अतः पार्लियामेण्ट ने न केवल भविष्य में अवैधता को रोकने के, किन्तु वित्त पर अपना नियन्त्रण करने में अपनी सर्वोच्च सत्ता स्थापित करने के साधन प्राप्त कर लिये। इसने राजा के वैयक्तिक व्यय के लिए सिविल लिस्ट के रूप में एक निश्चित अनुदान पास किया, यह दीवानी शासन चलाने के सामान्य व्ययों को पूरा करने के लिए था। किन्तु यह धन केवल उन्ही प्रयोजनों के लिए व्यय किया जा सकता था, जिनके लिए उसे स्वीकार किया जाता था। पार्लियामेण्ट ने विशिष्ट करों को विशिष्ट उद्देश्यों के लिए निश्चित करते हुए इस बात को पक्का कर लिया था कि ऐसा ही किया जायगा। राजा के पास इसके बाद से कोई ऐसी बड़ी सामान्य आमदनी नहीं रही, जिसका वह अपनी इच्छानुसार उपयोग कर सके। यह बात विशेष रूप से सेनाओं को बनाये रखने वाले धन के लिए लागू होनी थी, इस पर पार्लियामेण्ट एक अतीव ईर्ष्यालु दृष्टि रखती थी और इस राशि को केवल एक वर्ष से अगले वर्ष तक के लिए ही पास करती थी। चूंकि विलियम तृतीय के समय में राज्य की सैनिक आवश्यकताएँ बहुत अधिक थीं, अत. इसका यह अभिप्राय था कि पार्लियामेण्ट को प्रतिवर्ष बुलाना आवश्यक था और ऐसी किसी भी नीति का अनुसरण नहीं किया जा सकता था जिसे यह स्वीकार न करती हो। इसी

उद्देश्य के लिए एक अन्य अधिनियम-**विद्रोह कानून** को केवल एक वर्ष की अवधि के लिए बनाया जाता था। यदि सेना में अनुशासन रखा जाना था तो प्रतिवर्ष पालियामेण्ट से इस कानून के नवीकरण की प्रार्थना की जानी आवश्यक थी। ये कानून अपने आप में बहुत तुच्छ प्रतीत होते हैं, किन्तु ये इतने अधिक प्रभावशाली थे कि १६८९ ई० से आज तक इंग्लैण्ड का शासन सदैव पालियामेण्ट की इच्छा पर अवलम्बित रहा है।

राजनीतिक पद्धति में आवश्यक समझे गये परिवर्तनों को बाद में एक **त्रैवार्षिक अधिनियम** (Triennial Act) बना कर १६९४ ई० में पूरा किया गया। इसने १६४१ ई० के उस त्रैवार्षिक कानून का स्थान नहीं लिया, जिसने यह व्यवस्था की थी कि पालियामेण्ट की बैठक तीन वर्षों में कम-से-कम एक बार अवश्य होनी चाहिए। किन्तु इसने इस बात पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया था कि पालियामेण्ट को कितने समय के लिए अपनी बैठक करनी चाहिए। वित्तीय आवश्यकताओं ने तथा विद्रोह कानून ने इस बात को निश्चित कर दिया कि अब से पालियामेण्ट की बैठक तीन वर्ष में केवल एक बार नहीं, अपितु प्रति वर्ष इसकी बैठक अवश्य होनी चाहिए। नये त्रैवार्षिक कानून का प्रयोजन इस बात को निश्चित करना था कि अब भविष्य में लम्बी पालियामेण्ट नहीं होगी, अपितु प्रति तीन वर्ष में एक साधारण निर्वाचन होना चाहिए ताकि पालियामेण्ट के निर्वाचन क्षेत्रों के साथ सम्पर्क में स्थापित करने का कार्य निश्चित रूप से हो सके।

इन व्यवस्थाओं के बारे में एक विद्यार्थी को सबसे अधिक विलक्षण लगने वाली बात इन व्यवस्थाओं का असाधारण सामूलीपन है। एक बिलकुल नये संविधान को राजनीतिक सिद्धान्तों की क्रान्तिकारी घोषणाओं के साथ विस्तृत रूप में तैयार नहीं किया गया था, न्यूनतम परिवर्तन किये गये थे और स्वरूप की दृष्टि से ये बड़े मामूली थे। किन्तु ये अपने प्रयोजन के लिए पर्याप्त थे। उन्होंने पालियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता को स्थापित किया।

धार्मिक मामलों में परिवर्तन भी इसी प्रकार बहुत मामूली थे। पुनः स्थापना के काल की भाँति, इस समय भी डिसेण्टर लोगों को राष्ट्रीय चर्च में वापस लाने के लिए एक धार्मिक सहिष्णुता के कानून की कुछ चर्चा थी। किन्तु अब खाई बहुत अधिक चौड़ी हो चुकी थी और इस समय जिन व्यक्तियों को समझौते के लिए तैयार करना अधिक महत्त्वपूर्ण था, वे धार्मिक संस्कारों को अत्यधिक महत्त्व देने वाले कट्टर पन्थी व्यक्ति बड़ी कठिनाइयाँ पैदा कर देते। चूंकि उनकी पर्याप्त संख्या, कैण्टरबरी का आर्कबिशप, साधु स्वभाव बिशप केन और पेरिश चर्च के कई सौ पादरी नये राजाओं के प्रति राजभक्ति की शपथ लेने के लिए अपने अन्तः-करणों को तैयार नहीं कर सके, अतः उन्होंने अपना काम छोड़ दिया। वे शपथ न ग्रहण करने वाले (NonJurors) के नाम से प्रसिद्ध हुए। जिन व्यक्तियों ने शपथ ली, उनमें से भी अनेक निश्चित रूप से नये राज्य के विरोधी थे: कहीं ये व्यक्ति खुल्लमखुल्ला विरोध करने के लिए बाधित न हो जाँय, अतः डिसेण्टर लोगों के लिए बहुत कम काम किया गया। एक **सहिष्णुता कानून** पास किया गया (१६८९ ई०)। इसने त्रित्व (Trinity) का सिद्धान्त स्वीकार करने वाले सभी व्यक्तियों को उपासना की स्वतन्त्रता प्रदान की, बशर्ते कि वे एक मजिस्ट्रेट द्वारा

आवश्यक समझे जाने पर, राजा और रानी के प्रति राजभक्ति की शपथ लें और इस बात से इन्कार करें कि इस राज्य के भीतर "किसी विदेशी राजा का अथवा पोप के प्रतिनिधि (Prelate) का क्षेत्राधिकार है ।" सिद्धान्ततः इसने रोमन कैथोलिकों को निस्सारित कर दिया । किन्तु व्यवहार में उनके साथ कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया गया; यदि वे ठीक ढंग से व्यवहार रखते थे तो उनसे शपथ नही खिलायी जाती थी । किन्तु न तो **कार्पोरेशन कानून** और न ही **टेस्ट कानून** रद्द किये गये, सिद्धान्त रूप से इन्होने सभी असैनिक तथा सैनिक पदों से डिसेण्टर लोगों को तथा रोमन कैथोलिकों को निस्सारित कर दिया, क्योकि इन कानूनों के अनुसार पद ग्रहण करने वाले के लिए एंग्लिकन पद्धति का धार्मिक संस्कार कराना आवश्यक था । फिर भी, व्यवहार में इन प्रतिबन्धों की बड़ी मात्रा में अवहेलना की जाती थी । अनेक डिसेण्टर लोगों ने केवल पद पाने के लिए ही, धार्मिक संस्कार को ग्रहण किया । १७२७ ई० के बाद से, प्रति वर्ष उन व्यक्तियों के लिए एक **'दण्ड मुक्ति अधिनियम'** (Act of Indemnity) पास किया गया, जो इन कानूनों की व्यवस्थाओं का पालन करने में विफल हुए थे । यह एक लंगड़ी और दुविधापूर्ण सहिष्णुता थी, इस प्रकार प्रदान की गयी यह सहिष्णुता उससे भी कम थी जो जेम्स द्वितीय ने अपनी 'दण्ड मुक्ति की घोषणा' में प्रदान की थी । किन्तु यह प्रभावशाली थी और सहमति पर टिकी हुई थी । धार्मिक संस्कारों तथा कर्मकाण्ड पर बल देने वाले हाई चर्च (High church) के व्यक्ति भी सहिष्णुता को स्वीकार करते थे, यद्यपि वे उसे पसन्द नहीं करते थे । वे इससे भी कम मात्रा में यह पसन्द करते थे कि टेस्ट कानून से लगातर बचा जाय, जैसा कि उन्होंने रानी एन के राज्यकाल में प्रबल होने पर उस समय प्रदर्शित किया था जबकि उन्होंने कभी कभी चर्च के साथ अनुकूलता दिखाने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए एक कानून को बनाने का प्रस्ताव किया और अन्त में उसे पास करवा लिया ।

फिर भी, एक अन्य परिवर्तन, यदि यह सम्भव होता तो इससे भी अधिक महत्वपूर्ण था । यह परिवर्तन कानून बना कर नहीं, किन्तु केवल कानून बनाने के कार्य को न करके ही किया गया । **अनुज्ञा देने वाले कानून** (Licensing Act) का एक संशोधित रूप में भी नवीकरण नहीं किया गया ।[१] इसका परिणाम यह था कि प्रेस की सेन्सरशिप बिलकुल लुप्त हो गयी । राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए स्वतन्त्र प्रेस की अपेक्षा कोई अन्य बात अधिक आवश्यक नहीं है और राष्ट्र में राजनीतिक समस्याओं के लिए क्रियाशील दिलचस्पी उत्पन्न करने के लिए इससे अधिक निश्चित कोई दूसरी वस्तु नही है । क्रान्ति के समय पुस्तिकाओं से तथा इन समाचार पत्रों से सार्वजनिक प्रश्नों के उत्कण्ठापूर्ण और उत्साहपूर्ण वादविवाद का वह पुनरुज्जीवन हुआ, जो प्यूरिटन गणराज्य के समय में कुछ काल के लिए तथा निस्सारण बिल पर गरमागरम बहस के एक अन्य मध्यान्तर में कुछ समय के लिए हुआ था । यह प्रवृत्ति फिर कभी समाप्त नही होनी थी । इसके बाद से राजनीतिक कार्यों या प्रश्नों का निर्धारण तथा राष्ट्र के मानस का निर्माण भी लगभग इतनी ही मात्रा में पार्लियामेण्ट से बाहर के लेखकों से प्रभावित होने लगा, जितना यह इसकी दीवारों के भीतर दी जाने वाली वक्तृताओं

१. ऊपर देखिए प्रथम अध्याय

से होता था। इस विषय में इंग्लैण्ड तथा ब्रिटिश कामनवेल्थ के अन्य सदस्य यूरोप के लगभग सभी बड़े राज्यों से एक शताब्दी या इससे भी अधिक आगे थे।

१६८६ ई० में तथा अगले वर्षों में जो सवैधानिक परिवर्तन किये गये थे, उनका अत्यल्प विस्तार १७०१ ई० के व्यवस्था कानून या एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट (Act of Settlement) में किया गया। यह कानून प्रधान रूप से रानी एन के बाद उत्तराधिकार के क्रम को निश्चित करने के लिए तथा इसे जेम्स प्रथम की कन्या-एलिजाबेथ के हनोवर वंश में निश्चित करने के लिए पास किया गया। किन्तु इस अवसर का उपयोग कुछ अन्य सिद्धान्त स्थापित करने के लिए भी किया गया, ये क्रान्ति की मुख्य व्यवस्था या समझौते के लिए एक प्रकार के परिशिष्ट का निर्माण करते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि विलियम तृतीय की उग्र विरोधी टोरी पार्लियामेण्ट ने इस एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट को पास किया था। इसकी अनेक व्यवस्थाएँ राजा पर अत्यल्प मात्रा में प्रच्छन्न आक्रमण थीं, जैसे कि वह धारा जिसमें यह व्यवस्था की गयी थी कि भावी राजाओं को पार्लियामेण्ट की अनुमति के बिना देश नही छोड़ना चाहिए। किन्तु टोरियों के लिए राजकीय सत्ता को नियन्त्रित करना एक नयी बात थी। एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट (Act of Settlement) की दो धाराएँ विशेष रूप से वर्णनीय हैं। एक में यह व्यवस्था की गयी थी कि आज से न्यायाधीश अपने पदों पर आजीवन बने रहने चाहिए, बशर्ते कि उन्हें पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों के एक प्रस्ताव के द्वारा पदच्युत न कर दिया जाय। इसने न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को सुरक्षित बना दिया और स्टीवर्टों के शासन काल में सामान्य बन जाने वाली उन जजों को पदच्युत करने की परिपाटी का निषेध कर दिया, जो राजा को नापसन्द होने वाले निर्णय देते थे। यह एक अतीव महत्त्वपूर्ण सुधार था। दूसरी धारा का उद्देश्य लाभदायक पदों पर पार्लियामेण्ट के सदस्यों की नियुक्ति द्वारा कामन्स सभा पर राजकीय प्रभाव के विस्तार को रोकना था। इसने केवल यही व्यवस्था की थी कि रानी एन की मृत्यु के बाद ताज के नीचे काम करने वाले पदाधिकारी व्यक्ति पार्लियामेण्ट में बैठने के लिए अयोग्य नही होने चाहिए। यदि यह धारा लागू हो जाती, तो यह पार्लियामेण्ट में मन्त्रियों की उपस्थिति रोक देती और अन्त में पार्लियामेण्ट की शक्ति को बहुत घटा देती। किन्तु १७०७ ई० में एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट (Act of Settlement) के लागू होने से पहले ही इसे रद्द कर दिया, १७०७ ई० का **सरकारी पद अधिनियम** (Place Act) ब्रिटिश शासन पद्धति के विकास में अत्यधिक महत्त्व रखता है। इसने यह व्यवस्था की कि पदों पर नियुक्त होने वाले सभी व्यक्तियों को पार्लियामेण्ट में अपनी सीट खाली कर देनी चाहिए।[1] किन्तु १७०५ ई० से पहले बनाये गये

१. प्रसंगवश इस कानून ने पहली बार पार्लियामेण्ट के सदस्य के लिए अपनी सीट से त्यागपत्र देना सम्भव बनाया। पहले यह अवैध था। अब सदस्य राजा के नीचे लाभ के किसी पद के लिए आवेदन पत्र दे सकता था और इस प्रकार अपनी सीट खाली कर देता था। यही कारण है कि जो सदस्य त्यागपत्र देना चाहते हैं, उन्हें चिल्टर्न हण्ड्रेडस के व्यवस्थापक के पद के लिए (अथवा ऐसे ही किसी अन्य राजकीय पद के लिए) आवेदन-पत्र देना पड़ता है, निस्सन्देह वे इस पद को भी वे उसी समय छोड़ देते हैं जब कि उनका प्रयोजन पूरा हो जाता है।

पदों पर विद्यमान व्यक्तियों को अपना पद छोड़े बिना पुनर्निर्वाचन की अनुमति दे दी गयी, १७०५ ई० के बाद बनाये गये पदों को रखने वाले व्यक्ति किसी भी प्रकार पार्लियामेण्ट के सदस्य नहीं हो सकते थे। इस प्रकार पार्लियामेण्ट के सदस्यों द्वारा ग्रहण किये जा सकने वाले और न ग्रहण किये जा सकने वाले पदों में एक मोटा भेद किया गया। यह हमारी उस आधुनिक परिपाटी की दिशा में पहला पग था, जिसके अनुसार राज्य के बड़े विभागों के अध्यक्ष सदैव पार्लियामेण्ट के सदस्य होते हैं और इसकी आलोचना का विषय बनते हैं, जब कि छोटे-छोटे अधिकारी पार्लियामेण्ट से बाहर रहते हैं।

४. सरकार और पार्लियामेण्ट के बीच के सम्बन्ध

एक्ट ऑफ़ सेटिलमेण्ट (Act of Settlement) में सरकारी पदाधिकारियों के विरुद्ध बनायी गयी धारा यह प्रदर्शित करती है कि क्रान्ति के समय के कानून निर्माताओं के सम्मुख केबिनेट शासन की आधुनिक पद्धति जैसी किसी वस्तु की कल्पना नही थी। इस पद्धति का मूल तत्त्व यह है कि मुख्य मन्त्री पार्लियामेण्ट के सदस्य होते हैं तथा इसके प्रति उत्तरदायी होते हैं। यह पद्धति १७०७ ई० के कानून द्वारा सम्भव बनायी गयी। किन्तु यह शनैः-शनैः और रिवाज से विकसित हुई, इसका कानून द्वारा कभी निर्माण नहीं हुआ। ब्रिटिश संस्थाओं की यह विशेषता है कि वे रिवाज के अर्ध-अचेतन कार्य से विकसित और परिवर्तित होती हैं; और इस पद्धति का अलिखित अंश लिखित अंश की अपेक्षा कही अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। क्रान्ति के समझौते के बारे में पहले जो कुछ कहा गया है वह इसे स्पष्ट करता है। इसने जो कानूनी परिवर्तन किये वे स्वरूप की दृष्टि से बहुत मामूली थे, किन्तु वास्तविकरूप से ये परिवर्तन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण थे। वे पार्लियामेण्ट की सर्वोच्च सत्ता की स्थापना से कुछ कम नहीं थे, यद्यपि इस विषय में किसी भी कानून में एक भी शब्द नहीं कहा गया है।

विलियम तृतीय के राज्यकाल में पहले से ही शनैः शनैः एक महान् परिवर्तन हो रहा था, क्योंकि यह आवश्यक था कि सरकार के पार्लियामेण्ट के साथ अच्छे सम्बन्ध होने चाहिएँ और क्योंकि अब पार्लियामेण्ट स्पष्ट रीति से दो पृथक् दलों में विभक्त थी, अत यद्यपि राजा को नाम मात्र में अपनी इच्छानुसार किसी भी मन्त्री को चुनने की स्वतन्त्रता थी, तथापि क्रियात्मक रूप से परिस्थितियों की शक्ति से बाधित होकर उसे अपने मन्त्री उस दल से चुनने पड़ते थे, जिसका कामन्स सभा में बहुमत हो। विलियम तृतीय ने बिल्कुल स्वाभाविक रीति से अपनी सरकार में दोनों दलों के सर्वोत्तम व्यक्तियों को लाने का प्रयत्न आरम्भ किया, किन्तु उसने यह अनुभव किया कि इससे काम अच्छी तरह नहीं चलता, क्योंकि इसका यह आशय था कि उसके मन्त्री आसानी से सहयोग नहीं करते थे। चूंकि उसकी पहली दो पार्लियामेण्टों में ह्विग दल का बहुमत था, अत: उसे यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह टोरी मन्त्रियों के स्थान पर ह्विग मन्त्री नियत करे और १६९६ ई० तक मुख्य मन्त्री इतने पूर्ण रूप से ह्विग थे कि वे ह्विगसत्तार्थी गुट (Whig Junta) के नाम से प्रसिद्ध थे। किन्तु जब १६९८ ई० में और उसके बाद के वर्षों में टोरियों को बहुमत प्राप्त हुआ और इसलिए पार्लियामेण्ट जब अपना समय ह्विग मन्त्रियों पर दुर्भावनापूर्ण आक्रमणों में व्यय करने लगी

तो विलियम को यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह ह्विग लोगों के स्थान पर टोरियों को नियुक्त करे। सरकारें, अधिकाधिक मात्रा में, अनिवार्य रूप से कुछ समय के लिए कामन्स सभा के स्वरूप एवं सम्मतियों को प्रतिबिम्बित करने लगीं; पार्टी पर आधारित भावी कैबिनेट पद्धति का एक अस्पष्ट सा पूर्वरूप आविर्भूत होने लगा, यद्यपि इसके पूर्ण होने मे अभी बहुत देर थी।

इसका यह आशय नहीं है कि मन्त्रियों का समूह सदैव साथ मिल कर कार्य करने वाली वैसी उत्तरदायी सरकार का निर्माण करता था जैसी सरकार के हम अभ्यस्त है, यद्यपि उसकी प्रवृत्ति इस दिशा में थी। इसका यह भी अर्थ नहीं है कि राजा अब निर्णायक तत्व नहीं रहा था। विलियम तृतीय के समय में स्थिति इससे बहुत कुछ विपरीत थी। विदेश नीति के क्षेत्र में वह विशेष रूप से बिल्कुल स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करता था, इस क्षेत्र में सामान्यत. वह पार्लियामेण्ट की बात तो दूर रही अपने मन्त्रियों से भी परामर्श नहीं करता था। इसका एक उल्लेखनीय प्रदर्शन उस समय हुआ जब स्पेनिश प्रदेशों के बँटवारे के लिए फ्रांस के साथ प्रथम विभाजन सन्धि करने के बाद उसने अपने मन्त्रियों को अपने द्वारा किये गये कार्य की रूपरेखा मात्र की सूचना दी और उनसे यह अपेक्षा रखी कि वे एक अज्ञात सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए अज्ञात व्यक्तियों को अधिकार देने वाले, एवं उचित रीति से राजकीय महामुद्रा से अंकित कोरे आदेश पत्र को उसके पास भेज दें। १७०१ ई० में टोरी पार्लियामेण्ट ने इस बात के लिए सहमत होने के कारण महानतम ह्विग नेता सोमर्स पर तथा उसके दो साथियों पर महाभियोग चलाया। विदेश नीति पर, किसी भी प्रकार पार्लियामेण्ट ने इस बात के अतिरिक्त अभी तक कोई प्रभावशाली नियन्त्रण प्राप्त नहीं किया था कि इसे अपने द्वारा नापसन्द की गयी किसी नीति के लिए धन देने से इन्कार करने का अधिकार था। यह पर्याप्त नहीं था, क्योंकि देश की प्रतिष्ठा को बड़ी आसानी से एक ऐसी सन्धि से हानि पहुँचायी जा सकती थी, जिस सन्धि पर उस दशा में कभी हस्ताक्षर नहीं होते, यदि पहले से ही इसकी शर्तों पर विचार हो गया होता।

इस प्रकार क्रान्ति द्वारा की गयी व्यवस्था के अनुसार राजा की शक्तियाँ अब भी महान् थीं। विलियम तृतीय यद्यपि अपने पर लगायी गयी पाबन्दियों को निष्ठापूर्वक स्वीकार करता था, तथापि वह अपनी सत्ता पर लगाये गये प्रतिबन्धों के कारण अत्यधिक रुष्ट था। कई बार, विशेषतः उस समय जब टोरियों ने १६९८ तथा १६९९ ई० में उसके डच मित्रों पर दुर्भावनापूर्ण हमले किये तो उसने देश छोड़कर हालैण्ड चले जाने की धमकी दी। वह अवश्य ऐसा कर लेता यदि वह उन वैदेशिक मामलों में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लेने में समर्थ न होता, जिन मामलों का उसे पूरा ज्ञान था और जिनके विषय मे ह्विग अथवा टोरी दल के किसी भी इंग्लिश राजनीतिज्ञ को क्रियात्मक रूप मे कोई वास्तविक ज्ञान नहीं था। वह अपनी पत्नी के मृत्यु के बाद विशेष रूप से एकाकी प्राणी था और इंग्लैण्ड मे कभी लोकप्रिय नहीं हुआ। उस पर एक डच और विदेशी व्यक्ति होने के कारण अविश्वास किया जाता था, **व्यवस्था कानून** (Act of Settlement) की आधी व्यवस्थाएँ उस पर तथा उसकी नीति पर प्रच्छन्न व्यंग्य थी। वह हालैण्ड के सिवाय अन्यत्र कभी पूर्णरूप से सुखी नहीं रहा। उसने इंग्लैण्ड के किसी व्यक्ति पर अपना पूर्ण विश्वास कभी नहीं किया। महान् व्यक्ति होते हुए भी,

सम्भवतः अपने नवीन प्रजाजनों के साथ सहानुभूति का न रखना इंग्लिश स्वतन्त्रता के लिए उसकी प्रमुख देनों में से एक है, क्योंकि इसने ह्विगों की अपेक्षा टोरियों को सदैव इस बात के लिए सावधान बनाये रखा कि वे राजकीय सत्ता में किसी भी वृद्धि पर रोष प्रकट करें और उसे रोकें।

५. स्काटलैण्ड में क्रान्ति के बाद की व्यवस्था और इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के एंग्लो-स्काटिश सम्बन्धों पर इसके प्रभाव

चार्ल्स प्रथम के विरुद्ध संघर्ष में स्काटलैण्ड ने शुरू में अधिकतम सक्रिय भाग लिया था। यह सम्भव है कि यदि यह कार्य न होता तो चार्ल्स की और स्ट्रैफ्फोर्ड की पद्धति शायद विजयी हो जाती। जेम्स द्वितीय के विरुद्ध संघर्ष में स्काटलैण्ड ने सीधा कोई भाग नहीं लिया, क्योंकि वह १६६० ई० से स्थापित की गयी पद्धति से और इस पद्धति द्वारा किये जाने वाले भीषण दमन से दबा दिया गया था। किन्तु जेम्स के पलायन का समाचार वहाँ जिस क्षण पहुँचा, उसी क्षण समूची पद्धति का पतन हो गया। जब एडिनबरा की भीड़ ने होलिरुड में चर्च को लूटा और दक्षिण-पश्चिम के किसानों ने बिशप-पद्धति मानने वाले पादरियों पर हमले किये, उस समय कुलीन एवं भद्र वर्ग की एक असेम्बली ने विलियम को शासन ग्रहण करने के लिए निमन्त्रण दिया और एक सम्मेलन (Convention) बुलाया गया। इसकी बैठक मार्च १६८९ में हुई।

इस सम्मेलन को स्काटिश इतिहास में अधिकतम महत्त्वपूर्ण कानूनों का निर्माण करने वाली विधान सभा कहा जाता है। इसमें जेम्स द्वितीय के अनुयायी-जैकोबाइट (Jacobite) सदस्यों ने शीघ्र ही अपने को असहाय पाया, इनमें से अनेक अपने घर वापस चले गये। इसके बाद अधिकारों की इंग्लिश घोषणा से सादृश्य रखने वाला एक **'अधिकार का दावा'** (Claim of Right) तैयार किया गया। इसमें जेम्स के कार्यों को अवैध ठहराते हुए उसकी निन्दा की गयी और इंग्लिश सम्मेलन के परिहारों (Evasions) के बिना यह घोषणा की गयी कि उसने राजमुकुट को खो दिया है और इसने इस मुकुट को विलियम तथा मेरी को प्रस्तुत किया। सम्मेलन ने बिशप पद्धति की भी निन्दा की और सबसे अधिक उल्लेखनीय उस परिवर्तन की भी निन्दा की, जिसके अनुसार पार्लियामेण्ट का कार्य तैयार करने के लिए लार्ड्स ऑफ आर्टिकल्स (Lords of the Articles) नामक पदाधिकारियों को नियुक्त करने की परिपाटी चल पड़ी थी, उसी की सहायता से सभी स्टीवर्ट राजाओं ने पार्लियामेण्ट को अपना साधन मात्र बना लिया था। व्यावहारिक रूप से इस नयी पद्धति को स्वीकार करने की शर्त पर ही विलियम तृतीय को राजमुकुट प्रदान किया गया था।

बाद की एक बैठक में सम्मेलन ने (यह अब नियमित पार्लियामेण्ट में परिणत हो चुका था) एक ऐसा क्रियाशील राजनीतिक जीवन आरम्भ किया, जैसा इससे पहले स्काटिश पार्लियामेण्ट के इतिहास में कभी नहीं हुआ था, इसने स्वतन्त्रता के साथ सरकार की आलोचना की। स्काटलैण्ड में पहली बार राष्ट्रीय स्वशासन एक वास्तविक रूप धारण कर रहा था। विवाद का प्रधान विषय चर्च का पुनः संगठन था, अन्त में इसका निर्णय १६९८ ई० के एक कानून द्वारा किया गया, इससे पूरी प्रेसबिटेरियन व्यवस्था पुनः स्थापित हो गयी।

इस प्रकार स्काटलैण्ड को न केवल लोकतन्त्रीय रीति से शासित होने वाला ऐसा चर्च प्रदान किया गया, जिसे पहले उसे केवल अल्प मध्यान्तरों में ही रखने की अनुमति दी गयी थी, अपितु, उसे पहली बार ऐसी स्वतन्त्रता तथा स्वाधीन पार्लियामेण्ट से सम्पन्न किया गया, जिसका सरकार को निरन्तर सम्मान करना पड़ा और जिस पर ध्यान देना पड़ा तथा जिसने अपने को इंग्लिश पार्लियामेण्ट की भाँति साहसी और स्वतन्त्र प्रदर्शित करने में समर्थ सिद्ध किया। यह स्वतन्त्रता ग्लैन्को हत्याकाण्ड पर विवाद के समय प्रकट हुई।

किन्तु इस विकास का एक ऐसा पहलू था जो महत्त्वपूर्ण परिणाम उत्पन्न कर सकता था। जब तक स्काटिश पार्लियामेण्ट इंग्लिश राजा के पूर्ण नियन्त्रण में थी, जैसा कि १६८० ई० से था, तब तक स्काटिश नीति के इंग्लिश नीति के साथ संघर्ष में आने का कोई भय नहीं था। किन्तु उस समय यह भय वास्तविक हो गया जब स्काटलैण्ड अपनी नीति का अनुसरण करने में समर्थ एक प्रभावशाली राज्य बन गया और यह भय शीघ्र ही प्रकट हो गया। यह इतना गम्भीर हो गया कि इसने चिरकाल से दोनों देशों को संयुक्त बनाने वाले बन्धन के लिए खतरा पैदा कर दिया।

इस भय के पराकाष्ठा पर पहुँचने का कारण व्यापारिक प्रतिस्पर्धा थी और यह बात महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि वस्तुतः व्यापारिक विशेषाधिकारों के प्रश्न ही ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के भीतर रहने वाली जनताओं के भाई-चारे के लिए सबसे अधिक खतरनाक रहे हैं। अपने व्यापारिक कानून रखने वाले एक पृथक् राज्य के रूप में विद्यमान स्काटलैण्ड के साथ इंग्लिश पार्लियामेण्ट ऐसा व्यवहार करती थी कि मानो वह एक विदेशी राज्य है। पुनः स्थापना के समय से उसने इंग्लैण्ड में व्यापार की उस स्वतन्त्रता का कभी उपभोग नहीं किया था, जो प्यूरिटन गणराज्य के समय में उसके बलपूर्वक किये गये एकीकरण की मुख्य क्षतिपूर्ति थी, उसे उपनिवेशों के साथ व्यापार के लाभ से तथा नौचालन कानूनों के लाभों से वंचित किया गया था। किन्तु अन्य देशों की भाँति स्काटलैण्ड भी दक्षिणी समुद्रों के समृद्ध व्यापार में हिस्सा पाने के लिए उत्सुक था। १५९५ ई० में उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों (Tropics) के साथ व्यापार करने के लिए एक स्काटिश कम्पनी बनायी गयी। इसमें इंग्लिश पूँजी बहुत बड़ी मात्रा में लगी हुई थी। पहले इसने ईस्ट इण्डीज की ओर अपना ध्यान दिया, किन्तु इसने इंग्लिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के मित्रों में इतनी अधिक ईर्ष्या उत्पन्न की कि इसको उसे छोड़ना पड़ा। इसके बाद पानामा के स्थल डमरूमध्य पर डेरियन में एक स्काटिश बस्ती स्थापित करने के लिए एक योजना बनायी गयी। अत्यल्प स्काटिश बचतों को इसमें अत्यधिक मात्रा में लगाया गया। १६९८ ई० में बस्ती बसाने वालों के दो दल भेजे गये। जैसा कि पहले से ही कल्पना की जा सकती थी कि इन पर एक स्पेनिश सेना ने आक्रमण किया और इन्हें हरा दिया। उपनिवेश बसाने का यह कार्य विफल हुआ, इसमें लगाया हुआ सारा धन नष्ट हो गया। अतः इसे एक कटु शिकायत बना दिया गया कि स्काटलैण्ड द्वारा निर्वाचित राजा विलियम ने उसमें किसी प्रकार की सहायता नहीं दी थी।

डेरियन अभियान की योजना ठीक तरह नहीं बनायी गयी थी और आरम्भ से ही इसकी विफलता निश्चित थी। पानामा का जल डमरूमध्य स्पेनिश साम्राज्य का केन्द्र था; अतः यह

बात अकल्पनीय थी कि स्पेन वहाँ किसी बस्ती को बसाने की अनुमति देगा। इसके अतिरिक्त यह अभियान दल अधिकतम अभागी घड़ी में यहाँ उस समय आया जब कि यह बात अत्यधिक महत्त्वपूर्ण थी कि पिछले युद्ध में **महान् मैत्री सन्धि** का एक सदस्य बना रहने वाले स्पेन के साथ अधिकतम उदारता का व्यवहार इस बात को देखते हुए किया जाना चाहिए था कि उस समय स्पेनिश प्रदेशों के भविष्य का निर्णय करने की आवश्यकता थी और महाशक्तियाँ इस पर उस समय विचार कर रही थीं। राजा को इस अभियान दल की अपेक्षा अधिक परेशान करने वाली कोई दूसरी वस्तु नहीं हो सकती थी। उसके पास इसे रोकने के लिए कोई साधन नहीं थे और कम से कम यह अन्तर्राष्ट्रीय सौजन्य का भीषण भंग था। इसने उस खतरे और असुविधा का एक विलक्षण उदाहरण प्रस्तुत किया जो सदैव उस समय उत्पन्न हो सकती थी, जब कि दो देश एक राजमुकुट से संयुक्त होने पर भी असंगत नीतियों का अनुसरण करने में स्वतन्त्र होते हैं।

दूसरी ओर स्काट लोगों को अनिवार्य रूप से यह प्रतीत हुआ कि उष्ण कटिबन्धीय व्यापार से उत्पन्न होने वाली सम्पत्ति में एक हिस्सा पाने में उनका आतुर प्रयास उस साझीदारी रखने वाले राष्ट्र के लोगों द्वारा विफल कर दिया गया है जो पहले से ही उस व्यापार से महान् लाभ प्राप्त कर रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि इंग्लैण्ड के साथ सम्बन्ध में केवल हानि ही थी और कोई लाभ नहीं था। पिछली शताब्दी पर सिंहावलोकन करते हुए यह तर्क किया जा सकता था कि स्काटलैण्ड जिन बुराइयों से पीड़ित है, उनमें से आधी बुराइयों का कारण यह तथ्य था कि स्काटलैण्ड का राजा इंग्लैण्ड का भी राजा है और वह छोटे राज्य को हानि पहुँचाने के लिए इंग्लैण्ड की साधन सम्पत्ति का प्रयोग कर सकता था। वस्तुतः वर्तमान सम्बन्ध अपरिवर्तित हुए बिना नहीं रह सकता था।

६. इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड का एकीकरण

विलियम तृतीय को इस बात का श्रेय प्राप्त है कि उसने इसे पूर्ण रूप से स्वीकार कर लिया कि दोनों देशों के हितों की दृष्टि से अब यह आवश्यक हो गया है कि दोनों देशों के बीच के सम्बन्धों में पुनः एक मौलिक सामंजस्य स्थापित किया जाय। स्काटिश सम्मेलन को भेजे गये प्रथम सन्देश में उसने इंग्लैण्ड के साथ एकीकरण के विचार की सराहना की थी। इंग्लिश पार्लियामेण्ट को भेजे गये अपने अन्तिम सन्देश में उसने इसे इस बात की प्रेरणा की थी कि वह एकीकरण के लिए कदम उठाये। विलियम के राज्यकाल के अन्त में यह प्रश्न आवश्यक हो गया था। इंग्लैण्ड की भाँति स्काटलैण्ड ने क्रान्ति के समय राज्य के उत्तराधिकारियों की वंश-परम्परा पहले संयुक्त रूप से विलियम और मेरी के लिए, इसके बाद उसके बच्चों के लिए, इसके बाद राजकुमारी एन और उसके बच्चों के लिए (एन ने डेन्मार्क के राजकुमार जार्ज से विवाह किया था) और इसके बाद विलियम के बच्चों के लिए निश्चित की थी, बशर्ते कि वह दूसरी बार विवाह करे। किन्तु विलियम और मेरी की कोई सन्तान नहीं थी, विलियम ने पुनः विवाह नहीं किया और एन के सभी बच्चे बचपन में ही मर गये। अतः यह निर्णय करना आवश्यक हो गया कि एन के बाद गद्दी पर कौन बैठे। १७०१ ई० में

इस व्यवस्था को करने के लिए एक व्यवस्था **कानून** (Act of Settlement) पास किया गया। इसने हनोवर वंश में उत्तराधिकार को निश्चित किया। किन्तु स्काट लोगों ने इससे सादृश्य रखने वाला कोई कानून पास नहीं किया। वे एक विभिन्न प्रकार की व्यवस्था करने के लिए स्वतन्त्र थे। वे निर्वासित स्टीवर्ट वंश वालों को भी वापस ला सकते थे। वे अपने मन की चंचल स्थिति में ऐसा पग उठा सकते थे, जिसका प्रतिकार सम्भव नहीं था। यह अत्यावश्यक था कि इस संकट का सामना किया जाय।

अत: १७०२ ई० में इंग्लिश सरकार और पार्लियामेण्ट ने इस प्रश्न के सबसे अधिक सन्तोषजनक हल के रूप में एकीकरण करने का निश्चय किया और दोनों पक्षों की ओर से आयुक्त नियुक्त किये गये। किन्तु स्काटलैण्ड में दो तत्त्व एकीकरण के विचार के विरोधी थे। एक तत्त्व जैकोबाइट (जेम्स द्वितीय के अनुयायी) लोग थे, ये स्टीवर्ट वंश के राजाओं को पुन: गद्दी पर बिठाना चाहते थे। दूसरा तत्त्व उग्र प्रेसबिटेरियन लोगों का था, यह स्काटिश चर्च की पद्धति पर एकीकरण के प्रभाव से आशंकित था। ये दोनों परस्पर विरोधी तत्त्व १७०२ ई० की स्काटिश पार्लियामेण्ट में एक बहुमत का नियन्त्रण करते थे। उनके पीछे लोकमत का ऐसा विशाल समूह था, जो भावना में तीव्र रूप से राष्ट्रवादी था, जो यह आशंका रखता था कि एकीकरण का यह अर्थ होगा कि स्काटलैण्ड इंग्लैण्ड द्वारा सादे ढंग से हड़प लिया जायगा।

इसका परिणाम यह हुआ कि एकीकरण की वार्ता कुछ समय के लिए निष्फल हो गयी। स्काटिश पार्लियामेण्ट ने **सुरक्षा अधिनियम** (Act of Security) के नाम से प्रसिद्ध एक कानून पास किया। इसने यह व्यवस्था की कि एन की मृत्यु पर, पार्लियामेण्ट को उसका उत्तराधिकारी नियुक्त करना चाहिए, किन्तु यह उत्तराधिकारी इंग्लैण्ड में उत्तराधिकारी बनने वाला व्यक्ति उस समय तक नहीं होना चाहिए, जब तक सरकार की ऐसी शर्तें निश्चित न हो जायँ और ऐसे कानून न बन जायँ, जो स्काटलैण्ड की पार्लियामेण्टों की स्वतन्त्रता को, इसके बार-बार होने वाले अधिवेशनों और शक्तियों को, धर्म को, राष्ट्र के व्यापार को और स्वतन्त्रता को इंग्लिश अथवा विदेशी प्रभाव से सुरक्षित न बनायें। एन की मृत्यु के बाद एक दूसरे कानून ने यह व्यवस्था की कि राजा को पार्लियामेण्ट की सहमति के बिना युद्ध की घोषणा करने से रोका जाना चाहिए। दोनों कानूनों पर राजा की स्वीकृति प्रदान की जानी थी। स्काटलैण्ड की मनोदशा इस समय खतरनाक थी। दोनों कानून धमकियाँ थीं। उन्होंने एक समाधान अथवा एकीकरण तक की सम्भावना का निस्सारण नहीं किया; किन्तु उन्होंने यह प्रदर्शित किया कि शीघ्र ही इस समस्या का समाधान किया जाना अत्यन्त आवश्यक था। इससे भी अधिक खतरनाक वह कानून था, जिसमें स्काटिश राष्ट्र के सामान्य शस्त्रीकरण की व्यवस्था की गयी थी। यह ऐसे समय में की गयी थी, जब इंग्लैण्ड फ्रांस के विरुद्ध एक महान् युद्ध में लगा हुआ था। इंग्लिश सरकार ने उत्तरी जिलों की नागरिक सेना को कार्य पर बुला कर इसका उत्तर दिया। इंग्लिश पार्लियामेण्ट ने कई प्रस्ताव पास करते हुए यह धमकी दी कि स्काटलैण्ड के साथ सभी मामलों में (विशेष रूप से व्यापार में) उस समय तक एक विदेशी राज्य का व्यवहार किया जाय, "जब तक कि एकीकरण न हो जाय अथवा इंग्लैण्ड की भाँति इसका उत्तराधिकार निश्चित न हो जाय।"

दो साथी राष्ट्रों में, इस प्रकार थोड़े समय के लिए, युद्ध की वास्तविक सम्भावना उस समय तक उत्पन्न हो गयी, जब तक कि वे परस्पर मित्रतापूर्वक रहने का रास्ता न ढूँढ लें। इस स्थिति के लिए आवश्यक था कि बड़ी सावधानी से इस मामले को निबटाया जाय। किन्तु एकीकरण के पक्ष में एक प्रबल तथ्य था। स्काटलैण्ड वाले औपनिवेशिक व्यापार में एक हिस्सा चाहते थे और एकीकरण उन्हें यह हिस्सा दे सकता था। अन्ततोगत्वा राष्ट्रमण्डल में पूरा हिस्सेदार होने के लाभ ने ही स्काट लोगों द्वारा अनुभव की जाने वाली कठिनाइयों पर विजय पा ली।

दोनों पक्षों की ओर से आयुक्त पुनः नियुक्त किये गये। पहले स्काट लोगों ने एक संघ-बद्ध एकीकरण (Federal union) का प्रस्ताव रखा। इंग्लिश लोग इसके लिए सहमत नहीं हुए। वे व्यापार की समानता को तभी स्वीकार करना चाहते थे, जब स्काटलैण्ड और इंग्लैण्ड एक पार्लियामेण्ट के नीचे एक संयुक्त राज्य के हिस्से बन जाँय। स्काटिश आयुक्तों ने यह बात इस शर्त पर मान ली कि उनके साथ एक न्यायपूर्ण वित्तीय समन्वय (Financial adjustment) किया जाय और स्काटिश धार्मिक पद्धति तथा स्काटिश कानून की पद्धति को (जो इंग्लैण्ड की कानून की पद्धति से व्यापक रूप से भिन्न थी और अब भी भिन्न है) अब भी अवश्य बनाये रखना चाहिए। इस आधार पर १७०६ ई० में **एकीकरण की सन्धि** के एक प्रारूप पर समझौता हो गया। इंग्लिश पक्ष ने दोनों बातों में प्रतिनिधित्व निश्चित करने में और संयुक्त राज्यों के भावी वित्तीय बोझों का बँटवारा करने में अधिकतम उदारता प्रदर्शित की। स्काटलैण्ड को १६ लार्ड तथा कामन्स सभा के ४५ सदस्य अथवा समूची सभा के १/११ सदस्य चुनने का अधिकार दिया गया, किन्तु उसे सामान्य आमदनी का केवल १/४० हिस्सा ही अदा करना था, उसे दिवालिया स्काटिश अफ्रीकन कम्पनी के हिस्सेदारों को देने के लिए तथा अन्य प्रयोजनों के लिए लगभग चार लाख पौण्ड मिलने थे। उसके चर्च की पद्धति और उसकी कानूनी पद्धति अपरिवर्तित बनी रहनी थी।

यह समझौता प्रशंसनीय रीति से न्यायपूर्ण था, किन्तु इसे अभी दोनों पार्लियामेण्टों द्वारा स्वीकार किया जाना था। स्वभावतः उस स्काटिश पार्लियामेण्ट में इसका अधिकतम विरोध हुआ, जिसको इसने समाप्त कर दिया था। एडिनबरा की उन्मत्त भीड़ द्वारा तथा देश के विभिन्न भागों में किये जाने वाले विरोध के अनन्त प्रदर्शनों के बीच में इस विषय पर वाद विवाद हुआ। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यदि इस समय राष्ट्र का जनमतसंग्रह किया जाता तो एक बड़ा बहुमत एकीकरण के विरुद्ध होता। फिर भी इसे जनवरी १७०७ ई० में स्काटिश पार्लियामेण्ट ने ४० के बहुमत से पास कर दिया, और मार्च तक यह समझौता इंग्लिश पार्लियामेण्ट में सब अवस्थाओं में से पार हो गया। १ मई, १७०७ ई० को इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड के पृथक् राज्य समाप्त हो गये और इनका स्थान ग्रेट ब्रिटेन के संयुक्त राज्य ने ले लिया।

ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास को विशिष्ट बनाने वाले राजनीतिक एकीकरणों की लम्बी शृंखला में यह दूसरा एकीकरण था। पहला एकीकरण १५३६ ई० में इंग्लैण्ड और वेल्स का एकीकरण था। यह सम्भव था कि एक संघ बना कर इस समस्या का समाधान

कुछ बातों में अधिक अच्छा हो सकता था, क्योंकि इसने स्काटलैण्ड की विशिष्ट विशेषताओं को अधिक पूर्णता के साथ अभिव्यक्ति प्रदान की होती। फिर भी, जिस प्रशंसनीय मृदु भावना के साथ इस एकीकरण को किया गया था, उसके कारण इसने एकसंघीय समाधान के अनेक वास्तविक लाभों को, इससे उत्पन्न होने वाली जटिलता के बिना ही प्राप्त कर लिया। एकीकरण के समय अथवा बाद में छोटे राष्ट्र की विशिष्ट परिपाटियों में हस्तक्षेप करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। उसने अपनी शिक्षा-पद्धति को, अपने कानूनों की पद्धति को और सबसे बढ़ कर अपने चर्च के संगठन की उस पद्धति को सुरक्षित बनाये रखा, जिसकी लोकतन्त्रीय पद्धति ने इसकी जनता को स्वशासन करने की कला में प्रधान रूप से प्रशिक्षण प्रदान किया था और जिसने उनमें ज्ञान का अतीव उत्कट प्रेम पोषित किया था। इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता कि इस प्रकार सम्पन्न की गयी घनिष्ठ और स्थायी साझेदारी दोनों देशों के लिए विस्तीर्ण होने वाले अवसरों के उस महान् युग में शक्ति का असीम स्रोत था, जो युग अब उनके सम्मुख उद्घाटित होने वाला था। किन्तु जिस हिस्सेदार ने सबसे अधिक फायदा उठाया, वह स्काटलैण्ड था। उसने राष्ट्रमण्डल में पूरा भाग लेकर असीम रूप से उससे कहीं अधिक प्राप्ति की, जिसे उसने अपनी स्वतन्त्र सत्ता का बलिदान करके खोया था, और वह द्रुतगति से बढ़ती हुई समृद्धि के युग में प्रवेश करने लगा।

७. आयरलैण्ड में क्रान्ति के बाद का समझौता और दण्डविधान

इंग्लैण्ड में और स्काटलैण्ड में विलियम तृतीय के आगमन और जेम्स द्वितीय के पलायन ने उन परिवर्तनों को सम्भव बनाया, जिन्हें दोनों राष्ट्र चाहते थे। आयरलैण्ड में आयरिश प्रजाजनों के समर्थन पर अवलम्बित रहने वाले जेम्स द्वितीय के भगोड़े के रूप में आगमन ने ही राष्ट्र के बहुमत की इच्छा को कार्यरूप में परिणत करने योग्य बनाया, यद्यपि यह स्थिति बहुत थोड़े समय के लिए थी। विलियम तृतीय की परवर्ती विजय शान्ति और राष्ट्रीय सन्तोष को नहीं लायी, अपितु उन सब बुराइयों की पराकाष्ठा को अपने साथ लायी, जिन बुराइयों से आयरलैण्ड समूची १७वीं शताब्दी में पीड़ित हो रहा था। दोनों द्वीपों में क्रान्ति के परिणामों में महान् अन्तर की अपेक्षा कोई भी वस्तु अधिक मार्मिक अथवा अधिक दुःखपूर्ण नहीं हो सकती थी।

जब जेम्स द्वितीय १६८९ ई० की वसन्त ऋतु में आयरलैण्ड गया तो आयरलैण्ड के कैथोलिकों ने यह अनुभव किया कि एक कैथोलिक राजा के शासन में रहते हुए उन्हें उन सब अन्यायों को दूर करने का अवसर मिल रहा है, जिन अन्यायों से वे अब तक पीड़ित थे। कुछ समय के लिए प्रोटेस्टेण्ट लोग एक ऐसी असहाय अल्पसंख्या में थे, जो डेरी में तथा एनिसकिल्लेन में ही घिरी हुई थी। क्रियात्मक रूप से केवल कैथोलिक सदस्य रखने वाली एक पार्लियामेण्ट ने पैंतीस कानून पास किये। इनसे इसने चार्ल्स द्वितीय के समय के भूमि के बन्दोबस्त को रद्द कर दिया, १६४१ ई० में विद्रोहियों से छीने गये प्रदेश उन्हें वापस कर दिये, रोमन कैथोलिक चर्च के लिए न केवल सहिष्णुता को, अपितु व्यावहारिक रूप से सर्वोच्च सत्ता

को सुरक्षित बना दिया गया। **पोयनिंग्स अधिनियम**[1] (Poynings Acts) का अन्त कर दिया, इंग्लिश और आयरिश प्रिवी कौंसिलों के प्रति आयरिश पार्लियामेण्ट की वशवर्त्तिता को समाप्त कर दिया गया। इन कानूनों ने आयरिश व्यापार पर लगाये गये सभी इंग्लिश प्रतिबन्धों को हटा दिया। यदि इस प्रकार की रूपरेखा रखने वाला समझौता स्थायी होता तो आयरलैण्ड वस्तुत: एक स्वतन्त्र देश बन जाता। जेम्स द्वितीय बड़े भय के साथ इसे स्वीकार करता था। वह जानता था कि आयरिश पार्लियामेण्ट का कार्य इंग्लैण्ड की गद्दी को पुन: प्राप्त करने के उसके अवसरों को नष्ट कर रहा था। वस्तुत:, आयरलैण्ड में इस कैथोलिक क्रान्ति की अतीव साहसिकता ने इस देश को पुन: जीतना इंग्लिश लोगों के लिए जीवन और मरण का मामला बना दिया, क्योंकि वे यह नहीं चाहते थे कि इंग्लैण्ड के विध्वंस के लिए और यूरोप में फ्रांस की प्रभुता की स्थापना के लिए आयरलैण्ड लुई १४वें के हाथों में एक औज़ार बने। यह आयरलैण्ड के लिए एक दु:खपूर्ण दुर्भाग्य था कि उसे अपनी शिकायतों का निराकरण एक ऐसी शक्ति पर निर्भर प्रतीत होता था, जो नि:सन्देह समग्र रूप से यूरोप की तथा इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड की स्वतन्त्रताओं के लिए एक खतरा थी।

बोयने की लड़ाई के पश्चात् तथा जेम्स द्वितीय के पलायन के बाद, आयरिश कैथोलिकों ने यह अनुभव किया कि विजय असम्भव थी। शायद इस समय विलियम तृतीय के लिये यह सम्भव होता कि वह एक उदारतापूर्ण माफी द्वारा और चार्ल्स द्वितीय के समय में विद्यमान परिस्थितियों की पुन: स्थापना द्वारा शान्ति को स्थापित कर सकता। किन्तु आतंक के एक भीषण दु:स्वप्न को अभी हटा देने के बाद आयरिश प्रोटेस्टेण्ट बदले पर तथा अपना निष्कण्टक उत्कर्ष सुरक्षित बनाये रखने पर तुले हुए थे। अत: इस अवसर को गँवा दिया गया और लड़ाई थका देने वाले ढंग से लिमरिक के आत्मसमर्पण तक घिसटती चली गयी। **लिमरिक की सन्धि** द्वारा जिन शर्तों का वचन दिया गया था वे शर्तें अब भी शान्ति और समझौते का आधार बन सकती थीं, बशर्ते कि उनकी उदार व्याख्या की जाती। किन्तु उनका शाब्दिक पालन भी नहीं किया गया। अब आरम्भ होने वाले निर्दय अत्याचार के युग का श्रीगणेश करने के दोष को इंग्लैण्ड की प्रभुसत्ता को लागू करने के लिए दृढ़ निश्चयवाली इंग्लिश पार्लियामेण्ट के तथा उन आयरिश प्रोटेस्टेण्टों के बीच में बाँटा जाना चाहिए जो इस बात का निश्चय कर चुके थे कि कैथोलिकों को सदा के लिए पंगु बना दिया जाय।

इस विषय में पहला कदम इंग्लिश पार्लियामेण्ट द्वारा उठाया गया। १६६२ ई० में, आयरिश पार्लियामेण्ट के अधिकारों की उपेक्षा करते हुए इसने एक कानून पास किया। इसके

---

१. १४६५ ई० में आयरलैण्ड के लार्ड डिप्टी अथवा वायसराय एडवर्ड पायनिंग द्वारा बुलाई गयी आयरिश पार्लियामेण्ट ने यह कानून पास किया था कि आयरलैण्ड में इंग्लैण्ड की महामुद्रा से अंकित आदेश-पत्र के अतिरिक्त कभी भी पार्लियामेण्ट नहीं बुलायी जा सकती है और आयरिश पार्लियामेण्ट द्वारा पास किये गये सभी बिलों को कानून बनाये जाने से पहले प्रिवी कौंसिल में अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा अब से इंग्लैण्ड में बनाये गये सभी सामान्य कानून आयरलैण्ड में भी लागू होंगे। इसे **पायनिंग्स कानून** कहा जाता है। इसको १७८२ ई० में रद्द कर दिया गया था।

अनुसार यह आवश्यक बना दिया गया कि आयरलैण्ड मे सभी सरकारी अधिकारियों को और पार्लियामेण्ट के सभी सदस्यों को सर्वोच्च सत्ता की एक शपथ (Oath of Supremacy) लेनी चाहिए और तत्वपरिवर्तन के सिद्धान्त (Transubstantiation) के विरुद्ध घोषणा करनी चाहिए। इससे निःसन्देह सब कैथोलिक निस्सारित कर दिये गये। इस कानून की सबसे बड़ी उल्लेखनीय विशेषता यह थी कि इसने शान्ति पूर्वक आयरिश पार्लियामेण्ट से आयरलैण्ड के लिए कानून बनाने का अधिकार ले लिया। अब तक कभी ऐसे अधिकार का दावा नहीं किया गया था। बाद में आयरिश प्रोटेस्टेण्टों ने भी इस दावे का जोश के साथ विरोध किया। किन्तु इस अवसर पर इन्होंने कोई आपत्ति नहीं की। इस प्रकार उन्होंने भविष्य में अपनी स्थिति को निर्बल बना दिया। इसका कारण यह था कि इतिहास मे पहली बार इस कानून ने कैथोलिकों को आयरिश पार्लियामेण्ट से निस्सारित कर दिया और इस प्रकार सारी राजनीतिक शक्ति प्रोटस्टेण्ट अल्पसंख्यकों के हाथों में सौंप दी।

उन्होंने अपनी शक्ति का उपयोग सुदृढ़ रूप से अत्याचार की ऐसी पद्धति का श्रीगणेश करने में किया, जो यद्यपि वैसी कठोर तो नहीं थी जैसी कठोर पद्धति से लुई १४वाँ फ्रेन्च ह्यूगनाटों का दमन कर रहा था; तथापि वह बिल्कुल अद्वितीय थी, क्योंकि यह एक अल्पमत द्वारा राष्ट्र के बहुमत पर थोपी गयी थी। यद्यपि १६६२ और १६६५ ई० मे पार्लियामेण्ट के अधिवेशन हुए, फिर भी १६६७ ई० तक ही पार्लियामेण्ट ने लिमरिक की सन्धि की सम्पुष्टि का कार्य किया। यह विलम्ब अपने आप में महत्त्वपूर्ण था। इससे भी महत्त्वपूर्ण यह तथ्य था कि जब यह सम्पुष्टि की गयी तो इसे स्पष्ट रूप से उन्हीं धाराओं तक सीमित कर दिया गया, जो "आयरलैण्ड मे राजा-रानी के प्रजाजनों की सुरक्षा और कल्याण के साथ संगत थी"। इसका क्या अभिप्राय था, यह पहले कानूनों द्वारा प्रदर्शित किया जा चुका था। वस्तुतः लिमरिक की सन्धि को कागज का रद्दी टुकड़ा समझा गया, और आयरलैण्ड में क्रान्ति का समझौता इस तथ्य से दूषित हो गया कि यह भीषण विश्वासघात पर आधारित था। कोई भी बात इसकी उग्रता को कम नहीं कर सकती थी। यह राजनीतिक दृष्टि से उतना ही अबुद्धिमत्तापूर्ण कार्य था, जितना बौद्धिक दृष्टि से अन्यायपूर्ण था।

इस बीच में १६९५ ई० के पहले अधिवेशन में एक बीभत्स दण्ड विधान की नींव डाल दी गयी थी। निःसन्देह, १६८९ ई० में जेम्स द्वितीय की पार्लियामेण्ट के सभी कानूनों को रद्द कर दिया गया था। इस पार्लियामेण्ट के प्रलेखों तक को भी विध्वंस किये जाने का आदेश दिया गया था। नये कानूनों ने यह व्यवस्था की थी कि किसी कैथोलिक को स्कूलों मे अथवा निजी गृहों में पढ़ाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। कोई भी बच्चे कैथोलिकों के साथ मे शिक्षित किये जाने के लिए विदेश नहीं भेजे जा सकते थे। इनके विदेश मे जाने का दण्ड इनकी जमीनों और सामान की जब्ती करना था। इसका आधा भाग सरकार को इसकी सूचना पहुँचाने वाले को मिलना था। मुखबिरों के घृणित प्रोत्साहन द्वारा भी इतनी कठोर व्यवस्था को पूरी तरह से लागू नहीं किया जा सका। सामान्य शिष्टाचार इसका निषेध करता था, और सम्पन्न वर्गों के आयरिश कैथोलिक बच्चे अपने पिताओं के धर्म में शिक्षित होते रहे। किन्तु जहाँ तक यह

कानून सक्रिय था—और यह बड़ी मात्रा में क्रियाशील था— वहाँ तक आयरिश कैथोलिक जनता को अज्ञानी बने रहने का, भयंकर अध: पतन का और पाशविकता का ऐसा दण्ड दिया, जो अनिवार्य अज्ञान का परिणाम होता है। किसी भावी कैथोलिक विद्रोह को रोकने के लिए कैथोलिकों के लिए शस्त्र रखने का अथवा ५ पौण्ड से अधिक मूल्य का घोड़ा रखने का निषेध कर दिया गया। कोई भी प्रोटेस्टेण्ट एक कैथोलिक को ५ गिनी देकर उसका घोड़ा कानूनी रूप से लेने का अधिकार रखता था।

१६६७ ई० में दण्ड विधान को और भी अधिक कठोर बनाया गया। सब रोमन कैथोलिक बिशपों और पुरोहितों को राज्य से निर्वासित किया गया, इन्हें शरण देने वालों के लिए कठोर दण्ड निश्चित किये गये। इसका उद्देश्य आयरलैण्ड के कैथोलिक मत को नष्ट करना था; परन्तु इसने ऐसा नहीं किया। पुरोहित जल्दी वापस लौट आये। किन्तु इसने प्रत्येक आयरिश कैथोलिक परिवार को मुखबिरों की दया पर छोड़ दिया। कैथोलिकों और प्रोटेस्टेण्टों के मध्य विवाह के सम्बन्ध को कठोर रीति से रोक दिया गया। यदि कोई प्रोटेस्टेण्ट उत्तराधिकारिणी एक कैथोलिक से शादी करती थी तो उसकी जमीनें उसके निकटतम प्रोटेस्टेण्ट सम्बन्धी को मिल जाती थीं। अन्त में कैथोलिकों की जमीनों की जब्तियों की एक लम्बी शृंखला से इस प्रक्रिया को पराकाष्ठा पर पहुँचाया गया। लिमरिक की सन्धि के क्षेत्र में आने वाले विद्रोहियों के अतिरिक्त, अन्य विद्रोहियों की सभी जमीनें राजा के लिए जब्त करने की घोषणा इस शर्त के साथ की गयी कि प्रोटेस्टेण्ट उत्तराधिकारी विद्रोहियों की जागीरों को उत्तराधिकार में प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु रोमन कैथोलिक उत्तराधिकारी इन्हें नहीं ले सकते हैं। दो वर्ष बाद इंग्लिश पार्लियामेण्ट लूट के माल को लेने के लिए आगे बढ़ी। जमीनों को बेच दिया गया और इससे प्राप्त धन इंग्लैण्ड के राजकोष में चला गया। इसके लिए एक मात्र बहाना यह था कि आयरलैण्ड में किये गये युद्ध ने इंग्लैण्ड के राजकोष पर भारी बोझ डाला है।

इन अन्यायपूर्ण और मूर्खतापूर्ण व्यवस्थाओं की निन्दा के लिए कोई भी शब्द बहुत कठोर नहीं हो सकते हैं। इन व्यवस्थाओं ने ही पड़ोसी टापुओं के बीच में किसी भी समझौते की आशा को समाप्त कर दिया। ये अपने निकृष्टतम रूप में, आधिपत्य की भावना को एवं शासन के पाशविक दुरुपयोग को प्रदर्शित करती हैं। कोई भी इंग्लिश अथवा स्काट व्यक्ति आज इन कानूनों के संक्षिप्ततम विवरण को भी उस अन्याय के लिए लज्जा का अनुभव किये बगैर नहीं पढ़ सकता, जिस अन्याय ने समूचे राष्ट्रमण्डल को कलंकित किया गया था।

किन्तु आधिपत्य की इस भावना ने केवल रोमन कैथोलिकों के साथ सम्बन्ध में ही अपने को प्रदर्शित नहीं किया। प्रोटेस्टेण्ट अल्प संख्या में कम से कम आधे डिसेण्टर लोग थे और उनकी संख्या स्काटलैण्ड से आव्रजन के कारण निरन्तर बढ़ रही थी। इंग्लैण्ड का सहिष्णुता कानून आयरलैण्ड पर लागू नहीं होता था। १७०४ ई० में रानी एन की टोरी सरकार ने आयरिश कानून में वस्तुत: एक धारा जोड़ दी, इसमें यह व्यवस्था की गयी थी कि आयरलैण्ड में कोई व्यक्ति तब तक सरकारी पद पर नहीं रह सकता है अथवा नगरपालिका में तब तक मजिस्ट्रेट नहीं बन सकता है, जब तक वह एंग्लिकन धर्म की पद्धति को ग्रहण न कर ले। इस प्रकार प्रोटेस्टेण्ट डिसेण्टरों को सभी राजनीतिक विशेषाधिकारों से वंचित कर दिया गया।

अन्त में, एंग्लिकन अल्प-संख्या को भी विकास की किसी वास्तविक स्वतन्त्रता का उपभोग करने की अनुमति नहीं दी गयी। आयरिश पार्लियामेण्ट को पायनिंग्स कानूनों के कारण अप्रभावशाली बना दिया गया था, इन कानूनों ने इसकी कार्यवाहियों पर इंग्लिश तथा आयरिश प्रिवी कौंसिलों का नियन्त्रण स्थापित किया था। इसका एक अधिक बड़ा कारण इंग्लिश पार्लियामेण्ट द्वारा हाल में किया जाने वाला यह दावा था कि उसे आयरिश पार्लिया-मेण्ट के ऊपर होते हुए आयरलैंण्ड के लिए कानून बनाने का अधिकार है। यह ऐसा दावा था कि जिसे स्काटलैण्ड के बारे में कभी नहीं किया गया था। इंग्लिश पार्लियामेण्ट इस अधि-कार का उपयोग करती रही, इसने इसका उपयोग विशेष रूप से इस प्रयोजन के लिए किया कि इंग्लिश उद्योगों के लिए संरक्षण की नीति को क्रियान्वित किया जा सके। चार्ल्स द्वितीय के समय में आयरलैंण्ड से इंग्लैण्ड के लिए भेड़ों का निर्यात वर्जित कर दिया गया था। इससे ऊन के आयरिश व्यापार में पर्याप्त वृद्धि हुई और ऊनी वस्त्रों के हस्तोद्योग का उत्थान हुआ। किन्तु चूंकि इसकी इंग्लिश ऊनी व्यापार से प्रतिस्पर्धा सम्भव थी, अत: १६९९ ई० में इंग्लिश पार्लियामेण्ट ने इंग्लैण्ड के अतिरिक्त अन्य किसी देश में आयरिश ऊन तथा ऊनी माल के निर्यात पर पाबन्दी लगा दी। इंग्लैण्ड में अत्यधिक ऊँचे आयात करों के कारण इस माल का आना पहले ही क्रियात्मक रूप से बन्द कर दिया गया था। दूसरे देश के हितों के लिए एक देश की आर्थिक नीति के बारे में इस प्रकार के स्वच्छन्द आदेश उतने ही अदूरदर्शी थे, जितने ये अन्यायपूर्ण थे। इसने क्रियात्मक रूप से आयरलैण्ड के ऊनी व्यापार को नष्ट कर दिया, यद्यपि इन पाबन्दियों की अवहेलना करते हुए अब भी फ्रांस को कुछ माल का निर्यात किया जा रहा था। इससे ऊन व्यापार द्वारा जनसंख्या के उस भाग के लिए आर्थिक परित्राण पाने की एक विधि ढूंढने का अवसर नष्ट कर दिया, जो जमीन की जब्तियों से निर्धन बना दी गयी थी।

आयरलैण्ड में शासन सत्ता पर एकाधिकार रखने वाली छोटी एंग्लिकन अल्प-संख्या भी आयरिश पार्लियामेण्ट के अधिकार पर किये जाने वाले इन आक्रमणों से और आयरिश व्यापार के जानबूझ कर किये गये इस विनाश से रुष्ट थी। इन बुराइयों से बचने की तथा इसी समय इंग्लिश आधिपत्य को सुरक्षित बनाने की विधि के रूप में उन्होंने कई अवसरों पर यह प्रस्ताव किया कि स्काटलैण्ड की भाँति आयरलैण्ड को भी इंग्लैण्ड के साथ पूर्ण रूप से संयुक्त कर दिया जाना चाहिये। रानी एन के राज्यकाल में किसी भी समय यह एकीकरण शान्तिपूर्वक और और आसानी से किया जा सकता था। इस समय में किया गया एकीकरण दोनों देशों में सामञ्जस्य स्थापित करने में सम्भवत: बहुत दूरगामी होता, जैसा कि इसने स्काटलैण्ड और इंग्लैण्ड में सामञ्जस्य स्थापित करने में किया था। यह सत्य है कि आयरलैण्ड में कैथोलिकों पर अत्याचार बन्द न होता, किन्तु इंग्लैण्ड के ह्विग लोगों को आयरिश कैथोलिकों के विरुद्ध वैसी उग्र कटुता नहीं थी, जैसी आयरलैण्ड की प्रोटेस्टेण्ट दुर्गरक्षक सेनाओं को इनके प्रति कटुता थी। सम्भवत: यूनियन बन जाने पर शनै:-शनै: दण्ड विधान में भी शिथिलता आ जाती। किसी भी दशा में ग्रेटब्रिटेन के सब भागों के साथ व्यापार की पूरी स्वतन्त्रता से तथा एकी-करण के परिणाम स्वरूप प्राप्त होने वाले औपनिवेशिक व्यापार के विशेषाधिकार के हिस्से से

आयरलैण्ड में उद्योग और समृद्धि को बढ़ाने में बहुत बड़ा काम होता। इससे वर्तमान पद्धति के निकृष्टतम ः ि ::ाम-ृ ·ा वर्ग की भीषण निर्धनता-को भी कम करने में बड़ी सहायता मिलती। किन्तु इस अवसर को गँवा दिया गया। आयरलैण्ड को राष्ट्रमण्डल की पूरी सदस्यता से वंचित किया गया और वह अपने अधिक बड़े पड़ोसी की दया पर अवलम्बित एक वशवर्ती राज्य बना रहा। एक शताब्दी तक स्थगित किया जाता हुआ यह एकीकरण केवल उस समय हुआ जब कि किसी भी सामञ्जस्य को स्थगित करने के लिए अत्यधिक विलम्ब हो चुका था।

क्रान्ति में आयरिश समस्या के साथ किया जाने वाला व्यवहार न केवल इस समस्या का अधिकतम दुर्भाग्यपूर्ण भाग था, अपितु यह ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के समूचे इतिहास में सबसे काला धब्बा था। अन्यत्र राष्ट्रमण्डल की सदस्यता का अर्थ स्वतन्त्रता थी। वस्तुतः यह पूर्ण स्वतन्त्रता नहीं थी, किन्तु विश्व में अन्यत्र कहीं भी पायी जाने वाली स्वतन्त्रता से अत्यन्त उदार थी। आयरलैण्ड में इसका आशय अत्याचार था। इसने अपने निकृष्टतम रूप में कोरे आधिपत्य की भावना को प्रदर्शित किया। इस प्रकार के राजनीतिक अपराध समुचित समय पर अपना दण्ड स्वयं लाते हैं। दुर्भाग्यवश यह दण्ड उनको नहीं मिलता, जिन्होंने यह अपराध किया होता है। -

८. उपनिवेशों में क्रान्ति

इंग्लैण्ड में हुई क्रान्ति के परिणामों को, समग्र रूप से, वेस्ट इण्डीज़ में तथा उत्तरी अमेरिका के उपनिवेशों में शान्तिपूर्वक स्वीकार कर लिया गया, सर्वत्र विलियम और मेरी के राजा होने की घोषणा की गयी। न्यूयार्क में जेम्स द्वितीय की वैयक्तिक सत्ता अधिकतम दृढ़ता के साथ स्थापित हो चुकी थी, अतः यही एक ऐसा मात्र उपनिवेश था, जहाँ जेम्स द्वितीय के समर्थक जैकोबाइट दल ने अपनी शक्ति को बनाये रखने के लिए कोई प्रयत्न किया। जेम्स द्वितीय द्वारा आरम्भ की गयी एकीकरण की महान् योजना इस रूप में समाप्त हो गयी कि इस पर किसी ने कोई दुःख नहीं प्रकट किया; इसके अभिकर्ता एण्ड्रोस ने अपने को सहसा शक्तिहीन पाया। क्रान्ति द्वारा स्थापित हुई सरकार के आगे औपनिवेशिक प्रशासन की समूची समस्या पर नये सिरे से विचार करने का अवसर था।

यद्यपि यह अनिवार्य और ठीक था कि उपनिवेशों की स्वतन्त्रताओं के हित के लिए गम्भीर रूप से खतरनाक जेम्स द्वितीय की निरंकुश योजनाओं का पूर्ण रूप से परित्याग कर दिया जाय तथापि यह एक अच्छी बात होती यदि इससे कम आपत्तिजनक एकीकरण की पद्धति का एक ऐसे साधन के रूप में विकास करने के लिए लाभ उठाया जाता, जिससे यह बात सुरक्षित हो जाती कि उपनिवेशों के समूचे समान हितों का विचार किया जाना चाहिए। वर्जिनिया में पहली बस्ती बसाने के बाद बीतने वाले अस्सी वर्षों में, उपनिवेश सुस्थापित राज्यों के समूह के रूप में विकसित हो चुके थे। उनकी कुल जनसंख्या दो लाख के लगभग थी। इसमें मैसाचुसैट्स के ५० हजार और वर्जिनिया के ६० हजार व्यक्ति सम्मिलित थे। इनमें प्रकार और स्वरूप की

दृष्टि से तीव्र भेद थे, ये सब अपनी स्थानीय स्वतन्त्रता के लिए बड़ा अभिमान रखते थे। फिर भी उनकी बहुत सी बातें और अनेक हित समान थे। उन्हें फ्रान्स से और रेड इण्डियन लोगों से एक ही प्रकार के खतरे थे, यद्यपि ये खतरे विभिन्न मात्राओं में थे। वे एक ही आर्थिक पद्धति के आधीन थे। इस पद्धति का स्वरूप निश्चित करने में वे उस समय तक कोई भाग नहीं ले सकते थे, जब तक वे विशिष्ट पृथक् राज्य बने रहे। उनकी स्थानीय परम्पराओं की जड़ें अभी इतनी गहरी नहीं जमी थीं कि उनमें संगठित सहयोग बहुत कठिन हो जाता और १६८६ ई० में जब लुई १४वें की भीषण शक्ति के विरुद्ध संघर्ष अभी शुरू हो रहा था, उस समय वे अपनी कमजोरी के लिए अधिकांश मात्रा में अत्यधिक सचेत थे। इसने जेम्स द्वितीय की योजनाओं का उग्र विरोध प्रस्तुत करने से उत्तरी उपनिवेशों को रोक दिया। सम्भवतः इससे वे फेडरेशन (संघ) की एक वैसी तर्कसंगत योजना के लिए सहमत हो जाते, जैसी योजना का व्यर्थ में ही ६५ वर्ष के बाद प्रयास किया गया। यदि क्रान्ति वालों की सरकार ने ऐसी किसी पद्धति के विकास का प्रयत्न किया होता तो सम्भवतः इसे अवश्य सफलता मिलती, यह सफलता इंग्लैण्ड और उसके औपनिवेशिक राज्यों के बीच सम्बन्धों की उस समस्या को सुलझाना सम्भव बना देती, जो समस्या अगले युग में निरन्तर अधिक उग्र होने वाली थी। किन्तु इस प्रकार का कोई सुझाव नहीं प्रस्तुत किया गया। सम्भवतः इसका कारण यह था कि यह सोचा गया कि राजा की सत्ता एक महान् संगठित संघ की अपेक्षा बारह छोटे और असंयुक्त राज्यों पर अधिक आसानी से आरोपित की जा सकती है। इस प्रकार रचनात्मक राजनीतिज्ञता का एक उत्तम अवसर खो दिया गया। यदि क्रान्ति काल के राजनीतिज्ञों ने अमेरिका महाद्वीप के उपनिवेशों को और वेस्ट इण्डीज के उपनिवेशों को दो संघीय समूहों में संगठित किया होता तो ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल का और सम्भवतः विश्व का परवर्ती इतिहास भिन्न प्रकार का होता।

उपनिवेशों में किसी केन्द्रीय अथवा संघीय संगठन के अभाव में, समूचे साम्राज्य के लिए सामान्य कानून बनाने वाली और शासन करने वाली एकमात्र सत्ताएँ अब ब्रिटिश सरकार और इसे नियन्त्रित करने वाली पार्लियामेण्ट थी। आवश्यक रूप से इन पर न केवल शाही व्यापार-पद्धति की योजना बनाने और इसे बनाये रखने का उत्तरदायित्व पड़ना चाहिए था, अपितु इन पर साम्राज्य की रक्षा का व्यय और समूची जिम्मेदारी पड़नी चाहिए थी। इन कार्यों को करने के लिए इस समय तक विद्यमान संगठन की अपेक्षा एक अधिक अच्छा संगठन बनाना आवश्यक था और १६९६ ई० में एक नया **'व्यापार और बस्तियों का बोर्ड'** (Board of Trade and Plantations) बनाया गया। यह प्रिवी कौंसिल से भिन्न था। इसका अपना विशेष कार्यालय और अपने ही कार्यकर्त्ता थे। आरम्भ में इसके अधिक क्रियाशील सदस्यों में जॉन लॉक तथा बोर्ड का एक अतीव योग्य सचिव विलियम ब्लैथवेट था। इसे क्रान्ति के समय की औपनिवेशिक नीति का एक प्रमुख नेता माना जाना चाहिए। दुर्भाग्यवश बोर्ड का स्टाफ इसके द्वारा किये जाने वाले कठिन कार्य की दृष्टि से बहुत कम था, इससे भी अधिक गम्भीर बात यह थी कि इसके पास स्वतन्त्र कार्य करने की शक्ति नहीं थी, किन्तु इसे अपने सब कार्यों के लिए राज्य-सचिवों से तथा अन्य मन्त्रियों से सम्पुष्टि प्राप्त करनी पड़नी थी। १७६८ ई० तक इसी पद्धति से उपनिवेशों की नीति का नियन्त्रण किया जाता रहा, १७६८ ई०

में पहली बार, वास्तविक अधिकारों के साथ एक मन्त्री को औपनिवेशिक कार्यों के लिए नियुक्त किया गया। उस समय तक अमेरिका के उपनिवेशों की क्रान्ति लगभग अनिवार्य हो गयी थी।

क्रान्ति ने एक ऐसा गम्भीर परिवर्तन किया, जिसने उपनिवेशों पर गहरा प्रभाव डाला। अब तक उपनिवेश मुख्य रूप से राजा से और उसकी प्रिवी कौंसिल से सम्बन्ध रखते थे, वे इन्ही से अपने चार्टर प्राप्त करते थे और उनके गवर्नर इन्हों से निर्देश प्राप्त करते थे। साम्राज्य के व्यापार के मुख्य सिद्धान्तों के अतिरिक्त वे पार्लियामेण्ट की कानून बनाने वाली सत्ता के ऐसे कानूनों के वशवर्ती समझे जाते थे, जो कानून उनकी विधान-सभाओं के बनने से पहले विद्यमान थे। किन्तु उनकी अपनी दृष्टि में उपनिवेशों की विधान-सभाओं की ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के साथ एक सहवर्ती अथवा समानान्तर सत्ता थी। वस्तुतः इस सिद्धान्त को कभी निश्चित रूप से प्रतिपादित नहीं किया गया था और आने वाले लम्बे समय तक भी इसे प्रतिपादित नहीं किया जाना था, किन्तु यह मोटे तौर से अतीत काल की परिपाटी का तथा औपनिवेशिक पद्धति के व्यावहारिक सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करता था। साम्राज्य को इकट्ठा बनाये रखने वाली कड़ी-राजा (Crown) तथा इसके द्वारा प्रयोग में लायी जाने वाली स्वतन्त्र शासन करने की सत्ता थी। किन्तु १६८९ ई० की क्रान्ति का मूल तत्त्व यह था कि राजा पार्लियामेण्ट के नियन्त्रण में चला गया और मन्त्री निरन्तर अधिक स्पष्ट रूप से इसके प्रति उत्तरदायी बने रहे। इसने, निर्विवाद रूप से तथा एक [illegible] औपनिवेशिक सरकारों के इंग्लैण्ड की सरकार के साथ सम्बन्धों को परिवर्तित किया। किसी भी पक्ष ने अभी तक क्रान्ति के परिणाम को नहीं समझा था, किन्तु इसके अशुभ परिणाम भविष्य में उत्पन्न होने वाले थे।

इस बीच में औपनिवेशिक पद्धति में पुनः एक सामञ्जस्य स्थापित किया जा रहा था। नयी नीति की स्पष्ट रूप से कहीं भी व्याख्या नहीं की गयी थी, किन्तु इसने अपने को व्यावहारिक नीति के रूप में अभिव्यक्त किया। इसके दो मुख्य पहलू आर्थिक और राजनीतिक थे। आर्थिक पक्ष में यह ऐसे सिद्धान्तों से शासित होती थी, जिनका विचार अधिक पूर्ण रूप से एक अगले अध्याय में किया जायगा।[1] उस समय मुख्य सिद्धान्त यह था कि सरकार और पार्लियामेण्ट का यह कर्त्तव्य था कि वे अपने सभी अधिकारों का प्रयोग इंग्लैण्ड के उत्पादक उद्योगों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य के लिए करें। इसका अर्थ पुनः स्थापना के नौ-चालन कानूनों में निर्धारित की गयी संरक्षणात्मक नीति का एक अधिक विकास था, और १६९६ ई० में एक नये **नौचालन अधिनियम** (Navigation Act) ने इस पद्धति को ठोस रूप से सुदृढ़ बनाया। इसमें यह भी सम्मिलित था कि उन उपनिवेशों में व्यापारिक नियमों के समुचित पालन को सुनिश्चित बनाने का प्रयास किया जाय, जहाँ (विशेषतः न्यू इंग्लैण्ड में) इन नियमों की बड़ी मात्रा में अवहेलना की जा रही थी। इस प्रयोजन के लिए यह महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता था कि ब्रिटिश सरकार द्वारा उपनिवेशों के गवर्नरों का नियन्त्रण किया जाना चाहिए, ताकि वे इस बात

१. आगे देखिए पुस्तक ६, अध्याय ३

को निश्चित कर सकें कि गवर्नर उन्हें भेजे जाने वाले निर्देशों का पालन पूरी निष्ठा से कर रहे थे। इसी कारण व्यापार और बस्तियों का बोर्ड वर्जिनिया जैसे "राजकीय प्रकार" (Royal Type) वाले उपनिवेशों को अन्य दो प्रकार के उपनिवेशों से अधिक पसन्द करता था, जिसमें गवर्नर राजा द्वारा सीधा नियुक्त किया जाता था। अन्य दो प्रकार के उपनिवेशों में पहला प्रकार स्वामित्व वाला (Proprietory) था, इसमें गवर्नर की नियुक्ति उस उपनिवेश के स्वामी द्वारा की जाती थी, यद्यपि इस पर राजा की स्वीकृति लेनी होती थी। दूसरा प्रकार चार्टर वाला था, इसमें गवर्नर उपनिवेशवासियों द्वारा नियुक्त किया जाता था। उपनिवेशों की एक बड़ी संख्या स्वामित्व वाले प्रकार की थी, अतः बोर्ड ऑफ ट्रेड प्रत्येक अवसर मिलने पर स्वामी के अधिकार से मुक्ति पाने का प्रयत्न करता था अथवा जहाँ यह सम्भव नहीं था वहाँ वह इसे प्रभावशाली निरीक्षण में रखता था। अगली पीढ़ी में अधिकांश मामलों में यह नीति सफल ई और उपनिवेशों के शासन करने के लिए 'राजकीय' (Royal) प्रकार सामान्य प्रकार बन गया। इस प्रकार आर्थिक नीति ने नये शासन की राजनीतिक नीति को प्रभावित किया।

इसके अतिरिक्त इस क्रान्ति की औपनिवेशिक नीति का एक प्रधान लक्ष्य विभिन्न उपनिवेशों की सरकार के ढंगों में एक समीकरण या Assimilation उत्पन्न करना था और एक बड़ी मात्रा में यह लक्ष्य सफलतापूर्वक प्राप्त कर लिया गया। मैसाचुसैट्स के चार्टर को औपचारिक रीति से रद्द किये जाने के तथ्य ने इस अतीव महत्त्वपूर्ण उपनिवेश के शासन की पद्धति के संशोधन का अवसर प्रस्तुत किया। १६९१ ई० में मैसाचुसैट्स को एक नया चार्टर दिया गया। इसके अनुसार व्यापारिक कम्पनी के पुराने रूपों को अन्त में छोड़ दिया गया। राजा ने, पहली बार गवर्नर को नियुक्त करने का अधिकार प्राप्त किया, किन्तु चर्च के सदस्यों तक सीमित एक पुराने अनियमित मताधिकार के स्थान पर छोटी सम्पत्ति की योग्यता पर आधारित एक लोकतन्त्रीय मताधिकार की व्यवस्था की गयी, कानून निर्माण और कर लगाने के पूर्ण अधिकारों के उपयोग के अतिरिक्त विधान सभा को "सहायकों" अथवा गवर्नर की परिषद् के सदस्यों को मनोनीत करने का असाधारण अधिकार दिया गया। यह बात उचित रूप से कही जा सकती है कि १६९१ ई० का मैसाचुसैट्स का चार्टर एक राजनीतिज्ञतापूर्ण कार्य था। इसने उस धार्मिक असहिष्णुता का अन्त कर दिया, जो चिरकाल से महान् प्यूरिटन राज्य की विशेषता थी, एक वास्तविक मात्रा में इसने उपनिवेश के संविधान को लोकतन्त्रीय बना दिया। प्रसंगवश इस चार्टर ने प्लाइमाउथ के पुराने उपनिवेश को मैसाचुसैट्स में विलीन कर दिया। कनैक्टिकट और रोड्स टापू के चार्टरों को यद्यपि जेम्स द्वितीय ने छीनने की धमकी दी थी, किन्तु वास्तव में उसने इनका दमन नहीं किया था। इन्हें अपनी पुरानी पद्धति में ही बिना किसी परिवर्तन के छोड़ दिया गया। केवल वही ऐसे उपनिवेश रह गये, जिनमें गवर्नरों को जनता द्वारा चुना जाता था। सामान्यतः, वास्तव में यह कहा जा सकता है कि क्रान्तिकालीन राजनीतिज्ञों ने उपनिवेशों में लोकप्रिय सरकार के प्रति कोई ईर्ष्या प्रदर्शित नहीं की, यद्यपि वे स्वाभाविक रूप से इस बात को निश्चित करने के लिए उत्सुक थे कि सर्वत्र गवर्नर राजा द्वारा नियुक्त अथवा नियन्त्रित किये जाने चाहिएँ, क्योंकि यही एक मात्र

ऐसा साधन था जिससे केन्द्रीय सरकार के संचालन में एक समान नीति को बनाये रखने की बात को सम्भवतः निश्चित किया जा सकता था।

कानून-निर्माण में तथा कर लगाने में औपनिवेशिक स्वाधीनता का सिद्धान्त सचमुच क्रान्ति की पद्धति द्वारा पूर्ण रूप से स्वीकार किया गया था। इसे ब्रिटिश पद्धति की एक आवश्यक विशेषता के रूप में स्वीकार किया गया कि स्थानीय प्रतिनिधि संस्थाओं को भी साम्राज्य के व्यापार के क्षेत्र को छोड़ कर अन्य प्रत्येक क्षेत्र में नये कानून बनाने चाहिएँ अथवा उपनिवेशों पर कर लगाने चाहिएँ। दूसरी ओर, शासन करने वाली सरकार के बारे में यह माना जाता था कि वह इंग्लैण्ड की भाँति उपनिवेशों में भी उचित रीति से राजा से सम्बन्ध रखती है। राजनीतिक पक्ष में क्रान्ति के समझौते का मुख्य परिणाम यह था कि आरम्भिक युग की विभिन्नताएँ बड़ी मात्रा में लुप्त हो गयीं और पद्धति की एक निश्चित एकरूपता स्थापित हो गयी। कनेक्टिकट और रोड्स टापू के अतिरिक्त सर्वत्र ताज प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रीति से शासन के अध्यक्ष को नियन्त्रित करता था। सर्वत्र एक छोटी परिषद् उसकी सहायता करती थी। यह इंग्लिश प्रिवी कौंसिल से मिलती थी और प्रायः, (यद्यपि मैसाचुसैट्स में ऐसा नहीं था) यह गवर्नर द्वारा मनोनीत की जाती थी। सर्वत्र गवर्नर को एक प्रतिनिध्यात्मक कानून बनाने वाली और कर लगाने वाली संस्था के साथ काम करना पड़ता था, इस संस्था के पास उपनिवेश की सीमा के भीतर ऐसे अधिकार थे जो इंग्लिश पार्लियामेण्ट के सैद्धान्तिक अधिकारों के साथ मिलते थे।

यह पद्धति, उस समय मानी जाने वाली इंग्लिश पद्धति की यथासम्भव उससे अधिकतम सादृश्य रखने वाली प्रतिलिपि थी और इसका उद्देश्य भी यही था। किन्तु हम देख चुके हैं कि इंग्लैण्ड में पार्लियामेण्ट ने अनिवार्य रूप से अपने अधिकारों का प्रयोग सरकार को नियन्त्रित करने वाले साधन के रूप में किया था। १७वीं शताब्दी का समूचा लम्बा संघर्ष मुख्य रूप से इसी प्रश्न पर हुआ था, इसकी समाप्ति पार्लियामेण्ट की प्रभुता स्थापित करने के साथ हुई थी। यह अनिवार्य था कि यह उपनिवेशों में समान परिणाम उत्पन्न करे। असेम्बलियों में तथा गवर्नरों में प्रभुता के लिए संघर्ष होना आवश्यक था। क्रान्ति के तुरन्त बाद के वर्षों में यह पहले ही शुरू हो गया था। किन्तु उपनिवेशों में तथा इंग्लैण्ड के संवैधानिक संघर्ष में यह अन्तर था कि गवर्नर के पीछे उसे नियुक्त करने वाला राजा था, राजा स्वयमेव अब ब्रिटिश पार्लियामेण्ट पर अवलम्बित था। अतः गवर्नरों और असेम्बलियों के मध्य में प्रभुता के लिए संघर्ष लगभग आवश्यक रूप से उपनिवेशों तथा इंग्लैण्ड के बीच में संघर्ष था, बशर्ते कि इस परिणाम से बचने के लिए कुछ उपाय न ढूँढ लिये जाँय। उस समय तक किसी व्यक्ति ने ऐसे समाधान की आवश्यकता अनुभव नहीं की थी। यह अच्छी तरह प्रतीत हो रहा था कि उपनिवेशों के साथ अधिकतम उदारता के साथ व्यवहार किया जायेगा, क्योंकि उन्हें इंग्लैण्ड की संस्थाओं के आदर्शों पर बनी हुई ऐसी संस्थाएँ दी जाएँगी, जो संसार में सबसे अधिक उदार थीं। फिर भी स्पष्ट तथ्य यह था कि उपनिवेश राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र थे, अतः उनके लिए यह अनिवार्य था कि वे अपनी स्वतन्त्रता का विस्तार करने का लक्ष्य बनायें, क्योंकि स्वतन्त्रता का मूल तत्त्व यह है कि यह अपनी पूर्णता के लिए स्वयं प्रयत्न करती है।

फिर भी, इस अनिवार्य प्रवृत्ति का संशोधन करने वाले और इसे कुछ स्पष्ट बनाने वाले दो महत्त्वपूर्ण कारण थे। इनमें से एक कारण की प्रवृत्ति अधिक स्वतन्त्रता के लिए उपनिवेशों की इच्छाओं को उग्र बनाना था, जब कि दूसरे कारण की प्रवृत्ति इसे रोकना था। पहली प्रवृत्ति इंग्लैण्ड द्वारा अनुसरण की जाने वाली इंग्लिश व्यापारिक हितों के लिए संरक्षण की नीति थी, इसके कुछ पहलुओं से अनेक उपनिवेश रुष्ट थे। दूसरा कारण फ्रांस से पैदा खतरा था जो अब बहुत वास्तविक बन गया था, क्योंकि क्रान्ति ठीक उस समय हुई थी जब अमेरिका में फ्रेन्च और ब्रिटिश उपनिवेशों के बीच में ऐसा सीधा संघर्ष आरम्भ हुआ, जो ७० वर्षों से भी अधिक समय तक चलता रहा। इसकी समाप्ति फ्रांस के अमेरिकन साम्राज्य के विध्वंस के साथ ही हुई। इस सारे समय में उपनिवेश संयुक्त नहीं थे, उनका कोई सैनिक संगठन नहीं था, अतः वे इस बात को अनुभव किये बिना सके कि उनकी सुरक्षा पूर्ण रूप से इंग्लैण्ड के संरक्षण पर और विशेष रूप से उस नौसेना पर निर्भर है, जो फ्रेन्च आक्रमणों के विरुद्ध बचाव का प्रधान साधन थी। जब तक यह खतरा बना रहा, न बनक संवैधानिक संघर्ष को कभी भी बहुत अधिक बढ़ने नही दिया जा सकता था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The books by **Lodge, Trevelyan, Ranke, Hallam,** already referred to; **Macaulay,** History; **Trevelyan,** England under Queen Anne; **Churchil,** Marlborough. **C. G. Robertson,** Statutes and Documents; **Acton's** lecture on 'The English Revolution (Lectures on Modern History); **Maitland,** Constitutional History of England (Period IV: Pub ic law at the death of William III); **Clark,** Later Stuarts; **Trevelyan,** English Revolution; **Holdsworth,** History of English Law. **Feiling,** History of the Tory Party; **Firth,** A commntary on Macaulay's History of England, **Hume Brown,** or **Lang,** History of Scotland; **Mackinnon,** Union of England and Scotland; **Lecky,** History of Ireland in the Eighteenth Century, Vol I., **Murray,** Revolutionary Ireland and its Settlements; **Osgood,** American Colonies in the Seventeenth Century: **Andrews.** Colonial Period in Amer-ican History; **Channing,** History of the United States; **Lucas,** Historical Geography of the West Indies.

• •

७

लुई चौदहवें का पतन

(१६८९-१७१३ ई०)

१. ऑग्सबर्ग के संघ का युद्ध और इसमें ब्रिटिश लोगों का भाग लेना

लुई चौदहवें के विरुद्ध दो युद्धों में से पहला युद्ध इंग्लैण्ड में ऑरेन्ज के विलियम के लगभग आगमन के साथ ही आरम्भ हुआ। कहा जाता है कि लुई के विरुद्ध दोनों युद्ध मिल कर उन चार महान् अग्निपरीक्षाओं में से दूसरी परीक्षा का निर्माण करते हैं, जिनमें से ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल को आधुनिक इतिहास में हो कर गुजरना पड़ा है। अन्य संघर्षों की भाँति इस संघर्ष में भी राष्ट्रमण्डल ने यह अनुभव किया कि इसे न केवल अपनी स्वतन्त्रताओं की रक्षा करनी है, अपितु इसी समय में एक शक्ति के प्रभुत्व से यूरोप की स्वतन्त्रता की भी रक्षा करनी है। हम पहले ही पाँचवें अध्याय में यह देख चुके हैं कि क्रान्ति के समझौते की सुरक्षा और इसका हो सकना इन दो युद्धों में से पहले युद्ध के परिणाम पर आश्रित था। हम यह भी देख चुके हैं कि यदि ब्रिटिश द्वीप-समूह यूरोप की जनता के पक्ष में तथा महान् फ्रेंच राजा के विपक्ष में न होते तो लुई की विजय लगभग निश्चित होती। ब्रिटिश द्वीपसमूह की स्वतन्त्रता वस्तुतः इस संघर्ष में ऐसे सीधे रूप से खतरे में पड़ी हुई नहीं प्रतीत होती थी, जैसे कि यह स्पेन के विरुद्ध एलिज़ाबेथ के समय के युद्ध में प्रतीत होती थी। फिर भी, यदि लुई १४वाँ सफल होता तो ब्रिटिश संवैधानिक पद्धति द्वारा विस्तृत हो रही स्वतन्त्रता निश्चित रूप से खतरे में पड़

जाती; यूरोपियन पद्धति स्थिरता पहले युद्ध की भी अपेक्षा अधिक प्रत्यक्ष रूप से खतरे में पड़ जाती।

हम पाँचवें अध्याय में देख चुके हैं कि १६६२ ई० तक ब्रिटिश द्वीपसमूह का और उनकी सरकार की नयी पद्धति का सारा गम्भीर खतरा दूर हो चुका था। इसका यह अर्थ था कि वे अपनी शक्ति महाद्वीपीय संघर्ष में लगाने में समर्थ थे, अतः यह कहा जा सकता है कि इसी तिथि से लुई के लिए विजय की सम्भावना भी समाप्त हो गयी। युद्ध अब भी पाँच वर्ष तक चलता रहा; किन्तु १६६६ ई० में केवल एक ही अवसर पर ब्रिटेन के लिए आक्रमण का गम्भीर खतरा बना हुआ था; किन्तु वस्तुतः ऐसा आक्रमण नही हुआ।

हमें महाद्वीप में होने वाले युद्ध की घटनाओं का अनुसरण करने की आवश्यकता नहीं है। इसकी मुख्य विशेषता यह थी कि यद्यपि फ्रच सेनाओं ने विजय प्राप्त की, तथापि वे उनका लाभ उठाने में कभी भी समर्थ नहीं हुईं, क्योंकि फ्रांस ऐसे शत्रुओं के ऐसे वृत्त से घिरा हुआ था कि वह अपनी सारी शक्ति एक बिन्दु पर कभी नही लगा सकता था। नीदरलैण्ड्स में मुख्य लड़ाई हुई और यूरोप के रणस्थलों में, पहली बार नियमित इंग्लिश सेनाओं ने मित्रराष्ट्रों की सेनाओं के साथ युद्ध में भाग लिया। प्रति वर्ष विलियम तृतीय युद्ध का नेतृत्व करने के लिए यूरोप जाया करता था। प्रति वर्ष वह रणक्षेत्र में हराया गया; विशेष रूप से, वह स्टीनकर्क (१६६२ ई०) और लैण्डन अथवा नीरविण्डन (१६६३ ई०) की लड़ाइयों में हारा। किन्तु वह सदव इन हारों के कारण उत्पन्न होने वाले भीषण परिणामों को रोकने में समर्थ हुआ। उसकी एक मात्र बड़ी विजय नामूर के उस महान् दुर्ग पर पुनः अधिकार करना था (१६६५ ई०), जिसे फ्रेंच लोगों ने १६६२ ई० में जीता था और जो डचों के विरुद्ध बढ़ने की सबसे सीधी रेखा-म्यूज नदी की धारा का नियन्त्रण करता था। नीदरलैण्ड्स की लड़ाई में वस्तुतः महान् दुर्गबद्ध स्थानों के चारों ओर चली जाने वाली अधिकांश रूप में विस्तृत सैनिक गतिविधियाँ थीं, क्योंकि फ्रेंच इन्जीनियर वाबन तथा डच इन्जीनियर कोहोर्न ने किले बनाने की कला को पूर्णता के अतीव उच्च शिखर तक पहुँचा दिया था[१]। इस बीच में जर्मनी में, फ्रांस और इटली के बीच में सेवाय के सीमान्तों पर और स्पेन के उत्तर में वहाँ निरन्तर लड़ाई चल रही थी, जहाँ १६६४ ई० के बाद से लुई १४वाँ आक्रमण कर रहा था। यह लड़ाई इतनी भीषण नही थी, किन्तु निर्णयात्मक भी नहीं थी।

महाद्वीपीय युद्ध में इंग्लैण्ड द्वारा लिया गया भाग उससे कहीं अधिक बड़ा था, जो इसने कभी भी आधुनिक काल के किसी पहले महाद्वीपीय युद्ध में लिया था। इस अग्नि-परीक्षा ने इंग्लैण्ड में नियमित सेना की परम्पराओं का निर्माण किया और उनको कसौटी पर कसा। इस युद्ध की लड़ाइयाँ इंग्लैण्ड की कुछ प्राचीनतम रेजीमेण्टों के झण्डों पर लेखबद्ध

हैं। किन्तु, स्थल सेनाओं का अंशदान महत्वपूर्ण होते हुए भी नौसेना के अंशदान से कम महत्वपूर्ण था। इस युद्ध के नौसैनिक कार्यों में पुराने प्रतिस्पर्धी-इंग्लिश और डच लोगों ने सहयोगपूर्वक काम किया, किन्तु ज्यों-ज्यों लड़ाई आगे बढ़ी, त्यों-त्यों डचों ने अधिकाधिक गौण भाग लिया। उनके साधनों पर स्थल युद्ध का बड़ा दबाव पड़ रहा था और इसके बाद से नौसैनिक प्रभुत्व निश्चित रूप से इंग्लैण्ड के हाथ में चला गया।

१६९२ ई० में लाहोग की लड़ाई के बाद कोई बड़ा नौसैनिक युद्ध नहीं लड़ा गया, इसलिए संघर्ष के नौसैनिक पक्ष ने बहुत कम ध्यान आकर्षित किया। किन्तु यह इसलिए हुआ कि फ्रेंच बेड़े इस बात का साहस नहीं करते थे कि वे लड़ने के लिए बाहर आयें। नौसैनिक युद्ध की यह विशेषता है कि उस समय सबसे कम लड़ाई होती है, जब नौसैनिक शक्ति का मूक दबाव अधिकतम क्षमता के साथ अपना काम कर रहा होता है। इस कारण इसके महत्व की उपेक्षा किया जाना सम्भव है। यद्यपि नौशक्ति का प्रयोग करने की सर्वोत्तम विधियाँ अभी तक पूरी तरह नहीं समझी गयीं थीं, तथापि इसका प्रभाव निर्णयात्मक था। लाहोग की लड़ाई के बाद ब्रिटिश सेनाओं की जहाँ भी आवश्यकता हो, वहाँ महाद्वीप के किसी भी भाग में उन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक जहाज द्वारा भेजा जा सकता था, जबकि इस बात का कोई वास्तविक प्रमाण नहीं था कि फ्रेंच सेनाओं को किसी बड़ी संख्या में ब्रिटिश द्वीप समूह में उतारा जा सकता हो। नौसैनिक उत्कृष्टता का यह एक बड़ा परिणाम था। किन्तु इसने स्थलीय संघर्ष पर भी एक अधिक प्रत्यक्ष प्रभाव डाला। यह उस समय विलक्षण रूप से प्रदर्शित किया गया, जब १६९४ ई० में स्पेन के विरुद्ध एक फ्रेंच आक्रमण किया गया था। स्पेन पर इस समय एक प्रबल आक्रमण करके उसे युद्ध से बाहर निकालने को विवश किया जा सकता था, इस प्रकार वे फ्रेंच सेनाएँ वहाँ से मुक्त हो कर नीदरलैण्ड्स में एक निर्णयात्मक विजय के लिए पर्याप्त हो सकती थीं। किन्तु एक प्रभावशाली आक्रमण तब तक नहीं किया जा सकता था, जब तक सारी रसद पिरेनीज पर्वत माला के दर्रों से ही भेजी जाय। पहले फ्रेंच लोग तूलोन बन्दरगाह के लघु समुद्र मार्ग का उपयोग करने में समर्थ थे। किन्तु जब १६९४ ई० और १६९५ ई० में भूमध्य सागर में एक इंग्लिश बेड़ा प्रकट हुआ तो इसकी उपस्थिति मात्र ही फ्रेंच लोगों के समुद्री मार्गों को काटने के लिए तथा स्पेनिश युद्ध की विफलता को निश्चित बनाने के लिए पर्याप्त थी। इस प्रकार नौसेना ने बिना किसी लड़ाई के एक निर्णयात्मक विजय प्राप्त की। यह विजय फ्लैण्डर्स की अनेक लड़ाइयों से अधिक महत्वपूर्ण थी। १६९६ ई० में इंग्लिश बेड़े को भूमध्यसागर से वापस बुला लिया गया, क्योंकि इंग्लैण्ड पर एक फ्रेंच आक्रमण की आशंका थी। इसका परिणाम यह हुआ कि स्पेन पर पुनः आक्रमण किया गया और सेवाय के ड्यूक को फ्रांस के साथ सन्धि करने के लिए बाधित किया गया। नौसैनिक शक्ति की महत्ता को इससे अधिक स्पष्टता के साथ कोई अन्य वस्तु प्रदर्शित नहीं कर सकती थी।

मित्रराष्ट्रों के नौसैनिक प्रभुत्व का एक अन्य परिणाम यह था कि कोलबर्ट द्वारा इतने परिश्रमपूर्वक विकसित किया गया फ्रेंच व्यापार समुद्रों से लगभग लुप्त हो गया और फ्रांस को इस स्रोत से प्राप्त हो सकने वाली शक्ति के बिना ही अपना काम चलाना पड़ा।

उसके नाविकों ने इंग्लिश और डच व्यापारियों पर हमले करके जलदस्युवृत्ति से इन्हें लूट कर बदला लिया, इससे इंग्लिश और डच लोगों के व्यापारिक समुद्री जहाजों को बहुत बड़े पैमाने पर नुकसान उठाने पड़े। यदि नौसैनिक शक्ति का उपयोग ठीक ढंग से किया जाता तो यह नुकसान आवश्यकता से अधिक न होता, इसके कारण इंग्लैण्ड में बड़ा आन्दोलन तथा भय उत्पन्न हुआ। निःसन्देह फ्रेंच लोगों की इसी प्रकार की हानियों से ये हानियाँ अमित रूप से अधिक थीं। किन्तु इसका यह कारण था कि समुद्र में पकड़े जाने वाले फ्रेंच जहाज बहुत कम थे, जब कि नुकसानों के बावजूद समुद्रों में चलने वाले इंग्लिश जहाजों की संख्या युद्ध में बड़ी तेजी से बढ़ रही थी। जलदस्युवृत्ति के कारण होने वाली हानियाँ वस्तुतः फ्रांस के समुद्र पार के देशों के साथ व्यापार के पूर्ण विनाश की तुलना में बहुत कम महत्व रखती थी। युद्ध की समाप्ति पर इंग्लैण्ड का वैदेशिक व्यापार पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक प्रबल था।

अन्त में, यह युद्ध अनिवार्य रूप से उपनिवेशों तक विस्तीर्ण हो गया, कुछ मध्यान्तरों के साथ १७६३ ई० तक चलने वाली इंग्लैण्ड और फ्रांस की भीषण औपनिवेशिक प्रतिद्वन्द्विता इन वर्षों में शुरू हुई। १६९० ई० में कनाडा में फ्रेंचों ने विभक्त इंग्लिश उपनिवेशों पर एक तिहरे आक्रमण की योजना बनायी, यद्यपि इंग्लिश बस्तियों की दो लाख की आबादी के मुकाबले में फ्रेंच कनाडा की जनसंख्या केवल २० हजार थी, तथापि उन्हें यह लाभ था कि युद्ध के प्रयोजनों के लिए उनका नियन्त्रण एक निरंकुश शासन द्वारा किया जा रहा था, जब कि इंग्लिश उपनिवेशों में १२ पृथक् सरकारें थीं, प्रायः वे एक दूसरे से विरोधी उद्देश्य रखने वाली थीं। प्रत्येक सरकार गवर्नर और असेम्बली के बीच में सत्ता के संघर्ष के कारण निर्बल बनी हुई थी। फ्रांस की योजना यह थी कि हडसन नदी की घाटी को जीत लिया जाय, इस प्रकार न्यू इंग्लैण्ड को दक्षिणी बस्तियों से पृथक् कर दिया जाय। १७६० ई० तक चलने वाले समूचे लम्बे संघर्ष में यह फ्रेंच लोगों का प्रधान लक्ष्य बना रहा, किन्तु इस आक्रमण को बहुत कम सफलता मिली, यद्यपि हडसन नदी के तीरवर्ती नगर शेनेक्टेडी को लूटा गया और इसकी जनता की हत्या कर दी गयी। न्यूइंग्लैण्ड वासियों ने मैसाचुसैट्स के गवर्नर, सर विलियम फिप्स के नेतृत्व में कनाडा पर प्रबल आक्रमण करके फ्रांस के आक्रमण का उत्तर दिया। पोर्टरायल और एकेडिया (नोवास्कोशिया) पर अधिकार कर लिया गया और समूचे युद्ध में ये इंग्लिश लोगों के पास रहे। क्वेबक पर भी हमला किया गया। इस पर भी उस दशा में अधिकार किया जा सकता था, यदि इंग्लैण्ड इस पर आक्रमण में भाग लेने के लिए जहाजों और व्यक्तियों को भेजने में स्वतन्त्र होता, क्योंकि फ्रांस से किसी बड़े पैमाने पर सहायता की आशा नही रखी जा सकती थी। किन्तु नौसेना इस समय ब्रिटिश द्वीप-समूह के चारों तरफ अपने कार्य में व्यस्त थी। वेस्टइण्डीज में भी तथा पश्चिमी अफीका के समुद्र तट पर बीच-बीच में लड़ाई चलती रही, किन्तु यह छुटपुट लड़ाई अगले युद्धों में होने वाली उस लड़ाई की केवल भूमिका मात्र थी, जब इंग्लैण्ड और फ्रांस के बीच में विश्व के प्रत्येक भाग में और सब समुद्रों पर संघर्ष की ज्वाला भड़क उठी। जहाँ तक उपनिवेशों का सम्बन्ध था, इस युद्ध का मुख्य परिणाम यह था कि इसने उपनिवेश-

वासियों को यह शिक्षा दी थी कि उन्हें फ्रेंच लोगों से खतरा है, इसलिए इसने ब्रिटिश शासन के प्रति उनकी निष्ठा को सुदृढ़ बनाया, क्योंकि यह पहले ही स्पष्ट हो चुका था कि यदि नौसेना की ढाल न होती तो इन दूरवर्ती उपनिवेशों पर अनुभवी फ्रेंच सेनाओं द्वारा एक अधिक भीषण आक्रमण होने का खतरा था।

२. स्पेनिश उत्तराधिकार की समस्या

१६९७ ई० में **आग्सबर्ग के संघ** का भीषण युद्ध **रिसविक** की उस सन्धि के साथ समाप्त हो गया, जो लुई १४वें के पतन की प्रथम अवस्था को सूचित करती है। अपने राज्यकाल में पहली बार उसने बिना किसी लाभ के एक युद्ध को समाप्त किया, वस्तुतः उसे स्ट्रासबुर्ग के अपवाद के अतिरिक्त १६७८ ई० से प्राप्त किये गये सभी प्रदेशों को वापस करना पड़ा। फ्रांस कर्जे से लद गया और कोलबर्ट द्वारा प्रदान की गयी समृद्धि लगभग लुप्त हो गयी। सब से बढ़ कर यह बात थी कि कोलबर्ट के कार्य के कारण समुद्रों पर जो शक्ति १६८९ ई० में फ्रांस के अधिकार में आ जाने वाली प्रतीत होती थी, वह अब निश्चित रूप से गँवा दी गयी और इसे कभी पुनः नहीं प्राप्त किया गया। अधिकांश मित्रराष्ट्र शान्ति का स्वागत करने के लिए फ्रांस की अपेक्षा कम उत्सुक नहीं थे। डचों को युद्ध के कारण भीषण हानि उठानी पड़ी थी। चिरकाल से व्यापारिक नेतृत्व उनके हाथों में था, अब उन्होंने यह नेतृत्व अपने इंग्लिश प्रतिस्पर्धियों के हाथों में जाता हुआ देखा। किसी अन्य शक्ति की अपेक्षा युद्ध से अधिक लाभ उठाने वाले इंग्लिश लोगों ने अब भी अपने द्वारा जीती गयी वस्तु के महत्व को बड़ी कठिनाई से अनुभव किया था। वे बड़ी तीव्रता से युद्ध के बोझों का और इसके कारण होने वाली कठिनाइयों का अनुभव कर रहे थे। पार्लियामेण्ट का टोरी बहुमत शान्ति के लिए अत्यधिक उत्सुक था और फ्रेंच आधिपत्य का खतरा हट जाने के कारण वह इस बात पर बल दे रहा था कि न्यूनतम सम्भव सीमाओं तक सेना को घटा दिया जाय। यद्यपि राजा का यह विश्वास था कि भावी खतरों के विरुद्ध सर्वोत्तम संरक्षण पर्याप्त मात्रा में एक सेना को बनाये रखना है और उसे पूरा विश्वास था कि शीघ्र ही एक नया संघर्ष अवश्य होगा।

वस्तुतः, इस समय एक बड़ी जटिल और भीषण समस्या विकसित हो रही थी। यह तीस वर्ष से भी अधिक समय से यूरोपियन राजनीतिज्ञों के मन के आगे अस्पष्ट रूप से थी। इस समस्या का हल करने के लिए लड़ाई के झंझटों से मुक्त होने की दृष्टि से ही, लुई १४वाँ प्रतिकूल शर्तों पर भी पिछले युद्ध को समाप्त करने के लिए उत्सुक था। यह समस्या थी कि स्पेन के विशाल साम्राज्य का उत्तराधिकारी कौन बनेगा? स्पेन का चार्ल्स द्वितीय सीधी पुरुष वंश-परम्परा में फिलिप द्वितीय का अन्तिम वंशज था। वह १६६५ ई० में राजगद्दी पर बैठने के समय से ही बीमार चला आ रहा था; उसकी कोई सन्तान नहीं थी, किसी भी क्षण उसकी मृत्यु की आशा रखी जा सकती थी। उसकी दो बहनें थीं। उत्तराधिकार के कठोर क्रम के अनुसार इन दोनों बहनों का स्थान अपने उत्तराधिकारियों के साथ इसके बाद आता था। बड़ी बहन का विवाह फ्रांस के राजा लुई १४वें से हुआ था।

विवाह के समय की सन्धि द्वारा उसने स्पेन द्वारा दिये गये एक महान् दहेज के बदले में उत्तराधिकार के अपने अधिकारों को छोड़ दिया; किन्तु वह दहेज कभी नहीं दिया गया था। दूसरी बहन ने सम्राट् लियोपोल्ड प्रथम से विवाह किया था। वह एक कन्या को जन्म देने के बाद मर गयी थी, उस कन्या का विवाह बवेरिया के इलेक्टर से हुआ, इसने एक पुत्र उत्पन्न किया था, यह बवेरिया के इलेक्टोरल प्रिन्स के नाम से प्रसिद्ध हुआ। किन्तु उसने भी अपने विवाह पर स्पेनिश ताज के अपने अधिकारों का परित्याग किया। यदि ये दोनों परित्याग वैध माने जाते तो उत्तराधिकार पहली पीढ़ी के प्रतिनिधियों को जाता था। किन्तु चार्ल्स द्वितीय के पिता की भी केवल दो बहनें थी। इनमें से एक का विवाह फ्रांस के राजा लुई १३ वें से हुआ था और वह लुई १४वें की माता थी, जब कि दूसरी बहन ने सम्राट् फर्डिनेण्ड द्वितीय से विवाह किया था और वह लियोपोल्ड प्रथम की माता थी। इस प्रकार दोनों पीढ़ियों में अन्तर्विवाह ने फ्रांस को तथा हैब्सबर्ग घराने की आस्ट्रियन वंश की शाखा को लगभग समान महत्व रखने वाला दावा प्रदान किया था। इनमें से कोई भी शक्ति इस बात के लिए कभी सहमत नहीं हो सकती थी कि स्पेन का समूचा राज्य उत्तराधिकार में दूसरे को मिल जाये। अन्य कोई भी यूरोपियन शक्ति उस दशा में अपने को सुरक्षित नहीं अनुभव कर सकती थी, यदि इन दोनों महान् महाद्वीपीय राज्यों में से किसी एक को इस प्रकार समृद्ध होने दिया जाय और सम्भवतः विश्व पर प्रभुत्व स्थापित करने में समर्थ बनाया जाय। सब से बढ़ कर यह बात थी कि फ्रांस के नियन्त्रण में स्पेन के समूचे विशाल साम्राज्य के चले जाने की सम्भावना मात्र ही उन यूरोपियन राजनीतिज्ञों के लिए एक बुरा सपना बनी हुई थी, जिन्होंने अकेले ही फ्रांस की शक्ति का प्रतिरोध करना अत्यधिक कठिन कार्य पाया था।

यहाँ अब पहले होने वाले किसी भी युद्ध की अपेक्षा एक अधिक विराट् और भीषण युद्ध की सम्भावना थी, इसके निवारण की एक मात्र सम्भावना यह थी कि पहले से ही इस समस्या का एक सर्वसम्मत समाधान कर लिया जाय। लुई १४वें ने अन्त में यह समझ लिया था कि यूरोप के संयुक्त विरोध का सामना करना कितना खतरनाक है, अतः वह समझौते के लिए इच्छुक था। अतः उसने ग्रैंड एलायंस संघ (Grand Alliance) के प्रमुख राजनीतिज्ञ के रूप में विलियम तृतीय से सन्धिचर्चा आरम्भ की। यह माना जाता है कि इस प्रकार स्पेनिश प्रदेशों के बँटवारे की व्यवस्था के लिए "गुप्त कूटनीति" का अवलम्बन करने वाले ये दोनों राजा यूरोप के विरुद्ध एक अपराध कर रहे थे। वस्तुतः वे युद्ध को निवारण करने के एकमात्र सम्भव उपाय को ग्रहण कर रहे थे। केवल अपने हितों को सोचने वाले निरंकुश राजाओं के प्रतिनिधियों वाले एक सम्मेलन द्वारा इस प्रश्न के सार्वजनिक विवाद से कोई परिणाम न निकलता। यह बात बड़ी बेहूदा थी कि यूरोप के लिए और प्रत्येक यूरोपियन देश के लिए इतना अधिक महत्व रखने वाले प्रश्नों का निर्णय राजवंश के उत्तराधिकार के संयोगों से ही निश्चित किया जाय। स्पेन के प्रदेश ऐसे राष्ट्रीय राज्य नहीं थे, जिसका भाग्यनिर्णय केवल स्पेनिश जनता की चिन्ता करने का विषय हो। स्पेन के प्रदेशों में इटली के कुछ अतीव महत्वपूर्ण भाग थे, इनमें वह नीदरलैण्ड्स (बेल्जियम)

वासियों को यह शिक्षा दी थी कि उन्हें फ्रेंच लोगों से खतरा है, इसलिए इसने ब्रिटिश शासन के प्रति उनकी निष्ठा को सुदृढ़ बनाया, क्योंकि यह पहले ही स्पष्ट हो चुका था कि यदि नौसेना की ढाल न होती तो इन दूरवर्ती उपनिवेशों पर अनुभवी फ्रेंच सेनाओं द्वारा एक अधिक भीषण आक्रमण होने का खतरा था।

२. स्पेनिश उत्तराधिकार की समस्या

१६९७ ई० में आग्सबर्ग के संघ का भीषण युद्ध रिसविक की उस सन्धि के साथ समाप्त हो गया, जो लुई १४वें के पतन की प्रथम अवस्था को सूचित करती है। अपने राज्यकाल में पहली बार उसने बिना किसी लाभ के एक युद्ध को समाप्त किया, वस्तुत: उसे स्ट्रासबुर्ग के अपवाद के अतिरिक्त १६७८ ई० से प्राप्त किये गये सभी प्रदेशों को वापस करना पड़ा। फ्रांस कर्जे से लद गया और कोलबर्ट द्वारा प्रदान की गयी समृद्धि लगभग लुप्त हो गयी। सब से बढ़ कर यह बात थी कि कोलबर्ट के कार्य के कारण समुद्रों पर जो शक्ति १६८९ ई० में फ्रांस के अधिकार में आ जाने वाली प्रतीत होती थी, वह अब निश्चित रूप से गँवा दी गयी और इसे कभी पुन: नहीं प्राप्त किया गया। अधिकांश मित्रराष्ट्र शान्ति का स्वागत करने के लिए फ्रांस की अपेक्षा कम उत्सुक नहीं थे। डचों को युद्ध के कारण भीषण हानि उठानी पड़ी थी। चिरकाल से व्यापारिक नेतृत्व उनके हाथों में था, अब उन्होंने यह नेतृत्व अपने इंग्लिश प्रतिस्पर्धियों के हाथों में जाता हुआ देखा। किसी अन्य शक्ति की अपेक्षा युद्ध से अधिक लाभ उठाने वाले इंग्लिश लोगों ने अब भी अपने द्वारा जीती गयी वस्तु के महत्व को बड़ी कठिनाई से अनुभव किया था। वे बड़ी तीव्रता से युद्ध के बोझों का और इसके कारण होने वाली कठिनाइयों का अनुभव कर रहे थे। पार्लियामेण्ट का टोरी बहुमत शान्ति के लिए अत्यधिक उत्सुक था और फ्रेंच आधिपत्य का खतरा हट जाने के कारण वह इस बात पर बल दे रहा था कि न्यूनतम सम्भव सीमाओं तक सेना को घटा दिया जाय। यद्यपि राजा का यह विश्वास था कि भावी खतरों के विरुद्ध सर्वोत्तम संरक्षण पर्याप्त मात्रा में एक सेना को बनाये रखना है और उसे पूरा विश्वास था कि शीघ्र ही एक नया संघर्ष अवश्य होगा।

वस्तुत:, इस समय एक बड़ी जटिल और भीषण समस्या विकसित हो रही थी। यह तीस वर्ष से भी अधिक समय से यूरोपियन राजनीतिज्ञों के मन के आगे अस्पष्ट रूप से थी। इस समस्या का हल करने के लिए लड़ाई के झंझटों से मुक्त होने की दृष्टि से ही, लुई १४वाँ प्रतिकूल शर्तों पर भी पिछले युद्ध को समाप्त करने के लिए उत्सुक था। यह समस्या थी कि स्पेन के विशाल साम्राज्य का उत्तराधिकारी कौन बनेगा? स्पेन का चार्ल्स द्वितीय सीधी पुरुष वंश-परम्परा में फिलिप द्वितीय का अन्तिम वंशज था। वह १६६५ ई० में राजगद्दी पर बैठने के समय से ही बीमार चला आ रहा था; उसकी कोई सन्तान नहीं थी, किसी भी क्षण उसकी मृत्यु की आशा रखी जा सकती थी। उसकी दो बहनें थीं। उत्तराधिकार के कठोर क्रम के अनुसार इन दोनों बहनों का स्थान अपने उत्तराधिकारियों के साथ इसके बाद आता था। बड़ी बहन का विवाह फ्रांस के राजा लुई १४वें से हुआ था।

विवाह के समय की सन्धि द्वारा उसने स्पेन द्वारा दिये गये एक महान् दहेज के बदले में उत्तराधिकार के अपने अधिकारों को छोड़ दिया; किन्तु वह दहेज कभी नहीं दिया गया था। दूसरी बहन ने सम्राट् लियोपोल्ड प्रथम से विवाह किया था। वह एक कन्या को जन्म देने के बाद मर गयी थी, उस कन्या का विवाह बवेरिया के इलेक्टर से हुआ, इसने एक पुत्र उत्पन्न किया था, यह बवेरिया के इलेक्टोरल प्रिन्स के नाम से प्रसिद्ध हुआ। किन्तु उसने भी अपने विवाह पर स्पेनिश ताज के अपने अधिकारों का परित्याग किया। यदि ये दोनों परित्याग वैध माने जाते तो उत्तराधिकार पहली पीढ़ी के प्रतिनिधियों को जाता था। किन्तु चार्ल्स द्वितीय के पिता की भी केवल दो बहनें थी। इनमें से एक का विवाह फ्रांस के राजा लुई १३ वें से हुआ था और वह लुई १४वें की माता थी, जब कि दूसरी बहन ने सम्राट् फर्डिनेण्ड द्वितीय से विवाह किया था और वह लियोपोल्ड प्रथम की माता थी। इस प्रकार दोनों पीढ़ियों में अन्तर्विवाह ने फ्रांस को तथा हैब्स्बर्ग घराने की आस्ट्रियन वंश की शाखा को लगभग समान महत्व रखने वाला दावा प्रदान किया था। इनमें से कोई भी शक्ति इस बात के लिए कभी सहमत नहीं हो सकती थी कि स्पेन का समूचा राज्य उत्तराधिकार में दूसरे को मिल जाये। अन्य कोई भी यूरोपियन शक्ति उस दशा में अपने को सुरक्षित नहीं अनुभव कर सकती थी, यदि इन दोनों महान् महाद्वीपीय राज्यों में से किसी एक को इस प्रकार समृद्ध होने दिया जाय और सम्भवतः विश्व पर प्रभुत्व स्थापित करने में समर्थ बनाया जाय। सब से बढ़ कर यह बात थी कि फ्रांस के नियन्त्रण में स्पेन के समूचे विशाल साम्राज्य के चले जाने की सम्भावना मात्र ही उन यूरोपियन राजनीतिज्ञों के लिए एक बुरा सपना बनी हुई थी, जिन्होंने अकेले ही फ्रांस की शक्ति का प्रतिरोध करना अत्यधिक कठिन कार्य पाया था।

यहाँ अब पहले होने वाले किसी भी युद्ध की अपेक्षा एक अधिक विराट् और भीषण युद्ध की सम्भावना थी, इसके निवारण की एक मात्र सम्भावना यह थी कि पहले से ही इस समस्या का एक सर्वसम्मत समाधान कर लिया जाय। लुई १४वें ने अन्त में यह समझ लिया था कि यूरोप के संयुक्त विरोध का सामना करना कितना खतरनाक है, अतः वह समझौते के लिए इच्छुक था। अतः उसने ग्रैंड एलायंस संघ (Grand Alliance) के प्रमुख राजनीतिज्ञ के रूप में विलियम तृतीय से सन्धिचर्चा आरम्भ की। यह माना जाता है कि इस प्रकार स्पेनिश प्रदेशों के बँटवारे की व्यवस्था के लिए "गुप्त कूटनीति" का अवलम्बन करने वाले ये दोनों राजा यूरोप के विरुद्ध एक अपराध कर रहे थे। वस्तुतः वे युद्ध को निवारण करने के एकमात्र सम्भव उपाय को ग्रहण कर रहे थे। केवल अपने हितों को सोचने वाले निरंकुश राजाओं के प्रतिनिधियों वाले एक सम्मेलन द्वारा इस प्रश्न के सार्वजनिक विवाद से कोई परिणाम न निकलता। यह बात बड़ी बेहूदा थी कि यूरोप के लिए और प्रत्येक यूरोपियन देश के लिए इतना अधिक महत्व रखने वाले प्रश्नों का निर्णय राजवंश के उत्तराधिकार के संयोगों से ही निश्चित किया जाय। स्पेन के प्रदेश ऐसे राष्ट्रीय राज्य नहीं थे, जिसका भाग्यनिर्णय केवल स्पेनिश जनता की चिन्ता करने का विषय हो। स्पेन के प्रदेशों में इटली के कुछ अतीव महत्वपूर्ण भाग थे, इनमें वह नीदरलैण्ड्स (बेल्जियम)

सम्मिलित था, जो फ्रांस के विरुद्ध डचों की एक आवश्यक प्रतिरक्षा का निर्माण किया करता था। सबसे बढ़ कर इसमें नयी दुनियाँ का विशाल और दुरुपयोग किया जाने वाला साम्राज्य था, इसके व्यापार और उपनिवेशन के अवसरों की उपेक्षा हो रही थी। सारी दुनियाँ में विस्तीर्ण इन प्रदेशों की व्यवस्था में अवश्यमेव निश्चित रूप से शान्ति और युद्ध के प्रश्न सम्मिलित थे। यदि लुई १४वाँ और विलियम तृतीय युद्ध का निवारण करने वाले किसी समझौते पर पहुँच सकते तो वे मानव जाति के उपकारक होते।

लम्बे वादविवादों में लुई १४वें ने एक प्रशंसनीय और बिलकुल अप्रत्याशित मृदुता प्रदर्शित की। इन विवादों के बाद एक समझौता हुआ। यह **प्रथम विभाजन सन्धि** (First Partition Treaty) (१६९८ ई०) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अनुसार, स्पेन नीदरलैण्ड्स और इण्डीज बवेरिया के इलेक्टोरल प्रिन्स को मिलने थे और इटली में विद्यमान स्पेनिश प्रदेशों को आस्ट्रिया एवं फ्रांस के बीच में बाँटा जाना था। जब इस समझौते की शर्तों की घोषणा की गयी तो इस समाधान ने भी एक तूफान पैदा कर दिया। स्पेन का अहंकार इस बात के लिए सहमत नहीं हो सकता था कि उसे किसी भी स्पेनिश प्रदेश की हानि उठानी पड़े; पवित्र रोमन सम्राट् अपने दावे के किसी भी भाग को छोड़ने के लिए तैयार नहीं था। इन कठिनाइयों पर विजय पायी जा सकती थी, किन्तु इस समाधान की व्यावहारिकता उस समय नष्ट हो गयी जब १६९९ ई० में युवा इलेक्टोरल प्रिन्स की मृत्यु चेचक से हो गयी। इस समस्या का अब नये सिरे से समाधान करना आवश्यक था।

लुई १४वाँ यह जानता था कि स्पेनिश लोगों का रोष उन्हें अपने साम्राज्य का विभाजन देखने की अपेक्षा उन्हें एक फ्रेंच राजा को अधिक तत्परता से स्वीकार करने की प्रेरणा दे सकता था, अतः उसे इस आकर्षक सम्भावना में तथा समझौते की अपनी नीति के पुनर्नवीकरण में से किसी एक को चुनना आवश्यक था। किन्तु यह निश्चित नहीं था कि स्पेनिश लोग फ्रेंच राजा की उपेक्षा करते हुए आस्ट्रियन राजा का चुनाव नहीं करेंगे; किसी भी दशा में एक लम्बा और भयंकर युद्ध सम्भव प्रतीत होता था। अतः लुई ने एक नये बँटवारे के समझौते के लिए अपने को तैयार कर लिया और पहले की अपेक्षा अपने को और भी अधिक मृदु प्रदर्शित किया। विलियम तृतीय के साथ ही की गयी **द्वितीय विभाजन सन्धि** (१६९९ ई०) में वह इस बात के लिए सहमत हो गया कि स्पेन और नीदरलैण्ड्स तथा सभी इण्डीज पवित्र रोमन सम्राट् के दूसरे बेटे को मिलें, बशर्ते कि वह इस बात का वचन दे कि वह स्पेनिश और आस्ट्रियन राजमुकुटों को कभी संयुक्त नही करेगा। फ्रांस की क्षतिपूर्ति लोरेन की प्राप्ति से की जानी थी, लोरेन के ड्यूक को मिलान की इटैलियन-स्पेनिश डची दी जानी थी। ये बड़ी आश्चर्यजनक रियायतें थीं और वे यह प्रदर्शित करती हैं कि लुई की युद्ध का निवारण करने की इच्छा कितनी सच्ची थी।

किन्तु इस नयी व्यवस्था को यद्यपि यूरोप की अधिकांश शक्तियों ने स्वीकार कर लिया, तथापि इससे अधिकतम साक्षात् सम्बन्ध रखने वाले दलों की सहमति इसे नहीं प्राप्त हुई। सम्राट् इसे स्वीकार करना नहीं चाहता था; वह इस बात का इच्छुक नहीं था कि समूचे उत्तराधिकार के अपने दावे के रत्तीभर हिस्से का भी परित्याग करे। सबसे बढ़ कर यह

बात थी कि स्पेन इसे स्वीकार नहीं करना चाहता था। अपनी निर्बल दशा में भी उसके अभिमान ने इस बात से इन्कार कर दिया कि वह अपने प्रदेश के किसी भी भाग का समर्पण करना स्वीकार करेगा। उसके राजनीतिज्ञों का यह लक्ष्य था कि साम्राज्य के लिए प्रबलतम सम्भव संरक्षण प्राप्त करते हुए इसे इकट्ठा बना कर ही रखा जाय। इस लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए राजमहल के लम्बे षड्यन्त्रों के बाद चार्ल्स द्वितीय ने अक्टूबर १७०० ई० में एक वसीयत पर हस्ताक्षर किये। इसके अनुसार उसने अपने सभी प्रदेशों का उत्तराधिकारी लुई १४वें के दूसरे पोते को बनाया। यदि वह उसे अस्वीकार करे तो वसीयत में यह व्यवस्था की गयी थी कि समूची विरासत सम्राट् के दूसरे लड़के को मिलेगी। तीन सप्ताह बाद चार्ल्स द्वितीय की मृत्यु हो गयी; उसकी वसीयत की शर्तें विधिपूर्वक फ्रांस को बता दी गयी थीं।

अब लुई को क्या करना चाहिए था ? यदि वह अपने पोते की ओर से स्पेनिश राजमुकुट को ग्रहण करने से इन्कार करता तो वसीयत के अनुसार यह अधिकार हैब्सबर्ग वंश वालों को मिल जाता और वे इसे निश्चित रूप से स्वीकार कर लेते। उस दशा में क्या इंग्लैण्ड और हालैण्ड फ्रांस का समर्थन इस बात पर आग्रह करते हुए करते कि विभाजन सन्धि का पालन किया जाना चाहिए ? व्यावहारिक रूप से यह निश्चित था कि वे ऐसा न करते। दोनों देशों में शान्ति का समर्थक दल प्रबल था। इंग्लैण्ड की आवाज निर्णायक हो सकती थी, किन्तु यहाँ टोरी विलियम तृतीय के उग्र विरोधी थे, उन्होंने सेना को नगण्य संख्या तक घटा दिया था, वे विभाजन सन्धि के विरुद्ध जिहाद घोषित कर चुके थे। वस्तुतः वे फ्रांस के साथ मैत्री रखना चाहते थे, यह बात विशेष रूप से उन लोगों में थी जो जेम्स द्वितीय की समर्थक (जेकोबाइट) भावना वाले थे। यदि लुई विभाजन सन्धि को मानता और स्पेनिश अधिकार को लेने से इन्कार करता तो—या तो उसे यह देखना था कि फ्रांस के पराम्परागत शत्रु हैब्सबर्ग घराने को पुनः वह प्रबल शक्ति प्राप्त हो जाती, जो वह चार्ल्स पंचम के समय में उपभोग कर रहा था, अथवा उसे अकेले ही रोकने के लिए लड़ना पड़ता। लुई १४वें को स्वाभाविक रूप से यह प्रतीत होता था कि प्रत्येक प्रतिकूल अवस्था में एकाकी रूप से लड़े जाने वाले युद्ध से यह अधिक अच्छा है कि वह वसीयत को स्वीकार कर ले, भले ही इसे मानने से उसे अपने पोते के उत्तराधिकारों की रक्षा करने के लिए ऐसी लड़ाई करनी पड़े। इस युद्ध में फ्रांस के साधनों के साथ स्पेन के सभी साधन जुड़ जाते (यह निश्चित नहीं था कि ऐसा युद्ध अनिवार्य होगा)। उसने इस वसीयत को स्वीकार करने का निश्चय किया तथा सभी परिस्थितियों मे (और विशेषतः इंग्लिश टोरियों की प्रवृत्ति को देखते हुए) उसे इसे स्वीकार करने के लिए दोष नहीं दिया जा सकता। विलियम तृतीय ने, स्वाभाविक रूप से, उसके कार्य को विश्वास-भंग करना समझा, किन्तु यह स्मरण रखना ठीक है कि इस विभाजन सन्धि का तब तक कोई मूल्य नहीं था, जब तक पवित्र रोमन सम्राट् और स्पेन इसे स्वीकार न करें, इन दोनों में से कोई भी इसे नहीं चाहता था।

यदि लुई को १७वीं शताब्दी की राजनीतिज्ञता के किसी भी मानदण्ड से देखा जाय, तो उसे समुचित रूप से दोष नही दिया जा सकता। किन्तु लगभग एक ही नियामक इच्छा के नेतृत्व में फ्रांस और स्पेन के सम्मिलन द्वारा उत्पन्न हुई परिस्थिति, वस्तुतः, यूरोप के लिए और सब से बढ़ कर समुद्री शक्तियों के लिए भयावह थी। फिर भी शान्ति के लिए इच्छा इतनी प्रबल थी कि १७०१ ई० में इंग्लैण्ड ने तथा डचों ने विलम्बित रूप से तथा अनिच्छापूर्वक लुई के पोते फिलिप पंचम को स्पेन का राजा स्वीकार कर लिया। पवित्र रोमन सम्राट् ने वस्तुतः इसे स्वीकार करने से इन्कार कर दिया और उत्तरी इटली में फ्रेंच सेनाओं द्वारा रक्षित स्पेनिश प्रदेशों के विरुद्ध युद्ध आरम्भ कर दिया। किन्तु सम्राट् अकेला कुछ नहीं कर सकता था। उसके पास कोई पैसा नहीं था, उसके हंगरी के प्रदेश में एक विद्रोह इसी वर्ष भड़क उठा। यदि लुई अपनी स्थिति का प्रयोग नरमी से कर सकता, तो अब भी वह ऐसी शान्तिपूर्ण विजय प्राप्त कर सकता था, जो उस विजय की अपेक्षा कहीं अधिक उज्ज्वल होती, जो विजय उसकी सेनाएँ कभी भी उसे प्रदान करने में समर्थ हुई थीं।

किन्तु विजय के मद में उसने वह मृदुता विस्मृत कर दी, जिसे उसने इतनी कष्ट-पूर्ण रीति से सीखा था। इंग्लैण्ड में एवं हालैण्ड में व्यापारिक श्रेणियाँ पहले ही इस सम्भावना से भयभीत थीं कि उन्हें स्पेन के साथ उस व्यापार से वंचित किया जायगा, जो दोनों देशों के लिए अतीव लाभदायक रह चुका था। आने वाली घटनाओं का यह एक संकेत था कि लुई ने फ्रेंच व्यापारियों के लिए अपने पोते से स्पेनिश अमेरिका में नीग्रो लोगों को आयात करने का एकाधिकार (Asiento) प्राप्त किया। किन्तु इससे भी अधिक गम्भीर बातें भविष्य में होने वाली थीं। लुई ने यह घोषणा की कि उसका पोता फ्रेंच राज-गद्दी के अपने उत्तराधिकार को नही छोड़ सकता, इसे छोड़ने की बात अन्य शक्तियों के भयों को शान्त कर सकती थी। उसने बेल्जियम के महान् दुर्गों की रक्षा करने वाली डच सेनाओं को हरा दिया। ये स्थान 'अवरोध (Barrier) दुर्गों' के नाम से प्रसिद्ध थे, क्योंकि वे फ्रास की विजय के खतरे के विरुद्ध डचों के लिए एकमात्र संरक्षण का निर्माण करते थे, यह अवरोध या रोक अब समाप्त हो गई और डच अत्यधिक भय अनुभव करने लगे। अन्त मे जेम्स द्वितीय की मृत्यु पर (१७०१ ई०) लुई ने विधिवत् उसके बेटे को जेम्स तृतीय के रूप में इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड और आयरलैण्ड का राजा स्वीकार कर लिया। यह वही वर्ष था, जब पार्लियामेण्ट ने एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट (Act of settlement) पास किया था और जेम्स को निश्चित रूप से राजगद्दी के अधिकार से निस्सारित कर दिया था। यह कार्य इंग्लैण्ड को एक आदेश की भाँति प्रतीत हुआ और इससे यह खतरा पदा हो गया कि फ्रांस और स्पेन की संयुक्त शक्ति द्वारा एक कैथोलिक राजा को पुनः राजगद्दी पर बैठाया जायगा। इसने टोरियों में भी असन्तोष की तथा राष्ट्रीय संकट की प्रबल भावना को उद्दीप्त किया; इंग्लैण्ड में लड़ाई का उत्साह उच्चतम शिखर तक पहुँच गया। डचों से भी यह बहुत ऊँचा चला गया और पहली बार विलियम तृतीय ने अपने को दोनों देशों की राष्ट्रीय भावना द्वारा समर्थन किया जाता हुआ पाया। वह पिछले युद्ध के महान् मैत्री-संघ के पुनर्निर्माण के

कार्य में लग गया। अब ब्रिटिश द्वीप समूह जिस नूतन और अधिक बड़े संघर्ष में प्रवेश कर रहे थे, उसमें पिछले युद्ध की भांति उद्देश्य के बारे में कोई ऐसा मतभेद और अनिश्चितता नहीं थी।

किन्तु विलियम ने ज्योंही इसकी तैयारी पूरी की, त्योंही मृत्यु ने उसे घेर लिया। उसके भाग्य में नहीं बदा था कि वह उस लम्बे संघर्ष का अन्तिम परिणाम देख सके, जिस पर उसने अपना पूरा जीवन और शक्ति लगायी थी। उसकी उत्तराधिकारिणी शान्त तथा मूर्ख रानी एन थी; उसमें कूटनीति की और युद्ध के विषय में विलियम जैसा गम्भीर ज्ञान नहीं था। किन्तु वह मर्लबरो के अर्ल-जान चर्चिल के पूर्ण प्रभाव में थी, उसे विलियम तृतीय ने सेना की कमान में अपना उत्तराधिकारी बनाया था। अब मर्लबरो को अपने को विलियम जैसा महान् कूटनीतिज्ञ और उसकी अपेक्षा अत्यधिक बड़ा सेनापति प्रदर्शित करना था।

३. सैनिक समस्या और मर्लबरो की महत्ता

स्पेनिश उत्तराधिकार के युद्ध में, आग्सबर्ग के संघ के युद्ध की अपेक्षा लुई १४वां अधिक अनुकूल स्थिति में था। उस समय उसे केवल फ्रांस के साधनों पर अवलम्बित रहना पड़ा था। अब स्पेनिश साम्राज्य के सभी मनुष्य और साधन उसके अधिकार में थे, इन्हें फ्रेंच संगठन द्वारा महान् प्रभावशाली बनाया जा सकता था। स्पेनिश नीदरलैण्ड्स के वे सब दुर्ग अब उसके अधिकार में थे, जिन दुर्गों ने पिछले युद्ध में उसके हमलों को विफल किया था, इस प्रकार उससे डचों को भीषण खतरा था। अपने दक्षिणी सीमान्त पर वह सब चिन्ताओं से मुक्त था। उसके पास उस भूमध्यसागर की कुञ्जियाँ थी, जहाँ मित्र-राष्ट्रों के बेड़ों के पास अपने कार्य करने के लिए कोई अड्डा नहीं था। इसी समय यूरोप में उसके साथ ऐसे सहायक थे, जिनकी सहायता अधिकतम महत्त्वपूर्ण हो सकती थी। हंगेरियन लोग सम्राट् के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे। पश्चिम की ओर आस्ट्रिया का निकट-तम पड़ोसी बवेरिया का इलेक्टर फ्रेंच पक्ष में सम्मिलित हो गया था और इस बात की अच्छी आशा थी कि दो शत्रुओं के बीच में पड़ जाने के कारण और इटली के स्पेनिश प्रदेश से खतरा होने के कारण, पवित्र रोमन सम्राट् को कुचला जा सकता है और इस प्रकार ग्रैण्ड एलायंस (Grand Alliance) का मूल आधार नष्ट हो जायगा। यदि १७०२ ई० में लुई के अधिकार में १६८९ ई० में प्रयुक्त किये गये साधनों के तुल्य साधन होते, तो उसकी पूर्ण विजय निश्चित होती और वह यूरोप का स्वामी बन जाता। पिछले युद्ध की क्षीणता के बाद फ्रांस अब भी रणक्षेत्र में इतनी सेनाएँ भेज सकने में समर्थ था जो ग्रैण्ड एलायंस (Grand Alliance) की सेनाओं की अपेक्षा कुछ अधिक संख्या में थी और उन्हें कमान की वास्तविक एकता का सर्वोच्च लाभ प्राप्त था, जब कि उनके शत्रु राजनीतिक और भौगोलिक-दोनों दृष्टियों से बँटे हुए थे।

युद्ध के आरम्भ में, इस प्रकार यह प्रतीत होता था कि सभी लाभ फ्रांस के पक्ष को प्राप्त हैं। केवल एक ही लाभ उसे प्राप्त नहीं था और बहुत कम व्यक्ति उसका महत्व समझते थे। फ्रांस समुद्र पर अपने उस आधिपत्य को खो चुका था जो १६८९ ई० में उसे

प्राप्त था। उसके बेड़े अभी भी इतने शक्तिशाली नहीं थे कि वे समान स्तर पर शत्रु की समुद्री शक्तियों के बेड़े से मुकाबला कर सकें और यह निर्णायक तत्व सिद्ध हुआ। यह पहला ऐसा महान् युद्ध था जिसमें नौसेना की उत्कृष्टता का प्रभाव और शक्ति स्पष्ट रूप से प्रदर्शित की गयी, यह इस तथ्य के बावजूद था कि समुद्र में केवल एक घमासान लड़ाई लड़ी गयी थी। यह लड़ाई अपने आप में अनिर्णयात्मक और अव्यवस्थित थी। अन्त में समुद्री शक्ति के कारण मित्रराष्ट्रों ने युद्ध जीता। निःसन्देह स्थल सेनाओं के बिना यह कार्य लगभग असम्भव होता, किन्तु समुद्री शक्ति ने मित्रराष्ट्रों को संयुक्त बनाया था। इसने सब बिखरी हुई लड़ाइयों को एक महान् युद्ध की कड़ी में जोड़ दिया था। इसने मित्रराष्ट्रों के लिए बाह्य जगत् के साधनों के द्वार को खोल दिया और लुई को बड़ी मात्रा में इन साधनों से वंचित कर दिया।

विलियम तृतीय के युद्ध में भाग लेने वाले हिस्सेदारों में इंग्लैण्ड केवल एक हिस्सेदार था। स्पेनिश उत्तराधिकार का युद्ध ग्रेट ब्रिटेन के संयुक्त राज्य द्वारा लड़ी जाने वाली पहली लड़ाई थी। इसमें ब्रिटिश द्वीपों ने प्रबल एवं नियामक हिस्सा लिया। यह सत्य है कि उनकी सेनाएँ युद्ध में लगी सम्पूर्ण सेनाओं का केवल एक छोटा हिस्सा थीं, तथापि उन्हें प्रायः अधिकतम भयंकर कार्य करने पड़े। किन्तु ब्रिटिश सम्पत्ति ने (और कुछ कम मात्रा में डच सम्पत्ति ने) मित्रराष्ट्रों की सेनाओं के व्यय का एक बड़ा भाग आर्थिक सहायताओं के रूप में अदा किया। इस सहायता के बिना वे रणक्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में सेनाएँ नहीं नहीं ला सकते थे। मित्र राष्ट्रों का बेड़ा समूची मैत्री का प्रमुख स्तम्भ था और मित्र राष्ट्रों के बेड़े में ब्रिटिश सैन्य दल अब डचों की अपेक्षा अधिक संख्या में थे। अन्त में तथा सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि रणनीति का संचालन मुख्य रूप से एक महान् इंग्लिश सैनिक की प्रतिभा से किया गया। इस नाजुक घड़ी में इंग्लैण्ड ने मर्लबरो के अर्ल (और बाद में ड्यूक) जान चर्चिल के रूप में इतिहास का एक सबसे बड़ा और निश्चय से उसके इतिहास में सबसे महान् सेनापति उत्पन्न किया।[१] यह सैनिक नेतृत्व के सभी गुणों—रणकला में, अथवा लड़ाइयों की योजना बनाने में, सैनिक चालों में, लड़ाइयों के लड़ने में और कूटनीतिक गुणों में समान रूप से पारंगत था। ये सब गुण उस समय बड़े आवश्यक थे जब कि विभिन्नता रखने वाले मित्रों के एक पंचमेल समूह को इकट्ठा बनाये रखना तथा एक सामान्य योजना की अधीनता में अपना भाग लेने के लिए उन्हें तैयार करना जरूरी था।

मर्लबरो ने पिछले युद्ध में, यूरोप में तथा आयरलैण्ड में पहले ही अपने कुछ उल्लेखनीय सैनिक गुणों को प्रदर्शित किया था। परन्तु उसे अपनी योग्यताओं के अनुरूप कोई कमान कभी नहीं दी गयी थी, क्योंकि विलियम तृतीय ने उस पर कभी विश्वास नहीं किया था। १६८८ ई० की क्रान्ति के निर्णायक तत्वों में उसका जेम्स द्वितीय का साथ छोड़ना और राजकुमारी एन पर उसका वह प्रभाव था, जिसके कारण उसने भी

---

१. सर डब्ल्यू० बटलर ने मर्लबरो की एक लघु जीवनी लिखी है।

अपने पिता का साथ छोड़ दिया था और प्रोटेस्टेण्ट मत के प्रति उनकी निष्ठा में कोई भी सन्देह प्रतीत नहीं होता था। फिर भी, विलियम तृतीय के समूचे राज्यकाल में उसने निर्वासित राजा से सम्बन्ध बनाये रखा। किन्तु यह बात उसके अधिकांश समकालीन व्यक्तियों के बारे में भी सत्य थी, क्योंकि उस समय क्रान्ति की व्यवस्था सुरक्षित नहीं थी। उस पर राज-द्रोह के निश्चित कार्य करने का आरोप लगाया गया था, किन्तु ये आरोप सिद्ध नहीं किये गये थे। इस महापुरुष की नैतिकता के बारे में भले ही कुछ सोचा जाय, किन्तु बौद्धिक और व्यावहारिक शक्तियों में, साहस में, प्रत्युत्पन्नमतित्व में और ब्योरे की बातों को दृष्टि से ओझल किये बिना विस्तृत दृष्टिकोण ग्रहण करने की योग्यता में, वह अपने सभी समकालीन व्यक्तियों से ऊँचा उठा हुआ था। विलियम तृतीय ने उसके कुछ गुणों को स्वीकार किया था और उसे सैनिक कमान में अपना उत्तराधिकारी बनाया था। जब युद्ध का मुख्य उत्तरदायित्व उसके कन्धों पर पड़ा तो वह उस महान् अवसर के लिए उत्कृष्ट रूप से ऊँचा उठा, और उसने मनुष्यों के उन महान् नेताओं में अपना स्थान प्राप्त किया, जिन्हें ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल ने उत्पन्न किया है।

आठ वर्ष तक उसने ऐसी मात्रा में शक्ति का प्रयोग किया, जिस शक्ति का उपभोग बहुत कम इंग्लिश व्यक्तियों ने किया है। वह अपनी एक अतीव योग्य और शक्तिशालिनी पत्नी का भक्त था, इसके द्वारा उसने कुछ वर्ष तक रानी के मन पर पूरा प्रभुत्व स्थापित किया। अपने घनिष्ठतम साथी लार्ड ट्रेजरर गोडोल्फिन के साथ मिल कर उसने इंग्लैण्ड की नीति का संचालन किया और उस समय के राजनीतिक षड्यन्त्रों में एक प्रमुख भाग लिया, उसकी दृष्टि सदैव मुख्य रूप से युद्ध की आवश्यकताओं पर रहती थी। उसकी कूटनीति ने ही मैत्रीसन्धि को संयुक्त बनाये रखा। उसमें धैर्य तथा अन्तर्दृष्टि के उच्चतम गुण थे। इसके अतिरिक्त उसमें एक वैयक्तिक आकर्षण था। मार्लबरो सदैव यह जानता था कि तुनुकमिजाज तथा अनुगामी जर्मन राजाओं को तथा ज़िद्दी, हल्ला-गुल्ला करने वाले, क्षुद्र वस्तुओं को अधिक महत्व देने वाले डचों को युद्ध योजनाओं में सहयोग देने के लिए वैयक्तिक आकर्षण का प्रयोग किस प्रकार करना चाहिए। उसकी ये योजनाएँ प्रायः इतनी साहसपूर्ण और दूरगामी होती थी कि वे जर्मन तथा डच लोगों की समझ से पूर्णरूप से परे होती थीं। वह समग्र रूप से इंग्लैण्ड की युद्ध-नीति का निर्माता था। यह उसका ही दिमाग का था, जो फ्रांस तथा स्पेन पर इस ढंग से आक्रमण करने की योजना के भागों को तैयार करता था कि प्रत्येक भाग दूसरे भागों की सहायता करता रहे। उसने स्थलीय और समुद्री शक्ति के सम्बन्धों की तथा उस पद्धति की समझ को प्रदर्शित किया, जिसके अनुसार इसका उपयोग एक दूसरे को अच्छे ढंग से पूर्ण बनाने के लिए किया जा सकता था। इस प्रकार की सूझबूझ उसके किसी भी अन्य समकालीन व्यक्ति ने नहीं प्रदर्शित की तथा उसके बहुत कम सेनापतियों ने ऐसी समझ दिखायी। इन सब बातों के अतिरिक्त वह नीदरलैण्ड में मित्रराष्ट्रों की सेनाओं का प्रधान सेनापति था। यद्यपि वह कभी यह नहीं जानता था कि उपलब्ध सेनाओं का सर्वोत्तम उपयोग करने के लिए खुली छूट क्या होती है और वह अपनी सेना के साथ जाने वाले डच अधिकारियों द्वारा विशेषतः अकल्पनीय रूप से रोका

जाता था, तथापि उसकी योजनाएँ एक ऐसा साहस और मौलिकता प्रदर्शित करती हैं, जिनमें बहुत ही कम सेनापति उससे आगे बढ़े हैं। अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करने में उसने ब्योरे की बातों पर ऐसा अधिकार प्रदर्शित किया, जिसकी उपेक्षा महानतम व्यक्ति प्रायः किया करते हैं। युद्ध में वह नाजुक स्थिति का और नाजुक घड़ी का लाभ कभी भी गलती न करने वाली दक्षता के साथ उठाया करता था। इसने उसे उतना ही बड़ा व्यूह-कुशल सेनापति बना दिया जितना बड़ा वह राजनीतिज्ञ था। यद्यपि वह एक मिली-जुली सेना का नेतृत्व कर रहा था, यह सेना सब प्रकार की ईर्ष्याओं से अवरुद्ध हो रही थी और इसकी संख्या लगभग सदैव शत्रुओं की संख्या से कम रहती थी, फिर भी उसने रणक्षेत्र में पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त किया। उसकी महत्ता के कारण ही यह हुआ कि पिछले युद्ध की विशेषता को सूचित करने वाली, किलेबन्द नगरों के चारों ओर की जाने वाली मन्दगामी सैनिक चालों का स्थान ऐसी साहसपूर्ण रणनीतिक चालों ने ले लिया, जिनसे शत्रु हाँफते रह जाते थे। दोनों पक्षों में केवल एक ही सेनापति का नाम मर्लबरो के साथ लिया जा सकता है और यह साम्राज्य की सेनाओं का सेनापति प्रिन्स यूजीन था। उसमें और मर्लबरो के मध्य सदैव अतीव हार्दिक विश्वास बना रहा; फिर भी यूजीन सदैव मर्लबरो के विचारों तक ऊँचा उठने में असमर्थ था। मर्लबरो के बारे में यह कहना कठिन है कि क्या वह कूटनीतिज्ञ के रूप में सबसे बड़ा था अथवा संगठनकर्ता के रूप में अथवा रणक्षेत्र में नेता के रूप में सबसे बड़ा था। यदि उसे नेपोलियन की भाँति कार्य करने की स्वतन्त्रता होती तो उसकी कीर्ति नेपोलियन से भी अधिक होती। फिर भी, उसने बड़ी चतुराई और धैर्य के साथ अड़ियल या जिद्दी सामग्री को साँचे में ढाला और उन असम्बद्ध तथा ईर्ष्यालु समूहों को एक सूत्र में आबद्ध किया, जिन समूहों के साथ उसे व्यवहार करना था। ये बातें उसकी उपलब्धियों का अधिकतम विस्मयजनक अंश हैं।

४. स्पेनिश उत्तराधिकार का युद्ध

युद्ध की पहली दो सैनिक कार्यवाहियों में मर्लबरो के दृष्टिकोण की विशालता को अपने आप को प्रदर्शित करने का बहुत कम अवसर मिला। ऐसा प्रतीत होता था कि युद्ध तीन विशिष्ट और प्रत्यक्षतः असम्बद्ध क्षेत्रों में विभक्त है, जिनका एक दूसरे के साथ सम्भव सम्बन्ध शायद केवल यही था कि मर्लबरो इनका निरीक्षण कर रहा था। नीदरलैण्ड्स में फ्रेंच लोगों के अधिकार में एण्टवर्प से राइन नदी तक के सब किले थे। वे आवश्यकता पड़ने पर सुदृढ़ रूप से किलेबन्दी की हुई एक रेखा तक पीछे हट सकते थे, यहाँ मर्लबरो ने डच सीमान्त से लिएज[१] तक म्यूज नदी के किलों पर चतुराई से अधिकार करना आरम्भ किया। यह १७०२ ई० का कार्य था। डच ठीक इसी प्रकार की किलों की लड़ाई के अभ्यस्त थे। १७०३ ई० में मर्लबरो ने बान तक राइन नदी की निचली घाटी पर अधिकार कर लिया। इसमें उसका सीधा उद्देश्य यह था कि वह दक्षिणी जर्मनी में

---

१. नीदरलैण्ड्स के नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ५३ देखिए।

पर केन्द्रित होने वाले हमलों के लिए खुला हुआ था। केवल महान् सैनिक प्रतिभा ही ऐसे दूरगामी योजना बना सकती थी; केवल नौसैना की प्रबलता ही इसे सम्भव बना सकती थी।

१७०४ ई० के वर्ष में इस भव्य विचार को क्रियान्वित करने के लिए पहले पग उठाये गये। सब से पहले पवित्र रोमन सम्राट् को बचाया जाना आवश्यक था। इस योजना के लिए मर्लबरो ने राइन नदी पर अपने आधारभूत अड्डे से जर्मनी होते हुए एक साहसपूर्ण प्रयाण की योजना बनायी[1]। किन्तु उसने अपनी योजना को प्रकट होने देने का साहस नहीं किया। फ्रेंचों के विरुद्ध स्वयमेव अपनी प्रतिरक्षा करने के लिए छोड़ दिये जाने के विचार मात्र से ही डच लोग आतंक से पीड़ित हो जाते; न ही यह बात सुरक्षित थी कि नीदरलैण्ड्स में विद्यमान फ्रेंच सेना को उसके उद्देश्य का जरा भी पता चलता। अत: उसने मोसेल्ले नदी की घाटी के रास्ते से पूर्वी फ्रांस पर हमले का ढोंग किया। किन्तु इसका आशय केवल ध्यान बँटाना और उसे एक सुविधाजनक स्थान पर अपनी सेनाओं को एकत्रित करने का एक बहाना मात्र प्रदान करना था। युद्ध करने की ऋतु अभी मुश्किल से ही आरम्भ हुई थी, वह उससे पहले ही तेजी से जर्मनी में प्रयाण कर रहा था और जून तक उसने दक्षिणी जर्मनी में एक वरिष्ठ एवं लम्बे अनुभव वाले अधिकारी, बेडन के मार्ग्रेव की कमान में विद्यमान मित्रराष्ट्रों की प्रधान सेना के साथ सम्मिलन स्थापित किया। ऐसे साथी के साथ सहयोगपूर्वक काम करने में असीम चातुर्य की आवश्यकता थी। किन्तु मर्लबरो इसमें इतना सफल हुआ कि उसने ब्लेनहीम की उज्ज्वल विजय प्राप्त की (अगस्त)। यह उसकी विजय थी। शानदार रीति से संचालित इस युद्ध का यह परिणाम हुआ कि मित्रराष्ट्रों की सेना से अधिक बड़ी, फ्रांस और बवेरिया की संयुक्त सेना पूर्ण रूप से भंग हो गयी। इसके १४ हजार सैनिक मारे गये और ग्यारह हजार सैनिक बन्दी बनाये गये, इनमें फ्रेंच सेनापति मार्शल टेलार्ड भी सम्मिलित थे। लुई के राज्यकाल में रणक्षेत्र में फ्रेंच लोगों की यह पहली महान् पराजय थी। सम्राट् को बचा लिया गया, तथा बवेरिया को नपुंसक बना दिया गया। फ्रेंच सेना को राइन नदी के पश्चिम में पीछे हटना पड़ा, इसके बाद यहाँ मित्रराष्ट्रों की एक सेना आ गयी। सम्पूर्ण स्थिति उलट गयी और इस समय के बाद से मित्रराष्ट्रों का पलड़ा सदैव भारी रहा।

ब्लेनहीम युद्ध की प्रगति के समय में नीदरलैण्ड्स में कुछ भी महत्वपूर्ण बात नहीं की गयी, क्योंकि महान् [illegible] योजना अच्छी तरह से आरम्भ की गयी थी। गालवे के अर्ल के नेतृत्व में एक संयुक्त इंग्लिश तथा डच सेना को पुर्तगाल में उतारा गया, ताकि वह पश्चिम दिशा से स्पेन पर आक्रमण करने में पुर्तगालियों का सहयोग कर सके। जल सेनापति रुक ने अपर्याप्त सेनावाली जिब्राल्टर की चट्टान पर अधिकार कर लिया (अगस्त १७०४ ई०), ताकि यह भूमध्यसागर में मित्रराष्ट्रों के बेड़े के लिए एक अड्डे का काम दे सके; जब एक फ्रेंच बेड़ा तूलों के बन्दरगाह से फ्रेंच सेना की सहायता करने का प्रयत्न करने के उद्देश्य से बाहर निकला तो इसने इसे मलगा के निकट नौसैनिक युद्ध में हरा दिया।

---

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट संख्या ३८ (ए) देखिए।

इस युद्ध में समुद्र पर यही एकमात्र घमासान लड़ाई थी। यह एक निर्णायक लड़ाई नहीं थी; चूँकि फ्रेंच बेड़े ने इस युद्ध में इसके बाद मित्रराष्ट्रों को पुन: लड़ने की चुनौती नहीं दी थी, अत: इसके परिणाम पूर्ण सफलता देने वाले थे। जिब्राल्टर की हानि स्पेन के लिए इतना गम्भीर मामला था (क्योंकि इसने मित्रराष्ट्रों को भूमध्यसागर के प्रवेश द्वार का नियन्त्रण दे दिया था) कि शरद ऋतु में इस किले पर समुद्र के एवं स्थल के मार्गों से भीषण हमला किया गया। किन्तु मार्च में ब्रिटिश बेड़े ने इस घेरे को तोड़ दिया और इसके बाद से भूमध्यसागर की कुञ्जी-जिब्राल्टर सुरक्षित रूप से ब्रिटिश अधिकार में बना रहा।

१७०५ ई० में स्पेन के मोर्चे को पूरे जोर शोर से आरम्भ कर दिया गया। जब गालवे एक मिश्रित डच और पुर्तगाली सेना के साथ पुर्तगाल से स्पेन में आगे बढ़ा, उस समय सर क्लौडस्ले शावेल के नेतृत्व में एक बेड़े ने पूर्वी तट पर एक छोटी सेना पहुँचायी, इसका सेनापति एक साहसी, लापरवाह, रोमांचक कथाओं का अनुत्तरदायी नायक, पीटरबरो का अर्ल चार्ल्स मोरडाण्ट था[१]। पीटरबरो केटेलोनिया के समुद्र तट पर उतरा, यहाँ जनता उग्र रूप से फ्रांस की विरोधी थी। उसने बड़ी तत्परता से आस्ट्रिया के आर्कड्यूक चार्ल्स का पक्ष ग्रहण किया। केटेलोनिया और वेलेन्शिया को बड़ी तेजी से जीत लिया गया; समुद्री बेड़े के समर्थन के कारण इन प्रान्तों को अपने अधिकार में बनाये रखना सुगम हो गया।[२] अगले वर्ष १७०६ ई० में एक इससे भी अधिक चौंधिया देने वाली सफलता उस समय प्राप्त की गयी, जब पुर्तगाल से आगे बढ़ते हुए गालवे कुछ समय के लिए मेड्रिड पर अधिकार करने में सफल हुआ; यद्यपि उसे नगर खाली करना पड़ा और पीटरबरो के साथ मिलने के लिए पीछे हटना पड़ा, तथापि इस तथ्य ने यूरोप की कल्पना पर एक गहरा प्रभाव डाला कि शत्रु की सेनाएँ स्पेन के केन्द्रीय प्रदेश मेड्रिड में पहुँच गयीं, जहाँ मूर लोगों के निष्कासन के बाद से कोई शत्रु-सेना नहीं देखी गयी थी।

मित्रराष्ट्रों के लिए १७०६ ई० का वर्ष १७०४ ई० की अपेक्षा अधिक उज्ज्वल था। नीदरलैण्ड्स[३] में १७०५ ई० में मर्लबरो ने एण्टवर्प से नामूर तक वक्राकार उस सुदृढ़ दुर्ग-पंक्ति का भेदन किया, जिसे फ्रेंच तीन वर्ष से तैयार कर रहे थे और जिसकी रक्षा उससे कहीं अधिक संख्या रखने वाली सेना से की जा रही थी, जो सेना मर्लबरो के पास थी। मई १७०६ ई० में उसने इसके बाद अपनी विजयों में उज्ज्वलतम सफलता अर्थात् रेमिल्लीस की विजय प्राप्त की। इसमें उसने उत्तर की फ्रेंच सेना को नष्ट कर दिया, उसको अपने से लगभग ५ गुना अधिक हानि पहुँचायी। इस प्रबल विजय का परिणाम यह था कि नीदरलैण्ड्स के लगभग सभी किलेबन्द शहरों ने आत्मसमर्पण कर दिया। ऐसा प्रतीत होता था कि पेरिस पर प्रयाण करने के लिए मार्ग लगभग खुला है।

---

१. डब्लू० स्टेब्बिग द्वारा लिखित पीटरबरो की एक लघु जीवनी 'इंग्लिश मैन ऑफ ऐक्शन सीरीज़' में छपी है।

२. एटलस की प्लेट संख्या ७० का नक्शा देखिए।

३. एटलस की प्लेट संख्या ५३ का नक्शा देखिए।

इससे विजयों की कथा समाप्त नहीं हुई; क्योंकि इसी समय में प्रिंस यूजीन फ्रेंच लोगों को उत्तरी इटली से अव्यवस्थित रीति से भगा रहा था। उसने ट्यूरिन में एक प्रबल विजय प्राप्त की। वर्तमान इतिहास में किसी भी शक्ति को ऐसी मुसीबतें नहीं उठानी पड़ीं, जैसी मुसीबतें १७०४-६ ई० के वर्षों में अब तक अजेय फ्रेंच सेनाओं को उठाने के लिए बाधित होना पड़ा। लुई को विवश होकर सन्धि की प्रार्थना करनी पड़ी। वह इस बात के लिए तैयार था कि स्पेन आर्कड्यूक चार्ल्स के पास रहे, नीदरलैण्ड्स में अवरोधक दुर्गों की पंक्ति डचों के पास रहे। इन शर्तों पर शान्तिसन्धि अच्छी तरह से की जा सकती थी। किन्तु न तो सम्राट और न ही ब्रिटिश सरकार प्रस्तावित शर्तों से सहमत थी; महान् राजा के गर्व को चूर्ण करने के लिए हथौड़े के भारी प्रहार चलते रहे।

यह अच्छा होता यदि १७०६ ई० की विजयों के बाद शान्ति-सन्धि कर ली जाती; क्योंकि उस समय प्राप्त हो सकने वाली शर्तें उतनी ही अच्छी थीं, जितनी अच्छी शर्तों पर सात वर्ष बाद युद्ध समाप्त किया गया और १७०७ ई० की लड़ाई में मित्रराष्ट्रों को भीषण निराशाओं की एक शृंखला देखनी पड़ी। रोमाञ्चक साहसी और सैनिक-प्रतिभा-सम्पन्न स्वीडन के चार्ल्स द्वादश के बारे में हम कुछ बातें बाद में कहेंगे।[1] चार्ल्स जर्मनी में प्रकट हुआ और उसने सम्राट् पर हमले की धमकी दी; भयभीत जर्मन राजाओं ने अपनी कुछ सेनाएँ वापस बुला लीं, मर्लबरो को चार्ल्स द्वादश से मिलने के लिए यात्रा करने में तथा उसे अपने पक्ष में करने के लिए अपना समय बिताना पड़ा; इस कारण नीदरलैण्ड्स में कुछ नहीं किया गया। दक्षिणी जर्मनी में सम्राट् की सेनाओं को फ्रेंचों से प्रबल पराजय प्राप्त हुई। कुछ समय के लिए ऐसा प्रतीत होता था कि फ्रेंच लोग १७०४ ई० की भाँति एक बार पुनः वियना को खतरे में डाल देंगे। सर क्लौडस्ले शावेल के बेड़े के समर्थन के साथ प्रिन्स यूजीन द्वारा तूलों पर किया गया एक आक्रमण विफल हो गया, इसका एक मात्र सौभाग्यशाली परिणाम यह था कि फ्रेंच लोगों ने शावेल द्वारा पकड़े जाने से रोकने के लिए अपने भूमध्यसागरीय बेड़े के सर्वोत्तम जहाजों को जला दिया और इस प्रकार उन्होंने भूमध्यसागर में अपना अधिकार रखने के लिए किसी भी दावे को छोड़ दिया। अन्त में स्पेन में मेड्रिड पर नया आक्रमण करने का प्रयास करने वाली मित्रराष्ट्रों की सेनाओं ने यह अनुभव किया कि केटेलोनिया के अतिरिक्त सर्वत्र जनता की भावना उनके विरुद्ध हो रही थी। इन सेनाओं को जेम्स द्वितीय के एक औरस पुत्र और फ्रांस की सेवा में लगे हुए एक योग्यतम सेनापति बर्विक के ड्यूक ने अलमान्जा में बड़ी बुरी तरह से हराया। इसके बाद मित्र राष्ट्र स्पेन में इससे अधिक कुछ नहीं कर सके कि वे समुद्री बेड़े की सहायता के साथ केटेलोनिया से चिपके रहें। अब स्पेन में स्थिति बहुत असुरक्षित हो गयी, यह आवश्यक था कि पूर्वी स्पेनिश तट के निकट आक्रमण से सुरक्षित रहने वाला एक अड्डा बनाया जाय। मित्रराष्ट्रों के नौसैनिक आधिपत्य ने इसे सम्भव बनाया। १७०८ ई० में एक

१. छठी पुस्तक का दूसरा अध्याय देखिये।

ब्रिटिश सेना ने मिनोर्का[1] के टापू पर अधिकार कर लिया। इस टापू के पोर्टमेहोन के भव्य बन्दरगाह ने उन्हें ऐसा सुरक्षित स्थान प्रदान किया, जिसमें उनके जहाज अपनी शीत ऋतु बिता सकते थे और पुनः सुसज्जित किये जा सकते थे।

किन्तु १७०७ ई० की पराजयें केवल अस्थायी थीं। १७०८ ई० में यद्यपि लुई १४वें ने १७०७ ई० की सफलताओं का लाभ उठाने का उग्र प्रयत्न किया और कुछ समय के लिए उसने पश्चिमी फ्लैण्डर्स के अधिकांश नगरों को पुनः प्राप्त कर लिया, तथापि मर्लबरो ने औडेनार्डे में एक उज्ज्वल विजय प्राप्त की। इसने खोये हुए अधिकांश प्रदेश को पुनः प्राप्त किया और उत्तर की ओर से पेरिस की रक्षा करने वाली प्रधान फ्रेंच सेना को नष्ट कर दिया। यदि मर्लबरो की अपनी बात चल सकती तो उसने सीधा पेरिस पर प्रयाण किया होता और फ्रेंच राजधानी में शान्ति की शर्तों को अपने आदेश से निश्चित कराया होता। किन्तु अब प्रधान रणस्थल बन जाने वाले इस प्रदेश में सहयोग करने के लिए सम्राट् की विशाल सेना के साथ आया हुआ प्रिन्स यूजीन भी इस योजना को अतीव साहसिक समझता था। फिर भी सर्वाधिक महत्वपूर्ण लील (Lille) के नगर-दुर्ग पर अधिकार कर लिया गया और दो पीढ़ियों में पहली बार विजयी शत्रु सेनाओं ने फ्रांस की भूमि पर शिविर डाले।

एक बार पुनः लुई ने शान्ति के लिए प्रस्ताव रखा। वह बहुत रियायतें देने के लिए तैयार था, वह इस बात के लिए सहमत था कि उसका पोता नेपल्स और सिसली के अतिरिक्त समूचे स्पेनिश प्रदेशों पर अपने उत्तराधिकारी होने के दावे को छोड़ दे; वह डचों को समूचे बेल्जियन किले एक 'अवरोध' (Barrier) के रूप में समर्पण करने को तैयार था। मित्र-राष्ट्रों की यह माँग थी कि यदि स्पेनिश लोग आर्क ड्यूक को अपना राजा स्वीकार करने से इन्कार करें तो लुई को स्वयमेव स्पेन से अपने पोते को बाहर निकालने का कार्य अपने ऊपर लेना चाहिए। इस माँग पर सन्धि वार्ता भंग हो गयी। मर्लबरो को प्रत्यक्ष रूप से इस विफलता के लिए दोष नहीं दिया जा सकता, वस्तुतः उसे ऐसे अपमान के आगे झुकने के लिए लुई द्वारा किये गये इन्कार से सहानुभूति थी। किन्तु चाहे जिसको दोष दिया जाय, मित्रराष्ट्रों की जिद् ने लुई को समर्थ बनाया कि वह एक अन्तिम प्रयास के लिए फ्रांस को देशभक्ति दिखाने की अपील करे और यह निष्फल नहीं हुई।

ऐसा होने पर भी मुसीबतें बढ़ती ही चली गयीं[2]। यद्यपि फ्रेंच उग्र उत्साह के साथ लड़ रहे थे, तथापि वे मलप्लेक्वैट की रक्तपात पूर्ण लड़ाई में पराभूत हुए (१७०९ ई०), और १७१०-११ ई० में दूए पर अधिकार किया गया तथा काम्ब्रेई को खतरा उत्पन्न हो गया। मित्र राष्ट्रों की सेनाएँ फ्रांस के भीतर बहुत दूर तक चली गयीं और कोई ऐसी बात नहीं प्रतीत होती थी जो मर्लबरो को पेरिस पर अधिकार करने से तथा वर्साय में लुई के अपने ठाठबाठ वाले स्थान में शान्ति-सन्धि को बलपूर्वक थोपने की उसकी महत्वाकांक्षा को

---

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट सं० ७० देखिए।

२. एटलस की प्लेट संख्या ५३ का नक्शा देखिए।

पूर्ण होने से रोक सके। फ्रांस के कष्ट का और निर्धनता का अतिरञ्जित वर्णन बड़ी कठिनाई से किया जा सकता है। यह लुई के आरम्भिक दिनों के अन्यायपूर्ण औद्धत्य का भीषण दण्ड था। उसकी जनता ने विध्वंस के रूप में इसकी कीमत अदा की।

५. यूट्रेक्ट की शान्ति-सन्धि

इंग्लैण्ड के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन होने के कारण ही लुई की अन्तिम अपमान से रक्षा हुई। ज्यों-ज्यों लड़ाई आगे बढ़ती गयी, त्यों-त्यों मर्लबरो तथा गोडोल्फिन विवश हो कर ह्विग लोगों के अधिकाधिक समर्थन पर निर्भर होने लगे। ह्विग युद्ध को कटु अन्त तक ले जाने के लिए तैयार थे, क्योंकि वे समझते थे कि लुई चार्ल्स द्वितीय और जेम्स द्वितीय के सभी दुष्कर्मों को प्रोत्साहन देने वाला, स्टीवर्ट वंश के निर्वासित राजाओं का संरक्षक और यूरोप का अत्याचारी शासक था। दूसरी ओर टोरी शनैः-शनैः फ्रांस के साथ मित्रता रखने की भावना की ओर आ ही रहे थे। टोरी दल में जेम्स द्वितीय के समर्थक (जेकोबाइट) तत्व प्रबल होने लगे थे; वे हनोवर वंश के उत्तराधिकार को तथा अधिक विदेशी शासकों के विचार को नापसन्द करने लगे थे; सभी कारणों से वे शान्ति के लिए उत्सुक थे। १७१० ई० में युद्ध को संचालित करने वाले गोडोल्फिन तथा मर्लबरो के मन्त्रिमण्डल का पतन हो गया और इसके स्थान पर हार्ले तथा सेन्ट जोन की अध्यक्षता में एक टोरी मन्त्रिमण्डल आ गया[१]।

टोरी शान्ति की इच्छा रखें, यह बात स्वाभाविक और अच्छी थी, युद्ध पहले ही बहुत देर पाँच वर्ष तक चलता रहा था[२]। किन्तु उन्होंने जल्दी में जिन विधियों को अपनाया, वे अनुचित थीं और उन पर विश्वासघात का दोष लगाया जा सकता था। उन्होने अपने मित्रों से परामर्श किये बिना फ्रांस से गुप्त सन्धि चर्चा आरम्भ कर दी। उन्होंने अपमानजनक रीति से मर्लबरो को वापस बुलाया और उसके उत्तराधिकारी ऑरमाण्ड के ड्यूक को ऐसे निर्देश दिये, जिनके कारण व्यावहारिक रूप से उसके लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपने मित्रों को संकटावस्था में छोड़ दे। जब सन्धि चर्चा आरम्भ हुई, तो उन्होंने स्पेन में उन अभागे कैटेलोन लोगों के हितों को सुरक्षित बनाने के लिए कोई प्रयास नहीं किया, जिन्हें इंग्लैण्ड की सहायता का वचन देकर विद्रोह करने के लिए प्रोत्साहित किया गया था।

मर्लबरो के प्रधान सेनापति न रहने पर और क्रियात्मक रूप से ब्रिटिश सेनाओं के वापस बुला लेने पर अब मित्रराष्ट्र युद्ध को अधिक लम्बा खींचने का कोई लाभ नहीं प्राप्त कर सकते थे। किन्तु अब जिन प्रश्नों का समाधान किया जाना था, वे इतने जटिल और व्यापक थे कि शान्ति-सन्धि की शर्तों के पश्चिमी शक्तियों द्वारा निश्चित करने से पहले (१७१३ ई०) यूट्रेक्ट में एक लम्बे समय तक शान्ति सम्मेलन करना पड़ा; इसके एक साल

१. नीचे नवाँ अध्याय देखिए।

२. स्विफ्ट की पुस्तिका—दी काण्डक्ट ऑफ दी एलाइज़, टोरियों के दृष्टिकोण का बढ़िया वर्णन करती है।

बाद ही सम्राट् अपने को इस बात के लिए तैयार कर सका कि वह अनिवार्य होनहार को स्वीकार करे और स्पेन के राजमुकुट को पाने की आशाएँ छोड़ दें। इस शान्ति समझौते की मुख्य बातें ये थी[1] कि लुई १४वें के पोते को स्पेन तथा इण्डीज के राजमुकुट को रखने की अनुमति दी जाय, यह अनुमति इस शर्त पर हो कि फ्रेंच एवं स्पेनिश राजमुकुटों को कभी संयुक्त नहीं किया जायगा। यूरोप में स्पेन के प्रदेश से दूरवर्ती सभी स्पेनिश प्रदेश स्पेन के प्रभुत्व से निकल गये; बेल्जियम तथा नीदरलैण्ड्स आस्ट्रिया को दिये गये। किन्तु इसके साथ यह शर्त लगा दी गयी कि डचों को फ्रांस से अपनी रक्षा करने के लिए आठ अवरोध नगरों (Barrier Towns) में दुर्ग रक्षक सेना रखने का अधिकार होना चाहिए, डच लोगों के व्यापारिक हितों की दृष्टि से शेल्ड नदी व्यापार के लिए बन्द कर दी जानी चाहिए। इसका आशय एण्टवर्प के महान् बन्दरगाह का विनाश था। यूरोप की दृष्टि में बेल्जियम की महत्ता केवल सम्भावित फ्रेंच आक्रमण के विरुद्ध प्रतिरक्षा के रूप में ही थी, आस्ट्रियन शासन में तथा डचों की ईर्ष्या से अवरुद्ध होने वाले बेल्जियम को क्रियात्मक रूप से समृद्धि के पूर्ण विकास के प्रत्येक अवसर से वंचित कर दिया गया। उत्तरी इटली में मीलान की डची, दक्षिण में नेपल्स का राज्य, और सार्डीनिया का टापू भी आस्ट्रिया को दिये गये। इस प्रकार यह इटली में प्रभावशाली शक्ति बन गया। यह स्थिति उसके लिए तथा इटली के लिए विपत्तिजनक सिद्ध हुई। सेवाय के ड्यूक को मित्रराष्ट्रों के प्रति ईमानदारी का पुरस्कार उसे सिसली का टापू देकर तथा राजा का पद प्रदान करके दिया गया। बाद में उसे बाधित किया गया कि वह सिसली के टापू का विनिमय सार्डीनिया के अधिक निर्धन टापू के साथ कर ले। अन्त में इस नये राजवंश को अपने शासन में समूचे इटली का एकीकरण करना था। एक विचित्र संयोग से सन्धियों के इसी समूह में ब्रैडनबर्ग के इलेक्टर द्वारा प्रशिया के राजा की पदवी ग्रहण करने की औपचारिक स्वीकृति दी गयी थी। जिस प्रकार सुदूर भविष्य में सार्डीनिया का राजा एक संयुक्त इटली का शासक बनने वाला था, इसी प्रकार, प्रशिया के राजाओं को संयुक्त जर्मनी का स्वामी बनना था।

१७१३ ई० के समझौते को अधिकतम महत्वपूर्ण पहलू ब्रिटेन को इसके द्वारा दी जाने वाली स्थिति थी। ब्रिटेन लुई १४वें के पतन के लिए सब से अधिक उत्तरदायी था। यूरोप में ब्रिटेन ने जिब्राल्टर की चट्टान को तथा उत्तम बन्दरगाह सहित मिनोर्का टापू को प्राप्त किया। इन प्राप्तियों का यह आशय था कि भूमध्यसागर में ब्रिटेन की नौसैनिक शक्ति के लिए एक सुदृढ़ आधार की व्यवस्था हो गयी थी। ये अड्डे समुद्रों पर ब्रिटिश आधिपत्य की औपचारिक स्वीकृति थे।

इस सन्धि का इससे भी अधिक महत्वपूर्ण प्रभाव फ्रांस और ब्रिटेन की औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा पर पड़ा। युद्ध के दौरान औपनिवेशिक क्षेत्रों में बहुत कम लड़ाई हुई थी, क्योंकि सारा ध्यान और सभी उपलब्ध साधन यूरोप के भीषण संघर्ष में लगे रहे। कनाडा के फ्रेंच लोगों को प्रभावशाली सहायता पाने की आशा नहीं थी, अतः उन्होने १६९० ई० की

---

१. एटलस की प्लेट संख्या ६३ देखिए।

भाँति कोई आक्रमण करने का साहस नहीं किया; यद्यपि सीमा पर कुछ हमले होते रहे, तथापि उस समय तक कोई औपचारिक युद्ध नहीं हुआ जब तक कि १७१० ई० में एकेडिया (नोवास्कोशिया) के विरुद्ध एक संयुक्त ब्रिटिश और न्यू इंग्लैण्ड की सेना नहीं भेजी गयी। इसने उपनिवेश को जीत लिया और में अब तक पोर्ट रायल के नाम से प्रसिद्ध इसकी मुख्य बस्ती को रानी के सम्मान में एन्नापोलिस का नाम दिया। १७११ ई० में क्वेबक के विरुद्ध एक अधिक विस्तृत नौसैनिक तथा सैनिक अभियान दल भेजने की योजना बनायी गयी, किन्तु इसका संचालन बुरी रीति से हुआ और यह पूर्ण रूप से विफल हुई। यूट्रेक्ट की सन्धि[1] ने एकेडिया ब्रिटेन को दे दिया। यह इसके बाद नोवा-स्कोशिया के नाम से प्रसिद्ध हुक्षा। इस सन्धि ने सीमाओं को स्पष्ट रूप से निश्चित करने का कोई प्रयास नही किया। भविष्य में इससे बहुत विवाद उत्पन्न हुआ। न्यूफाउण्ड-लैण्ड में, फ्रेंच एवं ब्रिटिश—दोनों बस्तियाँ थीं। इसे भी निश्चित रूप से ब्रिटिश उपनिवेश स्वीकार किया गया। इसमें फ्रेंच लोगों के लिए मछली पकड़ने के कुछ अधिकार सुरक्षित रखे गये और इसका यह आशय था कि सेन्ट लॉरेन्स नदी के मुहाने पर दोनों तट अब ब्रिटेन के नियन्त्रण में थे, खास कनाडा में रहने वाले फ्रेंत्रों की सत्ता खतरे में पड़ गयी। यूरोप में उग्र संघर्ष में संलग्न होने के कारण यूरोपियन राज्यों ने औपनिवेशिक मामलों की ओर आपेक्षिक दृष्टि से बहुत कम ध्यान दिया था। किन्तु यूट्रेक्ट की सन्धि को 'औपनिवेशिक क्षेत्र' में तथा नौसैनिक और व्यापारिक मामलों में ब्रिटेन की प्रभुता की स्थापना को सूचित करने वाली समझा जाता है। अन्त में यूट्रेक्ट की सन्धि में स्पेन के साथ की गयी Asiento Treaty भी सम्मिलित थी। इसके अनुसार १७०२ ई० से फ्रांस को प्राप्त, स्पेनिश अमेरिका में नीग्रो दासों के आयात करने का एकाधिकार ब्रिटेन को हस्तान्तरित किया गया, इसके बदले में उसने स्पेन के उपनिवेशों में प्रतिवर्ष माल से एक भरा हुआ जहाज भेजने का भी अधिकार प्राप्त किया।

यूट्रेक्ट की सन्धि ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास में युगान्तरकारी घटना है। इससे यह अपने वर्तमान इतिहास की दूसरी अग्निपरीक्षा में से विश्व में महानतम सैनिक, व्यापारिक और औपनिवेशिक शक्ति बनकर निकला। यह अब विश्व के मामलों में ऐसी प्रतिष्ठा का उपभोग कर रहा था जैसी प्रतिष्ठा इसे पहले कभी नहीं प्राप्त हुई थी। अब भी पूरी प्रभुता प्राप्त करने से पहले कुछ उग्र संघर्ष किये जाने थे, किन्तु ब्रिटेन की शक्ति औपनिवेशिक इतिहास में अपने पक्ष में प्रत्येक लाभ के साथ अत्यधिक महत्वपूर्ण अगले युग में प्रविष्ट हुई। फ्रांस के साथ लम्बे संघर्ष का पहला दौर निश्चित रूप से जीता जा चुका था। ५० वर्ष पहले यह एक विषम संघर्ष प्रतीत होता था, क्योंकि उस समय फ्रांस दुनिया में न केवल सबसे बड़ी, अपितु सबसे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण रीति से शासित शक्ति थी, इसके साथ ही उसकी जन संख्या भी ब्रिटिश द्वीप समूह की जन संख्या से अधिक तथा लगभग दो और एक के अनुपात में अर्थात् १॥ करोड़ के मुकाबले में ८० लाख थी। महान् राजा लुई १४वें का जो राज्य

१. नक्शे के लिए एटलस की प्लेट सं० ५२ देखिए।

इतने वैभव के साथ और इतनी बढ़िया आशाओं के साथ आरम्भ हुआ था, वह अब निराशा के साथ समाप्त हो रहा था। भविष्य की सारी आशाएँ ब्रिटेन पर केन्द्रित प्रतीत होती थीं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Trevelyan, England under Queen Anne; **Churchill,** Marlborough **Mahan,** Influence of Sea-Power in History and **Corbett,** England in the Mediterranean for the Naval Struggle; **Fortescue,** History of the British Army and **Stanhope,** War of the Spanish Succession for the military side; **Clark,** Later stuarts, and Dutch Alliance and the War Against French Trade; **Reddaway,** History of Europe, 1610-1715; **Leque lle**; La Diplomatie Francaise et la succession d' Espagne; **Acton,** Lectures on Modern History.

• •

८

आर्थिक विकास

(१६६०-१७१४ ई०)

१. ब्रिटेन में बढ़ती हुई सम्पत्ति के कारण

लुई १४वें के विरुद्ध संघर्ष का एक अधिकतम आश्चर्यजनक पहलू आर्थिक बोझ की वह अत्यधिक मात्रा थी, जो इसने ब्रिटेन पर लादा था तथा वह सुगमता भी थी जिसके साथ इस भार को वहन किया गया था। १७वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में चार्ल्स प्रथम ने इस बात को बिलकुल असम्भव पाया था कि वह तीस वर्षीय युद्ध में लगी हुई प्रोटेस्टेण्ट शक्तियों को आपेक्षिक दृष्टि से अल्प धनराशि वाली उन आर्थिक सहायताओं को अदा कर सके, जिनका उसने उन्हें देने का वचन दिया था, इसीलिए उसे इस संघर्ष से हटने के लिए विवश होना पड़ा था। किन्तु फ्रांस के विरुद्ध १६८८ तथा १७१३ ई० के दो महान् युद्धों में ब्रिटेन ने चार्ल्स प्रथम के द्वारा पोतधन को वसूल करने के बाद भी रखी गयी नौसेना की अपेक्षा अतुलनीय रीति से अधिक शक्तिशाली नौसेना रखी; उसने नीदरलैण्ड्स में तथा स्पेन में नियमित और सक्षम सेनाओं को बनाये रखा; उसने मित्रों की सेनाओं को बनाये रखने के व्यय का एक बड़ा भाग आर्थिक सहायताओं के रूप में दिया, उसे अपने व्यापारिक समुद्री बेड़े की अत्यधिक हानि उठानी पड़ी। फिर भी, अन्त में वह इस संघर्ष में से, यूरोपियन राज्यों में सबसे अधिक धनी देश होकर निकला, उसकी वित्तीय साख उसकी सैनिक प्रतिष्ठा के अनुरूप थी। इस आश्चर्यजनक अन्तर की व्याख्या किस प्रकार की जा सकती है?

निःसन्देह, कुछ अंशों में इसका यह कारण था कि पार्लियामेण्ट ने फ्रांस के युद्धों को समर्थन प्रदान किया था, इसलिए करों को कानूनी रूप से ऐसे पैमाने पर लगाया जा सकता था, जो चार्ल्स प्रथम के लिए कभी सम्भव नहीं था। कुछ अंशों में, इसका यह कारण था कि चार्ल्स प्रथम के समय मे प्रयोग किये जाने वाले करों के निर्धारण के जटिल और अनुत्पादक ढंगों को प्यूरिटन गणराज्य ने कठोर रीति से बदल दिया था। इसके परिवर्तन मुख्य रूप से स्थायी बना दिये गये थे। विदेशी आयात की वस्तुओं पर लिये जाने वाले परम्परागत सीमा-शुल्कों का संशोधन किया गया था, स्वदेश में उत्पन्न होने वाली विभिन्न वस्तुओं पर एक निर्माण कर (Excise) लगाया गया था, भूमि पर प्रत्यक्ष कर लगाने की एक पद्धति का विकास किया गया था, क्रान्ति के बाद इसने राजकीय आमदनी का एक बड़ा भाग प्रस्तुत किया, यह कर भूमि-कर के नाम से प्रसिद्ध था किन्तु ये व्याख्याएँ अपर्याप्त हैं। कोई भी कर-पद्धति ग्रहण की जाती, क्रान्ति के बाद की पीढ़ी द्वारा वहन किये गये आर्थिक भार चार्ल्स प्रथम के अथवा क्रामवेल के इंग्लैण्ड को कुचल डालते। इसकी वास्तविक व्याख्या दो प्रकार की है। पहली बात तो यह थी कि ब्रिटेन यद्यपि चार्ल्स प्रथम के समय में समृद्ध देश था, तथापि वह उस समय जितना धनी था, अब उसकी अपेक्षा असीम रूप से अधिक धनी बन गया था। दूसरी बात यह थी कि उसने यह सीख लिया था कि राष्ट्रीय प्रयोजनों के लिए अपनी सम्पत्ति को किस प्रकार संगठित किया जा सकता है।

उसकी नयी सम्पत्ति प्रधान रूप से उस विदेशी व्यापार से उत्पन्न हुई थी, जिस पर मुख्य रूप से डचों की शक्ति अवलम्बित थी। यह सम्पत्ति उसके तेजी से बढ़ने वाले व्यापारिक जहाजों के मुनाफे से भी उत्पन्न हुई। उसके विदेशी व्यापार का एक प्रमुख आधार उसका बढ़ता हुआ औपनिवेशिक साम्राज्य था, इसकी अधिकतम मूल्यवान् पैदावार का अधिकांश भाग उसके जहाजों को रोजी देता था और उसको बन्दरगाहों से प्रमुख यूरोपियन देशों में वितरित किया जाता था। किन्तु औपनिवेशिक व्यापार की अपेक्षा गैर ब्रिटिश प्रदेशों के साथ व्यापार और भी अधिक लाभदायक था। वस्तुतः पुनः स्थापना के बाद से इंग्लैण्ड ने विश्व के व्यापारिक राष्ट्रों में प्रधान स्थान की स्थिति को हालैण्ड से निश्चित रूप से छीन लिया था। निःसन्देह, यह कुछ अंशों में नौचालन कानूनों के कारण तथा इंग्लिश जहाजरानी के उस विकास के कारण था, जिसे इन कानूनों ने प्रोत्साहित किया था। इसका कुछ कारण युद्धों द्वारा डच लोगों पर डाला गया भारी भार था। कुछ कारण यह भी था कि इंग्लैण्ड जिन औपनिवेशिक और उष्ण कटिबन्धीय उत्पादनों का व्यापार कर रहा था, यूरोपियन देशों में इन्हें खरीदने के लिए इसको तैयार मण्डी मिल गयी थी। इसने उनके साथ व्यापार करना आसान बना दिया था।

किन्तु इंग्लैण्ड के घरेलू उद्योगों के विकास ने भी उसके विदेशी व्यापार के विकास को प्रोत्साहन दिया। निर्यात के लिए वस्तुओं की माँग ने भी इसके विकास में सहायता दी। नये उद्योगों की, विशेष रूप से, रेशम के हस्तोद्योग की, जड़ जम रही थी और वे उन्नत हो रहे थे। यह बड़ी मात्रा में इस कारण भी था कि इंग्लैण्ड धार्मिक अत्याचार से भगाये जाने वाले निर्वासित व्यक्तियों का एक सुरक्षित शरणस्थल बना हुआ था। विशेष रूप से फ्रेंच ह्यूगनाट,

नान्तेस की राजाज्ञा को रद्द करने से पहले के दस वर्षों में यहाँ बड़ी संख्या में आये थे और इस घटना के बाद वे इससे भी बड़ी संख्या में आये।

आरम्भ से ही, नवीन उद्योगों का संगठन मुख्य रूप से पूंजीपति मालिकों द्वारा किया गया। ये अधिक सम्पत्ति रखने वाले ऐसे व्यक्ति होते थे जो स्वदेश की और विदेशों की मण्डियों की आवश्यकताओं के अध्ययन में अपने को बड़ी मात्रा में लगाते थे, ये सबसे अधिक माँग की जाने वाली वस्तुओं के प्रकारों को उत्पन्न करने के लिए कारीगरों को पैसा देते थे, पुराने उद्योग भी अधिकाधिक मात्रा में पूंजीपतियों के संचालन में आ रहे थे।[१] जैसा कि हम पहले देख चुके हैं कि यह प्रक्रिया बहुत पहले शुरू हो गयी थी। पूंजीपतियों द्वारा उद्योग के नियन्त्रण से यह प्रवृत्ति उत्पन्न हुई थी कि कारीगरों को बहुत कुछ उनके मालिकों की दया पर छोड़ दिया जाता था, बशर्ते कि सरकार उनकी रक्षा करने के लिए आगे न बढ़े। सरकार ने इस युग में मजदूरों की रक्षा के लिए बहुत कम काम किया, क्योंकि पूंजीपति-मालिक को औद्योगिक विकास का मुख्य स्रोत समझा जाता था। इसने कुछ दुःखद परिणाम भी उत्पन्न किये। मजदूरी कमाने वाली श्रेणियों ने देश की बढ़ती हुई समृद्धि में से अपना उचित भाग निश्चित रूप से नहीं प्राप्त किया, यद्यपि अभी तक यह नहीं कहा जा सकता कि वे ऐसी भीषण बुराइयों से पीड़ित हुए, जैसी बुराइयाँ अगली शताब्दी के महान् औद्योगिक परिवर्तनों के साथ आयीं। यद्यपि पूंजीवादी पद्धति अभी तक अपनी शैशव दशा में थी, तथापि इसने निर्विवाद रूप से पहल और परीक्षण को प्रोत्साहन दे कर देश की पूरी सम्पत्ति में एक महान् वृद्धि लाने में सहायता की और हम देखेंगे कि इस पद्धति का एक ऐसा परिणाम था, जिसकी एक निश्चित राजनीतिक महत्ता थी। पूंजीवादी पद्धति के लिए यह आवश्यक था कि मजदूरों को काम पर लाने वाली श्रेणी के हाथों में सुगमता से प्राप्त की जा सकने वाली सम्पत्ति की ऐसी बड़ी मात्रा होनी चाहिए, जिससे वे अपना कार्य कर सकें। इस सम्पत्ति का एक भाग राष्ट्रीय आवश्यकताओं के लिए भी सुलभ बनाया जा सकता था।

जब फ्रांस के साथ महान् युद्ध आरम्भ हुए, उससे पहले ही ब्रिटेन यूरोप में सबसे धनी देश बन रहा था। वह उपनिवेशों में और उष्ण कटिबन्धों में उत्पन्न होने वाली वस्तुओं के लिए प्रधान मण्डी तथा विश्व के व्यापार को प्रमुख रूप से वहन करने वाला और हस्तोद्योग वाली वस्तुओं का एक प्रधान उत्पादक बनने वाला था। इन कारणों से सम्पत्ति सब ओर से बह कर उसकी तिजोरियों में आने लगी।

स्पेन के साथ ब्रिटेन का व्यापार इस बात का एक उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत करता है कि यह किस प्रकार घटित हुआ। स्पेन अपने अमेरिकन साम्राज्य की खानों से निकाली जाने वाली बहुमूल्य धातुओं के विशाल परिमाण पर बड़ी मात्रा में निर्भर था। उसने सोने-चाँदी को खानों से निकालने के अतिरिक्त किसी अन्य क्षेत्र में इन देशों की उत्पादक क्रियाशीलता को विकसित करने के लिए बहुत कम अथवा कुछ भी कार्य नहीं

१. ऊपर तीसरी पुस्तक, अध्याय दस देखिए।

किया था। इन प्रदेशों के साथ सीधा व्यापार करने के कार्य से उसने ब्रिटिश व्यापारियों को ईर्ष्यावश बहिष्कृत कर दिया था। यद्यपि इन प्रदेशों के साथ एक तस्कर व्यापार बड़ी मात्रा में चल रहा था, तथापि वे जिस सम्पत्ति को उत्पन्न कर रहे थे, वह सम्पत्ति किसी बड़ी मात्रा में सीधे रूप से ब्रिटिश हाथों में नहीं जा रही थी। किन्तु स्पेन में ब्रिटेन के ऊनी माल की तथा हस्तोद्योगों द्वारा उत्पन्न की जाने वाली अन्य वस्तुओं की बड़ी बिक्री होती थी। क्योंकि स्पेन ऐसी कोई वस्तु अधिक मात्रा में उत्पन्न नही करता था, जिसका विनिमय इन वस्तुओं के साथ किया जा सके, अतः स्पेन को उनका मूल्य सोने और चाँदी में में देना पड़ता था। अतः स्पेनिश अमेरिका से आने वाले सोने-चाँदी की एक बड़ी मात्रा परोक्ष रूप से ब्रिटेन पहुँच जाती थी। स्पेन सदैव लगभग दिवालिया बना रहता था। ब्रिटेन प्रतिवर्ष अधिक समृद्ध हो रहा था। इस अन्तर का कारण यह था कि स्पेन सोने और चाँदी को ही सम्पत्ति समझता था और यह सोचता था कि उसके,पास अमेरिका से आने वाली सोने चाँदी की धारा से उसका आर्थिक कल्याण निश्चित था। इस भ्रान्त विचारधारा के प्रभाव में रहने के कारण वह अपनी जनता में सम्पत्ति के अधिकतम मूल्यवान रूपों के उत्पादन में, और ऐसी वस्तुओं के उत्पादन में अपनी जनता के उद्योग विकसित करने में सफल नहीं हुआ, जो वस्तुएँ सोने और चाँदी को खरीद सकती हैं और जो कठोर परिश्रम द्वारा ही उत्पन्न की जा सकती हैं। दूसरी ओर ब्रिटेन का यह सौभाग्य था कि उसके पास सोने की कोई खानें नहीं थीं, उसने सम्पत्ति पैदा करने का एक मात्र सम्भव तरीका यह सीखा था कि उन वस्तुओं को पैदा किया जाय, जिनकी मनुष्य को आवश्यकता है, अथवा उन वस्तुओं को मनुष्य के उपयोग के लिए उपलब्ध बनाने के लिए उन्हें उन स्थानों में लाया जाय, जहाँ उनकी मांग होती थी। यह उसके हस्तोद्योग निर्माताओं का, उसके पोत निर्माताओं का, उसके नाविकों का और उसके व्यापारियों का कार्य था, यही उसे धनी बना रहा था। स्पेनिश खानों का सोना-चाँदी स्वाभाविक रूप से उनके पास उन वस्तुओं के बदले में आ रहा था, जिन्हें उन्हें बेचना था, चाहे ये वस्तुएँ वास्तव में इंग्लैण्ड में बनायी गयीं थीं अथवा वे इन्हें उत्पन्न करने वाले देशों से ब्रिटिश लोगों के साहसिक कार्यों द्वारा लायी गयी थीं। दोनों अवस्थाओं में ये दोनों वस्तुएँ इनकी आवश्यकता रखने वाले देशों के मुनाफे पर बेची जाती थीं।

ब्रिटेन के विदेशी व्यापार के तथा ब्रिटिश जहाजरानी के अत्यधिक विकास ने इस युद्ध के व्यय को वहन करने में सीधा योगदान दिया, क्योंकि ब्रिटिश बन्दरगाहों में लाये गये माल की प्रत्येक खेप सीमाशुल्क देती थी। इस प्रकार उपनिवेश भी अपना अंश देते थे, क्योंकि कानून द्वारा यह आवश्यक था कि उनकी सभी प्रमुख उपजों को संसार में वितरित किये जाने से पहले इंग्लैण्ड भेजा जाय। किन्तु एक अन्य ढंग से, अधिक परोक्ष रीति से, विदेशी व्यापार ने इसमें योगदान दिया, क्योंकि इसे करने वाले व्यक्तियों के पास ऐसी सम्पत्ति की बड़ी धनराशियों का नियन्त्रण था, जिस सम्पत्ति को सुगमता से पाया जा सकता है। यह भूमि पर स्वामित्व रखने वाली श्रेणी की सम्पत्ति की भाँति नहीं थी, जिसे सुगमता से नकदी के रूप में नहीं बटोरा जा सकता था। यह सुगमता से प्राप्य नकद सम्पत्ति बड़ी

मात्राओं में सरकार को उधार दी जा सकती थी ताकि यह उसे युद्ध के व्यय को अथवा अन्य भारी व्ययों को वहन करने में समर्थ बना सके। अतः ब्रिटेन द्वारा युद्धों के भार को वहन करने में समर्थ होने का दूसरा कारण यह था कि वह उनका व्यय चलाने के लिए नकद धनराशि प्राप्त कर सकता था।

विदेशी व्यापार में लगे हुए व्यापारियों ने और स्वदेश में हस्तोद्योग चलाने वाले व्यक्तियों ने भी चिरकाल से, आवश्यकता न होने तक अपने धन को किसी सुरक्षित स्थान में जमा करने की आदत बना ली थी। सामान्यतः इसे स्वर्णकारों के सुदृढ़ कमरों में जमा किया जाता था। सुनारों को इस सेवा का मूल्य मुख्य रूप से इस प्रकार दिया जाता था कि वे अपने हाथों में आने वाले धन को सूद पर चढ़ाने में समर्थ होते थे, अर्थात् वे महाजनों का कार्य करते थे। १७वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ही लन्दन में बैंक का व्यवसाय गम्भीरता से विकसित होने लगा, इंग्लैण्ड के कुछ प्राचीनतम निजी बैंक अपना उद्गम इस युग से मानते हैं। क्योंकि बैंक वालों के पास किसी भी समय सदैव बहुत बड़ी धनराशियाँ जमा होती थीं, अतः वे अपने यहाँ धन जमा करने वाले व्यक्तियों के व्यापारिक कार्यों में बाधा डाले बिना उन व्यक्तियों को ऋण दे सकते थे, जो थोड़े समय के लिए अगाऊ धनराशि चाहते थे। वे यह कार्य उस समय तक कर सकते थे, जब तक वे अपने हाथ में सभी सम्भव माँगों को पूरा करने के लिए पर्याप्त धनराशि रखें और अपने ऋणों को युक्तियुक्त रीति से शीघ्र ही वापस पा लें। सरकारों को इस प्रकार के ऋण लेने की पुरानी आदत थी, वह करों की वसूली होते ही ऋण वापस कर देती थी। किन्तु चार्ल्स द्वितीय के समय में ही यह परिपाटी नियमित बन गयी, क्योंकि चार्ल्स द्वितीय सदा कर्ज में डूबा रहता था। जब कर अथवा फ्रांस की आर्थिक सहायता आती थी तो वह उन ऋणों को लौटा देता था। इसकी सरकार इस सुविधा के बिना नहीं चल सकती थी। किन्तु निसन्देह, ऋणों को दोनों पक्षों द्वारा सहमत तिथियों पर वापस लौटाना पड़ता था, अन्यथा सुनार उन व्यापारियों के साथ वचन पूरा नहीं कर सकते थे, जिनका धन उनके पास था। जब चार्ल्स ने राज्य कोष से अदायगी बन्द करने (Stop of the Exchequer) की सुप्रसिद्ध घोषणा करते हुए यह कहा कि वह निश्चित तिथियों पर अपने ऋण वापस नहीं करेगा, किन्तु वह केवल सूद देना जारी रखेगा तो उसका परिणाम यह हुआ कि व्यापारियों के व्यापारिक कार्यों में एक अतीव गम्भीर गड़बड़ी उत्पन्न हो गयी।

अब इस प्रकार की व्यवस्था-कर वसूल होने से पहले ऋण लेना और कर वसूल होने के बाद ऋण वापस करना—केवल तभी चल सकती थी, जब सरकार की वार्षिक आमदनी इसके वार्षिक व्यय से बहुत अधिक कम न हो, ताकि नियमित रूप से ऋणों की वापसी निश्चित रूप से की जा सके। जब फ्रांस के साथ महान् युद्ध आरम्भ हुआ तो पूरे-पूरे खर्चों के बराबर आमदनी को करों द्वारा प्राप्त करना असम्भव हो गया। अतः सरकार आर्थिक कठिनाइयों में गहरे रूप से फँसती चली गयी। इनसे निकलने का एकमात्र उपाय यह था कि ऋण को जल्दी वापस करने की आवश्यकता के बिना ही, यह कर्ज लेने में समर्थ

हो सके। सामान्य निजी महाजन इन शर्तों पर आवश्यक धन राशि नहीं दे सकते थे, क्योंकि उन्हें जरूरत पड़ने पर अपने यहाँ जमा करने वाले व्यक्तियों को धनराशि वापस करने के लिए तैयार रहना पड़ता था। इसलिए वे केवल अल्पकालीन ऋण दे सकते थे। स्थायी ऋणों को प्राप्त करने की पद्धति को अपनाना ही वह प्रधान साधन था, जिसने ब्रिटेन को युद्ध का व्यय वहन करने में समर्थ बनाया। यह पद्धति बैंक ऑफ इंग्लैण्ड (Bank of England) की स्थापना थी। इसे ह्विग अर्थमन्त्री चार्ल्स मांटेग्यू ने १६९४ ई० में एक एक स्काट व्यक्ति विलियम पेटरसन के सुझाव पर क्रियान्वित किया, पेटरसन लगभग इसी समय में बैंक ऑफ स्काटलैण्ड (Bank of Scotland) की स्थापना के लिए भी उत्तरदायी है।

बैंक ऑफ इंग्लैण्ड की स्थापना का कारण यह व्यवस्था थी कि एक निश्चित तिथि पर न लौटाये जाने वाले एक बड़े ऋण के बदले में सरकार ने इस प्रयोजन के लिए कुछ निश्चित करों की आमदनी निर्धारित करके, न केवल व्याज देने की गारण्टी दी, अपितु लाभदायक व्यापारिक कार्यों में अपने धन लगाने के भावी उपयोग को छोड़ने के लिए ऋण देने वालों की क्षतिपूर्ति करने के लिए उसने उन्हें एक चार्टर या राजकीय अधिकार पत्र प्रदान किया। इस चार्टर ने सार्वजनिक साख के समर्थन से उन्हें एक बड़े पैमाने पर महाजनों का काम करने में समर्थ बनाया, वे सरकार को अथवा निजी व्यापारियों को सूद पर रुपया उधार दे सकते थे और व्यापारियों से अपने यहाँ जमा करने के लिए धन उसी प्रकार ले सकते थे; जिस प्रकार स्वर्णकार या निजी कार्य करने वाले महाजन यह कार्य किया करते थे, किन्तु वे यह कार्य किसी निजी महाजन की अपेक्षा कहीं अधिक सुरक्षा के साथ कर सकते थे, क्योंकि राज्य की शक्ति और साख उनकी पीठ पर थी, तथा वे किसी निजी महाजन द्वारा किये जा सकने वाले व्यापार की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर व्यापार करते थे। इस प्रकार स्थापित किये गये बैंक को आरम्भ से ही समूचे व्यापारिक समुदाय का विश्वास प्राप्त हुआ, क्योंकि इसके हिस्सा लेने वालों में तथा संचालकों में सबसे बड़े व्यापारी सम्मिलित थे। यह बैंक सरकार के वित्तीय कार्य करता था, इस प्रकार इसके हाथों में आने वाली धनराशियों का तथा व्यापारियों द्वारा जमा की गयी निजी राशियों का तथा मूलधन पर सरकार द्वारा दिये गये वार्षिक ब्याज का उपयोग व्यापारियों को तथा अन्य व्यक्तियों को ब्याज की अच्छी दरों पर अल्पकालीन अगाऊ धनराशियाँ देने में किया जा सकता था। यह सरकार के लिए आवश्यकता होने पर नये स्थायी ऋण इकट्ठा करता था। जिन मनुष्यों के पास ऐसा धन था, जिसका वे तत्काल उपयोग नहीं कर सकते थे, उन मनुष्यों को इसने यह प्रेरणा दी कि वे अपना धन किसी तिजोरी में अथवा सुदृढ़ रूप से रक्षित एक कमरे में बेकार रखने के स्थान पर इस बैंक में जमा करें। इस प्रकार इस बैंक ने देश की सम्पत्ति के एक अधिक बड़े हिस्से को तत्काल उत्पादक बना दिया।

बैंक के प्रथम वर्षों में, कुछ व्यक्तियों को आशंका थी कि सरकार को स्थायी रूप

से बड़ी धनराशियों के उधार देने का परिणाम यह होगा कि सम्पत्ति व्यापारिक उपयोगों से हटा ली जायगी और इस कारण व्यापार पर और व्यापारिक कार्यों पर प्रतिबन्ध लग जायगा। किन्तु यह आशंका सत्य नहीं सिद्ध हुई। इसके सत्य न सिद्ध होने के दो कारण थे। पहला कारण यह था कि सरकार ऋण लिए अधिकांश धन को देश में ही व्यय करती थी, अतः यह पुनः परिचलन में आ जाता था। दूसरा कारण यह था कि बैंक ने मनुष्यों में विश्वास उत्पन्न किया था, उसने उन्हें यह प्रेरणा दी कि वे अपने बेकार धन को इसे सौंप दें और इस प्रकार देश का गड़ा हुआ धन बाहर निकला, इसे क्रियाशील तथा उत्पादक कार्यों में लगाया गया। वस्तुतः यही वह प्रधान कार्य है, जिसे एक बैंक करता है। यह नये धन की उत्पत्ति में सम्पत्ति को निरन्तर क्रियाशील बनाये रखता है। जब एक कृषक के खलिहान अनाज से भरे हुए हैं तो उसके पास बहुत सम्पत्ति है, किन्तु जब तक यह अनाज खलिहानों में पड़ा रहता है, तब तक यह अनुत्पादक है। यदि वह इसे उतनी ही तेजी से पुनः बो सके, जितनी तेजी से उसने इसे काटा था और इस प्रकार साल में एक फसल के स्थान पर छः फसलें प्राप्त कर सके, तो उसकी सम्पत्ति कई गुना अधिक उत्पादक हो जायगी। बैंक भी यही कार्य करता था, यह उपलब्ध सम्पत्ति को निरन्तर क्रियाशील रखते हुए, इसे उन व्यापारियों को उधार देता है, जिन्हें लाभदायक कार्यों के लिए इसकी आवश्यकता है तथा इसे पुनः तत्काल उपयोग के लिए सूद के साथ वापस लेते हुए, बैंक इसे सौंपी गयी सम्पत्ति को इस बात में समर्थ बनाता है कि एक निश्चित समय में इससे एक फसल काटने के स्थान पर तीन अथवा चार फसलें काटी जाँय। इसलिए नवीन बैंक-पद्धति ने जहाँ एक ओर सरकार को युद्ध चलाने के लिए धन की व्यवस्था की, वहाँ दूसरी ओर इसने ब्रिटिश उद्योग को ऐसा धन प्रदान किया, जिससे वह अपने प्रभाव को अधिकाधिक व्यापक रूप से विस्तीर्ण कर सके और यह सम्पत्ति को उससे भी अधिक तीव्र गति से उत्पन्न करे, जिससे यह युद्ध के कार्यों द्वारा नष्ट हो रही थी।

२. "धनाढ्य वर्ग के हित" का प्रभाव और राष्ट्रीय नीति पर इसके प्रभाव

बैंक ऑफ इंग्लैण्ड की स्थापना ने व्यापारियों का और धनाढ्य व्यक्तियों का राजनीतिक प्रभाव और महत्ता फौरन बढ़ा दी, क्योंकि इसने उन्हें राष्ट्रीय पद्धति में एक निश्चित और महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया। चूँकि अब वे राष्ट्रीय उद्योग को चलाने के लिए आवश्यक धनराशि स्पष्ट रूप से प्रदान कर रहे थे, अतः उनकी अवहेलना करना सम्भव नहीं था। इसके परिणामस्वरूप उनका प्रभाव राष्ट्रीय नीति को निश्चित करने में अनुभव किया जाने लगा। विशेष रूप से व्यापार के मामलों में यह ऐसी मात्रा तक था, जो पहले कभी नहीं था। किन्तु अधिकांश व्यापारी और धनाढ्य व्यक्ति ह्विग थे। वे अपने ह्विग मत पर और भी अधिक दृढ़ हो गये, क्योंकि उन्हें यह आशंका थी कि यदि स्टीवर्ट राजवंश पुनः स्थापित हुआ तो वह सम्भवतः उनके ऋणों को वापस करने से इन्कार कर देगा। बैंक ऑफ इंग्लैण्ड द्वारा प्रशासित किये जाने वाले राष्ट्रीय ऋणों में रुपया लगाने वाले व्यक्ति वस्तुतः यह अनुभव करते थे कि क्रान्ति की व्यवस्था को बनाये

रखना उनका कार्य है और यह बात क्रान्ति की रक्षा करने का एक सुदृढ़तम प्राचीर बन गया।

क्योंकि बैंक ऑफ इंग्लैण्ड को एक ह्विग संस्था समझा जाता था, अतः टोरी इसे शत्रुता की दृष्टि से देखते थे। उन्हें ऐसा प्रतीत होता था कि सहसा उन्नत होने वाला अनभिजात धनाढ्य वर्ग का हित (moneyed interest) एक अनुचित मात्रा में प्रभाव प्राप्त कर रहा है, वह राष्ट्र में इसके समुचित नेतृत्व के क्षेत्र से जमींदारों के हित को बाहर धकेल रहा है। बैंक ऑफ इंग्लैण्ड की शक्ति को सन्तुलित करने की आशा से उन्होंने १६९६ ई० में एक ऐसे भूमि बैंक (Land Bank) का विचार शुरू किया, जो बैंक भूमि के स्वामियों को उनकी ज़मीनों की जमानत पर ऋण दे। किन्तु कठिनाई यह थी कि भूमि के रूप में सम्पत्ति को सुगमता से नकद धन के रूप में प्राप्त नहीं किया जा सकता था। भूमि बैंक की योजना का कुछ भी नहीं बना, और बैंक ऑफ इंग्लैण्ड तथा "धनाढ्य हित" मैदान में जमे रहे, वे सदैव अधिक बढ़ती हुई शक्ति का प्रयोग करने लगे।

व्यापार और उद्योग की समस्याएँ तथा इन्हें संगठित करने और प्रोत्साहित करने के सर्वोत्तम उपाय इस युग में, न केवल व्यापारिक वर्गों के लिए, अपितु राजनीतिक विचारकों के लिए भी गम्भीर चिन्ता का विषय बन गये। क्रान्ति से पहले की पीढ़ी में, इसीलिए पहले किसी भी समय की अपेक्षा आर्थिक विषयों पर चिन्तन, विवाद और लेखन की एक अधिक बड़ी क्रियाशीलता प्रकट हो रही थी। यह विवाद सम्भवतः किसी अन्य देश की अपेक्षा इंग्लैण्ड में अधिक क्रियाशील था। ऐसा कहने में कोई अत्युक्ति नहीं है कि इन विषयों पर जान लाक, सर विलियम पेट्टी और जोसिया चाइल्ड जैसे व्यक्तियों की रचनाओं ने आधुनिक अर्थशास्त्र को आरम्भ किया। ये लेखक अर्थशास्त्र को मुख्य रूप से शासन करने की कला की एक शाखा समझते थे, वे यह पता लगाने के लिए उत्सुक थे कि राष्ट्रीय कल्याण और राष्ट्रीय सम्पत्ति पर राज्य की नीति का, इसके कर लगाने का, इसके व्यापारिक नियन्त्रणों का और इसके दूसरे राज्यों के साथ सम्बन्धों का किस प्रकार का प्रभाव पड़ने की सम्भावना है। वे अपने आप से यह प्रश्न पूछते थे कि इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किन सिद्धान्तों पर सार्वजनिक नीति का अधिकतम लाभदायक रीति से संचालन किया जा सकता है और व्यापार अथवा उद्योग के किन रूपों को, समग्र दृष्टि से राष्ट्र के लिए लाभदायक अथवा हानिकारक समझते हुए प्रोत्साहित अथवा निरुत्साहित किया जाना चाहिए। यद्यपि, निस्सन्देह वे अनेक बातों में मतभेद रखते थे, तथापि अपने विचार की मुख्य दिशाओं में वे सामान्य रूप से सहमत थे। वे सोने-चाँदी को सम्पत्ति समझने की भीषण भूल से ऊपर उठ चुके थे, उन्होंने यह अनुभव किया था कि स्पेन इस भ्रान्त धारण को अपनी राष्ट्रीय नीति का आधार बना कर किस प्रकार हानि उठा चुका था। उन्होंने यह देखा कि देश की वास्तविक सम्पत्ति उस मात्रा पर तथा गुण पर निर्भर है, जो वह अपने निवासियों के उद्योग से तथा विभिन्नता से उपलब्ध करती है। उनके चिन्तन का उद्देश्य बड़ी मात्रा में यह निश्चित करना था कि सरकार देश के उत्पादन को किन साधनों

से सब से अधिक तेजी से बढ़ा सकती है। वे विदेशी व्यापार को मुख्य रूप से वहीं तक महत्व देते थे, जहाँ तक यह ब्रिटिश वस्तुओं की माँग को उत्पन्न करता था और इसी कारण वे व्यापार के सन्तुलन को अत्यधिक महत्व देते थे। इसका यह मतलब था कि इस बात को निश्चित बना दिया जाय कि स्वदेश मे उत्पन्न की जाने वाली वस्तुओं के निर्यात का मूल्य कम-से-कम विदेशों से आयात किये जाने वाले पदार्थों के मूल्य के समान होना चाहिए। वे व्यापार की किसी भी ऐसी दिशा को महान् सन्देह की दृष्टि से देखते थे जो "अनुकूल सन्तुलन" (Favourable Balance) को प्रदर्शित नही करती थी, जो ब्रिटिश माल के लिए एक बड़ी माँग को पैदा नही करती थी। उन्होंने व्यापार की उन सब दिशाओं पर अविश्वास किया, जो ब्रिटेन में ब्रिटिश माल के साथ मुकाबला करने वाले माल को लाती थीं।

स्वाभाविक रूप से, अर्थशास्त्रियों के ये विचार व्यापारिक तथा धनाढ्य हितों वाले व्यक्तियों के मनों पर हावी प्रतीत होते थे। चूँकि अब इन हितों का राष्ट्रीय नीति पर एक महान प्रभाव था, विशेष रूप से ह्विगों के सत्तारूढ़ होने पर यह प्रभाव अधिक बढ़ गया था, अतः क्रान्ति के बाद राष्ट्रीय नीति मुख्य रूप से ऐसे विशिष्ट सिद्धान्त से शासित होने लगी कि राष्ट्र के व्यापारिक हितों की क्या माँग है। यह ऐसा सिद्धान्त था जिसने इस युग की न केवल विदेश नीति पर, अपितु औपनिवेशिक और आयरिश नीति पर भी गहरा प्रभाव डाला। ह्विगों का प्रधान विचार यह था कि न केवल ब्रिटेन की व्यापारिक नीति, अपितु समूचे राष्ट्रमण्डल की व्यापारिक नीति का संचालन प्रधान रूप से इस दृष्टिकोण से होना चाहिए कि यह ब्रिटेन में उद्योग तथा कृषि को प्रोत्साहित करे और इसका विकास करे। उनका यह मत था कि विदेशी व्यापार की उन शाखाओं की सहायता की जानी चाहिए और उन्हें प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए, जो ब्रिटिश माल के लिए माँग पैदा करें, इसे बढ़ाने वाली प्रतीत हों, और जो शाखाएँ ऐसा करने वाली न प्रतीत हों उनका दमन किया जाना चाहिए। इस विचार के कारण ब्रिटिश उद्योग के लिए एक कठोर संरक्षणात्मक नीति अपनायी गयी। यह न केवल सीमा-शुल्कों के साधन से, अपितु प्रत्येक अन्य सम्भव उपाय से और विशेषतः उस शक्ति के प्रयोग से लागू की गयी, जो ब्रिटिश पार्लियामेण्ट राष्ट्रमण्डल के अन्य सदस्यों पर प्रयोग करने में समर्थ थी। सब से बड़ा उद्देश्य यह था कि ब्रिटेन को हस्तोद्योगों का केन्द्र तथा समूचे राष्ट्रमण्डल की मण्डी तथा हस्तोद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं को और उपनिवेशों की उपज को यथा-सम्भव बड़े पैमाने पर दूसरे देशों को पहुँचाने वाला देश बना दिया जाय।

विदेशी व्यापार पर इन विचारों का प्रभाव बहुत स्पष्ट था। फ्रांस हस्तोद्योग की वस्तुओं का निर्माण करने वाला एक महान् देश था। वह अधिकांश रूप से ऐसी वस्तुओं का निर्यात करता था, अतः यह माना जाता था फ्रांस के साथ व्यापार अवांछनीय है। यह वास्तव में १६७८ ई० में ही वर्जित कर दिया गया था। स्वभावतः इस निषेध को इस युद्ध में कठोरता से लागू कर दिया गया था। युद्ध के बाद के युग में फ्रांस के माल पर ऊँचे कर लगा

कर इस स्थिति को बनाये रखा गया। उस पीढ़ी के व्यक्ति यह नही देख सकते थे कि फ्रांस ब्रिटेन से (प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रीति से) ब्रिटिश माल को बदले में लिये बिना ब्रिटेन में अपना माल भेजने में समर्थ हो। वे फ्रांस को एक प्रतिस्पर्धी दुकानदार समझते थे, इसके व्यापार को प्रत्येक सम्भव उपाय से अवश्य रोका जाना चाहिए था। दूसरी ओर ब्रिटिश हस्तोद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं की पुर्तगाल के व्यापार के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं थी। पुर्तगाल अपनी शराब के तथा ब्राजील के अपने उपनिवेशों की पैदावार के बदले में ब्रिटेन का ऊनी माल तथा अन्य सामान खरीदता था। अतः पुर्तगाल के साथ व्यापार को प्रोत्साहित किया जाता था, १७०३ ई० की **मैथुएन सन्धि** (Methuen Treaty) को आर्थिक क्षेत्र में ब्रिटेन की राजनीतिक शक्ति की एक महान् उपलब्धि समझा जाता था। इस सन्धि ने फ्रेंच व्यापार को हानि पहुँचाते हुए पुर्तगाली व्यापार को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न किया था।

इसी समय इन विचारों का प्रभाव ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सम्बन्ध में ग्रहण की गयी प्रवृत्ति में देखा गया। भारतीय जलवायु के लिए इंग्लैण्ड का ऊनी माल उपयुक्त नहीं था, अतः भारत से लाये जाने वाले माल का मूल्य बड़ी मात्रा में चाँदी और सोने के द्वारा देना पड़ता था, ये शिकायतें निरन्तर होती रहती थीं कि भारतीय व्यापार ब्रिटिश उद्योग को प्रोत्सहित करने के स्थान पर स्पेन के साथ व्यापार करने से प्राप्त होने वाले सोने चाँदी को ही खींच कर ले जाता है। जब तक भारत से कम्पनी द्वारा इंग्लैण्ड में आयात की जाने वाली वस्तुएँ बड़ी मात्रा में मसाले तथा अन्य ऐसी उष्णकटिबन्धीय पैदावार थी, जिसकी ब्रिटिश वस्तुओं के साथ कोई होड़ नहीं थी, तब तक इन शिकायतों पर बहुत अधिक ध्यान नहीं दिया गया। किन्तु १७वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कम्पनी ने बड़े परिणाम मे भारत के बने हुए माल-विशेषतः सूती माल का इंग्लैण्ड में आयात करना शुरू किया; इन मण्डो को उन्नत करने के लिए उन्होंने भारतीय जुलाहों का कार्य इस रीति से संचालित करना शुरू किया, जिससे वे पश्चिमी देशों की आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ हो सकें, इस प्रकार उन्होंने भारत की जुलाहों की समृद्धि बढ़ायी। किन्तु इसे ब्रिटिश वस्त्र निर्माण के क्षेत्र में तथा क्षौम और ऊनी वस्त्रों के उद्योगों के लिए विनाशकारी कार्य समझा जाता था (उस समय तक क्रियात्मक रूप से इंग्लैण्ड में विशुद्ध सूती वस्त्रों का निर्माण नहीं होता था), अतः इस माल पर भारी कर लगाये गये। १७०० ई० मे इंग्लैण्ड में इनकी बिक्री तक को निषिद्ध बनाने के लिए एक प्रयास किया गया। यह अतीव संकीर्ण दृष्टिकोण था। भारतीय माल का आयात न केवल भारत की सम्पत्ति बढ़ा रहा था, अपितु इसने ब्रिटेन की जनता को माल का एक अधिक बड़ा वैविध्य प्रदान करते हुए तथा उसके व्यापारियों को दूसरी मण्डियों के लिए निर्यात की जाने वाले वस्तुओं का एक अधिक व्यापक चुनाव दे कर ब्रिटेन की सम्पत्ति को भी बढ़ाया। वस्तुतः व्यापार को रोकने के प्रयास को केवल अतीव आंशिक सफलता प्राप्त हुई। बुने हुए सूती वस्त्र उस समय तक भारत से आयात की गयी वस्तुओं के बड़े भाग का निर्माण करते रहे, भारतीय बुनाई-उद्योग ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कार्यो से उस समय तक विकसित होता, रहा जब तक मशीनों का प्रयोग आरम्भ हो जाने से ब्रिटिश व्यापारी भारतीय करघों के माल को मात देने में समर्थ नहीं हुए। जहाँ तक यह नीति सफल हुई, उसका एक-

मात्र परिणाम भारत के साथ व्यापार के विकास का रोकना था; वस्तुतः इस समय और आगे काफी लम्बे समय तक यह व्यापार वैस्ट इण्डीज के साथ व्यापार से कहीं कम महत्व-पूर्ण था।

कुछ तो इस विश्वास के कारण कि भारत के साथ व्यापार लाभदायक नहीं था और कुछ इस तथ्य के कारण कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकांश संचालक टोरी थे, ह्विगों ने अनधिकृत व्यापारियों को अथवा निजी व्यापारियों को प्रोत्साहित किया। इन्होंने कम्पनी के एकाधिकार को तोड़ने का प्रयास किया। १६९३ ई० की ह्विग पार्लियामेण्ट ने एक प्रस्ताव पास किया कि इंग्लैण्ड के सब प्रजाजनों को ईस्ट इण्डीज से व्यापार करने का समान अधिकार है, बशर्ते कि इसे पार्लियामेण्ट के एक कानून द्वारा वर्जित न ठहराया गया हो। १६९८ ई० में पार्लियामेण्ट के एक कानून द्वारा एक प्रतिस्पर्धी कम्पनी की स्थापना की गयी। २० लाख पौण्ड के एक ऋण के बदले में इसे भारत के साथ व्यापार का एकमात्र अनन्य अधिकार दिया गया। पुरानी कम्पनी को तीन वर्ष के भीतर अपना व्यवसाय समेट लेने की अनुमति दी गयी। कम्पनी के हिस्से खरीदने वाले सभी व्यक्तियों को निजी व्यापार करने की अनुमति दी गयी; यह आशा की जाती थी कि नयी कम्पनी के सदस्य अपने पूर्ववर्तियों की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर भारत को ब्रिटिश माल का निर्यात करेंगे। पुरानी क़म्पनी ने चतुराई से इस कठिनाई का सामना करते हुए नयी कम्पनी के हिस्से खरीद लिये और इस प्रकार अपना व्यापार जारी रखने का अधिकार प्राप्त कर लिया। किन्तु इन दिनों कम्पनियों की होड़ से उत्पन्न की गयी स्थिति इतनी दुर्भाग्यपूर्ण थी और भारत में उसके इतने बुरे प्रभाव पड़े कि १७०८ ई० में लार्ड गोडोल्फिन द्वारा किये गये पंच निर्णय के बाद वे संयुक्त हो गयीं तथा पुराना एकाधिकार और व्यापार की पुरानी पद्धतियाँ पुनः स्थापित हो गयीं। यदि यह संघर्ष अधिक समय तक जारी रहता तो भारतीय व्यापार और भारत में ब्रिटिश प्रभाव का भावी विकास सम्भवतः खतरे में पड़ जाते; क्योंकि उस समय जैसी परिस्थितियाँ थीं उनमें केवल एकाधिकारवादी कम्पनी ही भारत में आवश्यक स्थायी प्रतिष्ठानों को बनाये रखने का व्यय पूरा कर सकती थी।

ह्विगों के व्यापारिक विचारों का प्रभाव आयरलैण्ड में और भी अधिक मुसीबत लाने वाला था। यहाँ ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा ग्रहण की गयी शक्ति को ऐसे प्रत्येक उद्योग के कुचलने में प्रयुक्त किया गया, जो उद्योग ब्रिटेन के प्रधान व्यापारों के साथ होड़ करते थे। हम इस नीति के दुर्भाग्यपूर्ण राजनीतिक परिणामों की कुछ बातें पहले देख चुके हैं[1]। इसके आर्थिक परिणाम भी इसी प्रकार दुर्भाग्यपूर्ण थे। आयरलैण्ड को निर्धन बना कर इसने न केवल उसे अपना विरोधी बनाया, अपितु उसे ब्रिटिश वस्तुओं पर धन व्यय करने में भी कम समर्थ बनाया। इसने व्यापारिक वस्तुओं की उस मात्रा और वैविध्य को भी घटा दिया, जिसे ब्रिटिश व्यापारी विदेशी मण्डियों में उन वस्तुओं के विनिमय के लिए ले जा सकते थे, जिन्हें वे वहाँ से लेना चाहते थे।

---

१. देखिए ऊपर पुस्तक पाँच, अध्याय १ तथा अध्याय ६

उपनिवेशों में इसी नीति का अनुसरण किया गया। यहाँ दो प्रकार के उद्देश्य थे। पहला उद्देश्य इस बात को निश्चित बनाना था कि नौचालन कानूनों के सिद्धान्तों के अनुसार उपनिवेशों की प्रमुख पैदावार इंग्लैण्ड भेजी जाय और साम्राज्य के भीतर का व्यापार पूर्ण रूप से ब्रिटेन के अथवा उपनिवेशों के जहाजों में किया जाय। दूसरा उद्देश्य इस बात को निश्चित बनाना था कि उपनिवेशों की मण्डी ब्रिटिश उद्योगों से निर्मित वस्तुओं के लिए सुरक्षित बना दी जाय। पहले उद्देश्य की पूर्ति एक नये नौचालन कानून से की गयी (१६९६ ई०)। इसने कानूनों को लागू करने वाली व्यवस्थाओं को सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न किया। १७०६ ई० के एक कानून ने चावल को और नौसैनिक सामग्री को भी उन परिगणित पदार्थों की सूची में जोड़ दिया, जिनका निर्यात केवल इंग्लैण्ड को किया जा सकता था। दूसरे उद्देश्य ने ह्विगों को इस बात के लिए उत्सुक बनाया कि वे उपनिवेशों में इंग्लैण्ड के उद्योगों के साथ होड़ करने वाले उद्योगों के विकास को निरुत्साहित करें। उपनिवेशों में ऊनी माल का निर्माण करने पर पाबन्दी लगाने की भी चर्चा थी। १७०६ ई० में बोर्ड ऑफ ट्रेड की एक रिपोर्ट ने यह शिकायत की कि कुछ उपनिवेश इन बस्तियों के सच्चे इरादे और अभिप्राय के अनुसार प्रोत्साहित की जाने योग्य वस्तुओं के उत्पादन में अपने प्रयत्न लगाने के स्थान में गलत रूप से ऊनी उद्योग को तथा अन्य उद्योगों को प्रोत्साहन दे रहे थे। यह सत्य है हम जिस युग का इस समय वर्णन कर रहे हैं, उस युग में ऐसी मूर्खतापूर्ण पाबन्दियों को लागू करने के कोई प्रत्यक्ष प्रयत्न नहीं किये गये, यह प्रयत्न अगले युग में होना था। अभी तक इंग्लैण्ड में उद्योगों के विकास के लिए अन्य सभी बातों को उसके वशवर्ती बनाने की नीति ने उपनिवेशों में वैसी कोई हानि नहीं पहुँचायी थी, जैसी इसने आयरलैण्ड में पहुँचाई थी, क्योंकि उपनिवेश स्वाभाविक रूप से अपने को ऐसी वस्तुओं के उत्पन्न करने में लगाये रहते थे, जिनकी इंग्लैण्ड में उत्पन्न की जाने वाली चीजों से कोई होड़ नहीं थी।

किन्तु यह स्पष्ट है कि आर्थिक आधार पर साम्राज्य के स्थापित करने का जो प्रयास चार्ल्स द्वितीय के राजनीतिज्ञों द्वारा व्यवस्थित रीति से आरम्भ किया गया था, वह अब ऐसा दुर्भाग्यपूर्ण मोड़ ले रहा था कि उससे यह प्रकट होने लगा था कि आर्थिक क्षेत्र में इंग्लैण्ड के हित उपनिवेशों के हितों के विरोधी हैं। वह राष्ट्रमण्डल के अध्यक्ष के रूप में अपनी शक्ति का प्रयोग एकमात्र अपने हितों की दृष्टि से कर रहा था। अन्त में, फ्रांस का खतरा दूर हो जाने पर, इस विश्वास के परिणामस्वरूप राष्ट्रमण्डल में विघटन के दुःखान्त नाटक का आरम्भ हुआ। उसने उस भले काम को मलियामेट कर दिया, जो उस समय किया गया था, जब ये तरुण समुदाय या नवीन बस्तियाँ स्वशासन की संस्थाओं में हिस्सा लेने वाली बनायी गयी थीं। साम्राज्य की एकता के लिए व्यापारिक हित अपने को एक निर्बल आधार सिद्ध करने वाले थे। फिर भी इस युग के राजनीतिज्ञों को उस दृष्टिकोण को अपनाने के लिए दोष देना अनुचित होगा, जो दृष्टिकोण इस समय प्रत्येक अन्य उपनिवेश बसाने वाले देश के राजनीतिज्ञों का था। सभी यह मानते थे कि उपनिवेशों की सत्ता मुख्य रूप से इसलिए है कि वे मातृभूमि को समृद्ध करें। इसी उद्देश्य से उनके व्यापार

का नियन्त्रण किया जाना चाहिए। केवल ब्रिटेन ने ही उस सिद्धान्त में इस बात की वृद्धि की थी कि सभी स्थानीय मामलों में उपनिवेशों को अपना शासन स्वयं करने की अनुमति दी जानी चाहिए। किन्तु राजनीतिक स्वतन्त्रता आर्थिक प्रतिबन्धों के साथ मेल नहीं खाती थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Cunningham, Growth of English Industry and Commerce; **Hewins** English Trade and Finance in the Seventeenth Century; **Beer,** old Colonial Policy; **Egerton**, British Colonial Policy. Of the economic writings of the period probably the most important were Petty Political Arithmetic and **Child**, Discourse on trade. **Clark,** Wealth of England, and Science and Social Welfare in the age of Newton; **Lipson,** Economic History of England. **Clapham,** History of the Bank of England, and Concise Economic History of Britain to 1750; **Scott,** Constitution and Finance of English, Scottish and Irish Joint Stock Companies; **Heckshery,** Mercantilism; **Feaveryear,** Pound Sterling; **Ernle,** English Farming Past and Present; **Ashley,** Bread of our Forefathers; **Willan**, River Navigation in England, 1600-1760 and English Coasting Trade, 1600-1750; **Lipson,** Woollen and Worsted Indutsries.

• •

रानी एन के राज्यकाल में दलों के संघर्ष

(१७०२-१७१४ ई०)

१. ह्विग और टोरी

जब रानी एन राजगद्दी पर बैठी उस समय ह्विग और टोरी के दोनों नाम तीस वर्ष से भी कम पुराने थे, किन्तु दोनों दलों ने समूचे राज्य को पहले से ही अपने में विभक्त कर लिया था। उनके संघर्ष न केवल पार्लियामेण्ट के ध्यान को आकृष्ट करने वाले थे, अपितु वे सरकार के संचालन में अधिकतम महत्त्वपूर्ण तत्त्व बन गये थे। कामन्स सभा में, कुल मिला कर, दोनों दलों की शक्ति अच्छी तरह सन्तुलित रहती थी; प्रत्येक चुनाव में पेण्डुलम ने पहले से ही एक पक्ष से दूसरे पक्ष की ओर जाने की आदत बना ली थी, यद्यपि इस राज्यकाल में १७०८ ई० के चुनाव के अतिरिक्त पाँच सामान्य चुनावों में से टोरियों का अधिक बड़ा या छोटा बहुमत था। यह तथ्य इस बात को प्रकट करने वाला प्रतीत होता है कि सम्भवतः यह सत्य है कि समग्र रूप से, देश में बहुमत उनके पक्ष में था, यद्यपि ह्विग लोग अधिकतम प्रगतिशील और प्रबुद्ध क्षेत्रों में, विशेषतः लन्दन तथा बड़े नगरों में सबसे अधिक प्रबल थे।

दूसरी ओर, अब लार्ड सभा में ह्विग लोगों के पास बड़ा न होने पर भी एक स्थायी बहुमत था। १७१२ ई० में १२ टोरी लार्ड इसलिए बनाये गये थे कि यूट्रेक्ट की सन्धि निश्चित रूप से पास की जा सके। एक विशिष्ट कानून की स्वीकृति कराने के लिए नये लार्ड बनाने के उद्देश्य से राजकीय विशेषाधिकार के प्रयोग का यह एकमात्र उदाहरण है। यह तथ्य बड़ा महत्त्व रखता है कि लार्डों का बहुमत अब ह्विग बन गया था। इसका यह अर्थ है कि राज्य के सबसे बड़े महापुरुष राजमुकुट के प्रति अन्धभक्तिपूर्ण श्रद्धा से बहुत कम प्रभावित होते थे। वे इसके लिए सबसे अधिक तैयार

थे कि राजा की सत्ता को एक तरफ हटा दिया जाय तथा इसके स्थान पर उनकी अपनी सत्ता स्थापित की जाय। उस समय टोरी मत के पुनरुज्जीवन का बड़ा कारण यह विश्वास था कि उनका उद्देश्य यही है। वस्तुतः ह्विग पार्टी सदैव एवं आवश्यक रूप से एक कुलीनतन्त्रीय दल था, यद्यपि इसे व्यापारिक वर्गों का तथा डिसेण्टरों का समर्थन प्राप्त था[1], आगे हम यह देखेंगे कि यह कुलीन व्यक्तियों का एक अत्यधिक संगठित समूह बन रहा था। यह उस अल्पतन्त्रीय शासन के युग के लिए तैयार हो रहा था, जिस पर हम अगली पुस्तक में विचार करेंगे।

दलों का संघर्ष इस राज्यकाल की अपेक्षा पहले कभी इससे अधिक तीव्र नहीं हुआ था। यह वेशभूषा के फैशनों तक भी फैल गया; इसने समाज को दो भागों में बाँट दिया, यह संघर्ष साहित्यकारों पर भी हावी हो गया। इस युग के सभी सर्वोत्तम लेखकों ने अपने लेखों द्वारा एक अथवा दूसरे पक्ष का समर्थन किया। राजनीति में सार्वजनिक दिलचस्पी की तीव्रता किसी अन्य बात से इतनी अधिक स्पष्टता से नहीं प्रदर्शित होती, जितनी इस तथ्य से कि राजनीति इस युग के साहित्य पर हावी थी। एडीसन और स्टील ह्विग पत्रकार तथा सामाजिक व्यंग्य-लेखक थे और एडीसन राज्यमन्त्री बना। टोरी पक्ष की ओर से स्विफ्ट की शक्तिशाली लेखनी कार्य कर रही थी। बहुत कम राजनीतिक रचनाओं ने कभी इससे अधिक तात्कालिक प्रभाव डाला है, जितना उसकी प्रसिद्ध पुस्तिका "दी काण्डक्ट आफ दी एलाइज" (The Conduct of the Allies) ने डाला है। इसमें उसने अपने मित्र हार्ली और सेण्ट जान की शान्ति की नीति का समर्थन किया था। ये दोनों टोरी राजनीतिज्ञ साहित्यिक अभिरुचि रखने वाले व्यक्ति तथा साहित्यिकों के मित्र थे। विशेषतः, इनमें बाद में लार्ड बोलिंगब्रोक बनने वाला सेण्ट जान इसी प्रकार का था। यह स्वयमेव महान्, स्पष्ट विचार रखने वाला तथा शक्तिशाली लेखक था। ब्रिटिश इतिहास के किसी अन्य युग में साहित्यिक व्यक्ति राजनीतिक क्षेत्र में इससे अधिक प्रभावशाली नहीं रहे अथवा उन्होंने समाज का शासन करने में इससे अधिक बड़ा भाग नहीं लिया। इस समूह का एक सबसे बड़ा लेखक राबिन्सन क्रूसो का रचयिता डेनियल डिफो (एडिसन अथवा स्विफ्ट की भाँति) दल के नेताओं की मैत्री नहीं पा सका। वह एकमात्र संघर्ष करने वाला कलम का मजदूर साधारण लेखक, था, दोनों पक्ष बारी-बारी से किराया देकर उससे अपने पक्ष में लिखवाते थे। फिर भी, उसने इस युग में सबसे अधिक प्रभावशाली पुस्तिका-लेखन का कार्य किया और कटु व्यंग्य की दृष्टि से उसकी Short way with Dissenters नामक रचना से अधिक उत्तम कृति कभी नहीं लिखी गयी। ये लेखक जिन राजनीतिक विषयों का वर्णन करते हैं, उनका हमारे लिए दिवंगता रानी एन की भाँति कोई महत्त्व नहीं है, तथापि जिस चतुराई से उन्होंने इन विषयों का प्रतिपादन किया है, वह इन्हें अब भी रोचक बनाती है। किन्तु सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि ब्रिटिश लोगों को अब ऐसा राजनीतिक चिन्तन करना सिखाया जा रहा था, जिसमें महान् राजनीतिक विवादों में दोनों पक्ष उनके सम्मुख अतीव सजीव और रोचक रूप में

१. छठी पुस्तक का पहला अध्याय देखिए।

रखे जाते थे। यह प्रक्रिया गृहयुद्ध में आरम्भ हुई थी। इसे निस्सारण अधिनियम (Exclusion Act) पर होने वाले प्रचण्ड विवादों में पुनरुज्जीवित किया गया था; क्रान्ति के बाद यह कभी मृत नहीं हुई थी। किन्तु रानी एन के समय में ही ऐसा हुआ कि इस समय की सर्वोच्च साहित्यिक शक्ति अपने को राजनीतिक विषयों में लगाने लगी।

दलों में संघर्ष के स्वरूप पर विचार करते हुए यह आवश्यक है कि हम इस बात में सावधान रहें कि रानी एन के राज्यकाल के ह्विगों और टोरियों के विचारों को आधुनिक दलों के उन विचारों से अभिन्न न समझें, जो ऐतिहासिक रूप से उनसे प्रादुर्भूत हुए हैं। ऐसी कल्पना के खतरे को प्रदर्शित करने के लिए यह कहना पर्याप्त है कि टोरियों को प्रत्यक्षतः युक्तियुक्त रूप से शान्तिवादियों का, लघु इंग्लैण्डवादियों का, नवीन हस्तक्षेपहीन वाणिज्य के नीति वालों का पोषक दल कहा जा सकता है; ह्विगों को युद्धवादियों का, साम्राज्यवाद का, अधिक संरक्षणवादियों का समर्थक दल कहा जा सकता है। यह एक अतिरंजित और भ्रामक कथन होगा, किन्तु इसमें सत्य का कुछ अंश अवश्य निहित है।

ह्विग लोगों का मूल विश्वास राजतन्त्र की पुनःस्थापना का भय था, यह इसलिए था कि लुई १४वाँ निरंकुश राजतन्त्र का एक वास्तविक नमूना था। ऐसा इसलिए भी था कि लुई निर्वासित स्टीवर्टवंशी राजाओं का मित्र और क्रान्ति की व्यवस्था का शत्रु था, ह्विग अन्तिम समय तक कठोर शत्रुता के साथ उसका विरोध करने के लिए तैयार थे। उनके व्यापारिक सिद्धान्तों ने और इस विश्वास ने कि व्यापार और उद्योग में फ्रांस ब्रिटेन का अधिकतम खतरनाक प्रतिस्पर्धी है, उनकी फ्रांस-विरोधी भावनाओं की शक्ति में वृद्धि की थी। वे विलियम तृतीय की महाद्वीपीय नीति के भी अनुयायी थे। ह्विग पार्टी की शक्ति का निर्माण करने वाले महान् कुलीन सरदारों को उन टोरियों की अपेक्षा यूरोप की राजनीति में कहीं अधिक गहरी दिलचस्पी थी और इसका गहरा ज्ञान था, जो टोरी प्रधान रूप से अपनी शक्ति को कम शिक्षित देहाती जमींदारों से प्राप्त करते थे।

ह्विग लोगों को जो कारण फ्रांस का विरोधी बनाते थे, वही कारण सामान्य रूप से टोरियों को फ्रांस के साथ मित्रता रखने के लिए प्रेरित करते थे। इनमें से अनेक खुले तौर पर अथवा प्रच्छन्न रीति से जेम्स द्वितीय के समर्थक या जैकोबाइट थे। हनोवर वंश के समर्थक टोरियों के नाम से प्रसिद्ध समूह सम्भवतः दल में अल्पमत रखता था। राज्यकाल के आगे बढ़ने के साथ-साथ तथा जेम्स द्वितीय के कुशासन की स्मृति क्षीणतर होने पर चर्च के सम्बन्ध में उनकी आशंकाएँ कम हो गयीं और इस राज्यकाल की समाप्ति के समय इनमें से अनेक एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट (Act of Settlement) को भी उलटने के लिए तैयार थे। इसका बड़ा कारण यह था कि उन्हें यह आशंका थी कि हनोवरवंशी उत्तराधिकारी का अर्थ ह्विगों की विजय होगी, क्योंकि वे ह्विगों को बड़े सरदारों का ऐसा खतरनाक गुट समझते थे, जिसका उद्देश्य राजा की शक्ति को नगण्य बनाना और उसके स्थान पर अपनी शक्ति को स्थापित करना तथा इसके लिए व्यापारिक वर्गों को अपना औजार बनाना था। टोरियों में व्यापारिक और औद्योगिक विकास के लिए ह्विगों जैसा उत्साह नहीं था। वे यह समझते थे कि धनाढ्य व्यक्ति पहले

ही "जमींदारों के हित" की अपेक्षा बहुत अधिक लाभ प्राप्त कर रहे थे। १७१२ ई० में उन्होंने जमींदारों के हितों की स्थिति को एक ऐसे भीषण कानून द्वारा सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न किया, जिस कानून में यह व्यवस्था की गई थी कि कोई भी ऐसा व्यक्ति कामन्स सभा की सदस्यता के लिए निर्वाचित होने योग्य नहीं होना चाहिये, जिसके पास कम-से-कम प्रति वर्ष दो सौ पौण्ड के मूल्य वाली जमींदारी न हो। वे यूरोपियन राजनीति में बहुत दिलचस्पी नहीं लेते थे। वे यह देखना चाहते थे कि इंग्लैण्ड यूरोपियन युद्धों से और राजनीति से अलग रहे; यदि युद्ध अवश्य लड़े जाने हों तो वे ब्रिटिश पक्ष की ओर से लड़ाई को यथासम्भव समुद्र तक सीमित करना अधिक पसन्द करते थे। वे विलियम तृतीय की स्मृति मात्र से घृणा करते थे और इस पर आक्षेप करने का कोई मौका नहीं छोड़ते थे।

घरेलू राजनीति के क्षेत्र में ह्विगों तथा टोरियों में धर्म के प्रश्न पर अतीव तीव्र संघर्ष था। टोरियों की बहुसंख्या धार्मिक संस्कारों को महत्त्व देने वाले कट्टर (High Church) व्यक्तियों की थी, वे डिसेण्टरों से तथा सहिष्णुता कानून से घृणा करते थे। इसका बड़ा कारण यह था कि डिसेण्टर लोगों का सम्बन्ध शहरों के घृणित धनाढ्य व्यक्तियों के साथ जोड़ा जाता था। दूसरी ओर ह्विग धार्मिक विश्वास में बड़े उदारवादी थे। वे चर्च को राज्य के नियन्त्रण में बनाये रखने को उत्सुक थे। इसका एक बड़ा कारण यह था कि एंग्लिकन पादरियों में से अनेक व्यक्ति जेम्स द्वितीय के समर्थकों (जैकोबाइट) की भावना वाले थे। वे यह देखना नही चाहते थे कि चर्च राजनीति पर हावी हो; वे सहिष्णुता में वास्तव में विश्वास रखते थे।

इस प्रकार दोनों दलों के राजनीतिक उद्देश्यों में लगभग प्रत्येक बात पर तीव्र मतभेद था। इस राज्यकाल में दोनों पक्ष अपने साधनों का संगठन करने में क्रियाशील थे। ह्विग लोगों को यह लाभ था कि धड़े (Junta) या गुट के रूप में महान् प्रभाव रखने वाले नेताओं का एक ऐसा मान्य समूह था, जिसके नेताओं को पार्टी द्वारा अनुसरण की जाने वाली नीति की पहले से ही योजना बनाने की और मिल कर कार्य करने की आदत थी। इस समूह का निर्माण करने वाले व्यक्ति सोमर्स, माण्टेग्यू, आरफोर्ड, ह्वार्टन और सेण्डरलैण्ड जैसे अतीव योग्य पुरुष थे। वे यह सीख रहे थे कि पार्लियामेण्ट के चुनावों को प्रभावित करने में महान् प्रादेशिक घरानों की प्रतिष्ठा का अधिकतम उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है। उनके नेतृत्व में लार्ड सभा का ह्विग बहुमत तथा कामन्स सभा के सदस्यों का ठोस ह्विग समूह सामान्य रूप से एक संयुक्त मोर्चा प्रस्तुत करता था। टोरी दल अधिक विभक्त था। रोचेस्टर और नोटिंघम जैसे धार्मिक मामले में अत्यधिक कट्टर नेताओं की तथा अधिक उदार और बौद्धिक एवं तरुण, हार्ले और सेण्ट जॉन (बोलिंगब्रोक) जैसे टोरियों के बीच में एक बड़ा अविश्वास था। जैकोबाइट (जेम्स द्वितीय के अनुयायी) तथा हनोवरवंश के पक्षपाती टोरियों में भी परस्पर संघर्ष था। देहात के जमीदारों का अधिकांश भाग धार्मिक मामलों में कट्टर (High Church) नेताओं का अनुसरण करने में सन्तुष्ट रहता था। किन्तु इस दल का एक हिस्सा तरुण टोरियों (Young Tories) के नाम से कहा जाने वाला समूह था। धार्मिक मामलों में कट्टर दल का केन्द्र एक ऐसे क्लब में था, जिसे विलियम तृतीय के समय में आरम्भ किया गया था और जो इसके सदस्यों

द्वारा पसन्द की जाने वाली अक्टूबर मास में डाली जाने वाली जौ की शराब (Ale) के कारण **अक्टूबर क्लब** के नाम से प्रसिद्ध था।

२. मर्लबरो की युद्ध करने वाली सरकार तथा ह्विगों का उत्कर्ष

रानी एन के राज्यकाल के आरम्भ में मर्लबरो और गोडोल्फिन मन्त्रीमण्डल पर हावी थे, रानी के साथ उन्हें सब शक्तियाँ प्राप्त थीं। उन्हें टोरी समझा जाता था, यद्यपि वे विलियम तृतीय की उस महाद्वीपीय नीति का अनुसरण कर रहे थे, जिस पर अधिकांश टोरी अविश्वास रखते थे, रानी पर मर्लबरो के प्रभाव के कारण वे ताज की शक्ति का नियन्त्रण करते थे। कुछ समय तक उन्होंने धार्मिक कर्मकाण्ड के कट्टर समर्थक टोरियों को भी अपने साथ बनाये रखा। ऐसा करने के लिए उन्हें १७०२ ई० में Occasional Conformity Bill का समर्थन करना पड़ा। इसका लक्ष्य उस परिपाटी को समाप्त कर देना था, जिसकी सहायता से अनेक डिसेण्टर पदों के लिए अपने को योग्य बनाने की दृष्टि से कभी-कभी एंग्लिकन संस्कार स्वीकार करके टेस्ट तथा कारपोरेशन कानूनों से बच जाते थे, किन्तु ह्विगों पर यह विश्वास रखा जा सकता था कि वे लार्ड सभा में इस बिल को रद्द कर देंगे।

फिर भी, जैसे-जैसे समय बीतता गया और युद्ध अधिक उग्र होता गया तो मर्लबरो और गोडोल्फिन ने यह अनुभव किया कि वे अपनी युद्ध की नीति के लिए धार्मिक कर्मकाण्ड के कट्टर पक्षपाती टोरियों के पूर्ण समर्थन पर भरोसा नहीं रख सकते। इन्होंने शनैः-शनैः सरकार से ऐसे टोरियों को निकाल दिया। वे अधिकाधिक ह्विग लोगों के समर्थन पर निर्भर रहने लगे। वे इस तथ्य के बावजूद भी ऐसा करने में समर्थ हुए कि पार्लियामेण्ट में ह्विग अल्प संख्या में थे। इसका कुछ कारण तो यह था कि उन्हें हार्ले और सेण्ट जॉन के नेतृत्व में रहने वाले तरुण टोरियों का समर्थन अब भी प्राप्त था और कुछ कारण यह भी था कि कामन्स सभा में १०० के लगभग वोटों का एक ठोस समूह था। ये वोट मुख्य रूप से सरकारी कर्मचारियों (Placemen) के थे। ये अपना स्थान छिन जाने के डर से राजभक्त बने हुए थे और ह्विगों के साथ मिल कर टोरियों को हरा सकते थे। उदाहरणार्थ, १७०५ ई० की पार्लियामेण्ट में यह हिसाब लगाया गया था कि इसमें १९० टोरी, १५० ह्विग और १०० सरकारी कर्मचारी थे। क्रान्ति के समय से, कामन्स सभा की महत्ता ने सरकारों का एक प्रधान कार्य बहुमत को इकट्ठा बनाये रखने की अथवा संसदीय व्यवस्था बनाये रखने की पद्धति एक कला बन गया था। यह केवल भ्रष्टाचार के साधनों से ही बड़ी मात्रा में किया जा सकता था, कम-से-कम यह इसी प्रकार किया गया। चार्ल्स द्वितीय के शासन काल में डेन्बी द्वारा आरम्भ किये संसदीय भ्रष्टाचार के उपायों को विलियम तृतीय के समय में भी जारी रखा गया और गोडोल्फिन ने इनका निरन्तर प्रयोग किया। ये उपाय एक मात्र ऐसे साधन प्रतीत होते थे, जिनसे संसदीय पद्धति में एक सुदृढ़ और स्थिर नीति का अनुसरण किया जा सकता था। वे संसदीय शासन के लिए अवश्य दिया जाने वाला मूल्य प्रतीत होते थे।

१७०८ ई० में हार्ले और सेण्ट जान मन्त्रिमण्डल से पृथक् हो गये। अब यह पूर्ण रूप से ह्विग मन्त्रीमण्डल बन गया। यह बात रानी को बहुत नापसन्द थी, क्योंकि वह स्वयमेव

टोरी थी। ह्विग लोग प्रबल होने पर तथा १६०८ ई० की नवीन पार्लियामेण्ट में कामन्स सभा में स्पष्ट बहुमत प्राप्त कर लेने पर, इस प्रलोभन का संवरण नहीं कर सके कि वे धार्मिक कर्मकाण्ड की कट्टर समर्थक हाई चर्च पार्टी पर एक प्रहार करें। उनके दृष्टिकोण में यह पार्टी क्रान्ति के सिद्धान्तों को निरन्तर खोखला कर रही थी। एक असंयमी पादरी डॉक्टर साचेवेरल ने उन्हें अपने उपदेश प्रकाशित करके इसका अवसर प्रदान किया। इनमें उसने दैवीय अधिकार के और मूकभाव से आज्ञापालन के पुराने टोरी सिद्धान्तों का प्रचार किया। ये सिद्धान्त स्पष्ट रूप से क्रान्ति के विचारों के विरोधी थे। ह्विगों ने लार्ड सभा के सम्मुख साचेवेरल पर महाभियोग चला कर उसका तथा उसके सिद्धान्तों का निःशुल्क प्रचार किया। लार्ड सभा ने उसे दोषी पाया और उसे प्रचार करने के अधिकार से निलम्बित करने का दण्ड दिया। यह दण्ड इतना हल्का था कि इसे जनता द्वारा दण्ड से मुक्ति ही समझा गया। साचेवेरल को सस्ती शहादत मिल गयी। अधिकतम असाधारण रूप से वह एक लोकप्रिय वीर पुरुष तथा अत्याचार के विरुद्ध चर्च की रक्षा करने वाला बन गया और अपने देहाती गाँव तक यात्रा करते हुए जहाँ कहीं से गुजरा, वहाँ उसका स्वागत किया गया।

साचेवेरल का मामला केवल इसलिए महत्त्वपूर्ण था कि इसने यह प्रदर्शित किया कि अब भी राष्ट्र के एक बड़े भाग पर कट्टर धार्मिक पार्टी का तथा इसके दकियानूसी राजनीतिक विचारों का कितना प्रबल प्रभाव है। इसने हार्ले तथा सेण्ट जॉन को यह विश्वास करा दिया कि शक्ति पाने के सर्वोत्तम मार्ग का प्रतिनिधित्व धार्मिक कट्टरता की दिशा करती है; यद्यपि हार्ले के डिसेण्टर लोगों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध थे और सेण्ट जान एक बदनाम धार्मिक सन्देहवादी व्यक्ति था। नये टोरीवाद के नेता पहले से ही मर्लबरो के तथा ह्विगों के पतन के लिए तैयारी का प्रयास कर रहे थे। वे बड़ी चतुराई के साथ गुप्त रूप से षड्यन्त्रकारी उपायों का तथा "चर्च के खतरे में होने" के नारे का प्रयोग कर रहे थे। मर्लबरो की स्थिति बड़ी मात्रा में उस प्रभाव पर आश्रित थी, जो प्रभाव उसकी पत्नी रानी पर डाल रही थी। किन्तु एन अब इस प्रबल प्रभाव डालने वाली डचेस की झल्लाहटों से अथवा चिड़चिड़ेपन के प्रदर्शनों से ऊबने लगी थी। उसने सदैव ह्विगों से घृणा की थी और धार्मिक मामलों मे कट्टर दृष्टिकोण रखने वाली एक स्त्री होने के नाते वह डाक्टर साचेवेरल का पक्ष लेती थी। हार्ले रानी को अपनी चचेरी बहन श्रीमती माशम के माध्यम से प्रभावित करने में समर्थ हुआ। यह डचेस की भी चचेरी बहन थी और उसके शयन कक्ष की प्रबन्धक महिला थी। युद्ध की एक नाजुक घड़ी में जब शान्ति के लिए लुई के प्रस्तावों को अस्वीकृत किया जा चुका था और युद्ध का अन्तिम उग्र रूप आरम्भ होने वाला था, उस समय मर्लबरो ने तथा ह्विगों ने अपनी शक्ति की नींवों को हिलता हुआ देखा।

१७१० ई० में इस शक्ति पर एक चोट कर दी गयी। रानी को प्रेरित किया गया कि वह गोडोल्फिन को तथा उसके मुख्य ह्विग साथियों को पदच्युत कर दे। हार्ले आक्सफोर्ड का अर्ल तथा वास्तव में प्रधान मन्त्री बना, यद्यपि अभी तक इस शब्द का प्रयोग आरम्भ नहीं हुआ था। मर्लबरो को अब भी एक अन्य युद्ध के लिए सेना की कमान रखने की अनुमति दी गयी, किन्तु प्रत्येक सम्भव उपाय से उसके मार्ग में बाधा डाली गयी। १७११ ई० के

अन्त में वह अपने सभी पदों से च्युत किया गया। तरुण टोरी विजयी हुए, अब उनके राजनीतिक विचारों के विकास के लिए मैदान साफ था।

३. बोलिंगब्रोक और नया टोरीवाद

इनका पहला कार्य लगभग लज्जास्पद शीघ्रता के साथ और मित्रों के साथ समुचित परामर्श किये बिना सन्धि के लिए वार्ता आरम्भ करना था। मर्लबरो को वापस बुलाने से पहले ही सन्धिवार्ताएँ आरम्भ हो गयीं। सितम्बर १७११ ई० में आरम्भिक बातों पर समझौता हो गया। लार्ड सभा में ह्विग बहुमत को पराभूत करने के लिए बारह नये लार्डों को बनाया गया। यद्यपि काफी विलम्ब हुए, तथापि अप्रैल १७१३ ई० में अन्तिम शर्तों पर हस्ताक्षर हो गये। यह नयी नीति का पहला स्वर था। विलियम तृतीय की परम्पराओं के साथ अवश्य विच्छेद होना चाहिए। निर्वासित स्टीवर्ट राजाओं के संरक्षक के विरुद्ध कठोर युद्ध का अवश्य अन्त होना चाहिए।

सेण्ट जान (अब वाइकौण्ट बोलिंगब्रोक) दोनों नेताओं में से बहुत अधिक पुरुषार्थी था। यदि उसकी बात चल जाती तो शान्ति-सन्धि के बाद फ्रांस के साथ मित्रता हो जाती। उसने एक ऐसी व्यापारिक सन्धि करने का प्रयत्न किया, जो फ्रांस को परम अनुगृहीत राष्ट्र (Most favoured nation) का अधिकार प्रदान करती और पुर्तगाली शराबों पर उस अधिमान (Preference) को समाप्त कर देती, जो १७०३ ई० की मैथुएन सन्धि से उसे प्राप्त था। यह व्यापार की उस स्वतन्त्रता की दिशा में एक ठोस कदम होता, जिसमें बोलिंगब्रोक विश्वास करता था, किन्तु व्यापारिक वर्ग ऐसी नीति के विरुद्ध शोर मचा रहा था। यद्यपि डिफ़ो को इस प्रश्न पर लिखने को कहा गया था, तथापि सामान्य टोरियों की बहुसंख्या ऐसे महान् परिवर्तन के लिए तैयार नहीं थी, अतः व्यापारिक सन्धि को समाप्त कर देना पड़ा। निर्भीक बोलिंगब्रोक ने ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन और सेवाय के बीच में मैत्री के लिए वार्ता आरम्भ कर दी, इसे नवीन टोरी विदेश नीति का आधार बनना था।

इस बीच में तरुण टोरियों की व्यापारिक नीति ने अपने को एक अन्य प्रकार से अभिव्यक्त किया। ह्विग हितों के सुदृढ़ दुर्ग-बैंक आफ इंग्लैण्ड की वित्तीय प्रभुता पर प्रहार करने के लिए, उन्होंने १७११ ई० में **साऊथ सी कम्पनी** के नाम से प्रसिद्ध एक नयी संस्था आरम्भ की थी। इसे राष्ट्रीय ऋण की लगभग एक करोड़ की राशि को लेना था और इसके बदले में इसे दक्षिण अमेरिका और दक्षिणी अटलाण्टिक महासागर के साथ व्यापार का एकाधिकार दिया जाना था। इसे ऋण पर दिये जाने वाले ब्याज का प्रयोग अपने व्यापारिक कार्य के लिए करना था। यह आशा की जाती थी कि इससे बैंक आफ इंग्लैण्ड का सन्तुलन बनाये रखने वाली एक संस्था टोरियों को प्राप्त हो जायगी। हम साऊथ सी कम्पनी के बारे में आगे अधिक चर्चा करेंगे। इन आशाओं का आधार यह उम्मीद थी कि सन्धि की शर्तों के एक अंश के रूप में स्पेन ने जिन व्यापारिक रियायतों को प्रदान किया था और जिन रियायतों का एसियण्टो सन्धि (Asiento Treaty) में वर्णन था, इन रियायतों के कारण भारी मुनाफे होंगे।

बैंक ऑफ इंग्लैण्ड पर प्रहार करना तो बहुत अच्छा था, किन्तु टोरी जमींदार जि धनाढ्य व्यक्तियों से घृणा करते थे, उनकी प्रभुता पर प्रहार करने के लिए बड़े विशेषा धिकारों के साथ एक नयी व्यापारिक कम्पनी की स्थापना करना एक अच्छी पद्धति नहीं थी आक्सफोर्ड तथा बोलिंगब्रोक ने अपने को पुनः आश्वस्त करने की एक विधि उस कानून ं पायी, जिसके अनुसार कामन्स सभा की सदस्यता को भूमि रखने वाले जमीदारों तक सीमित कर दिया गया था। किन्तु सामान्य टोरियों का समूह डिसेण्टर लोगों पर हमला करना चाहत था। ऐसा आक्रमण आक्सफोर्ड द्वारा अच्छे रूप में नहीं किया जा सकता था, वह डिसेण्टरं के साथ सहानुभूति के लिए बदनाम था क्योंकि उसने उनसे एक बड़ी मात्रा में समर्थन पाया था।

धार्मिक सन्देहवाद का दृष्टिकोण रखने वाले बोलिंगब्रोक के लिए असहमति (Dissent) पर हमला करने के लिए धार्मिक उद्देश्य कोई महत्त्व नही रखता था। किन्तु वह उस वर्ग पर हमला करने के लिए बहुत तैयार था, जो सामान्य रूप से ह्विगों का समर्थक और स्टीवर्ट लोगों का शत्रु था। इसलिए Occasional Conformity Act अन्त में, १७११ ई० में पास किया गया। चर्च के प्रबल समर्थक इस बात से प्रसन्न हो सकते थे कि डिसेण्टर लोगों को अब प्रभावशाली रीति से कारपोरेशनों का सदस्य बनने अथवा किसी सार्वजनिक पद को रखने से प्रभावशाली ढंग से रोक दिया गया था और उत्तम टोरी इस बात से प्रसन्न हो सकते थे कि बरो-निर्वाचन क्षेत्र में ह्विगों का प्रभाव खोखला कर दिया गया था। १७१४ ई० में एक अन्य कानून बना, इसके लिए बोलिंगब्रोक मुख्य रूप से उत्तरदायी था। विश्व-विद्यालयों तथा सभी पब्लिक स्कूलों से बहिष्कृत किये जाने पर, डिसेण्टरों ने अपनी शिक्षा संस्थाओं की एक श्रृंखला का निर्माण किया था। बोलिंगब्रोक के **संघ-भेद अधिनियम** (Schism Act) का उद्देश्य इन संस्थाओं का विध्वंस करना और अन्त में असहमति का इस प्रकार समू-लोन्मूलन करना था कि विशप से अनुज्ञा न प्राप्त करने वाले किसी भी व्यक्ति को किसी विद्यालय में पढ़ाने से रोक दिया गया। इस प्रकार सभी तरुण डिसेण्टरों को चर्च की शिक्षा लेनी जरूरी हो गयी अथवा उनको कोई शिक्षा नहीं मिल सकती थी। टोरी बहुल कामन्स सभा ने लगभग एक के विरुद्ध दो बहुमतों से अत्याचार करने वाले इस पैशाचिक कानून को पास किया। लार्ड सभा भी में यह बहुत कम वोटों की बहुसंख्या से पास हुआ, अनेक ह्विग लार्डों ने इस सदन के प्रलेखों में अपना एक प्रतिवाद अंकित कराया; इन लार्डों में पाँच विशप भी सम्मिलित थे।

डिसेण्टरों पर हमले के साथ-साथ कुछ प्रमुख ह्विग नेताओं पर भी आक्रमण किया गया। कामन्स सभा में योग्यतम वादविवाद करने वाले सर राबर्ट वालपोल पर सार्वजनिक द्रव्य के गबन का आरोप लगाया, यद्यपि उसने अपना बचाव पूरी तरह से किया, तथापि उसे सदन से निष्कासन का दण्ड तथा "बदनाम भ्रष्टाचार" का दोषी होने के कारण टावर में कारावास का दण्ड दिया गया। मर्लबरो के ड्यूक पर यह दोष लगाया गया कि उसने मित्रराष्ट्रों को दी जाने वाली ब्रिटिश आर्थिक सहायताओं पर ढाई प्रतिशत का कमीशन प्राप्त किया था। यद्यपि यह प्रमाणित हो गया था कि विलियम तृतीय ने एक गुप्त सेवानिधि बनाने के लिए इन

कटौतियों की स्वीकृति दी थी, तथापि उसके विरुद्ध मुकदमा चलाना शुरू किया गया, इससे बचने के लिए उसे भागकर यूरोप में शरण लेनी पड़ी।

प्रमुख ह्विग नेताओं के और डिसेण्टरों के विरुद्ध इस विषाक्त वंशपरम्परागत वैर के पीछे एक इससे भी अधिक खतरनाक इरादा था। टोरी नेता Act of Settlement को उलटने की तथा निर्वासित स्टीवर्टवंशी राजाओं को वापस लाने की तैयारी कर रहे थे। इनके अधिकांश अनुयायी इस नीति में उनका समर्थन करने के लिए तैयार थे, बशर्ते कि राजगद्दी के लिए दावा करने वाला जेम्स द्वितीय केवल रोमन कैथोलिक मत का परित्याग करे अथवा एंग्लिकन चर्च की सुरक्षा के लिए पर्याप्त गारण्टी दे। इनकी एक बड़ी संख्या इन गारण्टियों के बिना भी कार्य करने के लिए तैयार थी। ऑक्सफोर्ड और बोलिंगब्रोक यह जानते थे कि यदि ब्रिटिश राजगद्दी पर हनोवरवंशी राजा बैठ गये तो उनकी शक्ति बने रहने की कोई सम्भावना नहीं थी। वे ब्रिटिश द्वीपसमूह को ऐसे विदेशी राजा के प्रभुत्व में रखने के विचार को ही नापसन्द करते थे, जिसके महाद्वीपीय प्रदेश ब्रिटिश नीति को यूरोपियन मामलों की सभी जटिलताओं में उलझाने वाले हों; १७१३ ई० में उन्होंने गद्दी का दावा करने वाले व्यक्ति के साथ गुप्त पत्र-व्यवहार आरम्भ कर दिया। इस समय मर्लबरो के स्थान पर सेना का अध्यक्ष बनने वाला जैकोबाइट ऑरमोण्ड का ड्यूक भी गद्दी का दावा करने वाले जेम्स द्वितीय के पुत्र के अभिकर्त्ताओं से सन्धि वार्ता चला रहा था और ऑरमोण्ड को. सिंक[1] या पाँच बन्दरगाहों का प्रमुख संरक्षक (Lord Worden) नियत किया गया ताकि इंग्लैण्ड का प्रवेशद्वार सुरक्षित हाथों में रह सके।

आरम्भ में यह प्रतीत होता था कि ऑक्सफोर्ड और बोलिंगब्रोक ने यह निश्चित समझ लिया था कि प्रिटेण्डर (जेम्स द्वितीय का पुत्र) अपने धर्म को राजमुकुट पुनः प्राप्त करने के मूल्य के रूप में, जल्दी ही छोड़ देगा। सन्देहवादी बोलिंगब्रोक को यह हास्यास्पद प्रतीत होता था कि वह इसमें आनाकानी करे। किन्तु जेम्स ने अपने सम्मान की दृष्टि से उस समय इस मामले पर बातचीत करने तक से कोरा इन्कार कर दिया, जब आक्सफोर्ड ने उसके पास घोषणा का प्रारूप भेजा। इससे भी अधिक गम्भीर बात यह थी कि वह प्रोटेस्टेण्ट मत के लिए "युक्तियुक्त सुरक्षा" से अधिक कोई वचन देने के लिए तैयार नहीं था। इस कारण ऑक्सफोर्ड इस मामले में झिझकने लगा। धर्म के लिए कुछ भी परवाह न करने वाला बोलिंगब्रोक आगे जाने के लिए तैयार था। उसकी चपल शक्ति ऑक्सफोर्ड को नेतृत्व से निकालने के लिए अधिकाधिक सक्रिय हुई, एक पक्के धार्मिक व्यक्ति के रूप में तथा संघभेद अधिनियम (Schism Act) के रचयिता के रूप में अपने को प्रदर्शित करते हुए, उसने रानी का विश्वास प्राप्त कर लिया। रानी कमजोर तथा बीमार थी; ज्यों-ज्यों उसके जीवन का अन्त निकट आ रहा था, उसकी स्वाभाविक प्रीति अपने निर्वासित भाई के पक्ष के प्रति अधिक घनिष्ठ हो रही थी। वह अपने हनोवरवंशी उत्तराधिकारियों से घृणा करती थी। उसने इन्हें राज्य में आने

---

१. हेस्टिंग्ज, सैण्डविच, डोवर रोमनी तथा हाइथ नामक इंग्लिश चैनल के पाँच बन्दरगाह या पंचपत्तन सिंक (Cinque Porto) कहलाते हैं।

की अनुमति कभी नहीं दी थी। वह उन ह्विगों से भी घृणा करती थी, जो उनके उत्तराधिकार के कारण शक्ति प्राप्त करने वाले थे। २७ जुलाई १७१४ ई० को वह बोलिंगब्रोक की उत्कण्ठा के आगे झुक गयी और उसने ढुलमुल तथा अस्थिरमति ऑक्सफोर्ड को पदच्युत कर दिया।

अब कुछ समय के लिए बोलिंगब्रोक इंग्लैण्ड के राज्य का स्वामी बन गया। वह स्टीवर्ट वंश की द्वितीय पुन:स्थापना को आसान बनाने के लिए समूचे शासन-यन्त्र का और पार्लियामेण्ट के कार्यकारी बहुमत का उपयोग करने में समर्थ था, वह नये शासन में सर्वशक्तिशाली मन्त्री बनने की प्रतीक्षा कर रहा था। इस बीच में ह्विगों ने भीषण भय के साथ क्रान्ति के सारे काम को खतरे में पड़ता हुआ देखा। इन चिन्तापूर्ण महीनों में वे प्रतिरोध के लिए तैयारी कर रहे थे। उन्होंने शस्त्र इकट्ठे किये, फौजें इकट्ठा की। प्रधान दुर्गों पर अधिकार पाने की योजनाएँ बनायी। यदि बोलिंगब्रोक की योजनाएँ सफल हो जातीं तो यह निश्चित था कि ऐसा गृहयुद्ध आरम्भ हो जाता, जिसमें टोरियों का एक काफी बड़ा हिस्सा ह्विग लोगों के पक्ष में होता।

बोलिंगब्रोक को किसी तैयारी का समय मिलने से पहले ही रानी की आकस्मिक मृत्यु से गृहयुद्ध का निवारण हो गया। उसकी मृत्यु पहली अगस्त को, आक्सफोर्ड पर बोलिंगब्रोक की विजय के केवल चार दिन बाद और ऑक्सफोर्ड का स्थान भरे जाने से भी पहले हो गयी। उसकी मृत्यु से दो दिन पहले जब उसका अन्त पहले से ही निश्चित था, उस समय कैबिनेट की एक बैठक केन्सिगटन के राजमहल में बुलायी गयी। इसमें प्रिवी कौंसिल के सदस्य-दो ह्विग ड्यूक, आर्गिल और सोमरसैट उपस्थित हुए, यद्यपि वे कैबिनेट के सदस्य नहीं थे, किन्तु उन्होंने प्रिवी कौंसिल के सदस्य के रूप में विचार विमर्श में भाग लेने के अपने अधिकार पर आग्रह किया, क्योंकि उस समय तक कैबिनेट एक अमान्य संस्था थी, यद्यपि पुन:स्थापना के बाद से यह क्रियात्मक रूप से शासन का केन्द्र थी। दोलायमान और भयभीत मन्त्रियों के बीच में ह्विगों की उपस्थिति ने पासा पलट दिया। अन्य प्रमुख ह्विग इस कौंसिल में सम्मिलित हो गये। समुद्री बेड़े को आदेश दिया गया, फ्लैण्डर्स से फौजों को वापस बुला लिया गया। जिलों के लार्ड लेफ़्टिनेण्टों को यह आदेश दिया गया कि वे पोप के समर्थकों तथा शपथ न लेने वालों को नि:शस्त्र कर दें। एक विशेष दूत हनोवर के इलेक्टर को बुलाने के लिए द्रुतगति से भेजा गया। बोलिंगब्रोक ने सहसा अपने को कुछ भी करने में शक्तिहीन पाया। उसके हाथों से शक्ति ह्विग नेताओं के दृढ़तापूर्ण कार्यों के कारण सहसा फिसल गयी। उसने सुचारु ढंग से अपनी शक्ति का समर्पण कर दिया। नवीन राजा की घोषणा की गयी और सर्वत्र इस घोषणा को शान्तिपूर्वक ग्रहण किया गया।

१८ सितम्बर को जार्ज प्रथम ग्रीनविच में उतरा। उसका पहला कार्य प्रमुख ह्विगों को राज्य के प्रधान पद देना था। इसके बाद नयी पार्लियामेण्ट के निर्वाचन का आदेश दिया गया। बोलिंगब्रोक के जैकोबाइट षड्यन्त्रों के कारण टोरियों को मिली बदनामी के प्रभाव से टोरी दल का बहुमत समाप्त हो गया। कामन्स सभा में ह्विगों को १५० का स्पष्ट बहुमत प्राप्त

हुआ। हम आगे यह देखेंगे वे इस बात को निश्चित बनाने के प्रत्येक सम्भव साधन का उपभोग करने में सावधान थे[1] कि वे पुनः इस बहुमत को न खो दें। नयी पार्लियामेण्ट का पहला कार्य (मार्च १७१५ ई०) ऑक्सफोर्ड और बोलिंगब्रोक पर महाभियोग चलाने के लिए प्रस्ताव करना था। आक्सफोर्ड पर्याप्त सुरक्षित था, उसके विरुद्ध कुछ भी निश्चित बात प्रमाणित नहीं की जा सकती थी। बोलिंगब्रोक की स्थिति बहुत भिन्न थी, वह दुर्भाग्य से बचने के लिए फ्रांस भाग गया। यहाँ वह कुछ समय के लिए राजगद्दी के दावेदार जेम्स द्वितीय के पुत्र (Pretender) का राज्यमन्त्री बन गया। १७२३ ई० में उसने यह अनुभव कर लिया कि जेम्स द्वितीय के पुत्र (प्रिटेण्डर) के उद्देश्य के सफल होने की कोई आशा नहीं थी। इसके बाद उसने महामुद्रा से अंकित पत्र के साथ दी गयी एक माफी को स्वीकार कर लिया और वह राष्ट्रीय मामलों में एक और भी अधिक बड़ा, किन्तु कम सार्वजनिक भाग लेने के लिए इंग्लैण्ड लौट आया।

ब्रिटिश टापुओं के लिए तथा राष्ट्रमण्डल के लिए यह बड़े सौभाग्य की बात थी कि १७१३ ई० और १७१४ ई० का षड्यन्त्र विफल कर दिया गया था, क्योंकि एक वास्तविक अर्थ में इसकी पराजय क्रान्ति की परिपूर्णता थी। यद्यपि ह्विग अपने विचारों के लिए लड़ते, तथापि यह किसी भी प्रकार निश्चित नहीं है कि वे विजयी हुए होते। यदि बोलिंगब्रोक को Act of Settlement रद्द करने का समय दिया जाता और यदि प्रिटेण्डर ने एंग्लिकन चर्च की सुरक्षा के सम्बन्ध में सन्तोषजनक आश्वासन दिये होते (जैसे कि अन्त में निस्सन्देह उसे यह आश्वासन दे देने थे) तो इस अवस्था में पुनः-स्थापना का अभिप्राय निश्चित रूप से दैवीय अधिकार वाले राजतन्त्र के सिद्धान्तों के लिए एक महान् विजय होती। इसका आशय धार्मिक सहिष्णुता की उस नीति का भी परित्याग होता, जो क्रान्ति की एक महान् विजय थी और और जिसकी स्थापना अधूरे दिल से की गयी थी।

यद्यपि बोलिंगब्रोक ने इन षड्यन्त्रों में एक शरारतपूर्ण एवं खतरनाक भाग लिया, और हम यह स्वीकार करने के लिए बाध्य हैं कि उसका प्रधान उद्देश्य एक प्रबल वैयक्तिक महत्वाकांक्षा थी, तथापि यह अवश्य स्वीकार किया जाना चाहिए कि वह एक महान् शक्ति वाला और अन्तर्दृष्टियुक्त मनुष्य था। वह वास्तविक दिलचस्पी और महत्त्व रखने वाले राजनीतिक विचारों का समर्थक था। वह यशस्वी, लम्पट, सन्देहवादी तथा सांसारिक व्यक्ति उन शुष्क देहाती जमींदारों की परम्पराओं और पक्षपातों में भाग लेने से वस्तुतः बहुत दूर था, जिनका वह नेतृत्व कर रहा था। अपने दूरवर्ती उत्तराधिकारी. एवं उसके गम्भीर रूप से प्रशंसक तथा उसके विचारों से गम्भीर रूप से प्रभावित उस डिजराइली की भाँति उसने अपने को इस कार्य में लगाया कि वह टोरीवाद को एक बौद्धिक तथा प्रगतिशील मत में परिणत कर दे। यद्यपि वह स्वयमेव प्रचण्ड पार्टी-पक्षावलम्बी था, तथापि वह अपने को पार्टी द्वारा शासन करने की पद्धति का शत्रु घोषित करता था। उसका यह मत था कि डिसेण्टरों तथा धनाढ्य व्यक्तियों द्वारा समर्थन किया जाने वाला, बड़े कुलीन सरदारों का

---

१. छठी पुस्तक का पहला अध्याय पृ० ६८० देखिए।

ह्विग गुट इस बात का प्रयत्न कर रहा था कि वह अपने स्वार्थों के लिए सरकार की समूची पद्धति पर नियन्त्रण प्राप्त करे। उसे हनोवरवंशी के उत्तराधिकार पर अधिक आपत्ति इसलिए थी कि हनोवरवंशी राजाओं के सम्भवतः ह्विग गुट की कठपुतली बनने की सम्भावना थी। उसका यह मत था कि शासन की ब्रिटिश पद्धति में, राजतन्त्र को एक विशेष भाग लेना था, विशेष रूप से ऐसे किसी अल्पतन्त्र के उत्कर्ष को रोकने में तथा दलों के ऊपर बने रहने में तथा राष्ट्रीय जीवन के सर्वोत्तम नेताओं की सेवाओं को प्राप्त करने में यह भाग लिया जाना चाहिए था। उसका यह मत था कि राष्ट्र का स्वाभाविक नेता जमीन रखने वाला भद्र-वर्ग है और उसका लक्ष्य इनके प्राधान्य को सुरक्षित बनाना था। विदेशी मामलों में वह यह देखना चाहता था कि ब्रिटेन एक विशुद्ध राष्ट्रीय नीति का अनुसरण करे, यूरोपियन झगड़ों एवं युद्धों से पृथक् रहे और मुख्य रूप से अपने बेड़े पर भरोसा रखे। आर्थिक क्षेत्र में वह राजकीय हस्तक्षेप से मुक्त स्वतन्त्र व्यापार की नीति की दिशा में अपना मार्ग टटोल रहा था; वह इस बात में विश्वास नहीं रखता था कि राजनीति की शत्रुताओं को व्यापार के क्षेत्र में लाया जाय। उसे इस बात का कोई कारण नहीं प्रतीत होता था कि ब्रिटेन में तथा उसके पुराने प्रतिस्पर्धियों—फ्रांस एवं स्पेन—में व्यापारिक आदान-प्रदान से प्रोत्साहित की जाने वाली मित्रता क्यों न स्थापित की जाय? ये विचार बोलिंगब्रोक की महत्वाकांक्षाओं से और उसके अविवेकपूर्ण उपायों से कलुषित हुए और बहुत कुछ झूठे सिद्ध कर दिये गये; किन्तु वे मानने योग्य और रक्षा किये जाने योग्य प्रशंसनीय विचार थे और भविष्य में उनका बहुत प्रभाव पड़ना था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Trevelyan, England under Queen Anne; **Churchill,** Marlborough; **Leadam,** England from 1702 to 1760; **Stanhope,** Reign of Queen Anne; **Lecky,** England in the Eighteenth Century; **Sichel,** Life of Boligbroke; **Hutton,** English Church from 1625 to 1714; **Roscoe,** Life of Harley; **Feiling,** History of the Tory Party; **Clark,** Later Stuarts; **Holdsworth,** History of English Law; **Firth,** Commentary on Macaulay's History of England.

• •

छठी पुस्तक

ह्विग स्वअल्पतन्त्र : सामुद्रिक तथा औपनिवेशिक प्रभुता की स्थापना

(१७१४-१७६३ ई०)

प्रस्तावना

१७१४ और १७६३ ई० के बीच के पचास वर्ष ऊपरी दृष्टि से लगभग दो समान भागों में विभक्त हैं। १७१४ से १७३६ ई० तक का पहला काल शान्ति का तथा लगभग निष्क्रियता का युग था, इसमें राष्ट्रमण्डल के लिए महान् महत्त्व रखने वाले कोई परिवर्तन घटित होते हुए नहीं प्रतीत होते थे। दूसरा युग १७३६ ई० से १७६३ ई० तक विस्तीर्ण है। यह यूरोप में, समुद्रों पर, अमेरिका में और भारत में लगभग निरन्तर चलने वाले युद्धों से भरा हुआ था। इसकी समाप्ति ऐसी उज्ज्वलतम सफलताओं की श्रृंखलाओं के साथ हुई कि जिससे यह प्रतीत होता था कि ये विजयें ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल को विश्व में सबसे बड़ी शक्ति के रूप में, समुद्रों के स्वामी तथा समुद्रों से पार के पूर्व और पश्चिम के प्रदेशों के भाग्य निर्माता के रूप में, सुरक्षित रूप से सुप्रतिष्ठित कर देंगी।

फिर भी इस युग के पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में इस तीव्र अन्तर के बावजूद एक वास्तविक एकता उनको परस्पर जोड़ती है। उत्तरार्द्ध को परिपूर्ण करने वाला महान् संघर्ष पूर्वार्द्ध में उस समय शनैः-शनैः परिपक्व हो रहा था, जब शान्ति के आवरण में समुद्र पार के व्यापार में तथा उपनिवेशों में फ्रांस एवं ब्रिटेन की प्रतिद्वन्द्विता अधिक तीव्र हो रही थी। इसके अतिरिक्त समग्र दृष्टि से, इसका एक विशिष्ट स्वरूप है, क्योंकि इस समूचे समय में, नयी दुनियाँ में अपने देश से बाहर गये व्यक्तियों द्वारा बसाये समुदायों के प्रति तथा यूरोप के अन्य राज्यों के प्रति उनकी नीति एक ऐसे शक्तिशाली अल्पतन्त्र के तथा भूमि पर स्वामित्त्व करने वाले ह्विग कुलीनतन्त्र के विचारों से शासित हो रही थी, जिसने अपने लिए शासन के समूचे यन्त्र पर एक असाधारण नियन्त्रण प्राप्त कर लिया था। ह्विग अल्पतन्त्र के विचार ने एवं नीति ने राष्ट्रमण्डल के विकास पर एक गहरा एवं स्थायी प्रभाव डाला था।

सम्भवतः इस अल्पतन्त्र का उत्कर्ष ब्रिटिश राज्य की व्यवस्थित राजनीतिक स्वतन्त्रता के विकास में एक आवश्यक अवस्था थी। इसने उस स्वेच्छाचारी राजतन्त्र की पद्धति की स्थापना की सम्भावना को नष्ट कर दिया, जो यूरोप में लगभग सार्वभौम रूप से प्रचलित थी। इसने ब्रिटिश राज्य को एक प्रकार का राजमुकुट वाला गणराज्य बनाया था और (इतिहास में पहली बार) यह प्रदर्शित किया कि एक बड़ा राष्ट्रीय राज्य सार्वजनिक नियन्त्रण से मुक्त रहने वाली एक सुदृढ़ केन्द्रीय शक्ति की सत्ता के बिना भी एक बना कर रखा जा सकता है। इसने पार्लियामेण्ट पर अवलम्बित कैबिनेट शासन के यन्त्र का विकास किया। लगभग सारी दुनियाँ ने इसे ब्रिटेन से ग्रहण किया है। यह पद्धति सोच विचार कर कभी आविष्कृत नहीं की जा सकती थी, सम्भवतः इसका विकास एक संघटित अल्पतन्त्र के अंग के रूप में ही

किया जा सकता था। यह सत्य है कि जिस पार्लियामेण्ट पर नयी पद्धति आश्रित थी, वह एक अप्रतिनिध्यात्मक संस्था थी। इसका नियन्त्रण मुख्य रूप से ऐसे अल्पतन्त्र द्वारा होता था, जो भ्रष्टाचार के साधनों का प्रयोग करने में संकोच नहीं करता था। किन्तु सम्भवत: यह भी सत्य है कि कैबिनेट शासन का यन्त्र अन्य परिस्थितियों में बड़ी कठिनाइयों से विकसित हो सकता था। यह लगभग निश्चित रूप से सत्य है कि यदि पार्लियामेण्ट पूर्णरूपेण स्वतन्त्र होती तो (उस युग की परिस्थितियों में) यह बड़ी गड़बड़ में पड़ जाती; इसका परिणाम निर्वासित स्टीवर्ट राजाओं की पुन:स्थापना और सम्भवत: निरंकुश शासन की स्थापना हो सकती थी। फिर भी, चाहे कुछ भी हो, ह्विग अल्प-तन्त्र ने अपने प्रयोजनों के लिए शासन की ऐसी योजना बनाई, जो अन्त में लोकतन्त्र के साधन के रूप में प्रयोग किये जाने में समर्थ सिद्ध हुई। यह अब तक आविष्कृत एकमात्र ऐसा यन्त्र है, जिससे शासन के संचालन पर एक विशाल प्रतिनिध्यात्मक संस्था का नियन्त्रण प्रभावशाली बनाया जा सकता है। एक अन्य प्रकार से भी इस अल्पतन्त्र ने राजनीतिक स्वतन्त्रता के विकास की वास्तविक सेवा की। इसने समुदाय के दैनिक जीवन के अंग के रूप में, वाणी की, लेखन की और विचार की स्वतन्त्रता सुरक्षित रूप से स्थापित की, इसने इस बात को भी निश्चित बनाया कि कानून का प्रशासन—शासन की इच्छा से स्वतन्त्र होना चाहिए।

दूसरी ओर जैसा कि लगभग सभी अल्पतन्त्रों में प्राय: होता है, ह्विग अल्प-तन्त्र ने, उत्कर्ष की भावना से राष्ट्रमण्डल के वशवर्ती राज्यों के साथ ऐसी नीति का अनुसरण किया, जो प्रबोध से परिपूर्ण होने की स्थिति से बहुत दूर थी। इसने आयरलैण्ड के अन्यायपूर्ण अत्याचार को स्थायी बनाया और उसे उग्र भी बनाया। यह उच्च भावना वाले तथा समृद्ध अमेरिकन उपनिवेशों में उत्पन्न होने वाली शासन की समस्याओं के साथ बुद्धिमत्तापूर्ण व्यवहार करने में विफल रही। इसने उस पुरानी औपनिवेशिक नीति के दोषों पर भी बल दिया, जिनके कारण अगले युग में संघर्ष एवं विघटन उत्पन्न हुए। अमरीका के तेरह उपनिवेशों के विद्रोह को उत्पन्न करने वाली राष्ट्रमण्डल की महान् फूट के लिए अधिक दोष उन व्यक्तियों को दिया जाना चाहिए जो १८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ब्रिटिश नीति का नियन्त्रण कर रहे थे। अन्त में, यह नीति उन सामाजिक बुराइयों को देखने में अथवा इनके विरुद्ध कोई संरक्षण प्रस्तुत करने में विफल रही, जो बुराइयाँ ब्रिटिश व्यापार एवं उद्योग की द्रुत वृद्धि से उत्पन्न होने लगी थीं।

इस प्रकार अपनी उपलब्धियों और विफलताओं के कारण, इस युग का कार्य राष्ट्र-मण्डल के भविष्य के लिए अतीव महत्त्वपूर्ण था। जब इस युग की समाप्ति सुकीर्ति की प्रभा के साथ हुई और इसने ब्रिटिश जनता को समुद्रों में सर्वोच्च बनाया, नयी दुनियाँ में और व्यापार में सर्वोच्च बनाया तथा पूर्व में एक आश्चर्यजनक साम्राज्य की शुरुआतों का स्वामी बनाया तो इसने उनके लिए ऐसी समस्याओं की श्रृंखला छोड़ी, जैसी समस्याएँ अब तक किसी भी जनता के आगे नहीं आयी थीं, ये ऐसी समस्याएँ थीं, जिनकी विविधता, जटिलता, और कठिनाई को उस पीढ़ी ने बिल्कुल नहीं समझा था, जिस पीढ़ी को इन समस्याओं का हल करना था।

१

ह्विग अल्पतन्त्र की स्थापना : जैकोबाइट[१] विद्रोह

जार्ज प्रथम १७१४ ई० : जार्ज द्वितीय १७२७ ई०

१. नये शासन की असुरक्षा और १७१५ ई० का जेकोबाइट विद्रोह

यद्यपि रानी एन की मृत्यु अकस्मात् हो जाने के कारण, स्टीवर्टवंशी राजाओं की पुनः स्थापना के लिए बोलिंगब्रोक की योजनाएँ सुगमता से विफल कर दी गयीं थीं, तथापि वह सदैव दृढ़तापूर्वक यह कहता था कि यदि उसे तैयारी के लिए चार दिन के स्थान पर केवल छः सप्ताह मिल जाते तो वह सफल हो जाता। यह असम्भव नहीं कि वह ठीक था। सम्भवतः इंग्लैण्ड की जनता का बहुमत जर्मनी के जार्ज प्रथम की अपेक्षा जेम्स तृतीय को राजा कहना अधिक पसन्द करता; जब नया राजा इंग्लैण्ड आया तो इंग्लिश भाषा के और इंग्लिश रीति-रिवाजों के उसके घोर अज्ञान ने तथा लोकप्रियता प्राप्त करने की कलाओं के उसमें न होने से उस नाराजगी को बढ़ा दिया, जो उसके प्रति प्रायः विद्यमान थी। जार्ज प्रथम के लिए वैयक्तिक भक्ति की किसी भावना को कोई भी ब्रिटिश व्यक्ति अनुभव नहीं करता था और न ही अनुभव कर सकता था। दूसरी ओर इंग्लैण्ड के देहाती भद्रजनों की बड़ी संख्या निर्वासित राजघराने के प्रति भावुकतापूर्ण राजभक्ति रखती थी और लन्दन के जन समुदाय में भी ऐसी भावना थी। यदि प्रिटेण्डर (जेम्स

---

१. जेम्स द्वितीय के अनुयायी तथा ब्रिटिश राजगद्दी का दावेदार होने के कारण प्रिटेण्डर (Pretender) कहलाने वाले उसके पुत्र के समर्थक जैकोबाइट कहलाते थे क्योंकि जेम्स को लैटिन में जैकब कहते हैं।

द्वितीय का पुत्र) एक प्रोटेस्टेण्ट होता तो यह भावना अधिक प्रबल और अधिक भयंकर होती। किन्तु किसी भी दशा में इस भावना की व्यापक सत्ता नये राजवंश के लिए निर्बलता का एक गम्भीर स्रोत थी। जार्ज प्रथम यह अच्छी तरह से जानता था कि वह केवल ह्विगों से ही पूरे दिल से समर्थन की आशा कर सकता था। अत: आरम्भ से ही उसने अपने को पूर्ण रूप से उन लोगों के हाथों में छोड़ दिया; उसकी राजगद्दी की रक्षा करने वाले प्राचीर-'धनाढ्य व्यक्तियों' से समर्थन प्राप्त करने वाले महान् ह्विग कुलीन व्यक्तियों की सम्पत्ति, प्रादेशिक प्रभाव और पौरुष थे। किन्तु ह्विगों ने वैयक्तिक निष्ठा की किसी भावना से नये शासक घराने का समर्थन नहीं किया। वे इसका समर्थन इसलिए कर रहे थे कि इसकी निर्बलता और विदेशीपन ने उन्हें इस बात का अवसर दिया था कि वे शासनविषयक ह्विग सिद्धान्तों को क्रियात्मक रूप प्रदान करें; उन्होंने अपने अवसर का प्रयोग ऐसी अविचल स्थिरता के साथ किया कि उन्होंने आधी शताब्दी तक राजतन्त्र को अपनी अल्पतन्त्रीय शक्ति के कोरे साधन के रूप में परिणत कर दिया। जार्ज प्रथम के पूर्ण रूप से ह्विगों के हाथ में होने के तथ्य ने स्वाभाविक रूप से टोरियों के उस असन्तोष को बढ़ा दिया जो उस अवस्था में अतीव भयंकर हो सकता था, यदि निर्वासित राजा यह जानता कि इसका प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है?

आयरलैण्ड में जनता का एक बड़ा बहुमत निस्सन्देह स्टीवर्ट राजाओं की पुन: स्थापना का स्वागत करता, किन्तु क्रान्ति के बाद स्थापित की गयी अत्याचार की पद्धति से बहुमत को प्रभावशाली रीति से दबा दिया गया था। देश का शासन करने वाली तथा केवल अपने पास शस्त्र और शासन रखने वाली अल्पसंख्या नये वंश की प्रबलतम मित्र थी। फिर भी आयरलैण्ड ने सदैव स्टीवर्ट-वंशियों की पुन: स्थापना करने के लिए किये गये किसी भी प्रयास के लिए रंगरूट प्रस्तुत किये, भले ही यह प्रयास कितना ही निराशापूर्ण क्यों न हो, यद्यपि आयरलैण्ड को इनमें से किसी भी प्रयत्न का केन्द्र बनाने के लिए कभी प्रयास नहीं किया गया।

अन्त में, स्काटलैण्ड में जैकोबाइट अत्यधिक प्रबल थे। उन्हें एकीकरण (Union) के विरुद्ध उस नाराजगी से बल मिला, जो इस समय तक समाप्त नहीं हुई थी। १७१३ ई० में यूनियन को रद्द करने के लिए एक गम्भीर माँग की जा रही थी। निम्न प्रदेशों में प्रेसबिटेरियन पुरोहितों का बड़ा भाग स्टीवर्ट वंश वालों के वस्तुत: प्रतिकूल था; जैसा कि स्वाभाविक था, उनके अधिकांश अनुयायी इस बात में उनके साथ थे। किन्तु प्रेसबिटेरियन लोगो में भी उग्रवादियों का एक छोटा हिस्सा इसलिए क्रुद्ध था कि कठोर प्रेसबिटेरियन पद्धति को सार्वभौम रीति से लागू नही किया गया था, अत: वे जेम्स द्वितीय के पुत्र तथा गद्दी का दावा करने वाले प्रिटेण्डर से मिलने के लिए तैयार थे। १७१५ ई० में उन्होंने ऐसा करने का प्रयत्न किया। निम्न भूमि के प्रदेशों में कुलीन सरदारों का एक अतीव बड़ा भाग और छोटे जमींदार जैकोबाइट उद्देश्य के साथ प्रबल सहानुभूति रखते थे। हाइलैण्ड्स में अनेक जनजातियाँ अब भी अपना पृथक् वन्य जीवन बिताती थीं और सदैव युद्ध के लिए तैयार रहती थीं, यहाँ इनमें से अनेक जातियाँ माण्ट्रोस के तथा क्लेवरहाउस के साहसिक कार्यों की पुनरावृत्ति करने

के लिए तैयार थीं। वे केवल परम्परागत निष्ठा की भावना से ही प्रभावित नहीं थीं, यद्यपि यह भावना उनमें प्रबल थी। निम्न प्रदेशों पर आक्रमण करना सदैव अपना आकर्षण रखता था, केवल यही तथ्य उनमें से बहुत से लोगों को भड़काने के लिए पर्याप्त था कि घृणित कैम्पबेल जनजाति और इसका मुखिया आर्गिल का ड्यूक ह्विग पक्ष के साथ मिले हुए थे। मुख्य रूप से कैम्पबेल लोगों की विरोधी जनजातियाँ जैकोबाइट उपद्रवों में अधिकतम तत्परता के साथ सम्मिलित हुईं।

यह आशा की जाती थी कि निर्वासित राजा जार्ज प्रथम के राज्याभिषेक के अवसर का लाभ अपनी राजगद्दी पाने के लिए एक प्रहार करके उठायेगा। ह्विग पूर्ण रूप से यह जानते थे कि ऐसा प्रयत्न किया जाने वाला है, क्योंकि पेरिस में राजदूत के रूप में भेजे गये लार्ड स्टेयर द्वारा बनाये रखे जाने वाले एक गुप्त संगठन द्वारा ह्विग लोगों की सेवा उत्तम रीति से की जा रही थी और प्रिटेण्डर की तथा उसके मित्रों की प्रत्येक चाल उन्हें बड़ी जल्दी मालूम हो जाती थी। जैकोबाइट योजनाओं में से एक योजना इंग्लैण्ड के पश्चिम में एक विद्रोह करवाने की थी। इसका संगठन और नेतृत्व ऑर्मण्ड के ड्यूक द्वारा किया जाना था। उसका इरादा ब्रिस्टल तथा अन्य बन्दरगाहों पर अधिकार करना और वेल्स में तथा पश्चिमी इंग्लैण्ड में जैकोबाइट भद्र वर्ग को उभाड़ना था, यह आशा की जाती थी कि लुई १४वाँ इसे फ्रेंच सेनाओं की सहायता प्रदान करेगा। किन्तु ये योजनाएँ निष्फल हुईं। पूरी तरह से चेतावनी मिल जाने पर ह्विग नेताओं ने प्रधान स्थानों पर सेनाएँ स्थापित कर दी। ऑर्मण्ड को गिरफ्तारी से बचने के लिए इंग्लैण्ड से भागना पड़ा। नौसेना ने बड़ी मात्रा में ब्रिटिश समुद्र-तट पर किसी भी सेना के उतरने को असम्भव बना दिया। जब लुई १४वें का देहान्त १५१५ ई० में हुआ, तो यह उनके पक्ष पर एक गम्भीर प्रहार था, क्योंकि शिशु लुई १५वें के नाम पर फ्रांस का शासन करने वाला राजा का संरक्षक ऑर्लियन्स इस बात पर तुला हुआ था कि वह ब्रिटेन के साथ मैत्री बनाये रखे। जब स्काटलैण्ड में इसके लिए दुर्भाग्यपूर्ण प्रयास वास्तव में किया गया, उस समय राजसंरक्षक ने न केवल किसी प्रकार की कोई सहायता न दी, अपितु ब्रिटिश राजदूत की प्रार्थना पर उसने उस सामान को भी अधिकार में कर लिया, जिसे जैकोबाइट लोगों ने जहाज पर रख दिया था। सबसे बुरी बात यह थी कि प्रिटेण्डर स्वयमेव ज़िद्दी और अव्यावहारिक था। उसे यह प्रेरणा नहीं दी जा सकती थी कि यह बात अनिवार्य है कि वह उस कैथोलिक क्रान्तिविषयक आशंकाओं को दूर करे, जो दोनों देशों—इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड में उसको सफल बनाने में सबसे बड़ी बाधा बनी हुई थी। जब बोलिंगब्रोक ने प्रोटेस्टेण्ट मत की सुरक्षा का वचन देने वाली घोषणाओं का प्रारूप तैयार किया तो जेम्स ने उन्हें अपने हाथों से बदल दिया। उसने वास्तव में पोप से तथा अन्य व्यक्तियों से इस स्पष्ट आधार पर सहायता के लिए अपील की थी कि उसकी पुनः स्थापना का अर्थ कैथोलिक मत की विजय होगा।

अतः एक सफल जैकोबाइट विद्रोह के मार्ग में बाधाएँ डालने के लिए प्रत्येक वस्तु मिल गयी, धन के रूप में तथा शस्त्रों तक में कोई विदेशी सहायता नही प्राप्त हुई। सफलता के लिए यह आवश्यक था कि इंग्लैण्ड में विद्रोह हो, किन्तु इसे शुरू होने से पहले ही कुचल

दिया गया था। प्रोटेस्टेण्ट जैकोबाइट बेचैन और भयभीत थे। बोलिंगब्रोक यह अच्छी तरह कह सकता था कि पूर्ण विफलता निश्चित थी और जब १७१५ ई० की पतझड़ में एक विद्रोह आरम्भ किया गया तो इसे अतीव अक्षमतापूर्ण ढंग से चलाया गया। स्काटलैण्ड के हाइलैंड्स में ऐसे प्रधान प्रयास का नेता एक ऐसा स्काटिश कुलीन सरदार मार (Mar) का अर्ल था, जिसके चरित्र की अस्थिरता उसको जनता द्वारा दिये **बॉबिंग** अर्थात् इधर-उधर जाने वाले जान के उपनाम में प्रकट होती थी। वह ह्विग रह चुका था, उसने पहले जार्ज प्रथम का स्वागत किया था और उसने उसका पक्ष केवल इसलिए छोड़ा था, क्योंकि उसे कोई पद न मिलने से निराशा हुई थी। उसमें कोई पौरुष, साहस अथवा सैनिक योग्यता न थी। फिर भी, उसके विद्रोह ने कुछ समय के लिए गम्भीर भय उत्पन्न कर दिया, क्योंकि यूट्रेक्ट की सन्धि के बाद सेना इतनी अधिक कम कर दी गयी थी कि आरम्भ में, उसके साथ जोश से लड़ने के लिए कोई पर्याप्त सेना नहीं थी। उपलब्ध हो सकने वाली सेनाओं की जरूरत दक्षिण में ऑर्मण्ड द्वारा सेना उतारे जाने के खतरे की रक्षा करने के लिए आवश्यक थी।

मार ने सितम्बर १७१५ ई० में एबरडीन शायर के अपने जिले में विद्रोह के झण्डे को उठाया। अनेक जनजातियाँ फौरन उसके साथ मिल गयीं, अक्टूबर तक उसने पर्थ पर अधिकार कर लिया और समूचे केन्द्रीय हाईलैण्ड्स पर नियन्त्रण स्थापित किया। केवल आर्गिल के ड्यूक ने स्टरलिंग में एक अतीव छोटी सेना के साथ उसके दक्षिण की ओर जाने के मार्ग को रोक दिया। मार के जीतने की एक आशा तेजी से प्रहार करने में थी, फिर भी वह निष्क्रिय पड़ा रहा और उसने कुछ नहीं किया। इस बीच में नार्थम्बरलैण्ड में कुछ जैकोबाइट इस कौण्टी के पार्लियामेण्ट के सदस्य फोर्स्टर के नेतृत्व मे और लार्ड डरवैण्टवाटर की अध्यक्षता में उठ खड़े हुए और पश्चिमी स्काटिश सीमान्त देश के लार्डों और भद्रजनों का एक समूह कुछ सौ आदमियों के साथ विद्रोहियों के साथ मिल गया। मार की सेना के एक छोटे दस्ते से शक्ति पाकर इस मुट्ठी भर सेना ने लंकाशायर में घुसने का प्रयत्न किया, इसके बारे में यह समझा जाता था कि यहाँ जैकोबाइट प्रबल हैं। किन्तु वे चारों ओर से घेर लिये गये। १३ नवम्बर को प्रेस्टन में आत्मसमर्पण करने के लिए उन्हें बाधित किया गया। इसी दिन अन्त में मार ने डनब्लेन के निकट शैरिफम्यूर में आर्गिल को लड़ाई करने की चुनौती देने का साहस किया, उसे यह आशा थी कि इससे वह दक्षिण की ओर जाने का रास्ता बलपूर्वक निकाल सकेगा। यह एक तितर-बितर होकर लड़ी जाने वाली अनिर्णयात्मक लड़ाई थी। यद्यपि जैकोबाइट लोगों की संख्या अपने विरोधियों से बहुत अधिक थीं, तथापि लड़ाई के बाद मार ने यह आवश्यक समझा कि वह पुनः पर्थ लौट आये, इस वापसी के साथ सफलता की सब आशा लुप्त हो गयी। दिसम्बर में प्रिटेण्डर स्काटलैण्ड में उतरा, किन्तु वह केवल यही देखने के लिए ठीक समय पर पहुँचा कि मार की उत्साहहीन सेना उत्तर की ओर लौट रही थी। उसकी उपस्थिति और व्यवहार ने उसके अनुयायियों को ठण्डा और निराश कर दिया। एक महीना बीतने से पहले ही उसने अपने अनुयायियों को छोड़ दिया और वह फ्रांस भाग गया। वह अधिक देर तक वहाँ रह कर अपने पक्ष को सहायता नहीं पहुँचा सकता था। किन्तु उसके पलायन ने उसकी बदनामी

को पूरा कर दिया। वह अपने पिता के समान एक संकीर्ण मन वाला और जिद्दी व्यक्ति था, वह अपने मित्रों के प्रति लम्पट और विश्वासघाती भी था, ऐसा होने के कारण प्रिटेण्डर (जेम्स द्वितीय के पुत्र) एक हारते हुए पक्ष के लिए अथवा जीतने वाले पक्ष के लिए भी एक निकम्मा नेता था। मार की सेना के शेष अंश तितर-बितर हो गये और इस विद्रोह का अन्त बदनामी के साथ हुआ। कुल मिलाकर, विद्रोहियों को उस समय के मानदण्डों के अनुसार हल्का दण्ड दिया गया। कई सौ व्यक्तियों को उपनिवेशों में निर्वासित किया गया। अधिकांश नेता भाग गये, किन्तु सात कुलीन सरदारों पर महाभियोग चलाया गया और उन्हें दोषी पाया गया। इनमें से चार लार्डों के प्राणदण्ड को क्षमा किया गया और दो लार्डों—डरवेण्टवाटर और केन्मोर—का वध करा दिया गया। सातवें लार्ड निथ्सडेल ने अपनी पत्नी की सहायता से स्त्री के वेश वंश में एक रोमाञ्चक ढंग से पलायन किया।

१७१५ ई० की अपयशपूर्ण विफलता ने जैकोबाइट लोगों की आशाओं को समाप्त नहीं किया। १७१८-१९ ई० में वे स्पेन और स्वीडन से बड़े पैमाने पर सहायता की आशा रखते थे, किन्तु स्वीडन के जिस योद्धा राजा चार्ल्स द्वादश पर उनकी आशाएँ टिकी हुई थी, वह इस नाजुक घड़ी में मर गया (१७१८ ई०)। ब्रिटेन में सेना उतारने के लिए भेजा गया एक स्पेनिश समुद्री बेड़ा इससे पहले ही एक तूफान द्वारा तितर-बितर कर दिया गया था कि यह देखा जा सके कि क्या नौसेना इस बेड़े को गुजरने देगी। अन्त में मुट्ठी भर स्पेनिश सैनिकों के साथ केवल दो रणपोत पश्चिमी हाइलैण्ड के वन्य समुद्री तट पर लाच डुइच नामक नदी के मुहाने पर पहुँचे (१७१९ ई०)। कई सौ हाइलैण्डवासी लोगों ने इनकी सहायता करने के लिए विद्रोह किया, किन्तु उन्हें ग्लेन-शियेल की लड़ाई में तितर-बितर कर दिया गया। स्पेनिश लोगों को आत्मसमर्पण करने के लिए बाधित किया गया और जैकोबाइट विफलताओं की सूची में एक अन्य विफलता जोड़ दी गयी। फिर भी एक अन्य विफलता १७२२ ई० में उस समय हुई, जब राजा को और प्रिन्स आफ वेल्स को पकड़ने के एक विस्तृत षड्यन्त्र का लन्दन में पता लग गया और रोचेस्टर के धार्मिक मामलों में बड़े कट्टर बिशप एट्टरबरी को इस षड्यन्त्र में भाग लेने के लिए निर्वासित किया गया। एक अन्य षड्यन्त्र १७२७ ई० में तब किया गया, जब जार्ज प्रथम की मृत्यु हुई; किन्तु यह भी विफल हुआ।

इस प्रकार सभी जैकोबाइट षड्यन्त्र बारी-बारी से विफल हुए। इस बीच में अभागे प्रिटेण्डर को फ्रांस से निकाला गया, उसने पहले आविन्योन में और इसके बाद रोम में शरण ग्रहण की। यहाँ वह पोप द्वारा दी गयी उदारतापूर्ण वृत्ति पर जीवन व्यतीत करता रहा। उसका जीवन इतना बदनामी से भरा हुआ था कि इसने उसकी पत्नी-गर्वीली और सुन्दरी पोलिश राजकन्या क्लेमेण्टीन सोबियस्की को एक भिक्षुणी संघ में शरण लेने के लिए बाधित किया। इंग्लैण्ड में उसके भावुक अनुयायी भी उससे घृणा करने लगे। अब ब्रिटेन में ह्विग शासन को इस ओर से तब तक कोई खतरा नही था, जब तक स्टीवर्ट वंश का कोई अधिक योग्य प्रतिनिधि प्रकट न हो, ऐसा होने पर भी शक्तिशाली समर्थन की एकमात्र आशा स्काटिश हाइलैण्ड्स के साहसी रोमाञ्चक जनजातीय व्यक्तियों से ही थी।

दिया गया था। प्रोटेस्टेण्ट जैकोबाइट बेचैन और भयभीत थे। बोलिंगब्रोक यह अच्छी तरह कह सकता था कि पूर्ण विफलता निश्चित थी और जब १७१५ ई० की पतझड़ में एक विद्रोह आरम्भ किया गया तो इसे अतीव अक्षमतापूर्ण ढंग से चलाया गया। स्काटलैण्ड के हाइलैंड्स में ऐसे प्रधान प्रयास का नेता एक ऐसा स्काटिश कुलीन सरदार मार (Mar) का अर्ल था, जिसके चरित्र की अस्थिरता उसको जनता द्वारा दिये **बाबिंग** अर्थात् इधर-उधर जाने वाले जान के उपनाम में प्रकट होती थी। वह ह्विग रह चुका था, उसने पहले जार्ज प्रथम का स्वागत किया था और उसने उसका पक्ष केवल इसलिए छोड़ा था, क्योंकि उसे कोई पद न मिलने से निराशा हुई थी। उसमें कोई पौरुष, साहस अथवा सैनिक योग्यता न थी। फिर भी, उसके विद्रोह ने कुछ समय के लिए गम्भीर भय उत्पन्न कर दिया, क्योंकि यूट्रेक्ट की सन्धि के बाद सेना इतनी अधिक कम कर दी गयी थी कि आरम्भ में, उसके साथ जोश से लड़ने के लिए कोई पर्याप्त सेना नहीं थी। उपलब्ध हो सकने वाली सेनाओं की जरूरत दक्षिण में ऑर्मण्ड द्वारा सेना उतारे जाने के खतरे की रक्षा करने के लिए आवश्यक थी।

मार ने सितम्बर १७१५ ई० में एबरडीन शायर के अपने जिले में विद्रोह के झण्डे को उठाया। अनेक जनजातियाँ फौरन उसके साथ मिल गयीं, अक्टूबर तक उसने पर्थ पर अधिकार कर लिया और समूचे केन्द्रीय हाईलैण्ड्स पर नियन्त्रण स्थापित किया। केवल आर्गिल के ड्यूक ने स्टरलिंग में एक अतीव छोटी सेना के साथ उसके दक्षिण की ओर जाने के मार्ग को रोक दिया। मार के जीतने की एक आशा तेजी से प्रहार करने में थी, फिर भी वह निष्क्रिय पड़ा रहा और उसने कुछ नहीं किया। इस बीच में नार्थम्बरलैण्ड में कुछ जैकोबाइट इस कौण्टी के पार्लियामेण्ट के सदस्य फोर्स्टर के नेतृत्व मे और लार्ड डरवैण्टवाटर की अध्यक्षता में उठ खड़े हुए और पश्चिमी स्काटिश सीमान्त देश के लार्डों और भद्रजनों का एक समूह कुछ सौ आदमियों के साथ विद्रोहियों के साथ मिल गया। मार की सेना के एक छोटे दस्ते से शक्ति पाकर इस मुट्ठी भर सेना ने लंकाशायर में घुसने का प्रयत्न किया, इसके बारे में यह समझा जाता था कि यहाँ जैकोबाइट प्रबल हैं। किन्तु वे चारों ओर से घेर लिये गये। १३ नवम्बर को प्रेस्टन में आत्मसमर्पण करने के लिए उन्हें बाधित किया गया। इसी दिन अन्त में मार ने डनब्लेन के निकट शैरिफम्यूर में आर्गिल को लड़ाई करने की चुनौती देने का साहस किया, उसे यह आशा थी कि इससे वह दक्षिण की ओर जाने का रास्ता बलपूर्वक निकाल सकेगा। यह एक तितर-बितर होकर लड़ी जाने वाली अनिर्णयात्मक लड़ाई थी। यद्यपि जैकोबाइट लोगों की संख्या अपने विरोधियों से बहुत अधिक थीं, तथापि लड़ाई के बाद मार ने यह आवश्यक समझा कि वह पुनः पर्थ लौट आये, इस वापसी के साथ सफलता की सब आशा लुप्त हो गयी। दिसम्बर में प्रिटेण्डर स्काटलैण्ड में उतरा, किन्तु वह केवल यही देखने के लिए ठीक समय पर पहुँचा कि मार की उत्साहहीन सेना उत्तर की ओर लौट रही थी। उसकी उपस्थिति और व्यवहार ने उसके अनुयायियों को ठण्डा और निराश कर दिया। एक महीना बीतने से पहले ही उसने अपने अनुयायियों को छोड़ दिया और वह फ्रांस भाग गया। वह अधिक देर तक वहाँ रह कर अपने पक्ष को सहायता नही पहुँचा सकता था। किन्तु उसके पलायन ने उसकी बदनामी

को पूरा कर दिया । वह अपने पिता के समान एक संकीर्ण मन वाला और ज़िद्दी व्यक्ति था, वह अपने मित्रों के प्रति लम्पट और विश्वासघाती भी था, ऐसा होने के कारण प्रिटेण्डर (जेम्स द्वितीय के पुत्र) एक हारते हुए पक्ष के लिए अथवा जीतने वाले पक्ष के लिए भी एक निकम्मा नेता था। मार की सेना के शेष अंश तितर-बितर हो गये और इस विद्रोह का अन्त बदनामी के साथ हुआ। कुल मिलाकर, विद्रोहियों को उस समय के मानदण्डों के अनुसार हल्का दण्ड दिया गया। कई सौ व्यक्तियों को उपनिवेशों में निर्वासित किया गया। अधिकांश नेता भाग गये, किन्तु सात कुलीन सरदारों पर महाभियोग चलाया गया और उन्हें दोषी पाया गया। इनमें से चार लार्डों के प्राणदण्ड को क्षमा किया गया और दो लार्डों—डरवेण्टवाटर और केन्मोर—का वध करा दिया गया। सातवें लार्ड निथ्सडेल ने अपनी पत्नी की सहायता से स्त्री के वेश वंश में एक रोमाञ्चक ढंग से पलायन किया।

१७१५ ई० की अपयशपूर्ण विफलता ने जैकोबाइट लोगों की आशाओं को समाप्त नहीं किया। १७१८-१९ ई० में वे स्पेन और स्वीडन से बड़े पैमाने पर सहायता की आशा रखते थे, किन्तु स्वीडन के जिस योद्धा राजा चार्ल्स द्वादश पर उनकी आशाएँ टिकी हुई थी, वह इस नाजुक घड़ी में मर गया (१७१८ ई०)। ब्रिटेन में सेना उतारने के लिए भेजा गया एक स्पेनिश समुद्री बेड़ा इससे पहले ही एक तूफान द्वारा तितर-बितर कर दिया गया था कि यह देखा जा सके कि क्या नौसेना इस बेड़े को गुजरने देगी। अन्त में मुट्ठी भर स्पेनिश सैनिकों के साथ केवल दो रणपोत पश्चिमी हाइलैण्ड के वन्य समुद्री तट पर लाच दुइच नामक नदी के मुहाने पर पहुँचे (१७१९ ई०)। कई सौ हाइलैण्डवासी लोगों ने इनकी सहायता करने के लिए विद्रोह किया, किन्तु उन्हें ग्लेन-शियेल की लड़ाई में तितर-बितर कर दिया गया। स्पेनिश लोगों को आत्मसमर्पण करने के लिए बाधित किया गया और जैकोबाइट विफलताओं की सूची में एक अन्य विफलता जोड़ दी गयी। फिर भी एक अन्य विफलता १७२२ ई० में उस समय हुई, जब राजा को और प्रिन्स आफ वेल्स को पकड़ने के एक विस्तृत षड्यन्त्र का लन्दन में पता लग गया और रोचेस्टर के धार्मिक मामलों में बड़े कट्टर बिशप एट्टरबरी को इस षड्यन्त्र में भाग लेने के लिए निर्वासित किया गया। एक अन्य षड्यन्त्र १७२७ ई० में तब किया गया, जब जार्ज प्रथम की मृत्यु हुई; किन्तु यह भी विफल हुआ।

इस प्रकार सभी जैकोबाइट षड़यन्त्र बारी-बारी से विफल हुए। इस बीच में अभागे प्रिटेण्डर को फ्रांस से निकाला गया, उसने पहले आविन्योन में और इसके बाद रोम में शरण ग्रहण की। यहाँ वह पोप द्वारा दी गयी उदारतापूर्ण वृत्ति पर जीवन व्यतीत करता रहा। उसका जीवन इतना बदनामी से भरा हुआ था कि इसने उसकी पत्नी-गर्वीली और सुन्दरी पोलिश राजकन्या क्लेमेण्टीन सोबियस्की को एक भिक्षुणी संघ में शरण लेने के लिए बाधित किया। इंग्लैण्ड में उसके भावुक अनुयायी भी उससे घृणा करने लगे। अब ब्रिटेन में ह्विग शासन को इस ओर से तब तक कोई खतरा नहीं था, जब तक स्टीवर्ट वंश का कोई अधिक योग्य प्रतिनिधि प्रकट न हो, ऐसा होने पर भी शक्तिशाली समर्थन की एकमात्र आशा स्काटिश हाइलैण्ड्स के साहसी रोमाञ्चक जनजातीय व्यक्तियों से ही थी।

इस बात का ज्ञान होने के कारण ह्विग सरकार ने १७२५ ई० के बाद के वर्षों में जंगली हाइलैण्ड्स को वश में लाने का प्रयत्न करने की ओर बहुत ध्यान दिया। उन्होंने जनजातियों को नियन्त्रित करने के लिए सामरिक महत्व के स्थानों पर-विशेषतः फोर्ट विलियम और फोर्ट आगस्टस के किलों का निर्माण किया। उन्होंने इनमें इंग्लिश सेनाओं को तथा अधिक राज-भक्त हाइलैण्डरों में से भर्ती की हुई रेजिमेण्टों को रखा। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होंने जनरल वेड को बंजर भूमियों में से सड़कें निकालने के लिए भेजा, ताकि इन प्रदेशों को सेना की पहुँच के योग्य बनाया जा सके। यद्यपि, समय यह प्रदर्शित करने वाला था कि ये कार्य १७४५ ई० के एक अगले और अधिक भीषण विद्रोह को रोकने में समर्थ नहीं हो सके, तथापि ये ब्रिटिश टापुओं के एकमात्र ऐसे प्रदेश में कानून और व्यवस्था के प्रवेश का आरम्भ था, जिस प्रदेश में जनजातीय समाज के आदिम रीति-रिवाज और प्राचीन निष्ठाएँ अब भी बची हुई थीं।

२. ह्विग स्वल्पतन्त्र का संगठन

१७१५ ई० में जब एक बार पहले संकट पर विजय पा ली गयी तो यह अच्छी तरह कहा जा सकता है कि जैकोबाइट षड्यन्त्रों के निरन्तर भयों ने ह्विगों के उत्कर्ष को कमजोर बनाने के स्थान पर अधिक दृढ़ बनाया, क्योंकि इससे सत्ता पर उनका एकाधिकार न्यायोचित प्रतीत होने लगा और इन षड्यन्त्रों ने टोरियों को बदनाम कर दिया। जब तक जैकोबाइट सिद्धान्त मृत न हो जायें और जब तक इन्हें गाड़ नहीं दिया जाय, तब तक टोरीवाद के पुनः एक राजनीतिक मत के रूप में ब्रिटिश द्वीपसमूह में सफल होने का गम्भीर अवसर नहीं था और आंशिक रूप से जैकोबाइट लोगों के कारण ही ऐसा हुआ कि ह्विग अल्पतन्त्र का चिरकाल तक प्राधान्य बना रहा। इस प्रकार १७१५ ई० के विद्रोह ने ह्विगों को १७१६ ई० में **सप्त-वर्षीय कानून** पास करने का बहाना दे दिया। इसने पार्लियामेण्ट की अवधि को तीन वर्ष से बढ़ा कर सात वर्ष कर दिया, इसने प्रासंगिक रूप से अत्यधिक ह्विग बहुमत वाली उस पार्लियामेण्ट के जीवन को भी बढ़ा दिया, जो जार्ज प्रथम के पहले वर्ष में चुनी गयी थी। प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि एक पार्लियामेण्ट के लिए स्वयमेव अपनी अवधि बढ़ाना असंवैधानिक था। इस पूर्वोदाहरण का १९१४-१८ ई० के जर्मन युद्ध तक कभी अनुसरण नहीं किया गया। इस युद्ध में, उस समय की पार्लियामेण्ट ने राष्ट्रीय आवश्यकता के आधार पर अपनी अवधि को बार-बार बढ़ाया था। यह युक्ति समान रूप से १७१६ ई० में दी जा सकती थी। इस मध्यान्तर ने ह्विगों को अपनी शक्ति संगठित करने का अवसर दे दिया। उन्होंने इस अवसर का पूरा चातुर्यपूर्ण उपयोग किया। वे सरकार के सभी अंगों को प्रभाव-पूर्ण रीति से अपने नियन्त्रण में ले आये और इस प्रकार उन्होंने उस व्यवस्था को स्थापित किया जिसे डिजरायली ने "वेनेशियन अल्पतन्त्र" कहा था।

पहली बात यह थी कि उन्होंने राजमुकुट के लगभग सभी अधिकारों का नियन्त्रण प्राप्त कर लिया। ये अधिकार अब भी अतीव विशाल थे। क्रियात्मक रूप से विदेशी मामलों के अतिरिक्त नीति के संचालन में राजा जार्ज प्रथम ने महत्त्वपूर्ण भाग लेना बन्द कर दिया,

विदेशी मामलों में हनोवर का इलेक्टर होने के नाते उसकी स्थिति का एक प्रभाव था। वह अंग्रेजी भाषा का एक शब्द नहीं बोल सकता था, अतः उसने कैबिनेट की बैठकों में उपस्थित होना बन्द कर दिया और इस प्रकार ऐसा पूर्वोदाहरण स्थापित किया, जिसे किसी बाद के राजा ने (जार्ज तृतीय के राज्यकाल के एक दो सन्देहास्पद अवसरों को छोड़ कर) कभी भंग करने का साहस नहीं किया। कैबिनेट के सभापति के रूप में राजा का स्थान एक मन्त्री ने ले लिया, जो वस्तुतः प्रधानमन्त्री और शासन का उत्तरदायी अध्यक्ष बन गया। राजा ने पार्लियामेण्ट के दोनों सदनों द्वारा पास किये गये किसी कानून को वीटो करने का साहस कभी नहीं किया, इस प्रकार विलियम तृतीय द्वारा स्वतन्त्रता पूर्वक तथा एन द्वारा कभी भी प्रयुक्त किये जाने वाले राजकीय वीटो (Veto) या निषेधाधिकार का प्रयोग होना वन्द हो गया। यह ब्रिटिश संविधान में एक स्थायी परिवर्तन को सूचित करता था।

कड़े कानून के अनुसार सारे सार्वजनिक पद या सरकारी नौकरियाँ राजा द्वारा मनोनीत किये जाने पर भरे जाते थे। अब यह विशाल अनुग्रह प्रदान करना मन्त्रियों के हाथ में आ गया और इसने उनकी शक्ति के प्रमुख आधार का निर्माण किया। इसके बाद से न केवल प्रशासनात्मक कार्य सम्बन्धी पद, अपितु सक्रिय सेवाशून्य वैतनिक पद और पेन्शनों के पद मन्त्रियों द्वारा दिये जाने लगे। वे सभी पद पक्के ह्विग लोगों को दिये जाते थे, क्योंकि इनमें से अनेक पद पार्लियामेण्ट के सदस्य भी रख सकते थे, अतः इससे प्रत्येक मन्त्रीमण्डल को विश्वास योग्य वोटों की एक बड़ी संख्या निश्चित रूप से प्राप्त हो गयी। प्रायः इनकी संख्या १२० के लगभग अथवा कामन्स सभा के चतुर्थांश के आसपास होती थी। पुनः चुंगी के विभाग में, निर्माण विभाग में, जलसेना विभाग की गोदियों में और इसी प्रकार अन्य विभागों में सभी छोटे पद अन्त में उनकी इच्छा पर थे। कुछ निर्वाचन क्षेत्रों में, इन पदों को रखने वाले व्यक्ति निर्वाचन मण्डल के इतने बड़े भाग का निर्माण करते थे कि उनके लिए केवल इस सरल विधि से सदैव यह सम्भव था कि वे सरकार द्वारा मनोनीत व्यक्ति के चुनाव को निश्चित बनायें यह सरल विधि इस बात को स्पष्ट करने वाली थी कि जो व्यक्ति सरकार के उम्मीदवारों के लिए वोट नहीं देंगे, वे अपनी नौकरियाँ खो देंगे। ये बरो-ट्रेजरी बरो तथा एडमिरैल्टी बरो के नाम से प्रसिद्ध थे।

किन्तु ताज द्वारा सार्वजनिक पदों पर नियुक्ति करने के अधिकार के उपयोग के कुछ और भी अधिक महत्त्वपूर्ण पहलू थे। नौसेना और स्थल-सेना में सभी अधिकारी ताज द्वारा नियत किये जाते थे। सरकार ऐसा करते हुए यह निश्चित कर लेती थी कि वे अच्छे ह्विग हों, और हनोवर वंश के प्रति राजभक्त हों। स्थापित चर्च के सभी बिशप और डीन तथा छोटे पदों के अनेक पदाधिकारी ताज द्वारा नियुक्त किये जाते थे। इससे ह्विग इस बात को सुनिश्चित बनाने में समर्थ हुए कि जो चर्च अब तक टोरियों की ढाल बना हुआ था, उसे शनैः-शनैः ह्विगों के प्रभाव में लाया जाय। आरम्भ में इसके परिणामस्वरूप पादरियों के उच्च वर्गों के तथा पेरिशवासी लघु पादरियों के बहुमत के बीच में एक तीव्र मतभेद उत्पन्न हुआ, किन्तु इस तथ्य ने शनैः-शनैः पादरियों के अधिकांश समूह को प्रभावित किया कि कट्टर तथा बलात् अपनी ओर आकृष्ट करने वाली टोरी विचारधारा को रखने वाले व्यक्तियों की

समूची ऊँची पदोन्नति यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य थी। इस प्रक्रिया को धार्मिक उत्साह की उस क्षीणता से तथा बुद्धिवादी सम्मतियों के उस प्रसार से भी सहायता मिली, जो न केवल इंग्लैण्ड में बल्कि सारे यूरोप में, इस युग की विशेषता थी। कानून जैसे अत्यधिक महत्त्वपूर्ण पेशे में भी यही शक्तियाँ काम कर रही थीं। प्रत्येक तरुण वकील यह जानता था कि यदि वह पक्का ह्विग नही होगा तो न्यायालय में अथवा किसी अन्य ऊँचे कानूनी पद पर उन्नति के उसके अवसर बहुत कम होगे। इस प्रकार राजा द्वारा सार्वजनिक पदों पर की जाने वाली नियुक्तियों का प्रयोग वह प्रमुख आधार था जिस पर ह्विग अल्पतन्त्र टिका हुआ था, इन पदों का वितरण मन्त्रियों की चिन्ता का प्रधान विषय था। बाद में जब जार्ज तृतीय ने इस अल्पतन्त्र को उलटने के कार्य में अपने को लगाया तो उसके आक्रमण की मुख्य विधि राजा के अनुग्रह को अथवा सार्वजनिक पदों पर नियुक्तियों के अधिकार को पुनः अपने हाथ में ले लेना था।

राजा की शक्तियों के प्रयोग ने ह्विगों को स्थानीय स्वशासन पर भी नियंत्रण पाने के साधन प्रदान किए। प्रत्येक कौण्टी या जिले में स्थानीय शासन का अध्यक्ष कौण्टी का लार्ड लेफटिनेण्ट होता था। यह ताज द्वारा नामजद किया जाता था। वह क्रियात्मक रूप में सदैव एक बड़ा कुलीन सरदार होता था। चूंकि उसका यह कर्त्तव्य होता था कि वह प्रतिवर्ष जस्टिस ऑफ पीस का कार्य सौंपे जाने वाले उपयुक्त व्यक्तियों की सूची तैयार करे, अतः इसका यह परिणाम होता था कि स्थानीय प्रशासन के समूचे कार्य को चलाने वाले **जस्टिस ऑफ पीस** या पुरशासक भी पूर्ण रूप से नहीं, तो मुख्य रूप से ह्विग होते थे।

लार्ड सभा में रानी एन के राज्यकाल में भी ह्विगों का एक स्थायी बहुमत था। १७१२ ई० में १२ टोरी लार्डों के निर्माण से ह्विग पार्टी के बहुमत को कुछ समय के लिये समाप्त कर दिया गया। किन्तु जार्ज प्रथम के राज्यारोहण के बाद अनेक टोरी लार्ड चुपके से ह्विग मतानुयायी हो गये थे, प्रत्येक नया लार्ड ह्विग था और इसका यह परिणाम हुआ कि लार्ड सभा में ह्विगों की प्रभुता पूर्णरूप से सुरक्षित हो गयी। इस पर आक्रमण की किसी भी सम्भावना से इसे सुरक्षित बनाने के लिए १७१९ ई० में ह्विगों के एक गुट ने **पीयरेज बिल** (Peerage Bill) के नाम से प्रसिद्ध विधेयक द्वारा नये लार्ड बनने के राजकीय विशेषाधिकार को मर्यादित करने का प्रस्ताव रखा। यदि यह प्रस्ताव पास हो जाता तो यह उस संकीर्ण कुलीनतन्त्र को स्थापित करने में बहुत दूर तक चला जाता, जिसका पतन केवल हिंसा द्वारा ही किया जा सकता था। सौभाग्यवश यह विधेयक सर राबर्ट वाल पोल की बुद्धिमत्ता से तथा कामन्स सभा के देहातवासी उन भद्रजनों की ईर्ष्या से रद्द किया गया, जो न केवल अपने सदन की शक्तियों को बहुमूल्य समझते थे और इस बात को युक्तियुक्त नहीं समझते थे कि उन्हें लार्ड बनने से रोका जाय।

वस्तुतः पीयरेज बिल (Peerage Bill) लार्ड सभा पर ह्विग नियन्त्रण को सुदृढ़ बनाने के साधन के रूप में आवश्यक नहीं था। यह नियन्त्रण पूर्णरूप से स्थापित हो चुका था इस सदन के सदस्यों की शक्ति और प्रतिष्ठा पर बल देने के लिये भी यह बिल आवश्यक नहीं था। इंग्लैण्ड में कभी ऐसा समय नहीं आया था, जब कुलीनतन्त्र का गौरव इससे अधिक ऊँचा

उठा हुआ हो। प्रत्येक मन्त्रिमण्डल मुख्य रूप से लार्डों से बना होता था। कामन्स सभा का एक बड़ा भाग लार्डों के द्वारा नामजद किये गये व्यक्तियों से, प्रायः उनके बेटों-भतीजों से बना होता था, इसे हम आगे देखेंगे। इस कारण लार्डों को उस परिपाटी पर आपत्ति करने का कोई कारण नहीं होता था, जिसके अनुसार शासन का वास्तविक कार्य मुख्य रूप से निम्न सदन में किया जाता था, अथवा उन्हें वित्तविषयक उस नियन्त्रण पर भी आपत्ति नहीं थी, जिसका दावा निम्न सदन ईर्ष्यापूर्वक किया करता था। वास्तव में, इस युग में ब्रिटेन का तथा ब्रिटिश साम्राज्य का शासन लगभग ७० की संख्या रखने वाले उन महान् परिवारों के समूह द्वारा हो रहा था, जो अन्तविवाह द्वारा एक दूसरे से सम्बद्ध थे और जो यह समझते थे कि उन्हें सार्वजनिक मामलों को नियन्त्रित करने का अधिकार है। **राजाओं के दैवीय अधिकार** के सिद्धान्त के बाद इसका उत्तराधिकारी **महान् परिवारों के दैवीय अधिकार** का सिद्धान्त बन गया। इस पुस्तक में, हमारा उद्देश्य यह देखना है कि यह पद्धति किस प्रकार कार्य करती थी। हम शुरू में ही यह कह सकते हैं कि समग्र रूप से, यह पद्धति बुरी तरह कार्य नहीं कर रही थी। इसने ब्रिटिश शासन में ऐसे कुछ विचारों और परम्पराओं का योगदान दिया है, जो बहुत अधिक महत्त्व के विचार रहे हैं। स्पष्टतः, यह पद्धति बहुत लम्बे समय तक बनी नहीं रह सकती थी, इसका पतन आवश्यक था, तथापि कई प्रकार से यह पूर्ण राष्ट्रीय स्वशासन की दिशा की ओर प्रगति में एक उपयोगी अवस्था थी।

३. ह्विगों के समय की कामन्स सभा

चूंकि कामन्स सभा अब दलों के संघर्ष का मुख्य केन्द्र बन गयी थी और इसकी शक्तियों ने, विशेषतः वित्त पर नियन्त्रण करने की शक्ति ने, अब इसे शासन की ब्रिटिश पद्धति को चलाने वाला चक्र बना दिया था, अतः ह्विगों को अपना प्रभुत्व प्रभावशाली बना सकने के लिए इस सदन पर अपने नियन्त्रण को सुरक्षित बनाना आवश्यक था। उस समय चुनाव जिस विधि से किये जाते थे, उसने इस कार्य को सुगम बना दिया। सदन में अधिकतम स्वतन्त्र तत्त्व इंग्लिश काउण्टियों के या जिलों के प्रतिनिधियों का था। प्रत्येक काउण्टी से दो प्रतिनिधि प्रति वर्ष ४० शिलिंग की अथवा इससे अधिक मूल्य की भूमि रखने वाले व्यक्तियों द्वारा चुने जाते थे। शान्तिपूर्ण समयों में, काउण्टी के कुछ प्रधान प्रभावशाली पुरुषों के लिए यह आसान था कि वे अपने मनोनीत व्यक्तियों को चुनवा दें। एक लम्बे समय तक यह कहा जाता था कि यार्कशायर के पार्लियामेण्ट के सदस्यों का वास्तविक चुनाव बकिंघम के मार्क्विस के बैठकखाने में किया जाता था; जब तक राष्ट्र शान्तिपूर्ण और समृद्ध था, तब तक काउण्टी के निर्वाचक ऐसे मनोनीत व्यक्तियों को स्वीकार करने के लिए तैयार थे। उत्तेजना अथवा संकट के समयों की बात दूसरी थी।

किन्तु कामन्स सभा के सदस्यों की एक अतीव बड़ी बहुसंख्या बरो से अर्थात् राजकीय अधिकार-पत्र या चार्टर प्राप्त करने वाले शहरों से आती थी, इन नगरों में यह सम्भव था कि एक अधिक प्रत्यक्ष नियन्त्रण प्राप्त किया जाय। ह्विगों की शक्ति बहुत बड़ी मात्रा में उस गम्भीर मनोयोग पर अवलम्बित थी, जिसके साथ प्रभावशाली वैयक्तिक ह्विग जमींदार या

रईस बरो के चुनाव पर नियन्त्रण पाने के कार्य में अपने आप को लगाते थे। चुनाव की विधियाँ स्थानीय रिवाज से निश्चित होने के कारण बहुत अधिक भिन्नता रखती थी। किन्तु ऐसे बहुत कम बरो थे, जो इस बात के लिए परिश्रम करने वाले एक प्रभावशाली व्यक्ति द्वारा न प्रभावित किये जा सकते हों। क्रियात्मक रूप से, कुछ बरो अथवा नगरों में कोई आबादी नहीं थी। वहाँ वोट का अधिकार उन व्यक्तियों को था जो उस भूमि के स्वामी अथवा भूमिधारक आसामी थे, जिस भूमि पर कभी बरो विद्यमान था, ऐसे मामलों में जमीन को खरीद लेना सुगम था। अन्य मामलों में मताधिकार मूल इमारती भूमि (Burgages) पर अधिकार रखने वाले व्यक्तियों का था। इसका अभिप्राय यह था कि जब मध्ययुगीन बरो की स्थापना की गयी थी, उस समय उसकी मूल इमारतों के लिए जिन भूमि खण्डों के निशान लगाये गये थे, उन भूमि खण्डों के स्वामियों को यह अधिकार प्राप्त था कि यदि मूल्य की परवाह न करते हुए कोई धनी व्यक्ति इन भूखण्डों या बुरेगेजों (Burgages) को खरीद लेता था, जैसाटेविसटोक में बैडफोर्ड के ड्यूक ने किया था, तो वह प्राय: अपने असामियों से अपने उम्मीदवारों को वोट दिलवा सकता था। अन्य बरो या नगरों में वोट का अधिकार उन स्वतन्त्र पुरुषों को था, जिन्हें कारपोरेशन द्वारा जीवन भर के लिए उस बरो के विशेषाधिकार प्रदान किये जाते थे। ऐसे बरो के अधिक स्वतन्त्र होने की सम्भावना थी। किन्तु इनमें से कुछ छोटे स्थान ऐसे थे, जो उस महान् पड़ोसी की इच्छाओं से [illegible] प्रभावित हो जाते थे, जो उनकी ओर कुछ ध्यान देने का कष्ट करता था। उदाहरणार्थ, बैडफोर्ड के बरो को ड्यूक से यह पूछने की आदत थी कि वह उसके नये स्वतन्त्र पुरुषों की सूची को पसन्द करे और एक अनुग्रह करने वाला कारपोरेशन चुनाव के पूर्व ही ठीक प्रकार के नये स्वतन्त्र व्यक्तियों के दल को चुन सकता था। किन्तु चूँकि एक बार नियुक्त किये गये स्वतन्त्र पुरुष को निकाला नहीं जा सकता था, अत: इन बरो-नगरों पर निरन्तर ध्यान देने की आवश्यकता थी और उत्तेजनापूर्ण चुनावों में इनके असुरक्षित होने की सम्भावना थी। दूसरे बरो-नगरों में कारपोरेशन सदस्यों को चुनता था और कुछ कारपोरेशनों के साथ व्यवहार करना कठिन नहीं था। वे एक मोटी धन-राशि लेकर नामजदगियों को स्वीकार करने के लिए प्राय: तैयार रहते थे। एक धनी व्यक्ति अपने व्यय से जलपूर्ति की अथवा उद्यान आदि की व्यवस्था केलिए सार्वजनिक दान से अपना प्रभाव स्थापित कर सकता था। कुछ बरो-नगरों में प्रत्येक कर-दाता अथवा प्रत्येक निवासी को वोट का अधिकार था, कई बार ये स्थान बड़े कष्टदायक होते थे। यहाँ खुले रूप में घूसखोरी का प्रयोग करना पड़ता था। इन सब विधियों से प्रभावशाली ह्विग नेता कामन्स सभा की सीटों की बड़ी संख्या पर नियन्त्रण पाने में समर्थ हुए, यद्यपि वे इस पर सतत ध्यान देकर और बड़ा खर्च करके ही ऐसा कर सके।

यह स्वाभाविक था कि जिस प्रभावशाली रईस व्यक्ति के अधिकार में आठ या दस सीटें हों, वह उसी मात्रा में उस शक्ति के प्रयोग की आशा रख सकता था, जो शक्ति उसे उस समर्थन के बदले में मिलती थी, जिस समर्थन का वह सरकार को वचन दे सकता था। वह अपने लिए तथा अपने मित्रों के लिए पद और नौकरियाँ पाना चाहता था। अत: दल की सामान्य संस्था

के भीतर ऐसे छोटे गुट और स्वार्थ विकसित होने लगे, जो निरन्तर एक दूसरे के विरुद्ध षड्यन्त्रों में लगे रहते थे। इस युग के पिछले भाग में यह प्रवृत्ति बहुत प्रबल हो गयी। सीटों के समूह पर स्वामित्व रखने वाले व्यक्ति प्रायः इस बात के लिए भी उत्सुक रहते थे कि उन्हें अपने सदस्यों को लाभ पहुँचाना चाहिये, अतः वे निरन्तर होनहार नवयुवकों की तलाश में रहते थे। यह इस पद्धति का सर्वोत्तम पहलू था। जब वे ऐसे व्यक्तियों को पालते थे तो वे प्रायः उन्हें कार्य करने की आश्चर्यजनक स्वतन्त्रता प्रदान करते थे। इस युग में तथा अगले युग में होनहार व्यक्तियों की इस खोज के कारण उन राजनीतिज्ञों की एक लम्बी परम्परा उत्पन्न हुई, जिसने विलक्षण राजनीतिक योग्यता प्रदर्शित की। बड़े पिट से ग्लैडस्टन तक, इंग्लिश राजनीति के लगभग सभी बड़े व्यक्तियों को इस प्रकार अपने को प्रसिद्ध करने का पहला अवसर मिला। इस प्रकार वे अपनी युवावस्था में ही राजनीतिक कार्य में अपने को लगाने में समर्थ हो सके, उन्हें इस बात की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी कि वे अन्य क्षेत्रों में काम करके अपने नाम कमायें और उनसे उनके विचार करने की आदतें परिपक्व हो जायँ। अपने सभी स्पष्ट दोषों के बावजूद, नामजदगी की पद्धति ने बुरा शासन करने वाली असेम्बलियों को उत्पन्न नहीं किया, इसने अप्रत्याशित रूप से अच्छी असेम्बलियों को उत्पन्न किया।

यह कल्पना नहीं की जानी चाहिये कि इस प्रकार निर्वाचित कामन्स सभा पूर्ण रूप से घूस देकर खरीदी जा सकने वाली और भ्रष्टाचारी थी। यह ऐसी बिल्कुल नहीं थी। अनेक व्यक्ति घूस देकर खरीदी जा सकने वाली पाकिटबरो को देश की सेवा में प्रविष्ट होने के सर्वोत्तम उपाय के रूप में खरीदते थे। बरो के अनेक संरक्षक अपनी-अपनी शक्ति का प्रयोग सार्वजनिक उत्तरदायित्व की उच्च भावना के साथ और इस बात को देखने के दृढ़ निश्चय के साथ करते थे कि देश की सेवा के लिए उपलब्ध हो सकने वाले सर्वोत्तम व्यक्तियों को आगे लाया जाय। यह बात बिलकुल असम्भव नहीं है कि उस समय की परिस्थितियों में नामजदगी की पद्धति ने समग्र रूप से, उस विधि की अपेक्षा अच्छे शासक उत्पन्न किये, जो शासक ऐसे निर्वाचकों के समूहों के स्वतन्त्र चुनाव द्वारा उत्पन्न किये जाते, जिन्हें सार्वजनिक मामलों का कोई ज्ञान नहीं था और जिनके पास इसे प्राप्त करने का बहुत कम अवसर था। इसके अतिरिक्त, वास्तविक संकट के समयों में जब राष्ट्र का मन वस्तुतः आन्दोलित होता था, उस समय चुनावों को नियन्त्रण करने वाले प्रभावशाली व्यक्तियों की शक्ति बड़ी मात्रा में लुप्त हो जाती थी, इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में होने वाले निर्वाचनों ने इस बात को प्रदर्शित किया। ह्विग अल्पतन्त्र के उत्कर्ष की पराकाष्ठा के समय में भी कामन्स सभा में सदैव स्वतन्त्र सदस्यों का एक ऐसा बड़ा समूह बना रहा, जो सरकार का समर्थन करने के लिए किसी भी प्रकार से बँधा हुआ नहीं था।

हम ह्विग कामन्स सभा का स्थूल चित्रण इस प्रकार कर सकते हैं कि यह तीन भागों से मिल कर बनी हुई थी। एक भाग पदाधिकारी और सरकारी सीटों वाले सदस्यों का था, इसकी संख्या लगभग एक सौ बीस थी, इन पर लगभग सदैव भरोसा किया जा सकता था कि ये उस समय की सरकार के लिए वोट देंगे, किन्तु कई बार ये सरकारी नियन्त्रण से पृथक् भी

हो जाते थे। इसमें एक भाग "स्वतन्त्र" सदस्यों का था, इसे प्रायः देहाती भद्रवर्ग कहा जाता था, इसमें काउण्टियों के तथा बड़े बरो-नगरों के प्रतिनिधि बड़ी मात्रा में सम्मिलित थे। इनमें अधिकांश ह्विग थे। किन्तु कुछ टोरी भी इनमें शामिल थे। वे राजा की सरकार का समर्थन करना प्रायः अपना कर्त्तव्य समझते थे, यदि वे यह सोचते थे कि सरकार गलत रास्ते पर जा रही थी तो वे सरकार के विरुद्ध वोट देने में स्वतन्त्र थे। अन्त में नामजद सदस्यों का एक समुदाय था, यह पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार रखने वाली उजड़ी बस्तियों (Rotten Boroughs) तथा एक व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित किये जाने वाले नगरों (Pocket Boroughs) के सदस्यों का प्रतिनिधित्व करता था। ये सभी सदस्य लगभग ह्विग होते थे, किन्तु ये ह्विग नेताओं के विशिष्ट गुणों का समर्थन करने वाले, तथा सार्वजनिक नीति के विशिष्ट दृष्टिकोण रखने वाले समूहों में बँटे होते थे।

इस प्रकार जिस समय ह्विग लोग कामन्स सभा पर हावी हुए और अगली आधी शताब्दी तक टोरियों का नाम तक लगभग लुप्त हो गया तो इसका अर्थ यह नहीं था कि कामन्स सभा से सारी स्वाधीनता अथवा कार्य करने की स्वतन्त्रता छीन ली गयी थी। इसके विपरीत इसका यह अभिप्राय था कि जिस समय पार्लियामेण्ट की प्रभुसत्ता तथा राजतन्त्र द्वारा शक्ति हथियाने के खतरे के बारे में प्रमुख ह्विग सिद्धान्त विजयी हुए, उस समय बनने वाली प्रत्येक सरकार सच्चे अर्थ में पार्लियामेण्ट पर निर्भर बनी रही; यह सरकार अपने पद पर कभी नहीं रह सकती थी, यदि राष्ट्रीय नीति विषयक इसके विचार पार्लियामेण्ट को पसन्द न होते। हम एक अगले अध्याय में देखेंगे (अध्याय ६), कि इस युग की पार्लियामेण्टें उससे कहीं अधिक वास्तविक रूप से राष्ट्र के वास्तविक मन और इच्छा का प्रनिनिधित्व करती हैं, जितनी इनकी निर्वाचन पद्धति के आधार पर इनसे राष्ट्र की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने की कल्पना की जा सकती थी।

४. तरुण अश्वारोही योद्धा और जैकोबाइट लोगों का अन्तिम बड़ा प्रयास

इस प्रकार ह्विगों की शक्ति की जड़ ऐसे ढंग से जम गयी कि इसे उखाड़ना बहुत कठिन था; किन्तु जैकोबाइट लोगों को सरकार की ह्विग पद्धति को उलटने के लिए अब भी एक अन्तिम प्रयत्न करना था। यह १७४५ ई० का उग्र और वीरतापूर्ण विद्रोह था। इसका संचालन साहस की ऐसी भावना के साथ किया गया कि यदि यह भावना १७१५ ई० में प्रदर्शित की जाती तो इसकी विजय अवश्य हो जाती। १७४५ ई० में इसके सफल होने की कोई आशा नहीं थी। ह्विगों को अपनी शक्ति की नींवों को सुप्रतिष्ठित करने के लिए तीस वर्ष का समय मिल चुका था; मुख्य रूप से ये वर्ष ऐसी सुदृढ़ शान्ति और सामान्य समृद्धि के वर्ष थे कि दोनों देश— इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड अच्छी तरह सन्तुष्ट थे।

दो बातों ने इस प्रयास को करने का सुझाव दिया। पहली बात यह थी कि तीस वर्ष बाद एक बार पुनः फ्रांस का इंग्लैण्ड के साथ युद्ध छिड़ गया, अब फ्रान्स से सहायता की आशा रखी जा सकती थी। दूसरी बात यह थी कि इस समय १७१५ ई० के ज़िद्दी और वाचाल

व्यक्ति का बेटा तरुण योद्धा अश्वारोही चार्ल्स एडवर्ड[1] युवा हो चुका था, वह २५ वर्ष का एक सुशील वीर युवक राजकुमार था एवं उग्र साहसिक कार्यों के लिए तैयार था। वह लोगों में अपने प्रति राजभक्तिपूर्ण प्रेम को अनुप्राणित करने वाला था। इतने अधिक विलक्षण उतार चढ़ावों को सहने वाले, स्टीवर्ट घराने ने इतने अधिक दुःखान्त नाटकों में भाग लिया था, इतनी अधिक रोमान्चक भक्ति को अनुप्राणित किया था कि उसकी समाप्ति कोरी घृणा में नहीं होने वाली थी, अपितु इस लम्बी कथा का अन्त एक ऐसे साहसी तरुण के नेतृत्व में किये जाने वाले अन्तिम वीरतापूर्ण साहसिक कृत्य[2] से होना था, जिस युवक की स्मृति वैसे ही रखी जा सकती है, जैसी वह स्काट लोगों की प्रभावोत्पादक एवं रोमांचक रानी मेरी के तथा चार्ल्स प्रथम के योग्य उत्तराधिकारी की स्मृति हो।

फ्रांस से सहायता पाने की आशा निष्फल सिद्ध हुई। १७४४ ई० के लिए आयोजित, एवं इंग्लैण्ड पर प्रस्तावित फ्रेंच आक्रमण नौसेना की शक्ति और तत्परता से विफल कर दिया गया। यह अच्छा ही था। जिस रोमांचक साहसिक कार्य को स्टीवर्ट वंश की कहानी को गौरवपूर्ण विपत्ति के साथ समाप्त करना था, वह विफल हो गया। यदि इसने फ्रेंच आक्रमण का रूप धारण किया होता तो लोगों की कल्पना पर इसका प्रभाव नष्ट हो गया होता। तरुण राजकुमार ब्रिटिश टापुओं के जीतने के लिए एक दो मस्तूल वाले तथा चौकोर पालवाले छोटे जहाज में रवाना हुआ, इसे खरीदने के लिए और बन्दूकों और चौड़े फल वाली तलवारों तथा हल्की तोपों से इसे भरने के लिए उसने अपनी सारी साख को रेहन पर लगा दिया था। एक इंग्लिश जंगी जहाज द्वारा पकड़े जाने से बाल-बाल बचते हुए वह पश्चिमी हाइलैण्ड के मोइडार्ट नामक स्थान में उतरा, उसने १९ अगस्त १७४५ ई० कोग्लैनफिनन में अपने रेशमी झण्डे को फहराया। स्टीवर्ट कैमेरोन और मैकडानल्ड जनजातियों के लोग उसके साथ सम्मिलित हो गये, उन्होंने उसे अपने हृदय की इच्छाओं के अनुरूप राजा पाया। वह ऊँचे कद का लालित्यपूर्ण व्यक्ति और पहलवान था, राजकीय गौरव के कभी भी न खोने वाले व्यवहार का आकर्षण रखते हुए, उसने वीरतापूर्ण अदा के साथ हाइलैण्ड की वेशभूषा को धारण किया, वह नंगी जमीन पर अपने पट्टू में लिपटा हुआ सोता था और उन सब मुसीबतों में हिस्सा बँटाता था, जिन मुसीबतों को सहने के लिए पर्वतीय व्यक्ति आदी बने हुए थे। १७१५ ई० की मन्दगति के साथ उज्ज्वल रूप से तुलना करने वाली तेजी के साथ उसने हाइलैण्ड में से हो कर पर्थ के पास से सीधा एडिनबरा की ओर प्रयाण किया, मोइडार्ट के समुद्र तट पर उसके उतरने के एक महीने से भी कम समय में स्काटिश राजधानी के घण्टे खतरे की सूचना देने के लिए बजने लगे। १७ सितम्बर को, उसने एडिनबरा में घोड़े पर सवार होकर प्रवेश किया; उसके आगमन की रोमांचक कथा मात्र से और उस तरुण राजकुमार के वीरतापूर्ण पहलू से नागरिक अपना आपा खो बैठे। स्काटिश राजाओं के प्राचीन राजमहल होलीरुड में उस रात्रि को एक नृत्य हुआ; १९वीं शताब्दी में भी बूढ़ी स्काटिश स्त्रियाँ एक सिहरन के

१. एण्ड्रयू लैंग ने प्रिन्स चार्ल्स की एक जीवनी लिखी है।

२. स्काट के उपन्यास वेवर्ली में १७४५ ई० के विद्रोह का एक मार्मिक वर्णन दिया गया है।

साथ इसका स्मरण करती थी। स्काटलैण्ड के जीवन में ग्रथित १०० राजाओं के इतने ही दु:खान्त नाटकों के उत्तराधिकारी तरुण राजकुमार ने सब लोगों के दिल जीत लिए।

इस बीच में, स्काटलैण्ड में ब्रिटिश सेनाओं के सेनापति, सर जान कोप ने केवल यह सुनते ही हाइलैण्ड्स में कूच किया कि राजकुमार निम्न प्रदेशों में विजय कर रहा है, उसने तेजी से अपनी सेनाओं को एबरडीन से डम्बर जाने के लिए जहाज द्वारा भेजा और वह राजधानी की ओर बढ़ने लगा। युवा अश्वारोही और उसके हाइलैण्डर नृत्य के चार दिन बाद, प्रैस्टोन्पैन्स में सर जान कोप की सेना पर टूट पड़े, प्रात:कालीन धुन्ध में अकस्मात् गिरने वाली हिमशिला की भाँति गिरते हुए उन्होने उसे तथा उसके व्यक्तियों को सिर पर पैर रखते हुए भगा दिया। दो हजार में से केवल दो सौ सैनिक बचे। प्रिन्स चार्ल्स ने हत्या का निषेध कर दिया, उसने घायल व्यक्तियों की सहायता की व्यवस्था की तथा देख-भाल की।

इस उज्ज्वल सफलता ने एक निराशापूर्ण साहसिक कार्य को सफलता का वास्तविक अवसर रखने वाला प्रतीत करवा दिया। फ्रांस प्रिन्स की सहायता के लिए एक फौज भेजने की बात सोचने लगा बशर्ते कि इंग्लिश जैकोबाइट भी विद्रोह करें। किन्तु इंग्लिश जैकोबाइट उस समय तक कुछ भी नहीं करने वाले थे, जब तक राजकुमार स्वयमेव उसके पास न आये, अत: हाइलैण्ड की ओर प्रयाण करना पड़ा। उन्होंने कार्लिस्ले पर नवम्बर में अधिकार कर लिया। वे प्रेस्टन और विगान होते हुए मैनचेस्टर तक चले गये। यहाँ खुशी के घण्टे बजने लगे, होली की आगें भड़क उठीं। दो सौ स्वयंसेवक इस सेना में मिल गये। किन्तु पहले से ही यह स्पष्ट था कि यहाँ कोई सामान्य विद्रोह नहीं होने वाला था। जैकोबाइट लंकाशायर (मैन्चेस्टर से पृथक् होते हुए) भी बड़ी बेचैनी से शान्त बना रहा। रोमाञ्चक षड्यन्त्रों की चर्चा करना और "समुद्र के राजा" का स्वाथ्य पान करना एक बात थी और उग्र एवं निराधार आशा पर अपने जीवन और जमीनों को खतरे में डालना दूसरी बात थी। एक भी प्रसिद्ध इंग्लिश व्यक्ति चार्ल्स के साथ नहीं मिला, इस बीच में, स्काटलैण्ड में भी, अपने पहले धक्के से सम्भलते हुए निम्न भूमियों में बसे हुए नगर प्रोटेस्टेण्ट उत्तराधिकारी के उत्तराधिकार की सुरक्षा के लिए अपने को शस्त्रों से सुसज्जित कर रहे थे। यदि मैञ्चेस्टर इस प्रवाह में बह गया था तो लिवरपूल राजा जार्ज के पक्ष में लड़ने के लिए दो सौ से कहीं अधिक सैनिक एकत्र कर रहा था। इसके अतिरिक्त राजा के दूसरे बेटे, कम्बरलैण्ड के ड्यूक की अधीनता में राजकीय सेना संकटपूर्ण रीति से नजदीक आ रही थी। हाइलैण्डर अपने घरों से इतना अधिक दूर होने से अप्रसन्न थे और वे छोटे समूहों में चार्ल्स का साथ छोड़ रहे थे। छोटी सेना डर्बी तक संघर्ष करते हुए आगे बढ़ती गयी। ६ दिसम्बर को यह सेना डर्बी पहुँच गयी, यह लन्दन से केवल १३० मील था। इस समाचार ने राजधानी में एक वास्तविक आतंक उत्पन्न कर दिया। चिरकाल तक उस **मनहूस शुक्रवार** को याद किया जाता रहा, जब बैंक आफ इंग्लैण्ड से रुपया लेने वालों की इतनी ज़बरदस्त भीड़ थी कि इन्हें एक शिलिंग के बदले में ६ पेन्स दे कर ही रोका जा सका था।

किन्तु लन्दन को भयभीत होने की जरूरत नहीं थी, क्योंकि वह वीरतापूर्ण प्रयास समाप्त हो चुका था। चूँकि इंग्लैण्ड जैकोबाइट लोगों से कोई सहानुभूति नहीं मिली थी और हाईलैण्ड्स की छोटी सेना भी क्षीण हो रही थी, अत: हाइलैण्डर्स को वापस लौटने के सिवाय कुछ भी करने को नहीं रहा। केवल यही लोग एक निराधार आशा के लिए अथवा सभी कुछ खतरे में डालने के लिए तैयार प्रतीत होते थे। सेना की वापसी शुरू हुई और उत्साहशून्य सेना ने अपना अनुशासन खो दिया; यह लूट-पाट करने लगी और जल्दी ही यह अपने को देहाती जनता द्वारा सताया जाता हुआ अनुभव करने लगी। मैञ्चेस्टर ने आगे बढ़ती हुई सेना का हर्ष से स्वागत किया था; अब उसने भी लौटते हुए इसके पिछले भाग पर पत्थर फेंके। २० दिसम्बर को पुन: चार्ल्स ने इंग्लैण्ड की सीमा पार कर ली, ६ दिन बाद वह ग्लासगो में था, यहाँ हाइलैण्ड्स से कुमुक उसके पास पहुँचने लगी। जनवरी में जनरल हाले के नेतृत्व में राजकीय सैनिकों की एक उत्कृष्ट सेना पर फालकर्क में एक शानदार विजय प्राप्त की गयी। किन्तु कम्बरलैण्ड का ड्यूक आगे बढ़ रहा था, राजकुमार के कटु प्रतिवादों के बावजूद प्रत्यावर्तन को हाइलैण्ड्स के दुर्गम स्थलों तक जारी रखना पड़ा। उसके सामने विपत्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था; लौटती हुई सेना के नेताओं के झगड़ों ने इसके कष्टों को बढ़ाया। १५ अप्रैल १७४६ ई० को नेयर्न के निकट कुल्लोडन मूर में एक भीषण लड़ाई से, अन्त में इस पीड़ा की समाप्ति हुई; यहाँ वर्षा और बरफ के बीच में स्टीवर्ट वंश की आशाएँ अन्तिम रूप से दबकर समाप्त हो गयीं, इसका अन्तिम दृश्य हाइलैण्ड प्रदेश में युद्ध के लम्बे जंगली नाटक में खेला गया।

कुल्लोडन के बाद, लड़ाई के पश्चात् कई दिन तक चलने वाला ऐसा हत्याकाण्ड हुआ जिसने कम्बरलैण्ड को कसाई के नाम की ख्याति प्रदान की। विद्रोह में भाग लेने वाले सभी मुखिया लोग कानूनी संरक्षण से निष्कासित किये गये। इनमें से कुछ फ्रांस भाग गये, कुछ वहीं बने रहे। ये अपने देश के पहाड़ों में पीछा किये जाने वाले भगोड़े बने रहे। राजकुमार ने छिपते हुए ६ महीने व्यतीत किये। इस समय उसको पकड़ने के लिए एक बड़ा इनाम रखा गया था, वह इस दशा में भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक भटकता रहा, कई बार वह बाल-बाल बचा, उसने अपना जीवन निरन्तर उन किसानों को सौंपा, जिन्हें उसे धोखा देने का अर्थ धनप्राप्ति थी। उसने अपना जीवन फ्लोरा मैकेडानल्ड जैसी वीरांगनाओं को भी उस समय तक सौंपा जब तक कि वह उसी स्थान से एक छोटे फ्रेंच जहाज में बैठ कर बाहर नहीं चला गया, जिस स्थान पर वह पहले उतरा था।

यह एक लम्बी और मार्मिक कथा की समाप्ति थी। हाइलैण्ड्स के लिए यह एक युग की समाप्ति थी। जब इन वीरतापूर्ण कार्यों की स्मृति को सुरक्षित बनाने वाले लोकगीतों को कोमल सौंदर्य के साथ गाने वाले चारण साहसी तरुण राजकुमार के लिए विलाप करते थे और उसकी वापसी की चाह करते थे तो यह ऐसा समूचा मृत अतीत था, जिसके लिए वे विलाप करते थे और यह वह जनजातियों का वन्य रोमांचक जीवन था, जो अब सदा के लिए समाप्त हो चुका था; क्योंकि कुल्लोडन के बाद लगभग आवश्यक रूप से जनजातीय शासन की समाप्ति

की गयी, सामान्य कानून को लागू किया गया और कुछ बातों में अनावश्यक कठोर रीति से हाइलैण्ड के रीति रिवाजों का—वहाँ की वेशभूषा तक का दमन किया गया। १७४७ ई० में एक कानून द्वारा "विरासत में पाये जा सकने वाले क्षेत्राधिकारों" की समाप्ति करना स्काटिश इतिहास में एक नवयुग का आरम्भ था। एक दृष्टि से, १७४५ ई० को सभ्यता के विरुद्ध बर्बरता का अन्तिम संघर्ष कहा गया है; सब दशाओं में राष्ट्र की व्यापक एकता के विरुद्ध जन-जातीय पद्धति का यह अन्तिम संघर्ष था, क्योंकि तरुण अश्वारोही व्यक्ति के प्रति अपनी मार्मिक निष्ठा के बावजूद जनजातीय लोग अज्ञात रूप से, किन्तु वस्तुतः नये विचारों के दबाव के विरुद्ध पुरानी पद्धतियों को बनाये रखने के लिए ही वास्तविक किन्तु अज्ञात रीति से लड़ रहे थे; वे राष्ट्रीय सरकार के किसी विशिष्ट सिद्धान्त के लिए नहीं लड़ रहे थे। उस समय जैसी आशा की जाती थी, उसकी अपेक्षा शीघ्र ही पुरानी निष्ठा का स्थान एक नयी निष्ठा ने ले लिया। यद्यपि जनजातियों की जंगली लड़ाई सदा के लिए समाप्त हो गयी थी तो भी उनके बेटों को शीघ्र ही वीरता का नया क्षेत्र मिलने वाला था। पिट की प्रतिभा से जैकोबाइट जनजातियों से भर्ती की गयी हाइलैण्ड की सेनाओं ने कुल्लोडन के विध्वंस के १२ वर्ष बाद टिकोन्डेरोगा में विजय प्राप्त करनी थी। उन्होंने उस समय से विश्व के प्रत्येक भाग में अपने वैसे ही वीरतापूर्ण कृत्यों के शौर्य की ख्याति स्थापित की है, जैसे वीरतापूर्ण कार्य उन्होंने माण्ट्रोस के अथवा तरुण अश्वारोही के नेतृत्व में कभी किये थे, उन्होंने इससे भी अधिक महत्त्वशाली कार्य किये।

राजकुमार पुनः निर्वासन में वापस चला गया; वह एक आवारा, निखट्टू और पियक्कड़ बन गया। जीवन बिताने के लिए अब उसके पास क्या बात शेष थी ? कम-से-कम उसके पिता के विपरीत उसका पतन सदैव उस स्मृति से उदात्त बनाया जाता था कि वह पहले किस प्रकार का वीर पुरुष था। उसने अपने साहस और आशाओं का पूर्णरूप से त्याग नहीं किया था। कम-से-कम एक बार, और शायद कई बार वह गुप्त रूप से इंग्लैण्ड आया, उसने उस उद्देश्य को पुनरुज्जीवित करने का प्रयत्न किया, जो उसके जीवन को महत्त्व प्रदान कर सकता था।[1] किन्तु अब कुछ भी करने को शेष नहीं था। पुराने गीत की भाँति, स्टीवर्टवंशी राजाओं की कथा समाप्त हो चुकी थी, यह बात महत्त्वपूर्ण थी कि इसकी समाप्ति वीरता के ऐसे कार्यों के साथ हुई थी कि मनुष्य बड़े जोश के साथ इसका स्मरण करते हैं।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

For the Whig system of government see **Lecky,** England in the Eighteenth Century; **Robertson**, England under the Hanoverians; **Perritt,**

---

१. स्काट के उपन्यास रेडगौण्टलेट में एक अधेड़ व्यक्ति के रूप में अपने पूर्वजों के देश की पुनः यात्रा करने वाले चार्ल्स एडवर्ड की एक मार्मिक कथा का चित्रण है। यह सम्भवतः स्काट का एक सबसे बढ़िया उपन्यास है।

Unreformed House of Commons and **Acton's** Lecture on the Hanoverian Settlement in Lectures on Modern History; for the Jacobite risings, see **Terry,** The Young Pretender; **Lang,** History of Scottland (Vol IV) Prince Charles Edward, and Pickle the spy. See also **B. Williams,** the Whig Supremacy; K. Feiling. The Second Tory Party (1714-1832); **L. B. Namier,** The Structure of English Politics at the Accession of George III : **M. A. Thomson**, The Ssecretaries of State 1681-1782; and **A. S. Turberville,** The House of Lords in the Eighteenth Century.

• •

२

शक्ति का सन्तुलन

(१७१४-१७३६ ई०)

१. इस युग की विशेषताएँ

यूट्रेक्ट और रास्टाट की सन्धियों के बाद के २० वर्ष यूरोप के मामलों में बड़ी जटिलता और गड़बड़ का समय थे, इसी समय ह्विग ब्रिटिश द्वीप-समूह में अपनी शक्ति स्थापित कर रहे थे। इस युग में यूरोपियन इतिहास में कोई ऐसा केन्द्रीय प्रधान हित नहीं था, जैसा पहले समय में धर्म के युद्ध और बाद में फ्रांस की महत्ता और महत्वाकांक्षा थी। यूरोप के सभी छोटे बड़े असंख्य निरंकुश शासक अपने पृथक्-पृथक् हितों का अनुसरण कर रहे थे और उनकी मित्रताओं और षड़यन्त्रों से होने वाले स्थित्यन्तर तथा दिक्परिवर्तन अत्यधिक परेशान करने वाले थे। ब्रिटेन मकड़ी के इस जाले की ओर पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक मात्रा में आकृष्ट हुआ, इसका कुछ कारण यह था कि लुई १४वें के पतन के परिणामस्वरूप वह यूरोप की सबसे बड़ी शक्ति बन गया था। इसके अतिरिक्त कुछ कारण यह भी था कि हनोवर के इलेक्टर के रूप में उसकी स्थिति उसे अनिवार्य रूप से जर्मनी और उत्तरी यूरोप की उस राजनीति में उलझा रही थी, जो इस जाल का अधिकतम जटिल भाग था। कुछ समय तक ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का सर्वोपरि कार्य विदेशी राजनीति बन गयी। यह अच्छी तरह से कहा जा सकता है कि उनका प्रधान लक्ष्य शान्ति बनाये रखना था। यह ऐसा लक्ष्य था, जिसमें वे लम्बे समय तक सफल हुए। हमारे लिये यह आवश्यक नहीं है कि हम इन वर्षों

की उलझी हुई कथा का विस्तार से अनुसरण करें, किन्तु इसके कुछ पहलू महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि इस युग में ऐसे नवीन महत्वपूर्ण तत्वों का आविर्भाव हो रहा था, जो भविष्य में यूरोप के लिए तथा समग्र रूप से राष्ट्रमण्डल के लिए अतीव महत्वपूर्ण बनने वाले थे।

पहली बात यह थी कि पूर्वी तथा उत्तरी यूरोप के राजनीतिक भूगोल का पुनर्निर्माण हो रहा था। एक समय में पश्चिम की सभ्यता को खतरे में डालने वाला प्रतीत होने वाला भीषण तुर्क साम्राज्य क्षीण हो रहा था, वह उस जटिल समस्या को उत्पन्न कर रहा था जो पूर्वी प्रश्न (Eastern Question) के नाम से प्रसिद्ध है। किसी समय में महान् बना रहने वाला पोलैण्ड का राजतन्त्र अब स्पष्ट रूप से नपुंसक बन गया था। इसके लालची पड़ोसियों के हाथों से इसका विध्वंस पहले से ही स्पष्ट दिखायी दे रहा था। स्वीडन की महत्ता का लघुयुग समाप्ति पर लाया जा रहा था। इन तीनों शक्तियों के विध्वंसावशेषों पर रूस का भीमकाय साम्राज्य यूरोपियन राजनीति के क्षितिज पर अस्पष्ट रूप से सामने आने लगा था।

दूसरी बात यह थी कि यद्यपि पश्चिमी यूरोप में कोई महान् परिवर्तन नहीं हुए, तथापि इसकी जटिल राजनीति दो विशेषताओं से युक्त थी। एक ओर शान्ति को बनाये रखने के किसी व्यवस्थित ढंग की आकांक्षा को खुली अभिव्यक्ति मिली और इस पर विस्तृत रूप से विचार किया गया। दूसरी ओर पुराने प्रतिद्वन्द्वी ब्रिटेन और फ्रांस के सहयोग से इन शक्तियों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय पंच फैसले (Arbitration) के आरम्भ ने तथा वार्तालाप द्वारा विवाद के कारणों को दूर करने के लिए अधिकांश सम्मेलनों या कांग्रेसों के किये जाने ने न केवल यूरोप को शान्ति का लम्बा मध्यान्तर दिया, अपितु इसने यह भी प्रदर्शित किया कि अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग द्वारा शान्ति को बनाये रखना पूर्ण रूप से अव्यावहारिक नहीं था।

२. टर्की, पोलैण्ड और स्वीडन की क्षीणता और रूस का उत्थान

जिन वर्षों में पश्चिमी यूरोप लुई १४वें (१६८८-१७१४ ई०) के विरुद्ध संघर्ष में पूर्ण रूप से संलग्न था, उन्हीं वर्षों में पूर्वी यूरोप में अत्यधिक महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे, १७१४ ई० के बाद की सामान्य यूरोपियन स्थिति में इन परिवर्तनों का प्रभाव गम्भीर रूप से अनुभव किया जाने लगा और उस समय से यह प्रभाव अनुभव किया जा रहा है। इनमें से पहला परिवर्तन तुर्कों की शक्ति की क्षीणता थी, हम पहले ही देख चुके हैं (पाँचवीं पुस्तक, दूसरा अध्याय) कि इसका आरम्भ हंगरी में तुर्क शक्ति के विरुद्ध युद्ध की समाप्ति पर १६९९ ई० में हुई कार्लोविट्ज की सन्धि द्वारा हुआ। इसने तुर्कों को डेन्यूब नदी से परे खदेड़ दिया। १७१५ ई० में उन्होंने संघर्ष पुनः आरम्भ किया, उन्हें यह आशा थी कि वे लुई १४वें के विरुद्ध युद्ध के कारण हैब्सबर्गवंश वालों को थका हुआ पायेंगे, किन्तु इससे उन्हें और भी अधिक प्रदेश खोना पड़ा। १७१८ ई० में पासारोविट्ज की सन्धि के बाद तुर्क पुनः कभी ईसाई शक्तियों के लिए खतरा बनने में समर्थ नहीं हुए। वह समय शीघ्र ही आने वाला था जब कि तुर्की का मुख्य महत्व इस कारण था कि उसकी निर्बलता बढ़ने के

साथ उसके म्रियमाण साम्राज्य पर नियन्त्रण पाने के लिए उत्सुक रहने वाले उसके महान् पड़ोसियों में होड़ होने लगी थी ।

१७१४ ई० में यूरोपियन राजनीतिज्ञों के सामने दूसरा महान् परिवर्तन यह था कि अब तक यूरोप का एक महान् राज्य गिना जाने वाला पोलैण्ड असहाय रूप से निर्बल हो गया था । हम देख चुके हैं कि (पाँचवीं पुस्तक, दूसरा अध्याय) जान सोबियस्की के नेतृत्व में पोलों ने तुर्कों के खतरे को रोकने में तथा वियना को उनके अधिकार में पड़ने से बचाने के लिए कितना वीरतापूर्ण कार्य किया था (१६८३ ई०) । किन्तु सोबियस्की के समय में, और इससे भी पूर्व पौलैण्ड अपने शासन की बेहूदा पद्धति के कारण भीषण रूप से निर्बल बना दिया गया था । उस समय इसके राजा चुने जाते थे । इसका यह आशय था कि उनकी कोई सुदृढ़ रूप से स्थापित सत्ता नहीं थी, उनके अधिकार और साधन प्रत्येक अगले चुनाव के साथ कम होते जाते थे । इस चुनाव का भी कोई महत्व न होता, यदि सरकार के अन्य अग प्रभावशाली होते, किन्तु पोलिश डायट अथवा पार्लियामेण्ट (जो पूर्ण रूप से कुलीन सरदारों से बनी होती थी) कभी भी किसी देश का शासन करने वाली सबसे अधिक निरर्थक एवं अप्रभावशाली संस्था थी । इसके निर्णयों का सर्वसम्मत होना आवश्यक था । एक भी जिद्दी सदस्य इसकी सब कार्यवाहियों को निरर्थक बना सकता था । इसके अतिरिक्त इस देश में कैथोलिकों और प्रोटेस्टेण्टों में गम्भीर मतभेद था । इसकी उन्नति प्रतिस्पर्धी कुलीन घरानों की ईर्ष्याओं से अवरुद्ध हो रही थी । जब १६९६ ई० में महान् सोबियस्की का देहान्त हुआ तो इन ईर्ष्याओं ने उसके बेटे के या अन्य किसी पोलिश कुलीन सरदार के राजा के रूप में चुनाव को रोक दिया । एक विदेशी व्यक्ति सैक्सनी का इलेक्टर-आगस्टस राजा चुना गया । उसके राज्य काल में (यह १७३३ ई० तक रहा) इस अभागे देश को कष्टपूर्ण युद्ध में घसीटा गया, इसका निर्देश हम बाद में करेंगे । प्रबल विजेता स्वीडन के चार्ल्स द्वादश ने एक प्रतिस्पर्धी राजा-स्टेनिस-लास लेस्कजिन्स्की को खड़ा किया और यह देश विदेशी सेनाओं का और घरेलू दलबन्दियों का ऐसा असहाय शिकार बना कि ऐसा प्रतीत हो रहा था कि यह इनसे अपनी रक्षा करने में बिलकुल असमर्थ है । इसके बाद यद्यपि मानचित्र पर अब भी यह यूरोप का सबसे बड़ा राज्य था, तथापि इसके पड़ोसी इसे कोरी घृणा की दृष्टि से देखते थे, उनकी पारस्परिक ईर्ष्याओं ने ही इसके उस विध्वंस में विलम्ब किया, जो इस शताब्दी की समाप्ति से पहले किया जाना था ।

जब पोलैण्ड क्षीण हो रहा था, उस समय पूर्व में अकस्मात् एक नयी शक्ति का आविर्भाव हुआ । यह शक्ति रूसी साम्राज्य की थी । अब तक यूरोप के जीवन में यह नगण्य था । यूरोप की महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में रूस का आविर्भाव शक्तिशाली, पाशविक और अहम्मन्य, बर्बर महान् पीटर (१६८९-१७२५ ई०) के राज्यारोहण के समय से हुआ । जब पश्चिम में विलियम तृतीय तथा लुई १४वें में लड़ाई चल रही थी, उस समय पीटर अपने अनिच्छुक प्रजाजनों को पश्चिमी ढंगों को ग्रहण करने के लिए उग्र रूप से बाधित कर रहा था, वह एक स्थल सेना का संगठन कर रहा था और नौसेना का आरम्भ कर रहा था । वह पश्चिम की सभ्यता के रहस्यों को जानने के लिए छद्म वेष में पश्चिम की यात्रा कर रहा था, डैप्टफोर्ड में तथा हालैण्ड में गोदियों में अपने हाथों से काम कर रहा था,

रूस को बर्बरता के पंक से बाहर निकालने में तथा बलपूर्वक उसका ध्यान पश्चिम की ओर करने में उसकी सहायता करने के लिए सभी प्रकार के पश्चिमी परामर्शदाताओं (अधिकांश रूप में जर्मनों को) वह अपने देश में ला रहा था और उसे बाधित कर रहा था कि वह अपनी आँखें पश्चिमी देशों की ओर मोड़े। नौसैनिक मामलों में गहरी दिलचस्पी होने के कारण पीटर ने यह अनुभव किया कि रूस तब तक महान् शक्तिशाली देश नहीं बन सकता, जब तक वह बर्फ से बन्द रहने वाले श्वेत सागर की अपेक्षा अधिक खुले समुद्रों में प्रवेश नहीं पा लेता है[1]। किन्तु कृष्ण सागर के सभी उत्तरी समुद्र तट तुर्कों के अधिकार में थे। फिनलैण्ड पर और बाल्टिक प्रान्तों के इंग्रिया, इस्थोनिया, लिवोनिया के नाम से प्रसिद्ध प्रदेशों पर स्वीडन का अधिकार था। कूरलैण्ड पर पोलों का कब्जा था, जब कि पोलैण्ड का विशाल प्रदेश रूस और केन्द्रीय यूरोप में मध्य में पड़ा हुआ था। यदि रूस को यूरोप के साथ सजीव सम्पर्क में लाना था तो यह प्रतीत होता था कि उसे तुर्की, स्वीडन और पोलैण्ड का प्रदेश छीनते हुए आगे बढ़ना आवश्यक होगा।

पीटर का प्रथम आक्रमण तुर्कों के विरुद्ध था, १६९६ ई० में उसने एक शानदार किन्तु अस्थायी विजय आजोफ पर अधिकार करके प्राप्त की। यह स्थान इसी नाम के समुद्र पर था। इससे रूस और टर्की में एक लम्बे युग तक चलने वाले संघर्ष का आरम्भ हुआ। किन्तु बाल्टिक सागर पर एक द्वार या निर्गम मार्ग कृष्ण सागर के द्वार की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण था, क्योंकि कृष्ण सागर का मुँह कुस्तुन्तुनिया के जलडमरूमध्य के कारण बन्द था, अतः १६९९ ई० में पीटर बड़े चाव से एक ऐसी मैत्री-सन्धि का सदस्य हो गया, जिसमें स्वीडन के पुराने शत्रु डेनमार्क और पोलैण्ड सम्मिलित थे। इस सन्धि का उद्देश्य शिशु राजा चार्ल्स द्वादश[2] के राज्यारोहण से प्रस्तुत किये जाने वाले अवसर से स्वीडिश शक्ति के विध्वंस का लाभ उठाना था। किन्तु मित्र-राष्ट्रों ने यह अनुभव किया कि उनके लिए यह कोई आसान कार्य नहीं था, क्योंकि युद्ध आरम्भ होने के समय केवल १७ वर्षीय चार्ल्स द्वादश ने अपने को समूचे इतिहास में एक अधिकतम बढ़िया, साहसी और रोमांचक योद्धा एवं नेता प्रदर्शित किया। इस प्रकार हल्केपन से और लोभ से आरम्भ किया युद्ध इक्कीस वर्ष तक चलता रहा।

हम यहाँ इसके असाधारण घटना-क्रम का अनुसरण करने का अथवा चार्ल्स द्वादश की अविश्वसनीय उपलब्धियों के वर्णन करने का प्रयास नहीं कर सकते। उसने डेनमार्क को एक ही प्रहार में कुचल दिया। उसने महान् पीटर की ६० हजार सेना को नार्वा में इसके आठवें भाग की संख्या रखने वाली अपनी सेना से पराजित किया (१७०० ई०), उसने सारे पोलैण्ड पर हमला किया, उसे जीत लिया और वहाँ एक पोलिश कुलीन सरदार

---

१. एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ९ तथा २६ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५५-५६ के नक्शे देखिए।

२. हीरोज ऑफ दि नेशन्स सीरीज में आर० निसबत बेन ने चार्ल्स द्वादश की एक जीवनी लिखी है।

स्टेनिसलास लेस्कजिन्सकी को अपनी ओर से राजा बनाया (१७०४ ई०)। उसने बारी-बारी से रूस और सेक्सनी पर हमला किया। मर्लबरो के ड्यूक को स्वयमेव सैक्सनी की यात्रा इसलिए करनी पड़ी कि वह लुई १४वें के विरुद्ध युद्ध में २५ वर्ष के इस विस्मयजनक तरुण की तटस्थता को प्राप्त कर सके। उसने पहले किसी भी समय की अपेक्षा स्वीडन को अधिक ऊँची स्थिति तक उन्नत किया, यदि वह इस समय सन्धि करने में सन्तुष्ट हो जाता तो यूरोप का इतिहास भिन्न प्रकार का हो सकता था, क्योंकि यदि अन्य किसी बात का उल्लेख न किया जाय तो भी पोलैण्ड विनाश से बच जाता। दुर्भाग्यवश, चार्ल्स ने रूस के मध्य भाग में एक खतरनाक लड़ाई में अपने को खिचता चला जाने दिया, यहाँ पल्टावा की लड़ाई में (१७०९ ई०) वीर किन्तु थके हुए स्वीड लोग हरा दिये। चार्ल्स को टर्की में शरण लेनी पड़ी, यहाँ उसने तुर्को को रूसियों पर हमला करने के लिए उभाड़ा, उसका यह परिणाम हुआ कि उन्होने आज़ोफ को पुनः प्राप्त कर लिया।

पल्टावा की पराजय ने एकदम उस विरोधी संघ को पुनरुज्जीवित कर दिया, जो चार्ल्स द्वादश की आरम्भिक सफलताओं से टूट गया था। टर्की में उसकी अनुपस्थिति के समय डेन लोगों ने स्वीडन पर आक्रमण किया, किन्तु उन्हें बहुत कम सफलता मिली। पोलैण्ड में राजा स्टेनिसलास असहाय हो गया। सैक्सनी में आगस्टस का विदेशी और विपत्तिजनक शासन पुनः स्थापित किया गया। महान् पीटर ने बाल्टिक प्रान्तों को जीत लिया, ये प्रान्त १९१७ ई० तक रूसी साम्राज्य के कभी चुनौती न दिये जाने वाले हिस्से बने रहे। पीटर ने फिनलैंड भी जीता। इसे उसको शीघ्र ही वापस करना पड़ा। रूस बाल्टिक सागर पर खुले समुद्र तक पहुँच गया। पीटर ने पीट्रोग्राड का निर्माण आरम्भ किया। "यह ऐसी आँख" थी जिससे रूस यूरोप को देखता था।

स्वीड उस समय शत्रुओं की एक मण्डली के विरुद्ध अपना युद्ध कर रहे थे, जब जार्ज प्रथम ब्रिटिश राजगद्दी पर बैठा। इससे कुछ समय पहले जार्ज हनोवर के इलेक्टर के रूप मे क्रियात्मक रूप से स्वीडन के विरुद्ध संघ में इसलिए सम्मिलित हुआ कि वह ब्रेमन और बर्डन के बिशप-पदों पर अधिकार पा सके। इन पर स्वीडन का अधिकार तीस वर्षीय युद्ध से चला आ रहा था। इस प्रकार ब्रिटेन ने अपने को अपने राजा के महाद्वीपीय प्रदेशों के कारण उत्तरी युद्ध मे उलझा हुआ पाया, इस पर उसका कोई नियन्त्रण नही था। युवा वीर चार्ल्स द्वादश इग्लैंण्ड मे जार्ज के उतरने के कुछ सप्ताह बाद जब अपनी मातृभूमि की प्रतिरक्षा का सचालन करने के लिए टर्की में निर्वासन के बाद वापस लौटा तो वह स्वाभाविक और अनिवार्य रूप से जैकोबाइट दल का समर्थक बन गया। उसने इंग्लैण्ड में सेना उतारने के लिए अपनी सहायता का वचन दिया, यह सहायता सम्भवतः १७१८ ई० में उसकी मृत्यु हो जाने के कारण नहीं दी जा सकी।

१७१५ ई० में स्वीडन के जलदस्यु बाल्टिक सागर में बड़ी संख्या में ब्रिटिश जहाजों को पकड़ने लगे, इन समुद्रों में व्यापारिक हितों के संरक्षण के लिए ब्रिटिश बेड़े भेजने पड़े, इनकी उपस्थिति मात्र ने ही अभागे स्वीडन के विरुद्ध युद्ध का पलड़ा भारी कर दिया। ये

घटनाएँ इस बात को प्रदर्शित करती हैं कि हनोवर के साथ स्थापित शृंखला से बनाये गये सम्बन्ध कितने कठिन थे। हनोवर की नीति पर ब्रिटिश सरकार और पार्लियामेण्ट कोई नियन्त्रण नहीं रख सकते थे। ये घटनाएँ हनोवरवंश के उत्तराधिकार के प्रति बोलिंगब्रोक के विरोध को न्यायोचित सिद्ध करती हुई प्रतीत होती थीं। ऐसी परिस्थितियों में वास्तविक तटस्थता बनाये रखना कठिन था, यद्यपि ह्विग मन्त्रियों ने यदि सम्भव हो तो स्वीडन के साथ लड़ाई से बचने का निश्चय किया हुआ था, तथापि उन्होंने अपने को बड़ी कठिनाई में पड़ा हुआ पाया। चार्ल्स द्वादश की मृत्यु के बाद, वस्तुतः ब्रिटेन स्वीडन का पक्षपाती था। रूस के आक्रमण के खतरे से स्टाकहोल्म की रक्षा के लिए एक ब्रिटिश बेड़ा स्वीडिश वेड़े के साथ मिल गया और कुछ समय के लिए रूस के साथ युद्ध की भी सम्भावना थी। केवल ब्रिटिश नौसेना के भय ने महान् पीटर को समझदार होने के लिए बाधित किया। प्रधान रूप से ब्रिटिश मध्यस्थता के कारण ही ऐसा हुआ कि स्वीडन अपनी शत्रु-मण्डली के राज्यों के साथ एक-एक करके कई सन्धियाँ करने में समर्थ हुआ, इनमें अन्तिम सन्धि **निस्टाट** (१७२१ ई०) की थी, इससे बाल्टिक सागर के तटवर्ती प्रान्त औपचारिक रीति से रूस को प्रदान किये गये। यह सन्धि उस समय को सूचित करने वाली कही जा सकती है, जब कि एक शताब्दी तक महत्व रखने के बाद स्वीडन तीसरे दर्जे की शक्ति बन गया।

निस्टाट की सन्धि ने प्रथम कोटि की शक्ति के रूप में रूस के आविर्भाव को सूचित किया, और इसके बाद से वह विशाल अर्द्ध-बर्बर राज्य यूरोपियन मामलों में सदैव एक महत्वपूर्ण तत्व समझा जाने लगा। यह अपने आप में एक अतीव महत्व रखने वाला तथ्य था। विशेष रूप से, इसका महत्व स्वीडन के पतन तथा पोलैण्ड की अत्यधिक निर्बलता और असंगठन के साथ मिल कर अधिक हो जाता था, क्योंकि ये दोनों राज्य रूस को नियन्त्रण में रख सकते थे। ये घटनाएँ यूरोप के लिए तथा ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिए गम्भीरतम चिन्ता का विषय थीं। किन्तु इसी समय इन घटनाओं को ब्रिटेन के लिए जिस बात ने महत्वपूर्ण बनाया, वह यह थी कि इन घटनाओं ने यह प्रदर्शित किया कि अब उसे यूरोपियन मामलों में कितना अधिक उलझा रहना होगा। इन्होंने समुद्री शक्ति के अत्यधिक महत्व को भी प्रदर्शित किया। इस शक्ति की उपस्थिति मात्र ने बिना किसी शस्त्र प्रयोग के, पहले चार्ल्स द्वादश द्वारा जैकोबाइट लोगों को सहायता देने की योजना को रोक दिया, बाद में इसी ने पीटर को स्वाभाविक रूप से प्रदर्शित की जाने वाली अपनी मृदुता की अपेक्षा अधिक नरमी से कार्य करने के लिए बाधित किया। अन्त में इन घटनाओं ने यह भी प्रदर्शित किया कि हनोवर के साथ सम्बन्ध के कारण ब्रिटिश नीति में किस प्रकार अड़ंगा डाला जा सकता है और इसे कितना जटिल बनाया जा सकता है।

३. शान्ति को बनायें रखनें के लिए फ्रेंको-ब्रिटिश सन्धि

इसी बीच में पश्चिम में और दक्षिण में लुई १४वें की मृत्यु के कारण राजनीतिक स्थिति परिवर्तित हो गयी। यूट्रेक्ट के विश्व में शान्ति लाने वाले समझौते से ऐसी नयी

समस्याएँ और कठिनाइयाँ उत्पन्न हुईं, जिन्होंने यूरोप को युद्ध के कगार पर खड़ा कर दिया। महाद्वीप की शक्तियों का सन्तुलन अनिश्चित था। उस युग के राजनीतिज्ञों के निर्णय के अनुसार शान्ति "शक्ति" के सन्तुलन पर [illegible] और सावधानी से ध्यान देने से ही बनायी रखी जा सकती थी। सम्भवतः उस समय जैसी परिस्थितियाँ थीं, उनमें ये ठीक थे। यूरोप की अव्यवस्था में और अस्वास्थ्यकर दशा में लगभग सभी राज्यों के स्वामी निरंकुश राजाओं के लिए इस बात का प्रबल प्रलोभन था कि वे अपनी शक्ति के विस्तार के लिए सभी अवसरों का लाभ उठायें।

यूट्रेक्ट की सन्धि के पश्चात् इस सन्धि सम्मेलन में भाग लेने वाले एक कूटनीतिज्ञ एब्बे दि सेण्ट पियर ने **स्थायी शान्ति बनाये रखने के लिए सन्धि-योजना** (Project of a Treaty to Secure Parmanent Peace) नामक पुस्तक प्रकाशित की। इसमें उस समय के अनेक सर्वोत्तम व्यक्तियों द्वारा अनुभव किये जाने वाले सतत युद्धों की थकान को अभिव्यक्त किया गया था। सेण्ट पिअरे ने इस बात पर बल दिया कि सब राज्यों को शान्ति बनाये रखने के लिए एक संघ के रूप में सम्मिलित होना चाहिए और इसका साधन राजदूतों का एक स्थायी सम्मेलन होना चाहिए, जो पंच-निर्णय द्वारा सब विवादों का फैसला करे। यह एक उदात्त स्वप्न था। अगले २० वर्षों में इसने एक लम्बे विवाद को आरम्भ किया। इस विवाद में भाग लेते हुए लाइबनित्ज़ वाल्तेयर, रूसो तथा काण्ट जैसे महान् विचारकों ने राष्ट्रों में समझौते द्वारा स्थायी शान्ति बनाये रखने की सम्भावना पर विचार किया। किन्तु उस समय जैसी परिस्थितियाँ थीं, उनमें यह एक स्वप्न से अधिक कुछ नहीं हो सकता था। इसका पहला कारण यह था कि यूरोप के भाग्य का नियन्त्रण करने वाले, छोटे तथा बड़े ४०० निरंकुश राजाओं से यह आशा करना निरर्थक था कि वे कभी इस बात के लिए सहमत होंगे कि उनकी महत्वाकांक्षाएँ एक ऐसी संस्था द्वारा नियन्त्रित की जाँय अथवा यदि यह संस्था बन जाय तो वे इसके साथ ईमानदारी से व्यवहार करेंगे। दूसरा कारण यह था कि ऐसी पद्धति का मूल सिद्धान्त प्रदेशों के वर्तमान बँटवारे को बनाये रखना तथा प्रत्येक निरंकुश राजा को उसकी शक्ति क्षीण होने से बचाये रखना होता, यह वस्तुओं की तत्कालीन अप्राकृतिक दशा को एक अस्वस्थ्यजनक स्थायित्व प्रदान करना होता। उस समय तक कोई "राष्ट्र संघ" नहीं बन सकता था, जब तक राज्यों की सीमाएँ राष्ट्रीय भेदों की प्राकृतिक रेखाओं का अनुसरण न करें। यह उस समय की स्थिति से बहुत दूर की बात थी।

उस समय जैसी परिस्थितियाँ थीं, उनमें शान्ति बनाये रखने का एक मात्र अवसर इस बात में प्रतीत होता था कि 'शक्ति का सन्तुलन' बनाये रखा जाय। इसका यह अर्थ था कि किसी भी शक्ति को यह कल्पना करने से रोका जाय कि यह युद्धों से उत्पन्न होने वाली अव्यवस्था से लाभ उठा सकती है। इस युग के ह्विग राजनीतिज्ञ शक्ति-सन्तुलन में दृढ़ विश्वास रखते थे। यह कहना उचित है कि इसका अनुसरण करते हुए उन्होंने यूरोप

अथवा उसके एक बड़े भाग को शान्ति के एक अधिक लम्बे मध्यान्तर को प्रदान करने में सहायता दी, ऐसे शान्ति का यूरोप ने आधुनिक युग में अभी तक उपभोग नहीं किया था।

लुई १४वें की मृत्यु के बाद उसका उत्तराधिकारी उसका शिशु पोता लुई १५वां था। यह इतना कमजोर बच्चा था कि यह आशा की जा रही थी कि वह मर जायगा। इसके बाद उत्तराधिकार की कठोर परम्परा में अगला उत्तराधिकारी स्पेन के राजा फिलिप पंचम को बनना था। यूट्रेक्ट की सन्धि द्वारा उसको उत्तराधिकार से वंचित कर दिया गया था; किन्तु वह अपने निस्सारण की वैधता को स्वीकार करने से इन्कार करता था। फ्रांस का वास्तविक शासक राजा का संरक्षक ऑर्लियन्स का ड्यूक था, यह लुई १४वें के भाई का वंशज था, इस कारण इसका राजगद्दी पर उस दशा में दावा था, यदि फिलिप को उत्तराधिकार से निस्सारित कर दिया जाय। अत: राजा के संरक्षक का हित इसी बात में था कि यूट्रेक्ट की सन्धि का पालन किया जाना चाहिए। इसी कारण वह ब्रिटेन को मित्र बनाने के लिए तथा सन्धि को बनाये रखने में उसके साथ मिलने के लिए उत्सुक था।

ज्यों ही जैकोबाइट विद्रोह की विफलता ने इस बात को स्पष्ट कर दिया कि नये राजा की राजगद्दी सुरक्षित है, त्यों ही फ्रेंच राजा के संरक्षक ने ब्रिटेन से सन्धि वार्ता आरम्भ कर दी। इसके परिणामस्वरूप यूट्रेक्ट की सन्धि को बनाये रखने के लिए ब्रिटेन, फ्रांस तथा डच लोगों में एक **त्रिराष्ट्र मैत्री सन्धि** (Triple Alliance) सम्पन्न हुई (जनवरी १७१७ ई०)। इस प्रकार फ्रांस और ब्रिटेन में स्थापित हुई मित्रता २० वर्ष तक यूरोप की राजनीति का प्रधान तत्व और शान्ति के संरक्षण का मुख्य साधन बनी रही। यह दोनों पक्षों के लिए समान रूप से लाभदायक थी। इसने फ्रेंच एवं ब्रिटिश व्यापार के उस विलक्षण विकास में सहायता दी, जो इस युग की विशेषता थी। ब्रिटेन और फ्रांस वस्तुत: मिलकर कार्य करते हुए पश्चिमी यूरोप में शान्ति के प्रत्येक सम्भव विक्षोभकारी को रोकने में अथवा उसे भयभीत करने में समर्थ हुए।

फिर भी आरम्भ से इस नीति का विरोध था। यह विशेष रूप से फ्रांस में था। यहाँ 'स्पेन का पक्षपाती दल' सदैव अपनी बात सुनवाने में समर्थ था। प्रत्येक देश में ऐसे व्यक्ति थे, जो यह अनुभव करते थे कि राष्ट्रीय हितों को व्यापार के क्षेत्र में राष्ट्र के प्रमुख प्रतिस्पर्धी के हितों का वशवर्ती बनाया जा रहा है। फ्रांस में जब बालक राजा अपनी निर्बलता पर विजय पाने लगा तो सन्धि का उद्देश्य अधिक निर्बल हो गया, स्पेन के साथ मिलकर लुई १४वें की नीति का पुनरुज्जीवन चाहने वाला दल दरबार में अधिक प्रभावशाली हो गया। फ्रांस और ब्रिटेन के मध्य मैत्रीपूर्ण सहयोग का परीक्षण यद्यपि उपयोगी था, तथापि इसकी सम्भावना नहीं थी कि यह बहुत लम्बे समय तक चलेगा। इन वर्षों में शान्ति में विक्षोभ डालने वाले स्रोत स्पेन और आस्ट्रिया की वे दो शक्तियाँ थीं, जो यूट्रेक्ट के समझौते से असन्तुष्ट थीं। प्रारम्भ में प्रधान विक्षोभ उत्पन्न करने वाला तत्व स्पेन था। लुई १४वें द्वारा लाये गये फ्रेंच प्रशासकों के प्रभाव से उसमें शक्ति का एक वास्तविक पुनरुज्जीवन हुआ था। एक योग्य मन्त्री कार्डिनल एल्बेरोनी के पथ-प्रदर्शन में

वह न केवल अपने व्यापार और उद्योग का निर्माण कर रहा था, अपितु एक नौसेना का भी सृजन कर रहा था और युद्ध के लिए तैयारी कर रहा था। उसका पहला उद्देश्य अपने खोये हुए उन इटालियन प्रदेशों को पुनः प्राप्त करना था, जो १७१३-१४ ई० के समझौते के अनुसार आस्ट्रिया को दे दिये गये थे। किन्तु एल्बेरोनी की महत्वाकांक्षापूर्ण योजनाओं में बड़ी बाधा इस सन्धि-समझौते को बनाये रखने के लिए की गयी ब्रिटेन और फ्रांस की मैत्री-सन्धि थी। उसने फ्रांस में दलबन्दी को उभाड़ने का प्रयत्न किया। उसने इंग्लैण्ड के जैकोबाइट लोगों के उद्देश्य का समर्थन किया, ऑरमाण्ड द्वारा इंग्लैण्ड में सेना उतारने में सहायता देने के लिए एक बड़ा अभियान दल भेजने की तैयारी की। उसने आस्ट्रिया के विरुद्ध तुर्कों को आर्थिक सहायता दी और हंगरी में एक विद्रोह को उभाड़ा। उसने ब्रिटेन पर एक संयुक्त आक्रमण करने के लिए स्वीडन और रूस के दोनों देशों के साथ सन्धि करने का प्रयत्न किया। वह सारे यूरोप को एक अव्यवस्था में डाल देना चाहता था, उसका परिणाम एक सामान्य युद्ध होता।

फ्रेंको-ब्रिटिश सन्धि ने शान्ति में बाधक इन सभी योजनाओं को रोक दिया। त्रिराष्ट्र सन्धि में आस्ट्रिया को सम्मिलित करते हुए इसका विस्तार **चार राष्ट्रों की मैत्री सन्धि** (Qudruple Alliance) के रूप में किया गया (१७१८ ई०) ब्रिटिश मध्यस्थता ने **पासारोवित्स की सन्धि** द्वारा आस्ट्रो-तुर्किश युद्ध की समाप्ति करने में सहायता प्रदान की। जब अपनी योजनाओ पर आग्रह करते हुए एल्बेरोनी ने सिसली पर हमला किया तो एक ब्रिटिश बेड़े ने सिसली के तट से कुछ दूरी पर पेसारो (Passaro) अन्तरीप की लड़ाई में लघु स्पेनिश नौसेना को लगभग नष्ट कर दिया; इसी समय एक फ्रेंच सेना ने स्पेन पर हमला किया। अन्त में एल्बेरोनी को पदच्युत करके (१७१८ ई०) एक समझौता किया गया। इसके अनुसार स्पेन की रानी के बेटे को दो इटालियन डचियाँ दी गयीं और सेवाय के ड्यूक को यह प्रेरणा की गयी कि वह सिसली आस्ट्रिया को दे दे और इसके बदले में सार्डीनिया ले ले, स्पेन के राजमुकुट के लिए हैब्सवर्ग वंश का दावा इस समय तक कभी नहीं छोड़ा गया था, अब अन्तिम रूप से उसका परित्याग कर दिया गया। फ्रेंको-ब्रिटिश सन्धि द्वारा एक सामान्य युद्ध का निवारण किया गया और इटली पर स्पेन के आक्रमण को निरर्थक बनाने वाली ब्रिटिश नौसेना की शक्ति ने भी इस युद्ध के निवारण में सहायता दी।

इस संकट का निवारण होते ही, एक नया संकट उत्पन्न हो गया। स्पेन और आस्ट्रिया—दोनों अब भी असन्तुष्ट थे। स्पेन इस बात पर क्रुद्ध था कि जिब्राल्टर और मिनोरका पर ब्रिटेन का अधिकार था। आस्ट्रिया उस व्यवस्था से रुष्ट था, जिसके अनुसार यूट्रेक्ट की सन्धि से आस्ट्रिया के अधिकार में आने वाले नीदरलैण्ड्स के प्रमुख अवरोध (Barrier) नगरों में डच सेनाएँ रहती थीं। सम्राट् नीदरलैण्ड्स के विदेशी व्यापार को भी विकसित करने के लिए उत्सुक था, उसने औस्टैण्ड में एक व्यापारिक कम्पनी की स्थापना की थी, इसके कार्यों को इंग्लिश और डच लोग ईर्ष्या की दृष्टि से देख रहे थे।

१७२५ ई० में ऐसे दो बेचैन और पीड़ित राज्य **वियना की सन्धि** द्वारा अकस्मात्

मित्र बन गये, जिनके मतभेदों के कारण लगभग युद्ध होने वाला था। इन मतभेदों को कैम्ब्राई में होने वाले एक यूरोपियन सम्मेलन में बड़े परिश्रमपूर्ण ढंग से सुलझाया जा रहा था। स्पेन ने औस्टैण्ड कम्पनी को वैस्ट इण्डीज में व्यापार के लिए विशेष सुविधाएँ देना स्वीकार कर लिया। आस्ट्रिया ने जिब्राल्टर और मिनोरका की पुर्नविजय में सहायता देना मान लिया। ब्रिटेन कई बार जिब्राल्टर के बारे में सन्धि वार्ता करने के लिए अपनी इच्छा प्रकट कर चुका था, उस समय उसको बहुत कम महत्व दिया जाता था, किन्तु पिस्तौल से इसकी वापसी की माँग को सहन नहीं किया जा सकता था। एक बार पुनः स्पेन ब्रिटेन के विरुद्ध गुटबन्दी का केन्द्र बन गया, जैकोबाइट आक्रमण के लिए विस्तृत योजनाएँ तैयार की गयीं और ब्रिटेन के साथ सन्धि का विरोधी दल पुनः क्रियाशील हो गया। १७२६-२७ ई० में यूरोप की सभी राजधानियों में व्यग्रतापूर्ण, क्रियाशील सन्धिवार्ताएँ चल रही थीं।

किन्तु, फ्रेंको-ब्रिटिश सन्धि बनी रही और (हनोवर की सन्धि में) इसे प्रशिया के साथ एक ऐसे समझौते द्वारा पूर्ण बनाया गया (१७२५ ई०), जिसमें बाद में, डच लोग तथा अन्य शक्तियाँ सम्मिलित हुईं। एक ब्रिटिश बेड़ा पोर्टो बेल्लो से खजाना लाने वाले स्पेन के समुद्री बेड़े को रोकने के लिए भेजा गया, यह बेड़ा जिस खजाने को ला रहा था उसके बिना स्पेन कोई लड़ाई नहीं लड़ सकता था। घेरा डालने वाले समुद्री बेड़े को इसके पाल द्वारा प्रयाण करने को रोकने में सफलता मिली। एक अन्य ब्रिटिश बेड़ा स्पेन के समुद्री तट की गश्त लगाने के लिए भेजा गया। इसी बीच में स्पेनिश लोगों ने जिब्राल्टर पर आक्रमण आरम्भ कर दिया (फरवरी १७२७ ई०)। १७०४ ई० में इस पर अधिकार होने के बाद से इस दुर्ग पर यह दूसरा घेरा था। किन्तु स्थल की ओर से इस पर आक्रमण की सफलता की तब तक कोई आशा नहीं थी, जब तक समुद्रों पर ब्रिटिश बेड़े का आधिपत्य था, चार महीने बाद घेरे को हटा दिया गया। सम्राट् ने यह अनुभव किया कि युद्ध से कोई लाभ नहीं है। वह अपनी शिकायतें एक सम्मेलन को सौंपने के लिए तैयार हो गया। इसने सोइस्सों (Soissons) में इन पर महीनों तक विचार किया। स्पेन फिर भी असन्तुष्ट या विषण्ण बना रहा, यद्यपि अन्त में सेविल में उसने मित्रराष्ट्रों के साथ एक समझौता कर लिया (१७२९ ई०)।

४. फ्रेंको-ब्रिटिश सन्धि का क्रमिक भंग और पोलैण्ड की समस्या

फ्रेन्को-ब्रिटिश सन्धि ने तथा ब्रिटिश समुद्री शक्ति ने एक बार पुनः उस वस्तु के विस्फोट को रोका था, जो एक सामान्य युद्ध के रूप में विकसित हो सकती थी। किन्तु इस सन्धि पर दबाव पड़ने लगा था। यह दबाव ब्रिटेन की नौसैनिक तथा व्यापारिक प्रबलता के कारण पड़ रहा था। यह जिब्राल्टर पर अधिकार के साथ, स्पेन के असन्तोष का प्रधान स्रोत था। ब्रिटेन विनिमय के आधार पर जिब्राल्टर के बारे में सन्धि वार्ता करने के लिए अपनी इच्छा प्रकट करता था; पहले इसके बदले में फ्लोरिडा का सुझाव

दिया गया था। किन्तु स्पेन के लोग ऐसी बात सुनना नहीं चाहते थे; इस बीच में इस पर घरा पड़ने के कारण, जिब्राल्टर ब्रिटिश लोगों के लिए अभिमान की वस्तु बन गया। १७२८ ई० में लार्ड टाउनशेण्ड ने कहा था कि इसे समर्पण करने का कोई भी विचार "सारे राष्ट्र को उभाड़ने के लिए पर्याप्त होगा"।

पहले से ही इस बात के अपशकुन हो रहे थे कि ब्रिटेन की प्रबल समुद्री शक्ति के विरुद्ध सामान्य असन्तोष दो बोर्बोन शक्तियों में मित्रता उत्पन्न करेगा। ब्रिटेन और फ्रांस के बीच की ईर्ष्या पहले से ही तीव्र हो रही थी। दोनों देशों में विरोधी दलों द्वारा इसे उभाड़ा जा रहा था। दोनों सरकारें डनकर्क की किलेबन्दी को नष्ट करने के बारे में झगड़ रहीं थीं। फ्रांस ने यूट्रेक्ट की सन्धि में ऐसा करने का वचन दिया था; वे फ्रांस में अब भी चल रहे प्रॉटेस्टेण्टों के अत्याचार के बारे में भी विवाद कर रहे थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण विवाद मिसीसिपी में फ्रेंच किलों को बनाने के विषय में, १७१४ ई० में फ्रांस द्वारा प्रदान किये गये एकेडिया के प्रान्त की सीमाओं के बारे में तथा वेस्ट इण्डीज के टापुओं के स्वामित्व के बारे में थे। १७३० ई० में दोनों राष्ट्र पंचनिर्णय द्वारा सेण्ट लूशिया के टापू के भाग्य का निर्णय करने के लिए सहमत हो गये। सम्भवतः आधुनिक इतिहास में मतभेदों के निर्णय के लिए इस पद्धति का इस विषय में पहली बार अवलम्बन किया गया था। किन्तु हम अगले अध्याय में देखेंगे कि इस समय ब्रिटेन एवं फ्रांस के व्यापारिक एवं औपनिवेशिक हित तथा ब्रिटेन और स्पेन के भी ऐसे हित इतनी अधिक बातों में टकरा रहे थे कि एक मैत्रीपूर्ण समझौता करना आसान नहीं था। मित्रता और सन्धि का समर्थन करने वाले सर राबर्ट पोल का इंग्लैण्ड में तथा कार्डिनल फ्लूरी का फ्रांस में प्रभाव प्रतिवर्ष कम हो रहा था। प्रतिवर्ष दोनों देशों में साम्राज्यवादी गुट, ब्रिटेन में विलियम पिट और उसके मित्र, फ्रांस में बेल्लीस्ले और उसका गुट अधिक आक्रमणात्मक हो रहे थे।

१७३३ ई० में एक घटना हुई। यद्यपि ऐसा प्रतीत होता था कि पश्चिमी शक्तियों के मामलों के साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं है, तथापि इसने इन प्रवृत्तियों को चरम शिखर पर पहुँचा दिया। पोलैण्ड का राजा सैक्सनी का आगस्टस मर गया : पोलैण्ड की गद्दी के उत्तराधिकार का प्रश्न यूरोप को बेचैन करने लगा। यह कल्पना की जा सकती है कि यह प्रश्न पोल लोगों के निर्णय करने का था और पोलिश राष्ट्रीय भावना स्टेनिसलास-लेस्कजिन्स्की के निर्वाचन के पक्ष में थी। वह स्वीडन के चार्ल्स १२वें के संरक्षण में कुछ समय तक पोलैण्ड की राजगद्दी पर बैठ चुका था। स्वयमेव पोल जाति का होने के कारण लेस्कजिन्स्की का उत्तराधिकार देश की राष्ट्रीय भावना का पुनरुज्जीवन करके विदेशी दरबारों पर अवलम्बित रहने से इसकी रक्षा करके पोलैण्ड को विनाश से बचा सकता था; सभी उत्तम पोलिश देशभक्त उसके समर्थक थे। किन्तु ठीक इसी कारण, पोलैण्ड के महान् पड़ोसी, रूस एवं आस्ट्रिया उसके उत्तराधिकार के विरोधी थे। वे पोलैण्ड को निर्बल एवं असहाय बनाये रखना चाहते थे; उन्होंने पिछले राजा के बेटे सैक्सनी के इलेक्टर आगस्टस तृतीय को इस पद के लिए उम्मीदवार घोषित किया।

यदि फ्रेंको-ब्रिटिश सन्धि सुदृढ़ बनी रहती और यह पोलैण्ड के राष्ट्रीय उम्मीदवार को अपना समर्थन प्रदान करती, तो पोलैण्ड सम्भवतः उस विध्वंस से बच जाता जो विध्वंस बाद में उसे देखना पड़ा। किन्तु ब्रिटेन की भावना यह थी कि पोलैण्ड में ब्रिटिश हितों को कोई खतरा नहीं था। वालपोल ने युद्ध में कोई भाग लेने से इन्कार कर दिया। उसने इस मामले में हस्तक्षेप करने की समर्थक रानी को कहा था—"श्रीमती जी, यूरोप में इस वर्ष ५० हजार व्यक्ति कत्ल किये गये हैं और इनमें एक भी अँग्रेज नहीं है"। यह एक उचित डींग थी, यह शान्तिपूर्ण नीति के लिए एक प्रबलतम युक्ति को सूचित करती थी। फिर भी, एक व्यापक यूरोपियन दृष्टिकोण से इस प्रश्न पर विचार किया जाय तो पोलैण्ड के पुनरुज्जीवन में सहायता करने के पक्ष में कुछ प्रबल युक्तियाँ थीं, इस युद्ध से इसका अन्तिम पतन सुनिश्चित था। यह भी स्पष्ट था कि युद्ध में ब्रिटेन की अनुपस्थिति ब्रिटेन और फ्रांस में शनैः शनैः बढ़ रहे भेद को उग्र बनाने में सहायक होगी।

फ्रांस ने लेस्कजिन्स्की का पक्ष लेने का निर्णय किया। इसका कुछ कारण यह था कि लुई १५वें ने उसकी लड़की के साथ शादी की थी, और कुछ कारण पोलैण्ड में फ्रांस के प्रभाव को आस्ट्रिया के राजवंश के विरुद्ध रोक के रूप में स्थापित करने की इच्छा थी। निःसन्देह यह परम्परागत फ्रेंच नीति थी, आस्ट्रिया पर हमले के कार्य में मित्रों को ढूँढ़ने के लिए फ्रांस स्पेन की ओर मुड़ा। स्पेन पोलैण्ड की कोई परवाह न करते हुए, इटली में आस्ट्रिया के प्रदेशों पर अधिकार करने के लिए उत्सुक था। १७३३ ई० में दो बोर्बोन शक्तियों में एक गुप्त सन्धि की गयी। यह ऐसे तीन समझौतों में पहला समझौता था जिन्हें **'पारिवारिक संविदा'** (Family Compacts) का नाम दिया गया है। दोनों राजाओं ने शाश्वत मित्रता बनाये रखने का वचन दिया, यूरोप में तथा अन्यत्र एक दूसरे के प्रदेशों को सुरक्षित रखने की गारण्टी दी। उन्होंने एक दूसरे को पारस्परिक व्यापारिक रियायतें देने का वचन दिया। उन्होंने अपने सम्बन्धों को प्रभावित करने वाली सभी पुरानी सन्धियों को रद्द कर दिया। इसमें यूट्रेक्ट की सन्धि भी सम्मिलित थी। फ्रांस ने यह वचन दिया कि स्पेन ने इटली में जो प्रदेश जीत लिये हैं, वे सब उसी के पास रहने चाहिएँ। उसने उसे जिब्राल्टर पुनः प्राप्त करने में सहायता देना स्वीकार किया, किन्तु पोलैण्ड के बारे में एक भी शब्द नहीं कहा गया था। स्पष्टतः इस सन्धि का (जो लगभग उसी सुगमता से तोड़ी गयी, जिस सुगमता से इस पर हस्ताक्षर किये गये थे) मुख्य लक्ष्य ब्रिटेन का विरोध करना था। यह उस फ्रेंको-ब्रिटिश मित्रता की वास्तविक समाप्ति को सूचित करती है जिसने अब तक यूरोप में शान्ति को सुरक्षित बनाये रखा था।

पारिवारिक समझौते की शर्तों ने यह प्रदर्शित किया कि फ्रांस वास्तव में पोलैण्ड की चिन्ता बहुत कम करता है। वस्तुतः पोलैण्ड के उत्तराधिकार का युद्ध आस्ट्रिया के विरुद्ध मुख्य रूप से इटली में लड़ा गया। अभागे पोलों को कोई प्रभावशाली सहायता नहीं दी गयी, यद्यपि वे प्रमुख पोलिश बन्दरगाह डैण्टजिक में समुद्र के मार्ग से फ्रांस की सहायता पाने की आशा से एकत्र हुए थे। जब यह सहायता मिली तो इतना विलम्ब हो चुका था कि इससे

कोई लाभ नहीं हुआ। रूस एवं आस्ट्रिया ने अपने उम्मीदवार को पोलिश राजगद्दी पर बिठाया। इसके बाद से पोलैण्ड में रूसी एवं आस्ट्रियन (विशेषत: रूसी) प्रभाव प्रबल हो गया। अब यह देश इसके भावी लुटेरों के सामने असहाय शिकार के रूप में पड़ा हुआ था। १७३५ ई० में जब ब्रिटिश एवं डच लोगों की मध्यस्थता से यह युद्ध समाप्त हुआ तो रूस तथा आस्ट्रिया द्वारा पोलैण्ड की अधीनता को एक सुप्रतिष्ठित तथ्य के रूप में स्वीकार किया गया और अन्तिम सन्धि में महत्त्वपूर्ण व्यवस्थाओं का सम्बन्ध केवल इटली और पश्चिम से था। लुई १५वें ने अपने श्वशुर एवं पोलैण्ड के भूतपूर्व राजा स्टेनिसलास के लिए लोरेन की डची प्राप्त की, इस प्रकार उसके लिए व्यवस्था कर दी गयी और राजवंश के हितों को भी सुरक्षित बना दिया गया। किन्तु पोलैण्ड को भेड़ियों के आगे खुला छोड़ दिया गया। स्टेनिसलास की मृत्यु होने पर (१७६६ ई० में उसकी मृत्यु हुई), लोरेन फ्रांस को मिलना था, अत: फ्रांस ने कुछ वस्तु प्राप्त कर ली। आस्ट्रिया ने नेपल्स और सिसली एक स्पेनिश बोर्बोन राजा को दे दिये; इस प्रकार बोर्बोन वंश वालों को एक तीसरा यूरोपियन राज्य प्राप्त हुआ। इसे उन्होंने इटली का एकीकरण होने तक अपने पास बनाये रखा। आस्ट्रिया को अपने लिए पारमा और पीयासेन्जा की उत्तरी इटली की डचियाँ प्राप्त हुईं और उसे लोरेन के ड्यूक के लिए टस्कनी की डची मिली, इसको आस्ट्रियन प्रदेशों की उत्तराधिकारिणी से शीघ्र ही विवाह करना था। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि सम्राट् का कोई पुरुष उत्तराधिकारी नहीं था और वह कई वर्षों से अपनी पुत्री मेरिया थेरेसा को अपना उत्तराधिकारी बनाने वाली एवं राजाज्ञा-**प्रैग्मेटिक सैंक्शन** (Pragmatic Sanction) के लिए विभिन्न राजाओं के हस्ताक्षर एकत्र कर रहा था। इसमें उसकी पुत्री मेरिया थेरेसा को उसके सब प्रदेशों का उत्तराधिकार देने की गारण्टी की गयी थी, उसने इस पर फ्रांस और स्पेन के राजाओं के हस्ताक्षर करवाये थे। इससे पहले वह लगभग प्रत्येक यूरोपियन शक्ति के इस पर हस्ताक्षर करवा चुका था। प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्न था।

किन्तु पोलैण्ड का विनाश निश्चित था और अब तक यूरोपियन मित्रों के जिस गुट ने एक अशान्त शान्ति को सुरक्षित बनाये रखा था, वह गुट टूट गया था। स्पेन तथा फ्रांस ब्रिटेन के साथ समुद्री और औपनिवेशिक आधिपत्य प्राप्त करने के लिए एक महान् संघर्ष में अपनी सेनाओं को संयुक्त करने की तैयारी कर रहे थे। शक्ति के बेचैन और अनिश्चित सन्तुलन का युग समाप्त हो चुका था; गैर यूरोपियन जगत् में नेतृत्व के लिए संघर्ष आरम्भ होने वाला था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

The period is covered by **A. Hassall**, The Balance of Power, See also **Mahan,** Influence of Sea-Power upon History; **Chance,** George I, and the Northern War; **Nisbet Bain,** Scandinavia, Charles XII, The

First Romanovs, and Pupils of Peter the Great; **Waliszewski**, Peter the Great (Eng. Trans); **Rambaud,** History of Russia (Eng. Trans.), **Lane-Poole,** Turkey; **Hume,** Spain; **Armstrong,** Elizabeth Farnese; **Acton**'s lecture on the 'Hanoverian succession' in Lectures on Modern History. **B. Williams,** Stanhope and The Whig Supremacy; **A McC. Wilson,** French Foreign Policy of Cardinal Fleury 1726-43; **R. Lodge,** Studies in Eighteenth Century Diplomacy 1740-48.

• •

३

व्यापारिक तथा औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा

(१७१४-१७३९ ई०)

१. उष्ण कटिबन्धीय देशों के साथ व्यापार से अत्यधिक आशाएँ

हम पिछले अध्याय में यह देख चुके हैं कि व्यापारिक और औपनिवेशिक ईर्ष्याएँ एक ओर ब्रिटेन में तथा दूसरी ओर स्पेन और फ्रांस के दोनों देशों में एक निरन्तर बढ़ने वाले संघर्ष को उत्पन्न कर रही थीं। चूँकि ये ईर्ष्याएँ शीघ्र ही एक महान् एवं विश्वव्यापी संघर्ष को उत्पन्न करने वाली थीं; अतः यह आवश्यक है कि इनके कारणों को तथा इसके विकास को समझ लिया जाय।

लुई १४वें के विरुद्ध संघर्ष की समाप्ति पर यूरोप के लिए इससे अधिक स्पष्ट कोई बात नहीं थी कि विदेशी व्यापार एक राष्ट्र के लिए सम्पत्ति एवं शक्ति का अक्षय स्रोत था। सब को यह बात बिलकुल स्पष्ट प्रतीत होती थी कि समुद्री शक्तियों की और विशेषतः इंग्लैण्ड की विजय पाने की स्थिति का प्रधान कारण मुख्य रूप से यही था। पिछले युग की अपेक्षा इस युग में और भी अधिक आतुरता से यूरोपियन राष्ट्र समुद्र पार के देशों के साथ व्यापार से प्राप्त की जा सकने वाली सम्पत्ति को पाने में लग गये। हम पहले देख चुके हैं कि सम्राट् ने इस प्रकार इस सम्पत्ति का कुछ अंश पाने की आशा से ओस्टेण्ड कम्पनी (Ostend Company) को आरम्भ किया था। एसियण्टो (Asiento) के परिशिष्ट सहित यूट्रेक्ट की सन्धि (Treaty of Utrecht) से १७२५ ई० की स्पेन और आस्ट्रिया की सन्धि और

लगभग उसी समय में, इसी प्रकार के सट्टे का पागलपन इंग्लैण्ड में भड़क उठा इसका कारण जॉन ला की योजना से कहीं कम महत्वाकांक्षापूर्ण योजना थी, किन्तु यह, उसकी योजना के समान उष्ण कटिबन्धीय व्यापार से प्राप्त किये जाने वाले मुनाफे के एक पूर्णरूप से कल्पित विचार पर आधारित थी। रानी एन के राज्यकाल में टोरियों ने **साऊथ सी कम्पनी** (South Sea Company) की स्थापना कुछ तो इस कारण की थी कि यह अल्पकालीन परिवर्तनशील ऋण की एक बड़ी मात्रा ले लेगी और इसका कुछ कारण यह था कि बैंक ऑफ इंग्लैण्ड के मुकाबले यह एक पासंग या धड़ा प्रस्तुत करने वाली थी। १७२० ई० में कम्पनी ने यह प्रस्ताव रखा कि वह राष्ट्रीय ऋण के अधिकांश भाग को ले लेगी और इस पर वह सरकार से कम ब्याज की दर लेना स्वीकार कर लेगी, या तो वह साऊथ सी कम्पनी की पूँजी राष्ट्रीय ऋण देने वालों को दे देगी अथवा उनके हिस्से खरीद लेगी। यह व्यवस्था निःसन्देह सरकार के लिए लाभप्रद थी, क्योंकि इसने ऋण पर ब्याज के भार को बहुत अधिक घटा दिया था। किन्तु आश्चर्यजनक बात यह थी कि प्रत्येक व्यक्ति साऊथ सी कम्पनी के हिस्से प्राप्त करने के लिए अत्यधिक उत्सुक हो गया। इसका कुछ कारण तो यह था कि उस समय यह विचार प्रचलित था कि सार्वजनिक साख के बारे में कोई जादू की-सी बात है और कुछ कारण साऊथ सी कम्पनी के व्यापार से प्राप्त होने वाले लाभों के बारे में सार्वभौम रूप से अतिरंजित विचार था। वास्तव में यह व्यापार सम्भवतः इतना अधिक मुनाफा नहीं दे सकता था, जिससे ऋण पर ब्याज की ऊँची और नीची दर के के अन्तर को पूरा किया जा सके, इस बात की तो इससे भी कम सम्भावना थी कि साऊथ सी कम्पनी की पूँजी में हिस्सा लेने वाले उन ऋणदाताओं को अतिरिक्त लाभ दिया जा सके। फिर भी कुछ समय तक साऊथ सी कम्पनी के हिस्सों की कीमत इसके मूल्य के दस गुने तक चढ़ गयी और कम्पनी ने ५० फीसदी लाभांश (Dividend) देने का वचन दिया। इस प्रकार आरम्भ हुआ सट्टे का यह पागलपन अन्य सभी क्षेत्रों में फैल गया, अनेक क्षणभंगुर कम्पनियाँ अधिकतम बेहूदा प्रयोजनों के लिए शुरू कर दी गयी। इसका केवल एक ही परिणाम हो सकता था; वह भीषण था, वह इस योजना के चालू करने के कुछ महीनों के भीतर ही उत्पन्न हो गया। हजारों लोग बरबाद हो गये, कुछ लोगों ने इस सट्टे से भारी लाभ उठाया। पार्लियामेण्ट को यह मामला अपने हाथ में लेना पड़ा और सर राबर्ट पोल ने इस समस्या के समाधान में प्रदर्शित किये गये चातुर्य से कीर्ति कमायी।

इन योजनाओं की विस्तृत बातों से हमारा सम्बन्ध नहीं है। न तो ला की योजनाओं ने और न **दक्षिणी सागर के बुलबुले** (South Sea Bubble) ने व्यापार पर कोई स्थायी प्रभाव इस बात के अतिरिक्त डाला कि सम्भवतः इसने कुछ व्यक्तियों को सावधान रहने की शिक्षा दी। ये बातें प्रदर्शित करती हैं कि यह पीढ़ी धन कमाने के लिए कितनी उत्कण्ठित थी और इसे कितना अधिक यह विश्वास था कि औपनिवेशिक और उष्ण कटिबन्धीय व्यापार से कितनी अधिक विशाल धनराशियाँ कमायी जा सकती हैं। जनता के इस प्रकार के विश्वास का एक बड़ा औचित्य भी था क्योंकि निःसन्देह समुद्र पार के व्यापार से

१७३३ ई० के पारिवारिक संविदा (Family Contract) तक प्रत्येक सन्धि में वार्ता के कुछ मुख्य विषय उष्ण कटिबन्धीय व्यापार के लिए अवसर प्राप्त करना था। उस समय मनुष्यों का लक्ष्य प्रदेश पाना नहीं, किन्तु व्यापार था; इस युग में न्यूअर्लियन्स में फ्रेंच बस्ती के (१७१७ ई०) और जार्जिया के इंग्लिश उपनिवेश (१७३३ ई०) के अपवाद को छोड़ कर किसी भी शक्ति ने कोई नया उपनिवेश नहीं स्थापित किया।

उष्ण कटिबन्धीय देशों के साथ व्यापार (Tropical Trade) से कमाये जा सकने वाले लाभ की धनराशि के सम्बन्ध में अतीव अतिरंजित विचार रखे जाते थे। ये विचार उस साक्षी से पुष्ट और प्रोत्साहित हुए थे, जिसे पिछली पीढ़ी ने उस पद्धति के सम्बन्ध में प्रस्तुत किया था, जिसके द्वारा पूंजी के संगठित एवं सहयोगपूर्ण उपभोग तथा राष्ट्रीय साख के प्रयोग द्वारा सम्पत्ति उत्पन्न की जा सकती थी। हम पहले ही देख चुके हैं कि किस प्रकार बैंक ऑफ इंग्लैण्ड (Bank of England) ने तथा महान् व्यापारिक कम्पनियों ने ब्रिटेन को महायुद्ध का भार [illegible] वहन करने में समर्थ बनाया था, उसने इसी समय में अपने व्यापारिक कार्यकलापों का अत्यधिक विस्तार किया था। दूसरे देशों में, विशेषत: हालैण्ड में, इन्हीं पद्धतियों का अनुसरण किया गया। मनुष्य पूंजी और साख की शक्ति का अन्वेषण कर रहे थे और (हमारे युग के अनेक व्यक्तियों की भाँति) वे इन्हें एक प्रकार के इन्द्रजाल से अथवा जादू के गुण से सम्पन्न समझते थे। वे यह मानते थे कि इनमें स्वयमेव धन कमाने की शक्ति है। वे यह नहीं समझते थे कि उपयोग के लिए उपलब्ध हो सकने वाली वांछनीय वस्तुओं के बनाने में किये जाने वाले श्रम के व्यय द्वारा ही सम्पत्ति को बढ़ाया जा सकता है, पूंजी तथा साख सम्पति को केवल वहीं तक बढ़ा सकते हैं, जहाँ तक वे इस प्रक्रिया में सहायता देते हैं।

इन अतिरंजित विचारों के कारण, १८वीं शताब्दी का आरम्भिक भाग, विशेष रूप से फ्रांस और इंग्लैण्ड में अन्धाधुन्ध सट्टे का युग था; यद्यपि सट्टे का पागलपन व्यापार एवं उद्योग के समूचे क्षेत्र में फैला हुआ था, तथापि यह उष्ण कटिबन्धीय व्यापारिक कार्यों के सम्बन्ध में सबसे अधिक अनियन्त्रित था। फ्रांस में एक उज्ज्वल आशावादी स्काट व्यक्ति, जान ला ने फ्रांस के तथा उसके उपनिवेशों के समूचे वैदेशिक व्यापार को एक महान् कम्पनी के नियन्त्रण में लाने के लिए एक धूमधड़ाके वाली योजना बनायी, इस कम्पनी को एक महान् राष्ट्रीय बैंक-संगठन के साथ जोड़ा जाना था और दोनों को मिल कर राज्य को राष्ट्रीय ऋण के समूचे भार से मुक्त करना था और करों की वसूली का काम अपने ऊपर लेना था। ईस्ट और वैस्ट इण्डीज से तथा (१७१७ ई० में स्थापित) लुइसियाना के नवीन उपनिवेश से अत्यधिक मुनाफे की आशा रखने के कारण लोग इन योजनाओं में अत्यधिक धनराशि लगाने लगे। किन्तु व्यापार सम्भवत: इन आशाओं को पूरा करने के लिए आवश्यक मुनाफे नही दे सकता था। यद्यपि ला ने अपनी पद्धति को क्रियान्वित करते हुए अनेक उपयोगी आर्थिक सुधार किये, ऋण के राष्ट्रीय भार को बहुत अधिक घटा दिया, विदेशों में फ्रांस के व्यापार को विलक्षण प्रोत्साहन प्रदान किया, तथापि उसकी योजनाओं की समाप्ति एक भीषण वित्तीय धमाके के साथ हुई।

इस युग में कमायी गयी सम्पत्ति अतुलनीय रीति से उससे कहीं अधिक थी, जैसी सम्पत्ति पहले कभी इस व्यापार से कमायी गयी थी।

२. उष्ण कटिबन्धीय व्यापार के प्रमुख क्षेत्र; दासों का व्यापार और महान् त्रिकोण

सुदूर पूर्वीय व्यापार में अब तक डचों की प्रभुता थी। अन्य पश्चिमी राष्ट्रों ने मलक्का के जल डमरु मध्य से आगे व्यापार बहुत कम किया था। भारतीय व्यापार में सब राष्ट्रों का हिस्सा था। निःसन्देह यह वर्तमान क्रियाशीलता का युग था, यद्यपि भारत में होने वाली राजनीतिक अव्यवस्था से इसमें बाधा पड़ रही थी। ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने विशेष रूप से मुगल सम्राट् के साथ तथा बंगाल का शासन करने वाले नवाब के साथ एक अतीव लाभदायक व्यवस्था की, इसके अनुसार निर्यात के लिए भेजे जाने वाले उनके सारे माल को बंगाल में चुंगी से मुक्त कर दिया (१७१७ ई०)। इसके परिणाम-स्वरूप कलकत्ते में उनकी बस्ती एक गाँव से बढ़ कर एक लाख व्यक्तियों का उन्नतिशील शहर बन गयी। इसके लगभग सभी निवासी निःसन्देह भारतीय थे। ला की योजना की विफलता के बाद पुनः संगठित फ्रेंच ईस्ट इण्डिया कम्पनी (French East India Company) भी लाभदायक व्यवसाय कर रही थी। यह स्थिति विशेष रूप से इस युग के पिछले भाग में थी, यद्यपि यह इंग्लिश कम्पनी के साथ होड़ करने में असमर्थ थी। यह युग समृद्धि का था, फिर भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी का व्यापार ब्रिटेन और फ्रांस में धन की किसी बड़ी धारा को अब तक नहीं ला रहा था। वस्तुतः जैसा कि हम देख चुके हैं कि इंग्लैण्ड में इसे बड़े अविश्वास की दृष्टि से देखा जाता था, क्योंकि उस समय भारत की मण्डी में यूरोपियन माल की अभी तक कोई बड़ी बिक्री न होने के कारण यूरोप ले जाये जाने वाले भारतीय माल का मूल्य बड़ी मात्रा में सोने और चाँदी में चुकाना पड़ता था। वस्तुतः पहले की भाँति उस समय भी भारत मूल्यवान धातुओं के लिए एक स्पन्ज के समान था। यह स्पन्ज सोने-चाँदी को केवल इसलिए चूस लेता था कि वह उनका संचय करे और उन्हें जमीन में गाड़ दे। इस प्रकार वह अपनी संचित सम्पत्ति का कोई उपयोग नयी सम्पत्ति के निर्माण के लिए नहीं करता था। यह इस बात का एक कारण है कि सम्पत्ति के अपने महान् स्रोत के बावजूद भी, भारत क्यों एक दरिद्र देश था और वह अब भी क्यों एक दरिद्र देश है।

अतः, इस युग में पूर्वी व्यापार किसी बड़ी मात्रा में यूरोप को सम्पत्ति प्राप्त करने के सपनों से उत्तेजित नहीं कर रहा था। किन्तु ऐसा करने वाला मुख्य रूप से वह व्यापार था, जिसे हम अटलाण्टिक महासागर का व्यापार कह सकते हैं। वैस्ट इण्डीज के टापू सदा वृद्धिशील परिमाणों में चीनी, रुई और तम्बाकू पैदा कर रहे थे, किन्तु ये मुख्य रूप से चीनी पैदा करते थे। सारा यूरोप ऊँचे दामों पर चीनी खरीदने के लिए उत्सुक था। यह मुख्य रूप से इंग्लिश और फ्रेंच लोगों की हस्तोद्योग द्वारा निर्मित वस्तुओं से

लोगों के दासों का व्यापार करने के अड्डे थे।[१] पश्चिमी अफ्रीका में बस्ती बसाने का अथवा प्रशासन करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था। जनजातियों के मुखिया समुद्र तट पर दासों को लाया करते थे। ये मुखिया यूरोपियन व्यापारियों की माँगों को पूरा करने के लिए महाद्वीप के भीतरी भाग में दास पकड़ने के हमले संगठित करके अपनी आजीविका कमाया करते थे। अफ्रीका के भीतरी प्रदेश के विशाल क्षेत्रों पर इस घृणित पद्धति द्वारा थोपे जाने वाले कष्टों की मात्रा का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन करना असम्भव है। फिर भी किसी को इस व्यापार के बारे में किसी प्रकार के मनस्ताप की या आत्मग्लानि की अनुभूति नहीं थी। सब राष्ट्र इसे पूर्ण रूप से वैध समझते थे, अमेरिकन बस्तियों को बनाये रखने के लिए इसे पूर्ण रूप से आवश्यक मानते थे। ब्रिटिश अफ्रीकन कम्पनी के बारे में यह कहा गया था कि वह व्यापारियों द्वारा किसी भी समय में निर्मित सभी कम्पनियों की अपेक्षा इस देश को सब से अधिक लाभ पहुँचाने वाली है। दास-व्यापार की वैधता के सम्बन्ध में सन्देहों के पूर्ण अभाव का यह एक उदाहरण है कि इवेंजेलिकल पुरोहित, कॉपर का मित्र और How sweet the name of Jesus Sounds के तथा अनेक अन्य लोकप्रिय भक्ति-पूर्ण गीतों का रचयिता जॉन न्यूटन अपने धार्मिक परिवर्तन के बाद कई वर्षों तक एक दास ले जाने वाले जहाज का कप्तान था।

१६९८ ई० तक ब्रिटेन के दास-व्यापार का केन्द्र लन्दन था। १८वीं शताब्दी के आरम्भिक भाग में यह प्रधानता ब्रिस्टल के पास चली गयी। किन्तु लगभग १७३० ई० के बाद से लिवरपूल का बढ़ता हुआ बन्दरगाह इस मामले में तेजी से आगे बढ़ा और इस शताब्दी के मध्य तक इसके व्यापारी विश्व में अधिकतम क्रियाशील दास-व्यापारी थे। यह परिवर्तन महत्वपूर्ण था। इसका यह आशय था कि लंकाशायर के शहरों के बढ़ते हुए उद्योग को एक नयी मण्डी मिल रही थी। इस शताब्दी के उत्तरार्ध में लंकाशायर की अत्यधिक समृद्धि का निर्माण करने वाली सम्पत्ति का एक बड़ा भाग दास-व्यापार से तथा इससे सम्बद्ध वैस्ट इन्डीज़ के व्यापार से प्राप्त किया गया था।

सम्भवत: विश्व में, बड़े पैमाने पर, इस व्यापार में लगे हुए यूरोपियन व्यापारियों द्वारा अनुसरण किये जाने वाले **महान् त्रिकोण** (Great Triangle) की अपेक्षा अधिक लाभदायक व्यापार का कोई दूसरा क्षेत्र नहीं था। विशेष रूप से इस व्यापार के लिए बनाये गये शीघ्रगामी जहाजों में ये सस्ते और भड़कीले कपड़ों का, मनकों का, बन्दूकों का और शराब का माल भर कर इन्हें पश्चिमी अफ्रीका ले जाते थे, वे वहाँ इस माल का विनिमय नीग्रो या दास लोगों के मालिक के रूप में अत्यधिक लाभ के साथ करते थे। वे इन दासों को वैस्ट-इण्डीज़ में अथवा अमेरिकन मण्डियों में बहुत ऊंचे दामों में बेचते थे और स्वदेश की मण्डी में सदैव अच्छी माँग रखने वाली वस्तुओं—चीनी, तम्बाकू और रुई से अपने जहाजों को पूरा भर कर वापस लौटते थे। यह वह व्यापार था जिसने

१. पश्चिमी अफ्रीका के नक्शे के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ६४ (सी), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ८९ (सी) देखिए।

दक्षिणी समुद्र के व्यापार को ऐसा रूप दिया, जिससे वह अकल्पनीय विस्तार वाले लाभों को देने वाला व्यापार प्रतीत होने लगा। सब यूरोपियन व्यापारिक राष्ट्रों ने इस बात का प्रयत्न किया कि वे इसमें यथासम्भव एक बड़ा भाग ले सकें।

३. उत्तरी अमेरिका का व्यापार और फ्रेंको-ब्रिटिश प्रतिस्पर्धा

यूरोप और वैस्ट इण्डीज़ तथा पश्चिमी अफ्रीका के बीच में होने वाले व्यापार का कुल परिमाण यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के महाद्वीप के बीच होने वाले व्यापार के परिमाण से बहुत अधिक था। किन्तु अमेरिका के व्यापार में ब्रिटिश व्यापारियों को अन्य प्रतिस्पर्धियों की अपेक्षा अपरिमित लाभ था। इस शताब्दी के मध्य तक तेरह ब्रिटिश उपनिवेशों में लगभग १५ लाख व्यक्ति बस चुके थे। ये सब मुख्य रूप से कच्चा माल पैदा करने में लगे हुए थे, न्यू इंग्लैण्ड में तथा मध्यवर्ती बस्तियों में यह कच्चा माल—इमारती लकड़ी, कोलतार और नौसैनिक सामग्री तथा खेती की पैदावार थी। न्यूयार्क में रैड-इण्डियन लोगों से समूर खरीदे जाते थे। वर्जिनिया और मेरीलैण्ड में तम्बाकू पैदा होता था। दक्षिणी कैरोलिना में चावल उत्पन्न होता था। **नौचालन अधिनियमों** (Navigation Acts) के अनुसार इनमें से अधिकतम मूल्यवान् वस्तुओं का निर्यात केवल ब्रिटेन को किया जा सकता था। यद्यपि इन कानूनों की अवहेलना होती थी, तथापि निःसन्देह औपनिवेशिक उपज का अधिकांश भाग उसी रेखा का अनुसरण करता था, जो इन कानूनों ने निश्चित की थी। इसके अतिरिक्त ये सभी बहुसंख्यक और समृद्ध उपनिवेशवासी अपने द्वारा वांछित हस्तोद्योगों से निर्मित होने वाली लगभग सभी वस्तुएँ ब्रिटेन से खरीदते थे, क्योंकि उनके अपने हस्तोद्योग अभी तक बहुत ही छोटे पैमाने पर थे।

व्यापार के इस महान् परिमाण की तुलना में उत्तरी अमेरिका के फ्रेंच उपनिवेशों की उपज बहुत कम थी। कनाडा के पास क्रियात्मक रूप से समूर के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था, उसकी लघु तथा निर्धन जनसंख्या में फ्रेंच हस्तोद्योगों के माल की माँग बहुत थोड़ी थी। १७१७ ई० में स्थापित हुए लुइसियाना के उपनिवेश ने अपनी राजधानी का नाम न्यू अर्लियन्स फ्रांस के बालक-राजा के संरक्षक (Regent) से प्राप्त किया था। इसने ला द्वारा प्रस्तुत की गयी भीमकाय योजना के समय उज्ज्वल आशाएँ उत्पन्न की थीं, किन्तु इसकी जनसंख्या पाँच हजार से अधिक नहीं थी। यद्यपि फ्रेंच लोग इस युग में मिसीसिपी नदी के साथ-साथ छोटे किले और व्यापारिक अड्डे अमित पौरुष के साथ स्थापित कर रहे थे, तथापि लगभग एक जनशून्य देश में, सैकड़ों मीलों की दूरी पर पृथक् रूप से बसे हुए ये अड्डे बहुत ही कम महत्वपूर्ण व्यापार का आधार बन सकते थे।

इस युग में यद्यपि फ्रेंच लोग उत्तरी अमेरिका से बहुत कम मुनाफा प्राप्त कर रहे थे, तथापि वे साम्राज्य के विकास के एक महान् भविष्य को स्पष्ट करने वाली अधिक क्रियाशीलता प्रदर्शित कर रहे थे। उनके पास यातायात के दो प्रमुख स्वाभाविक मार्ग थे, ये अमेरिका के महाद्वीप के भीतरी भाग को खोलते थे। इनमें से एक मार्ग सेण्ट लारेन्स नदी का और महान् झीलों का था। यह स्थूल रूप से पूर्व से पश्चिम को जाने

वाला मार्ग था और दूसरा मार्ग मिसीसिपी और मिसूरी नदियों का था। यह स्थूल रूप से उत्तर से दक्षिण को जाने वाला मार्ग था।[1] ये दोनों मार्ग मिशीगन झील और इलीनायस नदी के रास्ते से लगभग मिल जाते थे। वे एक महान् त्रिकोण में उन सब ब्रिटिश उपनिवेशों को घेरे हुए थे, जो तट के साथ लगे हुए थे, ये कहीं भी १०० मील से अधिक गहराई में नहीं फैले हुए थे। ये उपनिवेश एलेगेनीज पर्वतमाला के अव्यवस्थित और वन्य पर्वतीय देश से घिरे हुए थे। यदि फ्रेंच उस ओहियो नदी की घाटी का भी नियन्त्रण पा सकते, जो एलेगेनी पर्वतमाला के पीछे साथ-साथ बहती है और निचली झीलों-इरी और आण्टेरियो को मिसीसिपी के साथ मिलाती है तो ब्रिटिश उपनिवेशों का विस्तार पूर्णरूप से असम्भव हो जाता।

अपने अन्वेषणकर्त्ताओं के साहस के कारण फ्रेंच लोगों ने इस विशाल भौगोलिक विचार को समझ लिया था। न तो इंग्लैण्ड में ब्रिटिश सरकार ने और न ही ब्रिटिश उपनिवेशवासियों ने इसकी कल्पना की थी। किन्तु यह असम्भव था कि फ्रेंच लोगों का अल्प, निर्धन, और विरल रूप से बिखरा हुआ जनसमूह इन अतीव विशाल क्षेत्रों से ब्रिटिश उपनिवेशों के समृद्ध और साहसी आवासकों को स्थायी रूप से बहिष्कृत करने में समर्थ हो सके। इन आवासकों की संख्या अब फ्रेंच लोगों के साथ कम-से-कम बीस और एक के अनुपात से भी अधिक थी। एक बार यदि ब्रिटिश आवासक एलेगेनीज पर्वत माला को पार करने का रास्ता पाना शुरू करें—और इस युग में वे ऐसा करने लगे थे—तो एक संघर्ष अनिवार्य था। इसका निवारण ऐसी सन्धियों से अथवा सौदेबाजियों से नहीं हो सकता था, जो यूरोप में युद्ध को टाल सकती थी।

फ्रांस की स्थिति में एक स्पष्ट निर्बलता यूट्रेक्ट की सन्धि की बिरासत के कारण थी। उसके यातायात का मुख्य मार्ग-सेण्टलारेन्स नदी का प्रवेश द्वार—दोनों ओर से ब्रिटिश प्रदेशों से घिरा हुआ था।[2] इसके एक ओर चिरकाल से विवाद का विषय बने न्यूफाउण्डलैण्ड को अब निश्चित रूप से ब्रिटिश प्रदेश मान लिया गया था। नदी के दूसरी ओर विद्यमान एकेडिया का प्रदेश एक सन्धि द्वारा ब्रिटेन को दे दिया गया था, किन्तु एकेडिया की सीमाएँ कभी निश्चित नहीं की गयी थीं। ब्रिटिश दृष्टिकोण यह था कि इसमें बाद में न्यूब्रंज़विक के उपनिवेश द्वारा अधिकृत प्रदेश भी सम्मिलित था और यह उन मार्गहीन वनों तक विस्तृत था, जो सेण्टलारेन्स तक फैले हुए थे। निःसन्देह, फ्रेंच इस क्षेत्र के विशाल भाग को यह नाम देने के अभ्यस्त थे। ब्रिटिश दृष्टिकोण एकेडिया को सेन्ट क्रोइस (Croise) नदी पर्यन्त उस दूरी तक विस्तीर्ण करना चाहता था, जहाँ न्यूइंग्लैण्ड शुरू होता था;

---

१. नक्शे के लिए एटलस के पाँचवे संस्करण की प्लेट संख्या ५५ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६३ देखिए।

२. नक्शे के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५४ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५२ देखिए।

दूसरी ओर फ्रेंच दृष्टिकोण एकेडिया को नोवास्कोशिया के प्रायद्वीप तक सीमित रखने के पक्ष में था। इस प्रश्न पर अनन्त विवाद था।

इसी बीच में फ्रेंच लोग न्यूफाउण्डलैण्ड और एकेडिया के ब्रिटिश प्रदेशों से उत्पन्न की गयी सामरिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए दो प्रकार से परिश्रम कर रहे थे। उन्होंने १७२० ई० में, केप ब्रेटन टापू पर लुइसबर्ग नाम का एक महान् दुर्ग बनाना आरम्भ किया, यह टापू ब्रिटिश लोगों को दिये गये प्रदेश में सम्मिलित नहीं किया गया था। इस दुर्ग की योजना उस समय के सब से बड़े सैनिक इन्जीनियर वोवान ने तैयार की थी। इसको बनाने में ३० लाख लीवर्स (Livres) का व्यय हुआ था, यह अमेरिका के महाद्वीप में अद्वितीय रूप से सुदृढ़तम दुर्ग था। इसका उद्देश्य सेन्ट लारेन्स के प्रवेश-द्वार को सुरक्षित बनाना था। बाद में फ्रेंच लोगों ने नोवास्कोशिया के स्थल डमरू मध्य पर किले बनाने शुरू किये, इसी बीच में पुरोहितों के माध्यम से उन्होने नोवास्कोशिया के फ्रेंच निवासियों में फ्रांस के प्रति देशभक्ति की भावना को जीवित बनाये रखने के लिए सभी सम्भव प्रयत्न किये और उन्हें यह प्रेरणा दी कि संघर्ष की अवस्था में उनकी निष्ठा फ्रेंच राजा के प्रति है, न कि ब्रिटिश राजा के प्रति।

यह कहना ठीक है कि फ्रेंच लोग अपने प्रतिस्पर्धियों की अपेक्षा भावी संघर्ष की सम्भावना को, वस्तुतः उसकी निश्चितता को देखने में कहीं अधिक सावधान थे। प्रति-दिन यह संघर्ष अधिक अनिवार्य होता जा रहा था। यूरोपियन राजनीति में फ़्रांस और ब्रिटेन के बीच में धीरे-धीरे चौड़ी होने वाली खाई के लिए इस संघर्ष की आशंका उत्तर-दायी थी। इस प्रकार ब्रिटिश विरोधी नीति के लिए स्पेन को विवश करने वाली, उष्ण कटिबन्धीय समुद्रों के प्रदेशों की व्यापारिक प्रतिस्पर्धा ने उत्तरी अमेरिका में फ्रांस और ब्रिटेन के बीच होने वाली औपनिवेशिक प्रतिस्पर्धा के साथ मिल कर बोर्बोन राजाओं के एक स्वाभाविक संघ को उत्पन्न किया और निकट भविष्य में व्यापारिक और औपनिवेशिक प्रभुता के लिए एक अन्तिम महान् संघर्ष को अनिवार्य बना दिया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Cunningham, Growth of English Industry and Commerce; **Meredith**, Economic History of England; **Glynn,** John Law of Lauriston: **Egerton,** British Col nial Policy; **G. L. Beer,** Thc Old Colonial System; **Grant**, History of Canada; **Parkman,** Half-century of Conflict; **Channing,** History of the United States: **Winsor,** Narrative and Critical History; **Lucas,** Historical Geography of the British Colonies; **J. A. Williamson,** Short History of British Expansion; Cambridge History of the British Empire, Vol I; **E. Lipson**, Ecomonic History of England.

• •

४

ह्विग लोगों का शासन

(१७१४-१७३९ ई०)

जार्ज प्रथम १७१४ : जार्ज द्वितीय १७२७ :

जार्ज तृतीय १७६० ई०

१. ह्विग मन्त्रिमण्डल

ह्विग लोगों ने जिस युग में निष्कण्टक प्रभुता का प्रयोग किया, वह युग दो राजाओं के शासन कालों में विस्तीर्ण था। यह उन दो राजाओं के शासनकाल थे, जो ब्रिटेन में अपने को विदेशी अनुभव करते थे और जिनकी राजगद्दी अत्यधिक असुरक्षित थी। इस असुरक्षा के कारण न तो कभी जार्ज प्रथम ने और न जार्ज द्वितीय ने अपने राज्य की आन्तरिक अथवा औपनिवेशिक नीति में हस्तक्षेप करने का साहस किया; केवल वैदेशिक मामलों में, हनोवर के इलेक्टर होने की अपनी स्थिति के कारण उन्होंने ब्रिटिश नीति पर प्रत्यक्ष प्रभाव डाला और यहाँ भी वे बड़ी सावधानी से चले।

राजा की कानूनी शक्तियाँ अब भी बहुत अधिक थीं, आगे चलकर जार्ज तृतीय ने इस बात को प्रदर्शित किया। विशेष रूप से, सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों को नियुक्त करने के अधिकार के विषय में राजा की शक्ति (Patronage) इतनी अधिक थी कि यदि राजा के अपने प्रबल वैयक्तिक विचार हों तो वह शीघ्र ही उसको अनुभव करवा सकता था, किन्तु यदि इन शक्तियों का साहसपूर्ण रीति से प्रयोग किया जाता तो इससे अनिवार्य रूप में पार्लियामेण्ट में तीव्र

आलोचना तथा विरोध उत्पन्न हो जाता, जार्ज तृतीय के समय में ऐसा ही हुआ था। अपनी राजगद्दी असुरक्षित होने की दशा में न तो जार्ज प्रथम और न जार्ज द्वितीय ने इस खतरे को मोल लेने का साहस किया। सभी घरेलू ममलों में उन्होंने अपनी शक्तियों का तथा सरकारी पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति के अपने अधिकार का प्रयोग मन्त्रियों के हाथ में छोड़ दिया। वस्तुतः अब शासकीय सत्ता इस बात तक सीमित हो गयी थी कि राजा ह्विग नेताओं में से उस नाम को चुने, जिसे ये सब अधिकार सौंप दिये जाने चाहिएँ; ऐसा चुनाव करते हुए राजा को अपना चुनाव केवल उन्हीं इने गिने व्यक्तियों तक सीमित रखना पड़ता था, जो सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति करने के राजा के अधिकार की सहायता से कामन्स सभा में बहुमत का निर्माण कर सके। राजा सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति के लिए अपने अधिकार का स्वतन्त्रतापूर्वक प्रयोग करने का साहस नहीं कर सकता था, किन्तु उसे हस्तान्तरित कर सकता था। ऐसा करने का अधिकार चुने गये मन्त्री को उस समय तक सार्वजनिक जीवन पर प्रभुत्व रखने में समर्थ बनाता था, जब तक वह ऐसा कोई कार्य नहीं करता था, जो गम्भीर रूप से लोगों के लिए अप्रिय हो।

प्रधान मन्त्री के पद के लिए कुछ सम्भावित उम्मीदवारों में से किसी एक व्यक्ति को रूमाल फेंक कर चुनने की मामूली शक्ति भी राजा द्वारा मन्त्रियों के स्वतन्त्रतापूर्वक चुनाव करने से बहुत भिन्न थी, किन्तु इसने इन जर्मन राजाओं के नीरस और अधम दरबारों को षड्यन्त्रों से परिपूर्ण बना दिया और उनकी अनाकर्षक रानियाँ प्रतिस्पर्धी राजनीतिज्ञों के लालच से बड़ा लाभ उठाती थीं। इसके अतिरिक्त प्रत्येक राज्यकाल में युवराज या प्रिन्स ऑफ वेल्स के सम्बन्ध अपने पिता के साथ बहुत बुरे होते थे और वह एक प्रकार के विरोधी दरबार को बनाये रखता था। वह उन असन्तुष्ट राजनीतिज्ञों का केन्द्र बन जाता था, जो यह आशा रखते थे कि बाप के बाद बेटा जब राजगद्दी पर बैठेगा तो रूमाल उनकी ओर फेंका जायगा। हनोवर वंश की इस नीरस विशेषता का उस युग की विशेष परिस्थितियों में एक लाभदायक परिणाम हुआ। यह परिणाम अधिक अच्छा था कि विरोधी राजनीतिज्ञ निर्वासित राजवंश के साथ षड्यन्त्र करने की अपेक्षा अपनी आशाओं को राजगद्दी के उत्तराधिकारी पर केन्द्रित करें।

हनोवरवंशी राजा अपनी असुरक्षित स्थिति को जानते थे, इसलिए वे तत्कालीन व्यवस्था को भंग करने से बचने की इच्छा रखते थे; अतः जार्ज प्रथम एवं जार्ज द्वितीय दोनों अपने द्वारा चुने गये मन्त्रियों को दिये जाने वाले समर्थन में विलक्षण रूप से दृढ़ थे। इसलिए उस युग की विशेषता यह है कि उस समय के मन्त्रि-मण्डल काफी लम्बे समय तक अपने पद पर आरूढ़ रहे। १७१४ ई० से सप्त-वर्षीय युद्ध आरम्भ होने के समय—१७५६ ई० तक क्रियात्मक रूप से केवल तीन मन्त्रिमण्डल बदले गये थे। इनमें पहले मन्त्रिमण्डल में स्टेनहोप के व्यक्तित्व का प्राधान्य था। यह मर्लबरो का अनुयायी तथा एक अतीव योग्य सैनिक और राज-नीतिज्ञ था। उसके शासन का मुख्य महत्त्व इस बात में है कि उसने जैकोबाइट खतरे का मुकाबला बड़ी दृढ़ता से किया और ब्रिटिश विदेश नीति की मुख्य दिशाएँ निश्चित कीं। विदेश

नीति में लगभग तीस वर्ष तक प्राधान्य बनाये रखने वाली फ्रांस और ब्रिटेन की मित्रता का अधिकांश श्रेय स्टेनहोप को है।

सौथ सी कम्पनी (South Sea Company) के झगड़े के बीच में ही स्टेनहोप का देहांत हो गया (१७२० ई०)। सर राबर्ट वालपोल ने इस गुत्थी को जिस चतुराई से सुलझाया, उसके कारण उसका इस सर्वोच्च शक्ति का उत्तराधिकारी बनना सुनिश्चित हो गया। उसने बीस वर्ष से भी अधिक समय की अविच्छिन्न अवधि में इस शक्ति को अपने पास बनाये रखा। जार्ज प्रथम की मृत्यु पर एक क्षण के लिए उसका उत्कर्ष खतरे में पड़ गया था। जार्ज द्वितीय जब प्रिन्स आफ़ वेल्स था, उस समय उसके चारों ओर मँडराने वाले विरोधी दल को यह आशा थी कि अब युवराज के राजा बनने पर वालपोल का स्थान वे ले लेंगे। किन्तु अपनी अतीव योग्य पत्नी से पथप्रदर्शन पाते हुए जार्ज द्वितीय ने अपने पुराने मित्रों को निराश कर दिया, वालपोल ने स्पेन के साथ युद्ध छिड़ने के समय तक अपनी शक्ति के पूर्ण एकाधिकार को बनाये रखा। वह इस युद्ध से घृणा करता था, उसने इसका संचालन बुरी तरह से किया, इसी कारण उसका पतन हो गया (१७४२ ई०)।

वालपोल के बाद बनने वाले अगले मन्त्रि-मण्डल की अध्यक्षता पहले लार्ड विलमिंगटन ने की, यद्यपि इस समय विदेशी मामलों का संचालन एक अतीव उज्ज्वल और विनोदी व्यक्ति लार्ड कार्टरेट के हाथों में था। यूरोपियन राजनीति के साथ अपने घनिष्ठ परिचय के कारण यह अपने सभी समकालीन व्यक्तियों में विशिष्ट स्थान रखता था। इसीलिए उसने आस्ट्रियन उत्तराधिकार के युद्ध के आरम्भ में यूरोपियन मामलों की जटिलताओं में ब्रिटेन को पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक गहराई से उलझा दिया। जब एक वर्ष तक अपने पद पर रहने के बाद विलमिंगटन का देहान्त हो गया (१७४३ ई०), तो उसका स्थान व्यक्तियों के अथवा नीतियों के किसी ठोस परिवर्तन के बिना ही, हेनरी पैलहम ने ग्रहण किया और यह १७५४ ई० में अपनी मृत्यु-पर्यन्त अपने पद पर बना रहा। पैलहम के बाद उसका भाई तथा साथी न्यू कैसल का ड्यूक उसका उत्तराधिकारी बना। यह दीर्घजीवी तथा वास्तव में अविच्छिन्न रूप से बना रहने वाला मन्त्रिमण्डल वालपोल की नीति के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया का प्रतिनिधित्व करने वाला समझा जाता था। वस्तुतः यह मुख्य रूप से उसकी पद्धतियों और उद्देश्यों का अनुसरण करता था। यद्यपि इसमें वालपोल द्वारा किसी भी समय में एकत्र किये गये राजनीतिक समूहों की अपेक्षा अधिक विभिन्नता रखने वाले समूह सम्मिलित थे, तथापि पैलहम-बन्धु वस्तुतः वालपोल के शिष्य और उसकी नीति को जारी रखने वाले थे। इस प्रकार इस लम्बे युग के राजनीतिक इतिहास में एक विलक्षण वैविध्य है। ह्विग-गुटों के सभी षड्यन्त्रों और झगड़ों के बावजूद, सिद्धान्त का कोई वास्तविक भेद उस समय तक दृष्टिगोचर नहीं हुआ जब तक सप्तवर्षीय युद्ध के आरम्भ को सूचित करने वाली विपत्तियों के बीच में विलियम पिट के प्रभावशाली व्यक्तित्व ने अल्पतन्त्रीय शासकों को एक ओर नहीं धकेल दिया तथा ब्रिटिश नीति को एक नवीन दिशा नहीं प्रदान की।

२. महान् ह्विग वालपोल तथा उसकी नीति के सिद्धान्त

इस प्रकार वालपोल[1] का लम्बा शासन इस युग के केन्द्रीय भाग का निर्माण करता है और यह ह्विग शासन के गुणों और दोषों को एकदम अतीव स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है। वालपोल कई दृष्टियों से एक इंग्लिश देहाती भद्र पुरुष (Country gentleman) का एक प्रकार था। वह देहाती जीवन का भक्त था और अपनी नार्फोक की जागीर में वह जब भी चला जाता था तो वहाँ वह अन्य किसी भी स्थान की अपेक्षा अधिक प्रसन्न रहता था। वह उत्तम जीवन का शौकीन, कला के सभी मामलों में अभिरुचि न रखने वाला असंस्कृत व्यक्ति (Philistine), विनोदी, उत्तम स्वभावपरक तथा अपने वर्ग के पक्षपातों से परिपूर्ण था। वह एक पक्का ह्विग था, ह्विगों के विचार के अनुकूल स्वतन्त्रता में वास्तविक विश्वास रखता था और यह मानता था कि न्यूनतम सम्भव संघर्ष अथवा विक्षोभ के साथ क्रान्ति के समझौते से तथा प्रोटेस्टेण्ट उत्तराधिकार के संरक्षण द्वारा स्वतन्त्रता को बनाये रखा जा सकता है। वह अपने देश का कल्याण पूर्ण सच्चाई के साथ चाहता था। वह इस कल्याण को शान्ति को बनाये रखने में तथा उद्योग और व्यापार के विस्तार में ही समझता था। वह अतीव महान् व्यावहारिक योग्यता रखने वाला व्यक्ति था। उसकी यह योग्यता विशेष रूप से (वित्त और व्यापार जैसे) ऐसे क्षेत्रों में थी जिनमें कल्पना शक्ति के, सहानुभूति और अन्तर्दृष्टि के उच्चतर गुणों के प्रदर्शन की आवश्यकता नहीं होती है। यह मनुष्यों को, विशेष रूप से उनकी निर्बलताओं को समझने वाला कुशाग्र बुद्धि, पारखी व्यक्ति था; क्योंकि वह कभी आप से बाहर नहीं होता था। अतः उसमें मनुष्यों को व्यवस्थित करने की एक पटुता थी। वह शब्दाडम्बर से पूर्ण रूप से मुक्त था, किन्तु वह उच्च आदर्शों से अनुप्राणित होने में असमर्थ था अथवा वह उच्च आदर्शों से अनुप्राणित व्यक्तियों को समझने का भी सामर्थ्य नहीं रखता था। उस युग के व्यक्तियों की भाँति "उत्साह" (Enthusiasm) के प्रति उसमें एक प्रकार की अवज्ञा पायी जाती थी। दीर्घ दृष्टिकोण, महान् स्वप्न तथा एक महान् उद्देश्य के प्रति समूचे दिल से की जाने वाली साधना उसमें बिल्कुल नहीं थी। उसके लिए धर्म का कोई महत्त्व नहीं था। चर्च उसके लिए जनता को शान्त बनाये रखने का एक सुविधाजनक साधन था (जैसा कि वह उसके प्रतिस्पर्धी बोलिंगब्रोक के लिए था)। वह जिस दुनिया को जानता था, उससे पूर्ण रूप से सन्तुष्ट था और वह इसे सुरक्षित और अविक्षुब्ध रूप में बनाये रखना चाहता था। ऐसा मनुष्य एक राष्ट्रीय नेता नहीं हो सकता, अथवा वह भविष्य की समस्याओं में बहुत दूर तक आगे नहीं देख सकता था। किन्तु वह सामान्य बुद्धि रखने वाले मनुष्यों के विश्वास को प्राप्त करने में प्रशंसनीय रीति से समर्थ था। वह अपने युग का और अपने वर्ग का पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करता था। इसीलिए वह उस समय में स्थिति को सुदृढ़ बनाये रखने की महान् सेवा करने में समर्थ हुआ, जब उसके देश को ठीक इसी वस्तु की आवश्यकता थी और जब अत्यधिक क्रियाशीलता के दो युगों के बीच में निष्क्रियता या जड़ता का एक युग आवश्यक था।

---

१. "बारह इंग्लिश राजनीतिज्ञों की ग्रन्थ माला" में लार्ड मार्लि ने वालपोल की एक अत्युत्तम संक्षिप्त जीवनी लिखी है।

वालपोल की शक्ति लम्बी अवधि तक बने रहने का रहस्य प्रधान रूप से कामन्स सभा को नियन्त्रित करने में उसका चातुर्य था। इसी कारण और अपने विरोधियों के विशाल आरोपों के कारण प्रायः उस पर यह दोष लगाया जाता है कि उसने ब्रिटेन के राजनीतिक जीवन में पूरे पैमाने पर भ्रष्टाचार आरम्भ किया। उसने राजमुकुट के सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति के अधिकार (Patronage of the Crown) का प्रयोग अपना बहुमत बनाये रखने में किया। वह सबसे बड़े ह्विग तथा पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भजने वाले नगरों (Borough) की सीटों का सौदा पटाने में कुशल व्यक्ति—न्यूकेसल के ड्यूक के साथ घनिष्ठ सामंजस्य रखते हुए काम करता रहा। इन मामलों में वह क्रान्ति के बाद होने वाले अपने सभी पूर्ववर्तियों द्वारा स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त किये जाने वाले साधनों का ही केवल उपयोग कर रहा था। उसने इनका उपयोग अधिक चतुराई से और अधिक दृढ़ता से किया। वस्तुतः उस समय की परिस्थितियों में सुदृढ़ सरकार को बनाये रखने के लिए ये साधन आवश्यक थे। इस बात की कोई निश्चित साक्षी नहीं हैं कि उसने कभी किसी व्यक्ति को सीधी घूस दी हो, यद्यपि कुछ उदाहरणों में उसने सम्भवतः ऐसा किया। उसका पतन हो जाने पर उसके विरोधियों ने उसके विरुद्ध मामला तैयार करने का परिश्रम किया, किन्तु वे इसमें पूर्ण रूप से विफल रहे, क्योंकि वालपोल ने कभी भी भ्रष्टाचार के साधनों का जितना प्रयोग किया था, उसकी अपेक्षा उनका प्रयोग अधिक बड़े पैमाने पर पैलहम के मन्त्रिमण्डल द्वारा और इससे भी अधिक जार्ज तृतीय द्वारा किया गया था। मुख्य रूप से कामन्स सभा पर उसका प्रभुत्व इस कारण था कि वह इस संस्था के स्वरूप को बड़ी चतुराई से समझता था और वह ऐसे प्रश्नों के उठाने को बड़ी सावधानी से टालता रहता था, जिन प्रश्नों से झगड़ा पैदा होने की सम्भावना थी। उसका आदर्श अर्थात् वाक्य था Quieta non movere "शान्त पड़े हुए को मत उठाओ।"

अतः उसके लम्बे शासन की मुख्य विशेषता उन सब महान् प्रश्नों का न उठना था, जिनसे सिद्धान्तों का सम्बन्ध था। उस समय वित्त तथा व्यापार के अतिरिक्त अन्य महत्वपूर्ण विषयों पर बहुत कम कानून बनाये गये। ह्विग परम्परागत रूप से धार्मिक सहिष्णुता के समर्थक और डिसेण्टरों (Dissenters) के मित्र थे। फिर भी डिसेण्टरों पर लगी हुई अनहर्ताओं से उन्हें मुक्त करने के लिये कुछ भी नहीं किया गया। स्टेनहोप ने Occasional Conformity Act और Schism Act को रद्द किया था। किन्तु वालपोल ने उस समय इन्हें रद्द करने का भी विरोध किया था। सम्भवतः इसका कारण यह था कि वह धार्मिक संस्कारों का कट्टर पालन करने वाले अथवा हाई चर्च टोरियों (High Church Tories) को नाराज नहीं करना चाहता था। कई बार डिसेण्टरों के परित्राण देने के लिए प्रस्ताव रखे गये, वालपोल ने इनका विरोध किया और इनकी विफलता निश्चित बना दी। उसका सिद्धान्त था कि सोते हुए कुत्तों को लेटा रहने दो (Let sleeping dogs lie)। किन्तु १७२७ ई० के बाद से उसने उन डिसेण्टरों के लिए प्रति वर्ष **दण्डमुक्ति कानून** (Act of Indemnity) पास कराये, जो कानून तोड़ना पसन्द करते थे। यह अन्याय के प्रतिकार का एक भीरुतापूर्ण और खतरनाक ढंग था।

अतः उसका शासन एक कृत्रिम शान्ति का काल था। इंग्लैण्ड शान्त था। जेम्स द्वितीय के पक्षावलम्बियों का मत (Jacobitism) शनैः शनैः समृद्धि के कारण दब रहा था, इस बात को १७४५ ई० में होने वाले विद्रोह ने भविष्य में प्रदर्शित करना था। फिर भी आगे वर्णन किये जाने वाले १७३३ ई० के **"निर्माण कर विधेयक"** (Excise Bill) की उत्तेजना के मूर्खतापूर्ण विस्फोट ने यह प्रदर्शित किया कि कोई गम्भीर विवाद कितनी सुगमता से एक खतरनाक तूफान पैदा कर सकता है। स्काटलैण्ड भी बड़ी बेचैनी के साथ शान्त था और शनैः शनैः एकीकरण का लाभ उठा रहा था। वालपोल ने स्काटलैण्ड की व्यवस्था आर्गिल के ड्यूक के भाई, लार्ड इस्ले से करवायी। उसने निर्वाचनों का संगठन किया और उसे ४५ स्काटिश सदस्यों का तथा १६ स्काटिश लार्डों का स्थायी एवं स्थिर समर्थन प्रदान किया। फिर भी १७३६ ई० में एक लोकप्रिय तस्कर व्यापारी (Smuggler) के प्राण-दण्ड से पोर्टियस के दंगों का प्रचण्ड रोष उत्पन्न हुआ। इन दंगों को केवल इसलिए स्मरण किया जाता है, क्योंकि इस समय कोई और घटना नहीं घट रही थी और स्काट ने अपने एक सर्वोत्तम उपन्यास—दी हार्ट आफ मिडलोथियन (The Heart of Midlothian) का विषय इसी घटना को चुना है। इस दंगे ने यह प्रदर्शित किया कि स्काटलैण्ड में भी उत्तेजना को आसानी से उभाड़ा जा सकता था।

अपनी भीषण पीड़ाओं से पीड़ित होते हुए भी आयरलैण्ड आश्चर्यजनक रीति से शान्त बना रहा। किन्तु १७२३ ई० में एक नवीन तथा अत्यधिक आवश्यक ताम्र मुद्रा पद्धति के अनुसार वुड के अधन्ने के सिक्के (Wood's Half-pence) के प्रचलित होने पर जो उग्र शोर मचाया गया, उसने यह प्रदर्शित किया कि यहाँ भी तूफान बड़ी जल्दी उठ सकते थे। इस घटना का महत्त्व यह था कि स्विफ्ट ने इस अवसर पर ड्रेपियर्स लेटर्स (Drapier's Letters) नामक कृति में अपनी शक्तिशाली लेखनी का प्रयोग किया। इस रचना को उसने वुड के अधन्ने (Half-pence) के बारे में तथ्यों की एक चातुर्यपूर्ण अतिशयोक्ति और विकृति से आरम्भ किया और इसके बाद दमन की उस दुष्ट और अन्यायपूर्ण पद्धति की घोर निन्दा की गई थी, जिससे आयरलैण्ड के व्यापार और उद्योग को नष्ट किया जा रहा था। स्विफ्ट की अन्य पुस्तिकाओं के साथ यह पुस्तिका आयरलैण्ड के साथ किये जाने वाले निर्लज्जतापूर्ण व्यवहार के विरुद्ध प्रभावशाली प्रतिवाद का प्रारम्भ था। "सोने वाले कुत्ते जागृत और उद्बुद्ध होने लगे थे", उन्हें पुनः सोने के लिए शान्त किया जाना आवश्यक था। वालपोल ने वुड के अधन्ने के सिक्के (Half-pence) को फौरन वापस ले लिया। किन्तु वह "दरारों को कागज से बन्द करके" सन्तुष्ट था। उसने आयरिश स्थिति पर विचार करने का अथवा इसका गम्भीरतापूर्वक समाधान करने का कोई प्रयास नहीं किया। उसने क्रान्ति की दमनकारी पद्धति को अपरिवर्तित बनाये रखा और इसे अधिक उग्र भी बनाया। उसके सत्तारूढ़ होने से पहले १७१९ ई० में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने **घोषणात्मक अधिनियम** (Declaratory Act) पास किया था। इसके अनुसार औपचारिक रूप से उसने आयरिश पार्लियामेण्ट के ऊपर आयरलैण्ड के लिए कानून पास करने की अपनी शक्ति का दावा किया था। वालपोल ने इसका कोई विरोध नहीं किया। उसने इस प्रकार दावा की जाने वाली शक्तियों का प्रयोग

किया। उसके लिए समझौते और पुनर्निर्माण की कोई बड़ी तथा राजनीतिज्ञतापूर्ण नीति नहीं थी। राजनीतिज्ञता के सभी बड़े क्षेत्रों में उसकी राजनीतिक बुद्धिमत्ता का सार यह था कि "सोने वाले कुत्तों को लेटा रहने दो", सब मामलों को शान्त बनाये रखो और कोई विशेष बात न करो।

अमेरिका के उपनिवेशों के सम्बन्ध में भी एक अपवाद को छोड़ कर उसकी यही नीति थी। यह एक महत्त्वपूर्ण अपवाद व्यापार के मामलों में था। क्रान्ति के समय से ही, विशेष रूप से न्यू इंग्लैण्ड में गवर्नरों के वेतनों के प्रश्न पर एक सतत विवाद चल रहा था। इंग्लैण्ड की सरकार इस बात पर आग्रह कर रही थी कि गवर्नरों को निश्चित वेतन दिये जाने चाहिएँ। उपनिवेशों की असेम्बलियाँ गवर्नरों को अपने अधिकार में बनाये रखने के लिए, इनके लिए एक समय में एक वर्ष से अधिक अवधि के लिए धन स्वीकार करने से इन्कार कर रही थीं। यही प्रश्न जजों के वेतन के सम्बन्ध में उत्पन्न हो रहा था। यह अधिकतम मौलिक महत्त्व रखने वाली संवैधानिक समस्या थी। इसमें औपनिवेशिक असेम्बलियों तथा केन्द्रीय सरकार के बीच में सम्बन्धों का प्रश्न सम्मिलित था। विवाद से बचने के तथा सोने वाले कुत्तों को लेटे रहने देने के सिद्धान्त के आधार पर १७२९ ई० में वालपोल की सरकार ने उपनिवेशों के गवर्नरों को यह हिदायत भेजी कि वे इस प्रश्न को छोड़ दें; उन्हें जो वेतन मिल सके उसे ले लें। औपनिवेशिक प्रश्नों का विचार बोर्ड ऑफ ट्रेड करता था, किन्तु ह्विग पद्धति में बोर्ड ऑफ ट्रेड दो राज्यमन्त्रियों में से एक मन्त्री को केवल परामर्श देने वाली संस्था थी। अन्तिम निर्णय यह राज्यमन्त्री किया करता था। वालपोल के युग में अधिकांश समय तक इसका उत्तरदायी राज्यमन्त्री न्यू कैसल का ड्यूक था। औपनिवेशिक उपद्रवों तथा समस्याओं के समाधान करने के लिए न्यूकैसल का सरल साधन यह था कि वह इस विषय में भेजे गये पत्रों या खरीतों को पढ़ता ही नहीं था। जब एक बार वालपोल को पार्लियामेण्ट के अधिकार द्वारा उपनिवेशों पर कर लगाने की सलाह दी गयी तो उसने इसका यह उत्तर दिया कि इंग्लैण्ड में कर लगाने के बारे में उसे काफी कष्ट उठाना पड़ा था और वह अमेरिका में इसे लगाकर अधिक कष्ट नहीं उठाना चाहता। यह एक चतुर उत्तर था और इसने उसकी सामान्य-बुद्धि को प्रदर्शित किया। किन्तु उसकी प्रशंसा औपनिवेशिक मामलों में उसकी बुद्धिमत्तापूर्ण राजनीतिज्ञता के लिए की गयी है। वह निश्चित रूप से इस प्रशंसा का अधिकारी नहीं है, क्योंकि उसकी नीति केवल प्रवाह के साथ बहते जाने की नीति थी। उपनिवेशों और इंग्लैण्ड के बीच के सम्बन्धों की समस्या एक गम्भीर और कठिन समस्या थी। यह स्पष्ट था अथवा यह स्पष्ट हो जाना चाहिए था कि पुरानी औपनिवेशिक पद्धति अब अधिक देर तक कार्य नहीं कर सकेगी। लुई १४वें के विरुद्ध होने वाले युद्ध को तथा उत्तरी अमेरिका में प्रभुता के लिए होने वाले अनिवार्य भावी संघर्ष के बीच का शान्ति का काल ऐसा समय था जब इस प्रश्न पर गम्भीरता से एवं शान्ति से विचार किया जाना चाहिए था। उपनिवेशवासी फ्रांस के संकट को जानते थे। वे साम्राज्य के साथ सम्बन्ध के महत्त्व को अनुभव करते थे, इसलिए वे सम्बन्धों की नयी पद्धति का विकास करने में इंग्लैण्ड के साथ सम्मिलित होने के लिए तैयार हो सकते थे। किन्तु वालपोल ने इस भावी संघर्ष के प्रति अपनी आखें मूंद लीं। उस समय के राष्ट्रमण्डल के सदस्यों के राजनीतिक

सम्बन्धों में किसी परिवर्तन को करने की आवश्यकता को समझने की कोई बुद्धि वालपोल में नहीं थी। इस प्रकार एक महान् अवसर गँवा दिया गया, एक ऐसा अवसर गँवाया गया जो कभी पुन: प्राप्त नहीं हो सकता था। "सोने वाले कुत्तों को लेटे रहने देने" की युक्ति एक परिवर्तनशील जगत् के राजनीतिज्ञों के लिए उपयोगी नीति नहीं है।

इसी कारण से, वालपोल की विदेशनीति पर यह दोष लगाया जा सकता है कि उसमें दूरदर्शिता का अभाव था। यह नीति तत्त्वत:, जहाँ तक सम्भव हो सके, वहाँ तक कठिनाई उत्पन्न होने पर उसका समाधान करके युद्ध को टालते रहने की थी। उसने अपने देश को वस्तुत: एक ऐसे समय में शान्ति प्रदान की, जब उसे इसकी आवश्यकता थी। वह एक महान् देन थी। किन्तु उसने यूरोपियन क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों के महत्त्व को समझने की शक्ति को प्रदर्शित नहीं किया। ये परिवर्तन इस प्रकार थे—पोलैण्ड का पतन, और रूस का महाशक्ति के रूप में आविर्भाव और १७३३ ई० में सम्पन्न हुई फ्रांस और स्पेन की सन्धि।

संक्षेप में राजनीति के सभी व्यापक क्षेत्रों में वालपोल की नीति संकीर्ण दृष्टिकोण वाली तथा अस्थायी उपायों को अपनाने वाली थी। उसमें कल्पना का तथा दृष्टिकोण की विशालता का अभाव था। इस कारण से उसे राजनीतिज्ञों में ऊँचा स्थान नहीं दिया जा सकता, भले ही उस समय में उसकी सेवाएँ उपयोगी रही हों। उसके दोष केवल उसके अपने विशिष्ट दोष नहीं थे, वे ह्विग स्वअल्पतन्त्र (Oligarchy) की विशेषता थे, वालपोल निस्सन्देह इसकी सर्वोत्तम उपज था।

३. वालपोल का रचनात्मक कार्य

फिर भी, कुछ क्षेत्रों में, वालपोल के कार्य का स्थायी महत्त्व था। पहली बात यह थी कि ब्रिटिश शासन-पद्धति में कामन्स सभा की प्रधानता को व्यवहार में स्वीकार करने वाला तथा इस पर बल देने के लिए अपनी शक्ति के भीतर प्रत्येक कार्य करने वाला वह प्रमुख ब्रिटिश राजनीतिज्ञ था। उसके सभी पूर्ववर्त्तियों—माण्टेग्यू, सोमर्स, हार्ले, सेण्ट जॉन तथा स्टैनहोप ने, अधिकार ग्रहण करते ही लार्ड बनना स्वीकार करने में तथा लार्ड सभा में अपना स्थान ग्रहण करने में बड़ी जल्दीबाजी की थी। वालपोल अपने पतन होने तक सादा सर राबर्ट ही बना रहा और वह कामन्स सभा से चिपका रहा। जब अपने पतन के बाद उसने आरफोल्ड के अर्ल का पद (Earldom of Orford) स्वीकार किया और वह उसका उत्तराधिकारी बनने की आशा रखने वाले तथा बाथ के अर्ल के रूप में लार्ड का पद स्वीकार करने वाले अपने पुराने प्रतिद्वन्द्वी पुलटेनी से मिला तो उस समय उसके स्वागत वाक्य ने यह प्रदर्शित किया कि वह दोनों सदनों की आपेक्षिक महत्ता के बारे में क्या सोचता था। उसने कहा, "आप और मैं अब दो ऐसे महत्त्वहीन व्यक्ति हैं, जैसा इंग्लैण्ड में कोई व्यक्ति भी हो सकता है।" इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वालपोल के समय में जब प्रधान मन्त्री कामन्स सभा में सदैव उपस्थित रहा करता था और इसकी सम्मति से अपनी नीति निश्चित किया करता था, उस समय यह सदन पहले किसी भी समय की अपेक्षा इंग्लिश सरकार का वास्तविक केन्द्र बन गया। एक्ट ऑफ सेटिलमेण्ट (Act of Settlement) में यह विचार निहित था कि

मन्त्रियों क कामन्स सभा का सदस्य नहीं होना चाहिए।[1] इस विचार को वालपोल ने अन्तिम रूप से अपने व्यवहार द्वारा अर्थात् कामन्स सभा का सदस्य रहते हुए समाप्त कर दिया। पिट की अपेक्षा एक अधिक बड़ी मात्रा में (यद्यपि कुछ भिन्न अर्थ में) वह कामन्स सभा का महान् सदस्य (Great Commoner) कहलाने का अधिकारी है।

दूसरी बात यह थी कि वह एक सच्चे अर्थ में अपनी कैबिनेट का नियन्त्रण और प्रभुत्व करने वाला और सब विभागों के कार्य का समन्वय करने वाली आवश्यक शक्ति का प्रयोग करने वाला पहला ब्रिटिश प्रधानमन्त्री था। ब्रिटिश शासन-पद्धति के विकास में यह एक आवश्यक योगदान था। वालपोल ने यह स्थिति इस बात पर आग्रह करके पायी थी कि जो मन्त्री सरकार से भिन्न मार्ग ग्रहण करते थे और सार्वजनिक रूप से उसके कार्यों का विरोध करते थे, उन्हें मन्त्रिमण्डल को छोड़ देना चाहिए। इस सिद्धान्त पर आचरण करते हुए उसने अनेक योग्यतम व्यक्तियों को विरोधी दल में धकेल दिया, किन्तु इससे उसने अपने मन्त्रिमण्डल की शक्ति तथा एकरूपता को बढ़ाया। इस विषय में उसके कार्य करने का कारण सामान्य रूप से उसकी अन्य व्यक्तियों की शक्ति के प्रति ईर्ष्या की भावना बतायी जाती है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि कुछ हद तक यह भी एक कारण था। किन्तु उसने यह अनुभव किया कि यदि सरकार को क्षमतापूर्ण बनना है तो मन्त्रिमण्डल अवश्य एकरूप (Homogeneous) होना चाहिए और विभिन्न विभागों का एक दूसरे के साथ सामन्जस्य होना चाहिए। १७४१ ई० में औपचारिक रीति से उपस्थित किये गये, उसके विरुद्ध आक्रमण के मुख्य कारणों में एक यह था कि उसने अपने को प्रधानमन्त्री बनाने का प्रयत्न किया था। यह पद उन दिनों ब्रिटिश संविधान को ज्ञात नहीं था। ऐसे दोष का लगाया जाना, यह प्रदर्शित करता है कि उस समय तक कैबिनेट द्वारा शासन के सिद्धान्त और कार्य कितनी कम मात्रा में समझे जाते थे। किन्तु इस विचार की समाप्ति बड़ी कठिनता से हुई कि किसी भी मन्त्री को अपने साथियों के ऊपर नियन्त्रण नहीं करना चाहिए; प्रत्येक अपने विभाग में राजा के प्रतिनिधि होने के कारण समान है। इस विचार के कारण भविष्य में अधिक नुकसान पहुँचना था। फिर भी दो शताब्दियों के अनुभव ने यह सिद्ध किया है कि वालपोल का सिद्धान्त ठीक था। वह एकमात्र उस पद्धति का प्रतिनिधित्व करता है, जिसके अनुसार एक सुसम्बद्ध सरकार का समन्वय पार्लियामेण्ट की प्रभुता के साथ किया जा सकता है।

राजनीति के जिस क्षेत्र में वालपोल का सर्वोत्तम कार्य हुआ, वह वित्त का क्षेत्र था। उसे धनाढ्य शक्तियों और व्यापारिक हितों का पूर्ण विश्वास और समर्थन प्राप्त था। वह राष्ट्रीय ऋण के भार को बहुत बड़ी मात्रा में कम करने में समर्थ हुआ। उसने यह कार्य ब्याज की दर को कम करके और इस प्रकार की गयी बचतों से ऋण को उतारने के लिए, एक विशेष निधि बना कर किया, इस निधि (Sinking fund) का निर्माण राजकीय आय में से समय-समय पर कुछ धनराशियाँ निकाल कर किया गया, ताकि इनसे ऋणों के मूल-धन को चुकाया जा सके। उसने करों को काफी कम मात्रा में बनाये रखा। कच्चे माल को वित्तीय बन्धनों

१. ऊपर देखिए, पाँचवीं पुस्तक, छठा अध्याय

से मुक्त कर दिया और आर्थिक सहायताओं द्वारा सुव्यवस्थित रीति से निर्यात व्यापार को प्रोत्साहित किया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इस युग में ब्रिटेन के विदेशी व्यापार की अतीव महान् समृद्धि को उसके वित्त विषयक बुद्धिमत्तापूर्ण संचालन तथा इससे उत्पन्न होने वाले विश्वास से प्रोत्साहन मिला। उसकी सब वित्तीय विधियों में, जिसने सब से अधिक ध्यान आकर्षित किया, वह १७३३ ई० का **निर्माणकर विधेयक** (Excise Bill) था। इसके उद्देश्य बहुत मामूली थे। गृहयुद्ध के समय से निर्माणकर (अर्थात् बेचे जाने से पूर्व निर्माण की गयी वस्तुओं पर इंग्लैण्ड में लगाये जाने वाले कर) राष्ट्रीय राजस्व का एक बड़ा भाग प्रदान करते थे। यह उन सीमा-शुल्कों (Customs Duties) की अपेक्षा बहुत अधिक बड़ा भाग था, जो वस्तुओं का आयात करने वाले बन्दरगाहों पर विदेशी वस्तुओं पर लगाया जाता था। शराब और तम्बाकू पर लगे हुए सीमा-शुल्क को तस्कर व्यापार द्वारा बड़ी मात्रा में बचाया जाता था। वालपोल ने प्रस्ताव किया कि इन वस्तुओं पर उसी मात्रा में सीमा-शुल्क के स्थान पर निर्माणकर (Excise Duty) लगा दिया जाय। इनके निर्यात को चुंगी से सर्वथा मुक्त कर दिया गया। इन वस्तुओं को इन पर कर अदा करने के वचन से बँधे हुए गोदामों में रखा जाना था और वहाँ से निकाले जाने पर इन वस्तुओं पर लगाया गया टैक्स दिया जायगा। वालपोल को आशा थी कि इस प्रकार तस्कर-व्यापार से होने वाली हानि से बचा जायगा और इसी के साथ ही विदेशी व्यापार को भी प्रोत्साहित किया जायगा, क्योंकि इस माल को बिना चुंगी दिये पुनः निर्यात किया जा सकता था। इस प्रस्ताव पर अधिकतम आश्चर्यजनक और समझ में न आ सकने वाला शोर मचा; इसे वालपोल के विरोधियों की गलत बयानियों द्वारा विवेकशून्य रीति से प्रोत्साहित किया गया। उन्होंने इसे शासन में फ्रांस में प्रचलित ढंगों के श्रीगणेश के रूप में तथा स्वतन्त्र ब्रिटिश व्यक्तियों के अधिकारों पर एक अत्याचारपूर्ण आक्रमण के रूप में उपस्थित किया। उत्तेजित भीड़ ने "लकड़ी के जूते नहीं चाहिए" के नारों के साथ वालपोल के पुतलों को जलाया, अतः इस बिलकुल निर्दोष और उपयोगी बिल को वापस लेना पड़ा। वालपोल के चरित्र की मर्यादाओं की यह विशेषता है कि इस मामूली और क्षुद्र बिल के पास न होने ने उसे अपने कार्यकाल की किसी अन्य घटना की अपेक्षा अधिक ठेस पहुँचायी।

वालपोल को अपनी व्यापारिक नीति अन्य किसी भी काम की अपेक्षा अधिक प्रिय थी। इस नीति का लक्ष्य आवश्यक रूप से क्रान्ति की आर्थिक नीति को ही जारी रखना था। उसका उद्देश्य मुख्य रूप से ब्रिटेन को उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करना, उसे समूचे साम्राज्य के हस्तोद्योगों का केन्द्र बनाना और उसकी मण्डी में साम्राज्य की सारी उपज को आकर्षित करना था। इस प्रयोजन के लिए वह अपने पूर्ववर्तियों की अपेक्षा ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की कानून निर्माण करने वाली शक्ति का उपयोग करने के लिए अधिक उत्सुक था। उसके पथ-प्रदर्शन में उपनिवेशों के व्यापार पर किया जाने वाला नियन्त्रण काफी अधिक कठोर बना दिया गया। कानून द्वारा उन परिगणित पदार्थों की सूची में अनेक नयी वस्तुओं को जोड़ा गया, जिनका निर्यात केवल इंग्लैण्ड को किया जा सकता था। न्यू इंग्लैण्ड में अत्यधिक कटु प्रतिवाद उत्पन्न करने वाला **शीरा अधिनियम** (Molasses Act, 1733) वालपोल का ही

बनाया हुआ एक कानून था। इसने उपनिवेशों को फ्रेंच वेस्ट इण्डीज के सस्ते और अत्युत्तम चीनी उत्पादनों को खरीदने से रोकने का प्रयास किया। किन्तु इससे भी अधिक गम्भीर बात वालपोल के तथा उसके उत्तराधिकारियों के समय में यह थी कि उपनिवेशों में हस्तोद्योगों के उत्थान को कानून बनाकर रोकने का एक सुव्यवस्थित प्रयत्न किया गया। उपनिवेशों को ताँबा गलाकर साफ करने के कार्य करने का निषेध किया गया (१७३२ ई०), उनकी ताँबे की समूची कच्ची धातु को गलाने के लिए ब्रिटेन अवश्य भेजा जाना चाहिए था। उन्हें हैट बनाने का निषेध कर दिया गया। जिन समूरों से हैट बनाये जाते थे, उन सभी समूरों को ब्रिटेन भेजा जाना आवश्यक था। वस्तुतः इन कानूनों ने बहुत कम असन्तोष उत्पन्न किया, क्योंकि उपनिवेशों के जो हस्तोद्योग उस समय विद्यमान थे, वे बहुत ही छोटे पैमाने पर थे। किन्तु उपनिवेश वस्तुओं का निर्माण न करें, इस सिद्धान्त को काफी स्पष्टता के साथ प्रतिपादित कर दिया गया था। १७५० ई० में वालपोल के विचारों के उत्तराधिकारी पैलहम के समय में इस सिद्धान्त का एक बड़ा खतरनाक प्रयोग किया गया। उपनिवेश लोहे की कच्ची धातु को काफी बड़ी मात्रा में उत्पन्न करने लगे थे और उस समय तक एक छोटे पैमाने पर इसके कुछ अंश से लोहे की वस्तुओं का निर्माण करने लगे थे। १७५० ई० के कानून ने उपनिवेशों में लोहे की सब वस्तुओं के निर्माण का निषेध कर दिया। उस समय विद्यमान सभी कारखानों को बन्द करने का आदेश दिया गया। अपने पूर्ववर्ती कानूनों के साथ मिलकर इस कानून ने उपनिवेशवासियों को और विशेषतः हस्तोद्योग में अधिकतम क्रियाशील न्यू इंग्लैण्डवासियों को यह विश्वास करा दिया कि इंग्लैण्ड अपने स्वार्थों की दृष्टि से उनके विकास को रोकने पर और इनमें बाधा डालने पर तुला हुआ है। इस समूचे कानून-निर्माण ने उस वैमनस्य की भावना को उत्पन्न करने में बड़ा हिस्सा लिया, जिसके कारण अन्त में उपनिवेशों में ब्रिटेन के विरुद्ध विद्रोह हुआ।

बाद में, जब ह्विग जार्ज तृतीय के विरोध में थे और राजा को तथा उसके परामर्श-दाताओं को सभी औपनिवेशिक उपद्रवों के लिए दोष दे रहे थे, उस समय उन्होंने ह्विग-उत्कर्ष के युग में अनुसरण की जाने वाली औपनिवेशिक नीति में प्रदर्शित की गयी अधिक बुद्धिमत्ता का श्रेय अपने आपको दिया। यह स्पष्ट है कि वे किसी ऐसे श्रेय के अधिकारी नहीं हैं। सबसे बड़े ह्विग राजनीतिज्ञ न केवल औपनिवेशिक पद्धति के संशोधन की कोई आवश्यकता नहीं समझते थे, अपितु वालपोल ने तथा उसके उत्तराधिकारियों ने इसकी निकृष्ट-तम विशेषताओं को खूब बढ़ाया था और भावी तूफानों की तैयारी की थी। यदि अमेरिका वालपोल के समय में, १७६३ ई० की भाँति फ्रेंच आक्रमण के भय से मुक्त होता तो औप-निवेशिक असन्तोष को मौनभाव से सहन करने वाले उपनिवेशवासी या "सोने वाले कुत्ते" अपने को केवल भौंकने और गुर्राने तक ही सीमित न रखते। किन्तु उनकी गुर्राहट उस समय अटलाण्टिक के महासागर के दूसरे छोर तक नहीं सुनी जा सकती थी; विशेषतः अमेरिका से आने वाले राजकीय पत्रों को कभी न पढ़ने वाले राज्यमन्त्रियों के द्वारा तो ऐसी गुर्राहट को कभी नहीं सुना जा सकता था।

अपनी नीति के विशाल दृष्टिकोण के आधार पर यह असम्भव प्रतीत होता है कि वालपोल को एक महान् राजनीतिज्ञ माना जाय। उसकी एक बड़ी सेवा यह थी कि उसने नवीन ब्रिटिश शासन-पद्धति को अपनी जड़ जमाने का अवसर दिया तथा इसकी अधिकतम महत्त्वपूर्ण कुछ विशेषताओं को सुनिश्चित बनाने में सहयोग दिया। किन्तु इस विनोदी, मर्यादित तथा व्यावहारिक व्यक्ति की एक अन्य बात में प्रशंसा की जानी चाहिए। वह आलोचना के प्रति असाधारण रूप से सहिष्णु था। यद्यपि उस पर निरन्तर असीम विषैला आक्रमण किया जाता रहा, तथापि उसने (दोनों दलों के अपने पूर्ववर्तियों के प्रतिकूल) अपने विरोधियों से इसके अतिरिक्त कोई बदला लिया कि वह उन्हें अपने अधिकार में विद्यमान नियुक्तियों से बहिष्कृत करता रहा। वालपोल के समय में कोई महाभियोग (Impeachment) नहीं हुआ। वाणी अथवा लेखन की स्वतन्त्रता को मर्यादित करने के कोई प्रयत्न नहीं हुए। आलोचना की धारा प्रेस में तथा पार्लियामेण्ट में बड़ी शक्ति के साथ चलती रही और राजनीतिक समस्याओं के सार्वजनिक विवाद की आदत विकसित होती रही।

४. ह्विग लोगों का विरोध : बोलिंगब्रोक के विचार

वालपोल की शक्ति यद्यपि सुदृढ़ रूप से स्थापित थी, तथापि इस पर सदैव कटु प्रहार होते रहते थे। उसकी अधिकांश विरोधी आलोचना कोरी दलबन्दी की भावना से किया जाने वाला विरोध था। यह उन व्यक्तियों का कार्य था जिनको महान् मन्त्री के विरुद्ध वास्तविक शिकायत यह थी कि वह उन्हें पद नहीं देता था। वालपोल ने एक बार कहा था कि "इन सब मनुष्यों का अपना मूल्य है" और इनमें से अधिकांश के सम्बन्ध में यह आरोप सत्य था। जब पैलहम ने अपने समय में सार्वजनिक पदों को व्यापक रूप से बाँटते हुए सब गुटों को सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया था, उस समय जब वालपोल से असन्तुष्ट व्यक्तियों को ये पद प्राप्त हुए तो उन्होंने वालपोल की अपेक्षा अपने को कम प्रबुद्ध, कम दूरदर्शी और अधिक भ्रष्टाचारी सिद्ध किया।

किन्तु दलबन्दी में लगे रहने वाले तथा स्थान या पद के अभिलाषी व्यक्तियों के विरोध के साथ-साथ, सिद्धान्तों का एक अधिक वास्तविक विरोध था। इस विरोध का केन्द्र बोलिंगब्रोक था। उसे १७२३ ई० में निर्वासन से लौटने की अनुमति दी गयी थी। यद्यपि वह क्रियाशील राजनीतिक जीवन से बहिष्कृत था, तथापि उसने अपने घर को विरोध का केन्द्र बनाया; टोरियों तथा ह्विगों के एक मिश्रित समुदाय को अपने राजनीतिक विचारों से अनुप्राणित करने का प्रयत्न किया। बोलिंगब्रोक के शिष्यों में विलियम पिट था। उसने ग्रेनविले घराने के अपने चचेरे भाइयों के साथ वालपोल का उग्र विरोध मुख्य रूप से इस कारण के आधार पर किया कि उसकी विदेश नीति ने ब्रिटेन के हितों को हनोवर के हितों का वशवर्ती बना दिया है और उस महान् औपनिवेशिक प्रतिद्वन्द्विता की उपेक्षा की है, जो उसे ब्रिटेन के लिए सबसे बड़ा सवाल प्रतीत होता था। बोलिंगब्रोक के सिद्धान्तों का पिट पर गहरा प्रभाव पड़ा; यद्यपि वह बाद में इस मेधावी छिद्रान्वेषी पर अविश्वास करने लगा था; किन्तु पिट के पिछले जीवन के बड़े भाग पर बोलिंगब्रोक की शिक्षा का प्रभाव स्पष्ट था। १७२६ ई० के

बाद के छः सात वर्षों में बोलिंगब्रोक 'दी क्राफ्ट्समैन' (Craftsman) नामक साप्ताहिक पत्र को चलाता रहा। इसका प्रत्येक अंक प्रधानमन्त्री वालपोल की व्यंग्यात्मक, प्रभावशाली और प्रायः विवेकशून्य निन्दा से भरा होता था। किन्तु इस अनन्त गालीगलौज के द्वारा उसने ऐसे राजनीतिक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, जो ह्विगों के सिद्धान्तों के तीव्र विरोधी थे और जिनके बारे में उसे यह आशा थी कि ये सिद्धान्त एक नवीन और अधिक युक्तियुक्त टोरीवाद के मत के रूप में स्वीकार किये जा सकते थे। १७३०-३९ ई० के दशक में बोलिंगब्रोक इस संघर्ष से ऊब गया और १७३८ ई० में वह एक बार पुनः फ्रांस चला गया। किन्तु फ्रांस जाने से पहले उसने १ - ३८ ई० में एक राजनीतिक निबन्ध 'दी आयडिया आफ ए पैट्रियट किंग' (The Idea of a Patriot King) लिखा, यद्यपि इसका प्रकाशन बहुत देर में हुआ। इस निबन्ध में उसने अपने राजनीतिक मत की एक अतीव स्पष्ट और शक्तिशाली व्याख्या की तथा इंग्लैण्ड की राजनीतिक विचार पर इसका विलक्षण प्रभाव पड़ा।

बोलिंगब्रोक के राजनीतिक सिद्धान्त का सार यह था कि ह्विगों ने अपने उद्देश्यों के लिए राजा तथा पार्लियामेण्ट दोनों को दास बना कर ब्रिटिश संविधान का सन्तुलन विनष्ट कर दिया था। इस प्रकार उन्होंने एक संवैधानिक राजतन्त्र के स्थान पर अल्प-तन्त्र की स्थापना की थी। यदि राजनीति को एक स्वस्थ अवस्था में लाया जाना है तो ह्विगों द्वारा पूर्णता तक पहुँचाये गये कठोर पार्टी-संगठन का विध्वंस अवश्यमेव किया जाना चाहिये। पार्लियामेण्ट को इसके प्रभुत्व से और सभी प्रकार के भ्रष्टाचार से मुक्त किया जाना चाहिए। इसे एक बार पुनः राष्ट्र का स्वतन्त्र विचार व्यक्त करने वाली संस्था बन जाना चाहिए। सब से बढ़कर राजमुकुट को अल्पतन्त्र की दासता से मुक्त किया जाना चाहिए। इसे इस बात में समर्थ बनाना चाहिए कि यह क्रान्ति द्वारा इसके लिए निर्धारित भाग को अदा कर सके। इसे दलों से ऊपर रहना चाहिए तथा उनकी उपेक्षा करनी चाहिए। इसे राष्ट्र की सेवा में सर्वोत्तम व्यक्तियों को अवश्य लाना चाहिए। इसमें यह विचार नहीं करना चाहिए कि उनके सम्बन्ध किस दल के साथ हैं और इसे यह भी नहीं सोचना चाहिए कि उन के पास "बरो का प्रभाव है या नहीं है।" भविष्य में वालपोल जैसे प्रधान मन्त्री नहीं होने चाहिएँ, जो सारी शक्ति अपने में केन्द्रित कर लें तथा अन्य मन्त्रियों को नगण्य बना दें, अपने से मतभेद रखने वालों को सार्वजनिक सेवा करने के अवसरों से वंचित कर दें। प्रत्येक मन्त्री को अपने पद के लिए पूरा उत्तरदायित्व निबाहना चाहिए। वह इसे किस विधि से पूरा कर सकता है, इसके लिए वह केवल राजा के प्रति और पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। केवल राजा (Crown) ही इस स्थिति की रक्षा कर सकता है, क्योंकि भ्रष्टाचारी अल्पतन्त्रीय व्यक्तियों के समूह ने राजा के सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों को नियुक्त करने के अधिकार को प्राप्त करके ही अपनी उच्च स्थिति बनायी थी। अतः राष्ट्र की एक आशा एक देश-भक्त राजा के आविर्भाव पर अवलम्बित है, जो अल्पतन्त्र-वादियों का विध्वंस कर देगा, अपने को एक स्वतन्त्र राष्ट्र का नेता बनायेगा और अपने परामर्श के लिए सर्वोत्तम व्यक्तियों को बुलायेगा।

अनेक व्यक्तियों के लिए इन विचारों में एक वास्तविक आकर्षण था। ये विचार पिट को बड़े आश्चर्यजनक प्रतीत हुए। उसे यह ज्ञान था कि उसके पास महान् शक्तियाँ थीं

और उसे अपने 'बरो प्रभाव' के अभाव का भी ज्ञान था। वालपोल के तथा न्यूकैसल के अनुयायियों की ईर्ष्या ने उसे शक्ति प्राप्त करने से वंचित किया हुआ था। भविष्य में बोलिंगब्रोक के सिद्धान्तों का जार्ज तृतीय पर शक्तिशाली प्रभाव पड़ा। उसने देशभक्त राजा की भूमिका के लिए अपने को तैयार किया।

इन विचारों का कुछ प्रभाव पैलहम मन्त्रिमण्डल (१७४३ ई०) के निर्माण पर भी पड़ा। यह मन्त्रिमण्डल चौड़े आधार वाले प्रशासन के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि इसने सभी गुटों, यहाँ तक कि टोरियों और जैकोबाइटों को भी सम्मिलित करने का प्रयत्न किया। इसलिए यह एक प्रकार की राष्ट्रीय गैर-पार्टी सरकार बन गयी। सम्भवत: इसी कारण (अपनी विदेश नीति) के उग्र महाद्वीपीय दृष्टिकोण के साथ कार्ट रैक्स के मन्त्रि-मण्डल से निकल जाने के बाद विलियम पिट ने इस मन्त्रिमण्डल में पहले नौसेनाध्यक्ष के पद को तथा बाद में पे मास्टर जनरल के पद को स्वीकार किया। किन्तु उसने यह अनुभव किया कि इन पदों पर रहते हुए वह घटनाओं के क्रम पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकता था। वास्तव में अब भी वालपोल के विचारों से अनुप्राणित, एवं उसकी विचार-धारा के रखने वाले व्यक्तियों के द्वारा ही नीति का संचालन किया जा रहा था। पैलहम मन्त्रिमण्डलों के प्रबन्ध में पार्लियामेण्ट पर नियन्त्रण प्राप्त करने के लिए सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों की नियुक्ति के अधिकार का और भ्रष्टाचार का उपयोग पहले की अपेक्षा अधिक क्रियाशीलता के साथ किया गया। पैलहम बन्धु इन कलाओं में अतीव प्रवीण थे। एकमात्र भेद या अन्तर यही था कि वे वालपोल की अपेक्षा कम योग्य थे और पिट जैसे आलोचकों का मुँह अब पद की मीठी गोलियों से बन्द कर दिया गया था। वस्तुत: इसके लम्बे मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध में इसके अतिरिक्त कोई बात स्मरणीय नहीं है कि इसने आस्ट्रियन उत्तराधिकार के युद्ध को ऐसी रीति से चलाया, जिससे यह प्रदर्शित हुआ कि विदेश नीति के इसके विचार अब भी यूरोप तक सीमित थे। इसके आगे उन महान् प्रश्नों की कोई कल्पना नहीं थी, जिनके निपटारा किये जाने की प्रतीक्षा अमेरिका और भारत में हो रही थी। पैलहम मन्त्रिमण्डल केवल दैनिक कार्यक्रम पूरा करने वाला था। उसके कोई स्पष्ट सिद्धान्त या उद्देश्य नहीं थे। शासन की कला का विचार उन्हें केवल सौदेबाजी और बरोप्रबन्धकों के विभिन्न गुटों के साथ अदला-बदला करने तक ही सीमित प्रतीत होता था। अन्त में वे उस अधिकतम महत्वपूर्ण औपनिवेशिक युद्ध में बहते चले गये, जैसा युद्ध ब्रिटेन ने अभी तक नहीं किया था; जिसके लिए वह तैयार नहीं था अथवा जिसके बारे में उसने यह अनुभव नहीं किया था कि इसमें क्या बात सन्निहित है।

ह्विग अल्पतन्त्र ने अपना प्रयोजन पूरा किया। इसने एक नाजुक युग में से ब्रिटेन को शान्तिपूर्वक गुजरने में सहायता की थी, किन्तु इसने कभी उच्च आदर्शों और ऊँचे लक्ष्यों की ओर ध्यान नहीं दिया था। इसके द्वारा लायी गयी समृद्धि के बावजूद इसके शासन का समय अधिकतम भौतिकवादी था। राष्ट्र-मण्डल के इतिहास में किसी भी अन्य युग की अपेक्षा इसमें महान् विचारों का बहुत कम प्रभाव पड़ा। इसने एक नवीन पीढ़ी के लिए उन विशाल समस्याओं के समाधान का कार्य सौंपा, जो इसके अन्धेपन से अथवा उपेक्षा से उग्र हो गयी थीं। सब से बढ़कर इसने ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल की कुछ समस्याओं को भी समाधान के लिए

छोड़ दिया, उस समय यह प्रश्न था कि क्या नयी दुनियाँ फ्रांस के प्रभुत्व में रहेगी अथवा ब्रिटिश लोगों के अधिकार में? इसी प्रकार क्या इन समृद्ध प्रदेशों का शासन निरंकुश राजतन्त्र की फ्रेंच पद्धति द्वारा किया जायगा अथवा स्वशासन की इंग्लिश पद्धति द्वारा? इससे भी अधिक बड़ा तथा अधिक कठिन प्रश्न यह था कि क्या कोई ऐसी पद्धति ढूँढी जा सकती है जिसके अनुसार स्वतन्त्र राष्ट्र भाईचारे और स्वतन्त्रता के साथ एकत्र हो कर जीवन बिता सकें? ह्विग प्रभुता के युग में इन सब प्रश्नों की समस्या पैदा हो रही थी। ह्विगों ने इन सब प्रश्नों की उपेक्षा की थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Robertson, England under the Hanoverians; **Leadam**, England from 1702 to 1760; **Lecky**, History of England in the Eighteenth Century; **Sichel**, Bolingbroke; **Coxe**, Walpole; **Williams,** William Pitt; **H. Walpole,** Memoirs of George II; **Hervey's** Mémoirs; **Anson**, Law and Custom of the Consitution; **Blauvelt,** Development of Cabinet Government; **Hallam,** Consitutional History; **B. Williams**, The Whig Supremacy; **K. Feiling,** The Second Tory Party; **L. B. Namier**, The Structure of the English Politics at the Accesstion of George III; **M. A. Thomson,** The Secretaries of State 1681-1782 **A. S. Turberville**; The House of Lords in the Eighteenth Century.

• •

५

वेसलीबन्धु तथा उत्साह का पुनरुज्जीवन

१. बुद्धि का युग

१८वीं शताब्दी का पूर्वार्ध न केवल ब्रिटेन में, अपितु पश्चिमी सभ्यता के सभी देशों में भौतिकवाद का युग था, यह गद्य का युग था, 'सामान्य बुद्धि' का ऐसा युग था, जब मनुष्य सब मानवीय क्रियाओं को अपने प्रत्यक्ष तथा इन्द्रियों से गोचर हो सकने वाले परिणामों से नाप रहे थे और आध्यात्मिक अथवा आदर्शपूर्ण उद्देश्यों के लिए उत्साह को एक असन्तुलित मन का प्रभाव समझते थे, क्योंकि इससे बुद्धि के भावना से पथभ्रष्ट किये जाने की संभावना थी। उस समय राष्ट्रीय कल्याण राष्ट्रीय सम्पत्ति को ही समझा जाता था। इसकी प्राप्ति करना स्पष्ट रूप से इतना अधिक युक्तियुक्त था कि इसने दास-व्यापार की भीषणताओं जैसे अनेक अन्यायों को भी न्यायोचित बना दिया। राजनीति का सम्बन्ध न्याय और कल्याण की खोज में मानवीय समाजों के सहयोगपूर्ण कार्य का संगठन करना है। राजनीति एक उदात्ततम मानवीय कार्य होना चाहिए; किन्तु इन परिस्थितियों में यह राजनीति एक अधम व्यवसाय बन गया। उस समय मनुष्यों को भक्ति के लिए अथवा आत्मबलिदान के लिए प्रेरणा देने में समर्थ सिद्धान्त के सम्बन्ध कोई उग्र संघर्ष नहीं थे। पिछली दो शताब्दियों का धार्मिक उत्साह समाप्त हो चुका था; अगले युग का मानवतावादी उत्साह अभी तक प्रभावशाली नहीं बना था। ह्विग लोगों ने जिस स्वतन्त्रता के प्रति भक्ति प्रदर्शित की थी और अतीत काल में जिसके लिए उन्होंने वास्तविक सेवाएँ की थीं, उसे वे कुछ ऐसी वस्तु समझते थे, जो पहले ही प्राप्त हो चुकी थी, अब जिसका केवल संरक्षण करने की आवश्यकता थी। वह ऐसी वस्तु नहीं थी, जिसको शाश्वत रूप से विकसित होना चाहिए था और जो उस दशा में मृत और निरर्थक हो जाती, यदि

इसका विकास बन्द हो जाता। टोरी जिस 'राजभक्ति' की डींग हांकते थे, वह इतनी प्रबल नहीं थी कि उसके लिए स्काटलैण्ड के हाइलैण्ड्स की जंगली और पिछड़ी हुई जातियों के सिवाय अन्यत्र कहीं वास्तविक बलिदान किया जाय। जैसा कि हम देख चुके हैं कि राजनीति पदों पर अधिकार पाने के लिए प्रतिस्पर्धी और भ्रष्टाचारी समूहों में षड्यन्त्र का विषयमात्र बन चुकी थी। फिर भी धनोपार्जन के बाद, राजनीति न केवल राजनीतिज्ञों में, अपितु बुद्धिमान् जनता में भी इस युग का अधिकतम आकर्षक व्यवसाय बनी हुई थी।

किन्तु अपने आप में ये वक्तव्य इस युग के प्रति अन्यायपूर्ण थे। यह प्रबोध का युग था। इसने बुद्धि की सर्वोच्च सत्ता की घोषणा की थी। यह युग शब्दाडम्बर से घृणा करता था। इसने अपने को पक्षपात से मुक्त करने का तथा उन विचारों का निर्भयता पूर्वक विश्लेषण करने का प्रयत्न किया, जिन विचारों का विश्लेषण करने को इसे कहा गया था। अतः यह आलोचना का तथा उस समय माने जाने वाले विचारों को स्वस्थ चुनौती देने वाला युग था। इस प्रकार इसने इसके बाद आने वाले विध्वंस के और पुनर्निर्माण के महान् युग का मार्ग प्रशस्त किया। इस युग का अधिकतम विशिष्ट लेखक एवं विचारक वाल्तेयर (Voltaire) था। इस महान् फ्रेन्च आलोचक को अपनी लेखनी से किसी को भी अपनी आलोचना से न छोड़ने वाली स्वतन्त्रता के कारण अपने जीवन का अधिकांश भाग निर्वासन में बिताना पड़ा। वाल्तेयर डींग से और अवास्तविकता से घृणा करता था। वह इनसे उत्पन्न होने वाले अन्यायों तथा क्रूरताओं से और भी अधिक घृणा करता था, किन्तु ऐसा करते हुए वह उन वास्तविकताओं का महत्व समझने में बिल्कुल असमर्थ था, जो विधियों पर बल देने वाले धर्म के मूल में निहित होती है, अथवा वह भावना की शक्ति के अथवा विशुद्ध तर्क की मर्यादाओं का मूल्य समझने में भी असमर्थ था। किन्तु उसने अपने युग की महान् सेवा इस प्रकार कीं कि उसने अपने समय की सब संस्थाओं और विचारों को अपनी आलोचना के विध्वंसकारी तेजाब में डाला और इसने एक बड़े कूड़े को जला डाला। यद्यपि उसके पास उदात्त भविष्य के कोई उजले स्वप्न नहीं थे और वह रूसो तथा अन्य विचारकों द्वारा उत्पन्न की गयी ऊँची आशाओं के प्रति तिरस्कारपूर्ण रुख रखता था, तथापि उसे उचित रूप से फ्रेन्च राज्यक्रान्ति के सन्देशवाहक अग्रदूतों में से एक समझा जाता है। वस्तुतः आलोचना का यह समूचा महान् युग आगे होने वाले विशाल परिवर्तनों की तैयारी था।

ब्रिटेन में आलोचनात्मक भावना की क्रियाशीलता इस युग की सर्वोत्तम कृतियों की अधिकतम स्पष्ट विशेषता थी। इस युग के एक महान् कवि पोप में भी आलोचनात्मक भावना कल्पनात्मक और भावनात्मक तत्वों से प्रबल थी। एडिसन और स्टील का सौम्य तथा दयालुतापूर्ण सामाजिक व्यंग्य, स्विफ्ट का उग्र एवं विषैला व्यंग्यलेखन, डिफो का व्यंग्य तथा सूक्ष्म वर्णनात्मक विश्लेषण, ये सब आलोचना की भाँति उस सामाजिक संगठन के अधिक या कम मात्रा में विध्वंसक थे, जिसमें ये लेखक रह रहे थे। इनमें से कोई भी लेखक आदर्शों का अथवा भविष्य के लिए सपनों का वर्णन नहीं करता है। ब्रिटेन के [illegible] में तीन महान् दार्शनिक—बटलर, बर्कले और डेविड ह्यूम इसी युग में हुए थे। इनके बाद अब पूर्ण रूप से भुलाये जा चुके धर्मशास्त्रीय और दार्शनिक विषयों पर लिखने वाले लेखकों का एक बड़ा

समूह था; किन्तु उनका प्राचुर्य यह प्रदर्शित करता है कि इस समय राष्ट्रीय मानस में एक वास्तविक हलचल चल रही थी। बौद्धिक जगत् को वस्तुत: बुद्धिवादी स्वरूप रखने वाले दार्शनिक और धार्मिक विवादों में गहरी दिलचस्पी थी, जैसा उस विवाद द्वारा उत्पन्न की गयी उत्तेजना से प्रदर्शित होता है, जो विवाद बिशप होडली के बारे में हुआ था। वह समूचा विवाद प्राकृत धर्मावलम्बी (Deest) विवाद के नाम से प्रसिद्ध था। किन्तु यह कोरी बौद्धिक दिलचस्पी थी। इस आलोचनात्मक भावना का एक अतीव महत्वपूर्ण परिणाम धार्मिक सन्देहवाद का द्रुत प्रसार था, इसने ब्रिटेन में तथा यूरोप में धार्मिक विश्वास के सभी प्रकारों को प्रभावित किया। स्काटलैण्ड एवं न्यू इंग्लैण्ड में भी यह ऐसा समय था जिसे मृदुता का तथा उत्साह मन्द पड़ने का समय कहा जाता था। इंग्लिश चर्च का उच्च पादरी वर्ग अधिकांश रूप में सन्देहवादी था और इसके परिणामस्वरूप वे अपने कर्त्तव्यों का गम्भीर रूप से नहीं पालन कर रहे थे। पल्ली अथवा पेरिश (Parish) के पादरियों की एक बड़ी संख्या अपने पेशे के कर्त्तव्यों को कम या अधिक रूप में उन आमदनियों के साथ बँधा हुआ औपचारिक दायित्व समझते थे, जिन्हें वे सरकारी पदों पर नियुक्ति के अधिकार से प्राप्त करते थे। इनमें बहुत से व्यक्ति, विशेष रूप से आयर्लैण्ड में सदैव अनुपस्थित रहते थे। एक बड़ी संख्या अपने सांसारिक पड़ोसियों जैसा विनोदपूर्ण और कई बार उपयोगी जीवन बिताती थी। वे अपना अधिकांश समय खेती करने में, लोमड़ियों का शिकार करने में, शराब पीने में और बिशप के धर्मासन पर बैठने में बिताते थे, किन्तु वे अपने अनुयायियों के प्रति इससे अधिक कोई कर्त्तव्य नहीं समझते थे कि वे रविवारों के दिन उनके लिए प्रार्थनाओं को पढ़ें। यद्यपि वे **टाम जोन्स** में वर्णित पार्सन एडम्स की भाँति ईमानदार, दयालु और कठोर परिश्रमी पादरी होते थे, फिर भी उनके पास अपने अनुयायियों को देने के लिए उससे अधिक कोई वस्तु नहीं थी—जिसे कठोर स्काट "एक निष्प्राण और शुष्क नैतिकता कहते थे", जिसमें पूर्ण रूप से प्रेरणा देने की शक्ति का अभाव था। एंग्लिकन चर्च से मत भेद रखने वाले (Dissenting) समुदायों में भी उत्साह की क्षीणता और सन्देहवाद का विकास इसी प्रकार स्पष्ट रूप से पाया जाता था। इस युग में ही इंग्लैण्ड में लगभग सभी बचे हुए प्रेसबिटेरियन धर्म-समुदाय यूनिटेरियन हो गये।

अत: न तो स्थापित चर्च ने और न ही मतभेद रखने वाले चर्चों ने स्वदेश में अथवा विदेश में धर्म प्रचार में कोई पौरुष प्रदर्शित किया। चर्च में जाने वाले प्रतिष्ठित पुरुषों के लिए धर्म के परम्परागत कार्यों को चालू रखने में सन्तुष्ट होने वाले ये चर्च इस बात को भूल गये थे कि वे इस प्रयोजन के लिए हैं कि वे सब मनुष्यों को सदा यह स्मरण कराते रहें कि आदमी केवल रोटी से ही जीवित नहीं रह सकते और उनका उद्देश्य यह है कि वे अदृश्य और आध्यात्मिक शक्ति की वास्तविक सर्वोच्च महत्ता का प्रेरणास्पद विश्वास लोगों के दैनिक जीवन में ला सकें। इस मुर्दनगी का एक अधिकतम दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह था कि इसके कारण ब्रिटिश उद्योगों के विकास से उत्पन्न की गयी मजदूरी करने वाले नर-नारियों के नयी श्रेणियों की, खनिजों की, जुलाहों की, नाविकों की तथा बड़े बन्दरगाहों में समुद्र के निकटवर्ती गन्दी बस्तियों में बड़ी संख्या में काम करने वाले मजदूरों की पूर्ण रूप से उपेक्षा की गयी। वे सम्पत्ति पैदा करने की एक मशीन के एक हिस्से के रूप में बिलकुल उपेक्षित किये

जाते थे। उन्हें यह याद दिलाने के लिए कुछ भी नहीं किया गया कि मानवता की गरिमा उनके परिश्रम से उत्पन्न वस्तुओं की अपेक्षा एक अधिक बड़ी वस्तु है और जीविका से अधिक महत्वपूर्ण है। इस युग में यह विचार आश्चर्यजनक रीति से विस्मृत कर दिया गया था कि राष्ट्रीय कल्याण राष्ट्र की भौतिक सम्पत्ति के परिमाण की अपेक्षा राष्ट्र के व्यक्तियों के गुणों पर अधिक निर्भर है। उस समय ऐसा कोई दावा करना कोरा उत्साह मात्र समझा जाता कि समाज का सर्वोच्च हित धन की अपेक्षा मानवता का विकास करना है। वस्तुतः "सामान्य बुद्धि" ने कभी ऐसे विचार को अच्छी दृष्टि से नही देखा था।

२. संगठित लोककल्याणकारी कार्यों का आरम्भ : जार्जिया का उपनिवेश

यद्यपि अभी तक औद्योगिक नगरों में मनुष्यों के वैसे विशाल समूह नहीं थे, जैसे औद्योगिक क्रान्ति ने उत्पन्न किये थे, तथापि लन्दन में तथा ब्रिस्टल और लिबरपूल जैसे बड़े बन्दरगाहों में, कार्नवाल और न्यूकेसल के खान वाले क्षेत्रों में तथा बुनाई के उद्योग वाले कुछ जिलों में दुःख, अज्ञान और बुराई की बहुत बड़ी मात्रा विद्यमान थी। इसका एक चिह्न देश में महामारी के समान फैलने वाली सस्ती शराबों के पान करने की तीव्र लालसा थी। १७२९ ई० में तथा १७३३ ई० में पार्लियामेण्ट ने मद्यपान को रोकने के लिए अप्रभावशाली प्रयास किये। सम्भवतः इन्हें कानून द्वारा समाज सुधार की दिशा में पहला प्रयत्न समझा जा सकता है। किन्तु वे प्रयास तीन बोतल पीने वाले सदस्यों की असेम्बली द्वारा किये जाने के कारण शोभा-जनक नहीं थे। इस दिशा में कोई इलाज भी नहीं हो सकता था। समाज की अस्वास्थ्यकर दशा का एक अन्य चिह्न यह था कि इस बीच में बिलकुल कोई विशेष बात न होने पर भी आश्चर्यजनक सुगमता के साथ उग्र आन्दोलन उभाड़े जा सकते थे, जैसे कि निर्माण विधेयक (Excise Bill) के ऊपर बेहूदा उत्तेजना में अथवा एडिनबरा के पोर्टियस दंगों में अथवा अनेक छोटे दंगों में हुआ था। ह्विग सरकार ने लोगों को उत्तेजित होने के लिए बहुत कम अवसर दिया, किन्तु अप्राकृतिक और अस्वास्थ्यकर उत्तेजनाओं के निवारण का सर्वोत्तम उपाय यह नहीं है कि जनता को सोचने के लिए कुछ भी न दिया जाय। इसका उपाय यह है कि उन्हें सोचने के लिए बड़ी तथा उत्तम वस्तुएँ दी जाएँ।

इस बात के कुछ चिह्न थे कि फिर भी इस जड़तापूर्ण युग में एक नयी भावना उत्पन्न हो रही थी। इनमें से एक चिह्न परोपकार की तथा दूसरा मानवतावादी भावना का आरम्भ था, जिसे अगले युग में अत्यधिक उल्लेखनीय उत्कर्ष प्राप्त करना था। सारे देश में बड़ी संख्या में निःशुल्क विद्यालय स्थापित किये गये। यदि ब्रिटेन की परोपकारी संस्थाओं की, उनकी स्थापना की तिथियों साथ एक सूची तैयार की जाय, तो उससे यह ज्ञात होगा कि अनेक क्षेत्रों में (विशेष रूप से चिकित्सालयों के क्षेत्र में) पिछले मध्ययुग के पश्चात् एक लम्बी चुप्पी के बाद इस युग में नवीन कार्य आरम्भ हुए। दान से चलने वाले सार्वजनिक चिकित्सालयों की एक बड़ी संख्या की स्थापना इंग्लैण्ड के विभिन्न भागों में इसी युग में हुई। इनके साथ ही कुछ ऐसी भी संस्थाएँ थीं, जिनका उद्देश्य अभागे बच्चों को उत्तम जीवन का अवसर प्रदान करना था; जैसे लन्दन में कैप्टन कोरम का अनाथ बच्चों का अस्पताल अथवा लिवरपूल में अनाथों के

लिए कैप्टन ब्रियन ब्लण्डल का ब्लूकोट हास्पिटल। बच्चों के लिए दयालुता का भाव अन्तःकरण की जागृति का सदैव एक पहला चिह्न होता है। नवजीवन का दूसरा चिह्न ब्रिटिश जेलों में वीभत्स परिस्थितियों के बारे में चिन्ता का आरम्भ था। यह विशेष रूप से उन कर्जदारों के साथ किये जाने वाले व्यवहारों के बारे में थीं, जिन्हें मुक्ति की आशा के बिना भीषण जेलों में सड़ने के लिए छोड़ दिया जाता था।

इनके कष्ट दूर करने के लिए इस युग में किया जाने वाला सब से बड़ा साहसिक कार्य १७३३ ई० में जार्जिया के उपनिवेश की स्थापना थी। इस युग में स्थापित किया जाने वाला यह एक मात्र ब्रिटिश उपनिवेश प्रसिद्ध तेरह (१३) उपनिवेशों में अन्तिम उपनिवेश था और अपने पूर्ववर्ती किसी भी उपनिवेश के सर्वथा विपरीत यह न तो व्यापारिक मुनाफों के लिए स्थापित किया गया था (यद्यपि इस पीढ़ी के लिए इनका आकर्षण बड़ा प्रबल था) और न ही इसकी स्थापना किसी विशेष धार्मिक अथवा राजनीतिक विचारों को मानने वालों के प्रोत्साहन के लिये हुई थी। किन्तु इसकी स्थापना विशेष रूप से लोकोपकारी कारणों से ही की गयी थी। इसका उद्देश्य अभागे कर्जदारों को नया जीवन आरम्भ करने का अवसर देना था। इस उपनिवेश का संस्थापक जनरल जेम्स ओगलथोर्प था। यह लन्दन के फैशन वाले तथा साहित्यिक जीवन में एक सुप्रसिद्ध व्यक्ति था। यह जेलों की दशा देखने के लिए बनायी गयी पार्लियामेण्ट की कमेटी का अध्यक्ष रह चुका था। इस प्रकार इसे जो बातें मालूम हुई थीं, उनसे वह भयभीत था। इसके लिए आवश्यक धन सार्वजनिक परोपकार वृत्ति के लिए अपीलें करके इकट्ठा किया गया था। भूमि का अनुदान राजा से प्राप्त किया गया था, यद्यपि वालपोल इस योजना का घृणापूर्ण रीति से विरोध कर रहा था। वह इसे "उत्साह" का एक कार्य समझता था। ओगलथोर्प ने दस वर्ष से अधिक समय तक वास्तविक निःस्वार्थ भाव से अपने को एक उपनिवेश के विकास में लगाये रखा। वह यहाँ कर्जदारों के दो दल लाया और उसने उन्हें नया जीवन आरम्भ करने के साधन प्रदान किये। उसने यहाँ हाइलैण्ड के आवासकों के बसने के लिए भी जगह प्राप्त की। यह उपनिवेश स्पेन के आक्रमणों के विरुद्ध अपनी रक्षा के लिए मुख्य रूप से इन्हीं आवासकों पर निर्भर था। उसने साल्जवर्ग के आर्क बिशप के क्षेत्र से आने वाले अत्याचार पीड़ित प्रोटस्टेण्टों के एक दल का तथा बोहिमिया से आने वाले मोरेवियन लोगों के दूसरे दल का स्वागत किया। महान् विद्रोह से ठीक पहले तथा ह्विग लोगों की संकीर्ण और स्वार्थपूर्ण औपनिवेशिक नीति की तुलना में जार्जिया की स्थापना उपनिवेशन के कार्य में एक ऐसी नवीन भावना के आविर्भाव को सूचित करती है, जिस भावना से १९वीं शताब्दी में महान् फल उत्पन्न हुए। ओगलथोर्प ने शराबों के आयात पर पाबन्दी लगाने का तथा नीग्रो दासों के उपयोग को रोकने का प्रयत्न किया। किन्तु १७५२ ई० में जब यह उपनिवेश राजा को हस्तान्तरित किया गया तो ये दोनों प्रतिबन्ध समाप्त हो गये। इसीलिए इसे औपनिवेशिक सरकार की सामान्य पद्धति प्रदान की गयी।

३. वेल्स में धार्मिक पुनरुज्जीवन और मैथोडिस्ट आन्दोलन

किन्तु इस युग में आरम्भ होने वाले महान् पुनरुज्जीवनों की तुलना में नयी तथा अधिक स्वस्थ भावना के जन्म के ये चिह्न बिलकुल तुच्छ थे। इन्होंने अगले युग में निरन्तर

बढ़ने वाला प्रभाव डाला था और उन्हें कई प्रकार से भविष्य में ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के स्वरूप और विकास को प्रभावित करना था। प्रायः अपनी ओर सबसे अधिक ध्यान आकृष्ट करने वाला आन्दोलन मैथोडिस्ट आन्दोलन था। इसको नेतृत्व और प्रेरणा देने का कार्य वेसलीबन्धुओं ने तथा ह्वाइटफील्ड ने किया था। किन्तु वेसलीबन्धुओं के काम के साथ-साथ तथा प्रधान रूप से इससे स्वतन्त्र रूप में इसी प्रकार का एक उल्लेखनीय धार्मिक पुनरुज्जीवन वेल्स में हुआ। यह १७३५ ई० से आरम्भ हुआ। इसकी ओर कम ध्यान दिये जाने का एक मुख्य कारण यह था कि वह प्रधान रूप से वेल्स भाषा में चलाया गया था। वेल्स की अपेक्षा अन्यत्र कहीं नव जीवन अधिक आवश्यक नहीं था, क्योंकि कहीं भी सरकारी चर्च की मुर्दानगी इससे अधिक स्पष्ट नहीं थी। इसका यह परिणाम था कि १७३५ ई० के बाद से वेल्स की जनता चर्च से, तथा चर्च में प्रधान रूप से सम्मिलित होने वाली शासक श्रेणी की परम्पराओं और विचारों से अधिकाधिक रूप में सम्बन्ध तोड़ने लगी। वेल्स अपने लिए विचारों के एक विशिष्ट और स्वतन्त्र समूह को विकसित करने लगा तथा उपासना-गृह अथवा चैपल इन विचारों का केन्द्र बन गया।

एक वास्तविक अर्थ में १७३५ ई० का तथा उसके बाद के वर्षों का धार्मिक पुनरुज्जीवन आधुनिक वेल्स के इतिहास का आरम्भ था। ग्रिफिथ जोन्स तथा उसके साथी इवेंजेलिस्ट लोग वेल्स लोगों से उनकी अपनी अपेक्षित मातृभाषा में अपील कर रहे थे। इनकी अपील ने उग्रतम धार्मिक भावना को उद्दीप्त किया और उस कैल्टिक उत्साह (Hwyl) को जीवन प्रदान किया, जिसके बारे में पुराने भाट यह जानते थे कि उसे किस प्रकार उद्दीप्त किया जा सकता है। इसके बाद एक विलक्षण और स्वयं स्फूर्तिदायक शिक्षा आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ। भ्रमणशील पाठशालाओं द्वारा चलाया गया यह आन्दोलन आवश्यक रूप से शुरू में भद्दा और उथला था, क्योंकि इसके पास कोई ऐसे विद्या के केन्द्र नहीं थे, जहाँ से यह ज्ञान और बुद्धिमत्ता को प्राप्त कर सके। इसने पहले किसी समय भाटों द्वारा की जाने वाली कविता और गीत की पुरानी प्रतियोगिताओं को पुनः जागृत करने में भी भाग लिया। इस प्रकार से तथा अन्य प्रकारों से छोटे पर्वतीय राज्य में एक नयी राष्ट्रीय भावना के उत्थान को प्रोत्साहित करने में सहायता की। अब तक किसी व्यक्ति ने इस विकास के महत्त्व को नहीं समझा था। यह १९वीं शताब्दी के पिछले हिस्से तक राजनीति और पत्रकारिता के क्षेत्र से ऊपर नहीं उठा, किन्तु इसके प्रथम आरम्भ का श्रेय बुद्धिवाद और भौतिकवाद के उस युग को है, जो ऐसे किन्हीं अप्रसिद्ध आन्दोलनों को महत्त्व देने के विचार की मजाक उड़ाता था।

दूसरी ओर इंग्लैण्ड में आरम्भ से ही मैथोडिस्ट आन्दोलन ने शासक श्रेणियों के ध्यान को आकृष्ट किया था। ये श्रेणियाँ यह नहीं जानती थीं कि उन्हें उत्साह के इस विचित्र उद्रेक से अरुचि हो रही थी अथवा उनका इससे मनोरंजन हो रहा था, इन्होंने एक क्षण के लिए भी कभी यह अनुभव नहीं किया कि वे उस चीज़ की मजाक उड़ा रहे हैं, जो उनकी अपनी मन्त्रिमण्डलीय सौदेबाजी और शक्ति सन्तुलन विषयक सन्धिचर्चाओं की अपेक्षा राष्ट्र के जीवन के लिए असाधारण रूप से अधिक महत्त्वपूर्ण था।

जॉन और चार्ल्स वेसली शास्त्रीय ज्ञान की पर्याप्त विशिष्टता रखने वाले आक्सफोर्ड

के दो पुरुष थे, वे लिंकनशायर के एक कठोर परिश्रमी ग्रामीण पादरी के बेटे थे। उनके दादा और नाना दोनों १६६२ ई० में निष्कासित प्यूरिटन पुरोहित थे।१७२९ ई० में उन्होंने आक्सफोर्ड में एक लघु धार्मिक समाज की स्थापना की। इसके सदस्य मैथोडिस्ट के नाम से प्रसिद्ध हुए। लोगों की मज़ाक सहते हुए वे निजी प्रार्थना में लगे रहे, बीमारों, निर्धन व्यक्तियों तथा जेलों में अपराधियों के पास जाते रहे। इस समय उन्होंने जार्ज ह्वाइट-फील्ड से मित्रता की। यह एक सराय में सेवक था और पैम्ब्रोक कालेज में सेवा कार्य के बदले में महाविद्यालयों से सहायता पाने वाले छात्र के रूप में अपनी शिक्षा प्राप्त करने का यत्न कर रहा था। १७३५ ई० में दोनों वेसलीबन्धु जार्जिया की नवीन परोपकारपरायण बस्ती में गये। इसके उद्देश्य ने उनको प्रबल रूप से आकर्षित किया था। वे धर्म प्रचार के उत्साह से परिपूर्ण थे, उन्हें आशा थी कि वे नास्तिकों को ईसाई बनायेंगे। १७३८ ई० में वे निराश हो कर वापस लौटे। किन्तु उनके लिए नया क्षेत्र तैयार था। इस बीच में ह्वाइटफील्ड ने ब्रिस्टल के निकट किंग्सवुड के अधःपतित तथा उपेक्षित खनिक मजदूरों में प्रचार करना आरम्भ किया। खुले खेतों में प्रचार करते हुए उसने उनमें अत्यधिक आश्चर्यजनक उत्साह को उत्पन्न किया तथा अपने श्रोताओं के जीवन पर अधिकतम विस्मयकारी प्रभाव पैदा किया। वेसली ने ह्वाइटफील्ड से मशाल ले ली और १७३९ ई० में उसने महामार्गों पर और झाड़ियों में उन सभी स्थानों पर प्रचार का कार्य आरम्भ कर दिया, जहाँ-कहीं भी वह अपनी बात सुनाने के लिए नर-नारियों को एकत्र कर सकता था।

न तो वेसलीबन्धु और न ह्वाइटफील्ड स्थापित चर्च के प्रति अथवा इसकी पूजा पद्धतियों के प्रति किसी विरोध का अनुभव करते थे। वेसलीबन्धु अपनी मृत्युपर्यन्त इसका प्रति-पादन करते रहे कि वे चर्च का सदस्य थे। उनका उद्देश्य इसके कार्य को उपेक्षित जनता के प्रति एक अधिक सीधी अपील करके पूर्ण बनाना था, जिसे प्रार्थना-पुस्तक का औपचारिक वचन या पाठ सम्भवतः पूरा नहीं कर सकता था। यदि उन्हें चर्च द्वारा मान्यता दी जाती तो उनके कार्य का चर्च के नियमित कार्य के साथ वही सम्बन्ध होता, जो मध्य युग में सेण्ट फ्रांसिस और अन्य परिव्राजकों द्वारा किये गये कार्य का था। वस्तुतः वेसलीबन्धुओं के, ह्वाइट-फील्ड के तथा उनके अनुयायियों के जीवन और कार्य में सेण्ट फ्रांसिस की भावना से बहुत सादृश्य था। १३वीं शताब्दी में रोमन चर्च इतना बुद्धिमान् और मानवीय था कि उसने परिव्राजकों की सहायता का स्वागत किया। वालपोल के समय के इंग्लिश चर्च को वेसली से कोई मतलब नहीं था। इस चर्च को उसकी कार्यवाहियाँ कोरा उत्साह प्रतीत होती थीं। यह ऐसी रूढ़िग्रस्त नूतनता थी, जो सम्माननीय नहीं प्रतीत होती थी। ऐसा बहुत कम होता था कि कोई पादरी आक्सफोर्ड के इस विद्वान् को अपने चर्च में प्रचार करने की अनुमति दे। नवीन इवेंजेलिस्टों ने अपना समूचा सर्वोत्तम कार्य खुले आसमान के नीचे शहर की गलियों में, एक शुष्क पहाड़ी पर, एक जेल के आँगन में और एक शूकरशाला की छत से किया। वे जहाँ कहीं गये, वहाँ जन समूह उनके चारों ओर एकत्र हो गया। उन्होंने प्रेरणाप्रद अपीलों का पान उसी प्रकार किया, जैसे सूखी धरती पानी पीती है। प्रायः, वस्तुतः उपद्रवी तथा शराबी भीड़ों ने उन पर हमला। किया। उन पर पत्थर फेंके गये, उन्हें चोटें पहुँचायी गयी

और उन्हें पीटा गया; किन्तु किसी भी बात ने उन्हें अपने मार्ग से विचलित नहीं किया। सामान्य रूप से उनकी निर्भयता ने भीड़ को आतंकित करके शान्त कर दिया और उनकी भावनापूर्ण सच्चाई से प्रयुक्त की जाने वाली आश्चर्यजनक शक्ति जनसमूह को करुणार्द्र बना कर रुला सकती थी। अनथक रूप से उन्होंने ब्रिटेन और अमेरिका की सभी सड़कों और रास्तों पर पैदल तथा घोड़े की पीठ पर यात्रा की। इनमे से प्रत्येक व्यक्ति औसतन प्रति वर्ष पाँच हजार मील की यात्रा करता था। वेसली कई वर्षों तक नियमित रूप से एक सप्ताह में २० उपदेश देता था। वह अपने उपदेश प्रातःकाल पाँच बजे से आरम्भ करता था। उसके उपदेश सुनने वाले श्रोताओं की संख्या एक ही समय में तीस हजार तक होती थी।

यह लगभग असम्भव है कि इस अविच्छिन्न धर्म प्रचार द्वारा डाले गये प्रभाव का अत्युक्तिपूर्ण वर्णन किया जाय। कभी न शिथिल होने वाले प्रचार ने सब प्रकार के मनुष्यों को यह प्रेरणा दी कि वे अपनी आजीविका से ऊपर उठें और जीवन पर विचार करें, अपने को भाड़े के टट्टू न समझें, किन्तु भगवान् के पुत्र मानें। ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के सभी भागों की सारी मूक जनताएँ इनसे अनुप्राणित हुईं। उनको यह चुनौती मिली कि वे सब चीजों को तथ्य के रूप में निश्चित समझने की आदत छोड़ दें, अपने जीवन में परिवर्तन करें और अपने विचारों को उन वस्तुओं पर केन्द्रित करें, जो अपने से परे हैं। इस आन्दोलन के तीन महान् नेताओं में से प्रत्येक के अपने विशेष गुण थे। ह्वाइट फील्ड एक जोशीला वक्ता था। वह अब तक हुए सब से महान् वक्ताओं में से एक अवश्य था। वह चेस्टरफील्ड के अर्ल जैसे परिष्कृत सांसारिक व्यक्तियों को भी उस समय अपने साथ भाषण के प्रवाह में बहा कर ले जाता था, जब ऐसे व्यक्ति कौतूहलवश उसके भाषण सुनने उसके पास आते थे। उसके समूचे जीवन में उसकी सारी शक्ति मनुष्यों को उस आत्मसन्तोषी सामान्य बुद्धि के प्रभाव से बाहर निकालने में पूरी तरह से लगी रही, जिस पर यह युग गर्व करता था। वह मनुष्यों को यह चुनौती देता था कि वे जीवन के सम्बन्ध में तथा भगवान्, पाप और परलोक के बारे में चिन्तन किया करें। इन तीनों में से कोमलतम भावना वाला चार्ल्स वेसली इस आन्दोलन का कवि था। उसने सरल, प्रभावशाली, और भावनाओं से गूँजने वाले स्पन्दनशील गीतों का एक समूचा साहित्य उत्पन्न किया। मधुर स्वरयोजना प्रदान किये जाने पर इन गीतों ने राष्ट्र के एक बड़े भाग के मन तथा भावनाओं के पुनर्निर्माण में बड़ा भाग लिया। जॉन वेसली आश्चर्यजनक शक्ति वाला अनथक प्रचारक होने के साथ-साथ इस आन्दोलन का नेता और इसका सर्वोच्च संगठन-कर्ता था। उसने इसे ऐसी पद्धति प्रदान की, जिसने इसके नेताओं की वैयक्तिक प्रेरणा समाप्त हो जाने पर भी इसके प्रभाव को अपना कार्य करते रहने में समर्थ बनाया। जिस कार्य की चर्च के पादरी उपेक्षा कर रहे थे, उस कार्य को करने के लिए इन्होंने स्कूल बनाये, मिशन-कक्ष स्थापित किये, दान प्राप्त करने के लिए तथा धार्मिक सम्मेलन के लिए संगठन बनाये और संसारिक प्रचारकों के विशाल समुदाय इन कार्यों को करने के लिए भेजे।

वेसली को तथा उसके नेतृत्व में किये जाने वाले आन्दोलन को राष्ट्रीय चर्च के साथ सम्बन्ध बनाये रखने की अनुमति दी गयी। अन्त में उसके कार्य का परिणाम ब्रिटिश राष्ट्र-मण्डल के प्रत्येक भाग में फैला हुआ एक महान् मतभेद रखने वाला नया सम्प्रदाय था।

विभिन्न धर्मशास्त्रीय बातों में वेसली से मतभेद रखने वाले ह्वाइट फील्ड ने एक अन्य किन्तु अधिक छोटे सम्प्रदाय का संगठन किया। समय पा कर कुछ अन्य शाखाएँ भी विकसित हुईं। ये विकास उस युग से सम्बन्ध नहीं रखते, जिस युग से हमारा सम्बन्ध है, जब यह विशाल आन्दोलन केवल आरम्भ हो रहा था। महत्त्वपूर्ण होने पर भी मैथोडिस्ट संस्थाओं का निर्माण इन महान् इवेंजेलिस्टों के कार्य का अधिकतम महत्त्वपूर्ण पहलू नहीं था। राष्ट्रमण्डल के लिए उनकी सर्वोच्च देन यह थी कि उन्होंने निश्चल जलाशयों में हलचल पैदा की। उन्होंने मनुष्यों को उच्च प्रश्नों पर विचार करने के लिए कहा। उन्होंने सब मनुष्यों के, यहाँ तक कि अधिकतम उपेक्षित और अधःपतित व्यक्तियों के महत्त्व को प्रतिपादित किया। एक आत्मसन्तोषी तथा सामान्य बुद्धि वाले युग में उन्होंने उत्साह को पुनरुज्जीवित किया।

उनका कार्य उस समय केवल आरम्भ ही हुआ था, जब ब्रिटेन ने अपने आप को समुद्री और औपनिवेशिक प्रभुता के लिए एक विश्वव्यापी संघर्ष में खिंचा हुआ पाया। १७३९ ई० के जिस वर्ष में ह्वाइट फील्ड ने वेसली को किंग्सवुड की खानों के मजदूरों के लिए खेतों में प्रचार करने की प्रेरणा दी, उसी वर्ष में ही वालपोल को अनिच्छापूर्वक स्पेन के साथ लड़ाई में पड़ने के लिए विवश होना पड़ा था। जब (इवेंजेलिस्ट) ब्रिटेन की सब सड़कों पर मँडराने का काम कर रहे थे, उस समय यूरोप में, समुद्रों में अमेरिका में और सुदूरवर्ती भारत में लम्बे और विस्तीर्ण युद्ध की अग्नि बारी-बारी से कहीं भड़क रही थी और कहीं बुझ रही थी। लगभग २० वर्ष बाद पिट के अभिमानपूर्ण पथ-प्रदर्शन में यह संघर्ष उत्कट देश-भक्ति की पराकाष्ठा पर पहुँचा और राष्ट्रीय उत्साह की ज्वाला एक बार पुनः भड़क उठी। पिट और वेसली—दोनों व्यक्ति बहुत भिन्न होने पर भी एक विचित्र रीति से परस्पर सम्बद्ध हैं। वे ऐसे दो महान् हृदय थे, जिन्होंने आलस्य के दैत्य का संहार किया।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Stephen, English Thought in the Eighteenth Century; **Overton**, Life of Wesley; Wesley's journal (included in Everyman's Library); **Overton and Relton**, The English Church in the Eighteenth Century; Cambridge History of English Literature; **A.S. Turberville**, English Men and Manners in the Eighteenth Century; **N. Sykes**, Church and State in Eighteenth Century England; **W. H. Hutton**, Wesley; **Creed and Boys**, Religious Thought in the Eighteenth Century.

६

समुद्री और औपनिवेशिक प्रभुता के लिए महान् संघर्ष की पहली अवस्थाएँ

(१७३९-१७५५ ई०)

१. संघर्ष का आरम्भ

१७३९ ई० में पार्लियामेण्ट के विरोधी दल के दबाव से तथा पार्लियामेण्ट के बाहर राष्ट्रीय भावना की प्रबलता के कारण वालपोल को स्पेन के विरुद्ध अनिच्छापूर्वक युद्ध की घोषणा करने के लिए विवश होना पड़ा। एक प्रायः उद्धृत किये जाने वाले अनुप्रास में शान्ति-प्रेमी प्रधान मन्त्री ने परिस्थिति के बारे में उस समय अपना दृष्टिकोण प्रकट किया, जब उसने जनता की प्रसन्नता से भरी भावनाओं को सुना और यह कहा कि वे "अब खुशी में घण्टियाँ बजा (Ring) रहे हैं, किन्तु शीघ्र ही वे अपने हाथ मलेंगे (Wring)।" वह जानता था कि यह संघर्ष देर तक स्पेन के विरुद्ध एक आसान समुद्री युद्ध तक सीमित नहीं रहेगा। उसने फ्रांस के हस्तक्षेप को तथा उस फ्रेंको-ब्रिटिश मित्रता के अन्तिम विध्वंस को पहले ही देख लिया था, जो चिरकाल से ब्रिटेन की विदेश नीति का आधार बनी हुई थी और जिसने यूरोपियन शान्ति बनाये रखने के लिए इतना अधिक कार्य किया था। सबसे बढ़ कर उसे फ्रांस और स्पेन की उस प्रभावशाली गुटबन्दी की सम्भावना थी, जो दो पीढ़ियों से ह्विग राजनीतिज्ञों के लिए एक डरावना सपना बना हुआ था।

उसकी कल्पना उसे यहीं तक ले जा रही थी। उसने अब आरम्भ होने वाले समुद्री तथा औपनिवेशिक प्रभुता के लिए विशाल संघर्ष की अनिवार्यता को स्वीकार करने से इन्कार किया।

वस्तुतः न तो वह और न ही उसके उत्तराधिकारी उपनिवेशों के प्रश्न के महत्व को समझते थे। उनकी दृष्टि में यूरोप में शक्ति-सन्तुलन की तुलना में अमेरिका का कोई महत्व नहीं था। लुई १४वें के विरुद्ध युद्ध की स्मृति से प्रभावित होने के कारण, उन्होंने आस्ट्रिया के राजा के उत्तराधिकार के विशुद्ध यूरोपियन विवाद मे अपने को पड़ जाने दिया और उन्होंने इस पर अपनी सारी शक्ति व्यय कर दी। फ्रांस और स्पेन का शासन करने वाले राजनीतिज्ञ भी समान रूप से अन्धे थे। इसका परिणाम यह हुआ कि इस महान् प्रश्न का निर्णय देर तक टलता रहा। जो लड़ाई १७३९ ई० में आरम्भ हुई, वह लगभग बिना किसी विराम के २४ वर्ष तक निरन्तर चलती रही। संघर्ष लम्बा खिंच जाने पर यदि कुछ हाथों का मलना हुआ, तो इसका कारण अधिकांश रूप में लड़ाई की निरर्थकता थी, न कि ब्रिटिश जनता की ओर से इस युद्ध में उठने वाले प्रश्नों की महत्ता के बारे में कोई सन्देह था। ये प्रश्न कितने महान् थे, यह बात इस तथ्य से प्रदर्शित हो रही थी कि मानव इतिहास में यह पहला युद्ध था, जो अपने विस्तार की दृष्टि से विश्वव्यापी था। नयी दुनियाँ, पुरानी दुनियाँ, भारत, पश्चिमी अफ्रीका, वैस्ट इण्डीज और अमेरिका के दूरवर्ती सघन प्रदेशों के वनों में रहने वाली जन जातियाँ—ये सभी इस संघर्ष में उस समय तक खींच लिये गये, जब कि यह संघर्ष १७५८-६० ई० के वर्षों में अपनी भीषणता की चरम सीमा पर पहुँच गया।

२. स्पेन के साथ समुद्री युद्ध

इस लम्बे संघर्ष को शुरू करने वाला स्पेन के साथ किया जाने वाला युद्ध विशुद्ध रूप से एक समुद्री लड़ाई थी। इसमें ब्रिटेन को नौसैनिक प्रभुता के कारण एक तात्कालिक और प्रबल लाभ अवश्य मिलना चाहिए था। यद्यपि वालपोल ने नौसेना की संख्या एक काफी ऊँचे स्तर पर बनाये रखी थी, तथापि शान्ति के लम्बे समय में इसकी क्षमता का और मनोबल का ह्रास हो गया था। लड़ाई का पहला कार्य जलसेनापति वरनन की अध्यक्षता में एक स्थल सेना के साथ एक बेड़े को स्पेन के अमेरिकन साम्राज्य के सामरिक केन्द्र-पोर्टो बेल्लो तथा पानामा के स्थल डमरूमध्य पर हमला करने के लिए भेजना था। १७३९ ई० में पोर्टो बेल्लो पर सुगमतापूर्वक अधिकार कर लिया गया। किन्तु इसमें लूट का लगभग कोई माल नहीं मिला। इस पर अधिकार नहीं रखा गया, यद्यपि यह पेरू से होने वाले समूचे स्पेनिश व्यापार को अस्तव्यस्त कर देता। इसके बाद स्पेनिश समुद्र के मुख्य नगर कार्टेगेना पर अधिकार करने का प्रयत्न किया गया। नौ-सेना तथा स्थल-सेना के अध्यक्षों में झगड़े होने के कारण यह प्रयास भीषण रूप से विफल रहा। बाद में सेण्टियागो डी क्यूबा पर किया गया आक्रमण भी इसी प्रकार निष्फल रहा।

इस बीच में एन्सन के नेतृत्व में एक छोटी सेना स्पेनिश दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी समुद्र तट पर हमला करने के लिए केपहॉर्न भेजी गयी (१७४०)। आरम्भ में यह विचार था कि इस सेना को स्पेन के लिए खजाना लाने वाले समुद्री बेड़ों पर कब्जा करना चाहिए और पानामा स्थल-डमरूमध्य पर नियन्त्रण पाने के लिए प्रशान्त महासागर की दिशा की ओर से वरनन (Vernon) को भी इसमे सहयोग देना चाहिए। किन्तु भीषण तूफानों ने इस

बेड़े को तितर-बितर कर दिया। जब जूआन फर्नानडेज द्वीपों के राबिन्सन क्रूसो नामक टापू में एन्सन ने अपने बेड़े के शेष भाग को पुनः एकत्र किया, तो उसने यह पाया कि उसके पास केवल तीन जहाज थे। इनके साथ वह दक्षिणी अमेरिका के समुद्र तट के साथ-साथ बढ़ता चला गया। यहाँ उसने कुछ स्पेनिश जहाजों को लूटा। इसके बाद वह सीधा प्रशान्त महासागर को पार करने लगा। उसे यह आशा थी कि वह पेरू से मनीला भेजे जाने वाले खजाने ले जाने वाले दो विशाल स्पेनिश पोतों पर अधिकार कर लेगा। इस समय तक उसके पास केवल एक ही जहाज रह गया था, किन्तु वह सोने चाँदी के सिक्कों से भरे हुए एक बड़े जहाज को पकड़ने में सफल हुआ और ड्रेक की भाँति उत्तमाशा अन्तरीप (Cape of Good Hope) के मार्ग से वापस लौटा। इस आक्रमण ने स्पेनिश अमेरिका को आतंकित और परेशान किया। किन्तु इसका कोई दूसरा परिणाम नहीं हुआ। इसे मुख्य रूप से उस साहस के लिए याद किया जाता है, जिसके साथ इसने एक के बाद एक आने वाली मुसीबतों का सामना किया था तथा उन पर विजय पायी थी।[१] यह कार्य ब्रिटिश नौसेना की सर्वोत्तम परम्परा के अनुरूप था।

स्पेनिश युद्ध में यही घटनाएँ एकमात्र महत्व की घटनाएँ थीं। यद्यपि दोनों पक्षों की ओर से, विशेषतः वैस्ट इण्डीज के समुद्रों में व्यापारिक जहाजों का विध्वंस सक्रिय रूप में चलता रहा, तथापि लगभग रक्षाहीन स्पेनिश साम्राज्य पर एक प्रभावशाली प्रहार करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया। इन साहसिक कार्यों की निरर्थकता और विफलता १७४२ ई० में वालपोल के पतन के मुख्य कारण थे। यह बात उल्लेखनीय है कि लड़ाई की पहली अवस्था में फ्रांस ने कोई हिस्सा नहीं लिया था। वस्तुतः १७३३ ई० के व्यापारिक समझौते का कोई परिणाम नहीं निकला था। इसका कारण यह था कि ब्रिटेन के शासक-राजनीतिज्ञों की भाँति फ्रांस के [illegible] अब भी समुद्र पार के संघर्षों की महत्ता को बहुत कम समझ रहे थे। उनकी आँखें यूरोपियन मामलों पर केन्द्रित थीं और ऐंग्लो-स्पेनिश युद्ध आरम्भ होने के बाद शीघ्र ही १७५० ई० में यूरोपियन मामले एक नाजुक हालत में पहुँच गये थे। इन मामलों ने न केवल फ्रांस का ध्यान, अपितु इसी समय समुद्रों के पार होने वाले महत्वपूर्ण संघर्ष के कारण ब्रिटेन और स्पेन का भी ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया।

३· आस्ट्रियन उत्तराधिकार का युद्ध और समुद्री शक्ति का प्रभाव

१७४० ई० में दो यूरोपियन राजाओं का देहान्त हुआ। इसमें पहला प्रशिया का राजा फ्रेडरिक विलियम था। फ्रेडरिक विलियम के पिता ब्रैण्डनवर्ग के महान् इलेक्टर के बेटे फ्रेडरिक प्रथम ने लुई १४वें के विरुद्ध युद्ध में भाग लेने के अपने मूल्य के रूप में राजा का पद प्राप्त किया था (१७०० ई०)। फ्रेडरिक विलियम ने चार्ल्स १२वें के अधःपतन पर

---

१. एनसन्स वायेज राउण्ड दी वर्ल्ड नामक पुस्तक एक प्रभावशाली विवरण है और यह एवरीमैन्स लाइब्रेरी में प्रकाशित हुआ है।

स्वीडन की लूट के एक हिस्से के रूप में पश्चिमी पोमेरिया की[1] पट्टी प्राप्त की थी, किन्तु वह सामान्य रूप से एक शान्तिप्रिय राजा था। उसने अपनी शक्ति अपने प्रदेशों में अपनी निरंकुश सत्ता के संगठन को पूर्ण बनाने में, इन प्रदेशों की भौतिक समृद्धि के विकास में तथा एक अत्यधिक क्षमतापूर्ण ऐसी सेना के प्रशिक्षण में इसे बनाये रखने में लगायी, जो सेना उसके प्रदेश के आकार और साधनों की अपेक्षा बहुत बड़ी थी। वह सेना यूरोप में अधिकतम क्षमता रखने वाली सैनिक फौज थी। प्रशियन राज्य की मुख्य चिन्ता का विषय इसे बनाये रखना था। राज्य की भौतिक समृद्धि मुख्य रूप से इसलिए विकसित की गयी थी, ताकि यह इस सेना के भार को सहन कर सके। यह इरादा रखा जाता था कि इस सेना का प्रयोग प्रशिया के राजा के लिए नये-नये प्रदेश प्राप्त करने के लिए एक हथियार के रूप में किया जायगा। फ्रेडरिक विलियम की मृत्यु के बाद इस शक्तिशाली सेना पर नियन्त्रण पाने के लिए एक नवीन स्वामी उत्तराधिकारी बना। यह फ्रेडरिक द्वितीय था, यही बाद में फ्रेडरिक महान्[2] के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह प्रशिया की महत्ता का महान् निर्माता बनने वाला था। यह असीम योग्यता वाला तथा प्रबल महत्वाकांक्षी व्यक्ति था, यह धर्माधर्म के असुविधाजनक विचारों से पूर्णरूप से मुक्त था। यह सदैव उपद्रवपूर्ण परिस्थितियों में कार्य करने को उत्सुक था। यदि ये परिस्थितियाँ शान्त हों, तो इनमें विक्षोभ उत्पन्न करने के लिए वह उत्कण्ठित रहता था। उसका यह इरादा था कि बल से या छल से, प्रशिया के छोटे तथा निर्धन राज्य को यूरोप का एक महान् राज्य बना दिया जाय।

वांछित अशान्त स्थिति फ्रेडरिक विलियम की मृत्यु के बाद शीघ्र ही हैब्सबर्ग वंश के बिखरे प्रदेशों के वंशपरम्परागत शासक तथा निर्वाचन द्वारा सम्राट बने हुए चार्ल्स षष्ठ के देहान्त से प्रस्तुत हो गयी। सीधी वंशपरम्परा में चार्ल्स षष्ठ का कोई पुरुष उत्तराधिकारी नहीं था। हम यह देख चुके हैं कि किस प्रकार सभी सम्भव प्रतिस्पर्धी दावेदारों से तथा अन्य यूरोपियन शक्तियों से एक शाही फरमान (Pragmatic Sanction) पर सहमति लेने का प्रयत्न किया गया था। इसके अनुसार उसके वंशपरम्परागत प्रदेशों का अविभक्त उत्तराधिकार उसकी लड़की मेरिया थेरेसा को प्राप्त होना था। यह असीम अभिमान और साहस रखने वाली महिला थी। मेरिया थेरेसा नारी होने के कारण सम्राट् के उस मुकुट को नहीं ले सकती थी, जो हैब्सबर्ग वंश वालों के पास १५वीं शताब्दी से निरन्तर चला आ रहा था। इसका निर्णय सम्राट् को चुनने वाले आठ निर्वाचकों (Electors) को करना था। किन्तु चार्ल्स को यह आशा थी कि उसका जंवाई, टस्कनी का ड्यूक लोरेन का फ्रांसिस सम्राट् चुना जायगा। किन्तु यह बात निर्वाचकों पर निर्भर थी। किन्तु दूरदर्शिता जो कर सकती थी, वह चार्ल्स षष्ठ ने कर लिया था। यदि सब शक्तियों

---

१. प्रशिया के विकास के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या २४ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट ६७ (ए)।

२. डब्ल्यू० एफ० रैंडावे ने 'हीरोज ऑफ दी नेशन्स' ग्रन्थमाला में फ्रेडरिक दी ग्रेट की एक जीवनी लिखी है।

द्वारा दिये गये वचन का कोई महत्व था, तो मेरिया थेरेसा हैब्सबर्ग वंश के सभी परम्परागत प्रदेशों की उत्तराधिकारी बनने वाली थी, क्योंकि (बवेरिया के अतिरिक्त जिसका निर्वाचक इस उत्तराधिकार के लिए दावा करने वाले अनेक व्यक्तियों में एक था) यूरोप के सभी राज्यों ने चार्ल्स के शाही फरमान (Pragmatic Sanction) को स्वीकार कर लिया था। विशेष रूप से प्रशिया, स्पेन, फ्रांस, ब्रिटेन, रूस और साम्राज्य के छोटे राज्यों ने इसे मान लिया था।

आरम्भ में मेरिया थेरेसा शान्तिपूर्ण रीति से उत्तराधिकारी बन गयी। प्रशिया का फ्रेडरिक अपने पिता की प्रतिज्ञा को पूर्ण करने से भी अधिक दूर तक चला गया और उसने यह वचन दिया कि वह आवश्यकता पड़ने पर रानी की रक्षा करने के लिए अपने को तथा अपनी सेना को प्रदान करेगा। किन्तु यह जानबूझ कर दिया जाने वाला धोखा था। उस वर्ष के समाप्त होने से पहले ही उसने कुछ साइलेशियन प्रदेशों के बारे में पुराने दावे प्रस्तुत करने शुरू किये। इनके बारे में उसने सन्धिवार्ता करने का कोई प्रयत्न नहीं किया तथा सहसा अपनी सेना को साइलेशिया की महान् और समृद्ध डची में भेज दिया।[1] इसने एक अव्यवस्थापूर्ण युद्ध को शीघ्र ही आरम्भ कर दिया। फ्रेडरिक के साहस ने हैब्सबर्ग उत्तराधिकार के अन्य सभी लालची दावेदारों को प्रोत्साहित किया कि वे सभी अपने वचनों को भूल जायें और फ्रेडरिक की भाँति प्रैग्मैटिक सैंक्शन (Pragmatsc Sanction) को कागज का केवल रद्दी टुकड़ा समझें। फ्रांस ने इसमें अपने पुराने प्रतिस्पर्धी हैब्सबर्ग वंश के विनाश का अवसर देखा। इस विषय में उसके अपने कोई दावे नही थे, किन्तु उसने बवेरिया के इलेक्टर का सम्राट् के रूप में चुनाव सुरक्षित बनाने के लिए हस्तक्षेप किया तथा उसके समर्थन के लिए अपनी सेनाएँ रणक्षेत्र में भेज दी। शिकार के चारों ओर गिद्ध इकट्ठे हो गये। चार्ल्स षष्ठ की राजकीय आज्ञा पर हस्ताक्षर करने वाली महाशक्तियों में केवल ब्रिटेन ही अपने वचनों के प्रति सच्चा बना रहा। डच लोग इसे आधे दिल से मान रहे थे। अपने राजा के परिवर्तन के कारण ध्यान बँटा होने से रूस इसमें तटस्थ बना रहा।

इस प्रकार मेरिया थेरेसा को अपनी सत्ता के लिए लड़ना पड़ा। उसका समर्थन केवल छोटे ब्रिटिश, हनोवरियन और (बाद में) डच सैनिक दस्तों द्वारा तथा ब्रिटेन के धन और ब्रिटिश नौसेना की सहायता द्वारा किया गया। लुई १४वें के विरुद्ध पुराने महाद्वीपीय युद्ध के साथ इस संघर्ष के सादृश्य से अन्धे होने के कारण ब्रिटिश राजनीतिज्ञ समुद्र पार के अपने हितों को भूल गये और उन्होंने यूरोप के इस जटिल संघर्ष में अपने को पूरी तरह से उलझा दिया। फ्रांस और स्पेन भी इसी प्रकार विश्वसंघर्ष को भूल गये, यद्यपि उन्होंने ब्रिटेन के विरुद्ध पारिवारिक समझौते को १७४३ ई० में फिर से नया किया था। फ्रांस ने आरम्भ में अपने सारे प्रयत्न आस्ट्रिया पर बवेरिया के हमले का समर्थन करने में लगाये,

---

१. नक्शे के लिए एटलस की पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या १० और २४ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६१ तथा ६७ (ए) को देखिए।

बाद में ये प्रयत्न उसकी ओर से आस्ट्रियन नीदरलैण्ड्स को जीतने में लगाये गये। स्पेन को यह आशा थी कि वह अपने को इटली का स्वामी बना लेगा।

यह आवश्यक नहीं है कि इस अव्यवस्थापूर्ण संघर्ष का यहाँ विस्तार से वर्णन किया जाय। लुटेरी शक्तियों को लूट की इच्छा के अतिरिक्त एक सूत्र में बाँधने वाला अन्य कोई सामान्य प्रयोजन नहीं था। वे सन्धि के किसी औपचारिक दस्तावेज से भी सन्तुष्ट नहीं थीं। ब्रिटेन की मध्यस्थता द्वारा फ्रेडरिक द्वितीय को दो बार यह प्रेरणा की गयी कि वह मेरिया थेरेसा से इस शर्त पर सन्धि कर ले कि साइलीशिया पर उसका अधिकार बना रहेगा और दो बार विशिष्ट विश्वासघात के साथ उसने उस समय अपना वचन तोड़ा, जब उसे ऐसा करने में अपना स्वार्थ सिद्ध होता हुआ प्रतीत हुआ। गर्वीली रानी ऐसे समझौते करने के लिए अनिच्छुक थी, क्योंकि उचित एवं न्यायपूर्ण रीति से वह अपने किसी अन्य शत्रु की अपेक्षा फ्रेडरिक से अधिक घृणा करती थी तथा उसका अविश्वास करती थी। फ्रेडरिक ने न केवल उसके इस विश्वास को न्यायोचित सिद्ध किया, किन्तु उसकी स्वार्थपरता और बेईमानी के कारण उसके मित्र भी उस पर अविश्वास करने लगे। आरम्भ में फ्रांस औपचारिक रूप से भी आस्ट्रिया के साथ लड़ाई नहीं कर रहा था, किन्तु वह बवेरिया के मित्र के रूप में लड़ रहा था। १७४४ ई० तक उसने ब्रिटेन के विरुद्ध भी खुला युद्ध नहीं किया, यद्यपि दोनों शक्तियों की सेनाएँ रणक्षेत्र में एक-दूसरे के सामने आ चुकी थीं। इनमें से एक तो आस्ट्रिया के मित्र के रूप में और दूसरी बवेरिया के मित्र के रूप में रणक्षेत्र में आयी थीं। आस्ट्रिया के विनाश का निवारण तीन बातों से हुआ। पहली बात उसके शत्रुओं में एक सामान्य प्रयोजन का अभाव अथवा लड़ाई की सम्मिलित योजना का अभाव था। दूसरी बात मेरिया थेरेसा के प्रजाजनों, विशेषतः हंगेरियन लोगों द्वारा उनकी स्वामिभक्ति प्राप्त करने के लिए की गयी। उसकी अपीलों का वीरतापूर्ण प्रत्युत्तर था। तीसरी बात यह थी कि ब्रिटिश नौसेना की और ब्रिटेन की आर्थिक सहायता की शक्ति ने ही आस्ट्रियन सेनाओं को लड़ने के लिए समर्थ बनाये रखा।

इस अव्यवस्थित और उद्देश्यहीन संघर्ष का ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल पर बहुत ही कम प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश सेना एक बार पुनः यूरोप में प्रकट हुई। डेटिंगजन की युद्धयोजना बुरी तरह से तैयार की गयी थी, किन्तु इसमें वीरतापूर्वक लड़ कर विजय प्राप्त की गयी (१७४३ ई०)। यह वास्तव में एक निरर्थक जर्मन युद्ध में भाग लेना था। यह लड़ाई इसलिए उल्लेखनीय है कि यह ऐसी अन्तिम लड़ाई थी, जिसमें ब्रिटिश राजा ने रणक्षेत्र में सेना का नेतृत्व किया था। फ्रांस के साथ निश्चित रूप से युद्ध आरम्भ होने के बाद फोण्टेनाय की घमासान किन्तु असफल लड़ाई (१७४५ ई०) में उन्होंने पुराने समय की भाँति फ्रेंच सेनाओं को नीदरलैण्ड्स की विजय करने से रोकने का प्रयत्न किया। फोण्टनाय का स्मरण मुख्य रूप से इसलिए किया जाता है कि यह रोमांचक सौजन्य की एक ऐसी घटना के लिए प्रसिद्ध है, जिसे प्रायः फ्रेंच और ब्रिटिश सेनाओं के बीच लम्बी लड़ाइयों की शृंखला को सूचित करने वाली क्रीड़ावृत्ति के और वीरता के प्रमाण के रूप में प्रायः उद्धृत किया जाता है। किन्तु सेनाओं के इस दृश्य में कुछ बेहूदा बात यह है कि वे एक ओर तो लड़ाई के भीषण कार्य

में लगी हुई थीं और दूसरी ओर बैठकखाने की परिमार्जित शिष्टाचार सम्बन्धी विधियों का अनुसरण करते हुए एक दूसरे से पहले गोली चलाने की प्रार्थना कर रही थीं। यदि इस समय अधिकांश यूरोपियन सरकारों द्वारा प्रदर्शित की जाने वाली अधम और छिद्रान्वेषी नीति की पृष्ठभूमि के साथ इसकी तुलना की जाय तो यह प्रतीत होगा कि इस सौजन्य में ब्लैक प्रिन्स[1] के कृत्रिम शौर्य की वह अवास्तविकता है, जिसके अनुसार वह एक बन्दी राजा की सेवा कर सकता था, किन्तु इसके साथ ही हजारों साधारण व्यक्तियों का निष्ठुरतापूर्वक वध भी करवा सकता था।

जहाँ तक यूरोप में इस युद्ध का सम्बन्ध है, ब्रिटिश इतिहास की दृष्टि से इसकी सब से बड़ी विशेषता यह थी कि इसने समुद्री शक्ति के प्रभाव का तथा वालपोल के शासन-काल में क्षीण हुई ब्रिटिश नौसेना की शक्ति और भावना के क्रमिक पुनरुज्जीवन का प्रमाण प्रस्तुत किया। समुद्रों पर ब्रिटेन का उत्कर्ष अब अत्यधिक बढ़ गया था, क्योंकि डचों की शक्ति इस समय क्षीण हो रही थी। फ्रांस और स्पेन दोनों ने अपनी नौसेनाओं की उपेक्षा की थी। केवल संख्या की दृष्टि से भी ब्रिटेन की नौ-सेना उन दोनों की सम्भावित सेनाओं से अधिक थी। यद्यपि इसका उपयोग बुरे ढंग से किया गया था, तथापि नौ-सेना की शक्ति ने युद्ध के घटनाक्रम पर स्पष्ट प्रभाव डाला था। इस प्रकार भूमध्य सागर में ब्रिटिश बेड़े की उपस्थिति-मात्र ने वैसे ही महत्वपूर्ण परिणाम उत्पन्न किये, जैसे स्थल पर महान् विजयों ने उत्पन्न किये थे। १७४२ ई० में नेपल्स के बोर्बोन राजाओं ने उत्तरी इटली में आस्ट्रिया के प्रदेशों पर हमला करने में सहायता देने के लिए स्पेनिश लोगों को बीस हजार सैनिक भेजे थे, किन्तु नेपल्स के निकट उपस्थित होने वाले एक ब्रिटिश बेड़े ने राजा को बाधित किया कि वह इस सेना को वापस बुला ले और इस प्रकार बिना लड़े ही उसने ऐसी विजय प्राप्त की, जो बीस हजार व्यक्तियों की सेना के पूर्ण विनाश के समान थी। इसने उत्तर में स्थिति को बिगड़ने से बचा लिया। वस्तुतः इटली में समूचे युद्ध को गम्भीर रूप से इस तथ्य से बाधा पहुँची थी कि सेनाएँ और रसद समुद्र द्वारा नहीं भेजी जा सकती थी, अतः उन्हें फ्रांस में से तथा आल्पस पर्वतमाला के दर्रों में से होते हुए भेजना पड़ा था। फ्रांस ने ब्रिटेन के साथ औपचारिक रूप से सन्धि रखते हुए भी अपने बन्दरगाहों में स्पेन के समुद्री बेड़े को संरक्षण प्रदान किया। उसने अपने बेड़े को यहाँ तक आदेश दिया कि वह स्पेन के जंगी जहाजों को सुरक्षित स्थल तक उनकी रक्षा करता हुआ ले जाय और ब्रिटिश नौसेना द्वारा उन पर किये जाने वाले किसी भी आक्रमण का प्रतिरोध करे। इसके कारण युद्ध के पहले भाग की एकमात्र महत्वपूर्ण लड़ाई तूलोन (Toulon) के निकट (१७४४ ई०) एक ब्रिटिश बेड़े में फ्रांस और स्पेन के सम्मिलित बेड़ों के बीच में हुई। यह लड़ाई अनिर्णयात्मक

---

१. एडवर्ड तृतीय का ज्येष्ठ पुत्र युवराज—प्रिन्स ऑफ वेल्स एडवर्ड (१३३०-७६ ई०) ब्लैक प्रिन्स या कृष्ण राजकुमार कहलाता है। इसे ऐसा नाम देने का कारण यह नहीं था कि यह लड़ाई में काले रंग का कवच धारण करता था, अपितु इसका यह कारण था कि युद्ध में इसने अपने वीरतापूर्ण कृत्यों से शत्रुओं के हृदयों को संत्रस्त और भयभीत कर रखा था।

रही, क्योंकि इसमें सम्मिलित होने के लिए ब्रिटेन का पिछला (Rear) समुद्री बेड़ा नहीं पहुँच सका। इसके बाद अनेक कोर्ट मार्शल हुए। इनमें अनेक ब्रिटिश कप्तानों को बरखास्त किया गया। इस प्रकार इसके परिणामस्वरूप नौसेना का एक पुनः संगठन हुआ। इसे जल सेना विभाग के प्रथम लार्ड के रूप में एन्सन ने क्रियान्वित किया। इसके फलस्वरूप सर एडवर्ड हाक जैसे योग्यता रखने वाले तरुण अधिकारियों की पदोन्नति हुई। इस प्रकार इसने नौसेना को अगले युद्ध में इस सेना द्वारा लिये जाने वाले गौरवपूर्ण भाग लेने के लिए तैयार करने में सहायता की। किन्तु इस अनिर्णयात्मक युद्ध का भी सामरिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण परिणाम हुआ कि इसने फ्रेंच और स्पेनिश बेड़ों को बन्दरगाहों में बन्द कर दिया और इस प्रकार मेरिया थेरेसा के महाद्वीपीय शत्रुओं के विरुद्ध नौसेना का दबाव डालने में ब्रिटेन को समर्थ बनाया।

संघर्ष की एक पिछली अवस्था में (१७४४-४८ ई०) में जब फ्रांस ब्रिटेन के साथ औपचारिक रीति से लड़ रहा था, उस समय फ्रेंच आक्रमण द्वारा समर्थित एक जैकोबाइट विद्रोह के खतरे ने युद्ध को ब्रिटिश जनता के घर के बहुत निकट तक पहुँच दिया। आरम्भिक योजना यह थी कि हालैण्ड और बेल्जियम से १५ हजार व्यक्तियों की सेना को इंग्लैण्ड में जहाजों द्वारा उतारा जायगा। यह साहसिक कार्य १७४४ ई० के लिए निश्चित किया गया। इंग्लिश चैनल में ब्रिटिश बेड़े की उपस्थिति मात्र ने इसे विफल बना दिया; इसके साथ ही डन्कर्क के पास पड़े हुए अनेक जहाजों को नष्ट कर देने वाले तूफान ने इस योजना की निरर्थकता को प्रदर्शित करने में सहायता की। जब अगले वर्ष युवा अश्वारोही का वीरतापूर्ण प्रयत्न हुआ, तो फ्रांस उसे कोई सहायता देने में असमर्थ था। नौसेना ने ब्रिटेन को सुरक्षित बनाया और साथ ही साथ इसने अपने यूरोपियन साथियों की सहायता की, इसने फ्रांस के व्यापारियों को भीषण हानि पहुँचायी और इस प्रकार युद्ध को करने के लिए गहरी क्षति पहुँचायी तथा ब्रिटेन के इस समय भी बढ़ रहे व्यापार की रक्षा की। इस व्यापार ने उसे बड़ी आर्थिक सहायताओं द्वारा अपने मित्रों को सेनाएँ बनाये रखने के साधन प्रदान किये। यह लगभग निश्चित है कि नौसेना की सहायता के बिना मेरिया थेरेसा अवश्य कुचल दी जाती; किन्तु न तो उसने और न ही किसी यूरोपियन राजनीतिज्ञ ने और न ही ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने इन तथ्यों के महत्त्व का अनुभव किया।

४. समुद्र पार के देशों में फ्रांस और ब्रिटेन के संघर्ष का श्रीगणेश

नौसेना फ्रांस के उपनिवेशों पर तथा समुद्र पार के व्यापारिक हितों पर एक प्रबल आक्रमण को सम्भव बना कर कहीं अधिक निर्णयात्मक सेवाएँ कर सकती थी। वस्तुतः इसने बिलकुल निश्चित रूप से इस अवसर को ब्रिटिश सरकार के हाथों में ला दिया, बशर्ते कि वह इसका लाभ उठाने के कार्य में समर्थ होती। जिन वर्षों में फ्रांस और ब्रिटेन औपचारिक रीति से लड़ रहे थे (१७४४-४८ ई०), उन वर्षों में फ्रेंच बेड़े ने कभी भी पूरे बेड़े के साथ लड़ने की चुनौती देने का साहस नहीं किया। किन्तु १७४७ ई० में दो अवसरों पर उन्होंने खतरनाक क्षेत्र में व्यापारिक जहाजों की एक बड़ी संख्या की रक्षा करने के लिए

आठ तथा नौ जहाजों के दो बेड़े भेजे और इस प्रकार वैस्ट इण्डीज के साथ व्यापार बनाये रखने का प्रयत्न किया। एन्सन ने पहले बेड़े का विध्वंस कर दिया, हॉक ने दूसरे बेड़े पर विजय पायी। इस प्रकार महासागर के महामार्ग ब्रिटेन के नियन्त्रण में आ गये। बाद में पिट द्वारा संचालित किये जाने वाले, समुद्र पार के फ्रेंच प्रदेशों पर किये जाने वाले शक्तिशाली आक्रमण को रोकने वाली कोई बात नहीं थी; किन्तु यूरोपियन संघर्ष में पूर्ण रूप से संलग्न ह्विग सरकार ने इन स्वर्ण अवसरों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया और वह इस संघर्ष पर रुपया पानी की तरह बहाती रही।

फिर भी संघर्ष भारत में और अमेरिका में—दोनों स्थानों पर संघर्ष खुले रूप में आरम्भ हो गया। इसका कारण इन क्षेत्रों में फ्रांस तथा ब्रिटेन की प्रतिस्पर्धा थी भारत में संघर्ष के ऐसे आश्चर्यजनक और महत्वपूर्ण परिणाम हुए कि इनका अधिक विस्तृत वर्णन एक अगले अध्याय के लिए अवश्य सुरक्षित रखा जाना चाहिए।[१] संघर्ष की प्रथम अवस्था में फ्रेंच लोग सफल हुए, यद्यपि वे कमजोर थे। उन्होंने दक्षिणी भारत में ब्रिटिश प्रभाव के प्रधान केन्द्र—मद्रास के शहर को जीत लिया। इस परिणाम का वास्तव में यह कारण था कि ह्विग सरकार समुद्र पर ब्रिटेन की प्रभुता का पूरा उपयोग करने में विफल रही थी। उसने कुछ समय के लिए फ्रेंच लोगों को पूर्व के समुद्रों में प्रभुता स्थापित करने की अनुमति दे दी। भारत में संघर्ष चलाने वाले व्यक्ति प्रतिस्पर्धी कम्पनियों के स्थानीय अभिकर्ता थे। दोनों पक्षों—इंग्लैण्ड और फ्रांस की सरकारों ने इसमें बहुत कम दिलचस्पी ली।

इस प्रकार अमेरिका में भी स्वमेवप्रेरित स्थानीय प्रयत्न ने ही इस सघर्ष को चलाया। जब १७४५ ई० में फ्रांस के साथ लड़ाई छिड़ने का समाचार अमेरिका पहुँचा, तो मैसाचुसेटस् के जोशीले गवर्नर विलियम शरले (William Shirley) ने सेण्ट लारेन्स के मुहाने को नियन्त्रित करने वाले केप ब्रेटन टापू (Cape Breton Island) पर बने लुइसबर्ग के फ्रेंच दुर्ग पर आक्रमण करने का निश्चय किया। इस चढ़ाई के लिए चार हजार सैनिकों की भर्ती पूर्णरूप से अमेरिका के उपनिवेशों में और मुख्य रूप से मैसाचुसेट्स में की गयी थी। इंग्लैण्ड की सरकार को इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं कहा गया था कि वह वैस्ट इण्डीज के बेड़े से चार जहाजों को समुद्री मार्ग की रक्षा करने के लिए भेजे। नयी दुनियाँ में लुइसबर्ग अधिकतम पूर्णता के साथ बनाया गया दुर्ग था। इसकी रक्षा करने के लिए २५०० सैनिक थे और यहाँ इतनी ही संख्या में हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति बसे हुए थे। आक्रमण करने वाली सेना को एक तरंगताड़ित चट्टानी समुद्री तट पर उतारना था। उनकी सारी बन्दूकों और सामान को शत्रु का मुकाबला करते हुए तट पर ले जाना था। जिस भूमि पर उन्हें लड़ना था, वह बड़ी दलदलवाली थी। फिर भी पाँच सप्ताह के घेरे के बाद वे इस दुर्ग को तथा इस दुर्ग की समूची रक्षक सेना को आत्मसर्पण करने के लिए बाधित करने में सफल हुए। यह एक बड़ी शानदार सफलता थी। यद्यपि यह समुद्र पर प्रभुता के बिना सम्भव नहीं हो सकती थी, तथापि इस लड़ाई को चलाने वाले न्यू इंग्लैण्ड

---

१. नीचे आठवाँ अध्याय देखिए।

के सैनिको के साहस और सैनिक भावना को इस विजय का अधिकतम श्रेय है। महान् विद्रोह से पहले किसी भी ब्रिटिश उपनिवेश की यह सबसे अधिक शानदार सफलता थी।

किन्तु ह्विग सरकार उपनिवेशवासियों की इस आक्रमणात्मक भावना में कोई हिस्सा नहीं ले रही थी, इस प्रकार प्रस्तुत किये गये अवसर का कोई भी उपयोग नहीं किया गया। इस नाजुक अवसर पर प्रबल रूप से किये गये एक आक्रमण का निश्चित परिणाम फ्रेंच कनाडा की एक सुगम विजय होती, किन्तु ऐसा कोई हमला नही किया गया। इसकी योजना तक नही बनायी गयी। जैसा कि हम देखेंगे कि १७४८ ई० में लुईसबर्ग को पूरे दब्बूपन से फ्रांस को वापस कर दिया गया। इस पर मैसाचुसेट्स के व्यक्ति बहुत रुष्ट हुए और वे अपनी इस विजय की उपेक्षा के कारण इंग्लैण्ड से और भी अधिक पराङ्मुख होने लगे। बाद मे इसे कही अधिक कठिनाई के साथ पुनः जीतना पड़ा। लुइसबर्ग की अल्पकालीन हानि का मुख्य परिणाम यह था कि इससे फ्रांस की सरकार अमेरिका की समस्या के महत्व को समझने लगी और इसने उन्हें शान्ति के वर्षों का उपयोग नवीन संघर्ष की तैयारी करने की प्रेरणा प्रदान की।

१७४८ ई० में आस्ट्रियन उत्तराधिकार का भीषण युद्ध एक्स ला शापेल (Aix la-Chapelle) की सन्धि द्वारा समाप्त हुआ। इसके विस्तृत ब्योरे पर ध्यान देने की आवश्यकता नही है, क्योंकि यह विराम सन्धि से अधिक न तो कुछ थी और न कुछ हो सकती थी। यूरोप में इसका मुख्य परिणाम यह था कि प्रशिया के विश्वासघाती फ्रेडरिक ने अपनी धोखेपूर्ण हिंसा के पुरस्कार के रूप में साइलीशिया को अपने पास रखा, किन्तु आस्ट्रिया ने इस व्यवस्था को गम्भीरतम कटुता के साथ तथा इस निश्चय के साथ स्वीकार किया कि वह यथासम्भव जल्दी से जल्दी अवसर मिलने पर इस अन्याय का प्रतिकार करेगा। प्रशिया और आस्ट्रिया विभक्त जर्मनी के नेतृत्व के लिए प्रतिस्पर्धी हो गये और इस संघर्ष का नये सिरे से लड़ा जाना आवश्यक था। इसके बाद की अस्थिर शान्ति के आठ वर्षों में दोनों शक्तियाँ नवीन संघर्ष के लिए तैयारी कर रही थीं। जहाँ तक यूरोप का सम्बन्ध था, इस संघर्ष का यही मुख्य परिणाम था; अन्यथा यथापूर्व स्थिति (Status Quo ante) की ओर लौटना ही इन वर्षों के अव्यवस्थित युद्ध का परिणाम था। किन्तु इस यूरोपियन झगड़े के साथ सम्बद्ध एक अन्य महान् संघर्ष था। यह संघर्ष समुद्रों पर तथा समुद्र पार के देशों में प्रभुता पाने के लिए ब्रिटेन तथा फ्रांस और स्पेन की दो बोर्बोनवंशी शक्तियों के बीच में हो रहा था। इस संघर्ष में भी कोई निर्णय नही हुआ। ह्विग शासकों ने ब्रिटेन की जिस समुद्री शक्ति के उपयोग का कोई प्रयास नहीं किया था, उस शक्ति के बावजूद भी दोनों पक्षों को विजित प्रदेश लौटा दिये गये। ईस्ट इण्डिया कम्पनी को लुइसबर्ग के बदले में मद्रास वापस दे दिया गया और लुइसबर्ग फ्रांस को वापस लौटा दिया गया।

५. नाममात्र की शान्ति के वर्ष (१७४८-१७५५ ई०)

एक्स ला शापेल में कूटनीतिज्ञों की सौदेबाजी पूर्व और पश्चिम के दूरवर्ती प्रदेशों

में संघर्ष के विकास को नहीं रोक सकती थी। यद्यपि १७५० ई० में ब्रिटेन और फ्रांस द्वारा एक संयुक्त सेना आयोग नियुक्त किया गया था और इसकी बैठकें १७५५ ई० तक चलती रही थीं, तथापि इसके विचारों का कोई क्रियात्मक परिणाम नहीं हुआ। शान्तिपूर्ण साधनों से विवादों को निपटाने की इच्छा के विकास होने का यह एक उज्ज्वल चिह्न था। किन्तु हितों का संघर्ष इतना अधिक तीव्र था कि इस प्रकार उसका समाधान नहीं हो सकता था और दोनों स्थानों—भारत और उत्तरी अमेरिका में एक्स ला शापेल की सन्धि के बाद के नाम-मात्र की शान्ति के आठ वर्ष प्रतिस्पर्धी राष्ट्रों की लड़ाई से परिपूर्ण थे। यह लड़ाई इंग्लैण्ड और फ्रांस की सरकारों के आदेश से अथवा पथ-प्रदर्शन से नहीं हो रही थी, किन्तु यह लगभग अनिवार्य रूप से स्थानीय परिस्थितियों से उत्पन्न हो रही थी। भारत में और अमेरिका में दोनों स्थानों पर इसकी पहल फ्रेंच लोगों ने की। इनके भारतीय और कनाडियन प्रतिनिधि इन वर्षों में निश्चित रूप से विशाल साम्राज्यों की नीवें रखने का प्रयास कर रहे थे। दोनों देशों में फ्रांस की कार्यवाही ने ग्रेट ब्रिटेन के स्थानीय अधिकारियों को विरोधी कार्यवाही करने के लिए विवश किया और शनैः-शनैः इंग्लैण्ड में लड़ाई न चाहने वाली सरकार को उनका पक्ष लेने के लिए लाचार कर दिया। हम एक अगले अध्याय में भारत में हुए संघर्ष का वर्णन करेंगे। अमेरिका में संघर्ष की बढ़ती हुई उग्रता ने ही मुख्य रूप से इंग्लैण्ड की तथा फ्रांस की सरकारों को बाधित किया और ठीक उस समय खुले युद्ध की स्थिति उत्पन्न की, जब यूरोप की राजनीति के विकास ने यूरोप में एक नवीन संघर्ष को अनिवार्य बना दिया। इस अध्याय में हमारा विषय यह देखना है कि किस प्रकार पहले अमेरिका में और बाद में यूरोप में घटनाओं का दबाव पिछले युद्ध की निरर्थकता को तथा इसे समाप्त करने वाली अनिर्णयात्मक सन्धि को प्रभावशून्य बना रहा था।

इन वर्षों में फ्रेंच कनाडा के गवर्नर बिलकुल स्पष्ट रूप से अमेरिका में ब्रिटेन की शक्ति को भंग करने के साहसिक प्रयास के अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे और इस प्रयास के लिए तैयारी कर रहे थे। किन्तु ऐसी चुनौती देना कोरा पागलपन प्रतीत होता था; क्योंकि फ्रांस के उपनिवेशवासियों की अपेक्षा ब्रिटेन के उपनिवेशवासियों की संख्या बहुत ही अधिक थी; किन्तु फ्रेंच लोगों को कई लाभ थे। वे लगभग सभी व्यक्ति साहसी और दूरवर्ती सघन वन्य प्रदेशों में युद्ध कलाओं में प्रशिक्षित योद्धा थे, जब कि ब्रिटिश आवासक मुख्य रूप से किसान और व्यापारी थे। उनके रेड इण्डियन जनजातियों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। ब्रिटिश लोगों ने (इरोकुओई जनजाति के महत्वपूर्ण अपवाद के अतिरिक्त) सामान्य रूप से इनकी उपेक्षा की थी। नयी दुनियाँ में फ्रांस के सभी साधन एक स्वेच्छाचारी सरकार के हाथों में थे, जब कि ब्रिटेन के साधन विभिन्न प्रकार के ऐसे उपनिवेशों में बंटे हुए थे, जो एक दूसरे से ईर्ष्या करते थे तथा एक दूसरे के साथ सहयोग नहीं करना चाहते थे। प्रत्येक उपनिवेश में गवर्नर की सत्ता सामान्य रूप से प्रतिनिध्यात्मक असेम्बली की अदूरदर्शी नीति से प्रायः प्रभावशून्य बना दी गयी थी। ऐसा प्रतीत होता था कि स्वशासन से अक्षमता, फूट और उद्देश्य की पूर्ति में निर्बलता उत्पन्न हो रही थी और इससे ब्रिटिश लोगों को विध्वंस का खतरा था। फ्रेंच लोगों को निरंकुश राजतन्त्र के केन्द्रीकरण ने अधिक

समान शर्तों पर संघर्ष चलाने का और विजय तक प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया। फिर भी, अन्त में सर्वोच्च विवादास्पद प्रश्न यह था कि नयी दुनियाँ के भाग्य का नियन्त्रण क्या स्वशासन के सिद्धान्त करेंगे अथवा निरंकुश राजतन्त्र के।

एक्स ला शापेल की सन्धि के बाद के वर्षों में दो क्षेत्रों में संघर्ष उग्र हो गया। ये क्षेत्र एकेडिया और ओहियो की घाटी थे।[1] लुइसबर्ग पुन: प्राप्त कर लेने के बाद फ्रेंच लोगों ने इसकी किलेबन्दियों को सुदृढ़ बनाया और इनकी रक्षक सेना को बढ़ाया। ब्रिटिश सरकार ने जितनी जल्दी इस किले को छोड़ा था, उतनी जल्दी उन्होंने इसके महत्व को अनुभव किया तथा उस खतरे को समझा, जो इससे एकेडिया को था। १७४६ ई० में उन्होंने एकेडिया के समुद्र तट पर हैलीफैक्स में तीन हजार रक्षक सैनिक रखने वाले एक नये दुर्ग और नौसैनिक अड्डे का संगठन किया। उस क्षेत्र में यह पहली ब्रिटिश बस्ती थी। इसकी आठ हजार के लगभग समूची आबादी फ्रेंच थी। १७१३ ई० में इस एकेडिया के ब्रिटिश प्रदेश बनने के बाद से फ्रेंच किसानों के साथ अच्छा बर्ताव किया गया था, उनके धर्म में कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया था। यदि उन्हें स्वतन्त्र छोड़ दिया जाता तो वे सम्भवत: पर्याप्त मात्रा में सन्तुष्ट हो जाते। किन्तु जलडमरूमध्य के ठीक परे और १७१३ ई० से एकेडिया का प्रदेश समझे जाने वाले क्षेत्र में फ्रेंच लोगों ने रक्षक सेनाओं से युक्त किले बनाये रखे। ये किले उन्हें फ्रांस के राजा के प्रति पुरानी निष्ठा का स्थायी रूप से स्मरण कराने वाले थे। एकेडिया के किसानों पर प्रत्येक प्रकार का प्रभाव उन्हें यह प्रेरणा देने के लिए डाला गया कि अब भी उन्हें फ्रांस के राजा की आज्ञा का पालन करना चाहिए। सबसे बढ़ कर यह बात थी कि पुरोहितों का शक्तिशाली प्रभाव इस बात को उन पर अंकित करने के लिए लगाया जा रहा था कि कैथोलिक राजा के प्रति राजभक्ति रखना उनका धार्मिक कर्त्तव्य है। उन्हें प्राय: यह भी चेतावनी दी जाती थी कि वनों में भ्रमण करने वाले रेड इण्डियन भी उस दशा में उनके विरोधी बनाये जा सकते हैं, यदि वे ब्रिटिश ताज के प्रति राजभक्ति की शपथ लें, अथवा इसका पालन करें। फ्रेंच मिशनरी पुरोहितों के एक नेता एब्बे ल-लौतरे (Abbe le Loutre) ने वास्तव में इस शान्ति के युग में रेड इण्डियनों द्वारा लायी गयी प्रत्येक ब्रिटिश खोपड़ी के लिए इनाम प्रस्तुत किया और दिया। ब्रिटिश प्रदेश पर अपने किलों की दीवारों से एक मील की दूरी पर ब्रिटेन के सैनिकों के जीवन असुरक्षित थे। इसी कारण हैलीफैक्स में छोटी सी ब्रिटिश बस्ती अपने को अत्यधिक असुरक्षित समझती थी और आवश्यक रूप से अपने चारों ओर की सारी आबादी को अविश्वसनीय सम्भावित शत्रुओं के रूप में समझती थी। इसका परिणाम यह था कि १७५५ ई० में जब फ्रेंच तथा इंग्लिश लोगों के बीच में खुला युद्ध हुआ, तो नोवा स्कोशिया के ब्रिटिश प्रशासकों ने यह अनुभव किया कि वे अपने को विरोधी आबादी की दया पर

---

१. एकेडिया के नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५४ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५२; ओहियो घाटी के नक्शे के लिए देखिए पाँचवें संस्करण की प्लेट सं० ५५ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६३।

सुरक्षित रूप से नहीं छोड़ सकते। कई प्रभावशून्य चेतावनियों के बाद फ्रेंच आबादी के लगभग आठ हजार व्यक्तियों को अधिक दक्षिण की ब्रिटिश बस्तियों में निर्वासित किया गया। इनका हटाया जाना एक क्रूर कार्य था; किन्तु यह निश्चित रूप से उचित ही था।

इसी बीच में फ्रेंच लोगों ने ओहियो घाटी पर अधिकार करने और इसकी किलाबन्दी करने का निश्चय किया। यह घाटी एलेघेनी पर्वतमाला के बिलकुल पीछे थी। अब तक इस क्षेत्र में कोई फ्रेंच बस्ती नहीं थी। किन्तु कुछ अधिक साहसी ब्रिटिश आवासक पहाड़ों पर से मार्ग ढूँढ़ने लगे थे और वे रेड इण्डियन लोगों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध आरम्भ करने लगे थे। वे मुख्यरूप से वर्जिनिया से वनाच्छादित पर्वतों में से अनेक मार्ग ढूँढ़ते हुए आया करते थे। ब्रिटिश उपनिवेश पश्चिम में अनिश्चित रूप से विस्तीर्ण होने के अधिकार का अस्पष्ट दावा करते थे। फ्रेंच लोग मिसीसिपी घाटी के अपने अन्वेषण के आधार पर तथा पश्चिम में सैकड़ों मीलों की दूरी पर जंगलों में बसायी गयी अपनी बहुत कम तथा छोटी चौकियों के आधार पर समूचे विशाल केन्द्रीय मैदान पर अधिकार का दावा करते थे। एक्स ला शापेल की सन्धि के एक वर्ष बाद १७४९ ई० मे कनाडा के फ्रेंच गवर्नर ने ओहियो घाटी के अन्वेषण के लिए तथा इस पर फ्रांस का दावा करने के लिए एक अभियान दल भेजा। इन्होंने कुछ स्थानों पर शीशे की प्लेटें जमीन पर गाड़ दीं, जिन पर फ्रांस की प्रभुता के दावे अंकित थे। अन्य स्थानों पर उन्होंने कुछ पेड़ो पर फ्रेंच हथियारों को चित्रित करने वाली ढालों को कीलों से पेड़ों पर गाड़ दिया। रेड इण्डियन जातियों के साथ उन्होने सम्पर्क स्थापित किया और उन्हें कहा कि फ्रांस का राजा उनका पिता है। उन्होंने ब्रिटेन के व्यापारियों को निकाल दिया और ब्रिटिश गवर्नर को भेजे गये औपचारिक पत्रों में फ्रांस के सुरक्षित प्रदेशों में उनके चोरी से अनधिकृत प्रवेश करने की शिकायत की।

निष्कासित व्यापारियों से तथा शिकायत वाले पत्रों से उपनिवेशवासियों को यह ज्ञान हो जाना चाहिए था कि फ्रांस का खतरा वास्तविक था। अधिकांश उपनिवेशवासी इस विजय में उदासीन थे। किन्तु वर्जिनिया के साहसी स्काटिश डिप्टी गवर्नर राबर्ट डिनविड्डी ने कार्यवाही करने का निश्चय किया। १७५३ ई० में उसने वर्जिनिया के एक योग्य तरुण २२ वर्षीय जमींदार जार्ज वाशिंगटन को यह चेतावनी देने के लिए भेजा कि ऐसा करने वाले फ्रेंच व्यर्थ में टाँग अड़ाने वाले तथा हस्तक्षेप करने वाले थे। किन्तु इस प्रकार की चेतावनी का न्यूनतम प्रभाव पड़ने की भी तब तक सम्भावना नहीं थी, जब तक फ्रेंच लोगों को यह स्पष्ट न कर दिया जाय कि इसका समर्थन शक्ति से किया जायगा। डिनविड्डी ने तथा अन्य गवर्नरों ने इंग्लैण्ड की सरकार को आवश्यक खरीते लिखे और उससे यह प्रार्थना की कि वह इस प्रश्न की गम्भीरता को अनुभव करे। इंग्लैण्ड की सरकार ने इसका उत्तर देते हुए गवर्नरों को शक्ति के साथ शत्रु को पीछे धकेलने की अनुमति दी और इस बात पर बल दिया कि उपनिवेश इस विषय में मिलकर एक सामान्य कार्यवाही करें तथा किन्हीं भी आक्रमणों को रोकने के लिए इरोकुओई रेड इण्डियनों का सहयोग प्राप्त करने के लिए

उनके साथ संयुक्त रूप से सन्धि चर्चा करने पर बल दिया। उनका दृष्टिकोण यह था कि उपनिवेशवासियों को अपनी रक्षा स्वयमेव करने के लिए समर्थ होना चाहिए।

इसका परिणाम दो प्रकार का था। पहला तो यह कि कुछ मुट्ठीभर वर्जिनिया-वासी मोनोनगहेला (Monongahela) और एलेघेनी (Alleghany) नदियों के संगम पर एक जंगली प्रदेश वाला किला बनाने के लिए उस जगह भेजे गये; जहाँ आजकल पिट्सबर्ग का शहर बसा हुआ है। ओहियो घाटी पर ब्रिटेन के नियन्त्रण को सुरक्षित बनाने के प्रथम प्रयासस्वरूप यह किला निकट भविष्य में घनघोर लड़ाई का केन्द्र बनने वाला था।

दूसरा परिणाम इससे भी अधिक महत्वपूर्ण था। इरोकुओई देश के निकटतम स्थान—न्यूयार्क के एलबेनी में सभी उपनिवेशों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया गया। यह सम्मेलन १७५४ ई० में हुआ। यह उपनिवेशों की ओर से सामान्य कार्यवाही करने का प्रथम प्रयास था और पेन्सिलवेनिया के प्रतिनिधि बेंजमिन फ्रेंकलिन की अध्यक्षता में यह प्रस्ताव किया गया कि उपनिवेशों का एक घनिष्ठ संघ संगठित किया जाना चाहिए; इसका एक राष्ट्रपति और महापरिषद् होनी चाहिए, जिसे यह अधिकार दिया जाना चाहिए कि वह साम्राज्य की प्रतिरक्षा की आवश्यकताओं के लिए प्रत्येक उपनिवेश से मनुष्यों तथा धन के रूप में इसका समुचित अंश माँग सके। यदि यह योजना स्वीकार कर ली जाती तो यह ब्रिटेन के राजा की अध्यक्षता में उस यूनियन का पूर्ववर्ती रूप बनती, जिस यूनियन में राजा के विरोध के कारण उपनिवेशों को बाद में बाधित रूप से सम्मिलित होना पड़ा तथा यह सम्भवतः राष्ट्रमण्डल के इतिहास के समूचे क्रम को परिवर्तित कर देता। किन्तु उपनिवेशों की असेम्बलियाँ अपनी शक्तियों की रक्षा करने में इतनी अधिक ईर्ष्यालु थीं और अपने सामान्य हितों को समझने के लिए इतनी कम तैयार थीं कि ऐसा नहीं हो सका। उन्होंने सर्वसम्मति से इस योजना को रद्द कर दिया और इस प्रकार इंग्लैण्ड की सरकार पर रक्षा के लिए सामान्य प्रयत्न को संगठित करने, संचालित करने और प्रसंगवश इसके व्यय को वहन करने की जिम्मेदारी थोप दी।

इस बीच में संघर्ष का संकट अधिक निकट आ रहा था। १७५३ ई० के जिस वर्ष में वर्जिनिया के अग्रगन्ता अपना किला बना रहे थे, उसी वर्ष फ्रेंच लोगों ने इरीझील पर प्रेसक्विले में एक किला बनाया और एलेघेनी नदी के उपरले हिस्से तक जंगलों में से होकर एक रास्ता बनाया। इस रास्ते से प्रयाण करते हुए उन्होंने नदियों के संगम पर बने भद्दे किले से ग्रामीण सेनाओं को आसानी से बाहर भगा दिया। अगले वर्ष (१७५४ ई०) जब एलबेनी में कांग्रेस की बैठक हो रही थी, उस समय वाशिंगटन को चार सौ व्यक्ति देकर इस चौकी को पुनः प्राप्त करने के लिए भेजा गया। उसकी सेना में तथा फ्रेंच लोगों की एक छोटी सेना में एक मुठभेड़ हुई। इसमें फ्रेंच सेना का नेता मारा गया। महान् संघर्ष में पहली बार रक्त बहा था। इसने अमेरिका में और यूरोप में एक महान् हलचल पैदा कर दी। इसने दोनों देशों में फ्रेंच और ब्रिटिश सरकारों को काम में लगा दिया और उन्हें यह प्रेरणा दी कि उन्हें अवश्य निश्चित कार्यवाही करनी चाहिए। किन्तु इंग्लैण्ड और फ्रांस के अधिकारियों द्वारा कुछ भी किया जा सकने से पहले ही, अधिक संख्या में सैनिकों द्वारा

हमला किये जाने पर वाशिंगटन की सेना समर्पण करने के लिए बाधित हुई। ठीक उसी क्षण में, जब उपनिवेश सामान्य कार्यवाही करने से इन्कार कर रहे थे, फ्रेंच लोगों ने अपनी केन्द्रीय सरकार के संचालन में ओहियो घाटी पर स्वामित्व प्राप्त कर लिया। नदियों के संगम पर उन्होंने किले का पुनर्निर्माण किया। इसे सुदृढ़ बनाया और कनाडा के गवर्नर के सम्मान में इसे फोर्ट दुक्वेस्ने का नाम दिया।

ब्रिटिश सरकार अब भी यह आशा रखती थी कि उपनिवेश अपनी प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक सेनाएँ तथा धन के अधिकांश भाग को प्रस्तुत करेंगे। १७५५ ई० में इसने एक अनुभवी सेनापति जनरल एडवर्ड ब्रेडाक को सभी सेनाओं की कमान सँभालने के लिए नियुक्त किया। उसे चौदह सौ नियमित सैनिकों की दो रेजीमेण्टें एक उपनिवेशीय सेना का केन्द्र बनाने के लिए दी गयीं। किन्तु यह आशा की जाती थी कि प्रत्येक उपनिवेश उसके साथ उन सैनिक दस्तों और सामग्री के बारे में परामर्श देने के लिए एक आयोग नियत करेगा। यदि उपनिवेश एक सामान्य प्रतिनिधि-संस्था के निर्णयों को स्वीकार नहीं करेंगे, तो इस आयोग के सदस्य वैयक्तिक रूप से आवश्यक सैनिकों और सामग्री के लिए मतदान करेंगे। इस आशा का विफल होना निश्चित था। रक्षा का मुख्य भार, इसकी योजना बनाने का तथा नेतृत्व का समूचा उत्तरदायित्व इंग्लैण्ड पर छोड़ दिया गया। जब ब्रेडाक अमेरिका पहुँचा तो उसे यह ज्ञात हुआ कि उसे बहुत कम सहायता मिलेगी।

जब ब्रिटिश अधिकारियों की आशाएँ उपनिवेशों के सहयोग पर केन्द्रित थीं, उस समय फ्रेंच सरकार एक अनुभवी जर्मन कप्तान डीएस्को के नेतृत्व में तीन हजार व्यक्तियों की एक सेना कनाडावासियों को चैम्पलेन झील और हडसन नदी के महान् जलमार्ग द्वारा ब्रिटिश उपनिवेशों के मर्मस्थल पर सीधी चोट करने में सहायता देने के लिए भेज रही थी। इस सेना के भेजे जाने की बात ज्ञात होने पर ब्रिटिश सरकार ने जल सेनापति बास्केवन (Boscawen) को इसे सेन्ट लारेन्स के मुहाने पर रोकने के लिए कहा। यह कुहरे की सहायता से ही उससे बच सकी।

इस प्रकार १७५५ ई० में यद्यपि ब्रिटेन और फ्रांस अब भी नाम मात्र की शान्ति बनाये हुए थे, उन्होंने एक और वर्ष तक विधिपूर्वक युद्ध की घोषणा नहीं की, तथापि नियमित सेनाओं द्वारा विस्तृत युद्धों की योजनाएँ बनायी जा रहीं थीं और इन्हें क्रियान्वित किया जा रहा था। वास्तव में युद्ध १७५५ ई० में शुरू हुआ। हम इस साल की लड़ाइयों को उस महान् संघर्ष के वर्णन का आरम्भ समझेंगे जिसका प्रतिपादन अगले अध्याय में होगा।

इस बीच में यूरोपियन राज्यों की पारस्परिक आशंकाएँ शक्तियों की एक ऐसी नयी गुटबन्दी को उत्पन्न कर रही थी, जिसका भावी संघर्ष पर एक अतीव प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ना था। ब्रिटेन में घरेलू राजनीति का घटनाक्रम उस नेतृत्व के प्रश्न को उठा रहा था, जिस नेतृत्व में इस संघर्ष को लड़ा जाना था। अन्तिम संघर्ष का वर्णन करने से पहले इन दोनों घटनाओं के विकास का सर्वेक्षण करना आवश्यक है।

६. १७५६ ई० की कूटनीतिक क्रान्ति

जिस प्रकार एक्स ला शापेल की सन्धि फ्रांस और ब्रिटेन के मतभेदों के समाधान की अपेक्षा इन दोनों देशों की तीव्र औपनिवेशिक होड़ के आरम्भ होने की दृष्टि से महत्वपूर्ण थी, उसी प्रकार इसने यूरोप के महाद्वीप में भी सामान्य बेचैनी के तथा नवीन संघर्ष के लिए तैयारी के एक युग का श्रीगणेश किया। अशान्ति का केन्द्र प्रशिया का महान् फ्रेडरिक था, उसके बारे में सामान्य रूप से यह विश्वास किया जाता था कि वह पिछले युद्ध में साइलीशिया पर अधिकार करने का लाभ उठाने के बाद अब अपने लाभ के लिए शक्ति के सन्तुलन में एक और विक्षोभ करने का प्रयास कर रहा था। यह सन्देह समुचित था। १७५२ ई० में जब उसे यह विश्वास था कि वह मरने वाला है, उस समय उसने अपना एक राजनीतिक वसीयतनामा लिखा था। इसमें उसने अपने उत्तराधिकारी को यह प्रेरणा दी थी कि पोलैण्ड से पश्चिमी प्रशिया को लेकर और इससे भी अधिक आवश्यक रूप में सैक्सनी[1] के इलेक्टर के प्रदेश पर कब्जा करके प्रशिया के दूर-दूर तक फैले प्रदेश को इकट्ठा करने की प्रबल आवश्यकता है। उसने पहले उद्देश्य को १७७२ ई० में पोलैण्ड का अन्यायपूर्ण बँटवारा करवा के प्राप्त किया। दूसरे उद्देश्य को पाने का प्रयास उसने १७५६ ई० में सप्तवर्षीय युद्ध का आरम्भ होने पर किया। स्वाभाविक रूप से इन उद्देश्यों के सन्देह ने उस अविश्वास को बढ़ाया, जिसके साथ १७४० ई० से उसके व्यवहार को देखा जाता था।

दूसरी ओर आस्ट्रिया की मेरिया थेरेसा उसके विरुद्ध बदला देने के लिए जल-भुन रही थी। वह साइलीशिया को पुनः पाना चाह रही थी, किन्तु अपनी सफलता को निश्चित बनाने के लिए यह आवश्यक था कि एक ऐसे विरोधी गुट से अपनी रक्षा की जाय, जिस प्रकार के गुट का सामना उसे पिछले युद्ध में करना पड़ा था। आस्ट्रियन कूटनीतिज्ञों में अधिकतम चतुर व्यक्ति कौनित्स (Kaunitz) का यह दृढ़ मत था कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पिछली दो शताब्दियों से यूरोप की राजनीति को नियन्त्रित करने वाली परम्परा को उलटना होगा तथा रूस की नई शक्ति के साथ घनिष्ठ मित्रता बनाये रखते हुए फ्रांस और आस्ट्रिया के बीच में मैत्री स्थापित करनी होगी। जहाँ तक रूस का सम्बन्ध था, यह कार्य सुगम था क्योंकि इस समय रूस पर शासन करने वाली, जारीना एलिजा-बेथ को फ्रेडरिक से वैयक्तिक घृणा थी। निरंकुश राजाओं की नीति में इस प्रकार की वैयक्तिक भावनाओं का बड़ा महत्व होता था, किन्तु फ्रांस को मित्र बनाना अधिक कठिन था। ऐसा प्रतीत होता था कि पेरिस में राजदूत के रूप में १७५० ई० के बाद से कौनित्स इस उद्देश्य के लिए निष्फल प्रयास कर रहा था। किन्तु १७५६ ई० में यूरोप की स्थिति में एक आकस्मिक उलट-फेर हुआ।

निःसन्देह फ्रांस इन वर्षों में एक बड़ा अनिश्चित तत्व था। उसका निरंकुश राजा

---

१. प्रशिया के विकास के नक्शे के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण को प्लेट सं० २३ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट सं० ६७ (ए) देखिए।

लुई १५वाँ एक आलसी तथा लम्पट व्यक्ति था। वह न तो स्वयमेव राष्ट्रीय नीति की दिशा को निर्धारित करता था, जैसा कि लुई १४वाँ सदैव किया करता था , न ही वह किसी एक मन्त्री पर विश्वास करता था। वह मुख्य रूप से अपनी प्रेमिका मदाम द पाम्पदूर (Madame de Pompadour) से प्रभावित था, उसके तथा मदाम के शिथिल एवं निर्लज्जतापूर्ण शासन काल में फ़्रांस की सरकार अत्यधिक अयोग्य और भ्रष्टाचारपूर्ण हो गयी थी, निरंकुश राजतन्त्र ने अपने को निकृष्टतम रूप में प्रदर्शित किया था। एक अस्पष्ट रूप में फ्रेंच मन्त्री और राजनीतिज्ञ यह अनुभव करते थे कि ब्रिटेन की शक्ति के साथ होने वाला संघर्ष फ़्रांस की नीति की चिन्ता का प्रधान विषय होना चाहिए। अतः उन्होंने शान्ति के इन वर्षों में फ़्रांस की नौसेना को सुदृढ़ बनाने का बहुत कार्य किया, किन्तु ब्रिटेन की अपेक्षा फ्रांस में सुदृढ़ और स्पष्ट दूरदर्शिता का बहुत अधिक अभाव था; भारत में और अमेरिका में भी फ्रेंच अभिकर्ताओं की शक्ति और भक्ति बर्बाद की गयी, क्योंकि उन्हें फ़्रांस से बहुत कम समर्थन अथवा प्रोत्साहन मिला। इस प्रकार १७५४ ई० में लगभग बिना किसी सहायता के भारत में फ्रेंच साम्राज्य की नींव रखने वाले महान् डूप्ले को बदनामी के साथ वापस बुला लिया गया। कनाडा में फ्रांस के गवर्नरों को ऐसी आक्रमणात्मक नीति को आरम्भ करने के लिए प्रोत्साहित किया गया, जिस नीति का परिणाम केवल युद्ध ही हो सकता था। उन्हें इस नीति को क्रियान्वित करने के लिए सेनाएँ भी भेजी गयीं। उस समय फ्रांस में उस संघर्ष का मुकाबला करने के लिए कोई पर्याप्त तैयारी नहीं की गयी, जो संघर्ष इस प्रकार जबर्दस्ती उन पर थोपा जा रहा था। फ्रांस का स्वाभाविक मित्र स्पेन एक शान्तिपूर्ण नीति का अनुसरण कर रहा था। आगामी संघर्ष में स्पेन की सहायता पर भरोसा रखने में समर्थ होने की बात तो दूर रही, अपितु इस समय फ्रांस को मैड्रिड में ब्रिटिश कूटनीति की सफलता देखनी पड़ी। इसने एक बार पुनः **पारवारिक समझौते** को नगण्य बना दिया। यद्यपि फ्रेंच राजनीतिज्ञों ने युद्ध की सम्भावना का अनुभव किया; फिर भी उन्होंने कोई ऐसी स्पष्ट योजना नहीं बनायी कि यह युद्ध किस प्रकार संचालित किया जाना चाहिए। उनका मुख्य विचार इस आशा से स्थल मार्ग द्वारा हनोवर पर आक्रमण करने का प्रतीत होता था कि इससे या तो ब्रिटेन को फ्रांस की शर्तें स्वीकार करने के लिए बाधित किया जाय अथवा उपनिवेशों की हानियों के लिए क्षतिपूर्ति प्राप्त की जाय। हनोवर पर हमले के लिए हनोवर के पूर्व दिशा वाले पड़ोसी प्रशिया के साथ सन्धि उपयोगी थी। इसी कारण आरम्भ में आस्ट्रिया के साथ प्रस्तावित सन्धि आकर्षक नहीं थी, क्योंकि इससे प्रशिया के साथ शत्रुता में पड़ना पड़ता था। इस समय फ्रांस फ्रेडरिक को उसकी आक्रमणात्मक योजनाओं में किसी प्रकार से भी सहायता देने के लिए तैयार नहीं था। फ्रेंच सरकार की निर्बलता और अयोग्यता से घृणा करने वाले फ्रेडरिक को फ्रांस के साथ सन्धि करने में कोई विश्वास नहीं था।

इस समय बेकार हल्लागुल्ला करने वाले तथा नालायक न्यूकैसल के ड्यूक की अध्यक्षता में ब्रिटिश सरकार भी इसी प्रकार की निर्बलतापूर्ण दुविधा में फँसी हुई थी। वह युद्ध से बचना चाहती थी। उसने इसके लिए तैयारी करने में कोई उत्साह नहीं

प्रदर्शित किया था। फिर भी यह अनुभव किया जाता था कि लगभग अनिवार्य रूप से युद्ध होने वाला है और पिछली पीढ़ी की परम्पराओं के अनुसार इस बारे में मुख्य चिन्ता का विषय युद्ध छिड़ जाने पर हनोवर की सुरक्षा को सुनिश्चित बनाना था। फ्रांस से हनोवर की रक्षा करना आवश्यक था। किन्तु इसे पूर्व के पड़ोसी प्रशिया से भी खतरा था, क्योंकि इसके धूर्तता-पूर्ण लोभ से प्रत्येक व्यक्ति भयभीत था। परम्परा आस्ट्रिया के साथ पुरानी मैत्री-सन्धि के नवीकरण का सुझाव दे रही थी, अतः न्यूकैसल ने हनोवर की सुरक्षा की गारन्टी पाने के लिए आस्ट्रिया से सन्धिचर्चा आरम्भ कर दी। आस्ट्रिया यह गारन्टी केवल एक शर्त पर देने को तैयार था कि उसे इतनी पर्याप्त मात्रा में आर्थिक सहायता दी जाय कि उससे वह प्रशिया पर हमला करने तथा साइलीशिया की पुर्नविजय करने में समर्थ हो सके। किन्तु इसका अर्थ भिड़ों के छत्ते को छेड़ना था। ब्रिटेन महाद्वीप में युद्ध नहीं, किन्तु सुरक्षा को ही चाहता था। उसने आस्ट्रिया की योजना में अपना सहयोग देने से इन्कार कर दिया, इसलिए आस्ट्रिया के साथ लम्बी मैत्री सन्धि का अन्त हो गया।

१७५४ ई० में और इससे भी अधिक १७५५ ई० में, जब अमेरिका में पहले से ही वास्तविक युद्ध चल रहा था, उस समय हनोवर के लिए अतीव चिन्तातुर न्यूकैसल ने यूरोप की मैत्री सन्धियों को करने के लिए बड़ी निराशा के साथ ग्राहक खोजे। उसने रूस का परीक्षण किया और उससे यह समझौता किया कि यदि प्रशिया हनोवर पर हमला करेगा, तो रूस प्रशिया पर हमला कर देगा। किन्तु, अन्त में प्रशिया के विरुद्ध सर्वोत्तम संरक्षण प्रशिया के साथ ही मित्रता की सन्धि हो सकती थी। अन्ततोगत्वा न्यूकैसल ने इस विचार की शरण ली। फ्रेडरिक ने इस योजना का स्वागत किया। वह जिस युद्ध के लिए तैयारी कर रहा था, उसमें एक मित्र हनोवर द्वारा उसके पार्श्व की रक्षा किया जाना उसके लिए एक बड़ा लाभ था। अतः जनवरी १७५६ ई० में वेस्टमिन्स्टर में एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये। इसके अनुसार ब्रिटेन और प्रशिया ने परस्पर एक दूसरे के प्रदेशों को सुरक्षित रखने की गारण्टी दी। इस प्रकार महान् संघर्ष के आरम्भ में एक बार पुनः हनोवर की आवश्यकताओं ने ब्रिटेन को यूरोप के पेचीदा मामलो में उलझा दिया।

वेस्टमिन्स्टर के समझौते से फ्रांस के रुख में एकदम परिवर्तन आ गया। उसने यह समझा कि प्रशिया ने उसका साथ छोड़ दिया है, अतः उसकी सरकार ने अन्त में कोनित्स की आवश्यक बात को सुना, और मई १७५६ ई० में फ्रांस और आस्ट्रिया के बीच में एक सन्धि हुई। इसके अनुसार फ्रांस ने आस्ट्रिया को सेनाएँ और आर्थिक सहायता देना स्वीकार कर लिया और इस प्रकार उसने एक महान् यूरोपियन युद्ध में स्वयमेव भाग लेना मान लिया। यह उस मैत्रीसन्धि का आरम्भ था, जो एक पीढ़ी तक बनी रही और फ्रांस पर मुसीबतें ही लाती रही। यह राज्यों के उस महान् संघ का भी आधार था, जिसे बर्लिन के दुष्ट प्रवंचक के विध्वंस के लिए आस्ट्रिया ने शनैः-शनैः बनाया था। उसे पहले से ही रूस की मित्रता का निश्चय था। शीघ्र ही इस संघ में स्वीडन तथा साम्राज्य के छोटे राज्य भी सम्मिलित होने थे, जिनसे विश्वासपूर्वक यह आशा की जा सकती थी कि फ्रेडरिक को हरा दिया जायगा, क्योंकि फ्रेडरिक का एकमात्र मित्र ब्रिटेन था। वह रण-

क्षेत्र में बड़ी सेनाएँ नहीं ला सकता था और जिस ब्रिटेन के लिए यह निश्चित था कि अन्यत्र सेना की माँगों के कारण उसका ध्यान बँट जायगा। इस प्रकार १७५६ ई० में यह प्रतीत होता था कि फ्रांस और ब्रिटेन दोनों महान् संघर्ष के प्रधान प्रश्नों को दृष्टि से ओझल कर रहे थे।

फ्रेडरिक अपने खतरे को समझता था। उसके विरुद्ध गुटबन्दी अभी तक नहीं बनी थी, किन्तु अब यह बन रही थी। अगस्त १७५६ ई० में उसने एकाएक अपनी महान् सेना को सैक्सनी में फौरन भेज दिया। वह अपने इस पड़ोसी राज्य को अपने राज्य में मिला लेना चाहता था। उसने छोटी सैक्सन सेना को पिरना में बन्द कर दिया और इसे मुक्त कराने के आस्ट्रियन प्रयत्न को रोक दिया। इसे न केवल समर्पण करने के लिए अपितु उसके झण्डे के नीचे लड़ने के लिए विवश किया गया, इस प्रकार उसने सैक्सनी के सभी साधनों पर नियन्त्रण पाने के साथ युद्ध आरम्भ कर दिया, जैसे उसने पिछला युद्ध साइलीसिया पर अधिकार करने के साथ शुरू किया था।

न्यूकैसल ने यह आशा की थी कि जिस समय फ्रांस के साथ संघर्ष चलेगा, उस समय वह यूरोप में शान्ति बनाये रखेगा। प्रशिया के साथ मित्रता का उद्देश्य हनोवर को सुरक्षित बनाना था, न कि इसे बड़े खतरे में डालना था। किन्तु उसने यह हिसाब अपने शक्तिशाली मित्र का विचार किये बिना ही लगाया था। अब ब्रिटेन ने अपने को एक यूरोपियन युद्ध में उलझा हुआ पाया। यह उस महान् संघर्ष के अतिरिक्त था, जो समुद्रों पर अमेरिका में और भारत में चल रहा था और जिसमें वह पहले ही पड़ चुका था, जैसा कि हम देखेंगे कि इस संघर्ष में अब तक उस पर केवल मुसीबतें ही मुसीबतें आयीं थीं। १७५६ ई० के अन्त में जब फ्रेडरिक अपने सैक्सन विजय का उपभोग कर रहा था, उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि ब्रिटेन अपने इतिहास के भीषणतम संकट में पड़ा हुआ है और उसके ह्विग नेता उसे इस संकट से उभारने में असहाय थे।

७. ब्रिटिश राजनीति और महान् संघर्ष : पिट का आविर्भाव

आस्ट्रियन उत्तराधिकार के युद्ध के बड़े भाग में तथा शान्ति के पहले छः वर्षों में ब्रिटेन की विदेश नीति का संचालन करने वाला हेनरी पैलहम का "चौड़े आधार" वाला मन्त्रिमण्डल था। इसमें प्रत्येक गुट को सम्मिलित किया गया था और वह लगभग निर्विरोध था, यहाँ तक कि वालपोल के तथा कार्टरेट के समय में ब्रिटिश हितों को हनोवर के हितों का वशवर्ती बनाने के विरुद्ध गर्जना करने वाला तूफानी पिट भी आठ वर्ष तक सेनाओं के वेतनाध्यक्ष के रूप में कोई राजनीतिक महत्व न रखने वाले पद पर, पैलहम की अध्यक्षता में कार्य करने में सन्तुष्ट रहा था। घरेलू राजनीति में, ब्रिटिश इतिहास में यह अधिकतम जड़ता का युग था। यद्यपि पैलहम का संचालन रूप की दृष्टि से एक राष्ट्रीय मन्त्रि-मण्डल था, तथापि इस का संचालन वस्तुतः ह्विगों की विदेश नीति की परम्पराओं द्वारा किया जाता था। इसके शक्तिहीन पथ-प्रदर्शन में ही ब्रिटेन उस संकट में फँसता चला गया था, जिसमें वह अब अपने को पा रहा था। उस समय अविच्छिन्न रूप से 'पुरानी पद्धति'

जैसा कि इसे कहा जाता था, चलती रहीं। यह पद्धति यूरोप में शक्ति के सन्तुलन की ओर निरन्तर ध्यान देने की, हनोवर के संरक्षण के इरादे से मुख्य रूप से की जाने वाली मैत्री सन्धि की तथा आर्थिक सहायताओं को देने की और उपनिवेशों की आवश्यकताओं तथा खतरों की उपेक्षा करने की थी। ब्रिटिश राजनीति में प्रधान तत्व अब भी सार्वजनिक पदों पर व्यक्तियों को नियुक्त करने का अधिकार और बरो का प्रभाव थे, इनकी व्यवस्था करना मन्त्रियों की चिन्ता का मुख्य विषय था।

१७५४ ई० में हेनरी पैलहम का देहान्त हो गया और उसके माधुर्य से इकट्ठा टिका रहने वाला 'चौड़े आधार' का प्रशासन भंग हो गया। उसका स्थान उसके भाई न्यूकैसल के ड्यूक ने लिया। यह बरो-प्रबन्धकों का राजा और राजनीतिक भ्रष्टाचार की कलाओं में अतीव कुशल था। यह ह्विग अल्पतन्त्र (Oligarchy) का निकृष्टतम रूप था। राज्यसचिव (Secratary of State) के रूप में, न्यूकैसल यूरोपियन कूटनीति के अनन्त जाल के साथ चिरकाल से गम्भीर रूप से सम्बद्ध था। वह शान्ति बनाये रखने वाले यूरोपियन राज्यों के सन्तुलन की सर्वोच्च महत्ता में तथा आर्थिक सहायता देने वाली सन्धियों को निरन्तर करते हुए, इसे बनाये रखने की सम्भावना में अधिकतम विश्वास रखने वाला व्यक्ति था। किन्तु १७५४ ई० के वर्ष में जब मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन हुआ, तो यह वही वर्ष था, जिसमें अमेरिका के दूरवर्ती सघन वनों में भी युद्ध की अग्नि भड़क उठी और जिसमें ब्रिटेन को यह अनुभव करने के लिए विवश होना पड़ा कि उसके इतिहास में उत्पन्न होने वाला एक महान् संकट उसके समक्ष है। न्यू कैसल स्पष्टत: ऐसा व्यक्ति नहीं था, जो इस संकट में देश का पथ-प्रदर्शन कर सके। यद्यपि एक पीढ़ी की अवधि से उसका सम्बन्ध औपनिवेशिक समस्याओं से रहा था। फिर भी, वह जिद्दी ढंग से इनकी उपेक्षा कर रहा था। उसके लिए तथा उसकी पीढ़ी के अन्य राजनीतिज्ञों के लिए राजनीति का अर्थ यही था कि वे यूरोपियन कूटनीति के विफलतापूर्ण कार्यों में तथा पार्लियामेण्ट को कमीने ढंगों से नियन्त्रित बनाये रखने के कार्य में भाग लें। अपने मन्त्रिमण्डल के निर्माण में उसके सामने इसके अतिरिक्त कोई विचार नहीं होता था कि वह विभिन्न प्रकार के स्वार्थ रखने वाले व्यक्तियों को प्रसन्न करे और अपने नियन्त्रण में बने रहने वाले व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त करे। इसका परिणाम यह हुआ कि अपने भाग्य के संकट की घड़ी में, ब्रिटेन ने अपने को पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिकतम निर्बल और अयोग्य प्रशासन में पाया।

किन्तु सौभाग्यवश राष्ट्रीय अविश्वास को अभिव्यक्त करने और राष्ट्रीय भावना को उद्दीप्त करने में समर्थ एक शक्तिशाली विरोध का अभाव नहीं था। विलियम पिट चिरकाल से इस बात से व्यथित था कि वह वास्तविक राजनीति के प्रभाव से बहिष्कृत है। अब नयी व्यवस्था में उसने पदोन्नति की प्रत्येक सम्भावना से अपने को वंचित पाया। वह विरोधी दल में चला गया, और वालपोल तथा कार्टरेट के विरोध के दिनों की भाँति उसका गम्भीर गर्जन राष्ट्र को विध्वंस की ओर ले जाने वाले अन्धेपन और अयोग्यता का विरोध कर रहा था। ब्रिटिश राजनीति में एक मात्र वही ऐसी हर्षध्वनि थी जो कामन्स

सभा की अवगुण्ठित भित्तियों का भेदन कर सकती थी और अपने को किसी प्रकार समूचे राष्ट्र द्वारा सुनवा सकती थी। १७५५ और १७५६ ई० के दुर्दिनों में ज्यों-ज्यों एक मुसीबत के बाद दूसरी मुसीबत आती गयी, त्यों-त्यों पिट की भर्त्सनाएँ अधिक भीषण होती चली गयीं और राष्ट्र पूर्ण विनाश से उद्धार करने में समर्थ अपना एकमात्र नेता उसी को समझने लगा। न्यूकैसल की निर्बलता ने, साहस के अभाव ने और इनसे होने वाली पराजयों की लम्बी परम्पराओं ने इस प्रकार अपनी हानि की अधिकांश क्षति-पूर्ति की कि इन्होंने अल्पतन्त्रीय आत्मसन्तुष्टि के बन्धनों को भंग कर दिया तथा राष्ट्र की सेवा और नेतृत्व के लिए महानतम शासन करने का मस्तिष्क रखने वाले ऐसे व्यक्ति को प्रस्तुत किया, जो राष्ट्र ने क्रामवेल के बाद अब उत्पन्न किया था।

१७५६ ई० में विलियम पिट[१] ४८ वर्ष का था। यद्यपि उसने बीस वर्ष से अपनी सभी शक्तियाँ राजनीतिक जीवन में लगायी थीं, तथापि उसने अब तक कभी राजनीतिक शक्ति के अनुभव का कोई उपभोग नहीं किया था। वह मित्रों के उस छोटे समूह का सदस्य था, जिसका नेता लार्ड कावहम था और जिसमें महत्वाकांक्षी ग्रेनविल्ले बन्धु भी सम्मिलित थे। पिट ने १७५४ ई० में इन भाइयों की बहन के साथ विवाह किया। इस समूह के सदस्य के रूप में उसने सर्वप्रथम १७३५ ई० के बाद से वालपोल के विरोध में प्रदर्शित किये जाने वाले पौरुष और शक्ति से अपने को प्रसिद्ध बनाया। इसमें उस पर बोलिंगब्रोक के कुछ सिद्धान्तों का गहरा प्रभाव पड़ा, यद्यपि व्यक्ति के रूप में बोलिंगब्रोक पर अविश्वास करना उसने सीख लिया था। किन्तु सदैव उसके मुख्य विषय ये रहे—अपनी नौसैनिक शक्ति के ठीक उपयोग का ब्रिटेन के लिए सर्वोच्च महत्व, समुद्री और औपनिवेशिक प्रश्नों की अत्यधिक महत्ता, हनोवर की आवश्यकताओं से आदेश पाने वाली ब्रिटिश विदेश नीति की मूर्खता और बर्बादी तथा यूरोपियन मामलों की जटिलताओं के जाल में फँसना। इन विचारों से अनुप्राणित हो कर वह १७३९ ई० में वालपोल को युद्ध में पड़ने के लिए विवश करने वाले अधिकतम क्रियाशील प्रभावों में एक था। उसने उस ढंग की निन्दा करने में कोई कसर नहीं छोड़ी, जिस ढंग से इस युद्ध को पहले वालपोल द्वारा और बाद में कार्टरेट द्वारा संचालित किया गया था। उन आरम्भिक दिनों में भी अपनी भाषणकला के ओज और शक्ति के कारण उसे एक विशिष्ट स्थिति प्राप्त हुई थी। कामन्स सभा पर उसने पूरी तरह से अधिकार कर लिया था। वह एक लोकप्रिय वीर पुरुष बन गया था। वह समूचे यूरोप में प्रसिद्ध था। इंग्लैण्ड में फ्रांस के प्रतिनिधि उसके भाषणों के बारे में अपने देश को पत्र लिखना उपयुक्त समझते थे। १७४६ ई० में प्रशियन राजदूत ने अपने राजा को यह रिपोर्ट भेजी थी कि 'पिट कामन्स सभा में सबसे बड़ा वक्ता और राष्ट्र द्वारा सार्वभौम रूप से प्रेम किया जाने वाला पुरुष था।' उसने यह स्थिति केवल अपनी

---

१. पिट की प्रामाणिक जीवनी दो भागों में बेसिल विलियम्स ने लिखी है; यह एक सराहनीय रचना है। बारह इंग्लिश राजनीतिज्ञों की पुस्तकमाला में फ्रेडरिक हैरिसन ने पिट की एक छोटी जीवनी लिखी है।

भाषण शक्ति और साहस से ही प्राप्त की थी, क्योंकि न तो उसके पास सम्पत्ति थी, न ही बड़ा पद था और न ही उसके पास बरो का प्रभाव था।

१७४६ ई० में पिट ने पैलहम के नेतृत्व में सेनाओं का वेतनाध्यक्ष बनने के लिए अपने विरोध का परित्याग किया और शुरू में एक ऐसे पद की स्वीकृति ने उसकी कीर्ति को कुछ कलंकित किया जिस पद के द्वारा १८वीं शताब्दी के राजनीतिज्ञ महान् सम्पत्तियाँ बटोरने के आदी थे। किन्तु दरिद्र व्यक्ति होने पर भी पिट ने अपने पद की अवधि को इस बात से महत्वपूर्ण बनाया कि उसने इस पद द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले धन कमाने के उन सभी अवसरों का लाभ उठाने से इन्कार किया, जिन्हें उसके समकालीन व्यक्ति सर्वथा वैध समझते थे। उसने अपने कार्यालय द्वारा विदेशी सेनाओं को दी जाने वाली आर्थिक सहायताओं पर दिये जाने वाले सामान्य कमीशन को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। उसके अपने हाथ में बकाया रहने वाली महान् धन राशियों को उधार पर दे कर ब्याज कमाने से भी उसने इन्कार कर दिया, उसने धन की बर्बादी और गबन को रोकने के लिए बड़ा प्रयत्न किया। अपने पद पर रहते हुए उसने यह प्रदर्शित किया कि वह भ्रष्टाचार की उन उग्र निन्दाओं में बिलकुल सच्चा है, जो निन्दाएँ उसने विरोधी दल में रहते हुए की थीं। परन्तु उसकी सर्वोच्च इच्छा यह थी कि उसे अपने देश की सेवा के लिए उन महान् शक्तियों के प्रयोग का अवसर मिले, जिन शक्तियों के बारे में उसे यह ज्ञान था कि कि वे उसमें विद्यमान थीं। पैलहम-बन्धु यद्यपि उससे परामर्श करते थे और कई बार उसकी सलाह का अनुसरण करते थे, तथापि उन्होंने उसे कैबिनेट के दर्जे का कोई पद नहीं दिया। उसके सत्ता से बहिष्कृत किये जाने का कुछ कारण यह था कि राजा उसकी हनोवर-वंश का विरोध करने वाली वक्तृताओं को क्षमा नहीं कर सकता था। वह इस कारण भी बहिष्कृत था कि उसके पास 'प्रभाव' की कमी थी, क्योंकि उसके नियन्त्रण में रहते हुए कोई बरो वोट नहीं देते थे। अब उसने यह प्रदर्शित करना था कि जो व्यक्ति १८वीं शताब्दी की राजनीति की परिस्थितियों में भी, राष्ट्रीय संकट के समय में राष्ट्र का विश्वास और भरोसा पा सकता था, वह वाला व्यक्ति जनता के उसी समर्थन से ह्विग अल्पतन्त्र की सुदृढ़ रूप से जमी हुई शक्ति के भी विरुद्ध सफलता प्राप्त कर सकता था।

इस महापुरुष का व्यक्तित्व अपने युग पर हावी था, वह ब्रिटिश राजनीति में साम्राज्य के नवीन विचार का प्रेरणा देने वाला और इसका प्रवक्ता था; किन्तु यह व्यक्तित्व सर्वथा निर्दोष नहीं था। वह अपने व्यवहारों में बेहूदा ढंग से नाटकीय कार्य करने वाला व्यक्ति था। वह एक अत्यधिक प्रभाव डालने वाला साथी था, उसमें अपने विरोध को सुनने का धैर्य नहीं था। उसके साथ काम करना बहुत कठिन था। जो व्यक्ति अधिकतम श्रद्धा के साथ उसमें विश्वास रखते थे, वे भी प्रायः यह पाते थे कि उनकी निष्ठा पर दैवीय (Olympian) रहस्यवाद के उस वातावरण का प्रभाव पड़ रहा था, जिसमें अपने को आवेष्टित करना उसे प्रिय था। उसके स्पष्ट रूप से सुचिन्तित कोई राजनीतिक सिद्धान्त नहीं थे और वह सदैव परस्पर विरोधी विचार रखने का दोषी था। शासन के महान कार्य के लिए उसकी बौद्धिक योग्यता कई अंशों में दोषपूर्ण थी, किन्तु उसकी देशभक्ति की भावनापूर्ण प्रगाढ़ता

में, उसकी कल्पना की साहसिकता और दिलेरी में अथवा ब्रिटिश जनता में और अपने आप में उत्कृष्ट विश्वास रखने में कोई व्यक्ति सन्देह नहीं कर सकता था अथवा इससे इन्कार नहीं कर सकता था। उसने कहा था, "मैं जानता हूँ कि मैं ही अपने देश की रक्षा कर सकता हूँ और कोई भी दूसरा व्यक्ति ऐसा नहीं कर सकता।" उसके प्रेरणादायक विश्वास में ऐसी शक्ति थी कि उसके मुँह से उपर्युक्त वाक्य गर्वोक्ति नहीं प्रतीत होता था। उसे अपने समकालीन व्यक्तियों से भिन्न बनाने वाली तथा उसे राष्ट्र की भक्ति का पात्र बनाने वाली बात यह थी कि वह प्रबल और सच्चे विश्वासों से स्पष्टतः प्रेरित हो रहा था। वह अपने देश में तथा इसके भविष्य की महत्ता में विश्वास रखता था तथा वह स्वतन्त्रता में विश्वास रखता रखता था, यद्यपि वह इसकी व्याख्या करने में समर्थ नहीं था। उसमें ये दोनो विश्वास मिल कर एक हो गये थे, क्योंकि उसके लिए इंग्लैण्ड स्वतन्त्रता की जननी था। उसकी विजय स्वतन्त्रता की विजय थी। उसकी श्रद्धा की उग्रता ने तथा उसके अभिमानपूर्ण विश्वास और साहस ने उसे अपने अनुयायियों को प्रेरणा देने में और राष्ट्र में चिरकाल से विस्मृत उत्साह को जागृत करने में समर्थ बनाया। यह उसके देश के लिए सौभाग्य की बात थी कि वह उन सभी गुणों से समृद्ध रूप में सम्पन्न था, जो गुण उसकी उत्कण्ठित आत्मा को यह नेतृत्व प्राप्त करने में समर्थ बना सकते थे तथा जिनका वह अधिकारी था। एक भव्य चालढाल ने, श्येनतुल्य मुख मुद्रा ने, दग्ध एवं भयभीत करने में समर्थ आँख ने, सुरीली आवाज ने तथा पौरुषपूर्ण वाग्मिता के प्रत्येक साधन पर एक आश्चर्यजनक अधिकार रखने की विशेषता ने उसे 'कामन्स सभा' पर ऐसा हावी होने में समर्थ बनाया, जैसा अब तक या उसके बाद से कोई व्यक्ति इस पर हावी नहीं हुआ है। जिन दिनों पार्लियामेण्ट के विवादों की रिपोर्ट अखबारों में नहीं छपती थी, उस समय भी वह राष्ट्र के मन पर अपनी ज्वालामयी शक्ति की एक मूर्ति अंकित करने में समर्थ हुआ था। महान् फ्रेडरिक ने कहा था "इंगलैण्ड चिरकाल से प्रसूति व्यथा में था, किन्तु अन्त में उसने एक पुरुष पैदा किया है।" अब राष्ट्र का संकट उस तरफ से आया था, जिस ओर राष्ट्र के समुद्र पार के कार्यों का समूचा लम्बा विकास इंगित कर चुका था। इसके साथ ही राष्ट्र को इसके आलस्य से जगाने के लिए भी एक महापुरुष आया था। इस बात को पुष्ट करते हुए उसके नवीनतम और सर्वोत्तम जीवनीलेखक ने कहा है, "इस महान् सामान्य व्यक्ति (Great Commoner) की प्रधान कीर्ति साम्राज्य को जीतना नहीं, किन्तु जनता को संयुक्त बनाना है।" हम इस बात को आगे देखेंगे कि विफलता के जिन अन्धकारपूर्ण वर्षों के साथ यह महान् संघर्ष आरम्भ हुआ था, उन वर्षों में भी पिट का साहस और विश्वास तथा वह ओजस्विता राष्ट्र को जागृत करने की और उसे एक बनाने की महान् सेवा कर रहे थे, जिस ओजस्विता के साथ वह युद्ध में विफलता को उत्पन्न करने वाली अयोग्यता की भर्त्सना कर रहा था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

For a summary of European affairs see **Hassall**, Balance of Power; **Marriott** and **Robertson**, Rise of Prussia; **Atkinson**, History of

Germany in the Eighteenth Century; **Ward,** England and Hanover; **Carlyle,** Frederick the Great; **G. L. Beer,** British Colonial Policy, 1745-65; **Egerton**, British Colonial Policy, Conquest of Canada; **Lecky,** History of England in the Eighteenth Century; **Robertson,** England under the Hanoverians; **Williams**, William Pitt; **B. Williams**, The Whig Supremacy; **R. Lodge**, Studies in Eighteenth Century Diplomacy; Cambridge History of the British Empire; **D. B. Horn**, Sir Charles Hanbury Williams and European Diplomacy 1747-58.

• •

७

विलियम पिट तथा ब्रिटेन द्वारा समुद्री और औपनिवेशिक प्रभुता की स्थापना

(१७५५–१७६३ ई०)

१. अन्धकारपूर्ण दिवस

१७५५ ई० की वसन्त ऋतु में एक साहसी और सच्चा सिपाही, यूरोप के महाद्वीप की युद्ध की पद्धतियों में प्रशिक्षित, किन्तु दूरवर्ती सघन वन्य प्रदेशों की लड़ाई की पद्धतियों से अपरिचित, जनरल एडवर्ड ब्रेडॉक ओहियो घाटी को वापस लेने के लिए भेजे जाने वाले सैनिक दल की कमान संभालने के लिए दो रेजीमेण्टों के साथ वर्जिनिया पहुँचा। उसे यह आशा थी कि विशाल औपनिवेशिक सेनाएँ उसके साथ मिल जायेंगी। किन्तु उसे केवल छः सौ अस्थायी सैनिक प्राप्त हो सके और इनका व्यय भी ब्रिटेन के राज्य कोष से दिया जाना था; यहाँ तक कि आवश्यक गाड़ियाँ और रसद अत्यधिक कठिनाई के साथ ही प्राप्त की जा सकी थीं। ब्रेडौक पर उपनिवेशवासियों के साथ सहानुभूति रखने का दोष लगाया जाता है; किन्तु उसकी अधीरता आश्चर्यजनक नहीं है।

जून में वह फोर्ट ड्यूक्वेस्ने (Duquesne)[१] तक मार्गहीन वनों में सौ मील से अधिक दूरी के एक कूच पर एलघेनी पर्वतमाला के पार जाने के लिए अपनी छोटी सेना के साथ रवाना हुआ। ये जंगल ऐसे रेड-इण्डियन लोगों से भरे हुए थे, जो फ्रेन्च

१. नक्शे के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५५ तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६३ देखिए। इस समूचे अध्याय में इस नक्शे का प्रयोग किया जाना चाहिए।

लोगों की सेवा कर रहे थे तथा ब्रिटेन के पक्ष में कोई भी रेड-इण्डियन नहीं थे। अपने सर्वोत्तम व्यक्तियों के साथ आगे बढ़ने वाला ब्रेडौक जब फोर्ट ड्यूक्वेस्ने से नौ मील दूर रह गया, उस समय जंगलों में छिपे हुए आठ सौ रेड-इण्डियनों की अदृश्य सेना ने इस पर हमला किया। ये सैनिक पेड़ों के पीछे तथा झाड़ियों वाली पहाड़ियों के पीछे छिपे हुए परेड के रूप में व्यवस्थित उत्तम कवायद करने वाले व्यक्तियों के एक सघन समूह पर गोलियाँ चला रहे थे। अभागी सेना ने जम कर मुकाबला किया, अपने अज्ञात शत्रुओं पर अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलायीं और खड़े-खड़े ही वे गोलियों का निशाना बना दिये गये। ब्रेडौक स्वयमेव मारा गया। सेना का एक अल्प भाग ही तरुण वाशिंगटन की चतुराई से बचाया जा सका। इससे न केवल फ्रेन्च लोगों को ओहियो घाटी का प्रभुत्व मिल गया, किन्तु ब्रिटिश उपनिवेशों के सीमान्त प्रदेश उनके हमलों के लिए और रेड-इण्डियन जन-जातियों के धावों के लिए खुल गये। लगभग ये सभी जन-जातियाँ बड़ी उत्कण्ठा से विजयी पक्ष के साथ मिल गयी थीं। यह महान् संघर्ष की पहली घटना थी। उपनिवेशों में विद्यमान नियमित सैनिकों की एकमात्र सेना समाप्त हो गयी। खतरे में पड़े हुए उपनिवेश स्वयमेव अपनी रक्षा के लिए कुछ भी नहीं कर रहे थे।

इस बीच में उत्तर में फ्रेन्च लोग (जिनके पास पाँच हजार नियमित सैनिक तथा कनाडा के सभी सशस्त्र पुरुष थे) न्यू इंग्लैण्ड को दक्षिणी बस्तियों से पृथक् करने के लिए चैम्पलेन झील तथा हडसन नदी की घाटी में नीचे की ओर आगे बढ़ने की तैयारी कर रहे थे। न्यू इंग्लैण्डवासी अपने दक्षिणी पड़ोसियों की अपेक्षा अधिक ओजस्वी थे। उन्होंने इस संकट का सामना करने के लिए छः हजार व्यक्ति एकत्रित किये और इन्हें सर विलियम जॉनसन की कमान में रखा। यह एक क्रियाशील आयरिश व्यक्ति था और इरोकुओई लोगों में इसका बड़ा प्रभाव था। फ्रेंच लोगों ने जार्ज झील पर इन सैनिकों पर भी छिप कर हमला किया। ये सैनिक ब्रेडॉक जैसी मुसीबत से केवल इसीलिए बच गये कि ये अनुशासन द्वारा एक जगह इकट्ठे नहीं थे। वे जंगलों का ज्ञान होने के कारण बच कर भाग निकलने में समर्थ हुए। पुनः व्यूहरचना करने के बाद उन्होंने एक नये फ्रेंच आक्रमण को पीछे धकेलने में सफलता पायी। किन्तु जब लड़ाई समाप्त हुई तो उनके पास हडसन घाटी के प्रवेश-मार्ग की रक्षा करने वाले लेक जार्ज की तलहटी में बने हुए किले ही थे। फ्रेन्च लोग क्राउन प्वाइन्ट और टिकोंडेरोगा के अपने किलों पर आश्रित थे। संख्या की दृष्टि से तथा लड़ाई की तैयारी में वे अधिक उत्कृष्ट थे और अगली लड़ाई में अंग्रेजों के प्रतिरोध को भंग करने का खतरा बने हुए थे।

इस प्रकार अमेरिका में १७५५ ई० का पहला औपचारिक युद्ध ब्रिटिश पक्ष के लिए विपत्तिजनक था। फ्रेन्च लोगों की विजय निश्चित प्रतीत होती थी। शीत काल में वर्जिनिया और पेन्सिलवेनिया के सीमान्त प्रदेश रेड-इण्डियनों के ऐसे हमलों से आतंकित होते रहे, जिनमें सैकड़ों नर-नारियों और बच्चों की हत्या की गयी। मुट्ठीभर आदमियों के साथ वाशिंगटन चार सौ मील लम्बे सीमान्त की रक्षा नहीं कर सकता था। यद्यपि उसने इसकी रक्षा के लिए अपनी ओर से अच्छे से अच्छा यत्न किया; फिर भी उपनिवेशों के अधिकारी अधिकांश रूप में आलसी बने रहे तथा ब्रिटेन की सहायता पाने के लिए प्रतीक्षा करते रहे। पेन्सिलवेनिया की

विधान-सभा ने सार्वजनिक प्रतिरक्षा करने के लिए एक डालर या एक आदमी भी वोट द्वारा देना स्वीकार नहीं किया।

यह काफी बुरा समाचार था, किन्तु शीघ्र ही इससे भी बुरा समाचार आने वाला था। इंग्लैण्ड में एक फ्रेन्च आक्रमण की आशंकाएँ थीं। इंग्लिश चैनल में फ्रेन्च सेनाएं एकत्र हो रही थीं और ब्रैस्ट के नावांगन (Dockyard) व्यस्त थे। ब्रिटिश नौसेना व्यापक रूप से बिखरी हुई थी; उसमें व्यक्तियों की कमी थी। यद्यपि फ्रान्स की नौसेना की संख्या बहुत कम थी, तथापि यह फ्रान्स के बन्दरगाहों में थी और लड़ाई के लिए सारी सेना की सहायता उपलब्ध हो सकने वाली प्रतीत होती थी। इंग्लैण्ड के समीपतर संकट से रक्षा के लिए भूमध्य सागर से ब्रिटिश पोतों को वापस बुलाना पड़ा। यही बात फ्रेन्च लोग चाहते थे। अप्रैल १७५६ ई० में एकाएक और गुप्त रूप से बिना युद्ध घोषणा के रिशेल्यू के ड्यूक के नेतृत्व में डेढ़ सौ परिवहन पोतों में पन्द्रह हजार सैनिकों को सुरक्षित रूप से ले जाने वाला फ्रेन्च बेड़ा तूलोन से मिनोरका के विरुद्ध भेजा गया। यह आक्रमण पूर्ण आश्चर्य के साथ हुआ था। मिनोरका का गवर्नर और तीन हजार दुर्गरक्षक सैनिकों वाली सभी सेनाओं के कर्नल छुट्टी पर गये हुए थे। पोर्ट मेहोन का घेरा डाला गया। इसकी किलेबन्दियाँ टूट गयीं और इसका पतन लगभग निश्चित-सा प्रतीत होने लगा। इसी समय मई मास के पिछले हिस्से में जलसेनापति बिंग फ्रेन्च बेड़े के ही लगभग बराबर संख्या वाले जहाजों के बेड़े के साथ इंग्लैण्ड से आया। यदि विरोधी बेड़े को नष्ट करने में बिंग समर्थ होता, तो रिशेल्यू और उसकी सेना नष्ट हो जाने के तुल्य होती, भले ही वे पोर्ट मेहोन पर अधिकार कर लेते। बिंग ने एक छुटपुट अनिर्णयात्मक लड़ाई लड़ी। इसमें उसकी कुछ बुरी हालत हो गयी। इसके बाद वह पीछे हट कर जिब्राल्टर चला गया और उसने मिनोरका टापू को अपने भाग्य पर छोड़ दिया। जून के अन्त में पोर्ट मेहोन का पतन हो गया। इसी वर्ष नवम्बर में फ्रांस को जिनोआ के गणराज्य से कोर्सिका के टापू पर भी नियन्त्रण प्राप्त हुआ। ऐसा प्रतीत होता था कि तूलोन, कोर्सिका और मिनोरका उसे भूमध्य सागर का प्रभुत्व प्रदान कर रहे थे।

इन घटनाओं ने ब्रिटेन में जो महान् आतंक उत्पन्न किया था, वह अमेरिका की विपत्तियों से पैदा किये गये दुःखपूर्ण प्रभाव से भी अधिक बढ़ा हुआ था। १७०८ ई० से मिनोरका भूमध्य सागर में प्रधान ब्रिटिश नौसैनिक अड्डा था। यह महान् संघर्ष उस गम्भीर प्रहार के साथ आरम्भ हुआ, जो १६६० ई० में बीची हैड की लड़ाई के बाद ब्रिटेन की नौशक्ति द्वारा किया गया था। नौशक्ति पर ही ब्रिटेन की अपनी सत्ता और इसी पर अमेरिका में सफलता की सम्भावना पूर्ण रूप से अवलम्बित थी। बिंग को वापस बुला लिया गया। उसका कोर्टमाशल किया गया तथा वह दोषी पाया गया। उसका दोष कायरता नहीं, किन्तु मिनोरका को बचाने के लिए अधिकतम प्रयत्न नहीं करना था। युद्ध के नियमों के अनुसार उसे मृत्युदण्ड दिया गया। यद्यपि उस पर दया करने की सिफारिश की गयी थी, तथापि आतंक से प्रेरित जनता की माँग उसका वध करवाना चाहती थी।

जब इंग्लैण्ड में मिनोरका के विषय में उत्तेजना अपने चरम शिखर पर थी, उस समय फ्रेन्च और ब्रिटिश दोनों अमेरिका में उत्पन्न स्थिति के लिए तैयारी कर रहे थे। फ्रांस ने अनन्त साहस और महान् योग्यता वाले, अनेक रेजीमेण्टों के तुल्य महत्व रखने वाले सैनिक मार्क्विस द मोंतकाम को युद्ध का सेनापतित्व सँभालने के लिए बारह सौ नये सैनिकों के साथ अमेरिका भेजा। न्यूकैसल के ड्यूक ने लार्ड लौडोन को भेजा। यह ऊँचा दर्जा रखने वाला एक सम्माननीय सिपाही था, किन्तु आसानी से हिम्मत हार जाता था और इसमें योग्यता और साहस का पूर्ण अभाव था। ब्रॅडॉक की सेना के भग्न अवशेषों में वृद्धि करने के लिए मोन्तकाम की कमान में विद्यमान सात हजार नियमित सैनिकों का मुकाबला करने के लिए उसे नौ सौ व्यक्तियों की एक रेजीमेण्ट दी गयी थी। मुख्य रूप से न्यू इंग्लैण्ड में भर्ती किये गये कई हजार उपनिवेशवासी भी उसके साथ आकर मिले, किन्तु वे अधिकांश रूप में अप्रशिक्षित पुरुष थे। प्रत्येक उपनिवेश बड़ी सतर्कता से अपने सैनिक दस्तों का नियन्त्रण करता था। उपनिवेशवासी नेताओं में परस्पर तथा ब्रिटिश अधिकारियों के साथ निरन्तर संघर्ष चलता रहता था।

यह बात आश्चर्यजनक नहीं है कि इन परिस्थितियों में अमेरिका में १७५६ ई० की लड़ाई बुरी तरह से चली। एकमात्र आश्चर्यजनक बात यह है कि इसका अन्त एक भीषण विपत्ति के रूप में नहीं हुआ। ओहियो घाटी में कुछ भी नहीं किया गया। वर्जिनिया और पेन्सिलवेनिया कोई भी सैनिक देने के लिए तैयार नहीं थे। उस समय केवल यही सम्भव था कि (पहले की अपेक्षा) सीमित सीमान्तों की प्रतिरक्षा की जाय। अधिक उत्तर में मोन्तकाम ने महान् झीलों पर अवस्थित ओसवेगो के एकमात्र ब्रिटिश किले पर अधिकार कर लिया और उसे नष्ट कर दिया। यह दुर्ग मित्रतापूर्ण सम्बन्ध रखने वाली इरोकुओई जनजाति के देश में था और अलबेनी से मोहाक नदी की घाटी द्वारा इस तक पहुँचा जाता था। इसके छिन जाने से फ्रेन्च लोगों के लिए मोहाक नदी से आगे बढ़ने का रास्ता खुल गया तथा लेक जार्ज पर गतिरोध पैदा हो गया। जब एक ओर लौडोन ने एडवर्ड और विलियम हेनरी के ब्रिटिश किलों को मजबूत बनाया और झील पर उपयोग के लिए किश्तियों के एक बेड़े का निर्माण किया; उस समय दूसरी ओर मोन्तकाम भी ऐसे ही कार्यों में लगा हुआ था। यद्यपि दोनों पक्षों के सीमान्त सैनिकों का सुन्दर एवं दुस्साहसपूर्ण युद्ध बड़ी मात्रा में चलता रहा, तब भी फ्रेन्च लोगों का पलड़ा भारी रहा। १७५६ ई० में अमेरिका में ब्रिटिश पक्ष के लिए सफलता की कोई सम्भावना नहीं थी।

यह बात हमारे लिए बहुत सन्तोष की नहीं थी कि हमारे एक मात्र महाद्वीपीय मित्र प्रशिया के फ्रेडरिक ने धोखा दे कर सैक्सनी पर अधिकार कर लिया था और उसने महाद्वीपीय संघर्ष आरम्भ कर दिया था। इससे केवल यही बात निश्चित हुई थी कि यूरोप में उग्र युद्ध होंगे; अतः हनोवर की रक्षा के लिए एक सेना अवश्य भेजी जानी चाहिए जिसका यह परिणाम प्रतीत होता था कि इससे अमेरिका के महान् प्रश्न की उपेक्षा निश्चित रूप से होती रहेगी। सुदूर पूर्व में एक और विपत्ति आयी थी, यद्यपि सौभाग्यवश अभी तक इंग्लैण्ड को

इसका पता नहीं था। यह समाचार १७५७ ई० तक इंग्लैण्ड नहीं पहुँचा था कि बंगाल का नवाब सिराजुद्दौला सहसा अंग्रेजों के विरुद्ध हो गया था और उसने कलकत्ता पर अधिकार कर लिया था, इस कारण अनेक अभागे शरणार्थी गंगा के मुहाने पर एक टापू में भूखे मर रहे थे और अन्य शरणार्थी काल-कोठरी में मर चुके थे।

२. पिट का अवसर और उसकी तैयारियाँ

फिर भी, इन विपत्तियों ने एक उत्तम परिणाम उत्पन्न किया। न्यूकैसल के ड्यूक ने सार्वजनिक निन्दा के उस तूफान के आगे नतमस्तक होते हुए अपना त्यागपत्र दे दिया। बिंग को बलि के रूप में प्रस्तुत करने की उसकी इच्छा जनता के रोष को शान्त नहीं कर सकी थी और जार्ज द्वितीय को पिट को अपना मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए बुलाना पड़ा। यद्यपि वह इस महान् सामान्यजन से डरता था और इसमें अविश्वास रखता था, क्योंकि वह हनोवर के हितों के लिए लड़ने के लिए अपने विरोध को घोषित कर चुका था। यह बात दिसम्बर १७५६ ई० में घटित हुई। पिट ने डेवनशायर के ड्यूक को इसका नाम मात्र का अध्यक्ष रखते हुए भ्रष्टाचार के प्रभाव से स्वतन्त्र रहने वाले एक मन्त्रिमण्डल का निर्माण किया। अगले चार महीनों में उसने स्थिति को सँभालने के लिए प्रबल कार्यवाही करने की योजना बनाने और तैयारी करने का कार्य उग्र शक्ति के साथ किया। इन महीनों में उसके कार्य का प्रलेख (Record) न केवल उसके असीम उद्योग और पौरुष को, अपितु उसके दृष्टिकोण की विशालता और विचार की उस साहसिकता को भी प्रदर्शित करता है जिसका अब तक ब्रिटेन की नीति के संचालन में पूर्ण रूप से अभाव था। अमेरिका को लड़ाई का प्रधान क्षेत्र बनना था। लौडौन के पास विशाल सेनाएँ भेजी जानी थीं तथा एक बड़े बेड़े के समर्थन से उसे लुइसबर्ग और क्वेबक पर एक सीधा आक्रमण करके फ्रेन्च लोगों को चुनौती देनी थी। उपनिवेशों को प्रोत्साहन दिया जाना था तथा उन्हें पर्याप्त सेनाओं की सहायता दी जानी थी, ताकि वे खतरे में पड़े हुए अन्य स्थानों पर जमे रहें। ब्रिटेन की समूची नौसैनिक शक्ति का साहसपूर्ण उपयोग मुख्य रूप से फ्रांस के बेड़े को घेरने के लिए तथा उन्हें सहायता भेजने से रोकने के लिए किया जाना था तथा गौण रूप से वेस्ट इण्डीज और पश्चिमी अफ्रीका के फ्रेन्च प्रदेशों पर हमला करने के लिए भी किया जाना था। इंग्लैण्ड की रक्षा के लिए आवश्यक सेनाएँ एकत्र करने के लिए एक नया नागरिक सेना अधिनियम (Militia Act) पास किया गया। इस प्रकार सभी उपलब्ध हो सकने वाली नियमित (Regular) सेनाएँ विदेशों में लड़ने के लिए प्राप्त हो गयीं। हाइलैण्ड की जनजातियों की जो वीरता हाल में हुए विद्रोह में प्रदर्शित हुई थी, उसका उपयोग उनमें से नयी नियमित रेजीमेण्टों को भर्ती करके किया गया[१]। संघर्ष के अन्य क्षेत्रों में फ्रेन्च सेना का ध्यान बँटाने के लिए फ्रांस के समुद्र तट पर हमले किये जाने थे। यह आशा की जाती थी कि समुद्र के मार्ग से एकदम उतारी गयी ब्रिटिश सेनाएँ समूचे फ्रांस को भयभीत बनाये रखेंगी, क्योंकि वह कभी यह नही जान सकेगा कि हमला कहाँ होने वाला

---

१. राजभक्त जनजातियों में से रेजीमेण्टों की भर्ती १७३९ ई० में की गयी थी।

है। जर्मनी की उपेक्षा नहीं की जानी थी, प्रशिया हर हालत में हमारा मित्र था। हनोवर में देखभाल करने वाली हमारी सेना फ्रेन्च लोगों का ध्यान अपनी ओर लगाये रख सकती थी और इस प्रकार अमेरिका में प्रधान संघर्ष को सहायता दे सकती थी। पिट युद्ध के संचालन में साहसिक तथा बहुपक्षीय, किन्तु एक बिन्दु पर केन्द्रित होने वाली जिन योजनाओं का अनुसरण कर रहा था, वे सब इन क्रियाशील महीनों में पहले से ही तैयार की जा रहीं थीं। यद्यपि इस व्यक्ति की दानवीय (Demonic) शक्ति को अभी अपने आप को क्रियारूप में प्रदर्शित करने का अवसर नहीं मिला था, तथापि इसने शीघ्र ही सरकार के सभी विभागों में अपने प्रभाव का अनुभव करा दिया। सब दिशाओं में दृष्टिगोचर होने वाले नवीन परिश्रम और क्रियाशीलता ने राष्ट्र पर इसके प्रभाव को उत्पन्न किया और प्रधानमन्त्री में इसके विश्वास को बढ़ा दिया। इस बात को और भी अधिक विस्मयजनक बनाने वाला तथ्य यह था कि इन कठोर परिश्रमवाले महीनों में पिट गठिया की पीड़ा से बिलकुल पंगु बना हुआ था।

किन्तु अभी तक पिट को अपने महान् संकल्पों को क्रियात्मक रूप देने की स्वतन्त्रता नहीं दी गयी थी। उसका मन्त्रि-मण्डल एक व्यक्ति का मन्त्रिमण्डल था और यद्यपि उसे स्वतन्त्र देहाती भद्रवर्ग का तथा नगरों के व्यापारियों का निष्ठापूर्ण समर्थन प्राप्त था, तथापि कामन्स सभा में उसका स्थायी बहुमत नहीं था। बुरो-व्यवस्थापकों के सारे समूह और गुट उसके विरोधी थे। न्यूकैसल का ड्यूक चिरकाल से सरकारी वोटों की जिस बड़ी संख्या को नियन्त्रित कर रहा था, उस पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। वह अल्पतन्त्र की शक्ति को पुन: पाने के लिए केवल उस समय की प्रतीक्षा कर रहा था, जिस समय तक जनता का रोष ठंडा न हो जाय। यहाँ तक कि जनता का समर्थन भी पिट के साथ उस समय नहीं रहा, जब यह बात ज्ञात हो गयी कि पिट इस बात पर बल दे रहा था कि जल सेनापति बिंग को गोली नहीं मारी जानी चाहिए। राजा ने बिंग को माफ करने से इन्कार किया। जब पिट ने इस बात पर बल दिया कि कामन्स सभा उसको क्षमा देने के पक्ष में है तो राजा ने उससे कहा "तुमने मुझे यह सिखाया है कि मैं अपनी जनता की भावना जानने के लिए कामन्स सभा से भिन्न स्थानों पर दृष्टिपात करूँ" और अभागे जलसेनापति को सार्वजनिक हर्षोत्सवों के मध्य में गोली से उड़ा दिया गया। वस्तुत: जार्ज द्वितीय को पिट से कोई प्रेम नहीं था और वह हनोवर की राजनीति के इस आलोचक से मुक्ति पाने के लिए अतीव उत्सुक था। हनोवर में सेना की कमान ग्रहण करने वाले कम्बरलैण्ड के ड्यूक ने उस समय तक सेवा करने से इन्कार किया जब तक कि पिट पदच्युत न किया जाय। इससे राजा ने यह सोचा कि मन्त्री के लिए जनता की उत्कट भक्ति इतनी कमजोर पड़ गयी है कि उसे पदच्युत करना सुरक्षित है। पिट ने अप्रैल १७५७ ई० में अपने पद से मुक्ति पायी।

इस प्रकार एक महान् संकट के समय राष्ट्र एकमात्र उस नेतृत्व से वंचित हो गया, जो उसकी रक्षा कर सकता था। किन्तु ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं ढूँढा जा सकता था, जो एक नये मन्त्रिमण्डल को बनाने का उत्तरदायित्व स्वीकार करने को तैयार हो। ११ महत्त्वपूर्ण

सप्ताहों (अप्रैल-जून १७५७ ई०) में ब्रिटेन में कोई संगठित सरकार बिलकुल नहीं थी। समूची जनता का अथवा निर्णय कर सकने में समर्थ इसके प्रत्येक भाग का रोष पूर्णरूप से स्पष्ट कर दिया गया था। यदि जनता को पिट के प्रभाव में कोई भी सन्देह था तो वह पिट को दिये गये आवेदनपत्रों और मानपत्रों की झड़ी से दूर कर दिया गया। पहले लन्दन ने तथा उसके बाद कम-से-कम १९ नगरों ने उसे अपनी नागरिकता देने का सम्मान प्रदान किया।[1] इसके प्रमाणपत्र स्वर्णमंजूषाओं में बन्द करके उसे दिये गये। इस पर होरेस वालपोल ने कहा था कि उस समय पिट पर स्वर्णमंजूषाओं की वर्षा हो रही थी।

अन्त में न्यूकैसल और पिट में समझौता हुआ। न्यूकैसल खज़ाने का पहला लार्ड बना, उसने सार्वजनिक पदों के मुख्य व्यक्तियों की नियुक्ति के अधिकार के प्रयोग की तथा कामन्स सभा को सँभालने की व्यवस्था की। पिट राज्य-मन्त्री बना और उसने युद्ध का संचालन किया। शक्ति के विभाजन ने ही दोनों दलों को पूर्ण रूप से सन्तुष्ट किया। अगले चार वर्षों में पिट वस्तुतः ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का तानाशाह था। वह कैबिनेट पर हावी था और इसे आदेश देता था। शासन के प्रधान विभागों के अध्यक्षों को अपने गर्व को खर्व करना पड़ा और उसके तानाशाही आदेशों का पालन करना पड़ा। उदाहरणार्थ, जब एन्सन ने पिट को कहा कि वह जलसेनाध्यक्ष के रूप में एक निश्चित समय में एक निश्चित बेड़े को नहीं पैदा कर सकता, तो पिट ने कहा कि "इस दशा में कामन्स सभा में तुम पर महाभियोग चलाया जायगा।" बेड़ा चार दिन में तैयार हो गया। कामन्स सभा पूर्ण रूप से उसके प्रभाव में थी। विशेष रूप से इसलिए कि अब इसकी व्यवस्था के सभी परम्परागत ढंग उसके पक्ष में थे। इन चार वर्षों में किसी ने उसकी इच्छा का विरोध करने का साहस नहीं किया। आरम्भ में राष्ट्रीय विपत्ति के भय ने और बाद में उसके संकल्प और साहस से उत्पन्न हुई अविश्वसनीय सफलताओं के नशे ने उसके प्रभुत्व को सुरक्षित बना दिया। ऐसे अनेक व्यक्ति थे, जो उसकी तानाशाही से नाराज थे, उनका समय आने वाला था। किन्तु इस बीच में उसे अपने देश की रक्षा करने की अनुमति दे दी गयी थी।

यह केवल उसका वैयक्तिक आकर्षण और साहस ही नहीं था, जिसने पिट को अगले चार वर्षों में भगीरथ परिश्रम करने में समर्थ बनाया, यद्यपि उसकी प्रेरणा की चुम्बकीय शक्ति के बिना और उसके उच्च साहस के बिना ये कार्य असम्भव होते। इन चार वर्षों के कार्य का जितना ही अधिक अध्ययन किया जाता है, उतना ही अधिक यह स्पष्ट हो जाता है कि पिट में उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त ये गुण भी थे—कार्य संचालन को व्यवस्थित करने की अतीव विलक्षण शक्ति, विस्तृत ब्योरे के लिए परिश्रमपूर्ण अनुरक्ति, विदेशी सन्धिचर्चाओं की तथा सैनिक एवं नौसैनिक प्रशासन की सभी जटिलताओं पर आश्चर्यजनक प्रभुत्व, कुछ भी

१. इंग्लैण्ड में यह परिपाटी थी कि कुछ नगर अपने क्षेत्र में न रहने वाले किन्तु अतीव महत्त्वपूर्ण कार्य करने वाले व्यक्तियों के प्रति सम्मान प्रदर्शन के लिए उन्हें अपने नगर की नागरिकता प्रदान किया करते थे। यहाँ Freedom का अर्थ नागरिकता प्रदान करना है। अब भी अनेक नगर अपने यहाँ आने वाले महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को अपनी नागरिकता (Freedom) प्रदान करके सम्मानित करते हैं।

उपयोगी बात कहने वाले सभी व्यक्तियों से नई बात सीखने की विलक्षण तत्परता, क्योंकि ऐसे व्यक्तियों के लिए अपने व्यस्त दिन में वह सदैव समय निकाल सकता था। सबसे बढ़कर उसमें मनुष्यों को चुनने की प्रतिभा थी और वह अपना काम करने वाले व्यक्तियों को चुनने में पदोन्नति के सामान्य नियमों की अवहेलना करने के लिए तैयार था। वह केवल एक महान् नेता और मनुष्यों को प्रेरणा देने वाला ही नहीं था, अपितु वह एक अत्यन्त उत्कृष्ट महान् प्रशासक था और उसमें काम करवा लेने की आश्चर्यजनक शक्ति थी।

फिर भी पिट, एक ही क्षण में जादू द्वारा पराजय को विजय में नहीं बदल सकता था। उसने १७५७ ई० के युद्ध की कार्यवाहियों की योजनाएँ बनायी थीं, किन्तु उसे उपलब्ध साधनों का तथा उस समय सेना में विद्यमान व्यक्तियों का ही उपयोग करना था। इस बीच उसकी योजनाओं को पूरा करने में, बड़े नाजुक समय में एक बाधा पड़ गयी। यह बाधा दो राजाओं के शासनकालों के मध्यवर्ती समय (Interregnum) के कारण पड़ी थी। ऊपरी दृष्टि से १७५७ ई० के वर्ष में पिछले साल की अपेक्षा कोई सुधार नहीं हुआ। इसके विपरीत ऐसा प्रतीत होता था कि वह दुःखों की पराकाष्ठा को अपने साथ लाया था।

अमेरिका में लौडोन एक बड़े बेड़े का समर्थन पाकर, अब अधिक बढ़ी हुई अपनी मुख्य सेनाओं के साथ हैलीफैक्स गया। उसका इरादा लुईस बर्ग पर हमला करने का था, किन्तु यहाँ फ्रांस की स्थिति अत्यधिक सुदृढ़ पाने पर वह बदनामी के साथ उस समय न्यूयार्क लौट गया, जब युद्ध की कार्यवाही चलने का मौसम समाप्त हो गया था। उसकी अनुपस्थिति में मोन्तकाम ने हडसन नदी[1] के मार्ग की रक्षा के लिए छोड़ी हुई छोटी ब्रिटिश सेनाओं पर पूरी शक्ति के के साथ हमला किया। उसने फोर्ट विलियम हेनरी को आत्मसमर्पण के लिए बाधित किया। दुर्ग रक्षक सेना को सुरक्षित वापस लौटने का वचन दिया गया था। किन्तु मोन्तकाम के रेड-इण्डियन मित्र नियन्त्रण से बाहर हो गये और उन्होंने वापस लौटने वाली फौज के अनेक सैनिकों की हत्या की। इस बीच में यदि लौडोन पिट द्वारा भिजवायी गयी सेनाओं के साथ हैली-फैक्स से वापस न लौटता, तो मोन्तकाम में हडसन नदी के साथ-साथ नीचे की ओर बहुत दूर तक बढ़ जाता। जब १७५७ ई० की युद्ध की कार्यवाही समाप्त हुई, उस समय अमेरिका की स्थिति पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक गम्भीर थी। किन्तु इस वर्ष सबसे बुरी खबर यूरोप के महाद्वीप से आयी थी। आस्ट्रिया ने अपने मित्र फ्रांस को आस्ट्रियन नीदर-लैण्ड्स के बन्दरगाह सौंप दिये थे और इंग्लिश चैनल के जिस महाद्वीपीय समुद्र तट के लिए ब्रिटेन ने इतनी लड़ाइयाँ लड़ी थी, वह अब शत्रुओं के हाथ में था। इससे भी बुरी बात यह थी कि हमारे एकमात्र मित्र—प्रशिया के फ्रेडरिक को बोहीमिया में उतावलेपन तथा अदूरदर्शिता से बढ़ते हुए कोलिन में एक बहुत बुरी हार खानी पड़ी ओर उसे वापस लौट जाने के लिए बाधित होना पड़ा। जब फ्रांस ने पश्चिम से उस पर हमला करने के लिए एक सेना बनायी, उस

---

१. नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५६ (ए) तथा छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६६ (ए)।

समय पूर्व से उस पर हमला करने के लिए रूसी सेनाएँ आगे बढ़ रहीं थीं और उत्तर से उसे स्वीडन के लोगों का भय था। उसका विध्वंस अनिवार्य प्रतीत हो रहा था।

सबसे बुरी बात यह थी कि प्रधान फ्रेंच सेना हनोवर पर हमले के लिए संचालित की जा रही थी। इसका विरोध फ्रेंच सेना की अपेक्षा आधे से भी कम सैनिक रखने वाली हनोवरवासियों तथा हैसवासियों की एक मिली-जुली फौज ने कम्बरलैण्ड के ड्यूक के सेनापतित्व में किया। फ्रेंच लोगों ने हैस्टनबैक में एक प्रबल विजय प्राप्त की और एल्ब के पश्चिम के सभी प्रदेशों के बारे में यह प्रतीत होता था कि वे छिन जायेंगे। सितम्बर १७५७ ई० में कम्बरलैण्ड ने क्लोस्टरज़ेवन के अपमानजनक समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षार किये। इसके अनुसार हनोवर में रक्षा करने वाली सेना का भंग कर दिया गया। ऐसा प्रतीत होता था कि हनोवर पूर्ण रूप से फ्रांस की दया पर निर्भर है। इससे फ्रेडरिक का एक पार्श्व खतरे में में पड़ गया, इस कारण यह प्रतीत होता था कि उसका पूर्ण विनाश होने वाला है। यह आशा की जा सकती थी कि युद्ध की अगली कार्यवाही उसका विध्वंस करने के लिए होगी; उस समय फ्रांस और उसके मित्र अपनी सारी शक्ति ब्रिटेन के विरुद्ध लगाने में समर्थ होंगे।

क्लोस्टरज़ेवन के अपमानजनक समर्पण के समाचार के एकदम बाद एक अन्य निराशाजनक समाचार आया, इसने इस निराशापूर्ण वर्ष में विजय पाने की किसी भी आशा पर तुषारपात कर दिया। पिट ने फ्रांस के समुद्र तट पर रोशेफोर्ट नामक स्थान पर एक प्रबल आक्रमण की योजना बनायी थी। इसके लिए उसने अपने सर्वोत्तम जलसेनापति हाक और एक सेना को भी प्राप्त कर लिया था। सितम्बर के अन्त में यह हमला किया गया। बेड़े ने बहुत अच्छा काम किया। एक्स नामक टापू पर छत्तीस तोपों के साथ इसके किले पर अधिकार कर लिया गया। किन्तु स्थलसेना का सेनापति मोरडाण्ट सावधानी बरतने वाले पुराने सम्प्रदाय का अनुयायी था, उसने रोशेफोर्ट पर हमला करने से इन्कार कर दिया। अतः यह अभियान दल अक्टूबर के आरम्भ में अपयश के साथ पुनः स्वदेश लौट आया। मोरडोण्ट, लौडोन और उसके शिक्षक कम्बरलैण्ड पुराने ढर्रे के सेनापति थे, ऐसे सेनापतियों से पिट का जी भर गया। इसके बाद उसने सरकारी प्राथमिकता का विचार किये बिना अपने आदमियों को चुना।

इस बात में कोई आश्चर्य नहीं है कि १७५७ ई० के ग्रीष्म काल में और पतझड़ में मनुष्यों ने अपने भविष्य को लगभग निराशापूर्ण समझा हो, पिट भी हिम्मत हार रहा था। उसने कहा था "दुःखी और अपमानित देश के लिए यह अन्धकारमय दृश्य है। इस देश के भविष्य के लिए वह निराशा का ही अनुभव करता था।" ग्रीष्मकाल में उसने मिनोरका पुनः प्राप्त करने में सहायता पाने के बदले स्पेन को जिब्राल्टर के समर्पण करने का भी प्रस्ताव रखा। इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया गया। सार्वजनिक मामलों के एक चतुर जानकार चैस्टरफील्ड के अर्ल ने कहा, "हम स्वदेश और विदेश में बर्बाद हो गये है, फ्रेंच लोग अमेरिका के स्वामी हैं, वे वहाँ जैसा चाहें, वैसा कर सकते हैं। हम अब एक राष्ट्र नही रहे। मैंने अब तक कभी

ऐसा भीषण दृश्य नहीं देखा।" यह लगभग सार्वभौम भावना थी। ब्रिटेन की महानता का सूर्य अपनी अल्पकालीन गरिमा के बाद अस्त होता हुआ प्रतीत हो रहा था।

अगले वर्षों में पिट को प्राप्त होने वाली सफलताओं की उज्ज्वलता के पीछे ऐसी अन्धकारपूर्ण पृष्ठभूमि थी, क्योंकि यह उषाकाल से पहले की घोर काली घड़ी थी। पिट की तैयारी का कार्य पहले से ही फल लाने लगा था। नौसेना सब फ्रेन्च बन्दरगाहों का घेरा डाले पड़ी थी और वह फ्रेन्च बेड़े को बाहर निकलने से रोक रही थी। किन्तु यह ऐसा मूक कार्य था, जिसको कोई नहीं देख रहा था। चारों ओर व्याप्त होने वाली निराशा ने महान् मन्त्री के संकल्प को ही उग्र बनाया। वह अगले वर्ष के लिए बड़ी उत्सुकता से योजनाएँ बना रहा था। उसने यह निश्चय कर लिया था कि किन-कप्तानों पर वह भरोसा रख सकता है। वह कहीं भी, यहाँ तक कि जर्मनी में भी आशा को नहीं छोड़ रहा था। सौभाग्यवश क्लोस्टरज़ेवन के समर्पण-पत्र की शर्तों को फ्रांस ने भंग किया, अत: पिट ने फौरन इसे अस्वीकार कर दिया। हनोवर की तथा हैस की सेनाओं को सुदृढ़ बनाने के लिए एक ब्रिटिश दस्ता तैयार किया गया। एक चतुर सेनापति ब्रंसविक के प्रिन्स फर्डिनेण्ड को संयुक्त सेनाओं की कमान सँभालने के लिए फ्रेडरिक महान् से उधार लिया गया।

जिस शीतकाल को मनुष्य भय से काँपते हुए देख रहे थे, उसमें अच्छे समाचारों की कुछ बातें आने लगीं। महान् फ्रेडरिक ने कोलिन में अपनी हार मानने के स्थान पर नवम्बर में अपने विरुद्ध बढ़ती हुई दक्षिणी फ्रेन्च सेना पर एक बड़ा तीव्र और शानदार आक्रमण किया और रासबैच के युद्ध में उसने ऐसी करारी चोट की कि नैपोलियन के समय तक फ्रेन्च कभी इस हार का कलंक धोने वाली प्रतिष्ठा को नहीं प्राप्त कर सके। इसके बाद पूर्व की ओर मुड़ते हुए सहसा साइलीशिया पर अधिकार करने वाले आस्ट्रियनों पर वह टूट पड़ा और ल्यूथन में उसने अपने से बहुत अधिक संख्या वाली सेना को हराया और उन्हें उस प्रान्त से बाहर खदेड़ दिया। अब भी उसके सामने बड़ी मुसीबतें थी। किन्तु युद्ध शुरु होने के बाद से सबसे पहले आने वाले वास्तव में अच्छी उज्ज्वल विजयों के समाचारों ने इंग्लैण्ड में अधिकतम उग्र उत्साह उत्पन्न किया। फ्रेडरिक लगभग प्रशिया की भाँति इंग्लैण्ड का सम्मानित वीर पुरुष बन गया। वे उसे प्रोटेस्टेण्ट धर्म का वीर कहते थे। यशस्वी, किन्तु धर्माधर्मविचारशून्य, सन्देहवादी फ्रेडरिक का इस नाम से अवश्य मनोरंजन हुआ होगा।

भारत से भी अच्छे समाचार आने लगे। पहले तो यह समाचार आया कि क्लाइव ने पुन: कलकत्ता प्राप्त कर लिया है। इसके बाद पलाशी में उसकी उस विजय की अविश्वसनीय खबर आयी, जिस विजय ने सारे बंगाल को ईस्ट इण्डिया कम्पनी के चरणों में रख दिया। किसी भी प्रकार से इंग्लैण्ड में इन विजयों की तैयारी अथवा व्यवस्था नही की गयी थी। किन्तु इन्होंने राष्ट्र की निराशापूर्ण भावना में आशा का संचार किया, इसे भाग्य के उस आश्चर्यजनक परिवर्तन के लिए तैयार किया, जो अगले वर्ष आरम्भ होना था और युद्ध की समाप्ति तक जिसे निरन्तर बढ़ते चला जाना था।

३. ज्वार का रुख बदलना (१७५८ ई०)

१७५८ ई० के युद्ध की कार्यवाहियों में ही पिट की प्रतिभा को अपना शक्ति कौशल प्रदर्शित करने का पहला अवसर मिला। युद्ध के इस कार्यक्रम ने प्रत्येक दिशा में विजयों की मादक शृंखला का निर्माण किया था। ये विजयें अत्यधिक पूर्वचिन्तन का और तैयारी में बरती गयी सावधानी का परिणाम थीं।

पहली बात यह थी कि इंग्लैण्ड और अमेरिका - दोनों स्थानों पर सार्वजनिक उत्साह को उद्दीप्त करने के लिए प्रत्येक बात की गयी। राष्ट्र के प्रति की जाने वाली पिट की अपीलों की भावना पार्लियामेण्ट आरम्भ होने पर राजा के भाषण में अभिव्यक्त की गयी थी। निःसन्देह यह भाषण पिट द्वारा लिखा गया था। "मुझे पक्का विश्वास है कि सब समयों में प्रसिद्ध और पहली बार इतनी अधिक कठिनाइयों पर विजय पाने वाली इस राष्ट्र की भावना और वीरता कुछ निराशाओं से कम नहीं होगी। इस संकट की घड़ी में सारे यूरोप की आँखें आप पर लगी हुई हैं।" अमेरिका के उपनिवेशवासियों से भी ऐसी अपीलें की गयीं; उन्हें बीस हजार सैनिक देने के लिए कहा गया। इंग्लैण्ड ने इनके हथियारों, सामग्री और राशन का सारा व्यय वहन करना स्वीकार किया और उत्साह प्रदर्शित करने वाले उपनिवेशों को इनके वेतन और वस्त्रों के लिए भी अनुदान देना मान लिया। इन दशाओं में उपनिवेशवासियों की आपत्तियाँ समाप्त हो गयीं और उन्होंने लगभग २६ हजार सैनिक एकत्र किये, यह संख्या इन उपनिवेशों द्वारा किसी भी समय एकत्र किये गये सैनिकों की संख्या के दुगने से भी अधिक थी।

इस वर्ष के युद्ध की प्रधान कार्यवाही अमेरिका में चलाने का इरादा था। पिट ने यह अनुभव किया था कि अमेरिका युद्ध का एक महान् क्षेत्र बन सकता है, न्यू कैसल ने ऐसा अनुभव नहीं किया था। किन्तु अमेरिका के युद्ध की कार्यवाही एक ऐसी विशाल योजना का सब से बड़ा हिस्सा होने पर भी, केवल विशाल युद्ध-योजना का एक अंशमात्र ही था, इस योजना के सब हिस्से घनिष्ठ रूप से एक दूसरे से सम्बद्ध थे।

पहली बात यह थी कि शक्तिशाली बन्दरगाहों का घेरा डालने वाले समुद्री बेड़े इंग्लिश चैनल में तथा बिस्के की खाड़ी में फ्रांस के नौसैनिक अड्डों की इसलिए निगरानी कर रहे थे कि वे कोई हानि पहुँचाने के लिए अथवा कनाडा को सहायता करने के लिए फ्रेन्च बेड़े को अपने अड्डे से बाहर न निकलने दें। बन्दरगाहों का घेरा डालने वाले बेड़ों के श्रान्तिपूर्ण रात्रि-जागरण ही समूची सफलताओं के आधार थे, यद्यपि इनके बारे में बहुत कम बात सुनी गयी। जब से सभी ऋतुओं में निरन्तर समुद्र में रहने वाले ब्रिटिश बेड़े के नाविकों ने जहाजरानी में कौशल तथा आधिपत्य की भावना प्राप्त की, उसी समय से बन्दरगाहों में बन्द फ्रेन्च बेड़ों का गुण की दृष्टि से निरन्तर ह्रास होने लगा। इसी प्रकार जिब्राल्टर पर स्थित एक बेड़ा फ्रेन्च बेड़े के भूमध्य सागर से बाहर निकलने को रोकने के लिए चौकीदारी करता रहा; तूलोन के बन्दरगाह में स्थित एक फ्रेन्च बेड़े द्वारा किये गये ऐसा कार्य करने के एकमात्र प्रयास को फौरन विफल बना दिया गया।

दूसरी बात यह थी कि पिट को फ्रांस के समुद्रतट पर हमले करने के लिए नौसैनिक-पोतों के दस्ते और स्थल सेनाएँ मिल गयीं[1]। मई में सेण्ट मेलो के निकट एक फौज उतारी गयी। हाव्रे और होनफ्ल्यूर के विरुद्ध प्रदर्शन किये गये। अगस्त में शेरबुर्ग पर कब्जा किया गया तथा इसके किले और जहाजों को नष्ट किया गया। सितम्बर में सेण्ट मेलो पर एक दूसरा अभागा आक्रमण हुआ। उस समय और उसके बाद से अब तक प्रायः इन अभियानदलों की अत्यधिक आलोचना करते हुए कहा गया था कि ये अभियान जन और धन की बर्बादी मात्र थे, इन्होंने कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं पैदा किये। फिर भी इन्होंने फ्रांस को एक बेचैन दशा में बनाये रखा, इन्होंने उसकी सरकार को कम-से-कम ३० हजार व्यक्तियों को जर्मन युद्ध से रोकने अथवा हटाने के लिए बाधित किया। महान् फ्रेडरिक इनकी विफलता के बारे में जनता के दृष्टिकोण को नहीं मानता था, अपितु वह प्रार्थना करता था कि इन हमलों को जारी रखना चाहिए।

तीसरी बात यह थी कि जर्मन-युद्ध को जोर-शोर से सहायता की गयी और प्रशिया को उसकी मुसीबतों मे मदद देने के लिए विशाल धनराशियाँ दी गयीं। ब्रंसविक के फर्डिनेण्ड के पास पहले ब्रिटिश राजकोष से वेतन लेने वाले जर्मन जातीय वेतनभोगी सैनिकों की एक सेना थी। बाद में ग्रीष्म ऋतु में इसमें नौ हजार ब्रिटिश सैनिक बढ़ाये गये। फर्डिनेण्ड ने इन्हें अपने से अधिक उत्कृष्ट दो फ्रेन्च सेनाओं के विरुद्ध शानदार सैनिक चाल चलते हुए, इनमें से एक सेना पर क्रेफेल्ड में एक महत्त्वपूर्ण विजय पायी और युद्ध की कार्यवाही समाप्त होने तक उसने फ्रेन्च सेनाओं को हनोवर से बाहर भगा दिया। अब पहली बार ब्रिटेन ने हनोवर के युद्ध में ऐसी गहरी दिलचस्पी ली।

फ्रेडरिक के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि पिट ने जर्मनी में युद्ध के बारे में अपना विचार बदल दिया था, क्योंकि इस वर्ष फ्रेडरिक को अपने शत्रुओं के गुट के विरुद्ध अपनी स्थिति बनाये रखना बड़ा कठिन हो गया था। इस समय रूसी उस पर हमला कर रहे थे; यद्यपि उसने ज़ोर्नडोर्फ में उन पर एक बहुव्ययसाध्य विजय पायी थी तथापि उसे आस्ट्रियनों से हार माननी पड़ी थी। फिर भी उसने अपने सभी प्रदेशों पर अपना प्रभुत्व बनाये रखा। वह ऐसा नहीं कर सकता था यदि हनोवर की सेना उसके पार्श्व को रक्षा न करती और उसे फ्रेन्च लोगों के आक्रमण की चिन्ता से मुक्त न करती। हनोवर के युद्धो के बारे मे अपने नये रुख के लिए पिट पर बहुत ताने कसे गये। उसके पास इस बात का उत्तर तैयार था। कोई भी व्यक्ति यह नहीं कह सकता था कि वह अपना सारा ध्यान यूरोप के संघर्ष की ओर दे रहा है, जैसा कि उसके पूर्ववर्तियो ने किया था। किन्तु वह इसका प्रयोग फ्रांस के प्रयत्नों का ध्यान बँटाने के लिए कर रहा था और इस प्रकार अमेरिका में चल रहे प्रधान युद्ध की सहायता कर रहा था।

इन सभी कार्यों से सन्तुष्ट न होते हुए पिट ने पश्चिमी अफ्रीका[2] में एक छोटा शान-

---

१. इंग्लिश चैनल के नक्शे के लिए देखिए एटलस का पाँचवाँ संस्करण प्लेट संख्या ४५ (ए), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ६२।

२. पश्चिमी अफ्रीका के नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट ६४ (सी) छठे की प्लेट सं० ८६ (सी)।

दार अभियान दल भेजने के लिए नौ तथा स्थल सेनाएँ प्राप्त कर लीं। सेनेगाल में अप्रैल तक फ्रांस के दुर्ग और व्यापारिक अड्डे पर अधिकार कर लिया गया। दिसम्बर के अन्त में केप्पल द्वारा किये गये हमले से गोरी के टापू का पतन हो गया। सभी फ्रेन्च कोठियाँ, और सोने का, हाथी दाँत का, सबसे बढ़कर दासों का और फ्रेन्च कम्पनी का सारा समृद्ध व्यापार ब्रिटेन के हाथों में आ गया।

किन्तु इस वर्ष की लड़ाई का प्रधान उद्देश्य अमेरिका की स्थिति में सुधार करना था। यहाँ पिट ने एक बिन्दु पर केन्द्रित होने वाली (Converging) चार युद्ध-कार्यवाहियों की योजना बनायीं थी और इन पर उसने अपनी सर्वोत्तम विचार-शक्ति लगायी थी, इसे सफल बनाने के लिए पिट ने अधिकतम उत्कण्ठा से विशेष तैयारियाँ की थी[1]। मुख्य आक्रमण लुइसबर्ग के विरुद्ध किया जाना था। दूसरे महान् आक्रमण का उद्देश्य लेक चैम्पलेन का नियन्त्रण पाना और इस मार्ग से लुइसबर्ग के विजेताओं से उस समय मिलना था, जब वे सेण्ट लारेन्स नदी में ऊपर की ओर आगे बढ़ें। तीसरा और छोटा आक्रमण महान् झीलों के किलों के विरुद्ध मोहाक नदी के साथ संचालित किया जाना था। चौथे आक्रमण का लक्ष्य ब्रेडॉक का विपत्ति से उद्धार करना और ओहियो नदी की घाटी को प्राप्त करना था। उसने इन साहसिक कार्यों के लिए अपने आदमी बड़ी सावधानी से चुने। लुइसबर्ग पर आक्रमण के लिए नौसेनापति का कार्य एक सर्वोत्तम इंग्लिश सेनापति बोसकेवन को दिया गया था और स्थल सेनाओं की कमान जर्मनी से वापस लाये गये एक कर्नल एमहर्स्ट के साथ एक होनहार ६२ वर्षीय तरुण जेम्स वुल्फ को सौंपी गयी थी। केवल चैम्पलेन के मोर्चे की कमान के लिए उसने एक पुराने सेनापति एबरक्राम्बी को बनाये रखा, परन्तु उसके साथ एक होनहार तरुण सैनिक होवे को नियुक्त किया। झीलों पर आक्रमण के लिए उसने पिछले युद्ध में दक्षिणी सीमान्त पर बहुत अच्छा काम करने वाले एक अतीव सफल उपनिवेशवासी सेनापति बेडस्ट्रीट को चुना। ओहियो के साहसिक कार्य के लिए उसने एक पक्के और धैर्यवान् अनुभवी स्काटलैण्डवासी फोर्ब्स को चुना। इन सभी को विशाल एवं सुसज्जित सेनाएँ दी गयीं। इनमें से सभी यह जानते थे कि उन्हें माँगी जाने वाली सभी सहायता मिलेगी। यदि वे सफल होंगे, तो उनको खूब सम्मान मिलेगा; किन्तु यदि वे पौरुष की कमी से विफल हुए तो उन्हें केवल अपमान मिलेगा।

एक के अतिरिक्त अन्य चारों अभियानदलों को पूर्ण सफलता मिली। बोस्केवन, एम्हर्स्ट और वोल्फ ने चार हजार बन्दियों और २२० तोपों के साथ लुइसबर्ग के महान् दुर्ग पर अधिकार कर लिया और बन्दरगाह में पड़े हुए १३ जहाजों को नष्ट कर दिया। लुइसबर्ग के पतन के साथ सेण्ट लारेन्स नदी के ऊपर की ओर क्वेबक तक का मार्ग खुल गया। बेडस्ट्रीट ने मोहाक नदी में ऊपर की ओर लेक आण्टेरियो तक बलपूर्वक अपना रास्ता बनाया और न केवल ओसवेगो को पुनः प्राप्त किया, किन्तु फ्रौण्टीनेक के महत्त्वपूर्ण फ्रेन्च किले को जीत लिया। इस प्रकार कनाडा और ओहियो के बीच में मार्गों को काट दिया और नदी से नीचे की ओर जाते हुए माण्ट्रील और क्वेबक पर आक्रमण की सम्भावना प्रस्तुत की।

१. नक्शे के लिए देखिए पाँचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५४, ५५, ५६ (ए), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ५२, ६३ और ६६ (ए)।

एक हाइलैण्ड रेजीमेण्ट तथा उपनिवेशवासी सैनिकों की एक बड़ी संख्या के साथ फोर्ब्स अध्यवसायपूर्ण धैर्य के साथ जंगलों में रास्ता बना कर जब फोर्ट ड्यूक्वेस्ने पहुँचा तो यह ज्ञात हुआ कि इसकी दुर्गरक्षक सेना भाग चुकी थी। इस प्रकार ओहियो घाटी सदा के लिए फ्रेन्च लोगों के हाथों से निकल गयी है। उसने अपनी सफलता घोषित करने वाले पत्र के ऊपर स्थान का नाम पिट्सबर्ग के रूप में अंकित किया, उसने लिखा "मैंने फोर्ट ड्यूक्वेस्ने को आपका नाम देने में स्वतन्त्रता का प्रयोग किया है, क्योंकि मैं यह आशा करता हूँ कि यह कुछ अंशों में आपकी भावना से अनुप्राणित होने का ही परिणाम था जो अब हमें इस स्थान का स्वामी बना रहा है।" हजारों कठिनाइयों पर और अपनी बीमारी पर विजय पाने वाला यह कट्टर बूढ़ा सेनानी शीघ्र ही कुछ समय बाद फिलाडेल्फिया में दिवंगत हुआ। यह सम्भव है कि अपनी मृत्यु से पहले वह प्रशंसा और सराहनाओं के उन सुन्दर वाक्यों से हर्षित हुआ होगा, जो पिट ने फौरन उसे लिख कर भेजे थे।

केवल लेक चैम्पलेन पर ही पूर्ण सफलता नहीं प्राप्त हो सकी। अपने से मिलने वाले सब व्यक्तियों से सराहना और प्रीति प्राप्त करने वाला तरुण सेनानी होवे, दुर्भाग्यवश, लड़ाई के आरम्भ में ही मारा गया। एबरक्राम्बी ने यह मूर्खता की कि टिकोनडेरोगा के निकट मोन्त-काम द्वारा ग्रहण की गयी एक प्रबल किलेबन्द स्थिति के विरुद्ध तोपों का समर्थन दिये बिना उसने अपने शूरवीर पुरुषों को लड़ाई में झोंक दिया। अपने विद्रोही पूर्वजों वाली नवीन हाइलैण्ड रेजीमेण्टों ने तथा उनके इंग्लिश और औपनिवेशिक साथियों ने निष्फल शूरवीरता के साथ अपने को उन दुर्लंघ्य कठिनाइयों में डाल दिया जिन कठिनाइयों से आसानी से बचा जा सकता था। इस निरर्थक हत्याकाण्ड के बाद एबरक्राम्बी अपने अड्डे पर पुनः वापस लौट आया।

फिर भी, इस प्रतिरोध के बावजूद १७५८ ई० की विजयों ने क्या शानदार स्थिति उत्पन्न की! सेनेगाल और गोरी, क्रेफेल्ड और हनोवर की मुक्ति, फ्रेन्च बेड़ों का पंगु बन जाना, लुइसबर्ग पर अधिकार, ओहियो घाटी की सफाई, महान् झीलों पर बने दुर्गों पर अधिकार—ये सब इस साल की विजयें थी। यह विजय का ऐसा मादक घूंट था, जिससे अधिक मादक घूंट, ब्रिटिश जनता ने अपने इतिहास के किसी भी एक वर्ष में नहीं पिया था। पिछले वर्ष की निराशा की तुलना में यह विजय और भी अधिक आश्चर्यजनक थी। फिर भी, १७५८ ई० ने १७५९ ई० की इससे बढ़ी-चढ़ी विजयों के लिए आधारमात्र प्रस्तुत किया।

४. १७५९ ई० का विस्मयों का वर्ष : क्वेबक और क्वीबरोन

न्यूकैसल का ड्यूक वस्तुतः शान्ति के लिए तथा लुइसबर्ग देकर मिनोरका पाने के लिए उत्सुक था, वह यह विश्वास नहीं कर सकता था कि ये सफलताएँ अस्थायी परिणाम के अतिरिक्त कुछ हो सकती हैं। यदि पिट और ब्रिटिश जनता भी न्यूकैसल के विचारों को मानती तो शान्ति की सन्धिवार्ता निरर्थक होती; क्योंकि फ्रान्स में एक नया मन्त्री पदारूढ़ हुआ था। इस साहसी और प्रत्युत्पन्नमति, चोईसियुल के ड्यूक ने अपने किसी भी पूर्ववर्ती की अपेक्षा इस समय खतरे में पड़े हुए महान् प्रश्नों के महत्व

को अधिक स्पष्ट रूप में अनुभव किया; उसने साहस के साथ निराशा को मानने से इन्कार किया और इस बात में भी विश्वास करना अस्वीकार किया कि उसके देश की भावना और साधन समाप्त हो चुके थे। उसने इस संघर्ष में अपनी सारी शक्ति ब्रिटेन के विरुद्ध लगाने का निश्चय किया। पिट को अपने मुकाबले में अब एक योग्य शत्रु मिला, जिसकी अब तक कमी थी।

चोईसियुल की मुख्य आशा यह थी कि वह स्पेन को इस झगड़े में डाल सकेगा और इस प्रकार स्पेन का बेड़ा मिल जाने से वह ब्रिटिश बेड़े की तुलना में नौ सैनिक शक्ति में उत्कृष्टता न होने पर भी कम-से-कम समानता प्राप्त कर लेगा; क्योंकि उसने यह देख लिया था कि इस विश्वव्यापी संघर्ष में प्रत्येक वस्तु नौसैनिक शक्ति पर अवलम्बित थी। उसने स्पेन को यह बात अनुभव करने पर बल दिया कि इस समय विश्व में केवल उन्हीं राष्ट्रों का महत्व है, जिनके पास उपनिवेश, विदेशी व्यापार और नौसेना की शक्ति है। रूस, आस्ट्रिया और प्रशिया की शक्ति समुद्री शक्तियों की तुलना में नगण्य थी। समुद्री शक्तियों मे, हालैण्ड पहले ही पिछड़ गया था। यदि फ्रांस और स्पेन ने अपनी सेनाओ को नही मिलाया तो विश्व में ब्रिटेन का कोई प्रबल प्रतिद्वन्द्वी नही रह जायेगा, जब कि ब्रिटेन की आबादी उसके उपनिवेश की जन संख्या को सम्मिलित करते हुए भी फ्रास से केवल आधी है। किन्तु स्पेन अभी तक फ्रान्स की बात मानने के लिये तैयार नही था, यद्यपि उसने दो वर्ष बाद इसे माना और इसके परिणाम उसके लिये विपत्तिजनक सिद्ध हुए।

स्पेन की सहायता पाने में विफल होने पर चोईसियुल ने अपनी आशाएँ ब्रिटेन की शक्ति के मर्मस्थल पर एक साहसिक आक्रमण करने की सम्भावनाओं पर केन्द्रित कीं। उसने इंग्लैण्ड पर एक सैनिक आक्रमण की योजना बनाई। १७५८-५६ ई० की शीत ऋतु में वह ५० हजार पुराने योद्धाओ की एक महान् सेना को इंग्लिश चैनल से पार कराने की तैयारी कर रहा था। इसी समय २६ हजार फ्रेन्च, रूसी और स्वीड लोगों की एक सेना को स्वीडन के बेड़े के सरक्षण में स्काटलैण्ड पर हमला करना था। स्काटलैण्ड में वितरण की जाने वाली घोषणाओं को वास्तव में तैयार कर लिया गया था। परन्तु स्काटलैण्ड के विरुद्ध उत्तर दिशा की ओर से होने वाले अभियान का कुछ भी नही हुआ, क्योकि जिन मित्रों से सहायता की आशा थी, उन्होने सहयोग देने से इन्कार कर दिया। फिर भी आक्रमण की योजना अटल बनी रही और लगभग ५० वर्ष बाद के नैपोलियन की भाँति चोईसियुल ने आक्रमण करने वाली सेनाओं के परिवहन के लिए चौड़े तलों वाली नौकाओं की एक बड़ी संख्या तैयार की। यह एक पूर्ण रूप से गम्भीर योजना थी। इसने इंग्लैण्ड में वैसा ही भीषण भय उत्पन्न किया, जैसा भय इसके बाद नैपोलियन के समय में इस प्रकार की योजना से उत्पन्न हुआ था।

पिट ऐसा पुरुष नही था, जो युद्ध सम्बन्धी कार्यवाही की अपनी योजनाओं को किसी अन्य व्यक्ति के आदेशों से संचालित होने देता। समुद्र पार की लड़ाइयाँ अपने प्रयत्नों को इंग्लैण्ड पर आक्रमण के भय के कारण घटाने के बजाय, जैसा कि इस योजना का

इरादा था, उसने समुद्र पार की अपनी साहसिक योजनाओं को और भी अधिक बड़े पैमाने पर आयोजित किया। इन योजनाओं का वर्णन आगे किया जायगा। उनके उद्देश्य १७५८ ई० के उद्देश्यों से और भी अधिक साहसपूर्ण थे, किन्तु उसने चोईसियुल की धमकी की उपेक्षा नहीं की। अमेरिका अथवा जर्मनी के लिए आवश्यक सेनाओं को अपने पास रोकने की अपेक्षा उसने इन युद्धों के लिए पहले की अपेक्षा अधिक सेनाएँ भेजीं और इंग्लैण्ड की प्रतिरक्षा के लिए उसने राष्ट्र पर विश्वास किया। १७५६ ई० में उसने अपने एक कानून द्वारा पुनः संगठित की गयी राष्ट्रीय सेना का आह्वान किया। कुछ कौण्टियों (Counties) में नागरिक सेना या मिलिशिया (Militia) के बुलाये जाने से दंगे हो गये, परन्तु राष्ट्र ने पूरी तरह इस आह्वान का प्रत्युत्तर गौरवपूर्ण भावना के साथ दिया। इस प्रकार अपने देश के लिए लड़ने के लिए जनता के आह्वान का नैतिक परिणाम पूर्ण रूप से प्रशंसनीय था। इसने राष्ट्र की एकता को सुदृढ़ किया। इसने दलों की भावना को नष्ट किया, श्रेणीभेदों को निर्बल बनाया, अपने मेनर गृहों में चिरकाल से मुँह फुलाने वाले उदासीन टोरी जमींदार (Tory Squires), डिसेण्टरों (Dissenters) तथा व्यापारियों के साथ मिल गये। एक लार्ड लेफ्टिनेण्ट ने यह रिपोर्ट भेजी थी कि 'जो भद्रजन अभी तक बहुत लज्जालु थे और बड़ी मुश्किल से एक दूसरे को जानते थे, वे अब एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं और मिल कर कार्य करते हैं।' सारे देश में सैनिक उत्साह फैल गया। शहरों ने अपने खर्च पर नयी रेजीमेण्टें भर्ती कीं अथवा अपने नागरिकों को हथियार दिये और उनकी कवायद करवायी। यहाँ तक कि निजी व्यक्तियों ने रेजीमेण्टें भर्ती करने का पूरा व्यय वहन करना स्वीकार किया। इससे पहले आरमेडा के दिनों में भी ब्रिटेन में कभी ऐसा देशभक्तिपूर्ण उत्साह नहीं प्रदर्शित हुआ था।

नागरिक सेना को तथा स्वयं-सेवकों को सेवा के लिए कभी नहीं बुलाया गया, क्योंकि नौसेना, पिट के दूरवर्ती अभियानों की माँगें पूरी करने के अतिरिक्त चोईसियुल की योजना को विफल बनाने में पूर्ण रूप से समर्थ थी, क्योंकि १५८८ ई० की फिलिप द्वितीय की तथा बाद में नैपोलियन की योजना की भाँति आक्रमण को करने की सम्भावना इंग्लिश चैनल पर प्रभुत्व पाने के अवसर पर निर्भर थी, भले ही यह अवसर केवल थोड़े समय के लिए क्यों न हो। विशाल ब्रिटिश बेड़े के दूर-दूर बिखरे होने पर भी यह कार्य केवल तभी हो सकता था, यदि समूचा फ्रेन्च बेड़ा एकत्र किया जा सकता। इसे एकत्र होने से रोकना नौसेना का कार्य था और उसने इसे बड़ी सफलता के साथ किया।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस युद्ध की एकमात्र बड़ी नौसैनिक कार्यवाहियाँ—दो महान् सैनिक-युद्ध लड़े गये। चोईसियुल की योजनाओं के लिए, जैसा कि बाद में नेपोलियन की योजनाओं के लिए, आवश्यक था कि तूलोन का फ्रेन्च बेड़ा भूमध्य सागर से निकले और इंग्लिश चैनल के बेड़े के साथ मिल जाय।[1] अगस्त १७५९ ई० में

१. उत्तरी अन्ध महासागर के नक्शे के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट ४५ (बी) देखिए तथा छठे संस्करण की प्लेट ६२ (बी) देखिए।

यह प्रयास किया गया। बासकेवन के जिब्राल्टर के बेड़े ने उन्हें उस समय पकड़ लिया, जब वे जलडमरूमध्य में से होकर गुजर रहे थे। उसने उनका उत्तर-पश्चिम की दिशा में पुर्तगाल के समुद्र तट पर लेगोस और केप सेण्ट विसेण्ट के बीच के प्रदेश तक पीछा किया और वहाँ इस आक्रमण से बच कर भाग निकलने वाले दो पोतों के अतिरिक्त अन्य सब जहाजों को नष्ट कर दिया। पाँच जहाज इससे पहले ही केडिज में शरण ग्रहण कर चुके थे, वे भी नष्ट होने से बच गये।

लेगोस की लड़ाई ने चोईसियुल की महान् योजना को नष्ट कर दिया; किन्तु अब भी वह इंग्लैण्ड पर आक्रमण करने की अपनी योजना को पूरा करने के लिए आग्रह कर रहा था। ल्वायर के उत्तरी बन्दरगाहों में एकत्र हुई परिवहन का कार्य करने वाली नौकाओं की रक्षा के लिए, कान्फ्लेन्स की अध्यक्षता में प्रधान फ्रेन्च बेड़ा नवम्बर में उस भीषण पश्चिमी झंझावात का लाभ उठाते हुए ब्रेस्ट की बन्दरगाह से बाहर आया, जिस झंझावात ने हाक को तथा उसके घेरा डालने वाले समुद्री बेड़े को टोरबे की ओर वापस जाने को बाधित किया था।[१] कान्फ्लेन्स दक्षिण की ओर लोरियेण्ट तथा क्वीबरोन खाड़ी की ओर चला। किन्तु हाक[२] ने उसका प्रबल पीछा किया। कान्फ्लेन्स ने यह सोचा था कि वह क्वीबरोन की खाड़ी में सुरक्षित होगा। उसका प्रवेशद्वार खतरनाक चट्टानों से सुरक्षित था। विशेषत: यह स्थिति उस समय थी जब एक अतीव खतरनाक समुद्र तट पर एक भीषण तूफान चल रहा था। किन्तु उसने हाक का स्वभाव समझे बिना ही यह बात सोची थी; हाक ने तूफान की, चट्टानों की तथा समुद्री तट की परवाह न करते हुए अपने कप्तानों को यह आज्ञा दी कि वे फ्रेन्च बेड़े का पीछा करें। वे जबर्दस्ती इस खाड़ी में घुस गये और उन्होंने फ्रेन्च बेड़े को बिलकुल नष्ट कर दिया।

ब्रिटिश सेना के इतिहास में क्वीबरोन खाड़ी की लड़ाई एक अधिकतम शानदार और साहसिक कार्य था। यह निर्णयात्मक कार्य था! यह इस युद्ध का ट्रैफलगर था, फ्रान्स की नौसेना का अब कोई महत्व न रहा था। इसके बाद इंगलैण्ड पर आक्रमण के लिए कोई अधिक कुमुक या सामग्री नहीं भेजी जा सकती थी। इस प्रकार समुद्रों पर ब्रिटेन की प्रभुता अजेय रूप से सुरक्षित बना दी गयी थी।

इसके बाद से समुद्र में फ्रान्स की कार्यवाही केवल व्यापार के विध्वंस तक सीमित रही। इस क्षेत्र में फ्रेन्च लोगों ने पहले अत्यधिक साहस प्रदर्शित किया था और ऐसी भारी हानि पहुँचायी थी, जो युद्ध के आगे बढ़ने के साथ-साथ अधिक भीषण होती चली गयी। १७५६ ई० से ६० ई० के बीच में २५०० से अधिक ब्रिटिश जहाज पकड़े गये और १७६१ ई० में ८६२ जहाज। किन्तु फ्रान्स के निजीयोद्धाजहाजों के द्वारा अगले तीन वर्ष में पकड़े जाने वाले ब्रिटिश जहाजों की संख्या (विरोधाभास प्रतीत होने पर भी) ब्रिटेन की समुद्री प्रभुता का प्रमाण था,

---

१. इंग्लिश चैनल के नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट ४५ (ए), छठे संस्करण की प्लेट ६२ (ए);

२. माण्टेग्यू बरोस ने हाक की एक जीवनी लिखी है।

क्योंकि कोई भी फ्रेन्च जहाज बड़ी कठिनाई से व्यापारिक प्रयोजनों के लिए बाहर जाने का साहस करता था। फ्रांस के नौसैनिक और व्यापारिक जहाजों की एक बड़ी संख्या को इंग्लैण्ड के जहाज लूटने और जलदस्युवृत्ति करने के अतिरिक्त कोई कार्य नहीं मिल सकता था। दूसरी ओर ब्रिटिश जहाज असंख्य और सर्वव्यापक थे। पुराने पकड़े गये जहाजों की अपेक्षा नये जहाज अधिक तेजी से बन रहे थे। इन वर्षों में ब्रिटेन के व्यापारिक जहाजों की संख्या लगभग आठ हजार तक पहुँच गयी थी और वे विश्व की व्यापारिक वस्तुओं का वहन करने में एक असाधारण सर्वोच्चि स्थिति का उपभोग करने लगे।

किन्तु निजीयोद्धाजहाजों द्वारा समुद्री डकैती किसी भी प्रकार फ्रेन्च पक्ष तक सीमित नहीं थी। ब्रिटिश और अमेरिकन नाविक समान पौरुष के साथ ऐसा कार्य कर रहे थे। प्रत्येक बन्दरगाह के पास अपना जलदस्युवृत्ति (Piracy) करने वाला बेड़ा होता था। इसे शत्रु के जहाजों का शिकार करने के लिए शस्त्रों से सुसज्जित किया जाता था। (१८५६ ई० तक प्रत्येक राष्ट्र द्वारा अनुसरण की जाने वाली) निजी पोतों को ऐसे कार्य करने की अनुज्ञा देने की परिपाटी का महान् दोष यह था कि इन जहाजों को नियन्त्रण में नहीं रखा जा सकता था। यह कार्य शीघ्र ही कोरी समुद्री डकैती में परिणत हो जाता था। यह कठिनाई उस समय और भी बढ़ गयी, जब फ्रांस के पोत समुद्रों से लगभग लुप्त हो गये और फ्रांस के लिए माल का परिवहन तटस्थ देशों के पोतों ने आरम्भ कर दिया। क्या इस सामान को रोका जा सकता था? अथवा क्या फ्रांस को युद्ध सामग्री तक की खुली पूर्ति की अनुमति दी जानी चाहिए? इस प्रश्न पर विवाद चल रहा था। तटस्थ देश ब्रिटेन की समुद्री शक्ति के अधिकाधिक विरोधी होते जा रहे थे। ये देश उस ढंग के कारण और भी अधिक विरोधी बन रहे थे, जिस ढंग से अनेक निजीयोद्धाजहाज व्यवहार कर रहे थे; विशेष रूप से जिस ढंग से अमेरिकन वेस्ट इण्डीज में डच और स्पेनिश जहाजों का विध्वंस कर रहे थे और इसी समय मे वे फ्रांस को नौ सैनिक सामग्री बेच कर भारी मुनाफा कमा रहे थे। पिट ने निजीयोद्धापोतों की बुराइयों को एक कानून से रोकने का प्रयत्न किया। उस कानून को उसने १७५६ ई० में पेश किया और पर्याप्त विरोध होते हुए भी उसने इसे पास करवाया। उसने कामन्स सभा में कहा था कि "समुद्रों की रानी-इंग्लैण्ड को समुद्र में निरंकुश रूप से कार्य नहीं करना चाहिए।" उसके बिल ने तटस्थ देशों की उन सब शिकायतों को दूर नही किया जो शिकायतें अगले वर्ष अधिक ओजस्विता के साथ प्रस्तुत की गयीं। किन्तु उसने कम से कम इस पद्धति के दोषों को नियन्त्रित करने का सर्वोत्तम प्रयत्न किया।

नौसैनिक प्रभुता के प्रयोग की अपनी कठिनाइयाँ थीं, इसे संयम तथा न्याय के साथ की प्रयुक्त करने की विधि को सीखने में समय लगा; किन्तु इस बीच में इसने प्रधान युद्धों में अपनी विजय को निश्चित बना दिया। नौसेना की विजयें, अमेरिका में पिट की विजयों की तथा भारत की सभी आश्चर्यजनक विजयों की आवश्यक नींव थीं। लेगोस और क्वीबरोन ने निर्विवाद रूप से भारत में फ्रांस की पुरानी स्थिति को पुन: प्राप्त करने के उस उग्र प्रयत्न की सफलता की सब सम्भावना समाप्त कर दी थी, जिसे इन वर्षों में वीर लाली पाने का प्रयत्न कर रहा था, जैसा कि हम अगले अध्याय में देखेंगे। आक्रमण के खतरे वाले इस वर्ष में भी नौसेना की

प्रभुता ने पिट को इस बात में समर्थ बनाया कि वह वेस्ट इण्डीज के प्रसिद्ध फ्रेन्च टापू पर एक प्रबल प्रहार करे। यहाँ गुआदेलूप के समृद्ध टापू पर अधिकार कर लिया गया।

केवल एक क्षेत्र में यूरोप के महाद्वीप पर नौसेना कोई सीधी सहायता नहीं दे सकी। यहाँ प्रशिया का राजा फ्रेडरिक बड़ी कठिन प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझ रहा था। उसे रूसियों से तथा आस्ट्रियनों से भयंकर हानि उठाते हुए प्रबल पराजय स्वीकार करनी पड़ी थी। उसकी आधी सेना नष्ट हो चुकी थी। स्वीड और उसके शत्रु उसके प्रदेश पर शिविर डाले पड़े थे तथा वह आत्महत्या करने की बात सोच रहा था। उसकी एकमात्र आशा ब्रिटेन से सहायता पाने पर ही अवलम्बित थी।

फिर भी, फ्रेडरिक को चारों ओर से घेरने वाली निराशाओं ने उन उज्ज्वल सफलताओं के महत्व को बढ़ा दिया जो इस वर्ष हनोवर के युद्धों में प्राप्त हुई थीं। ब्रंसविक के फर्डिनेण्ड के विरुद्ध दो फ्रेन्च सेनाएँ थीं। इनमें तथा उसकी सेना में दो और एक का अनुपात था। फिर भी न केवल उसने अपनी स्थिति बनाये रखी, किन्तु मिंडन में उसने एक ऐसी शानदार विजय प्राप्त की, जिसने उसे पश्चिमी जर्मनी से फ्रेंच लोगों को बाहर भगा कर साफ करने में लगभग समर्थ बनाया। इस लड़ाई का बोझ छ. ब्रिटिश रेजीमेण्टों पर पड़ा, जिनके झण्डों पर अब भी मिंडन का नाम अंकित है। फ्रांस की स्थलसेना का वैसा ही घोर पराभव हुआ, जैसा उसकी नौसेना का हुआ था।

किन्तु १७५८ ई० की भाँति १७५९ में भी सबसे बड़ा मोर्चा अमेरिका में था। इसका उद्देश्य फ्रांस की शक्ति के अन्तिम विध्वंस से कुछ कम नहीं था; पिट इसे पाने में लगभग सफल हो गया। १७५८ ई० की भाँति आक्रमण की तिहरी योजना बनायी गयी।[1] कर्नल प्रीडो की अध्यक्षता में एक अभियान सेना लेक ईरी और लेक आण्टेरियो के बीच में फोर्ट नियाग्रा पर अधिकार करके झीलों के क्षेत्र की विजय को पूर्ण बनाने के लिए भेजी गयी। इसने अपना उद्देश्य पूर्ण रूप से प्राप्त कर लिया और यह अभियान सेना माण्ट्रील की ओर नदी के साथ नीचे की दिशा में प्रगति में सहयोग देने के लिए तैयार थी। आधे ब्रिटिश तथा आधे उपनिवेश-वासियों वाली ग्यारह हजार सैनिकों की दूसरी सेना लुइसबर्ग के विजेता एमहर्स्ट को दी गयी। उसे लेक चैम्पलेन का मार्ग साफ करने का तथा इस मार्ग से क्वेबक की ओर बढ़ने का कार्य सौंपा गया, क्योंकि प्रधान फ्रेन्च सेनाओं को क्वेबक की प्रतिरक्षा के लिए वापिस बुला लिया गया था। एमहर्स्ट एक उत्तम सैनिक था, किन्तु वह अपनी चालों में बहुत अधिक सोच विचार करता था। वह क्वेबक पर हमले में सहायता देने के लिए ऐसी पर्याप्त शीघ्रता के साथ आगे नहीं बढ़ा, जिससे पश्चिम की ओर से इसके पहुँचने से वह कार्य बहुत हल्का हो जाता, जब कि पूर्व दिशा से इस पर प्रधान आक्रमण किया जा रहा था। उसके विलम्ब ने इस वर्ष की तीसरी अभियान सेना पर बहुत बड़ा, वस्तुतः लगभग असंभव प्रतीत होने वाला कार्य डाल दिया।

क्वेबक की विजय को लक्ष्य बनाने वाले इस अभियान दल का कार्य सम्मिलित नौ तथा स्थल सेना को सौंपा गया था। इसमें जल सेनापति साण्डर्स की अध्यक्षता में बाइस जंगी जहाज नौ हजार चुने हुए ब्रिटिश सैनिकों को सुरक्षित रूप से अमेरिका ले जा रहे थे। इनका

---

१. नक्शे के लिए देखिए एटलस के पांचवें संस्करण की प्लेट संख्या ५५, छठे की सं० ६३।

सेनापति जेम्स वोल्फ[1] था, यह तैंतीस वर्ष का प्रभावहीन तरुण था। उसको यह अवसर पिट के चुनाव के कारण मिला था और वह पहले ही ब्रिटिश सैनिकों में अधिकतम योग्य विचारक और साहसी के रूप में प्रसिद्ध हो चुका था। यह प्रयास अधिकाधिक साहसपूर्ण प्रतीत होता था। सेण्ट लारेन्स नदी के एक बड़े बेड़े के लिए नौचालन लगभग असम्भव समझा जाता था फिर भी, साण्डर्स ने इस कार्य को पूर्ण सफलता के साथ किया। नदी के संकीर्णतम भाग के सामने स्थित तथा उसको नियन्त्रित करने वाला क्वेबक का दुर्ग अजेय समझा जाता था। इसकी रक्षा अत्यधिक सुदृढ़ किलेबन्दियों से की गयी थी। महान् सेनानी तथा फ्रेन्च सैनिकों की पूर्ण निष्ठा पर प्रभुत्व रखने वाला सेनापति मोन्तकाम लगभग १५ हजार सैनिकों के साथ इसकी प्रतिरक्षा कर रहा था। जब क्वेबक के सामने अलियन्स के टापू पर साण्डर्स और वोल्फ पहुँचे तो उन्होंने अपने सामने एक ऊँची लम्बायमान चट्टान के शिखर पर यह किला देखा। उस किले की तोपों का नदी पर अधिकार प्रतीत होता था। पश्चिम की ओर दो सौ फीट ऊँचीं खड़ी चट्टानें थीं। यदि किले की तोपों की बाधा को पार भी कर लिया जाता तो भी इन चट्टानों के कारण वहाँ तक सेना उतारना असम्भव प्रतीत होता था। पूर्व की ओर एक गहरी नदी सेण्ट चार्ल्स सीधी ऊँची जमीन से नीचे की ओर आ रही थी और दुर्ग की रक्षा कर रही थी। इसके परे अलियन्स के टापू पर ब्रिटिश सेनाओं के सामने एक नीची भूमि का चौड़ा हिस्सा था। इसके पीछे चट्टानें थीं। इसको विस्तृत रूप से बनायी गयी मिट्टी की रचनाओं की अविरत शृंखला से सुरक्षित किया गया था। इसके पीछे वोल्फ की सेना से भी बड़ी फ्रेन्च सेना पड़ी हुई थी। इस किले को जीतना तब तक असम्भव प्रतीत होता था, जब तक पश्चिम की दिशा से नदी के नीचे की ओर से आते हुए एमहर्स्ट उन्हें सहयोग न दे। एमहर्स्ट की ओर से उस समय तक कोई सूचना नहीं मिली थी।

जुलाई और अगस्त के महीने बिना कुछ किये बीत गये। प्वाइण्ट लेविस पर नगर के सामने चढ़ाई हुई। तोपों ने इसके मकानों को विध्वस्त कर दिया और इसके तोपखाने पर काबू पा लिया गया। किन्तु इसने इसके सिवाय कुछ भी काम नहीं किया कि इसने साण्डर्स को नगर के ऊपर चार जहाज भेजने का मौका दे दिया। शहर के पूर्व में फ्रांस के बड़े मोर्चे पर एक संयुक्त नौ सेना तथा स्थल सेना के आक्रमण को भारी हानि के साथ विफल कर दिया गया। सितम्बर आ गया, नदी शीघ्र ही जमने वाली थी। वोल्फ ने पिट को एक निराशापूर्ण पत्र इंग्लैण्ड भेजते हुए लिखा कि उसकी एकमात्र आशा शहर पर ऊपर से उग्र आक्रमण करने की है, जिसके लिए नीचे की दुर्ग रक्षक सेना को छोड़ने के बाद उसके पास केवल पाँच हजार व्यक्ति शेष बचते हैं।

इस पत्र को लिखने के तुरन्त बाद ही वोल्फ ने अपनी निराधार आशा पर कार्य आरम्भ कर दिया। तारों से प्रकाशित एक अन्धकारपूर्ण रात्रि में १२ सितम्बर को उसकी छोटी सेना अब्राहम के मैदान तक पहुँचने वाली सीधी ढाल के ऊपर ले जाने वाले सीधे खड़े और तंग रास्ते पर आगे बढ़ने के लिए भेजी गयी। फ्रेन्च सन्तरियों ने उन्हें देखा, किन्तु उन्होंने

---

१. ए० जी० ब्रैडली ने इंग्लिश मैन आफ एक्शन सीरीज में वोल्फ की एक अच्छी लघु जीवन लिखी है।

इसे दुर्ग की रक्षक सेना के लिए खाद्य सामग्री लाने वाली किश्तियों का एक प्रत्याशित बेड़ा समझ लिया, वोल्फ को ऐसा समझा जाने का भरोसा था। २४ स्वयं-सेवक तारों के प्रकाश में उस रास्ते पर ऊपर चढ़ गये जब कि उनके नीचे सैनिकों के समूह से भरी हुई किश्तियाँ खड़ी हुई प्रतीक्षा कर रही थीं। इन किश्तियों पर विद्यमान कोई भी व्यक्ति कानाफूसी तक करने की हिम्मत नहीं कर रहा था। इसके बाद छोटी सेना ऊपर चढ़ गयी और अपने साथ दो तोपें घसीट कर ले गयी। ज्यों ही प्रात:काल हुआ तो यह सेना क्वेबक के पार दिखायी देने वाले अब्राहम के मैदान पर कतारो मे खड़ी हो गयी। आश्चर्यचकित होकर मोन्तकाम जितनी जल्दी हो सका, अपने सैनिक ले आया और उसने ऐसे आक्रमण का आदेश दिया, जो आक्रान्ताओं को चट्टान से हटा दे। ब्रिटिश सैनिक उस समय तक शान्त रहे, जब तक शत्रु उनके पास चालीस कदम तक नही पहुँच गया। इसके बाद पहले तीन बार भीषण गोलाबारी करने के पश्चात किये गये ब्रिटिश आक्रमण ने फ्रेन्च सेना की प्रगति को अव्यवस्थित भगदड़ में परिणत कर दिया। शायद ही कभी ऐसी महान् विजय इतनी शीघ्रता से प्राप्त की गयी हो, आक्रमण का नेतृत्व करते हुए वोल्फ को तीन गोलियाँ लगी, किन्तु यह सौभाग्यशाली प्रसन्न योद्धा तब तक नहीं मरा, जब तक उस यह नही पता लग गया कि उसने अपने देश के इतिहास में एक अधिकतम महत्वपूर्ण लड़ाई जीत ली है। लगभग इसी क्षण उसका शूरवीर विरोधी भी गोली लगन स गिर कर मर गया। मोन्तकाम के उत्तराधिकारी ने अपनी अधिकांश सेना वापस बुला ली और लड़ाई के पाँच दिन बाद १८ सितम्बर को क्वेबक ने आत्मसमर्पण कर दिया।

विस्मयो के उस वष (Annus Mirablis) की यह सबसे बड़ी विजय थी, जिस वर्ष ने विजयो की ऐसी अधिकतम आश्चर्यजनक परम्परा को देखा था जो विजयें कभी भी एक प्रमुदित होने वाल राष्ट्र के लिए घोषित की गयी थी। १९ जून को लन्दन को गुआदेलूप की विजय का समाचार मिला। ५ अगस्त को इसके पड़ोसी टापू मेरी गालान्ते पर अधिकार की खबर मिली। ६ अगस्त को मिण्डन की विजय का मादक समाचार आया। अगस्त समाप्त होने से पहले ही लगास मे फ्रान्स के बेड़े की हार की खबर आयी। सितम्बर में फोर्टनिआग्रा पर कब्ज का तथा पिछले चार वर्ष से प्रबल भय उत्पन्न करने वाले टिकोनडेरोगा तथा क्राउन प्वाइण्ट पर अधिकार करने के समाचार आये। अक्टूबर मास में क्वेबक की कीर्ति सुनी गयी, नवम्बर मे क्वीबरान खाड़ी की सब से बड़ी विजय का समाचार आया। बातूनी होरेस वालपोल ने यह लिखा था कि " प्रतिदिन प्रात:काल यह पूछना आवश्यक है कि आज कौन सी विजय हुई है, क्योंकि इस बात की आशंका है कि हम किसी विजय के समाचार से न चूक जायँ।" यह बात उस समय से केवल दो वर्ष बाद हुई जब चेस्टरफील्ड यह विलाप कर रहा था कि "अब हममे कोई राष्ट्रीय भावना नही हैं।" दोनों कथनों का यह अन्तर पिट की प्रतिभा द्वारा किये गये महान् कार्यों का मापदण्ड है।

५. शान्ति के लिए सन्धि चर्चा : पिट का पतन

१७५९ ई० में प्राप्त कीर्ति की तुलना में १७६०-६१ ई० की लड़ाइयाँ ढलती चन्द्रकला जैसी प्रतीत हुईं। १७६० ई० में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि क्वेबक के पतन का आशय कनाडा

की विजय नहीं थी। एक कड़ी शीत ऋतु के बाद वोल्फ की छोटी सेना पर इससे बहुत अधिक संख्या रखने वाली, तथा नवीन सहायता प्राप्त फ्रेन्च सेनाओं ने हमले किये और इस सेना को लगभग इसके विजय के स्थल पर ही हरा दिया गया। कुछ समय के लिए यह क्वेबक में घिर गयी; किन्तु नदी में ऊपर की ओर से आते हुए बेड़े ने तथा लेक चैम्पलेन की ओर से बढ़ती हुई एक स्थल सेना ने इस घेरे को समाप्त कर दिया। फ्रेन्च सेना माण्ट्रील की ओर पीछे लौट गयी और वहाँ सितम्बर में यह सेना आत्मसमर्पण करने को विवश हो गयी। इसने समूचा कनाडा ब्रिटेन के राजा को प्रदान किया और उत्तरी अमेरिका का लम्बा युद्ध समाप्त हो गया। हम आगे यह देखेंगे कि इसी वर्ष भारत में वान्देवाश में फ्रेन्च लोगों की हार से ब्रिटिश सेनाओं को एक निर्णयात्मक विजय प्राप्त हुई।

इस बीच में यूरोप में स्थिति बड़ी निराशाजनक हो चुकी थी। यद्यपि ब्रंसविक के फर्डिनेण्ड के पास इस समय सेनाएँ पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक संख्या में थीं, तथापि वह कोई बड़ी निश्चित सफलता प्राप्त नहीं कर सका था। विजयों की अभ्यस्त ब्रिटिश जनता जर्मनी के युद्ध में धैर्य खो रही थी। इस युद्ध को केवल विजय पाना ही लोकप्रिय बना सकता था और पिट के सभी साहसिक प्रयासों में यह सबसे अधिक व्यय वाला कार्य था। प्रशिया का राजा फ्रेडरिक लगभग परिश्रान्त हो चुका था। वह केवल फर्डिनेण्ड से सेनाएँ लेकर कुछ कार्य कर सका था। १७६० ईस्वी में कुछ समय के लिए रूसी लोगों ने प्रशिया की राजधानी बर्लिन पर अधिकार कर लिया था। यद्यपि फ्रेडरिक की अदम्य भावना ने उसे लीगनित्स की लड़ाई में आस्ट्रियनों को साइलीशिया से एक बार पुनः बाहर भगाने में, रूसी लोगों से बर्लिन खाली कराने में तथा सैक्सनी में आस्ट्रियन लोगों पर टोरगो की भीषण रूप से बहुव्ययसाध्य विजय प्राप्त करने में समर्थ बनाया था, तथापि वह क्षीण हो चुका था। उसके विरोधियों में आस्ट्रिया और फ्रांस अधिक अच्छी हालत में नहीं थे।

१७६१ ई० की युद्ध की कार्यवाहियाँ समान रूप से महत्वपूर्ण घटनाओं से शून्य और अनिर्णयात्मक थीं। यूरोप में इस समय कोई विशेष घटना नहीं हुई। यद्यपि ब्रंसविक के फर्डिनेण्ड को दो सफलताएँ मिलीं, किन्तु फ्रेडरिक अपनी शक्ति के अन्तिम छोर पर था। समुद्रों पर एकमात्र महत्वपूर्ण घटना फ्रांस के समुद्र तट के निकट बेल्लीस्ले के टापू पर अधिकार था। यदि इस पर ब्रिटिश सेनाएँ अधिकार कर लेतीं तो यह फ्रांस के लिए शाश्वत संकट बन जाता। पिट वेस्ट इण्डीज में फ्रांस के बचे हुए प्रदेशों पर हमलों की योजना बना रहा था, किन्तु उसने अभी तक उन्हें आरम्भ नहीं किया था।

इस तुलनात्मक शिथिलता का कारण यह था कि सन्धि की चर्चा (जिसके लिए प्रत्येक देश यहाँ तक कि ब्रिटेन भी उत्सुक था) शुरू हो गयी थी। पिट पहले से ही सन्धि करने के लिए तैयार था, किन्तु वह दो शर्तों पर तैयार था। पहली शर्त यह थी कि ब्रिटेन को उसके द्वारा किये गये बलिदानों तथा प्राप्त की गयी विजयों के अनुपात के अनुसार प्रतिफल मिलना चाहिए। दूसरी शर्त यह थी कि प्रशिया के फ्रेडरिक का साथ संकट की अवस्था में नही छोड़ना चाहिए। १७५९ ई० में उसने स्वेच्छापूर्वक संधि चर्चा आरम्भ की, किन्तु इसे उस समय बन्द कर दिया गया, जब फ्रांस ने यह स्पष्ट किया कि वह फ्रेडरिक को छोड़ते हुए एक पृथक् सन्धि

करना चाहता था। १७६० ई० में उसने इसी प्रकार स्वेच्छापूर्वक सन्धिवार्ता का नवीकरण किया, किन्तु अब परिस्थितियाँ बदल गयीं थीं। जार्ज द्वितीय मर चुका था और उसके उत्तराधिकारी जार्ज तृतीय की यह इच्छा थी कि वह ह्विग अल्पतन्त्र का अन्त करे और १६८८ ई० के क्रान्ति के समझौते (Revolution Settlement) में इंग्लैण्ड के राजा को जो स्थिति देने का इरादा किया गया था, वह स्थिति उसे पुनः प्राप्त कराये। इस लक्ष्य की प्राप्ति में अल्पतन्त्र के प्रति कोई प्रीति न रखने वाला पिट उसका स्वाभाविक मित्र हो सकता था, जैसा कि जार्ज तृतीय और उसका विश्वासपात्र लार्ड बूट मानता था। किन्तु राजा की दृष्टि में राजकीय सत्ता की पुनः स्थापना की दिशा में पहला पग युद्ध का अन्त और इसे संचालित करने वाले शक्तिशाली मन्त्रिमण्डल की समाप्ति होना चाहिए था। केवल राजा ही शान्ति का इच्छुक नहीं था; बैडफोर्ड के ड्यूक जैसे कुछ प्रमुख ह्विग ब्रिटेन की सफलताओं के अत्यधिक परिमाण से भयभीत हो गये थे। उन्हें यह आशंका थी कि समुद्रों पर ब्रिटिश प्रभुता के विरुद्ध एक सामान्य गुटबन्दी बन जायगी। पिट के अपने साले, जार्ज ग्रेनविल की भाँति कुछ अन्य ह्विग नेता बढ़ते हुए राष्ट्रीय ऋण से संत्रस्त थे। ऐसे अनेक व्यक्ति विद्यमान थे, जो अब संकट समाप्त हो जाने पर भीषण तानाशाह की प्रभुता को हटा कर दूर फेंकने में प्रसन्न होते। जर्मनी में होने वाले युद्ध की बढ़ती हुई अलोकप्रियता ने इन भावनाओं को प्रोत्साहित किया। इन कारणों के परिणाम स्वरूप पिट् ने १७६०-६१ ई० में यह अनुभव किया कि कैबिनेट में उसका प्रभुत्व शनैः-शनैः कम होता जा रहा है।

१७६१ ई० की शान्तिचर्चा में यद्यपि फ्रांस द्वारा प्रस्तावित शर्तें अयुक्तियुक्त नही थीं, तथापि पिट को फ्रांस के रवैये में एक निश्चित कड़ापन आने से तथा फ्रांस और स्पेन के के मध्य में पुनर्मिलन के संकेतों से कुछ आश्चर्य हुआ। १७५९ ई० में स्पेन की राजगद्दी पर एक नया राजा चार्ल्स तृतीय बैठा। समूचे युद्ध में तटस्थ रहने वाले अपने पूर्ववर्ती राजा के प्रतिकूल चार्ल्स तृतीय की सहानुभूति निश्चित रूप से फ्रांस के साथ थी। चोईसियुल ने उसे ब्रिटेन के विरुद्ध उस सामान्य कार्यवाही के उन सुझावों को सुनने के लिए उसे तैयार पाया, जिन सुझावों को वह १७५८ ई० में व्यर्थ में ही पहले ही दे चुका था। अगस्त १७६१ ई० में जब सन्धिचर्चा चल रही थी, उस समय फ्रांस और स्पेन की एक गुप्त सन्धि—**तीसरा पारिवारिक समझौता** हुआ। यह घनिष्ठ और शाश्वत मित्रता की सन्धि थी। इसकी एक धारा में स्पेन ने यह वचन दिया कि यदि मई १७६२ ई० से पहले शान्ति-सन्धि पर हस्ताक्षर नहीं होंगे, तो स्पेन ब्रिटेन के विरुद्ध युद्ध घोषित कर देगा। इंग्लैण्ड में इस शर्त का किसी को ज्ञान नहीं था, किन्तु जब लन्दन में फ्रांस की ओर से सन्धि-वार्ता करने वाले ने न केवल इस बात पर आग्रह किया कि ब्रिटेन को प्रशिया को कोई अगली सहायता नही देनी चाहिए, अपितु उसने स्पेन की ओर से भी अनेक माँगें पेश कीं और यह कहा कि शान्ति सन्धि पर हस्ताक्षर होने से पहले ये माँगें पूरी हो जानी चाहिएँ, उस समय पिट ने यह परिणाम निकाला कि दोनों बोर्बोन शक्तियाँ मिल कर कार्य कर रही हैं। उसने सन्धिवार्ता भंग कर दी और कैबिनेट से स्पेन के विरुद्ध फौरन युद्ध-घोषणा करने की सिफ़ारिश की।

किन्तु अब कैबिनेट में शान्ति के समर्थक दल का बहुमत था। पिट को केवल एक मत

मिला तथा उसकी तानाशाही समाप्त हो गयी। उसने यह घोषणा की कि वह जिन कार्यों की व्यवस्था नहीं कर रहा था, उनके लिए वह उत्तरदायी नहीं होगा। उसने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया (अक्टूबर १७६१ ई०)। इससे ब्रिटिश इतिहास में एक अधिकतम यशस्वी मन्त्रिमण्डल का अन्त हो गया। इसने राष्ट्रमण्डल को विभक्त, उत्साहहीन और स्पष्टत: विनाश के कगार पर खड़ा पाया था, किन्तु चार वर्ष के अल्प समय के बाद इस मन्त्रिमण्डल ने इसे संयुक्त, विजयी और विश्व में सबसे बड़ी शक्ति के रूप में स्वीकार किया जाने वाला बना कर छोड़ा था।

६. परिणाम : स्पेन का पतन

यह सम्भव है कि स्पेन के विरुद्ध युद्ध की सिफारिश करते हुए पिट भविष्य में अपने द्वारा प्राप्त की गयी विजयों के नवीकरण की ओर तथा उन्हें दुगना बनाने की ओर देख रहा था। वह ब्रिटेन को स्पेन के औपनिवेशिक साम्राज्य का उसी प्रकार उत्तराधिकारी बनाना चाहता था, जैसे कि पहले ही उसने उसे फ्रांस के साम्राज्य का उत्तराधिकारी बनाया था। यह उसके अनेक ऐसे आलोचकों का दृष्टिकोण था, जो उसका इस स्वरूप में चित्रण करते थे कि वह युद्ध में आनन्द लेने वाला है और उसकी विजय की तृष्णा कभी शान्त नहीं हो सकती है। किन्तु उसके सारे पत्र-व्यवहार में इस दृष्टिकोण को उचित ठहराने वाला एक भी शब्द नहीं है। यह पत्र-व्यवहार उसे वस्तुत: शान्ति के लिए उत्सुक व्यक्ति के रूप में प्रदर्शित करता है, बशर्ते कि सन्धि की शर्तें युक्तियुक्त रूप से उत्तम हों और फ्रेडरिक के प्रति सम्माननीय दायित्वों को पूर्ण किया जा सके। उसे यह विश्वास था कि स्पेन की सहायता पाकर फ्रांस का इरादा जुआरी के अन्तिम दाँव की भाँति भाग्य की परीक्षा करना था। लुई १४वें के समय से ह्विग राजनीतिज्ञों को परेशान करने वाला फ्रेंको-स्पेनिश मित्रता का पुराना डरावना सपना पुनरुज्जीवित हो रहा था और उसका विचार था कि शान्ति स्थापित करने का शीघ्रतम उपाय तेजी से प्रहार करना है और वह जानता था कि वह ऐसा कर सकता था। घटनाओं को शीघ्र ही सिद्ध करना था कि वह ठीक था। ज्यों ही स्पेन का प्रतिवर्ष खजाना लाने वाला समुद्री बेड़ा सुरक्षित रूप से स्वदेश पहुँच गया त्यों ही उस के व्यवहार ने युद्ध को अनिवार्य बना दिया। पिट के त्याग-पत्र देने के तीन महीने बाद जनवरी १७६२ ई० में युद्ध की घोषणा की गयी।

पिट ने प्रत्याशित युद्ध के नवीकरण के लिए पहले से ही अपनी योजनाएँ बना लीं थीं। फ्रांस और स्पेन के विरुद्ध १७६२ ई० के युद्ध की कार्यवाहियाँ इन योजनाओं के अनुसार चलती रहीं। यह एक अधिकतम चकित करने वाली योजना थी, क्योंकि पिट ने युद्ध के जिन उपकरणों को तेज बनाया था, वे अब भी अपने उत्तम रूप में थे। पिट द्वारा फ्रेन्च वेस्ट इण्डीज के विरुद्ध रोडनी की अध्यक्षता में पहले ही भेजी गयी एक अभियान सेना ने मार्टिनीक, ग्रेनाडा, सेण्ट लूशिया और सेण्ट विसेण्ट पर तेजी से अधिकार कर लिया। छोटे एण्टिलीज के सब टापू ब्रिटेन के अधिकार में आ गये। एक समुद्री बेड़े ने तथा दस हजार सैनिकों की एक सेना ने क्यूबा की राजधानी हवाना पर हमला किया और कुछ सप्ताह में ही इस पर, तथा बारह स्पेनिश पोतों पर और एक विशाल खजाने पर अधिकार कर लिया। यह स्पेन के साम्राज्य के अत्यन्त मार्मिक स्थल पर आघात था। जब स्पेन ने ब्रिटेन के पुराने मित्र पुर्तगाल को इस

संघ में जबर्दस्ती सम्मिलित करने का प्रयत्न किया और उस देश पर हमला किया तो एक ब्रिटिश बेड़े को आठ हजार व्यक्तियों की सेना के साथ लिस्बन भेजा गया तथा स्पेनिश लोगों को बदनामी के साथ सीमावर्ती प्रदेश से वापस खदेड़ा गया। अन्त में भारत से भेजी गयी एक अभियान सेना ने मनीला पर हमला किया और उस पर अधिकार कर लिया। इसने फिलिप्पाइन द्वीपों के पूरे समूह का तथा एक बड़ी मुक्ति-धनराशि का समर्पण करने के लिए उसे बाधित किया। इन करारी चोटों से स्पेन का साम्राज्य भग्न होता हुआ प्रतीत हुआ। वस्तुतः स्पष्ट रूप से यह बात ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के लिए सम्भव थी कि यदि उसने ऐसी बात करने का विचार किया होता तो वह यूरोप के सब से पुराने औपनिवेशिक साम्राज्य का विनाश कर सकता था। १७६२ ई० की युद्ध की कार्यवाहियाँ अपनी पूर्ववर्ती कार्यवाहियों की अपेक्षा दो बातों में अधिक प्रभावशाली प्रतीत होतीं थीं। पहली बात तो यह थी कि इनसे शत्रु का विनाश अत्यन्त शीघ्रता से सम्पन्न हुआ और दूसरी बात यह थी कि इन्होंने यह प्रदर्शित किया कि पिट द्वारा तेज बनाये गये शस्त्र कितना अधिक संहार करने की शक्ति रखते थे।

७. पेरिस की शान्ति सन्धि

किन्तु इन घटनाओं ने फ्रांस और स्पेन को यह अनुभव कराया कि युद्ध को लम्बा खींचने से कुछ भी लाभ नहीं होगा, क्योंकि अब लार्ड बूट की अध्यक्षता में ब्रिटिश सरकार शान्ति के लिए उत्कण्ठित थी। अतः १७६२ ई० के वर्ष की समाप्ति से पहले ही शान्तिकी शर्तों पर समझौता हो गया और १७६३ ई० के आरम्भ में इन शर्तों को सम्पुष्ट कर दिया गया।

पेरिस की शान्ति-सन्धि पहले ब्रिटिश साम्राज्य के इतिहास का विजयपूर्ण चरम उत्कर्ष था। इतिहास में किसी भी कूटनीतिक दस्तावेज ने कभी इतने विशाल और सम्भावनाओं से भरे हुए प्रदेशों की व्यवस्था नहीं की, जैसी इस [illegible] ने की थी। मनुष्य द्वारा अब तक बनाये गये किसी भी साम्राज्य ने स्वरूप और अवसर की इतनी व्यापक विभिन्नता प्रदर्शित नहीं की थी, जैसी इस शान्ति-सन्धि ने ब्रिटिश लोगों के लिए प्रस्तुत की। कनाडा तथा न्यूअर्लियन्स के अतिरिक्त मिसिसिपी नदी के सभी प्रदेश ब्रिटेन के अधिकार में आ गये। इसमें फ्लोरिडा का प्रदेश भी सम्मिलित था, जो स्पेन ने हवाना को वापस करने के मूल्य के रूप में दिया था। फ्रांस के पास केवल दो ही प्रदेश रहे, पहला प्रदेश उत्तरी अमेरिका के महाद्वीप में मिसिसिपी नदी के पश्चिम का न खोजा गया प्रदेश था, जो उसने स्पेन को दे दिया था और सेण्टलारेन्स के मुहाने में सेण्ट पियर्रे और माईक्वेलोन के दो छोटे टापू थे, इन्हें उसने अपने मछुओं के अड्डे के रूप में रखा था। इनके लिए न्यूफाउण्डलैण्ड के निकट मछली पकड़ने के अधिकार सुरक्षित रखे गये थे। उत्तरी अमेरिका के महाद्वीप का भाग्य ब्रिटेन के हाथों में था। इस विशाल प्रदेश के भावी विकास का कार्य निरंकुश सत्ता को नहीं, किन्तु स्वशासन की पद्धति को करना था। वेस्ट इण्डीज में फ्रांस ने अपने समृद्धतम टापू, मार्टिनीक और गुआदेलूप को पुनः प्राप्त कर लिया। अब तक तटस्थ रहने वाले ग्रेनाडा, सेण्ट विन्सेण्ट, टोबेगो और डोमीनिका ब्रिटेन के अधिकार में चले गये। भूमध्य सागर में मिनोरका को एक बार पुनः एक ब्रिटेन का नौसैनिक अड्डा बनाने के लिए और इस समुद्र में ब्रिटेन की प्रभुता की सुरक्षा स्थापित करने के लिए

ब्रिटेन को पुनः वापस कर दिया गया। सुदूरवर्ती भारत में फ्रांस ने पुनः अपने दो व्यापारिक अड्डे प्राप्त किये। ये अड्डे केवल व्यापार के प्रयोजन के लिए थे, सैनिक अड्डों के रूप में नहीं। वास्तव में उसने दोनों स्थानों पर, बंगाल में और दक्षिण पूर्वी भारत में, ब्रिटेन की राजनीतिक प्रभुता स्वीकार की। इस प्रकार पूर्व में, पश्चिम में, और समुद्रों पर ब्रिटेन का पूर्ण प्रभुत्व स्थापित हो गया।

इस सन्धि की आश्चर्यजनक कमी यह थी कि इसमें यूरोप की समस्याओं का कोई समाधान नहीं किया गया था। वस्तुतः पिट के उत्तराधिकारियों ने प्रशिया का साथ छोड़ दिया था। इस समय एक सौभाग्यपूर्ण घटना यह हुई थी कि फ्रेडरिक की शत्रु एलिजाबेथ के स्थान पर फ्रेडरिक का भक्त एवं प्रशंसक पीटर तृतीय रूस की राजगद्दी पर बैठा. यदि वह न बैठता तो साथियों के परित्याग के कारण फ्रेडरिक का विनाश अवश्य हो जाता। उसने युद्ध को यद्यपि अपने क्षीण और निर्बल प्रदेशों में कोई वृद्धि करके समाप्त नहीं किया, तथापि इसकी समाप्ति के साथ उसकी प्रतिष्ठा असाधारण रीति से अधिक बढ़ गयी, क्योंकि उसे यह विश्वास था कि उसके साथ ऐसे विश्वासघात का व्यवहार हुआ है जो केवल उसी के लिए क्षम्य हो सकता था। अतः वह इसके बाद से ब्रिटेन के प्रति अविश्वासी और उसका विरोधी हो गया।

१७६३ ई० की शान्ति सन्धि की केवल एक ही मुख्य आलोचना उचित रूप में यह की जा सकती है कि इसने फ्रेडरिक के साथ वचन का पालन नहीं किया। किन्तु उस समय इस सन्धि की कटु आलोचना और उसके बाद भी प्रायः यह आलोचना इस आधार पर की गयी है कि इस सन्धि ने ब्रिटेन को उससे कहीं कम लाभ पहुँचाया, जिसकी माँग करने का उसे अधिकार था। यदि वह ऐसा करना पसन्द करता तो वह इससे अधिक प्रदेशों की प्राप्ति के लिए आग्रह कर सकता था। यदि वह चाहता तो उसे समूचे वेस्ट इण्डीज लेने से और क्रियात्मक रूप से स्पेन के प्रदेशों का मनोवाञ्छित भाग लेने से उसे कोई शक्ति नहीं रोक सकती थी। वह फ्रेन्च पश्चिमी अफ्रीका के प्रदेशों को भी ले सकता था, वह लुइसियाना पर भी अधिकार कर सकता था। वह फ्रांस को भारत के साथ व्यापार करने से तथा न्यूफाउण्डलैण्ड की मछलीगाहों से निष्कासित कर सकता था। वह फिलिप्पाइन द्वीप समूह को भी अपने साम्राज्य में मिला सकता था। उसके राजनीतिज्ञों ने स्वेच्छापूर्वक इन सभी वस्तुओं का परित्याग किया। निःसन्देह इसका कुछ कारण यह था कि वे शान्ति-सन्धि करने के लिये उत्सुक थे। किन्तु इसका कुछ कारण यह भी था कि उन्हें ऐसी सब पर हावी होने वाली शक्ति के उपयोग से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया का भय था। इस कारण पेरिस की शान्ति-सन्धि को उचित रूप में एक मृदु या नरम सन्धि कहा जा सकता है।

यह एक बुद्धिमत्तापूर्ण मृदुता थी। ब्रिटेन ने समुद्रों पर ऐसा प्रभुत्व प्राप्त किया था जिसको चुनौती नहीं दी जा सकती थी। उसे यह शोभा नहीं देता था कि वह इसका प्रयोग अत्याचारपूर्ण रीति से करे। तटस्थ देशों द्वारा युद्ध के समय इस शान्ति के उपयोग के ढंग के सम्बन्ध में की जाने वाली शिकायतों के बावजूद उचित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि इसका प्रयोग किसी भी समय में अत्याचारपूर्ण रीति से किया गया था। ब्रिटेन व्यापार करने वाले देशों का नेता बन गया था। यदि स्पेन और पुर्तगाल द्वारा पहले किये गये कार्य की भाँति वह चिर-

काल से विश्व के व्यापारियों को आकृष्ट करने वाले उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में अपने नेतृत्व को एकाधिकार में बदलने का प्रयत्न करता तो उसका विध्वंस भी स्पेन और पुर्तगाल की भाँति होता। उसने अपने उदारवाद के दावों को भी झूठा सिद्ध कर दिया होता। उसने महान् भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त कीं; ये सम्भवत: उतनी ही बड़ी थीं, जिनका वह लाभदायक रीति से प्रशासन करने का प्रयास कर सकता था। किन्तु इससे अधिक आवश्यक यह बात थी कि उसने ऐसे विस्तार और जटिलता वाले उत्तरदायित्वों को ग्रहण किया था, जैसे उत्तरदायित्वों को विश्व के इतिहास में अभी तक किसी जाति ने अपने ऊपर नहीं लिया था। उसने उत्तरी अमेरिका में महाद्वीप के समूचे भाग में स्वशासन की स्थापना को सुरक्षित बनाया। किन्तु ऐसा करते हुए उसने आवश्यक रूप से अमेरिका के इन स्वशासन करने वाले उपनिवेशों के तथा इन्हें स्थापित करने वाले इंग्लैण्ड के बीच में सम्बन्धों को उचित रीति से निश्चित करने की समस्या को तीव्र रूप से उत्पन्न किया था। उसने भारत में एक ऐसा कार्य हाथ में लिया था, जिसकी विशालता और जटिलता को कोई भी मानवीय प्राणी अभी तक नहीं समझ सका था। एक दृष्टि से पेरिस की शान्ति सन्धि डेढ़ शताब्दी तक उपनिवेश बसाने के कार्यों का तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्द्विताओं का चरम उत्कर्ष था। किन्तु इसके बाद तत्काल महान् समस्याओं और महान् अवसरों का एक ऐसा नवयुग आरम्भ होना था, जिन समस्याओं का समाधान करने में पथ प्रदर्शन करने के लिए मानवीय इतिहास के पास कुछ भी नहीं था; क्योंकि पिट की प्रतिभा ने स्वतन्त्र जातियों से बने ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल की ऐसी आश्चर्यजनक रचना अपने पीछे छोड़ी थी कि मानव जाति के इतिहास में इसकी कोई दूसरी मिसाल मिल नहीं सकती थी।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Williams, William Pitt; **Mahan,** Influence of Sea-power in History; **Corbett,** England in the Seven Years' War; **Fortescue,** History of the British Army; **Btadlcy,** Conquest of Canada; **Kemball,** Pitt's Despatches to Colonial Governors; **Marriott**, and **Robertsom**, Rise of Prussia; **Atkinson,** History of Germany in the Eighteenth Century; **Carlyle,** Frederick the Great (Especially the magnificent battlepieces); Cambridge History of the British Empire; **B. Williams,** The Whig Supremacy; **J. D. Griffiths Davies,** A King in Toils.

• •

८

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना

१. भारतीय राजनीति के प्रधान तत्व

समुद्रों पर तथा उत्तरी अमेरिका के महाद्वीप में जिन २० वर्षों के संघर्ष ने ब्रिटिश प्रभुता की स्थापना की थी, उन्हीं वर्षों में पूर्व में इससे भी अधिक विलक्षण परिवर्तन हो रहा था। भारत में अचेतन रूप से ब्रिटेन की राजनीतिक सत्ता की नीवें रखी जा रहीं थीं। अनेक प्रकार से भारत की घटनाओं का क्रम पश्चिम में होने वाले संघर्ष से गम्भीर रूप से प्रभावित हुआ, विशेष रूप से, जैसा कि हम देखेंगे कि ज्यों ही ब्रिटेन की नौसैनिक प्रभुता का उपयोग चातुर्यपूर्ण रीति से होने लगा, त्यों ही इसने फ्रेंच लोगों के लिए भारत में अपने प्रतिनिधियों को पर्याप्त कुमुक भेजना असम्भव बनाते हुए, भारतीय घटनाओं पर एक निर्णयात्मक प्रभाव डाला। फिर भी भारत में संघर्ष का वर्णन पृथक्‌रूप से किया जाना चाहिए, इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि इसकी मुख्य विशेषताएँ उन महान् परिवर्तनों के कारण थी, जो स्वयमेव भारत में हो रहे थे।

भारत के साथ ब्रिटेन और फ्रांस के सम्बन्धों की प्रथम शताब्दी में व्यापारियों को ऐसी प्रबल और सुदृढ़ भारतीय शक्तियों से व्यवहार करना पड़ा था, जिनकी सत्ता ने यूरोपियन व्यापारियों द्वारा प्रादेशिक प्रभुता की स्थापना को अकल्पनीय बना दिया था[१]। अफगानिस्तानसहित समूचे उत्तरी भारत में

१. नक्शे के लिए देखिए एटलस का पाँचवाँ संस्करण प्लेट संख्या ३६ (ए), छठे संस्करण की प्लेट संख्या ३० (ए)।

मुगलों का शक्तिशाली मुस्लिम साम्राज्य था, इसकी राजधानियाँ आगरा और दिल्ली में थीं। इसी समय दक्षिण में तीन शक्तिशाली छोटे मुस्लिम राज्यों ने प्रायःद्वीप के अधिकांश भाग को अपने राज्यों में बाँटा हुआ था। केवल दक्षिण पूर्व में पोलीगार के नाम से प्रसिद्ध अनेक स्वतन्त्र हिन्दू राज्य थे।

इस प्रकार लगभग समूचे भारत पर मुस्लिम बादशाहों का साम्राज्य था, यद्यपि इसकी आबादी में मुसलमान एक अल्प संख्या में थे और ११वीं शताब्दी से पहले होने वाली मुस्लिम विजयों के समय से ऐसी स्थिति थी। उस समय से भारत का इतिहास उत्तर पश्चिमी सीमावर्ती अफगानिस्तान के दर्रों से हमलों की एक परम्परा का, पराधीन बनायी गयी जनता पर कोरी सैनिक शक्ति द्वारा स्थापित किये जाने वाले साम्राज्यों की एक परम्परा का और इन विजेताओं में होने वाले युद्धों की एक अनन्त शृंखला का इतिहास रहा है। लगभग सात सौ वर्षों से भारत को विदेशी विजेताओं के सैनिक शासन के अतिरिक्त किसी प्रकार के शासन का ज्ञान नहीं था। ये विजेता अपने प्रजाजनों से धर्म के गम्भीर भेदों या बाधाओं के कारण पृथक् थे।

यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है और इसकी व्याख्या करने की आवश्यकता है। इसका प्रधान कारण भारतीय लोगों की फूट या उससे उत्पन्न होने वाली दशा थी। वे कई विभिन्न जातियों वाले तथा सभ्यता की विभिन्न दशाओं में, जंगलों और पहाड़ों में रहने वाली आदिम और पिछड़ी हुई जन जातियों से लेकर उच्चतम रूप से सुसंस्कृत ब्राह्मणों और अभिमानी तथा योद्धा राजपूतों तक की सभ्यता की अनेक दशाओं में थे। वे अनेक भाषाएँ बोलते थे। इनकी संख्या यूरोप की भाषाओं की संख्या से कहीं अधिक थी। ये एक दूसरे से बहुत भिन्न थीं और ये सब भेद एक ऐसी उल्लेखनीय जाति-व्यवस्था से उग्र और जटिल बन गये थे, जो व्यवस्था न केवल विश्व के किसी भी अन्य देश में पायी जाने वाले श्रेणीभेदों की अपेक्षा कहीं अधिक गहराई से जड़ जमाये हुई थी, अपितु इस व्यवस्था को हिन्दू धर्म के सभी शास्त्रीय आदेशों (Sanctions) से कायम रखा जा रहा था और लागू किया जा रहा था। यह स्थान भारत की जाति-प्रथा पर विचार करने का नहीं है, किन्तु यह प्रथा भारतीय जीवन के एक मौलिक और प्रभावशाली तथ्य का निर्माण करती थी और अब भी निर्माण कर रही है। जातियाँ असंख्य थीं। कुछ अंशों में वे नस्लों के भेदों को सूचित करतीं थीं। कुछ अंशों में वे व्यापारों और पेशों से मिलती थीं। प्रत्येक जाति के अपने विशेष रिवाज, अपनी धार्मिक विधियाँ, भोजन और वस्त्रों के सम्बन्ध में अपने नियम, अपना जातीय संगठन तथा अपने विशेष पेशे होते हैं। प्रत्येक हिन्दू एक जाति में उत्पन्न होता है। वह हिन्दू धर्म का परित्याग करके ही जाति के बन्धन से निकल सकता है और उसका समूचा जीवन मुख्य रूप से जाति के नियमों से निश्चित होता है और अन्तर्विवाह से अथवा घनिष्ठ सामाजिक बन्धन से भी जातियों का परस्पर मिलना निषिद्ध था और निषिद्ध है। इन मामलों में जो मनुष्य जाति के नियम तोड़ता था वह पतित हो जाता था, उसे न केवल उसकी जाति वाले बन्धुओं के साथ मानवीय सम्बन्ध से, अपितु अन्य जातियों के सदस्यों के साथ भी मानवीय सम्बन्धों से बहिष्कृत किया जाता था।

इस विलक्षण पद्धति में एक महान् गुण था : चाहे देश में कितने ही युद्ध और क्रान्तियाँ क्यों न हों, जाति-प्रथा समाज के जीवन को चालू रखती थी। आक्रान्ता आ और जा सकते थे, साम्राज्यों का उत्थान और पतन हो सकता था, किन्तु जातियाँ विरासत में प्राप्त अपनी उन परम्पराओं के अनुसार अपने आनुवंशिक कार्य करती रहती थीं, जिनमें किसी विजेता के लिए कभी हस्तक्षेप करना सम्भव नहीं हुआ। भारतीय जीवन के असाधारण धैर्य की यही व्याख्या है। इस पद्धति के कारण ब्राह्मणों की महान् पुरोहित का कार्य करने वाली जाति के द्वारा देश का शासन करना आसान हो गया। ब्राह्मणों की ऐसी धार्मिक प्रभुता थी, जिसे सभी निम्न जातियाँ स्वीकार करती थीं और विद्या के लिए ब्राह्मणों को विरासत से मिलने वाली प्रवृत्ति ने तथा षड्यन्त्र करने की पटुता ने इन्हें प्रशासनात्मक कार्य के लिए आवश्यक बना दिया था। सभी विजेताओं ने ब्राह्मणों का प्रयोग अपने सत्ता के अभिकर्ता (Agents) के रूप में किया। दूसरी ओर यह पद्धति आवश्यक रूप से वैयक्तिक उपक्रम का तथा जातीय परिपाटी के आदेश से भिन्न रूप में आचरण करने की तत्परता का विध्वंस करने वाली थी। इसने विभिन्न जातियों के सदस्यों के सहयोग को अत्यधिक कठिन बना दिया था। इसलिए भारत शासन करने की दृष्टि से एक अतीव सुगम देश बन गया था। जाति-पद्धति ने भारत को एक अतीव सुदृढ़ सामाजिक व्यवस्था और एक प्रकार की सामाजिक एकता प्रदान की; किन्तु इस एकता का आधार जातिभेद था। जातिभेद की प्रथा ने भाषाओं और नस्लों की अराजकता के विकसित होने में सहायता की और इसके साथ मिल कर राष्ट्र के प्रति देशभक्ति की किसी ऐसे भावना के विकास को रोक दिया, जो विदेशी विजेताओं के शासन को असम्भव बना दे। जातियों को इस बात का प्रशिक्षण दिया गया था कि वे जातीय नियमों की परम्परागत माँगों से आगे न देखें। जब तक इन नियमों में हस्तक्षेप नहीं होता था, तब तक वे अपने ऊपर एक विजेता से दूसरे विजेता को शक्ति हस्तान्तरित होने देने के मामलों में कोई परवाह नहीं करते थे।

मुस्लिम विजयों के कारण भारत की नस्लों और जातियों की अव्यवस्था में एक अन्य तत्व—धार्मिक विश्वासों के कटु संघर्ष—का प्रवेश हुआ। हिन्दू धर्म और इस्लाम में मौलिक मतभेद थे। ये उतने ही मौलिक थे, जितने विश्व में किन्हीं दो धर्मों में सम्भव हैं। इस्लाम एक ईश्वर में विश्वास रखता है, हिन्दू धर्म में हजारों देवता माने जाते हैं, यद्यपि अनेक ब्राह्मण विचारक एक उच्च एवं उदात्त एकेश्वरवाद को मानते हैं, तथापि इसका सामान्य हिन्दुओं के विश्वासों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। मुसलमान न केवल देव-ताओं की, किन्तु मनुष्यों अथवा प्राणियों की भी सभी मूर्तियों को अधार्मिक समझता है। हिन्दू की पूजा मुख्य रूप से असंख्य मूर्तियों और प्रतीकों के उपयोग पर निर्भर है। मुसलमान यह मानता है कि खुदा और पैगम्बर में ईमान लाने वाले सब सच्चे व्यक्ति ईश्वर की दृष्टि में बराबर हैं और वह इस विश्वास को बड़ी मात्रा में अपने सामान्य व्यवहार के आचरण में लाता है। हिन्दू धर्म में सबसे अधिक आवश्यक वस्तु जाति-पद्धति है तथा यह विश्वास है कि प्रत्येक व्यक्ति निश्चित दायित्वों के साथ तथा एक निश्चित सामाजिक स्थिति के साथ उत्पन्न होता है, वह इस स्थिति से कभी बाहर नहीं निकल सकता है। इन

दोनों ऐसे परस्पर विरोधी धर्मों में घृणा के अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकता था। सामान्य रूप से मुस्लिम शासकों की [illegible] नरमी के कारण यह संघर्ष संयत बना रहा, किन्तु इसने भारतीय जनता में एकता की किसी भावना के उत्थान में एक प्रबल बाधा का निर्माण किया।

इस प्रकार मुसलमान एक शासक श्रेणी के थे, उनकी शक्ति जमी हुई थी। पंजाब (जो उनके मूल घरों के सबसे निकट था) और बंगाल (जहाँ निम्न जातियों के हिन्दुओं की बड़ी संख्या मुसलमान बन चुकी थी) के अतिरिक्त सर्वत्र मुसलमान अल्प संख्या में थे। उन्होंने मुस्लिम प्रभुता के लिए एक प्रकार की दुर्ग रक्षक सेना का निर्माण किया। वे अपनी उत्कृष्टता को गम्भीर रूप से अनुभव करते थे। उनमें वह बौद्धिक सूक्ष्मता बहुत कम थी, जो सदियों के प्रशिक्षण से ब्राह्मणों में विकसित हुई थी। उनकी शक्ति कुछ तो इस कारण थी कि मध्य एशिया से आने वाले शक्तिशाली नवीन आक्रान्ता निरन्तर उनको पुष्ट बनाते रहते थे और कुछ इस कारण भी थी कि वे एक दूसरे को निष्कासित करने वाली जातियों में विभक्त नहीं थे, किन्तु उस समान उत्साह के कारण एक बने हुए थे, जिसे उत्पन्न करना इस्लाम को सदैव आता था।

भारत में जिन साम्राज्यों का क्रमशः उत्थान और पतन हुआ था, उनमें से कोई भी अपने कोरे आधिपत्य से अधिक कभी कोई स्थायी प्रभाव नहीं डाल सका, किसी भी साम्राज्य ने कभी अपने सभी प्रजाजनों के लिए समान रूप से न्याय प्रदान करने की स्थायी पद्धति को अथवा निष्पक्ष कानून को स्थापित करने का कभी प्रयत्न नहीं किया था। जनता के अधिकांश भाग के लिए साम्राज्यों का उत्थान और पतन इसके अतिरिक्त बहुत कम अन्तर डालता था कि उन्हें इनके युद्धों से कष्ट भोगना पड़ता था। हिन्दू, हिन्दू कानून के अनुसार तथा मुसलमान, मुस्लिम कानून के अनुसार जीवन बिताते थे। सब लोगों के लिए एक समान कानून का विचार नहीं था। जो व्यक्ति कानून का प्रशासन करते थे, वे स्वभावतः इस शक्ति का प्रयोग मनमाने ढंग से करते थे और अपनी सत्ता से लाभ उठाने की आशा रखते थे।

भारतीय साम्राज्यों की लम्बी परम्परा में मुगल साम्राज्य सर्वोत्तम था। इसने कम से कम मालगुजारी वसूल करने की एक व्यवस्थित पद्धति का संगठन किया था। सब जमीनों की कुल पैदावार का लगभग एक तिहाई हिस्सा ले लिया जाता था। पहले मुगल बादशाहों ने हिन्दुओं के प्रति सहिष्णुता की बुद्धिमत्तापूर्ण नीति का अनुसरण किया था और उन्होने अपने विस्तृत प्रदेशों को बड़े सूबों में विभक्त करते हुए अपने विशाल प्रदेशों का अधिक क्षमतापूर्ण प्रशासन करने का प्रयत्न किया था। प्रत्येक सूबा एक नवाब के निरंकुश शासन में होता था और इसके वित्तीय प्रशासन के लिए एक दीवान होता था। महान् मुगल सम्राटों के दरबार बड़े शानदार होते थे, उनकी सेनाएँ असंख्य थीं। उनकी शक्ति अप्रतिरोध्य प्रतीत होती थी। किन्तु निःसन्देह उनकी सारी सम्पत्ति प्रजा से ले ली जाती थी। मुगलों के महान्‌तम वैभव के समय में भारत आने वाले यूरोप के यात्रियों ने जनता के अधिकांश भाग के दुःख-दैन्य का प्रतिपादन वैसे ही

प्रबल शब्दों में किया है, जिन शब्दों में दरबार की समृद्धिपूर्ण भव्यता का वर्णन किया है। जब तक शान्ति बनी रहती थी और मालगुजारी की समुचित धन-राशि नियमित रूप से दी जाती थी, उस समय तक मुगल बादशाह प्रान्तों में रहने वाले प्रजाजनों को सूबों पर शासन करने वाले बड़े अफसरों की दया पर छोड़ने में सन्तुष्ट रहते थे। मुगल शक्ति के चरम उत्कर्ष के समय में भी व्यवस्था अच्छी तरह नहीं रखी जा रही थी। मुगल एक ऐसी पद्धति का निर्माण करने में नही सफल हुए, जिससे न्याय का निष्पक्ष प्रशासन सुरक्षित हो जाता। उनकी सत्ता पूर्ण रूप से बादशाह के ओज और शक्ति पर निर्भर थी। प्रत्येक मुगल सम्राट् को उत्तराधिकार के लिए लड़ना पड़ता था और ऐसे प्रत्येक विवाद में समूचे शासन-यन्त्र के विघटन का भय प्रतीत होता था, क्योंकि इस प्रकार के कोरे सैनिक शासन सदैव अतीव असुरक्षित आधारों पर टिके रहते थे। किन्तु ऐसा होते हुए भी मुगल साम्राज्य उत्तरी भारत के महान् भूखण्ड पर लगभग दो शताब्दियों तक एक निश्चित मात्रा में शान्ति और व्यवस्था को बनाये रखने में सफल हुआ और जब तक यह व्यवस्था बनी रही, तब तक उन यूरोपियन व्यापारियों को अपने लिए राजनीतिक प्रदेशों को बनाने का विचार कभी नहीं सूझा। इन व्यापारियों की कोठियाँ समुद्र तटों पर बनी हुई थीं।

२. १८वीं शताब्दी के भारत की अराजकता : मराठे तथा अफगान

१८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुगल साम्राज्य का आकस्मिक और पूर्ण विनाश होने लगा (जैसा कि जल्दी अथवा देर में ऐसा होना ही था) और इसके पतन से उत्पन्न होने वाली अराजकता ने उन प्रभावशाली घटनाओं का होना सम्भव बनाया, जिनके साथ हमारा सीधा सम्बन्ध है। १७वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुगल सम्राट् औरंगजेब[१] ने दक्षिण भारत की विजय का कार्य आरम्भ किया। उसने दक्षिण के मुस्लिम राजाओं का विध्वंस किया और इस विशाल प्रदेश का एक महान् सूबे के रूप में दक्खन के सूबे के नाम से संगठन किया; किन्तु अपने नवीन विजित क्षेत्र में वह अपनी सत्ता को वास्तविक बनाने में विफल रहा। दक्षिण भारत में उसने केवल अराजकता उत्पन्न की और उसके लम्बे युद्धों के दबाव ने उग्र धार्मिक नीति के साथ मिल कर उत्तर में भी उसके प्रभुत्व को निर्बल बना दिया। सबसे बढ़कर, उसने पश्चिम के उन मराठों को क्रियाशील बना कर भिड़ों का छत्ता छेड़ दिया। उसकी विजयों ने मराठों को क्रियाशीलता के लिए उद्दीप्त किया। मराठे मुख्य रूप से नीची जातियों वाले हिन्दू थे। ये उन ऊबड़खाबड़ पर्वतों में रहते थे,जो पश्चिम के भारतीय समुद्र तट की सीमा बनाते थे और ये इन पहाड़ों के पीछे के ऊँचे पठारों में भी रहते थे।[२] उनकी अपनी विशिष्ट भाषा थी। इसने उन्हें एक निश्चित एकता प्रदान की थी। वे कुशल अश्वारोही और भीषण छापामार योद्धा थे। उनमें चितपावन ब्राह्मणों की एक

---

१. एस० लेनपूल ने 'रूलर्स ऑफ इण्डिया' सीरीज में औरंगजेब का एक संक्षिप्त जीवन चरित्र लिखा है।

२. नक्शे के लिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट ६१ (ए), छठा संस्करण प्लेट सं० ६५ (ए) देखिए।

अतीव योग्य जाति थी। इसने ब्राह्मणों की सूक्ष्मता और प्रशासनात्मक क्षमता की एक सामान्य मात्रा से भी अधिक मात्रा अपने में प्रदर्शित की थी। मराठों को शिवाजी के रूप में एक उज्ज्वल नेता प्राप्त हुआ। इसके शासन में वे सहसा भारतीय राजनीति में एक बड़ा भाग लेने लगे। १६८० ई० में उनकी मृत्यु से पहले ही वे एक महान् शक्ति बन चुके थे। उनके हल्के घुड़सवारों ने औरंगजेब की सेनाओं को गम्भीर रूप से परेशान किया। उन्होंने लूटपाट करते हुए देश के विस्तृत क्षेत्रों पर हमले किये और उनको कुचलने के सब प्रयत्न व्यर्थ हुए। वे कई शताब्दियों से भारत में उत्पन्न होने वाली पहली महान् हिन्दू शक्ति थे, अतः उनकी प्रबलता का एक कारण यह भी था।

१७०७ ई० में औरंगजेब की मृत्यु के समय मुगल साम्राज्य पहले ही क्षीण हो चुका था। उसके उत्तराधिकारियों के संक्षिप्त और उपद्रवपूर्ण राज्यकालों में इसका शीघ्र ही पूर्ण विघटन हो गया। कुछ महान् प्रान्तों के सूबेदार लगभग स्वतन्त्र राजा हो गये, वे दिल्ली के मुगल सम्राट् के प्रति नाममात्र की निष्ठा रखते थे। इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण उत्तर में अवध और बंगाल के नवाब और दक्षिण में दक्खिन के सूबेदार थे।[1]

यहाँ एक अतीव शक्तिशाली व्यक्ति—निजामुलमुल्क हैदराबाद को एक विशाल आनुवंशिक राज्य का केन्द्र बना रहा था। हैदराबाद के निजाम का वशवर्ती कर्नाटक का नवाब था। मुगल सम्राट् ने इन शासकों को नाममात्र की मान्यता दी थी। मुगल सम्राट् की वास्तविक सत्ता अब दिल्ली के चारों ओर के प्रदेश तक सीमित थी, किन्तु हैदराबाद का का निजाम और कर्नाटक का नवाब मुगल सम्राट् की आज्ञा का पालन तभी करते थे, जब उन्हें ऐसा करने में सुविधा होती थी। वे अपने प्रान्तों में भी अपनी सत्ता को पूरी तरह से लागू करने में समर्थ नहीं थे, देश के विभिन्न भागों में छोटे स्थानीय राजा वस्तुतः स्वतन्त्र शासक बन गये। इस गड़बड़ में साहसी व्यक्तियों के लिए यह आसान हो गया कि वे अपने राज्य बनायें। इस प्रकार रोहिल्लों के नाम से प्रसिद्ध अफगान आक्रान्ताओं के एक समूह ने रुहेलखण्ड (दिल्ली के निकट तथा अवध के उत्तर में) के नाम से प्रसिद्ध प्रदेश में अपनी सत्ता स्थापित की। इसी प्रकार हिन्दुओं का एक योद्धा सम्प्रदाय—सिख लोग पंजाब में उस हद तक अपनी शक्ति स्थापित कर रहे थे, जहाँ तक पहाड़ों से आने वाले अफगान आक्रान्ता उन्हें ऐसा करने की अनुमति दे रहे थे। इसी प्रकार कुछ समय बाद साहसी हैदरअली ने दक्षिण में अपने को मैसूर का स्वामी बनाया और सब दिशाओं में अपनी शक्ति बढ़ायी।

किन्तु इस युग की अधिकतम प्रभावशाली विशेषता मराठों की शक्ति का उत्थान था। १८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में उनके हमले और विजयें भारत के प्रत्येक हिस्से में विस्तीर्ण होती जा रही थीं। उन्होंने मध्यभारत के विशाल प्रदेश पर कम या अधिक मात्रा में प्रत्यक्ष नियन्त्रण प्राप्त कर लिया, यहाँ प्रत्येक राजा उन्हें कर दिया करता था। उनके हमला करने वाले घुड़सवारों की सेनाएँ भारत के प्रत्येक भाग में देखी जाती थीं। १७४४

---

१. नक्शे के लिए देखिए एटलस के पाँचवें संस्करण की प्लेट सं० ६१ (ए), छठा संस्करण प्लेट सं० ६५ (ए)।

ई० में वे लगभग एक ही समय में कलकत्ता और मद्रास जैसे दूरवर्ती स्थानों में प्रकट हुईं। उन्होंने कुछ बहुत बड़े राजाओं से भी चौथ की माँग की, (यह उनके देश को विध्वंस से बचाने के लिए दिया जाने वाला सार्वजनिक राजस्व का एक निश्चित हिस्सा होता था)। इस प्रकार दक्षिण की मालगुजारी का चतुर्थांश उन्हें इसके अतिरिक्त अन्य किसी सेवा के लिए नहीं दिया जाता था कि वे लूटपाट का कार्य न करें। हमारे मुख्य प्रतिपाद्य विषय फ्रेंच और इंग्लिश संघर्ष के सारे समय में मराठों की शक्ति निरन्तर बढ़ रही थी और १७५० ई० में तथा इसके बाद लम्बे समय तक ऐसा प्रतीत होता था कि वे मुगलों के स्थान में भारत के नये शासक होंगे।

किन्तु मराठों ने शासन की न्यायपूर्ण और सुदृढ़ पद्धति के विकास के लिए कोई क्षमता नहीं प्रदर्शित की। उनके लिए सरकार का मतलब केवल मालगुजारी की जबर्दस्ती वसूली था, न कि अपने प्रजाजनों की सेवा करना। वे अपने प्रदेशों में एक ऐसे एकीकृत (Unified) शासन के कभी निर्माण करने में समर्थ नहीं हुए थे। अब मराठों में सर्वोच्च अधिकार पेशवाओं के नाम से प्रसिद्ध ब्राह्मण शासकों ने प्राप्त कर लिया। पेशवा सतारा में पृथक् रूप में रखे जाने वाले शिवाजी के वंशजों के लिए नाममात्र के रूप में आनुवंशिक प्रधान मन्त्रियों का कार्य करने लगे, यद्यपि वास्तव में वे समूचे मराठा संघ के स्वतन्त्र अध्यक्ष थे। हमारे विषय से सम्बद्ध युग अर्थात् १८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पेशवाओं की शक्ति वास्तविक थी और पूना में अपनी राजधानी से, वे मराठों की सामान्य नीति का प्रभावशाली रूप में नियन्त्रण करते थे, किन्तु इस युग में भी वे प्रतिस्पर्धियों के बिना नहीं थे। विशेष रूप से भोंसला परिवार उनका प्रतिस्पर्धी था। यह मध्य प्रदेश के नाम से प्रसिद्ध विशाल क्षेत्र के बड़े भाग पर शासन करता था और इसकी शाश्वत ईर्ष्या और विरोध ने पेशवा के कार्य को अधिक बाधा पहुँचायी। अन्य मुखिया तथा हमला करने वाले दलों के अध्यक्ष प्रसिद्धि पाने लगे थे। इनमें विशेष उल्लेखनीय सिन्धिया और होलकर के परिवार थे। अत्यधिक शक्तिशाली होने पर भी, मराठा शक्ति को कभी अच्छी तरह संगठित नहीं किया गया था। यह रचनात्मक होने के स्थान पर विध्वंसात्मक थी और इसने किसी भी समय मुख्य रूप से अपने प्रजाजनों के कल्याण के लिए चिन्ता करने वाले शासन की एक न्यायपूर्ण और निष्पक्ष पद्धति के सृजन की दिशा में कोई देन नहीं दी।

मुगल प्रभुसत्ता के उत्तराधिकार के लिए मराठों के एक मात्र गम्भीर प्रतिद्वन्दी अफगान प्रतीत होते थे। उनका उत्तर पश्चिमी भारत के उन दर्रों पर नियन्त्रण था, जिनसे होकर भारत के सभी विजेता आये थे। वस्तुतः भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक इन दर्रों पर नियन्त्रण गंवा देना मुगल साम्राज्य के पतन का पहला चिह्न था। जब १७३९ ई० में ईरान और अफगानिस्तान के दोनों देशों का शासक नादिरशाह भारत पर टूट पड़ा और उसने दिल्ली को लूटा तो यह प्रतीत होता था कि मुगलों का उत्तराधिकार उसके हाथ में है—मानो वह उस बात की पुनरावृत्ति करेगा जिसे १६वीं शताब्दी के आरम्भ में मुगलों ने किया था। दिल्ली की लूट मुगल साम्राज्य के अन्तिम विनाश को सूचित करती है। इसके बाद से साम्राज्य एक अथवा दूसरी शक्ति के हाथों में कठपुतली

मात्र था। किन्तु नादिरशाह लूट में ही सन्तुष्ट था और वह पहाड़ों के परे वापस चला गया, उसने केवल पंजाब के महान् प्रान्त पर ही प्रभुता का दावा किया। वहाँ पर सिख अफगानों की प्रभुता को निरन्तर चुनौती दे रहे थे।

फिर भी, अफगानों के आक्रमण की सदैव एक सम्भावना बनी हुई थी और १७५० ई० में भारतीय राजनीति का कोई गम्भीर विद्यार्थी कह सकता था कि भारत का भावी प्रभुत्व एक ओर अफगानिस्तान के स्वामी तथा दूसरी ओर मराठों के बीच में पड़ा हुआ था। मराठे स्वयमेव इसको प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करते थे और जब नादिरशाह का साम्राज्य भंग हो गया और अफगान अब कम भयंकर होने पर भी, एक बार पुन: भारत के मैदानों पर हमला करने लगे तो मराठों ने पंजाब पर अधिकार करने के लिए तथा आक्रान्ताओं को उनकी पहाड़ियों में वापस भगाने के लिए एक सेना भेजी, कुछ समय के लिए वे सफल हुए। पश्चिम में ब्रिटेन की उज्ज्वलतम विजयों से मेल खाने वाली इस तिथि (१७५६ ई०) को मराठा शक्ति के उत्कर्ष के उच्चतम विन्दु को सूचित करने वाला कहा जा सकता है। वे भारतीय प्रदेशों पर हावी हो गये। खैबरदर्रे से कन्या-कुमारी अन्तरीप तक सारे भारत पर उनका प्रभाव अनुभव किया जाने लगा। मुगलों के सबसे बड़े प्रान्त—बंगाल और हैदराबाद उन्हें चौथ देते थे, उनके घुड़सवार देश के प्रत्येक भाग में प्रसिद्ध हो चुके थे और अपना आतंक फैला रहे थे। किन्तु १७५६ ई० में एक अफगान शासक अहमदशाह पहाड़ों के सभी योद्धाओं के साथ आया, और दो वर्ष के हमले और लूट-पाट के बाद उसने दिल्ली के उत्तर में पानीपत में (१७६१ ई०) एक विशाल मराठा सेना के साथ एक घमासान लड़ाई लड़ी। इसमें मराठों को एक भीषण हत्याकाण्ड के साथ हरा दिया गया। यह एक अद्भुत संयोग था कि अफगानिस्तान से आने वाले मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर ने पानीपत में ही ऐसी निर्णयात्मक विजय प्राप्त की थी, जिससे १६वी शताब्दी में उसने भारत में अपनी शक्ति की स्थापना की थी। ऐसा प्रतीत होता था कि पहाड़ों से आने वाला एक नया आक्रान्ता राजवंश पुराने चक्र की पुनरावृत्ति करने वाला तथा एक नये साम्राज्य की स्थापना करने वाला है, किन्तु नादिरशाह की भाँति अहमदशाह भी हमले और लूट से सन्तुष्ट था। वह अफगानिस्तान लौट गया, उसने काश्मीर और पंजाब के प्रदेश ही अपने पास रखे। मराठों के लिए मैदान साफ था। किन्तु उन्हें पानीपत की क्षति से सँभलने में लम्बा समय लगा और इस समय के बाद से वे अधिकाधिक स्वतन्त्र होने लगे तथा अपने विभिन्न सरदारों के झगड़ों से अधिकाधिक रूप में निर्बल होने लगे। अफगानों की भाँति वे भी अपनी प्रभुता के अवसर को गंवा रहे थे। उन्होंने पहले ही यह प्रदर्शित कर दिया था कि यदि उन्हें प्रभुता मिली तो भारतीय लोगों के सामान्य जन-समूह के लिए शासन में कोई सुधार नहीं होगा।

इन महान् संघर्षों की तथा मराठों की अत्यधिक बढ़ती हुई शक्ति की तुलना में देश के एक कोने में फ्रेंच और इंग्लिश व्यापारियों के छोटे झगड़े और इन झगड़ों से सम्बद्ध भारतीय राजाओं के उत्तराधिकार विषयक क्षुद्र विवाद बिलकुल महत्वहीन प्रतीत होते थे। फिर भी प्रत्यक्षत: महत्व न रखने वाले ये संघर्ष समूचे भारत में प्रभुता के लिए एक

नये तथा अनिच्छुक उम्मीदवार—ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को मैदान में लाने वाले थे। १७५० ई० में अथवा १७६१ ई० में कोई भी व्यक्ति, स्वयमेव ईस्ट इण्डिया कम्पनी भी यह भविष्यवाणी अथवा कल्पना सम्भवतः नहीं कर सकती थी कि विदेशी व्यापारियों की यह संस्था अन्त में न केवल मराठों के साम्राज्य की अपेक्षा, अपितु किसी भी समय के मुगलों के साम्राज्य की अपेक्षा कहीं अधिक पूर्ण और विस्तृत साम्राज्य स्थापित करने में सफल होगी। यह साम्राज्य भारत को ऐसी राजनीतिक एकता प्रदान करने वाला होगा, जैसी उसके समूचे इतिहास में कभी नहीं रही थी; यह उसे ऐसी शान्ति प्रदान करने वाला होगा, जैसी शान्ति अकबर किसी भी समय में इसे देने में समर्थ नहीं हुआ था, यह इसे निष्पक्ष रूप से प्रशासित किये जाने वाली कानून की एकरूप पद्धति प्रदान करेगा। यह पद्धति ऐसा वरदान था, जिसे आजकल किसी भारतीय शासन ने इसे कभी नहीं प्रदान किया था। यह स्मरण रखना आवश्यक है कि इन परिणामों को उत्पन्न करने वाले आश्चर्य-जनक विकास की पहली दशाएँ मुगल साम्राज्य के विध्वंस के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली अराजकता के कारण उत्पन्न हुईं। ये पहली दशाएँ उस समय विकसित हो रही थीं, जब इससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण मराठा शक्ति का प्रभावशाली विकास हो रहा था। मराठों तथा अफगानों के संघर्ष में ये दशाएँ दब गयीं थीं। निःसन्देह इस संघर्ष ने ब्रिटिश साम्राज्य के विकास में प्रत्यक्ष रूप से बड़ा भाग लिया। यदि यह संघर्ष न हुआ होता और यदि मराठों को पानीपत की करारी हार न खानी पड़ती तो यह बात अत्यधिक असम्भव है कि ब्रिटिश व्यापारियों की सत्ता कभी स्थापित हो सकती। हमने जिस संघर्ष की पृष्ठभूमि की रूपरेखा देने का प्रयत्न किया है, वह अव्यवस्थित और विह्वल करने वाली प्रतीत हो सकती है, किन्तु यह उस आश्चर्यजनक कथा को समझने के लिए आवश्यक है, जिसका अब हमें प्रतिपादन करना है।

३. कर्नाटक में फ्रेंच और ब्रिटिश : डूप्ले की योजनाएँ

भारत में इस समय विद्यमान महान् अव्यवस्था के छोर पर यूरोपियन शक्तियों—पुर्तगालियों, डचों, फ्रेंचों और ब्रिटिश लोगों की कोठियाँ अथवा व्यापारिक अड्डे थे, यहाँ हमारा सम्बन्ध केवल ब्रिटिश और फ्रेंच अड्डों से है। ब्रिटेन के व्यापारिक कार्यों का संगठन तीन प्रधान व्यापारिक केन्द्रों—बम्बई, मद्रास और कलकत्ता—के नियन्त्रण में था। इनमें से प्रत्येक केन्द्र की व्यवस्था स्वतन्त्र रूप से एक प्रेसिडेण्ट और परिषद् के द्वारा की जाती थी। ये इंग्लैण्ड में कम्पनी के सचालकों को अपनी रिपोर्टें पृथक् रूप से भेजते थे, प्रत्येक केन्द्र अपने से सम्बन्ध रखने वाले विस्तृत क्षेत्र में माल इकट्ठा करने की कई शाखाएँ रखता था, किन्तु केवल तीन प्रधान कार्यालयों में ही ब्रिटिश निवासियों की कुछ बड़ी संख्या थी। फ्रेंच लोगों के पास केवल दो प्रधान कोठियाँ थी, एक कोठी मद्रास के दक्षिण में कुछ दूरी पर पाण्डीचेरी में थी और दूसरी कोठी कलकत्ते के उत्तर में चन्द्रनगर में थी, किन्तु चन्द्र-नगर की कोठी निश्चित रूप से पाण्डीचेरी की कोठी के आधीन थी। दोनों कम्पनियों ने देश की अव्यवस्थित दशा की दृष्टि से यह आवश्यक समझा था कि वे अपने प्रधान कार्या-

लयों की किलेबन्दी करें और छोटी सेनाएँ रखें। इन सेनाओं में वे भारतीय सिपाही होते थे, जिन्हें यूरोपियन अधिकारियों के नीचे यूरोपियन ढंग से लड़ने की शिक्षा दी जाती थी। अतीत काल में प्रायः यह सिद्ध हो चुका था कि भारतीय सैनिकों की इस प्रकार से प्रशिक्षित और नेतृत्व की जाने वाली सेनाएँ उन विशाल, अव्यवस्थित जन-समूहों के विरुद्ध अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाये रख सकती थी, जिन्हें भारतीय राजा मैदान में लाते थे। किन्तु इसकी उत्कृष्टता का पूर्ण मात्रा में अभी प्रदर्शन होना था। अपने ब्रिटिश प्रतिस्पर्धियों की अपेक्षा फ्रेंच लोगों को एक बड़ा लाभ था। मैडेगास्कर के निकट मारीशस के टापू में उनके पास अपने जहाजों के लिए कोयला-पानी भरने का तथा एक ऐसा सम्भावित नौसैनिक अड्डा था, जिसकी अँग्रेजों के पास कमी थी।

लुई १४वें की मृत्यु के बाद २५ वर्षों में फ्रेंच लोगों ने अपने व्यापार के विकास में एक बड़ा पौरुष प्रदर्शित किया, इसके कारण फ्रेंच व्यापार यद्यपि ब्रिटिश कम्पनी के व्यापार के साथ प्रतिस्पर्धा करने से अभी काफी दूर था, फिर भी यह इतनी तेजी से विकसित हो रहा था कि इसने अंग्रेजों में ईर्ष्या और भय उत्पन्न कर दिया। फ्रेंच लोगों ने कई व्यापारिक अड्डे स्थापित किये, इनमें पश्चिमी तट पर माही उल्लेखनीय था (१७२५ ई०)। बेनोइत द्यूमास ने पाण्डीचेरी (१७३५-१७४१ई०) में तथा चन्द्रनगर में उसके सहायक फ्रान्स्वा डूप्ले (१७३०-४१) ने अपने काम को बड़े ओजस्वी ढंग से सम्पन्न किया। विशेषतः द्यूमास ने पड़ोसी राजाओं के साथ अतीव मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित किये और कर्नाटक के नवाब के मराठों द्वारा मारे जाने पर, इसने उसके परिवार को पाण्डीचेरी में शरण दी। भविष्य में यह सम्बन्ध बड़ा महत्वपूर्ण बना रहा, यद्यपि १७४० ई० में राजगद्दी इस परिवार के हाथ से चली गयी और इस पर अनवरुद्दीन नामक एक अन्य शासक बैठ गया। इस प्रकार ब्रिटिश लोगों से पहले फ्रेंच लोगों ने भारतीय राजाओं के दरबारों में अपना प्रभाव स्थापित करने की नीति आरम्भ कर दी थी।

लगभग १७४० ई० के बाद से जिस समय **आस्ट्रियन उत्तराधिकार का युद्ध** यूरोप में चल रहा था तथा समुद्रों पर ब्रिटेन और स्पेन लड़ रहे थे, उस समय भारत में दोनों देशों के व्यापारी कुछ भय तथा आशा के साथ फ्रांस और ब्रिटेन के बीच में युद्ध छिड़ने की पहले से ही प्रतीक्षा कर रहे थे। इस युद्ध के छिड़ने में बड़ा विलम्ब हुआ। यह वास्तव में १७४४ ई० तक नहीं शुरू हुआ, किन्तु इस बीच के वर्षों में तैयारियाँ की जाती रहीं। कुछ लोगों को यह आशा थी कि भारत में प्रतिद्वन्द्वी व्यापारी वैसी ही तटस्थता बनाये रखेंगे, जैसी उन्होने लुई १४वें के युद्धों में बनाये रखी थी। इंग्लिश कम्पनी निर्बाध रूप से अपने व्यापार को जारी रखने वाले इस समाधान का तत्परतापूर्वक स्वागत करने के लिए तैय्यार थी। फ्रांस में फ्रेंच कम्पनी भी इसी विचार की थी। किन्तु दो प्रमुख फ्रेंच पदों पर हाल में ही दो साहसी फ्रेंच व्यक्ति नियुक्त हुए थे; एक प्रसिद्ध एवं साहसी नाविक माहे डी लाबौरदोन्नेस (Mahe de Labourdonnais) १७३३ ई० में मारीशस का गवर्नर बना और १७४१ ई० में फ्रान्स्वा डूप्ले पाण्डीचेरी का गवर्नर बना। स्वभाव में अत्यधिक भिन्नता होने पर भी, इन दोनों व्यक्तियों ने यह विचार बनाया कि ब्रिटेन के

व्यापार की उत्कृष्टता पर चोट करने के लिए इस अवसर का लाभ उठाया जाय। लाबौर-दोन्नेस ने विशेष रूप से मारीशस में एक बेड़ा तैयार किया, उसे यह आशा थी कि वह इस बेड़े से अँग्रेजों को बहुत हानि पहुँचायेगा। इस बेड़े से रक्षा करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने युद्ध छिड़ते ही एक बेड़ा भारत की ओर भेज दिया। लाबौरदोन्नेस के तैयार होने से पहले ही यह बेड़ा मद्रास पहुँच गया। यह सम्भव था कि यह बेड़ा फ्रेंच लोगों को भारी हानि पहुँचाता, किन्तु कर्नाटक के नवाब अनवरुद्दीन ने सम्भवतः डूप्ले से प्रभावित हो कर अँग्रेजों को चेतावनी दी कि वह अपने राज्य में यूरोपियन लोगों के मध्य में किसी लड़ाई की अनुमति नहीं देगा, अतः यह बेड़ा भारत के समुद्र तट से चला गया और अँग्रेजों ने अपनी शक्ति को सुदृढ़ बनाने का अवसर गंवा दिया।

१७४६ ई० में लाबौरदोन्नेस अपने बेड़े के साथ पाण्डीचेरी के निकट पहुँचा और यद्यपि वह और डूप्ले बड़ी उग्रता से आपस में झगड़े, तथापि उन्होंने मद्रास पर एक संयुक्त नौसैनिक तथा स्थलसैनिक आक्रमण के संचालन की व्यवस्था की। नवाब के संरक्षण पर भरोसा रखने के कारण अँग्रेज तैयार नहीं थे, उनके पास दुर्ग रक्षक सेना पर्याप्त मात्रा में नहीं थी। मद्रास पर सुगमता से अधिकार कर लिया गया। डूप्ले ने पहले नवाब को यह कह कर खुश करने का यत्न किया कि वह मद्रास का शहर उसे दे देगा। किन्तु एक बार इस पर अधिकार करने के बाद वह इस से चिपटा रहा और जब अपनी इच्छा पूरी करने के लिए अनवरुद्दीन ने दस हजार व्यक्तियों की एक सेना भेजी तो यह सेना यूरोपियनों द्वारा प्रशिक्षित पाँच सौ सैनिकों की छोटी सेना से हरा दी गयी। ऐसे सैनिकों की योग्यता का यह आश्चर्यजनक प्रकटीकरण था। इसने फ्रांस की प्रतिष्ठा को उच्चतम शिखर तक पहुँचा दिया। अँग्रेजों के पास केवल सौ मील दक्षिण में एक छोटा सा स्थान फोर्ट सेण्ट डेविड बचा रहा। यहाँ वे बुरी तरह से विपत्तिग्रस्त दशा में थे। १७४८ ई० में जब एक बड़ा ब्रिटिश नौसैनिक बेड़ा आया और उसे पाण्डिचेरी पर हमला करने में कोई सफलता नहीं मिली तो फ्रांस की प्रतिष्ठा और भी ऊँची उठ गयी और इसी अनुपात में भारतीय राजाओं के दरबारों में डूप्ले का प्रभाव बढ़ गया। ऐसा प्रतीत होता था कि ब्रिटिश लोग कुचल दिये गये हैं और इस प्रदेश में उनके व्यापार के फ्रेंच लोगों के हाथ में पड़ जाने की आशा की जाती थी।

डूप्ले के लिए यह एक उग्र निराशा थी कि ब्रिटेन की शक्ति के विध्वंस को उसके द्वारा पूर्ण किये जाने से पहले ही युद्ध, १७४८ ई० में एक्स ला शापेल की सन्धि द्वारा समाप्त कर दिया गया और इससे भी अधिक तीव्र निराशा उसे तब हुई, जब उसे सन्धि की शर्तों के अनुसार सुदूरवर्ती लुइसबर्ग के बदले में मद्रास वापस लौटना पड़ा। किन्तु शान्ति स्थापित होने के कारण उसने अपनी महत्वाकांक्षापूर्ण योजनाओं का परित्याग नहीं किया, शान्ति ने केवल इनका स्वरूप बदल दिया। उसने यह निश्चय किया कि वह उसे प्राप्त हुई अत्यधिक प्रतिष्ठा का तथा यूरोपियन व्यक्तियों द्वारा प्रशिक्षित सैनिकों की अपनी शक्ति का उपयोग दक्षिणी भारत के राजाओं के राजवंशों के झगड़ों में हस्तक्षेप करने के लिए करेगा, वह दक्षिण भारतीय राजनीति का निर्णायक बनेगा और इस प्रकार भारतीय राजाओं की

सरकारों पर फ्रांस का प्रभाव स्थापित करेगा। ऐसा करने के बाद वह अपने मित्र राजाओं की सहायता से अँग्रेजों की स्थिति को असह्य बना देगा, उनके व्यापार को नष्ट कर देगा। यदि ब्रिटिश लोग तटस्थ रहते तो उनके लिए यह बहुत बुरा था, यदि वे हस्तक्षेप करते तो उसे यह विश्वास था कि वह उनका मुकाबला करने में समर्थ था। फ्रांस और ब्रिटेन में औपचारिक मित्रता होने के बावजूद उसने इस साहसिक योजना को क्रियान्वित करना आरम्भ किया। अनिच्छापूर्वक और अधूरेपन से अँग्रेजों को भी उसका अनुकरण करने के लिए बाधित होना पड़ा और इस प्रकार अमेरिका की भाँति भारत में भी नाममात्र की शान्ति के आठ वर्ष उग्र संघर्ष के वर्ष थे।

डूप्ले की प्रधान योजना कर्नाटक के वर्तमान नवाब अनवरुद्दीन को गद्दी से उतारने की और इस गद्दी पर फ्रांस के एक पक्षपोषक तथा संरक्षणाधीन व्यक्ति चन्दा साहब को बिठाने की थी; यह उस पिछले शासक वंश का सदस्य था, जिसे फ्रेंच लोगों ने पहले मित्र बनाया था। चन्दा साहब मराठों के हाथों में कैद था और डूप्ले ने उसे कैद से छुड़ाने में सहायता की थी, ताकि वह उसे गद्दी पर बिठाने का अपना उम्मीदवार बना सके। वह यह जानता था कि इस प्रकार गद्दी पर बैठने वाला राजा अपने को फ्रेंच लोगों पर अवलम्बित रहने वाला अनुभव करेगा और वह कृतज्ञता के कारण ही उनके पक्ष से बँधा रहेगा। किन्तु ठीक उसी समय जब कि उसकी यह योजना परिपक्व हो रही थी, दक्खन में हैदराबाद के पुराने निजाम का देहान्त हो गया और दक्षिण भारत के इस सबसे बड़े राज्य के उत्तराधिकारी बनने के लिए दो प्रतिद्वन्दी उम्मीदवार प्रकट हुए। कर्नाटक का नवाब स्वयमेव निजाम का वशवर्ती राज्य था। डूप्ले ने दोनों उम्मीदवारों में से निर्बल उम्मीदवार का पक्ष लिया। यदि वह अपनी साहसिक योजनाओं में सफल होता तो सारा दक्षिण भारत उसके प्रभाव में चला जाता और ब्रिटिश लोग उसकी दया पर जीवित होते।

इन युद्धों की विस्तृत बातों का अनुसरण करना अनावश्यक है। १७५० ई० तक डूप्ले को पूर्ण सफलता मिली। उसके उम्मीदवारों ने हैदराबाद और कर्नाटक की दोनों गद्दियों पर अधिकार कर लिया था। यशस्वी फ्रेंच सेनानी क मार्क्विस द बुस्सी के नेतृत्व में फ्रेंच अफसरों वाली एक बड़ी सेना निजाम की रक्षा के लिए और उसे राजभक्त बनाये रखने के लिए हैदराबाद में रखी गयी। इसका व्यय निजाम द्वारा दिया जाता था। कर्नाटक में अनवरुद्दीन हराया और मारा गया, फ्रांस के पिट्ठू चन्दा साहब ने गद्दी पर अधिकार कर लिया। अनवरुद्दीन का बेटा मुहम्मदअली बड़ी कठिनाई के साथ त्रिचनापल्ली के किले पर अधिकार बनाये हुए था। किन्तु इसके अतिरिक्त कोई प्रभावशाली प्रतिरोध नहीं था। फ्रांस की प्रतिष्ठा अतीव उच्च शिखर पर पहुँच गयी। यह प्रतीत होता था कि डूप्ले दक्षिणी भारत का स्वामी है; एक बार त्रिचनापल्ली पर अधिकार हो जाने के बाद तथा मुहम्मदअली को समाप्त कर देने के बाद उसका प्रभुत्व यहाँ पूर्ण रूप से स्थापित हो जायगा।

मद्रास में अपने को असहाय अनुभव करने वाले अंग्रेज इन सब कार्यवाहियों को भय की दृष्टि से देख रहे थे। जब शान्ति-सन्धि की गयी तो उस समय उन्होंने अपने अधिकांश सैनिकों को छुट्टी दे दी थी और यद्यपि वे यह जानते थे कि यदि फ्रेंच उम्मीदवार गद्दी पर

सुरक्षित रूप से बैठ जागगा तो उनका सर्वनाश हो जायगा, तथापि वे त्रिचनापल्ली में मुहम्मदअली को कोई ठोस सहायता देने में असमर्थ थे। उस समय फ्रांस की पूरी विजय में एकमात्र बाधा मुहम्मदअली ही था। १७५१ ई० में त्रिचनापल्ली में स्थिति बड़ी निराशापूर्ण प्रतीत होती थी, न केवल चन्दा साहब की तथा फ्रेंच लोगों की सेनाएँ इसे घेर रहीं थीं, किन्तु इसकी सहायता के लिए निजाम ने भी विशाल सेनाएँ भेजीं थीं।

अँग्रेजों के लिए सौभाग्यवश, अभी हाल में, मद्रास में थामस साण्डर्स नामक एक नया गवर्नर आया था। वह खतरे को समझता था। वह एक उत्साही और दृढ़ व्यक्ति था। उसमें यह कल्पनाशक्ति थी कि वह २६ वर्ष के एक तरुण अधिकारी के साहसपूर्ण प्रस्तावों को सुने और उसे ऐसे कार्य के लिए साधन प्रस्तुत करे जो एक विवेकशून्य साहस मात्र प्रतीत होता था। तरुण अधिकारी राबर्ट क्लाइव था[१]। यह सात वर्ष पहले कम्पनी की सेवा में लेखक के रूप में आया था, किन्तु हाल की लड़ाई में इसने कलम के स्थान पर तलवार हाथ में ले ली थी और फोर्ट सेण्ट डेविड की प्रतिरक्षा में इसने अपने को यशस्वी सिद्ध किया। उसका प्रस्ताव यह था कि त्रिचनापल्ली में शत्रु की सेना बहुत अधिक है, इसे मुक्त करने के लिए फौजें यहाँ भेजने के स्थान पर अरकाट पर एक साहसिक हमला करने प्रयत्न किया जाना चाहिए। अरकाट कर्नाटक की राजधानी थी और अधिक नजदीक थी—यह मद्रास से भीतर की ओर केवल लगभग ५० मील की दूरी पर थी। इस निराशापूर्ण साहसिक कार्य पर वह जिस फौज के साथ रवाना हुआ, उसमें आठ अफसर थे तथा पाँच सौ सैनिक थे, इसमें तीन सौ भारतीय सिपाही थे। यह हमला इतना तेज और आकस्मिक था कि आक्रमणकारियों की अपेक्षा बहुत अधिक संख्या रखने वाली अरकाट की दुर्गरक्षक सेना भयभीत हो कर भाग गयी। इसका तात्कालिक परिणाम यह था कि चन्दा साहब को अपनी राजधानी पुनः प्राप्त करने के लिए त्रिचनापल्ली से विशाल सेना वापस बुलानी पड़ी। क्लाइव और उसके पांच सौ वीर सैनिक पचास दिनों तक दस हजार व्यक्तियों की सेना द्वारा डाले गये एक घेरे का मुकाबला करते रहे, घेरा डालने वालों में कुछ फ्रेंच भी थे। यद्यपि क्लाइव की रसद समाप्त हो गयी, किले की मिट्टी की दीवारें टूटने लगीं और वे इतनी अधिक फैली हुई थीं कि उनकी उचित रीति से रक्षा नहीं हो सकती थी, तथापि उसने अपनी स्थिति बनाये रखी, इस किले पर हमले के एक प्रयास को विफल बनाया और जब घेरा उठाया गया तो उसने आगे बढ़कर हमला किया और शत्रु को खुले मैदान में हरा दिया।

अरकाट पर अधिकार और इसकी प्रतिरक्षा हवा के रुख में परिवर्तन को सूचित करती है। विशुद्ध सैनिक दृष्टि से वस्तुतः वीरतापूर्ण इस कार्य का, इसके अतिरिक्त बहुत कम महत्व था कि इसने थोड़े समय के लिए त्रिचनापल्ली को घेरे से मुक्त कर दिया, किन्तु यह उपलब्धि आँखों को इतनी चौंधियाने वाली थी, उसने एकदम उस ब्रिटिश प्रतिष्ठा को

१. अब तक भी मैकाले का सुप्रसिद्ध निबन्ध क्लाइव का सर्वोत्तम संक्षिप्त वर्णन है, यद्यपि इसमें कुछ संशोधन की आवश्यकता है। कर्नल मैलेसन ने रूलर्स ऑफ इण्डिया सीरीज में तथा सर चार्ल्स विल्सन ने इंग्लिश मैन ऑफ एक्शन सीरीज में क्लाइव की जीवनियाँ लिखी हैं।

ऊँचा उठा दिया जो लगभग रसातल तक पहुँच गयी थी। इस प्रकार उस मुहम्मद अली के लिए विभिन्न भारतीय शक्तियों से सहायता लेना आसान हो गया, जिनकी सहायता अँग्रेज कर रहे थे। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात १७५२ ई० में मेजर लारेन्स और क्लाइव की अध्यक्षता में ब्रिटिश सेना द्वारा त्रिचनापल्ली के घेरे की शानदार मुक्ति थी, इस सेना ने एक विशाल फ्रेंच सेना को आत्मसर्पण के लिए बाधित किया और अन्त में घेरा उठा लिया गया। तंजौर के राजा को समर्पण करने वाला चन्दा साहब उसके द्वारा मार डाला गया और ब्रिटिश संरक्षण में रहने वाला मुहम्मदअली कर्नाटक का नवाब बना।

यह डूप्ले की योजना पर भीषण प्रहार था। किन्तु अभी तक वह किसी भी प्रकार हराया नहीं गया था। बुस्सी की सेना अब भी हैदराबाद में प्रबल थी। उसने उस महान् शक्ति को फ्रेंच लोगों के प्रति स्वामिभक्त बनाया हुआ था अतः दो वर्षों तक युद्ध की स्थिति दोलायमान रही। किन्तु १७५१ ई० में फ्रांस की सर्वोच्च प्रभुता लुप्त हो गयी। डूप्ले धन के लिए अधिक परेशान था। फ्रांस में फ्रेंच कम्पनी उसके अविरत युद्धों से चिन्तित होने लगी थी। यह बात व्यापार के लिए निश्चित रूप से अच्छी नहीं थी। १७५४ ई० में कम्पनी ने डूप्ले को वापस बुला लिया, एक अच्छे व्यापार-कुशल व्यक्ति को डूप्ले द्वारा पैदा की गयी गड़बड़ को ठीक करने के लिए भेजा। दोनों कम्पनियों ने समझौता किया कि वे अब स्थानीय राजनीति में अधिक हस्तक्षेप नहीं करेंगी। सुगमता से प्राप्त होने वाले साम्राज्य-विषयक डूप्ले के भव्य स्वप्न समाप्त हो गये। वह अपमानित और दरिद्र होकर स्वदेश वापस लौटा, फिर भी उसने लगभग एक महान् फ्रेंच राज्य बना लिया था और उसने यह प्रदर्शित किया था कि भारत में एक यूरोपियन साम्राज्य कितनी सुगमता से और किन उपायों से बनाया जा सकता है।

डूप्ले को वापस बुलाने के बाद भी, दक्षिणी भारत में फ्रेंचों की स्थिति अँग्रेजों की स्थिति की अपेक्षा अधिक प्रबल थी। यह सत्य है कि मुहम्मदअली कर्नाटक की गद्दी पर बैठा हुआ था और मुहम्मदअली अंग्रेजों का समर्थक था, किन्तु वह किसी भी प्रकार ब्रिटिश नियन्त्रण में नहीं था। दूसरी ओर बुस्सी अब भी हैदराबाद में था और निजाम की कहीं अधिक बड़ी शक्ति पूर्ण रूप से फ्रेंचों के प्रभाव में थी। बुस्सी की सेना उन मराठों से निजाम की रक्षा कर रही थी, जिनसे वह डरता था। इस कारण से, निजाम फ्रेंच लोगों के साथ और भी अधिक दृढ़ता से बँधा हुआ था। डूप्ले को वापस बुलाने के अगले वर्ष १७५५ ई० में निजाम ने बुस्सी की सेना के व्यय के लिए उसे अपने विशाल साम्राज्य के, उत्तरी सरकार के नाम से प्रसिद्ध सर्वोत्तम प्रदेश प्रदान किये। उत्तरी सरकार बंगाल की खाड़ी के समुद्र तट के साथ-साथ फैले हुए थे। यह ऐसा प्रादेशिक अधिकार था, जो अभी तक अँग्रेजों को नहीं मिला था और न ही उन्होंने इसका स्वप्न लिया था। इस प्रकार फ्रांस और ब्रिटेन में महान् संघर्ष होने से पहले यह प्रतीत होता था कि अमेरिका की भाँति भारत में भी फ्रेंच लोगों की स्थिति बहुत अच्छी है।

४. संघर्ष का पुनः आरम्भ होना, और बंगाल में ब्रिटिश सत्ता की स्थापना

१७५५ ई० के जिस वर्ष में फ्रेंच लोगों ने उत्तरी सरकार के प्रदेश प्राप्त किये, उसी वर्ष ओहियो नदी की घाटी में युद्ध आरम्भ हुआ। प्रत्येक व्यक्ति यह जानता था कि ब्रिटेन और फ्रांस के बीच युद्ध को अधिक देर तक टाला नहीं जा सकता था। फ्रेंच लोग कर्नाटक में अभी हाल में ही असुरक्षित रूप से स्थापित ब्रिटिश शक्ति को नष्ट करने के लिए सेना भेजने की तैयारी कर रहे थे। पिट के सत्तारूढ़ होने से पहले ब्रिटिश सरकार के शिथिल नौसैनिक प्रशासन के कारण, १७५६ ई० में एक निर्वासित आयरिश कौण्ट लाली के नेतृत्व में एक फ्रेंच बेड़े को जाने दिया गया, यद्यपि वह १७५८ ई० तक भारत नहीं पहुँचा।

इसी बीच में राबर्ट क्लाइव इंग्लैण्ड वापस पहुँचा। यहाँ उसका महान् स्वागत हुआ। कम्पनी के संचालकों ने इस बात की आवश्यकता पर बल दिया कि हैदराबाद में बुस्सी के प्रभाव का प्रतिरोध करने के लिए उसे भारत भेजा जाय। इस उद्देश्य से वह एक छोटी सेना के साथ तथा जलसेनापति वाटसन के सेनापतित्व में जहाजों के एक बेड़े के साथ भेजा गया। वे १७५६ ई० में भारत पहुँचे। उनका पहला कार्य मराठा जलदस्युओं के एक अड्डे का उन्मूलन करना था, ये समुद्री डाकू पश्चिमी तट पर घेरिया में ब्रिटिश जहाजों को बड़ी हानि पहुँचा रहे थे। इसके बाद ये मद्रास गये, किन्तु यहाँ उनके करने के लिए कोई कार्य नहीं था। अभी तक भारत में युद्ध की औपचारिक घोषणा का समाचार नहीं पहुँचा था और जब तक शान्ति की स्थिति विद्यमान थी, तब तक बुस्सी के विरुद्ध कुछ भी नहीं किया जा सकता था। किन्तु मद्रास में उन्हें उस बंगाल से भीषण समाचार मिला, जहाँ अब तक कोई झगड़ा नहीं था। बंगाल के नवाब ने कलकत्ता की समृद्ध कोठी पर सहसा हमला करके उसे नष्ट कर दिया था। इस स्थिति को अवश्य सम्भाला जाना चाहिए था। क्लाइव तथा वाटसन उचित अवसर पर इसे सम्भालने के लिए यहाँ पहुच गये। उस समय महान् प्रश्न यह था कि क्या वे बंगाल में आवश्यक कार्यवाही लाली की सेना के भारत पहुँचने से तथा बुस्सी के साथ अपनी सेनाएँ मिलाने से पहले कर सकते थे! अगले तीन वर्ष तक संघर्ष का केन्द्र उत्तर में अब तक शान्त और अविक्षुब्ध रहने वाला बंगाल का प्रान्त बना रहा है।

बंगाल का चतुर बूढ़ा नवाब अलीवर्दी खाँ अप्रैल १७५६ ई० में मर गया। वह दक्षिण भारत की घटनाओं को सावधानी से देख रहा था और यह कहा जाता है कि उसने अपनी मृत्यु से ठीक पहले अपने पोते तथा निश्चित उत्तराधिकारी सिराजुद्दौला को यह परामर्श दिया था कि वह यूरोपियनों से और विशेषतः अँग्रेजों से सावधान रहे। दुष्ट एवं दुश्चरित्र १९ वर्षीय सिराजुद्दौला ने अपने राज्यारोहण को एक साहसपूर्ण प्रहार के साथ महत्वपूर्ण बनाने का संकल्प किया। उसने कलकत्ता में शरण लेने वाले एक धनी हिन्दू के समर्पण की माँग की। उसने ब्रिटिश कम्पनी को उन किलेबन्दियों का कार्य रोक देने का आदेश दिया, जो किलेबन्दियाँ अँग्रेज फ्रांस के खतरे के डर से मजबूत बना रहे थे।

इसके विरुद्ध शिकायत करने पर उसका एक मात्र उत्तर यही था कि उसने तीस हजार की सेना के साथ कलकत्ता की ओर कूच किया। कलकत्ते की रक्षा का प्रबन्ध ठीक नहीं था और इसके पास केवल एक छोटी दुर्गरक्षक सेना थी, कम्पनी का प्रेसीडेण्ट और प्रमुख निवासी कलकत्ता से भाग गये और उन्होंने हुगली नदी के एक टापू पर शरण ली। जो लोग कलकत्ता में बचे रहे, उन्होंने किले की रक्षा का प्रयत्न किया, किन्तु उन्हें आसानी से हरा दिया गया। समर्पण के बाद एक सौ छियालीस बन्दी काल कोठरी के नाम से प्रसिद्ध एक छोटी कोठरी में बन्द कर दिये गये। इसमें कठिनाई से भी खड़े होने का स्थान नहीं था और हवा भी नहीं थी। जून की एक भीषण कालरात्रि में इनमें से १२३ व्यक्ति दमघुट कर मर गये।[1] शेष व्यक्तियों को बाद में जंजीरों में बाँध कर नवाब की राजधानी मुर्शिदाबाद में मार्च कराया गया। बंगाल में ब्रिटेन की धनी व्यापारिक बस्ती को बिलकुल समाप्त कर दिया गया।

यह खबर क्लाइव को और जलसेनापति वाटसन को मद्रास से दस जहाजों और सैनिकों के साथ जल्दी ही बंगाल ले आयी। वे दिसम्बर में गंगा पर पहुँचे और दो जनवरी १७५७ ई० को उन्होंने कलकत्ते पर पुनः अधिकार कर लिया। नवाब ने उन पर हमला करने के लिए प्रयाण किया, वह हरा दिया गया और उसने एक ऐसी सन्धि पर हस्ताक्षर किये जिसके अनुसार उसे क्षतिपूर्ति देने का वचन देना पड़ा (फरवरी १७५७ ई०)।

किन्तु सिराजुद्दौला इस सन्धि के पालन करने का कोई इरादा नहीं रखता था, उसने अँग्रेजों पर एक संयुक्त आक्रमण करने के लिए चन्द्रनगर में फ्रेन्च गवर्नर से तथा उत्तरी सरकार में बुस्सी से सन्धि चर्चा चलायी। यूरोप में लड़ाई छिड़ने का समाचार अब भारत पहुँच चुका था। यह ज्ञात हो चुका था कि एक बड़ी फ्रेंच सेना के साथ लाली आ रहा है। क्लाइव यह अनुभव करता था कि सम्भवतः शीघ्र ही मद्रास में उसकी उपस्थिति आवश्यक होगी। खतरा बहुत बड़ा था। इसे कम करने के लिए क्लाइव ने चन्द्रनगर के फ्रेंच अड्डे पर सहसा आक्रमण किया, इस पर अधिकार कर लिया और इस प्रकार कुछ समय के लिए बंगाल को फ्रेंच आक्रमण के खतरे से मुक्त कर दिया।

किन्तु नवाब से अब भी बड़ा खतरा था। सन्धि अब भी खटाई में पड़ी हुई थी और नबाव चन्द्रनगर पर आक्रमण के कारण अतीव क्रुद्ध था। इस बीच में उसके सनकी स्वभाव तथा लोलुप अत्याचार ने उसके दरबार के प्रमुख व्यक्तियों को उससे पराङ्मुख कर दिया। पहले ही उसको पदच्युत करने का और उसके स्थान पर उसके बख्शी अथवा सेना के कोषाध्यक्ष और उसके पिता के एक पुराने मित्र मीरजाफर को गद्दी पर बिठाने का षड्यन्त्र चल

---

१. काल कोठरी की कथा को अप्रामाणिक सिद्ध करने की कोशिश की गयी है, किन्तु इतिहास में बहुत कम घटनाएँ इसकी अपेक्षा अधिक अच्छी तरह प्रमाण से पुष्ट की गयी हैं। यह अपराध सिराजुद्दौला की जानकारी के बिना किया गया था। उसने इस घटना के लिए कोई खेद प्रकट नहीं किया और किसी व्यक्ति को दण्डित नहीं किया।

रहा था। षड्यन्त्रकारियों ने क्लाइव के साथ सन्धि चर्चा की, उसने उत्सुकतापूर्वक इस अवसर का लाभ उठाया। एक समय में उनकी योजनाएँ खतरे में पड़ गयीं, एक मध्यगन्ता व्यक्ति सेठ अमीचन्द ने यह धमकी दी कि यदि उसे ढाई लाख से अधिक की विशाल धन राशि देने का वचन नहीं दिया जायगा तो वह यह रहस्य सिराजुद्दौला को बता देगा। क्लाइव ने इस कठिनाई पर एक ऐसी विश्वासघातपूर्ण विधि से विजय पायी, जो उसकी स्मृति को कलंकित करने वाली है। उसने दो सन्धि-पत्र तैयार किये, झूठा सन्धि-पत्र अमीचन्द को सन्तुष्ट करने के लिए था और वास्तविक सन्धि-पत्र मीरजाफर को सन्धिबद्ध करने के लिए था। यह समझौता किया गया कि मीरजाफर नवाब का साथ छोड़ देगा, उसे गद्दी पर बिठाया जायगा और वह इस ब्रिटिश सहायता के लिए सिराजुद्दौला द्वारा पहुँचायी गयी हानि की नाममात्र क्षतिपूर्ति करने के लिए लगभग तीस लाख पौण्ड की अध्यधिक महान् धनराशि देगा। उसे ब्रिटिश कम्पनी को चौबीस परगना नाम वाले कलकत्ता के चारों ओर के जिले को प्रशासन के लिए ब्रिटिश कम्पनी को हस्तान्तरित करना था।

इस गुप्त सन्धि पर मई १७५७ ई० में हस्ताक्षर हुए। क्लाइव अब नवाब से अपनी माँगों पर अड़ गया और जून में उसने तीन हजार सैनिकों की सेना के साथ, जिसमें एक-तिहाई सैनिक ब्रिटिश थे, नवाब की राजधानी मुर्शिदाबाद की ओर प्रयाण किया। दूसरी ओर सिराजुद्दौला ने पचास हजार व्यक्तियों की सेना एकत्र की, इसके साथ पचास फ्रेंच व्यक्ति थे। प्रतिकूल परिस्थितियाँ उस समय तक प्रबल प्रतीत होती थीं, जब तक कि मीरजाफर अपना वचन पूरा न करे और अपने स्वामी के विरुद्ध न हो जाय। ज्यों-ज्यों सेनाएँ पास आने लगीं, क्लाइव को मीरजाफर के अपने वचन का पक्का होने में सन्देह होने लगा और एक क्षण भर के लिए उसने लगभग युद्ध से बचने का निश्चय कर लिया। हार का मतलब अँग्रेजों के लिए बंगाल में और सम्भवतः अन्त में दक्षिण भारत में भी पूर्ण विनाश था। आयरकूट के अतिरिक्त उसकी कौंसिल के सब सदस्य पीछे हटने के पक्ष में थे। किन्तु एक घण्टे के विचार के बाद क्लाइव ने खतरा उठाने का निश्चय किया। उसने अपनी सेनाओं को नौकाओं द्वारा नदी के पार कराया और वह उस शत्रु सेना की ओर बढ़ा जो फूलने वाले पलाश के पेड़ों के कुन्ज में शिविर डाले उस स्थान पर पड़ी थी, जो सदा के लिए प्लासी के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बाद होने वाली जिस लड़ाई ने बंगाल में ब्रिटिश सत्ता को स्थापित किया, उसे बड़ी कठिनाई से युद्ध कहा जा सकता है। यह एक भगदड़ थी। इसमें जमकर कोई लड़ाई नहीं हुई, बंगाली सेनाएँ भाग खड़ी हुई। ब्रिटिश पक्ष के केवल १९ मनुष्यों की जाने गयीं, शत्रु पक्ष की हानि ५०० से अधिक नहीं थी।

प्लासी[1] की पराजय के बड़े महत्वपूर्ण परिणाम हुए। सिराजुद्दौला भाग गया, पकड़ा गया और मीरजाफर के बेटे द्वारा मार डाला गया। मीरजाफर नवाब बन गया, सन्धि के अनुसार उसके मित्रों की माँगें पूरी करने के लिए उसका खजाना खाली कर दिया गया।

---

१. इसका शुद्ध भारतीय उच्चारण पलाशी है, क्योंकि यहाँ पलाश अथवा ढाक के पेड़ों का जंगल था।

किन्तु वह जानता था कि इसके बाद से ईस्ट इण्डिया कम्पनी मालिक थी; यह मीरजाफर को उसी तरह पदच्युत कर सकती थी, जैसे उसने सिराजुद्दौला को पदच्युत किया था। मीरजाफर कर्नाटक के मुहम्मदअली से एक सर्वथा भिन्न अर्थ में एक कठपुतली मात्र राजा था।

बंगाल में यह क्रान्ति तनिक भी पहले पूरी नहीं की गयी थी। अप्रैल १७५८ ई० में काउण्ट लाली के सेनापतित्व में एक फ्रेंच सेना पाण्डिचेरी में उतरी, लाली आयरलैण्ड से निर्वासित एक व्यक्ति था। वह यूरोप में, फ्रांस की सेना में सेवा कर चुका था, किन्तु उसे भारतीय परिस्थितियों का कुछ भी ज्ञान नहीं था। वह एक साहसी पुरुष और दक्ष योद्धा था, किन्तु उसके अभद्र तथा उद्धत स्वभाव ने अफसरों के लिए उसके नीचे काम करना कठिन बना दिया। उसने भारतीय रीतिरिवाजों और विचारों की अवहेलना करके अपने भारतीय मित्रों की सहानुभूति खो दी। बुस्सी अब भी हैदराबाद में प्रबल था। उसके साधनों तथा निजाम की शक्ति के साथ मिल कर लाली की सेना की विजय सम्भव प्रतीत होती थी। लाली ने उस फोर्ट सेण्ट डेविड पर अधिकार करके अपने कार्य का शुभ आरम्भ किया, जो किला डूप्ले के सब आक्रमणों का मुकाबला करता रहा था। किन्तु उसके युद्ध में एक ब्रिटिश नौसैनिक बेड़े के आ जाने से गम्भीर बाधा पड़ गयी, भारतीय समुद्र तट का फ्रेंच बेड़ा इस ब्रिटिश बेड़े का प्रतिरोध करने का साहस नहीं कर सकता था। अपने को सुदृढ़ बनाने के लिए लाली ने बुस्सी को तथा उसकी सेना को हैदराबाद से वापस बुलाया और वह मद्रास पर हमला करने के लिए आगे बढ़ा (दिसम्बर १७५८ ई०)। यदि मद्रास का पतन हो जाता तो दक्षिण पूर्वी भारत में ब्रिटिश शक्ति का अन्त हो जाता। दो महीने के घेरे के बाद जिस समय लाली शहर पर हमला करने की तैयारी कर रहा था, उस समय पुनः एक बार समुद्र में ब्रिटिश बेड़े के प्रकट होने ने स्थिति को बदल दिया और फ्रेंच लोगों को घेरा उठाने के लिए बाधित किया।

इस बीच में हैदराबाद से बुस्सी के लौट आने के परिणाम फ्रेंच लोगों के लिए विपत्तिजनक हुए। उत्तरी सरकार की प्रतिरक्षा के लिए केवल थोड़ी फ्रेंच सेना शेष रह गयी थी। महान् सेनानी बुस्सी के अभाव में निज़ाम की निष्ठा दोलायमान होने लगी। उत्तरी सरकार के जिलों पर बंगाल से हमला किया जा सकता था। अक्टूबर १७१८ ई० में बंगाल में अपनी स्थिति असुरक्षित होने के बावजूद क्लाइव ने कर्नल फोर्ड को उस समय प्राप्त होने वाले प्रत्येक सैनिक के साथ फ्रेंच लोगों को उत्तरी सरकार के जिलों से बाहर खदेड़ने के लिए भेजा। इस आक्रमण का संचालन योग्यतापूर्वक किया गया, फ्रेंच सेना हरा दी गयी। उत्तरी सरकार के जिलों के प्रमुख नगर तथा फ्रेंच व्यापार के काफी बड़े केन्द्र मछलीपट्टम पर अधिकार कर लिया गया (अप्रैल १७५९ ई०)। अब तक फ्रेंच लोगों के समर्थन का विचार करने वाले निजाम ने अपना इरादा बदल लिया, फ्रेंच लोगों की मित्रता का परित्याग कर दिया और उसने अँग्रेजों को उत्तरी सरकार के जिलों में अपना अधिकार स्थापित करने की अनुमति दे दी।

फ्रेंच लोगों के लिए निजाम के समर्थन का न मिलना घातक था। इसने उन भारतीय राजाओं की दृष्टि में फ्रेंच लोगों की प्रतिष्ठा के पतन को पूर्ण बना दिया, जो राजा उनकी सहायता कर सकते थे। लाली १७५९ ई० और १७६० ई० के वर्षों में वीरतापूर्वक संघर्ष करता रहा। किन्तु उसकी सेनाएँ भूख से मर रही थीं। उनका झुकाव विद्रोह करने की ओर था। फ्रांस से किसी सहायता की आशा नहीं रखी जा सकती थी, क्योंकि उसका बेड़ा नपुंसक बना दिया गया था। क्वीबरोन की खाड़ी ने पश्चिम की भाँति भारत में भी युद्ध का निर्णय कर दिया। जनवरी १७६० ई० में, बंगाल से भेजे क्लाइव के एक व्यक्ति आयर-कूट के सेनापतित्व में उसकी सेना के समान संख्या रखने वाली ब्रिटिश सेना के साथ लाली ने बांदेवाश नामक स्थान पर निर्णयात्मक लड़ाई लड़ी। यह बड़ी घमासान लड़ाई थी, किन्तु इसकी समाप्ति ब्रिटेन की पूरी विजय के साथ हुई और महान् बुस्सी स्वयमेव उन बन्दियों में था, जो कूट के हाथों में पड़े। बांदेवाश के बाद कुछ बाकी बची हुई फ्रेंच चौकियों को तथा अड्डों को जीतना ही शेष रह गया। इन अड्डों का पतन १७६० ई० में एक-एक करके हुआ। जनवरी १७६१ ई० में फ्रेंच शक्ति के केन्द्र पाण्डीचेरी पर अधिकार कर लिया गया। भारत में फ्रेंच साम्राज्य का सपना समाप्त हो गया। लाली स्वयमेव युद्ध बन्दी के रूप में इंग्लैण्ड गया, जब वह वापस फ्रांस पहुँचा तो उस पर मुकदमा चलाया गया और उसका वध किया गया।

निःसन्देह, दक्षिण में फ्रेंच लोगों की अन्तिम पराजय का कारण कुछ तो ब्रिटिश नौ-सेना की प्रभुता थी और कुछ कारण वह शक्ति थी, जो बंगाल में हाल की विजय से अँग्रेजों को मिली थी, और कुछ कारण वह प्रतिष्ठा थी जो इस विजय से सारे भारत की दृष्टि में अँग्रेजों को प्राप्त हुई थी। क्लाइव ने बंगाल से बाहर सेनाएँ भेजने में तनिक भी संकोच नहीं किया। इस साहसपूर्ण कार्य ने दक्षिण में संघर्ष के परिणाम को निश्चित कर दिया। फिर भी, बंगाल में उसकी स्थिति किसी भी प्रकार सुरक्षित नहीं थी। उसे मीरजाफर के विरुद्ध कई विद्रोहों का सामना करना पड़ा, जिनका मुकाबला केवल कम्पनी की दक्ष सेनाएँ ही कर सकती थीं। उसे एक शक्तिशाली पड़ोसी—अवध के नवाब के आक्रमण से बंगाल की रक्षा करनी पड़ी। यह अपने साथ मुगल सम्राट् के सबसे बड़े लड़के को लाया था और उसके नाम से शाही सूबे के रूप में बंगाल की व्यवस्था करने के अधिकार का दावा कर रहा था। अवध की सेना एक बार पुनः कम्पनी के सैनिकों द्वारा पटना में हरा दी गयी (१७५९ ई०)। उसे उन डचों के भी विरोध का सामना करना पड़ा जो ब्रिटिश प्रभुत्व के परिणामों से भयभीत हो रहे थे, जिन्होंने मीरजाफर के साथ मिल कर षड्-यन्त्र करना आरम्भ कर दिया था और बटेविया से सात जहाजों का एक बेड़ा भेजा था। क्लाइव ने स्थल मार्ग द्वारा चिन्सुरा में डचों की एक कोठी पर अधिकार करने में संकोच नहीं किया और तीन ब्रिटिश जहाजों के बेड़े ने डच जहाजों पर हमला किया और उन्हें हरा दिया। क्लाइव और कम्पनी की सेना जहाँ-कहीं गयी, वह वहाँ विजयी हुई। १७६० ई० तक बंगाल में कोई संकट नहीं प्रतीत होता था और क्लाइव ने अब इंग्लैण्ड लौटना उचित समझा।

५. १७६० ई० में भारत में ब्रिटेन की शक्ति का स्वरूप

यहाँ हम भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव डालने वाली आश्चर्यजनक घटनाओं के विवरण को कुछ समय के लिए समाप्त कर सकते हैं। १७६० ई० तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बंगाल पर पूर्ण प्रभुत्व पा लिया था। उसने इस महान् प्रान्त को अपने राज्य का अंग नहीं बनाया था अथवा इसके शासन के लिए कोई जिम्मेदारी नहीं ग्रहण की थी, यह शासन पहले की भाँति नवाब द्वारा चलाया जा रहा था; किन्तु नवाब यह जानता था कि वह अपनी सत्ता के लिए पूर्ण रूप से कम्पनी पर निर्भर था। उसकी सत्ता के विरुद्ध विद्रोह को कम्पनी की सेनाओं ने कुचला था। उसके प्रदेशों पर बाहर से हुए एक भीषण आक्रमण का निवारण कम्पनी की सेनाओं द्वारा किया गया था। नवाब एक स्वतन्त्र नीति का अनुसरण करने का, अथवा कम्पनी की और इसके उन एजेण्टों की माँगों का विरोध नहीं कर सकता था, जो उत्तम शासन को सुरक्षित बनाने की किसी जिम्मेदारी के बिना ही निरंकुश शक्ति का उपभोग कर रहे थे। अधिक दक्षिण में कम्पनी ने उत्तरी सरकार के नाम से प्रसिद्ध समुद्रतटवर्ती प्रदेश के लम्बे भूखण्ड के एक भाग पर अस्पष्ट नियन्त्रण प्राप्त कर लिया था। यह बंगाल की अपेक्षा बहुत कम महत्वपूर्ण था और अधिकांश रूप में इस पिछड़े हुए प्रदेश पर जो छोटे राजा शासन करते थे, उन्हें स्वतन्त्र छोड़ दिया गया था, उनके कार्यों में कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया। उत्तरी सरकार के जिलों का महत्व यह था कि वे बंगाल को कर्नाटक से जोड़ते थे और फ्रेंच लोगों को (अथवा ब्रिटिश सत्ता की प्रतिस्पर्धी अन्य समुद्री शक्तियों को) निजाम के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करने से रोकते थे। अन्त में, कर्नाटक की गद्दी पर एक ऐसा नवाब बैठा हुआ था, जो यह जानता था कि वह ब्रिटिश सहायता के कारण ही गद्दी पर बैठा हुआ है। किसी भी प्रकार वह बंगाल के नवाब की भाँति उतने पूर्ण रूप से अँग्रेजों का वशवर्ती नहीं था; फिर भी उसके दरबार में ब्रिटिश प्रभाव प्रबल था, उसके प्रदेशों में ब्रिटिश व्यापार फैला हुआ था। निजाम भी अँग्रेजों का मित्र बन गया था, यद्यपि हैदराबाद पर प्रभाव डालने वाली कोई वैसी ब्रिटिश फौज नहीं थी, जैसी फौज से बुस्सी ने १७४८ ई० से १७५८ ई० तक उस पर प्रभाव डाला था।

भारत में अँग्रेजों की प्रादेशिक सत्ता का श्रीगणेश इस प्रकार से हुआ था। यह सैनिक प्रतिष्ठा पर आधारित प्रभाव के कारण थी। इसने अभी तक कहीं भी प्रत्यक्ष रूप से प्रभु-सत्ता का दावा करना आरम्भ नहीं किया था। वस्तुतः दृष्टिकोण की अपनी विशिष्ट साहसिकता के साथ क्लाइव अगला कदम उठाने को तैयार था, १७५९ ई० में उसने पिट को लिखे गये एक उल्लेखनीय पत्र में इस बात पर बल दिया था कि बंगाल के प्रशासन के लिए ब्रिटिश सरकार को सीधी जिम्मेवारी लेनी चाहिए। किन्तु इस विचार से सहानुभूति रखने पर भी पिट इतने बड़े परिवर्तन के लिए तैयार नहीं था; इंग्लैण्ड में कम्पनी के संचालक अपने दायित्व में कोई वृद्धि नहीं करना चाहते थे, विजय से उत्पन्न पहली उत्तेजना शान्त हो जाने के बाद वे यह अनुभव करने लगे थे कि उनके हाथों में जो शक्ति आ गयी है, वह किसी भी

प्रकार विशुद्ध लाभ देने वाली नहीं है, सेनाओं को बनाये रखने का व्यय बहुत अधिक था और यह व्यय मीरजाफर द्वारा दी गयी रियायतों से होने वाले सभी मुनाफों से भी अधिक धनराशि को हड़प कर जाता था। भारत में कम्पनी के सेवक इसके प्रधान कार्य-व्यापार से अपना ध्यान हटाकर उसे दूसरी ओर लगा रहे थे, वे काबू से बाहर हो रहे थे, ये कार्य उनके लिए बहुत लाभदायक सिद्ध हो रहे थे, किन्तु कम्पनी को कोई मुनाफा नहीं देने वाले थे।

वस्तुत: सच्चाई यह है कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी बिना चाहे साम्राज्य की स्वामिनी बन गयी, अथवा उसे यह भी पता नहीं था कि इस साम्राज्य का क्या किया जाय। अंग्रेज डूप्ले की विध्वंस करने वाली उन महत्वाकांक्षापूर्ण योजनाओं के विरुद्ध विशुद्ध आत्मरक्षा की दृष्टि से दक्षिण में फ्रेंचों के साथ संघर्ष में खींच लाये गये थे, कलकत्ता में सिराजुद्दौला के आक्रमण ने तथा उस पर विश्वास करने की प्रमाणित असम्भाव्यता ने उन्हें बंगाल में शासक बनने के कार्य की ओर आकृष्ट किया था। अब उन्होंने अपने को व्ययसाध्य और अनिश्चित दायित्वों से लदा हुआ पाया और वे ऐसे उत्तरदायित्वों में कोई वृद्धि नहीं करना चाहते थे। वे केवल शान्तिपूर्ण व्यापार के काम में ही लगे रहना चाहते थे। भारत की अपनी राजनीतिक समस्याओं का समाधान वे भारत पर ही छोड़ देना चाहते थे।

किन्तु नवीन उत्तरदायित्वों से किसी भी प्रकार नहीं बचा जा सकता था। जब तक कम्पनी बंगाल और मद्रास को खाली करने के लिए और वहाँ किये जाने वाले व्यापार को छोड़ने के लिए तैयार न हो (यह एक अविचारणीय विकल्प था), तब तक कम्पनी द्वारा प्राप्त की गयी शक्ति और प्रतिष्ठा अपने साथ राजनीतिक शक्ति को भी ला रही थी। विपत्ति-जनक परिणाम उत्पन्न किये बिना शक्ति को उत्तरदायित्व से पृथक् नहीं किया जा सकता। इस प्रकार का पार्थक्य कितना भीषण हो सकता है, यह वस्तुत: पलाशी की लड़ाई के बाद के वर्षों में कम्पनी के सेवकों के व्यवहार से पहले ही प्रदर्शित किया जा रहा था। कम्पनी के सेवक परोपकारपूर्ण उद्देश्यों से नहीं, अपितु धन कमाने के लिए भारत गये थे। उन्हें अत्यधिक कम वेतन दिये जाते थे और इसके बदले में उन्हें सदैव इस बात की अनुमति दी जाती थी कि वे निजी उद्योग से जो धन कमा सकते हों, वह धन कमायें, यह बात उस समय तक बिलकुल ठीक थी, जब तक वे कोरे व्यापारी थे और उन्हें भारत की शक्तिशाली सरकारों द्वारा नियन्त्रण में रखा जाता था। किन्तु अब वे सहसा देश के स्वामी बन गये। इस समय उनके पास इसके शासन का अथवा इसकी जनता के कल्याण का कोई उत्तर-दयित्व नहीं था। बंगाल में कोई व्यक्ति यह साहस नहीं कर सकता था कि वे जिस बात को कहें, उससे इन्कार किया जा सके। उन्हें नियन्त्रित कर सकने वाले एकमात्र अधिकारी सात हजार मील दूर बैठे थे। तब इसमें क्या आश्चर्य था कि उन्होंने अपनी स्थिति का लाभ उठाया, नवाब से अथवा उसके कुलीन सरदारों से विपुल उपहार स्वीकार किये अथवा ऐसे उपहारों की माँग की अथवा अपने निजी व्यापार को चलाते हुए अनुचित लाभ उठाये। इसमें क्या आश्चर्य है कि वे आश्चर्यजनक द्रुतगति के साथ धनी बन गये और इंग्लैण्ड लौट कर

देहाती जागीरें और पार्लियामेण्ट में अपने प्रतिनिधि भेजने वाले नगरों या बरो (Borough) की सीटें खरीदने लगे। वे उत्तरदायित्वहीन शक्ति का उपभोग कर रहे थे और केवल अपवादस्वरूप व्यक्ति ही इस प्रकार के प्रलोभनों का सम्वरण कर सकते थे। इन में कुछ ने ऐसे लोभ का सम्वरण किया। इनमे विशेष उल्लेखनीय कम्पनी की सेवा करने वाला एक तरुण क्लर्क वारेन हेस्टिंग्स था। इसकी योग्यता और पौरुष से क्लाइव का ध्यान इसकी ओर आकृष्ट हुआ, किन्तु बहुसंख्या इन प्रलोभनों का शिकार हो गयी। बंगाल में ब्रिटिश शासन के प्रथम वर्षों में और कुछ कम मात्रा में कर्नाटक में यह प्रतीत होता था कि मानों पलाशी और वांदेवाश की विजयों का एकमात्र परिणाम यह था कि अभागे भारतवासियों पर सब कुछ हड़प कर जाने वाले टिड्डी दल की मुसीबत डाल दी जाय। इन वर्षों में ब्रिटिश प्रभाव (यह अभी तक ब्रिटिश शासन नहीं था) केवल अभिशाप प्रतीत होता था।

इस प्रकार ब्रिटिश जनता एवं उनके शासकों पर भारत में शक्ति की प्राप्ति ने एक अनुपम कठिन समस्या डाल दी। ऐसी समस्या विश्व के इतिहास में किसी भी राष्ट्र के सम्मुख कभी नहीं आयी थी। घटना-चक्र ने जो शक्ति अँग्रेजों को प्रदान की थी, उस आश्चर्यजनक शक्ति का उपयोग किस रीति से किया जाय? क्या इसका प्रयोग केवल पराधीन जनता के शोषण के लिए या उनके विजेताओं की समृद्धि के लिए किया जाना था? अथवा पश्चिम के सुदूरवर्ती टापुओं को ऐसे साधन प्राप्त करने थे, जिन से यह शक्ति न्याय और स्वतन्त्रता में वृद्धि करे, न कि इसमें कोई कमी करे। पश्चिमी जनता के जीवन और विचार की आदतों का सामञ्जस्य भारत जैसे सर्वथा भिन्न देश के सामाजिक जीवन और राजनीतिक पद्धति के साथ किस प्रकार किया जाना चाहिए?

ये अतीव महान् और कठोर समस्याएँ थीं। ये उन समस्याओं से भी अधिक कठिन थीं, जो उत्तर अमेरिका के महाद्वीप में ब्रिटिश प्रभुता की स्थापना से उत्पन्न हुई थीं। किन्तु १७६० ई० में जब क्लाइव अपनी विजय का उपभोग करने के लिए तथा अपने परिवार की गिरी हुई आर्थिक दशा सुधारने के लिए स्वदेश वापस लौटा, उस समय इन समस्याओं की गुरुता और जटिलता अभी तक स्पष्ट नहीं हुई थी। एक प्रत्यक्ष और महान् तथ्य यह था कि पुराने प्रतिस्पर्धी फ्रांस की शक्ति पश्चिम की अपेक्षा पूर्व में और भी अधिक पूर्णता के साथ ध्वस्त कर दी गयी थी। एक प्रकार के चमत्कार से ब्रिटेन एक विस्मयजनक नवीन साम्राज्य का स्वामी बन गया था। समुद्रों की राजगद्दी पर ब्रिटेन ने एक साथ पुरानी और नयी दुनियाँ के राजच्छत्र को धारण किया था। १७६० ई० के मनुष्यों के लिए यह उस समय पर्याप्त था, जब कि महान् युद्ध अब भी चल रहा था।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Muir, The Making of British India; **V. A. Smith,** History of India; **Roberts,** Historical Georgraphy of India; **Wheeler,** or **Innes,**

Short History of India; **Dodwell,** Dupleix and Clive; **Forrest,** Life of Clive; **Lyall,** Rise and Expansion of the British Power in India; **Malleson,** The French in India; **Mahan,** Influence of Sea-power upon History; **Grant Duff,** History of the Mahrattas; Cambridge History of India; **B. Williams,** The Whig Supremacy.

••

६

१८वीं शताब्दी के मध्य में ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का सामाजिक संगठन

१७६३ ई० में ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल ने वैभव और सफलता के जिस चरम उत्कर्ष को प्राप्त किया, उसके तत्काल बाद एक बड़े परिवर्तन और महान् समस्याओं का युग आरम्भ हुआ। यह युग अमेरिकन क्रान्ति का, कृषि विषयक तथा औद्योगिक क्रान्तियों का युग था; इस युग में आयरलैण्ड में अपनी तकलीफों को अनुभव करने की भावना जागृत हुई। इस युग में इंग्लैण्ड में राजनीतिक पुनर्निर्माण की माँग आरम्भ हुई और अन्त में इन सभी क्रान्तिकारी आन्दोलनों के चरम शिखर के रूप में, इस युग में फ्रांस की राज्यक्रान्ति हुई। इन क्रमशः घटित होने वाले महान् उलट-फेरों के प्रभाव से पुरानी सामाजिक व्यवस्था को और पुराने राजनीतिक विचारों को चुनौती दी गयी और अन्त में इनका विध्वंस कर दिया गया। इन अतीव महत्वपूर्ण घटनाओं की ओर अपना ध्यान देने से पहले यह आवश्यक है कि हम उस पुरानी व्यवस्था का यथासम्भव स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करें, जिस व्यवस्था में इतने अधिक गम्भीर रूप से परिवर्तन किया जाना था।

१. इंग्लैण्ड की समृद्धि और स्वतन्त्रता

इस युग के एक ऐतिहासिक ने यह बड़ा दावा किया है कि एण्टोनाइन सम्राटों (Antonines)[१] के समय में रोमन साम्राज्य के

१. यह रोमन सम्राट् [illegible] तथा एण्टोनियस के शासन काल का समय १३८ से १८० ई० है।

अतिरिक्त कोई ऐसा देश अथवा ऐसा युग नहीं है, जिसमें समृद्धि इतने व्यापक रूप से फैली हुई थी अथवा सन्तोष ऐसे सामान्य रूप में विद्यमान था, जैसा इंग्लैण्ड में १८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में था। हम यह देखेंगे कि यद्यपि यह सत्य हो सकता है और यह कथन इस युग का एक अत्यधिक उज्ज्वल चित्र उपस्थित करता है, फिर भी यह कथन निराधार नहीं है। इस युग में इंग्लैण्ड आने वाले विदेशी पर्यवेक्षक बहुत अधिक थे, क्योंकि इंग्लैण्ड को व्यापक रूप से एक स्वतन्त्र, समृद्ध और व्यवस्थित राज्य का आदर्श माना जाता था। इन विदेशी यात्रियों ने इंग्लैण्ड के बारे में अपनी प्रशंसाओं के लिए लगभग सर्वसम्मति से दो मुख्य विषय निश्चित किये; इनमें से एक जनता का सामान्य सुख था और दूसरा इन लोगों द्वारा अनुभव की जाने वाली स्वतन्त्रता थी।

इन पर्यवेक्षकों ने यह लिखा था कि यहां दरिद्रतम श्रेणियों को भी नगे पाँव चलने की अथवा फ्रांस के कृषक वर्ग की भाँति लकड़ी के जूते पहनने की आवश्यकता नहीं थी। वे अधिकांश रूप में गेहूँ का आटा खाते थे। यूरोप की दरिद्र श्रेणियों में जूते पहनना अश्रुत-पूर्व विलास की वस्तु थी। इंग्लैण्ड में ऐसे बहुत कम परिवार थे, जिन्हे एक सप्ताह में कम-से-कम तीन या चार बार भोजन के लिए मांस न मिलता हो। विदेशी यात्रियों पर सामान्य प्रभाव यह पड़ता था कि इंग्लैण्ड की जनता अच्छी तरह कपड़ा पहनने वाली और अच्छा खाना खाने वाली जनता है, वह फ्रांस के चिथड़े पहनने वाले और क्षीणकाय कृषक वर्ग से बहुत भिन्न है। यद्यपि परिस्थितियों का एक सूक्ष्म विश्लेषण इन सब उक्तियों का पूर्ण रूप से समर्थन नहीं करता, तथापि इनकी उपेक्षा करना असम्भव है। डचों के सम्भव अपवाद के अतिरिक्त दुनिया में कोई अन्य ऐसी जाति नहीं थी, जिसमें इंग्लिश लोगों की अपेक्षा सुख-सुविधा का अधिक ऊँचा मानदण्ड हो। सारी दुनियाँ में इंग्लैण्ड के लोगों से इस बात में आगे बढ़े हुए नयी दुनियाँ में बसे हुए केवल उन्ही के अपने जनसमुदाय थे, जिनके पास एक नवीन भूमि की अक्षय सम्पति थी। उनकी दशा में भी विलाप करने के लिए बहुत कुछ था, जैसा कि हम आगे चल कर देखेंगे, किन्तु वे कम-से-कम यूरोप के किसी भी देश के निवासियों से अधिक सुखी थे। सम्भवत: वे अपने इतिहास के किसी भी युग के अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक सुखी थे।

स्वतन्त्रता के विषय में यह बात थी कि वे ब्रिटिश उपनिवेशों के सिवाय किसी भी अन्य देश की जनता से अद्वितीय रूप में अधिक अच्छे थे। भूदास-प्रथा इंग्लैण्ड में लगभग पूर्ण रूप से समाप्त हो चुकी थी। प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार सोच सकता था, अपनी बात कह सकता था अथवा लिख सकता था, सम्मतियों की अभिव्यक्ति पर कोई गम्भीर पाबन्दी नहीं थी। सब दशाओं में सिद्धान्त रूप से कानून, धनी और निर्धन सभी व्यक्तियों के लिए समान था, यद्यपि व्यवहार में सदैव ऐसा नहीं था। कानून किसी भी प्रकार के जातीय बन्धनों को स्वीकार नहीं करता था और एक ओजस्वी तथा साहसी व्यक्ति जीवन के अधिकांश क्षेत्रों में अपना रास्ता बना सकता था। यह सब सत्य था, भले ही यह भी सत्य था (जैसा कि हम देखेंगे) कि इस स्वतन्त्रता पर व्यवहार में कई प्रकार से पाबन्दी लगी हुई थी। यह भी सत्य था कि इंग्लैण्ड की जनता की बहुत बड़ी संख्या को अपने सामान्य

मामलों के प्रबन्ध में हिस्सा लेने का जैसा अधिकार और अवसर था, वैसा अन्य देशों में नहीं था। यद्यपि इंग्लैण्ड एक लोकतन्त्रीय देश होने से अभी बहुत दूर था, तथापि वह सच्चे अर्थ में स्वशासन करने वाला देश था। इस मामले में उसकी उत्कृष्टता के कारण विदेशी पर्यवेक्षक उससे ईर्ष्या करते थे और उसकी प्रशंसा करते थे। हम आगे चलकर देखेंगे कि इस समय ब्रिटिश संविधान के प्रशस्तिलेखक इंग्लैण्ड की राजनीतिक स्वतन्त्रता के बारे में अतिरंजित अथवा अत्युक्तिपूर्ण वर्णन करने के शौकीन थे, इन वर्णनों में ठोस कमी की जानी चाहिए। फिर भी कम-से-कम यह सत्य है कि ब्रिटिश जनता वास्तविक, राजनीतिक तथा सामाजिक स्वतन्त्रता की दिशा में कष्ट और कठिनाई से भरे हुए मार्ग पर विश्व के किसी भी अन्य देश की जनता की अपेक्षा कहीं अधिक आगे बढ़ चुकी थी। निस्सन्देह वे स्वतन्त्रता के अग्रदूत थे।

२. इंग्लैण्ड का ग्रामीण समाज और इसका संगठन

अपने विदेशी व्यापार की तथा हस्तोद्योगों की द्रुत प्रगति के बावजूद इंग्लैण्ड अब भी मुख्य रूप से एक कृषि-प्रधान देश था। उसकी जनसंख्या का तीन चौथाई से अधिक भाग जमीन पर और इसके द्वारा अपना जीवन बिताता था। इस विशाल संख्या का अधिकांश भाग—अर्थात् इंग्लिश जनता का प्रधान हिस्सा उस श्रेणी से सम्बन्ध रखता था जो जमीन पर अपने हाथों से काम करती थी; यह श्रेणी कृषकों की थी। किन्तु इस श्रेणी के सदस्यों में भी अतीव व्यापक वैविध्य पाया जाता था। कुछ अपने स्वामियों के साथ रहने वाले किराये पर रखे हुए नौकर थे। कुछ दैनिक मजदूरी करने वाले थे, ये दूसरों की जमीन पर काम करके मजदूरी कमाते थे। किन्तु अनेक उदाहरणों में इनके पास भी जमीन का अपना एक टुकड़ा होता था और अधिकांश अवस्थाओं में ये कुछ हंसों को अथवा एक सूअर को अथवा एक गौ को गाँव की उस पंचायती भूमि की सहायता से पाला करते थे, जिस भूमि से उन्हें ईंधन भी प्राप्त होता था। इनकी पत्नियाँ और लड़कियाँ जुलाहों के लिए सूत कात कर पारिवारिक आमदनी को बढ़ा सकती थीं। उनकी विशुद्ध मजदूरी किसी भी प्रकार उनकी वास्तविक आय को नहीं सूचित करती थी। अन्य व्यक्तियों के पास अपने ऐसे खेत होते थे, जिनमें उसकी अपनी तथा अपने परिवार के सदस्यों की पूरी मेहनत लगी रहती थी, यद्यपि कई बार वे एक बड़े किसान के लिए कुछ दिनों तक मजदूरी कर सकते थे। इनमें से कुछ लोग कभी-कभी दैनिक मजदूरी पर काम करने वाले व्यक्ति को भी काम पर लगा लेते थे। कृषि का कठोर कार्य करने वालों में इस प्रकार का श्रेणी भेद था। किन्तु इनमें उन्नति करने की सम्भावनाएँ थीं और इस श्रेणी के सदस्यों की बहुसंख्या उस जमीन में कुछ हिस्सा रखती थी, जिस जमीन को वे जोता करते थे।

किसानों की यह श्रेणी अज्ञात रूप से अगली श्रेणी में मिल जाती थी; यह श्रेणी काफी बड़े खेतों को रखने वाले ऐसे कृषकों की थी जो मजदूरी पर रखे मजदूरों से अपने खेतों का काम कराते थे। इस श्रेणी में दोनों प्रकार के व्यक्तियों को सम्मिलित किया जा सकता है। पहले तो वे व्यक्ति थे, जिनके अपने खेत थे; इनकी एक बड़ी संख्या थी और दूसरे इनके लिए लगान देने वाले व्यक्ति थे। इसे सुविधाजनक रीति से समृद्ध भूमिधर वर्ग

या योमेनरी (Yeomanry) कहा जा सकता है, यद्यपि सही अर्थों में इस शब्द का प्रयोग छोटे भूस्वामियों के लिए ही किया जाना चाहिए। अतिरिक्त मजदूरों को कभी-कभी लगाने वाले सम्पन्न किसानों में तथा अपने आदमियों के साथ कठोर परिश्रम करने वाले समृद्ध भूमिधर में बहुत कम सुस्पष्ट अन्तर था। एक वर्ग का व्यक्ति आसानी से दूसरे वर्ग में चला जाता था, इसी प्रकार योमैन वर्ग भी अज्ञात रूप से अपने से उपरले जमींदारवर्ग (Squirearchy) में मिल जाता था। इसे ऐसी श्रेणी कहा जा सकता है, जो जमीन के लगान से अपनी आजीविका प्राप्त करती थी। एक समृद्ध योमैन में तथा अपने हाथ से कुछ खेती करने वाले जमींदार में बहुत कम अन्तर था। इस प्रकार कृषिजीवी समाज, यद्यपि कई श्रेणियों में बँटा हुआ था, तथापि यह न्यूनाधिक मात्रा में एकरूप था और उस समय विभिन्न श्रेणियों के तथा हितों के बीच में ऐसे सुस्पष्ट भेद नहीं थे, जो बाद में उत्पन्न हो गये।

ग्रामीण समाज की यह एकरूपता उस ढंग के कारण अधिक बढ़ गयी, जिस ढंग से अधिकांश गाँवों का संगठन किया जाता था। पिछली शताब्दियों में बड़ी संख्या में किये जाने वाले आवेष्टनों (Enclosures) के बावजूद सम्भवतः इंग्लैण्ड में खेती की जाने वाली भूमि का $\frac{3}{5}$ भाग अब भी खुले खेत वाली पद्धति (Openfield system) पर व्यवस्थित किया गया था। इस पद्धति में गाँव की कृषि योग्य भूमि बहुत बड़े खेतों में बाँटी जाती थी। प्रत्येक खेत में अनेक छोटी पट्टियाँ होती थी, इन पर अनेक किसानों का अधिकार होता था। इन सभी किसानों को आपस में यह समझौता करना होता था कि वे समान फसलों को बोयेंगे और एक ही समय में खेत की जुताई-बुआई और कटाई का काम करेंगे, फसलें काट दिये जाने के बाद बड़े खेतों का उपयोग चरागाहों के लिए किया जा सकता था और इस बारे में समझौता करना पड़ता था कि प्रत्येक ग्रामवासी को कितने पशु खेतों में भेजने का अधिकार होगा। प्रत्येक गाँव के पास सूखी घास के लिए घासवाली भूमि होती थी, अनेक ग्रामीण समझौते द्वारा निश्चित किये गये अनुपात में सूखी घास में अपना हिस्सा लिया करते थे, घास काट लेने के बाद इस भूमि का चरागाह के लिए भी प्रयोग किया जाता था। अन्त में, लगभग प्रत्येक गाँव के पास एक पंचायती विशाल भूमि होती थी। इसका प्रयोग सभी व्यक्ति चरागाह के लिए अथवा दलदलों में उपलब्ध होने वाला कोयला काटने के लिए किया करते थे। इस पद्धति का एक बड़ा दोष यह था कि इसमें नयी फसलों तथा खेती के सुधरे हुए ढंगों का नवीन प्रयोग अतीव कठिन था और इससे कृषि के विकास में गम्भीर बाधाएँ आती थी। किन्तु ठीक इसी कारण, यह पद्धति एक छोटे व्यक्ति की उसके अपने अधिक साहसी पड़ोसी की प्रतिस्पर्धा से रक्षा करती थी। इसने गाँव को एक वास्तविक समुदाय में परिणत कर दिया था। इसमें प्रत्येक व्यक्ति एक हिस्सा लेता था; क्योंकि सब व्यक्ति प्रतिवर्ष होने वाले उन विवादों में भाग लेते थे, जिनमें यह विचार होता था कि कौन-सी फसलें बोयी-उगायी जानी चाहिए और कब बोना और काटना चाहिए। इस पद्धति में जिन अनेक छोटे ग्रामीण पदाधिकारियों की आवश्यकता होती थी, उनके चुनाव में सब ग्रामवासी भाग लेते थे।

यह पद्धति स्थायी रूप से नहीं बनी रह सकती थी। वस्तुतः पहले से ही इसका शनैः-शनैः ह्रास होने लगा था। देश के बड़े हिस्सों में यह लगभग क्रियात्मक रूप से लुप्त हो गयी थी। जहाँ कही यह बची भी हुई थी, वहाँ अधिक बड़े भूस्वामी अधिकांश अवस्थाओं में इस बात में सफल हुए थे कि उनके सब खेत एक ही चक में केन्द्रित कर दिये जाँय और वे सामान्य खेतों से अलग करके घेर दिये जाँय, वे इन खेतों में समूचे गाँव के समझौते से बँधे बिना ही, जैसा सर्वोत्तम समझें, उस ढंग से खेती कर सके। किन्तु इंग्लैण्ड के बड़े भाग मे, यह पद्धति अब भी न्यूनाधिक मात्रा में बची हुई थी। इसके साथ इसे उत्पन्न करने वाली सामुदायिक भावना भी बची हुई थी। जहाँ यह लगभग पूर्ण रूप से टूट चुकी थी, वहाँ अब भी सामान्य रूप से गाँवों की पंचायती भूमि बची हुई थी और अनेक अंशों में इन पंचायती जमीनों को सामान्य प्रबन्ध में विद्यमान सामान्य सम्पत्ति के रूप में समझा जाता था।

इसके अतिरिक्त खेती के ग्रामीण संगठन के साथ-साथ **पेरिश** (Parish) कहलाने वाले पल्ली या ग्राम का संगठन भी था। यह स्थानीय सड़कों का तथा छोटे स्थानीय दानों से किये जाने वाले परोपकारपूर्ण कार्यो का और सबसे बढ़कर निर्धन लोगों की सहायता के प्रशासन का प्रबन्ध करता था। पेरिश का नियन्त्रण करने वाली संस्था ग्रामसभा या वेस्ट्री (Vestry) थी। यह आरम्भ मे ऐसे सभी करदाताओं की सभा थी, जो पेरिश के अधिकारियों के चुनाव के लिए, सेवा निवृत्त होने वाले अधिकारियों की रिपोर्ट सुनने के लिए और कर निश्चित करने के लिए साल में एक बार एकत्र हुआ करती थी। अनेक स्थानों के सभी करदाताओं से बनी वेस्ट्री का स्थान गाँव के प्रमुख जनों की एक "चुनी हुई वेस्ट्री" ने लिया था। किन्तु अधिकांश स्थानों में अब भी सभी करदाताओं से बनी वेस्ट्री कार्य कर रही थी और प्रत्येक व्यक्ति इसकी बैठकों में उपस्थित हो सकता था। क्रियात्मक रूप से प्रायः इसका कार्य कुछ अधिक समृद्ध व्यक्तियों द्वारा किया जाता था। ये बारी-बारी से बिना वेतन लिये, ओवरसियरों का और चर्च के वार्डनों का कार्य करते थे; किन्तु सामान्य ग्रामीण यह जानते थे कि क्या हो रहा था और वे इसमें भाग लेते थे।

राष्ट्र की बहुसख्या का निर्माण करने वाले अंग्रेज किसानों का जीवन निःसन्देह कठोर तथा परिश्रमपूर्ण जीवन था, किन्तु यह आशारहित जीवन नही था। परिश्रमी व्यक्तियों के लिए इसमें उज्ज्वल सम्भावनाएँ थीं। इसमे साथीपन के और सामान्य उत्तरदायित्व के आनन्द थे। अधिकांश कृषक अनपढ़ थे, यद्यपि कहीं-कही, गाँवों में पाठशालाएँ विकसित हो रही थीं। वे इसके बारे मे बहुत कम जानते थे कि बाहर की दुनियाँ मे क्या हो रहा था। उन्हें राष्ट्रीय राजनीति के महान् मामलों के बारे में भी कुछ ज्ञान नही था। किन्तु उनके पास परम्परागत गीत और लोककथाएँ थी और प्यूरिटनवाद (Puritanism) ग्रामीण जीवन के स्वस्थ एवं अपरिष्कृत आनन्दों को समाप्त करने मे विफल रहा था। मुख्य रूप से इंग्लिश ग्राम एक स्वतन्त्र समाज था, यह विशेष रूप से इस कारण था कि यह ऐसी एकरूपता रखने वाला समाज था, जिसमें श्रेणियों के बीच में पायी जाने वाली कोई तीव्र अथवा कठोर रुकावटें नहीं थीं।

किन्तु यह स्वतन्त्रता एक बात में, निर्धन व्यक्तियों के लिए विशेष रूप से मर्यादित थी; इसका कारण निर्धन सहायता कानूनों (Poor Laws) का प्रयोग या परिचलन था, क्योंकि इन कानूनों ने प्रत्येक पेरिश पर इसमें निवास करने वाले निर्धन व्यक्तियों के निर्वाह का उत्तरदायित्व डाला था। अतः प्रत्येक पेरिश इस बात के लिए उत्सुक रहता था कि बहुत अधिक निर्धन व्यक्ति इसके क्षेत्र में न बसें। पार्लियामेण्ट के कानूनों की एक लम्बी शृंखला ने—जिसका पहला कानून पुनः स्थापना के बाद शीघ्र ही पास किया गया था—इस बात का प्रयत्न किया था कि वह इस बात की व्याख्या करे कि उस बस्ती (Settlement) शब्द का क्या अभिप्राय है, जिसमें रहना निर्धन व्यक्तियों को पेरिश से सहायता प्रदान करने का अधिकार प्रदान करता है। इन बस्ती कानूनों ने वस्तुतः पेरिशों को ऐसे व्यक्ति को अपने पेरिश में बसने के अधिकार से इन्कार करने का अधिकार प्रदान किया, जिसके कारण पेरिश के करों का भार बढ़ने की सम्भावना थी। इससे उन निर्धन व्यक्तियों के आवागमन की स्वतन्त्रता पर वास्तविक पाबन्दी लग गयी, जिन्हें अपने पेरिशों में रोजी नहीं मिल सकती थी। इस युग में ऐसे निर्धन व्यक्तियों की संख्या निरन्तर बढ़ रही थी, क्योंकि पुरानी पद्धति शनैः शनैः भंग हो रही थी। सर्वत्र निर्धनों की सहायता के लिए लगाये जाने वाले कर बढ़ रहे थे। १७२२ ई० में यह आवश्यक समझा गया कि पेरिशों के समूहों को अपने निर्धन व्यक्तियों को रोजी देने के लिए कर्मशालायें (Workhouses) स्थापित करने का अधिकार दिया जाय। पुरानी और निश्चित व्यवस्था के विघटन से १८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में विस्थापित व्यक्तियों की समस्या पहले से भी अधिक कठिन हो रही थी। फिर भी यह अभी तक अतीव गम्भीर नहीं थी, क्योंकि विघटन की प्रक्रिया अभी बहुत अधिक नहीं बढ़ी थी। इंग्लिश लोगों की विशाल बहुसंख्या अब भी अपना जीवन उन ग्रामों में बिताती थी, जिनमें वे उत्पन्न हुए थे। किन्तु अगले युग के महान् परिवर्तनों ने इसे एक अतीव भीषण समस्या बना देना था। हम यह देखेंगे कि इस समस्या को हल करने के लिए सोचे गये प्रयास ऐसी संकीर्ण दृष्टिकोण वाले थे कि उनसे अनर्थकारी और क्रूर परिणाम उत्पन्न हुए। इसका एक मुख्य कारण यह था कि बेकारी और निर्धनता को एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में विशाल पैमाने पर कभी नहीं समझा गया। किन्तु इसे मुख्य रूप से प्रत्येक पेरिश अथवा पेरिशों के समूह द्वारा और प्रत्येक कौण्टी में पुरशासक अथवा जस्टिस ऑफ पीस (Justice of Peace) नामक पदाधिकारियों द्वारा समाधान करने के लिए छोड़ दिया गया। क्योंकि पेरिशों की मुख्य चिन्ता करों को कम करने की होती थी, अतः वे ऐसा करने के लिए ऐसे परिवारों को अपने क्षेत्र में आने से रोकते थे, जो उन पर भार बन सकते हों। इसका परिणाम यह हुआ कि दरिद्र व्यक्ति एक प्रकार की गुलामी की ओर आकृष्ट होने लगे। हम यहाँ जिस युग का वर्णन कर रहे हैं, उस युग में यह पद्धति इंग्लिश समाज पर घोर कलंक का टीका था। यह समस्या अभी तक बहुत गम्भीर नहीं थी, क्योंकि इस समय दरिद्र व्यक्तियों में बहुसंख्या की स्थिति न्यूनाधिक मात्रा में निश्चित थी, किन्तु अगले युग में जब पुरानी पद्धति बड़ी द्रुत गति से सब क्षेत्रों में भंग हो रही थी, उस समय इस पद्धति के बचे रहने ने बहुत बड़ी मात्रा में अनावश्यक कष्टों को पदा किया और अनावश्यक

रूप से उन बुराइयों को उत्पन्न किया, जिनका आविर्भाव इतने महान् परिवर्तन में किसी भी दशा में अवश्यम्भावी था। ह्विग अल्पतन्त्र की डरपोक और सर्वथा अनिश्चित नीति के विरुद्ध आलोचना का यह एक उचित आधार है कि वे उस समय इस समस्या का व्यापक और उदार रूप से हल करने का कोई प्रयास करने में विफल रहे, जिस समय में यह समस्या अब भी इसे काबू कर सकने योग्य स्थिति में थी।

३. शासक श्रेणियाँ : जमींदार श्रेणी और रईस : एक कुलीनतन्त्रीय समाज

भूस्वामियों तथा धरती की खेती करने वालों समानजातीय समाज के स्वाभाविक नेता जमींदार, सम्पन्न भू-सम्पत्ति रखने वाले अथवा देहाती भद्रजन थे, ये सारे देश में फैले हुए हजारों ग्रामीण मेनर-गृहों (Manor houses) में रहते थे। इस नेतृत्व को इनके द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली राजनीतिक शक्तियों के रूप में स्वीकार किया गया। १३वी शताब्दी से वे इस समुदाय में राजनीतिक दृष्टि से अधिकतम क्रियाशील थे, इसके प्रतिनिधि और इसके वास्तविक शासक थे, जस्टिस ऑफ पीस के रूप में वे स्थानीय स्वशासन का सारा कार्य करते थे। ऐसा कार्य करते हुए उनका नियन्त्रण कभी भी केन्द्रीय सरकार द्वारा नहीं होता था। ट्यूडर तथा स्टीवर्ट वंशों के समय में प्रिवी कौन्सिल उन पर प्रबल निरीक्षण रखती थी। मुख्य रूप से वे इस शक्तिशाली संस्था के स्थानीय कार्यकर्ता थे। किन्तु ह्विग अल्पतन्त्र के समय में—वस्तुतः पुनः स्थापना (Restoration) के समय से—प्रिवी कौन्सिल मुख्य रूप से एक औपचारिक संस्था बन गयी थी। इसका स्थान लेने वाली कैबिनेट उन मन्त्रियों से बनी होती थी, जिनका सम्बन्ध प्रधान रूप से राष्ट्रीय नीति के प्रश्नों से होता था। स्थानीय स्वशासन पर विशेष ध्यान देना किसी व्यक्ति का कार्य नहीं होता था, इस-लिए जस्टिस ऑफ पीस मुख्य रूप से अपने ही साधनों पर छोड़ दिये जाते थे। वे केवल पार्लियामेण्ट द्वारा बनाये सामान्य नियमों के आधीन होते थे। पार्लियामेण्ट के सदस्य लग-भग वही देहाती भद्रजन और जस्टिस ऑफ पीस होते थे। कौण्टी के बड़े शहर में त्रैमासिक न्यायालयों में संयुक्त रूप से बैठते हुए, प्रत्येक कौण्टी के न्यायाधीश सार्वजनिक व्यवस्था के विरुद्ध गम्भीर अपराधों के मामले निपटाया करते थे, कौण्टी के मामलों का प्रबन्ध करते थे, प्रधान मार्गों का नियन्त्रण करते थे और लघु न्यायालयों में, छोटे समूहों में बैठते हुए छोटे अपराधों के मामले निपटाते थे, जब कि निजी व्यक्ति के रूप में अपने मेनरगृह के न्यायकक्ष में वे व्यक्तियों को अभियोगों पर विचार करने के लिए इन्हें अदालतों को सौंपने के विशाल अधिकारों का प्रयोग करते थे, वे गाँव के प्रशासन-कार्य की और विशेषतः निर्धनों की सहायता के प्रबन्ध की देखभाल करते थे।

जस्टिस ऑफ पीस अथवा पुरशासी न्यायपति के रूप में वे जिन अधिकारों का प्रयोग करते थे, उनसे जमींदारों को एक अतीव उल्लेखनीय प्रभुत्व प्राप्त हुआ था। वे अपने गाँव में छोटे राजाओं के समान थे और यदि वे क्षुद्र अत्याचारी शासकों के रूप में व्यवहार करना पसन्द करें, जैसा कि वे कई बार पसन्द करते थे, तो इससे परित्राण पाने का अवसर बहुत कम था। फिर भी समग्र रूप से, उन्होने अपने कर्त्तव्यो का पालन यदि

बड़ी जानकारी के साथ नहीं, तो कम-से-कम सार्वजनिक भावना की तथा पड़ोसी की उत्तम भावना की बड़ी मात्रा के साथ किया। इस शताब्दी का साहित्य जस्टिस ऑफ पीस के सजीव वर्णनों से भरा पड़ा है। किन्तु यदि इनमें क्षुद्र अत्याचारों का प्रतिपादन करने वाले अनेक वर्णन हैं तो इसके साथ इतने ही ऐसे भी वर्णन मिलते हैं, जिनमें यह बताया गया है कि इन्होंने सार्वजनिक कर्त्तव्यों का पालन किस उदारता, सार्वजनिक भावना तथा विशाल हृदयता के साथ किया है। फील्डिंग के "स्क्वायर वेस्टर्न" के वर्णन के मुकाबले में हमें उसका सम्पन्न जमींदार या स्क्वायर एल्वर्थी का चित्रण और एडीसन का सर-रोजर-डी-कवर्ली का वर्णन सामने रखना चाहिए। जब इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कृषि विषयक और औद्योगिक क्रान्ति ने ग्रामीण समाज में एक बडी दरार डाल दी और इंग्लिश ग्रामों को एक बनाये रखने वाली सामुदायिक भावनाओं को नष्ट कर दिया, केवल उसी समय में पुरशासक (Justice of Peace) निर्धनों के शत्रु और उत्पीड़क समझे जाने लगे। इस शताब्दी के पूर्वार्ध में वे अब भी ग्रामीण समाज के मान्य नेता थे। यदि मैदानों के खेलों (Field sports) के प्रति अपने उत्साह में वे शिकार-कानूनों (Game laws) के भंग करने के विरुद्ध पहले से ही अत्यधिक कठोर थे तो यह एक गम्भीर बात नहीं थी, क्योंकि शिकार के कानून अभी तक वैसे उग्र और अत्याचारपूर्ण नहीं बने थे, जैसे कि वे बाद में बन गये। शिकार का संरक्षण अभी तक ग्रामीण भद्रवर्ग की मुख्य दिलचस्पी का विषय नहीं बना था। किसान भी अभी तक ऐसी बुरी हालत में नहीं थे कि वे अपने शरीर-धारण के लिए पूरे तौर से शिकार की चोरी करने के लिए विवश हो जाँय। ये बातें बाद में घटित होती थीं। १७५० ई० में जमींदार अब भी स्वयमेव ग्रामीण समाज के स्वाभाविक नेता थे और वे जिन महान् शक्तियों का प्रयोग करते थे, वे यद्यपि अनियन्त्रित थीं, तथापि समग्र रूप से इनका प्रयोग युक्तियुक्त तथा स्वस्थ रीति से किया जा रहा था। यह ऐसे संगठन की स्वाभाविक विधि को सूचित करता था, जिसके द्वारा इस बात को निश्चित बना दिया गया था कि सामान्य हित के मामलों की व्यवस्था सार्वजनिक भावना के साथ की जानी चाहिए।

जैसे किसान उन्नति करते हुए योमैन (Yeoman) लोगों में मिल जाते थे, वैसे ही स्क्वायर या जमींदार उस सर्वोच्च श्रेणी में मिल जाते थे, जिसे हम रईस या मैगनेट (Magnate) कह सकते हैं। सच तो यह है कि ये बहुत बड़े जमींदार थे। प्रायः देश के अनेक भागों में इनकी जागीरें होती थीं। ये शानदार महलों में राजसी ठाठ-बाठ बनाये रखते थे और प्रति वर्ष एक विशेष ऋतु में लन्दन में एकत्र होते थे। इंग्लैण्ड के ग्रामीण समाज के महान् नेताओं का यह नियमित सम्मिलन, निःसन्देह समूचे इंग्लैण्ड को एकता प्रदान करता था। इस मौसम में राजधानी के अत्यधिक विलासपूर्ण जीवन में इंग्लैण्ड के प्रत्येक भाग के प्रतिनिधि एकत्र होते थे। यह स्वाभाविक था कि समग्र रूप से, रईस प्रधानतः देश का वैसा ही शासन करें, जैसे योमैन मुख्य रूप से गाँव का और जमींदार देहात का शासन करते थे। रईस एक वास्तविक मात्रा में इंग्लैण्ड के स्थानीय जीवन के साथ सम्पर्क रखते

थे। लार्ड लेफ्टिनेण्ट के रूप में वे कौण्टी के मामलों के नेता थे, और निर्वाचन कार्य में[१] उनकी क्रियाशीलता का कम-से-कम यह लाभ था कि यह इन्हें समूचे देश की भावनाओं और इच्छाओं का घनिष्ठ ज्ञान करा देती थी। जब तक उनके हित उनके द्वारा शासित किये जाने वाले लोगों के हितों के साथ नहीं टकराते थे (और अभी तक ऐसी कोई टक्कर प्रकट रूप में नहीं हुई थी) तब तक यह प्रतीत होता था कि ये महान् ग्रामीण रईस एक समानजातीय ग्रामीण समाज के स्वाभाविक नेता और प्रवक्ता हैं। अतः उनकी अत्यधिक राजनीतिक शक्ति राष्ट्रीय मानस की इतनी अप्रतिनिधि नहीं थी, जैसी प्रथम दृष्टि में यह प्रतीत हो सकती है। जब तक ऐसा समय नहीं आया कि सामाजिक पद्धति में परिवर्तन ने उन्हें इंग्लिश समाज का प्राकृतिक नेता अधिक देर तक नहीं बनाये रखा, तब तक वे जनता की सहमति से देश का शासन करते रहे।

इस युग में ब्रिटिश राजनीति में प्रधानता रखने वाले महान् परिवारों का छोटा-सा समूह बहुत सी बातों में महान् सीनेटरों के उन परिवारों से मिलता है, जिसने गणराज्य के अतीव गौरवपूर्ण युग में रोम का शासन किया था। अन्तर्विवाह द्वारा घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध ये परिवार एक अतीव संकीर्ण समाज का निर्माण करते थे। समग्र रूप से, वे उच्चतम रीति से सुसंस्कृत मनुष्यों का समुदाय थे। उनमें कलाओं की उत्तम रुचि तथा साहित्य में वास्तविक आनन्द लेने की प्रवृत्ति थी। उनमें से अनेक व्यक्तियों ने यूनान और रोम के महान् साहित्यों का व्यापक रूप से अध्ययन किया था। उन्होंने विचार की और चिन्तन की अधिकतम स्वतन्त्रता को प्रोत्साहित किया और इसमें आनन्द लिया। इनमें से अनेक रईस विचारकों, साहित्यिकों तथा कलाकारों को अपना संरक्षण प्रदान करते थे। वे व्यापक रूप से विदेशों की, विशेषतः फ्रांस की यात्रा करते थे। उनमें से अनेक व्यक्तियों को यूरोप की परिस्थितियों का गहरा ज्ञान था। यह उन्हें विदेश नीति की समस्याओं का समाधान करने में बड़ा लाभ पहुँचाता था। अपने देहाती महलों में और नगरों के भवनों में वे महान् विलासिता और शान-शौकत का तथा कई बार अनोखे अपव्यय वाला जीवन बिताते थे। लन्दन में अपने सामाजिक कार्यों के केन्द्रों के रूप में उन्होंने जिन क्लबों का निर्माण किया, वे इस बात को निश्चित बनाते थे कि वे लोग एक दूसरे के साथ प्रायः घनिष्ठ सम्बन्ध बनाये रखेंगे। इन अवस्थाओं में राष्ट्रीय राजनीति लगभग एक पारिवारिक कार्य बन गया था।

रईसों में बहुत अभिमान था। उन्हें अपनी प्रतिष्ठा का बहुत ध्यान था। अधिकांश अल्पतन्त्रों को विशिष्ट बनाने वाले दोष और गुण-दोनों उनमें थे। वे इसे ठीक और स्वाभाविक समझते थे कि सारी शक्ति उनके हाथों में रहनी चाहिए, उनको तथा उनके सम्बन्धियों को राज्य के व्यय से दी जाने वाली पेन्शनों और पदों से समृद्ध बनाया जाना चाहिए, किन्तु उनमें वैयक्तिक और राष्ट्रीय सम्मान बनाये रखने की भी एक ऊँची भावना और यह वास्तविक भावना थी कि जनता की सेवा करना कुलीन व्यक्तियों का कर्त्तव्य है।

१. चुनाव के ढंगों का वर्णन पहले अध्याय १ पृ० ६८४ पर देखिये।

अपनी महान् सम्पत्ति के साथ वे सुगमतापूर्वक एक आलसी जीवन बिताने में सन्तुष्ट रह सकते थे। किन्तु उनमें से थोड़े से ही व्यक्ति इस प्रलोभन के वशीभूत हुए; अधिकांश व्यक्तियों ने पार्लियामेण्ट के कार्य में तथा प्रशासनात्मक पदों पर रहते हुए अपने परिश्रमपूर्ण दिन बिताये अथवा समुद्र में अथवा स्थल पर शस्त्रों द्वारा राज्य की सेवा करने के लिए अपने को प्रशिक्षित किया। उनमें से बहुत थोड़े ही आलसी और बातूनी व्यक्ति थे। उन्होंने उस परम्परा को स्थापित करने के लिए बहुत बड़ा काम किया, जो इंग्लैण्ड के सार्वजनिक जीवन में एक सबसे प्रबल वस्तु रही है, यह सामान्यतः वहाँ किसी भी अन्य देश की अपेक्षा प्रबल है। इसके अनुसार उन सभी व्यक्तियों को अपना समय और विचार सार्वजनिक सेवा में लगाना चाहिए, जो व्यक्ति जीविका कमाने की चिन्ताओं में पूर्णरूप से व्यस्त नहीं रहते। उन्हें अपने देश पर तथा इसके कानून का पालन करने वाली स्वतन्त्रता की परम्पराओं पर सच्चा अभिमान था। यदि स्वतन्त्रता विषयक उनका विचार संकीर्ण था, तो जहाँ तक यह जाता था वहाँ तक यह बिलकुल ठीक था। यह एक महान् लाभ था कि स्वतन्त्रता को और सबके लिए समान कानूनों को राज्य में सर्वोच्च शासन करने वाले सिद्धान्तों के रूप में घोषित किया जाय, भले ही इसकी कल्पना संकीर्ण थी। सब बातों को देखने के बाद यह प्रतीत होता है कि विश्व में ब्रिटिश प्रदेश ही लगभग एकमात्र ऐसे प्रदेश थे, जिन्होंने अपने झण्डे पर स्वतन्त्रता और समानता के सिद्धान्तों को चित्रित किया था।

दूसरी ओर रईस ऐसे अन्य देशों की आवश्यकताओं को समझने में मन्द थे, जिन देशों को वे बिलकुल नहीं जानते थे। सब अल्पतन्त्रों को बनाने वाले आत्मसन्तोष ने उन्हें भीषण अन्यायों को देखने के लिए अन्धा बना दिया था, जो अन्याय वे आयरलैण्ड में स्थायी रूप से कर रहे थे। इसने उन्हें समुद्र पार के तरुण देशों में राष्ट्रमण्डल की एकता के साथ स्वतन्त्रता का समन्वय करने की समस्या के विस्तार और कठिनाई को समझने में भी असमर्थ बनाया। कुलीन व्यक्तियों का यह समुदाय न्यू इंग्लैण्ड के लोकतन्त्रीय समाज को न तो समझ सकता था और न ही उसके साथ सहानुभूति रख सकता था। सबसे बढ़ कर यह बात थी कि वे अपने देश के निर्धन व्यक्तियों की आवश्यकताओं और पीड़ाओं को समझने में बिलकुल असमर्थ थे। वे राज्य के बारे में इस विचार की ऊँचाई तक नहीं उठ सकते थे कि राज्य सामान्य सुख के लिए एक महान् एवं स्वतन्त्र हिस्सेदारी है। कहीं भी इस विचार का उत्थान बड़ा शनैः शनैः होता है। यह विचार अभी तक यूरोप के किसी देश में नहीं था, किन्तु इस लघु, उज्ज्वल, शक्तिशाली समाज के आत्मसन्तोष ने इसे ऐसे आदर्श के लिए अभेद्य बना दिया। वे समूचे राष्ट्र को अपनी छत्रछाया में तथा अपने संरक्षण में सुरक्षित रहने वाला समझते थे। वे यह समझते थे कि निर्धन लोग अपनी आजीविका और सुरक्षा के लिए धनी लोगों के ऋणी हैं। बर्क के शब्दों में वे ऐसे महान् शाहबलूत या बाँझ (Oak) के पेड़ हैं, जो व्यक्तियों को शरण देते हैं। किन्तु वे यह नहीं देखते थे कि उनकी फैलती हुई जड़ें प्रायः जमीन की खेती में बाधा डालती हैं, उनकी घनी शाखाएँ प्रायः सूर्य की धूप को रोकती हैं।

यह बात अगले युग में उस समय भीषण रूप से स्पष्ट होनी थी जब एक महान्

सामाजिक परिवर्तन ने इंग्लिश साम्राज्य के समूचे ढाँचे को बदल दिया। उस युग में महान् परिवारों की प्रभुता ब्रिटिश जनता के सामाजिक स्वास्थ्य के लिए वैसी ही घातक थी, जैसी रोम के गणराज्य की अन्तिम शताब्दी में सीनेटरों के अल्पतन्त्र की प्रभुता इटली के लिए घातक थी। किन्तु अभी तक अल्पतन्त्रीय शासन का यह दुष्परिणाम प्रकट नहीं हुआ था, क्योंकि महान् भूस्वामी ऐसे राष्ट्र के स्वाभाविक नेता थे, जो राष्ट्र अब भी मुख्य रूप से भूमि में दिलचस्पी रखने वाले व्यक्तियों से बना हुआ था। यह बात उचित रूप से कही जा सकती है कि अपने दोषों के बावजूद महान् परिवारों के शासन ने देश की वास्तविक सेवा कई रूपों में की थी। इसने निरंकुश शासन की सम्भावना को नष्ट किया, इसने संसदीय शासन के यन्त्र को ऐसे रूप में पूर्ण बनाया, जिसे शासन में अधिक वास्तविक रूप वाले राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकताओं के लिए पूर्ण करने के लिए समर्थ बनाया जा सकता था। इसने राष्ट्रीय सम्मान की उच्च भावना को तथा सार्वजनिक सेवा के दायित्व की एक उत्तम परम्परा को बनाये रखा।

१८वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड के जीवन की प्रधान विशेषता भूमि पर स्वामित्व रखने वाले रईसों का असाधारण उत्कर्ष था। यह राष्ट्र के जीवन में भूमि-विषयक हितों की प्रधानता का स्वाभाविक परिणाम था। किन्तु यह राष्ट्र के जीवन और विचार से सम्बन्ध रखने वाले लगभग समूचे संगठन पर विस्तीर्ण था। राज्य द्वारा स्थापित चर्च (Established Church) को कुलीन व्यक्तियों को पद देने के लिए राज्य का अंगमात्र समझा जाता था। निम्नतम पदों के अतिरिक्त, इसके अन्य सभी पद जमींदारों और रईसों के तरुण पुत्रों के लिए सम्माननीय स्थान प्रस्तुत करते थे। इसके बिशप और डीन महान् परिवारों के सदस्य अथवा उनके आश्रित व्यक्ति होते थे। वे उनके जीवन और विचारों में भाग लेते थे, इसके पेरिश चर्च अथवा ग्रामीण चर्च के पदाधिकारी जमींदार श्रेणी के होते थे। प्रायः ये उनके साथ न्यायासन पर बैठा करते थे और धार्मिक कर्त्तव्यों की अपेक्षा सार्वजनिक कर्त्तव्यों की ओर अधिक ध्यान दिया करते थे। चर्च का कार्य यह होना चाहिए था कि वह स्वतः उत्तम, प्रतिष्ठित और व्यवस्थित हो तथा लोगों को ऐसा होने की शिक्षा दे, उसका कार्य उन्हें उदात्त रीति से जीवन बिताने के लिए चुनौती देना अथवा यह स्मरण कराना नहीं था कि वे भगवान् के पुत्र थे।

कानून का पेशा इससे भी अधिक प्रत्यक्ष रूप से शासक श्रेणी के साथ सम्बद्ध था और उससे नियन्त्रित था। सभी महान् न्यायिक पदों पर इस श्रेणी के सदस्य सुप्रतिष्ठित थे और इनमें से उच्चतम पद प्रायः लार्ड सभा के भीतरी कक्ष में प्रवेश की अधिकतम प्रचलित पद्धति का निर्माण करते थे। इस पद्धति ने वास्तव में कुछ महान् वकीलों को उत्पन्न किया, क्योंकि महान् परिवारों में कानून के प्रति गम्भीरतम आदर था, वे इसकी व्याख्या करना और इसे लागू करना राज्य का उच्चतम कार्य समझते थे। किन्तु वकील अनिवार्य रूप से अपने कार्यों को उस श्रेणी के विचार के प्रकाश में देखते थे, जिस श्रेणी के वे सदस्य थे। वे इस मौलिक विचार के प्रधान समर्थक थे कि भूमि पर स्वामित्व रखने वाली श्रेणी राज्य का अधिकतम आवश्यक और महत्वपूर्ण तत्व है।

महान् परिवारों ने विश्वविद्यालयों पर वास्तव में अधिकार किया हुआ था। उनके पुत्र विशेष अधिकारों के साथ विश्वविद्यालयों में उपस्थित होते थे। वे कुलीन व्यक्ति को सूचित करने वाली एक कलगी या शिखा धारण करते थे। विश्वविद्यालय के अध्यापक और शिक्षक पदोन्नति के लिए कुलीन व्यक्तियों का संरक्षण पाना चाहते थे और वे कलगी के अथवा इसे धारण करने वाले बड़े व्यक्तियों के पिछलग्गू बन गये थे। चर्च, कानून अथवा सार्वजनिक जीवन के लिए अपने को तैयार करने वाले उपस्नातकों की अधिकांश संख्या या तो जमींदार श्रेणी से सम्बन्ध रखती थी, अथवा अपने भावी जीवन के लिए शासक श्रेणियों की ओर निहारा करती थी। इस प्रकार विश्वविद्यालय ऐसा कीप (Funnel) बन गये थे जिनके माध्यम से देश के सभी योग्य पुरुष अल्पतन्त्र की सेवा में चूस लिये जाते थे। इसी प्रकार ईटन और विन्चेस्टर, वेस्टमिंस्टर और हैरो के वे महान् पब्लिक स्कूल थे, जो आरम्भ में निर्धन विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए स्थापित किये गये थे, किन्तु बाद में वे कुलीनतन्त्र के प्रशिक्षण का स्थान बन गये। यहाँ स्पार्टा जैसी कठोर परिस्थितियों में शासक श्रेणी के पुत्रों को राजभक्त, भद्रजन और उत्तम खिलाड़ी बनने का और पुराने रोम की उस दुनियाँ की कुछ बातें जानने का प्रशिक्षण दिया जाता था, जिस रोम को इन्हें अपने जीवन में पुनः उत्पन्न करना था। इन स्कूलों के माध्यम से राजभक्ति और स्वशासन की अपनी परम्पराओं से तथा आत्मसंयम के एक कठोर और उत्तम स्वरूप बनाये रखने के नियमों पर आग्रह के द्वारा १८वीं शताब्दी के अभिमानी कुलीनतन्त्र ने इंग्लिश जीवन के किसी अन्य अंश की अपेक्षा अधिक पूर्णता के साथ अगली पीढ़ियों को उस वस्तु की विरासत प्रदान की, जो उनके आचरण में और आदर्शों में सर्वोत्तम वस्तु थी, इसने इसे शनैः शनैः जनसंख्या के अन्य भागों में फैलाया।

४. व्यापारिक और औद्योगिक हित : पूँजीवादी नियन्त्रण का विकास

चर्च, कानून और देश की अधिकतम प्राचीन और शक्तिशाली शिक्षा संस्थाओं द्वारा इस प्रकार का समर्थन पाने से भूमि का स्वामित्व रखने वाले कुलीनतन्त्र का प्रभुत्व और भी अधिक पूर्ण हो गया, क्योंकि उस समय तक कोई अन्य आर्थिक हित नहीं थे, जो महत्व की दृष्टि से भूमि के हितों के तुल्य हों। यद्यपि व्यापार और उद्योग के विकास से ब्रिटिश प्रदेशों की सम्पत्ति बढ़ रही थी और विश्व में उनकी स्थिति सुप्रतिष्ठित हो रही थी—इसी कारण व्यापारिक और औद्योगिक प्रश्न सरकार और पार्लियामेण्ट का अधिक ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे, तथापि इन महान् हितों के प्रतिनिधियों को बहुत कम प्रत्यक्ष राजनीतिक अधिकार था, वे राष्ट्रीय नीति के मामलों में प्रभाव डाल सकते थे और प्रभाव डालते थे; किन्तु वे इन मामलों का सीधा नियन्त्रण नहीं करते थे।

भूमि-विषयक हितों से पृथक् रहते हुए अधिकतम प्रभावशाली समूह महान् बैंक-व्यवसायियों और विदेशी व्यापारियों का था। इनमें से कुछ लन्दन के अथवा एक या दो प्रधान बन्दरगाहों के सदस्यों के रूप में पार्लियामेण्ट में बैठते थे। वस्तुतः इनकी संख्या बहुत कम थी। वे उस समय की सबसे बड़ी वित्तीय संस्थाओं, बैंक ऑफ इंग्लैण्ड, ईस्ट इण्डिया

कम्पनी, साऊथ सी कम्पनी, अफ्रीकन कम्पनी के प्रधान कार्यालय को रखने वाले लन्दन शहर में अधिकांश रूप में एकत्रित थे। अपने निजी व्यवसायों से बचाया जा सकने वाला उनका सारा विचार और अवकाश इन महान् संस्थाओं के प्रबन्ध में ही लग जाता था, वे भूस्वामी रईसों के हाथों में राष्ट्रीय मामलों की व्यवस्था छोड़ कर सन्तुष्ट थे। बैंकों तथा अन्य महान् कम्पनियों के माध्यम से वे वस्तुतः बहुत बड़ी शक्ति का प्रयोग करते थे। इसका विशेष कारण यह था कि राष्ट्रीय युद्धों को चलाने के लिए धन यही लोग दिया करते थे। वे प्रायः किसी भी राजनीतिक अधिकार का प्रयोग न करते हुए अथवा कोई सार्वजनिक पद न रखते हुए भी, औद्योगिक और व्यापारिक नीति के सम्बन्ध मे अपनी शर्तों को मनवाने में सामान्य रूप से समय थे, क्योंकि कोई भी सरकार इनकी अवहेलना करने का साहस नही करती थी। इसके अतिरिक्त शासक श्रेणियों के साथ उनका चिरकाल से घनिष्ठ सम्बन्ध था। इनमें से अधिकांश भूस्वामी तथा कुलीनतन्त्र का सदस्य बनने की महत्वाकांक्षा रखते थे और अपना अधिकांश धन जागीरें खरीदने में व्यय करते थे। उनका प्रभाव इतना शक्तिशाली था कि वे इस विषय में अपने विचारों की विजय को सुनिश्चित बना सकते थे कि आर्थिक नीति के क्षेत्र मे राष्ट्रीय हित क्या होना चाहिए। इसने पार्लियामेण्ट के कानूनों पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ा है। किन्तु जो नाविक और क्लर्क इनके लिए सारा कार्य करते थे, राष्ट्रीय सरकार मे उनका कोई प्रत्यक्ष प्रवक्ता नहीं था। यह देखना किसी व्यक्ति का कार्य नही था कि वे जीवन की उत्तम परिस्थितियों का उपभोग कर सकें।

१८वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इंग्लैण्ड के अभिमान करने का मुख्य विषय और प्रधान हित विदेशी व्यापार का विकास था। किन्तु इसने हस्तोद्योगों का भी महान् विस्तार किया था, हस्तोद्योग पद्धति अब एक संकट में से गुजरने लगी थी। इसका कारण यह तथ्य था कि पुरानी विधियो के अनुसार इसके सम्भावित विस्तार की सीमाएँ लगभग पूरी हो चुकी थी।

इस समय इंग्लैण्ड का सबसे बड़ा उद्योग ऊनी वस्त्रों का था। इसकी किसी अन्य उद्योग से तुलना नहीं हो सकती थी। इसमें अब भी सारा काम हाथों के करघों द्वारा किया जाता था, किन्तु हथकरघों से उत्पन्न किये जाने वाले कपड़े की मात्रा सूत की उस मात्रा पर निर्भर थी, जो कातने वालों द्वारा काता जा सकता था। सूत अब भी स्त्रियों द्वारा काता जाता था, ये अपने घरों पर पुराने ढर्रे के चरखे से सूत कातती थीं। सूत की माँग इतनी अधिक थी कि लगभग देश के प्रत्येक भाग में निर्धन व्यक्तियों की पत्नियाँ और पुत्रियाँ कताई करके पारिवारिक आमदनी में एक ठोस वृद्धि करती थी। फिर भी प्रायः यह असम्भव होता था कि जुलाहों के करघों को पूरे समय तक काम के लिए चालू रखा जाय, इसका यह परिणाम हुआ कि अनेक जुलाहों ने अपनी झोपड़ियों में करघे का काम करने के साथ-साथ थोड़ी जमीन पर खेती का काम भी शुरू कर दिया। यह स्थिति विशेष रूप से यार्कशायर के ऊनी क्षेत्र में वेस्ट राइडिंग की घाटियों में थी। यह व्यापार मुख्य रूप से गृह उद्योग के रूप में था। जुलाहा अपने करघे पर उस सूत से कपड़ा बुनता था, जो सूत

उसकी पत्नी ने, उसकी पुत्रियों ने तथा पड़ोस की अन्य स्त्रियों ने काता होता था। वह अपना कपड़ा बेचने के लिए इसे लीड्स की मण्डी में ले जाता था और बीच के खाली समय में वह अपनी खेती करता था। इन परिस्थितियों में वह अपने स्वास्थ्य को हानि पहुँचाये बिना करघे पर लम्बे समय तक काम कर सकता था, वह स्वयं अपना स्वामी था वह अपने काम करने के घण्टे स्वयं निश्चित करता था।

किन्तु अन्य क्षेत्रों में, विशेष रूप से इंग्लैण्ड के पश्चिमी भाग (विल्टशायर, सोमरसेट, डोरसेट) में चिरकाल से व्यवहार में आने वाली उद्योग के संगठन की एक नयी पद्धति अब निश्चित रूप से प्रबल हो गयी। यहाँ पूँजीपति ने उद्योग को अपने हाथ में ले लिया। "वस्त्रव्यवसायी" (Clothier) के नाम से प्रसिद्ध धनी व्यक्ति जुलाहों की एक बड़ी संख्या को नौकर रखते थे। वे कई बार उन्हें अपने करघे देते थे अथवा उन्हें अपने निरीक्षण में एक केन्द्रीय स्थान में काम करने के लिए इकट्ठा करते थे और एक विशाल क्षेत्र के कातने वालों से खरीदा सूत उन्हें प्रदान करते थे। इन परिस्थितियों में जुलाहे स्वयमेव अपने स्वामी नहीं रहते थे, न्यूनाधिक मात्रा में वे एक निश्चित मजदूरी पर मालिक के लिए काम करने वाले "हाथ" (Hands) मात्र बन जाते थे। इस पद्धति में कुछ लाभ थे। इससे श्रम की बचत होती थी। इससे हस्तोद्योग की विभिन्न दशाओं का एक अधिक अच्छा संगठन उत्पन्न हो गया। इसने ब्रिटेन की अथवा दूसरे देशों की मण्डी की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण रीति से वस्त्रों के प्रकारों और नमूनों का निश्चित किया जाना सम्भव बनाया। किन्तु इसने जुलाहों को उन वस्त्र व्यवसायियों की दया पर बहुत कुछ छोड़ दिया, जिसके लिए वे काम करते थे। इसने जुलाहों से उनकी स्वतन्त्रता छीन ली। वस्त्रव्यवसायी को यह प्रलोभन होता था कि वह मजदूर से अधिक घण्टों तक काम करने की माँग करे और उसे न्यूनतम मजदूरी दे, इससे उसे जुलाहों के श्रम का लाभ मिल सकता था।

कारीगर को अब उन पुरानी शिल्पी श्रेणियों (Craft-Guilds) का संरक्षण नहीं प्राप्त था, जो मध्य युग में सहयोगपूर्ण समझौते से मजदूरी की अवस्थाओं का नियन्त्रण करती थी। जब शिल्पी श्रेणियों का भंग हुआ तो ट्यूडर तथा स्टीवर्ट सरकारों ने प्रधान रूप से पुरशासकों या जस्टिस ऑफ पीस (Justice of Peace) के माध्यम से मजदूरी की दरों को और (कुछ कम मात्रा में) श्रम की अवस्थाओं को नियन्त्रित करके शिल्पी श्रेणियों का कार्य करने का प्रयत्न किया। किन्तु ह्विग अल्पतन्त्र में श्रमिकों के लिए संरक्षण की राष्ट्रीय पद्धति को विकसित करने का प्रयास छोड़ दिया गया और जुलाहों को (और इसी प्रकार उन उद्योगों के मजदूरों को भी जो इस समय पूँजीपतियों के नियन्त्रण में चले आ रहे थे) उस समय तक बिना किसी संरक्षण के छोड़ दिया गया, जब तक वे अपनी रक्षा के लिए किसी भी प्रकार की कोई व्यवस्था न कर सकें। शासक श्रेणी की दृष्टि से महान व्यवसायी ही उद्योग के संगठन और विस्तार के लिए उत्तरदायी थे। इनके कार्यों में हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए था और निःसन्देह यह सत्य था कि यदि वस्त्रव्यवसायियों ने अधिक अच्छा संगठन न बनाया होता तो इस उद्योग का बड़ी कठिनाई से ही वैसा

विस्तार हुआ होता, जैसा इसने किया था। किन्तु सम्पत्ति की वृद्धि की अपेक्षा कहीं अधिक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय हित यह था कि जनसंख्या को स्वस्थ तथा आत्मसंयमी बना कर रखा जाय। इस पद्धति ने इस बात की उपेक्षा की थी। नयी पद्धति के विकास के परिणामस्वरूप अभी तक कोई अतीव व्यापक बुराइयाँ उत्पन्न नहीं हुई थीं, क्योंकि अभी तक जुलाहा मुख्य रूप से घर पर काम करता था। प्रायः उसके पास अपनी जमीन का टुकड़ा होता था। उसे सामान्य रूप से ऐसी रिवाजी मजदूरी दी जाती थी, जिसका जीवन-निर्वाह के व्यय के साथ कुछ सम्बन्ध होता था। किन्तु अनेक जुलाहे अतीव अस्वास्थ्यजनक परिस्थितियों में रहते थे। वे बहुत अधिक घण्टों तक काम करते थे। वे अपनी वास्तविक स्वतन्त्रता खो रहे थे, वे अपने बच्चों के लिए अथवा बुढ़ापे के लिए समुचित व्यवस्था करने में असमर्थ थे। अब पहले से ही उन कारुणिक कष्टों की कुछ झलक मिलने लगी थी, जो कष्ट उस समय बढ़ने थे, जब अगले युग के महान् आविष्कारों द्वारा नवीन औद्योगिक परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाने लगीं।

इंग्लैण्ड के प्रधान उद्योग ऊनी हस्तोद्योग के बारे में जो बात कही गयी है, वह लंकाशायर के शिशु वस्त्रोद्योग के बारे में समान रूप से सत्य है। यह इस समय अलसी के रेशे और रुई के मिश्रण से बुने जाने वाले ऐसे वस्त्रों को पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न करने लगा था, जो उष्ण कटिबन्धीय व्यापार के लिए अतीव उपयुक्त था अथवा यह बात उस रेशमी वस्त्रोद्योग के लिए भी सत्य है, जो इस समय स्पिटलफील्ड्स नामक स्थान में तथा अन्यत्र विकसित हो रहा था। यद्यपि इस समय अगले युग जैसे भीषण कष्ट नहीं उत्पन्न हुए थे, फिर भी काफी कष्ट था। बढ़ता हुआ व्यापार और उद्योग इंग्लैण्ड में जिस सम्पत्ति को ला रहा था, उस सम्पत्ति का एक छोटा अंश ही परिश्रम करने वाले निर्धन व्यक्तियों के जीवन की दशाओं को सुधारने में लग रहा था। उद्योग का जिस ढंग से संगठन हुआ था, उसके कारण यह उद्योग राष्ट्र के अधिकांश मनुष्यों में कोई सुधार नहीं उत्पन्न कर रहा था। किन्तु उद्योग में लगी हुई आबादी का अनुपात अब भी इतना कम था कि इस बात की महत्ता को अनुभव नहीं किया गया था।

यह बात खनन उद्योगों के सम्बन्ध में और भी अधिक सत्य थी। ये उद्योग लगभग आवश्यक रूप से पूंजीपतियों के नियन्त्रण में आ गये। अभी तक खनन एक छोटा उद्योग था। इंग्लैण्ड में लोहे के क्षेत्र अधिक उत्पादन करने के स्थान पर कम उत्पादन कर रहे थे, क्योंकि लोहे को लकड़ी जला कर ही गलाया जा सकता था और लकड़ी की पूर्ति निरन्तर कम हो रही थी। यह कठिनाई ससेक्स में विशेष रूप से अनुभव की जा रही थी। यह अब तक इंग्लैण्ड के लोहे की पूर्ति का प्रधान स्रोत था। कोयले का उपयोग अभी तक घरों में आग जलाने के लिए होता था। यह अभी तक सभी उद्योगों की वैसी कुन्जी नही बना था, जैसी कुन्जी यह अगले युग में द्रुत गति से बन गया और केवल थोड़ी सी खानों से ही मुख्य रूप से, न्यू कैसल के जिले में और विगन के क्षेत्र में कोयला निकाला जाता था। किन्तु यह उद्योग कहीं भी होता हो, खनन के उद्योग के साथ सबसे बुरा व्यवहार किया जाता था और खनिकों को सार्वभौम रूप से राष्ट्र में अधिकतम

नीच और पाशविक तत्व समझा जाता था। उनकी आवश्यकताएँ और दावे तब तक पूर्ण रूप से उपेक्षित रहे, जब तक ह्वाइटफील्ड और वेसलीबन्धु उन्हें धर्म का सन्तोष देने के लिए और यह स्मरण कराने के लिए नहीं आये कि वे भी भगवान् के पुत्र हैं और परलोक की दृष्टि से राष्ट्र के मामलों की व्यवस्था करने वाले यशस्वी एवं सुसंस्कृत कुलीन व्यक्तियों के समान ही महत्व रखते हैं।

यह बात अन्यायपूर्ण होगी कि हम इस युग की शासक श्रेणी को इस बात के लिए अनुचित रूप से दोष दें कि वे उन व्यक्तियों के लिए संरक्षण की एक ऐसी बुद्धिमत्तापूर्ण व्यवस्था को विकसित करने में विफल हुए, जो व्यक्ति हस्तोद्योगों में लगे हुए थे। वे इन उद्योगों के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। वे इस बात के लिए उत्सुक थे कि देश में उद्योग और व्यापार को यथासम्भव द्रुतगति से विकसित किया जाना चाहिए। वे यह विश्वास करते थे कि इसके परिणामस्वरूप होने वाली प्रत्येक वृद्धि से कारीगरों को और अनेक मालिकों को समान रूप से लाभ होना चाहिए। वे यह सोचते थे कि ब्रिटिश व्यापार को बढ़ाने का सबसे उत्तम उपाय यह था कि विदेशों के साथ व्यापारिक समझौते किये जायँ, नयी मण्डियाँ खोजी जायँ और आयरलैण्ड तथा उपनिवेशों के कारण होने वाली होड़ को अपनी शक्ति से नष्ट किया जाय। यह इस युग का सार्वभौम विश्वास था। यह केवल एक छोटी शासक श्रेणी का संकीर्ण दृष्टिकोण नहीं था। राष्ट्रीय कल्याण के साथ सम्बन्ध रखने वाले राष्ट्रीय उद्योग के संगठन को प्रभावित करने वाली जटिल तथा कठिन समस्याओं का अनुसन्धान अभी केवल आरम्भ ही हो रहा था। एडम स्मिथ ने अभी अपनी वह महान् पुस्तक लिखी थी, जो इन समस्याओं पर बुद्धिमत्तापूर्ण चिन्तन का आधार बने। जब अधिकतम कुशाग्र-बुद्धि इन समस्याओं पर लगायी जाने लगी, उस समय भी आरम्भ में जो सिद्धान्त सुप्रतिष्ठित प्रतीत होते थे, वे इस विश्वास को उचित सिद्ध करते हुए जान पड़ते थे कि उद्योग की प्रक्रियाओं में हस्तक्षेप करने का प्रयास अनर्थकर ही होगा। किन्तु किसी व्यक्ति को दोष दिये बिना हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ब्रिटेन की सम्पत्ति और शक्ति का उज्ज्वल विकास होने के साथ-साथ कुछ बुराइयाँ भी थी। वे यद्यपि अभी तक अस्पष्ट थी, किन्तु यह निश्चित था कि वे आगे चल कर अधिक गहरी और बड़ी हो जायेंगी।

देश का शासन करने में वस्तुतः हस्तोद्योगों के तथा व्यापार के हितों को कोई हिस्सा प्राप्त नहीं था, मैनचेस्टर जैसे इनके कुछ प्रमुख केन्द्रों का पार्लियामेण्ट में कोई प्रतिनिधित्व नहीं था। जो बरो पार्लियामेण्ट में सदस्य भेजते थे उनमें से अधिकांश का प्रतिनिधित्व भूस्वामियों के हित से नियन्त्रित था, इस बात को हम देख चुके हैं।[१] किन्तु कुछ अंशों में उनके पास स्थानीय शासन का अपना तन्त्र था। बड़ी अथवा छोटी प्रत्येक बरो में एक नगर परिषद् होती थी। इसका क्षेत्राधिकार केन्द्रीय सरकार के किसी भी नियन्त्रण से मुक्त था। यह सत्य है कि इन परिषदों का जनता द्वारा निर्वाचन नहीं होता था, किन्तु

१. ऊपर देखिए अध्याय १, पृ० ६८४

लगभग सार्वभौम रीति से इनकी सदस्यता का स्थान रिक्त होने पर उन्हें उसी समय भर दिया जाता था। ऐसे व्यक्तियों की कुल संख्या बहुत अधिक थी, जो इन परिषदों के माध्यम से सार्वजनिक मामलों की व्यवस्था में कुछ हिस्सा लेते थे और अनेक बरो या नगरों में इसके अध्यक्ष, मेयर और बेलिफ (जिले में राजा के प्रतिनिधि) स्वतन्त्र व्यक्तियों के समूचे समुदाय से चुने जाते थे।

फिर भी, नगर परिषदें अपने कार्यों में कोई विशाल या उदार दृष्टिकोण नहीं रखती थीं। वे केवल नगरवासियों के एक विशेषाधिकारप्राप्त समूह का प्रतिनिधित्व करती थीं। उनका मुख्य कार्य इन नगरवासियों को विरासत में प्राप्त होने वाली सम्पत्तियों तथा विशेषाधिकारों की व्यवस्था करने का, नगरभूमियों का, नगर में आने वाली वस्तुओं पर दिये जाने वाले करों का तथा नगर की मण्डियों का प्रबन्ध करना था। वे किसी भी ऐसे नये कर्त्तव्य को लेने के लिए अनिच्छुक थीं, जैसे सड़कों की फर्शबन्दी करना और उन विकसित होते हुए शहरों की प्रणाली-पद्धति की तथा जलपूर्ति की व्यवस्था करना, जो व्यापार और उद्योग के विकास से बन रहे थे। इन नयी आवश्यकताओं के लिए नयी संस्थाएँ बनने लगीं। ये विशिष्ट बरो के निवासियों द्वारा आवेदन पत्र दिये जाने पर पार्लियामेण्ट के निजी कानूनों से बनायी जाती थीं। सामान्य रूप से ये नयी संस्थाएँ करदाताओं द्वारा चुनी जाती थीं। उन्हें उन विशेष सेवाओं के लिए कर लगाने का अधिकार था, जिन्हें करने के लिए इन्हें स्थापित किया जाता था।

इस युग में इंग्लैण्ड में नगरों के स्थानीय शासन की पद्धति इतनी अधिक जटिल और परिवर्तनशील थी कि कुछ वाक्यों में इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। यह किसी एक पद्धति का अनुसरण नहीं करती थी। यह स्थान-स्थान पर बदलती रहती थी। यह केन्द्रीय सरकार द्वारा नियन्त्रित नहीं थी। अधिकतम शक्तिशाली बरो में भी कोई ऐसी सत्ता इस प्रकार के पर्याप्त अधिकार रखने वाली नहीं होती थी, जो इसकी बढ़ती हुई जन-संख्या की सभी आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ हो सके। जिन स्थानों को मध्ययुग से राजा से प्राप्त होने वाले चार्टर या राजाज्ञा-पत्र द्वारा अधिकार नहीं मिले थे, वे चाहे कितने बड़े और महत्वपूर्ण क्यों न हों, उन्हें गाँव वाले संगठन—पुराने सामन्ती मेनर-न्यायालय और पेरिश वेस्ट्री (Parish Vestry) या ग्राम सभा से सन्तुष्ट रहना पड़ता था। इस अराजक पद्धति ने अथवा पद्धति के अभाव ने द्रुत परिवर्तन के अगले युग में कई बड़ी बुराइयाँ उत्पन्न कीं। इस युग में इंग्लैण्ड का शासन करने वाले अल्पतन्त्र को यह दोष अच्छी तरह से दिया जा सकता है कि उसने नगरों में शासन की व्यवस्थित और क्षमतापूर्ण पद्धति स्थापित करने के लिए कुछ भी नहीं किया, किन्तु अभी तक इस अवस्था के दोष बहुत अधिक नहीं प्रकट हुए थे। अब तक मध्ययुगीन शासनयन्त्र युक्तियुक्त रीति से अच्छी तरह कार्य कर रहा था और इस बात को बताना यहाँ उचित प्रतीत होता है कि इस समय संकीर्ण अधिकारों वाली नगर परिषदों में, इनके दोषों को दूर करने के लिए बनाये गये नवीन बोर्डों में और बड़े नगरों की भाँति गाँवों में भी निर्धनों की सहायता का प्रशासन करने वाले पेरिश वेस्ट्रियों में और अनेक नये तथा कठिन कार्यों को करने वाले पुराने परम्परागत मेनर-न्यायालयों में,

वस्तुतः मनुष्यों की एक बड़ी संख्या स्वशासन की कलाओं का अभ्यास कर रही थी और इसके परिणाम उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण थे, जैसे परिणामों की आशा की जाती थी। इंग्लिश लोग अब भी स्वशासन करने वाली जनता थी, यद्यपि उनकी इस पद्धति के पुनर्निर्माण की आवश्यकता थी। यह उस दबाव को सहने के लिए उपयुक्त नहीं थी, जो दबाव शीघ्र ही इस पर पड़ने वाला था।

५. स्काटलैण्ड में समृद्धि का विकास

१८वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध स्काटलैण्ड के लिए एक नवयुग का आरम्भ था। जब यह शताब्दी शुरू हुई तो स्काटलैण्ड अब भी एक दरिद्र देश था। यह उपद्रव और अव्यवस्था से परिपूर्ण था, विशेष रूप से हाइलैण्ड्स जनजातीय अराजकता और बर्बरता की दशा में थे। राष्ट्र के जीवन में आशा और उज्ज्वल भविष्य की लगभग एकमात्र विशेषताएँ उसके चर्च का कठोर अनुशासन तथा उसके स्कूलों और निर्धनता से पीड़ित विश्वविद्यालयों का कार्य था। सभ्यता के सभी भौतिक पहलुओं में वह इंग्लैण्ड से तीन शताब्दी पीछे था। स्काटलैण्ड में लोलैण्ड्स (निम्नभूमियों), हाइलण्ड्स के दोनों प्रदेशों में घरों की दीनता और गन्दगी से, जनता के अधिकांश भाग की निर्धनता से, भिखारियों के बाहुल्य से, कृषि तथा उद्योग के पिछड़ेपन से यात्री आश्चर्यचकित होते थे। इंग्लैण्ड में प्रत्येक किसान गेहूँ की जो रोटी खाता था, वह स्काटलैण्ड में धनाढ्य व्यक्तियों का विलास समझा जाता था। उस समय यहाँ का लगभग सार्वभौम भोजन शहद से मिश्रित जई का दलिया होता था। इसे कई बार (किसी भी दशा मे, हाईलैण्ड्स मे) जीवित गौ के खून से अथवा मटर से पुष्टिकर बना लिया जाता था। आधी आबादी नंगे पैर चलने वाली प्रतीत होती थी। कृषि का विकास पुराने मध्यकालीन प्रतिबन्धों के कारण तथा प्रयुक्त किये जाने वाले उपकरणों और पद्धतियों के अपर्याप्त होने से अवरुद्ध था। कोई महत्वपूर्ण उद्योग नहीं थे। यहाँ तक कि देश को घेरने वाले, मछलियों से भरे समुद्रों में मछलीगाहें अविकसित थी, इनका लाभ स्काटिश जहाजों की अपेक्षा कहीं अधिक डच जहाज उठाते थे। विदेशी व्यापार लगभग नगण्य था। न केवल हाईलैण्ड्स अपने आप में अकल्पनीय गँवारपन और अराजकता की दशा मे थे, किन्तु लोलैण्ड्स पर हाईलैण्ड्स के डाकू सदैव हमले करते रहते थे। हाईलैण्ड्स के गोरु-चोरों में अधिकतम प्रसिद्ध रॉब राय मैकग्रेगोर के दुष्कार्य इस समय पराकाष्ठा पर पहुँचे हुए थे। वह अपने पड़ोसियों के साथ लड़ाई कर रहा था, अपने कानून की रक्षा से बाह्य होने को चुनौती दे रहा था और लूट के माल से जीवन बिता रहा था। वह ८० वर्ष की आयु मे, १७३६ ई० मे अपने बिस्तर पर शान्तिपूर्ण रीति से दिवंगत हुआ।

स्काटलैण्ड चार तथ्यो के कारण इन कष्टों से अपना उद्धार करने में समर्थ हो सका। पहली बात इंग्लैण्ड के साथ एकीकरण था, इसने उसे अपने व्यापार और उद्योग के विकास का अवसर दिया। दूसरी बात १७४५ ई० के बाद हाईलैण्ड्स में जनजातीय अराजकता का विध्वंस तथा हाईलैण्ड्स में सरदारों के अधिकारों की समाप्ति और कुल्लोडन के बाद १७४७ ई० में "उत्तराधिकार में मिल सकने वाले क्षेत्राधिकारों" के विध्वंस से

सामन्ती सरदारों के अधिकारों की समाप्ति थी। तीसरी बात धार्मिक अत्याचार का बन्द हो जाना था, यह क्रान्ति का परिणाम था। अन्त में चौथी बात लोक-शिक्षण की सार्वभौम पद्धति का विकास था। इसकी योजना नॉक्स ने बनाई थी, किन्तु १८वीं शताब्दी तक इसे पूर्ण रूप से लागू नहीं किया गया था। निःसन्देह इन घटनाओं ने तात्कालिक परिणाम नहीं उत्पन्न किये, उदाहरणार्थ, एकीकरण का लाभदायक परिणाम लगभग १७३० ई० तक प्रकट नहीं हुआ था। किन्तु इस शताब्दी के मध्य तक ज्वार का रुख पलट चुका था और आधुनिक स्काटलैण्ड जन्म ले रहा था।

सम्भवतः हाईलैण्ड्स में परिवर्तन सबसे अधिक स्पष्ट था, यहाँ जनजातीय युद्ध की समाप्ति के अतिरिक्त पहले परिणाम बिलकुल सुखदायी नहीं प्रतीत हुए। हाईलैण्ड्स के जीवन में अधिकतम उदात्त वस्तु जनजाति के लोगों (Clansman) की अपने मुखिया के प्रति रोमान्चक और शौर्यपूर्ण भक्ति थी; १७४६ ई० के बाद के कठिन वर्षों में, जब अनेक मुखिया लोगों को कानून के संरक्षण से वंचित या आततायी (Outlaw) घोषित कर दिया गया और उनकी जमीनें जब्त कर ली गयीं, उस समय इस भक्ति ने अपने को आश्चर्यजनक रीति में इस प्रकार प्रकट किया कि घोर निर्धनता होते हुए भी, निर्वासितों के निर्वाह के लिए बड़ी धनराशियों को इकट्ठा दिया गया। स्वदेश में रहने वाले व्यक्तियों के छिपने वाले स्थानों को पूरी निष्ठा के साथ गुप्त रखा गया[1]। फिर भी अनेक मामलों में इस निष्ठा का पुरस्कार ठीक नहीं दिया गया। 'हेरिटेबल जूरिसडिक्शन एक्ट' (Heritable Jurisdiction Act) के अनुसार जो सरदार कानून के संरक्षण से वंचित नही घोषित किये गये थे, वे मुखिया या बड़े सरदार लोगों के स्थान पर भूमियों के जमींदार बना दिये गये। इनमें से अनेक व्यक्ति अधिकतम धन कमाने के लिए उत्सुक थे। उन्होंने कई घाटियों को भेड़ों की चरागाहों में परिणत कर दिया। यहाँ से उन जनजातीय व्यक्तियों को क्रूरतापूर्वक बेदखल कर दिया गया, जो अब उनके असामी बन गये। इसके परिणामस्वरूप हजारों व्यक्तियों को वहाँ से बाहर जाना पड़ा। यह प्रवास हाईलैण्ड्सवासियों के लिए विशेष रूप से दुःखदायी था, क्योंकि वे ऐसी बोली बोलते थे, जो उनके निवास स्थान की पहाड़ियों से परे नहीं समझी जाती थी। हजारों व्यक्ति सेना में भर्ती हुए; अगली दो पीढ़ियों में हाईलैण्ड्स अनुपम रीति से, ब्रिटिश सेना की भर्ती के सर्वोत्तम क्षेत्र थे। किल्ट[2] (Kilt) वेशधारी हाईलैण्डर सैनिकों ने स्पेन और नीदरलैण्ड्स, भारत और अमेरिका के रणक्षेत्रों में अमर कीर्ति उपार्जित की और जो लोग स्काटलैण्ड में बने रहे, उन्होंने किराये पर खेत रखने वालों (Crofters) और मछली पकड़ने वालों के रूप में अत्यल्प और अनिश्चित जीविका का उपार्जन किया। फिर भी यद्यपि रोमान्चक वृत्ति वाले लोग पुराने जंगली जीवन के लुप्त हो जाने पर

---

१. स्टीवेन्सन की किडनेप्ड (Kidnapped) नामक कृति में इन परिस्थितियों का सुन्दर चित्रण किया गया है।

२. यह स्काटलैण्ड के हाइलैण्ड्सवासियों का घुटनों तक आने वाला एक प्रकार के छोटे लहँगे का विशिष्ट वेश है।

भले ही विलाप करें, किन्तु नयी अवस्थाएँ निश्चित रूप से एक सुधार थीं। हाईलैण्ड्सवासियों ने जनजातीय निष्ठा के स्थान पर राष्ट्र के प्रति भक्ति रखना सीख लिया। वह अपने देश के उस कठोर धार्मिक जीवन की ओर प्रबल उत्साह के साथ आकृष्ट हुआ, जिसने अब तक उस पर बहुत कम प्रभाव डाला था। उसने विश्वविद्यालयों में अपना भाग लेना तथा विश्व की कल्पना और विचार के क्षेत्र में अपना विशिष्ट योगदान देना आरम्भ किया।

लोलैण्डस् में यह परिवर्तन अधिक क्रमिक, किन्तु इससे भी अधिक क्रान्तिकारी था। लोलैण्डस्वासियों की मितव्ययी, चतुर एवं धैर्यपूर्ण प्रतिभा पहली बार व्यवस्थित रूप से धन कमाने के लिए कार्य की ओर ध्यान देने लगी, अभी तक उसे इसका बहुत कम अनुभव था। वे व्यक्ति शीघ्र ही यह प्रदर्शित करने वाले थे कि इसका कारण यह नहीं था कि उनमें गुणों की कमी थी। पहले ही स्काट लोग इंग्लिश लोगों की अपेक्षा अधिक जल्दी और अधिक स्पष्टता के साथ उस शक्ति को देख चुके थे, जो एक उत्तम बैंक-पद्धति से प्राप्त की जा सकती थी। सम्भवतः इसका कारण यह था कि एक ऐसे निर्धन देश में अनेक छोटी धनराशियों को एकत्र करने के लाभों को अधिक सुगमता से समझा जा सकता था, जहाँ किसी भी व्यक्ति के पास लगाने के लिए बहुत पूँजी नहीं थी। यह एक स्काट व्यक्ति ही था, जिसने बैंक ऑफ इंग्लैण्ड की योजना आरम्भ की थी। स्काटलैण्ड में उनके निर्धन होने पर भी, पहले से ही तीन बड़े बैंक थे। १७५० ई० में राजधानी से बाहर बैंक की सुविधाओ के विकास में स्काटलैण्ड, इंग्लैण्ड से आगे था। निस्सन्देह, यह इस बात का एक कारण था कि इतना निर्धन देश द्रुत गति से महान् सम्पत्ति कमाने में कैसे समर्थ हुआ। १७५० ई० में उसने पहले क्षौम वस्त्र उद्योग का वास्तविक सम्पन्नता तक विकास किया। यह उद्योग इस शताब्दी के आरम्भ में अतीव पिछड़ी हुई और संघर्ष वाली स्थिति में था। वह ट्वीड नदी के प्रदेश में अपने ऊनी उद्योग का निर्माण कर रहा था, इन उत्पादनों ने उसे निर्यात व्यापार का आधार बनाने के लिए कुछ सामग्री प्रदान की। १७१८ ई० में क्लाइड नदी के मुहाने पर पहला जहाज जल में उतारा गया; उस समय तक ग्लासगो के पास अपना एक भी जहाज नही था, किन्तु वह ह्वाइटहैवन से उधार लिये हुए जहाजों से अपने लगभग नगण्य विदेशी व्यापार का परिवहन करता था। १७६० ई० तक क्लाइड पहले ही पोतनिर्माण का एक महत्वपूर्ण केन्द्र बन चुका था। ग्लासगो ने नयी दुनियाँ के साथ खूब व्यापार आरम्भ कर दिया। लन्दन के सिवाय किसी भी अन्य ब्रिटिश बन्दरगाह की अपेक्षा वह तम्बाकू का अधिक व्यापार करता था। यह स्पष्ट था कि अब स्काटलैण्ड उन्नति के पथ पर अग्रसर होने लगा था।

निर्धनता से पीड़ित स्काटलैण्ड जिस दक्षता और धैर्य के साथ अपने लिये नयी सम्पत्ति का उपार्जन कर रहा था, उसके श्रेय का बहुत बड़ा भाग इस तथ्य के कारण था कि वह अपनी समूची जनता को पेरिश स्कूलों (Parish Schools) में पढ़ा रहा था। लोक-शिक्षण (Popular Education) की उसकी पद्धति निश्चित रूप से यूरोप के किसी भी देश से आगे बढ़ी हुई थी। यह इंग्लैण्ड की शिक्षा-पद्धति से बहुत अधिक आगे बढ़ी हुई थी। यह एक पद्धति थी, न कि इंग्लैण्ड में विद्यमान ऐसे जनता के स्कूलों की भाँति एक आकस्मिक विकास था। इसकी योजना एक राष्ट्रीय चर्च की सामान्य असेम्बली ने राष्ट्रीय आधार पर

तैयार की थी। पादरियों ने प्रत्येक पेरिश में इसका बड़े परिश्रम से पोषण किया। ये पादरी इंग्लिश पादरियों से सर्वथा भिन्न, स्वयमेव जनता का भाग होते थे। वे संकीर्ण, कठोर तथा नैतिक अनुशासन के उन असाधारण अधिकारों का प्रयोग करने में अत्याचारी होते थे, जिन अधिकारों का वे दावा और प्रयोग करते थे। उनके कार्य करने में बहुत सी बातें बुरी थी। किन्तु उन्होंने एक समूचे राष्ट्र को अध्ययन और चिन्तन के लिए प्रशिक्षित किया। यह कार्य केवल स्कूलों की स्थापना से नहीं किया गया, अपितु उनके उपदेशों और प्रश्नोत्तरों के कठोर बौद्धिक अनुशासन से किया गया। इसके अतिरिक्त आक्सफोर्ड और केम्ब्रिज की तुलना में दीन तथा हीन स्काटिश विश्वविद्यालयों में नवजीवन का संचार हो रहा था। उन्होंने दार्शनिक शिक्षकों की उस विलक्षण शृंखला को उत्पन्न करना आरम्भ किया, जिसने इस शताब्दी के उत्तरार्ध में यूरोप के चिन्तन को परिवर्तित करने में भाग लिया। इन वर्षों में किसी भी स्काटिश विश्वविद्यालय से सम्बद्ध न होने पर भी, एक स्काटलैण्ड वासी डेविड ह्यूम को इंग्लिश भाषा के लेखकों में अधिकतम गम्भीर तथा चुनौती देने वाला समझा जाता था। शीघ्र ही ग्लासगो के एक प्रोफेसर एडम स्मिथ को आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नों पर वैज्ञानिक चिन्तन को एक नया मोड़ देना था। स्काटिश चर्च-पद्धति का कठोर अनुशासन धर्मेतर क्षेत्र में भी फल देने लगा था।

यह अब भी चर्च का ही माध्यम था जिसके द्वारा स्काटलैण्ड अपने को स्वशासन की शिक्षा देने लगा था। ब्रिटिश [illegible] में उसका भाग लेना उसकी अधिकांश जनता के लिए निरर्थक था, बरो में तथा कौण्टियों में निर्वाचकों की संख्या समान रूप से इतनी कम थी कि उन पर नियन्त्रण स्थापित करना आसान था। संयुक्त पार्लियामेण्ट का कोई अन्य ऐसा भाग नहीं था, जिसकी व्यवस्था करना इतना आसान हो अथवा जो महान् ह्विग बरो-व्यवस्थापकों के अधिकार में इतने पूर्ण रूप से हो। १८३२ ई० तक यह नही कहा जा सकता था कि पार्लियामेण्ट में स्काटिश प्रतिनिधि स्काटिश जनता के लिए भाषण किया करते थे। स्काटलैण्ड में इंग्लैण्ड के गर्व का कारण बनने वाली स्वशासन की पद्धति की भाँति स्काटलैण्ड में स्थानीय स्वशासन की कोई प्रभावशाली पद्धति नहीं थी। चर्च के द्वारा, इसके पेरिश की बैठकों के द्वारा, प्रेसबिटरीज के (Pressbyteries) तथा धर्मसभाओं (Synods) और जनरल असेम्बली के द्वारा ही स्काट लोग स्वतन्त्र राष्ट्रों के राष्ट्रमण्डल के जीवन में भावी भाग ग्रहण करने के लिए अपने को प्रशिक्षित कर रहे थे।

इस प्रकार स्काटलैण्ड के लिए यह शुरुआतों का युग था। शिक्षा के अतिरिक्त सभी क्षेत्रों में वह अपने महान् साथी देश से अब भी पीछे था। उसकी निर्धन जनता इंग्लैण्ड की अपेक्षा अब भी बहुत अधिक कष्ट में थी। उसकी शनैः शनैः बढ़ने वाली समृद्धि के साथ की बुराइयाँ इंग्लैण्ड की सुरक्षित और बढ़ने वाली सम्पत्ति बुराइयों की अपेक्षा अब भी अधिक प्रबल थीं। उदाहरणार्थ, यदि इंग्लैड के कोयलाखनिक एक अधःपतित और उपेक्षित श्रेणी थी तो स्काटलैण्ड के खनिक (ये अभी तक अधिक संख्या में नहीं थे) और भी अधिक दुर्भाग्यपूर्ण दशा में ग्रस्त थे, क्योंकि इस युग में स्काटिश खान खोदने वाले और नमक का काम

करने वाले मजदूर-भूदास (ब्रिटिश द्वीपसमूह में इस समय कानूनी दृष्टि से एकमात्र भूदास यही लोग थे) जिन खानों या खदानों में काम करते थे, उनसे बँधे होते थे और मालिकों के बदलने के साथ ये भी एक स्वामी के अधिकार से दूसरे स्वामी के अधिकार में चले जाते थे।

६. आयरलैण्ड की निश्चलता

१८वीं शताब्दी के मध्य में आयरलैण्ड की स्थिति के बारे में कुछ अधिक कहना अनावश्यक है, क्योंकि हम पहले ही अत्याचार की उस बुरी पद्धति का वर्णन कर चुके हैं[1] जो क्रान्ति के समझौते द्वारा उसकी अधिकांश जनता को दण्ड रूप में प्राप्त हुई थी। वह जंजीरों में जकड़ा हुआ और बँधा हुआ, असहाय, निश्चल और निष्क्रिय पड़ा हुआ था।

उसकी आबादी का बड़ा भाग, चाहे वह प्रोटेस्टेण्ट अल्पसंख्यक था अथवा रोमन कैथोलिक बहुसंख्या वाला था—अपनी आजीविका भूमि से प्राप्त करता था। किन्तु अधिकांश भूमि प्रोटेस्टेण्टों के हाथों में थी। कानून द्वारा कैथोलिकों को काश्तकारों (Tenants) के रूप के अतिरिक्त भूमि प्राप्त करने का निषेध था। अनेक जमींदार, विशेषतः सबसे बड़े जमींदार अपनी जमीदारियों से सदैव अनुपस्थित रहते थे, वे इंग्लैण्ड में रहते हुए उनके एजेण्टों द्वारा उनके असामियों से वसूल किये गये लगानों को वहाँ व्यय करते थे। अन्य जमींदार अपना अधिक समय शिकार खेलने और शराब पीने में बिताया करते थे। आयरिश देहाती भद्र वर्ग (Country gentry) अपने जीवन के लापरवाह और मितव्ययहीन आमोद-प्रमोद के लिए प्रसिद्ध हो गया था। विरले उदाहरणों को छोड़कर वे अपनी जमीनों के सुधार में कोई दिलचस्पी नहीं लेते थे; फिर भी वे उनका लगान वसूल करने में ही सन्तुष्ट थे। इस प्रकार आयरलैण्ड में निवास करने वाले भद्रवर्ग में तथा किसानों के बीच में सम्बन्ध मित्रतापूर्ण थे, यद्यपि धार्मिक मतभेद तथा वह भीषण दरिद्रता उन्हें एक दूसरे से पृथक कर रही थी जो इस पद्धति के दण्डरूप में अधिकांश किसानों को मिली थी। उत्तम साथीपन तथा खेल के प्रति समान प्रीति ने इस पद्धति की क्रूरताओं को कम कर दिया था। समग्र रूप से, यद्यपि दण्ड विधान को शिथिल बनाने के लिए कुछ भी नहीं किया गया था, तथापि इस शताब्दी के मध्य भाग तक कैथोलिकों की स्थिति सुधर गयी थी, धार्मिक असहिष्णुता का ह्रास हो रहा था। इसका बड़ा कारण यह था कि प्रोटेस्टेण्टों को अब एक कैथोलिक विद्रोह का भय नहीं रहा था। कैथोलिक पुरोहितों को बिना बाधा के अपना कार्य करने की अनुमति दी जाती थी। क्रान्ति के बाद एक पीढ़ी तक टोरियों अथवा अव्यवस्थित सैनिक लुटेरों (Rapparees) के दलों द्वारा चलाया जाने वाला छापामार युद्ध अब क्रियात्मक रूप से समाप्त हो गया। आयरलैण्ड शान्त प्रतीत होता था।

फिर भी देश दुर्भाग्यपूर्ण दशा में था। एक स्वस्थ समाज का आधार कानून के प्रति सम्मान की भावना रखना होता है। कानून के प्रति सम्मान की भावना आयरलैण्ड में न तो हो सकती थी और न ही थी। कैथोलिकों में इसका अन्त उन अन्यायपूर्ण कानूनों

---

१. ऊपर देखिए पाँचवी पुस्तक का छठा अध्याय पृ० ६१३-६१८।

से कर दिया गया था, जिनके आधीन उन्हें रहना पड़ता था। कानून के प्रति सम्मान की भावना प्रोटेस्टेण्ट भूस्वामीवर्ग में इस अनुभूति के कारण निर्बल बना दी गयी थी कि उनमें यह विचार प्रचलित हो गया था कि वे उनके संरक्षण के लिए बनाये गये कानूनों से ऊपर हैं। कोई भी समाज तब तक स्वस्थ नहीं हो सकता, जब तक उसके सदस्य यह अनुभव न करें कि समाज का संगठन दोषपूर्ण होने पर भी, उसका उद्देश्य उनकी सहायता और रक्षा करना है। आयरिश व्यक्तियों की बहुसंख्या के लिए ऐसी भावना रखना असम्भव था, क्योंकि वे जानते थे कि समाज का संगठन इस प्रकार किया गया है कि वह उन्हें सभी नागरिक अधिकारों से वंचित कर दे, उन्हें अपने बच्चों को शिक्षा देने का निषेध कर दे, उन्हें समृद्धि प्राप्त करने के साधनों से वंचित कर दे और उनके धर्म का विनाश और विध्वंस करे। आयरिश पद्धति के ये स्पष्ट उद्देश्य थे।

हम देख चुके हैं[1] कि इंग्लिश पार्लियामेण्ट ने क्षोम (Linen) के कपड़े के हस्तोद्योग के अतिरिक्त अन्य सभी उद्योगों के विकास को कुचल दिया था। इसका यह आशय था कि इस छोटे से व्यवसाय में लगी जनता के अतिरिक्त समूची जनता को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रीति से अपनी आजीविका भूमि से प्राप्त करनी पड़ती थी। किन्तु भूमि के सब स्रोतों का भी उपयोग पूरी तरह से विकसित नहीं किया जा सकता था, क्योंकि ऊन और ऊन से बने माल के निर्यात पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था और आयरलैंण्ड से पशुओं को भी इंग्लैण्ड नहीं भेजा जा सकता था, क्योंकि ऊन तथा ऊनी हस्तोद्योग से बनी वस्तुओं के निर्यात पर लगाये प्रतिबन्ध की अवहेलना की जाती थी। फ्रांस के साथ एक बहुत बड़ा तस्कर-व्यापार चल रहा था, इसने कानून के प्रति सामान्य घृणा को बढ़ाया था। ऊन तथा पशुओं के निर्यात की पाबन्दी के बावजूद, आयरलैण्ड में सर्वोत्तम भूमि का बड़ा भाग चरागाहों के लिए था, इनमें खेती की तुलना में बहुत कम मजदूर लगाने पड़ते थे। इसका यह परिणाम हुआ कि शेष भूमि के लिए भीषण प्रतिद्वन्दिता होने लगी और छोटे से छोटे खेतों के लिए अत्यधिक लगान वसूल किये जाने लगे। घोरतम दरिद्रता का जीवन-यापन करते हुए किसानों के पास अपनी ज़मीनों की खेती उत्तम रूप से करने के लिए न तो साधन थे और न ही इसका ज्ञान था।

यह बात निर्विवाद रूप से कही जा सकती है कि आयरलैण्ड जैसी भीषण दरिद्रता विश्व के किसी अन्य देश में नहीं थी। एक प्रोटेस्टेण्ट बिशप ने आयरिश पादरी के क्षेत्र में तबादला हो जाने के बाद लिखा था "मैंने पिकार्डी में, वेस्टफेलिया में अथवा स्काटलैण्ड में भी भूख और गरीबी के ऐसे भीषण निशान नहीं देखे, जैसे मुझे यहाँ सड़क पर मिलने वाले अधिकांश निर्धन व्यक्तियों के मुखड़ों पर दिखायी देते हैं"। उसने यह वर्णन किया है कि किस प्रकार जब उसकी गाड़ी का एक घोड़ा मारा गया तो दुर्भिक्ष पीड़ित किसानों के एक समूह ने अपने बच्चों के पास ले जाने के लिए इस घोड़े की हड्डियों से माँस को नोच लिया। ऐसी अवस्थाओं में, फसल खराब हो जाने के बाद इसके परिणामस्वरूप लग-

---

१. ऊपर देखिए पृ० ५२९-३०, ६१३

भग अनिवार्य रूप से भीषणतम अकाल पड़ा करते थे। यह कहा जाता है कि १७४० ई० और १७४१ ई० में चार लाख व्यक्ति भुखमरी से और इसके परिणामस्वरूप होने वाली बीमारियों से मरे। इस अकाल के दृष्ट साक्षियों ने इसके जो भीषण चित्र खींचे हैं, वे कल्पना और विश्वास से परे की वस्तु हैं। ऐसे परिणाम उत्पन्न करने वाली पद्धति के सम्बन्ध में बर्क ने यह ठीक ही कहा था, "यह पद्धति एक बुद्धिमत्तापूर्ण और सुचिन्तित व्यवस्था थी, यह एक जनता के उत्पीड़न, दरिद्रता और अधः पतन के लिए और उनकी मानवीय प्रकृति को नीचा बनाने के लिए सर्वथा उपयुक्त थी, ऐसी पद्धति को मनुष्य की विकृतिपूर्ण विचक्षणता ने या पटुता ने अभी तक कहीं भी उत्पन्न नहीं किया था।"

७. समुद्र पार के ब्रिटिश प्रदेश : इनका सामाजिक स्वरूप।

आयरलैण्ड को ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का सदस्य बनने से मुसीबतों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं मिला था। उसकी अपेक्षा अपना ध्यान समुद्रपार की उन बस्तियों की ओर ले जाना ताजगी देने वाला है, जो बस्तियाँ पिछली डेढ़ शताब्दी के परिश्रमपूर्ण कार्यों से बनायी गयी थीं। इन बस्तियों में इंग्लैण्ड से पूर्णरूप में ग्रहण की गयी राजनीतिक और कानूनी पद्धति में ऐसी प्राचुर्यपूर्ण समृद्धि, उन्नतिशील पौरुष और राजनीतिक स्वतन्त्रता का एक व्यापक विस्तार देखा जाता था, जैसे विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं देखा जाता था।

ये बस्तियाँ दो प्रधान समूहों में बँटी हुई थीं, वेस्ट इण्डीज तथा अमेरिकन महाद्वीप के उपनिवेश; अन्ध महासागर में सुदूरवर्ती बरमूडाज का लघु द्वीपसमूह इन दोनों में एक प्रकार की कड़ी का निर्माण करता था। किन्तु इन दोनों समूहों में से प्रत्येक अनेक पृथक् उपनिवेशों में विभक्त था, यद्यपि इन उपनिवेशों को अनेक समान हित और अनेक समान विशेषताएँ थीं, तथापि इन के शासन का कोई एक समान केन्द्र नहीं था। इनके अपने गवर्नर और अपनी प्रतिनिधिसभाएँ होती थीं। अतः यदि हम ब्रिटिश द्वीपसमूह को और भारत में नवस्थापित ब्रिटिश साम्राज्य को तथा पश्चिमी अफ्रीका के तट पर अवस्थित व्यापारिक अड्डों को छोड़ दें तो, ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल में पहले से ही पृथक् रूप से संगठित तेईस राज्य थे। ये सभी ब्रिटिश ताज के तथा (एक अधिक अस्पष्ट रूप में) ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के अधीन थे। सब अपनी ब्रिटिश नागरिकता पर गर्व करते थे, लगभग सभी उपनिवेशों में प्रतिनिध्यात्मक संस्थाएँ थीं, और सभी व्यापार के नियन्त्रण की समान शाहीपद्धति से सम्बद्ध थे।

इन तेईस राज्यों में पाँच वेस्टइण्डीज के समूह में सम्मिलित थे। १७६० ई० में इन राज्यों ने समृद्धि की लगभग उच्चतम पराकाष्ठा प्राप्त कर ली थी। यहाँ जमैका का महान् टापू था, इस पर अनेक छोटे टापू तथा होण्डुरास के समुद्र तट पर रंगाई के काम में प्रयुक्त होने वाले एक अमेरिकन पेड़ की लकड़ी को काटने वाले अनेक अड्डे अवलम्बित थे। यह बाद में ब्रिटिश होण्डुरास के उपनिवेश में विकसित हुआ। जमैका चिरकाल तक समुद्री डकैती का प्रधान स्थान बना रहा था। इसके भीतरी भाग के वनाच्छादित पर्वतों में बने दुर्गों में रहने वाले (मैरून के नाम से प्रसिद्ध) स्पेनिश दासों के वंशजों

के साथ अविरत युद्धों से इसके विकास में बड़ी बाधा पड़ी थी, फिर भी जमैका एक अत्यधिक समृद्ध उपनिवेश के रूप में विकसित हुआ। यहाँ बड़े खेत और बागान लगाने वाला एक अभिजाततन्त्र (Aristocracy) चीनी तथा अन्य उष्णकटिबन्धीय वस्तुओं की खेती में नीग्रो दासों की एक फौज लगाया करता था। १७६३ ई० में जमैका पहले किसी भी समय की अपेक्षा अधिक समृद्ध था, क्योंकि युद्ध से इसे बहुत धन मिला था। जिस समय सम्पूर्ण व्यापारिक जगत् वेस्ट इण्डीज के व्यापार को अन्य स्थानों के व्यापार की अपेक्षा अधिक महत्व देता था, उस समय जमैका अनेक व्यक्तियों को "ब्रिटिश राजमुकुट की उज्ज्वलतम मणि" प्रतीत होता था। धन और जनसंख्या में जमैका के बाद गणना किया जाने वाला बारबिडोस का टापू ब्रिटिश वेस्ट इण्डीज की बस्तियों में लगभग सब से पुराना था। इसके गौरांग निवासियों में अनेक आयरिश व्यक्ति थे। इन्होंने युद्ध में भाग लेने के लिए स्वयंसेवकों के दस्तों को तैयार करने में महान् उत्साह प्रदर्शित किया था। इसके बाद लीवर्ड टापुओं, सेण्ट किट्स, एण्टीगुआ, नेविस, माण्टसेरेट, बरबूडा, एंग्विला और वर्जिन टापुओं का संघीय समूह आता था। यह फ्रांस के साथ १७वीं शताब्दी के संघर्ष से लगे धक्के से पूरी तरह सम्भल चुका था। बहामा (Bahama) टापू चौथे, पृथक् रूप से संगठित समूह का निर्माण करते थे। ये टापू चिरकाल से समुद्री डाकुओं से परिपूर्ण रहे थे। वे १७६० ई० से पहले की पीढ़ी में ही सुनिश्चित व्यवस्था और समृद्धि का उपभोग करने लगे थे। अन्त में, पिट की विजयों ने विण्डवर्ड टापुओं के एक नवीन समूह की वृद्धि की थी—इसमें ग्रेनाडा, डोमिनिका, सेण्ट विन्सेण्ट, टोबेगो और छोटे ग्रेनेडाइन्स के टापू थे। ये मार्तीनीक और गुआदेलूप के महान् फ्रेंच टापुओं के समीपतम पड़ोसी थे और इसी कारण इन टापुओं ने किसी अन्य समूह के टापुओं के समूह की अपेक्षा पहले ही अधिक लड़ाई देखी थी और वे इससे भी अधिक लड़ाई देखने वाले थे। किन्तु १७६३ ई० में वे एक नवीन उपलब्धि थे, उनमें बड़ी मुश्किल से व्यवस्था स्थापित हुई थी। ब्रिटिश औपनिवेशिक पद्धति में पायी जाने वाली शासनविषयक सामान्य संस्थाएँ अभी हाल में ही उन्हें प्रदान की जाने लगी थीं।

यद्यपि इन पाँच उपनिवेशों का संगठन पृथक् रूप से था, तथापि इनमें कई सामान्य विशेषताएँ थीं। बहामा के अतिरिक्त इन सभी टापुओं में मुख्य रूप से गन्ने की खेती होती थी। वे सभी प्रधान रूप से दासों के श्रम पर अवलम्बित थे, उनकी नीग्रो-आबादी गोरे लोगों की आबादी से बहुत अधिक थी। कई दशाओं में इसमें दस और एक का अनुपात था। इनकी समूची सामाजिक रचना, उनकी समृद्धि का मूल आधार इस कल्पना पर आश्रित था कि नीग्रो दास-प्रथा वैध है (अभी तक इस कल्पना को किसी ने चुनौती नहीं दी थी) अतः उनकी गोरी आबादी एक गर्वपूर्ण कुलीनतन्त्र का निर्माण करती थी। इसमें अनेक दोष थे। किन्तु कुलीनतन्त्र के अनेक गुण भी थे। किसी भी दशा में वे एक स्वतन्त्र कुलीनतन्त्र थे, क्योंकि प्रत्येक द्वीपसमूह की अपने प्रतिनिधियों की एक असेम्बली थी और यह अपने लिये कानून स्वयं बनाया करती थी।

वेस्ट इण्डीज के उपनिवेशों के साथ महान् अन्तर रखने वाला बरमूडास का छोटा द्वीप-

समूह था। यह अटलाण्टिक सागर में अधिक दूरी पर था और इसका समूचा क्षेत्रफल केवल उन्नीस मील था। महान् प्राकृतिक साधन न होते हुए भी ये छोटे टापू एक बड़ी जनसंख्या को जीविका दे रहे थे। वे ऐसा करने में इसलिए समर्थ हुए थे, क्योंकि अनेक साहसी बस्ती बसाने वालों ने यहाँ पोतनिर्माण में तथा व्यापार के कार्य में महान् पौरुष प्रदर्शित किया था। उन्होंने बहामा के तथा वेस्ट इण्डीज के अन्य टापुओं के बसाने में सजीव भाग लिया था। युद्ध में निजी योद्धा सशस्त्र जहाजों द्वारा लूट-पाट करने में भी वे क्रियाशील रहे थे। उनके जहाज वेस्ट इण्डीज के तथा अमेरिकन उपनिवेशों के प्रत्येक बन्दरगाह में देखे जा सकते थे। इस छोटे द्वीपसमूह की अपेक्षा किसी अन्य ब्रिटिश उपनिवेश में इससे अधिक मात्रा में स्वतन्त्रता और साहस की वृत्ति नहीं थी। यह द्वीपसमूह ब्रिटिश उपनिवेशों की समूची बिरादरी में लगभग प्राचीनतम था।

उत्तरी अमेरिका के महाद्वीप में सोलह पृथक् उपनिवेशों में से तीन उपनिवेश फ्रेंच लोगों के साथ लम्बे संघर्ष का विषय बने थे। हाल में जीता गया और बसाया गया कनाडा अभी तक पूर्ण रूप से फ्रेंच लोगों से बसा हुआ था। इस कारण स्वाभाविक रूप से अब तक सैनिक शासन में था। उपनिवेशन में ब्रिटिश परीक्षण के प्रथम स्थान-न्यूफाँण्डलैण्ड के बारे में चिरकाल से फ्रेंच लोगों के साथ झगड़ा था, यह अन्तिम और निश्चित रूप से १७१३ ई० में ही ब्रिटिश प्रदेश बना था। फिर भी, यहाँ समुद्र तट के एक हिस्से में मछली पकड़ने के प्रयोजनों के लिए फ्रेंच लोगों को कुछ अधिकार थे। यहाँ बसने वालों की संख्या अब भी बहुत कम थी, ये कठोर परिश्रमी मछियारे समुद्र तट के साथ-साथ फैले हुए थे और केवल १७२८ ई० से ही उनमें संगठित सरकार की व्यवस्था थी। नोवास्कोशिया १७वीं शताब्दी में दो बार फ्रेंच लोगों से जीता गया और दो बार ही इसे वापस लौटाया गया, १७१३ ई० में इसे अन्तिम रूप में ब्रिटेन को दिया गया। किन्तु १७५५ ई० में ही फ्रेंच लोगों के निर्वासित कर दिये जाने पर[1] और चार हजार ब्रिटिश आवासकों के यहाँ लाये जाने पर १७५५ ई० से ही नोवास्कोशिया पूरे रूप में ब्रिटिश उपनिवेश बन गया। १७५८ ई० में उसने प्रतिनिधि शासन की सामान्य संस्थाओं को प्राप्त किया। किन्तु ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास में सेण्ट लारेन्स के इन तीन उपनिवेशों का भाग लेना १७६३ ई० में केवल आरम्भ ही हुआ था।

इस समय राष्ट्रमण्डल का अधिकतम गौरव और गर्व वे तेरह स्वतन्त्र राज्य थे, जिन्हें शीघ्र ही इससे अलग हो कर अपने एक नवीन स्वतन्त्र राष्ट्रमण्डल की स्थापना करनी थी। १८वीं शताब्दी के प्रारम्भ में उनकी प्रगति आश्चर्यजनक थी। इस शताब्दी के आरम्भ में वेस्ट इण्डियन उपनिवेश अमेरिकन महाद्वीप के उपनिवेशों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण, अथवा कम-से-कम व्यापारिक दृष्टि से अधिक मूल्यवान् समझे जाते थे। किन्तु अब व्यापार के क्षेत्र में भी, इन्होंने प्रथम स्थान ग्रहण किया। इंग्लैण्ड को इनके द्वारा

---

१. ऊपर देखिए छठी पुस्तक, छठा अध्याय।

निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का परिमाण वेस्ट इण्डीज के परिमाण से अधिक बड़ा था। वे इंग्लैण्ड से इनकी अपेक्षा दुगुनी वस्तुओं का आयात करते थे। सभी बातों में—आबादी में, साहसिक उद्योग में, प्रगतिशील सभ्यता के विकास में, वे न केवल ब्रिटिश वेस्ट इण्डीज से बहुत आगे थे, किन्तु वे यूरोपियन लोगों द्वारा स्थापित किन्हीं भी उपनिवेशों से आगे बढ़े हुए थे।

१७६० ई० में उनकी कुल आबादी लगभग पन्द्रह लाख थी, इनमें से पाँच लाख के लगभग नीग्रो थे। यह १६८८ ई० की क्रान्ति के बाद से ७०० प्रतिशत से भी अधिक की वृद्धि को सूचित करता था। बसा हुआ तथा खेती के काम में आने वाला क्षेत्र आबादी के विकास के अनुपात में वृद्धि प्रदर्शित कर रहा था। अब यह पर्वतों की मेखला के सिरे तक पहुँच गया था। पश्चिमी सीमान्त के महान् दैर्घ्य के साथ-साथ यह सीमान्त-प्रदेशों के साहसी व्यक्तियों और अग्रगन्ताओं का अगला भाग था, जिसने फ्रेंच लोगों के विध्वंस से पहले ही पहाड़ों को पार करके महान् केन्द्रीय मैदान में प्रवेश आरम्भ कर दिया था। वे अब उस महान् विरासत में प्रवेश करने के लिए तैयार थे, जिसके अधिक व्यवस्थित क्षेत्रों में पहले से ही एक अत्यधिक विकसित सभ्यता स्थापित हो चुकी थी। कई उन्नतिशील और समृद्ध नगर, विशेषत: बोस्टन, न्यूयार्क और फिलाडेल्फिया थे। न केवल इन शहरों में, अपितु वर्जिनिया के बड़े खेतों वाले कुलीनतन्त्र में सुसंस्कृत समाज था। शिक्षा का व्यापक प्रसार था, विशेष रूप से न्यू इंग्लैण्ड में यह स्थिति थी कि समाचार पत्रों वाले प्रेस का आरम्भ पहले ही हो चुका था। अधिक आबादी वाले और उन्नतिशील उपनिवेशों में महा-विद्यालय स्थापित हो चुके थे। सर्वत्र न केवल प्रतिनिध्यात्मक असेम्बलियाँ विद्यमान थीं, अपितु वे क्रियाशील भी थीं। इंग्लिश कामन ला. के रिवाजों से गौरांग उपनिवेशवासी अपनी नागरिक स्वतन्त्रताओं की रक्षा करते थे और सर्वत्र धार्मिक सहिष्णुता का व्यवहार ही नहीं होता था, अपितु सामाजिक समानता की एक वास्तविक मात्रा (जिसे प्राप्त करना अधिक कठिन था) विद्यमान थी, क्योंकि अनधिकृत भूमि के अक्षय प्राचुर्य ने किसी भी पौरुषपूर्ण गौरांग व्यक्ति के लिए इस बात को आवश्यक बना दिया था कि वह स्थायी पराधीनता की दशा में रहे।

उपनिवेशों में व्यापक रूप से फैली हुई समृद्धि का कारण एक नवीन प्रदेश की अक्षय सम्पत्ति थी। इसका दूसरा कारण यह था कि इस नवीन प्रदेश में परम्परागत प्रति-बन्धों और उत्तराधिकार में प्राप्त होने वाले दायित्वों के गौरांग व्यक्तियों के लिए न होने के कारण उन्हें निर्बाध स्वतन्त्रता थी। किन्तु ब्रिटेन से आये व्यक्तियों द्वारा बसाये गये नवीन प्रदेशो में ही इन वरदानों का पूर्ण रूप से उपभोग होता था। शीघ्र ही उपनिवेश विद्रोह करने वाले थे। यह विद्रोह किसी गम्भीर दमन के विरुद्ध नहीं किया गया था, अपितु यह उनकी ऐसी राजनीतिक स्वतन्त्रताओं पर हमले के विरुद्ध किया गया था, जिनकी कल्पना करने का स्वप्न कोई दूसरी जनता नहीं ले सकती थी। जो भावना स्वतन्त्रता के अधिकतम मामूली भंग का भी प्रतिरोध करने के लिए इस प्रकार तैयार हो

सकती थी, वह अपने आप में उस स्वतन्त्रता की उपज थी, जिसका पौधा ब्रिटिश पद्धति ने लगाया था और जिसे उसने पोषित किया था।

निःसन्देह, गौरांग व्यक्तियों के लिए इन सौभाग्यपूर्ण देशों में स्वतन्त्रता और अवसर की इतनी बड़ी मात्रा उपलब्ध थी, जो विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं पायी जा सकती थी। किन्तु इस उज्ज्वल स्थिति में भी एक बड़ा दोष भी था। आबादी का लगभग एक तिहाई भाग नीग्रो दासों का था, इन्हें इन वरदानों में कोई हिस्सा नहीं प्राप्त था। स्वाभाविक रूप से दास दक्षिण के बड़े खेतों तथा बागान वाले उपनिवेशों में सबसे अधिक संख्या में थे। यहाँ के प्रधान उद्योग मुख्य रूप से उनके परिश्रम पर अवलम्बित थे, किन्तु वे सब उपनिवेशों में, यहाँ तक कि प्यूरिटन नार्थ के प्रदेशों में भी पाये जाते थे और सर्वत्र वे उपनिवेशों की विधान सभाओं द्वारा बनाये गये अत्यधिक कठोर और भीषण कानूनों का शिकार होते थे। स्वतन्त्र नीग्रो लोगों को कहीं भी नागरिक स्वतन्त्रताएँ नहीं प्राप्त थीं। दक्षिणी उपनिवेशों में इन कानूनों की कठोरता सम्भवतः अस्वाभाविक नहीं थी, क्योंकि उन्हें सदैव नीग्रो लोगों के विद्रोहों का डर रहता था, यह डर कई बार ठीक होता था। उत्तरी उपनिवेशों में इसके लिए कम अवसर था, यहाँ न्यूयार्क के अतिरिक्त नीग्रो आबादी में, एक अल्प संख्या में ही होते थे। फिर भी उदाहरणार्थ, क्वेकर लोगों के पेन्सिलवेनिया ने यह विधान बनाया था कि रविवार के दिन यदि कोई नीग्रो निष्प्रयोजन घूमता हुआ पाया जाय तो उसे सोमवार तक बगैर मांस या शराब दिये हवालात में बन्द रखना चाहिए और उसके बाद छोड़े जाने से पहले उसे ३९ कोड़े अच्छी तरह लगाये जाने चाहिए। प्यूरिटन मैसाचुसेट्स ने यह कानून बनाया था कि सभी स्वतन्त्र नीग्रो लोगों को अपने गौरांग स्वामियों के साथ बन्धा रहना चाहिए और यदि कोई स्वतन्त्र नीग्रो एक नीग्रो दास को आश्रय देता है तो उस पर भारी जुर्माना होना चाहिए तथा उसे कोड़े लगाये जाने चाहिए। वेस्ट इण्डीज के उपनिवेशों के समान अमेरिकन महाद्वीप के उपनिवेश भी अभी इस स्थिति से बहुत दूर थे कि वे सब मनुष्यों को वह स्वतन्त्रता देने को तैयार हों, जिसका उपभोग इनके गौरांग निवासी इतनी प्रचुरता के साथ कर रहे थे। कम-से-कम इस मामले में इंग्लैण्ड इन उपनिवेशों से बहुत आगे बढ़ा हुआ था; क्योंकि ब्रिटेन में दास-प्रथा का लगभग अभाव था। १७७२ ई० के एक महान् न्यायिक निर्णय द्वारा यह घोषणा की गयी थी कि दास-प्रथा इंग्लैण्ड के कामन ला से मेल नहीं खाती।

तेरह उपनिवेश स्पष्ट रूप से विशेषताएँ रखने वाले तीन समूहों में विभक्त थे। अपनी सामाजिक पद्धतियों के कारण इनमें एक दूसरे से सुस्पष्ट अन्तर था। पहले समूह में न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेश-मैसाचुसेट्स (मेन के अधीनस्थ राज्य के साथ) न्यू हैम्पशायर, रोड टापू और कनेक्टिकट थे। इन चार उपनिवेशों की जन संख्या लगभग पाँच लाख थी। दूसरे समूह में मध्यवर्ती उपनिवेश न्यूयार्क, न्यूजर्सी, पेन्सिलवेनिया और डेलावेयर थे। इनकी आबादी चार लाख से अधिक थी। तीसरे समूह में दक्षिणी उपनिवेश—मेरीलैण्ड, वर्जिनिया, उत्तरी तथा दक्षिणी केरोलिना और जार्जिया थे। इनकी आबादी सात लाख से अधिक थी। इनमें ढाई लाख नीग्रो भी सम्मिलित थे।

न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेश वस्तुतः कृषि प्रधान बस्तियाँ थीं। उनमें अभी तक दस्तकारियों का विकास आरम्भ नहीं हुआ था। केवल कुछ उद्योग बड़े आरम्भिक एवं अपरिष्कृत रूप में थे। किन्तु ब्रिटिश नौचालन कानूनों ने उनके लिये पोत-परिवहन अथवा जहाजरानी को इंग्लैण्ड जैसी शर्तों पर रख दिया था। इसीलिए इन नौचालन कानूनों की छत्र-छाया में उन्होंने समुद्र पार के देशों—विशेषतः अन्य उपनिवेशों तथा वेस्ट इण्डीज के साथ एक बड़ा व्यापार विकसित किया था। उनका पश्चिमी अफ्रीका के दास व्यापार में भी हिस्सा था। युद्ध में उन्होंने अपने को निजी सशस्त्र जहाजों द्वारा दूसरे देशों के जहाजों को लूटने में दक्ष और क्रियाशील प्रदर्शित किया था। उन्होंने न केवल फ्रेंच जहाजों को लूटा, अपितु स्पेनिश और डच जहाजों को भी लूटा। वे अन्य उपनिवेशों की अपेक्षा अधिक ओजस्वी और साहसी थे। उन्होंने फ्रांस के साथ लम्बे संघर्ष के प्रत्येक दौर में अधिकतम भाग लिया था। उपनिवेशों में सर्वोत्तम शिक्षा की व्यवस्था यहाँ पर थी। यहाँ प्रत्येक पेरिश में एक स्कूल था, केवल इन्होंने ही अपने साहित्य का आरम्भिक रूप विकसित किया था और स्काटलैण्ड की भाँति, उनकी चर्च की पद्धति के कठोर अनुशासन ने उनकी बुद्धि को प्रखर तथा उनको शास्त्रार्थ का प्रेमी बना दिया था। १८वीं शताब्दी के मध्य तक, वस्तुतः न्यू इंग्लैण्ड की उग्र धार्मिक असहिष्णुता बहुत कुछ नरम पड़ गयी थी। इस समय न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों में अनेक धार्मिक सम्प्रदाय थे। कोई धार्मिक अत्याचार नहीं होता था। किन्तु पुराना कठोर प्यूरिटन स्वभाव बिलकुल समाप्त नहीं हुआ था। यह अपने को जीवन की उस कठोरता में प्रकट कर रहा था, जिसने अन्य उपनिवेशों की अपेक्षा न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों को आवासकों या आव्रजकों के लिए कम आकर्षक बना दिया था। इसी कारण उनमें अपने पड़ोसियों की अपेक्षा अपने स्वरूप में एक अधिक विशिष्ट एकता बनी रही। प्यूरिटनवाद द्वारा उत्पन्न की गयी सिद्धान्तों पर विचार करने की प्रीति तथा इन्हें बनाये रखने में कठोरता की प्रवृत्ति अब भी जीवित थी। इसने एक के बाद एक आने वाले गवर्नरों के साथ निरन्तर विवाद में और कानून में तीव्र अभिरुचि के रूप में अपने को प्रकट किया। न्यू इंग्लैण्डवासी विशेष रूप से मुकद्दमेबाज थे। अपनी स्थापना के समय से ही इन उपनिवेशों की यह विशेषता थी कि अमेरिकन उपनिवेशों में इनका प्रबन्ध करना सबसे अधिक कठिन था। अब उनका व्यापार निरन्तर बढ़ रहा था। इसका अधिकांश भाग व्यापारिक नियमों को खुली चुनौती देकर किया जा रहा था। इस कारण उन्हें पहले की अपेक्षा अधिक आलोचक तथा अधिक कष्टदायक बनने का प्रलोभन हो रहा था। १६९१ ई० के चार्टर द्वारा उनकी स्थानीय तथा केन्द्रीय शासन पद्धति वास्तविक रूप से लोकतन्त्रीय बन गयी थी। इनमें बहुत अधिक गरीबी नहीं थी। न्यू इंग्लैण्डवासी बड़े परिश्रमी, मितव्ययी, साहसी, बुद्धिमान्, शुद्ध जीवन व्यतीत करने वाले, अपने अधिकारों पर आग्रह करने वाले और आत्मसन्तोष से परिपूर्ण होने के कारण एक गौरवपूर्ण जाति का निर्माण करते थे, यद्यपि वे आमोदप्रेमी नहीं थे।

मध्यवर्ती बस्तियाँ इस समूह में सबसे अधिक वैविध्यवाली थीं। यद्यपि इसके निवासियों का अधिकांश भाग ब्रिटिश था, तथापि यहाँ अनेक डच, स्वीड, स्विस और जर्मन

थे। जातियों के वैविध्य के समान ही, धार्मिक सम्प्रदायों की विविधता भी बहुत अधिक थी, इन कारणों से मध्यवर्ती बस्तियों का न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों की भांति कोई स्पष्ट तथा विशिष्ट रूप नहीं था। भावना की दृष्टि से उच्चतम रीति से संगठित कोई वैसी एकता नहीं थी। दूसरी ओर इनमें सामाजिक स्वतन्त्रता अधिक थी, क्योंकि इनमें उस प्रकार के जीवन को प्रबल रूप से प्रभावित करने वाला कोई एक मानदण्ड नहीं था, जैसा कि न्यू इंग्लैण्ड में था। न्यू इंग्लैण्ड की भाँति वे मुख्य रूप से कृषि कार्य में लगे हुए थे, यद्यपि वे विशेष रूप से न्यूयार्क में रेड इण्डियन लोगों के साथ खूब व्यापार कर रहे थे। पेन्सिलवेनिया ने अपना लोहे का काम आरम्भ कर दिया था और वे अपनी पैदावार का बड़ा भाग वेस्ट इण्डीज को भेजते थे। किन्तु वे मुख्य रूप से ब्रिटिश बन्दरगाहों के साथ व्यापार करते थे, और फ्रेंच वेस्ट इण्डीज के साथ व्यापार पर लगे प्रतिबन्ध को उस पैमाने पर नहीं तोड़ते थे, जिस पर न्यू इंग्लैण्डवासी इसे तोड़ते थे। यह बात उल्लेखनीय है कि समुद्र पार के देशों के साथ व्यापार का बड़ा भाग पेन्सिलवेनिया से सम्बन्ध रखता था, न कि न्यूयार्क से, जो उस समय यद्यपि एक समृद्ध बन्दरगाह था, तथापि वह अमेरिका के व्यापार में उस प्रधानता को प्राप्त करने से अभी बहुत दूर था, जिसे बाद में इसने प्राप्त किया। वस्तुतः पेन्सिलवेनिया का द्रुत विकास १८वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में औपनिवेशिक इतिहास की एक अधिकतम विलक्षण विशेषता थी। इस उपनिवेश ने अधिकाधिक मात्रा में यूरोप से आने वालों की मुख्य-धारा को आकृष्ट किया। निर्धन आवासक या प्रव्रजक इस शर्त के साथ लाये जाते थे कि वे अपने मार्ग-व्यय को चुकाने के लिए तीन से पाँच वर्ष तक बिना मजदूरी लिये काम करेंगे। किन्तु इस युग के अन्त में पेन्सिलवेनिया में आवासकों को पचास एकड़ भूमि देने की परिपाटी थी। इस आकर्षण के कारण, विशेष रूप से जर्मनी से आवासक निरन्तर आने लगे। निश्चित क्षेत्रों में इकट्ठे मिल कर रहने वाले और अपनी मातृभाषा के उपयोग को बनाये रखने वाले जर्मन लोग इस आबादी के एक अतीव ठोस तत्व का निर्माण करते थे। १७४० ई० के ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के एक कानून के अनुसार विदेशी आवासक या आव्रजक सात वर्ष के निवास के बाद ब्रिटिश नागरिकता के पूरे अधिकारों को प्राप्त कर लेते थे। इस प्रकार ये राजनीति में ऐसा भाग लेने में समर्थ थे, जो भाग वे अपनी मातृभूमि में कभी नहीं ले सकते थे। किन्तु जर्मन आवासक आज्ञाकारी प्रजाजन थे। वे अपने साथ स्वशासन की कोई परम्पराएँ नहीं लाये थे। वे राजनीतिक अधिकार इंग्लिश आबादी के हाथों में छोड़ कर सन्तुष्ट थे, इसीलिए ऐसा हुआ कि आबादी में अल्प संख्या में होते हुए भी पेन्सिलवेनिया के शासन का नियन्त्रण अब भी क्वेकर लोगों के हाथ में था। क्वेकर जिद्दी लोग थे, जैसा कि उन्होंने फ्राँस के साथ संघर्ष के संकट में उस समय प्रदर्शित किया, जब उन्होंने अपनी सीमाओं की प्रतिरक्षा के लिए सैनिकों को अथवा धन को देना अस्वीकार किया था। किन्तु समग्र रूप से मध्यवर्ती उपनिवेशों के जन समुदायों में समरूपता का अभाव होने के कारण वे अधिक आज्ञापालक थे और न्यू इंग्लैण्डवासियों की अपेक्षा इनको अधिक आसानी से नियन्त्रण में रखा जा सकता था। इन्होंने व्यापारिक नियमों के विरुद्ध असन्तोष कम मात्रा में प्रदर्शित किया। उन्होंने न्यू इंग्लैण्ड की भाँति इन नियमों की अवहेलना नहीं की।

न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेश वस्तुतः कृषि प्रधान बस्तियाँ थीं। उनमें अभी तक दस्तकारियों का विकास आरम्भ नहीं हुआ था। केवल कुछ उद्योग बड़े आरम्भिक एवं अपरिष्कृत रूप में थे। किन्तु ब्रिटिश नौचालन कानूनों ने उनके लिये पोत-परिवहन अथवा जहाजरानी को इंग्लैण्ड जैसी शर्तों पर रख दिया था। इसीलिए इन नौचालन कानूनों की छत्रछाया में उन्होंने समुद्र पार के देशों—विशेषतः अन्य उपनिवेशों तथा वेस्ट इण्डीज के साथ एक बड़ा व्यापार विकसित किया था। उनका पश्चिमी अफ्रीका के दास व्यापार में भी हिस्सा था। युद्ध में उन्होंने अपने को निजी सशस्त्र जहाजों द्वारा दूसरे देशों के जहाजों को लूटने में दक्ष और क्रियाशील प्रदर्शित किया था। उन्होंने न केवल फ्रेंच जहाजों को लूटा, अपितु स्पेनिश और डच जहाजों को भी लूटा। वे अन्य उपनिवेशों की अपेक्षा अधिक ओजस्वी और साहसी थे। उन्होंने फ्रांस के साथ लम्बे संघर्ष के प्रत्येक दौर में अधिकतम भाग लिया था। उपनिवेशों में सर्वोत्तम शिक्षा की व्यवस्था यहाँ पर थी। यहाँ प्रत्येक पेरिश में एक स्कूल था, केवल इन्होंने ही अपने साहित्य का आरम्भिक रूप विकसित किया था और स्काटलैण्ड की भाँति, उनकी चर्च की पद्धति के कठोर अनुशासन ने उनकी बुद्धि को प्रखर तथा उनको शास्त्रार्थ का प्रेमी बना दिया था। १८वीं शताब्दी के मध्य तक, वस्तुतः न्यू इंग्लैण्ड की उग्र धार्मिक असहिष्णुता बहुत कुछ नरम पड़ गयी थी। इस समय न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों में अनेक धार्मिक सम्प्रदाय थे। कोई धार्मिक अत्याचार नहीं होता था। किन्तु पुराना कठोर प्यूरिटन स्वभाव बिलकुल समाप्त नहीं हुआ था। यह अपने को जीवन की उस कठोरता में प्रकट कर रहा था, जिसने अन्य उपनिवेशों की अपेक्षा न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों को आवासकों या आव्रजकों के लिए कम आकर्षक बना दिया था। इसी कारण उनमें अपने पड़ोसियों की अपेक्षा अपने स्वरूप में एक अधिक विशिष्ट एकता बनी रही। प्यूरिटनवाद द्वारा उत्पन्न की गयी सिद्धान्तों पर विचार करने की प्रीति तथा इन्हें बनाये रखने में कठोरता की प्रवृत्ति अब भी जीवित थी। इसने एक के बाद एक आने वाले गवर्नरों के साथ निरन्तर विवाद में और कानून में तीव्र अभिरुचि के रूप में अपने को प्रकट किया। न्यू इंग्लैण्डवासी विशेष रूप से मुकद्दमेबाज थे। अपनी स्थापना के समय से ही इन उपनिवेशों की यह विशेषता थी कि अमेरिकन उपनिवेशों में इनका प्रबन्ध करना सबसे अधिक कठिन था। अब उनका व्यापार निरन्तर बढ़ रहा था। इसका अधिकांश भाग व्यापारिक नियमों को खुली चुनौती देकर किया जा रहा था। इस कारण उन्हें पहले की अपेक्षा अधिक आलोचक तथा अधिक कष्टदायक बनने का प्रलोभन हो रहा था। १६९१ ई० के चार्टर द्वारा उनकी स्थानीय तथा केन्द्रीय शासन पद्धति वास्तविक रूप से लोकतन्त्रीय बन गयी थी। इनमें बहुत अधिक गरीबी नहीं थी। न्यू इंग्लैण्डवासी बड़े परिश्रमी, मितव्ययी, साहसी, बुद्धिमान्, शुद्ध जीवन व्यतीत करने वाले, अपने अधिकारों पर आग्रह करने वाले और आत्मसन्तोष से परिपूर्ण होने के कारण एक गौरवपूर्ण जाति का निर्माण करते थे, यद्यपि वे आमोदप्रेमी नहीं थे।

मध्यवर्ती बस्तियाँ इस समूह में सबसे अधिक वैविध्यवाली थीं। यद्यपि इसके निवासियों का अधिकांश भाग ब्रिटिश था, तथापि यहाँ अनेक डच, स्वीड, स्विस और जर्मन

थे। जातियों के वैविध्य के समान ही, धार्मिक सम्प्रदायों की विविधता भी बहुत अधिक थी, इन कारणों से मध्यवर्ती बस्तियों का न्यू इंग्लैण्ड के उपनिवेशों की भाँति कोई स्पष्ट तथा विशिष्ट रूप नहीं था। भावना की दृष्टि से उच्चतम रीति से संगठित कोई वैसी एकता नहीं थी। दूसरी ओर इनमें सामाजिक स्वतन्त्रता अधिक थी, क्योंकि इनमें उस प्रकार के जीवन को प्रबल रूप से प्रभावित करने वाला कोई एक मानदण्ड नहीं था, जैसा कि न्यू इंग्लैण्ड में था। न्यू इंग्लैण्ड की भाँति वे मुख्य रूप से कृषि कार्य में लगे हुए थे, यद्यपि वे विशेष रूप से न्यूयार्क में रेड इण्डियन लोगों के साथ खूब व्यापार कर रहे थे। पेन्सिलवेनिया ने अपना लोहे का काम आरम्भ कर दिया था और वे अपनी पैदावार का बड़ा भाग वेस्ट इण्डीज को भेजते थे। किन्तु वे मुख्य रूप से ब्रिटिश बन्दरगाहों के साथ व्यापार करते थे, और फ्रेंच वेस्ट इण्डीज के साथ व्यापार पर लगे प्रतिबन्ध को उस पैमाने पर नहीं तोड़ते थे, जिस पर न्यू इंग्लैण्डवासी इसे तोड़ते थे। यह बात उल्लेखनीय है कि समुद्र पार के देशों के साथ व्यापार का बड़ा भाग पेन्सिलवेनिया से सम्बन्ध रखता था, न कि न्यूयार्क से, जो उस समय यद्यपि एक समृद्ध बन्दरगाह था, तथापि वह अमेरिका के व्यापार में उस प्रधानता को प्राप्त करने से अभी बहुत दूर था, जिसे बाद में इसने प्राप्त किया। वस्तुतः पेन्सिलवेनिया का द्रुत विकास १८वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में औपनिवेशिक इतिहास की एक अधिकतम विलक्षण विशेषता थी। इस उपनिवेश ने अधिकाधिक मात्रा में यूरोप से आने वालों की मुख्य-धारा को आकृष्ट किया। निर्धन आवासक या प्रव्रजक इस शर्त के साथ लाये जाते थे कि वे अपने मार्ग-व्यय को चुकाने के लिए तीन से पाँच वर्ष तक बिना मजदूरी लिये काम करेंगे। किन्तु इस युग के अन्त में पेन्सिलवेनिया में आवासकों को पचास एकड़ भूमि देने की परिपाटी थी। इस आकर्षण के कारण, विशेष रूप से जर्मनी से आवासक निरन्तर आने लगे। निश्चित क्षेत्रों में इकट्ठे मिल कर रहने वाले और अपनी मातृभाषा के उपयोग को बनाये रखने वाले जर्मन लोग इस आबादी के एक अतीव ठोस तत्व का निर्माण करते थे। १७४० ई० के ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के एक कानून के अनुसार विदेशी आवासक या आव्रजक सात वर्ष के निवास के बाद ब्रिटिश नागरिकता के पूरे अधिकारों को प्राप्त कर लेते थे। इस प्रकार ये राजनीति में ऐसा भाग लेने में समर्थ थे, जो भाग वे अपनी मातृभूमि में कभी नहीं ले सकते थे। किन्तु जर्मन आवासक आज्ञाकारी प्रजाजन थे। वे अपने साथ स्वशासन की कोई परम्पराएँ नहीं लाये थे। वे राजनीतिक अधिकार इंग्लिश आबादी के हाथों में छोड़ कर सन्तुष्ट थे, इसीलिए ऐसा हुआ कि आबादी में अल्प संख्या में होते हुए भी पेन्सिलवेनिया के शासन का नियन्त्रण अब भी क्वेकर लोगों के हाथ में था। क्वेकर जिद्दी लोग थे, जैसा कि उन्होंने फ्रांस के साथ संघर्ष के संकट में उस समय प्रदर्शित किया, जब उन्होंने अपनी सीमाओं की प्रतिरक्षा के लिए सैनिकों को अथवा धन को देना अस्वीकार किया था। किन्तु समग्र रूप से मध्यवर्ती उपनिवेशों के जन समुदायों में समरूपता का अभाव होने के कारण वे अधिक आज्ञापालक थे और न्यू इंग्लैण्डवासियों की अपेक्षा इनको अधिक आसानी से नियन्त्रण में रखा जा सकता था। इन्होंने व्यापारिक नियमों के विरुद्ध असन्तोष कम मात्रा में प्रदर्शित किया। उन्होंने न्यू इंग्लैण्ड की भाँति इन नियमों की अवहेलना नहीं की।

सभी दक्षिणी उपनिवेशों की समान रूप से यह विशेषता थी कि आर्थिक दृष्टिकोण से वे दासों के श्रम पर निर्भर रहते थे। अन्य बस्तियों में भी दास होते थे। न्यूयार्क में कई दास-विद्रोहों को अतीव क्रूरता से दबा दिया गया गया था; किन्तु अन्यत्र दासों का प्रयोग मुख्य रूप से घरेलू नौकरों के रूप में होता था। दक्षिणी उपनिवेशों में प्रधान उद्योगों का संचालन मुख्य रूप से नीग्रो दासों पर निर्भर था, ये मेरीलैण्ड और वर्जिनिया की आबादी का एक तिहाई भाग और दक्षिणी केरोलिना की आबादी का दो तिहाई भाग थे। दास रखने वाला समाज एक लोकतन्त्रीय समाज बहुत ही कम होता है और नीग्रो दासों के साथ, सभी दक्षिणी उपनिवेशों में "हीन कोटि श्वेतांगों की" एक बड़ी जनसंख्या थी। इनमें से अनेक आरम्भ में निर्वासित अपराधियों के रूप में आये थे। साधनहीन और आलसी होने के कारण वे इनकी आबादी में एक ऐसा तत्व थे, जैसा कोई भी तत्व उत्तरी उपनिवेशों में नहीं था। किन्तु इस उत्तम जलवायु में उन्होंने विशाल खेत रखने वाले कुलीनतन्त्र पर आश्रित रहने वाले व्यक्तियों की तरह से जीवन बिताना अधिक आसान पाया। वस्तुत: सभी दक्षिणी उपनिवेश कुलीनतन्त्रीय थे। किन्तु एक कुलीनतन्त्र अपने अधिकारों के लिए वैसा ही दृढ़ आग्रही तथा अभिमानी हो सकता है, जैसा कोई लोकतन्त्र होता है। जहाँ एक ओर आरामपसन्द और खर्चीला जीवन बिताने वाला वर्जिनिया का भद्रजन व्यापारिक नियमों के बारे में झगड़ा करने के झंझट से ऊपर उठ सकता था, वहाँ दूसरी ओर वह एक न्यू इंग्लैण्डवासी अथवा ब्रिटेन के कुलीन व्यक्ति की भाँति उस समय अधिक से अधिक कठोर हो सकता था, जब उसे अपने अधिकारों के संकट में पड़ने की आशंका हो।

८. राष्ट्रमण्डल की समस्याएँ

१७६३ ई० में युद्ध की अग्निपरीक्षा से विजयी हो कर निकलने वाला, स्पष्ट रूप से विश्व में एक महत्तम शक्ति वाला ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल शिथिल रूप से संगठित जनसमुदायों का एक संगठन था। इसका कोई भी, यहाँ तक कि अधिकतम सुखी समुदाय भी ऐसा नहीं कहा जा सकता था कि जिसने अपने नागरिकों के लिए पूर्ण न्याय और स्वतन्त्रता की व्यवस्था कर ली हो; फिर भी, आयरलैण्ड के लज्जाजनक और दु:खद अपवाद के अतिरिक्त सभी जन समुदाय न्याय और स्वतन्त्रता के लगभग पास तक पहुँच गये थे और भूतल पर विद्यमान अन्य अधिकांश समाजों की अपेक्षा न्याय और स्वतन्त्रता के लिए अधिक स्पष्ट रूप से प्रयास कर रहे थे। इस दु:खपूर्ण अपवाद के अतिरिक्त, उन्होंने स्वतन्त्र समुदायों के ऐसे भाईचारे अथवा साझीदारी का निर्माण किया था, जैसा भाईचारा इतिहास में अब तक कभी नहीं देखा गया था।

१७६३ ई० की विजय राष्ट्रमण्डल के इतिहास में प्रथम महान् अवस्था का चरम उत्कर्ष था, इसने इसके लिए उत्तम अवसर का भव्य क्षेत्र खोल दिया था। किन्तु १७६३ ई० न केवल अतीव इतिहास का चरम उत्कर्ष था, अपितु यह ऐसी नवीन और विशाल समस्याओं को उद्घाटित कर रहा था, जैसी समस्याएँ अब तक लोगों के किसी समूह के आगे नहीं रखी गयीं थीं। समुद्रों पर प्रभुता प्राप्त कर ली गयी थी। उसका उपयोग किस प्रकार

किया जाना चाहिए था? क्या इसे केवल कोरी धौंस जमाने की उस भावना से वैसे ही प्रयुक्त किया जाना था, जिस भावना के कारण पहले स्पेन और पुर्तगाल का पतन हो चुका था ? अथवा उसका आशय सब जातियों के लिए समुद्रों की अधिक स्वतन्त्रता और अधिक सुरक्षा और किसी भी देश के लिये अवसरों को न रोकना था ? भारत में एक आश्चर्यजनक और अवांछित साम्राज्य की नीव रखी जा चुकी थी, इसका प्रयोग किस प्रकार किया जाना था ? क्या इसका प्रयोग अभागे प्रजाजनों के कोरे शोषण के लिए (जैसा कि एक व्यापारिक कम्पनी की भावना से स्वाभाविक रूप से प्रकट होता था) किया जाना था ? क्या भारत के पुराने साम्राज्यों की भाँति इस साम्राज्य का संचालन विशुद्ध रूप से शासकों के लाभ से किया जाना था अथवा इसे भारतीयों के लिए न्याय और स्वतन्त्रता का विस्तार करना था ? ब्रिटिश जनता का तथा इंग्लिश भाषा का प्रभुत्व समूचे उत्तरी महाद्वीप पर स्थापित हो गया था। किन्तु इस महत्वपूर्ण निर्णय ने अनेक नयी समस्याएँ उत्पन्न कर दी थीं। इसने जीते गये कनाडा की विदेशी तथा अभिमानी जाति के साथ व्यवहार करने की समस्या उत्पन्न की थी। क्या उनके साथ कोरे प्रभुत्व वाली वैसी भावना के साथ व्यवहार किया जाना था, जिस भावना को आयरलैण्ड में अनियन्त्रित प्रभुत्व स्थापित करने की अनुमति दी गयी थी अथवा उनको अपनी जीवन पद्धति को बिताने के लिए ऐसी स्वतन्त्रता और स्वाधीनता दी जानी थी, जो उनको अब तक ज्ञात स्वतन्त्रता से अधिक थी ? इसने इंग्लैण्ड तथा उसके अभिमानी और स्वतन्त्र राज्यों के बीच के सम्बन्धों की समस्या उत्पन्न की थी। क्या यह सम्बन्ध एक ओर से प्रभुता का और दूसरी ओर से वश्यता का होना था अथवा किसी संगठित साझीदारी की पद्धति का विकास किया जाना था ? सभी नवीन देशों में, किन्तु विशेष रूप से वेस्ट इण्डीज में सम्पत्ति और शक्ति का आश्चर्यजनक विकास हजारों अभागे नीग्रो लोगों की दासता और दुःखों के आधार पर किया गया था। क्या ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल की स्वतन्त्रता का विस्तार नीग्रो लोगों के लिए भी किया जा सकता था ? क्या विनाशपूर्ण अस्तव्यस्तता को उत्पन्न किये बिना इस अन्याय को दूर किया जा सकता था ? ब्रिटिश द्वीप समूह में आयरलैंण्ड की पीड़ा केवल उसे ही कष्ट नहीं पहुँचा रही थी, किन्तु समूचे राष्ट्रमण्डल को लज्जित कर रही थी और निर्बल बना रही थी। क्या इसमें सुधार हो सकता था ? ग्रेटब्रिटेन में सम्भवतः राजनीतिक स्वतन्त्रता के विकास में एक अवस्था के रूप में तथा निरंकुश शासन के विरुद्ध एक सुरक्षा के रूप में आवश्यक गर्वीले कुलीनतन्त्र की शक्ति स्पष्टरूप से हानिप्रद बन रही थी और स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध के रूप में कार्य कर रही थी। क्या इसके स्थान पर सार्वजनिक मामलों के संचालन में सहयोग की एक अधिक उदार पद्धति को स्थापित किया जा सकता था ? इंग्लैण्ड के लिए इतना अधिक कार्य करने वाली स्थानीय स्वशासन की मशीनरी क्या अधिक कठोर तथा अवास्तविक बन सकती थी ? क्या इसे पुनरुज्जीवित किया जा सकता था ? ब्रिटिश जनता आश्चर्यजनक आर्थिक प्रगति से वस्तुतः राष्ट्र को समृद्ध बना रही थी। किन्तु अर्थ-व्यवस्था जिन रूपों को धारण कर रही थी, उनसे आबादी के बहुत बड़े हिस्सों की स्वतन्त्रता

और सुख कम हो रहे थे। क्या इस प्रगति को मजदूरों की बहुसंख्या के सुख को हानि पहुँचाये बिना बढ़ाया जा सकता था और इसकी गति बहुत तीव्र की जा सकती थी ?

विजयी ब्रिटिश लोगों के सम्मुख अनिवार्य रूप से ये सब समस्याएँ और इनके अतिरिक्त अन्य अनेक समस्याएं उपस्थित हो रही थीं। क्या किसी पीढ़ी के आगे कभी इससे अधिक कठिन समस्याओं का समूह रखा गया है ? इन समस्याओं का समाधान उन गलती कर सकने वाले व्यक्तियों को करना था, जो मुख्य रूप से अपने सामने आने वाले प्रश्नों के परिणामों से अपरिचित थे। वे सब समयों के मनुष्यों की भाँति अपनी पीढ़ी से सम्बन्ध रखने वाली परम्पराओं और पहले से बनी धारणाओं से शासन कर रहे थे। उन्होंने अनेक बड़ी भूलें कीं और अनेक प्रश्नों का उत्तर अनर्थकारी भ्रान्त भावना से दिया। जिस किसी भी युग में उन्हें इन प्रश्नों का उत्तर देना पड़ा, वह युग ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास में अधिकतम शिक्षाप्रद और अधिकतम आलोचना का युग था। इसका प्रतिपादन दूसरे खण्ड में किया जायगा। उस समय उठाये गये प्रश्नों के महत्व की दृष्टि से हम अच्छी तरह यह अनुभव कर सकते हैं कि १७६३ ई० की विजयों को न केवल एक लम्बी तथा वैविध्य-पूर्ण कथा का चरम शिखर नहीं समझा जाना चाहिए, अपितु इसे एक अधिक जटिल और अधिक प्रोत्साहन देने वाली तथा अधिक उदात्त ऐसी कथा की प्रस्तावना भी समझा जाना चाहिए, जिस कथा को नियति अब भी कह रही है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Lecky, History of England and Ireland in the Eighteenth Century; **Traill,** Social England; **Cunningham,** Growth of English Industry and Commerce; **de Saussure,** Foreign View of England in the Reign of George I and George II; **S. And B. Webb**, English Local Government; **Nichol,** History of the Poor Law; **Hasbach,** English Agricultural Labourer; **Graham,** Social Life in Scotland in the Eighteenth Century; **Channing** History of United States; **A. S Turbeville,** (Ed.) Life in Johnson's England; **A. S. Turbeville**, English Men and Manners in the Eighteenth Century; **E. Lipson,** Economic History of England; **C R. Fay,** Great Britain from Adam Smith to the present day; **M. D. George,** London Life in the Eighteenth Century.

• •

प्रथम खण्ड में आये हुए कठिन शब्दों की सूची

A

Act of Attainder—किसी व्यक्ति को दोषी ठहराकर उसके समूचे उत्तराधिकार, नागरिक अधिकार और सम्पत्ति छीनने का पार्लियामेण्ट का कानून।

Anabaptist—इस शब्द का प्रयोग उस सम्प्रदाय के सदस्य के लिए होता था जिसकी स्थापना जर्मनी में १५२१ ई० में हुई थी। यह सम्प्रदाय प्रोटेस्टेण्टों तथा रोमन कैथोलिकों का उग्र विरोधी था; अतः इन दोनों ने इसका दमन किया था। इस सम्प्रदाय को यह नाम दिये जाने का यह कारण था कि इसकी यह मान्यता थी कि बचपन में ईसाई धर्म में दीक्षित करने के लिए किया गया बप्तिस्मा निष्प्रभाव होता है, अतः बड़ी आयु में पुनः बप्तिस्मा किया जाना चाहिए।

Anglican Church—इंग्लैण्ड का राजकीय चर्च।

Annate—रोमन कैथोलिकों के चर्च में एन्नेट (Annate) शब्द का प्रयोग बिशप आदि के किसी धर्मक्षेत्र (See) से प्राप्त होने वाली पहले वर्ष की आमदनी के लिये होता है, यह पुराने जमाने में पोप को उपहार के रूप में दी जाती थी।

Archdeacon – आर्कडीकन बिशप के नीचे स्थान रखने वाला एक धार्मिक अधिकारी था। यह गाँवों में दस भिक्षुओं के समूह के अध्यक्षों (Deans) के कार्य की देखभाल करता था तथा धार्मिक न्यायालय लगाया करता था।

Armada—इंग्लैण्ड को जीतने के लिए १५८८ ई० में स्पेन के राजा फिलिप द्वितीय द्वारा भेजा गया विशाल समुद्री बेड़ा।

Assize—दीवानी तथा फौजदारी मामलों पर विचार करने के लिए दौरा जजों द्वारा न्यायालय लगाने की व्यवस्था।

B

Baron—इंग्लैण्ड के कुलीनवर्ग में निम्नतम स्थान रखने वाला जागीरदार।

और सुख कम हो रहे थे। क्या इस प्रगति को मजदूरों की बहुसंख्या के सुख को हानि पहुँचाये बिना बढ़ाया जा सकता था और इसकी गति बहुत तीव्र की जा सकती थी ?

विजयी ब्रिटिश लोगों के सम्मुख अनिवार्य रूप से ये सब समस्याएँ और इनके अतिरिक्त अन्य अनेक समस्याएँ उपस्थित हो रही थीं। क्या किसी पीढ़ी के आगे कभी इससे अधिक कठिन समस्याओं का समूह रखा गया है ? इन समस्याओं का समाधान उन गलती कर सकने वाले व्यक्तियों को करना था, जो मुख्य रूप से अपने सामने आने वाले प्रश्नों के परिणामों से अपरिचित थे। वे सब समयों के मनुष्यों की भाँति अपनी पीढ़ी से सम्बन्ध रखने वाली परम्पराओं और पहले से बनी धारणाओं से शासन कर रहे थे। उन्होंने अनेक बड़ी भूलें कीं और अनेक प्रश्नों का उत्तर अनर्थकारी भ्रान्त भावना से दिया। जिस किसी भी युग में उन्हें इन प्रश्नों का उत्तर देना पड़ा, वह युग ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल के इतिहास में अधिकतम शिक्षाप्रद और अधिकतम आलोचना का युग था। इसका प्रतिपादन दूसरे खण्ड में किया जायगा। उस समय उठाये गये प्रश्नों के महत्व की दृष्टि से हम अच्छी तरह यह अनुभव कर सकते हैं कि १७६३ ई० की विजयों को न केवल एक लम्बी तथा वैविध्य-पूर्ण कथा का चरम शिखर नहीं समझा जाना चाहिए, अपितु इसे एक अधिक जटिल और अधिक प्रोत्साहन देने वाली तथा अधिक उदात्त ऐसी कथा की प्रस्तावना भी समझा जाना चाहिए, जिस कथा को नियति अब भी कह रही है।

सन्दर्भ-ग्रन्थ

Lecky, History of England and Ireland in the Eighteenth Century; **Traill,** Social England; **Cunningham,** Growth of English Industry and Commerce; **de Saussure,** Foreign View of England in the Reign of George I and George II; **S. And B. Webb**, English Local Government; **Nichol,** History of the Poor Law; **Hasbach,** English Agricultural Labourer; **Graham,** Social Life in Scotland in the Eighteenth Century; **Channing** History of United States; **A. S Turbeville,** (Ed.) Life in Johnson's England; **A. S. Turbeville**, English Men and Manners in the Eighteenth Century; **E. Lipson,** Economic History of England; **C R. Fay,** Great Britain from Adam Smith to the present day; **M. D. George,** London Life in the Eighteenth Century.

• •

प्रथम खण्ड में आये हुए कठिन शब्दों की सूची

A

Act of Attainder—किसी व्यक्ति को दोषी ठहराकर उसके समूचे उत्तराधिकार, नागरिक अधिकार और सम्पत्ति छीनने का पार्लियामेण्ट का कानून।

Anabaptist—इस शब्द का प्रयोग उस सम्प्रदाय के सदस्य के लिए होता था जिसकी स्थापना जर्मनी में १५२१ ई० में हुई थी। यह सम्प्रदाय प्रोटेस्टेण्टों तथा रोमन कैथोलिकों का उग्र विरोधी था; अतः इन दोनों ने इसका दमन किया था। इस सम्प्रदाय को यह नाम दिये जाने का यह कारण था कि इसकी यह मान्यता थी कि बचपन में ईसाई धर्म में दीक्षित करने के लिए किया गया बप्तिस्मा निष्प्रभाव होता है, अतः बड़ी आयु में पुनः बप्तिस्मा किया जाना चाहिए।

Anglican Church—इंग्लैण्ड का राजकीय चर्च।

Annate—रोमन कैथोलिकों के चर्च में एन्नेट (Annate) शब्द का प्रयोग बिशप आदि के किसी धर्मक्षेत्र (See) से प्राप्त होने वाली पहले वर्ष की आमदनी के लिये होता है, यह पुराने जमाने में पोप को उपहार के रूप में दी जाती थी।

Archdeacon – आर्कडीकन बिशप के नीचे स्थान रखने वाला एक धार्मिक अधिकारी था। यह गाँवों में दस भिक्षुओं के समूह के अध्यक्षों (Deans) के कार्य की देखभाल करता था तथा धार्मिक न्यायालय लगाया करता था।

Armada—इंग्लैण्ड को जीतने के लिए १५८८ ई० में स्पेन के राजा फिलिप द्वितीय द्वारा भेजा गया विशाल समुद्री बेड़ा।

Assize—दीवानी तथा फौजदारी मामलों पर विचार करने के लिए दौरा जजों द्वारा न्यायालय लगाने की व्यवस्था।

B

Baron—इंग्लैण्ड के कुलीनवर्ग में निम्नतम स्थान रखने वाला जागीरदार।

Bartholomew—४४ ई० में आर्मीनिया में यह अपने ईसाई सिद्धान्तों के प्रचार के लिए जिन्दा खाल खिंचवा कर बलिदान होने वाला सन्त है। इसकी स्मृति प्रतिवर्ष २४ अगस्त को मनायी जाती है। इसका प्रतीक वह चाकू है, जिससे इसकी जिन्दा खाल खींची गई थी।

Beggars' of the Sea—यह नाम १६ वीं शताब्दी में स्पेन के शासन के विरुद्ध हालैण्ड में विद्रोह करने वाले व्यक्तियों ने स्वयमेव ग्रहण किया था। इस नाम को ग्रहण करने का एक मनोरंजक कारण था। कहा जाता है कि १५६५ ई० में जब विद्रोहियों ने अपना संगठन बनाया तो हालैण्ड पर शासन करने वाली स्पेनिश परिषद् के एक सदस्य ने इस बारे में उस समय हालैण्ड की संरक्षिका पार्मा की मार्गरेट से बड़ी चिन्ता प्रकट की। इस पर मार्गरेट ने कहा कि उसे इन भिखमंगों (Gueux) से कोई भी भय नहीं है। उस समय से डच विद्रोहियों ने अपने संगठन के लिए इस नाम को अपनाना सम्मानास्पद समझा। इस शब्द का प्रयोग हालैण्ड के उन निजी जहाज (Privateer) रखने वाले डच विद्रोहियों के लिए होता है जो संघर्ष में स्पेन के जहाजों की लूटमार किया करते थे।

Borough—इंग्लैण्ड का ऐसा नगर जिसे राजकीय अधिकार-पत्र या चार्टर के द्वारा अथवा पार्लियामेण्ट के कानून द्वारा कुछ विशेषाधिकार एवं नगरपालिका अथवा निगम बनाने के और पार्लियामेण्ट में अपने सदस्य भेजने के अधिकार प्रदान किये जाते है।

Boroughmonger—पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार रखने वाले नगरों के वोटों का सौदा करने वाले व्यक्ति।

C

Calvinism—कैल्विनवाद एक फ्रेंच धर्मसुधारक जॉन कैल्विन (१५०९-६४) द्वारा प्रवर्तित धर्मसुधार आन्दोलन का नाम है। यह स्काटलैण्ड में विशेष रूप से प्रचलित है।

Cardinal—पोप का निर्वाचन करने वाले सत्तर व्यक्तियों की महापरिषद् के सदस्य कार्डिनल कहलाते थे।

Carthusian—१०८६ ई० में फ्रांस के दौफिन (Dauphine) नामक प्रदेश के सन्त बनो द्वारा यह धार्मिक सम्प्रदाय स्थापित किया गया था। यह अपने कठोर नियमों के लिए प्रसिद्ध था।

Castle Chamber—यह आयरलैण्ड में ब्रिटेन के वायसराय का न्यायालय तथा प्रशासन का केन्द्र था।

Cartolic Emancipation –इंग्लैण्ड के कानून द्वारा कैथोलिक मत के अनुयायियों पर लगाये गये पार्लियामेण्ट का सदस्य न बनने, सरकारी पदों पर नियुक्त न किये जाने आदि के नागरिक प्रतिबन्धों को हटाने का प्रयत्न करने वाला आन्दोलन कैथोलिक मुक्ति-आन्दोलन कहलाता था। १८२९ ई० के एक कानून द्वारा कैथोलिक इन प्रतिबन्धों से मुक्त हुए थे।

Cavalier—चार्ल्स प्रथम का समर्थक राजपक्षावलम्बी।

Chapter—चैप्टर का मूल अर्थ पुस्तक का अध्याय है। ईसाई भिक्षुओं के नियमों का प्रतिपादन करने वाली पुस्तक का एक अध्याय भिक्षुओं की जिस सभा में पढ़ा जाता था, उसे भी बाद में चैप्टर (Chapter) कहा जाने लगा। इसी कारण चैप्टर का अर्थ डीन (Dean) की अध्यक्षता में इस प्रकार पाठ करने वाले ईसाई पादरियों तथा भिक्षुओं का समूह हो गया। पुस्तक में चैप्टर का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है।

Chancellor—इंग्लैण्ड में चान्सलर या लार्ड हाई चान्सलर (Lord High Chancellor) का अर्थ लार्डसभा का अध्यक्ष, राज्य का सर्वोच्च अधिकारी तथा प्रधान न्यायाधीश है।

Cinque Ports—फ्रांस के सामने स्थित इंग्लैण्ड के पूर्वीतट के पुराने पाँच बन्दरगाह—सैण्डविच (Sandwich), डोवर (Dover), हीथ (Hythe), रोमनी (Romney) और हैस्टिंग्स (Hastings), पंचपत्तन।

Cistercian order—यह फ्रांस का एक परिव्राजक सम्प्रदाय है। यह सम्प्रदाय सब से पहले फ्रांस में १०६८ ई० में सितो (Citeaux) में स्थापित हुआ था; अतः यह सिस्टर्शियन आर्डर कहलाता है। यह सेण्ट बेनेडेक्टाइन सम्प्रदाय की अपेक्षा अधिक कठोर नियमों का पालन करता था।

Conventicle Act—१६६४ ई० में पास किया गया एक कानून : इसमें यह घोषित किया गया था कि यदि धार्मिक पूजा के लिए पाँच से अधिक व्यक्ति एकत्र होंगे और वे यह पूजा इंग्लैण्ड के चर्च द्वारा निर्धारित सामान्य प्रार्थना की पुस्तक (Book of Common Prayer) के अनुसार नहीं करेंगे तो इसे राजद्रोह करने वाला जनसमूह समझा जायेगा। यह कानून १६८६ ई० के सहिष्णुता कानून द्वारा रद्द कर दिया गया था।

Copy—पट्टेदारी या जमाबन्दी की नकल : इसमें मेनर के रिवाजों के अनुसार जमीनों पर अधिकार रखने वाले काश्तकारों की वह सूची होती थी, जिसकी मूल प्रतिलिपि मेनर के न्यायालय में सुरक्षित रखी जाती थी। इसे कानून की परिभाषा में कॉपी (Copy) या पट्टा कहा जाता था।

Copy-holder—पट्टेदार, यह ऐसा काश्तकार होता था जो भूमि पर मेनर के न्यायालय में सुरक्षित रखी जाने वाली सूची तथा उसके स्वत्वों को सूचित करने वाले लेख (Roll) से की गयी प्रतिलिपि (Copy) के कारण अपना स्वत्व रखता था। इसमें यह बताया जाता था कि काश्तकार किन शर्तों पर जमींदार की भूमि को जोत सकता है, उसे कौन से कर और सेवाएँ जमींदार को देनी होगीं।

Corporation Act—१६६१ ई० में पुनः स्थापना के बाद प्यूरिटन लोगों के नगरों में प्रबल होने के कारण एक कार्पोरेशन एक्ट पास किया गया। इसके अनुसार म्यूनिसिपल कार्पोरेशनों के सब सदस्यों के लिए यह घोषणा करना आवश्यक बना दिया गया था कि वे राजमुकुट के प्रति प्रतिरोध के तथा पवित्र संघ और समझौते के एक औपचारिक परित्याग के विरोधी हैं।

Bartholomew—४४ ई० में आर्मीनिया में यह अपने ईसाई सिद्धान्तों के प्रचार के लिए जिन्दा खाल खिंचवा कर बलिदान होने वाला सन्त है। इसकी स्मृति प्रतिवर्ष २४ अगस्त को मनायी जाती है। इसका प्रतीक वह चाकू है, जिससे इसकी जिन्दा खाल खींची गई थी।

Beggars' of the Sea—यह नाम १६ वीं शताब्दी में स्पेन के शासन के विरुद्ध हालैण्ड में विद्रोह करने वाले व्यक्तियों ने स्वयमेव ग्रहण किया था। इस नाम को ग्रहण करने का एक मनोरंजक कारण था। कहा जाता है कि १५६५ ई० में जब विद्रोहियों ने अपना संगठन बनाया तो हालैण्ड पर शासन करने वाली स्पेनिश परिषद् के एक सदस्य ने इस बारे में उस समय हालैण्ड की संरक्षिका पार्मा की मार्गरेट से बड़ी चिन्ता प्रकट की। इस पर मार्गरेट ने कहा कि उसे इन भिखमंगों (Gueux) से कोई भी भय नहीं है। उस समय से डच विद्रोहियों ने अपने संगठन के लिए इस नाम को अपनाना सम्मानास्पद समझा। इस शब्द का प्रयोग हालैण्ड के उन निजी जहाज (Privateer) रखने वाले डच विद्रोहियों के लिए होता है जो संघर्ष में स्पेन के जहाजों की लूटमार किया करते थे।

Borough—इंग्लैण्ड का ऐसा नगर जिसे राजकीय अधिकार-पत्र या चार्टर के द्वारा अथवा पार्लियामेण्ट के कानून द्वारा कुछ विशेषाधिकार एवं नगरपालिका अथवा निगम बनाने के और पार्लियामेण्ट में अपने सदस्य भेजने के अधिकार प्रदान किये जाते हैं।

Boroughmonger—पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार रखने वाले नगरों के वोटों का सौदा करने वाले व्यक्ति।

C

Calvinism—कैल्विनवाद एक फ्रेंच धर्मसुधारक जॉन कैल्विन (१५०९-६४) द्वारा प्रवर्तित धर्मसुधार आन्दोलन का नाम है। यह स्काटलैण्ड में विशेष रूप से प्रचलित है।

Cardinal—पोप का निर्वाचन करने वाले सत्तर व्यक्तियों की महापरिषद् के सदस्य कार्डिनल कहलाते थे।

Carthusian—१०८६ ई० में फ्रांस के दौफिन (Dauphine) नामक प्रदेश के सन्त बनो द्वारा यह धार्मिक सम्प्रदाय स्थापित किया गया था। यह अपने कठोर नियमों के लिए प्रसिद्ध था।

Castle Chamber—यह आयरलैण्ड में ब्रिटेन के वायसराय का न्यायालय तथा प्रशासन का केन्द्र था।

Cartolic Emancipation —इंग्लैण्ड के कानून द्वारा कैथोलिक मत के अनुयायियों पर लगाये गये पार्लियामेण्ट का सदस्य न बनने, सरकारी पदों पर नियुक्त न किये जाने आदि के नागरिक प्रतिबन्धों को हटाने का प्रयत्न करने वाला आन्दोलन कैथोलिक मुक्ति-आन्दोलन कहलाता था। १८२९ ई० के एक कानून द्वारा कैथोलिक इन प्रतिबन्धों से मुक्त हुए थे।

Cavalier—चार्ल्स प्रथम का समर्थक राजपक्षावलम्बी।

Chapter—चैप्टर का मूल अर्थ पुस्तक का अध्याय है। ईसाई भिक्षुओं के नियमों का प्रतिपादन करने वाली पुस्तक का एक अध्याय भिक्षुओं की जिस सभा में पढ़ा जाता था, उसे भी बाद में चैप्टर (Chapter) कहा जाने लगा। इसी कारण चैप्टर का अर्थ डीन (Dean) की अध्यक्षता में इस प्रकार पाठ करने वाले ईसाई पादरियों तथा भिक्षुओं का समूह हो गया। पुस्तक में चैप्टर का प्रयोग इसी अर्थ में हुआ है।

Chancellor—इंग्लैण्ड में चान्सलर या लार्ड हाई चान्सलर (Lord High Chancellor) का अर्थ लार्डसभा का अध्यक्ष, राज्य का सर्वोच्च अधिकारी तथा प्रधान न्यायाधीश है।

Cinque Ports—फ्रांस के सामने स्थित इंग्लैण्ड के पूर्वीतट के पुराने पाँच बन्दरगाह—सैण्डविच (Sandwich), डोवर (Dover), हीथ (Hythe), रोमनी (Romney) और हैस्टिंग्स (Hastings), पंचपत्तन।

Cistercian order—यह फ्रांस का एक परिव्राजक सम्प्रदाय है। यह सम्प्रदाय सब से पहले फ्रांस में १०९८ ई० में सितौ (Citeaux) में स्थापित हुआ था; अतः यह सिस्टर्शियन आर्डर कहलाता है। यह सेण्ट बेनेडेक्टाइन सम्प्रदाय की अपेक्षा अधिक कठोर नियमों का पालन करता था।

Conventicle Act—१६६४ ई० में पास किया गया एक कानून: इसमें यह घोषित किया गया था कि यदि धार्मिक पूजा के लिए पाँच से अधिक व्यक्ति एकत्र होंगे और वे यह पूजा इंग्लैण्ड के चर्च द्वारा निर्धारित सामान्य प्रार्थना की पुस्तक (Book of Common Prayer) के अनुसार नहीं करेंगे तो इसे राजद्रोह करने वाला जनसमूह समझा जायेगा। यह कानून १६८९ ई० के **सहिष्णुता कानून** द्वारा रद्द कर दिया गया था।

Copy—पट्टेदारी या जमाबन्दी की नकल: इसमें मेनर के रिवाजों के अनुसार जमीनों पर अधिकार रखने वाले काश्तकारों की वह सूची होती थी, जिसकी मूल प्रतिलिपि मेनर के न्यायालय में सुरक्षित रखी जाती थी। इसे कानून की परिभाषा में कॉपी (Copy) या पट्टा कहा जाता था।

Copy-holder—पट्टेदार, यह ऐसा काश्तकार होता था जो भूमि पर मेनर के न्यायालय में सुरक्षित रखी जाने वाली सूची तथा उसके स्वत्वों को सूचित करने वाले लेख (Roll) से की गयी प्रतिलिपि (Copy) के कारण अपना स्वत्व रखता था। इसमें यह बताया जाता था कि काश्तकार किन शर्तों पर जमींदार की भूमि को जोत सकता है, उसे कौन से कर और सेवाएँ जमींदार को देनी होंगी।

Corporation Act—१६६१ ई० में पुनः स्थापना के बाद प्यूरिटन लोगों के नगरों में प्रबल होने के कारण एक कार्पोरेशन एक्ट पास किया गया। इसके अनुसार म्यूनिसिपल कार्पोरेशनों के सब सदस्यों के लिए यह घोषणा करना आवश्यक बना दिया गया था कि वे राजमुकुट के प्रति प्रतिरोध के तथा पवित्र संघ और समझौते के एक औपचारिक परित्याग के विरोधी हैं।

Covenanter—यह शब्द इंग्लैंड के गृहयुद्ध में स्काटलैंण्ड के उन प्रेसबिटेरियन लोगों के लिए प्रयुक्त होता था, जिन्होंने १६४३ ई० में चार्ल्स प्रथम द्वारा धार्मिक स्वतन्त्रता पर किये जाने वाले आक्रमणों से रक्षा करने के लिए अपना एक पवित्र संघ (Solemn League) बनाया था और अपनी धार्मिक स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए एक समझौता (Convenant) किया था। चार्ल्स द्वितीय ने १६५१ ई० में इस समझौते को मान लिया था, किन्तु बाद में गद्दी पर बैठने पर उसने इसे अस्वीकार कर दिया।

D

Danegeld—इंग्लैण्ड में १० वीं और ११ वीं शताब्दियों में प्रतिवर्ष लिया जाने वाला एक विशेष भूमि कर : इसे यह नाम देने का कारण यह था कि आरम्भ में यह डेन लोगों के आक्रमणों का सामना करने के लिए उपयुक्त सामग्री जुटाने में आवश्यक धनराशि प्राप्त करने के लिए लगाया गया था।

Danelaw—इंग्लैण्ड में डेन लोगों द्वारा अधिकृत प्रदेश तथा इसमें प्रचलित कानून, यह प्रदेश बैंटलिंग स्ट्रीट के उत्तर पूर्व का जिला था और ८७८ ई० में बेडमोर की सन्धि द्वारा डेन लोगों को दिया गया था।

Deacon—डीकन बिशप के क्षेत्र में बिशप तथा पुरोहित (Priest) के बाद तीसरा स्थान रखने वाला एक धार्मिक अधिकारी होता है। यह पुरोहित को विभिन्न कार्य करने में सहायता देता है।

Dean—यह लैटिन भाषा में दस भिक्षुओं के अध्यक्ष को (Dean parish) कहते हैं।

Diocese—एक बिशप की देखरेख में रहने वाला चर्च का क्षेत्र डायसीस कहलाता है। यह अनेक उपविभागों में बँटा होता था। ये उपविभाग पेरिश (Parish) कहलाते थे, इनका क्षेत्र छोटे गाँव या पल्ली तक ही सीमित होता है। इसमें कार्य करने वाले पुरोहित पेरिश या पल्ली पुरोहित कहलाते हैं।

Domesday Book—१०८६ ई० में विजेता विलियम की आज्ञा से इंग्लैण्ड की सारी भूमि का सूक्ष्म तथा विस्तृत सर्वेक्षण किया गया था। इसमें यह बताया गया था कि इसका स्वामी कौन है, इसका मूल्य क्या है, इसमें क्या पूंजी है, इसमें विभिन्न प्रकार के कौन से असामी काम करते हैं। यह विलक्षण सर्वेक्षण अब तक पाया जाता है और इसे डूम्सडे बुक (Domesday Book) कहा जाता है।

Enclosure—कृषि के लिए पंचायती भूमि को आवेष्टन या बाड़ा लगाकर तथा घेरा बना कर अपना बनाना।

Erastianism—इस शब्द का अर्थ धार्मिक विषयों में राज्य द्वारा हस्तक्षेप करना तथा इसका सर्वोच्च शक्ति रखना है। इंग्लैण्ड के चर्च में यही स्थिति है, क्योंकि यहाँ चर्च की असेम्बली द्वारा किये गये सभी कार्यों पर पार्लियामेण्ट की स्वीकृति लेना आवश्यक होता है और इंग्लैण्ड का राजा सर्वोच्च शासक होने के नाते प्रधान-मन्त्री के परामर्श से बिशपों को

तथा चर्च के अन्य पदाधिकारियों को नियुक्त करता है। इस विचारधारा का प्रतिपादन सर्व प्रथम जर्मनी के एक नास्तिक विचारक थामस लीवर (१५२४-८३ ई०) अथवा इरेस्टस (Erastus) ने किया था, अतएव इसके अनुयायी इरेस्टियन कहलाते हैं।

Evangelical—प्रोटेस्टैण्ट लोगों का एक विशेष धार्मिक सम्प्रदाय; इसका यह विश्वास है कि गॉस्पल (Gospel) या सुसमाचार का मूलतत्व विश्वास द्वारा मुक्ति पाने के सिद्धान्त में निहित है। यह सम्प्रदाय धार्मिक संस्कारों अथवा सत्कर्मों को मुक्ति के लिए पर्याप्त नहीं समझता है।

F

Feudal Tenure—सामन्ती भूधारण पद्धति।

Fifth Monarchymen—पंचम राजतन्त्र पक्षपाती, यह उन व्यक्तियों के उग्र एवं कट्टर धार्मिक सम्प्रदाय को कहते हैं, जो १६५४ ई० से १६६० ई० तक यह विश्वास रखते थे कि अब भूमण्डल पर दूसरी बार ईसामसीह का अवतरण होने वाला है और वे पाँचवाँ सार्वभौम राजतन्त्र स्थापित करेंगे, इससे पहले के चार सार्वभौम राजतन्त्र (Universal Monarchies)—असीरियन, ईरानी, मैसीडोनियन तथा रोमन थे।

Frankpledge—एंग्लो-सैक्सन क़ानून में एक ऐसी पद्धति का नाम था जिसके अनुसार दस-दस व्यक्तियों के समूह (Tithing) बनाये जाते थे और इन दस व्यक्तियों में से प्रत्येक को दूसरे के अपराध के लिए जिम्मेदार समझा जाता था, यदि इन दस व्यक्तियों में से कोई एक अपराध करता था तो शेष नौ व्यक्तियों को इसकी पूरी क्षतिपूर्ति करनी पड़ती थी।

Free Companies—एडवर्ड के नियन्त्रण से सर्वथा मुक्त पेशेवर डाकुओं के भीषण दल।

Free-holder—यह एक ऐसी जागीर या भू-सम्पत्ति रखने वाले को को कहते हैं, जिस पर उसके स्वामी को पूर्ण अधिकार हो तथा उसे इसके लिए किसी सामन्त को किसी प्रकार का कर या सेवाएँ न देनी पड़ती हों। सम्पत्ति पर पूर्ण अधिकार होने से उसे पूर्ण या अधिकारी या पूर्ण स्वत्वाधिकारी कहा जाता था।

Fyrd—स्वतन्त्र व्यक्तियों की राष्ट्रीय सेना।

G

Grand Alliance—यह महान् सन्धि १२ मई १६८९ ई० को जर्मनी, इंग्लैण्ड, स्पेन और सेवाय में इस उद्देश्य से हुई थी कि फ्रांस और स्पेन के एकीकरण को रोका जाय।

Grand Jury—महापंचायत, महान्याय सभा, १२ से ३३ व्यक्तियों का पंच-समुदाय।

Gunpowder plot—कुछ रोमन कैथोलिकों ने जेम्स प्रथम को लार्ड सभा एवं

कामन्स सभा के सदस्यों के साथ मारने के लिए यह योजना बनायी थी कि पार्लियामेण्ट भवन के तहखाने में बारूद से भरे हुए ढोल रख दिये जायँ और पार्लियामेण्ट का उद्घाटन करने के लिए ५ नवम्बर १६०५ ई० को जब राजा वहाँ आये तो गाई फाक्स नामक व्यक्ति द्वारा बारूद के इन ढोलों में आग लगाकर इस भवन को तथा राजा को नष्ट कर दिया जाय। इसीलिये इसे बारूद से सम्पन्न किया जाने वाला षड्यन्त्र कहते हैं, यह इसलिए नहीं सफल हुआ कि लार्ड सभा के एक कैथोलिक सदस्य को षड्यन्त्रकारियों ने उस दिन पार्लियामेण्ट में न जाने की चेतावनी दी थी और उसने यह सूचना अधिकारियों को दे दी थी।

H

Habeas Corpus Act—बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम, इसे १६७९ ई० में पार्लियामेण्ट ने पास किया था। इसमें पुराने बन्दी प्रत्यक्षीकरण के आदेश (Writ of Habeas Corpus) के जारी करने में किये जाने वाले विलम्बों को रोका गया और इस प्रकार बिना जाँच के बन्दी बनाने के विरुद्ध उन संरक्षणों को सुदृढ़ बनाया, जिन्हें बृहत् अधिकार-पत्र (Magna Carta) में आरम्भ किया था और जिन्हें अधिकार के आवेदन पत्र (Petition of Right) ने परिष्कृत एवं सुदृढ़ किया था।

Hide—यह मध्यकाल में भूमि का एक नाप था। इस नाप की मात्रा विभिन्न स्थानों पर बदलती रहती थी। आरम्भ में यह इतनी भूमि समझी जाती थी, जिसमें एक स्वतन्त्र परिवार का तथा उस पर आश्रित व्यक्तियों का भरण-पोषण हो सके। इसके अतिरिक्त इसे एक साल में एक हल द्वारा जोती जा सकने वाली भूमि भी माना जाता था। यह सामान्यत: १२० एकड़ भूमि होती थी।

High Churchman—धार्मिक संस्कार तथा कर्मकाण्ड आदि को प्रमुख स्थान देने वाला दल या व्यक्ति।

Hundred—यह प्राचीन इंग्लैण्ड के जिले में ऐसे छोटे उपविभागों को कहा जाता था, जिनका आरम्भिक विस्तार सम्भवत: १०० हाइड (१ हाइड=१२० एकड़) जितना भूप्रदेश होता था।

Hussite—हस्साइट बोहीमिया निवासी जान हस्स (१३७३-१४१५ ई०) के अनुयायियों को कहते हैं। यह मध्यकाल का एक प्रसिद्ध धर्म-सुधारक था।

I

Interregnum—दो राजाओं के शासन कालों का मध्यवर्ती समय।

J

Jacobite—१६८८ के बाद जेम्स द्वितीय, अथवा उसके पुत्र 'दि प्रिटेण्डर' का अनुयायी। लैटिन में जेम्स को जेकब कहते हैं अत: उसके समर्थक जेकोबाइट कहलाते थे।

Jesuits—१५३४ ई० में लायोला नामक व्यक्ति ने पुरोहितों के एक नवीन सम्प्रदाय-**ईसा के समाज** (Society of Jesus) की स्थापना की थी। इसके सदस्य जेसुइट कहलाते थे। इस सम्प्रदाय की स्थापना का उद्देश्य धर्मसुधार आन्दोलन के आक्रमणों से रोमन कैथोलिक धर्म की रक्षा करना तथा गैर ईसाई जातियों और देशों में ईसाइयत का प्रचार करना था। अपने कठोर अनुशासन, संगठन और गुप्त कार्यवाहियो के कारण यह शीघ्र ही बहुत शक्तिशाली संस्था बन गयी। रोमन कैथोलिक देशों में इसका बड़ा प्रभाव था और प्रोटेस्टेंट धर्म वाले देशों में इससे बड़ा खतरा पैदा हो गया था। अत: १५७९ ई० में इंग्लैण्ड में तथा १५९५ ई० में फ्रांस में इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। प्रोटेस्टेण्ट देशों में जेसुइट अपनी कार्यवाहियों के लिए इतने अधिक बदनाम हो गये कि जेसुइट का अर्थ धोखेबाज, मक्कार और झूठा समझा जाने लगा।

Journeymen—दूसरों के लिये घूम-घूम कर काम करने वाले मिस्त्री।

Jury—पंच।

Justice of Peace—नगर में शान्ति स्थापित करने के लिए नियुक्त किया गया छोटी श्रेणी का पुरशासक या मैजिस्ट्रेट।

Justiciar—मध्यकालीन इंग्लैण्ड का एक उच्च राजनीतिक एवं न्यायिक अधिकारी।

K

Kirk —स्काटलैण्ड का गिरजा या चर्च।

Kirk session—स्काटलैण्ड तथा प्रेसबिटेरियन चर्च में निम्नतम सभा या सम्मेलन, इसमें पुरोहित और बड़े पादरी सम्मिलित हुआ करते थे।

Kilt—यह स्काटलैण्ड के हाइलैण्डवासियों के घुटनों तक आने वाला एक प्रकार के छोटे लँहगे का विशिष्ट वेश है।

L

Laissez faire—राज्य द्वारा आर्थिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की नीति।

Lease holder—यह एक प्रकार का ठेका होता है, जिसमें सामन्त प्राय: लगान के आधार पर अपनी भूमि या मकान किरायेदार को निश्चित अवधि के लिए दिया करता था और यह ठेका किसी भी पक्ष की सहमति से समाप्त किया जा सकता था।

Legion—प्राचीन रोम में ३००० से ६००० तक पैदल सैनिकों का समूह लीजन कहलाता था। इसमें इनके अतिरिक्त कुछ घुड़सवार सैनिक भी होते थे।

Long Parliament—लम्बी या दीर्घकालीन पार्लियामेण्ट उस पार्लियामेण्ट को

कहते हैं, जो १६४० ई० में चुनी गयी थी और १६६० ई० तक चलती रही। इसने गृहयुद्ध आरम्भ किया था और १६५३ ई० में क्रामवैल ने इसे निष्कासित किया था। १६५६ ई० में इसे दो बार बुलाया गया तथा १६६० ई० में चार्ल्स द्वितीय को राजगद्दी पर बिठाने के बाद यह समाप्त हो गयी। इस प्रकार यह पार्लियामेण्ट २० वर्ष तक चलती रही। इसे लम्बी पार्लियामेण्ट का विशेषण १३ अप्रैल १६४० ई० से ५ मई १६४० ई० की बहुत थोड़ी अवधि तक चलने वाली अल्पकालीन पार्लियामेण्ट की तुलना में दिया गया है।

Lord Chancellor - देखिए Chancellor'।

Lord Lieutenant—१६२२ ई० तक आयरलैण्ड में ब्रिटिश सरकार का वायसराय या राजप्रतिनिधि।

Lords of the Articles—पार्लियामेण्ट के सारे मामलों के प्रारूप तैयार करने वाले व्यक्ति।

M

Magdalene—माडलिन, १४५८ ई० में विंचैस्टर के बिशप द्वारा स्थापित आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय का एक महाविद्यालय।

Magna Carta—१५ जून १२१५ ई० को राजा जान से उसके सामन्तों ने ब्रिटिश स्वतन्त्रता के आधारभूत बृहत् अधिकार-पत्र को प्राप्त किया था। इसमें ३७ धाराएँ थीं और इनका प्रधान उद्देश्य राजा की शक्ति के दुरुपयोग को रोकना और इस बात की व्यवस्था करना था कि किसी भी प्रजाजन को बिना अभियोग चलाये और बिना दण्ड दिये जेल में बन्द करके नहीं रखा जा सकता है।

Manor—मेनर, यह एक पृथक् रूप से संगठित जागीर (Estate) या ऐसा भू-प्रदेश था जिसमें लार्ड की अपनी सीर (Demesne) तथा ऐसी जमीनें सम्मिलित होती थीं, जिनमें उसे कुछ विशेषाधिकार तथा विशेष कर प्राप्त करने के अधिकार होते थे। इसका दूसरा अर्थ लार्ड का निवास स्थान तथा इसके साथ लगी हुई जमीन होती थी। मेनर शब्द निवास का अर्थ देने वाली लैटिन की Menere धातु से बना है।

Mass—यूकेरिस्ट का पवित्र पर्व।

Marcher Lord—सीमावर्ती प्रदेश की रक्षा करने वाले सरदार।

Militia—नागरिक सेना।

Murudrum—यह एक प्रकार अर्थदण्ड है। यह किसी भी ऐसे मृत शरीर के लिए लिया जाता था, जिसके हत्यारे का पता न लग सके। यह अर्थदण्ड समूचे जिले के निवासियों को देना पड़ता था।

N

Non-conformist—एंग्लिकन चर्च से भिन्न मतावलम्बी।

O

Order-in-council—प्रिवी कौंसिल के परामर्श पर किसी प्रशासनात्मक विषय में दी गयी राजा की आज्ञा।

Outlaw—कानून के संरक्षण से बाह्य अथवा आततायी घोषित करना। मिलाइये, मनुस्मृति आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् ॥

P

Parliamentary borough—ऐसा नगर जिसे पार्लियामेण्ट में कम-से-कम एक सदस्य चुनकर भेजने का अधिकार होता था।

Petition of Right—अधिकारों का याचनापत्र, यह जनता के अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की एक ऐसी घोषणा थी, जिसे पार्लियामेण्ट ने राजा चार्ल्स प्रथम के सम्मुख पेश किया था और उसने १६२८ ई० में इसे स्वीकार किया।

Piligrim Fathers—यह नाम उन प्यूरिटन अंग्रेजों को दिया जाता है, जो १६२० ई० में मेफ्लावर (Mayflower) नामक जहाज में सवार हो कर अमेरिका गये थे और वहाँ उन्होंने प्लिमथ (मैसाचुसेट्स) की बस्ती बसायी थी।

Plantagenet—यह वंश आन्जेविन (Anjevin) वंश के नाम से भी प्रसिद्ध है। हेनरी द्वितीय का पिता अपने राजचिह्न के रूप में पीले फूलों वाली रेतीले तटों पर उगने वाली झाड़ी (Broom Spring या Plantagenet) का उपयोग करता था, इससे इस वश का नाम प्लैण्टेजेनेट पड़ा। इस वंश ने ११५४ ई० से १४८५ ई० तक शासन किया।

Pocket Borough—ऐसे नगर जिनमें पार्लियामेण्ट के लिए प्रतिनिधि चुनने का अधिकार किसी विशेष व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित किया जाता था।

Poundage—प्रति पौण्ड के हिसाब से लिया जाने वाला शुल्क या चुंगी।

Poyning's Act—१४९५ ई० में आयरलैण्ड के डिप्टी या वायसराय एडवर्ड पायनिंग द्वारा बुलायी गयी आयरिश पार्लियामेण्ट ने यह कानून पास किया था कि आयरलैण्ड में इंग्लैण्ड के राजा की महामुद्रा से अंकित आदेश-पत्र के अतिरिक्त कभी भी पार्लियामेण्ट नहीं बुलायी जा सकती है और आयरिश पार्लियामेण्ट द्वारा पास किये गये सभी बिलों को कानून बनाये जाने से पहले प्रिवी कौंसिल में अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा अब तक इंग्लैण्ड में बनाए गये सभी सामान्य कानून आयरलैण्ड में भी लागू होंगे; इसे पायनिंग्स कानून कहा जाता है। इसको १७८२ ई० में रद्द किया गया था।

Pragmatic Sanction—यह दो लैटिन शब्दों से मिल कर बना है। पहले शब्द Pragmatic का अर्थ व्यावहारिक या राजकीय मामलों से सम्बन्ध रखने वाला तथा दूसरे शब्द Sanction का अर्थ दण्डात्मक राजनियम है। इस प्रकार इस शब्द का मूल अर्थ राज्य के किसी महत्वपूर्ण प्रश्न के बारे में बनाया गया दण्डात्मक राजनियम है। फ्रेंच लोग इस शब्द का प्रयोग पोप का क्षेत्राधिकार सीमित करने वाले तथा सामान्य रूप से एक निश्चित वंश में राज्य का उत्तराधिकार निर्धारित करने वाले अध्यादेशों के रूप में करते थे। यहाँ इसका प्रयोग दूसरे अर्थ में—उत्तराधिकार सुनिश्चित बनाने वाली राजाज्ञा के लिये हुआ है। यहाँ इसका आशय १७१३ ई० में सम्राट चार्ल्स षष्ठ द्वारा आस्ट्रिया में अपनी मृत्यु के बाद अपनी पुत्री मेरिया थेरेसा को अपना उत्तराधिकारी बनाने वाली राजाज्ञा से है।

कहते हैं, जो १६४० ई० में चुनी गयी थी और १६६० ई० तक चलती रही। इसने गृहयुद्ध आरम्भ किया था और १६५३ ई० में क्रामवैल ने इसे निष्कासित किया था। १६५६ ई० में इसे दो बार बुलाया गया तथा १६६० ई० में चार्ल्स द्वितीय को राजगद्दी पर बिठाने के बाद यह समाप्त हो गयी। इस प्रकार यह पार्लियामेण्ट २० वर्ष तक चलती रही। इसे लम्बी पार्लियामेण्ट का विशेषण १३ अप्रैल १६४० ई० से ५ मई १६४० ई० की बहुत थोड़ी अवधि तक चलने वाली अल्पकालीन पार्लियामेण्ट की तुलना में दिया गया है।

Lord Chancellor - देखिए Chancellor'।

Lord Lieutenant—१६२२ ई० तक आयरलैण्ड में ब्रिटिश सरकार का वायसराय या राजप्रतिनिधि।

Lords of the Articles—पार्लियामेण्ट के सारे मामलों के प्रारूप तैयार करने वाले व्यक्ति।

M

Magdalene—माडलिन, १४५८ ई० में विंचैस्टर के बिशप द्वारा स्थापित आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय का एक महाविद्यालय।

Magna Carta—१५ जून १२१५ ई० को राजा जान से उसके सामन्तों ने ब्रिटिश स्वतन्त्रता के आधारभूत बृहत् अधिकार-पत्र को प्राप्त किया था। इसमें ३७ धाराएँ थीं और इनका प्रधान उद्देश्य राजा की शक्ति के दुरुपयोग को रोकना और इस बात की व्यवस्था करना था कि किसी भी प्रजाजन को बिना अभियोग चलाये और बिना दण्ड दिये जेल में बन्द करके नहीं रखा जा सकता है।

Manor—मेनर, यह एक पृथक् रूप से संगठित जागीर (Estate) या ऐसा भू-प्रदेश था जिसमें लार्ड की अपनी सीर (Demesne) तथा ऐसी ज़मीनें सम्मिलित होती थीं, जिनमें उसे कुछ विशेषाधिकार तथा विशेष कर प्राप्त करने के अधिकार होते थे। इसका दूसरा अर्थ लार्ड का निवास स्थान तथा इसके साथ लगी हुई जमीन होती थी। मेनर शब्द निवास का अर्थ देने वाली लैटिन की Menere धातु से बना है।

Mass—यूकेरिस्ट का पवित्र पर्व।

Marcher Lord—सीमावर्ती प्रदेश की रक्षा करने वाले सरदार।

Militia—नागरिक सेना।

Murudrum—यह एक प्रकार अर्थदण्ड है। यह किसी भी ऐसे मृत शरीर के लिए लिया जाता था, जिसके हत्यारे का पता न लग सके। यह अर्थदण्ड समूचे जिले के निवासियों को देना पड़ता था।

N

Non-conformist—एंग्लिकन चर्च से भिन्न मतावलम्बी।

O

Order-in-council—प्रिवी कौंसिल के परामर्श पर किसी प्रशासनात्मक विषय में दी गयी राजा की आज्ञा।

Outlaw—कानून के संरक्षण से बाह्य अथवा आततायी घोषित करना। मिलाइये, मनुस्मृति आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् ॥

P

Parliamentary borough—ऐसा नगर जिसे पार्लियामेण्ट में कम-से-कम एक सदस्य चुनकर भेजने का अधिकार होता था।

Petition of Right—अधिकारों का याचनापत्र, यह जनता के अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की एक ऐसी घोषणा थी, जिसे पार्लियामेण्ट ने राजा चार्ल्स प्रथम के सम्मुख पेश किया था और उसने १६२८ ई० में इसे स्वीकार किया।

Piligrim Fathers—यह नाम उन प्यूरिटन अंग्रेजों को दिया जाता है, जो १६२० ई० में मेफ्लावर (Mayflower) नामक जहाज में सवार हो कर अमेरिका गये थे और वहाँ उन्होंने प्लिमथ (मैसाचुसेट्स) की बस्ती बसायी थी।

Plantagenet—यह वंश आन्जेविन (Anjevin) वंश के नाम से भी प्रसिद्ध है। हेनरी द्वितीय का पिता अपने राजचिह्न के रूप में पीले फूलों वाली रेतीले तटों पर उगने वाली झाड़ी (Broom Spring या Plantagenet) का उपयोग करता था, इससे इस वश का नाम प्लैण्टेजेनेट पड़ा। इस वंश ने ११५४ ई० से १४८५ ई० तक शासन किया।

Pocket Borough—ऐसे नगर जिनमें पार्लियामेण्ट के लिए प्रतिनिधि चुनने का अधिकार किसी विशेष व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित किया जाता था।

Poundage—प्रति पौण्ड के हिसाब से लिया जाने वाला शुल्क या चुंगी।

Poyning's Act—१४९५ ई० में आयरलैण्ड के डिप्टी या वायसराय एडवर्ड पायनिंग द्वारा बुलायी गयी आयरिश पार्लियामेण्ट ने यह कानून पास किया था कि आयरलैण्ड में इंग्लैण्ड के राजा की महामुद्रा से अंकित आदेश-पत्र के अतिरिक्त कभी भी पार्लियामेण्ट नहीं बुलायी जा सकती है और आयरिश पार्लियामेण्ट द्वारा पास किये गये सभी बिलों को कानून बनाये जाने से पहले प्रिवी कौंसिल में अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा अब तक इंग्लैण्ड में बनाए गये सभी सामान्य कानून आयरलैण्ड में भी लागू होंगे; इसे पायनिंग्स कानून कहा जाता है। इसको १७८२ ई० में रद्द किया गया था।

Pragmatic Sanction—यह दो लैटिन शब्दों से मिल कर बना है। पहले शब्द Pragmatic का अर्थ व्यावहारिक या राजकीय मामलों से सम्बन्ध रखने वाला तथा दूसरे शब्द Sanction का अर्थ दण्डात्मक राजनियम है। इस प्रकार इस शब्द का मूल अर्थ राज्य के किसी महत्वपूर्ण प्रश्न के बारे में बनाया गया दण्डात्मक राजनियम है। फ्रेंच लोग इस शब्द का प्रयोग पोप का क्षेत्राधिकार सीमित करने वाले तथा सामान्य रूप से एक निश्चित वंश में राज्य का उत्तराधिकार निर्धारित करने वाले अध्यादेशों के रूप में करते थे। यहाँ इसका प्रयोग दूसरे अर्थ में—उत्तराधिकार सुनिश्चित बनाने वाली राजाज्ञा के लिये हुआ है। यहाँ इसका आशय १७१३ ई० में सम्राट चार्ल्स षष्ठ द्वारा आस्ट्रिया में अपनी मृत्यु के बाद अपनी पुत्री मेरिया थेरेसा को अपना उत्तराधिकारी बनाने वाली राजाज्ञा से है।

कहते हैं, जो १६४० ई० में चुनी गयी थी और १६६० ई० तक चलती रही। इसने गृहयुद्ध आरम्भ किया था और १६५३ ई० में क्रामवैल ने इसे निष्कासित किया था। १६५९ ई० में इसे दो बार बुलाया गया तथा १६६० ई० में चार्ल्स द्वितीय को राजगद्दी पर बिठाने के बाद यह समाप्त हो गयी। इस प्रकार यह पार्लियामेण्ट २० वर्ष तक चलती रही। इसे लम्बी पार्लियामेण्ट का विशेषण १३ अप्रैल १६४० ई० से ५ मई १६४० ई० की बहुत थोड़ी अवधि तक चलने वाली अल्पकालीन पार्लियामेण्ट की तुलना में दिया गया है।

Lord Chancellor - देखिए Chancellor'।

Lord Lieutenant—१९२२ ई० तक आयरलैण्ड में ब्रिटिश सरकार का वायसराय या राजप्रतिनिधि।

Lords of the Articles—पार्लियामेण्ट के सारे मामलों के प्रारूप तैयार करने वाले व्यक्ति।

M

Magdalene—माडलिन, १४५८ ई० में विंचैस्टर के विशप द्वारा स्थापित आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय का एक महाविद्यालय।

Magna Carta—१५ जून १२१५ ई० को राजा जान से उसके सामन्तों ने ब्रिटिश स्वतन्त्रता के आधारभूत बृहत् अधिकार-पत्र को प्राप्त किया था। इसमें ३७ धाराएँ थीं और इनका प्रधान उद्देश्य राजा की शक्ति के दुरुपयोग को रोकना और इस बात की व्यवस्था करना था कि किसी भी प्रजाजन को बिना अभियोग चलाये और बिना दण्ड दिये जेल में बन्द करके नहीं रखा जा सकता है।

Manor—मेनर, यह एक पृथक् रूप से संगठित जागीर (Estate) या ऐसा भू-प्रदेश था जिसमें लार्ड की अपनी सीर (Demesne) तथा ऐसी जमीनें सम्मिलित होती थीं, जिनमें उसे कुछ विशेषाधिकार तथा विशेष कर प्राप्त करने के अधिकार होते थे। इसका दूसरा अर्थ लार्ड का निवास स्थान तथा इसके साथ लगी हुई जमीन होती थी। मेनर शब्द निवास का अर्थ देने वाली लैटिन की Menere धातु से बना है।

Mass—यूकेरिस्ट का पवित्र पर्व।

Marcher Lord—सीमावर्ती प्रदेश की रक्षा करने वाले सरदार।

Militia—नागरिक सेना।

Murudrum—यह एक प्रकार अर्थदण्ड है। यह किसी भी ऐसे मृत शरीर के लिए लिया जाता था, जिसके हत्यारे का पता न लग सके। यह अर्थदण्ड समूचे जिले के निवासियों को देना पड़ता था।

N

Non-conformist—एंग्लिकन चर्च से भिन्न मतावलम्बी।

O

Order-in-council—प्रिवी कौंसिल के परामर्श पर किसी प्रशासनात्मक विषय में दी गयी राजा की आज्ञा।

Outlaw—कानून के संरक्षण से बाह्य अथवा आततायी घोषित करना। मिलाइये, मनुस्मृति आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन् ॥

P

Parliamentary borough—ऐसा नगर जिसे पार्लियामेण्ट में कम-से-कम एक सदस्य चुनकर भेजने का अधिकार होता था।

Petition of Right—अधिकारों का याचनापत्र, यह जनता के अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की एक ऐसी घोषणा थी, जिसे पार्लियामेण्ट ने राजा चार्ल्स प्रथम के सम्मुख पेश किया था और उसने १६२८ ई० में इसे स्वीकार किया।

Piligrim Fathers—यह नाम उन प्यूरिटन अंग्रेजों को दिया जाता है, जो १६२० ई० में मेफ्लावर (Mayflower) नामक जहाज में सवार हो कर अमेरिका गये थे और वहाँ उन्होंने प्लिमथ (मैसाचुसेट्स) की बस्ती बसायी थी।

Plantagenet—यह वंश आन्जेविन (Anjevin) वंश के नाम से भी प्रसिद्ध है। हेनरी द्वितीय का पिता अपने राजचिह्न के रूप में पीले फूलों वाली रेतीले तटों पर उगने वाली झाड़ी (Broom Spring या Plantagenet) का उपयोग करता था, इससे इस वंश का नाम प्लैण्टेजेनेट पड़ा। इस वंश ने ११५४ ई० से १४८५ ई० तक शासन किया।

Pocket Borough—ऐसे नगर जिनमें पार्लियामेण्ट के लिए प्रतिनिधि चुनने का अधिकार किसी विशेष व्यक्ति द्वारा नियन्त्रित किया जाता था।

Poundage—प्रति पौण्ड के हिसाब से लिया जाने वाला शुल्क या चुंगी।

Poyning's Act—१४९५ ई० में आयरलैण्ड के डिप्टी या वायसराय एडवर्ड पायनिंग द्वारा बुलायी गयी आयरिश पार्लियामेण्ट ने यह कानून पास किया था कि आयरलैण्ड में इंग्लैण्ड के राजा की महामुद्रा से अंकित आदेश-पत्र के अतिरिक्त कभी भी पार्लियामेण्ट नहीं बुलायी जा सकती है और आयरिश पार्लियामेण्ट द्वारा पास किये गये सभी बिलों को कानून बनाये जाने से पहले प्रिवी कौंसिल में अवश्य प्रस्तुत किया जाना चाहिए तथा अब तक इंग्लैण्ड में बनाए गये सभी सामान्य कानून आयरलैण्ड में भी लागू होंगे; इसे पायनिंग्स कानून कहा जाता है। इसको १७८२ ई० में रद्द किया गया था।

Pragmatic Sanction—यह दो लैटिन शब्दों से मिल कर बना है। पहले शब्द Pragmatic का अर्थ व्यावहारिक या राजकीय मामलों से सम्बन्ध रखने वाला तथा दूसरे शब्द Sanction का अर्थ दण्डात्मक राजनियम है। इस प्रकार इस शब्द का मूल अर्थ राज्य के किसी महत्वपूर्ण प्रश्न के बारे में बनाया गया दण्डात्मक राजनियम है। फ्रेंच लोग इस शब्द का प्रयोग पोप का क्षेत्राधिकार सीमित करने वाले तथा सामान्य रूप से एक निश्चित वंश में राज्य का उत्तराधिकार निर्धारित करने वाले अध्यादेशों के रूप में करते थे। यहाँ इसका प्रयोग दूसरे अर्थ में—उत्तराधिकार सुनिश्चित बनाने वाली राजाज्ञा के लिये हुआ है। यहाँ इसका आशय १७१३ ई० में सम्राट चार्ल्स षष्ठ द्वारा आस्ट्रिया में अपनी मृत्यु के बाद अपनी पुत्री मेरिया थेरेसा को अपना उत्तराधिकारी बनाने वाली राजाज्ञा से है।

Presbyter—पहली शताब्दी ई० में इसका प्रयोग पुराने धर्मवृद्ध, वयोवृद्ध पुरोहितों के लिये होता था क्योंकि यह शब्द बूढ़े का अर्थ देने वाले यूनानी शब्द Presbyteresos से बना था। यह बौद्ध साहित्य के स्थविर या थेर से मिलता है। ऐसे पुरोहितों की परिषद या समूह को प्रेसबिटरी (Presbytery) कहा जाता था। यह चर्च की सम्पूर्ण व्यवस्था करती थी। प्राचीन गिरजे का व्यवस्थापक पादरी; पादरी संघ से शासित गिरजे का ज्येष्ठ पादरी।

Presbyterian—प्रेसबिटेरियन शब्द धर्मवृद्ध का अर्थ देने वाले प्रेसबिटर (Presbyter) से बना है। यह विशेष रूप से स्काटलैण्ड के चर्च की उस व्यवस्था को सूचित करता है, जिसमें चर्च के समूचे कार्य प्रेसबिटर कहलाने वाले पुरोहितों द्वारा किये जाते हैं। ये सभी पुरोहित समान दर्जे के होते है और इनमें इंग्लैण्ड के चर्च की भांति आर्कबिशप, बिशप और पुरोहितों जैसा कोई श्रेणीभेद नहीं होता है। ये ब्रिटिश पुरोहितों की भांति राजा द्वारा नियुक्त न हो कर, जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं और सभी धार्मिक प्रश्नों का अन्तिम निर्णय प्रेसबिटरों की परिषद् (Presbyterey) करती है।

Presbyterey—प्रेसबिटरी, प्रेसबिटरों अथवा स्काटलैण्ड के चर्च में पुरोहितों की परिषद् को कहते हैं। इस शब्द का प्रयोग ऐसे धार्मिक न्यायालय (Ecclesiastical Court) के लिये भी होता है, जिसका निर्माण सब पुरोहितों (Ministers) तथा एक जिले के प्रत्येक पैरिश (Parish) से आने वाले एक या दो प्रेसबिटरों द्वारा होता था।

Protectorate—चार्ल्स प्रथम की मृत्यु के बाद ओलिवर क्रामवैल ने १६५३-५६ तक तथा इसके बाद रिचर्ड क्रामवैल ने राजा की पुरानी पदवी के स्थान पर **राज्य के सरक्षक** (Protector) की पदवी धारण की। इस पद को तथा इस समय के शासन को प्रोटेक्टोरेट (Protectorate) कहते हैं।

Puritan—प्यूरिटन शब्द का प्रयोग इंग्लिश प्रोटेस्टेण्टों के उस दल के सदस्यों(१५५६) के लिए होता है, जो एलिजाबेथ के समय में किये गये इंग्लिश चर्च के धार्मिक सुधार को अपूर्ण समझते थे और उस समय ब्रिटिश चर्च द्वारा स्वीकार की जाने वाली धार्मिक विधियों और संस्कारों में और भी अधिक शुद्धि (Purification) किये जाने के पक्ष में थे। ये चर्च में मौलिक सुधार चाहते थे और चर्च में प्रचलित सभी मानवीय परम्पराओं को अस्वीकार करते थे। उनका नारा था कि वे बाइबल को और समूची बाइबल को मानते हैं और उसके अतिरिक्त किसी बात को स्वीकार नहीं करते हैं (The Bible, the whole Bible, nothing but the Bible)। एण्ड्रयू फुलर ने इन्हें Non-conformist का नाम दिया था, क्योंकि ये इंग्लैण्ड के चर्च में एकरूपता लाने वाले कानून (Act of uniformity) को स्वीकार नहीं करते थे।

Q

Quaker—जार्ज फाक्स द्वारा १६४८-५० ई० में स्थापित किया गया एक धार्मिक सम्प्रदाय था। इसके कोई निश्चित सिद्धान्त और पुरोहित नहीं होते थे। यह बाइबल की शिक्षाओं पर कठोर आचरण करने पर तथा पोशाक और व्यवहार की सादगी पर अत्यधिक बल देता था। इस सम्प्रदाय का वास्तविक नाम तो **मित्र समाज** (Society of Friends) था,

किन्तु इसे क्वेकर इसलिए कहा जाता था कि वे भगवान् का नाम सुनते ही श्रद्धा के आवेश में काँपने लगते थे।

Quo warranto—लैटिन के इन शब्दों का अर्थ है—किस अधिकार से। जब कोई व्यक्ति किसी वस्तु पर अधिकार न होते हुए भी अपना अधिकार बताता है तथा असली अधिकार रखने वाला व्यक्ति न्यायालय में अपना अधिकार दिलाने की प्रार्थना करता है, तब न्यायालय इस व्यक्ति को अपना अधिकार पुष्ट करने के प्रमाण उपस्थित करने के लिए आदेश भेजता है। यह आदेशपत्र (Writ) Quo Warranto के शब्दों से शुरू होता है, जिसका अर्थ होता है, कि आप किस अधिकार से इस विषय में अपना स्वत्व मानते है।

R

Rotten Borough—पार्लियामेण्ट में प्रतिनिधि भेजने का अधिकार रखने वाली उजड़ी हुई बस्तियाँ।

Roundhead—गृहयुद्ध में पार्लियामेण्ट के समर्थक, बहुत ही छोटे बाल कटवा कर रखने के कारण ये मुंडे सिर वाले कहलाते थे, जब कि इनकी तुलना में इनके विरोधी राजपक्षपाती (Cavalier) लम्बे बाल रखते थे।

Rump—रम्प, लम्बी पार्लियामेण्ट (Long parliament) के उस भाग को कहते हैं जो कर्नल प्राइड द्वारा पार्लियामेण्ट से उन सदस्यों को बाहर निकालने के बाद शेष बची थी जो सदस्य चार्ल्स प्रथम के समर्थक थे। चूँकि यह लम्बी पार्लियामेण्ट इन सदस्यों के कारण चार्ल्स प्रथम को दण्ड देने के लिए तैयार नहीं थी, अतः ६ दिसम्बर १६४८ ई० के दिन कर्नल थामस प्राइड सेना लेकर पार्लियामेण्ट में घुसा, उसने इसमें चार्ल्स प्रथम का समर्थन करने वाले ४७ सदस्यों को बन्दी बनाया, ६६ सदस्यों को पार्लियामेण्ट से निकाल दिया और अब पार्लियामेण्ट में केवल ८० सदस्य ही शेष रह गये। इसी को **अवशिष्ट पार्लियामेण्ट** या रम्प (Rump) कहते हैं।

Ryehouse plot—यह षड्यन्त्र १६८३ ई० में चार्ल्स द्वितीय तथा उसके भाई जेम्स की हत्या के लिए उस समय किया गया था जब वे न्यू मार्केट नामक स्थान से आगे जाते हुए हर्टफोर्ड शायर में राइहाउस फार्म (Ryehouse form) नामक स्थान में ठहरे हुए थे। यहाँ राजा जिस मकान में निवास कर रहा था उसमें अचानक आग लग गयी और राजा अपने दल के साथ यहाँ से तत्काल चला गया। यद्यपि अपने पूर्वनिर्धारित कार्यक्रम के अनुसार उसे अभी यहाँ आठ दिन और ठहरना था। राजा के यहाँ से जल्दी चले जाने के कारण षड्यन्त्रकारियों की योजना सफल नहीं हो सकी।

S

[illegible]—राजा को भूस्वामी (Feudal Land Owner) द्वारा निजी सेवा के बदले में दिया जाने वाला धन।

Sheriff—कौण्टी या जिले का प्रधान अधिकारी, इसका कार्य अपने जिले में शान्ति और न्याय के प्रशासन को बनाये रखना होता था तथा न्यायालयों के निर्णयों का पालन करवाना था।

Simony—धार्मिक पदों की खरीद और बिक्री।

Six Articles—छः धार्मिक मन्तव्य ये थे—(१) यूकेरिस्ट अर्थात् अन्तिम भोज में ईसामसीह की वास्तविक उपस्थिति (२) ईसामसीह के अन्तिम भोज के स्मरणोत्सव में अंशग्रहण (Communion) को पर्याप्त समझना, (३) पुरोहित के ब्रह्मचारी बने रहने का सिद्धान्त, (४) ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञाओं (Vows of Chastity) का आवश्यक रूप से पालन करना, (५) किसी रूप में यूकेरिस्ट पर्व मनाने की उपयोगिता स्वीकार करना, (६) पुरोहित के कान में निजी रूप से किये जाने वाले पाप के स्वीकरण (Auricular confession) को आवश्यक रूप से मानना तथा तत्व परिवर्तन (Transubstantiation) का सिद्धान्त न मानने वालों को प्राणदण्ड देने की व्यवस्था करना। इन छः धार्मिक सिद्धान्तों को मानने वाला कानून पार्लियामेण्ट ने १५३९ ई० में पास किया था। इसे खूनी कानून भी कहा जाता था। यह १५४७ ई० में रद्द कर दिया गया था।

Spanish Main—कैरेबियन समुद्र के साथ लगा हुआ, ओरीनोको नदी तथा पानामा के स्थलडमरूमध्य के बीच का अमरीकी महाद्वीप का भू-भाग, कैरेबियन समुद्र।

Star Chamber—यह दीवानी तथा फौजदारी मामले सुनने वाला एक ब्रिटिश न्यायालय था, इसे १६ जु० १६४१ ई० को समाप्त कर दिया गया था, क्योंकि यह अपनी मनमानी कार्यवाहियों के लिए बहुत अधिक बदनाम हो गया था। इसका प्रधान कार्य ऐसे अपराधों के लिए दण्ड देना था, जिनकी उस समय की कानूनी पद्धति में कोई व्यवस्था नहीं थी। इसे यह नाम देने का यह कारण था कि इसकी छत पर सुनहरे तारे अंकित थे अथवा इसमें यहूदियों के साथ किये जाने वाले लेन-देन के दस्तावेज (Stars) सुरक्षित रखे जाते थे।

Statute of Praemunire—यह कानून १३९२ ई० में बनाया गया था और पहले इसका प्रयोग इस रूप में होता था कि इसके अनुसार शेरिफ को यह कर्त्तव्य सौंपा गया था कि वह समुद्रपार के दूसरे देशों में अपराध करने वाले किसी भी व्यक्ति को अदालत में उपस्थित होने का आदेश देता था। बाद में इस कानून का प्रयोग इंग्लैण्ड में पोप के अधिकार-क्षेत्र को बनाये रखने वाले व्यक्तियों का विरोध करने के लिए किया जाने लगा। ऐसे अपराधियों को कानून के संरक्षण से बाह्य (Outlaw) घोषित करके और उनकी सम्पत्ति कुर्क करके उन्हें दण्डित किया जाता था। इसे प्रीम्यूनाइरी का कानून इसलिए कहा जाता है कि इसका श्रीगणेश जिस वाक्य से होता है उसका पहला लैटिन शब्द Praemunire facia है। इसका अर्थ यह है कि 'तुम्हें इस बात के लिए चेतावनी दी जाती है'।

Statute of Provisions—१३५०-५१ ई० में एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में पास किया गया एक कानून; इसके अनुसार पोप को इस बात से रोक दिया गया था कि वह बिशप आदि धर्माधिकारियों को इंग्लैण्ड में जागीरें प्रदान करे।

St. Bartholomews Day—देखिए Bartholomew.

Stonehenge—स्टोनहेन्ज, इंग्लैण्ड में साल्जबरी के मैदान में पाया जाने वाला प्रागैतिहासिक युग का प्रस्तर स्मारक है। यहाँ समकेन्द्रीय वृत्तों में बड़े-बड़े पत्थरों को तराशकर उनकी विशेष प्रकार की रचनाएँ बनायी गयी हैं।

Synod—सिनड, धर्मसभा, यह सामान्य रूप से चर्च के किसी भी ऐसे धार्मिक सम्मेलन को कहते हैं, जिसमें धर्मविषयक प्रश्नों पर विवाद एवं निर्णय किये जायें। स्काटलैण्ड के प्रेसबिटेरियन चर्च में इसका एक विशेष अर्थ प्रेसबिटरी से ऊँची स्थिति रखने वाला धार्मिक न्यायालय भी है।

T

Tallage—नगरों तथा राजकीय भूमियों पर लगाया जाने वाला कर।

Templar—१२ वीं शताब्दी के आरम्भ में नौ फ्रेंच योद्धाओं ने जेरुसलेम की पवित्र भूमि की यात्रा करने वाले व्यक्तियों की रक्षा करने के लिए एक संगठन बनाया। यह संगठन शीघ्र ही टैम्पलर (Templar) के नाम से प्रसिद्ध हुआ, क्योंकि इसके योद्धा अपने अस्त्र-शस्त्र जेरुसलेम के नगर में सोलोमन के सुप्रसिद्ध मन्दिर (Temple) में रखा करते थे, अतः यह सम्प्रदाय Order of the Knights of the Temple के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ, सब ईसाई देशों में इसकी शाखाएँ और मठ थे। इंग्लैण्ड में इसका प्रधान स्थान फ्लीट स्ट्रीट और टेम्ज नदी के मध्यवर्ती भाग में था और यह स्थान टैम्पल (Temple) के नाम से विख्यात हो गया। यह सम्प्रदाय बाद में बड़ा शक्तिशाली और भ्रष्टाचार का केन्द्र बन गया, इसीलिए एडवर्ड द्वितीय ने १३१२ ई० में इसका दमन किया। इसके बाद यह स्थान वकालत का अध्ययन करने वालों का सुप्रसिद्ध निवास स्थान और केन्द्र बना।

Temple—देखिए ऊपर Templar.

Tonnage—टनेज कर का अभिप्राय प्रतिटन के भार पर एक निश्चित मात्रा में लिये जाने वाले कर से था।

Tower of London—लन्दन का दुर्ग विजेता विलियम (William the Conqueror)—ने नगर की रक्षा के लिए तथा सुचारु रूप से शासन करने के लिए बनवाया था। जनश्रुतियों के आधार पर यह उस दुर्ग के स्थान पर बना है जिसे जूलियस सीजर ने ब्रिटेन के प्राचीन निवासियों को डराने के लिए बनवाया था। पहले यह राजमहल था, बाद बन्दीगृह बना, अब यहाँ शस्त्रागार और संग्रहालय है।

Transubstantiationtation—यह ईसाइयत का एक विशेष सिद्धान्त है। इसके अनुसार यह माना जाता है कि भगवान् ईसामसीह द्वारा दिये गये अन्तिम भोज की स्मृति में मनाये जाने वाले एक धार्मिक उत्सव (Eucharist) में यह कहा जाता है कि मृत्यु से पहले ईसामसीह द्वारा अपने शिष्यों को दिये गये अन्तिम भोज में ईसामसीह ने उन्हें यह कहा था

Sheriff—कौण्टी या जिले का प्रधान अधिकारी, इसका कार्य अपने जिले में शान्ति और न्याय के प्रशासन को बनाये रखना होता था तथा न्यायालयों के निर्णयों का पालन करवाना था।

Simony—धार्मिक पदों की खरीद और बिक्री।

Six Articles—छः धार्मिक मन्तव्य ये थे—(१) यूकेरिस्ट अर्थात् अन्तिम भोज में ईसामसीह की वास्तविक उपस्थिति (२) ईसामसीह के अन्तिम भोज के स्मरणोत्सव में अंशग्रहण (Communion) को पर्याप्त समझना, (३) पुरोहित के ब्रह्मचारी बने रहने का सिद्धान्त, (४) ब्रह्मचर्य व्रत की प्रतिज्ञाओं (Vows of Chastity) का आवश्यक रूप से पालन करना, (५) किसी रूप में यूकेरिस्ट पर्व मनाने की उपयोगिता स्वीकार करना, (६) पुरोहित के कान में निजी रूप से किये जाने वाले पाप के स्वीकरण (Auricular confession) को आवश्यक रूप से मानना तथा तत्व परिवर्तन (Transubstantiation) का सिद्धान्त न मानने वालों को प्राणदण्ड देने की व्यवस्था करना। इन छः धार्मिक सिद्धान्तों को मानने वाला कानून पार्लियामेण्ट ने १५३९ ई० में पास किया था। इसे खूनी कानून भी कहा जाता था। यह १५४७ ई० में रद्द कर दिया गया था।

Spanish Main—कैरेबियन समुद्र के साथ लगा हुआ, ओरीनोको नदी तथा पानामा के स्थलडमरूमध्य के बीच का अमरीकी महाद्वीप का भू-भाग, कैरेबियन समुद्र।

Star Chamber—यह दीवानी तथा फौजदारी मामले सुनने वाला एक ब्रिटिश न्यायालय था, इसे १६ जु० १६४१ ई० को समाप्त कर दिया गया था, क्योंकि यह अपनी मनमानी कार्यवाहियों के लिए बहुत अधिक बदनाम हो गया था। इसका प्रधान कार्य ऐसे अपराधों के लिए दण्ड देना था, जिनकी उस समय की कानूनी पद्धति में कोई व्यवस्था नहीं थी। इसे यह नाम देने का यह कारण था कि इसकी छत पर सुनहरे तारे अंकित थे अथवा इसमें यहूदियों के साथ किये जाने वाले लेन-देन के दस्तावेज (Stars) सुरक्षित रखे जाते थे।

Statute of Praemunire—यह कानून १३९२ ई० में बनाया गया था और पहले इसका प्रयोग इस रूप में होता था कि इसके अनुसार शेरिफ को यह कर्त्तव्य सौंपा गया था कि वह समुद्रपार के दूसरे देशों में अपराध करने वाले किसी भी व्यक्ति को अदालत में उपस्थित होने का आदेश देता था। बाद में इस कानून का प्रयोग इंग्लैण्ड में पोप के अधिकार-क्षेत्र को बनाये रखने वाले व्यक्तियों का विरोध करने के लिए किया जाने लगा। ऐसे अपराधियों को कानून के संरक्षण से बाह्य (Outlaw) घोषित करके और उनकी सम्पत्ति कुर्क करके उन्हें दण्डित किया जाता था। इसे प्रीम्यूनाइरी का कानून इसलिए कहा जाता है कि इसका श्रीगणेश जिस वाक्य से होता है उसका पहला लैटिन शब्द Praemunire facia है। इसका अर्थ यह है कि 'तुम्हें इस बात के लिए चेतावनी दी जाती है'।

Statute of Provisions—१३५०-५१ ई० में एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में पास किया गया एक कानून; इसके अनुसार पोप को इस बात से रोक दिया गया था कि वह बिशप आदि धर्माधिकारियों को इंग्लैण्ड में जागीरें प्रदान करे।

· St. Bartholomews Day—देखिए Bartholomew.

Stonehenge—स्टोनहेन्ज, इंग्लैण्ड में साल्जबरी के मैदान में पाया जाने वाला प्रागैतिहासिक युग का प्रस्तर स्मारक है। यहाँ समकेन्द्रीय वृत्तों में बड़े-बड़े पत्थरों को तराशकर उनकी विशेष प्रकार की रचनाएँ बनायी गयी हैं।

Synod—सिनड, धर्मसभा, यह सामान्य रूप से चर्च के किसी भी ऐसे धार्मिक सम्मेलन को कहते हैं, जिसमें धर्मविषयक प्रश्नों पर विवाद एवं निर्णय किये जायँ। स्काटलैण्ड के प्रेसबिटेरियन चर्च में इसका एक विशेष अर्थ प्रेसबिटरी से ऊँची स्थिति रखने वाला धार्मिक न्यायालय भी है।

T

Tallage—नगरों तथा राजकीय भूमियों पर लगाया जाने वाला कर।

Templar—१२ वीं शताब्दी के आरम्भ में नौ फ्रेंच योद्धाओं ने जेरुसलेम की पवित्र भूमि की यात्रा करने वाले व्यक्तियों की रक्षा करने के लिए एक संगठन बनाया। यह संगठन शीघ्र ही टैम्पलर (Templar) के नाम से प्रसिद्ध हुआ, क्योंकि इसके योद्धा अपने अस्त्र-शस्त्र जेरुसलेम के नगर में सोलोमन के सुप्रसिद्ध मन्दिर (Temple) में रखा करते थे, अतः यह सम्प्रदाय Order of the Knights of the Temple के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ, सब ईसाई देशों में इसकी शाखाएँ और मठ थे। इंग्लैण्ड में इसका प्रधान स्थान फ्लीट स्ट्रीट और टेम्ज़ नदी के मध्यवर्ती भाग में था और यह स्थान टैम्पल (Temple) के नाम से विख्यात हो गया। यह सम्प्रदाय बाद में बड़ा शक्तिशाली और भ्रष्टाचार का केन्द्र बन गया, इसीलिए एडवर्ड द्वितीय ने १३१२ ई० में इसका दमन किया। इसके बाद यह स्थान वकालत का अध्ययन करने वालों का सुप्रसिद्ध निवास स्थान और केन्द्र बना।

Temple—देखिए ऊपर Templar.

Tonnage—टनेज कर का अभिप्राय प्रतिटन के भार पर एक निश्चित मात्रा में लिये जाने वाले कर से था।

Tower of London—लन्दन का दुर्ग विजेता विलियम (William the Conqueror)—ने नगर की रक्षा के लिए तथा सुचारु रूप से शासन करने के लिए बनवाया था। जनश्रुतियों के आधार पर यह उस दुर्ग के स्थान पर बना है जिसे जूलियस सीज़र ने ब्रिटेन के प्राचीन निवासियों को डराने के लिए बनवाया था। पहले यह राजमहल था, बाद बन्दीगृह बना, अब यहाँ शस्त्रागार और संग्रहालय है।

Transubstantiationtation—यह ईसाइयत का एक विशेष सिद्धान्त है। इसके अनुसार यह माना जाता है कि भगवान् ईसामसीह द्वारा दिये गये अन्तिम भोज की स्मृति में मनाये जाने वाले एक धार्मिक उत्सव (Eucharist) में यह कहा जाता है कि मृत्यु से पहले ईसामसीह द्वारा अपने शिष्यों को दिये गये अन्तिम भोज में ईसामसीह ने उन्हें यह कहा था

कि तुम इस भोज में दिया जाने वाला भोज्य पदार्थ और शराब मेरे शरीर और रक्त के रूप में ग्रहण कर रहे हो और इस प्रकार मुझ से अभिन्न हो, यूकेरिस्ट के उत्सव में भी इसी प्रकार की प्रार्थना करके अन्न और शराब को ईसामसीह के शरीर और रक्त के रूप में ग्रहण किया जाता है। अन्न और शराब के इस प्रकार ईसामसीह के दिव्य शरीर तथा रुधिर में बदल जाने का सिद्धान्त ही **तत्वपरिवर्तन** (Transubstantation) कहलाता है।

U

Unitarian—एकत्ववादी, ईसाईमत के त्रित्ववाद (Trinity) अर्थात् पवित्र पिता-परमात्मा, पवित्र देवदूत तथा पवित्र पुत्र-ईसामसीह में विश्वास न रखते हुए ईश्वर के एकत्व में विश्वास रखने वाला व्यक्ति, १७ वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में उत्पन्न होने वाले तथा ऐसा सिद्धान्त मनाने वाले ईसाई समाज का सदस्य।

Vill—छोटा कस्बा (Township)।

Villein—विलन, इंग्लैण्ड की सामन्त पद्धति में ऐसी श्रेणी का व्यक्ति जो अपने ज़मीन्दार या लार्ड की दृष्टि से भू-दास (Serf) होते थे, किन्तु अन्य व्यक्तियों की दृष्टि से स्वतन्त्र व्यक्तियों जैसे विशेषाधिकार रखते थे।

Vestry—१. गिरजे में पुरोहितों की पूजा के वस्त्रों को रखने का स्थान या वस्त्रालय।

२. एक पैरिश (Parish) अथवा चर्च के साथ सम्बद्ध गाँव या ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों की पंचायत, ग्रामसभा।

● ●

ऐतिहासिक घटनाओं की कालक्रमसूचक तालिका

तिथि		पृष्ठ
तिथि निश्चित नहीं है।	नवप्रस्तर युग	७
,,	कांस्य युग	७
,,	स्टोनहेन्ज	७
लगभग ६०० ई० पू०	गेल लोगों का आक्रमण	८
,, ४०० ,,	ब्रिटन लोगों का आक्रमण	८
३२५ ,,	पिथियस की समुद्रयात्रा	९
५५-५४ ,,	ब्रिटेन में जूलियस सीजर का आगमन	९
२७ ई० पू०-१४ ई०	प्रथम रोमन सम्राट् आगस्टस	
४३-६१ ई०	दक्षिणी ब्रिटेन का रोम द्वारा जीता जाना	९
८४	मॉन्स ग्रौपियस की लड़ाई	९
लगभग १२५	रोमन दीवार का निर्माण	१०
,, ३०५	ब्रिटेन का पहला धार्मिक शहीद सन्त अल्बन	
३७५ से	बर्बर जातियों का रोमन साम्राज्य पर आक्रमण	१२
४१०	रोमन लोगों का ब्रिटेन को छोड़कर चले जाना	१२
४४९	ब्रिटेन (हेंगिस्ट तथा होर्सा) में ट्यूटानिक लोगों द्वारा पहली बस्ती बसाने की अनुश्रुतिसम्मत तिथि	१६
लगभग ४५०	आयरलैंण्ड में सन्त पैट्रिक का आगमन	१९
४८१-५११	क्लोविस तथा फ्रैंक लोगों द्वारा गाल की विजय	१७
४९०	थियोडोरिक और आस्ट्रोगाथ लोगों द्वारा इटली की विजय	१२, १७
लगभग ५००	'किंग आर्थर' तथा ब्रिटिश प्रतिरोध	१६
५०३	स्काट लोगों का स्काटलैण्ड पर आक्रमण करना	१९
लगभग ५१६	सैक्सन लोगों की माउण्ट बैडोन में पराजय	१७
५६३	आयोना में सन्त कोलम्बा का आगमन	२०
५७७	दियोरहम की लड़ाई	१६
५९७	सन्त आगस्टाइन का आगमन	२०

कि तुम इस भोज में दिया जाने वाला भोज्य पदार्थ और शराब मेरे शरीर और रक्त के रूप में ग्रहण कर रहे हो और इस प्रकार मुझ से अभिन्न हो, यूकेरिस्ट के उत्सव में भी इसी प्रकार की प्रार्थना करके अन्न और शराब को ईसामसीह के शरीर और रक्त के रूप में ग्रहण किया जाता है। अन्न और शराब के इस प्रकार ईसामसीह के दिव्य शरीर तथा रुधिर में बदल जाने का सिद्धान्त ही **तत्वपरिवर्तन** (Transubstantation) कहलाता है।

U

Unitarian—एकत्ववादी, ईसाईमत के त्रित्ववाद (Trinity) अर्थात् पवित्र पिता-परमात्मा, पवित्र देवदूत तथा पवित्र पुत्र-ईसामसीह में विश्वास न रखते हुए ईश्वर के एकत्व में विश्वास रखने वाला व्यक्ति, १७ वीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में उत्पन्न होने वाले तथा ऐसा सिद्धान्त मनाने वाले ईसाई समाज का सदस्य।

Vill—छोटा कस्बा (Township)।

Villein—विलन, इंग्लैंण्ड की सामन्त पद्धति में ऐसी श्रेणी का व्यक्ति जो अपने ज़मीन्दार या लार्ड की दृष्टि से भू-दास (Serf) होते थे, किन्तु अन्य व्यक्तियों की दृष्टि से स्वतन्त्र व्यक्तियों जैसे विशेषाधिकार रखते थे।

Vestry—१. गिरजे में पुरोहितों की पूजा के वस्त्रों को रखने का स्थान या वस्त्रालय।

२. एक पैरिश (Parish) अथवा चर्च के साथ सम्बद्ध गाँव या ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों की पंचायत, ग्रामसभा।

● ●

ऐतिहासिक घटनाओं की कालक्रमसूचक तालिका

तिथि		पृष्ठ
तिथि निश्चित नहीं है।	नवप्रस्तर युग	७
,,	कांस्य युग	७
,,	स्टोनहेन्ज	७
लगभग ६०० ई० पू०	गेल लोगों का आक्रमण	८
,, ४०० ,,	ब्रिटन लोगों का आक्रमण	८
३२५ ,,	पिथियस की समुद्रयात्रा	६
५५-५४ ,,	ब्रिटेन में जूलियस सीजर का आगमन	६
२७ ई० पू०-१४ ई०	प्रथम रोमन सम्राट् आगस्टस	
४३-६१ ई०	दक्षिणी ब्रिटेन का रोम द्वारा जीता जाना	६
८४	मॉन्स ग्रौपियस की लड़ाई	६
लगभग १२५	रोमन दीवार का निर्माण	१०
,, ३०५	ब्रिटेन का पहला धार्मिक शहीद सन्त अल्बन	
३७५ से	बर्बर जातियों का रोमन साम्राज्य पर आक्रमण	१२
४१०	रोमन लोगों का ब्रिटेन को छोड़कर चले जाना	१२
४४६	ब्रिटेन (हेंगिस्ट तथा होर्सा) में ट्यूटानिक लोगों द्वारा पहली बस्ती बसाने की अनुश्रुतिसम्मत तिथि	१६
लगभग ४५०	आयरलैण्ड में सन्त पैट्रिक का आगमन	१६
४८१-५११	क्लोविस तथा फ्रेंक लोगों द्वारा गाल की विजय	१७
४६०	थियोडोरिक और आस्ट्रोगाथ लोगों द्वारा इटली की विजय	१२, १७
लगभग ५००	'किंग आर्थर' तथा ब्रिटिश प्रतिरोध	१६
५०३	स्काट लोगों का स्काटलैण्ड पर आक्रमण करना	१६
लगभग ५१६	सैक्सन लोगों की माउण्ट बैडोन में पराजय	१७
५६३	आयोना में सन्त कोलम्बा का आगमन	२०
५७७	दियोरहम की लड़ाई	१६
५६७	सन्त आगस्टाइन का आगमन	२०

६१३	चेस्टर की लड़ाई	१६
६१७-८५	नार्थम्ब्रिया की सर्वोच्च स्थिति	२२
६३२-४०	सीरिया और ईरान की मुस्लिम लोगों द्वारा विजय	१६
६२५	लिण्डिसफर्न में सन्त एडन का आगमन	२०
६६४	ह्विटबी की धर्मसभा	२१
६६९-७३	थियोडोर द्वारा इंग्लिश चर्च का संगठन	२१
६८५	नेक्टेन्समेर की लड़ाई	२२
७११	अरबों का स्पेन पहुँचना	१९
७२३	जर्मनी में सन्त बोनीफेस	२२
७३२	पोइटियर्स की लड़ाई	२२
लगभग ७३२	बीड द्वारा 'चर्च के इतिहास' नामक पुस्तक लेखन की समाप्ति	२१
७५८-९६	मर्सिया का राजा ओफा	२२
७६८-८१४	फ्रैंक लोगों का राजा शार्लमेगन	२२, २३
७८९	इंग्लैण्ड पर प्रथम वाइकिंग आक्रमण	२३, २६, २७
८००	शार्लमेगन का पवित्र रोमन सम्राट् के रूप में अभिषिक्त किया जाना	२३
८०२-३९	एगबर्ट	२३, २९
८२५	एल्लाडून की लड़ाई	२२
८२९	सम्पूर्ण इंग्लैण्ड का अधिपति एगबर्ट	२३
८४३	स्काटलैण्ड के संयुक्त साम्राज्य का निर्माण	३३
८४३	आयरलैण्ड में एक नार्थमैन का अधिपति होना	२९
८५४-५५	थानेट में डेन लोगों द्वारा एक बस्ती बसाना	३०
८६७-७०	यार्कशायर तथा ईस्ट एंग्लिया में डेन लोगों द्वारा बस्ती बसाना	३०
८७१	ऐशडाउन की लड़ाई	३०
८७१-९९	महान् अल्फ्रेड	३०, ३२
८७८	चिप्पेनहम की सन्धि	३१
८८६	डेन लोगों को डेनला प्रदेश तक सीमित करना	३९
८९९-९२४	एडवर्ड दी एल्डर (ज्येष्ठ)	३२, ११८
९०९	क्लनी के गिरजाघर का निर्माण	३९
९११	नार्मण्डी में नार्थमैन लोगों का आगमन	२७, ४२
९१३-१८	इंग्लैण्डवासियों द्वारा मर्सिया को पुनः प्राप्त करना	३२
९२४-४०	एथलस्टैन	३३, ३४
९३७	ब्रूननबर्ह की लड़ाई	३३
९५९-७५	एडगर	३४, ३९
९६०	कैण्टरबरी का आर्कबिशप-डन्स्टन	

९६२-७३	सम्राट ओटो प्रथम	३४
९७८-१०१६	एथलरेड, दी रेडलेस	३५, ३६
९८०	डेन लोगों द्वारा ग्रीनलैण्ड की खोज	२८
९८७	फ्रांस का राजा ह्यू केपिट	३४
९९१	मैल्डोन की लड़ाई	३५
९९२	डेनगेल्ड नामक कर का लगाया जाना	४७
१००२	डेन लोगों का हत्याकाण्ड	३५
१०१३	इंग्लैण्ड पर स्वेन का शासन	३६
१०१४	क्लोनटर्फ की लड़ाई, डेन लोगों का आयरलैण्ड से खदेड़ा जाना	२९
१०१६-९०	नार्मन लोगों द्वारा सिसली और इटली की विजय	४२, ८८
१०१६	एडमण्ड आयरनसाइड	३६
१०१६-३५	कैन्यूट	३६
१०१८	कार्हम की लड़ाई: स्काटलैण्ड में लोथियन प्रदेश को मिलाना	३६,५०
१०४२	एडवर्ड दी कान्फेसर	३७
१०४२-६	बैक में लानफ्रांक का आगमन	३७
१०५५-६५	वेस्टमिंस्टर के गिरजाघर का पुनर्निर्माण	३७, ९६
१०६६	हैरल्ड द्वितीय	३७
"	स्टैम्फोर्ड के पुल की लड़ाई	३८
"	हेस्टिंग्ज की लड़ाई	३८, ४०
"	विलियम दी कान्क्वरर (विजेता)	४३-४९, ६०, ७२
१०७०	लानफोक द्वारा चर्च के सुधार का श्रीगणेश	४९
१०७५-८५	ग्रेगोरी सप्तम तथा हेनरी चतुर्थ के बीच में बिशपों की नियुक्ति के सम्बन्ध में विवाद	४०
१०८६	साल्जबरी की प्रतिज्ञा	४४
"	डूम्सडे बुक	४७, ६०
१०८७	विलियम द्वितीय	४६, ५०
१०९५-९९	प्रथम धर्मयुद्ध (क्रूसेड)	४२, ४८, ५६
१०९७	एन्सेल्म का निर्वासन	४९
११००	हेनरी प्रथम	४५-४८
११०६	टेन्चब्रई की लड़ाई	
११०७	बिशपों की नियुक्ति के प्रश्न पर ब्रिटेन में समझौता	४९
११२२	वार्म्स की धर्मसन्धि : यूरोप में बिशपों की नियुक्ति के सम्बन्ध में होनेवाले विवाद की समाप्ति	४९
११२४-५३	स्काटलैण्ड का राजा डेविड प्रथम	५१, ११८
११२८	इंग्लैण्ड में सिस्टर्शियन सम्प्रदाय की स्थापना	५५, ७८

१२१५	मैग्नाकार्टा	६५-६८, ९५
१२१५-५०	फ्रेडरिक द्वितीय का सम्राट् बनना	८८, १०१
१२१६	हेनरी तृतीय	६८
१२२१-२४	इंग्लैण्ड में ईसाई भिक्षुओं का बस जाना	९४, ९७
१२२४	चंगेजखाँ का रूस पर आक्रमण	९१, ९२
१२२६	प्रशिया में ट्यूटानिक नाइटों की विजय	९०
१२२६-७०	फ्रांस का राजा लुई नवम	९१, १२८
१२४३-३	प्वातू का हाथ से निकल जाना	९४
१२४६-८३	वेल्स का राजकुमार लुएलिन एपग्रुफिड	१०३, ११४-११५
१२४६	पोप द्वारा कार्पिनी को एशिया भेजा जाना	९२
१२४९-८६	अलेक्जैण्डर तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	११९
१२५३	लुई नवम रुब्रुक्विस को पूर्व की ओर भेजता है	९२
१२५४	लैंकास्टर के अर्ल को उपहार के रूप में सिसली का दिया जाना	८९, १०१, १०३
१२५७	कार्नवाल के रिचर्ड का सम्राट् के रूप में अभिषेक किया जाना	८८, १०१
१२५८	आक्सफोर्ड की व्यवस्थाएँ	१०२-३
१२५९	फ्रांस के साथ सन्धि	१०३
१२६३	लर्ग्स की लड़ाई	११९
१२६४	आमियन्स का माइस	९१
,,	लेविस की लड़ाई	१०३
१२६५	माण्टफोर्ट के साइमन की पार्लियामेण्ट	१०३-४
,,	एवेशम की लड़ाई	१०४
१२७०-९५	एशिया में मार्को पोलो का आगमन	९२
१२७२	एडवर्ड प्रथम	१०३-१०, ११५-१६, १२६, १२९
१२७३-९१	हैब्सबर्ग के रुडोल्फ का सम्राट् बनना	८९
१२७५	एडवर्ड प्रथम की पहली पार्लियामेण्ट	१०६
१२७७	कान्वे की सन्धि	११५
१२७८	'क्वो वारण्टो' के न्यायालय समादेश का आदेशपत्र	१०८
१२७९	मोर्टमेन की संविधि	१०९
१२८२-४	वेल्स की विजय करना	११५-१६
१२८५	विंचेस्टर की संविधि	१५७-५८
१२८५-१३१४	फ्रांस का राजा फिलिप चतुर्थ	९१, ११०, १२८
१२९१-१३९९	स्विस लोगों द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करना	८९
१२९१-२	एडवर्ड प्रथम द्वारा सामन्ती सर्वोच्च सत्ता का दावा करना : जान बैलिओल का स्काटलैण्ड का राजा बनना	११४-१५
१२९४-१३०३	फ्रांस के साथ युद्ध : बैलिओल फ्रेंच लोगों की सहायता करता है।	१०६,११४-१५, १२९

११३५	स्टीफन	४६, ५०
११३६-५२	इंग्लैण्ड में गृहयुद्ध	५०, ५३
११४६-८७	द्वितीय धर्मयुद्ध (क्रूसेड)	५५
११५२	आँजौ के हेनरी तथा एक्वीटेन की एलीनोर का विवाह	६५
११५२-६०	सम्राट् फ्रेडरिक बार्बरोसा	५४, ५७
११५४	हेनरी द्वितीय	५१, ५७, ६८, ७४, ११३
११५६-८३	फ्रेडरिक बार्बरोसा, पोपतन्त्र तथा इटली के नगरों में विवाद	५४, ५७
११६४	क्लेरेण्डन के संविधान	७७
११६५-१२१४	सिंह उपाधिधारी विलियम का स्काटलैण्ड का राजा बनना	५८, ११८
११६६	क्लेरेण्डन की एसाईजिज ज्यूरी आफ प्रेजेण्टमेण्ट	६०, ६१
११७०	आयरलैण्ड में स्ट्रांगबो का आगमन	५८
,,	बैकेट की हत्या	६२
,,	शेरिफ नामक पदाधिकारियों की जाँच	६०
११७१	हेनरी द्वितीय का आयरलैण्ड का लार्ड बनना	५८
११७४	सिंह उपाधिधारी विलियम का स्काटलैण्ड के प्रति सम्मान प्रदर्शित करना	५८, ११८
११७६	नार्थम्पटन की न्यायसभा	६०
११७७	आक्सफोर्ड की परिषद् : वैल्श लोग हेनरी की वश्यता स्वीकार करते हैं	११३
११८०-१२२३	फ्रांस का राजा फिलिप आगस्टस	
११८१	शस्त्र विषयक न्याय सभा	६१
११८९	रिचर्ड प्रथम	६३, ६४
११९०-११९४	तृतीय धर्मयुद्ध (क्रूसेड) में भाग लेने के कारण हेनरी का इंग्लैण्ड से अनुपस्थित रहना	६३, ६४
११९०-९७	हेनरी षष्ठ का सम्राट् बनना	५७, ६३
११९४-९९	फ्रांस के साथ युद्ध	६३
११९४-१२४०	उत्तरी वेल्स का महान् राजकुमार लुएलिन	११४
११९८-१२१६	पोप इन्नोसेण्ट तृतीय	५४, ६४
११९९	जान	६२, ६४, ६८, ८७, ८८
१२०२-४	ब्रिटेन के हाथ से नार्मण्डी का निकल जाना	६५, ९०
१२०५-१३	पोप के साथ जॉन का झगड़ा	६४, ६५ ८७
१२०७	लैंगटन का कैन्टरबरी का आर्कबिशप बनना	६५, १००
१२१३	जान द्वारा पोप की वश्यता स्वीकार करना	६५, ८७
१२१४	बोवाइन्स की लड़ाई	६६
१२१४-९५	रोजर बेकन का जीवन और कार्य	९५

१२१५	मैग्नाकार्टा	६५-६८, ९५
१२१५-५०	फ्रेडरिक द्वितीय का सम्राट् बनना	८८, १०१
१२१६	हेनरी तृतीय	६८
१२२१-२४	इंगलैण्ड में ईसाई भिक्षुओं का बस जाना	९४, ९७
१२२४	चंगेजखाँ का रूस पर आक्रमण	९१, ९२
१२२६	प्रशिया में ट्यूटानिक नाइटों की विजय	९०
१२२६-७०	फ्रांस का राजा लुई नवम	९१, १२८
१२४३-३	प्वातू का हाथ से निकल जाना	९४
१२४६-८३	वेल्स का राजकुमार लुएलिन एपग्रुफिड	१०३, ११४-११५
१२४६	पोप द्वारा कार्पिनी को एशिया भेजा जाना	९२
१२४९-८६	अलेक्जैण्डर तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	११९
१२५३	लुई नवम रुब्रुक्विस को पूर्व की ओर भेजता है	९२
१२५४	लैंकास्टर के अर्ल को उपहार के रूप में सिसली का दिया जाना	८९, १०१, १०३
१२५७	कार्नवाल के रिचर्ड का सम्राट् के रूप में अभिषेक किया जाना	८८, १०१
१२५८	आक्सफोर्ड की व्यवस्थाएँ	१०२-३
१२५९	फ्रांस के साथ सन्धि	१०३
१२६३	लर्ग्स की लड़ाई	११९
१२६४	आमियन्स का माइस	९१
,,	लेविस की लड़ाई	१०३
१२६५	माण्टफोर्ट के साइमन की पार्लियामेण्ट	१०३-४
,,	एवेशम की लड़ाई	१०४
१२७०-९५	एशिया में मार्को पोलो का आगमन	९२
१२७२	एडवर्ड प्रथम	१०३-१०, ११५-१६, १२६, १२९
१२७३-९१	हैब्सबर्ग के रुडोल्फ का सम्राट् बनना	८९
१२७५	एडवर्ड प्रथम की पहली पार्लियामेण्ट	१०६
१२७७	कान्वे की सन्धि	११५
१२७८	'क्वो वारण्टो' के न्यायालय समादेश का आदेशपत्र	१०८
१२७९	मोर्टमेन की संविधि	१०९
१२८२-४	वेल्स की विजय करना	११५-१६
१२८५	विंचेस्टर की संविधि	१५७-५८
१२८५-१३१४	फ्रांस का राजा फिलिप चतुर्थ	९१, ११०, १२८
१२९१-१३९९	स्विस लोगों द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करना	८९
१२९१-२	एडवर्ड प्रथम द्वारा सामन्ती सर्वोच्च सत्ता का दावा करना : जान बैलिओल का स्काटलैण्ड का राजा बनना	११४-१५
१२९४-१३०३	फ्रांस के साथ युद्ध : बैलिओल फ्रेंच लोगों की सहायता करता है।	१०६, ११४-१५, १२९

१३४८-९	काली मौत	१४०-४१
१३४९	मजदूरों के अध्यादेश	१४०, १५५
१३५०-६४	जॉन का फ्रांस का राजा बनना	१३१
१३५१	प्रोविजर्स की पहली संविधि या परिनियम	१५६
१३५३	प्रीम्यूनाइरी की पहली संविधि	१५६
१३५६	पोइटियर्स की लड़ाई	१३१
१३६०	ब्रेटिग्नी की सन्धि	१३२
,,	जस्टिस आफ पीस या पुरशासकों की संस्था	१५८
१३६१	एड्रियानोपल की लड़ाई : तुर्कों का यूरोप में राज्य स्थापित करना	९२
१३६२	इंग्लिश पार्लियामेण्ट तथा न्यायालयों की भाषा बनी	१४५-४६
,,	पार्लियामेण्ट द्वारा सीमाशुल्कों के नियन्त्रण का दावा	१५४
१३६६	किलकेन्नी की संविधि	१९७
१३६७	नवारेटे की लड़ाई	१३३
१३७०	लिमोजीस का हत्याकाण्ड	१३३
१३७०-८९	फ्रांस के युद्ध की विपत्तियाँ	१३३
लगभग १३७०-१४००	जाफरी चौसर के सांहित्यिक कार्य	१४५-६
१३७१	राबर्ट तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१२४
१३७२	लारोशेल की लड़ाई	१३३
१३७६	कृष्ण राजकुमार (ब्लैकप्रिन्स) की मृत्यु	१५६
,,	अच्छी पार्लियामेण्ट : महाभियोग की संस्था	१५७
१३७७	'पीयर्स प्लोमैन' नामक ग्रन्थ का लिखा जाना	१४५-४६
,,	रिचर्ड द्वितीय	१३३, १६०-६६
१३७८-१४१७	महान् धार्मिक मतभेद	९३
१३७९-८२	विक्लिफ के कार्य	१४७, १६०, १६३
१३८०-१४२२	फ्रांस का राजा चार्ल्स षष्ठ	१७२, १७४
१३८१	किसानों का विद्रोह	१५९-६०
१३८२	विक्लिफ के सिद्धान्तों की निन्दा	१६४
१३८८	निर्दयी पार्लियामेण्ट	१६२
१३८९	कोसोवो की लड़ाई : बाल्कान्स में तुर्कों की सर्वोच्च स्थिति	२०८
१३८९-९७	रिचर्ड का पार्लियामेण्ट की सहायता से शासन	१६२-६३
१३९०	राबर्ट तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९५
१३९३	प्रीम्यूनायरी की महान् संविधि	१६४
१३९४	रिचर्ड द्वितीय की आयरलैण्ड की यात्रा	१९८
१३९६	फ्रांस के साथ क्षणिक सन्धि	१३३

१२६५	आदर्श पार्लियामेण्ट	१०६; १४६
१२६६	स्काटलैण्ड की प्रथम विजय	१२०
,,	पोप द्वारा 'Clericis laicos' के शब्दों से शुरू होने वाले आदेशों का प्रकाशित करना, इसके अनुसार चर्च के पादरियों को पोप की सहमति के बिना राजाओं को कोई भी धनराशि देने का निषेध करना	१०६
१२६७	अधिकारपत्रों की पुष्टि : राजा के कर लगाने की शक्ति पर प्रतिबन्ध लगाना	१०७, १०६
,,	स्टर्लिंग ब्रिज की लड़ाई	१२०
१२६८	फाल्कर्क की लड़ाई	१२१
१३०३-०५	स्काटलैण्ड की द्वितीय विजय	११०, १२१
१३०३	वालेस का वध	१२१
१३०५-७६	अविन्योन में पोप का निवास करना	६३, १२८, १४६
१३०६-२६	राबर्ट ब्रूस का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१२१-२३, १२७, १५१
१३०७	एडवर्ड द्वितीय	१२२-२३, १२६, १५०-५२
१३१०	सुधार की योजना तैयार करने वाले और देश का शासन प्रबन्ध चलाने वाले लार्डों की नियुक्ति	१५१
१३१४	बैनकबर्न की लड़ाई	१२२-२३, १५१
१३१५-१८	आयरलैण्ड में एडवर्ड ब्रूस का आगमन	१२३
१३२२	लैंकास्टर के थामस का वध: यार्क की पार्लियामेण्ट : कानून के सम्बन्ध में समुदाय की सहमति का नियम बनाया जाना	१५२, १५४-५५
१३२७	एडवर्ड द्वितीय की पदच्युति	१५२
१३२७	एडवर्ड तृतीय	१२६-३३, १५२-५७
१३२८	नार्थम्पटन की सन्धि : स्काटिश लोगों की स्वतन्त्रता स्वीकार करना	१२३
१३२८-५०	फिलिप षष्ठ का फ्रांस का राजा बनना	१२६
१३२६	डेविड द्वितीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१२४-२५
१३३२-४१	स्काटलैण्ड में एडवर्ड बैलियोल का आगमन	
१३३८	एडवर्ड तृतीय द्वारा फ्रेंच राजमुकुट का दावा करना	१२६
१३४०	पार्लियामेण्ट का कर लगाने पर नियन्त्रण रखने का दावा करना	
१३४०	स्लूइस की लड़ाई	१२६
१३४२	ब्रिटेनी पर आक्रमण	१३०
१३४६	गुइन्ने पर हमला करना	१३०
,,	क्रेसी और नेविलेक्रास की लड़ाई	१३०-३१
१३४७	कैले को आधीन करना	१२७, १३१-३२

१३४८-९	काली मौत	१४०-४१
१३४९	मजदूरों के अध्यादेश	१४०, १५५
१३५०-६४	जॉन का फ्रांस का राजा बनना	१३१
१३५१	प्रोविजर्स की पहली संविधि या परिनियम	१५६
१३५३	प्रीम्यूनाइरी की पहली संविधि	१५६
१३५६	पोइटियर्स की लड़ाई	१३१
१३६०	ब्रेटिग्नी की सन्धि	१३२
,,	जस्टिस आफ पीस या पुरशासकों की संस्था	१५८
१३६१	एड्रियानोपल की लड़ाई : तुर्कों का यूरोप में राज्य स्थापित करना	९२
१३६२	इंग्लिश पार्लियामेण्ट तथा न्यायालयों की भाषा बनी	१४५-४६
,,	पार्लियामेण्ट द्वारा सीमाशुल्कों के नियन्त्रण का दावा	१५४
१३६६	किलकेन्नी की संविधि	१९७
१३६७	नवारेटे की लड़ाई	१३३
१३७०	लिमोजीस का हत्याकाण्ड	१३३
१३७०-८९	फ्रांस के युद्ध की विपत्तियाँ	१३३
लगभग १३७०-१४००	जाफरी चौसर के सांहित्यिक कार्य	१४५-६
१३७१	राबर्ट तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१२४
१३७२	लारोशेल की लड़ाई	१३३
१३७६	कृष्ण राजकुमार (ब्लैकप्रिन्स) की मृत्यु	१५६
,,	अच्छी पार्लियामेण्ट : महाभियोग की संस्था	१५७
१३७७	'पीयर्स प्लोमैन' नामक ग्रन्थ का लिखा जाना	१४५-४६
,,	रिचर्ड द्वितीय	१३३, १६०-६६
१३७८-१४१७	महान् धार्मिक मतभेद	९३
१३७९-८२	विक्लिफ के कार्य	१४७, १६०, १६३
१३८०-१४२२	फ्रांस का राजा चार्ल्स षष्ठ	१७२, १७४
१३८१	किसानों का विद्रोह	१५९-६०
१३८२	विक्लिफ के सिद्धान्तों की निन्दा	१६४
१३८८	निर्दयी पार्लियामेण्ट	१६२
१३८९	कोसोवो की लड़ाई : बाल्कान्स में तुर्कों की सर्वोच्च स्थिति	२०८
१३८९-९७	रिचर्ड का पार्लियामेण्ट की सहायता से शासन	१६२-६३
१३९०	राबर्ट तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९५
१३९३	प्रीम्यूनायरी की महान् संविधि	१६४
१३९४	रिचर्ड द्वितीय की आयरलैण्ड की यात्रा	१९८
१३९६	फ्रांस के साथ क्षणिक सन्धि	१३३

१३९७	कालमार (डेनमार्क, स्वीडन और नार्वे) का संगठन	२०५
१३९८	श्र्यूजबरी की पार्लियामेण्ट	१६४-६५
१३९९	रिचर्ड द्वितीय की पदच्युति	१६६
,,	हेनरी चतुर्थ	१६६-६७
१४००-६	ओवन ग्लेण्डोवर का अभ्युदय	१६६,१९३
१४०१	नास्तिकों के लिए अग्निदाह के दण्ड की संविधि	१६७
१४०३	श्र्यूजबरी की लड़ाई	१६७
१४०६	जेम्स प्रथम का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९५-९६
१४११	बर्गण्डी के साथ मैत्री	१७२
१४१३	हेनरी पंचम	१६९,१७२-७५
१४१४-१८	कान्सटेन्स की परिषद्	२०२
१४१४	सेण्ट एण्ड्र्यूज के विश्वविद्यालय की स्थापना	१९६
,,	लोलार्ड लोगों का षड्यन्त्र	१६९
१४१५	एजिनकोर्ट की लड़ाई	१६८, १७३
१४१९	बर्गण्डी के ड्यूक की हत्या	१७४
१४१९-३६	हैब्सबर्ग शासन के विरुद्ध बोहीमिया का संघर्ष	१६४, २५७
१४२०	त्रवा की सन्धि	१७५
१४२२	हेनरी षष्ठ	१८२-८७
१४२३-३५	बेडफोर्ड के ड्यूक का संरक्षक बनना	१७५-७७
१४२२-६१	फ्रांस का राजा चार्ल्स सप्तम	१७४-७८
१४२९	जोन आफ आर्क द्वारा आर्लियन्स को घेरे से मुक्त करना	१७६
१४३०-३१	जोन आफ आर्क का बन्दी बनना तथा उसकी मृत्यु	१७६
,,	४० शिलिंग देने वाले फ्रीहोल्डरों तक मताधिकार को सीमित करना	१८१
१४३१-४९	बाल की परिषद्	२०२
१४३४	बर्गण्डी के ड्यूक और चार्ल्स षष्ठ के बीच शान्ति स्थापित होना	१७७
१४३६	ब्रिटिश लोगों से पेरिस छिन जाना	१७८
१४३७	जेम्स द्वितीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९५
१४५०	फोर्मिग्नी की लड़ाई तथा नार्मण्डी की पराजय	१७८
,,	जैक केड का विद्रोह	१८४
१४५१	ग्लासगो विश्वविद्यालय की स्थापना	१९६
१४५३	कैस्टीलोन की लड़ाई तथा एक्वीटेन का हाथ से निकल जाना	१७८
१४५३	कुस्तुनतुनियाँ का पतन	२०८, २३२
१४५४	यार्क के ड्यूक को संरक्षक या प्रोटेक्टर बनाया जाना	१७७
१४५५-८५	गुलाबों के युद्ध	१८५-९०

१४६०	वेकफील्ड की लड़ाई	१८५
,,	जेम्स तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१६४
१४६१-८३	फ्रांस का राजा लुई एकादश	
१४६१	मोर्टीमर क्रास और टोटन की लड़ाई	
,,	एडवर्ड चतुर्थ	
१४६४	हेजलीमूर और हैक्सहैम की लड़ाई	
१४६६	स्काटलैण्ड से आर्कनी और शेटलैण्ड के टापू प्राप्त करना	
१४६६-७१	एडवर्ड चतुर्थ तथा वारविक के मध्य संघर्ष	१८८
१४७१	बार्नेट और ट्यूकेसबरी की लड़ाई	१८८
१४७५	पेक्विग्नी की सन्धि	१८६
१४७६	कैक्सटन का प्रिण्टिंग प्रेस	२३५
१४७७	मैक्सीमिलियन और बर्गण्डी की मेरी का विवाह होना	२०७
१४७६	आरागोन और कैस्टाइल का संयुक्त होना	२०४
१४८३	एडवर्ड पंचम	१८६-६०
१४८३-६८	फ्रांस का राजा चार्ल्स अष्टम	२४०-४१
१४८३	रिचर्ड तृतीय	
१४८५	बाज्वर्थ की लड़ाई	१६०
,,	हेनरी सप्तम	२१६-२३
१४८७	स्टोक की लड़ाई	२२१
,,	'वर्दी और निर्वाह' के विरुद्ध संविधि	२२२
,,	स्टार चेम्बर का न्यायालय	२२२-२३, ४५४
१४८८	स्काटलैण्ड का राजा जेम्स चतुर्थ	२२६-३०
१४६२	स्पेन के द्वारा ग्रैनाडा की विजय	२०४
,,	इटेपल्स की सन्धि	२४१
,,	कोलम्बस की प्रथम यात्रा	२४३, २४६, २५४
१४६२-६७	पर्किन वारबेक का विद्रोह	२२०
१४६३	स्पेन और पुर्तगाल के बीच में पोप द्वारा नये खोजे हुए प्रदेशों का विभाजन	२५०
१४६४	पार्यानिग्स के कानून	२२८-२६
१४६४	चार्ल्स अष्टम का नेपल्स पर आक्रमण	२४०-४१
१४६४-६८	फ्लोरेन्स में सावोनोरोला का उत्कर्ष	२४७
१४६६	महान् व्यापार	२२७
१४६७	अमेरिका में कैबोट का आगमन	२५४
१४६७-६	वास्कोडिगामा की यात्रा	२५०
१४६८-१५१५	फ्रांस का राजा लुई द्वादश	२४२

१३९७	कालमार (डेनमार्क, स्वीडन और नार्वे) का संगठन	२०५
१३९८	श्र्यूजबरी की पार्लियामेण्ट	१६४-६५
१३९९	रिचर्ड द्वितीय की पदच्युति	१६६
,,	हेनरी चतुर्थ	१६६-६७
१४००-६	ओवन ग्लेण्डोवर का अभ्युदय	१६६,१९३
१४०१	नास्तिकों के लिए अग्निदाह के दण्ड की संविधि	१६७
१४०३	श्र्यूजबरी की लड़ाई	१६७
१४०६	जेम्स प्रथम का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९५-९६
१४११	बर्गण्डी के साथ मैत्री	१७२
१४१३	हेनरी पंचम	१६९,१७२-७५
१४१४-१८	कान्सटेन्स की परिषद्	२०२
१४१४	सेण्ट एण्ड्रयूज के विश्वविद्यालय की स्थापना	१९६
,,	लोलार्ड लोगों का षड्यन्त्र	१६९
१४१५	एजिनकोर्ट की लड़ाई	१६८, १७३
१४१९	बर्गण्डी के ड्यूक की हत्या	१७४
१४१९-३६	हैब्सबर्ग शासन के विरुद्ध बोहीमिया का संघर्ष	१६४, २५७
१४२०	त्रवा की सन्धि	१७५
१४२२	हेनरी षष्ठ	१८२-८७
१४२३-३५	बेडफोर्ड के ड्यूक का संरक्षक बनना	१७५-७७
१४२२-६१	फ्रांस का राजा चार्ल्स सप्तम	१७४-७८
१४२९	जोन आफ आर्क द्वारा आर्लियन्स को घेरे से मुक्त करना	१७६
१४३०-३१	जोन आफ आर्क का बन्दी बनना तथा उसकी मृत्यु	१७६
,,	४० शिलिंग देने वाले फ्रीहोल्डरों तक मताधिकार को सीमित करना	१८१
१४३१-४९	बाल की परिषद्	२०२
१४३४	बर्गण्डी के ड्यूक और चार्ल्स षष्ठ के बीच शान्ति स्थापित होना	१७७
१४३६	ब्रिटिश लोगों से पेरिस छिन जाना	१७८
१४३७	जेम्स द्वितीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९५
१४५०	फोर्मिग्नी की लड़ाई तथा नार्मण्डी की पराजय	१७८
,,	जैक केड का विद्रोह	१८४
१४५१	ग्लासगो विश्वविद्यालय की स्थापना	१९६
१४५३	कैस्टीलोन की लड़ाई तथा एक्वीटेन का हाथ से निकल जाना	१७८
१४५३	कुस्तुनतुनियाँ का पतन	२०८, २३२
१४५४	यार्क के ड्यूक को संरक्षक या प्रोटेक्टर बनाया जाना	१७७
१४५५-८५	गुलाबों के युद्ध	१८५-९०

१४६०	वेकफील्ड की लड़ाई	१८५
,,	जेम्स तृतीय का स्काटलैण्ड का राजा बनना	१९४
१४६१-८३	फ्रांस का राजा लुई एकादश	
१४६१	मोर्टीमर क्रास और टोटन की लड़ाई	
,,	एडवर्ड चतुर्थ	
१४६४	हेजलीमूर और हैक्सहैम की लड़ाई	
१४६९	स्काटलैण्ड से आर्कनी और शेटलैण्ड के टापू प्राप्त करना	
१४६९-७१	एडवर्ड चतुर्थ तथा वारविक के मध्य संघर्ष	१८८
१४७१	बार्नेट और ट्यूकेसबरी की लड़ाई	१८८
१४७५	पेक्विग्नी की सन्धि	१८९
१४७६	कैक्सटन का प्रिंण्टिग प्रेस	२३५
१४७७	मैक्सीमिलियन और बर्गण्डी की मेरी का विवाह होना	२०७
१४७९	आरागोन और कैस्टाइल का संयुक्त होना	२०४
१४८३	एडवर्ड पंचम	१८९-९०
१४८३-९८	फ्रांस का राजा चार्ल्स अष्टम	२४०-४१
१४८३	रिचर्ड तृतीय	
१४८५	बाज्वर्थ की लड़ाई	१९०
,,	हेनरी सप्तम	२१९-२३
१४८७	स्टोक की लड़ाई	२२१
,,	'वर्दी और निर्वाह' के विरुद्ध संविधि	२२२
,,	स्टार चेम्बर का न्यायालय	२२२-३३, ४५४
१४८८	स्काटलैण्ड का राजा जेम्स चतुर्थ	२२९-३०
१४९२	स्पेन के द्वारा ग्रैनाडा की विजय	२०४
,,	इटेपल्स की सन्धि	२४१
,,	कोलम्बस की प्रथम यात्रा	२४३, २४९, २५४
१४९२-९७	पर्किन वारबेक का विद्रोह	२२०
१४९३	स्पेन और पुर्तगाल के बीच में पोप द्वारा नये खोजे हुए प्रदेशों का विभाजन	२५०
१४९४	पायर्निग्स के कानून	२२८-२९
१४९४	चार्ल्स अष्टम का नेपल्स पर आक्रमण	२४०-४१
१४९४-९८	फ्लोरेन्स में सावोनोरोला का उत्कर्ष	२४७
१४९६	महान् व्यापार	२२७
१४९७	अमेरिका में कैबोट का आगमन	२५४
१४९७-९	वास्कोडिगामा की यात्रा	२५०
१४९८-१५१५	फ्रांस का राजा लुई द्वादश	२४२

१४९९	आक्सफोर्ड में कालेट और इरेस्मस का आगमन	२३६
,,	लुई द्वादश द्वारा मिलान को अपने आधीन करना	२४२
१५००	कैब्राल ब्राजील की खोज करता है	..
१५०१	प्रिंस आफ वेल्स का अरागोन की कैथरीन के साथ विवाह	२४२
१५०२	स्काटलैण्ड के जेम्स चतुर्थ का मार्गरेट ट्यूडर के साथ विवाह	२३०
१५०९	हेनरी अष्टम	२२३-३०, २३७, २६२, ७३-२८७, ३३८-३९
,,	हेनरी का अरागोन की कैथरीन के साथ विवाह	२४२
१५०९-१५	अल्बूकर्क का पुर्तगाली ईस्ट इण्डीज का गवर्नर बनना	२५०
१५११	हेनरी अष्टम का पवित्र संघ में सम्मिलित होना	२३०, २४२
१५१२	स्पेन नवार्रे की विजय करता है	२०४
१५१३	मेकियावेली द्वारा सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'प्रिंस' का लिखा जाना	२३८
,,	फ्लोडुनफील्ड की लड़ाई	२३०
,,	स्काटलैण्ड का राजा जेम्स पंचम	२८७-८९
१५१४	फ्रांस के साथ सन्धि	२४२
१५१५-४७	फ्रांस का राजा फ्रांसिस प्रथम	२४२-४३
५१५-४७	राज्य का प्रधानमन्त्री वूल्जे	२२३-२६, २३७, २४२, २६३.
१५१६	'यूटोपिया' का प्रकाशन	२३७
१५१७	लूथर मुक्ति पत्रों के विरुद्ध प्रतिवाद करता है	२५९-६१
१५१९-२१	कार्टेज मैक्सिको की विजय करता है	२५२-५३
१५१९-२२	मैगेलेन की समुद्र यात्रा : पृथ्वी की समुद्री मार्ग से परिक्रमा	२५१-५२
१५१९-५५	सम्राट् चार्ल्स पंचम	२४४-४५, २५९-६२
१५२०	लूथर द्वारा पोप के आदेशपत्र को जलाया जाना	२५९
१५२०-६६	टर्की का सुलतान सुलेमान प्रथम	२४४
१५२१	चार्ल्स की जर्मन पार्लियामेण्ट	२४४, २५९-६०
,,	तुर्क बेलग्रेड को जीतते हैं	२४४
,,	हेनरी प्रथम और लूथर में वादविवाद	२५९
१५२२	फ्रांस के साथ युद्ध	२२५, २४५
१५२३	पार्लियामेण्ट द्वारा युद्ध सामग्री के लिए अनुदान देने से मना करना	२२५-२६
१५२४-५	जर्मन किसानों का विद्रोह	२६०
१५२५	पाविया की लड़ाई	२४५
,,	फ्रांस के साथ सन्धि : 'शक्ति का सन्तुलन'	२४५
,,	टिण्डल की इंग्लिश बाइबल	२६४
१५२५-३५	पिजारो द्वारा पेरू की विजय	२५३
१५२६	बाबर भारत में मुगल साम्राज्य की नींव रखता है	३९१
,,	स्पेयर की परिषद् : प्रौटेस्टेण्ट	२६१

,,	मोहकाज़ की लड़ाई : तुर्क लोग हंगरी की विजय करते हैं।	२८४
१५२७	हेनरी द्वारा विवाह-विच्छेद की अभिलाषा करना	२६२
१५२८	विलियम हाकिन्स गिनी पहुँचता है।	३१७
१५२८	प्रथम स्काटिश प्रोटेस्टेण्ट शहीद पैट्रिक हेमिल्टन	२८६
१५२६	वूल्ज़े का पतन	२६३
१५२६-३६	धर्मसुधार की लम्बी पार्लियामेण्ट	२६३-६४
१५३२	एन्नेट्स का कानून	२६५
१५३३	हेनरी एन बुलिन के साथ विवाह करता है।	२६२-६६
,,	अपीलों का कानून : क्रैनमर द्वारा हेनरी के तलाक की निन्दा करना	२६६
१५३४	वेल्स की परिषद्	२७०
,,	पादरियों का आत्म-समर्पण	२६४-६५
१५३४-३६	कार्टियर कनाडा की खोज करता है।	२५४
१५३४-४०	थामस क्रामवेल का शक्ति में आना	२६४, २६७
१५३५	सर थामस मोर का वध	२५८
१५३६	कैल्विन	२६१
,,	इंग्लैण्ड और वेल्स का एकीकरण	२७१
,,	हेनरी जेन सीमोर से विवाह करता है।	२६७
,,	दस मन्तव्य	२६८
,,	छोटे मठों का दमन	२६७-७०
,,	पिलिग्रिमेज आफ ग्रेस	२७०
१५३७	उत्तरी प्रदेशों की परिषद् की स्थापना	२७०
,,	जेरल्डाइन कबीले के सरदारों को प्राणदण्ड दिया जाना	
१५३६	बड़े मठों का दमन	२६७-६६
,,	जेसुइट सम्प्रदाय की स्थापना	३०१
,,	घोषणाओं का कानून : छः मन्तव्यों का कानून	२७१
१५४०	जिनेवा का डिक्टेटर-कैल्विन	२६१
१५४१	हेनरी को आयरलैण्ड का राजा घोषित किया जाना	५८, ३३६
,,	जेसुइटों का आयरलैण्ड में आगमन	३३६
१५४२	आयरलैण्ड के सम्बन्ध में हेनरी की व्यवस्था	३३७-४१
,,	सोल्वे मॉस की लड़ाई	२८८
१५४२-६८	स्काटलैण्ड की रानी मेरी	२८६-६१
१५४२-४६	फ्रांस के साथ युद्ध	२७२, २८७-८८
१५४४	एडिनबरा की लूट	२७२, २६०
१५४५	निम्न प्रदेशों में इंग्लिश लोगों द्वारा लूट-पाट	२६०

१५४६	चार्ल्स पंचम ट्रेण्ट की परिषद् को बुलाता है।	३०१
१५४६-६०	कैल्विनवाद के लिए जान नाक्स का परिश्रम	२९१-९८
१५४७	एडवर्ड षष्ठ	२७४-७७
१५४७	पिंकी की लड़ाई	२७५
,,	चेण्टरियों का दमन	२७६
१५४८	स्काटलैण्ड की मेरी और डाफिन की सगाई	२७९-८०
१५४९	सामान्य प्रार्थना की प्रथम पुस्तक और एकरूपता का कानून	२७५
,,	इंग्लैण्ड के पश्चिमी भाग में धार्मिक विद्रोह	२७५
,,	नारफोक में आवेष्टनों के विरुद्ध विद्रोह	२७५, २७७
१५५२	सामान्य प्रार्थना की द्वितीय पुस्तक	२७७, २८४
,,	एकरूपता का द्वितीय कानून	२८४
१५५३	मेरी प्रथम	२७८-८२
,,	चान्सलर आर्केन्जल पहुँचता है	३१८
१५५४	स्काटलैण्ड की संरक्षिका गुइसे की मेरी	२९५-९६
,,	सर थामस वियट का विद्रोह	२८०
,,	मेरी और स्पेन के फिलिप का विवाह	२७९-८०
,,	लेडी जेन ग्रे का वध	२८०
,,	इंग्लैण्ड में पोप की प्रभुता की पुन: स्थापना	२८०
१५५४-५	धर्मविरोधी नास्तिकों के विरुद्ध कानूनों का पुन: बनाया जाना	२८०
१५५५	चार्ल्स पंचम द्वारा राजसिंहासन का परित्याग	२७९
१५५५	मेरी के धार्मिक अत्याचार	२८१-८२
१५५६-९८	स्पेन का राजा फिलिप द्वितीय	२७९, २८२, ३०१-४, ३१२-१५
१५५६-१६०५	भारत का मुगल सम्राट् अकबर	३९१
१५५८	केले का हाथ से निकल जाना	२८२
१५५८-६०	रूस और एशिया में जैनकिन्सन की यात्रा	३१८
१५५८	एलिजाबेथ	२८२-८५, ३०२-९, ३१९-२६, ३४०, ३६०-६८
१५५९	सर्वोच्च सत्ता तथा एकरूपता के कानून	२८४
,,	कैटो-केम्ब्रेसिस की शान्तिसन्धि	२९४, ३०२
,,	स्काटिश प्रोटेस्टेण्टों का विद्रोह	२९४
१५६०	इंग्लैण्ड स्काटलैण्डवासी प्रोटेस्टेण्टों की सहायता करता है।	२९५
,,	लीथ का घेरा : गुइसे की मेरी की मृत्यु	२९६
,,	स्काटलैण्ड के चर्च का सुधार	२९६-९८
१५६० ६७	शेन ओनील का विद्रोह	३४०
१५६१	नाक्स द्वारा लिखित अनुशासन की पुस्तक	२९६-९७
,,	मेरी का स्काटलैण्ड में वापस आना	२९७, ३०६

१५६१	डेविड वोल्फ़ आयरलैण्ड में उतरता है।	३४२
१५६२	हाकिन्स की गिनी की प्रथम यात्रा	३२२
१५६२-९८	फ्रांस में धर्म सम्बन्धी युद्ध	३०३, ३१२
१५६२	एलिजाबेथ फ्रेंच ह्यूगनाटों की सहायता करती है।	३०३
१५६३	३९ मन्तव्य	२८४
१५६४	शेक्सपियर का जन्म	
१५६५	डार्नले तथा स्काटलैण्ड की रानी मेरी का विवाह	३०७
१५६६	रिचियो की हत्या	३०७
१५६६	पार्कर की समाचारपत्रों में प्रकाशित सार्वजनिक घोषणा	३६२
१५६७	ार्नले की हत्या : मेरी बाथवेल के साथ विवाह करती है।	३०७
,,	ान ओ नील की मृत्यु	३४०
,,	ार्बेरी हिल की लड़ाई	३०८
,,	ीदरलैण्ड का विद्रोह	३०३
१५६८	ंगसाइड की लड़ाई : मेरी एलिजाबेथ को आत्मसमर्पण रती है।	३०८
,,	काटलैण्ड का राजा जेम्स षष्ठ	४२६-२९
,,	ब़जाना लाने वाले बेड़े पर अधिकार करना	३३२
,,	सेण्ट जुआन डी उल्लुआ के प्रदेश में हाकिन्स का पहुँचना	३२३
१५६९	नारफोक के ड्यूक और उत्तरी अर्लों का षड्यन्त्र	३०८
१५६९-७३	मन्स्टर में विद्रोह	३४३
१५७०-८२	एक फ्रेंच राजकुमार के साथ एलिजाबेथ के विवाह का प्रस्ताव	३१२
१५७०	पोप एलिजाबेथ को चर्च से बहिष्कृत करता है।	३१०
१५७१	रीडोल्फी षड्यन्त्र	३०८
,,	लेपाण्टो की लड़ाई	३०३
,,	राजद्रोह कानूनों का विस्तार करना	३१०
१५७२	'समुद्री बेगर' ब्रिल पर कब्जा कर लेते हैं।	३११
,,	आरेन्ज का विलियम स्पेन के विरुद्ध नीदरलैण्ड का नेतृत्व करता है।	३११
,,	सेण्ट बार्थोलोम्यू का हत्याकाण्ड	३११-१२
१५७२-३	ड्रेक की वेस्टइण्डीज तथा स्पेनिशमेन की यात्रा	३२४-२५
१५७५	कैथोलिक धर्मप्रचारकों को पहली बार प्राणदण्ड दिया जाना	३११
१५७६-७८	फ्रोबिशर द्वारा उत्तर पश्चिमी मार्ग की खोज	३१८
१५७७	कनाट में विद्रोह	३४४
१५७७-८०	गोल्डन हाइण्ड की यात्रा	३२५-६
१५७९	स्पेन तथा पोप द्वारा आयरलैण्ड में विद्रोह को भड़काना	३४४
१५८०	स्मेरविक की हत्या	३४४
,,	इंग्लैण्ड में पारसन्स और कैम्पियोन का आगमन	३१०

१५८०	स्पेन द्वारा पुर्तगाल को अपने राज्य में मिलाना	३१३, ३१६
१५८१	'मेलविले' द्वारा अनुशासन की द्वितीय पुस्तक लिखा जाना	३९७
१५८२	रुथवैन नामक हमला	३०९
१५८३	ह्विट्गिफ्ट का कैण्टरबरी का आर्कबिशप बनना	३६४
,,	हाई कमीशन कोर्ट की शक्ति में वृद्धि	३६१, ४४१ ४५४
,,	न्यूफाउण्डलैण्ड में बस्ती बसाना	३२७
१५८४-८६	मन्स्टर में इंग्लिश लोगों द्वारा बस्ती बसाना	३४६
,,	ऑरेन्ज के विलियम की हत्या	३१२
,,	फ्रेंच कैथोलिकों का स्पेन के साथ मिलकर संघ बनाना	३१३
१५८४-९०	रैले वर्जिनिया में बस्ती बसाने की योजना बनाता है।	३२६
१५८५	एलिजावेथ नीदरलैण्ड में एक सेना भेजती है।	३१४
१५८५-६	वेस्ट इण्डीज में ड्रेक का पहुंचना	३१८
१५८५-८७	डेविस ग्रीनलैण्ड और उत्तरी अमेरिकन तट की खोज करता है।	३१८
१५८६	प्रकाशन (प्रिण्टिंग) पर प्रतिबन्ध	३६४
१५८६	जुटफेन की लड़ाई : सर फिलिप सिडनी की मृत्यु	३१४
,,	बैबिंगटन का षड्यन्त्र	३१४
१५८७	स्काट लोगों की रानी मेरी का वध	३१५
,,	ड्रेक कैडिज के बन्दरगाह पर आक्रमण करता है।	३२८
१५८८	स्पेनिश आरमेडा	३२८-३३
१५८८-९	मार्टिन मार्प्रिलेट नामक ट्रैक्ट	३६४
१५८९-१६१०	फ्रांस का राजा हेनरी चतुर्थ	३७५, ३७७, ३८०
१५८९	ड्रेक स्पेनिश बन्दरगाहों पर आक्रमण करता है।	३३२
१५९०-६	'फेयरीक्वीन' ग्रन्थ का प्रकाशन	
,,	धर्मसभाओं के लिए कार्टराइट का आन्दोलन	३६४
१५९१	एजोर्स पर आक्रमण : रिवेन्ज नामक जहाज	३३३
१५९३	पीटर वेण्टवर्थ को बन्दी बनाना	३६६
१५९५	ह्यूज ओ नील का विद्रोह	३४६
१५९६	एसेक्स केडिज को जलाता है	३३३
१५९८	यलोफोर्ड की लड़ाई	३४६
,,	नान्तेस की राजाज्ञा	३७५
१५९९	आयरिश लोगों का दमन करने के लिए एसेक्स का भेजा जाना	३४६
१६००	ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना	३६०, ३८९
१६०१	एकाधिकार की समाप्ति	३६८
,,	दरिद्र सहायता कानून	३५४, ३५७
,,	किन्सले में एक स्पेनिश सेना उतरती है।	३३२

१६०१	एसेक्स का विद्रोह और उसकी मृत्यु	३३२
१६०३	जेम्स प्रथम	३८५-४१३, ४८३-९९
,,	आयरिश विद्रोह का अन्त	३४७
१६०४	हैम्पटन कोर्ट का सम्मेलन	४०८
१६०४-११	जेम्स प्रथम की पार्लियामेण्ट	४०९-१३
१६०४	स्पेन के साथ शान्ति	३७८, ३८०
,,	एकेडिया में फ्रेंच बस्ती की स्थापना	३९३
१६०५	गनपाउडर षड्यन्त्र	४०४
१६०५-२७	भारत का सम्राट् जहाँगीर	३९२
१६०६	वर्जिनिया कम्पनी	३८९
१६०७	वर्जिनिया में पहली बस्ती	३९८
,,	कैथोलिक संघ	३७६
१६०८	कैल्विनवादी प्रोटेस्टेण्ट संगठन	३७६
,,	अल्स्टर का उपनिवेशन	४२१-२२
,,	'दरों की नवीन पुस्तक' का प्रकाशन	४१०
,,	क्वेबक में फ्रेंच बस्ती की स्थापना	३९३
१६१०	फ्रांस के हेनरी चतुर्थ की हत्या	३८०
१६११	बाइबल के प्रामाणिक अनुवाद का प्रकाशन	४०५
१६११-३२	स्वीडन का राजा गुस्टावस एडोल्फस	३८३
१६१२	बरमूडा के टापुओं में बस्ती बसायी गयी।	४००
१६१३	राजकुमारी एलिजाबेथ और इलेक्टर पेलेटाइन का विवाह	३७८
१६१३-१५	चैम्पलेन नयी झीलों को ढूंढ़ता है।	३९३
१६१४	बौखलाई पार्लियामेण्ट	४०१
,,	डौण्टन सूरत के नगर के निकट पुर्तगालियों को पराजित करता है।	४११
१६१५	महान् मुगल सम्राट् के दरबार में सर टामस रो को राजदूत बना कर भेजना	३९२
१६१६	सूरत में ब्रिटिश कोठियों की स्थापना	३९३
१६१७	गियाना की ओर रेले की यात्रा	३९५
१६१८-४८	तीस वर्षीय युद्ध	३८०-८६
१६१८	गेम्बिया में प्रथम ब्रिटिश व्यापारिक अड्डा	५५९
१६१९	वर्जिनिया में प्रतिनिधि सरकार	३९९-४००
१६२०	न्यू इंग्लैण्ड में परिषद की स्थापना की गयी	४००
,,	'मे फ्लावर' की यात्रा	४०१
,,	व्हाइट माउण्टेन की लड़ाई	३८१
१६२१	बेकन और मोम्पेस्सोन पर महाभियोग	४११
,,	डच वैस्ट इण्डिया कम्पनी का संगठन	३८८, ३९४

१६२३	सेण्ट क्रिस्टोफर में इंग्लिश बस्तियाँ	३६५
,,	अम्बोयना का हत्याकाण्ड	३६०
१६२४-३०	स्पेन के साथ युद्ध	३८१, ४२४
१६२४-५४	ब्राजील में डच प्रभुता	३६४
१६२४-२६	न्यूनीदरलैण्ड्स की डच बस्ती	३६४
१६२४	बारबेडोज की बस्ती	३६५
,,	फ्रांस के साथ ब्रिटिश मैत्री	३८२
१६२५	चार्ल्स प्रथम ४१३-१६, ४२६-३४,४४८-६०,४७०-७२,४७५-४७८	
,,	तीस वर्षीय युद्ध में इंग्लिश लोगों के हस्तक्षेप की योजनाएँ	४१४-१७
,,	चार्ल्स प्रथम के समय की पहली पार्लियामेण्ट	४१४
,,	केडिज पर आक्रमण	४१५
,,	ग्रोशियस की पुस्तक 'युद्ध और शान्ति के कानून' का प्रकाशन	३७६
१६२६	चार्ल्स के समय की दूसरी पार्लियामेण्ट : बकिंघम पर महाभियोग	४१५
१६२६	आयरलैंण्ड को रियायतें देने का वचन देना	४२५-२६
,,	लट्टर की लड़ाई	३८२
१६२७-५८	मुगल सम्राट् शाहजहाँ	३६२
१६२७-२६	फ्रांस के साथ युद्ध	३८२, ३६८, ४२४, ४३५
१६२७	न्यू फ्रांस कम्पनी का निर्माण	३६७
,,	चार्ल्स प्रथम द्वारा जबर्दस्ती वसूल किये जाने वाले ऋणों को प्रजा पर बलपूर्वक लादना	४१६
१६२८	तीसरी पार्लियामेण्ट : अधिकार का आवेदन पत्र	४१७-१८, ४४२
,,	बकिंघम की हत्या	४१८, ४३४
,,	मैसाचूसेट्स कम्पनी की स्थापना	४४२
,,	नेविस और बरबूडा की बस्ती का बसाना	३६५
१६२६	पुनः स्थापना की राजाज्ञा	३८३
१६२६-४०	चार्ल्स प्रथम की व्यक्तिगत सरकार ३८३, ४१४, ४१८, ४४८-५१	
१६२६-३२	इंग्लिश लोग क्वेबक पर कब्जा करते हैं।	३६८
१६३०	मैसाचुसेट्स की प्यूरिटन बस्ती का आवासन	४४२-४४
१६३१	ब्रीटनफेल्ड की लड़ाई	३८४
१६३२-४०	आयरलैंण्ड का लार्ड डिप्टी वेण्टवर्थ	४२४-२६
१६३२	लुटजन में गुस्टावस एडोलफस मारा गया।	३८४
,,	मेरीलैंण्ड, एण्टीगुआ और माण्टसेरट की बस्ती का आवासन	३६५, ४४७-४८
१६२३-३३	बंगाल तथा मछलीपट्टम् में ब्रिटिश कोठियों की स्थापना करना	३६३
१६३३	तीस वर्षीय युद्ध में फ्रांस का हस्तक्षेप	३८४
,,	कनेक्टीकट में पहली बस्ती का आवासन	४४६

१६३३	लाड का केण्टरबरी का आर्कबिशप बनना	४४०-४२
,,	प्रिन की 'हिस्ट्रिओ मैस्टिक्स' नामक राजा और रानी पर आक्षेप करने वाली पुस्तक का प्रकाशन	४४१
१६३४	स्काटलैण्ड में हाई कमीशन न्यायालय की स्थापना	४३०, ४३२
,,	इंग्लैण्ड में पहली बार पोतधन की वसूली	४४९
१६३५	स्काटलैण्ड के लिए चर्च के नियमों की पुस्तक का प्रकाशन	४३०,४३२
१६३५-५९	स्पेन के साथ फ्रांस का युद्ध	३८४
१६३५	पोतधन की द्वितीय बार वसूली	४४९
,,	मार्टीनी और गुआदेलूप में फ्रेंच उपनिवेशन	३९५
१६३६-३८	रोड के टापू में बस्ती बसाना	४४६
१६३६	पोतधन की तृतीय बार वसूली	४५०, ४९८
१६३७	हैम्पडन का मामला	४५०
,,	स्काट लोगों द्वारा लाड की प्रार्थना पुस्तक को अस्वीकार करना; स्काटलैण्ड के चार वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली समितियों का स्थापित किया जाना	४३०-३२
१६३८	स्काटिश नेशनल कावेनैण्ट	४३१
,,	डेलावेयर में स्वीडिश बस्ती का आवासन	५६२
,,	न्यू हैवन और होण्डुरास में बस्ती की स्थापना	३९५, ४४६
,,	ग्लासगो की 'सामान्य असेम्बली'	४३२
१६३९	मद्रास में फोर्ट सेण्ट जार्ज का निर्माण	३९३
,,	बिशपों का प्रथम युद्ध : बेर्विक की विराम सन्धि	४३३
१६४०	अल्पकालीन पार्लियामेण्ट	४३३, ४५१-५२
,,	बिशपों का द्वितीय युद्ध	४५२
१६४०-६०	दीर्घकालीन पार्लियामेण्ट (नवम्बर)	४५२-५९
१६४०-८८	फ्रेडरिक विलियम महान् का इलेक्टर बनना	५४३-४४
१६४१	त्रैवार्षिक कानून (फरवरी)	४५४
,,	स्टेफ़फोर्ड पर अभियोग चलाना और उसको प्राणदण्ड दिया जाना (मई)	४५३, ४५५-५६
,,	स्काटलैण्ड में चार्ल्स प्रथम का आगमन (अगस्त)	४५३
,,	आयरिश विद्रोह (अक्टूबर)	४५८
,,	महान आवेदन पत्र (नवम्बर)	४५८
१६४२	पाँच सदस्यों की गिरफ्तारी	४५९
,,	माण्ट्रील की फ्रेंच बस्ती का आवासन	३९८
१६४२-४४	तस्मान के अन्वेषण	३९१
१६४२-४८	गृह-युद्ध	४६१-७८

१६४२	किलकेनी में आयरिश कैथोलिकों की परिषद्	४६२, ४७१
,,	एजहिल की लड़ाई : राजपक्षपाती लोग आक्सफोर्ड पर कब्जा करते हैं।	४६४
१६४३-१७१५	फ्रांस का राजा लुई चौदहवाँ	५३५-४२, ५५०-५४, ५८८-९० ६२८-३३
१६४३	धर्मशास्त्रविशारदों की वेस्टमिन्स्टर की सभा	४६६
,,	राजपक्षपाती एडवल्टन मूर और ब्रिस्टल में सफलता प्राप्त करते हैं।	४६४
,,	चार्ल्स आयरलैण्ड से सहायता पाने का प्रयत्न करता है : लड़ाई बन्द करने की व्यवस्था।	४६५
,,	पवित्र संघ और समझौता	४६७, ४८३, ५२२
,,	न्यू इंग्लैण्ड संघ का निर्माण	४४६
१६४४	मार्सटन मूर और टिप्पर मूर की लड़ाई	४६७
,,	'एरियोपैगिटिका' नामक पुस्तक का प्रकाशन	४९३
१६४४-४५	सार्वजनिक पूजा का विधान ग्रन्थ	४३६
१६४५	अपने को लाभ से वंचित करने वाला अध्यादेश : नयी आदर्श सेना	४६९-७०
,,	नेजबी और लैंगपोर्ट की लड़ाई	४७०
,,	चार्ल्स प्रथम आयरिश कैथोलिकों के साथ वार्ता करता है।	४७०
,,	किलसिथ और फिलिप हौग की लड़ाई	४७०
१६४६	आक्सफोर्ड का समर्पण: चार्ल्स स्काटिश सेना में सम्मिलित हो जाता है।	४७०
,,	वेनबर्ब की लड़ाई : डबलिन का घेरा	४७१
१६४७	स्काट लोगों का चार्ल्स को पार्लियामेण्ट के हाथ में छोड़ कर वापस लौटना	४७२
,,	सेना आन्दोलकों का चुनाव करती है : पार्लियामेण्ट के ग्यारह सदस्यों का निष्कासन	४७४
,,	आरमाण्ड डबलिन को समर्पित करता है डैंगनहिल की लड़ाई	४७१
,,	चार्ल्स वाइट के टापू में भाग जाता है।	४७५
१६४८	द्वितीय गृह युद्ध	४७५-७६
,,	लघु प्रश्नोत्तरी	४६६
,,	वेस्टफेलिया की सन्धियाँ	३७९, ३८४, ५४४
,,	प्राइड की विशुद्धि	४७६
१६४९	चार्ल्स प्रथम को मृत्युदण्ड (जनवरी)	४७७-७८
,,	राजतन्त्र तथा लार्ड सभा का उन्मूलन	४७९-८०
,,	नौ सेना का सुधार (फरवरी)	४९८-८९
,,	मिल्टन का राज्य परिषद् का सदस्य बनना	४८०

१६४६	रेथमाइन्स की लड़ाई	४८२
,,	द्रोघेडा और वैक्सफोर्ड पर क्रामवेल का हमला	४८२
,,	किनसेल से राजपक्षपाती जहाज खदेड़ दिये गये (नवम्बर)।	४६६
१६५०	माण्ट्रोस का वध	४८३
,,	स्काटलैण्ड में चार्ल्स द्वितीय का आगमन (जून)	४८१
,,	डनबर की लड़ाई (सितम्बर)	४८३-८५
,,	पुर्तगाली जहाज डूब गये (सितम्बर) : रूपर्ट का जहाजी बेड़ा नष्ट हो गया नवम्बर)।	४६६-५००
१६५१	उत्तमाशा अन्तरीप पर डच बस्ती का आवासन	३६१
,,	वार्सेस्टर की लड़ाई	४८५
,,	नौचालन कानून	५०१, ५५६, ६५७
,,	हाब्स के 'लेवियाथन' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन	५६६
१६५२	गाल्वे का समर्पण : किल्केनी के धार्मिक मन्तव्य	४८५
,,	'जाँच करने वालों के बोर्ड' की स्थापना	४८६
१६५२-५४	प्रथम डच नाविक युद्ध	५०१-५
१६५२	केण्टिश नाक तथा डंगेनैस की लड़ाई	५०२
१६५३	पोर्टलैण्ड, गेव्वर्ड के उथले जल वाले सैकत तट तथा शेवेनिंजन पर नौसेना द्वारा आक्रमण	५०१-५०४
,,	लम्बी पार्लियामेण्ट के रम्प का निष्कासन (अप्रैल)	४८७
,,	बेअरबोन की पार्लियामेण्ट (जुलाई)	४८८
१६५२-५५	आयरलैण्ड का 'एक्ट आफ सेटिस्फैक्शन'	४६५
,,	शासन का अधिकारपत्र (दिसम्बर)	४६४
,,	क्रामवेल का लार्ड प्रोटेक्टर की पदवी धारण करना	४८६-६७,५०३-६
१६५४-६७	एकेडिया के प्रदेश पर इंग्लिश लोगों का अधिकार करना	५०४
१६५४	लार्ड प्रोटेक्टर के समय में बुलायी गयी पहली पार्लियामेण्ट	४८६
१६५४-५५	ब्लेक बरबरी अर्थात् उत्तरी अफ्रीका के समुद्री डाकुओं पर आक्रमण करता है	५०५
,,	हिसपैनिओला और जमेका पर आक्रमण	५०५
१६५५	मेजर जनरलों के आधीन इंग्लैण्ड	४६०-६२
१६५५-५६	स्पेन के साथ एंग्लो-फ्रेंच युद्ध	५०५-६
१६५६	केडिज का परिवेष्टन	५०५-६
,,	दूसरी प्रोटेक्टोरेट पार्लियामेण्ट	४६१-६३
१६५७	विनम्र प्रार्थना और परामर्श नामक विधेयक	४६२, ४०४
,,	स्पेनिश जहाजी बेड़ा सान्ताक्रूज में डुबाया गया।	५०६
१६५८-१७०७	मुगल सम्राट् औरंगजेब	५५६

१६५८	ड्यून्स की लड़ाई : इंग्लैण्ड डंकर्क को प्राप्त करता है।	५०६
,,	प्रोटेक्टर रिचर्ड क्रामवेल	५०६
१६५६	तीसरी प्रोटेक्टोरेट पार्लियामेण्ट	५०६
,,	रम्प पार्लियामेण्ट की पुनः स्थापना, प्रोटेक्टोरेट की समाप्ति	५०६
१६५६-८०	शिवाजी मराठों का नेतृत्व करते हैं।	५५६
१६६०	दीर्घकालीन पार्लियामेण्ट की पुनः स्थापना (जनवरी) और उसका भंग (मार्च)	५०६
,,	सम्मेलन नामक पार्लियामेण्ट	५१०
,,	ब्रेडा का घोषणापत्र	५१०
,,	पुनः स्थापना	५१०, ५१८-३१
१६६०	चार्ल्स द्वितीय	५१०, ५१६, ५२५, ५३८, ५३६-४०, ५६८-७६
१६६०-६७	मुख्य मन्त्री क्लेरेण्डन	५२१, ५६७-६८
१६६०	क्षतिपूर्ति और विस्मृति का अधिनियम	५२२
,,	नौचालन अधिनियम	५५६, ६५७
१६६१	ईस्ट इण्डिया कम्पनी का पुनः संगठन	५५६
,,	विशेषाधिकार न्यायालयों की समाप्ति	
,,	सेवाय सम्मेलन	५२२
१६६१-७६	कैवेलियर या राजपक्षपाती पार्लियामेण्ट	५२२-५२५
१६६१	विशेषाधिकार न्यायालय की समाप्ति	५२४
१६६१-६३	नागरिक सेना कानून	५२४
१६६१	कार्पोरेशन कानून	५२२-२३, ६०४
१६६२	एकरूपता का कानून	५२२-२३, ५६८
,,	लाइसेन्स देने वाला कानून	५२२, ५७६, ६०४
,,	ब्रिटिश अफ्रीकन कम्पनी की स्थापना	५५६
,,	रायल सोसायटी की स्थापना	५३४
,,	आयरलैण्ड के लिए समाधान का अधिनियम	५३०
,,	दरिद्र सहायता कानून की व्यवस्था का अधिनियम	
,,	डंकर्क का फ्रांस को दिया जाना	५०६, ५३८
१६६३	कैरोलिना की बस्ती की स्थापना	५६०
१६६३-४	हंगरी पर तुर्कों का आक्रमण	५४५
१६६३	'पैराडाइज लास्ट' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन	५२४
१६६४	कान्वेटिकल अधिनियम	५२३, ५२७, ५६८
,,	त्रैवार्षिक अधिनियम	५२४, ५८०, ६०३
,,	फ्रेंच वैस्ट एण्ड ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना	५५०
,,	न्यू नीदरलैण्ड्स पर इंगलिश लोगों का आक्रमण	५३६, ५६०

१६६५-६७	द्वितीय डच युद्ध	५३८, ५६०, ५६६
१६६५	लोवेसटाफ़्ट की लड़ाई	५३८
,,	महान् प्लेग	५३८
,,	न्यूजर्सी में क्वेकर लोगों द्वारा स्थापित बस्तियाँ	५६२
१६६५-१७००	स्पेन का राजा चार्ल्स द्वितीय	६२८, ६३१
१६६५-७२	मैडागास्कर में फ्रेंच लोगों का आगमन	५५१
१६६५	पाँच मील का कानून	५२३
१६६६-६७	फ्रांस इंग्लैण्ड के विरुद्ध हालैण्ड की सहायता करता है।	५३८, ५५१, ५५६
१६६६	डौन्स की लड़ाई	५३८
,,	विज्ञानों की फ्रेंच अकादमी की स्थापना	५३४
,,	लन्दन की महान् अग्नि	५३६
,,	पैण्टलैण्ड का विद्रोह	५२७
१६६७-८	उत्तराधिकार के हस्तान्तरण का युद्ध	५३६
१६६७	मिडवे में डचों का आगमन (जून)	५३६
,,	ब्रेडा की शान्ति सन्धि (जुलाई)	५३६
,,	क्लेरेण्डन पर महाभियोग	५६६
१६६७-७३	कैबल	५६६-७३
१६६८	त्रिराष्ट्रसन्धि (जनवरी)	५३६, ५७०
,,	एक्स-ला-शापेल की सन्धि	५३६
,,	बम्बई ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दिया गया।	५५६
१६७०	स्काटिश कान्वेण्टिकल कानून	५२७
,,	डोवर की गुप्त सन्धि	५४०, ५७०
,,	बहामा द्वीप को इसके स्वामियों को दिया जाना	५५६
१६७२	वित्तविभाग द्वारा अदायगी बन्द करना	५७१-७२, ६५०
,,	मुक्ति की घोषणा	५७१, ५८४
,,	हालैण्ड के साथ एंग्लो-फ्रेंच युद्ध : साउथबोल्डबे की लड़ाई	५४०, ५७२
१६७२-७६	पोलैण्ड द्वारा तुर्कों का विरोध	५४६
१६७२	फ्रांस हालैण्ड पर आक्रमण करता है।	५४०, ५४४, ५५१
,,	आरेन्ज स्टेटहोल्डर का विलियम	५४०
,,	डीविट की हत्या	५४०
१६७३	टैस्ट अधिनियम	५७३, ५८१, ५८३, ६०४
१६७३-७६	डेनबी का मुख्य मन्त्री बनना	५७३-७६
१६७३	टैक्सल की लड़ाई	५४०
,,	ड्यूक आफ यार्क का दूसरा विवाह	५७३
१६७४	इंग्लैण्ड और हालैण्ड शान्ति स्थापित करते हैं।	५७३-३४

१६७४	पाण्डीचेरी में फ्रेंच कोठी की स्थापना	
१६७४-९६	पोलैण्ड का राजा जॉन सोबियस्की	५४६
१६७५	फ़ेहरबेलिन की लड़ाई	५४४
,,	चार्ल्स द्वितीय और लुई चतुर्दश के बीच में दूसरी गुप्त सन्धि	५७४
१६७७	ऑरेन्ज के विलियम का विवाह	५४२, ५७३
१६७८	बनियन की 'पिलिग्रिम्स प्रोग्रेस' ग्रन्थ का प्रकाशन	५२४
,,	पोपीय षड्यन्त्र	५७५, ५७९
,,	निमवेजन की सन्धि	५४१
,,	डेनबी पर महाभियोग लगाया गया (दिसम्बर)।	५७५
१६७९	कैवेलियर पार्लियामेण्ट का विघटन	५७५-७६
,,	बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम	५७६
,,	ड्रमक्लाग तथा बाथवैल ब्रिज की लड़ाइयाँ	५२८
,,	निस्सारण विधेयक	५७७
,,	पहला पुनरेकीकरण सदन	५७७
१६८१-८२	पेन्सिल्वेनिया और डेलावेयर प्रदेशों का आवासन	५६२
१६८१-८२	ला-साल्ले मिसीसिपी का अन्वेषण करता है।	५५४
१६८१	फ्रांस द्वारा स्ट्रेसबुर्ग को अपने राज्य में मिलाना	५७९
,,	ड्राईडन की पुस्तक 'Absalom and Achitophel' का प्रकाशन	५७९
१६८१-८४	बरो चार्टरों की जब्ती	५८१
१६८२-९९	आस्ट्रिया और टर्की के मध्य संघर्ष	५४६
१६८३	राइहाउस षड्यन्त्र	५८०
,,	वियना का घेरा	५४६
,,	लार्ड रसेल और एलगर्नन सिडनी को प्राणदण्ड	५८१
१६८४	तुर्कों के विरुद्ध पवित्र संघ	५४६
,,	मैसाचूसेट्स के चार्टर का रद्द किया जाना	५६४
१६८५	जेम्स द्वितीय	५६४, ५८१-५ ५८९-९०, ५९५
,,	सेजमूर की लड़ाई : रक्तपातपूर्ण न्याय सभाएँ	५८२
,,	नान्तेस की राजाज्ञा को रद्द किया जाना	५४१ ५५२-५३, ५८४
१६८६-८	एण्ड्रोस का औपनिवेशिक शासन	५६५, ६१८
१६८६	हाई कमीशन के न्यायलय को पुनरुज्जीवित करना	५९२
,,	ऑग्सबर्ग का संघ	५८८
१६८७	टिरकोनल का आयरलैण्ड का लार्ड डिप्टी बनना	५८३
,,	मुक्ति की घोषणा	५८४
,,	मोहाकज की दूसरी लड़ाई	५४६
	न्यूटन की 'प्रिंसिपिया' नामक ग्रन्थ का प्रकाशन	५३४

१६८८	सात विशपों का अभियोग	५८५
,,	आस्ट्रिया द्वारा बेलग्रेड पर कब्जा	५८८
१६८८-९७	आग्सबर्ग के संघ का युद्ध	५८८, ६२४-२८
१६८८	आरेन्ज का विलियम टोर्बे में उतरता है (नवम्बर)।	५९०
,,	जेम्स द्वितीय का पलायन (दिसम्बर)	५९०,६०२
,,	क्रान्ति	५८५-६२३
१६८९	सम्मेलन नामक पार्लियामेण्ट (जनवरी)	५९१, ६०२
,,	अधिकारों की घोषणा (फरवरी)	६०२
,,	विलियम तृतीय और मेरी द्वितीय	५९१-६,६०२, ६०६-१०, ६२९-३३
,,	जेम्स द्वितीय आयरलैण्ड में उतरता है।	५९३, ६१३
,,	स्काटिश लोगों का 'अधिकार का दावा' (मार्च)	६०८
,,	विद्रोह कानून, सिविल लिस्ट और सहिष्णुता कानून	६०३-४
,,	इंग्लैण्ड महान् मैत्रीसन्धि में सम्मिलित होता है।	५९२
,,	किल्लीक्रैन्की की लड़ाई (जुलाई)	५९२
,,	लन्दनडेरी की सहायता (जुलाई) न्यूटाउन बटलर की लड़ाई	५९३
१६८९-१७३५	रूस का महान् सम्राट् पीटर	६९४-९८
१६८९	बिल आफ राइट्स्	६०२
,,	लाक की 'शासन पर निबन्ध' नामक पुस्तक	६०१
१६९०	प्रेसबिटेरियनवाद स्काटलैण्ड में पुनः स्थापित हुआ।	६०८
,,	बीची हेड, फ्लूरस और बोयने की लड़ाईयाँ	५९४
,,	कलकत्ते में इंग्लिश लोगों की कोठी की स्थापना	
१६९०-९७	हडसन घाटी और एकेडिया में युद्ध	६२७-२८
१६९१	एथलोन पर अधिकार और एघ्रिम की लड़ाई	५९५
,,	लिमरिक की सन्धि	६१४-६८७-८८
,,	मैसाचुसेट्स को नया चार्टर प्रदान किया गया।	६२१
१६९२	ग्लैंको की हत्या	५९३
,,	लाहोग की लड़ाई	५९६
,,	स्टीनकर्क की लड़ाई	६२५
१६९३	नीरविण्डन की लड़ाई	६२५
१६९४	'बैंक आफ इंग्लैण्ड' की स्थापना	६५१
,,	त्रैवार्षिक कानून	६०३
,,	रानी मेरी की मृत्यु	५९८, ६०७
१६९५	'बैंक आफ स्काटलैण्ड' की स्थापना	६५१
,,	नामूर पर अधिकार	६२५
,,	आयरलैण्ड के दण्डविधान के निर्माण का आरम्भ	६१५

१६९६	व्यापार और बस्तियों के बोर्ड की स्थापना	६१९-२२
१६९७-१७१८	स्वीडन का राजा चार्ल्स द्वादश	६४०, ६७९, ६९४-९७
१६९७	सेक्सनी का आगस्ट्स पोलैण्ड का राजा चुना गया।	६९४
,,	रिसविक की सन्धि	६२८
१६९८	इंग्लैण्ड में पीटर महान् का आगमन	६९४
,,	न्यू ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना	६५६
१६९८-१७००	डेरियन की ओर स्काटिश अभियान	६०९
१६९८	प्रथम विभाजन सन्धि (अक्टूबर)	६२८-३१
१६९९	कार्लोविट्ज की शान्ति सन्धि	६९३
,,	द्वितीय विभाजन सन्धि (जून)	६३०
,,	आयरिश ऊनी वस्तुओं के निर्यात पर प्रतिबन्ध	६१७
,,	स्वीडन के विरुद्ध उत्तरी संघ	६९५
१७००-४६	स्पेन का राजा अंजो का फिलिप	६३२, ६४३
१७०१	प्रशिया के राजा के रूप में ब्रैण्डनबर्ग के इलेक्टर का अभिषेक	६४३, ७४२
,,	व्यवस्था का कानून	६०५, ६११, ६३२, ६६७, ७२३
,,	महान् मैत्री संघ का निर्माण	६३२-३५
१७०२	एन	६३३ ६३५, ६६३-६४, ६६७-६८
१७०२-१३	स्पेनिश उत्तराधिकार के लिए युद्ध	६३३-४२
१७०३	इंग्लैण्ड और पुर्तगाल के बीच में मैथुएन सन्धि	६३७, ६५५
,,	स्काटिश सुरक्षा का कानून	६११
१७०४	इंग्लैण्ड की सेना पुर्तगाल भेजी गयी।	६३८
,,	पोलैण्ड का राजा स्टेनिसलास लेस्कजिन्स्की	६९४-९७, ७०२-४
,,	जिब्राल्टर पर अधिकार (अगस्त)	६३८
,,	ब्लेनहीम और मलागा की लड़ाइयाँ (अगस्त)	६३९
१७०५	मित्रराष्ट्रों के लिए कैटेलोनिया और वेलेन्शिया की विजय	५३९
१७०६	रेमिल्लीस की लड़ाई (मई)	६३९
,,	मित्रराष्ट्रों की सेनाएँ मैड्रिड में प्रविष्ट होती हैं (जून)।	६३९
,,	ट्यूरिन की लड़ाई (सितम्बर)	६४९
१७०७	अलमान्जा की लड़ाई	६४०
,,	इंग्लैण्ड और स्काटलैण्ड का एकीकरण	६१०-१३
,,	सरकारी पदों का कानून	६०५-६
१७०८	ईस्ट इण्डिया कम्पनी का एकीकरण	६५६
,,	औडनार्ड की लड़ाई	६४१
,,	मिनोर्का तथा लील पर अधिकार	६४१
१७०९	पल्टावा और मलप्लेक्वैट की लड़ाइयाँ	६९६

१७१०	साचेवेरल पर अभियोग	६६४
,,	रूस द्वारा बाल्टिक प्रान्तों पर अधिकार करना	६९६
,,	ब्रिटिश एवं उपनिवेशवासी सेनाओं द्वारा एकेडिया के प्रदेश पर अधिकार करना	६६४
१७१०-१४	हार्ले और सेण्ट जान का मन्त्रिमण्डल	६६५-८
१७११	साउथ सी कम्पनी की स्थापना	६६५, ७०७
,,	स्विफ्ट की पुस्तिका 'काण्डक्ट आफ दी एलाइज' का प्रकाशन	६६०
,,	ओकेज़नल कन्फर्मिटी कानून	६६३, ६६६
१७११-४०	सम्राट् चार्ल्स षष्ठ	७०४, ७४३
१७१२	टोरी लार्डों का निर्माण	६५९, ६८२
१७१३	यूट्रेक्ट की सन्धि	६४२-४४
,,	एसियण्टो-सन्धि	६४४, ७१०
१७१४-१९	ब्रेमन और वर्डन के विषय में हनोवर तथा स्वीडन का विवाद	६९७
१७१४	धार्मिक संघभेद कानून	६६६-७
,,	बेलिंगब्रोक का शक्ति सम्पन्न होना (जुलाई)	६६७-८
,,	रानी एन की मृत्यु (अगस्त)	६६८
,,	जार्ज प्रथम	६६८, ६७५-८०, ६८७
१७१५	ह्विग पार्लियामेण्ट (मार्च)	६६९, ६८०
,,	आक्सफोर्ड और बोलिंगब्रोक पर महाभियोग लगाया गया (जून)।	६६९
,,	जैकोबाइट लोगों का विद्रोह : प्रेस्टोन और शेरिफम्यूर की लड़ाई	६७६-८
१७१५-५७	फ्रांस का राजा लुई १५वां	६९९
१७१५-१८	हंगरी पर तुर्कों का आक्रमण	६९३
१७१६	सप्तवर्षीय कानून	६८०
१७१७	त्रिराष्ट्र मैत्री संघ	६९९-७०३,
१७१७-२१	स्टैनहोप का मन्त्रिमण्डल	७१७-८
१७१७	ला द्वारा पश्चिमी देशों की कम्पनी की स्थापना	७०७, ७१३-४
	लुइसियाना प्रदेश की स्थापना	७१३-४
,,	ईस्ट इण्डिया कम्पनी को मुगल बादशाह द्वारा व्यापार की आज्ञा देना	७०९
१७१८	पासारोवित्ज की लड़ाई	६९३
,,	पेसारो अन्तरीप की लड़ाई	७००
१७१९	ओकेज़नल कन्फर्मिटी को रद्द किया जाना	७२०
,,	स्टाकहोम की सन्धि	६९७